10.3

पुर

मभूमि
महावीर
आ है।
ो साढ़े
जमान
ातिवर्ष

० जैन
वला,
वर्ष

र की
नाभूमि
खंडहर
ल १
ुर एवं
वीर के
वर्तमान
ो में ही
विकास
६००वें
अवसर
ज्ञानमती
निध्य में
कट ही
हल' के

डलपुर
ी गई है
वं जैन
हता है।
में
दनीय
यों के
की

रिसर
डलपुर
दि०
द्वीप-

श्री गणेश वर्णी दिगम्बर जैन
संस्थान, नरिया, वाराणसी को
सादर भेंट
उदयचन्द्र जैन
वाराणसी
३० - ३ - २००८

4847
(का. हि. वि. वि.) वाराणसी

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं. 256

भगवान महावीर जन्मभूमि

कुण्डलपुर अभिनन्दन ग्रंथ

– प्रेरणास्रोत एवं वाचनाप्रमुख –

राष्ट्रगौरव, युगप्रवर्तिका, जम्बूद्वीप रचना की पावन प्रेरिका, पूज्य गणिनीप्रमुख, आर्यिकाशिरोमणि

श्री ज्ञानमती माताजी

– संयोजन –

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी

– निर्देशन –

पीठाधीश क्षुल्लक मोतीसागर महाराज **कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन**

– प्रधान सम्पादक –

प्राचार्य श्री नरेन्द्र प्रकाश जैन-फिरोजाबाद (उ.प्र.)

– सम्पादक मण्डल –

पं. शिवचरनलाल जैन, डॉ. शेखरचंद जैन, डॉ. अनुपम जैन, डॉ. भागचन्द्र जैन 'भागेन्दु', डॉ. जयकुमार जैन, डॉ. अभयप्रकाश जैन, प्रो. टीकमचंद जैन, ब्र. कु. आस्था जैन, ब्र. कु. स्वाति जैन, प्रो. रमेशचंद मनयां, उमेशचंद जैन

जम्बूद्वीप हस्तिनापुर

पुस्तक सं. 4847

– प्रकाशक –

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान

जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र. फोन नं.- (01233) 280184, 280236

प्रथम संस्करण
1000 प्रति

आश्विन शुक्ला 15–शरद पूर्णिमा
वीर निर्वाण संवत् 2530
28 अक्टूबर 2004

मूल्य
200/-

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं के न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयों पर लघु एवं वृहद् ग्रंथों का मूल एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाएं भी प्रकाशित होती रहती हैं।

-: संस्थापिका एवं प्रेरणास्रोत :-

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी

-: मार्गदर्शन :-

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी

-: निर्देशन :-

धर्मदिवाकर पीठाधीश क्षुल्लकरत्न श्री मोतीसागर जी महाराज

-: सम्पादक :-

कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर विकास की श्रृंखला में कुण्डलपुर महोत्सव–2004 (27 से 29 अक्टूबर) के शुभ अवसर पर प्रकाशित

कम्पोजिंग-ज्ञानमती नेटवर्क
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

समर्पण

भारतीय संस्कृति के आद्यप्रणेता प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की तीर्थंकर परम्परा में अंतिम चौबीसवें तीर्थंकर विश्ववंद्य, शासनपति, सद्धर्म तीर्थ प्रवर्तक अनादिनिधन जैनधर्म के पुनरुद्धारक एवं उन्नायक, विश्वशांति के उपदेष्टा

भगवान महावीर स्वामी

के पावन चरणकमलों में
जिन्होंने अपनी श्रद्धाभक्ति समर्पित करते हुए

भगवान महावीर २६००वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव

की अमिट उपलब्धि के रूप में

महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर

(नालंदा-बिहार) का

जीर्णोद्धार एवं विकास करने की प्रेरणा देकर जैनसमाज पर महान उपकार किया है। 51 वर्षीय दीर्घकालीन तपस्या के द्वारा जिनकी काया का रोम-रोम पवित्र हुआ है, आत्मकल्याण की प्रमुखता के साथ-साथ जैनशासन की प्रभावना जिनका परमलक्ष्य है, चौबीसों तीर्थंकरों की जन्मभूमियों के विकास की प्रेरणा देकर जिन्होंने संस्कृति संरक्षण का अनुपम कार्य किया है ऐसी भगवान महावीर शासन की प्रथम साहित्य सृजनकर्त्री, जम्बूद्वीप रचना निर्माण की सम्प्रेरिका, जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति, भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार एवं भगवान महावीर ज्योति रथ प्रवर्तन की प्रेरणास्रोत, अयोध्या, प्रयाग आदि अनेक तीर्थों की उद्धारिका, मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र पर निर्माणाधीन भगवान ऋषभदेव की 108 फुट ऊँची मूर्ति निर्माण की पावन प्रेरिका, भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण-महोत्सव की प्रेरिका, षट्खण्डागम सूत्र ग्रंथों की संस्कृत टीकाकर्त्री, विश्वविद्यालय की मानद् उपाधि डी.लिट्. से अलंकृत, यथा नाम तथा गुण से समन्वित सन् 2005 से प्रारंभ होने वाले ''भगवान पार्श्वनाथ तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव'' की सम्प्रेरिका, चारित्रचन्द्रिका, युगप्रवर्तिका, राष्ट्रगौरव पूज्य गणिनीप्रमुख

आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी

के पावन करकमलों में गंगा का जल गंगा में ही तर्पण करने के समान यह **''कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ''** समर्पित करते हुए सिद्धशिला तक अपनी भावना पहुँचाने की प्रार्थना करते हैं।

समर्पणकर्ता

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती, पीठाधीश क्षुल्लक मोतीसागर, कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन, प्रधान सम्पादक-प्राचार्य नरेन्द्रप्रकाश जैन, सर्वसंपादकगण एवं श्रद्धालु भक्तगण

अभिनंदन ग्रंथ की प्रेरणास्रोत

गणिनी प्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी

नंद्यावर्त महल - कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार

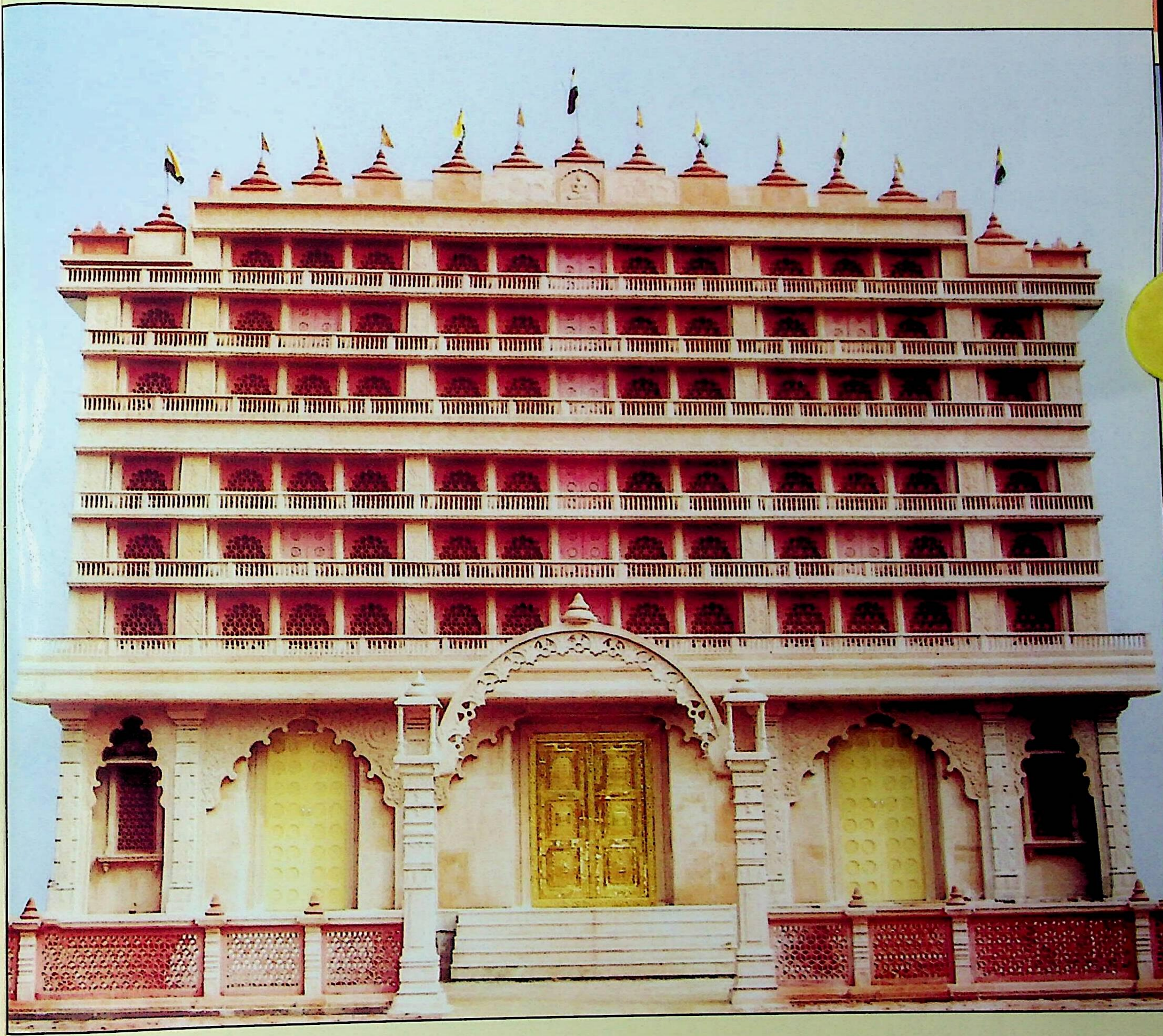

भगवान महावीर का जन्म जिस महल में हुआ था उस महल का नाम नंद्यावर्त महल था। वह ७ मंजिल का था। उसी के प्रतीक में पूज्य गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से नंद्यावर्त महल का निर्माण भगवान महावीर २६००वाँ जन्म कल्याणक के शुभ अवसर पर वर्ष २००४ में किया गया तथा इसका उद्घाटन २८ अक्टूबर २००४ शरदपूर्णिमा के दिन विशाल जनसमुदाय के मध्य कुण्डलपुर महोत्सव के शुभ अवसर पर सम्पन्न हुआ।

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार में पूज्य गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से वर्ष २००३ - २००४ में सम्पन्न हुआ निर्माण

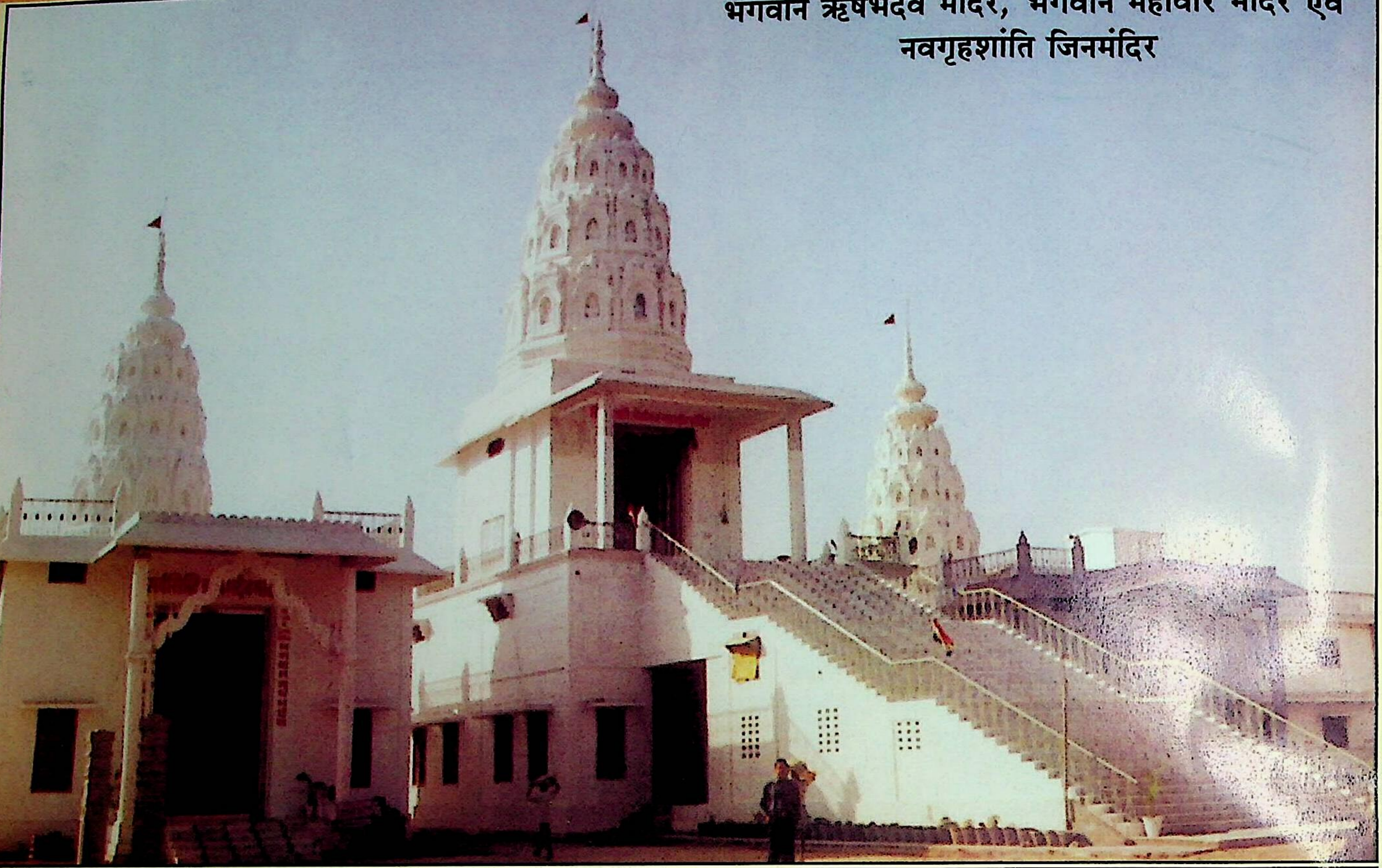

भगवान ऋषभदेव मंदिर, भगवान महावीर मंदिर एवं नवगृहशांति जिनमंदिर

भगवान महावीर कीर्तिस्तम्भ

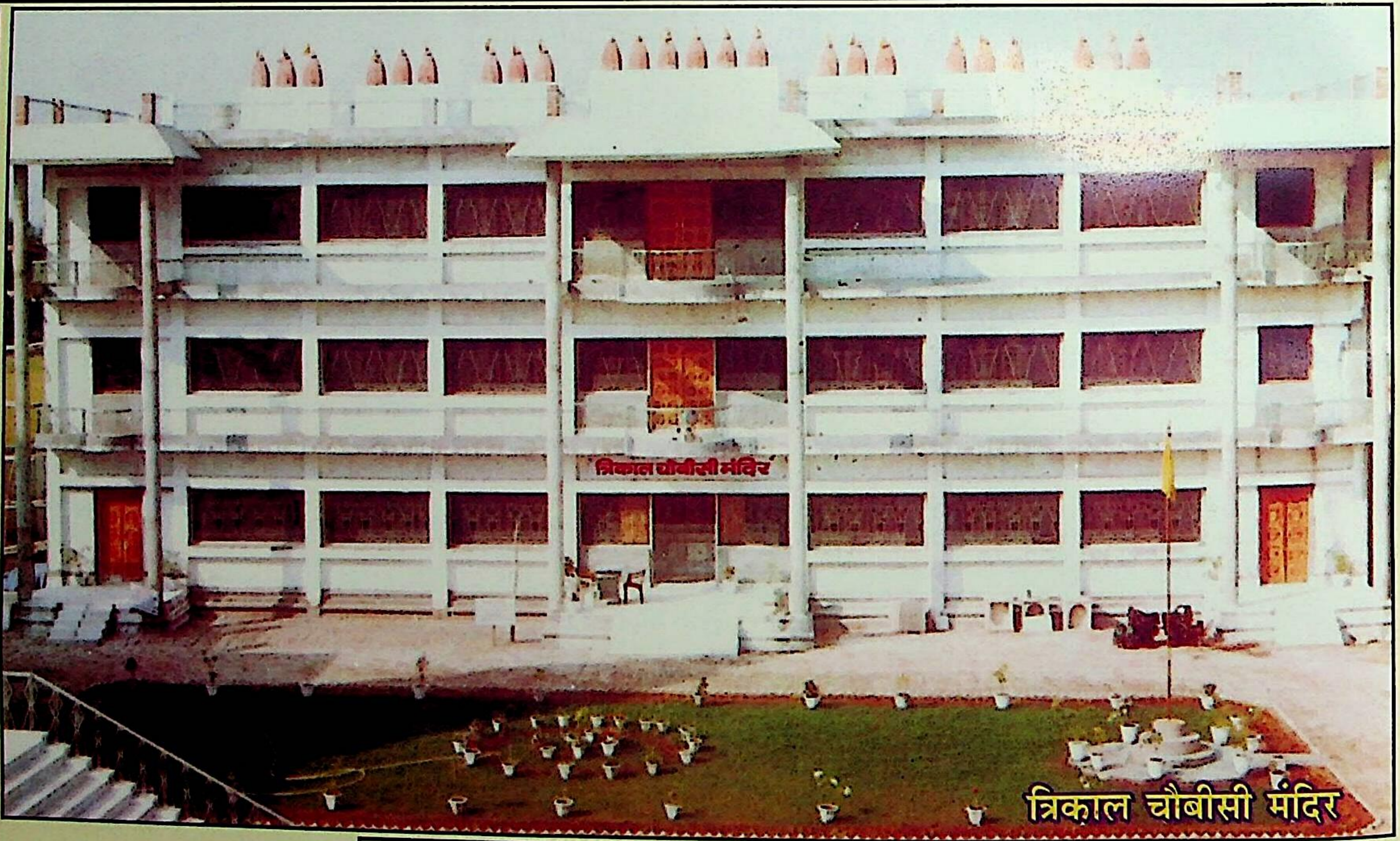

त्रिकाल चौबीसी मंदिर

धर्मशाला-गणिनी ज्ञानमती निलय

दर्शनीयस्थल जम्बूद्वीप हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

पूज्य गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से वर्ष १९८५ में भगवान शांतिनाथ, कुंथुनाथ एवं अरनाथ तीर्थंकरों की जन्मभूमि हस्तिनापुर में किया गया विकास

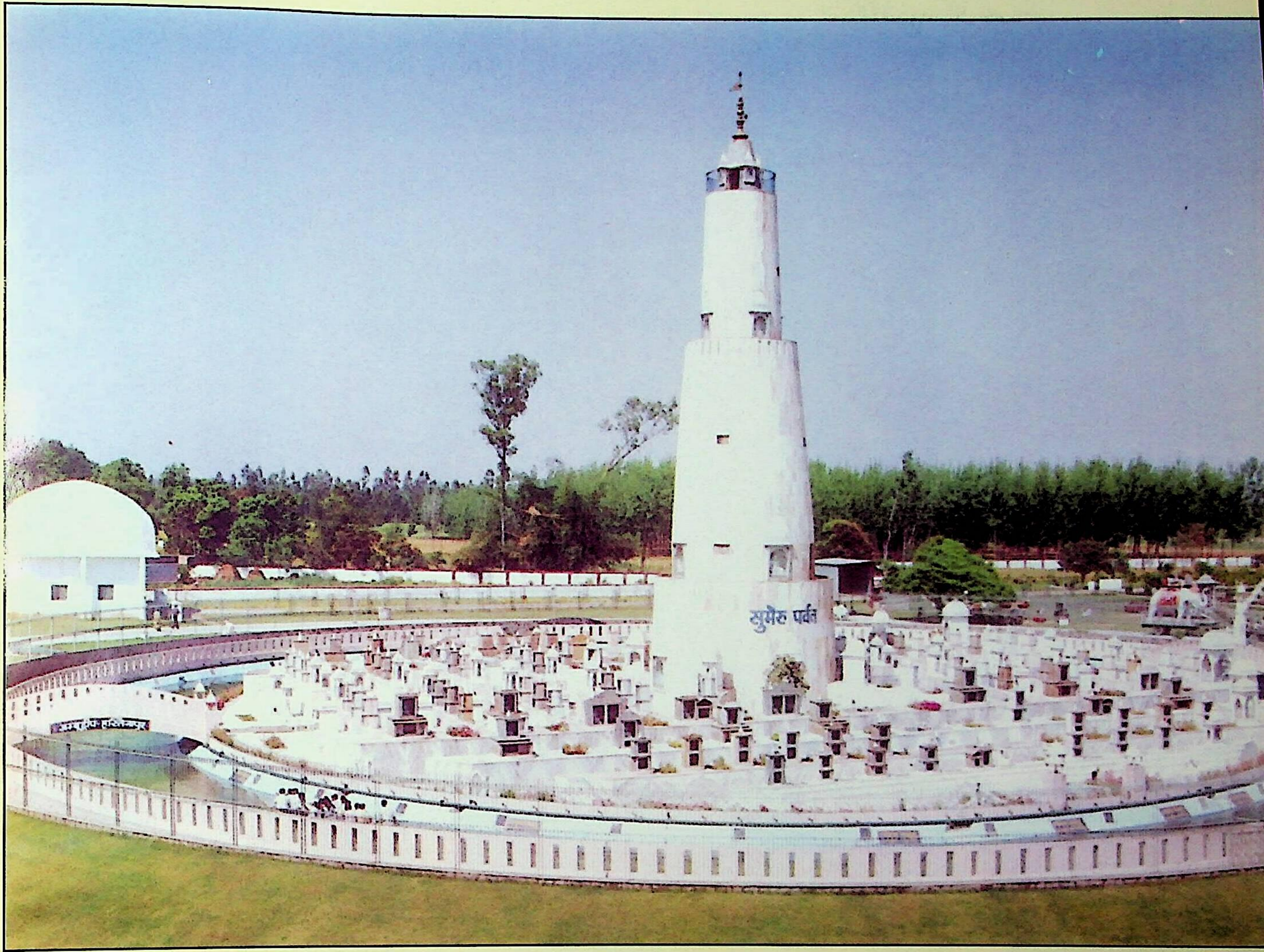
सुमेरु पर्वत
जम्बूद्वीप हस्तिनापुर

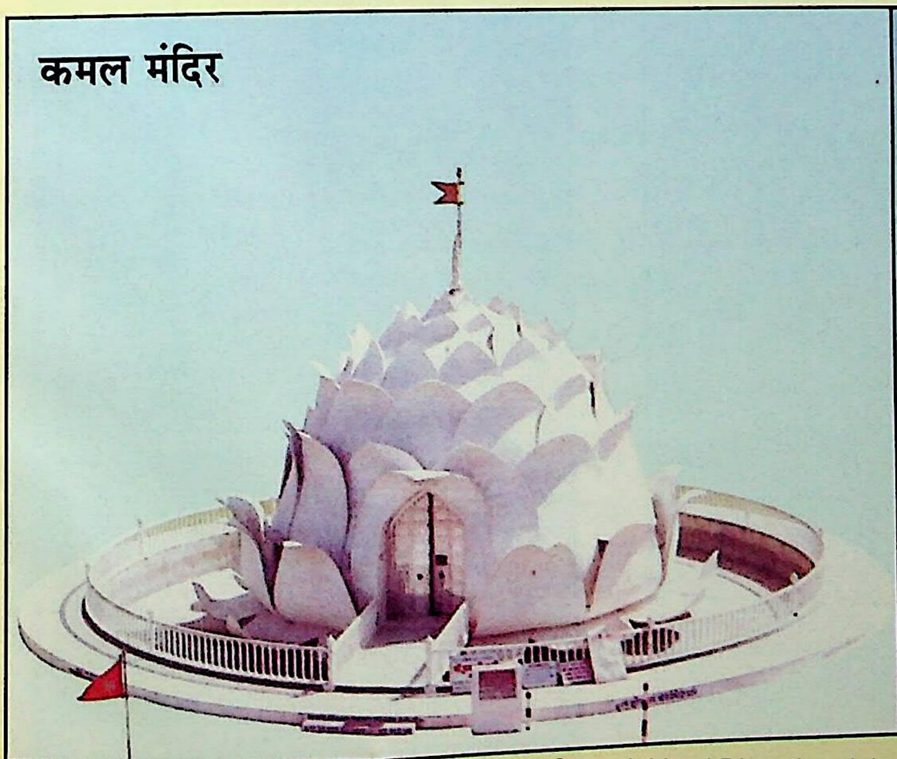
कमल मंदिर

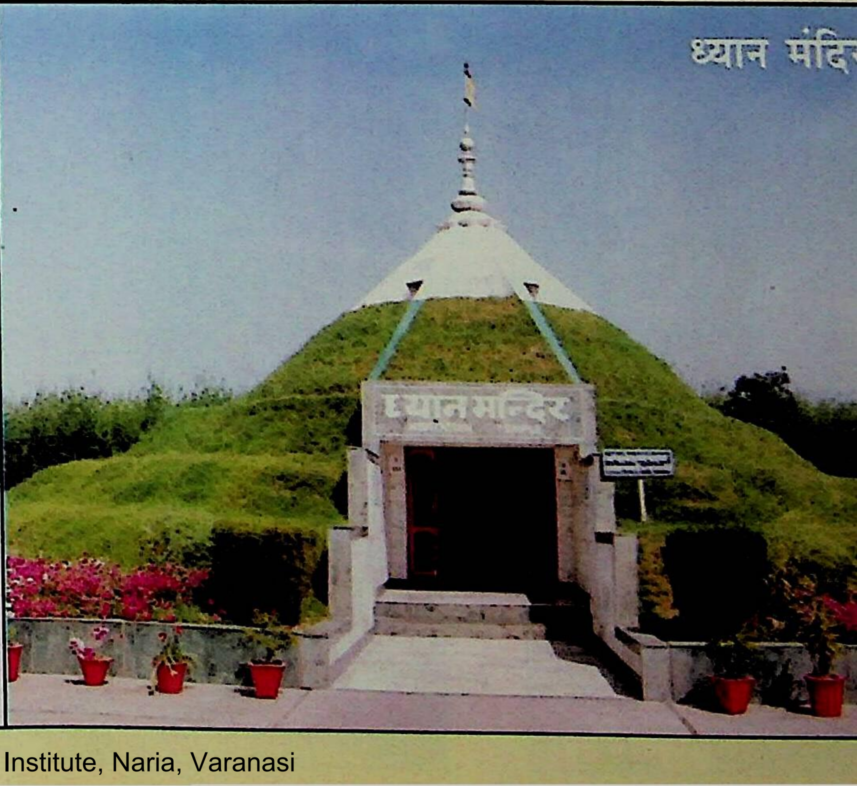
ध्यान मंदि

तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली प्रयाग - इलाहाबाद (उ.प्र.)

भगवान ऋषभदेव की दीक्षा एवं तपो भूमि प्रयाग - इलाहाबाद में वर्ष २००१ में
पूज्य गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से किया गया विकास

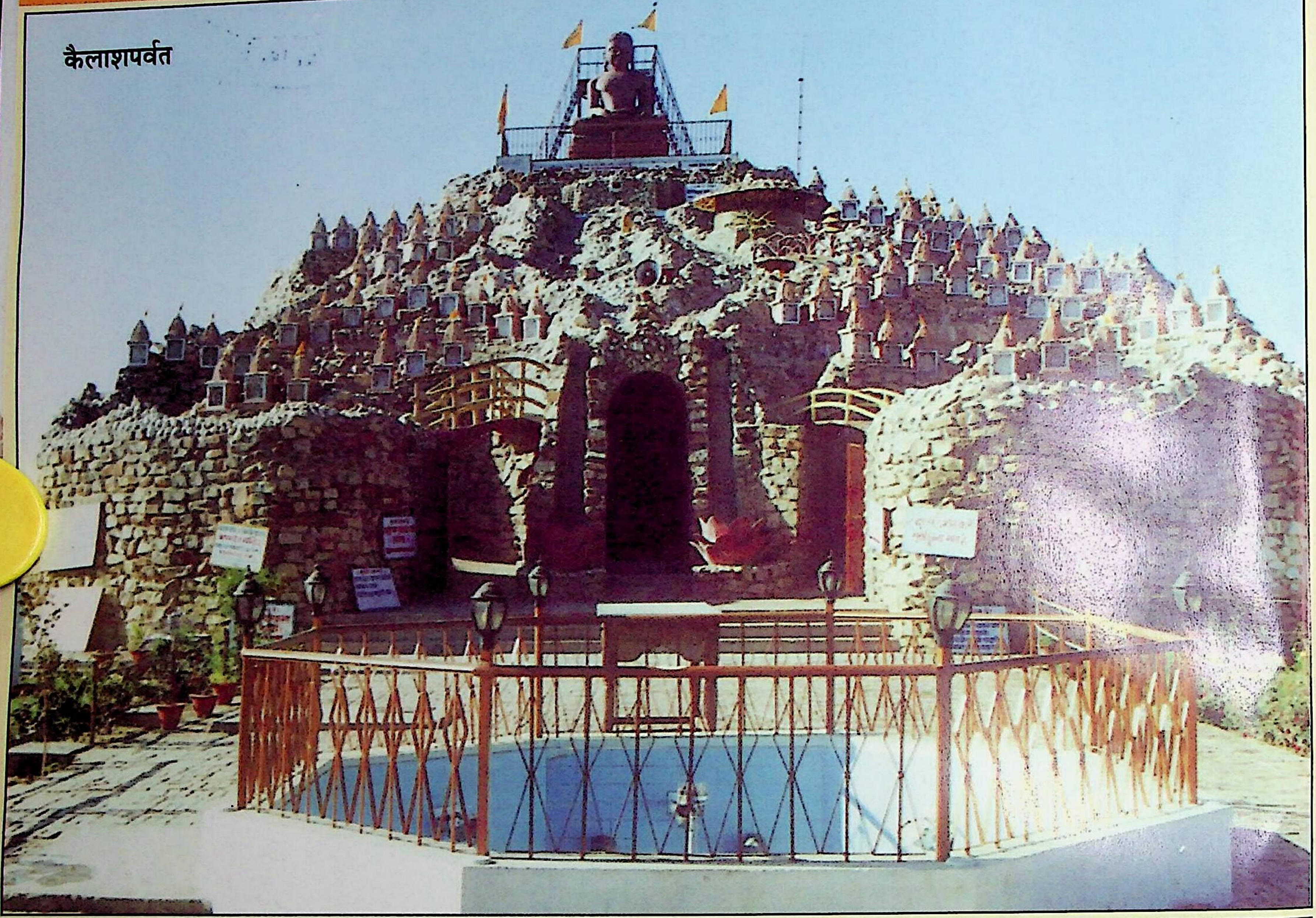
कैलाशपर्वत

भगवान ऋषभदेव कीर्तिस्तम्भ

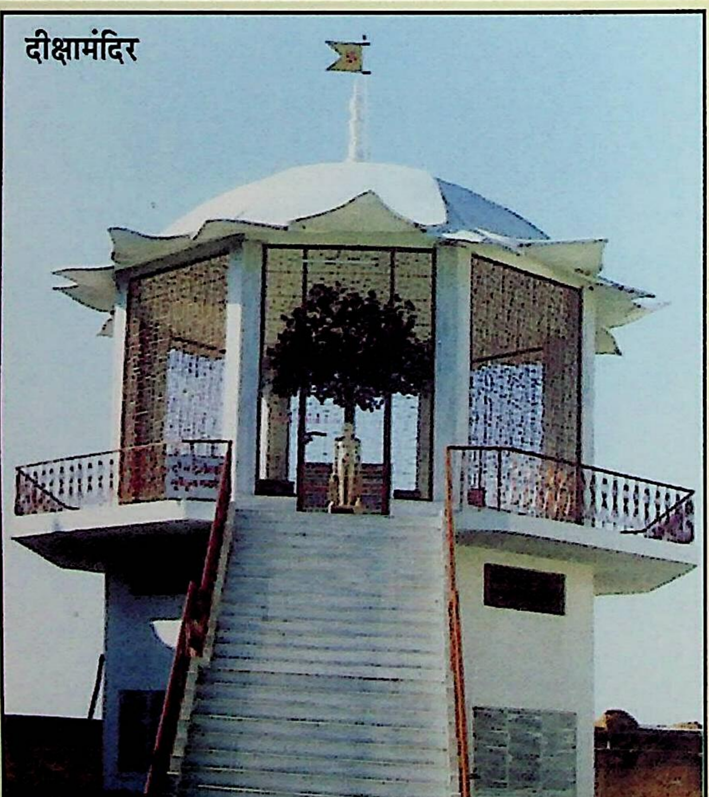
दीक्षामंदिर

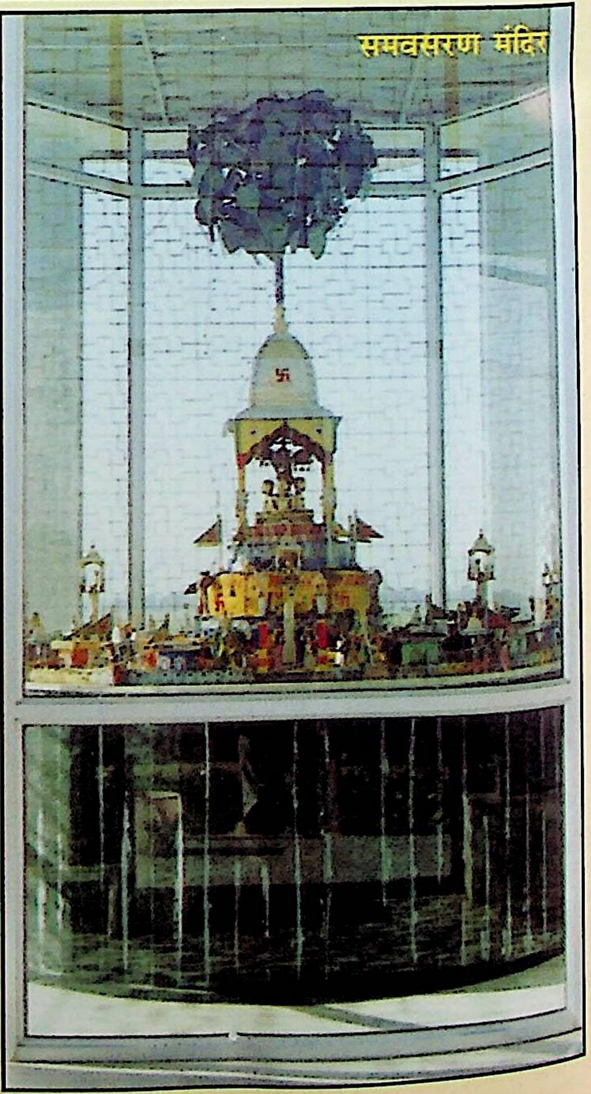
समवसरण मंदिर

4847

सम्पादकीय

* प्रधान सम्पादक की कलम से *

चिर प्रतीक्षित कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ प्रबुद्ध पाठकों के हाथों में सौंपते हुए हमें हार्दिक प्रसन्नता है। पिछली कई शताब्दियों से भगवान महावीर की जन्मभूमि के रूप में श्रीक्षेत्र कुण्डलपुर की लोकव्यापी मान्यता रही है। सनातन सिद्धभूमि श्री सम्मेदशिखर जी की यात्रार्थ आये सभी भक्तजन पावापुरी, राजगृही और गुणावां तीर्थों के साथ कुण्डलपुर की वंदना के लिए भी बराबर आते रहे हैं। सबसे पुराना प्रमाण 14वीं सदी का मिलता है, जब एक श्वेताम्बर संत श्री जिनवर्द्धनसूरि महाराज साहब ने अपने यात्रा वर्णन में पावापुरी, नालंदा, कुण्डलपुर और कांकदी की यात्रा का वर्णन किया है। दुःख इस बात का है कि इस लोक-विश्रुत तीर्थ का विकास पिछले 50-60 वर्षों से अवरुद्ध रहा और उसके कारण यह अन्य क्षेत्रों की तुलना में पिछड़ता गया। वर्तमान युग की वरिष्ठतम साध्वी पूज्या विदुषी गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी के मन को इस क्षेत्र की उपेक्षा को देखकर गहरी पीड़ा का अनुभव हुआ और उनके निर्मल मन में इस क्षेत्र के विकास की सुहावनी कल्पना ने जन्म लिया। पूज्य माताजी एक लोकविख्यात स्वप्नदर्शी एवं योजनाशिल्पी आर्यिका हैं। अपने विचार को मूर्तरूप देने की आकुलता उन्हें तब तक बेचैन करती रहती है, जब तक कि उसका क्रियान्वयन न हो जाये। गत दो वर्षों में विकसित कुण्डलपुर का जो भव्य रूप आज हमारे सामने है, उसके पीछे पूज्य माताजी की प्रशस्त प्रेरणा ही निहित है।

पिछले कुछ वर्षों से कुछ विदेशी विद्वानों की खोज के आधार पर वैशाली के उपनगर वासोकुण्ड को भी जन्मभूमि के रूप में प्रचारित करना शुरू किया गया है। इधर के कुछ वर्षों में एक सुनियोजित योजना-अभियान के अंतर्गत कुछ ग्रंथ, स्मारिकाएँ एवं शोध पत्रिकाओं के विशेषांक हमारे सामने आये हैं, जिनमें अनेक विरोधाभासों और विसंगतियों को स्थान मिल गया है, उनमें अनेक ऐसी घटनाएँ जाने-अनजाने लिख दी गई हैं, जो हमारे दिगम्बर जैनागम से तो मेल खाती ही नहीं हैं, साथ ही बेतरतीब और बेतुकी भी हैं। श्वेताम्बर और बौद्ध ग्रंथों तथा आधुनिक भूगोल के आधार पर वैशाली की जो खोज की गई है, वह अटकलों पर ही आधारित प्रतीत होती है। हमारे दिगम्बर जैन ग्रंथों में जन्मभूमि के रूप में वैशाली का उल्लेख तो बहुत दूर, संकेत तक नहीं पाया जाता।

इस नयी खोज में दिगम्बर जैन आगम ग्रंथों की भरपूर उपेक्षा तथा जैनेतर ग्रंथों के उद्धरणों को दिगम्बर जैनाचार्यों का मत कहकर समाज में भ्रम उत्पन्न करने की कोशिश की गयी है। उदाहरण के लिए, इन प्रकाशनों में सवस्त्र मुक्ति, केवलज्ञान के बाद भी उपसर्ग, भगवान के नौकाविहार आदि का समर्थन किया जा रहा है। हमारे दिगम्बर ग्रंथों में परमौदारिक शरीरी तीर्थंकरों के वर्षायोग का कोई उल्लेख नहीं मिलता, किन्तु इतर ग्रंथों में भगवान महावीर के साधनाकाल के 12 चातुर्मासों तथा केवलीचर्या के तीस वर्षीय विहार का विस्तृत लेखा-जोखा मिलता है। इस विवरण के साथ अनेक भ्रम उत्पन्न करने वाली बातें भगवान महावीर के जीवन के साथ जुड़ती जा रही हैं। भगवान महावीर की माता त्रिशला को सिंधुदेश के महाराजा चेटक की बहन, आम्रपाली नामक वेश्या को महावीर के वंशज लिच्छिवियों द्वारा वैशाली की नगर-वधू के पद पर प्रतिष्ठित किये जाने, गौशालक और गोपालक द्वारा उन्हें सताये जाने जैसी बेतुकी घटनाओं या कथनों को प्रचारित कर अपने जैनागम का अवर्णवाद किया जा रहा है। यदि ऐसे-ऐसे शास्त्र विरुद्ध वर्णनों पर विराम नहीं लगाया गया तो भविष्य में भोले-भाले श्रावक महावीर के दो-दो माता-पिताओं की बात पर भी विश्वास करने लगेंगे। भगवान महावीर के दर्शन से आनंद नामक श्रावक को केवलज्ञान होने की बात यदि स्वीकार्य होगी तो झाड़ू लगाते-लगाते एक बुढ़िया को अथवा बाँस पर खेलते-खेलते एक नट को केवलज्ञान होने की बात से हम कैसे इंकार कर सकेंगे? भगवान महावीर के चरित्र में इस तरह की मिलावट किया जाना एक गंभीर एवं चिंतनीय पहलू है, जिसका निरसन किया जाना अत्यंत आवश्यक था। प्रस्तुत ग्रंथ की सर्जना इसी पावन उद्देश्य को लक्ष्य में रखकर की गई है।

अन्य मतावलम्बियों अथवा तथाकथित भूगोल के नाम पर अघटित को घटित के रूप में कहने-लिखने के साथ-साथ अपने सिद्धान्तों में भी मलिनता उत्पन्न करने का यह प्रयास कथमपि उचित नहीं है। हमें तो वही वचन या कथन स्वीकार्य हैं, जिनमें पूर्वापर विरोध न हो, जो उक्तियों से खंडित न हो सकें तथा सत्य-हितकर बातों का उपदेश जिनमें भरा हुआ हो।

वैशाली को लेकर दिगम्बरेतर विद्वानों में भी एकमत नहीं पाया जाता। श्वेताम्बर मनि श्री कल्याण विजय जी जहाँ कुण्डलपुर को वैशाली का उपनगर मानते हैं, वहीं प्रसिद्ध इतिहासज्ञ प्रो. रामरघुवीर प्रसाद सिंह अपने आलेख 'महावीर की जन्मभूमि' में लिख रहे हैं–"कुण्डग्राम एक स्वतंत्र और विशाल नगर था, वह क्षुद्रग्राम नहीं, महाग्राम या पुर था।" प्रो. राधाकृष्ण चौधरी ने भी अपनी पुस्तक HISTORY OF BIHAR में महावीर की जन्मभूमि के रूप में वैशाली की मान्यता पर प्रश्नचिन्ह लगा दिया है। महावग्ग में जहाँ नातिका (ज्ञातृवंशी महावीर की जन्मनगरी के लिए प्रयुक्त शब्द) को वैशाली के पास बताया गया है, वहीं डॉ. रे. डेविड ने लिखा है–"ज्ञातृक्षत्रियों की नातिका राजगृही (बिहार) के पास है।" इतिहासकार डा. पी.सी. राय चौधरी ने तो अपनी पुस्तक JAINISM IN BIHAR में दिगम्बरों के मतानुसार कुण्डलपुर (नालंदा) को ही महावीर की जन्मभूमि स्वीकार किया है। सन् 1984 में मधुवन में आयोजित विद्वत् सम्मेलन में सम्मिलित विद्वानों एवं बिहार के शीर्षस्थ पुरातत्वविदों ने सर्वानुमति से पारित एक प्रस्ताव में कहा था कि वैशाली में उत्खनन से प्राप्त पुरावशेषों में कोई ऐसा प्रमाण नहीं मिला, जिससे वहाँ महावीर का जन्मस्थान सिद्ध हो सके। इन सब उद्धरणों से वैशाली की जन्मभूमि के रूप में मान्यता आज भी संदिग्ध ही बनी हुई है।

साधारण गृहस्थ या श्रावक बिना संदर्भ की आगम-बाह्य बातों को भी दिगम्बर जिनागम का कथन मानकर स्वीकार न कर लें, इसलिए एक ऐसे संदर्भ ग्रंथ की आवश्यकता का अनुभव किया जा रहा था, जिसमें दिगम्बर जैन आगम ग्रंथों को संदिग्ध बनाये जाने के इन प्रयत्नों पर विराम लग सके। प्रस्तुत कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ की प्रकाशन योजना के पीछे हम सबका यही लक्ष्य रहा है। छह खण्डों में विभाजित इस ग्रंथ में कुण्डलपुर की सदियों पुरानी पारम्परिक मान्यता, भगवान महावीर से संबंधित उनके पंचकल्याणक क्षेत्रों, उनकी पारिवारिक पृष्ठभूमि तथा उनके जीवन में घटने वाली घटनाओं के संदर्भ में ऐसी उपयोगी सामग्री का संकलन किया गया है, जो दिगम्बर जिनागम-सम्मत है। पूज्य गणिनी विदुषी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी की प्रशस्त प्रेरणा से आकाश की ऊँचाईयों को छूते हुए कुण्डलपुर के मंदिरों का जो सर्वांग परिचय उनके द्वारा प्रस्तुत किया गया है, वह भक्तजनों को नई जानकारियाँ तो देता ही है, साथ ही पूज्य माताजी के तलस्पर्शी वैदुष्य का भी परिचायक है। इस ग्रंथ की परिकल्पना और संयोजना में प्रज्ञाश्रमणी पूज्य आर्यिका श्री चंदनामती माताजी की जो सूझ-बूझ, संकल्पशीलता, निष्ठा और श्रम निहित रहा है, उसके प्रति सम्पादक मण्डल के हम सभी सदस्य नतमस्तक हैं।

हमें पूर्ण आशा है कि सभी आगमनिष्ठ पूज्य संतों, धर्मवंत्सल समाज सेवियों एवं आदरास्पद विद्वतजनों से प्राप्त अमूल्य सहयोग से प्रकाशित यह ग्रंथ हमारे प्रबुद्ध पाठकों एवं सभी भक्तजनों को अवश्य ही संतुष्ट कर सकेगा। इस इतने बड़े कार्य में जो कमियाँ रह गई हैं, उसके लिए हमारा अपना प्रमाद ही जिम्मेदार रहा है, हमारे सभी हितैषी उस पर ध्यान न देते हुए इस ग्रंथ में प्रकाशित प्रामाणिक सामग्री से पूरा-पूरा लाभ उठाते हुए अपनी श्रद्धा को अविचलित बनाए रखेंगे, ऐसा हमें विश्वास है।

–नरेन्द्रप्रकाश जैन

(कृते-सम्पादक मण्डल)

आद्य वक्तव्य

अभिनंदन ग्रंथों की शृँखला में विशेषरूप से महापुरुषों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व से जन-जन को परिचित कराने हेतु व्यक्तिगत नाम के अभिनंदन ग्रंथ प्रकाशन की परम्परा तो चली ही आ रही है किन्तु यह "कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ" उस परम्परा से भिन्न अपनी अलग पहचान बनाने वाली एक ऐसी कृति है जिसमें युगपुरुष, धर्मतीर्थ प्रवर्तक भगवान महावीर से लेकर आज तक चली आई 2600 वर्षों की गौरवगाथा को अपनी मूकवाणी द्वारा प्रदर्शित करने वाली महावीर जन्मभूमि की सुख और दुःखमिश्रित कहानी बताने का भरपूर प्रयास किया गया है।

इस ग्रंथ का कार्य करते हुए मुझे सबसे बड़ा अनुभव यह आया कि भगवान महावीर जहाँ जन-जन के आराध्य के रूप में आज जैनशासन के विश्वप्रसिद्ध व्यक्तित्व माने जाते हैं, वहीं उनके विषय में गर्भ से लेकर निर्वाण पर्यन्त अनगिनत मनगढ़न्त दन्तकथाएं ऐसी प्रचलित हो गई हैं जो सामान्य जनता के साथ-साथ बड़ी सहजता से कतिपय संतों एवं विद्वानों द्वारा भी स्वीकार कर ली गई हैं, इसीलिए उनके आलेखों में अनायास ही कुछ न कुछ असंगत बातें महावीर के जीवन की घटना बनकर समाविष्ट हो जाती हैं। वर्तमान में यह अत्यन्त आवश्यक हो गया है कि दिगम्बर जैन ग्रंथों के अनुसार भगवान महावीर की यथार्थता को समझा जाये और अन्य श्वेताम्बर-बौद्ध, वैदिक एवं आधुनिक ऐतिहासिक पुस्तकों से उद्धृत किये गये वाक्यांशों को उन्हीं-उन्हीं नामों से कथन किया जाना चाहिए, दिगम्बर साहित्य में उनका मिश्रण करके महावीर के सर्वोदयी व्यक्तित्व को विकृत नहीं करना चाहिए। जैसे-भगवान महावीर को चण्डकौशिक नाग के द्वारा डंसा जाना और खून की जगह उनके शरीर से दूध का निकलना मानना दिगम्बर जैन ग्रंथों में कहीं भी उपलब्ध नहीं है, यह श्वेताम्बर मान्यता है।

प्रस्तुत अभिनंदन ग्रंथ प्रकाशन की योजना इसी लक्ष्य को पूर्ण करने हेतु बनाई गई कि भगवान महावीर का जीवन दर्शन, उनकी पावन जन्मभूमि एवं उनके सर्वोदयी सिद्धान्तों की पुष्टि आदि विषय एक ही ग्रंथ में पूर्ण आगमिक दृष्टि से दिगम्बर जैन धर्मानुसार प्राप्त हो सके। यद्यपि भरसक प्रयत्नों के द्वारा ग्रंथ के सम्पूर्ण मैटर को यथासंभव देखा गया है तथापि कहीं दृष्टिचूक या प्रूफ की अशुद्धि रह जाना स्वाभाविक है।

इस ग्रंथ के **प्रथम खण्ड** में 224 पृष्ठ हैं उनमें परमपूज्य आचार्य, मुनि, आर्यिका, क्षुल्लक-क्षुल्लिका एवं भट्टारक आदि के मंगल आशीर्वाद एवं विनयांजलियाँ हैं पुनः राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री आदि राजनेता, न्यायाधीश एवं प्रशासनिक अधिकारी आदि की शुभकामनाएं दी गई हैं जो सम्पूर्ण राष्ट्र की ऋषि परम्परा एवं राज्य शासन परम्परा की ओर भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर के प्रति श्रद्धा का प्रतीक हैं। इसके पश्चात् महावीर स्वामी के अनन्य श्रद्धालु धीमान्, श्रीमान् एवं जन-जन की अन्तर्भक्ति को प्रदर्शित करने वाली पुष्पांजलि और काव्यगंगा प्रवाहित हुई है। यह खण्ड भक्ति की गागर में सागर का रूप लेकर सम्पूर्ण देश का प्रतिनिधित्व करने वाला समझना चाहिए। समयाभाव अथवा सम्पर्काभाव के कारण जो महानुभाव अपनी श्रद्धा को इसमें प्रेषित नहीं कर सके हैं, वे भी इसे श्रद्धा से पढ़ें और एक बार कुण्डलपुर (नालंदा) के साक्षात् दर्शन करके भक्तिपुष्प समर्पित कर अपने जीवन को सार्थक अवश्य बनावें।

अभिनंदन ग्रंथ के 184 पृष्ठीय **द्वितीय खण्ड** में **"भगवान महावीर एवं जैनधर्म"** विषय पर लेखकों के लेख हैं जिसमें अनादिनिधन जैनधर्म के साथ-साथ तीर्थंकरों का अनादिकालीन अस्तित्व, भगवान महावीर का जीवनदर्शन (हिन्दी, अंग्रेजी एवं सचित्र), उनके जीवन के विभिन्न पहलुओं पर दिगम्बर-श्वेताम्बर मतानुसार अन्तर, नाटिका तथा करणानुयोग के अनुसार जैनभूगोल की रचना जम्बूद्वीप का भी वर्णन है। इसके अतिरिक्त इस खण्ड में जैनधर्म के प्राचीनतम ग्रंथ षट्खण्डागम एवं कषाय पाहुड़ से संबंधित संक्षिप्त साररूप आलेख हैं जिन्हें कि भगवान महावीर की दिव्यध्वनि के आधार पर ग्रथित द्वादशांग का अंश ही समझना चाहिए।

तृतीय खण्ड का नाम है– **"भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर-एक आगमोक्त सत्य"**। इसमें 2600 वर्ष प्राचीन

कुण्डलपुर नगरी की ऐतिहासिकता, पुरातात्विक उपयोगिता एवं विशेषरूप से आगमवाक्यों पर श्रद्धा से उद्भूत वाणी का संग्रह करके आप सभी को भगवान महावीर की वास्तविक जन्मभूमि से परिचित कराने का प्रयास किया गया है। इसमें 108 पृष्ठ हैं जिनमें शोधपूर्ण लेखों को यहाँ संग्रहीत किया गया है। इन्हें आप श्रद्धापूर्वक पढ़ें और कुण्डलपुर का प्रतिदिन पूजा-आरती के माध्यम से स्मरण कर पुण्यार्जन करें

चतुर्थ खण्ड का नाम है–**"पंचकल्याणक तीर्थ एवं जैन ऐतिहासिक उल्लेख"**। इसमें चौबीस तीर्थंकरों की 16 जन्मभूमियों के परिचय, अन्य कल्याणक एवं पाँच निर्वाणभूमियों एवं भारत के प्रमुख दिगम्बर जैन तीर्थों के परिचय संक्षेप में दिये गये हैं। ऐतिहासिक उल्लेखों में भगवान महावीर के प्रथम गणधर श्री गौतम स्वामी का परिचय एवं उनकी प्रमुख कृतियों का परिचय है तथा उसी क्रम परम्परा में बीसवीं सदी के प्रथमाचार्य चारित्रचक्रवर्ती श्री शांतिसागर महाराज तक का उल्लेख है एवं ऐतिहासिक साध्वी के रूप में महावीर समवसरण में 36000 आर्यिकाओं में प्रमुख गणिनी आर्यिका श्री चंदना महासती का जीवनवृत्त भी दर्शाया गया है। दिगम्बर जैन परम्परानुसार इनका परिचय दृष्टव्य है क्योंकि चंदनासती के विषय में भी अनेक भ्राँन्तियाँ जैसे कि चन्दना के अंग-अंग का मोल होना, उसे बेची जाना आदि बातें समाज में व्याप्त हैं। उन्हें दूर करके सत्य तथ्यों से परिचित कराना इस खण्ड का प्रमुख उद्देश्य है। इस खण्ड में 128 पृष्ठ हैं।

पंचम खण्ड में 88 पृष्ठ हैं जो **"आकाश की ऊँचाईयों को छूता कुण्डलपुर"** का मानो प्रत्यक्ष दिग्दर्शन कराते हैं। कुण्डलपुर में विकास के नाम पर हुए जितने भी मंदिर, महल आदि के निर्माण हैं उन सबका इसमें सुन्दर वर्णन हिन्दी-अंग्रेजी में दिया गया है। नंद्यावर्त महल परिसर में लगाये गये लगभग सभी शिला लेखों का संग्रह है, मनोकामनासिद्धि महावीर व्रत विधि एवं पूजा के साथ-साथ इस खण्ड में पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा भगवान महावीर 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव के अंतर्गत किये गये कार्यकलापों का भी संक्षिप्त वर्णन है।

पुनश्च अंतिम **छठे खण्ड** में मात्र 40 पृष्ठ हैं किन्तु इसमें है कुण्डलपुर के नाम को देश के कोने-कोने में पहुँचाने वाले **"भगवान महावीर ज्योति रथ का प्रवर्तन"** का वर्णन। पुनः रथ प्रवर्तन, कुण्डलपुर विकास एवं प्रस्तुत ग्रंथ के प्रकाशन की प्रेरणास्रोत पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिका शिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी का संक्षिप्त परिचय प्रदान किया गया है।

इस प्रकार छह खण्डों में विभक्त "षट्खण्डागम" के समान इस अभिनंदन ग्रंथ की रूपरेखा पूज्य गणिनी ज्ञानमती ने बनाकर हम लोगों को ज्ञानार्णव-ज्ञानसमुद्र में अवगाहन करने का सौभाग्य प्रदान किया है तथा आगमसम्मत अनेक लेखों को उन्होंने स्वयं लिखकर प्रदान किया है। उनका यह उपकार कभी विस्मृत नहीं किया जा सकता है। इस ग्रंथ का मैटर पढ़कर उसमें यथास्थान अपने अमूल्य सुझाव देते हुए पीठाधीश क्षुल्लक मोतीसागर महाराज ने अत्यधिक परिश्रम किया है। वे विशेष रूप से साधुवाद के पात्र हैं। पूज्य माताजी द्वारा संकल्पित प्रत्येक कार्यों को मूर्तरूप देने हेतु आप सतत अग्रसर रहते हैं। ग्रंथ के प्रधान सम्पादक प्राचार्य श्री नरेन्द्रप्रकाश जी की गुणग्राहकता भी मुझे प्रभावित किये बिना नहीं रहती जो वास्तविकता से परिचित होकर हम लोगों के द्वारा किये जा रहे परिश्रम का मूल्यांकन करते हैं, उनके साथ सभी सम्पादकों को सरस्वती की सतत सेवा हेतु मंगल आशीर्वाद है। कुण्डलपुर के निर्माण कार्य को यथासमय पूर्ण कराने में सतत चिन्तित रहने वाले कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जी जहाँ कुण्डलपुर के चातुर्मास में लगभग प्रतिदिन आयोजित होने वाले कार्यक्रम सफल बनाते हैं, आने-जाने वाले भक्तों की पूरी व्यवस्था करते हैं, हस्तिनापुर-प्रयाग-अयोध्या-मांगीतुंगी आदि तीर्थों को संचालित करते हैं, वहीं इस ग्रंथ को भी उन्होंने समय पर पाठकों तक पहुँचाने में चित्र आदि की सेटिंग करने, प्रकाशन की व्यवस्था करने में पूरा परिश्रम किया है। पुनः जिनके सौजन्य से यह ग्रंथ प्रकाशित हो रहा है उन श्री कमलचंद जैन के लिए धर्मवृद्धि का बहुत-बहुत मंगल आशीर्वाद है। उनका परिवार इसी प्रकार सतत धर्म, गुरु एवं साहित्य की सेवा में लगा रहे, यही प्रेरणा है।

यह अभिनंदन ग्रंथ आप सभी के समीचीन ज्ञान की वृद्धि में निमित्त बने, निष्पक्षता के साथ सभी लोग सच्चाई को ग्रहण करें एवं भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर का यश पूरे विश्व में प्रसारित हो, इसी भावना के साथ–

16-10-2004

–आर्यिका चन्दनामती

प्रकाशकीय

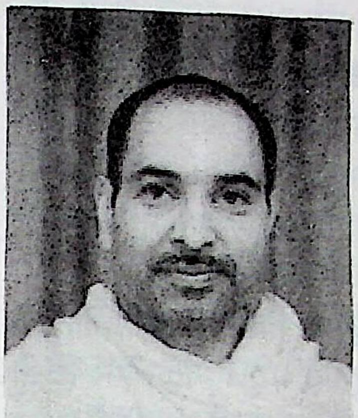

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान, जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर द्वारा संचालित वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला के द्वारा जहाँ हमने पिछले 30 वर्षों में 250 ग्रंथ लाखों की संख्या में प्रकाशित किये हैं, वहीं प्रस्तुत ग्रंथ "भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ" भी इस ग्रंथमाला का एक गौरवपूर्ण प्रकाशन है, जो भारतीय संस्कृति एवं जैन इतिहास के संरक्षण का जीवन्त उदाहरण है।

भगवान महावीर के निर्वाण के पश्चात् अनेकों बार हमारी आध्यात्मिक संस्कृति एवं भौतिक विचारधाराओं में परिवर्तन आया है जिससे उसकी मजबूत जड़ें भी कम्पित होकर पश्चिमी सभ्यता की वैशाखियों का सहारा लेने लगी हैं। सबसे अधिक प्रभाव भारतदेश की भौगोलिक सम्पदा पर पड़ा है, इसलिए यहाँ का वृहत्काय भूभाग दूसरे देशों की सीमा में चला गया और विद्यमान भौगोलिक स्थितियाँ भी परिवर्तन के साथ-साथ लघुकाय सीमाओं के रूप में मानचित्र में दृष्टिगत होती हैं।

भगवान ऋषभदेव से लेकर महावीर पर्यंत चौबीस महापुरुष अनादिनिधन जैनधर्म के वर्तमानकालीन 24 तीर्थंकर के रूप में जाने जाते हैं। उन सभी की वर्तमान में 16 जन्मभूमियों में से अनेक जन्मभूमि अत्यन्त उपेक्षित एवं जीर्ण-शीर्ण अवस्था में हैं जिनका जीर्णोद्धार और विकास करना जैनसमाज का प्रथम कर्तव्य है।

कुण्डलपुर की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि–जहाँ आज से 2603 वर्ष पूर्व जैनधर्म के 24वें तीर्थंकर भगवान महावीर ने जन्म लेकर विश्व को "जिओ और जीने दो" का अमर संदेश प्रदान किया था, उनकी माता त्रिशला ने जहाँ 16 स्वप्न देखकर महावीर जैसे महाप्रतापी, मोक्षगामी पुत्र को जन्म दिया था, पिता सिद्धार्थ ने जहाँ पुत्र जन्म की खुशी में अपने सारे भण्डार खोलकर जनता को किमिच्छक दान बांटा था, धनकुबेर ने जहाँ माता त्रिशला के आंगन में लगातार 15 महीने तक (गर्भ में आने के 6 माह पूर्व से लेकर जन्म होने तक) करोड़ों रत्न बरसाए थे तथा साक्षात् सौधर्म इन्द्र ने असंख्यदेवों के साथ आकर भगवान का जन्मकल्याणक महोत्सव मनाया था, वह इस कृतयुग में अंतिम तीर्थंकर की जन्मभूमि होने का सौभाग्य प्राप्त करने वाली "कुण्डलपुर" नगरी है। क्योंकि भगवान महावीर के पश्चात् इस धरती पर किसी तीर्थंकर का जन्म नहीं हुआ और जैन आगम के अनुसार अब लगभग 81 हजार 500 वर्ष (81500) के बाद अयोध्या नगरी में पुनः तीर्थंकरों के जन्म की परम्परा प्रारंभ होगी उससे पहले तक महावीर स्वामी का ही शासनकाल जानना चाहिए।

कुण्डलपुर चतुर्थकाल की अंतिम रत्नगर्भा भूमि है–यह आगमिक सत्य है कि भगवान महावीर के बाद वर्तमानकाल में अन्य कोई भी तीर्थंकर नहीं हुए हैं और यदि कभी किसी ने 25वें तीर्थंकर की कल्पना भी की है तो दिगम्बर जैन समाज ने उसका डटकर खंडन किया है। अब तो आगामी चतुर्थ काल आने पर ही 'चौबीसी' होना संभव होगा। ज्ञातव्य ही है कि भविष्यत्काल की इस चौबीसी के प्रथम तीर्थंकर का निर्णय तो महावीर भगवान के समवसरण में ही हो गया था जब राजा श्रेणिक ने अपार जिनभक्ति के साथ उन्हीं के पादमूल में तीर्थंकर प्रकृति का बंध किया था, जो आने वाले चतुर्थ काल में 'महापद्म' नाम के प्रथम तीर्थंकर के रूप में अयोध्या में जन्म लेंगे।

प्राचीन काल से ही पूजा, आरती, भजन इत्यादि के द्वारा महावीर जन्मभूमि के रूप में जिस कुण्डलपुर नगरी का गुणगान किया जाता रहा है तथा वर्तमान युग में जिस भूमि ने अंतिम बार 'रत्नगर्भा' की संज्ञा को सार्थक किया था वह **सब तीर्थों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण** कुण्डलपुर की भूमि ही है क्योंकि उसके बाद किसी भी अन्य भूमि को यह सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ कि जहाँ 15-15 महीने तक रत्नों की वर्षा हुई हो और तीर्थंकर महापद्म के जन्म से पूर्व अब यह पुनः संभव ही नहीं है।

प्रिय बन्धुओं! यूँ तो अत्यन्त प्राचीन काल से मंदिर, मूर्ति, तीर्थ निर्माण, जीर्णोद्धार तथा उनके विकास की परम्परा

चली आ रही है, जैसे कि युग की आदि में भगवान ऋषभदेव के पुत्र सम्राट् भरत चक्रवर्ती ने कैलाशपर्वत पर रत्ननिर्मित तीन चौबीसी विराजमान की थी, पुनः उसका जीर्णोद्धार आज से 9 लाख वर्ष पूर्व राजा दशरथ ने किया था, ऐसा जैनरामायण में उल्लिखित है।

उन्नीसवीं-बीसवीं शताब्दी में प्रथमाचार्य चारित्रचक्रवर्ती श्री शांतिसागर जी महाराज ने भी कुंथलगिरि, कुंभोज बाहुबली आदि तीर्थों के विकास एवं जीर्णोद्धार की प्रेरणा प्रदान की तो उन्हीं के प्रथम पट्टाचार्य श्री वीरसागर जी महाराज द्वारा दीक्षित गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने भी जिनसंस्कृति के संरक्षण हेतु तीर्थंकर जन्मभूमियों के विकास की आवश्यकता को बताते हुए समस्त जैन समाज को इस महत्तम कार्य की ओर सम्प्रेरित किया। संपूर्ण भारतवर्ष की दिगम्बर जैन समाज के समर्थन एवं सहयोग ने इस लक्ष्य की ओर तेजी से बढ़ते कदमों को भारी बल प्रदान किया।

परन्तु फिर भी कतिपय लोग इस विकास क्रम से व्यर्थ ही व्यग्र हो उठते हैं और अपनी लेखनी एवं वाणी से वे किस प्रकार का विष वमन कर रहे हैं, यह शायद उन्हें स्वयं भी भान नहीं रहता है। महानुभावों! यूँ तो किसी न किसी छोटी-बड़ी बात को लेकर घर-घर में, भाई-भाई में, पिता-पुत्र में, सास-बहू आदि में विवाद या मतभेद की स्थितियाँ उत्पन्न हो जाया करती हैं परन्तु मत-भेद के साथ मन-भेद लाने से स्थितियाँ विपरीत हो जाती हैं, जिनसे सदा ही बचने का प्रयास करना चाहिए। इसी प्रकार धर्मक्षेत्र में भी कई बार विषम परिस्थितियाँ आ जाती हैं जब शास्त्रीय मतभेद आपस में हो जाते हैं। जब सन् 1974 में भगवान महावीर का 2500वाँ निर्वाण महोत्सव मनाया गया तब भगवान की निर्वाणभूमि पावापुरी के प्रति भी एक विवादास्पद प्रसंग आया तथा तीर्थक्षेत्र कमेटी के तत्कालीन अध्यक्ष साहू श्री शांतिप्रसाद जी जैन ने सदियों से मान्यता प्राप्त निर्वाणभूमि पावापुरी (नालंदा) के स्थान पर उ.प्र. के गोरखपुर जिले में स्थित पावा (सठियावां) को भगवान महावीर की निर्वाणभूमि घोषित कर दिया था। इस संदर्भ में उनका निम्न पत्र दृष्टव्य है–

(प्राचीन पावा पुस्तक, पृ. 102 से उद्धृत)

आल इण्डिया दिगम्बर भगवान महावीर

2500वाँ निर्वाण महोत्सव सोसाइटी, दिल्ली ने पावा (पावानगर-सठियावां-फाजिलनगर) में मंदिर निर्माण कराने का महत्वपूर्ण निर्णय लिया है।

(देखिए-महोत्सव बुलेटिन, दि. 10 नवम्बर तथा "वीर" दि. 15 नवम्बर) इसी विषय में सोसाइटी के अध्यक्ष श्रीमान साहू शांतिप्रसाद जी जैन के दिगम्बर 13 अक्टूबर 1972 के उस पत्र का कुछ भाग जो उन्होंने श्री पावानगर निर्वाणक्षेत्र समिति के तत्कालीन अध्यक्ष श्री राय देवेन्द्र प्रसाद जी जैन गोरखपुर को लिखा है–

My Dear Devendra Prasad ji

The matter has been considered by the committee and the Committee has decided that a Temple of Bhagwan Mahavir should be constructed at PAWA. The views of the Committee are that the area of the garden should be quite large which should not be less than 10 to 20 acres,.............The Committee also feels that the Temple should be constructed by the side of or in the Midst of a Pond.........................

Yours sincerely,
S.P. Jain

(सोसाइटी ने पावा-फाजिलनगर में मंदिर बनाने के लिए 5 लाख रुपये की स्वीकृति दी है। "आज" दि.9, दिसम्बर 72)।

मैं सम्पूर्ण जैन समाज से पूछना चाहता हूँ कि क्या आज तक आप सब ने पावा (सठियावां) को भगवान महावीर की निर्वाणभूमि मानकर वहाँ निर्वाणलाडू चढ़ाया है? वास्तविकता तो यह है कि शत-प्रतिशत समाज पावापुरी (नालंदा) स्थित जलमंदिर को भगवान की निर्वाणभूमि मानकर प्रतिवर्ष वहाँ निर्वाणलाडू चढ़ाती है। समाज द्वारा इस नई निर्वाणभूमि को स्वीकार न किये जाने के कारण पावा (सठि.) विकसित होने के पूर्व ही विस्मृत कर दिया गया। यहाँ चिन्तनीय बात यह है कि साहू श्री शांतिप्रसाद जी ने एवं तीर्थक्षेत्र कमेटी ने पावा का समर्थन तो किया था परन्तु कभी भी पावापुरी (नालंदा) का विरोध नहीं किया था, न ही उसे मानने वाले या उसका विकास करने वाले किसी श्रद्धालु के प्रति किन्हीं प्रकार के अशोभनीय शब्दों का प्रयोग किया था और न पावापुरी (नालंदा) के समर्थकों के प्रति कोई

व्यक्तिगत मिथ्या दोषारोपण किया था, जैसा कि वर्तमान में भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर के विकास से बौखला कर कुछ तथाकथित व्यक्ति पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी के प्रति कर रहे हैं। मैं तो वर्तमान की अशोभनीय शब्दों में आक्षेप करने की प्रवृत्ति को भी हुण्डावसर्पिणी काल के दोष का ही एक नमूना मानता हूँ।

मात्र पावापुरी या कुण्डलपुर (नालंदा) के स्थान पर पावा (फाजिलनगर) या वैशाली कुण्डग्राम की ही बात नहीं है वरन् भगवान पार्श्वनाथ की केवलज्ञान कल्याणक भूमि अहिच्छत्र (रामपुर-उ.प्र.) के स्थान पर बिजौलिया को भी आज केवलज्ञान कल्याणक भूमि घोषित करने का उपक्रम किया गया है। इसी प्रकार भगवान शीतलनाथ की जन्मभूमि भद्दिलपुर को कोलुआ पहाड़ (झारखंड), इटखोरी एवं विदिशा इन तीन स्थानों पर माना जा रहा है, भगवान मल्लिनाथ एवं नमिनाथ की जन्मभूमि मिथिलापुरी को कोई काठमांडू (नेपाल) में तथा कोई बिहार में दरभंगा के निकट (राजनीतिक नक्शे के अनुसार) मानते हैं परन्तु कहीं पर भी आपसी वैमनस्य एवं अशोभनीय व्यवहार का प्रसंग सामान्यतः नहीं आया है।

वैशाली को तो सन् 1956 से बसाढ़ गाँव के स्थान पर बसाकर महावीर जन्मभूमि की संज्ञा प्रदान की गई परन्तु सदियों से पूज्य कुण्डलपुर (नालंदा) से कुछ लोगों को इतना विद्वेष क्यों है, यह बात समझ में नहीं आती है। जन्मभूमि के नाम पर पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी ने कोई नया तीर्थ तो बनाया नहीं है वरन् सदियों से जन-जन के द्वारा महावीर जन्मभूमि के रूप में पूजी जाने वाली कुण्डलपुर की भूमि का मात्र सुन्दर नवविकास सम्पन्न किया है, लोगों की आस्था को दृढ़ आधार प्रदान किया है और आने वाले भविष्य के लिए संस्कृति का संरक्षण करने का महान उद्यम किया है। पुनः व्यक्तिगत आक्षेप, निंदा, आलोचना इत्यादि उनके मार्ग में कंटक भला कैसे बन सकते हैं?

समाज में समय-समय पर पंथवाद, जातिवाद इत्यादि को लेकर न जाने कितने छोटे-बड़े विवाद रहे ही हैं, परन्तु आपसी विचार-विमर्श के द्वारा ही उनका समाधान संभव हो पाता है न कि आपसी वैरभाव एवं वैमनस्य के द्वारा। आपस में मतभेद भले ही हों परन्तु मनभेद नहीं होना चाहिए तभी सुखी परिवार, सुखी समाज एवं सुखी राष्ट्र की कल्पना साकार हो सकती है।

जन्मभूमि कुण्डलपुर के विरोधी एवं वैशाली के समर्थकों से मेरा तो यही कहना है कि पूज्य गणिनी माताजी के पास बैठकर शांतिपूर्वक शास्त्रीय चर्चा करें और इस जन्मभूमि विकास को आपसी वैमनस्य का रूप न प्रदान करें। क्योंकि किसी तीर्थ का विकास हमारी संस्कृति का उन्नयन है न कि पारस्परिक शत्रुता का बीजारोपण। वैशाली को महावीर की जन्मभूमि मानकर यदि आपकी आत्मा को शांति मिलती है तो हमें प्राचीन मान्यतानुसार कुण्डलपुर को जन्मभूमि मानने में उससे भी अधिक अच्छा लगता है।

तीर्थंकर महावीर की ऐतिहासिक जन्मभूमि कुण्डलपुर सदियों से जैनसमाज के श्रद्धा का केन्द्र रहा है। समय की परिवर्तनशीलता ने जब कुण्डलपुर की वैभववृद्धि को संकुचित कर दिया, तब उसको सांस्कृतिक, पुरातात्विक एवं प्राचीन धार्मिक दृष्टियों से वैभवसम्पन्न करने हेतु 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव मनाने का एक निमित्त उपस्थित हुआ। जैनसमाज की सर्वोच्च साध्वी गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से जन्मकल्याणक की सर्वोपरि उपलब्धि के रूप में इस जन्मभूमि कुण्डलपुर का जीर्णोद्धार एवं विकास भारत की सम्पूर्ण दिगम्बर जैन समाज के सहयोग से किया गया है। 29 दिसम्बर 2002 से प्रारंभ किये गये यहाँ के नूतन निर्माण प्रायः पूर्णता की ओर है। 28 अक्टूबर 2004, शरदपूर्णिमा को कुण्डलपुर महोत्सव एवं पूज्य श्री ज्ञानमती माताजी के 71वें जन्मजयंती के शुभ अवसर पर "नंद्यावर्त महल" नामक इस पूरे नवनिर्मित तीर्थ का लोकार्पण करते हुए हम गौरव का अनुभव कर रहे हैं।

जन्मभूमि विकास का प्रथम चरण कीर्तिस्तंभ–कुण्डलपुर के विकासक्रम में सर्वप्रथम 24 मार्च 2002 को पूज्य माताजी की प्रेरणा से प्राचीन मंदिर परिसर में भगवान महावीर स्वामी कीर्तिस्तंभ का शिलान्यास हुआ पुनः 12 फरवरी 2003 को उस 36 फुट ऊँचे कीर्तिस्तंभ में भगवान महावीर की सवा फुट पद्मासन प्रतिष्ठित 8 प्रतिमाएं विराजमान की गईं। जिनेन्द्र प्रतिमाओं एवं ऐतिहासिक चित्रों, शिलालेखों से समन्वित यह कीतिस्तंभ जिनधर्म एवं कुण्डलपुर की कीर्ति पताका फैलाने में यथा नाम तथा गुण को सार्थक कर रहा है।

कीर्तिस्तंभ निर्माण के साथ ही क्षेत्र के वैभवशाली विकास हेतु दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान हस्तिनापुर के

अंतर्गत भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर दि. जैन समिति का गठन किया गया जिसके द्वारा उत्तरमुखी 60 कट्ठे (2 एकड़) भूमि प्राचीन मंदिर के निकट ही लेकर उपरोक्त समिति के नाम रजिस्ट्री कराई गई।

विकास का द्वितीय चरण नंद्यावर्त महल परिसर में अनेक नवनिर्माण—भगवान महावीर के जन्म से पावन नंद्यावर्त महल के नाम पर ही कुण्डलपुर में लगभग दो एकड़ के इस भूखण्ड पर 29 दिसम्बर 2002 से "भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर दिगम्बर जैन समिति" द्वारा अनेक विकासशील योजनाओं के साथ नवनिर्माण प्रारंभ हुए उसमें सर्वप्रथम 7 से 12 फरवरी 2003 तक क्षेत्र के मूलनायक भगवान महावीर की अवगाहना प्रमाण 7 हाथ खड्गासन प्रतिमा, प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की 14 फुट उत्तुंग पद्मासन प्रतिमा, त्रिकाल चौबीसी भगवन्तों का पंचकल्याणक एवं भगवान महावीर का महाकुंभ मस्तकाभिषेक महोत्सव विशाल स्तर पर सम्पन्न हुआ पुनः मंदिरों के निर्माण के साथ-साथ जुलाई 2003 में नवग्रहशांतिकारक 9 तीर्थंकर प्रतिमाओं की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा हुई एवं जून 2004 में नंद्यावर्त महल के चैत्यालय में विराजमान भगवान शांतिनाथ, चन्द्रप्रभ, पार्श्वनाथ की धातु प्रतिमाओं का पंचकल्याणक धूमधाम से सम्पन्न हुआ। इसी शृंखला में 23 फरवरी 2004 को तीन मंदिरों के उत्तुंग कलात्मक शिखरों पर कलशारोहण हुआ, 2 जुलाई 2004 को त्रिकाल चौबीसी मंदिर में प्रतिमाएं विराजमान हुईं।

भगवान महावीर ज्योति रथ का प्रवर्तन और समापन—भगवान महावीर स्वामी के सर्वोदयी सिद्धान्त एवं उनकी जन्मभूमि कुण्डलपुर से जन-जन को परिचित कराने हेतु पूज्य माताजी ने 15 अप्रैल 2003 महावीर जयंती के शुभ दिन कुण्डलपुर से "भगवान महावीर ज्योति रथ" का प्रवर्तन करवाया। इस रथ के माध्यम से देश के विभिन्न प्रान्तों में नंद्यावर्त महल का रूपक पहुँचा और सभी जगह की दिगम्बर जैन श्रद्धालु जनता से प्राप्त सहयोग जहाँ कुण्डलपुर के द्रुतगति वाले विकास में सहयोगी बना वहीं हजारों भक्तों की भावनाएं कुण्डलपुर के साथ जुड़ी हैं। डेढ़ वर्ष के प्रवर्तन के पश्चात् उस ज्योतिरथ का समापन 28 अक्टूबर 2004 शरदपूर्णिमा के दिन कुण्डलपुर में ही हो रहा है।

भगवान महावीर ज्योति रथ का उद्घाटन 15 अप्रैल 2003 को पूज्य माताजी के संघ सानिध्य में कुण्डलपुर से प्रारंभ होकर 4 मई 2004 अक्षयतृतीया को इंदौर महानगर से परमपूज्य 108 आचार्यरत्न श्री अभिनंदनसागर जी महाराज के सानिध्य में उसका प्रवर्तन प्रारंभ किया गया पुनः मध्यप्रदेश, राजस्थान, हरियाणा, उत्तरप्रदेश, दिल्ली, पूर्वांचल आदि राज्यों में उस रथ ने 15 सितम्बर 2004 तक कुण्डलपुर की ज्योति पहुँचाकर जनमानस को यहाँ की विकासशील गतिविधियों से परिचित कराया है।

कुण्डलपुर की निर्माण योजनाओं में जिनमंदिरों के साथ-साथ नंद्यावर्त महल, आधुनिक सुविधायुक्त फ्लैटों वाली दो धर्मशालाओं (तीन-तीन मंजिल की) में 30 डीलक्स कमरों का निर्माण, पानी की टंकी, भोजनशाला, तीर्थ परिसर की पक्की बाउन्ड्री, क्षेत्र का विशाल मुख्य "सर्वार्थसिद्धि द्वार", कल्पवृक्ष कार्यालय एवं क्षेत्र से चार किलोमीटर दूर "कुण्डलपुर द्वार" आदि सभी निर्माण लगभग पूर्ण हो चुके हैं।

इन समस्त कार्यों को मूर्तरूप देने में पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा-आशीर्वाद, प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी का मार्गदर्शन एवं पीठाधीश क्षुल्लक श्री मोतीसागर महाराज का निर्देशन समिति को सतत संबल प्रदान करता रहा है। पूज्य श्री संघ के दो चातुर्मास (सन् 2003-2004) कुण्डलपुर तीर्थ पर आयोजित होने के कारण ही यहाँ के वृहत्काय निर्माण अति अल्प समय अवधि में पूर्ण हो सके हैं।

कुण्डलपुर के विकास के समापन अवसर पर अभिनंदन ग्रंथ का प्रकाशन—तीर्थ के जीर्णोद्धार, विकास एवं नवनिर्माण के साथ-साथ पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से हम लोगों ने "कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ" के प्रकाशन की भी एक योजना बनाई जिसमें समाज के सर्वाधिक वरिष्ठ विद्वान् प्राचार्य श्री नरेन्द्रप्रकाश जैन-फिरोजाबाद (उ.प्र.) को प्रधान सम्पादक मनोनीत किया गया तथा उनके साथ एक सम्पादक मण्डल को सहयोगी के रूप में समाविष्ट करके ग्रंथ की प्रकाशन सामग्री संग्रहीत करने का कार्य प्रारंभ हुआ।

कुण्डलपुर में पूज्य माताजी के संघ प्रवास के मध्य पिछले डेढ़ वर्ष में यद्यपि छोटी-बड़ी कई पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं फिर भी लगभग 1 वर्ष से यहाँ "भगवान महावीर हिन्दी-अंग्रेजी जैन शब्दकोश" का श्रमसाध्य वृहत्कार्य गणिनी माताजी के प्रमुख निर्देशन में संघस्थ आर्यिका श्री चंदनामती माताजी ने सम्पन्न किया। उसके प्रेस में जाने के पश्चात्

जुलाई 2004 से उन्होंने गुरु आज्ञानुसार तथा उनके द्वारा बनाये गये प्रारूप के अनुसार इस अभिनंदन ग्रंथ का कार्य हाथ में लेकर सम्पूर्ण प्रकाशन सामग्री का संग्रह करके उसको सूक्ष्मता से अवलोकन किया तथा पूज्य माताजी से विचार-विमर्श करके उसमें यथायोग्य संशोधन किया।

समय की अल्पता इस कार्य में भी उनके लिए विशेष परिश्रम का कारण बनी, फिर भी उन्होंने हमें समय पर ग्रंथ प्रकाशन हेतु सामग्री प्रदान की है। साथ ही पीठाधीश पूज्य क्षुल्लक श्री मोतीसागर जी महाराज ने ग्रंथ की लगभग पूरी सामग्री का अवलोकन कर उसमें यथायोग्य परिवर्तन-परिवर्द्धन करने में अपने अमूल्य सुझाव प्रदान किये हैं। इसलिए हम पूर्व निर्धारित कार्यक्रमानुसार यह अभिनंदन ग्रंथ पूरी साज-सज्जा के साथ आप सभी तक पहुँचाने में सफल हो सके हैं। इस सफलता के लिए मैं पूज्य दोनों माताजी एवं क्षुल्लक जी को शत-शत नमन करता हूँ।

इसके साथ ही संघस्थ सभी ब्रह्मचारिणी बहनों का पूरा सहयोग ग्रंथ की सामग्री संग्रहीत करने, प्रूफ रीडिंग करने आदि में प्राप्त हुआ है। विशेषरूप से ब्र. स्वाति बहन जी ने राजनेताओं एवं प्रशासनिक अधिकारियों की शुभकामनाएं प्राप्त कराने में एवं विजय कुमार जैन (पिंकू)-कानपुर (महावीर ज्योति रथ संयोजक) ने आचार्यों, मुनियों आदि के आशीर्वाद और विनयांजलि मंगाने में पूरा सहयोग प्रदान किया। जहाँ डॉ. अनुपम जैन-इंदौर ने पत्राचार की जिम्मेदारी संभाली, वहीं पं. श्री बाबूलाल राजकुमार जैन फागुल्ल ने इसे अल्प समय में छापकर पाठकों तक पहुँचाने में हमें अपना सक्रिय सहयोग प्रदान किया है। एतदर्थ मैं संस्थान की ओर से सभी सम्पादकों एवं इन सहयोगियों के प्रति आभार प्रगट करता हुआ सदैव सहयोग की अपेक्षा रखता हूँ।

ग्रंथ प्रकाशन में श्री कमलचंद कैलाशचंद जैन-खारीबावली, दिल्ली परिवार ने सहयोग प्रदान किया है, एतदर्थ इस परिवार के प्रति मैं आभार प्रगट करता हूँ और अंत में जिन-जिन लेखकों ने अपने लेख-विनयांजलि, शुभकामना, कविता, भजन आदि लिखकर ग्रंथ में प्रकाशनार्थ भेजे हैं.उन्हें भी धन्यवाद देता हूँ। मैं अपने सभी सुधी पाठकों को इस ग्रंथ को आद्योपान्त पढ़ने की प्रेरणा प्रदान करता हूँ ताकि भगवान महावीर, उनकी पवित्र जन्मभूमि एवं उनके पुरातन राजवंश के बारे में आगम सम्मत जानकारियों से परिचित हो सकें।

अंत में मैं भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर के प्रति नतमस्तक होता हुआ इस अभिनंदन ग्रंथ प्रकाशन की बेला में पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी को अनेकशः नमन करता हूँ कि जिन्होंने ग्रंथ का प्रारूप बनाकर उसे निर्णयात्मक स्थिति तक पहुँचाने में हमें प्रेरणास्पद शक्ति प्रदान की है। कुण्डलपुर विकास के समापन अवसर पर इस ग्रंथ का प्रकाशन सोने में सुगंध जैसा कार्य हुआ है। समस्त लोक के लिए यह कल्याणकारी एवं ज्ञानवर्धक होवे, यही मंगलकामना है।

—कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन

एक अद्वितीय जैन केन्द्र

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान

संक्षिप्त परिचय :

पिछले तीन दशकों में राजधानी दिल्ली की उत्तर दिशा में उत्तरप्रदेश के जिला मेरठ स्थित पौराणिक तीर्थ **हस्तिनापुर** में एक राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय आकर्षण का केन्द्र उभर कर आया है। 200 फुट के व्यास में सफेद और रंगीन पत्थरों से निर्मित जैन भूगोल की अद्वितीय वृत्ताकार रचना **'जम्बूद्वीप'** द्वारा अपने आधार पर वेष्ठित हल्के गुलाबी संगमरमर से निर्मित 93 फुट ऊँचे **सुमेरु पर्वत** की शोभा आज किसके मन को आकर्षित नहीं करती है?

प्राचीन जैन साहित्य एवं भूगोल के परिचायक, वैज्ञानिकों के लिए शोध केन्द्र, आध्यात्मिक उन्नयन के लिए पवित्र स्थान, मानसिक शांति एवं जिनेन्द्र भगवान की पूजन-भक्ति के सम्पूर्ण साधनों तथा समस्त आधुनिक सुविधाओं की उपलब्धता सहित इस अनुपम तीर्थ की जनक संस्था का नाम है– **दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान (रजि.)**। जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी का प्रावन प्रेरणा से 1972 में इस संस्थान का सूत्रपात किया गया। दिगम्बर जैन इंस्टीट्यूट ऑफ कास्मोग्राफिक रिसर्च **(Digambar Jain Institute of Cosmographic Research)** के नाम से प्रसिद्ध इस संस्थान का आधारभूत लक्ष्य था-जम्बूद्वीप का निर्माण और यह जम्बूद्वीप ही अंततः संस्थान का मुख्य कार्यालय बन गया।

जंबूद्वीप की 30 एकड़ पवित्र भूमि पर संस्थान के द्वारा संचालित विभिन्न योजनाओं/रचनाओं का संक्षिप्त विवरण निम्नांकित है–

1. **जंबूद्वीप रचना**– जिनेन्द्र भगवान की 207 प्रतिमाओं से पावन भारतीय शिल्प और जैन भूगोल का अद्वितीय उदाहरण। आधुनिक आकर्षणों-बिजली के फौव्वारे, नौका-विहार इत्यादि सहित।
2. **कमल मंदिर**– भगवान महावीर की अतिशयकारी खड्गासन प्रतिमा इस मंदिर में विराजमान हैं।
3. **ध्यान मंदिर**– 24 तीर्थंकर भगवन्तों की प्रतिमाओं सहित **'ह्रीं'** रचना इस मंदिर में विराजमान हैं, जो कि 'ध्यान' (Meditation) करने हेतु उत्तमोत्तम माध्यम हैं।
4. **त्रिमूर्ति मंदिर**– भगवान आदिनाथ, भरत एवं बाहुबली की खड्गासन प्रतिमाओं से इस मंदिर का नाम सार्थक है। कमल पर विराजमान भगवान नेमिनाथ एवं पार्श्वनाथ से इस मंदिर की शोभा द्विगुणित हो गयी है।
5. **वासुपूज्य मंदिर**– इस मंदिर में 12वें तीर्थंकर-वासुपूज्य स्वामी की खड्गासन प्रतिमा विराजमान हैं।
6. **शांति-कुंथु-अरहनाथ मंदिर**– जिन भगवन्तों के गर्भ, जन्म, तप और ज्ञान कल्याणकों से हस्तिनापुर की भूमि परम-पावन हुई है, उन शांति-कुंथु और अरहनाथ भगवंतों की खड्गासन प्रतिमाएं इस मंदिर में विराजमान हैं।
7. **ॐ मंदिर**– अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु परमेष्ठियों की प्रतिमाओं सहित **ॐ** (ओम) रचना इस मंदिर में विराजित हैं।
8. **विद्यमान बीस तीर्थंकर मंदिर**– इस मंदिर में विदेह क्षेत्र के विद्यमान 20 तीर्थंकरों की प्रतिमाएँ बीस कमलों पर विराजमान हैं।
9. **सहस्रकूट मंदिर**– जिनेन्द्र भगवान की 1008 प्रतिमाओं सहित।
10. **भगवान ऋषभदेव मंदिर**– धातु निर्मित भगवान ऋषभदेव की मूलनायक प्रतिमा एवं अन्य जिन प्रतिमाओं सहित।

11. भगवान ऋषभदेव कीर्तिस्तंभ–'भगवान ऋषभदेव अन्तर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव वर्ष' में निर्मित, भगवान के जीवन चरित्र को प्रदर्शित करने वाला, 8 प्रतिमाओं से समन्वित 31 फुट ऊँचा कीर्तिस्तंभ।

12. तेरहद्वीप मंदिर–निर्माणाधीन।

13. कैलाशपर्वत भवन–प्रथम जैन तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की निर्वाणभूमि कैलाशपर्वत की आकर्षक प्रतिकृति इस भवन में विराजमान है। 4 फरवरी 2000 को लाल किला मैदान, दिल्ली में प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा इस प्रतिकृति के समक्ष निर्वाणलाडू चढ़ाकर इसका उद्घाटन किया गया।

14. जम्बूद्वीप पुस्तकालय–प्राचीन हस्तलिखित एवं प्रकाशित लगभग 15000 ग्रंथों एवं पुस्तकों के संग्रह सहित।

15. जम्बूद्वीप औषधालय

16. ज्ञानमती कला मंदिरम्–हस्तिनापुर के पौराणिक इतिहास को प्रदर्शित करने वाली झांकियों सहित।

17. वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला–1972 में संस्थापित इस ग्रंथमाला द्वारा अब तक लाखों की संख्या में 200 से अधिक ग्रंथों एवं पुस्तकों के संस्करणों का प्रकाशन हो चुका है।

18. सम्यग्ज्ञान मासिक पत्रिका–यह पत्रिका 1974 से लगातार प्रकाशित हो रही है, जिसमें जैन शास्त्रों के सार रूप लेखों एवं अन्य महत्वपूर्ण कार्यक्रमों का संकलन एक स्थान पर प्राप्त होता है।

19. जम्बूद्वीप भोजनालय–आने वाले दर्शनार्थियों को प्रतिदिन निःशुल्क शुद्ध (जैनचर्या के अनुरूप) भोजन उपलब्ध कराता है।

20. धर्मशालाएं–200 से अधिक फ्लैट, बंगले इत्यादि, जिनमें ठहरने संबंधी सभी आधुनिक सुविधाएं उपलब्ध हैं।

21. मनोरंजन के साधन–तरह-तरह के झूले, बच्चों की रेल, नौका विहार, फौव्वारें, हरे-भरे लॉन, पूरे कैम्पस में घूमने के लिए ऐरावत हाथी (मोटर से संचालित), बिजली की आकर्षक व्यवस्था, सुन्दर प्राकृतिक दृश्य इत्यादि बरबस ही दर्शनार्थियों को इस भव्य रचना की तुलना 'स्वर्ग' से करने के लिए प्रेरित करते हैं।

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा आयोजित सामाजिक एवं शैक्षणिक कार्यक्रम

अक्टूबर 1981–जम्बूद्वीप (हस्तिनापुर) स्थल पर **'जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति सेमिनार'**।

31 अक्टूबर 1982–फिक्की ऑडिटोरियम-दिल्ली में **'जम्बूद्वीप सेमिनार'** जिसका उद्घाटन श्री राजीव गांधी, तत्कालीन संसद सदस्य द्वारा किया गया।

अप्रैल 1985–जम्बूद्वीप (हस्तिनापुर) स्थल पर **'जैन गणित और त्रिलोक विज्ञान'** विषय पर अंतर्राष्ट्रीय सेमिनार, जिसका उद्घाटन उ.प्र. के तत्कालीन मंत्री प्रोफेसर वासुदेव सिंह द्वारा किया गया।

जून 1982 से अप्रैल 1985–लालकिला मैदान, दिल्ली से तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरागांधी द्वारा 4 जून, 1982 को पूरे देश में भ्रमण करने हेतु **'जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति'** का उद्घाटन किया गया। जनसाधारण में अहिंसा, चारित्र-निर्माण तथा विश्व बन्धुत्व के संदेश का प्रचार-प्रसार करते हुए 1045 दिन तक देश भर में भ्रमण करने के पश्चात् यह ज्ञान ज्योति तत्कालीन रक्षामंत्री श्री पी.वी. नरसिम्हा राव (भूतपूर्व प्रधानमंत्री) द्वारा जम्बूद्वीप के मुख्य द्वार के समक्ष सदैव के लिए स्थापित कर दी गई।

1992–**'अंतर्राज्यीय चारित्र निर्माण संगोष्ठी'** का जंबूद्वीप स्थल पर श्री नेमीचंद जैन, विधायक (मध्यप्रदेश) की अध्यक्षता में आयोजन किया गया।

'जैन गणित' एवं 'चारित्र निर्माण' आदि विषयों पर हुई संगोष्ठियां मेरठ विश्वविद्यालय एवं दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित की गईं।

1993–अयोध्या में अवध विश्वविद्यालय-फैजाबाद के संयुक्त तत्वावधान में **'भगवान ऋषभदेव-मानवीय संस्कृति के प्रथम प्रवर्तक'** विषय पर संगोष्ठी ।

अक्टूबर 1995–मेरठ विश्वविद्यालय के संयुक्त तत्वावधान में पंचदिवसीय **'गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती साहित्य संगोष्ठी-95'**।

मार्च-अप्रैल 1998–तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा 9 अप्रैल 1998 को तालकटोरा स्टेडियम, दिल्ली से देश भर में भ्रमण करनें हेतु **'भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार रथ'** का उद्घाटन। 3 वर्ष तक देशभर में तीर्थंकर भगवन्तों के सर्वोदयी सिद्धांतों एवं जैनधर्म की प्राचीनता का प्रचार-प्रसार करने के पश्चात् यह समवसरण इलाहाबाद उच्च न्यायालय के तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश द्वारा तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली-प्रयाग तीर्थ (इलाहाबाद) में स्थापित कर दिया गया।

अक्टूबर 1998–जम्बूद्वीप स्थल पर **'राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन'**, जिसका उद्घाटन किया गया-स्वर्गीय श्री राजेश पायलट (तत्कालीन संसद सदस्य द्वारा)।

फरवरी 2000–तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा 4 फरवरी 2000 को लाल किला मैदान, दिल्ली में एक वर्ष तक चलने वाले **'भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव वर्ष'** का उद्घाटन किया गया।

इस युग में जैनधर्म के प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव पर '1008 संगोष्ठियों' की श्रृंखला, 'भगवान ऋषभदेव कीर्तिस्तंभों' का निर्माण तथा अनेक अन्य सामाजिक एवं शैक्षणिक कार्यक्रम राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इस वर्ष के अंतर्गत आयोजित किये गये ।

टोरण्टो, कनाडा, न्यू जर्सी आदि विदेश की भूमियों पर भी इन्हीं प्रेरणाओं के माध्यम से 6 फरवरी 2000 को निर्वाण महामहोत्सव मनाया गया।

जून 2000–जम्बूद्वीप स्थल पर 11 जून 2000 को **'जैनधर्म की प्राचीनता'** विषय पर राष्ट्रीय सेमिनार आयोजित किया गया।

फरवरी 2001–भगवान ऋषभदेव की दीक्षाभूमि-प्रयाग (इलाहाबाद) में **'तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ'** का नवनिर्माण। इस तीर्थ पर भगवान के दीक्षा कल्याणक के प्रतीक स्वरूप धातु के वटवृक्ष के नीचे 'ध्यान में लीन महायोगी ऋषभदेव की सवा पांच फुट उत्तुंग पिच्छी-कमण्डलु सहित खड्गासन प्रतिमा', केवलज्ञान कल्याणक के प्रतीक स्वरूप भगवान की चतुर्मुखी प्रतिमा सहित 'दिव्य समवसरण रचना' तथा निर्वाण कल्याणक के प्रतीक स्वरूप 50 फुट उत्तुंग 'कैलाशपर्वत' की भव्य रचना पर भगवान ऋषभदेव की 14 फुट उत्तुंग अत्यंत मनोहारी लालवर्णी पद्मासन प्रतिमा तथा तीन चौबीसी के प्रतीक स्वरूप 72 जिन प्रतिमाएं विराजमान हैं। 'ऋषभदेव कीर्तिस्तंभ' भी स्थापित है। 4 से 8 फरवरी 2001 तक 'भगवान ऋषभदेव पंचकल्याणक प्रतिष्ठा' एवं 1008 महाकुंभों से कैलाशपर्वत पर प्रतिष्ठित भगवान ऋषभदेव का 'महाकुंभमस्तकाभिषेक' कार्यक्रम।

सन् 2003-2004–भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) में **'नंद्यावर्त महल तीर्थ'** का निर्माण। भगवान महावीर मंदिर, भगवान ऋषभदेव मंदिर, नवग्रहशांति जिनमंदिर, त्रिकाल चौबीसी मंदिर और नंद्यावर्त महल (भगवान महावीर का जन्म महल) एवं उसमें स्थापित भगवान शांतिनाथ जिनालय इस तीर्थ के मुख्य आकर्षण हैं। महावीर के जन्मभूमि के प्रचार-प्रसार हेतु **भगवान महावीर ज्योति रथ** सम्पूर्ण भारतवर्ष में प्रवर्तन कर चुका है।

इस संस्थान के द्वारा समय-समय पर विविध पंचकल्याणक प्रतिष्ठाएं एवं धार्मिक कार्यक्रम सम्पन्न होते रहते हैं। संस्थान के अद्भुत कार्यकलाप की श्रेणी में हैं–**णमोकार महामंत्र बैंक**, जहाँ प्रतिवर्ष श्रद्धालु भक्तों द्वारा लाखों की संख्या में णमोकार मंत्र लिखकर जमा कराए जाते हैं, जो कि विश्वशांति की किरणें प्रसारित करने में अतिशय धरोहर स्वरूप हैं।

संस्थान द्वारा प्रदत्त पुरस्कार

गणिनी ज्ञानमती पुरस्कार–सन् 1995 से प्रत्येक पाँच वर्ष में यह पुरस्कार जैन धर्म पर उच्चस्तरीय शोध तथा संस्थान की शैक्षणिक गतिविधियों में सहयोग हेतु किसी भी जैन विद्वान को 1,00,000/- रुपये नगद की राशि, प्रशस्ति-पत्र इत्यादि के रूप में प्रदान किया जाता है।

जम्बूद्वीप पुरस्कार–सन् 2000 में स्थापित 25,000/- रुपये की नगद राशि सहित प्रतिवर्ष प्रदान किया जाने वाला पुरस्कार।

आर्यिका रत्नमती पुरस्कार–सन् 1999 में स्थापित 11,000/- रुपये की नगद राशि सहित प्रतिवर्ष प्रदान किया जाने वाला पुरस्कार।

कुण्डलपुर पुरस्कार–सन् 2004 में स्थापित 25,000/-रुपये की नगद राशि सहित प्रतिवर्ष प्रदान किया जाने वाला पुरस्कार।

श्री छोटेलाल जैन पुरस्कार–सन् 2004 में स्थापित 11,000/-रुपये की नगद राशि सहित प्रतिवर्ष प्रदान किया जाने वाला पुरस्कार।

नंद्यावर्त पुरस्कार–सन् 2004 से प्रारंभ (हरखेन कुमार जैन पारमार्थिक ट्रस्ट-आरा के सौजन्य से) 25000/-रुपये की नगद राशि सहित प्रतिवर्ष प्रदान किया जाने वाला पुरस्कार।

उपरोक्त पुरस्कारों के अतिरिक्त 'भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महोत्सव वर्ष' के अवसर पर घोषित 2,50,000/- रुपये की नगद राशि का **'भगवान ऋषभदेव नेशनल एवार्ड'** एवं 11,000/-रुपये की नगद राशि का **'ब्राह्मी पुरस्कार'** भी संस्थान द्वारा प्रदान किया गया। भगवान ऋषभदेव नेशनल एवार्ड सन् 2003 में 'कुण्डलपुर महोत्सव' के अवसर पर तत्कालीन सांसद एवं पूर्व वित्त राज्य मंत्री श्री वी.धनंजय कुमार जैन को कुण्डलपुर (नालंदा) में प्रदान किया गया।

इलाहाबाद-उ.प्र. में तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली प्रयाग दिगम्बर जैन तीर्थ का निर्माण

सन् 2001 में संस्थान के अन्तर्गत इस तीर्थ का निर्माण इलाहाबाद-बनारस हाइवे पर किया गया है। जिसका संचालन संस्थान की उपसमिति तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली प्रयाग प्रबन्ध समिति के द्वारा किया जा रहा है।

कुण्डलपुर तीर्थ का विकास

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) का विकास करने हेतु संस्थान के अन्तर्गत भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर दि. जैन समिति नाम से एक उपसमिति बनाई गई जिसके माध्यम से वहाँ "नंद्यावर्त महल" तीर्थ परिसर का निर्माण किया गया।

उपरोक्त सभी निर्माण योजनाएं, सामाजिक, धार्मिक तथा शैक्षणिक कार्यक्रम **पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी** की पावन प्रेरणा से उनके ससंघ सानिध्य में इस संस्थान द्वारा आयोजित किये गये हैं। संघस्थ **प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी** का मार्गदर्शन एवं **पीठाधीश क्षुल्लकरत्न श्री मोतीसागर जी महाराज** का निर्देशन इन समस्त कार्यों में अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा है।

इस प्रकार यह संस्थान अपनी विभिन्न समर्पित कार्य योजनाओं द्वारा समाज की सेवा में प्रतिक्षण संलग्न है।

मानसिक शांति, आध्यात्मिक विकास, प्राकृतिक सौन्दर्य एवं अन्य अनेक अवसरों को एक साथ प्राप्त करने हेतु यंह संस्थान जंबूद्वीप.दर्शन के लिए आपको सादर आमंत्रित करता है।

संस्थान की सम्प्रेरिका

पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी – एक अद्भुत व्यक्तित्व

जिनके जीवन का प्रत्येक क्षण स्वर्णिम इतिहास का एक नया पृष्ठ होता है, जिनके बढ़ते चरणों का प्रत्येक कदम नूतन तीर्थ के निर्माण का पन्ना होता है,जिनकी दृष्टि का प्रत्येक बिन्दु एक सिन्धु का स्वरूप होता है, जिनके लेखन का प्रत्येक शब्द जिनागम का सार होता है तथा जिनकी प्रत्येक चर्या एवं क्रिया मूलाचार को साकार करने वाली होती है, ऐसी पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी की पावन प्रेरणा से जहाँ हस्तिनापुर, अयोध्या, मांगीतुंगी आदि अनेक तीर्थों के जीर्णोद्धार एवं विकास हुए हैं, वहीं वे नित्य कई प्रेरणाओं के साथ समाज को नई राहें प्रदान कर रही हैं।

उन पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी का जन्म 22 अक्टूबर सन् 1934, आश्विन शुक्ला पूर्णिमा (शरदपूर्णिमा) को हुआ था। बचपन में ही धर्मग्रन्थों के स्वाध्यायादि के कारण एवं पूर्वजन्म के पुण्यसंस्कारवश मन में संसार से वैराग्य के अंकुर उत्पन्न हो गये और सन् 1952 में 18 वर्ष की युवावस्था में शरदपूर्णिमा के ही दिन आपने सप्तमप्रतिमारूप आजन्म ब्रह्मचर्यव्रत ग्रहण कर लिया, पुनः सन् 1953 में क्षुल्लिका दीक्षा तथा सन् 1956 में वैशाख कृष्णा दूज के दिन परमपूज्य चारित्रचक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर महाराज के प्रथम पट्टाधीश आचार्यश्री वीरसागर महाराज से आर्यिका दीक्षा धारण कर जैन समाज की प्रथम बालब्रह्मचारिणी आर्यिका एवं गणिनीप्रमुख जैसे सर्वोच्च पदों को सुशोभित किया है।

हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़ और मराठी आदि भाषाओं में सरल साहित्य रचना आपके जीवन का प्रमुख अंग रहा है, इसीलिए 250 ग्रंथों की लेखिका बनकर आज आप समाज की सर्वोच्च लेखिका के रूप में मान्य हैं। वर्तमान में षट्खण्डागम ग्रंथ (लगभग 2200 वर्ष पूर्व लिखे सर्वप्रथम सूत्र ग्रंथ) पर आप संस्कृत टीका लिख रही हैं, जिसका प्रथम भाग (हिन्दी सहित) प्रकाशित होकर सभी के समक्ष आ चुका है तथा द्वितीय भाग भी शीघ्र छपकर आने वाला है। लगभग 2304 पृष्ठों में षट्खण्डागम की 13 पुस्तकों के लगभग 5630 सूत्रों की टीका लिखी जा चुकी है एवं आगे की टीका का लेखनकार्य चल रहा है। भगवान जिनेन्द्र से यह प्रार्थना है कि कलियुग की यह सरस्वती माता युग-युग तक जीवन्त रहे ताकि सच्चे ज्ञान का अमृत संसार को प्राप्त होता रहे।

इनकी सम्प्रेरणा से विश्व को पुनः अतिप्राचीन महापुरुष भगवान ऋषभदेव एवं महावीर स्वामी के सिद्धान्तों से परिचित होने का अवसर प्राप्त हुआ है अतः उन अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह एवं अनेकान्त के सिद्धान्त जन-जन तक पहुँचाकर उन्हें सर्वव्यापी बनाना चाहिए। **पूज्य माताजी का सर्वोदयी संदेश है कि मानव जीवन की श्रृंखला में क्रूरता को हटाकर प्राणीमात्र के प्रति मैत्रीभाव धारण करें, सदाचारी और शाकाहारी बनें, प्रत्येक प्राणी को निर्भय होकर जीवन जीने का अधिकार प्रदान करें जिससे मानवीय संस्कृति पुनः जीवंत होकर सृष्टि की प्राकृतिक व्यवस्था को वास्तविक स्वरूप प्रदान कर सके।** पूज्य माताजी ने अक्टूबर 2003 में चौबीसों तीर्थंकरों की 16 जन्मभूमियों के जीर्णोद्धार एवं विकास हेतु "**भारतवर्षीय तीर्थंकर जन्मभूमि विकास समिति**" को स्थापित किया था, उस समिति का गठन हो चुका है और यथाक्रम उनके विकास का अभियान भी चल रहा है।

तीर्थ विकास के साथ-साथ जिनधर्मप्रभावना के क्रम में माताजी ने सम्पूर्ण जैन समाज को "**भगवान पार्श्वनाथ तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव**" मनाने की प्रेरणा प्रदान की है। इस महोत्सव का उद्घाटन आगामी 6 जनवरी 2005 (पौष कृ. 11) को वाराणसी (उ.प्र.) में होगा पुनः 1 वर्ष तक पूरे देश में विभिन्न आयोजनों के साथ यह महोत्सव मनाया जाएगा।

–कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन

(अध्यक्ष–दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान)

आभार

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) तीर्थ के विकास की प्रेरणा पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी ने २६००वें जन्मकल्याणक महोत्सव वर्ष सन् २००१ में प्रदान की। उस विकास की चर्चा चलते-चलते एक दिन संघ की अंतरिम मीटिंग में निर्णय लिया गया कि प्रथमतः कुण्डलपुर में एक भगवान महावीर स्वामी कीर्तिस्तम्भ का निर्माण कराना है। इस निर्माण हेतु बिहार स्टेट दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी के मानद मंत्री श्री अजय कुमार जैन-आरा से फोन द्वारा स्वीकृति प्राप्त हुई। पुनः तीर्थविकास के प्रथम चरणस्वरूप कीर्तिस्तंभ निर्माण के अर्थ सौजन्य हेतु पूज्य माताजी के अनन्य भक्त दानवीर समाजरत्न श्री कमलचंद जैन-खारीबावली, दिल्ली ने अपने परिवार की ओर से सहर्ष स्वीकृति प्रदान की, पश्चात् उसका नक्शा बनवाकर रूपरेखा बनाई गई तथा २४ मार्च २००२ को कीर्तिस्तंभ शिलान्यास का शुभ मुहूर्त निकलवाकर कुण्डलपुर जाने और शिलान्यास समारोह करने की तैयारियाँ होने लगीं। इसी मध्य ६ जनवरी २००२ को अखिल भारतीय दिगम्बर जैन युवा परिषद के स्थापना रजतजयंती समारोह के अवसर पर पूज्य माताजी ने कुण्डलपुर विकास हेतु नवयुवकों का खुला आह्वान किया किन्तु जब तक उनका स्वयं कुण्डलपुर जाने का कोई विचार तक नहीं था। अकस्मात् १३ फरवरी २००२ को पूज्य माताजी की चर्चा आर्यिका चंदनामती माताजी के साथ हुई पुनः हम लोगों से विचार-विमर्श करके उन्होंने २० फरवरी को ही दिल्ली से कुण्डलपुर की ओर ससंघ मंगलविहार कर दिया। फिर तो पूरे देश में प्रसन्नता की लहर दौड़ गई। माताजी २४ मार्च २००२ को आगरा में थी जिस दिन कमलचंद जी एवं उनके पूरे परिवार के साथ हम लोग ट्रेन की एक बोगी लेकर कुण्डलपुर पहुँचे, वहाँ खूब प्रभावनापूर्वक शिलान्यास समारोह सम्पन्न हुआ।

पुनः २९ दिसम्बर २००२ को पूज्य माताजी का संघ के साथ कुण्डलपुर मंगल पदार्पण हुआ और उनके सानिध्य में कीर्तिस्तंभ निर्माण के साथ-साथ नंद्यावर्तमहल परिसर का वृहत्काय निर्माण २२ माह में पूर्ण हुआ। उस तीर्थ निर्माण की पूर्णता के अवसर पर जब "कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ" के प्रकाशन की योजना बनी तो उसके प्रकाशन में भी सहयोग प्रदान करने का सौभाग्य श्री कमलचंद जैन को प्राप्त हो रहा है। अर्थात् कुण्डलपुर विकास की श्रृंखला के प्रारंभ और समापन दोनों के साथ आपका महत्वपूर्ण योगदान जुड़ा है। एतदर्थ मैं संस्थान की ओर से श्री कमलचंद कैलाशचंद जैन सहित उनके पूरे परिवार के प्रति हार्दिक आभार प्रगट करता हूँ।

—कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन (अध्यक्ष)

कुण्डलपुर महोत्सव २००४ (२८ अक्टूबर) के शुभ अवसर पर कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ का विमोचन

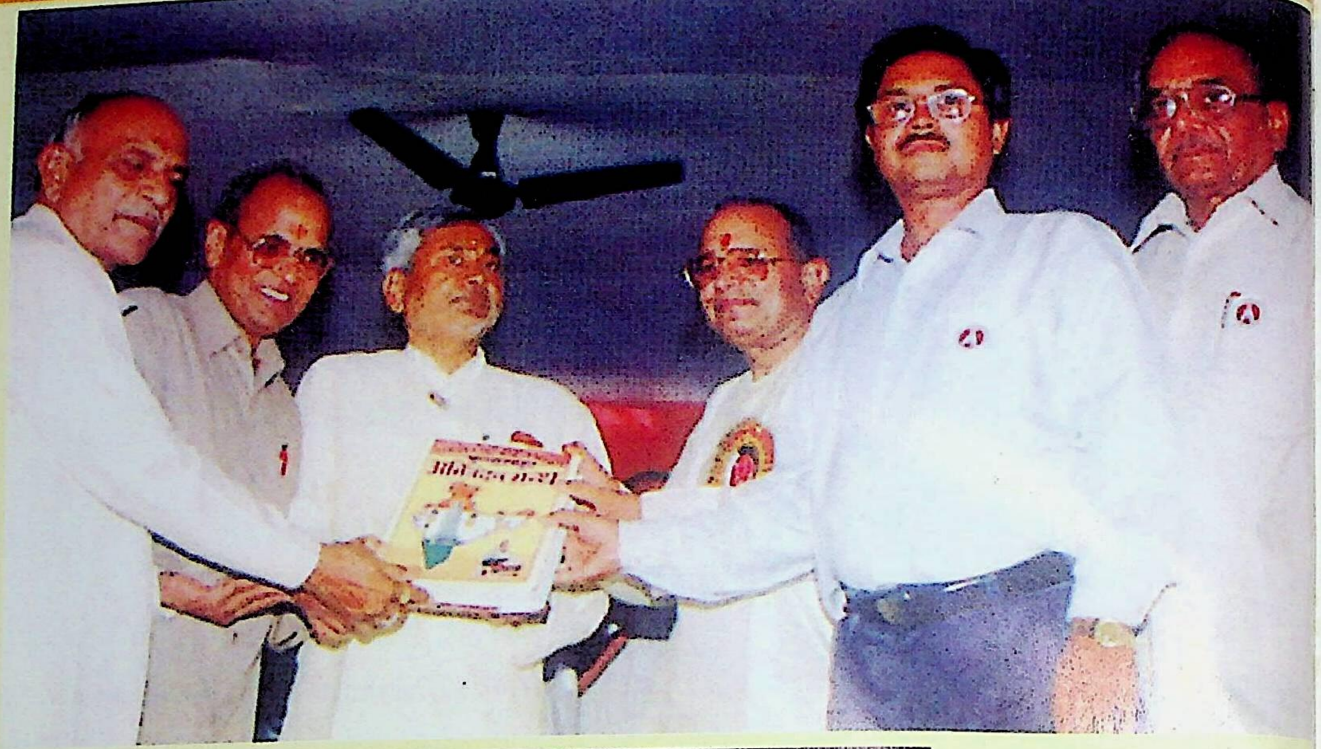

कुण्डलपुर अभिनन्दन ग्रन्थ का विमोचन करते हुए सांसद श्री नितीश कुमार, साथ में हैं ग्रन्थ प्रकाशन के सहयोगी श्री कमल चंद जैन- खारी बावली, दिल्ली एवं सम्पादकगण-क्रमशः डॉ. शेखर चंद जैन (अहमदाबाद), प्रो. टीकमचंद जैन (दिल्ली), डॉ. अनुपम जैन (इन्दौर) एवं रमेश चन्द मनयां (भोपाल)

अभिनन्दन ग्रन्थ की विमोचित कृति को पूज्य माताजी के करकमलों में समर्पित करते हुए माननीय श्री नितीश कुमार, साथ में हैं श्री कमल चंद जैन आदि।

श्री नितीश कुमार जी को नंद्यावर्त महल का प्रतीक चिन्ह भेंटकर सम्मान करते हुए ब्र. रवीन्द्र जैन, श्री कैलाश चन्द जैन, दिल्ली, श्री कैलाश चन्द चौधरी, सनावद एवं श्री माणिक चन्द पाटनी, इन्दौर।

वर्णी दि. जैन (शोध) संस्थान
क्र. 4847
का. दि. वि. (वि.)

विषय अनुक्रमणिका

प्रथम खण्ड

विनयांजलि एवं काव्यखण्ड

क्र.		लेखक	पृष्ठ नं.
1.	श्री वीरजिनस्तोत्र (मंगलाचरण)	गणिनी ज्ञानमती	1
2.	महावीराष्टक स्तोत्रम्	कविवर भागचन्द	2
3.	मंगल आशीर्वाद	आचार्य अभिनंदनसागर	3
4.	आशीर्वाद	आचार्य वर्धमानसागर	4
5.	मंगल आशीर्वाद	आचार्य 108 बाहुबलीसागर	5
6.	मंगल आशीर्वाद	आचार्य भरतसागर	5
7.	मंगल आशीर्वाद	आचार्य भरतसागर (शिष्य-सुमतिसागर)	6
8.	मंगल आशीर्वाद	आचार्य दर्शनसागर	6
9.	शुभाशीर्वाद	आचार्य संभवसागर	7
10.	इतिहास को जीवित किया है	आचार्य रयणसागर	7
11.	भगवान महावीर का एक संक्षिप्त इतिहास	वैज्ञानिक धर्माचार्य कनकनंदी	8
12.	आशीर्वाद	आचार्य आनन्दसागर 'मौनप्रिय'	10
13.	सच को सच रखें	आचार्य पदमनंदी	10
14.	शुभाशीर्वाद	आचार्य कुमुदनंदी	12
15.	मंगल आशीर्वाद	आचार्य कल्याणसागर	12
16.	आशीर्वाद	प्रज्ञाश्रमण आचार्य देवनन्दि	12
17.	आशीर्वचन	आचार्य शांतिसागर	13
18.	मंगल आशीर्वाद	आचार्य निश्चयसागर	13
19.	आशीर्वचन	बालाचार्य योगीन्द्रसागर	14
20.	मंगल आशीर्वाद	उपाध्याय निजानंदसागर	14
21.	मंगल आशीर्वाद	मुनि भद्रसागर	15
22.	मंगल आशीर्वाद	मुनि तरुणसागर	15
23.	शुभकामना	मुनि सौरभसागर	15
24.	शुभाशीष	मुनि पुण्यसागर	16
25.	मंगलकामना	मुनि मेरुभूषण	16
26.	भगवान महावीर स्वामी स्वयं समाज के शिलालेख हैं	मुनि जिनसेन	16
27.	मंगल आशीर्वाद	गणिनीप्रमुख ज्ञानमती	17
28.	तीर्थों का जीर्णोद्धार अतिशय महत्वपूर्ण है	गणिनी सुपार्श्वमती	18
29.	भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर	आर्यिका आदिमती	19
30.	मंगलभावना	आर्यिका श्रेयांसमती	20
31.	कुण्डलपुर-नालंदा (गीत)	आर्यिका अभयमती	20
32.	शुभाशीर्वाद	आर्यिका अभयमती	21

33. मंगल भावना	गणिनी विशुद्धमती	21
34. कुण्डलपुर विकास : एक महानतम कार्य	गणिनी स्याद्वादमती	22
35. मेरे ज्ञानार्जन का अपूर्व केन्द्र बनी कुण्डलपुर तीर्थयात्रा	आर्यिका चंदनामती	22
36. पाँच नाम से प्रसिद्ध भगवान महावीर को शतशः नमन	गणिनी कीर्तिमती	25
37. शुभकामना	आर्यिका सुरत्नमती	25
38. युग प्रर्वतक महावीर (भजन)	आर्यिका अभयमती	26
39. शुभकामना	आर्यिका निर्मलमती	27
40. महान प्रेरणादायक कार्य सम्पन्न	आर्यिका प्रज्ञामती	27
41. मंगल शुभकामना	आर्यिका सुप्रकाशमती	27
42. कुण्डलपुर इतिहास की अदालत में	आर्यिका सुभूषणमती	28
43. शुभकामना	आर्यिका कोमलश्री	30
44. महान तीर्थोद्धारिका	आर्यिका विनीतमती	30
45. दृष्टि बदली तो सिंह बना महावीर	आर्यिका कैलाशमती	31
46. शुभकामना	आर्यिका सन्मतिमती	32
47. भजन	आर्यिका कैलाशमती	32
48. ज्ञान का अपार भंडार गणिनी आर्यिका ज्ञानमती माताजी	ऐलक विज्ञान सागर	33
49. रत्नमयी जन्मभूमि कुण्डलपुर	पीठाधीश क्षुल्लक मोतीसागर	33
50. मंगल आशीर्वाद	भट्टारक महास्वामी लक्ष्मीसेन	35
51. ऐसा पुण्य सबके लिए दुर्लभ है	भट्टारक जिनसेन स्वामी	36
52. शुभकामना	श्री श्री श्री भट्टाकलंक स्वामी	36
53. यह अभिनंदन ग्रंथ समस्त समाज के लिए मार्गदर्शक बनेगा	क्षुल्लिका चंद्रमती	37
54. शुभकामना संदेश	राष्ट्रपति सचिवालय	38
55. शुभकामना संदेश	उपराष्ट्रपति सचिवालय	39
56. शुभकामना संदेश	प्रधानमंत्री कार्यालय	40
57. शुभकामना संदेश (राज्यपाल-बिहार)	न्यायमूर्ति म.रामा जोयिस	41
58. शुभकामना संदेश (राज्यपाल-उ.प्र.)	टी.वी. राजेश्वर	42
59. शुभकामना संदेश (कार्यवाहक चीफ जस्टिस-इला. हाईकोर्ट)	न्यायमूर्ति मार्कण्डे काटजू	43
60. शुभकामना संदेश (न्यायाधीश-इलाहाबाद हाईकोर्ट)	न्यायमूर्ति एम.सी. जैन	44
61. शुभकामना संदेश (न्यायाधीश-इलाहाबाद हाईकोर्ट)	न्यायमूर्ति वी. के. शुक्ला	45
62. शुभकामना संदेश (न्यायाधीश-इलाहाबाद हाईकोर्ट)	न्यायमूर्ति अरुण टंडन	46
63. शुभकामना संदेश (पूर्व न्यायाधीश-इलाहाबाद हाईकोर्ट)	न्यायमूर्ति सुधीर नारायण	47
68. शुभकामना संदेश (केन्द्रीय गृहमंत्री)	शिवराज पाटील	48
69. शुभकामना संदेश (केन्द्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री)	अर्जुन सिंह	49
70. शुभकामना संदेश (मुख्यमंत्री-उ.प्र.)	मुलायम सिंह यादव	50
71. शुभकामना संदेश (मुख्यमंत्री-दिल्ली प्रदेश)	शीला दीक्षित	51
72. शुभकामना संदेश (बिहार विधानसभा अध्यक्ष)	सदानंद सिंह	52
73. शुभकामना संदेश (पर्यटन मंत्री-बिहार सरकार)	अशोक कुमार सिंह	53
74. शुभकामना संदेश (मुख्य सचिव-बिहार सरकार)	के.ए. एच. सुब्रह्मण्यम	54
75. शुभकामना संदेश (विपक्ष नेता-लोकसभा)	लालकृष्ण आडवाणी	55
76. शुभकामना संदेश (संसद सदस्य)	डॉ. मुरली मनोहर जोशी	56
77. शुभकामना संदेश (संसद सदस्य)	नितीश कुमार	57

78.	शुभकामना संदेश (कार्याध्यक्ष-विश्व हिन्दू परिषद)	अशोक सिंघल	58
79.	शुभकामना संदेश (पूर्व सांसद)	वी. धनंजय कुमार	59
80.	मानव समाज के विकास का प्रतीक कुण्डलपुर विकास	श्रवण कुमार (विधायक-नालंदा)	60
81.	कुण्डलपुर ने अपने वास्तविक स्वरूप को प्राप्त कर लिया	सुरेन्द्र प्रसाद तरुण (पूर्व शिक्षामंत्री)	61
82.	शुभकामना संदेश (सदस्य-इंजीनियरिंग रेलवे बोर्ड)	सूर्यपाल सिंह जैन	62
83.	शुभकामना संदेश (निदेशक-नव नालंदा महाविहार)	डॉ. रवीन्द्र पंथ	63
84.	शुभकामना संदेश (सहायक अधीक्षण पुरातत्वविद् नालंदा)	ए.के. पाण्डे	64
85.	शुभकामना संदेश (आरक्षी अधीक्षक-नालंदा)	अमित लोढ़ा	65
86.	शुभकामना संदेश (योजना पदाधिकारी-पर्यटन विभाग बिहार सरकार)	अशोक कुमार सिन्हा	66
87.	शुभकामना संदेश (एस.डी.पी.ओ.-राजगीर एवं थाना प्रभारी-नालंदा)	विमल कुमार, श्याम किशोर यादव	67
88.	शुभकामना संदेश (अध्यक्ष-बिहार दि. जैन धार्मिक न्यास बोर्ड)	रामगोपाल जैन	68
89.	शुभकामना संदेश (अध्यक्ष-झारखंड दि. जैन धार्मिक न्यास बोर्ड)	ताराचंद जैन	69
90.	भजन (महावीर का छब्बिस सौवाँ.....)	आर्यिका चन्दनामती	70
91.	पुनः जीवंत हो गई भगवान महावीर की जन्मभूमि	कर्मयोगी ब्र.रवीन्द्र कुमार जैन	71
92.	रोशन हुई कुण्डलपुर की धरा	ब्र. विद्युल्लता शहा	72
93.	सृजन किया है विध्वंस नहीं परमपूज्य गणिनी ज्ञानमती माताजी ने	ब्र. विमल जैन	73
94.	भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर है	ब्र. (कु.) बीना जैन	73
95.	चलो कुण्डलपुर चलनां है	महावीर प्रसाद जैन (संघपति)	74
96.	कुण्डलपुर की माटी का सचमुच कण-कण चंदन	कमलचंद जैन	75
97.	भजन (राजधानी दिल्ली से गूँजा.......)	आर्यिका चन्दनामती	76
98.	कुण्डलपुर तीर्थ अब विश्व के क्षितिज पर	प्रेमचंद जैन	77
99.	कुण्डलपुर तीर्थ का निर्माण-एक दिव्य स्वप्न	जिनेन्द्र प्रसाद जैन ठेकेदार	77
100.	"सत्यमेव जयते"	कैलाशचंद जैन	78
101.	युगसृष्टा की बेटी का सारे विश्व को अमूल्य उपहार	रिषभदास जैन	79
102.	विनयांजलि	देवकुमार सिंह कासलीवाल	79
103.	विनयांजलि	अशोक बड़जात्या	80
104.	विनयांजलि	प्रदीप कुमार सिंह कासलीवाल	80
105.	पूर्व रेलमंत्री नितीश कुमार का वक्तव्य		81
106.	तुम पद पदवी जहँ धरो, तहँ सुर कमल रचाहिं	अजय कुमार जैन	82
107.	तीर्थंकरों की जन्मभूमि को बदलने का अधिकार किसी को नहीं है	डॉ. पन्नालाल जैन पापड़ीवाल	83
108.	हे माँ तेरे उपकारों का.......	दीपक जैन	84
109.	भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर रत्नगर्भा एवं	ब्र. (कु.) आस्था जैन (संघस्थ)	85
110.	पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी के चरणों में शतशः नमन	प्रा. नरेन्द्रप्रकाश जैन	87
111.	भजन (माता हो त्रिशला के लाल....)	आर्यिका चन्दनामती	89
112.	शंखनाद हो चुका! चलो कुण्डलपुर हमको जाना है.....	डॉ. शेखरचंद जैन	90
113.	कुण्डलपुर की धरा धूल तू	उमेश जैन	91
114.	पूर्व रक्षामंत्री जार्ज फर्नांडीज का भाषण		92
115.	भगवान महावीर की जीवनगाथा	ब्र. (कु.) सारिका जैन (संघस्थ)	93
116.	कुण्डलपुरं विजीयात् तीर्थं त्रिकाले	शिवचरनलाल जैन	97
117.	जन्मभूमि कुण्डलपुर का विकास : एक महत्वपूर्ण उपलब्धि	डॉ. अनुपम जैन	98

118. अभिनन्दनीय का अभिनंदन	प्रो. टीकमचंद जैन	100
119. विनयांजलि	डॉ. जयकुमार जैन	103
120. अखण्ड लक्ष्य से हुई कार्यसिद्धि	कृष्ण कुमार जैन	104
121. मेरे जीवन के अविस्मरणीय क्षण	ब्र. (कु.) इन्दू जैन (संघस्थ)	105
122. खुशियों के दीप जले कुण्डलपुर में	ब्र. (कु.) अलका जैन (संघस्थ)	106
123. कुण्डलपुर के आसपास का क्षेत्र भी पवित्र है	कमल कुमार जैन	106
124. इस युग की माँ शारदे	मनोज जैन	107
125. जन्मभूमि कुण्डलपुर–एक निर्विवाद सत्य	राकेश जैन	107
126. युग-युग तक सब दोहराएंगे तेरी अमिट कहानी	ब्र. (कु.) प्रीति जैन (संघस्थ)	108
127. जन्म हुआ सार्थक मेरा	विजय कुमार जैन	108
128. अहिंसा के अवतार-भगवान महावीर स्वामी	ज्ञानचंद जैन	109
129. गणिनी ज्ञानमती माताजी की निर्माण प्रेरणाओं का शिखर........	ब्र. (कु.) स्वाति जैन (संघस्थ)	109
130. भगवान महावीर का अमर संदेश-"जिओ और जीने दो"	कैलाशचंद जैन सर्राफ	111
131. तीर्थोद्धारिका गणिनी ज्ञानमती माताजी	कलीराम जैन	112
132. महिलाओं में अपूर्व संगठन और जागृति उत्पन्न की	आशा जैन	112
133. महावीर जन्मभूमि-कुण्डलपुर एक वास्तविकता	सुमन जैन	114
134. दिव्य संतों से सुरक्षित है संस्कृति	जीवन प्रकाश जैन	115
135. सांसद एवं विधिवेत्ता श्री एल.एम. सिंघवी का उद्बोधन		117
136. इस युग के अंतिम तीर्थंकर कुण्डलपुर के राजकुमार	प्रतिष्ठाचार्य पं. नरेश जैन शास्त्री	119
137. कुण्डलपुर अत्यन्त रमणीक तीर्थस्थल है	पं. सुधर्मचंद शास्त्री	120
138. श्रद्धा के धरातल पर बना भव्य कुण्डलपुर	विधानाचार्य पं. प्रदीप जैन शास्त्री	121
139. कुण्डलपुर आने पर धनराज जी के व्यक्त विचार	पं. धनराज जैन	122
140. श्री महावीर भगवान की महिमा	प्रतिष्ठाचार्य पं. प्रवीणचंद शास्त्री	123
141. प्रत्यक्ष को प्रमाण की आवश्यकता नहीं होती	विजय जैन	124
142. कुण्डलपुर फिर चमक उठा	सरोज जैन	125
143. भजन (भगवान महावीर जन्मभूमि को दो उसका सम्मान....)	संगीतकार राजेन्द्र जैन	126
144. पारस पत्थर है माँ ज्ञानमती जी	मनोहरलाल जैन	127
145. कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ का प्रकाशन समय सूचकता का प्रतीक है	स्वरूपचंद मार्शल्स	127
146. भजन (वीर की जन्मभूमि सजाई नहीं.....)	आर्यिका चन्दनामती	128
147. ज्ञानमती माताजी ज्ञान की गंगा है	निर्मल जैन एक्सपोर्टर	129
148. त्रैलोक्य पूज्य भगवान महावीर स्वामी	महावीर सेठी	129
149. जहाँ जन्मे वीर-वर्धमान जी	आनन्द प्रकाश जैन	129
150. महावीर स्वामी के सिद्धान्तों की आज के युग में आवश्यकता	श्रीमती लक्ष्मी जैन	130
151. कुण्डलपुर श्रद्धा का विषय है तर्क का नहीं	रमेश कासलीवाल	131
152. Comments of Mr. Somaiya on his first visit of Kundalpur	Shantilal K. Somaiya	133
153. मेरे सपने में महावीर आने लगे	सौ. श्रीमती जैन	134
154. वीर जन्मभूमि सच्ची कुण्डलपुरी है	श्रीमती अलका जैन	134
155. तत्कालीन उपराज्यपाल विजयकपूर जी का उद्बोधन		135
156. पूज्य ज्ञानमती माताजी–सच्ची ज्ञानप्रदाता	सुशील जैन	135
157. दर्शनमात्र से शंका निर्मूल हो गई	कस्तूरचंद बड़जाते	136
158. कुण्डलपुर का विकास-मात्र 2601 रु.के संग्रह से हुआ है!	राजेन्द्र जैन, चाँदी वाले	136
159. भजन (माँ बतलाओ वीर प्रभु क्यों पूजे जाते हैं....)	श्रीमती त्रिशला जैन	137

160. विनयांजलि — अखिलेश कुमार (अपर जज) 138
161. कुण्डलपुर तीर्थ का विकास देवोपनीत जैसा लगता है — श्रीमती सुमती देवी कासलीवाल 138
162. मेरी निगाह में तीर्थक्षेत्र कुण्डलपुर-एक अनुभव — राजाभाऊ पाटनी 139
163. कुण्डलपुर के विकास से समाज में हर्ष की लहर आई — इंजी. पूर्णचंद्र जैन 140
164. जिन संस्कृति की संवर्द्धिका — प्रकाशचंद जैन सर्राफ 141
165. कुण्डलपुर तीर्थ का विकास-दुनिया का आठवाँ आश्चर्य! — इंजी. सी.आर. पाटिल 143
166. कुण्डलपुर तीर्थ-भारत के मानचित्र पर — सुरेश जैन झांझरी 143
167. भजन (कुण्डलपुर धरती वीरप्रभु के जन्म से धन्य हुई....) — आर्यिका चन्दनामती 144
168. महावीर वास्तव में महावीर ही थे — भागचंद जैन 144
169. मनुष्य जन्म बहुत दुर्लभता से प्राप्त हुआ है — हंस कुमार जैन 145
170. किन शब्दों में अपने भाग्य की सराहना करूँ? — श्रीमती कुमुद जैन 145
171. कुण्डलपुर तीर्थ का विशेष आकर्षण-नंद्यावर्त महल — त्रिलोकचंद जैन 145
172. माता त्रिशला भी महिमाशाली हैं — कन्हैयालाल सेठी 146
173. कुण्डलपुर का परिवर्तित स्वरूप-एक अमूल्य भेंट — श्रीमती चन्दा जैन 146
174. तीर्थंकर की पहचान ननिहाल से नहीं होती — श्रीमती निर्मला देवी गंगवाल 147
175. प्रतिकूल परिस्थितियों में भी कुण्डलपुर बन गया! — पवन कुमार पापड़ीवाल 148
176. जिनेन्द्र भक्ति में अटूट शक्ति है — नरेश बसंल 149
177. एक अमूल्य धरोहर खोने से बच गयी — सरोज जैन 149
178. कहीं मैं स्वप्न तो नहीं देख रहा! — डॉ. देवेन्द्र जैन 150
179. सुषमा स्वराज का उद्बोधन (तत्कालीन महामंत्री-भाजपा) 151
180. कुण्डलपुर तीर्थ का विकास-धर्मप्रभावना का अभूतपूर्व कार्य है — श्रीपाल जैन 151
181. चन्दन है इस तीर्थ की माटी — विजय जैन 152
182. जब तक सूरज चाँद रहेगा, कुण्डलपुर का नाम रहेगा — कुंवरसेन जैन 152
183. कुण्डलपुर एक चमत्कारिक अतिशय क्षेत्र — अरुण जैन (बैंक वाले) 153
184. कुण्डलपुर अवतारी-त्रिशलानंद विभो — प्रमोद कासलीवाल 153
185. कुण्डलपुर में आकर मेरा नाच उठा मन मोर — श्रीमती माला जैन 154
186. आधी रोटी खाएंगे, पर कुण्डलपुर को बनाएंगे — सिंघई शिखरचंद जैन 155
187. सदियों से थी और सदा ही रहेगी — जयचंद कासलीवाल 155
188. कुण्डलपुर के दर्शन करने हजारों यात्री आते हैं — प्रदीप जैन 156
189. कुण्डलपुर मानो 2600वें जन्मोत्सव का ही इंतजार कर रहा था — डॉ. प्रेमचंद जैन 156
190. भगवान महावीर स्वामी की दिव्यध्वनि सबके लिए हितकारी — पं.नाभिराज नारकर 157
191. नंद्यावर्त महल भगवान महावीर के युग की याद दिलाता है — पं. पन्नालाल जैन 158
192. क्रान्तिदूत महायोगी महावीर — प्रो. के.एल. जैन 159
193. कुण्डलपुर से वापस जाने का मन नहीं करता है — प्रकाशचंद जैन 160
194. कुण्डलपुर नगरी रत्नगर्भा क्यों कहलाती है? — श्रीमती प्रभा जैन 161
195. गांधी के दांडी मार्च की प्रतीक बनी माताजी की कुण्डलपुर यात्रा — मनोज जैन 161
196. चौ. अजीत सिंह का भाषण 162
197. सब धरती कागज करूँ, पर गुरु गुण लिखा न जाए — अजय कुमार जैन 163
198. हर तरफ कुण्डलपुर का गुणगान सुनाई देता है — श्रीमती लता जैन 163
199. कुण्डलपुर में मैंने कुछ असंभव दृश्य देखे — उदयभान जैन 164
200. Prince of Kundalpur, King of Universe — Aryika Chandnamati 165

201. अविश्वसनीय किंतु सच	ज्ञानचंद जैन पाटनी	166
202. कुण्डलपुर पूर्ण वैभव के साथ चमक उठा	पवन कुमार जैन	166
203. माताजी अवध की गौरव हैं	श्रीमती कैलाशो देवी	167
204. साँच को आँच नहीं	डॉ. प्रेमचंद जैन	168
205. कुण्डलपुर का विकसित स्वरूप समाज के समक्ष प्रस्तुत है	श्रीमती साधना जैन	168
206. हे महाश्रमण तुमको प्रणाम	पं. शिवचरनलाल जैन	169
207. भजन (तेरी पावन भूमि पर है आयीं ज्ञानमती माताजी....)	श्रीमती निधी जैन	170
208. नंद्यावर्त से नालंदा	अमरचंद जैन	171
209. तीरथ कर लो, पुण्य कमा लो, प्रभु के गुण गा लो!	वर्धमान तेजपाल जी काला	171
210. नवमार्ग बनाने वाले, होते हैं बिरले प्राणी	सिद्धार्थ जैन	172
211. कुण्डलपुर पुनः विकसित हो गया	प्रवीनचंद जैन	172
212. माननीय मुलायम सिंह जी का भाषण		173
213. कुण्डलपुर में चमन हो गया	राकेश जैन	173
214. उपेक्षित कुण्डलपुर आकाश की ऊँचाईयों को छूता हुआ	अभय कुमार कासलीवाल	174
215. कुण्डलपुर तीर्थ-त्रिवेणी का संगम	सागरचंद जैन	175
216. महावीर अवतार हुआ	डॉ. सुशील कुमार जैन	175
217. बजी कुण्डलपुर में बधाई, नगरी में वीर जन्मे...... महावीर जी...	सौ. सुवर्णा शीतलकुमार पाटनी	176
218. चौबीसवें तीर्थंकर कुण्डलपुर जन्मभूमि के महावीर विश्व के जैन.......	प्रदीप कुमार ठोले	177
219. विनयांजलि	प्रदीप कुमार जैन एडवो.	178
220. भजन (कुण्डलपुर तीर्थ पुराना, प्रभु वीर जन्मभूमि माना...)	ब्र. कु. इन्दू जैन (संघस्थ)	179
221. "कुण्डलपुर का विकास एक ऐतिहासिक कार्य है"	श्रीमती चित्रा जैन	180
222. जिनधर्म प्रभाविका माताजी	श्रीमती निशा जैन	180
223. कुण्डलपुर के राजदुलारे	प्रदीप कुमार जैन	181
224. शुभ संदेश	महावीर मिण्डा	182
225. धन्य है गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी का जीवन	वीरेन्द्र कुमार जैन	182
226. तीर्थों की प्राण हैं गणिनी ज्ञानमती माताजी	सूरजमल गणेशलाल जैन	183
227. कुण्डलपुर की अनुपम छवि आश्चर्यकारी है!	अरुण जैन	183
228. वीर जन्मकल्याणक	श्रीमती चन्द्रेश जैन	184
229. नारायण दत्त तिवारी का उद्बोधन		185
230. नमामि कुण्डलपुर	डॉ. विजय कुमार शर्मा	186
231. कुण्डलपुर का बदला हुआ स्वरूप	ज्ञानचंद झांझरी	186
232. विनयांजलि	उत्तमचंद निर्खी	187
233. Message	K.B. Awade	187
234. भजन (वीर की जन्मभूमि सच्ची कुण्डलपुर......)	निकलंक जैन	188
235. न्यूनता से पूर्णता	श्रीमती कुमुदनी जैन	189
236. विनयांजलि	श्रीमती क्षमा जैन	189
237. मनुज प्रकृति से शाकाहारी	कवि सुधेश जैन	190
238. कुण्डलपुर को नमन	विजय कुमार जैन पत्रकार	193
239. विनयांजलि	डॉ. हेमचंद जैन	193
240. जय जय महावीर	पं. लालचंद जैन 'राकेश'	194
241. नंद्यावर्त महल की भव्यता सराहनीय है	अरिहंत जैन	195
242. भजन (ज्ञानमती मैया दे चरणों की छैया)	स्वाती जैन	196

243. कुण्डलपुर तीर्थ वंदना	आर्यिका चंदनामती	197
244. सोलहकारण भक्ति	गणिनी ज्ञानमती	199
245. दशलक्षण भक्ति	गणिनी ज्ञानमती	201
246. भगवान महावीर चालीसा	आर्यिका चंदनामती	203
247. सम्मेदशिखर टोंक वंदना	आर्यिका चंदनामती	205
248. कुण्डलपुराष्टकम्	डॉ. प्रकाशचंद जैन	206
249. गौतम गणधर स्तुति	गणिनी ज्ञानमती	207
250. बारहभावना (अंग्रेजी)	आर्यिका चंदनामती	208
251. भगवान महावीर का बारहमासा (हिन्दी)	आर्यिका चंदनामती	209
252. विनयांजलि	सुनीज जैन सर्राफ	210
252. गुर्वावली लिख्यते		211
253. राजगृही तीर्थ वंदना	आर्यिका चन्दनामती	213
254. पावापुरी सिद्धक्षेत्र वंदना	आर्यिका चंदनामती	214
255. तीर्थंकर जन्मभूमि वंदना (संस्कृत)	गणिनी ज्ञानमती	215
256. तीर्थंकर जन्मभूमि वंदना (हिन्दी)	आर्यिका चंदनामती	216
257. कुण्डलपुर तीर्थ पूजा	आर्यिका चंदनामती	217
258. समवसरण वंदना	गणिनी ज्ञानमती	221
259. Prayer of Tirthankaras' Birthplaces	Aryika Chandnamati	222
260. सुदर्शन मेरू भक्ति	गणिनी ज्ञानमती	223

द्वितीय खण्ड

भगवान महावीर और जैनधर्म

1. दिगम्बर जैन आगम के आलोक में भगवान महावीर	गणिनी ज्ञानमती	1
2. दीपावली पर्व एवं वीर निर्वाण संवत्	गणिनी ज्ञानमती	58
3. Life of Mahavira	S.C. Diwakar	61
4. भगवान महावीर का सचित्र जीवन दर्शन	आर्यिका चंदनामती	82
5. कुण्डलपुरस्य महावीरः	डॉ. प्रकाशचंद जैन	101
6. हिन्दी पद साहित्य में भगवान महावीर	डॉ. कस्तूरचंद कासलीवाल	111
7. शासनपति भगवान महावीर	आर्यिका श्रेयांसमती	116
8. भजन (कुण्डलपुर धरती वीर प्रभु के जन्म से धन्य .....)	आर्यिका चंदनामती	118
9. कुण्डलपुर के राजकुमार महावीर (नाटिका)	आ. चंदनामती माताजी	119
10. कौन कहता है भगवान महावीर जैनधर्म के संस्थापक हैं	प्रधानमंत्री श्री बाजपेयी जी के भाषण का अश	124
11. भगवान महावीर जीवन से संबंधित कतिपय दिगम्बर एवं श्वेताम्बर परम्परानुसार भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण	पीठाधीश क्षु. मोतीसागर जी	125
12. वैशाली की राजकुमारी एवं कुण्डलपुर की राजवधू महारानी त्रिशला का परिचय	ब्र. कु. बीना जैन	129
13. भगवान महावीर का संक्षिप्त परिचय	गीता जैन	131
14. शाकाहार एवं अहिंसा के प्रति विभिन्न धर्मों के मत		133

गणिनी ज्ञानमती 134
15. Geographical Description of Jambudvip गणिनी ज्ञानमती 140
16. Eternal Jainism गणिनी ज्ञानमती 146
17. षट्खण्डागम : एक अनुशीलन पं. शिवचरनलाल 174
18. कषायपाहुड डॉ. संगीता मेहता 180
19. 'दिव्य-औदारिक व्यक्तित्व महावीर' डॉ. भागचंद भागेन्दु 184
20. भगवान महावीर और उनका संदेश

तृतीय खण्ड

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर – एक आगमोक्त सत्य

1. आगम के दर्पण में कुण्डलपुर और वैशाली गणिनी ज्ञानमती 1
2. भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर एक वास्तविक तथ्य आर्यिका चंदनामती 6
3. महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर के संदर्भ में पूज्य आचार्यश्री विद्यासागर जी महाराज से चर्चा 12
4. कुण्डलपुर या वैशालीः एक अनुचिंतन प्राचार्य नरेन्द्रप्रकाश जैन 16
5. भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर पर संतों की दो टूक लेखनी डॉ. अनुपम जैन 20
6. भगवान महावीर की ननिहाल वैशाली का महत्व क्षुल्लक मोतीसागर 23
7. भगवान महावीर का जन्म और जन्मभूमि कुण्डलपुर शिवचरणलाल जैन 27
8. "वैशाली स्मारिका-2002" दिगम्बर है या श्वेताम्बर ? आर्यिका चंदनामती 31
9. कुण्डलपुर की कहानी, कुण्डलपुर की जुबानी डॉ. मालती जैन 37
10 भजन (कुण्डलपुर धरती वीर प्रभु के जन्म से धन्य हुई है....) आर्यिका चंदनामती 39
11. मानचित्र में परिवर्तन एक बचकाना प्रयास...... प्राचार्य नरेन्द्रप्रकाश जैन 40
12. बंगाल, बिहार आदि तीर्थों का मानचित्र 42
13. कुण्डलपुरी जन्मस्थली स्थापित परंपरा है डॉ. अभय प्रकाश जैन 44
14. तत्कालीन मुख्यमंत्री साहिब सिंह का उद्बोधन 45
15. बजीं कुण्डलपुर में बधाई आर्यिका चंदनामती 46
16. भगवान महावीर एवं जन्मभूमि कुण्डलपुर ब्र. कु. चन्द्रिका जैन 53
17. जन्मभूमि कुण्डलपुर का विकास (एक लघु रूपक) पं. अकलंक जैन 56
18. महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर थी, है और रहेगी प्राचार्य नरेन्द्रप्रकाश जैन 62
19. हर्मन जैकोबी का पत्र 64
20. कुण्डलपुर (नालंदा) ही भगवान महावीर की जन्मभूमि है पं. लालचंद जैन 65
21. तत्कालीन मुख्यमंत्री-म.प्र. श्री दिग्विजय सिंह का भाषण 66
22. हमारी आस्था में बसा कुण्डलपुर कृष्णा जैन 67
23. कुण्डलपुर जन आस्था का प्रतीक तीर्थ डॉ. शेखरचंद जैन 69
24. शोध के नाम खंडित होती आस्थाएं मोतीलाल जैन 70
25. कुण्डलपुर : एक निर्विवादित भूमि सुल्तान सिंह जैन 71
26. कुण्डलपुर का ऐतिहासिक स्वरूप ब्रजेश कुमार वर्मा 75
27. जो बोलूँगा सच-सच बोलूँगा, सच के सिवा कुछ नहीं बोलूँगा प्राचार्य नरेन्द्रप्रकाश जैन 78
28. कुण्डलपुर-कुण्डलपुर-कुण्डलपुर रामजीत जैन एडवो. 81

29.	भगवान महावीर की जन्मभूमि से गूंजेंगे उनके संदेश	कैलाशचंद जैन सर्राफ	84
30.	कुण्डलपुर	श्रीमती उषा पाटनी	86
31.	भगवान महावीर की जन्मस्थली : कुण्डलपुर	हेमन्त कुमार, राजगीर	88
32.	प्रश्न भगवान महावीर की जन्मस्थली का	माणिकचंद जैन पाटनी	91
33.	भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर	डॉ. रामदेव सिंह	92
34.	प्राचार्य श्री नरेन्द्र प्रकाश जी का भाषण (8 फरवरी 2003)		94
35.	'कुण्डलपुर के महावीरा! शतशः वन्दन'	सौ. समीक्षा नांदगांवकर	97
36.	महावीर की पहचान कुण्डलपुर से करें न कि वैशाली से	आर्यिका चंदनामती	99
37.	वीर जन्मभूमि : एक चिंतन	डॉ. अभयप्रकाश जैन	104
38.	'मैं समय हूँ' (नाटिका)		105

चतुर्थ खण्ड

पंचकल्याणक तीर्थ एवं जैन ऐतिहासिक उल्लेख

1.	चौबीस तीर्थंकरों की जन्मभूमियों के परिचय	आर्यिका चंदनामती	1
2.	Brief Introduction of Birthplaces of 24 Tirthankars	जीवन प्रकाश जैन	22
3.	तीर्थंकर जन्मभूमियाँ संस्कृति की उद्गम स्थल हैं!	ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन	27
4.	भगवान ऋषभदेव तपस्थली प्रयाग का परिचय	अनिल कुमार जैन (कमल मंदिर)	29
5.	अतिशय क्षेत्र प्रभासगिरि (पभोसा) कौशाम्बी	डॉ. पन्नालाल जैन	31
6.	राजगृही तीर्थ का महत्व	गणिनी ज्ञानमती	34
7.	अहिच्छत्र तीर्थ का परिचय	ब्र. कु. इन्दु जैन	38
8.	प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की निर्वाणभूमि कैलाशपर्वत	प्रो. टीकमचंद जैन	40
9.	गिरनार जी सिद्धक्षेत्र का परिचय	क्षुल्लक मोतीसागर	43
10.	भगवान महावीर निर्वाणभूमि पावापुरी जल	गणिनी ज्ञानमती	46
11.	Pawapuri Jalmandir-The Salvation Land of Lord Mahavira	गणिनी ज्ञानमती	48
12.	सम्मेदशिखर तीर्थ का परिचय	आर्यिका अभयमती	51
13.	दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीर जी	कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन	54
14.	भगवान महावीर की उपसर्ग विजयभूमि ऐतिहासिक तीर्थ उज्जैन	उमेश जैन	56
15.	भारत के प्रमुख दिगम्बर जैन तीर्थ	रमेशचंद्र जैन मनयां	59
16.	गुणावाँ जी सिद्धक्षेत्र का परिचय	अजय कुमार जैन	85
17.	Jain Dharma & Lord Rishabhdev	गणिनी ज्ञानमती	86
18.	गौतम स्वामी का परिचय	गणिनी ज्ञानमती	97
19.	भगवान महावीर शासन की आचार्य परम्परा	उमेश जैन	109
20.	गणिनी आर्यिका चन्दना	गणिनी ज्ञानमती	121
21.	दिगम्बर जैन परम्परा में गौतम स्वामी	डॉ. अनिल कुमार जैन	123
22.	बड़ी कमेटी, बड़े लोग और बड़े विचार	अजय कुमार जैन	127

पंचम खण्ड

आकाश की ऊँचाईयों को छूता कुण्डलपुर

1.	भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर के जिन मंदिर	गणिनी ज्ञानमती	1
2.	Brief Introduction Of Newly Developed Kundalpur	Jeevan Prakash Jain	19
3.	नंद्यावर्त महल की पावनता	ब्र. कु. इन्दु जैन	22
4.	मनोकामना सिद्धि भगवान महावीर व्रतविधि	गणिनी ज्ञानमती	23
5.	गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के विविध कार्यकलाप	कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन	29
6.	नंद्यावर्त महल परिसर में दीवारों पर लगे शिलापट्ट		34
7.	भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) की सर्वमान्य परम्परा के समर्थन में देश की विभिन्न जैन संस्थाओं द्वारा पारित प्रस्ताव		84
8.	नंद्यावर्त महल में भगवान महावीर के जीवनदर्शन को दर्शाते शिलापट्ट पर उत्कीर्ण चित्र		86

षष्ठ खण्ड

भगवान महावीर ज्योति रथ प्रवर्तन

1.	भगवान महावीर ज्योति रथ का भारत भ्रमण	विजय जैन, कानपुर	1
2.	तीर्थ विकास, ज्योतिरथ प्रवर्तन एवं ग्रंथ प्रकाशन की सम्प्रेरिका गणिनी ज्ञानमती माताजी का परिचय	आर्यिका चंदनामती	35
3.	राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे.अब्दुल कलाम ने प्राप्त किया आशीर्वाद माताजी का		40

सम्पादक मण्डल

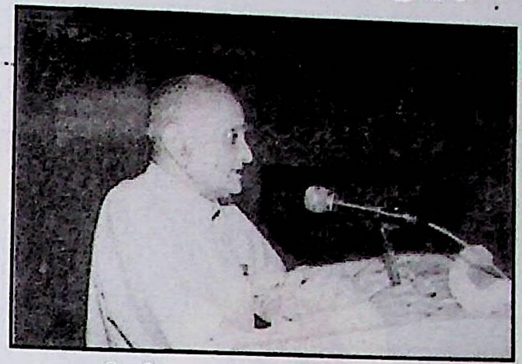
प्राचार्य नरेन्द्र प्रकाश जैन, फिरोजाबाद

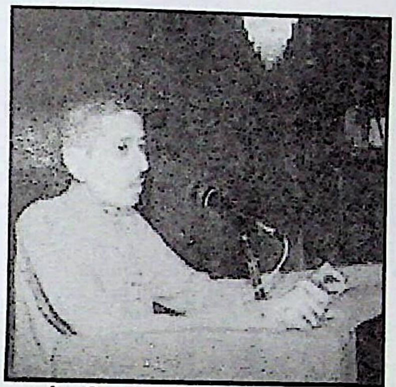
पं. शिवचरण लाल जैन, मैनपुरी

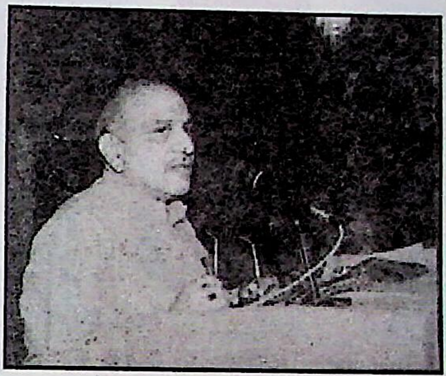
डा. शेखर चंद जैन, अहमदाबाद

डा. अनुपम जैन, इन्दौर

डा. भागचन्द भागेन्दु, दमोह

डा. जय कुमार जैन, मुजफ्फरपुर

डॉ. अभयप्रकाश जैन

प्रो. टीकम चंद जैन, दिल्ली

ब्र. कु. आस्था जैन (संघस्थ)

ब्र. कु. स्वाति जैन (संघस्थ)

प्रो० रमेशचंद मनयां, भोपाल

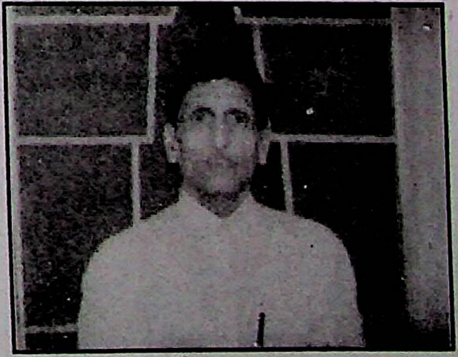
उमेश चंद जैन, फिरोजाबाद

विनयांजलि एवं काव्य खण्ड
प्रथम खंड

श्री वीर जिनस्तोत्र

—गणिनी ज्ञानमती

मयूरगति छन्द –(23 अक्षरी)

सिद्धिवधूप्रियनाथ! जिनेश्वर! वीर! महागुणरत्नसुराशे!।
कुण्डलपूः त्रिशलाजननी बहुपुण्यवती सुरवृन्दनुतासीत्।।
मंगलदं भुवि हर्षकरं जिन! गर्भमवाप शुचौ सितषष्ठ्यां।
सन्मतिदेव! सदा मम सन्मतये भवतात् प्रणमामि मुदा त्वां।।1।।

तन्वी छन्द –(24 अक्षरी)

चैत्रसिते या, जिनजनिरभवत्, सा त्रययुक्तदशमदिवसे वै।
देवसुरेन्द्रैः, सुरगिरिशिखरे, जन्ममहोत्सवविधिरभिनीतः।।
मार्गसुकृष्णे, दशमितदिवसे, रत्नमहाव्रतगुणविधृतस्त्वं।
भूर्युपसर्गं भव इति विहितः ध्यानरतो नहि, विचलितचित्तः।।2।।

क्रौंचपदा छन्द –(25 अक्षरी)

घातिविघाती केवलबोधः स्फुरितसकलभुवि निजरविरुदितः।
माधवमासे शुक्लदशम्यां त्रिभुवनमिदमिति करतलफलवत् ।।
श्रावण आद्ये गीस्तव दिव्या भविजनहृदयकमलमुदमकरोत्।
आयुरभूद् द्वासप्ततिवर्षास्तव जिनवर! मम भव शिवगतये।।3।।

तन्वी छन्द –(24 अक्षरी)

कार्तिकमासे शिवपदमगमत् कृष्णचतुर्दशदिवसनिशांते।
तीर्थसुपावापुरमिह भणितं सप्तकरोच्छ्रित इति कनकाभः।।
बालयतिस्त्वं जिनवरचरमो मृत्युजयी खलु मृगपतिचिन्ह।
नौम्यतिवीरं शमदमकथकं वीरमनंतमतुलसुखराशिं।।4।।
स्यादिति वादः सुवचनममृतं ते जिन! संसृतिगदमपहर्तृ।
मारजयी त्वं हरमदहरणो नाथसुवंशतिलक इह लोके।।
ज्ञानमतिश्रीः झटिति भवतु मे भक्तिवशात् तव मुनिगणवंद्या।
स्वात्मजसिद्धिर्ध्रुवसुखजननी सन्मतिदेव! सकलविमला स्यात् ।।5।।

अनुष्टुप् छन्द –

वर्धमानो .महावीरः, श्रीमान् सिद्धार्थनन्दनः।
त्वत्संस्तुतेः स्मृतेश्चापि, विघ्नौघः प्रलयं व्रजेत् ।।6।।
जीयाद्वीरजिनेन्द्रस्य, शासनं जिनशासनं।
प्रभवेत् वर्धमानस्य, धर्मचक्रं सदा भुवि।।7।।

५४५

महावीराष्टक-स्तोत्रम्

(कविवर भागचन्द)

–शिखरिणी छन्द –

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचितः
समं भान्ति ध्रौव्य व्यय-जनि-लसन्तोऽन्तरहिताः।
जगत्साक्षी मार्ग-प्रकटनपरो भानुरिव यो
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे।।1।।

अताम्रं यच्चक्षुः कमल-युगलं स्पन्द-रहितं
जनान्कोपापायं प्रकटयति वाभ्यन्तरमपि।
स्फुटं मूर्तिर्यस्य प्रशमितमयी वातिविमला
महावीरं-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे।।2।।

नमन्नाकेन्द्राली-मुकुट-मणि-भाजालजटिलं
लसत्पादाम्भोज-द्वयमिह यदीयं तनुभृताम् ।
भवज्ज्वाला-शान्त्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे।।3।।

यदर्च्चा-भावेन प्रमुदित-मना दर्दुर इह
क्षणादासीत्स्वर्गी गुण-गुण-समृद्धः सुखनिधिः।
लभन्ते सद्भक्ताः शिव-सुख-समाजं किमु तदा
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे।।4।।

कनत्स्वर्णाभासोऽप्यपगत-तनुर्ज्ञान-निवहो
विचित्रात्माप्येको नृपति-वर-सिद्धार्थ-तनयः।
अजन्मापि श्रीमान् विगत-भव-रागोद्भुत-गतिर्
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे।।5।।

यदीया वाग्गङ्गा विविध-नय-कल्लोल-विमला
वृहज्ज्ञानाम्भोभिर्जगति जनतां या स्नपयति।
इदानीमप्येषा बुध-जन-मरालैः परिचिता
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे।।6।।

अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवन-जयी काम-सुभटः
कुमारावस्थायामपि निज-बलाद्येन विजितः।
स्फुरन्नित्यानन्द-प्रशम-पद-राज्याय स जिनः
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे।।7।।

महामोहातंक-प्रशमन-पराकस्मिक-भिषक्
निरापेक्षो बन्धुर्विदित-महिमा मंगलकरः।
शरण्यः साधूनां भव-भयभृतामुत्तमगुणो
महावीर-स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे।।8।।

अनुष्टप् छन्द – महावीराष्टकं स्तोत्रं भक्त्या 'भागेन्दु' ना कृतम्।
यः पठेच्छ्रणुयाच्चापि स याति परमां गतिम् ।।9।।

मंगल आशीर्वाद

मैं समझता हूँ कि भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर में नये-नये मंदिरों का एवं नंद्यावर्त महल का निर्माण कोई साधारण निर्माणकार्य नहीं, प्रत्युत् यह जैन संस्कृति एवं इतिहास का संरक्षण हुआ है जो कि इस युग में बहुत आवश्यक था। बीसवीं सदी के प्रथम दिगम्बर जैनाचार्य चारित्रचक्रवर्ती श्री शांतिसागर महाराज की परम्परा में चतुर्विध संघरूपी उपवन के एक सुरभित पुष्प के रूप में हमारी ज्ञानमती माताजी जहाँ परम्परा की अलौकिक गौरव हैं, वहीं सन्तों, मुनियों और आचार्यों की निर्मात्री भी हैं। मैंने तो प्रारंभ से ही इनके ज्ञानगांभीर्य, कर्मठता, जिनेन्द्रभक्ति आदि गुणों को देखा है जिनके द्वारा ही उन्होंने विपुल साहित्यसृजन, तीर्थोद्धार, बड़े-बड़े महोत्सव जैसे राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय कार्यों को सम्पन्न करवाकर विलक्षण ख्याति अर्जित की है।

धर्मप्रिय शिवगामी कर्मयोगी ब्र.रवीन्द्र कुमार जी का शुभ संदेश प्राप्त हुआ कि कुण्डलपुर तीर्थ का विकास कार्य तीव्र गति से चल रहा है जो कि लगभग पूर्णता की ओर है। इस मंगल अवसर पर भगवान महावीर के जन्मस्थल नंद्यावर्त महल का उद्घाटन एवं तीर्थोद्धारिका, शताधिक ग्रंथों की लेखिका, शीघ्र मोक्षगामी गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी का 71वाँ जन्मजयंती समारोह भी है। सभी विकास कार्यों की पूर्णता पर कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ भी प्रकाशित हो रहा है। यह कार्य वास्तव में कुण्डलपुर के निर्माणशिखर पर स्वर्णकलशारोहण है। यह अभिनंदन ग्रंथ स्वयं भगवान महावीर का अभिनंदन है। इस कार्य से जुड़े सभी कार्यकर्ताओं को मेरा मंगल आशीर्वाद।

माताजी तीर्थों के विकास में, ग्रंथों के निर्माण में, चारित्रपालन में दीर्घायु होवें एवं अनेक भव्यों को मोक्षमार्ग में लगाते हुए सम्यग्ज्ञान रूपी दीपक में तत्वज्ञान रूपी घी की पूर्ति करती रहें। आज भगवान महावीर के 2600वें जन्मकल्याणक में जन्मस्थली का विकास हुआ, यह महोत्सव की सबसे बड़ी उपलब्धि है, भगवान महावीर के चरणों में कोटि-कोटि वंदन।

वर्षायोग–2004 **–आचार्य अभिनंदनसागर, खण्डवा (म.प्र.)**

आशीर्वाद

'कुण्डलपुर अभिनन्दन ग्रंथ' का प्रकाशन हो रहा है। जानकर प्रसन्नता हुई। कुण्डलपुर भगवान महावीर स्वामी की जन्मभूमि है। श्री पूज्यपाद आचार्यदेव द्वारा निर्वाणभक्ति के श्लोक में "भारतवास्ये-विदेहकुण्डपुरे" शब्द कुण्डलपुर के लिए प्रकृत लगता है। इसीलिए गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी ने अपनी सूझ-बूझ एवं दूरदर्शिता से कुण्डलपुर के विकास का बिगुल भगवान महावीर के 2600वें जन्मजयंती महोत्सव वर्ष में बजाया। 'महावीर ज्योति रथ' प्रवर्तन से विशेष प्रचार-प्रसार हुआ। माताजी ने कुण्डलपुर तीर्थ पर दो चातुर्मास का प्रवास किया और समिति ने नवीन भूखण्ड खरीदकर माताजी के स्वप्न को साकार किया है। इससे तीर्थ की प्राचीन रचना को भी सम्बल मिला। सदियों से कुण्डलपुर के दर्शन करने वाले तीर्थयात्रियों क़ो अब प्राचीन जिनालय के साथ नवनिर्मित जिनालयों के दर्शन का सुअवसर भी प्राप्त होगा। गणिनी माताजी की प्रेरणा एवं आशीर्वाद से निकटस्थ भगवान महावीर निर्वाणभूमि 'पावापुरी' और 'राजगृही' तीर्थ पर नवनिर्माण रूप विकास कार्य सम्पन्न हुए हैं। जैन समाज में इन कार्यों से जन्मभूमि आदि रूप तीर्थों के प्रति जागृति बनी है और नवीन तीर्थ की वन्दना का सुअवसर भी प्राप्त हुआ है। गणिनी आर्यिका माताजी के द्वारा धर्मप्रभावना के ऐसे कार्य निरन्तर सम्पन्न होते रहें, यही मंगलभावना है।

—आचार्य वर्धमानसागर
सलूम्बर (राज.)

मंगल आशीर्वाद

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर तीर्थ पर विद्यमान दिगम्बर जैन ग्रंथ लेखिका, अनुवादिका, पूजा-विधान आदि की रचयित्री, तीर्थोद्धारिका, जम्बूद्वीप आदि रचनाओं की प्रेरिका, सत्यानुकरणीय, आर्यिकाव्रताचरणीय पूज्य ज्ञानमती माताजी को अनेकशः साधुवाद तथा धर्मप्रेमी, आज्ञाकारी, सेवाभावी, भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर दि. जैन समिति के अध्यक्ष ब्र. रवीन्द्र जैन एवं समस्त पदाधिकारियों को हमारा धर्मानुराग से मंगलआशीर्वाद!

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर तीर्थ का उद्धार-विकास बहुत महत्वपूर्ण कार्य है। आज से 2603 वर्ष पूर्व जिस नंद्यावर्त महल में भगवान महावीर स्वामी ने जन्म लिया था तथा जहाँ उनकी 30 वर्ष तक की युवावस्था का सुनहरा अवसर व्यतीत हुआ था। उस नंद्यावर्त महल का निर्माण भी प्रत्यक्ष में हो रहा है। महाराजा सिद्धार्थ एवं महारानी त्रिशला के पुत्र महावीर स्वामी चूँकि जन्म से ही मति, श्रुत, अवधि ऐसे तीन ज्ञान के धारी थे अतः अनेकानेक लोगों की समस्याओं का, उनकी गूढ़ शंकाओं का क्षणभर में निरसन कर दिया करते थे तथा उन्होंने न जाने कितने लोगों को मुक्तिमार्ग के लिए भक्ति-श्रद्धा में प्रवृत्त किया था।

ऐसे उन भगवान महावीर स्वामी की जन्मभूमि कुण्डलपुर के विकास से पूर्व भी आपने हस्तिनापुर, प्रयाग, अयोध्या आदि अनेक तीर्थों का निर्माण, विकास, जीर्णोद्धार आदि कराकर सत्यस्वरूप को प्रगट किया है। आगे भी आप इसी उत्साह से कार्य एवं तपस्या करने में अग्रसर बनें, यह आशीर्वाद।

वर्षायोग–2004 **–आचार्य 108 बाहुबलीसागर**

ऋषभविहार-दिल्ली

* * *

मंगल आशीर्वाद

श्री वीतरागाय नमः

गणिनीप्रमुख विदुषी आर्यिकारत्न 105 श्री ज्ञानमती माताजी को मेरा मंगल आशीर्वाद समाधिरस्तु। वर्तमान शासनपति भगवान महावीर की जन्मस्थली श्री कुण्डलपुर का जीर्णोद्धार कर आपने एक बहुत बड़ा इतिहास सुरक्षित किया है। प्रचलित लोकविख्यात तथा हजारों यात्रियों के द्वारा प्रतिवर्ष सम्मेदशिखर जी के साथ-साथ वंदनीय, पूज्यनीय, अर्चनीय इस मंगलमय भूमि की ऐतिहासिकता को आपने साकार

कर एक अनुपम कीर्तिमान स्थापित किया है।

भगवान महावीर की जन्मदात्री भूमि का एक-एक रजकण पावन है, पवित्र है। जिस भूमि ने तीर्थंकर सपूत को जन्म देने का अनुपम गौरव प्राप्त किया, उस भूमि का अभिवंदन है, उस भूमि का अभिनंदन ग्रंथ नारी जगत का अभिनंदन है, माँ त्रिशला व सिद्धार्थ का अभिनंदन है।

इस पुनीत कार्य के लिए मैं माताजी को बार-बार आशीर्वाद देता हूँ। आपकी सभी धर्मप्रभावक योजनाएँ सदा सफल हों, यही भावना करता हूँ।

–आचार्य भरतसागर, कुचामन सिटी (राज.)
(शिष्य–आचार्य श्री विमलसागर जी महाराज)

मंगल आशीर्वाद

कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार भगवान महावीर स्वामी की जन्मभूमि है, ऐसा वर्णन हमारे आगम में देखने को मिलता है। महान आचार्यों द्वारा लिखित प्राचीन और सच्चे ग्रंथ धवला, तिलोयपण्णत्ति, उत्तरपुराण, महावीर चरित आदि में साक्षात् कई उद्धरण देखने को मिलते हैं। यदि हम सम्यग्दृष्टि हैं और सच्चे देव-गुरु-शास्त्र पर दृढ़ श्रद्धान रखते हैं तो बिना विवाद के यह कह सकते हैं कि कुण्डलपुर (नालंदा) में ही आज से 2603 वर्ष पूर्व भगवान महावीर स्वामी का जन्म हुआ था। मैं तो ज्ञानमती माताजी को बहुत-बहुत साधुवाद कहूँगा, जिन्होंने महावीर जन्मभूमि पर एक भव्य तीर्थ निर्माण के स्वप्न को साकार करने का लक्ष्य अपने जीवन में प्रमुखता से बनाया और उस जन्मभूमि का विकास देखते ही देखते आज इतनी सहजता से समापन की ओर आ गया साथ ही उसके समापन अवसर पर कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ भी प्रकाशित किया जाने लगा। जब मुझे ज्ञात हुआ कि यह कार्य मात्र डेढ़ वर्ष में समापन की ओर आ गया, तब मेरे हृदय से माताजी के प्रति शुभ आशीर्वाद की भावनाएं अपने आप निकलीं, उन्होंने सचमुच जैन संस्कृति को बचाने में बहुत बड़ा योगदान दिया है। शुभकामनाओं सहित,

–आचार्य भरतसागर
(शिष्य–आचार्यश्री सुमतिसागर जी महाराज)

मंगल आशीर्वाद

जो आपने कुण्डलपुर क्षेत्र पर मंदिर जी का विकास कराया वह आने वाले समय के लिए अतिशयकारी होगा। गणिनी 105 श्री ज्ञानमती माताजी ने जो जगह-जगह क्षेत्रों का विकास करने का संकल्प कर रखा है वह अति उत्तम है यह मोक्षलक्ष्मी की प्राप्ति को दृढ़ एवं सुनिश्चित करता है। कुण्डलपुर तीर्थ विकास के समापन अवसर पर आपकी प्रेरणा से जो अभिनंदन ग्रंथ प्रकाशित किया जा रहा है उसके लिए मेरा मंगल आशीर्वाद है।

–आचार्य दर्शनसागर, लालमंदिर-दिल्ली

* * *

शुभाशीर्वाद

कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ की सम्पादक मण्डली को हमारा शुभाशीर्वाद है और इस हुण्डावसर्पिणी के पंचम काल में भरत चक्रवर्ति एवं चंद्रगुप्त के 16 स्वप्न के कथनानुसार दिगम्बर जैन समाज में अहिंसा-अनेकांत-स्याद्वादमय-सम्यक् विचारधारा से गिरते हुए श्रावक-श्रमण एवं पंडितों को दि. जैन आगम की सही जानकारी हेतु तथा पंथभेद-मतभेद-मनभेद से बचकर भेदज्ञानी बनने हेतु जो प्रयास आप और आपकी मण्डली ने सम्यक् विचार के साथ किये हैं उसमें सफलता मिले, ऐसी शुभकामना है। आज भगवान महावीर के शासन काल में जैनी ही जैनधर्म की वास्तविकता से अनभिज्ञ हैं तो अजैनी को जैनधर्म का ज्ञान कहाँ से होगा? यदि दि. जैन समाज में प्रमुख श्रावक, सेठ-पंडित और साधुगण आगम श्रद्धालु हों एवं पंथवाद से दूर हों तो उपशम-क्षयोपशम के साथ सम्यग्दर्शन प्राप्त होना कठिन नहीं। परन्तु क्या करें जिनवाणी चौपड़ी की बात खोपड़ी में नहीं बैठती है! कारण बिना कार्य नहीं होता है। सत्संगति का अभाव व कुसंगति के कारण भगवान महावीर के शासन को समझने की बुद्धि है तो भी उपयोग सच्चाई पर नहीं लगता है। आप लोगों के प्रयास से इस अभिनंदन ग्रंथ के माध्यम से श्रावक श्रमणों को जिनवाणी का सार मालुम होवे तो पर्याय परिवार-परिग्रहों के बीच में भी परिणाम शुद्धि का पुरुषार्थ करने में समर्थ हो जायेंगे। संसार में अप्रशस्त राग, अप्रशस्त निदान तथा निरतिशय पुण्यहेय है। जैन सिद्धान्त के अनुसार प्रशस्तराग-प्रशस्त निदान तथा सातिशय पुण्य उपाय है। इन उपायों के बिना उपादेय की सिद्धि नहीं होती है अतः आप की कृति स्व-पर सम्यक् ज्ञान में कारण बनें। ज्ञानसम्यक्, चारित्राराधना के कारण बनें। ऐसी शुभकामना के साथ शुभाशीर्वाद है।

—आचार्य संभवसागर

* * *

इतिहास को जीवित किया है

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर का विकास पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से हुआ, यह जानकर मन में अति प्रसन्नता हुई। आज तक भगवान महावीर की जन्मभूमि अविकसित थी लेकिन किसी का ध्यान इस ओर नहीं गया। किन्तु पूज्य माताजी ने हजारों वर्षों के प्राचीन इतिहास को हजारों वर्ष आगे के लिए सुरक्षित किया है।

मैंने मांगीतुंगी में पूज्य माताजी के कार्यकलापों को बहुत निकट से देखा है। इतनी दृढ़ता एवं कर्मठता शायद किसी नारी में नहीं होगी, आज वर्तमान युग में ज्ञानमती माताजी साक्षात् सरस्वती की प्रतिमूर्ति हैं। जो कार्य पुरुषों के लिए असंभव था, वह एक नारी ने कर दिखाया है। इतने कड़े संघर्ष को सहन करके बहुत अल्प समय में कुण्डलपुर का विकास कार्य करवा देना वास्तव में एक चुनौती था। चारित्रचक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर जी महाराज की परम्परा को पूज्य माताजी ने वास्तव में गौरवान्वित किया है। माताजी के द्वारा ऐसे ऐतिहासिक कार्य हो रहे हैं, जिनकी कोई मिशाल नहीं है। इन्होंने श्रमण संस्कृति में चार चांद लगा दिये हैं एवं अपने मोक्ष के मार्ग को अत्यन्त सरल कर लिया है। कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ के सम्पादक मण्डल व समिति को मेरा मंगल आशीर्वाद है कि वे पूज्य माताजी द्वारा निर्देशित कार्यों को करते हुए पुण्य और यश का संचय करते रहें।

—आचार्य रयणसागर, उदयपुर

* * *

भगवान महावीर का एक संक्षिप्त इतिहास

इस काल के अंतिम तीर्थंकर महावीर भगवान हैं। इनका प्रचार भारतवर्ष में सबसे अधिक है। इसका कारण यह है कि महावीर भगवान अन्य तीर्थंकरों की अपेक्षा काल की दृष्टि से अधिक निकट हैं। अभी उनके ही शासन काल में हम लोग निवास कर रहे हैं। इसका मतलब यह नहीं कि अन्य तीर्थंकरों का महत्त्व इनसे कम है। महावीर भगवान ने धर्म के लिए जो कुछ किया था। उससे कुछ कम अन्य तीर्थंकरों का कार्य नहीं था। कुछ भारतीय विद्वानों के साथ-साथ कुछ विदेशी मानते हैं कि जैनधर्म हिन्दू धर्म या बौद्ध धर्म की एक शाखा हैं एवं महावीर भगवान ने जैनधर्म की स्थापना की थी। यह धारणा कोरी कल्पना है एवं भूल से भरी है क्योंकि महावीर से कई करोड़ों-अरबों वर्ष पहले इस युग के प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ हुए एवं उनके बाद भी मध्य में 22 तीर्थंकर हुए हैं। आदिनाथ तीर्थंकर के बारे में विशेष जानकारी के लिए आचार्य कनकनंदी द्वारा रचित 'युग निर्माता ऋषभदेव', तीर्थंकरों के बारे में विशेष जानकारी के लिए 'क्रान्ति के अग्रदूत' और इतिहास की जानकारी के लिए 'विश्व इतिहास' का अध्ययन करें।

23वें तीर्थंकर पार्श्वनाथ के मोक्ष जाने के 250 वर्ष बाद एक महान जीव पुष्पोत्तर विमान से आषाढ़ सुदी षष्ठी को च्युत होकर कुण्डलपुर के राजा सिद्धार्थ की रानी प्रियकारिणी (त्रिशला) के गर्भ में आया। यही महान आत्मा भगवान महावीर बनी।

जन्मस्थान—सिद्धत्थराय पियकारिणीहि णयरम्मि कुंडले वीरो।
उत्तरफगुणि रिक्खे चेत्त-सिद तेरसीए उप्पणो।। ति.प.अ. 4, गा. 556।

वीर जिनेन्द्र कुण्डलपुर में पिता सिद्धार्थ और माता त्रिशला—प्रियकारिणी से चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को उत्तरफाल्गुनी नक्षत्र में उत्पन्न हुए।

भगवान महावीर स्वामी का जीव पूर्व भव में 116वें अच्युत स्वर्ग के पुष्पोत्तर विमान का स्वामी था। वहाँ 22 सागर की आयु पर्यन्त स्वर्ग के सुखों को भोगकर भरतक्षेत्र बिहार प्रान्त के में विदेह देश में कुण्डलपुर नामक नगर के राजा सिद्धार्थ की महादेवी प्रियकारिणी, दूसरा प्रसिद्ध नाम त्रिशला देवी के गर्भ में आया। वह शुभ दिन आषाढ़ शुक्ला षष्ठी का था। इस समय चन्द्रमा हस्त तथा उत्तरा नक्षत्र के मध्य में स्थित था। जब यह महान् आत्मा गर्भ में आयी तब इसके छः महीने पहले ही इन्द्र ने कुबेर को आज्ञा देकर रत्नवृष्टि करवायी। यह रत्नवृष्टि लगातार जन्म होने तक होती रही। महावीर भगवान ने चैत्र शुक्ल त्रयोदशी के 'उत्तराफाल्गुन' नक्षत्र में जन्म लिया। वह दिन ईसा पूर्व 589 या विक्रम पूर्व 542 था। इनका क्षत्रिय नाम (ज्ञातृ) वंश था। इन्द्र ने जन्माभिषेक के समय में इनके अंगूठे में सिंह का चिन्ह देखकर इनका लक्षण 'सिंह' रखा। इनकी पूर्ण आयु 72 वर्ष की थी। जिसमें से कुमार काल 30 वर्ष का था तथा तप काल 12 वर्ष एवं केवली काल 30 वर्ष का था। 7 हाथ प्रमाण शरीर और इनका शरीर स्वर्ण वर्ण का था।

भगवान महावीर जातिस्मरण होने के कारण संसार शरीर भोगों से विरक्त हो गये। इसी कारण ये न विवाह बंधन में पड़े और न राज्य शासन ही किया। जब वे विरक्त हो गये तब लौकान्तिक देवों ने आकर उनकी सराहना की। महावीर भगवान को मनुष्य और देव एक सुन्दर पालकी में बैठाकर नाथवन में ले गये। मगसिर कृष्ण दशमी तिथि तथा उत्तरानक्षत्र के अपराह्न काल में एक दिन का उपवास लेकर 'नमः सिद्धेभ्यः' का ध्यान करते हुए पंचमुष्ठी केशलोंच करके एकाकी-दिगम्बरी दीक्षा ले ली।

यह दीक्षा दिवस 569 ई.पूर्व या 512 विक्रमपूर्व है। वे 12 वर्ष तक अखंड मौन लेकर आत्मसाधना में लीन रहे। उन्हें भी पार्श्वनाथ के समान एक बार घोर उपसर्ग सहन करना पड़ा।

आत्मध्यानी महावीर ध्यान से विचलित नहीं हुए। इस प्रकार 12 वर्ष की कठोर साधना के फलस्वरूप उन्हें ऋजुकूला नदी के तट पर वैशाख शुक्ल दशमी के दिन माघ नक्षत्र में लोकालोक को प्रकाशित करने वाला केवलज्ञान प्राप्त हुआ। यह दिन ई.पूर्व 557 या विक्रम पूर्व 500 था। उस कल्याणक को मनाने के लिए चतुर्निकाय देव आये और एक योजन प्रमाण समवसरण की रचना की। इनके समवसरण में मनुष्य एवं देवों के साथ पशु-पक्षी भी आकर धर्मश्रवण करते थे। इनकी धर्म सभा में इन्द्रभूति आदि ग्यारह गणधर थे। इनके समवसरण में 300 पूर्वधर, 9900 शिक्षक, 1300 अवधिज्ञानी, 700 केवली, 900 विक्रियाधारी, 500 विपुलमति एवं 400 वादी मुनि थे। इस प्रकार पूर्ण ऋषियों की संख्या 14000 थी। आर्यिकाओं की संख्या 36000 थी। आर्यिकाओं में मुख्य आर्यिका चंदना थी। एक लाख श्रावक तथा तीन लाख श्राविकाएँ थी।

महावीर भगवान तीस वर्ष तक अंग, बंग, कलिंग, मगध, सौराष्ट्र, गुजरात आदि देशों में विहार करते हुए 718 भाषा में जनता को सम्बोधित करते थे। जब वे विहार करते थे तब तक देव लोग उनके चरण के नीचे स्वर्ण कमल की रचना करते थे। महावीर भगवान को जब केवलज्ञान हुआ तब उनका शरीर परमौदारिक शरीर हो गया। परमौदारिक का अर्थ है शरीर के रक्त, मांस, हड्डी आदि सप्त धातु एवं मल परिवर्तित होकर शुद्ध स्फटिक रूप में परिणमन कर लेना। केवलज्ञान होते ही वे पाँच हजार धनुष भूपृष्ठ से ऊपर उठ गये थे। उपदेश, बिहार आदि 5000 धनुष ऊपर ही होता था। इनके समवसरण में गुह्यक यक्ष (मातंग यक्ष), सिद्धायनी यक्षिणी भक्तिभाव से रहते थे। मोक्ष जाने के दो दिन पूर्व ही उपदेश देना बंद कर दिया और समवसरण का विघटन भी हो गया था। वे पावापुरी के पद्म सरोवर के मध्य भाग में स्थित हुए। ईसवी पूर्व 527 या विक्रम पूर्व 470 कार्तिक कृष्ण अमावस्या के प्रत्यूष काल के स्वामी नक्षत्र में चारों अघातिकर्मों को नष्ट करके मोक्ष पधारे। जब महावीर भगवान को मोक्ष प्राप्त हुआ तब गौतम गणधर को केवलज्ञान प्राप्त हुआ। मोक्ष कल्याणक एवं गणधर को केवलज्ञान उत्सव मनाने के लिए दीपमालिका प्रज्वलित कर उत्सव मनाया। तब से ही दीपावली उत्सव प्रचलित हुआ जो वर्तमान में जैन व अजैन में यह उत्सव मनाया जाता है।

गौतम सिद्धार्थ (बुद्ध देव) का जन्म ईसा पूर्व 567 में होने के कारण भगवान महावीर उनके समकालीन होने पर भी उनसे ज्येष्ठ थे। महावीर का जन्म दीक्षा, केवलज्ञानादि बुद्ध से पहले होने के कारण स्वयं बुद्ध देव ने भी अनेक प्रकार अपने शिष्यों के समक्ष महावीर भगवान को सर्वज्ञ एवं सर्वदर्शी कहकर वर्णन किया। जिसका वर्णन त्रिपिटक व बौद्ध साहित्य में अनेक जगहों में पाया जाता है। स्वयं बुद्ध महावीर भगवान को एक स्वतंत्र धर्माचार्य, तीर्थंकर, धर्म प्रवर्तक मानने से यह सिद्ध होता है कि जैनधर्म एक स्वतंत्र धर्म है न कि 'हिन्दू या बौद्ध धर्म की शाखा'।

वर्तमान में भी अनेक अजैन विद्वान व विदेशी विद्वान भी जैनधर्म को प्राचीन एवं स्वतंत्र धर्म मानने लगे हैं जिसका प्रमाण बौद्ध साहित्य, हिन्दू साहित्य, जैन साहित्य व प्राचीन अवशेष हैं।

–वैज्ञानिक धर्माचार्य कनकनंदी

* * *

आशीर्वाद

भगवान महावीर जन्मभूमि दिगम्बर जैन समिति के सौजन्य से 'कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ' का प्रकाशन होने जा रहा है। यह जानकर हमें अत्यन्त धार्मिक प्रमोद हुआ है एवं मन भी मुदित हुआ। भगवान महावीर स्वामी के 2600वें जन्मकल्याणक वर्ष महोत्सव के पुण्य प्रसंग पर हमारा कुण्डलपुर क्षेत्र पर आना हुआ, तब इस क्षेत्र से हमारा परिचय हुआ। यहाँ के प्रवासकाल में हमने भगवान महावीर स्वामी के ध्यान के साथ-साथ अपनी आत्मा का भी ध्यान किया, उस समय ध्यान में जो अलौकिक आनंद की अनुभूति हुई, वह अकथनीय है। वास्तव में यह क्षेत्र साधु-संतों का प्राण हैं एवं प्राणों से भी प्रिय यह क्षेत्र है। इस क्षेत्र के नवीनीकरण में गणिनी आर्यिका 105 श्री ज्ञानमती माताजी का दिशा निर्देशन एवं कर्मयोगी ब्र. श्री रवीन्द्र जी का भागीरथ पुरुषार्थ सराहनीय है। इस ग्रंथ के प्रकाशन के लिए हमारा समिति के सभी कर्त्तव्यनिष्ठ पदाधिकारीगणों को बहुत-बहुत आशीर्वाद। यह ग्रंथ भगवान महावीर की जन्मभूमि को चिर स्थाई रखने में सहायक सिद्ध होगा, यही मंगल भावना है।

–आचार्य आनन्दसागर 'मौनप्रिय'

* * *

सच को सच रखें

षट् प्राभृत में आचार्य कुंदकुंद स्वामी सूत्रप्राभृत में कहते हैं कि हमारा बाह्य तप अंतरंग शुद्धि के बिना व्यर्थ है।

अह पुण अप्पा णिच्छदि धम्माइं करेदि निख सेसाइं।
तहवि ण पावदि सिद्धिं संसारत्थो पुणो भणिदो।।सूत्रप्राभृत 15।।पृ.118

जो आत्मा को नहीं इच्छता अर्थात् आत्मा की भावना नहीं करता है, वह भले ही समस्त धर्म कार्यों को करता हो तो भी मुक्ति को प्राप्त नहीं होता। वह संसारी ही कहा गया है। श्रुतसागर जी की टीका में श्लोक उद्धृत किया है–

अइ कुणउ तवं पालेउ संजमं पढउ सयल सत्थाइं।
जाम ण झावई अप्पा ताम ण मोक्खं जिणो भणई।।1।।

अतिशय तप करो, संयम पालो और समस्त शास्त्र पढ़ो, परन्तु जब तक आत्मा का ध्यान नहीं किया जाता है, तब तक मोक्ष प्राप्त नहीं होता है, ऐसा जिनेन्द्रदेव कहते हैं।

यहाँ आत्मा का श्रद्धान लिया। उसी प्रकार "वत्थु स्वभावो धम्मो" कहा गया है। वस्तु का जैसा स्वरूप है उसका वैसा ही श्रद्धान करना धर्म है। प्रत्येक द्रव्य का यथार्थ श्रद्धान करना सम्यग्दर्शन है। जो व्यवहार से श्रद्धान रहित है वह निश्चय से सम्यग्दृष्टि होने का विचार करे तो हो सकेगा क्या?

आचार्यों की बात को पुष्ट करना, सूत्र के अनुकूल चिंतवन, मनन करना, उस प्रकार की रुचि रखना ही सही श्रद्धा है। भगवान महावीर की जन्मभूमि (कुण्डलपुर-नालंदा) हम साधुओं के लिए भी पूज्य हैं क्योंकि उस स्थल में जाकर भक्ति करने का उपदेश दिया है जब स्थल में ही भ्रमित हो जावेंगे तो फिर उस क्षेत्र के कारण हमारे परिणामों में जो निर्मलता आना है वह नहीं आ पाएगी। जिस प्रकार वसु राजा ने एक बार मात्र झूठ बोला तो यज्ञ में हिंसा का मार्ग प्रारंभ हो गया, उससे वह नरक गति का कारण हो गया। उसी प्रकार हमने क्षेत्र का एक बार परिवर्तन कर दिया तो हमें भवभवान्तर तक उस पाप का भागी होना पड़ेगा।

हमारे जितने प्राचीन आचार्य हुए उनमें यह विशेषता थी कि वे पहले यह प्रतिज्ञा लिखते थे कि मैं जो भी वर्णन कर रहा हूँ, वह मुझे पूर्व ग्रंथों में से उपलब्ध हुआ है, उसे ही पुष्ट कर रहा हूँ। आज आपके सन्मुख "तत्त्वार्थ सूत्र" उपलब्ध है। यदि अकलंक स्वामी का सहारा अर्थात् "तत्त्वार्थवार्तिक ग्रंथ" उपलब्ध नहीं होता तो वर्तमान के विद्वान उसमें अनेकों गलतियाँ निकाल देते। किन्तु अकलंक स्वामी ने जो प्रतिपक्षी के प्रश्न उत्पन्न होंगे उन्हें उत्पन्न कर सूत्रों की सिद्धि की है। यह हमारी महान् उपलब्धि है।

तिलोयपण्णत्ति ग्रंथकार आचार्य यतिवृषभ जी का महान् उपकार है जो उस समय में कई विषयों में कई मत बताया पुनः अपने मत को बताया और अंत में यह लिख दिया कि मेरा व्यक्तिगत तर्क गलत हो सकता है। किन्तु उन आचार्यों की बातें गलत नहीं हो सकती हैं। वर्तमान में विद्वान लोग अपने विचार तो पेश करते हैं किन्तु यह किनका मत है यह कोई बात नहीं रखते या कभी पेश भी करेंगे तो पूर्व की क्या बात करी उसे निकाल देंगे और मध्य के शब्दों को पकड़कर अपनी बात की पुष्टि करते हैं और अन्य आचार्यों का इस विषय में क्या मत है वे तो कहीं बताते ही नहीं है।

धवलाकार ने महान् उपकार किया। वीरसेन आचार्य ने धवला तथा जयधवला में सूत्र को किस प्रकार सिद्ध किया तथा दो बड़े आचार्यों के मत निकलें तो उन्होंने स्पष्ट लिख दिया कि इस विषय में हमारी जिह्वा नहीं चलती है। इतने स्पष्ट आचार्यों के ग्रंथ पढ़कर सुनकर भी शास्त्रों में श्रद्धान नहीं हो रहा है, इसका अर्थ है कि निधत्त-निकाचित मिथ्यात्व कर्म का तीव्र उदय होना चाहिए।

भव्य जीवों को चाहिए कि वे किसी भी विषय में कोई भी निर्णय स्वयं न दें, पूर्व आचार्यों ने जिस प्रकार से वर्णन किया है, उसी प्रकार वर्णन करें। उनकी बातों को पुष्ट करने का भाव रखें। यदि आगम में उस विषय में कोई विषय उपलब्ध नहीं है तो यह कह दें कि वर्तमान में श्रुतकेवली-केवली का अभाव होने से हम कुछ नहीं कह सकते हैं। किन्तु हम तुरंत निर्णय न दें। यदि आगम विरुद्ध निर्णय दे दिया तो हमारी दुर्गति होने में देर नहीं लगेगी। अभी वर्तमान में दक्षिण से लेकर उत्तर के सभी शास्त्र उपलब्ध हो गए, यही महान् पुण्य का उदय आया है। इसलिए उन्हीं शास्त्रों के आधार पर निर्णय करें।

और सदियों से चली आ रही महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर के प्रति अपनी श्रद्धा को दृढ़ रखें,
यही मेरी प्रेरणा है।

-आचार्य पद्मनंदी

* *

शुभाशीर्वाद

मुझे यह जानकर बहुत खुशी हुई कि परमपूज्य गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी की सत्प्रेरणा से भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) द्वारा "कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ" प्रकाशित होने जा रहा है।

जैन धर्म के अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर के संदर्भ में वर्तमान में जो अनेक प्रकार की भ्रान्तियाँ उत्पन्न हो रही हैं, प्रस्तुत ग्रंथ से निश्चित ही उनका निराकरण होकर यह ग्रंथ एक वरदानस्वरूप सिद्ध होगा।

प्रस्तुत ग्रंथ विरोधाभासों और विसंगतियों को दूर करके अनेकांत सिद्धांत के माध्यम से एक प्रतिष्ठित ग्रंथ होगा। यह ग्रंथ सकल विद्वानगण एवम् मनीषी, साधु-संत एवं आर्यिका माताओं द्वारा प्रमाण से समस्त कुतर्कों को आगम तर्क के माध्यम से निर्मूल करते हुए साक्षी बनकर जिन धर्म पर अटूट विश्वास के साथ सम्यक्दर्शन उत्पन्न करेगा।

इन सद्भावनाओं के साथ मेरा समस्त कार्यकर्ताओं को, प्रकाशन समिति को मंगल शुभाशीर्वाद।

वर्षायोग–2004 –**आचार्य कुमुदनंदी**, नांदगांव (नासिक) महा.

* *

मंगल आशीर्वाद

गणिनीप्रमुख आर्यिका 105 ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से कुण्डलपुर में 24वें तीर्थंकर भगवान महावीर की जन्मभूमि पर जो निर्माणकार्य किया गया है, वह बहुत ही सराहनीय हुआ है। यह कार्य आचार्य परम्परा के अनुसार ही किया गया है, यह स्थान ही भगवान महावीर की जन्मभूमि रहा है, इसमें कोई संदेह नहीं है। मैं गणिनीप्रमुख आर्यिका श्री 105 ज्ञानमती माताजी को मेरा शुभ आशीर्वाद देता हूँ तथा मेरी मंगलकामना है कि वे अपने जीवन में इसी प्रकार के कार्य करती रहें।

–**आचार्य कल्याणसागर**, श्री मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र (महा.)

* *

आशीर्वाद

परम्परा से प्रसिद्ध वर्तमान कुण्डलपुर में गणिनी आर्यिका विदुषी पूज्य 105 श्री ज्ञानमती माताजी ने भगवान महावीर जन्मभूमि का विकास करते हुए 'नंद्यावर्त महल' नामक भव्य तीर्थ का निर्माण करवाकर तीर्थयात्रियों के लिए महावीर की जन्मस्थली को जगा दिया है। जो तीर्थ भक्त के द्वारा कभी नहीं भुलाया जा सकता है।

भगवान महावीर स्वामी इस युग के अंतिम युग प्रवर्तक तीर्थंकर थे। उन्होंने बढ़ती हिंसा और अराजकता को रोककर धर्म का पुनःप्रवर्तन किया था।

आज के युग में वर्तमान गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी ने भगवान महावीर स्वामी के सिद्धान्त की स्थापना हेतु कुण्डलपुर के नव निर्माणपूर्वक तीर्थ के द्वार उद्घाटित कर दिये हैं, जिससे देश एवं विदेश की असंख्य आत्माएं श्रद्धाभक्तिपूर्वक जैनधर्म के मूल सिद्धान्त–अहिंसा-सत्य-अपरिग्रह और अनेकांत को हृदयंगम कर सकेंगे।

माताजी के द्वारा किये गये कार्यों के प्रति भारतीय जैन समाज सदा ऋणी रहेगी। इस अवसर पर प्रकाशित भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ के लिए मेरी ओर से शुभकामनाएं एवं शुभाशीर्वाद!

–**प्रज्ञाश्रमण आचार्य देवनन्दि**, जटवाड़ा (महा.)
वर्षायोग–2004

* * *

आशीर्वचन

परमविदुषी गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी का जैन संस्कृति उन्नयन में बहुत योगदान रहा है। आपकी प्रेरणा से अनेक तीर्थों का जीर्णोद्धार और नवनिर्माण हुआ है।

उसी श्रृंखला में भगवान महावीर जन्मभूमि का विकास आपकी पावन प्रेरणा से इतनी द्रुतगति से हुआ है, वह प्रशंसनीय है।

माताजी की समस्त योजनाओं के लिए मेरा मंगल आशीर्वाद है।

–**आचार्य शांतिसागर**

* * *

मंगल आशीर्वाद

गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर तीर्थ का विकास किया गया। यह बहुत प्रशंसनीय कार्य हुआ है। तीर्थों का विकास, जीर्णोद्धार एवं संरक्षण समस्त समाज का आवश्यक कर्तव्य है और माताजी ने न सिर्फ एक जन्मभूमि बल्कि सभी सोलहों जन्मभूमियों के विकास की प्रेरणा दी और विकास क्रम जारी भी है, यह एक बहुत बड़ा और महत्वपूर्ण कार्य है।

कुण्डलपुर विकास के समापन अवसर पर माताजी को मेरा मंगल आशीर्वाद एवं इस अवसर पर जो अभिनंदन ग्रंथ का प्रकाशन किया जा रहा है उसके लिए भगवान महावीर से यही प्रार्थना है कि यह ग्रंथ सभी को सम्यक् ज्ञान प्रदान कर सम्यग्दृष्टि बनने में सहायक हो।

–**आचार्य निश्चयसागर**, इंदौर

* * *

आशीर्वचन

बिहार प्रान्त के कुण्डलपुर नगर में महाराजा सिद्धार्थ की महारानी त्रिशला के गर्भ से बालक वर्द्धमान का जन्म हुआ था। जन्म के समय कुण्डलपुर का वैभव विराट था लेकिन काल के गाल में उस नगरी का सारा वैभव समा गया और धीरे-धीरे उस नगरी का आकर्षण समाप्त हो गया। आज सारे देश में महावीर के नाम से बड़े-बड़े मंदिर एवं आयतन हैं लेकिन कुण्डलपुर के अंदर छोटा सा मंदिर था अर्थात् चिराग तले ही अंधेरा था।

आज भले ही हजारों वर्ष बाद ही जन्मभूमि के विकास का समय आया है लेकिन इतने कम समय में इतना विकास हो गया है कि अनेक वर्षों में भी इतना कार्य नहीं हो सकता है। गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी ने आज तीर्थंकर जन्मभूमियों के विकास के लिए जो सराहनीय कदम उठाया है, वह वास्तव में प्रशंसनीय है।

माँ सरस्वती का साक्षात्स्वरूप आर्यिका ज्ञानमती माताजी में विद्यमान है, जिन्होंने संयम की साधना करते हुए सरस्वती की एवं तीर्थ क्षेत्रों की खूब सेवा की है एवं अपने नारी जीवन को धन्य किया है। भगवान महावीर के 2600वें जन्मकल्याणक की सबसे बड़ी उपलब्धि है कि भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) का विकास बड़े पैमाने पर हो गया। पूज्य माताजी के लिए मेरा मंगल आशीर्वाद है कि वे इसी प्रकार से तीर्थंकरों के कल्याणकभूमियों के विकास की प्रेरणा प्रदान करती रहें।

समिति के सभी कार्यकर्ताओं को मेरा बहुत-बहुत मंगल आशीर्वाद!

–बालाचार्य योगीन्द्रसागर, उदयपुर

* * *

मंगल आशीर्वाद

मानव समाज का एक आदर्श जीवन और वास्तविक अस्तित्व सिर्फ धर्म और धर्म का सच्चा अनुसरण करने वाले आराध्य गुरुओं की आराधना करने से होता है। धर्म और गुरु दोनों ही सर्वोपरि होते हैं, इसलिए धर्म का संरक्षण और गुरुओं का मंगल सानिध्य हमारे जीवन की उत्कृष्टता के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण ही नहीं नितांत आवश्यक भी होता है।

धर्म के इस सांस्कृतिक संरक्षण की महत्ता को ध्यान में रखते हुए गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) तीर्थ का विकास करवाकर अपनी दूरदर्शिता एवं दिव्यदृष्टि का परिचय दिया है। यह कार्य 21वीं सदी का सबसे महानतम कार्य हुआ है। जो जन-जन द्वारा भविष्य में अत्यन्त पूजनीय और जगत्मान्य रूप में स्थापित होकर भक्ति का विश्वप्रसिद्ध केन्द्र बनेगा।

वर्तमान समय की सर्वप्रथम आवश्यकता तीर्थंकर भगवन्तों की जन्मभूमियों के विकास के क्रम में भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर के विकास के समापन अवसर पर माताजी को मेरा मंगल आशीर्वाद एवं इस अवसर पर जो अभिनंदन ग्रंथ प्रकाशित किया जा रहा है उस हेतु मैं बहुत सारी शुभकामनाएं प्रेषित करता हूँ।

–उपाध्याय निजानंदसागर, इंदौर

* * *

मंगल आशीर्वाद

मुझे यह जानकर बहुत प्रसन्नता हुई कि गणिनीप्रमुख ज्ञानमती माताजी अभिनन्दन ग्रंथ का प्रकाशन करवा रही हैं। हमारी प्राचीन और भावी पीढ़ी इन महान कार्यों को भूल न जाए, इस विचार से ग्रंथ प्रकाशन की परम्परा अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

यह मेरा सौभाग्य है कि मुझे आचार्य 108 चारित्रचक्रवर्ती श्री शांतिसागर जी महाराज की परम्परा में दीक्षा लेने का अवसर मिला और उनके वर्तमान पट्टाचार्य 108 आचार्य श्री अभिनंदन जी महाराज का आशीर्वाद भी मुझे प्राप्त हो रहा है।

पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी भी आचार्यश्री शांतिसागर जी महाराज की भांति ही आज धर्मप्रभावना में निरत हैं, उनके लिए बहुत-बहुत साधुवाद।

—मुनि भद्रसागर

⁂

मंगल आशीर्वाद

महावीर स्वामी जैनियों के आराध्य देव हैं और कुण्डलपुर उनकी जन्मभूमि है अतः वह भी जैनमात्र के लिए आस्था और आराधना की तीर्थभूमि है। इस तीर्थभूमि को महावीर भूमि बनाने का महान कार्य आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी कर रही हैं। माताजी की कार्यक्षमता बेजोड़ है, वे जो भी मिशन हाथ में लेती हैं, उसे शिखर कलश तक पहुंचाकर ही दम लेती हैं।

आज हम सब अपने देश पर गर्व करते हैं। मगर कल कुछ चीजों पर देश को गर्व होगा, उनमें से ही एक ज्ञानमती माताजी होंगी। मैं उनके अच्छे स्वास्थ्य, दीर्घ जीवन, रत्नत्रय कुशलता की प्रार्थना महावीर स्वामी से करता हूँ। कुण्डलपुर तीर्थक्षेत्र के निर्माण पर उन्हें मेरा बहुत-बहुत आशीर्वाद।

भद्रं भूयात्

वर्षायोग—2004 **—मुनि तरुणसागर**, गजपंथा (नासिक)

⁂

शुभकामना

भगवान महावीर स्वामी की यशोगाथा साहित्य व शब्दों में होने के उपरांत भी जन्मभूमि का महत्व काल दोष के कारण घट रहा था, फिर भी सुन्दरतम कुण्डलपुर का जीर्णोद्धार करा कर भगवान महावीर स्वामी की स्मृति को पुनर्जीवित करने का शुभ प्रयास धर्मप्रभावना में कारण बने, ताकि 18000 वर्षों तक जैनधर्म जयवन्त रहे, यही मंगलभावना है।

आपका यह कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ निर्ग्रन्थ पथ का पोषक बने, यही मंगलकामना है।

—मुनि सौरभसागर

⁂

शुभाशीष

भगवान महावीर जैनधर्म के अंतिम तीर्थंकर हैं। भगवान महावीर ने परम्परा या सम्प्रदाय से हटकर सत्य के मसीहा बनकर जन-जन को उपदेशित किया। आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा की जा रही कुण्डलपुर से भगवान महावीर की धर्मप्रभावना अपने आप में एक अनूठी मिसाल है। जैन समाज में माताजी का स्थान आर्यिका शिरोमणि के रूप में है। आपने जहाँ भी जो भी तीर्थक्षेत्र का निर्माण करवाया है, वह शत-प्रतिशत आगम के अनुकूल है। मेरा हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप तथा प्रयाग में भगवान ऋषभदेव तपस्थली में जाना हुआ। वहाँ की रचना व दर्शन करके मन अत्यधिक प्रसन्न हुआ। वर्तमान में आपने कुण्डलपुर जैसे वीरान स्थान को विराट रूप देने का जो उत्कृष्ट कार्य किया है, वह सम्पूर्ण भारत की जैन समाज के लिए प्रशंसनीय व अनुकरणीय होगा तथा भगवान महावीर के दिव्य संदेश कुण्डलपुर के विकास से संपूर्ण भारत में पहुँचेगे। आप सभी तीर्थंकरों की जन्मभूमि को भव्यता का रूप प्रदान करें, यही शुभाशीष है।

—**मुनि पुण्यसागर**, झुमरीतलैया

* * *

मंगल कामना

कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ प्रकाशित करने का उद्देश्य आज के समय की आवश्यकता है तथा उत्तम योजना है। इस अभिनंदन ग्रंथ के प्रकाशन से चंद लोगों के मस्तिष्क में बैठी ग़लत भ्रान्तियों का निवारण होगा।

जहाँ तक मेरा व्यक्तिगत विचार है कि भगवान महावीर की जन्मस्थली कुण्डलपुर, जो नालंदा के पास है, जिसका जीर्णोद्धार गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी करा रही हैं, वही है। सन् 1955 से पूर्व प्रकाशित जैन साहित्य से इसी स्थान की पुष्टि होती है। चंद लोगों द्वारा अकारण भ्रम फैलाया जा रहा है।

इस अभिनंदन ग्रंथ को प्रकाशित कर आपकी समिति अपने परम पवित्र उद्देश्य में सफल हो, ऐसी मेरी शुभकामनाएँ हैं।

दिनाँक—26-8-2004 —**मुनि मेरुभूषण**

* * *

भगवान महावीर स्वामी स्वयं समाज के शिलालेख हैं

भारतीय जैन इतिहास एवं संस्कृति, पुरातत्व या शिलालेखों में भगवान महावीर स्वामी का वर्णन मिलता है। जैन संस्कृति में भगवान महावीर का सर्वोच्च स्थान है।

वर्तमान में गणिनी आर्यिकारत्न ज्ञानमती माताजी ने उन भगवान महावीर की जन्मभूमि का विकास करवाकर बहुत महत्वपूर्ण कार्य किया है, इसके लिए माताजी बहुत प्रशंसा की पात्र हैं।

उनके क्रियाकलापों के लिए मेरा मंगल आशीर्वाद।

—**मुनि जिनसेन**, सम्मेदशिखर जी-मधुबन
(शिष्य—आचार्यरत्न बाहुबलीसागर जी महाराज)

* * *

कुण्डलपुर विकास एवं अभिनंदन ग्रंथ की प्रेरणास्रोत गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी का मंगल आशीर्वाद

तीर्थंकर भगवन्तों के गर्भ, जन्म, दीक्षा, ज्ञान एवं निर्वाण कल्याणकों से पवित्र भूमियाँ समस्त जिनधर्मावलम्बियों के लिए अतिशय पूज्य मानी गई हैं क्योंकि वहाँ का वातावरण सदाकाल पुण्य परमाणुओं से आच्छादित रहता है। ऐसी भूमियों के दर्शन-वंदन-अर्चन से महान पुण्य का अर्जन होता है। पुनः यदि ऐसे स्थान समय की धूलि से धूमिल होने लगें, तब उनका संरक्षण-संवर्धन-संपोषण जिनशासन के सभी अनुयायियों का नैतिक कर्तव्य बनता है।

हमारे समस्त प्राचीन दिगम्बर जैन शास्त्रों यथा-तिलोयपण्णत्ति, धवला, हरिवंशपुराण इत्यादि में भगवान महावीर की जन्मभूमि के रूप में कुण्डलपुर अथवा कुण्डपुर का ही वर्णन आया है। जहाँ पर 'कुण्डपुर' शब्द भी प्रयुक्त हुआ है, वह कुण्डलपुर का ही पर्याय है और किसी भी प्रकार कुण्डग्राम, कोटिग्राम, क्षत्रियकुण्ड या ब्राह्मणकुण्ड इत्यादि से उसका संबंध नहीं है। वस्तुतः कुण्डग्राम/कोटिग्राम इत्यादि शब्द दिगम्बर जैनाचार्यों ने प्रयुक्त ही नहीं किए हैं।

आगम को ही अपनी प्राण चेतना मानते हुए मैंने अपने दीक्षित जीवन के 51 वर्ष पूर्ण किए हैं और वर्तमान में भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर के नवविकास की प्रेरणा प्रदान करते हुए संस्कृति-संरक्षण रूप अपने दायित्व का निर्वाह करने का सम्यक् प्रयास किया है। जिन शासनपति भगवान महावीर के शासनकाल में मुझे संसार-सागर से पार लगाने वाली रत्नत्रय रूप महान निधि प्राप्त हुई है, ऐसे उन भगवान की जन्मभूमि का विकास उनके चरण-कमलों में मेरी एवं सम्पूर्ण दिगम्बर जैन

समाज की विनम्र विनयांजलि है। कुण्डलपुर में नवनिर्मित 'नंद्यावर्त महल तीर्थ' सदाकाल भव्यजनों के कल्याण का मार्ग प्रशस्त करता रहे, रत्नत्रय की प्राप्ति में संबल बनता रहे एवं भगवान महावीर के अहिंसा, अनेकांत, स्याद्वाद जैसे सर्वोदयी सिद्धान्त उनकी जन्मभूमि से विश्व को प्राप्त होते रहें, यही मेरी हार्दिक मंगल अभिरुचि एवं भावना है।

मेरी आज्ञा को शिरोधार्य करके जन्मभूमि के इस नवविकास में प्राण-प्रण से अपनी शक्ति को समर्पित करने वाली मेरी संघस्थ शिष्य-त्रिवेणी आर्यिका चंदनामती, क्षुल्लक मोतीसागर एवं कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार विशेष आशीर्वाद की पात्र है। साथ ही तीर्थ की योजना, निर्माण, व्यवस्थाओं में सहयोगी समस्त अन्य भव्यजनों के लिए भी मेरा बहुत-बहुत मंगल आशीर्वाद है क्योंकि सबके सहयोग से ही मेरे अंतःकरण की भावना साकार रूप धारण कर पाई है।

प्रस्तुत **'कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ'** के प्रकाशन की प्रेरणा में भी मेरी यही भावना रही कि दिगम्बर जैनागम के अनुसार भगवान महावीर का जीवन चरित्र, उनकी वास्तविक जन्मभूमि एवं उनके मुख से उद्भूत सारतत्व जनमानस को उपलब्ध हों एवं दीर्घकाल तक सम्यग्ज्ञान की रश्मियाँ सभी का मार्ग प्रशस्त करती रहें। अभिनंदन ग्रंथ की रचना में सहयोगी समस्त विद्वत्वर्ग, श्रेष्ठी वर्ग एवं अन्य जनों के लिए मेरा हार्दिक मंगल आशीर्वाद!

–गणिनीप्रमुख ज्ञानमती

* * *

तीर्थों का जीर्णोद्धार अतिशय महत्त्वपूर्ण है

अनादि काल से संसार में भ्रमण करने वाले इस प्राणी ने अनन्त दुःखों को सहन किया। एक श्वास में 18 बार जन्ममरण किया। एक अन्तर्मुहूर्त में छ्यासठ हजार तीन सौ छत्तीस बार जन्म मरण किया। इस संसार का नाशक आत्मीय जिनधर्म को स्वीकार नहीं किया। न ही इस धर्म को प्राप्त कर स्वकीय स्वरूप में लीन होकर उत्तमपद को प्राप्त करने वाले महापुरुषों के प्रति अनुराग कर उनके द्वारा कथित धर्म को धारण ही किया इसलिए संसार भटकते रहते हैं। जन्म-मरण करते रहते हैं। किसी महान पुण्य के उदय से मानव पर्याय उत्तमकुल जिनवाणी का श्रमण जिनधर्म को प्राप्त कर आत्मकल्याण के साथ-साथ जीर्णोद्धार, नूतन जिनमंदिर निर्माण कर जिन बिम्ब स्थापन करते हैं वे महापुरुष आदरणीय, अनुकरणीय एवं पूजनीय होते हैं, प्रशंसा के पात्र होते हैं।

जिनमंदिर निर्माण, जिनबिम्ब स्थापना से जिन धर्म का उद्योतन होता है सम्यग्दर्शन निर्मल होता है। जिनधर्म की अनादिनिधनता की सिद्धि इन्हीं आयतनों से होती है। जिस प्रकार एक महल का निर्माण चार खंभों पर स्थित है, उसी प्रकार जिनधर्म का अस्तित्व जिनमंदिर, जिनबिंब, जिनशास्त्र और उनके कथन अनुसार चलने वाले साधुगण के आधार पर आधारित है।

जो भव्य मानव स्वकीय कालुष्य भावों को दूर कर परस्पर में मैत्री भावों की भावना को रखकर जिनधर्म का द्योतन करते हैं उनके समान दूसरा कोई पुण्यात्मा नहीं है।

हमारे आराध्य देव ने अहिंसा परमोधर्मः का उपदेश देकर सारे जगत का कल्याण किया है। उनके जिनशासन का प्रत्येक प्राणी को प्रचार-प्रसार करना चाहिए तथा जो जिनधर्म का द्योतन प्रचार-प्रसार

करते हैं उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा कर तथा उनके कार्यों में सहयोगी बनकर पुण्योपार्जन करना हमारा परमकर्तव्य है। उसको कभी नहीं भूलना चाहिए। भगवान महावीर की जन्मभूमि का विकास एवं कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ का प्रकाशन जन-जन के लिए हितकारी हो, यही मेरी मंगलकामना है।

–गणिनी सुपार्श्वमती

* * *

भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर

भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर है या वैशाली। यह विवाद समाज के सामने आया, किंतु सभी चुप रहे।

पूज्य गणिनी आर्यिका ज्ञानमती माताजी इस आगम विरुद्ध बात को बिल्कुल सहन नहीं कर सकतीं। प्राचीन काल से अभी तक कुण्डलपुर का प्राचीन मंदिर और वहाँ होने वाली अनवरत भक्ति पूजा वहाँ की प्राचीनता का केन्द्र बनी हुई है तथा पूर्वाचार्यों द्वारा प्रणीत शास्त्र ही साक्षी हैं। कुण्डलपुर स्वयं ही प्राचीनता को प्रकट करने वाला इतिहास है।

माताजी ने 2001 में दिल्ली से यह घोषणा की कि भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) है। क्षेत्र के विकास हेतु दिल्ली का जन समुदाय सैकड़ों की धनराशि लेकर कुण्डलपुर चल पड़ा और एक वर्ष में विशाल मंदिर, नंद्यावर्त महल और धर्मशाला बनवाकर तैयार कर दिया। यह प्रभाव माताजी के व्यक्तित्व का है। माताजी ने भगवान महावीर की दिव्यदेशना को अक्षुण्ण (कायम) रखने के लिए अनेक ग्रंथों की टीकाएं, स्वतंत्र रचना संस्कृत, हिन्दी, प्राकृत भाषा में की हैं। अनेक विधानों को बनाकर जन समुदाय को भक्तिरस से पल्लवित कर दिया है। सभी रचनाएं आगमोक्त और सर्वोपयोगी हैं। माताजी वास्तव में सरस्वती की प्रतिमूर्ति हैं। इन्होंने जिनमार्ग की प्रभावना तथा समाज को जो देन दी है वह उद्धार का सर्वोपरि मार्ग है।

इस प्रकार धर्मकार्य, धर्मप्रभावना तथा धर्मतीर्थों की रक्षा का कार्यभार वहन करने की सामर्थ्य अन्य में नहीं देखी गई है।

दूसरी ओर विरोधी दल असत्य का प्रचार कितना भी करे। किन्तु विजय सत्य की ही होती है। भगवान महावीर जिस मार्ग पर चल कर कर्म विजयी बने, उसी मार्ग का अनुसरण करने वाली पूज्य माताजी हैं, इन्होंने स्वहित के साथ-साथ परहित भी किया है, न जाने कितने मुमुक्षु भाई बहिनों को मोक्ष पथ के पथिक बनाया है। उनमें से मैं भी इन महोपकारी माँ की शिष्या हूँ, जिन्होंने संरक्षण करके एवं शिक्षित करके गुरु और माँ के दायित्व को निभाया, इन वात्सल्यमूर्ति गुरु माँ का ऋण जन्म-जन्मान्तरों में भी पूरा नहीं किया जा सकता। इनके अपार गुणों का वर्णन करने की मेरे में शक्ति नहीं है, अंतरंग से यही भाव उजागर होते हैं कि मोक्ष जाने तक इसी माँ का मार्गदर्शन मिले।

सत्पथ प्रदर्शिका पूज्य गणिनी आर्यिका ज्ञानमती माताजी के चरणों में विनयांजलि अर्पित करती हूँ तथा यह भावना करती हूँ कि यह धर्म की मूर्ति दीर्घकाल तक धर्म का उद्योत करें।

–आर्यिका आदिमती

(शिष्या–गणिनीप्रमुख आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी)

* * *

मंगल भावना

अंतिम तीर्थंकर 1008 श्री भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर का जीर्णोद्धार गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से थोड़े समय में अधिक महत्वपूर्ण हुआ। भगवान महावीर की वास्तविक जन्मभूमि कुण्डलपुर ही है। पूज्य माताजी जो भी कार्य करती हैं, वह बहुत स्तुत्य हैं। ऐसे ही उनकी प्रेरणा से सभी कार्य शीघ्र पूर्ण होवें, यही मंगलभावना करती हूँ और माताजी के चरण सरोज में पुनः पुनः वंदामि करती हूँ तथा यह कामना करती हूँ कि पूज्य माताजी चिरकाल तक स्वस्थ एवं चिरायु रहकर इसी प्रकार धर्मप्रभावना के कार्य करती रहें तथा हम सभी को सद्बुद्धि प्रदान करती रहें ताकि हम अपने जीवन का कल्याण कर सकें।

–आर्यिका श्रेयांसमती, श्री मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र (महा.)
(शिष्या–परमपूज्य आचार्य 108 श्री शिवसागर जी महाराज)

* * *

कुण्डलपुर-नालंदा (गीत)

-आर्यिका अभयमती

जो भी आया कुण्डलपुर दरबार में,
वो ही रोशन हो गया संसार में।।टेक.।।
दृश्य मन मंदिर में तेरा आ रहा।
नाम जपने से उजाला छा रहा।।
यश चहुँ दिश में फैला तब हर द्वार में।
जो भी आया कुण्डलपुर दरबार में।।
चुंबक से बढ़कर प्रभु तुझमें है शक्ती
जभी भक्त जन करते हैं तुम्हारी भक्ति।
प्रभु महिमा सुन झूमें घर-घर द्वार में।
जो भी आया महावीर दरबार में।।
लोहे को पारस बनाया तुम प्रभो।
पापी से पापी को तारा तुम विभो।।
पार करो मेरी नैया मझधार में ।
जो भी आया कुण्डलपुर दरबार में।
वो ही रोशन हो गया संसार में।।
"अभयमती" कहे सच्चे दिल से जो रटे।
पाप के बंधन सभी उसके कटे।।
सिद्ध हो सब काम प्रभु के द्वार में।
जो भी आया महावीर दरबार में।।

शुभाशीर्वाद

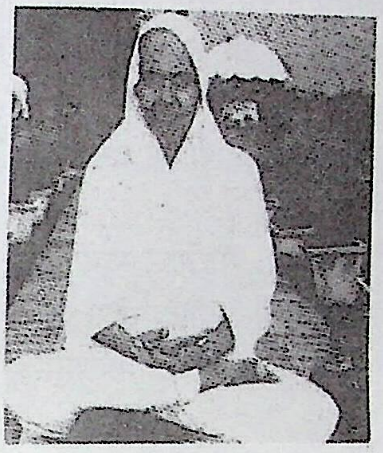

गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि पूज्य श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा एवं आशीर्वाद से 'कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ' कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जी, प्राचार्य नरेन्द्र प्रकाश जैन, डॉ. अनुपम जैन एवं समस्त संपादक मंडल के सहयोग से छपने जा रहा है, उनका ये कार्य बहुत ही प्रशंसनीय है। इस अभिनंदन ग्रंथ के माध्यम से कुण्डलपुर का एवं भगवान महावीर के सिद्धान्तों का विश्वव्यापी प्रचार-प्रसार विशेष रूप से हो सकेगा और जिनके अंदर विपरीत धारणा बैठी हुई है, इस ग्रंथ को पढ़कर उनकी विपरीत धारणा भी दूर हो सकती है। क्योंकि शेरनी का दूध स्वर्ण पात्र में ठहरता है अन्य पात्र में नहीं। उसी प्रकार भद्र परिणामी जीव ही देव, शास्त्र, गुरु पर सच्ची श्रद्धा रखते हैं, अन्य नहीं। जोंक गाय के थन के पास रहकर भी दूध को न पीकर खून को ही पीता है पर मानसरोवर पर रहने वाला हंस दूध-दूध को पीकर पानी को छोड़ देता है, ऐसी ही परिणति सम्यग्दृष्टि एवं मिथ्यादृष्टि जीव की होती है। अंत में ये अभिनंदन ग्रंथ शीघ्र ही प्रकाशित होकर सबके हाथ में पहुँचे एवं समस्त कमेटी "जैन संस्कृति" एवं श्रमणसंस्कृति को ऊँचा उठाने में प्रयत्नशील रहे। कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार ही महावीर भगवान की जन्मभूमि है, ऐसी दृढ़ श्रद्धा सबके अंदर बैठे, यही मेरा सभी को शुभ आशीर्वाद है।

–आर्यिका अभयमती

* * *

मंगल भावना

परमविदुषी, तीर्थोद्धारिका, सरस्वती की प्रतिमूर्ति, अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी, गणिनी आर्यिका 105 श्री ज्ञानमती माताजी दीर्घकाल से जैन संस्कृति के उन्नयन में सतत संलग्न रही हैं, तदर्थ आपने विपुल साहित्य सृजन के माध्यम से हितोपदेशी सर्वज्ञ की वाणी को जन-जन के हाथों तक पहुँचाने का अथक प्रयास किया है, तीर्थंकरों की कल्याणकभूमियों एवं अन्य धर्मायतनों के जीर्णोद्धार व नव निर्माण आपकी पावन प्रेरणा से सकुशल सम्पन्न हुए, उसी पावन पुनीत शृंखला में कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार का विकास द्रुतगति से आपकी सद्प्रेरणा एवं शुभाशीर्वाद के लिए सतत उठे हुए करकमलों के शुभाशीष से हो रहा है, यह परम प्रशंसनीय है।

आपका इसी प्रकार स्व-पर कल्याण करते हुए दीर्घकाल तक स्वस्थ एवं उत्कृष्टता का रूप लिए संयमित जीवन बना रहे, जिससे यह प्यासी जगती आपके वचनामृत का पान करके तृप्त होती रहे, यही वीरप्रभू से कामना है, भावना है।

–गणिनी विशुद्धमती, कैलाशनगर, दिल्ली

वर्षायोग – 2004

* * *

मंगल भावना

अंतिम तीर्थंकर 1008 श्री भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर का जीर्णोद्धार गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से थोड़े समय में अधिक महत्वपूर्ण हुआ। भगवान महावीर की वास्तविक जन्मभूमि कुण्डलपुर ही है। पूज्य माताजी जो भी कार्य करती हैं, वह बहुत स्तुत्य हैं। ऐसे ही उनकी प्रेरणा से सभी कार्य शीघ्र पूर्ण होवें, यही मंगलभावना करती हूँ और माताजी के चरण सरोज में पुनः पुनः वंदामि करती हूँ तथा यह कामना करती हूँ कि पूज्य माताजी चिरकाल तक स्वस्थ एवं चिरायु रहकर इसी प्रकार धर्मप्रभावना के कार्य करती रहें तथा हम सभी को सद्बुद्धि प्रदान करती रहें ताकि हम अपने जीवन का कल्याण कर सकें।

–आर्यिका श्रेयांसमती, श्री मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र (महा.)
(शिष्या–परमपूज्य आचार्य 108 श्री शिवसागर जी महाराज)

* * *

कुण्डलपुर-नालंदा (गीत)

-आर्यिका अभयमती

जो भी आया कुण्डलपुर दरबार में,
वो ही रोशन हो गया संसार में।।टेक.।।
दृश्य मन मंदिर में तेरा आ रहा।
नाम जपने से उजाला छा रहा।।
यश चहुँ दिश में फैला तब हर द्वार में।
जो भी आया कुण्डलपुर दरबार में।।
चुंबक से बढ़कर प्रभु तुझमें है शक्ती
जभी भक्त जन करते हैं तुम्हारी भक्ति।
प्रभु महिमा सुन झूमें घर-घर द्वार में।
जो भी आया महावीर दरबार में।।
लोहे को पारस बनाया तुम प्रभो।
पापी से पापी को तारा तुम विभो।।
पार करो मेरी नैया मझधार में ।
जो भी आया कुण्डलपुर दरबार में।
वो ही रोशन हो गया संसार में।।
"अभयमती" कहे सच्चे दिल से जो रटे।
पाप के बंधन सभी उसके कटे।।
सिद्ध हो सब काम प्रभु के द्वार में।
जो भी आया महावीर दरबार में।।

* * *

शुभाशीर्वाद

गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि पूज्य श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा एवं आशीर्वाद से 'कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ' कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जी, प्राचार्य नरेन्द्र प्रकाश जैन, डॉ. अनुपम जैन एवं समस्त संपादक मंडल के सहयोग से छपने जा रहा है, उनका ये कार्य बहुत ही प्रशंसनीय है। इस अभिनंदन ग्रंथ के माध्यम से कुण्डलपुर का एवं भगवान महावीर के सिद्धान्तों का विश्वव्यापी प्रचार-प्रसार विशेष रूप से हो सकेगा और जिनके अंदर विपरीत धारणा बैठी हुई है, इस ग्रंथ को पढ़कर उनकी विपरीत धारणा भी दूर हो सकती है। क्योंकि शेरनी का दूध स्वर्ण पात्र में ठहरता है अन्य पात्र में नहीं। उसी प्रकार भद्र परिणामी जीव ही देव, शास्त्र, गुरु पर सच्ची श्रद्धा रखते हैं, अन्य नहीं। जोंक गाय के थन के पास रहकर भी दूध को न पीकर खून को ही पीता है पर मानसरोवर पर रहने वाला हंस दूध-दूध को पीकर पानी को छोड़ देता है, ऐसी ही परिणति सम्यग्दृष्टि एवं मिथ्यादृष्टि जीव की होती है। अंत में ये अभिनंदन ग्रंथ शीघ्र ही प्रकाशित होकर सबके हाथ में पहुँचे एवं समस्त कमेटी "जैन संस्कृति" एवं श्रमणसंस्कृति को ऊँचा उठाने में प्रयत्नशील रहे। कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार ही महावीर भगवान की जन्मभूमि है, ऐसी दृढ़ श्रद्धा सबके अंदर बैठे, यही मेरा सभी को शुभ आशीर्वाद है।

–आर्यिका अभयमती

* * *

मंगल भावना

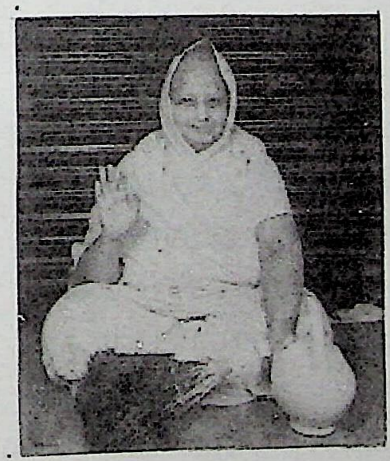

परमविदुषी, तीर्थोद्धारिका, सरस्वती की प्रतिमूर्ति, अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी, गणिनी आर्यिका 105 श्री ज्ञानमती माताजी दीर्घकाल से जैन संस्कृति के उन्नयन में सतत संलग्न रही हैं, तदर्थ आपने विपुल साहित्य सृजन के माध्यम से हितोपदेशी सर्वज्ञ की वाणी को जन-जन के हाथों तक पहुँचाने का अथक प्रयास किया है, तीर्थंकरों की कल्याणकभूमियों एवं अन्य धर्मायतनों के जीर्णोद्धार व नव निर्माण आपकी पावन प्रेरणा से सकुशल सम्पन्न हुए, उसी पावन पुनीत शृंखला में कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार का विकास द्रुतगति से आपकी सद्प्रेरणा एवं शुभाशीर्वाद के लिए सतत उठे हुए करकमलों के शुभाशीष से हो रहा है, यह परम प्रशंसनीय है।

आपका इसी प्रकार स्व-पर कल्याण करते हुए दीर्घकाल तक स्वस्थ एवं उत्कृष्टता का रूप लिए संयमित जीवन बना रहे, जिससे यह प्यासी जगती आपके वचनामृत का पान करके तृप्त होती रहे, यही वीरप्रभू से कामना है, भावना है।

–गणिनी विशुद्धमती, कैलाशनगर, दिल्ली

वर्षायोग–2004

* * *

कुण्डलपुर विकास : एक महानतम कार्य

परमपूज्य गणिनी आर्यिकाप्रमुख युग की प्रथम बालयोगिनी अभीक्ष्णज्ञानापयोगिनी मातु श्री आर्यिका रत्नमणिस्वरूपा श्री ज्ञानमती-माताजी के पावन चरणारविन्द में स्याद्वादमती का केवलज्ञान के अविभाग प्रतिच्छेद बार त्रिधा त्रिकाल वंदामि वंदामि वंदामि।

पूज्य माताजी इस युग की महान नारी रत्न हैं, आपने अपनी बहुमुखी प्रतिभा के द्वारा जो यशस्वी कार्य किये हैं, उससे इस युग का इतिहास कभी भी अक्षुण्ण नहीं हो सकता।

कुण्डलपुर के इतिहास को आपने साकार रूप देकर अवर्णनीय कार्य किया है। तीर्थंकर महावीर की जन्मभूमि का अभिनंदन ग्रंथ प्रकाशन करना माँ त्रिशला का अभिनंदन करना है क्योंकि नारी की महिमा, नारी की गौरव गाथा का इतिहास नारी ही जान सकती है, माँ के गौरव को बढ़ाकर मातृभूमि का अभिनंदनरूप महान कार्य आप ही ने किया है।

हम बालब्रह्मचारी आर्यिकाओं का द्वार खोलने वाली मातुश्री आपकी यशोगाथा का गान हम युगों-युगों तक करते रहेंगे, पुनः पुनः वंदामि।

–**गणिनी स्याद्वादमती,** कुचामन सिटी

* * *

मेरे ज्ञानार्जन का अपूर्व केन्द्र बनी कुण्डलपुर तीर्थयात्रा

मुझे स्मरण आता है राजाबाजार, कनॉटप्लेस-दिल्ली में 13 फरवरी 2002 का वह दिन जब पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी और मेरी चर्चा हुई भगवान महावीर की जन्मभूमि-कुण्डलपुर (नालंदा) के साक्षात् दर्शन की। दोनों के हृदय में विचार परिपुष्ट हो रहा था कि स्वयं जाकर ही भगवान की जन्मभूमि की पावन रज से अपना तन-मन पवित्र किया जाये, परन्तु पूज्य माताजी का नरम स्वास्थ्य और इतनी लम्बी यात्रा मन में किंचित् असमंजस की स्थिति को उत्पन्न कर रहे थे। पर वास्तव में इस पुण्य भूमि के परमाणुओं का आकर्षण ऐसा प्रबल हुआ कि पूज्य माताजी ने तुरंत ही घोषणा कर दी कि मुझे ससंघ कुण्डलपुर की ओर विहार करना है। मेरे हृदय का श्रद्धाभाव और भी दृढ़ हो गया देवाधिदेव भगवान महावीर के प्रति और अपनी गुरु पूज्य ज्ञानमती माताजी के प्रति, क्योंकि मैंने कुछ दिन पूर्व ही पूज्य माताजी द्वारा रचित 'मनोकामना सिद्धि महावीर व्रत' प्रारंभ किया था और अभी मेरे तीन या चार ही व्रत हुए थे कि कुण्डलपुर जाने की हार्दिक अभिलाषा पूर्ण होती हुई दिखलाई पड़ रही थी। मात्र 7 दिन के पश्चात् राजधानी दिल्ली के इण्डिया गेट से हम सबके कदम बढ़ चले कुण्डलपुर की ओर। हृदय में सुन्दर भावना थी कि वर्षों से भगवान महावीर की जो जन्मभूमि उपेक्षा का केन्द्र बनकर धूमिल हो रही है, उस पावन भूमि को पुनः ऐसा स्वर्णिम बनाना है कि सारे विश्व को इसके अस्तित्व का भान हो। इसीलिए हृदय में बरबस फूट पड़ा–

''तेरी चंदन सी रज में हम उपवन खिलाएंगे।
कुण्डलपुर के महावीरा तेरा महल बनाएंगे।।''

मन में इतना आह्लाद था कि विहार में आने वाली कठिनाईयाँ भी बड़ी प्रिय लगती थीं, मार्ग के कंकड़ फूल जैसे लगते थे, थकान में भी सुकून की अनुभूति होती थी। वस्तुतः गुरुमुख द्वारा प्रारंभ से शिक्षा ही यही मिली है कि धर्म की, तीर्थ की, संस्कृति की सुरक्षा में यदि अपने तन का एक-एक कण भी न्यौछावर हो जाए तो भी अपना महान सौभाग्य समझकर प्रसन्न ही होना चाहिए।

विहार भी सकुशल पूर्ण हुआ और कुण्डलपुर की पावन धरती का पूज्य माताजी के साथ जब मैंने स्पर्श किया तो अपने महान पुण्य पर अतिशय संतोष भी हुआ क्योंकि दीक्षा लेने के पश्चात् इतनी लम्बी-लम्बी यात्राएं करके अपने तीर्थों के दर्शन का सुअवसर प्राप्त हो सकेगा, ऐसी कल्पनाएं दूरगामी प्रतीत होती थीं। धीरे-धीरे निर्माणकार्य प्रारंभ हुआ, पूज्य माताजी के साथ प्रत्येक विचार-विमर्श में बैठने का अवसर प्राप्त होता ही था, मैंने देखा कि इस भूमि का कुछ ऐसा प्रबल पुण्य है कि निर्माण का जो भी नक्शा इत्यादि बनाया जाता वह अत्यन्त ही सुन्दर एवं शीघ्रता से तैयार हो जाता और शीघ्र ही उसका क्रियान्वयन भी प्रारंभ हो जाता। शायद यही कारण है कि डेढ़ वर्ष की अल्प अवधि में ऐसा भव्य निर्माण कुण्डलपुर की धरती पर हुआ है कि सभी लोग आश्चर्यचकित हैं। लक्ष्य की एकाग्रता के साथ कठिन परिश्रम ने ही इस असाध्य कार्य को साध्य कर दिखाया है। मुझे गौरव होता है कि ऐसे ऐतिहासिक शिलालेख के हर अक्षर को मैंने अपने सामने उभरते हुए देखा है और अपनी शाश्वत संस्कृति के संरक्षण में मुझसे जो भी बन पड़ा, वह समर्पित किया है।

इस कुण्डलपुर यात्रा का मेरे लिए जो सर्वाधिक विशिष्ट पहलू रहा, वह रहा ज्ञानार्जन का अमूल्य उपहार, जो इस वास्तविक जन्मभूमि को जन्मभूमि सिद्ध करने हेतु मुझे विशेषरूप से प्राप्त हुआ। वर्षों पहले से पूज्य ज्ञानमती माताजी के मुख से सुनती थी कि गुणावां, पावापुरी, राजगृही के पास कुण्डलपुर भगवान महावीर की जन्मभूमि है और मैंने स्वयं भी दीक्षा लेने के पूर्व इस स्थान की वंदना की थी। पुनः जब वैशाली को भगवान महावीर जन्मभूमि मानने वाली विचारधारा विशेषरूप से समक्ष आई तब तो रात-दिन प्राचीन जैनागम ग्रंथों के स्वाध्याय, मनन, चिंतन के माध्यम से वास्तविक शोध को उजागर करने का मानस और भी दृढ़ होता गया। विहार के मध्य भी जहाँ कहीं भी पुस्तकालय उपलब्ध होता, वहाँ ही विविध ग्रंथों से साक्ष्य एकत्रित करने की भावना बनी रहती। मन में बार-बार यही विचार आता कि शोध तो वही सार्थक है जिसके माध्यम से प्राचीन दिगम्बर जैनागम एवं जैनाचार्यों के कथन को ही परिपुष्टता प्राप्त हो, वही बुद्धि सार्थक है जो अपनी प्राचीन संस्कृति के प्रति ही कटिबद्ध रहे। इन्हीं भावनाओं से ओतप्रोत होकर जन्मभूमि-कुण्डलपुर से संबंधित ज्ञानार्जन एवं आगमिक शोध में मुझे जो हार्दिक आनन्द प्राप्त हुआ, वह वचनातीत है। कुण्डलपुर की धरती पर बैठकर भी अध्ययन-स्वाध्याय का विशेष ही अवसर रहा क्योंकि यहाँ पर ही मैंने 'भगवान महावीर हिन्दी-अंग्रेजी जैन शब्दकोश' को पूज्य गणिनी माताजी की छत्रछाया में बैठकर गहन मनन-चिंतन के बाद अंतिम स्वरूप प्रदान किया। इसी प्रकार 'कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ' हेतु भी गुरु आज्ञापूर्वक इसे सर्वांगीण बनाने का प्रयास भी ज्ञानार्जन की दिशा में सार्थक कदम ही सिद्ध हुआ है। वास्तविकता तो यही है कि ज्ञान की प्राप्ति में जो आनन्द आत्मा से उद्भूत होता है वह अनुपम एवं अतुलनीय है, जितनी संतुष्टि सम्यक्-ज्ञान के माध्यम से प्राप्त होती है, वह संसार की किसी भी अन्य सामग्री से प्राप्त नहीं हो सकती। इस कुण्डलपुर विकास ने मुझे स्वाध्याय एवं अभीक्षण

ज्ञानोपयोग का जो अवसर प्रदान किया है, वह ही मेरे लिए अनुपम निधि है।

एक अन्य बिन्दु पर भी ध्यान आकृष्ट करना चाहूँगी कि राजधानी दिल्ली से कुण्डलपुर की यात्रा के मध्य एवं कुण्डलपुर की धरती पर बैठकर भी देशभर की जितनी भी दिगम्बर जैन समाज से विचारों का आदान-प्रदान हुआ, वहाँ 99 प्रतिशत जनमानस कुण्डलपुर (नालंदा) को भगवान महावीर की जन्मभूमि के रूप में सहर्ष स्वीकार करता नजर आया, लोगों के मन में कहीं कोई अन्य विकल्प दृष्टिगोचर ही नहीं होता था, वर्षों से सम्मेदशिखर, राजगीर, पावापुरी इत्यादि के दर्शन करते हुए लोग कुण्डलपुर पधारते रहे हैं, ऐसा ही तथ्य उभरकर सामने आया। जैनेतर समाज में पाठ्य-पुस्तकों के माध्यम से जो वैशाली को भगवान महावीर की जन्मभूमि के रूप में स्थापित किया गया, उन्हीं लोगों के प्रश्न कभी-कभी सामने आते थे, हम लोग तो यथाशक्ति सभी को वस्तुस्थिति से परिचित कराते थे और लोग स्वीकार करते थे कि जनमानस की श्रद्धा ही सर्वोपरि है, आप लोगों ने कुण्डलपुर (नालंदा) का विकास करके लाखों श्रद्धालुओं की श्रद्धा को दृढ़ संबंल प्रदान किया है। कुण्डलपुर के इस नवविकास से परिचित होकर न जाने कितने शोधार्थी इस स्थान के ऊपर शोध करने की भावना लेकर पूज्य माताजी के पास आ रहे हैं पर माताजी तो यही कहा करती हैं कि हमारी सारी शोध का केन्द्र तो हमारे प्राचीन जैनाचार्यों द्वारा लिखे आगम ग्रंथ ही होने चाहिए और उनके आधार से ही इस कुण्डलपुर तीर्थ को बनाया नहीं गया वरन् नवनिर्माण करके बचाया गया है, अब आप लोग जो चाहे सो शोध कर सकते हैं, हमारी श्रद्धा आपकी शोध की मोहताज नहीं है।

साररूप में यही कहना चाहूँगी कि कुण्डलपुर का विकास करके पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी ने दिगम्बर जैन समाज की संस्कृति के संरक्षण का महान कार्य किया है और पूज्य माताजी के वरदहस्त में मुझे भी अपनी शक्ति इस महान उद्देश्य के प्रति समर्पित करने में जो आन्तरिक ऊर्जा एवं आल्हाद की प्राप्ति हुई है, वह मेरे लिए अक्षय निधि की भाँति है। ऐसी परमपूज्य माताजी का वात्सल्य एवं अनुशासन सदैव मुझे आच्छादित करता रहे, यही मंगलभावना हृदय में रहा करती है।

क्षुल्लक श्री मोतीसागर जी महाराज ने अपनी शक्ति से भी बढ़कर लोगों को जन्मभूमि-कुण्डलपुर के प्रति जागृत करने में एवं तीर्थ के नवनिर्माण में अपने समय का, शक्ति का एवं ज्ञान का जो सदुपयोग किया है, वह स्तुत्य एवं अविस्मरणीय है। भाई जी के नाम से प्रसिद्ध कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र जी ने भी वर्षों के अनुभवों का निचोड़ इस नवनिर्माण में लगाकर पूर्ण तत्परता से पूज्य माताजी के दिशानिर्देशों का पालन करते हुए जो निधि समस्त समाज को उपलब्ध कराई है, वह उनकी कर्मठता एवं कार्यक्षमता को सदैव उच्चारित करती रहेगी।

जन्मभूमि-कुण्डलपुर का यह नवनिर्मित नंद्यावर्त महल तीर्थ विश्व को भगवान महावीर के सर्वोदयी सिद्धान्तों से सदैव परिचित कराता रहेगा, जैनधर्म की यशगाथा को फहराता रहेगा और पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी जैसी महान साध्वी का यह प्रयास अमर होकर भव्यजनों को कल्याण के पथ पर अग्रसर करता रहेगा, यही विश्वास है। गुरुचरणों में विनम्र वंदन सहित,

–आर्यिका चन्दनामती
(संघस्थ शिष्या–गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी)

5 नाम से प्रसिद्ध भगवान महावीर को शतशः नमन

भारत एक महान देश है। यहाँ की महान भूमि ने अनेकों महापुरुषों, तीर्थंकरों और ऋषियों-मुनियों को जन्म दिया। बिहार राज्य के कुण्डलपुर में राजा सिद्धार्थ राज्य करते थे। वे बड़े न्यायप्रिय एवं धर्मात्मा पुरुष थे। उनकी रानी का नाम त्रिशला था, उनको प्रियकारिणी भी कहते थे। उन्होंने चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन एक सुन्दर तेजस्वी बालक को जन्म दिया। उनके दाहिने पैर के अँगूठे में सिंह का चिन्ह अंकित था। बालक का जन्म होने पर तीनों लोकों में हर्ष की लहर दौड़ गई। सौधर्म इन्द्र अवधिज्ञान से जानकर इन्द्राणी एवं समस्त देवी-देवताओं के परिवार सहित वहाँ उपस्थित हुआ और बालक का जन्म उत्सव मनाया। जिनशिशु को ऐरावत हाथी पर विराजमान करके 'पांडुकशिला' पर ले जाकर क्षीरसागर के जल से 1008 कलशों से अभिषेक किया और उन्हें वीर-वर्धमान इन दो नामों से अलंकृत किया।

एक दिन वर्धमान अपने महल में पालने में झूल रहे थे, उसी समय संजय और विजय नाम के दो चारण ऋद्धिधारी मुनि वहाँ से निकले। दूर से ही वर्धमान को देखकर उनकी शंका का समाधान हो गया, इसलिए उन्होंने वर्धमान का 'सन्मति' नाम रख दिया।

कुछ समय बाद वर्धमान जब 8 या 9 वर्ष के हुए, तब अपने मित्रों के साथ वन में खेल रहे थे। इन्द्र की सभा में एक देव ने वर्धमान की परीक्षा लेनी चाही। वह इन्द्र की आज्ञा से एक भयानक विषैले सर्प का रूप धारणकर वन में खेल रहे बालकों के सामने अचानक उपस्थित हुआ। उस सर्प को देखकर राजकुमार के सभी मित्र घबराए और इधर-उधर भागने लगे। वर्धमान वहीं खड़े रहे, वे नहीं डरे। वर्धमान ने अपने साहस और चतुरता से उस सर्प को पराजित किया। सर्प असली रूप में उपस्थित हुआ और उनका "महावीर" नाम रखकर स्वर्ग चला गया।

महावीर ने 30 वर्ष की युवावस्था में ही दिगम्बर जैनेश्वरी दीक्षा को अंगीकार किया, वे बालब्रह्मचारी थे। दीक्षा के पश्चात् वे एक बार उज्जयिनी के अतिमुक्तक वन में तपस्या कर रहे थे। एक रुद्र उनकी परीक्षा करने को आया। उसने बहुत उपसर्ग किया, पत्थर गिराए, हवा चलाई, पानी बरसाया, विकराल रूप बनाकर डर दिखाया लेकिन मुनि महावीर अपनी तपस्या से विचलित नहीं हुए। तब रूद्र अपने असली रूप में आया। महावीर के तप की प्रशंसा कर उनका नाम 'अतिवीर' रखा। इस प्रकार भगवान महावीर के 5 नाम प्रसिद्ध हुए। भगवान महावीर ने 12 वर्ष तक कठिन तपस्या की, केवलज्ञान प्राप्त करके 30 वर्ष तक भव्यों को उपदेश दिया पुनः पावापुर पधारे और योग निरोध करके कार्तिक कृष्ण अमावस्या को ब्रह्ममुहूर्त में आवागमन के बंधन से मुक्ति प्राप्त की, मोक्ष पधारे अर्थात् निर्वाण पद को प्राप्त किया, ऐसे वीर प्रभु को मेरा शतशः नमन।

–गणिनी कीर्तिमती

(संघस्थ–आचार्य श्री कल्याणसागर जी महाराज)

शुभकामना

कुण्डलपुर में जन्में भगवान महावीर स्वामी ने अपने संदेशों के द्वारा जन-जन को जीना सिखाया था। उनके सिद्धान्त गणित व विज्ञान की तरह साफ सुथरे हैं, उनकी वीरता एवं वीतरागता जगत् में एक अनूठी मिसाल है। उन्होंने वासनाओं पर विजय प्राप्त की तथा ध्यान के द्वारा केवलत्वरूपी संपदा को प्राप्त किया। अहिंसा, अपरिग्रह और अनेकांत उनके प्रमुख सिद्धांत हैं।

भगवान महावीर के सिद्धान्तों से जन-जन को परिचित कराने के उद्देश्य से परमपूज्य श्रद्धेय

गणिनीप्रमुख आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी ने कुण्डलपुर नगरी का विकास करवाकर पुनः चतुर्थकाल जैसा दृश्य उपस्थित कर दिया है। राजा सिद्धार्थ एवं महारानी त्रिशला की नगरी कुण्डलपुर के वैभव को पुनः स्थापित करके उन्होंने महान कार्य किया है।

पूज्य माताजी का उज्ज्वल जीवन प्रत्येक प्राणी के लिए आदर्श बने, प्रत्येक प्राणी के हृदय में माँ के समान उनकी छाया अंकित रहे, उनका शुभाशीर्वाद हमेशा आत्मा को निर्मलता प्रदान करता रहे, यही मंगलकामना करते हुए पूज्य माताजी के चरणों में वंदामि करती हूँ।

आप हीरे जैसी चमक तथा फूलों जैसी सुगंध को जन-जन में प्रसारित करती रहें, इसी भावना से आपके चरणकमलों में विनयांजलिरूप सुमन समर्पित हैं तथा भगवान महावीर स्वामी को नमन करते हुए उनकी पावन जन्मभूमि के प्रति मेरी विनम्र विनयांजलि अर्पित है।

–आर्यिका सुरत्नमती

(शिष्या–स्व.-आचार्यश्री धर्मसागर जी महाराज)

* * *

युग प्रवर्तक महावीर

–आर्यिका अभयमती

घर घर में महावीर की जय होना चाहिए।।टेक.।।

कुण्डलपुरी में स्वर्गों से अवतार जब लिया।
छहमास पूर्व रत्नों से भू जगमगा दिया।।
सिद्धार्थपितु मां त्रिशला की जय होना चाहिए।।घर.....।।

श्री वीर बालपन में भी अतिशय दिखा दिया।
जनता को मुग्ध करके अद्भुत कार्य कर लिया।।
जिनकी महिमा अपरंपार प्रभु गुण गाना चाहिए।।घर......।।

यौवन में विषय वासतज वैराग्य धरि लिया।
निज ध्यान बल पर पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर लिया।।
ऐसे दिगम्बर सन्मति की जय होना चाहिए।।घर.......।।

जब सत्य अहिंसा का प्रभु नारा लगा लिया।
नर दीन हीन मूक पशु का दुख मिटा दिया।।
श्री वर्धमान जिन वीरपथ पर चलना चाहिए।।घर.......।।

पावापुरी के मध्य सरोवर कहे न्यारे।
उस ही जगह से वीर प्रभु निर्वाण पधारे।।
कह "अभयमती" अतिवीर की जय होना चाहिए।।घर.......।।

शुभकामना

लोक व्यवहार में कहा जाता है कि–

पिसे हुए आटे को पीसने की जरूरत नहीं होती है। उसी प्रकार भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर ही है, इसके बारे में बार-बार भिन्न-भिन्न चर्चाएँ करने की आवश्यकता नहीं है।

दिगम्बर जैन आगम ग्रंथों में इसका स्पष्टरूप से वर्णन किया गया है। आगम के वाक्यों में कुछ भी परिवर्तन करना श्रुत का अवर्णवाद है।

दीपावली के दिन निर्वाण कल्याणक दिवस पर भगवान महावीर की पूजा सारे संसार की जैन समाज करती है, उसमें उनके पंचकल्याणक अर्घ्यों में से जन्मकल्याणक के अर्घ्य में "जनम चैत सित तेरस के दिन कुण्डलपुर कन वरना" आदि पंक्ति में "कुण्डलपुर" शब्द ही गुंजायमान होता है।

महावीर भगवान की जन्मभूमि को वंदन करते हुए कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ के लिए मेरी विनम्र विनयांजलि है।

–आर्यिका निर्मलमती, सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र

* * *

महान प्रेरणादायक कार्य सम्पन्न

सैकड़ों वर्षों से भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर में कुछ भी विकास कार्य नहीं हुआ और लोगों के मन में भगवान महावीर की जन्मभूमि के बारे में भ्रांति थी, इस भ्रांति को ज्ञानमती माताजी ने दूर करने का निर्णय किया। उन्होंने ग्रंथों के आधार से भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर ही है यह बताकर उसकी सुरक्षा के लिए वहाँ पर अनेक मंदिरों के निर्माण कार्य कराये। शरदपूर्णिमा के शुभ अवसर पर वहाँ पर नंद्यावर्त महल का उद्घाटन, अभिनंदन ग्रंथ विमोचन आदि में मेरी कोटि-कोटि शुभकामनाएं।

माताजी की 71वीं जन्मजयंती के शुभ अवसर पर मेरा एवं समस्त संघस्थ आर्यिकाओं का कोटि-कोटि वंदामि। भगवान से प्रार्थना है कि माताजी शतायु रहें और हम अज्ञानियों को ज्ञानामृत पिलाती रहें और इस महान कार्य के अंतर्गत माताजी को सहायता करने वालों को बारम्बार आशीर्वाद।

–आर्यिका प्रज्ञामती, खण्डवा (म.प्र.)

* * *

मंगल शुभकामना

वर्तमानकालीन अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर की जन्मस्थली कुण्डलपुर का विकास करने के बाद परमपूज्य गणिनी आर्यिका ज्ञानमती माताजी की सत्प्रेरणा से कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ छपने जा रहा है जो कि महावीर के जन्मक्षेत्र को लेकर जिन लोगों के हृदय में विवाद का अंधकार है, उसे हटा कर उत्तम प्रकाश को प्रदान कराने में यह अभिनंदन ग्रंथ सूर्य की तरह होगा।

आज वर्तमान वैज्ञानिक युग में जो लोग जैनधर्म के बारे में जानकारी चाहते हैं परन्तु ऐसा कोई

माध्यम नहीं है कि जिससे व्यक्ति वर्तमानकालीन श्रमण संस्कृति के अंतिम तीर्थंकर महावीर के बारे में पूरी जानकारी पा सके, यह ग्रंथ जैनधर्म के अंतिम तीर्थंकर के बारे में पूरी जानकारी के लिए माध्यम बने और जन्मभूमि के विवाद से दूर होकर श्रद्धापूर्वक कुण्डलपुर ही महावीर की जन्मभूमि है, यह सुनिश्चित करने के लिए अहम् भूमिका निभाए। पूज्या माताजी के द्वारा जो जन्मभूमियों के जीर्णोद्धार का अभियान चला है, वो जनजीवन के लिए मील का पत्थर साबित है। कुण्डलपुर नगर में नंद्यावर्त महल में माता त्रिशला की कोख से जन्म लेकर भगवान महावीर के द्वारा दिये गये उपदेश मानव मात्र के लिए कल्याणकारी हों इन्हीं शुभकामनाओं के साथ महावीर की जन्मभूमि को मेरा शत-शत नमन।

–**आर्यिका सुप्रकाशमती**, ऋषभदेव केसरिया जी

❧ ❧

कुण्डलपुर इतिहास की अदालत में

कषाय की चॉकलेट एक ऐसी चॉकलेट है, जिसको अपने प्रचार व प्रसार के लिए दूरदर्शन, रेडियो व समाचार-पत्र आदि का मोहताज नहीं होना पड़ता, फिर भी कषाय सर्वव्याप्त है। इसका प्रभाव अभी तक मंदिर, पंचकल्याणक आदि धार्मिक अनुष्ठानों में तो था ही, अब तो हमारे प्राचीन क्षेत्र जो कि हमारी आगमसम्मत धरोहर हैं, ये भी कषाय के शिकार होते जा रहे हैं।

किसी ने सच कहा है–'घर में लगा दी आग घर के चिरागों ने' हमारे क्षेत्रों पर प्रश्नचिन्ह अन्य धर्म वाले तो लगा ही रहे हैं, पर जैन भी पीछे नहीं हैं। महावीर के पुजारी महावीर की जन्मस्थली को भी नहीं छोड़ रहे हैं। दूसरे देश के साथ युद्ध करने में देश इतना बर्बाद नहीं होता, जितना गृहयुद्ध में बर्बाद हो जाता है, आज यही स्थिति जैन समाज की है। जैनियों के द्वारा ही जैनक्षेत्र शंका की दृष्टि से देखे जा रहे हैं। इसका कारण स्वयं के अहं की भूख है, जो कभी शान्त नहीं होती है। अपन अहं की पूर्ति के लिए प्राचीन क्षेत्रों को भी दाँव पर लगा देते हैं। प्रमाणित सत्य भी इतिहासकारों व विदेशी विचारकों के मुहताज हो रहे हैं। अब क्षेत्रों की प्रमाणिकता आगम से नहीं, इतिहासकारों व विदेशी-विचारकों के आधार पर हो रही है। इतिहासकारों की खोज ही विश्वसनीय मानी जा रही है। शायद किसी दिन तीर्थंकर की संख्या, जन्मोत्सव की महिमा, जीवन चर्या व तीर्थंकर की दीक्षा आदि के आगम सत्य को भी इतिहास की अदालत में खड़ा किया जा सकता है परन्तु कभी भी आगम इतिहास की अदालत में खड़ा नहीं किया जाना चाहिए, यदि किया गया तो हास्यास्पद है।

बच्चों के जन्म की निर्णायक माता होती है न कि पड़ोसी। इसी प्रकार हमारे क्षेत्र के निर्णायक आगम हैं न कि इतिहासकार व विचारक। इतिहास के आधार पर क्षेत्र को अप्रमाणित करने का अर्थ है-आगम को अप्रमाणित करना, जो कि घोर अपराध है, सम्यक्त्व का घातक है। क्षेत्रों का निर्णय आगम के बजाय इतिहास से करना एक दुःसाहस है, यह सब कषाय की महिमा है।

अहं का ज्वर उतरना ही आत्म व धर्म तथा समाज के लिए हितकारी है। क्षेत्र हमारे लिए मात्र दर्शनीय व स्मरणीय ही नहीं अपितु पूजनीय व अर्चनीय भी हैं। कल्याणकों से पवित्र भूमि जो कि क्षेत्र पूजन का हेतु है, जिनका वर्णन पूर्वाचार्यों ने आगम ग्रंथों में बड़े सुन्दर ढंग से किया है, जिनकी यात्रा वंदना हमारे लिए पुण्यार्जन का सशक्त कारण हैं। क्षेत्र आज अहं के कारण अर्चा के नहीं, चर्चा के विषय बन गये हैं। धवला पुस्तक में आचार्य कहते हैं–'जिस विषय में आगम कथन दो मिलते हैं, हमें अरहन्त

न मिलने तक दोनों स्वीकार करना चाहिए।' हम अल्पज्ञानी को निर्णयात्मकरूप से एक को सच व एक को झूठ कहने का अधिकार नहीं है। ऐसे महान आचार्य भी एक शब्द ऐसा नहीं बोलते, जिसमें जिनवाणी का अवर्णवाद हो, पर अहं की क्षुधा से व्याकुल आत्माएं यद्वा तद्वा बोलने में जरा भी विचार नहीं करते हैं। अपने अहं की क्षुधा की पूर्ति के लिए धर्म क्षेत्रों को ही क्यों निशाना बनाते हैं? इस क्षुधा के उपशमनार्थ राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक बहुत क्षेत्र हैं। यह अहं की क्षुधा का विकराल रूप है, जिसने हजारों वर्ष प्राचीन आगम सत्य की हत्या करने में जरा भी संकोच नहीं किया।

किसी भी बात की सिद्धि प्रमाण व तर्क से होती है। अकेले तर्क से सिद्धि नहीं होती। तर्क भी आगमसम्मत होना चाहिए। प्रमाणित बात को तर्क देकर जनसामान्य तक पहुँचाना ठीक है, पर अप्रमाणित बात को अपनी वाक्पटुता से आगमहीन तर्क देकर सिद्ध करना उचित नहीं है।

सम्प्रति में साक्षात् तीर्थंकर नहीं हैं अपितु तीर्थंकर की दिव्यध्वनि से उद्भूत आगमरूपी अदालत ही है। इसका न्याय ही हमें शिरोधार्य है। इस अदालत के कुछ नजरिये प्रस्तुत हैं – सर्वप्रथम लिपिबद्ध षट्खण्डागम, धवला, जयधवला, तिलोयपण्णत्ति, उत्तरपुराण, हरिवंशपुराण, वर्द्धमान चरित्र, महावीर पुराण, पुराणसार संग्रह, निर्वाणभक्ति, वीरजिणिंदचरिउ, जैनेन्द्र सिद्धांत कोष आदि दृष्टव्य हैं।

इन प्रमाणों को देखने के बाद भी यदि आपकी धारणा समीचीन नहीं होती है, तो इसका अर्थ है हम महावीर को मानते हैं पर महावीर की नहीं मानते हैं।

गुणभद्राचार्य ने दस प्रकार के सम्यक्त्व का वर्णन करते हुए आज्ञा सम्यक्त्व का वर्णन किया है। देश में धार्मिक एकता व जातीय एकता बनाये रखने के लिए धार्मिक क्षेत्रों के संरक्षण व संवर्धन के लिए आवश्यक है-अहं का विसर्जन कर धार्मिक हितों को मुख्यता देते हुए आगम की बात पर आस्था रखकर, सम्यक्त्वी व आज्ञाप्रधानी शिष्य बनकर समाज को वह दिशा दे, जिससे धर्म व समाज का चतुर्मुखी विकास हो। आज्ञा सम्यक्त्वी बनकर इस विषय को विराम दें।

समाज अपनी बुद्धि, धन व बल का विघटनात्मक उपयोग न करके सृजनात्मक उपयोग करे। आगम श्रद्धा का विषय है। इतिहासकार की अपेक्षा आगम का ज्ञान आचार्यों को विशिष्ट होता है। वे पापभीरू होते हैं, विपरीत कथन करना अपराध समझते हैं। इतिहासकार अल्पज्ञानी हैं, इनका आधार खोज अनुसंधान है। अभी इतिहासकार वैशाली को भगवान महावीर का जन्मस्थल बता रहे हैं। मान लीजिए कोई दूसरा इतिहासकार अमेरिका बता देगा तो क्या उसकी बात पर अमेरिका को भी महावीर की जन्मस्थली बता देंगे? इतिहास गतिशील है, नित नई खोजें होती हैं, फिर तो हमारे तीर्थंकरों की कल्याणकभूमि को इतिहासकार हमेशा इतिहास की अदालत में खींचते रहेंगे। हमारे क्षेत्र इतिहासकारों के हाथ का खिलौना बन जायेंगे। कुण्डलपुर की चर्चा श्रावक की आगम की श्रद्धा की अग्नि परीक्षा है।

बच्चा माँ को विश्वसनीय मानकर आँख बंदकर स्तनपान करता है। उसी प्रकार हमें भी आचार्यों पर विश्वास कर आगम स्वीकार करना चाहिए। ढाई हजार वर्ष से कुण्डलपुर (नालंदा) महावीर की जन्मभूमि है, यही रहेगी।

महावीर स्वामी की जन्मभूमि की सत्यता की चर्चा 'पिष्ट पेषण है'। भारत के अनेक जैनियों की आस्था इसी नालंदा-कुण्डलपुर से जुड़ी है, उसे कोई बदल नहीं सकता। जैन समाज के बहुसंख्य सदस्य शिक्षित हैं। इस सामयिक परिवर्तन से अप्रभावित रहकर अपनी आस्था को यथावत् बनाये रखें। यह प्रसंग कालदोष से उत्पन्न हुआ है। ऐसा सोचकर अपने समर्पण को पूर्ववत् कुण्डलपुर के प्रति बनाये रखें।

जैनं जयतु शासनम्

–आर्यिका सुभूषणमती, सरधना (मेरठ) उ.प्र.

(शिष्या – वर्तमान पट्टाचार्य श्री अभिनंदनसागर जी महाराज)

* * *

शुभकामना

परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी को त्रिबार सिद्धभक्ति से सादर वंदामिपूर्वक चरणस्पर्श।

कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ प्रकाशन के बारे में पढ़कर हृदय इतना आनन्दित एवं प्रफुल्लित हुआ, जिसे अपने शब्दों में कहना सूर्य को दीपक दिखाने के समान है।

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर विकास के साथ ही उनके जीवन से संबंधित सभी बातों का लेखन एवं अध्ययन करते हुए आपका यश एवं कीर्ति का प्रकाश सारे संसार में फैले एवं आपके लिए शीघ्र ही मोक्ष का मार्ग प्रशस्त हो, इसके लिए हम सिद्धप्रभू से मंगलकामना करते हैं।

अभिनंदन ग्रंथ के माध्यम से जो आपने ज्ञान की ज्योति जलाई है, वह ज्योति कभी भी बुझने न पाए, यही मेरी विनम्र विनयांजलि है।

आपने शिखरजी में जो प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की उत्तुंग प्रतिमा विराजमान करके जिनालय बनाने की प्रेरणा प्रदान की है, वह सन्त समाज के लिए गौरव की बात है।

अन्त में यही कहना चाहती हूँ कि आपके द्वारा लिखित ग्रंथों का रसास्वादन हमें हमेशा-हमेशा प्राप्त होता रहे, यही मंगल प्रार्थना है।

—**आर्यिका कोमलश्री**, सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र

* *

महान तीर्थोद्धारिका

परमपूज्या गणिनीआर्यिका 105 श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से हुए प्राचीन तीर्थों के जीर्णोद्धार व विकास के बारे में जानकर हम सबको गर्व होता है। आप अपने आपमें एक संस्था हैं। आपके द्वारा किये गये कार्य अनुपम हैं। आप बीसवीं शताब्दी की प्रथम बालसती, हम सभी बाल ब्रह्मचारिणी आर्यिकाओं की प्रेरणास्रोत हैं। आपकी दिव्य लेखनी से प्रसूत दो सौ पचास से भी अधिक ग्रंथ आपके वृहद् आगम ज्ञान, अनुपम काव्य प्रतिभा तथा अपार भाषा ज्ञान का प्रतीक हैं। आप भ्रमणशील ज्ञानशाला व तीर्थ हैं। सर्वज्ञ प्रणीत प्राचीन दिगम्बराचार्यों द्वारा लिखित ग्रंथों में निहित तथ्यों का संरक्षण व परिपालन करने में आप सदैव सजग हैं। तीर्थंकरों की कल्याणकभूमियों के जीर्णोद्धार एवं विकास की प्रेरणा प्रदान कर आपने हस्तिनापुर में साक्षात् जम्बूद्वीप की रचना करवाई। शाश्वत जन्मभूमि अयोध्या का विकास करवाया, भगवान ऋषभदेव की दीक्षास्थली व ज्ञानकल्याणक स्थल प्रयाग में धर्मायतनों का निर्माण कराकर तीर्थोद्धार करवाया। भारत में विविध स्थानों पर आपकी सद्प्रेरणा से अनेक धर्मायतनों का निर्माण हुआ और हो रहा है। आपके द्वारा प्रेरित सभी योजनाएं शीघ्र मूर्तरूप ले लेती हैं, यह आपके अतिशय पुण्य का प्रताप है। तीर्थोद्धार की इसी पुनीत श्रृंखला में भगवान महावीर की जन्मभूमि के विकास हेतु इतना वृहद् एवं भव्य निर्माण जो आपकी प्रेरणा व आशीर्वाद से अत्यल्प समय में सम्पन्न हुआ, यह तो एक सुखद आश्चर्य है। इस पंचमकाल में भी आपकी आगमोक्त उत्कृष्ट चर्या का अवलोकन कर मैं भी संयम मार्ग पर दृढ़ बनी रहूँ, यही आशीर्वाद आपसे चाहती हूँ।

महान तीर्थोद्धारिका, विपुल साहित्य की सृजनकर्त्री, ज्ञानवृद्ध, वयोवृद्ध, परमविदुषी परम पूज्या गणिनीआर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी के पावन चरणों में सिद्धभक्तिपूर्वक बारम्बार वंदामि निवेदित है।

—आर्यिका विनीतमती

(शिष्या—गणिनी आर्यिका श्री विशुद्धमती माताजी)

* *

दृष्टि बदली तो सिंह बना महावीर

दृष्टि बदली तो तिर्यंच होकर भी सिंह के वास्तविक जीवन का निर्माण हो गया अर्थात् दृष्टि समीचीन होने पर सिंह तिर्यंच होकर भी भगवान बनने की यात्रा पर चल पड़ा। सिंह को चारण ऋद्धिधारी दो मुनियों का उपदेश प्राप्त होते ही अपने पूर्वभवों का स्मरण हो गया और सम्यग्दर्शन प्राप्त होने पर सिंह ने पाँच अणुव्रतों के साथ-साथ समाधि युक्त मरण कर वहीं से भगवान महावीर बनने की यात्रा प्रारंभ कर दी तथा नौ भव व्यतीत कर दसवें भव में इस भरतक्षेत्र में कुण्डलपुर नगर के स्वामी नाथवंशी सिद्धार्थ नरेन्द्र की रानी त्रिशला के गर्भ में आकर और वहाँ नव मास रहकर चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन रात्रि में उत्तराफाल्गुनी शुभ नक्षत्र के रहते हुए बालक वर्धमान ने जिनेन्द्र देव के रूप में जन्म लिया।

भगवान महावीर से पूर्व भगवान ऋषभदेव से लेकर भगवान पार्श्वनाथ पर्यंत और भी तेईंस तीर्थंकर हुए। सभी ने अपने आत्मबल के द्वारा अपना कल्याण किया और हमारे लिए कल्याण का मार्ग बताया। लेकिन हम जीवन के चक्र से स्वयं को नहीं निकाल पाये। हमारा जीवन धर्मामृत को पीकर भी अमृतमय नहीं बन सका। कुछ समय के लिए तृप्त अवश्य हुए परन्तु भीतर तक नहीं भीग पाये। भीतर तक भीगने के लिए अन्तर्मन की निर्मलता चाहिए और अंतर्मन की निर्मलता के लिए श्रद्धा की आवश्यकता है।

भगवान पार्श्वनाथ के बाद दो सौ पचास वर्ष बीत जाने पर श्री महावीर स्वामी उत्पन्न हुए। उनकी आयु बहत्तर वर्ष की थी, सात हाथ ऊँचाई व स्वर्ण की कांति समान वर्ण था।

जैनागमानुसार भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर ही है। स्कूल की पाठ्य पुस्तकों में कहीं-कहीं वैशाली को ही भगवान महावीर की जन्मभूमि लिखा गया है और कहीं वैशाली के उपनगर कुण्डग्राम को महावीर की जन्मभूमि के रूप में लेखकों ने प्रस्तुत किया है तथा किन्हीं पाठ्य पुस्तकों में भगवान महावीर ने विवाह किया, उनके पुत्री उत्पन्न हुई इत्यादि आगम विरुद्ध कथन लिखे गये हैं। यह उन तीर्थंकर के प्रति अवर्णवाद है तथा वही पाठ स्कूलों में बच्चों को पढ़ाया जाता है जिससे बालकों के हृदय इस प्रकार के तीर्थंकर जैसे महापुरुषों के अवर्णवाद रूप विरुद्ध जैनेतर संस्कार ठोस होते जा रहे हैं। उन संस्कारों को दूर करने के लिए आ. समन्तभद्र स्वामी की "याथातथ्यं बिना च विपरीतात्" यह पंक्ति ध्यान देने योग्य है। अतः जैनागम पर पूर्ण श्रद्धान कर सत्य को सत्य रूप से स्वीकार करते ही तीर्थंकरों का अवर्णवाद व बालकों के पाठ्य पुस्तकों के माध्यम से होने वाले गलत प्रचार-प्रसार को दूर कर सकेंगे।

सिंह अतीत में अनेक पर्याय में परिभ्रमण करने पर भी समीचीन श्रद्धा के फलस्वरूप आगे जाकर मनुष्य पर्याय में जन्म लेकर तीर्थंकर महावीर बन गया। उस सिंह की दृष्टि तो ऐसी बंदल गयी कि उसके जीवन का सच्चा निर्माण हो गया। इसलिए अपनी दृष्टि को समीचीन बनाने की जरूरत है।

पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से जहाँ मुझ जैसे अनेक शिष्य-शिष्याएं मोक्षमार्ग में प्रवृत्त हुए हैं, वहीं उन्होंने जिस तीर्थ पर दृष्टि डाल दी वह आकाश की ऊँचाइयों को छूने लगा। कुण्डलपुर का विकास अत्यल्प समय में हुआ सुनकर एक बार तो आश्चर्य होता है किन्तु पूज्य माताजी की महानता एवं कर्मठता के समक्ष वास्तव में कुछ भी कार्य असंभव या आश्चर्यजनक नहीं रहता। वे इसी प्रकार हम सबके लिए भक्ति का मार्ग प्रशस्त करती रहें, यही भगवान से प्रार्थना है।

–आर्यिका कैलाशमती

* * *

शुभकामना

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी को वंदामि।

माताजी आपने जो भगवान महावीर की मान्य जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) के जीर्णोद्धार एवं विकास का कार्य अपने हाथ में लिया है वह बहुत ही सराहनीय है। हमारे अंतिम तीर्थंकर जिनका अभी काल चल रहा है उनकी जन्मभूमि और राजधानी का विकास करके आपने सही अर्थों में जैन संस्कृति की धरोहर की रक्षा व प्रभावना की है। हमारी बहुत-बहुत शुभकामनाएं हैं एवं आशा करती हूँ कि जैसी कुण्डलपुर नगरी उस समय थी वैसी ही विकसित हो जायेगी, इसी भावना के साथ कुण्डलपुर तीर्थ विकास एवं अभिनंदन ग्रंथ प्रकाशन हेतु मेरी बहुत सारी शुभकामनाएं ।

—**आर्यिका सन्मतिमती**, बालचंदनगर (पुणे)

* * *

भजन

रचयित्री—आर्यिका कैलाशमती

सारे जग में जगाई ज्योति ज्ञान की।
ये कहानी महावीर भगवान की।।टेक.।।
राजा सिद्धारथ के दुलारे, माता त्रिशला के प्यारे,
कुण्डलपुर में जनम हुआ वीर का।।
देव इन्द्र भी जाये, जन्म उत्सव मनाएं,
वहाँ धूम मची जयकार की।।1।। ये कहानी.......
सारे जग में..............
तीस वर्ष की आयु में, वैराग्य छाया मन में।
जब जाग उठा था दिल वीर का।।
सब विषयों को छोड़ा, ममता नाता तोड़ा।
दुनियां को सिखाई वाणी ज्ञान की।।2।। ये कहानी..........
सारे जग में............
आतम की महिमा जानी, जब हृदय में यह ठानी।
ये जगत बड़ा है जंजाल का।।
मन को शिवरानी भाई, केवल ज्योति प्रगटाई।
अब दिव्यध्वनि खिरी ज्ञान की।।3।। ये कहानी.........
सारे जग में......
रत्नत्रय की ज्योति जगाई, सच्ची राह बनाई।
जग को ज्ञान सिखाया, आत्म ज्ञान से।।
चरणों में सब आयें, सुर नर शीष झुकाएं।
जली आत्मा में ज्योति सम्यक्ज्ञान की।।4।।
सारे जग में ....

* * *

ज्ञान का अपार भंडार गणिनी आर्यिका ज्ञानमती माताजी

पूज्य माताजी के द्वारा भगवान महावीर की जन्मस्थली कुण्डलपुर का जो जीर्णोद्धार हुआ है वह अपने आप में एक अद्वितीय कार्य है। ऐसे प्रभु महावीर जिनके शासनकाल में हम-आप अपना जीवन व्यतीत कर रहे हैं, उन्हीं की जन्मभूमि का विकास वर्षों से अवरुद्ध पड़ा रहना, सारे समाज के लिए खेदपूर्ण बात थी। पूज्य ज्ञानमती माताजी की दिव्य दृष्टि इस ओर गई और कुण्डलपुर तीर्थ का भव्य विकास किया गया, उनका यह कार्य बहुत ही सराहनीय है। यह कार्य देश के कोने-कोन में सराहा जायेगा। मैं भी ऐसे कुण्डलपुर अवतारी भगवान महावीर स्वामी से पूज्य माताजी की दीर्घायु की कामना करता हूँ वे आगे भी इसी प्रकार की धर्मप्रभावना, जिनधर्म प्रभावना करती रहें इन्हीं मंगल भावनाओं के साथ पूज्य माताजी के चरणों में शत्-शत् वन्दन।

कुण्डलपुर तीर्थ विकास के समापन अवसर पर कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ प्रकाशित किया जा रहा है, एतदर्थ सारी सम्पादक टीम के लिए मेरी मंगल शुभकामनाएं और आशीर्वाद है।

28-9-2004, पूर्णिमा

—ऐलक विज्ञान सागर
बड़ौत (बागपत) उ.प्र.

रत्नमयी जन्मभूमि कुण्डलपुर

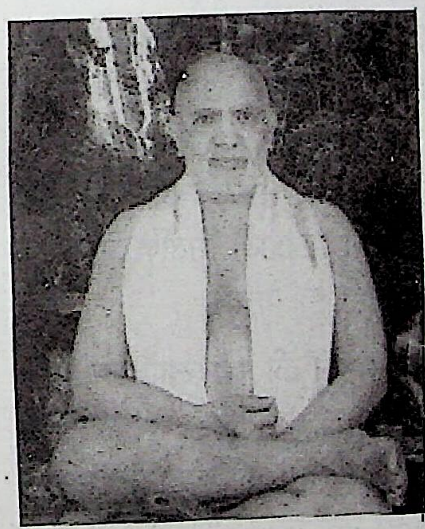

वर्तमान का प्रत्येक क्षण अगले क्षण में इतिहास बन जाता है पुनः वह स्मृतियों में समाविष्ट हो जाता है। भविष्य में उसका स्मरण करके अतीत का साक्षात् जैसा दिग्दर्शन हो जाता है। घटनाएँ शुभरूप भी होती हैं और अशुभरूप भी। शुभरूप घटनाएँ तो मार्गदर्शक होती हैं किन्तु अशुभ घटनाएँ भी समयानुसार सावधान रहने की प्रेरणाएं देती हैं।

घटनाओं को बनाया नहीं जाता, वे तो घट जाती हैं। उसके बाद ही उसके हेयोपादेय पर चिंतन-मनन होता है। इतिहास अपने आप में बहुत ही महत्त्वपूर्ण विषय है। उसे जितने बार पढ़ा जाता है, उतनी बार कुछ न कुछ विशेष उपलब्धियाँ प्राप्त होती हैं। हर क्षण दीर्घकालीन इतिहास नहीं बन पाता है। घटनाएँ प्राकृतिक होती हैं, आकस्मिक भी होती हैं तथा व्यक्तिशः या सामुदायिक भी होती हैं। व्यक्तियों से संबंधित इतिहास व्यक्ति को यशस्वी या अयशस्वी बनाता है।

इस "कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ" में भगवान महावीर का दूरवर्ती अतीत उपलब्ध है। युगादिपुरुष देवाधिदेव भगवान ऋषभदेव से भी सुदूरवर्ती भूतकाल में भील की पर्याय में जिसे मुनिराज का संबोधन मिला था किन्तु संचित कर्मों को क्षीण करने में असंख्य भव-भव व्यतीत हो गये। भगवान ऋषभदेव के पौत्र बनकर भी समीचीन बोध नहीं प्राप्त हो सका। अंततोगत्वा 10 भवपूर्व सिंह की पर्याय में मुनियों का उपदेश कार्यकारी हो सका।

इसे ही काललब्धि कहते हैं। काललब्धि आने पर ही पुरुषार्थ कार्यकारी होता है। यह इतिहास हमें बल प्रदान करता है। गहन अंधकार में रोशनी का काम करता है। आखिरकार एक दिन ऐसा आया जब भील भगवान महावीर बन गया। इतिहास में नाम अमर हो गया। भगवान महावीर ने 2603 वर्ष पूर्व बिहार की पावन नगरी कुण्डलपुर में अवतरित होकर स्वयं को धन्य किया, माता-पिता को धन्य किया, नगरी को धन्य किया, प्रजा को धन्य किया, देश को धन्य किया, तिथि को धन्य किया।

इतिहास को पढ़कर ही 2500 वर्षों से भक्त सतत कुण्डलपुर आते रहे हैं। काल बीतने के साथ प्राचीन वैभव भी संरक्षण के अभाव में कालकवलित हो जाता है। आज वह सात मंजिला विशाल नंद्यावर्त महल दृष्टिगत नहीं होता, नगरी की संपूर्ण कृतियाँ भी भूमि में समाविष्ट हो गईं। अनेक धर्म विद्वेषी राजा आये, जिन्होंने भारत के गौरवपूर्ण इतिहास को नष्ट किया, आज भी वह क्रम जारी है। शक्तिशाली कमजोरों को दबा रहे हैं, छीना झपटी कर रहे हैं, अतिक्रमण कर रहे हैं। देखते-देखते तीर्थों का हस्तांतरण/रूपान्तरण किया जा रहा है।

ऐसे विकराल समय में भी पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी समाज की शक्ति को संग्रहीत करके संस्कृति के प्रतीक हमारे मूल तीर्थों को, तीर्थंकरों की कल्याणक भूमियों के संरक्षण की प्रेरणा प्रदान कर रही हैं। देखते-देखते हस्तिनापुर, अयोध्या, अहिक्षेत्र, मांगीतुंगी, प्रयाग (इलाहाबाद) तथा कुण्डलपुर संसार में प्रसिद्धि को प्राप्त हो रहे हैं। छोटे-छोटे तो और भी अनेक नगर व क्षेत्र हैं, जहाँ माताजी की दृष्टिमात्र जाने से विकसित हो गये।

वैसे तो कुण्डलपुर जन-जन के मुख पर रहा। अपने-अपने नगर में भगवान महावीर की आरती करते हुए गाते—कुण्डलपुर अवतारी त्रिशलानंद विभो, पूजा में पढ़ते रहे—जनम चैत सित तेरस के दिन कुण्डलपुर कन वरना, बजी कुण्डलपुर में बधाई इत्यादि। लाखों लाख भक्तगण, साधु-साध्वी वृंद, विद्वान्, श्रेष्ठी कुण्डलपुर आकर दर्शन करके जाते रहे। मैं भी परिवार के साथ सन् 1963 में कुण्डलपुर आया था, यहाँ तक कि स्वयं गणिनी ज्ञानमती माताजी भी 1963 में अपने साध्वी संघ के साथ दर्शनार्थ पधारी थीं, सन् 1974 में भगवान महावीर का राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर 2500वाँ निर्वाण महोत्सव भी मनाया गया किन्तु कुण्डलपुर को विकसित होने का अवसर प्राप्त नहीं हो पाया।

सन् 2001 में भगवान महावीर का 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव मनाने की रूपरेखाएँ बनाई जा रही थीं किन्तु महावीर जन्मभूमि की स्थिति पर कहीं कोई चर्चा नहीं थी। तब माताजी ने कुण्डलपुर की पहल करते हुए उसके विकास की रूपरेखा तैयार करना प्रारंभ कर दिया। जैन समाज के अनेक वरिष्ठ कार्यकर्ताओं का ध्यान भी इस ओर आकृष्ट किया किन्तु किसी ने भी लक्ष्य नहीं दिया। रूपरेखा के साथ स्वयं माताजी ने कुण्डलपुर के लिए प्रस्थान कर दिया। चूँकि कुण्डलपुर की प्राचीन कमेटी के पास क्षेत्र को विकसित करने के लिए कोई भूखंड नहीं था, इसलिए क्षेत्र के निकट में ही दो एकड़ जमीन खरीदी गई।

29 दिसम्बर 2002 को संघ का मंगल पदार्पण हुआ और उसी दिन भगवान महावीर मंदिर का शिलान्यास किया गया। मंदिर एक मंजिल बनाकर उसकी छत पर भगवान महावीर की अति मनोज्ञ प्रतिमा विराजमान करके पंचकल्याणक प्रतिष्ठा 7 से 12 फरवरी 2003 तक सम्पन्न हुई। प्रतिष्ठा के समय भगवान ऋषभदेव की प्रतिमा एक पिलर पर विराजमान करके उनकी तथा त्रिकाल चौबीसी की 72 प्रतिमाओं की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा भी हुई। प्रतिष्ठा के पश्चात् निर्माण कार्य द्रुतगति से प्रारंभ किये गये। दिन पर दिन निकलते गये। निर्माण कार्य भी दिन पर दिन आगे बढ़ते गये।

क्षेत्र की आवश्यकताओं के अनुरूप क्रम-क्रम से निर्माण होते गये। वर्षाकाल आ गया। गारे (मिट्टी) की चिनाई से जो कमरे ठहरने के लिए बनाए गए थे, उनमें वर्षा के समय कभी दिन में तो कभी रात्रि में अपने सोने-बैठने के आसनों को इधर से उधर करना पड़ता था क्योंकि वर्षा का पानी ऊपर से टपकने लग जाता था। तीर्थ को विकसित करने का दृढ़ संकल्प लिया था, इसलिए आंधी-तूफान वर्षा क़ी चिंता नहीं की गई, तभी 2 वर्ष के अति अल्पसमय में 20 वर्ष जितना काम हो गया।

माताजी के संघ की पूरी टीम रात-दिन मनोयोग से कार्यरत थी, इसलिए निर्माणकार्य कम लागत में मजबूत हुआ है। अब कुण्डलपुर में यात्रियों के ठहरने के लिए 27 फ्लैट बनकर तैयार हो गये हैं। भोजन की सुविधा के लिए डायनिंग हाल बन गया है। यात्रियों का ठहरना भी प्रारंभ हो गया है।

कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ आपके हाथ में है। यह ग्रंथ अभिनंदन के साथ इतिहास बन गया है। यह ग्रंथ आने वाली पीढ़ियों को कुण्डलपुर विकास की गौरव गाथा सदियों तक सुनाता रहेगा। हम तो कुण्डलपुर का क्या अभिनंदन कर सकते हैं। इसका अभिनंदन तो 2600 वर्ष पूर्व असंख्य देवों ने सौधर्म आदि इन्द्रों के साथ अनेक बार आकर किया। कुबेर ने भगवान के गर्भ में आने के 6 माह पूर्व से जन्म होने तक अर्थात् 15 माह तक प्रतिदिन करोड़ों रत्नों की वर्षा करके कुण्डलपुर को धन-धान्य से परिपूर्ण कर दिया था।

फिर भी हम अपने शब्दों की पुष्पांजलि द्वारा भगवान महावीर की रत्नमयी जन्मभूमि कुण्डलपुर का हार्दिक अभिनंदन करते हैं तथा भगवान जिनेन्द्र से करबद्ध प्रार्थना करते हैं, किन्तु कुण्डलपुर की तरह अभी और भी जिन तीर्थंकरों की जन्मभूमियाँ अविकसित हैं, वे भी शीघ्र विकसित हों।

अंत में कुण्डलपुर विकास की प्रेरणास्तंभ पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के साथ प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी को नमन करते हैं, जिन्होंने इस ग्रंथ को समय पर तैयार करने में दिन-रात एक कर दिया। उनके अथक परिश्रम के फलस्वरूप ही यह ग्रंथ तैयार हो सका है।

–पीठाधीश क्षुल्लक मोतीसागर
(संघस्थ शिष्य–गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी)

मंगल आशीर्वाद

यह जानकर बहुत खुशी हुई कि कुण्डलपुर (नालंदा) तीर्थक्षेत्र के नवविकास के समापन अवसर पर 'कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ' प्रकाशित किया जा रहा है, जो अपने आप में एक बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य है। ज्ञानमती माताजी ने अभी तक 250 ग्रंथों की रचना की एवं मूल तीर्थभूमियों के विकास एवं वहाँ पर भव्य निर्माण कार्य की सफल एवं साकाररूप प्रेरणा दी, जैन समाज पर उनका यह बहुत बड़ा उपकार है। जो कभी भुलाया नहीं जा सकेगा। मुझे विश्वास है कि इस अभिनंदन ग्रंथ के माध्यम से भगवान महावीर स्वामी के अहिंसा, अनेकांत, अपरिग्रह जैसे मूल सिद्धान्तों को जन-जन तक देश और विदेश में पहुँचाया जा सकेगा। यह बहुत ही सराहनीय कार्य हुआ है। इसके लिए हम अपनी शुभकामनाएं प्रेषित करते हैं।

–स्वस्ति श्री भट्टारक महास्वामी लक्ष्मीसेन, कोल्हापुर

* * *

ऐसा पुण्य सबके लिए दुर्लभ है

पूज्य गणिनी ज्ञानमती माताजी!

आपने भगवान महावीर का जीवन चरित्र समाज के सामने प्रस्तुत करता कुण्डलपुर (नालंदा) तीर्थ का विकास कर अपूर्व पुण्य और यश को प्राप्त किया है। आपका यह पुण्य और यश अन्य किसी संसारी प्राणी को प्राप्त होना दुर्लभ है। आपके आज तक के सभी कार्य अविस्मरणीय, अभिवंदनीय और अभिनंदनीय अतएव अद्वितीय-अलौकिक हैं। अखंड आर्यखंड के कोने-कोने में भगवान महावीर ने विहार कर सभी प्राणियों को जो उनका कल्याणकारी उपदेश दिया और जैनधर्म की प्रभावना व रक्षा की है, उसको आप अक्षरबद्ध कर रहीं हैं यह बहुत महत्वपूर्ण और भावी पीढ़ियों के लिए उपकारक है अतः अनुकरणीय है। आपके द्वारा किये जाने वाले धर्मवर्धक कार्य की बात भारत के कोने-कोने में गुंज उठी है, यह अतिशय गौरवशाली बात है।

भगवान महावीर ने प्रथम शक्ति सम्पन्न होकर जो लोकोद्धार का सिंहनाद किया लोक प्रचलित सभी अन्याय, अत्याचार तथा दुराचारों के विरुद्ध जो आवाज उठाई और सबके ऊपर उस वक्त जो अपना प्रभाव डाल उसकी आज जरूरत है। भगवान महावीर की एकांत निरसन करने वाली स्याद्वाद की विचारधारा आज भी उपकारी है। इससे लोगों के हृदय में साम्यवाद की भावनाएं दृढ़ होती हैं और आत्मोत्कर्ष का मार्ग प्रशस्त होता है।

भगवान महावीर ने "जीओ और जीने दो" का जो संदेश दिया है वह सभी जीवों के लिए है। भगवान महावीर ने अहिंसा का प्रचार किया और दुनिया को जीवनदान दिया है। भगवान पार्श्वनाथ के अनंतर और भगवान महावीर के पूर्व इस दुनिया में अधर्म का जो विस्तार हो रहा था, उसको भगवान महावीर ने अपने धर्मोपदेश से बंद कर सच्चे धर्म का प्रचार किया। "सुखी रहे सब जीव जगत के कोई कभी न घबरावे। वैर-पाप-अभिमान छोड़कर नित्य नये मंगल गावे!" का ऐसा भगवान महावीर का संदेश है। आज दुनिया में सत्ता के लिए प्राणघातक संघर्ष, भयानक स्पर्धा, परस्पर अविश्वास, भ्रष्टाचार, अत्याचार और अनाचार अविरलरूप से बढ़ रहा है। यह सब अनिष्ट और विनाशक बातों पर भगवान महावीर का उपदेश ही गुणकारी उपाय है, ऐसा मुझे लगता है।

आपके द्वारा 'कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ' प्रकाशित किया जा रहा है, यह जानकर बहुत प्रसन्नता हुई। यह ग्रंथ सभी को सम्यक् ज्ञान, शांति, सुख, शक्ति और सुरक्षा प्रदान करे, ऐसी सदिच्छा है।

—स्वस्ति श्री जिनसेन भट्टारक पट्टाचार्य स्वामी
नांदणी (कोल्हापुर) महा.

* * *

शुभकामना

यह ग्रंथ जन-जन के कल्याण में अहम भूमिका का निर्वाह करे, सर्व समाज इसे अपनावे। साथ ही ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम हो। आपकी लेखनी जन-जन के लिए कल्याणकारी हो।

-स्वस्ति श्री श्री श्री भट्टाकलंक स्वामी, कर्नाटक

* * *

यह अभिनंदन ग्रंथ समस्त समाज के लिए मार्गदर्शक बनेगा

सिद्धार्थराजकुलमण्डन वीरनाथः, जातः सुकुण्डलपुरे त्रिशला जनन्यां।
सिद्धिप्रियः सकल भव्य हितंकरो यः,श्री सन्मतिर्वितनुतात् किल सन्मतिं मे।।

राजा सिद्धार्थ के पुत्र भगवान महावीर ने कुंडलपुरी नगरी में माता त्रिशला की कुक्षि से जन्म लिया। कुण्डलपुरी नगरी में लगातार 15 महीने तक रत्नों की वृष्टि हुई। पूज्य गणिनी ज्ञानमती माताजी ने भगवान महावीर की जन्मभूमि का विकास करवाकर जो महान कार्य किया है, उसे युगों-युगों तक याद किया जाएगा।

जब मैंने सुना कि कुछ लोग वैशाली को जन्मभूमि घोषित करने की चेष्टा कर रहे हैं, तब मुझे बहुत दुःख हुआ। वास्तव में इसे कलिकाल का अभिशाप ही कहा जाएगा कि जिन भगवान महावीर स्वामी के शासनकाल में हम जीवनयापन कर रहे हैं, उनके ही बारे में इतनी मिथ्याभ्रान्तियाँ फैला रहे हैं। अब भगवान महावीर तो हमें बताने नहीं आएंगे कि मैंने कहाँ जन्म लिया है? परन्तु उनके पश्चात् जो महान ग्रंथ आचार्यों के द्वारा लिखे गए हैं, हमें उन पर श्रद्धान करना है क्योंकि हम अगर इसी प्रकार अपने वास्तविक तीर्थों के प्रति शंका करने लग जाएंगे तो एक दिन हम कई तीर्थों से वंचित हो जाएंगे।

यह कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ समूची जैन समाज के लिए एक मार्गदर्शक बने, यही भगवान महावीर स्वामी के चरणकमलों में नमन करते हुए मेरी भावांजलि है एवं तीर्थोद्धारिका माताजी के चरणों में मेरा बारम्बार नमन है।

–क्षुल्लिका चन्द्रमती
(शिष्या–गुजरातसंत केसरी आचार्यश्री भरतसागर जी महाराज)

* * *

सत्यमेव जयते

राष्ट्रपति के प्रेस सचिव
Press Secretary to the President

राष्ट्रपति सचिवालय
राष्ट्रपति भवन
नई दिल्ली -110004
President's Secretariat
Rashtrapati Bhavan
New Delhi - 110004

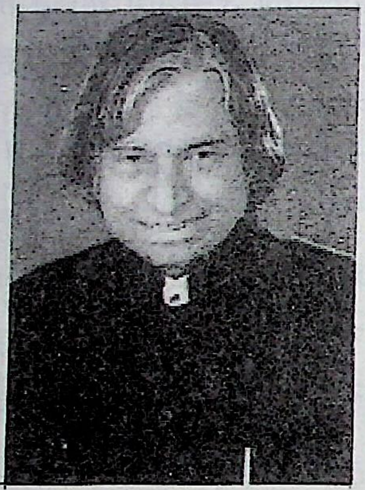

MESSAGE

The President of India, Dr. A.P.J. Abdul Kalam, is happy to know that the Bhagwan Mahavir Janmabhumi Kundalpur Digamber Jain Samiti, Kundalpur, District Nalanda is bringing out "Kundalpur Abhinandan Granth" on the occasion of "Kundalpur Mahotsava 2004" on 28th October, 2004.

The President extends his warm greetings and felicitations to all those associated with the Samiti and wishes their endeavours every success.

PRESS SECRETARY TO THE PRESIDENT

सत्यमेव जयते

K.L. Kochar
Press Adviser to
Vice-President of India

6, Maulana Azad Road,
New Delhi-110011
Tel. : *23016344, 23794336*
Fax : *23018124, 23012645*
e-mail : kochar kl@yahoo.com

MESSAGE

Hon'ble Vice-President of India, Shri Bhairon Singh Shekhawat is glad to know that Bhagwan Mahavir Janmabhumi and Kundalpur Digambar Jain Samiti are organising Kundalpur Mahotsava – 2004 on 28th October, 2004.

The Vice-President of India wishes the Kundalpur Mahotsava all success.

(K. L. KOCHAR)

New Delhi
10th September, 2004

सत्यमेव जयते

एस.एन. साहु
निदेशक

प्रधान मंत्री कार्यालय
नई दिल्ली 110 011
PRIME MINISTER'S OFFICE
New Delhi - 110 011

संदेश

प्रधानमंत्री जी को यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर दिगम्बर जैन समिति, बिहार द्वारा दिनांक 28 अक्तूबर, 2004 को कुण्डलपुर महोत्सव का आयोजन किया जा रहा है और इस अवसर पर एक "अभिनंदन ग्रंथ" का प्रकाशन भी किया जा रहा है।

प्रधानमंत्री जी कुण्डलपुर महोत्सव के सफल आयोजन की कामना करते हैं और इस अवसर पर समस्त जैन समाज को अपनी हार्दिक शुभकामनाएं भेजते हैं।

एस. एन. साहु
(एस.एन. साहु)

नई दिल्ली
दिनांक 12 अक्तूबर, 2004

न्यायमूर्ति म. रामा जोयिस
राज्यपाल, बिहार

राजभवन
पटना-800 022

शुभकामना संदेश

मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हो रही है कि कुण्डलपुर महोत्सव 2004 के शुभ अवसर पर 28 अक्तूबर, 2004 को "कुण्डलपुर अभिनन्दन ग्रन्थ" का प्रकाशन किया जा रहा है।

भगवान महावीर का जन्म स्थान होने के कारण कुण्डलपुर अत्यंत पवित्र स्थल है। भगवान महावीर ने मानव समाज में हिंसा के कारणों तथा उसके परिणामस्वरुप होने वाली अशान्ति पर गहरा विचार करके कहा था कि अहिंसा की प्रवृत्ति ही इसका समाधान हो सकती है। यह सर्वकालिक सत्य भी है। भगवान महावीर ने बताया कि मानव में शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व की भावना एवं उसका आचरण ही लोक कल्याण का एकमेव मार्ग है। यह सत्य है कि बीसवीं शताब्दी में वैज्ञानिक दृष्टि से मानव ने अपार प्रगति की है लेकिन यह भी सत्य है कि कुछ असामाजिक तत्वों/व्यक्तियों द्वारा विज्ञान का दुरुपयोग सह-मानव को हानि पहुँचाने के लिए बड़े पैमाने पर किया जा रहा है। आज मानव दानव बन गया है। उनमें अपने सुख के लिए दूसरों को दुःख देने की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है।

मानव में असुरक्षा की भावना बढ़ रही है। समाज की इस परिस्थिति में मानवता का श्रेष्ट मार्ग-दर्शन महावीर जी की वाणी से मिलता है। विश्व के संकट की इस घड़ी में अहिंसा और शान्ति का जो संदेश महावीर जी ने दिया है उसके व्यापक प्रचार तथा उसके आचरण की आवश्यकता है।

"कुण्डलपुर अभिनन्दन ग्रन्थ" महावीर जी की अहिंसा एवं शान्ति स्थापना के महत्वपूर्ण कार्य में बहुत उपयोगी सिद्ध होगा। मैं इस अमूल्य ग्रन्थ के प्रकाशन की सराहना करता हूँ तथा इसकी सफलता हेतु शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ।

(म० रामा जोयिस)

टी. वी. राजेस्वर
राज्यपाल, उत्तर प्रदेश

राज भवन
लखनऊ-227 132

सन्देश

मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि भगवान महावीर की जन्मस्थली कुण्डलपुर में "कुण्डलपुर महोत्सव-२००४" का आयोजन किया जा रहा है तथा इस अवसर पर कुण्डलपुर अभिनन्दन ग्रन्थ का प्रकाशन भी किया जा रहा है।

जैन धर्म के प्रवर्तक भगवान महावीर ने मानव को सार्थक जीवन जीने के लिए सत्य, अहिंसा, प्रेम, एकता और शांति-सद्भाव का जो सन्देश दिया था, वह आज भी प्रासंगिक है।

मैं "कुण्डलपुर महोत्सव-२००४" के आयोजन की सफलता हेतु अपनी शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ।

2/10/07

(टी०वी० राजेस्वर)

Justice Markandey Katju
Acting Chief Justice

HIGH COURT,
ALLAHABAD.

Sept. 8, 2004

MESSAGE

I am very happy to know that **"Kundalpur Abhinandan Granth"** is going to be inaugurated on the occasion of **"Kundalpur Mahotsava 2004."**

The Jain religion is a great religion of our country which has made tremendous contributions to our culture. The Jain philosophy of **"Tolerance and Non-violence"** is a philosophy which the country requires today. Lord Mahavira and the other Tirthankars and saints have preached a great philosophy to our country, that is, the philosophy of live and let live.

I extend my best wishes to you and other organizing members of the Mahotsva on this occasion.

Markandey Katju
(Markandey Katju)

Karmayogi Br. Ravindra Kumar Jain,
Bhagwan Mahavir Janmabhumi
Kundalpur Digambar Jain Samiti,
Kundalpur (Nalanda) Bihar.

Justice M.C. Jain

High Court,
Allahabad.

September 18, 2004

MESSAGE

I am delighted to learn that a great work titled as **"Kundalpur Abhinandan Granth"** is going to be released on the eve of *Kundalpur Mahotsva 2004* at the birth place of Lord Mahavira under the auspices of *Ganini Pramukh Aryika Shiromani Shri Gyanmati Mata Ji.* The book would unfold invaluable facts related to the truth of universal relevance of the teachings of Lord Mahavira. Needless to say, peaceful co-existence is the cry of the day.

By her selfless dedication and untiring efforts, revered Mataji has made enormous contribution in spreading the tenets of Jain religion by her writings and discourses which, I believe, hold the key of solution with non-violent approach of most of the present day problems of the mankind around the globe. Her devotion in protecting Jain culture and heritage is unparallel, indeed.

Bestowing all good wishes, I trust that the holy treatise would inspire a large number of people to righteous conduct underlying the fundamentals of Jain philosophy.

(Justice M.C. Jain)

Justice V. K. Shukla

JUDGE, HIGH COURT AT ALLAHABAD

September 08,2004

To

The President
Bhagwan Mahavir Janmabhumi,
Kundalpur (Nalanda), Bihar

Respected Sir,

I have come to know of "Kundalpur Mahaotsava 2004" to be organised on 28.10.2004, wherein "Kundalpur Abhinandan Granth" is to be inaugurated. I wish all success to the said Mahotsava and in respect to publication of "Kundalpur Abhinandan Granth"

With best wishes and regards,

V.K. Shukla

(V.K. Shukla)

JUDGE . HIGH COURT
AT ALLAHABAD

Justice Arun Tandon **Dated 09.09.2004**

To

President,
Bhagwan Mahavir Janmabhumi
Kundalpur Digambar Jai Sasmiti,
Kundalpur.

Sir,

It gives me immense pleasure to know that Bhagwan Mahavir Janmabhumi Kundalpur Digambar Jain Samiti, Kundalpur proposes to publish the **"Kundalpur Abhinandan Granth"** on the occasion of "Kundalpur Mahotsasva 2004". The effort made by the Samiti for the protection of Jain culture and heritage and for propagating the ideas of Lord Mahavir are exemplary.

I wish every success to the Samiti and pray that Lord Mahavir may always bless one and all.

(Arun Tandon)

JUSTICE SUDHIR NARAIN
Former Judge, Allahabad High Court
MEMBER
CAUVERY WATER DISPUTES TRIBUNAL

सत्यमेव जयते

Off. :
A-Wing, 4th Floor
Janpath Bhawan, Janpath
New Delhi-110001
Phone : 23711601
23715945

Res. :
29, C.Y. CHINTAMANI ROAD,
GEORGE TOWN,
ALLAHABAD
PHONE : 0532-2468526

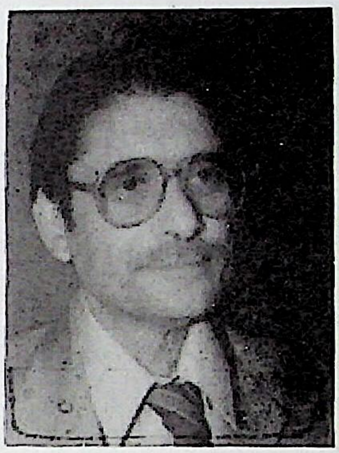

7/9/04

Respected President Br. Ravindra Kuamr Jainji,

I am extremely happy to know that a monumental work 'Kudalpur Abhinandan Granth' containing the teachings and the philosophy of Jainism, the life sketch of Lord Mahavir and other Tirthankars is being published. In the strife torn world today, the teachings of non-violence of Lord Mahavir is the only solution for world peace. If one treads the path laid dcwn by Him, one can attain 'Nirvana', the highest spiritual goal.

The research has shown that Lord Mahavir was born in Kudalpur, Bihar. It is due to inspiration and efforts of Pujya Ganini Pramukh Shri Gyanmati Mataji a magnificent temple and other related architectural structure of Lord Mahavir has come up which shall attract everyone at this 'Kudalpur Tirth.'

Gyanmati Mataji's life is itself an open book of knowledge. Besides this, she authored about 250 books on Jainism, philosophy and poem etc. They are guiding source to every person seeking spiritual enlightment.

Everyone who has contributed articles, poems etc in 'Kudalpur Abhinandan Granth' deserves appreciation. Their work will always be remembered. There is Roman saying ' *Scripta manent verba volent* ' (written words remain, spoken words fly.)

The persons who made efforts in getting the Granth published have actually laid foundation for future which but for their labour it would not have come to light

I wish its success and wide circulation for the benefit of the people.

Yours sincerely,

Sudhir Narain

Sudhir Narain

Karmyagi Br. Ravindra Kuamr Jain
President, Bhagwan Mahavir Janmbhumi
Kundalpur, Nadyavart Mahal
Kudalpur (Nalanda)
Bihar - 803111

शिवराज पाटील
SHIVRAJ V. PATIL
गृह मंत्री, भारत
HOME MINISTER, INDIA

1 Sept 2004

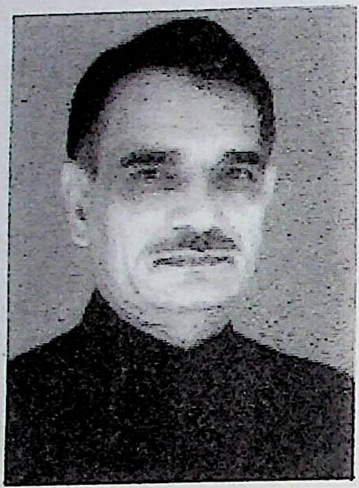

Message

I am happy to learn that "Kundalpur Mahotsava 2004" is being organized on 28th October 2004 when a work named "Kundalpur Abhinandan Granth" will be published.

It is heartening to know that Kundalpur, the birth place of Lord Mahavir is being developed and the work is nearing completion. I am sure this step will go a long way in the protection of Jain culture and heritage.

On this happy occasion, I pray to Lord Almighty for the success of this great work and also Kundalpur Mahotsava 2004.

(Shivraj V. Patil)

अर्जुन सिंह
ARJUN SINGH

सत्यमेव जयते

मानव संसाधन विकास मंत्री
भारत
नई दिल्ली-११० ००१
MINISTER OF
HUMAN RESOURCE DEVELOPMENT
INDIA
NEW DELHI-110 001

MESSAGE

I am happy to learn that Bhagwan Mahavir Janmabhumi Kundalpur Digambar Jain Samiti is going to inaugurate "Kundalpur Abhinandan Granth" on the occasion of Kundalpur Mahotsava, 2004 on 28th October, 2004. It is heartening to note that this Granth will contain authentic & factual articles by Saints and other learned persons about the life of Lord Mahavir and Kundalpur.

I convey my best wishes for this occasion.

(ARJUN SINGH)

२-८

मुलायम सिंह यादव

मुख्य मंत्री
उत्तर प्रदेश

लालबहादुर शास्त्री भवन
लखनऊ
दि0-27 सितम्बर, 2004

संदेश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि भगवान महावीर की जन्मभूमि, कुण्डलपुर से संबधित विकास कार्य पूर्ण होने के उपलक्ष्य में आगामी 28 अक्टूबर, 2004 को कुण्डलपुर महोत्सव-2004 का आयोजन किया जा रहा है। इस अवसर पर कुण्डलपुर अभिनन्दन ग्रन्थ का प्रकाशन भी प्रस्तावित है।

विगत 2600 वर्षो में कार्य परिवर्तन के कारण वर्तमान में बिहार प्रान्त के नालन्दा जिले में स्थित कुण्डलपुर नगरीय भले ही अति अल्प क्षेत्र वाली होकर वैभवहीन बन गयी हो, किन्तु यहां के कण-कण में भगवान महावीर के जन्म के समय से आज तक पवित्रता विद्यमान है। इसकी रज प्राप्त करने हेतु देश के कोने-कोने से दिगम्बर जैन समाज के हजारों श्रद्धालु कुण्डलपुर पहुंचते हैं तथा 'कुण्डलपुर अवतारी, त्रिशलानन्द विभो' के घोष के द्वारा भगवान महावीर की भावभीनी आरती करते हैं।

कुण्डलपुर महोत्सव के सफल आयोजन तथा कुण्डलपुर अभिनन्दन ग्रन्थ के सफल प्रकाशन हेतु मेरी शुभकामनाएं ।

मुलायम सिंह यादव

(मुलायम सिंह यादव)

SHEILA DIKSHIT
CHIEF MINISTER

GOVT. OF NATIONAL CAPITAL TERRITORY OF DELHI
DELHI SECRETARIAT, I.P. ESTATE, NEW DELHI-110002

D.O. NO.: CMO/ Messages/ 04/ 503
Dated : 14.09.04

MESSAGE

I am happy to know that **Bhagwan Mahavir Janmabhumi Kundalpur Digambar Jain Samiti,** Bihar is publishing "Kundalpur Abhinandan Granth" on the occasion of Kundalpur Mahotsav 2004 on 28th October 2004.

The efforts made by the Samiti in compiling articles by great saints and learned scholars for the Granth is praiseworthy. I hope that the same will prove to be a good literary source on Lord Mahavir & Jain Scripture.

I wish the Samiti and its forthcoming publications all success.

Sheila Dikshit

(SHEILA DIKSHIT)

PHONE : OFF. 23392020, 23392030 • FAX : 23392111

सदानन्द सिंह
अध्यक्ष
बिहार विधान सभा

2, देशरत्न मार्ग
पटना
का० : 2223856, 2226082
आ० : 2221858, 2222232
फैक्स : 2225343

दिनांक : ....

शुभकामना संदेश

बिहार के गौरवमय अतीत में प्रतिष्ठापित नालन्दा के धूल धुसरित पुण्य जनपद में अवस्थित जैन धर्म के 24वें तीर्थकर भगवान् महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर के पावन नाम के स्मरण का क्षण मात्र ही मेरे लिए अतीव आनन्द का विषय है । भगवान् महावीर का "जीओ और जीने दो "का दिव्य मंत्र मानव-धर्म-दर्शन के लिए उस संजीवनी सुधा के समान है, जिसका पान कर कोई भी विघातक मनुष्य प्राणी के प्राण के गुह्य गह्वर में उपासना के संकल्प के अधीन हुए बिना नहीं रह सकता । संसार में व्याप्त विकट संघात के इस काल में भगवान् महावीर का पावन संदेश भ्रमित मानव के लिए महती चेतना के 'रश्मि रथ ' के समान है ।

मैं अत्यन्त अह्लादित हूँ कि भगवान् महावीर की पुण्य स्मृति में जैन संस्कृति एवं विरासत की अभिरक्षा के उद्येश्य से आयोजित "कुन्दुल महोत्सव 2004" के उपलक्ष में "कुन्दुलपुर अभिनन्दन ग्रंथ " का प्रतिष्ठापन किया जा रहा है ।

मेरी हार्दिक कामना है कि यह ग्रंथ विश्व मानवता के लिए सरस सलिल शीतल नीर से आप्लावित पावन सरिता के समान लोक जीवन का संबल बनकर दिग् दिगन्त को "अहिंसा परमोधर्मः" का संदेश प्रदान करने में सफलीभूत हो ।

मैं उन महानुभावों को भी अपनी ओर से साधुवाद देता हूँ, जिन्होंने महोत्सव के अवसर पर इस अभिनन्दन ग्रंथ के प्रकाशन में अपनी महती भूमिका निभायी है ।

शुभकामनाओं सहित,

15/9/2004
(सदानन्द सिंह)

अशोक कुमार सिंह
मंत्री
कला, संस्कृति, युवा एवं पर्यटन विभाग,
बिहार

दूरभाष : 2226688, 2211242 (का०)
: 2227837, 2230345 (आ०)
स्टेडियम चेम्बर : 2670860
फैक्स : 0612-2227837, 2211242
10, वीरचन्द पटेल पथ, पटना - 800 001

पत्रांक..................................

दिनांक................................

संदेश

हमें यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर दिगम्बर जैन समिति, कुण्डलपुर द्वारा "कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ" का प्रकाशन किया जा रहा है ।

भगवान महावीर के जीवन, उनसे सम्बद्ध प्रमुख तीर्थों आदि से लोगों को अवगत कराने की दिशा में निश्चय ही यह एक सार्थक प्रयास है ।

मैं इस ग्रंथ के सफल प्रकाशन की कामना एवं इससे जुड़े लोगों को हार्दिक शुभकामनाएँ देता हूँ ।

(अशोक कुमार सिंह)
27.8.07

K.A.H. Subramanian

CHIEF SECRETARY
मुख्य सचिव
GOVERNMENT OF BIHAR
बिहार सरकार
Main Secretariat
मुख्य सचिवालय
Patna–800 015
पटना–800 015
Tel-0612-2223804
0612-2222086

D.O.Letter no............1494../CCS

Dated 11th September, 2004

Dear Sir,

I am extremely pleased to know that "Kundalpur Abhinandan Granth" is going to be published on the occasion of "Kundalpur Mahotsava 2004". I am further pleased to know that "Granth" will contain very authentic & factual articles by great saints & other learned personalities of national level about the life of Lord Mahavir & Kundalpur.

I convey my hearty congratulation to you on this great occasion and I am happy to send my "Auspicious Wishes" (Vinayanjali) for this holy treatise.

With best wishes,

Yours sincerely,

(K.A.H. Subramanian)

Sri Karmayogi Br. Ravindra Kumar Jain
President, Bhagwan Mahavir
Janmabhumi Kundalpur, Nandyavart Mahal,
Kundalpur. NALANDA – 803 111
BIHAR.

L. K. ADVANI
LEADER OF OPPOSITION
(LOK SABHA)

सत्यमेव जयते

44, PARLIAMENT HOUSE
NEW DELHI - 110001
PHONE : 23016705, 23034285
FAX : 23017470

August 25, 2004

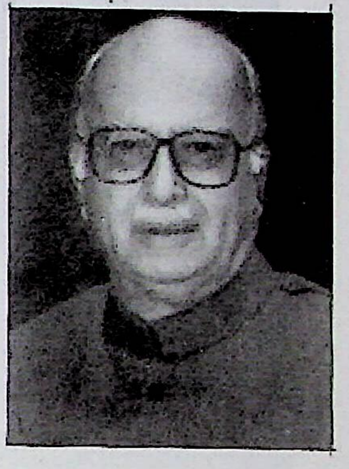

MESSAGE

I am glad to know that Bhagwan Mahavir Janmabhumi Kundalpur Digambar Jain Samiti, Kundalpur are publishing "***Kundalpur Abhinandan Granth***" on the occasion of *Kundalpur Mahotsava 2004,* on 28th October 2004.

It is heartening to note that the *'Grantha'* will contain authentic & factual articles by great saints and other learned persons about the life of Lord Mahavira & Kundalpur in accordance with Jain scriptures.

Please accept my greetings and good wishes on this occasion.

(L.K. Advani)

Shri Ravindra Kumar Jain
President
Bhagwan Mahavir Janmabhumi Kundalpur
Nandyavart Mahal, Kundalpur
Nalanda (Bihar) – 803 111

•RES. : 30, PRITHVIRAJ ROAD, NEW DELHI-110011 TEL : 23794124, 23794125, FAX : 23017419

डॉ. मुरली मनोहर जोशी
संसद सदस्य (राज्य सभा)
अध्यक्ष
वाणिज्य सम्बन्धी संसदीय
स्थायी समिति

सत्यमेव जयते

123, संसदीय सौध
नई दिल्ली–110 001
दूरभाष : 23034123, 23011991

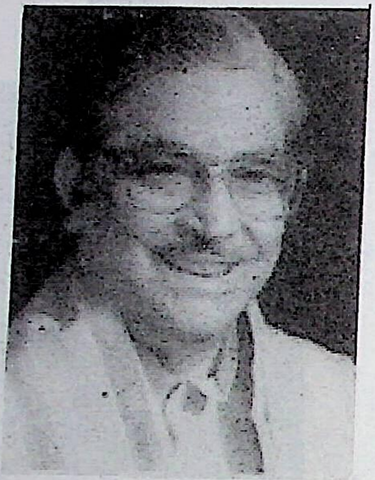

सन्देश

मुझे यह जानकर अत्यंत प्रसन्नता हुई कि जैन संस्कृति एवं सभ्यता के संरक्षणार्थ भगवान महावीर के जन्मस्थान कुण्डलपुर पर आधारित **कुण्डलपुर अभिनन्दन ग्रंथ** का **कुण्डलपुर महोत्सव 2004** के अवसर पर प्रकाशन किया जा रहा है।

पूज्यपाद का जीवन देश, धर्म और समाज के कल्याण के लिए सदैव ही समर्पित रहा है। सृष्टि के महासागर की प्रवाहमान जीवनधारा में अनंत विभूतियों का जन्म हुआ है। वे जीते भी हैं और मरते भी हैं, लेकिन इस सागर के अंतहीन इतिहास के पन्नों पर ऐसे महापुरुषों का भी जन्म हुआ है, जिनके जीवन की स्याही कभी धुंधली नहीं पड़ती है। वे इस अंतहीन गगनमण्डल में ध्रुवतारे की भांति सदैव स्थिर हैं, उदीप्त हैं तथा उनका जीवन–प्रकाश उनके जीवनकाल से भी अधिक आने वाले कल के लिए मूल्यवान है। काल का प्रवाह भी उसको बहा नहीं सका है। अहिंसा हि परमोधर्मः के सूक्ष्म साहचर्य में रह कर भगवान महावीर ने विश्व को आध्यात्मिकता की पराकाष्ठा पर पहुंचाया।

मेरा विश्वास है भगवान महावीर के जीवन पर आधारित यह ग्रन्थ राष्ट्रोत्थान एवं राष्ट्रसेवा का अद्भुत मार्गदर्शक बनेगा एवं अनंतकाल तक राष्ट्रनिर्माण की प्रेरणा देता रहेगा। मेरी असीम शुभकामनाएं।

(मुरली मनोहर जोशी)

नई दिल्ली
7 सितम्बर, 2004

6, रायसीना रोड, नई दिल्ली-110 001 • दूरभाष : 23718444, 23711144, फैक्स : 23711772
"आङ्गिरस" 9/10-ए टैगोर नगर, अनुकूल बैनेर्जी रोड, इलाहाबाद-211002 • दूरभाष : 0532-2465008, फैक्स : 0532-2466800

Nitish Kumar
MEMBER OF PARLIAMENT
(LOK SABHA)

22 Akbar Road,
New Delhi – 110 011
Tel.: 23017588

2nd Sept.,2004

MESSAGE

I convey my vinayanjali on the auspicious Occasion of Kundalpur Mahotsava –2004. I am happy to learn that on this occasion 'Kundalpur Abhinandan Granth' is going to be inaugurated. May the blessings of Lord Mahavir bring peace prosperity & happiness to all.

(Nitish Kumar)

दूरभाष : ९१-११-२६१०३४९५, २६१७८९९२
फैक्स : ९१-११-२६१९५५२७
तार : हिन्दूधर्म
Phones 91-11-26103495, 26178992
Fax 91-11-26195527
E-Mail vhp@vichaar.net
vhpnews@vichaar.net
jaishnram@vsnl.in
manish@vichaar.net
Gram 'HINDUDHARMA'

विश्व हिन्दू परिषद ॐ VISHVA HINDU PARISHAD
Registered under Societies Act 1860 No S 3106 of 1966-67 with Registrar of Societies, Delhi
संकट मोचन आश्रम, (हनुमान मंदिर) सेक्टर-६, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली-११० ०२२ (भारत)
SANKAT MOCHAN ASHRAM, RAMAKRISHNA PURAM-VI, NEW DELHI-110 022 (BHARAT)

पत्र संख्या Ref. विहि0प0 / 17ए / 2004

दिनांक Dated 08 सितम्बर, 2004

प्रिय बन्धुवर श्री ब्र0 रवीन्द्र कुमार जी जैन

जय जिनेन्द्र।

आपके पत्र दिनांक 16 अगस्त, 2004 द्वारा अभिनन्दन ग्रन्थ के प्रकाशन का समाचार प्राप्त कर हार्दिक प्रसन्नता हुई।

प्रातःस्मरणीय भगवान महावीर का जन्म राज्यकुल में होते हुए भी वहाँ का राजसी ठाटबाट अमान्य करके एक साधक के रूप में जिस प्रकार की कठिन साधना की उसका अन्य उदाहरण मिलना कठिन है। इस तपस्या बल के कारण ही देव दुर्लभ शीर्ष स्थान वे प्राप्त कर सके।

उनके जीवन से प्रेरणा लेकर आज भी अनेकानेक महापुरुष कठिन साधना में लीन हैं, उनकी तपश्चर्या देखकर ही मानव जीवन अपने को धन्य कर पाता है।

विश्वास है इस ग्रन्थ के माध्यम से न केवल अपने जैन बन्धु अपितु अन्य बन्धु भी भगवान के जीवन चरित्र से प्रेरणा ग्रहण कर अपने जीवन को कृतार्थ करेंगे।

प्रभु के श्रीचरणों में ग्रन्थ प्रकाशन के उद्देश्यों की सफलता हेतु विनम्र प्रार्थना है।

पूज्य माता जी के श्रीचरणों में साष्टांग प्रणाम निवेदन कर देंगे।

शुभकामनाओं सहित,

भवदीय

अशोक सिंहल
(अशोक सिंहल)
कार्याध्यक्ष

संलग्न चित्र

श्री कर्मयोगी ब्र0 रवीन्द्र कुमार जी जैन
कुण्डलपुर,
नालन्दा–803 111 (बिहार)

V. DHANANJAYA KUMAR
Ex - MEMBER OF PARLIAMENT
(LOK SABHA)
FORMER UNION MINISTER

सत्यमेव जयते

4/35, "PARINITH"
16TH MAIN, M.C. LAYOUT,
VIJAYANAGAR
BANGALORE-560 040
PH.-080-23105959

संदेश

तीर्थंकर भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर में पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा एवं सानिध्य में भव्य् मंदिरों और अन्य सुविधाओं का निर्माणकार्य पूरा होने के शुभ अवसर पर मेरा भक्तिपूर्वक प्रणाम। मुझे विश्वास है कि यह न केवल जैनधर्म के लिए बल्कि सारे भारत देश के लिए गौरव का संकेत बनकर रहेगा।

पूज्य माताजी की प्रेरणा से जहाँ भगवान ऋषभदेव समवसरण रथ का भारत प्रवर्तन हुआ, वहीं भगवान ऋषभदेव का अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव भी राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मनाया गया। शासन तक भी जैनधर्म के वास्तविक तथ्यों को पहुँचाने का श्रेय वर्तमान सदी में विशेषरूप से पूज्य माताजी को दिया जा सकता है। जम्बूद्वीप, प्रयाग, कुण्डलपुर मे हुए नवनिर्माणों से तो जैन समाज पूर्णतया परिचित हो ही चुका है। वास्तव में पूज्य माताजी की क्षमता एवं क्षयोपशम अद्वितीय है।

माताजी की 71वीं जन्मजयंती के अवसर पर भगवान से मेरी प्रार्थना है कि वे अनंतकाल तक समाज को मार्गदर्शन प्रदान करने के लिए माताजी को दीर्घ आयु और शक्ति प्रदान करें। पूज्य माताजी और विराजमान संघ को मेरा सादर नमन।

-वी. धनंजय कुमार

श्रवण कुमार
मुख्य सचेतक
मुख्य विरोधी दल
बिहार विधान-सभा

9431023194
मो०

आर० ब्लॉक, रोड न०-7
न्यू फेमली टाईप
मकान सं०—8

दूरभाष : 2225474 (आ०)
2225296 (का०)
बिहार शरीफ 06112-227416
बेन 06112-280514

पत्रांक..........

दिनांक................200

मानव समाज के विकास का प्रतीक कुण्डलपुर विकास

मुझे बहुत खुशी है कि मेरे क्षेत्र में पूज्य आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी का लगभग डेढ़ वर्ष पूर्व भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) के विकास के उद्देश्य के साथ पदार्पण हुआ और आज इतनी कम अवधि में यहाँ 'नंद्यावर्त महल' नामक तीर्थ का अभूतपूर्व निर्माण हुआ। समय-समय पर मैं माताजी का आशीर्वाद लेता रहा और देखते ही देखते भगवान महावीर के सिद्धान्तों को याद कराने वाला यह तीर्थ सारे देश की एक अखण्ड निधि और सांस्कृतिक धरोहर के रूप में आज स्थापित हो गया। दुनिया के पटल पर ऐतिहासिक, सामाजिक और सांस्कृतिक धरोहरों का ही महत्त्व रहा है, नालंदावासियों से मेरा आग्रह है कि उन्हें ऐसे महान तीर्थ के विकास पर गौरव होना चाहिए। इस तीर्थ का विकास पूरे क्षेत्र का विकास है, इसकी पवित्रता को बनाये रखने के लिए कुण्डलपुर (नालंदा) विकास समिति को सभी ग्रामवासियों का सहयोग मिलना आवश्यक है। कुण्डलपुर एवं आसपास के क्षेत्रों के नौजवानों से मेरा आग्रह है कि उनके विचार इतने व्यापक नहीं है, उनमें परिवर्तन की आवश्यकता है। आज भगवान महावीर के दर्शन और सिद्धान्तों को पढ़ने की आवश्यकता है, उन्होंने शांति और अमन के लिए दुनिया को सत्य, अहिंसा, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और परिग्रह परिमाण जैसे जो पाँच अणुव्रत-सिद्धान्त दिये हैं वो आज की इन बिगड़ती परिस्थितियों में सामञ्जस्य, प्रेम, दया, मैत्री और शांति की स्थापना करने में पूर्णतः सक्षम हैं।

कुण्डलपुर (नालंदा) का विकास न सिर्फ जैन संस्कृति या जैन धर्मावलम्बियों के तीर्थ का विकास है अपितु यह मानव समाज का विकास है। मुझे बहुत गर्व है कि मैं एक ऐसे क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करता हूँ जिस कुण्डलपुर (नालंदा) की पावनभूमि पर आज से 2600 वर्ष पूर्व जैनधर्म के चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी ने जन्म लिया था। आज जैनधर्म की महान आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी ने इस कुण्डलपुर की पवित्र भूमि का जो वर्षों से उपेक्षित पड़ी थी, विकास कर संस्कृति को बचाया है, उद्धार किया है। भगवान महावीर ने जिस नंद्यावर्त महल में जन्म लिया था उसी के नाम से इस तीर्थ का विकास किया गया और भगवान महावीर के जीवन दर्शन को दर्शाने हेतु लाल पत्थर से युक्त इस महल का अतिसुन्दर और भव्य मॉडल भी इस तीर्थ पर बनाया गया।

ऐसी अमूल्य विरासत को बचाये रखने के लिए मैं स्थानीय लोगों से मानसिक सहयोग का आग्रह करता हूँ। इससे नालंदा की गरिमा भी हमेशा अक्षुण्ण बनी रहेगी।

(श्रवण कुमार)

कुण्डलपुर ने अपने वास्तविक स्वरूप को प्राप्त कर लिया

आज सारा संसार भौतिक उपलब्धियों से चकाचौंध हैं। द्वेष, घृणा और हिंसा की ज्वाला से धधक रहा है। बड़ी-बड़ी शक्तियों की टकराहट और शस्त्र अहंकार के कारण आज सारा संसार विनाश के कगार पर खड़ा है। विश्वबन्धुत्व, अहिंसा और सहिष्णुता व्यवहार से तो क्या दुनियाँ के सांस्कृतिक शब्दकोश से भी कब निकल जाय यह कहना मुश्किल है। ऐसी स्थिति में विश्व को शांति चाहिए, सद्भावना चाहिए, सहिष्णुता चाहिए, अहिंसात्मक प्रवाह चाहिए और मैत्री की धारा चाहिए। इन चीजों की उपलब्धि और तनाव का निदान भगवान महावीर का मंगलमय उपदेश है, दार्शनिक संदेश है, अहिंसा और सहअस्तित्व का मार्गदर्शन है। इसलिए आज आवश्यकता है भगवान महावीर के बताए हुए आदर्शों को जीवन में उतारने की, व्यवहारिक स्वरूप देने की और मंगलमय वातावरण स्थापित करने की। मैं ऋणी हूँ, पूरा बिहार ऋणी है परम पूज्यनीय ज्ञानमती माताजी का, जिनकी. कृपा प्रसाद से विगत कई शताब्दियों के बाद भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर अपने वास्तविक स्वरूप को प्राप्त कर सका है।

माताजी का व्यक्तित्व इतना ऊँचा और महान है कि वे जहाँ जाती हैं वहाँ तीर्थ बन जाता है तथा इतिहास झुककर नमन करता है और जय-जयकार करते हुए उनके पावन निर्देश और भावनाओं को मूर्तरूप देने के लिए संकल्पित हो जाता है।

पूज्य माताजी को अपने आप पर अटूट विश्वास है, इसलिए उनके अन्तर में अलौकिक शक्ति, अदम्य साहस तो है ही, साथ ही साथ चिन्तामुक्त प्रवास भी है, अविरल धारा भी है स्नेह की, प्रेरणा की अहिंसा और सद्भावना की। भगवान उन्हें यशस्वी, निर्भीक, साधना, आराधना एवं तपोमय जीवन देकर निरन्तर सिद्धि दें, धार्मिक समृद्धि दें और आत्म कल्याण के लिए पुण्यभरा वातावरण दें, मंगलमय परिवेश दें, यही वीरप्रभू से मंगल प्रार्थना है।

–सुरेन्द्र प्रसाद तरुण, राजगीर
(पूर्व राज्य शिक्षामंत्री–बिहार सरकार)

सत्यमेव जयते

सदस्य इंजीनियरी, रेलवे बोर्ड
और पदेन सचिव,
भारत सरकार
रेल मंत्रलय
नई दिल्ली-110 001
MEMBER ENGINEERING. RAILWAY BOARD
&
EX-OFFICIO SECRETARY.
GOVERNMENT OF INDIA
MINISTRY OF RAILWAYS
NEW DELHI-110001

संदेश

हमें यह जानकर अति प्रसन्नता हो रही है कि "कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ" का विमोचन पूज्य ज्ञानमती माताजी के जन्म दिवस 28 अक्टूबर को हो रहा है. इस सुअवसर पर हम सभी की तरफ से पूज्य माताजी को हार्दिक बधाई एवं शत-शत नमन.

इस ग्रंथ में पूज्य माताजी ने भगवान महावीर स्वामी जी की जन्म स्थली "कुण्डलपुर" को ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर प्रमाणित किया है. पूज्य माताजी ने हमें ज्ञान का असीम भण्डार दिया है. उनकी प्रेरणादायी छत्र छाया में अनेक तीर्थ क्षेत्रों का विकास हुआ है. इन अनगिनत उपकारों के लिए जैन समाज हमेशा उनका ऋणी रहेगा. माताजी का स्नेह व आर्शीवाद सदैव हम सभी पर बना रहे. पूज्यनीय माताजी के चरणों में शत-शत प्रणाम.

7.10.04

(सूर्यपाल सिंह जैन)

अशोक कुमार सिन्हा,
योजना पदाधिकारी, पर्यटन विभाग,बिहार सरकार,
एव
प्रबन्धक (प्रशासन) सह प्रबन्धक (परिवहन) सह प्रबन्धक (ट्रैवेल ट्रेड)
बिहार स्टेट टूरिज्म डेवलपमेंट कॉरपोरेशन(बिहार सरकार का उपक्रम)
पटना।

प्रसाद भवन
प० छज्जुबाग(लोदीपुर)
पटना-800001, बिहार
दूरभाष-0612-2224639(आवास)
ई-मेल-ashokbihartourism@yahoo.com.

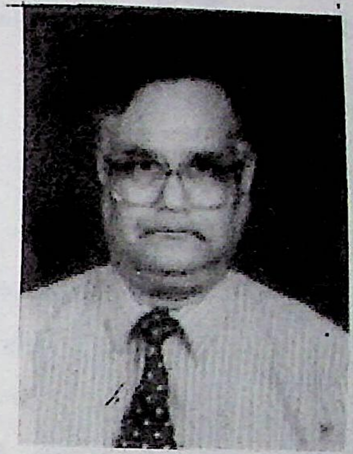

संदेश

यह जानकर मुझे व्यतिक्तगत रूप से काफी प्रसन्नता हुई है कि परमपूज्य, गणिनीप्रमुख, आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माता जी की प्रेरणा से दिगम्बर जैन धर्मावलंबियों के मतानुसार भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) पर कुण्डलपुर अभिनन्दन ग्रंथ का प्रकाशन की योजना बनाई गयी है।

मैं अपनी हार्दिक शुभकामनाओं के साथ माता जी की प्रयासों की सफलता की कामना करता हूँ।

वर्णित प्रसंग में यहाँ स्पष्ट करना चाहूँगा कि आदरणीया परमपूज्यनीया माता जी को प्रथम अलौकिक दर्शन, मुझे उनकी कुण्डलपुर की यात्रा के कम में उनके पटना अवस्थान में, आदरणीया बहन स्वाति जैन के प्रोत्साहन से प्राप्त हुआ। ज्ञातव्य हो कि पता नहीं किस श्रोत से आदरणीया बहन स्वाति जैन को मेरा परिचय उन्हें प्राप्त हुआ और उन्होंने मेरठ, आगरा आदि कई शहरों से फोन पर ही मुझसे कई विषयों पर चर्चा करने लगी और मैं और मेरा परिवार धीरे-धीरे परमपूज्य माता जी के निकट आने लगा। आज मैं और मेरा परिवार परमपूज्य माता जी को ईष्ट मानते हुए उनके आदेशों/ निर्देशों का अनुपालन करने का पूरा प्रयास करता है।

जहाँ तक भगवान महावीर के जन्म स्थली के निर्धारण का प्रश्न है यह तो ज्ञाताओं का विषय है, मगर जब दिगम्बर जैन र्धावलंबियों द्वारा कुण्डलपुर (नालंदा) को उनका जन्म स्थली माना जाता है तो उक्त स्थल का विकास पर्यटकीय दृष्टि से भी किया जाना आवश्यक प्रतीत हुआ और जानकर प्रसन्नता होगी कि इंदिरा गाँधी मुक्त विश्व विद्यालय के अनुग्रह नारायण सिंह कॉलेज, पटना सेन्टर के पर्यटन एवं यात्रा प्रबंधन के स्नातक छात्राओं का एक दल मेरे मार्ग-दर्शन में जिसमें सर्वसूश्री रूही वर्मा, रंजु कुमारी, मोना आनन्द एवं शिखा सिन्हा सम्मिलित हैं, एक शोध परियोजना पर कार्य कर रहे हैं। आशा है इसके परिणाम व्यापक, व्यावहारिक एवं अनोखे होंगे।

आशा और विश्वास है कि परमपूज्य माता जी के प्रयासों से यह स्थान अन्तर्राष्ट्रीय मानचित्र पर प्रमुख जैन तीर्थ पर्यटन स्थल के रूप में उभरेगा।

अशोक कुमार सिन्हा
(अशोक कुमार सिन्हा)

सेवा में,
आदरणीया बहन स्वाति जैन,
सह सम्पादक,
कुण्डलपुर अभिनन्दन ग्रंथ,
भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर दिगम्बर जैन समिति,
कुण्डलपुर-नालन्दा, बिहार।

Amit Lodha
I.P.S.

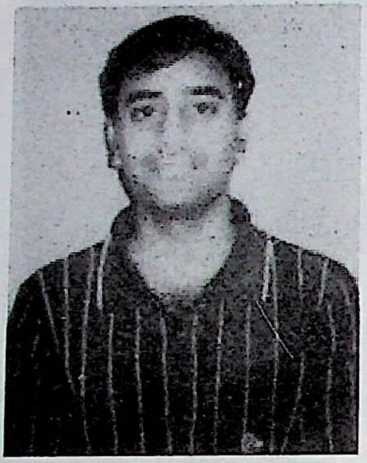

शुभकामना

जैनधर्म के चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी जिन्होंने 2600 वर्ष पूर्व कुण्डलपुर (नालंदा) में जन्म लेकर सारे संसार को अहिंसारूपी ब्रह्मास्त्र दिया और "जिओ और जीने दो" का संदेश दिया। वर्तमान समय में भगवान महावीर के बताये सिद्धान्त ही सारे विश्व में शांति की स्थापना कर सकते हैं।

मैंने ज्ञानमती माताजी से कई बार आशीर्वाद प्राप्त कर उनकी भावनाओं को सुना। माताजी ने जब बताया हम यहाँ भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) के विकास के उद्देश्य के साथ आये हैं। तब मुझे महसूस हुआ कि ऐसी पवित्र और पावन भूमि का विकास होना तो समस्त जनसमाज के लिए कल्याणकारी ही होगा और मेरे देखते ही देखते यहाँ इतना भव्य निर्माण हुआ है कि मैं सोच भी नहीं सकता था। पूज्य माताजी में सचमुच कोई अद्‌भुत शक्ति छिपी है।

आज यह भव्यतीर्थ पूरे नालंदा जिले में जैन-अजैन यात्रियों के लिए आकर्षण एवं श्रद्धा का केन्द्र बन गया है। लोग यहाँ आकर शांति का अनुभव करते हैं। मुझे पूरा विश्वास है कि 'नंद्यावर्त महल' नामक इस तीर्थ से भगवान महावीर स्वामी के द्वारा बताये गये शाकाहार, अहिंसा, क्षमा, दया, प्रेम और सामन्जस्य जैसे सिद्धान्तों का सारे देश में नहीं वरन् विश्व में नये सिरे से प्रतिपादन हो सकेगा। आज की इन बदलती सामाजिक परिस्थितियों में भगवान महावीर के सिद्धांत अत्यंत प्रासंगिक नजर आते हैं।

माताजी की प्रेरणा से 'कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ' का प्रकाशन किया जा रहा है। इस हेतु संपादक मण्डल एवं प्रकाशन समिति के प्रमुख ब्र. श्री रवीन्द्र कुमार जैन के साथ सारी टीम के प्रति मैं हार्दिक शुभकामनाएं व्यक्त करता हूँ।

20.5.10

अमित लोढ़ा, नालंदा
(आरक्षी अधीक्षक)

NAVA NALANDA MAHAVIHARA
(An autonomous Institute under Ministry of Tourism & Culture, Government of India)
NALANDA-803111 (BIHAR) INDIA

Dr. R. Panth
Director

शुभकामना

भारतीय संस्कृति में जैन संस्कृति का एक प्रमुख स्थान है। जैन संस्कृति निवृत्तिवादी संस्कृति है। उसका प्रमुख उद्देश्य सांसारिक दुःखों से मुक्त होकर शाश्वत सुख रूपी मोक्ष को प्राप्त करना रहा है। तीर्थंकर ऋषभदेव इस निवृत्तिवादी विचारधारा के प्रवर्तक थे। उनकी परम्परा में नेमिनाथ, पार्श्वनाथ और महावीर सहित चौबीस तीर्थंकरों की परम्परा रही है। इस क्रम में अंतिम तीर्थंकर भगवान् महावीर थे।

पूज्य माता जी के सान्निध्य में दिगम्बर जैन समिति द्वारा "भगवान् महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर अभिनन्दन ग्रन्थ" प्रकाशित करने की योजना का पत्र पढ़कर मेरा मन आह्लादित हो गया कि नालन्दा की पुण्यभूमि पुनः जागृत हो रही है।

मैं आशा करता हूँ कि यह ग्रन्थ शीघ्रातिशीघ्र प्रकाशित होकर ज्ञानी पाठकों के हाथों में पहुँचेगा और विवेकी पाठक इस ग्रन्थ को पढ़कर भगवान् महावीर द्वारा दिये गये उपदेश से परिचित होंगे एवं उससे लाभान्वित होंगे।

शुभकामनाओं के साथ।

रवीन्द्र पंथ
7/10/04

डॉ. रवीन्द्र पंथ
निदेशक
नव नालन्दा महाविहार, नालन्दा

भगवान महावीर जन्मभूमि
कुण्डलपुर दि॰ जैन समिति,
कुण्डलपुर – नालन्दा (बिहार)

e-mail : nnmdirector@sify.com : website : www.navnalanda.org Phone : 0091-06112-281897, 281672, 281820 Fax : 06112-281907

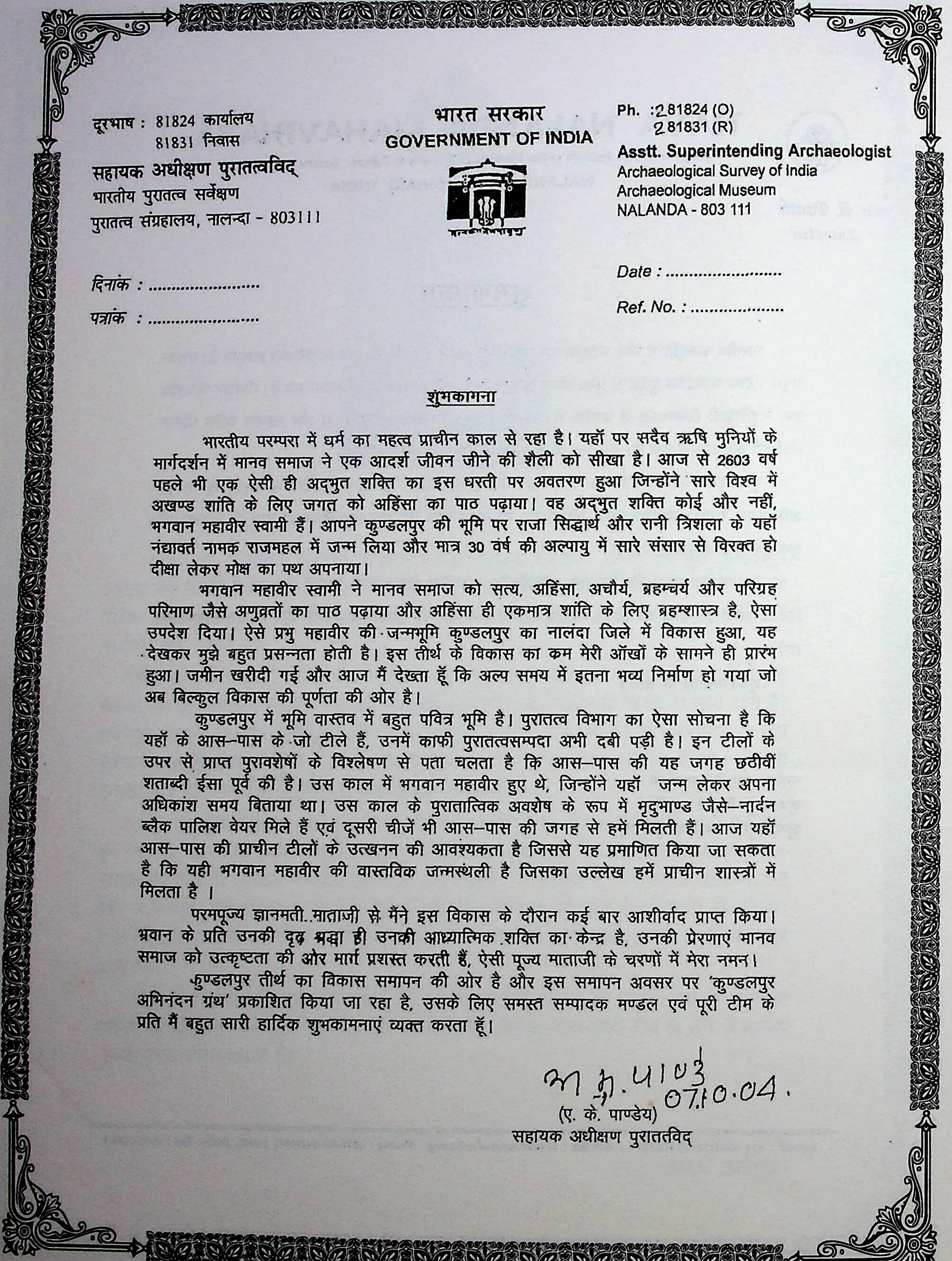

दूरभाष : 81824 कार्यालय
81831 निवास
सहायक अधीक्षण पुरातत्वविद्
भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण
पुरातत्व संग्रहालय, नालन्दा - 803111

भारत सरकार
GOVERNMENT OF INDIA

Ph. : 281824 (O)
281831 (R)
Asstt. Superintending Archaeologist
Archaeological Survey of India
Archaeological Museum
NALANDA - 803 111

दिनांक : ....

पत्रांक : ....

Date : ....

Ref. No. : ....

शुभकामना

भारतीय परम्परा में धर्म का महत्व प्राचीन काल से रहा है। यहाँ पर सदैव ऋषि मुनियों के मार्गदर्शन में मानव समाज ने एक आदर्श जीवन जीने की शैली को सीखा है। आज से 2603 वर्ष पहले भी एक ऐसी ही अद्भुत शक्ति का इस धरती पर अवतरण हुआ जिन्होंने सारे विश्व में अखण्ड शांति के लिए जगत को अहिंसा का पाठ पढ़ाया। वह अद्भुत शक्ति कोई और नहीं, भगवान महावीर स्वामी हैं। आपने कुण्डलपुर की भूमि पर राजा सिद्धार्थ और रानी त्रिशला के यहाँ नंद्यावर्त नामक राजमहल में जन्म लिया और मात्र 30 वर्ष की अल्पायु में सारे संसार से विरक्त हो दीक्षा लेकर मोक्ष का पथ अपनाया।

भगवान महावीर स्वामी ने मानव समाज को सत्य, अहिंसा, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और परिग्रह परिमाण जैसे अणुव्रतों का पाठ पढ़ाया और अहिंसा ही एकमात्र शांति के लिए ब्रह्मशास्त्र है, ऐसा उपदेश दिया। ऐसे प्रभु महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर का नालंदा जिले में विकास हुआ, यह देखकर मुझे बहुत प्रसन्नता होती है। इस तीर्थ के विकास का कम मेरी आँखों के सामने ही प्रारंभ हुआ। जमीन खरीदी गई और आज मैं देखता हूँ कि अल्प समय में इतना भव्य निर्माण हो गया जो अब बिल्कुल विकास की पूर्णता की ओर है।

कुण्डलपुर में भूमि वास्तव में बहुत पवित्र भूमि है। पुरातत्व विभाग का ऐसा सोचना है कि यहाँ के आस–पास के जो टीले हैं, उनमें काफी पुरातत्वसम्पदा अभी दबी पड़ी है। इन टीलों के उपर से प्राप्त पुरावशेषों के विश्लेषण से पता चलता है कि आस–पास की यह जगह छठीवीं शताब्दी ईसा पूर्व की है। उस काल में भगवान महावीर हुए थे, जिन्होंने यहाँ जन्म लेकर अपना अधिकांश समय बिताया था। उस काल के पुरातात्विक अवशेष के रूप में मृदुभाण्ड जैसे–नार्दन ब्लैक पालिश वेयर मिले हैं एवं दूसरी चीजें भी आस–पास की जगह से हमें मिलती हैं। आज यहाँ आस–पास की प्राचीन टीलों के उत्खनन की आवश्यकता है जिससे यह प्रमाणित किया जा सकता है कि यही भगवान महावीर की वास्तविक जन्मस्थली है जिसका उल्लेख हमें प्राचीन शास्त्रों में मिलता है ।

परमपूज्य ज्ञानमती माताजी से मैंने इस विकास के दौरान कई बार आशीर्वाद प्राप्त किया। भगवान के प्रति उनकी दृढ़ श्रद्धा ही उनकी आध्यात्मिक शक्ति का केन्द्र है, उनकी प्रेरणाएं मानव समाज को उत्कृष्टता की ओर मार्ग प्रशस्त करती हैं, ऐसी पूज्य माताजी के चरणों में मेरा नमन।

कुण्डलपुर तीर्थ का विकास समापन की ओर है और इस समापन अवसर पर 'कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ' प्रकाशित किया जा रहा है, उसके लिए समस्त सम्पादक मण्डल एवं पूरी टीम के प्रति मैं बहुत सारी हार्दिक शुभकामनाएं व्यक्त करता हूँ।

07.10.04.
(ए. के. पाण्डेय)
सहायक अधीक्षण पुरातत्वविद्

Message

Pujya Gyanmati Mataji is doing selfless service to the entire humanity. Her habitat 'Kundalpur' is a divine place where "Lord Mahavira" took birth and enlightened mankind. Her message of goodness is spreading from Kundalpur like sun rays. We should follow her eternal precepts for love, peace and non-violence in the world. I pray to God for her good health & long life.

With Adorations,
- Vimal Kumar (S.D.P.O), Rajgir (Nalanda)

* * *

विनयांजलि

ज्ञानमती माताजी एक ऐसी उज्ज्वल प्राकृतिक ऊर्जा का स्रोत हैं जिनके दर्शनमात्र से अन्र्तमन में एक शांति की लहर उठती है और दैनिक जीवन की भागदौड़ और व्याकुल विचारों से मुक्ति सी मिल जाती है। मैं 25 जून को पटना से स्थानान्तरण के बाद नालंदा जिले में थानाप्रभारी के रूप में अपना पदभार संभालने के लिए यहाँ आया और मुझे यह जानकारी हुई कि यहाँ कुण्डलपुर ग्राम में कोई महान जैन साध्वी विराजमान हैं। उसी दिन मैं पूज्य ज्ञानमती माताजी के दर्शन हेतु विकासशील कुण्डलपुर तीर्थ पर पहुँचा और माताजी के दर्शन किये। दर्शन करने के उपरांत ही मन में माताजी के दिव्य व्यक्तित्व के प्रति और इस तीर्थ के प्रति अखण्ड श्रद्धान पैदा हुआ और इस तरह माताजी का आशीर्वाद प्राप्त कर मैंने अपना कार्यभार संभाला। आज तक माताजी के आशीर्वाद से मेरा यह कार्यकाल निर्विघ्न चल रहा है। मन में बस एक ही भावना रहती है कि शाम होते ही नित्य एक बार उस तीर्थ पर अवश्य जाऊँ, माताजी के दर्शन करूँ और शांति को हृदय में धारण करूँ। तीर्थ और संत सचमुच संस्कृति और समाज के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण होते हैं।

नवोदित तीर्थ के विकास के समापन अवसर पर 'कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ' प्रकाशित किया जा रहा है, यह जानकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। इस ग्रंथ के माध्यम से जन-जन में ज्ञान की रोशनी फैले, यही मेरी विनयांजलि है।

–श्याम किशोर यादव (थाना प्रभारी), नालंदा

* * *

शुभकामना

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ छप रहा है, यह जानकर काफी प्रसन्नता हुई। हमारी बहुत शुभकामनाएं हैं। ये सब परम पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी और उनकी संघ की देन है, जो आज जंगल में मंगल हुआ है।

अभी तक हम लोग कुण्डलपुर का नाम ग्रंथों में पढ़ते और सुनते थे परन्तु माताजी ने डेढ़ वर्ष के अन्दर भगवान महावीर की जन्मभूमि पर विश्वास कायम कर दिया। अभी तक पटना में किसी क़ो मालूम नहीं था कि भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर है, लोगों में भ्रम था कि वैशाली है कुछ विद्वानों ने भी भ्रमित किया था, वैशाली वास्तव में भगवान महावीर का ननसार (ननिहाल) है। इस ग्रंथ के माध्यम से सम्पूर्ण भारतवर्ष के बच्चों से लेकर बूढ़ों तक सभी को भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार है, इसकी जानकारी हो जायेगी, यह महानकार्य परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी, आर्यिका चन्दनामती माताजी, क्षुल्लक मोतीसागर जी महाराज, ब्रह्मचारी रविन्द्र जी के प्रयास से हो रहा है।

आज बिहारवासियों पर परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी का बहुत बड़ा उपकार है, जो कुण्डलपुर में भगवान महावीर की जन्मभूमि पर भगवान महावीर स्वामी का 108 फुट ऊँचा मंदिर, भगवान ऋषभदेव का मंदिर विशाल प्रतिमा के साथ, नवग्रहशांति मंदिर, त्रिकाल चौबीसी, नंद्यावर्त महल जो तैयार हो गया है, माताजी ने बिहार के अंदर मानस्तंभ, कीर्ति स्तंभ और दस मंदिर बनवाया है। ये सब परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के आशीर्वाद, कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र जी की मेहनत और संघ की सभी बहनों के सहयोग से सुगमता से हो रहा है।

ग्रंथ के लिए हमारी बहुत हार्दिक शुभकामना है।

—रामगोपाल जैन, पटना

(अध्यक्ष—बिहार राज्य दिगम्बर जैन धार्मिक न्यास बोर्ड, बिहार सरकार)

* * *

ताराचन्द जैन
अध्यक्ष
झारखण्ड राज्य दिगम्बर जैन धार्मिक न्यास बोर्ड
झारखण्ड सरकार

Tara Chand Jain
CHAIRMAN
Jharkhand Digamber, Jain Religious Trust Board
Govt. of Jharkhand

क्षेत्रीय कार्यालय : दिगम्बर जैन मंदिर परिसर, जैन मंदिर रोड, देवघर (झारखण्ड)
मोबाइल : 9431132024 दूरभाष : 222817-222827
मुख्य कार्यालय - जेल रोड, राँची दूरभाष-2563537

विनयान्जलि

भगवान महावीर ने अपने जीवन और शिक्षाओं के द्वारा सम्पूर्ण मानवता का पथ प्रदर्शन किया है। अहिंसा ,सत्य जैसी अनेक महान उद्दात्त भावनाओं का संदेश देकर उन्होंने मनुष्य के अंदर उसके कर्तव्य की चेतना जागृत की है।

यह खुशी की बात है कि परम पूज्य गणिनी प्रमुख आर्यिका शिरोमणी श्री ज्ञानमती माता जी के सत्प्रयास से भगवान महावीर के संदेशों को जन जन तक पहुँचाने का सार्थक प्रयास हो रहा है । विभिन्न संतापों से त्रस्त मानव जाति के लिए यह एक स्तुत्य प्रयास है।

कुण्डलपुर की धरती पर कुण्डलपुर महोत्सव 2004 पर कुण्डलपुर अभिनन्दन ग्रंथ का प्रकाशन एवं विमोचन विश्व शांति के लिए सफल संदेश छोड़ने की दिशा में कामयाब हो इन्हीं शुभकामनाओं के साथ श्री ज्ञान मती माता जी के पावन चरणों में नमोस्तु ।

ताराचन्द जैन
(तारा चन्द जैन)
अध्यक्ष,
झारखण्ड राज्य दिगम्बर जैन धार्मिक न्यास बोर्ड

भजन

तर्ज – जहाँ डाल डाल पर......

महावीर का छब्बिस सौवाँ जन्मजंयती उत्सव आया,
जिनधर्म का ध्वज लहराया-२।।टेक.।।

है पुण्यवान यह भारत भू. जहाँ तीर्थंकर जन्मे हैं,
जिस धरती पर प्रभु महावीर के, चिन्ह अभी मिलते हैं। चिन्ह......
उस कुण्डलपुर की पावन रज नमने का अवसर आया,
जिनधर्म का ध्वज लहराया-२।।१।।

महावीर के संग सिद्धार्थ और, त्रिशला का नाम जुड़ा है,
उन त्रिशलानंदन से हम सबका, गौरव सदा बढ़ा है। गौरव सदा......
जग भर ने अहिंसा का पावन, संदेश वीर से पाया,
जिनधर्म का ध्वज लहराया-२।।२।।

जीवन्त रहेगी युग-युग तक, जिनशासन की ये निशानी,
सन्तों के संग में ज्ञानमती, माँ की पुरुषार्थ कहानी।। माँ की......
जिनकी काया के रोम-रोम में, जिनवर नाम समाया,
जिनधर्म का ध्वज लहराया-२।।३।।

अब पुनः जरूरत है युग को, महावीर का युग बतलाना,
"चंदना" उजड़ते भारत में, फिर से उपवन महकाना। फिर से......
महावीर से पहले ऋषभ महोत्सव, मिलकर सबने मनाया,
जिनधर्म का ध्वज लहराया-२।।४।।

पुनः जीवंत हो गई भगवान महावीर की जन्मभूमि

भारत वर्ष की समस्त दिगम्बर जैन समाज ने सदैव से सम्मेदशिखर, पावापुरी, राजगृही के पास स्थित कुण्डलपुर कों भगवान महावीर की जन्मभूमि के रूप में पूजा है। प्रतिवर्ष अनेकानेक श्रद्धालु इस पुण्यभूमि पर आकर यहाँ की रज से स्वयं को पवित्र करते रहे हैं। भगवान महावीर के 2600वें जन्मकल्याणक महोत्सव के अवसर पर जब पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने इस तीर्थ का विकास करने की भावना संजोयी तब गुरु आज्ञा को शिरोधार्य करके कुण्डलपुर (नालंदा) आने का अवसर बारम्बार प्राप्त हुआ। पूर्व में यहाँ पर मात्र एक छोटा प्राचीन दिगम्बर जैन मंदिर था, जहाँ मात्र दर्शन करने ही यात्री आते थे और जल्दी ही आगे की यात्रा के लिए बढ़ जाते थे।

जन्मभूमि को उसका गौरवमयी अतीत पुनः प्रदान करने के लिए आवश्यक था कि एक भव्य निर्माण यहाँ पर किया जाये। प्राचीन मंदिर के निकट ही प्रयासपूर्वक भूमि क्रय की गई क्योंकि बिहार में छोटी-छोटी जमीनों के टुकड़ों के भी कई हिस्सेदार होते हैं। पुनः पूज्य माताजी एवं संघ के दिसम्बर 2002 में कुण्डलपुर आगमन के पश्चात् नवनिर्माण की श्रृंखला प्रारंभ हुई। मात्र एक माह के अंतराल के बाद ही प्रथम पंचकल्याणक एवं महामस्तकाभिषेक आयोजित करना था, अतः बिहार जैसे राज्य में निर्माण संबंधी सभी आवश्यक व्यवस्थाएँ बनाकर, यथासंभव निर्माणकार्य कराकर काफी भव्यरूप में भारी उपस्थिति के बीच फरवरी 2003 में नवीन तीर्थ का प्रथम पंचकल्याणक निर्विघ्नतापूर्वक सम्पन्न किया गया। इस प्रारंभिक महोत्सव के पूर्व से ही भारत वर्ष की दिगम्बर जैन समाज से प्राप्त समर्थन हमारे लिए दृढ़ संबल बनने लगा था। लोग यही कहते कि पूज्य माताजी ने समय की आवश्यकता के अनुसार संस्कृति संरक्षण का एक महान कार्य अपने हाथ में लिया है, अतः प्राण-प्रण माताजी के इस उद्देश्य की पूर्ति में मुझे आन्तरिक आनन्द की अनुभूति होने लगी। अपनी समस्त शक्ति के साथ एवं जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर, अयोध्या, प्रयाग इत्यादि की काम करने वाली टीम को बिहार बुलाकर निर्माणकार्य द्रुतगति से प्रारंभ किया गया। यद्यपि बिहार राज्य की अव्यवस्था कदम-कदम पर आड़े आती थी परन्तु भगवान की जन्मभूमि का कुछ ऐसा पुण्य प्रताप रहा कि सभी विघ्न स्वयं ही दूर होते गये और नंद्यावर्त महल तीर्थ का सुन्दर निर्माण धीरे-धीरे सभी को दृष्टिगोचर होने लगा। निर्माणकार्य में एक नहीं, हमारे स्टॉफ के कितने ही लोगों ने आधारस्तंभ बनकर जिम्मेदारियाँ संभालीं और निर्माण के कार्य को तीव्रगति प्रदान की। आज सभी लोग आश्चर्य करते हैं कि किस प्रकार इतनी जल्दी इतना आकर्षक तीर्थ बिहार की भूमि पर बनकर तैयार हुआ है। दिल्ली, इलाहाबाद इत्यादि स्थानों से इंजीनियरों को बुलाकर पूज्य माताजी के समक्ष घंटो मीटिंग की जाती, नक्शा फाइनल किया जाता और फिर उसे निर्माण के द्वारा साकार किया जाता। यद्यपि यह सभी बड़ा श्रमसाध्य कार्य था तथापि भगवान महावीर की जन्मभूमि का सुन्दर विकास हो रहा है, ऐसा सोचकर हृदय में सदैव प्रसन्नता ही रहती थी अतः कार्य कभी कठिन नहीं लगता था। जम्बूद्वीप के निर्माण में हमें वर्षों का समय लगा है परन्तु यहाँ बहुत ही शीघ्रता से सारी व्यवस्थाएं बनाकर निर्माण पूरा किया गया। पूज्य माताजी ने तीर्थंकर भगवन्तों की जन्मभूमियों के विकास का जो सुन्दर स्वप्न अपने हृदय में संजोया है, उसमें यथासंभव सहयोगी बनने से जहाँ पुण्य का उपार्जन होता है, वहीं गुरु आज्ञा की सम्पूर्ति से हृदय में अपार संतुष्टि भी होती है।

जन्मभूमि कुण्डलपुर को नवीन स्वरूप प्रदान करने में जिन अनेक लोगों ने रात-दिन एक करके मेरे साथ कंधे से कंधा मिलाकर अपना कर्तव्य निभाया है, उन सबके प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करते हुए मैं पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी के चरणों में विनम्र नमन प्रस्तुत करता हूँ, जिनकी

प्रेरणाएं जिन संस्कृति के संरक्षण में अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्ध हुई हैं एवं मुझे भी उनमें सहयोगी बनने का अवसर प्राप्त हुआ है।

–कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन
(अध्यक्ष–नंद्यावर्त महल, कुण्डलपुर)

रोशन हुई कुण्डलपुर की धरा

यूँ तो प्रत्येक नगर एवं ग्राम में प्रतिदिन शासनपति भगवान् महावीर के नाम की अनुगूँज रहती ही है और कुण्डलपुर के महावीर के अतिशय से विख्यात "चांदनपुर महावीर जी" तीर्थ पर भक्तजन अपनी मनोकामना सिद्धि के लक्ष्य से हजारों दीपक जलाते हैं, सोने-चांदी के छत्र लगाते हैं तथा खूब चढ़ावा चढ़ाते हैं किन्तु किसी का ध्यान भगवान महावीर की वास्तविक जन्मभूमि की ओर नहीं गया कि वहाँ एक दीपक भी रोज जलता है या नहीं? एवं कुण्डलपुर की पवित्र धूलि जगत के लिए कितनी कल्याणकारी है?

मात्र 2600 वर्षों के अन्तराल में ही तीर्थ इस तरह से वीरानियत को प्राप्त हो चुका था कि यदा-कदा दिन में आने वाले यात्री भगवान को नमन कर तुरंत वापस हो लेते थे और सायंकाल श्रीजी की आरती करने वाला भी कोई नहीं होता था और तो और यहाँ की परिस्थितियों का वर्णन तो मानो मन में एक टीस सी उत्पन्न करता है कि जिन वीरप्रभू की मंगल आरती "कुण्डलपुर अवतारी त्रिशलानंद विभो" गा-गाकर लोग भक्तिभाव से उनकी आराधना करते रहे हैं, जिनके निर्वाणकल्याणक पर देवों ने भी असंख्य दीपक जलाकर सम्पूर्ण धरती को और अमावस्या की रात्रि को प्रकाशमान कर दिया हो तथा तभी से दीपावली पर्व मनाने की परम्परा प्रारंभ हुई हो, जहाँ 2600 वर्षों पूर्व सदैव रत्नमय दिव्य आभा जन-जन के जीवन को प्रकाशमान करती रही हो और जिन वीरप्रभू के शासन में हम अपनी आत्मा में ज्ञानज्योति को प्रगट कर उसे प्रकाशमान करने के लिए निरन्तर अग्रसर हो रहे हों, उस पावन भू पर व्याप्त अंधकार! यह जैन समाज की सुप्तता नहीं तो और क्या है?

किन्तु आखिर तो कभी न कभी, कोई न कोई महापुरुष जिनशासन की रक्षा हेतु अग्रसर होता ही है। इसी क्रम में भगवान महावीर के 2600वें जन्मकल्याणक महोत्सव का प्रसंग आया और प्रेरणा मिली जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी की, फिर तो मानो कुण्डलपुर के विकास की स्वर्णिम घड़ियाँ ही आ गईं और सन् 2002 से प्राचीन मंदिर परिसर में 36 फुट उत्तुंग कीर्तिस्तंभ के शिलान्यास के साथ ही विकास के लक्ष्य का प्रारंभीकरण हुआ। पूज्य माताजी के संघ सहित तीर्थ पर मंगल पदार्पण करने के साथ-साथ मानो देवोपुनीत रचना के समान ही यह तीर्थ पुनः अपनी वही आभा, वही दिव्य प्रकाश के साथ प्रकाशमान हो उठा। अब तो शायद ही कोई ऐसा दिन शेष रहता है जब इस तीर्थ पर यात्री न आते हों और भगवान महावीर की मनोज्ञ प्रतिमा के समक्ष दीपक जलाकर मनोकामना सिद्धि की प्रार्थना न करते हों।

पूज्य ज्ञानमती माताजी ने इस ऐतिहासिक निर्माण को कराकर समस्त समाज के ऊपर महान उपकार किया है, जिसके लिए हम सभी उनके प्रति अतिशय कृतज्ञ हैं।

तीर्थंकर प्रभु की चरणरज से पावन यह तीर्थ सर्वदा इस भूतल पर प्रकाशमान होता हुआ सभी के जीवन में ज्ञानज्योति को प्रकाशित करता रहे, यही मंगलकामना है।

–ब्र. विद्युल्लता जी, सोलापुर

"सृजन किया है विध्वंस नहीं परमपूज्य गणिनी ज्ञानमती माताजी ने"

अभिनन्दनीय 105 गणिनी आर्यिका परमपूज्य श्री ज्ञानमती माताजी के आदर्श जीवन से चयनित बिंदु–

1. आपका शरीर भले ही शिथिल और वृद्ध हो चला हो परन्तु वाणी का ओज, चेहरे का तेज और ज्ञान की उत्कर्ष लालिमा गुलाब के फूल की तरह ताजे दिखाई पड़ते हैं।

2. आपने अपनी विवेकशीलता और श्रद्धा के सहारे ही आगम परंपरा और गुरु परंपरा की रक्षा में अपूर्व सफलता अर्जित की है।

3. आपकी चर्या में सादगी, चरित्र में सच्चाई और श्रद्धा में आगमिक दृष्टिकोण पग-पग पर झलकते हैं।

4. आपके अपूर्व साहसी त्याग, धर्म वात्सल्य और सहृदयता ने लाखों लोगों का विश्वास जागृत किया।

5. धर्म के लिए जिंदगी भर संघर्ष करने वालीं, अपने परिवार भर को धर्म में खपाने वालीं, धन को सदा तुच्छ समझने वालीं किन्तु स्वस्थ, शालीन और निर्मल ज्ञान-दर्शन-चारित्र वाली आर्यिका आपसे बढ़कर दूसरी नहीं है।

6. आपकी जिंदगी एक मशाल की तरह है जिससे सारी समाज को रोशनी मिल रही है।

7. लोग कहते हैं माताजी ने क्या किया और क्या नहीं किया? मैं उनसे कहता हूँ, माताजी ने आगम, तीर्थ और संस्कारों का सृजन तो किया है। किन्तु विध्वंस नहीं किया।

8. मैं माताजी की विद्वत्ता उनकी आदर्शवादिता और माँ जिनवाणी की आजीवन सेवा में प्राचीन आचार्यों जैसी अचल निष्ठा के आगे नतशीष हूँ।

–ब्र. विमल जैन, पटना (बिहार)

* * *

भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर है

जैनधर्म के चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर ने आज से 2603 वर्ष पूर्व बिहार प्रान्त की कुण्डलपुर नगरी में जन्म लिया था। शास्त्र पुराणों में वर्णन आता है कि वह नगरी स्वर्ण के समान सुशोभित होती थी, वहाँ सात खण्ड का महल था, जिसमें रत्नों से निर्मित पलंग पर माता त्रिशला ने सोलह स्वप्न देखे थे.......इत्यादि। भगवान महावीर की पूजा, आरती, चालीसा आदि में भी यही पढ़ने में आता है किन्तु जब सुनने में आता है कि कुछेक आधुनिक शोधकर्ता कुण्डलपुर को उनकी जन्मभूमि न मानकर वैशाली को जन्मभूमि मान रहे हैं तो बड़ा आश्चर्य होता है।

जिस स्थान पर भगवान महावीर ने जन्म लिया हो, जहाँ उनकी शैशवावस्था बीती, जहाँ वह वीर, वर्धमान, सन्मति, महावीर इन चार नामों से अलंकृत हुए, जहाँ 30 वर्ष की पूर्ण यौवनावस्था में वैरागी होकर दीक्षा हेतु उद्यत हुए, वह पवित्र धरा पिछले 50 वर्षों से उपेक्षित थी। जिस पर न तो किसी साधु, न विद्वान और न ही समाज के किन्हीं नेताओं का ही ध्यान गया, सभी ने उनका 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव तो राष्ट्रीय स्तर पर पूरे भारत में मना लिया किन्तु वास्तविक जन्मभूमि की ओर किसी का ध्यान नहीं गया। कहा जाता है कि जब-जब धर्म का ह्रास होने लगता है, तब-तब कोई महापुरुष इस धरती पर जन्म लेकर उसका पुनरुद्धार करते हैं, उसी शृंखला में जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी पूज्य गणिनीश्री ज्ञानमती माताजी के चरण राजधानी दिल्ली के इण्डिया गेट से उस ओर बढ़े और देखते ही देखते तीर्थ का स्वरूप ही बदल गया और वहाँ विराजमान गगनचुम्बी जिनमंदिर अपनी धर्मपताका को

फहराते हुए सभी को सत्य, अहिंसा, मानवता, सदाचार, शांति व समृद्धि का संदेश प्रदान करने लगे। आज जैन-जैनेतर सभी यह जान चुके हैं कि पूज्य माताजी ने आगम का आलोढन करके जो बात बताई है कि "भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर है" वह वास्तव में यही है।

मैं लगभग 20-22 वर्षों से पूज्य माताजी के चरण सानिध्य में हूँ, इन वर्षों में मैंने जहाँ उन्हें सदैव आगमानुकूल चर्या, जिनधर्म की सेवा हेतु लघु एवं वृहद् ग्रन्थों का लेखन, स्वाध्याय-चिन्तन-मनन आदि करते देखा है, वहीं सदैव तीर्थ एवं तीर्थंकर जन्मभूमियों के प्रति सजग रहकर उसके विकास की बात करते व करवाते ही देखा है। इनके जीवन का प्रत्येक क्षण इतिहास की स्वर्णिम गाथा है, जिससे आने वाली पीढ़ी को प्रेरणा लेनी चाहिए

भगवान महावीर के श्रीचरणों में शत-शत नमन करते हुए उनकी जन्मभूमि के प्रति अपनी विनम्र विनयांजलि समर्पित करती हूँ।

–ब्र. (कु.) बीना जैन

(संघस्थ–गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी)

* *

चलो कुण्डलपुर चलना है

भगवान महावीर स्वामी का 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव वर्ष पूरे जैन समाज द्वारा विभिन्न कार्यक्रमों के साथ मनाया जा रहा था परन्तु जहाँ उन्होंने जन्म लिया था उस भूमि की ओर किसी का भी ध्यान नहीं गया। जब पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने यह सुना कि कई वर्षों से भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर में मात्र एक छोटे से मंदिर के सिवाय और कुछ नहीं है, तब उन्होंने चिन्तन किया कि भगवान महावीर जन्मकल्याणक वर्ष में जन्मभूमि का विकास अत्यन्त आवश्यक है, ऐसा विचार करते ही उनके मुख से सहसा निकल पड़ा–

"चलो कुण्डलपुर चलना है, वीर को वंदन करना है।
महावीर की जन्मभूमि में, उत्सव करना है।।

और इसी के साथ ही पूज्य माताजी के कदम 20 फरवरी 2002 को राजधानी दिल्ली के इण्डियागेट से कुण्डलपुर की ओर बढ़ चले तथा **"तीरथ विकास क्रम जारी है, अब कुण्डलपुर की बारी है"** जैसे नारों से धरती-अम्बर को गुंजायमान करते हुए पूज्य माताजी 29 दिसम्बर 2002 को कुण्डलपुर पहुँच गईं। उसी दिन भगवान महावीर मंदिर का शिलान्यास हुआ पुनः 7 फरवरी से 12 फरवरी 2003 तक भगवान महावीर की अवगाहना प्रमाण (सात हाथ की) चमत्कारी प्रतिमा का, भगवान ऋषभदेव की 14 फुट उत्तुंग पद्मासन प्रतिमा तथा त्रैकालिक चौबीसी की 72 जिनप्रतिमाओं का पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव विशाल स्तर पर सम्पन्न हुआ। फिर देखते ही देखते तीन जिनमंदिर निर्मित हो गए और उन पर सुन्दर कलात्मक शिखरों का निर्माण भी हो गया। यह सब देखकर ऐसा लगता है कि मानो देवकारीगरों ने ही इतनी शीघ्रता से ये सब कार्य सम्पन्न कर दिए हैं।

कुण्डलपुर के आसपास की ग्रामीण जनता तो यह सब कार्य देखकर अत्यन्त आश्चर्यचकित है। कई लोग तो कह देते हैं कि **"ये सब मंदिर धरती से खुदाई में निकले हैं।"** वास्तव में हमें एक छोटा सा मकान बनवाना होता है तो हम कई दिन तो सोचने में ही निकाल देते हैं पुनः उसका निर्माण होने में वर्षों निकल जाते हैं परन्तु कुण्डलपुर तीर्थ का निर्माण हमारे लिए एक अनुपम उदाहरण है। इस मौके पर मुझे पूज्य आर्यिका श्री चंदनामती माताजी द्वारा रचित भजन की पंक्तियाँ याद आ रही हैं–

श्री ज्ञानमती माताजी को हमने, तीर्थ बनाते देखा,
ये हैं इतिहास प्रणेता-2।।

मुझे इस बात का भी गौरव है कि पूज्य माताजी ने दिल्ली से कुण्डलपुर मंगल विहार में मुझे अपने संघसेवक के रूप में स्वीकार किया। संघपति कहकर माताजी एवं पूरा संघ मुझे जो वात्सल्य प्रदान करता है, वह मैं कभी विस्मृत नहीं कर सकता इनकी प्रेरणा से ही कुण्डलपुर के नूतन मुख्य जिनमंदिर में भगवान महावीर की अवगाहना प्रमाण श्वेत खड्गासन प्रतिमा विराजमान करने का महान सौभाग्य मेरे परिवार को प्राप्त हुआ है। अपने परिवार के कुलगुरु के रूप में सदैव इनकी छत्रछाया पाने की भावना रहती है। जिस प्रकार माताजी के अनुग्रह से मुझे अनेक तीर्थों की यात्रा, उनका जीर्णोद्धार-विकास एवं विशाल प्रतिमाएं विराजमान करने का पुण्य प्राप्त होता रहता है, उसी प्रकार मैं पूज्य माताजी से निवेदन करता हूँ कि मुझे अपने साथ सिद्धशिला तक की यात्रा अवश्य करवा दीजिएगा ताकि संसारसागर से शीघ्र ही पार हो सकूँ।

अन्त में युगपुरुष भगवान महावीर स्वामी को शत-शत नमन एवं इतिहास को पुनर्जीवित करने वाली पूज्य गणिनी माताजी के चरणों में शत-शत नमन।

—महावीर प्रसाद जैन (संघपति)
साउथ एक्स., दिल्ली

* * *

कुण्डलपुर की माटी का, सचमुच कण-कण चन्दन

मैं पिछले कई वर्षों से पूज्य ज्ञानमती माताजी के कार्यकलापों को देख रहा हूँ कि कितनी कर्मठता, कितनी निःस्पृहता और कितनी लगन से वे प्रत्येक कार्यों को मूर्तरूप प्रदान करती हैं। उनका प्रमुख लक्ष्य प्रारंभ से यही रहा है कि तीर्थंकरों की जन्मभूमियों का विकास अवश्य हो।

इसी शृंखला में सर्वप्रथम उन्होंने भगवान शांतिनाथ, कुंथुनाथ, अरहनाथ इन तीन तीर्थंकरों की जन्मभूमि हस्तिनापुर तीर्थ पर जम्बूद्वीप की रचना का निर्माण कराकर उसे भारत की ही नहीं अपितु समस्त विश्व की जनता के सम्मुख लाकर स्थापित कर दिया पुनः उन्होंने भगवान ऋषभदेव, अजितनाथ, अभिनंदननाथ, सुमतिनाथ, अनंतनाथ ऐसे 5 तीर्थंकरों की जन्मभूमि अयोध्या में जाकर वहाँ तीन चौबीसी मंदिर एवं समवसरण मंदिर के निर्माण कराकर उसे **''ऋषभ जन्मभूमि''** के नाम से विश्व के क्षितिज पर पहुँचा दिया। इसी प्रकार क्रम-क्रम से जन्मभूमि विकास की प्रेरणा प्रदान करती हुईं तथा **''तीरथ विकास क्रम जारी है, अब कुण्डलपुर की बारी है''** का नारा देती हुई भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर के विकास की घोषणा कर दी। देखते ही देखते इस युग की अंतिम जन्मभूमि के रूप में कुण्डलपुर का विकास **''नंद्यावर्त महल''** के नाम से सम्पन्न हो गया।

मैं अपने आपको सौभाग्यशाली समझता हूँ कि मुझे भी पूज्य माताजी की प्रेरणा से कुण्डलपुर प्राचीन मंदिर परिसर में भगवान महावीर स्वामी कीर्तिस्तंभ बनाने का पुण्यलाभ प्राप्त हुआ है, यह कीर्तिस्तंभ भगवान महावीर जन्मभूमि की कीर्तिपताका को दशों दिशाओं में फहराता रहे, यही मंगलकामना है तथा भगवान महावीर के जन्म से पावन कुण्डलपुर नगरी के कण-कण को नमन करते हुए मैं वीर प्रभु से यही प्रार्थना करता हूँ कि तीर्थंकर जन्मभूमि विकास की प्रेरणास्रोत पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी स्वस्थ एवं चिरायु होकर हमें इसी प्रकार मार्गदर्शन प्रदान करती रहें ताकि हम अपने मानवजीवन के परम लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल हो सकें।

—कमलचंद जैन, खारीबावली, दिल्ली

* * *

भजन

तर्ज–आने से जिसके आए बहार.................

राजधानी दिल्ली से गूँज उठा नाद,
महावीर युग फिर से आया है याद,
जन-जन में समाए हैं, महावीर प्रभू,
हर मन को भाए हैं, महावीर प्रभू।।टेक.।।
वीर का धर्मशासन, सभी प्राणी को सुखमय बनाता।
कर्मों को जीतकर जिन, बनने का सच्चा मारग बताता।।
हम तुम भी, बन सकते जिन-2
यही संदेश लाए हैं, महावीर प्रभू,
जन-जन में समाए हैं, महावीर प्रभू।।1।।
वीर यह एक प्यारा, शब्द वीरा की शक्ती बताता,
वीर में चौबीसों, तीर्थंकर का अस्तित्व आता।।
भाग्य मिला, सौभाग्य मिला-2,
क्षण खुशियों के आए हैं, महावीर प्रभू,
जन-जन में समाए हैं, महावीर प्रभू।।2।।
आज के युग में भी, साधु ही वीर की प्रतिकृति हैं,
वीर के शासन में, आज की गणिनी ज्ञानमती हैं।।
बतलाया, कुछ समझाया-2,
इनके मन में समाए हैं, महावीर प्रभू,
जन-जन में समाए हैं, महावीर प्रभू।।3।।
"चन्दना" विश्व भर का, शासन भी अहिंसा को जाने,
विश्व की शांती में, यदि सिद्धान्त यह अपना लें।।
जन्मोत्सव, हो जाए सफल-2
यही विश्वास लाए हैं, महावीर प्रभू,
जन-जन में समाए हैं, महावीर प्रभू।।4।।

* * *

कुण्डलपुर तीर्थ अब विश्व के क्षितिज पर

जिस प्रकार जब माँ-बाप अपनी बेटी को विदा करने लगते हैं तब उनकी आँखों में दुःख के आंसू तो होते ही हैं, साथ ही खुशी के अश्रु भी होते हैं। दुःख के अश्रु इसलिए कि जिस बेटी को पाल-पोसकर बड़ा किया उसे अपने से दूर भेजना पड़ता है और खुशी के आंसू इसलिए कि माँ-बाप अपने कर्तव्य का पालन कर चुके होते हैं, इसी क्रम में जब मैंने सुना कि पूज्य गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर जा रही हैं तब पहले तो मेरे मन को बड़ा कष्ट हुआ कि मेरी माताजी हम सबको छोड़कर इतनी दूर जा रही हैं परन्तु दूसरे ही क्षण मन में अत्यन्त प्रसन्नता भी हुई कि अब विश्व को एक और अमूल्य धरोहर तीर्थ के रूप में प्राप्त होने जा रही है क्योंकि यह तो सभी जानते हैं कि पूज्य माताजी के कदम किसी न किसी लक्ष्य को लेकर ही बढ़ते हैं।

सन् 1995 की बात है, जब पूज्य माताजी महाराष्ट्र प्रान्त के मांगीतुंगी तीर्थ के लिए विहार कर रही थीं, उस समय मांगीतुंगी का नाम तक लोग ठीक से नहीं जानते थे परन्तु आज वही तीर्थ दुनिया की दृष्टि में छा गया और तो और वहाँ 108 फुट की भगवान ऋषभदेव की प्रतिमा निर्माण ने तो उसकी प्रसिद्धि में चार-चाँद लगा दिये हैं। इसी क्रम में पूज्य माताजी ने बिहार प्रान्त के कुण्डलपुर का विकास करके वहाँ नंद्यावर्त महल बनवाकर उसे विश्व के क्षितिज पर पहुँचा दिया है। चूँकि नालंदा अन्तर्राष्ट्रीय पर्यटन स्थल माना जाता है, वहाँ देश-विदेश के यात्री आते हैं, अब वे सभी कुण्डलपुर भी आकर भगवान महावीर की जन्मभूमि का दर्शन करके अपने जीवन को धन्य-धन्य समझते हैं।

ऐसी उस पावन-पवित्र जन्मभूमि को मेरा शत-शत बार नमन।

—**प्रेमचंद जैन**, खारीबावली-दिल्ली

* * *

कुण्डलपुर तीर्थ का निर्माण-एक दिव्य स्वप्न

आज से 50-60 वर्ष पहले तक जैनसमाज का प्रत्येक व्यक्ति केवल यही जानता था कि भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर है और शिखरजी की यात्रा के क्रम में भगवान महावीर की प्रथम देशना स्थली राजगिरि, निर्वाणभूमि पावापुरी एवं जन्मभूमि कुण्डलपुर की वंदना करके अपने जीवन को धन्य समझता था परन्तु कुछ वर्षों से जैन समाज के ही कुछ आधुनिक विद्वानों ने पता नहीं किस प्रमाण के आधार पर वैशाली को भगवान महावीर की जन्मभूमि घोषित करने का प्रयास कर दिखाया जबकि वास्तविकता यह है कि वैशाली भगवान महावीर की ननिहाल थी।

वैशाली को भगवान महावीर की जन्मभूमि कहने वाले विद्वानों को कुछ आवश्यक बिन्दुओं पर अवश्य दृष्टिपात करना चाहिए। जैसे—जब भगवान माता के गर्भ में आते हैं उससे छह महीने पूर्व से माता के आंगन में रत्नों की वृष्टि होती है न कि नाना के आंगन में। माता जब सोलह स्वप्न देखती हैं उसके बाद वह उन स्वप्नों का फल अपने पति से पूछती हैं न कि पिता से तथा तीर्थंकर के जन्म लेने के बाद स्वर्ग से सौधर्म इन्द्र आकर तीर्थंकर के माता-पिता की पूजा करता है न कि नाना-नानी की। इत्यादि बातों को शास्त्र के आधार से जान लेने के बाद ही कोई निर्णय लेना चाहिए।

पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी ने भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर के विकास का जो यह बीड़ा उठाया, वह बहुत ही समसामयिक रहा है। कुछ लोग इस तीर्थ के विकास के लिए सरकार

की अपेक्षा कर रहे थे। किन्तु पूज्य माताजी ने सभी को यही समझाया कि "हिन्दुस्तान में जितने भी दिगम्बर जैन तीर्थ हैं वे सभी दिगम्बर जैन समाज के ही पैसे से निर्मित हुए हैं और उसी क्रम में अब भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर का विकास भी जैन समाज ही करेगी।"

वास्तव में हुआ भी यही, देखते ही देखते विशाल जिनमंदिरों का निर्माण हो गया और भक्तगण दर्शन करके अपने पुण्य की सराहना करने लगे, यह सब श्रद्धा-भक्ति की ही महिमा है।

अन्त में भगवान महावीर स्वामी को बार-बारं नमन करते हुए पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के श्रीचरणों में वंदामि वंदामि वंदामि।

—**जिनेन्द्र प्रसाद जैन ठेकेदार**, बंगाली मार्केट-दिल्ली

* * *

"सत्यमेव जयते"

यह अटल सत्य है कि अंत में 'विजय सच्चाई की ही होती है'। भ्रांतियों के बादल कितने भी घने क्यों न हो, सत्य का सूर्य चमकते हुए अपनी आभा से सम्पूर्ण अंधकार को नष्ट कर देता है। इसके एक नहीं अनेकों उदाहरण हमें शास्त्र-पुराणों में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से दिखायी पड़ते हैं, जिसका जीता जागता उदाहरण 'भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार)' में मात्र डेढ़ वर्ष में हुए नवनिर्माण एवं कुण्डलपुर महोत्सव आदि कार्यक्रमों की निर्विघ्न सफलता है, जिसने इस सर्वकालिक सिद्धान्त को और भी दृढ़ता से स्थापित कर दिया है।

आज समस्त बिहार प्रदेश में ही नहीं, बल्कि सम्पूर्ण भारत में यह चर्चा है कि इतना सुव्यवस्थित कार्य, इतने भव्य एवं अनुकरणीय तीर्थ का निर्माण इतने अल्प समय में "न भूतो न भविष्यति" जैसा है। प्राचीन काल से मान्य भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर के विकास का संकल्प पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के मन में 'भगवान महावीर 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव वर्ष' में विशेष रूप से प्रभावी हो उठा, शायद पूज्य माताजी को ये कदापि स्वीकार नहीं था कि भगवान महावीर के जन्म महोत्सव को पूरे वर्ष मनाया जाये और तीर्थंकर महावीर की अपनी परम पावन जन्मभूमि को उपेक्षित छोड़ दिया जाये और इसीलिए उन्होंने जन्मभूमि कुण्डलपुर को उसका वैभव लौटाने की दृढ़ प्रतिज्ञा कर ली, उनकी यह प्रतिज्ञा आज साकार रूप में जन-जन के लिए श्रद्धा का केन्द्र बनी हुई है क्योंकि दृढ़संकल्प की धनी पूज्य माताजी के लिए कोई भी कार्य कठिन नहीं है। सच्चे मन से भायी जाने वाली भावना फलीभूत होती ही है। फिर जब वह तीर्थंकर भगवन्तों की जन्मभूमियों का उद्धार करने की भावना हो, तो उसे साकार होना ही था।

मेरा तो सभी से ये कहना है कि जो लोग इस विषय में अनर्गल प्रलाप करते हैं, वह एक बार स्वयं आकर इस तीर्थ के दर्शन कर लें, तो जिस प्रकार समवसरण में मानस्तंभ को देखकर मिथ्यात्वियों का मान गलन हो जाता है, उसी प्रकार भगवान महावीर की अतिशयकारी प्रतिमा के दर्शन कर उनकी सभी शंकाओं का समाधान हो जायेगा और वह भी सही दिशा प्राप्त कर अपने जीवन का उद्धार कर सकेंगे।

यह तीर्थ सदैव सत्य, अहिंसा एवं भगवान महावीर की वाणी का संदेश जन-जन में फैलाता रहे, यही शुभेच्छा है।

—**कैलाशचंद जैन**-करोलबाग, दिल्ली

* * *

युगसृष्टा की बेटी का सारे विश्व को अमूल्य उपहार

ज्ञानमती माताजी इस युग में एक ऐसा अवतार हैं जिन्हें देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे इन्हें साक्षात् प्रभु महावीर ने ही धर्म की बेटी बनाकर इस धरा पर धर्म के संरक्षण, तीर्थों के विकास और श्रुत के संवर्धन के लिए भेजा हो। माताजी के चेहरे से निकलती प्रकाशरूप किरणों का प्रभाव या उनके पवित्र चरणों का किसी भी क्षेत्र या तीर्थ पर आगमन का प्रभाव किसी भी व्यक्ति विशेष या स्थान विशेष पर ऐसा पड़ता है कि वहाँ का पूरा दृश्य ही बदल जाता है, वो चाहे प्राकृतिक हो या सामाजिक, पूर्ण अनुकूलता की लहर क्षेत्र-विशेष और व्यक्ति के मन-मस्तिष्क पर दौड़ जाती है।

ज्ञानमती माताजी ने आवश्यक तीर्थों के निर्माण में, तीर्थोद्धार में अपनी शक्ति को लगाकर संपूर्ण समाज पर बड़ा उपकार किया है। उनका यह अमूल्य योगदान सदियों तक याद किया जायेगा। धर्म और तीर्थ के संरक्षण की दिशा में ही भगवान महावीर 2600वें जन्मकल्याणक महोत्सव वर्ष में माताजी की दृष्टि भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर की ओर गई और उनके हृदय में एक पीड़ा ने जन्म लिया कि जिस प्रभु के शासन में हम अपना जीवनयापन कर रहे हैं और जिस प्रभु की जयंती सारे देश में गली-गली और घर-घर में गाजे-बाजे के साथ उल्लासपूर्वक मनाई जाती है, मेरे उसी वीर प्रभु की साक्षात् जन्मभूमि कुण्डलपुर की ही कहानी इतनी वीरानियत दर्शा रही है।

बस माताजी का लक्ष्य कुण्डलपुर विकास की तरफ स्थिर हुआ और उनके कदम ठीक इसी दिशा में चल पड़े। देखते ही देखते वही वीरप्रभु की जन्मभूमि आज देश और विदेश में, जन-जन में उनके ही द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों को बताकर सभी जीवों के लिए कल्याणक का मार्ग प्रशस्त कर रही है। इसी अमूल्य और अद्वितीय विकास के समापन अवसर पर जो अभिनंदन ग्रंथ प्रकाशित किया जा रहा है, उसके लिए मेरी बहुत शुभकामनाएं हैं।

–रिषभदास जैन
(अध्यक्ष-दि. जैन समाज वाराणसी-उ.प्र.)

* * *

विनयांजलि

पूर्वजों के समय से भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर की चर्चा सुनता आ रहा हूँ। हमारे परिवार के बुजुर्गों ने इस तीर्थ के विकास हेतु भरसक प्रयत्न किये थे। मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि परमपूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी ने भगवान महावीर 2600वें जन्मजयंती महोत्सव वर्ष में इस तीर्थ के विकास की प्रेरणा देकर और व्यक्तिगत रुचि लेकर इस तीर्थ के जीर्णोद्धार एवं विकास के कार्य को सम्पन्न कराया। नवविकसित नंद्यावर्त महल परिसर के लोकार्पण के अवसर पर प्रकाशित "कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ" के प्रकाशन हेतु मैं भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर दि. जैन समिति के सभी पदाधिकारियों को हार्दिक बधाई देता हूँ तथा तीर्थ विकास की प्रेरिका गणिनी ज्ञानमती माताजी के चरणों में वंदना करता हूँ।

मेरा माताजी एवे उनके संघ के सभी सदस्यों से आग्रहपूर्ण निवेदन है कि वे तीर्थ विकास के इस क्रम में ऋषभ निर्वाणभूमि अष्टापद कैलाशपर्वत के विकास हेतु भी भक्तों को प्रेरणा दे, जिससे वहाँ चल रहे विकास कार्य और गति से सम्पन्न हो सके।

–देवकुमार सिंह कासलीवाल, इंदौर
(संरक्षक-भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी)

* * *

विनयांजलि

पूज्य माताजी के श्रीचरणों में सादर समर्पित–

आत्मज्ञानं स्वयंज्ञानं ज्ञानात् अन्यत् करोति किं

जिनका नाम ही ज्ञान एवं मती हो, जो स्वयं ज्ञान से आच्छादित हों, ज्ञान से मंडित हों, उस निकट-भव्यात्मा को शत्-शत् वंदन।

हस्तिनापुर से उद्‌गमित यह गंगा, प्रयागराज-इलाहाबाद में संगमित हुई एवं कुण्डलपुर में सागरपने को प्राप्त हुई।

भवसागर का किनारा प्राप्त करना हो तो आइये इस गंगा में स्नान करिये एवं अपने सारे कर्ममल को धो डालिये।

कुण्डलपुर महोत्सव की सफलता के लिए मेरी हार्दिक शुभकामनाएं।

श्रद्धावनत्

–अशोक बड़जात्या, इंदौर

(राष्ट्रीय अध्यक्ष-दि. जैन महासमिति)

* * *

विनयांजलि

तीर्थ हमारी सांस्कृतिक धरोहर है और प्रत्येक श्रावक का कर्त्तव्य है कि इनके संरक्षण और विकास हेतु सतत् सचेष्ट रहें। परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से भारत की समस्त दि. जैन समाज विशेषतः दि. जैन त्रिलोक शोध संस्थान जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर से संबंधित श्रावकों ने भगवान महावीर 2600वें जन्मजयंती महोत्सव वर्ष में परम्परा मान्य एवं आगम सम्मत भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर के विकास का संकल्प किया था। मुझे इस बात की प्रसन्नता एवं गौरव की अनुभूति हो रही है कि लगभग 18-20 माह की अल्पावधि में इस तीर्थ पर नंद्यावर्त महल परिसर के नाम से चार भव्य जिनालयों के साथ एक नंद्यावर्त महल की विशाल प्रतिकृति एवं यात्रियों के आवास आदि की सुविधाओं का विकास किया गया है। जिस कुशलता के साथ इस तीर्थ का विकास एवं संरक्षण किया गया है, वह अनुकरणीय है। मैं तीर्थ विकास की प्रेरणास्रोत पूज्य ज्ञानमती माताजी एवं संघ की वंदना करते हुए तीर्थ विकास हेतु समर्पित कर्मयोगी ब्र.रवीन्द्र कुमार जैन एवं उनकी टीम को बधाई देता हूँ। हमें आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि यह तीर्थ निरंतर वृद्धिंगत होता हुआ भगवान महावीर के सिद्धांतों का दिग्दिगंत में प्रसार करता रहेगा एवं सम्मेदशिखर, राजगृही, पावापुरी, गुणावां जी आदि तीर्थों की यात्रा करने वाले यात्री सदैव की भांति इस तीर्थ पर जाकर भगवान महावीर जन्मभूमि की रज को अपने मस्तक पर लगाकर स्वयं को कृतकृत्य समझते रहेंगे।

–प्रदीप कुमार सिंह कासलीवाल, इंदौर

(राष्ट्रीय अध्यक्ष–दि. जैन सोशल ग्रुप फेडरेशन एवं
दि. जैन महासमिति ट्रस्ट)

कुण्डलपुर आकर मैं अपने को सौभाग्यशाली मानता हूँ

(पूर्व रेलमंत्री श्री नितीश कुमार का वक्तव्य अंश)

मेरे लिए इससे अधिक गौरवान्वित होने की तो कोई बात ही नहीं है। हम सब लोग जो इस नालंदा की मिट्टी से वास्ता रखते हैं, उन सबके लिए यह गौरव की बात होगी। अब तो आपने यहाँ इतना बड़ा आयोजन कर दिया, आप इतने भव्य मंदिर का निर्माण कर रहे हैं, देश-विदेश के लोग यहाँ माथा टेककर आशीर्वाद लेने के लिए आयेंगे, पुण्य कमाने के लिए आयेंगे तो फिर सरकार भी कुछ ऐसा कर दे जिससे उसका कुछ खर्च भी न हो और जैनसमाज के लोगों को प्रसन्नता भी हो तो इसमें तो हम लोगों का कुछ लग भी नहीं रहा है ऊपर से हमारा गौरव भी बढ़ रहा है। मैं यहाँ पधारे हुए आप सब लोगों का इस धरती पर, इस धरती से वास्ता रखने के कारण अभिनंदन करता हूँ, स्वागत करता हूँ। यहाँ के लोग हर प्रकार का सहयोग करेंगे क्योंकि आपने जिस चीज को प्रतिष्ठित करने की कोशिश की है, ऐसी प्रतिष्ठा कोई अगर चाहे जितना भी खर्च कर ले, चाहे कितना भी परिश्रम कर ले, यह प्रतिष्ठा किसी को प्राप्त नहीं हो सकती।

बार-बार सब यहाँ इकट्ठा होंगे, धर्मसमागम यहाँ लगेगा और जिस गति से निर्माण कार्य चल रहा है उसके अनुसार तो शीघ्र ही मंदिर बनकर तैयार हो जायेगा और तब भी हम सब लोग यहाँ उपस्थित होकर जरूर आशीर्वाद लेना चाहेंगे।

जब मैं यहाँ आ रहा था तो "क्लीन स्लेट" वाली मेरी मानसिकता थी, ऐसी स्लेट जिस पर कुछ भी न लिखा हो, इसलिए रास्ते में मैं इस क्षेत्र के विधायक-श्री श्रवण कुमार जी से पूछ रहा था कि जब इतना बड़ा आयोजन हो रहा है तो हम लोगों से उनकी क्या अपेक्षा है? आपस में बात करके हमने सोचा है कि 2-3 साल पहले हमने जो पास के दीपनगर को "हाल्ट स्टेशन" की मान्यता दिलाई है, उसके साथ कुण्डलपुर को राज्यसरकार से परामर्श करके जोड़ दिया जाये।

आप जब इतना बड़ा काम कर रहे हैं तो हाल्ट स्टेशन से काम नहीं चलेगा, हमें मालूम है। तो हमने यह भी कहा है कि उसको पूर्ण स्टेशन का दर्जा दिया जाये ताकि आपको आने में कोई असुविधा न हो। पावापुरी की भांति ही इस स्टेशन का विकास करने की हमारी पूरी कोशिश होगी।

आज तो मैं आपका स्वागत करने आया हूँ। जब आप कुण्डलपुर के लिए इतना कुछ कर रहे हैं तो हमारा भी कुछ दायित्व बनता है कि हम भी कुण्डलपुर का प्रचार-प्रसार करें। आप सबके माध्यम से जब काम होगा तो इसका नाम होगा, लोग यहाँ आएंगे और कितने लोग इस तीर्थस्थान के इर्द-गिर्द अपने आप बगैर किसी श्रम के, बगैर किसी मेहनत के रोजगार पाएंगे कई लोग इस काम में लग जायेंगे। अपने देश में अगर कोई सबसे बड़ी समस्या है तो वह है बेरोजगारी की। तो इस प्रकार से यह तीर्थ केन्द्र के रूप में उभरेगा तो कई लोगों को उसके विस्तृत होने का प्रसाद मिलता रहेगा और उसी में उनके जीवन की नैया आगे बढ़ती जायेगी। आज के इस शुभ अवसर पर मैं आप सबके प्रति अपनी श्रद्धा निवेदित करता हूँ और एक बार पुनः जितने भी यहाँ पर पधारे हैं उन नर-नारी, बाल, वृद्ध, युवाओं का मैं हृदय से स्वागत करता हूँ और इस कार्य में हम सब लोगों का सहयोग अपने ढंग से जो भी संभव होगा वह हम करते जायेंगे।

दिनाँक—10 फरवरी 2003

तुम पद पदवी जहँ धरो, तहँ सुर कमल रचाहिं

"देवाधिदेव तीर्थंकर के पावन चरण जहाँ-जहाँ पड़ते हैं, वहाँ-वहाँ भक्तिविभोर होकर देवगण स्वर्ण कमल की रचना करते हैं।" आचार्य मानतुंगाचार्य द्वारा रचित "भक्तामर" की इन पंक्तियों पर आधारित मेरे पूज्य पिता सुबोध कुमार जी द्वारा बनाया एक सुन्दर चित्र हमारे घर में है, उसको देखकर कभी-कभी विचार आता है कि कितने भाग्यशाली होंगे वे देव, जिन्होंने ऐसी सुन्दर रचना की होगी। वह भूमि कितनी उर्वरा एवं पवित्र होगी, जहाँ स्वर्ण कमल खिले होंगे और उन लोगों का क्या कहना, जिन्होंने उस युग में जन्म लेकर तीर्थंकर भगवान की स्वर्णिम कांतिमय रश्मियों के सानिध्य का सुख पाया होगा। वह चतुर्थकाल के पूर्व का समय था, पृथ्वी धन्य-धान्य से परिपूर्ण थी।

पर आज के कलियुग में भी यह संभव है, हम नहीं जानते थे। कुण्डलपुर की पावन धरा वर्षों से अविकसित/उपेक्षित पड़ी थी। कुछ जानकर भी अनजान थे और कुछं सचमुच अनजान, जो चुपचाप आते, वंदना करते और चले जाते थे। तभी अचेतन शून्य से एक मधुर का सशक्त स्वर गूँजा। "चलो कुण्डलपुर चलना है" यह नारा दिया पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने और देश की राजधानी दिल्ली से वे चल पड़ीं, अपने लक्ष्य की ओर कुण्डलपुर। जहाँ कभी वीर प्रभु के जन्म पर नंद्यावर्त महल में लोरियाँ गाई गई थीं, धन कुबेर द्वारा महीनों तक अनमोल रत्नों की वर्षा की गई थी।

"कुण्डलपुर" तो मानो पूज्य माताजी के चरण स्पर्श से निहाल हो गया। वर्षों से सुप्त भूमि जीवन्त हो उठी। प्रकृति झूम उठी, मानों एक संग हजारों स्वर्ण कमल खिल उठे हों। जब तक जनसैलाब भागता-भागता कुण्डलपुर पहुँच पाता, तब तक पूरा प्रदेश स्वर्णिम रश्मियों से ओत-प्रोत था, जो अनेकों विशाल नवनिर्मित जिनचैत्यों के उत्तुंग शिखर कलशों के स्पर्श से आलोकित थे। इतनी जल्दी इतना सब देखकर जन समुदाय आश्चर्यचकित एवं आल्हादित था। वास्तव में यह एक अजूबा ही था, जो समय-हीन क्षणों में घटित हो गया था। यह संभव नहीं कि लोग इसे जल्दी भूल पायेंगे।

"कमल हमें बहुत अच्छे लगते हैं" पूज्य माताजी ने वात्सल्यवश हमसे कहा था। शायद यही कारण है कि कुण्डलपुर के अतिरिक्त पावापुरी, राजगृह, गुणावां जी, शिखर जी, जहाँ-जहाँ पूज्य माताजी के चरण पड़े, वहाँ कमल ही कमल खिले। इन कमलों पर विराजित प्रभु सदियों तक जन-जन के बीच अपनी रश्मियाँ बिखेरते रहेंगे और लोक कल्याण के लिए पूज्य माताजी के उपदेशों की याद दिलाते रहेंगे। शायद स्वर्ण कमल की रचना भी ऐसी ही प्रेरणादायक रही होगी, जिन्हें देखकर सौधर्म इन्द्र नहीं अघाते होंगे।

अब हमें कोई ग्लानि नहीं कि हमारा जन्म चतुर्थ काल में नहीं हुआ, जब वीर प्रभु ने जन्म लिया था।। देवों की रचना नहीं देखी तो क्या हुआ, अब मन में आत्म संतोष के भाव हैं। हमने तीर्थंकर वीरप्रभू की जन्मभूमि में भगवान को जन्म लेते हुए देखा है, इन्द्रों की तरह शुद्ध केशर, पवित्र चंदन और दुग्ध से उनका कलशाभिषेक किया है, पालने में बैठा कर भगवान को निहारते हुए सोहर गाया है। यह सब असीम आनंद के क्षण जो पूज्य माताजी के सानिध्य में हमें प्राप्त हुए हैं, ये देवों द्वारा स्वर्ण कमलों की रचना कर प्राप्त आनन्द से कहीं अधिक पुण्यदायक, अतुलनीय एवं देवदुर्लभ हैं।

अंत में भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर को बारम्बार प्रणाम करते हुए परमोपकारी पूज्य ज्ञानमती माताजी को शत-शत नमन।

–अजय कुमार जैन, आरा

तीर्थंकरों की जन्मभूमि को बदलने का अधिकार किसी को नहीं है

दिगम्बर जैन समाज का सौभाग्य रहा कि भगवान महावीर की जन्मभूमि श्री क्षेत्र कुण्डलपुर (नालंदा) नंद्यावर्त महल का विकास करने का संकल्प एवं प्रेरणा परमपूज्य तपोनिधि, प्रमुख गणिनी आर्यिका ज्ञानमती माताजी के मन में, ध्यान में आया और आज बीस महीने में इस क्षेत्र का सर्वांगीण विकास कार्य सम्पन्न हुआ है। तीर्थक्षेत्र विकास की श्रृंखला में पाँच सौ साल के इतिहास में ऐसा उदाहरण नहीं है।

कुण्डलपुर तीर्थ विकास का क्या कारण हुआ?

जब भारत देश के कुछ श्रेष्ठी एवं राजकीय नेताओं ने भगवान महावीर की जन्मभूमि को बदलने का विचार किया तब माताजी ने उन लोगों से चर्चा करके समझाने की कोशिश की। तीर्थंकरों की जन्मभूमि या निर्वाणभूमि को बदलने का अधिकार आपको नहीं है, ऐसा माताजी ने निश्चयपूर्वक कहा।

तिलोयपण्णत्ति, धवला, उत्तरपुराण आदि प्राचीन ग्रंथों में कुण्डलपुर जो नालंदा (बिहार) के पास है, यही भगवान महावीर की जन्मभूमि है। सैकड़ों सालों से लोग इसी कुण्डलपुर के दर्शनार्थ आते रहे हैं और अभी भी आते हैं। जिन महानुभावों ने वैशाली को जन्मभूमि कहा है, उन्हें यह जानना आवश्यक है कि वह भगवान महावीर की ननिहाल थी । राजा चेटक की सबसे बड़ी सुपुत्री त्रिशला देवी कुण्डलपुर के राजा सिद्धार्थ की धर्मपत्नी थी उन रानी त्रिशलादेवी की कोख से भगवान महावीर का जन्म हुआ था।

कुण्डलपुर विकास के लिए जमीन खरीदने के लिए कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र जैन, अनिल कुमार जी कागजी-दिल्ली, कैलाशचंद जैन करोलबाग-दिल्ली एवं मैं (डॉ. पन्नालाल पापड़ीवाल, पैठण) आकर यहाँ प्राचीन जैन मंदिर में पाँच दिन ठहरकर यह जमीन 2 एकड़ खरीदी थी। आज यहाँ पर नंद्यावर्त महल, भगवान महावीर का 108 फीट उत्तुंग जिनमंदिर, भगवान ऋषभदेव का जिनमंदिर, नवग्रह शान्ति जिनमंदिर तथा त्रिकाल चौबीसी मंदिर एवं नंद्यावर्त महल का निर्माण कार्य सम्पन्न हुआ है। इसी के साथ त्यागी भवन तथा यात्रियों के लिए बड़ी-बड़ी धर्मशालाएँ निर्माण की गई हैं। 2 साल पहले कोई भी यात्री कुण्डलपुर में नहीं ठहरता था, आज यहाँ यात्रियों का ताँता लगा हुआ है। हर रोज कम से कम 200 से 400 यात्री दर्शनार्थ एवं ठहरने के लिए आते हैं। परमपूज्य गणिनी ज्ञानमती माताजी, परमपूज्य प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी, परमपूज्य क्षुल्लकरत्न श्री मोतीसागर जी महाराज के मंगल सानिध्य में अभिषेक, पूजा, विधान आदि धार्मिक कार्य बड़ी धूमधाम से मनाए जा रहे हैं। सभी कार्य को संपन्न कराने के लिए श्रावक शिरोमणि कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र जैन रात दिन काम कर रहे हैं। रविन्द्र जी ने 2601/-रु. की दानराशि से इस क्षेत्र का प्रचंड विकास किया है। यह परमपूज्य ज्ञानमती माताजी का संघ अभिनंदन, प्रशंसा तथा धन्यवाद का पात्र होते हुए सभी के लिए वंदनीय है।

पूज्य माताजी ने भगवान शांतिनाथ, कुंथुनाथ, अरहनाथ की जन्मभूमि हस्तिनापुर का विकास अद्वितीय रचना जैन भूगोल जम्बूद्वीप को लेकर किया है। इसके पश्चात् पाँच भगवन्तों की शाश्वत जन्मभूमि अयोध्या का विकास माताजी ने किया। श्री सिद्धक्षेत्र मांगीतुंगी में माताजी ने ससंघ विराजमान होकर सन् 1996 में पंचकल्याणक सम्पन्न कराया। मांगीतुंगी में चातुर्मास के अंत में भगवान ऋषभदेव की 108 फीट विशालकाय दिगम्बर जैन मूर्ति निर्माण की प्रेरणा माताजी ने दी थी और आज यह मूर्ति निर्माण कार्य मांगीतुंगी में अत्यंत द्रुतगति से चल रहा है। 1700 फीट ऊँचे मांगीतुंगी पर्वत पर ऊपर जाकर 20 हजार ट्रक पत्थर निकाला गया है। कई अनुभवी इंजीनियर और जिवोलॉजीस्ट तथा शिल्पी के मार्गदर्शन में कार्य चल रहा है। पूज्य माताजी ने प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की तपोभूमि प्रयाग-इलाहाबाद का अत्यंत कम समय में बहुत सुंदर सर्वांगीण विकास किया है और अब श्री कुण्डलपुर तीर्थ विकास होने के पश्चात् पूज्य माताजी संघ का विहार बनारस के लिए होने जा रहा है। कुण्डलपुर विकास में पूज्य माताजी ने राजगृही में श्रीमान

अनिल कुमार कागजी जैन, प्रीतविहार-दिल्ली की ओर से भगवान मुनिसुव्रतनाथ का जिनमंदिर, भगवान मुनिसुव्रतनाथ की 22 फुट खड्गासन प्रतिमा विराजमान की है।

श्री सिद्धक्षेत्र पावापुरी में पद्म सरोवर के पास भगवान महावीर की खड्गासन 11 फुट की प्रतिमा एवं जिनमंदिर श्रीमान विजय कुमार जैन, दरियागंज-दिल्ली की ओर से किया गया है और अत्यन्त हर्ष की बात है कि पूज्य माताजी ने सम्मेदशिखर में बीस पंथी कोठी के सामने छोटा मंदिर बनवाकर उसमें भगवान ऋषभदेव की ग्यारह फुट पद्मासन प्रतिमा विराजमान कराने की प्रेरणा प्रदान की, इस महान कार्य को सम्पन्न करने का सौभाग्य मुझे एवं मेरे सुपुत्र संजय, विजय को प्राप्त हुआ है।

अंत में भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर के प्रति अपनी विनम्र विनयांजलि समर्पित करते हुए पूज्य माताजी के चरणों में शत-शत नमन।

–डॉ. पन्नालाल बालचंद पापड़ीवाल, पैठण (महा.)
(अध्यक्ष–महाराष्ट्र प्रान्तीय दि. जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी)

* * *

हे माँ तेरे उपकारों का............

प्रभु महावीर की जन्मभूमि, कुण्डलपुर थी वीरान पड़ी।
छब्बिस सौवें जन्मोत्सव में, माँ ज्ञानमती की दृष्टि पड़ी।।
हो गया चमन कुण्डलपुर में, है दृश्य स्वर्ग जैसा सुन्दर।
जिनमंदिर-नंद्यावर्त महल, ये सब निर्माण बहुत मनहर।।1।।
माता तेरे उपकारों का, बदला न चुकाया जा सकता।
गुरु एवं माता दोनों का, वात्सल्य सरस तुझमें बहता।।
है जनम जनम का पुण्य मेरा, जो मुझे मिली तेरी ममता।
मैंने नहिं देखी अन्य किसी में, तुझ जैसी अनुपम क्षमता।।2।।
बालक जैसी निश्छलता है, उत्साह युवा सम सदा तेरा।
अनुभव में वृद्ध तथा तीनों में, सदा खिला रहता चेहरा।।
जीवन का प्रतिफल है स्वर्णिम, हर कदम ऐतिहासिक तेरा।
तुझ जैसी अनुपम माता को, पा धन्य हुआ जीवन मेरा।।3।।
तेरी काया का रोम-रोम, पावन है तप की महिमा से।
तेरी छाया मनभावन है, वात्सल्यमयी गुणगरिमा से।।
हे माँ! मेरी यह अभिलाषा है, सदा तेरा आशीष मिले।
विश्वास मुझे है तब मेरे, जीवन की सच्ची कली खिले।।4।।
मैं दीपक यदि माँ तेरे प्रति, छोटा चिराग भी बन पाऊँ।
तो समझूँगा सौभाग्य स्वयं का, जीवन सफल बना पाऊँ।।
मन वचन काय से सेवा में, अर्पण है माँ सर्वस्व मेरा।
आदेश मिले सपने में भी तो, पालन का है भाव मेरा।।5।।

–दीपक जैन, वाराणसी (उ.प्र.)

* * *

“भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर रत्नगर्भा एवं चमत्कारिक भूमि है”

“या कुण्डलपुरी पूज्या, मंगलं कुरुताद् भुवि, जन्मभूमिः प्रसिद्धास्ति महावीरस्य संप्रति।
राजधानीह सिद्धार्थ, भूपतेः साधुभिर्नुता, नंद्यावर्तं च प्रासादं, रत्नवृष्ट्या सुमंगलम्।।”

उपर्युक्त पंक्तियों में पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने **‘तीर्थंकर जन्मभूमि वंदना’** में भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर के लिए लिखा है कि यह कुण्डलपुरी पूज्य है, संसार में मंगलकारी है, महावीर की जन्मभूमि के रूप में प्रसिद्ध है। राजा सिद्धार्थ की राजधानी पवित्र है, नंद्यावर्त महल मंगलकारी है जहाँ पर 15 महीनों तक लगातार रत्नों की वृष्टि हुई है।

उपर्युक्त पंक्तियों में ऐसी रत्नगर्भा भूमि पर भगवान महावीर का जन्म हुआ। जिन भगवान महावीर के शासन में हम और आप रह रहे हैं, उनकी जन्मभूमि विकसित हो, यह बहुत ही आवश्यक है। तीर्थोद्धारिका पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की पावन प्रेरणा से उन्हीं के सानिध्य में तीर्थ का विकास कार्य हुआ और सचमुच इस भूमि का चमत्कार ही कहना पड़ेगा जो कि इतने अल्प समय में–मात्र डेढ़ वर्ष में इतने विशाल-विशाल मंदिरों का निर्माण, कलात्मक शिखरों का निर्माण, नंद्यावर्त महल आदि अनेक निर्माण कार्य हुए हैं।

पूज्य माताजी के पास रहकर मैंने देखा कि किस तरह से कितनी द्रुत गति से निर्माण कार्य चला। माताजी का तीव्र गति से चिन्तन चला। माताजी प्रेरणा देती गईं और यह प्रथम तीर्थ है कि पूज्य माताजी की आँखों के सामने पूरा निर्माण कार्य हुआ। माताजी अक्सर अपने प्रवचनों में बताया करती हैं कि इसी भूमि पर नंद्यावर्त महल में पालने में झूलते हुए जिनबालक महावीर को देखकर चारण ऋद्धिधारी मुनियों की शंका का समाधान हो गया था और उन्होंने भगवान महावीर का ‘सन्मति’ नाम रखा था।माताजी कहती हैं यहाँ आने के बाद मेरी भी अनेक शंकाओं के समाधान सहज ही हो गए।

यह देखा जाता है कि अच्छे कार्यों में विघ्न अवश्य आते हैं और कुछ लोग ईर्ष्यावश भी यद्वा-तद्वा कहते रहते हैं लेकिन पूज्य माताजी का कहना है कि हमें तो अपना कार्य करते रहना चाहिए, विघ्न बाधा की परवाह नहीं करनी चाहिए। **“साँच को आँच नहीं”** जो सत्य होता है, विजय हमेशा उसकी ही होती है। भले ही देर क्यों न हो। सत्य कभी छिपकर नहीं रहता, वह हमेशा ऊपर रहता है। **‘सत्यमेव जयते।’**

आज जैन समाज की 99 प्रतिशत जनता की श्रद्धा का केन्द्र महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर है। आज जो कुण्डलपुर को भगवान महावीर की जन्मभूमि नहीं मानते हैं, वे या तो अज्ञानतावश नहीं मानते या फिर ईर्ष्यावश नहीं मानते। इसमें कोई संदेह नहीं है। पूज्य चंदनामती माताजी ने एक भजन में बहुत सुन्दर शब्द संजोए हैं–

मत छानो माँ का दूध, बनो मजबूत, अटल श्रद्धानी,
ये कहती माँ जिनवाणी........

अपने पितु की पहचान तुम्हें।
करवाती है निज मात तुम्हें।
पहचान पड़ोसी से न पिता की मानी,
यह कहती माँ जिनवाणी।

जिस प्रकार जब बच्चा अपनी माँ से पिता के बारे में पूछता है तो माँ जिसकी ओर उँगली दिखा

देती है, बच्चा उसी को पिता स्वीकार करता है, वह पड़ोसी से अपने पिता की पहचान नहीं करवाता, वैसे ही हमें भी अपनी जिनवाणी माता के अलावा किसी की बात का विश्वास नहीं करना चाहिए अतः पुराणों में, प्राचीन ग्रंथों में जो लिखा है कि कुण्डलपुर भगवान महावीर की जन्मभूमि है उसे ही मानना चाहिए। जिनवाणी माता पर श्रद्धान करने वाले ही सम्यग्दृष्टि हैं।

'वाग्देवी' पदवी से अलंकृत ज्ञानमती माताजी के मुख से निकला वचन सत्य होता है और जो भी माताजी सोचती हैं वह अवश्य पूरा होता है। माताजी केवल भगवान महावीर की जन्मभूमि का विकास ही नहीं करवा रही हैं अपितु समस्त भगवन्तों की जन्मभूमियाँ विकसित हों इसके लिए समाज को प्रेरणा देकर एवं जन्मभूमि विकास समिति की स्थापना कराके माताजी ने एक महान कार्य किया है।

मैं अपने को बहुत ही भाग्यशाली समझती हूँ कि ऐसी जगत्पूज्य, युग की प्रथम बालसती, सरस्वती की प्रतिमूर्ति, वात्सल्यमयी माताजी के परिवार में मेरा जन्म हुआ और उससे भी ज्यादा अंतरंग खुशी है कि उनकी शिष्या बनने का मुझे सुअवसर मिला, ये सब मेरे जन्म-जन्म के पुण्य का फल ही मुझे प्राप्त हुआ है। अनेक साधुओं के मुख से, अनेक विद्वानों के मुख से एवं अनेक भक्तों के मुख से मैंने सुना है कि ज्ञानमती माताजी ने एक महिला होकर जो सर्वतोमुखी कार्य किए हैं, अगर ये पुरुष होतीं तो न जाने और क्या कर डालतीं?

डेढ़-दो वर्षों में कुण्डलपुर में रहकर मैंने देखा कि शिखर जी जाने वाले प्रत्येक यात्री कुण्डलपुर अवश्य आते हैं, क्यों? क्योंकि उनकी श्रद्धा भगवान महावीर की जन्मभूमि से जुड़ी हुई है। यहाँ पर हुए निर्माण कार्य को जब वे देखते हैं तो आश्चर्य करते हैं कि इतनी जल्दी इतना निर्माण कैसे हो गया, यह सचमुच चमत्कार है और वह माताजी से कहते हैं कि माताजी! आपका जैन समाज पर बहुत उपकार है, आपने भगवान की जन्मभूमि को फिर से सजा दिया है। माताजी कहती हैं– मैंने तो महावीर भगवान की जन्मभूमि बचाई है बनाई नहीं।" सचमुच अगर कुछ वर्षों तक इस ओर ध्यान न जाता तो क्या होता यह किसी को पता नहीं। खैर! अब तो कुण्डलपुर आने वाला प्रत्येक यात्री अपनी शक्ति के अनुसार यथायोग्य दान देकर भगवान महावीर की जन्मभूमि का विकास कर रहा है और इस बात को स्वीकार करता है कि जन्मभूमि कुण्डलपुर ही है। पूज्य चंदनामती माताजी के भजन के रूप में–

वीर जन्मभूमि सच्ची है, कुण्डलपुरी ही है
सदियों से थी और सदा ही रहेगी।।टेक.।।
जैन ग्रंथों पुराणों में, सभी मुनियों ने गाया है
तभी कुण्डलपुरी का नाम, सबके मन समाया है,
ऋषि मुनि कवियों ने भी, गाई उनकी कीर्ति है.......

यह ऐतिहासिकता है कि जिस सात खण्ड ऊँचे नंद्यावर्त महल में भगवान महावीर ने जन्म लिया, खेले, बड़े हुए, उस महल को पुनः हम सभी को देखने का अवसर प्राप्त हुआ है। भगवान महावीर के जन्म से लेकर निर्वाण तक की जीवन्त झांकी को देखने का अवसर मिल रहा है यह सब पूज्य माताजी का उपकार है।

यह "कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ" वास्तव में केवल भगवान महावीर का गुणगान या माताजी का गुणगान नहीं है अपितु जैनधर्म की आन-बान-शान है। इसको पढ़कर हमें यह शिक्षा लेनी है कि अगर हमें अपने जीवन में कुछ करना है तो हमें भगवन्तों के लिए, इनकी जन्मभूमि के लिए, उनकी निर्वाणभूमि के लिए कार्य करना है। भगवान की जन्मभूमि, निर्वाणभूमि को बचाने के लिए, उनके संरक्षण के लिए, संवर्धन के लिए हमें अपना तन-मन-धन अर्पण करना है।

अन्त में मैं भगवान महावीर स्वामी से प्रार्थना करती हूँ कि भगवन्! मेरा सम्यग्दर्शन सदा दृढ़ रहे,

देव, शास्त्र, गुरु पर सदा श्रद्धान रहे, सन्मति भी प्राप्ति हो, बोधि, समाधि की प्राप्ति हो। जब तक इस संसार से मेरा जन्म-मरण समाप्त न हो, तब तक कण्ठ में बस आपका नाम स्मरण रहे, यही मेरी विनम्र विनयांजलि, भावांजलि, प्रसूनाञ्जलि है एवं भगवान के श्रीचरणों में कोटि-कोटि नमन है।

"नमोऽस्तु परमात्मने सकल लोक चूड़ामणे!
नमोऽस्तु जिनवीर धीर! भगवान महावीर! ते!
नमोऽस्तु जिन पुंगवाय जिनवर्धमानाय ते!
नमोऽस्तु जिन सन्मते! वितनु सन्मतिं मे सदा।।"

और इसके साथ मोक्षमार्ग में लगाने वाली, सच्चा मार्ग दिखाने वाली, अवगुणों को दूर करने वाली, गुणों की जन्मदात्री माता, वात्सल्यमयी माता, ज्ञानमूर्ति माता, सरस्वती की प्रतिमूर्ति माता, समस्त विश्व की माता, गणिनी ज्ञानमती माताजी से मेरी विनम्र विनती है कि आपका वरदहस्त, आपकी छत्रछाया, अनुकम्पा सदा बनी रहे एवं आपका आशीर्वाद सदा मिलता रहे। जिनशासन धर्म प्रभाविका आप दीर्घायु हों, चिरायु हों यही मंगलभावना एवं भगवान से मंगल प्रार्थना है।

–ब्र. (कु.) आस्था जैन
(संघस्थ–गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी)

⁂

पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी के चरणों में शतशः नमन

प्रतिभा, श्रम और संगठन-शक्ति, ये तीनों गुण जिस एक व्यक्तित्व में साकार हुए हैं, उसका नाम है गणिनी आर्यिका ज्ञानमती माताजी। जिस देश में लोग पुत्र के जन्म पर खुशियाँ और कन्या के जन्म पर मातम मनाते रहे हों, उसी देश में जन्मी एक बालिका ने अपने अनथक पुरुषार्थ से मातम मनाने वालों को ठेंगा दिखाने का काम किया है। कोई ऐसा पुरुष या माई का लाल, जो कृतित्व, कर्तृत्व और व्यक्तित्व में उसका सामना कर सके। उन्होंने अपने छोटे से जीवन में इतना कुछ किया है कि सदियों तक मातृशक्ति उससे महिमा-मण्डित होती रहेगी।

माताजी बीसवीं सदी का आश्चर्य हैं। पिछले दो हजार वर्षों में प्रथम बार किसी महिला ने अपने कोमल करों में सुई-धागा या सलाइयाँ न पकड़कर कलम पकड़ी और ग्रंथ-लेखन के क्षेत्र में एक कीर्तिमान स्थापित किया। **जैन इतिहास में इन्हें प्रथम महिला ग्रंथकार के रूप में सदा श्रद्धा सहित स्मरण किया जाएगा।** पांच दशक के अपने साधना-काल में उन्होंने जितना लिखा है, उसकी प्रतिलिपि करने में भी हमें इससे दूना समय लगेगा। जिन्होंने कभी ढाई सौ पंक्तियाँ भी नहीं लिखी हों, ढाई सौ ग्रंथ लिखने वाली इस अद्भुत सर्जिका का मूल्यांकन करना उनके बस की बात नहीं है। लेखन-कर्म अपने आप में एक कठोर तपस्या है। उसका मर्म और महत्त्व वही जान सकता है, जो स्वयं इस राह का राही रहा हो। कहा भी गया है–

विद्वानेव हि जानाति विद्वज्जन-परिश्रमम् ।
न हि वन्ध्या विजानाति गुर्वी प्रसववेदनाम् ।।

माताजी की प्रतिमा बहुमुखी है। दर्शनशास्त्र, धर्म, अध्यात्म, गणित, भूगोल, खगोल, नीति, इतिहास, कर्मकाण्ड आदि विषयों पर उनका समान अधिकार है तथा साहित्य की विविध शैलियों जैसे–गद्य, पद्य, नाटक, कहानी, संस्मरण, आत्मकथा, पूजा-विधान आदि में उन्हें महारत हासिल है।

इन सभी विधाओं पर और इन सभी विधाओं में उन्होंने ग्रंथ लिखे हैं। बालकों को संस्कारित करने और उनकी कोमल चित्त-भूमि में सदाचार के बीज बोने के लिए सरल भाषा में अनेक पाठ्य पुस्तकें भी लिखी हैं। अब तक हजारों पाठकों ने उनकी रचनाओं का रसास्वाद कर मनःशान्ति और आत्मलाभ प्राप्त किया है। प्रकाशन के क्षेत्र में उनकी प्रशस्त प्रेरणा से स्थापित संस्था "दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान" की कीर्ति-कौमुदी भारत से बाहर भी फैल चुकी है। पाश्चात्य विद्वानों ने भी उसकी सराहना की है।

हस्तिनापुर की पावन भूमि में निर्मित "जम्बूद्वीप" भारत में अपने तरह की पहली रचना है। अब तक इसका वर्णन केवल शास्त्रों में पढ़ने को मिलता था। सुमेरु पर्वत को हम केवल तस्वीरों या रेखाचित्रों में देखते थे। अब इनकी हूबहू भव्य और आकर्षक रचना है कि दृष्टि उस पर से हटती नहीं और कई-कई बार और कई-कई घण्टों तक देखते रहने पर भी मन कभी भरता नहीं।

यह अनुभव की बात है कि पढ़कर उतना समझ में नहीं आता, जितना देखकर समझ में आता है। फिर भूगोल तो वैसे भी एक कठिन विषय है। जम्बूद्वीप-रचना ने भूगोल को हृदयंगम करना आसान कर दिया है। पूजा में हम पढ़ते थे–

तीर्थंकरों के न्हवन जल से, भए तीरथ शर्मदा।
ताते प्रदिच्छन देव सुरगन, पंचमेरुन की सदा।।

जिनाभिषेक से पवित्र वे अर्धचन्द्राकार शिलाएं सुमेरु पर्वत की चारों दिशाओं में स्थित वे सोलह चैत्यालय या भद्रशाल, नन्दन, सौमनस और पाण्डुक जैसे सुहावने नाम वाले वे वन-प्रदेश कहाँ हैं और कैसे हैं, अब यह कल्पनातीत विषय नहीं रह गया है। हम उन्हें प्रत्यक्ष देख सकते हैं। कुलाचल, गजदन्त, वक्षार, विजयार्ध, जम्बू, शाल्मलि आदि भौगोलिक शब्दावली का अर्थ अब हमारी समझ में आने लगा है। पुराणवर्णित कुल 78 अकृत्रिम चैत्यालयों की मंत्र-विशुद्ध प्रतिकृतियों की वन्दना करने से हमारा कर्म-भार भी हल्का हो रहा है।

यों तो ज़म्बूद्वीप का निर्माण राज-मजदूरों ने ही किया है किन्तु उसकी असली शिल्पकार तो माताजी ही हैं। उन्होंने त्रिलोकसार, तिलोयपण्णत्ति आदि ग्रंथों को पढ़कर उसका एक नक्शा ध्यान के अवलंबन से पहले अपने मन में बनाया, फिर उसे कागज पर उतारा या उतरवाया और तब राज-मजदूरों को समझाया गया। इतना ही नहीं, पूरे छह वर्षों तक उसका निरीक्षण-परीक्षण, अनुसंधान, संवर्धन-परिवर्द्धन-संशोधन और निर्देशन किया। तब जाकर कहीं यह शास्त्रोक्त कल्पना साकार हुई। इसके पीछे उनकी प्रतिभा, कल्पना और श्रम की त्रिवेणी बह रही है।

इस जम्बूद्वीप के निर्माण का कुछ लोगों ने जमकर विरोध भी किया, किन्तु माताजी को उनके फौलादी संकल्प से वे डिगा न सके। आज उनकी उस अटूट लगन का ही परिणाम है लाखों दर्शकों को चुम्बक की तरह खींचने वाला यह जम्बूद्वीप। अब तो सरोवर युक्त कमल-मंदिर, त्रिमूर्ति मंदिर, ध्यान मंदिर तथा अन्य अनेक निर्माणों की वजह से यह स्थान स्वयं में एक अनोखा तीर्थ ही बन चुका है।

सन् 1982 से 85 के मध्य माताजी की प्रेरणा से ही सम्पूर्ण भारत में "जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति" का प्रवर्तन हुआ। हजारों जैनाजैन लोगों को उसने व्यसनमुक्त जीवन जीने की प्रेरणा दी। आचार्य श्री वीरसागर संस्कृत विद्यापीठ, "सम्यग्ज्ञान" हिन्दी मासिक तथा समय-समय पर आयोजित शिक्षण-शिविरों के माध्यम से आज भी अहर्निश ज्ञान का अलख जगाया जा रहा है। उनकी शिष्याएं पूज्य आर्यिका आदिमती, जिनमती, अभयमती, चंदनामती सरीखी सिद्धान्तवेत्ता आर्यिकाएं उनसे ही शिक्षण प्राप्त कर व्युत्पन्न बनी हैं। उनके ऐसे अन्य शिष्यों की संख्या भी अपरिमित है। प्रभावना के क्षेत्र में उन्होंने आचार्य समन्तभद्रस्वामी की इस कथनी को सार्थक किया है–

अज्ञानतिमिरव्याप्तिमपाकृत्य यथायथम्।
जिनशासनमाहात्म्यप्रकाशः स्यात्प्रभावना।।

जम्बूद्वीप के अतिरिक्त त्रिकालवर्ती तीर्थंकरों की जन्मभूमि अयोध्या, सिद्धक्षेत्र मांगीतुंगी तथा युग की प्रथम दीक्षा भूमि प्रयागराज के विस्मृत वैभव की स्मृति को जागृत करने की भावना से इन क्षेत्रों के विकास की ओर उनका ध्यान गया है। यहाँ के कायाकल्प को देखकर सभी विस्मय विमुग्ध हो उठते हैं। भगवान महावीर 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव वर्ष में उन्होंने भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) के पुनरुद्धार का बीड़ा उठाया, जो अब पूरा हो चुका है।

पूज्य माताजी के और भी उपकार हैं। वह पूरे देश में घूम-घूमकर लोगों को व्यसन मुक्त जीवन जीने की प्रेरणा दे रही हैं। शिक्षण शिविरों के माध्यम से नई पीढ़ी को धर्मशास्त्र का ज्ञान कराती हैं। उनका सानिध्य पाने के लिए पूरे देश के लोग बेताब रहते हैं। विदुषी, युग-नायिका माताजी के इन प्रयासों का लाभ जन-जन को मिले, यही शुभ भावना है।

पूज्य माताजी के उपकार अनन्त हैं, उनसे उऋण होना संभव नहीं। माताजी के सम्मान में वस्तुतः हम सबका सम्मान सुरक्षित है। उनके चरणों में शतशः नमन्।

-नरेन्द्रप्रकाश जैन

(अध्यक्ष–अ.भा.दि. जैन शास्त्री परिषद)

* * *

भजन

माता हो त्रिशला के लाल, वीर यहाँ फिर आओ ना।
कुण्डलपुरी के युवराज, वीर यहाँ फिर आओ ना।।
माता के गर्भ आए, सुपने दिखाए-
सोलह सुपने दिखाए।
जन्मे तो इन्द्र आए, उत्सव मनाए
जन्म उत्सव मनाए।।
सिद्धार्थ राजा के लाल, वीर यहाँ फिर आओ ना।
कुण्डलपुरी के युवराज, वीर यहाँ फिर आओ ना।।1।।
धरती पुकारे तुम्हें, हिंसा मिटाओ-
वीर हिंसा मिटाओ।
अपना प्राचीन रूप, फिर से दिखाओ-
वीर फिर से दिखाओ।।
चौबीसवें अवतार, वीर यहाँ फिर आओ ना।
कुण्डलपुरी के युवराज, वीर यहाँ फिर आओ ना।।2।।
विचलित हो राजा प्रजा, तुमको भुलाया-
वीर तुमको भुलाया।
वैभव की होड़ लगा, सब कुछ लुटाया-
वीर सब कुछ लुटाया।।
"चन्दना" यह कलियुग का राज, वीर यहाँ फिर आओ ना।
कुण्डलपुरी के युवराज, वीर यहाँ फिर आओ ना।।3।।

शंखनाद हो चुका / चलो कुण्डलपुर हमको जाना है......

सैकड़ों वर्षों से हमारी अतीत की पीढ़ियाँ जिस कुण्डलपुर (नालंदा) को भगवान महावीर की जन्मभूमि मानकर श्रद्धा से नतमस्तक रही हैं और वर्तमान पीढ़ी के 99% लोग श्रद्धाभक्ति से जिस कुण्डलपुर को नमन करते रहे हैं.....आज उन्हें झुठलाने का प्रयास किया जा रहा है। उनकी श्रद्धा पर मात्र अपना खेमा मजबूत करने के लिए, अपनी जिद को पूरा करने के लिए कुछ एकाध संगठन या दो-चार कथित विद्वान् इसे राजनीति का अखाड़ा बना रहे हैं।

एक षड्यंत्र पिछले 50-60 वर्षों से स्वयंभू समाज के तारणहार नेताओं ने तीर्थक्षेत्र कमेटी की आड़ में चला रखा है। कुण्डलपुर (नालंदा) का कभी विकास नहीं होने दिया, उसे उपेक्षित रखा। वहाँ की आय का उपयोग कहाँ किया? वे जानें या भगवान! उनके ही उत्तराधिकारी (क्योंकि कतिपय राष्ट्रीय दिगम्बर जैन संस्थाओं के पदाधिकारी अब समाज से नहीं अपितु कुछ परिवारों के ही उत्तराधिकारी के रूप में चयनित होते हैं) यह ध्यान रखते रहे कि कुण्डलपुर (नालंदा) का विकास न हो। मात्र कुछ जमीन दे देने से या सरकार से कुछ धनराशि मिल जाने से वे इस सत्य को भी नकारते रहे कि कुण्डलपुर ही भगवान महावीर की जन्मभूमि है। वे दिगंबर आचार्यों व विशेष गणिनीप्रमुख आर्यिका श्री ज्ञानमती जी से मिले.......जब वहाँ से पूरे शास्त्रीय प्रमाण उपलब्ध हुए तो वे उनके समक्ष यह स्वीकार करने लगे कि कुण्डलपुर (नालंदा) ही भगवान महावीर की जन्मभूमि है। दिल्ली में माताजी के साथ झंडा उठाकर घूमे, आगरा में समर्थन में भाषण किए.....पर जयपुर में फिसल गये। ऐसे ही एक कर्णधार ने माताजी के तथ्य के सत्य को स्वीकार करके भी उनके विरुद्ध बयान (फतवा) ही जाहिर कर दिया। इससे बड़ा अविश्वसनीय कार्य और क्या हो सकता है? यदि आप नालंदा के कुण्डलपुर को नहीं मानते तो मत मानिए पर साध्वी के समक्ष आगम प्रमाणों से सहमत होकर सस्ती लोकप्रियता के लिए पाला क्यों बदलते हैं?

प्रा. नरेन्द्र प्रकाशजी, पं. शिवचरणलालजी व गणिनीप्रमुख आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी व प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी ने दिगम्बर ग्रंथों के अनेक प्रमाण दिए हैं आप उन्हें क्यों नहीं नकारते? क्यों अन्य मत या विदेशी विद्वानों की वैशाखी लेकर चल रहे हो? मैं समझता हूँ कि यदि हमारे शास्त्रों के प्रमाण सही हैं तो प्रसिद्धि या अलग खेमे की राजनीति का व्यामोह त्यागकर सत्य के साथ जुड़ें। आदरणीय प्राचार्य नरेन्द्र प्रकाश जी ने कुछ चेलेंज किए हैं अच्छा हो उसका शास्त्रीय उत्तर दिया जाये।

मित्रों! सत्य यह है कि यदि चंद वर्षों तक माताजी एक निडर वीरांगना की तरह सत्य के प्रति जागरूक न होतीं तो जल्द ही वैशाली को सर्वसम्मति मानकर निर्णय हो जाता। अच्छा रहा कि माताजी ने समय से सत्य को उजागर कर लोगों की आँखें खोल दीं। मैंने पिछले दो वर्षों में अनेक विद्वानों के लेख देखे, पर वैशाली के समर्थन में वे कुछ वर्तमान इतिहासकारों के कथन या बौद्ध ग्रंथों के कथन ही उद्धृत कर सके, आर्ष ग्रंथों की अनदेखी कर गये। विद्वान् नीरजजी की आत्मा इस जन्मोत्सव वर्ष में ऐसे प्रश्न उठाने से तड़प उठी। पर पूरा असत्य निर्धारण हो रहा था उससे उन्हें वेदना नहीं हुई? वे समाधानकारी विद्वान हैं, इतिहास के ज्ञाता हैं, अच्छा होता यदि वे दोनों पक्षों में सेतु का कार्य करते और वास्तविक सत्य को प्रसारित करते।

मुझे प्रसन्नता इस बात की है कि हमारे अनेक आचार्य पूज्य विद्यासागर जी, आचार्य वर्धमानसागर जी, आचार्य अभिनंदन सागर जी, उपाध्याय ज्ञानसागर जी, उपाध्याय निजानंद सागर जी आदि सभी आगम सम्मत उन स्थापनाओं के समर्थक हैं जो कुण्डलपुर (नालंदा) के समर्थन में शास्त्रों में वर्णित हैं। प्राचार्य नरेन्द्र प्रकाशजी, पं. शिवचरणलाल जी, डॉ. अनुपम जैन, श्री जयसेन जैन पत्रकार आदि ने आचार्यों से मिलकर उनके विचार ज्ञात किए। शास्त्रीय आधार पर तथ्य प्रस्तुत किए व पूज्य आचार्यों

का समर्थन प्राप्त किया।

स्वयं हर्मन जैकोबी ने अपनी गलती सुधारते हुए कुण्डलपुर (नालंदा) को जन्मभूमि माना है व बिहार टूरिज्म ने भी कुण्डलपुर (नालंदा) को दिगम्बर जैनों द्वारा मान्य भगवान महावीर की जन्मभूमि स्वीकार करते हुए अपने फोल्डर में छापा है।

पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी ने डंके की चोट से जो घोषणा की है, जिसे व्यापक समर्थन मिला है वह एक शंखनाद है। अब तो बस सत्य सत्य रूप में ही सिद्ध हो चुका है।

–डॉ. शेखरचंद्र जैन, अहमदाबाद
सम्पादक-तीर्थंकर वाणी

* * *

कुण्डलपुर की धरा धूल तू

जिस माटी में खेला बचपन, स्याद्वाद अपरिग्रह का।
जिसकी करुणा ने तोड़ा भ्रम, हिंसा यज्ञ दुराग्रह का।।
मिला जहाँ से अखिल विश्व को, सत्य अहिंसा का आधार।
मानवता को मिला जहाँ से, जीवन मूल्यों का उपहार।।

आत्म ज्ञान की ज्योति जगी थी, जिस माँटी की रजकण से।
जिसका कण-कण तक पावन है, महावीर की पद्र रज से।।
कुण्डलपुर की धरा धूल तू, पावन पूजित चन्दन है।
जग कल्याणी नमन तुम्हारा, वन्दन है अभिवंदन है।।

तूने देखा है हिंसा पर, यहाँ अहिंसा का जयघोष।
करुणा के चरणों में देखा, नत मस्तक होते आक्रोश।।
जियो और जीने दो वाला, पावन मंत्र मिला तुझसे।
दीन, दलित, पीड़ित, साँसों को, दया, दुलार मिला तुझसे।।

अनेकान्त की परिभाषा ने, पाया तुझसे ही सम्मान।
तेरी ही माटी में टूटा, विधि शक्ता का नियम विधान।।
आत्म ज्ञान का दर्पण तूने, भौतिकता को दिखलाया।
देकर समता का पथ जग को, जीवन जीना सिखलाया।।

आज मनुज फिर भेज रहा है, चिर विनाश को आमंत्रण।
काँप रहा है मन करुणा का, देख कुटिलता का नर्तन।।
व्याकुल होकर देख रही है, मानवता फिर तेरी ओर।
हिंसा की इस काल निशा को, कब दोगे तुम नूतन भोर।।

एक बार फिर कुण्डलपुर तुम, करो अहिंसा का श्रृंगार।
लौटाओ तुम इस दुनियाँ को, फिर त्रिशला का राजकुमार।।
दो फिर से तुम अभय शांति को, और सत्य को दो भाषा।
करो पल्लवित मानवता को, मिटा आसुरी अभिलाषा।।

–उमेश जैन, फिरोज़ाबाद

* * *

भारत सरकार-श्रीयुत जार्ज फर्नांडीज जी का वक्तव्य अंश

जैनधर्म के अंतिम एवं 24वें तीर्थंकर भगवान महावीर की जन्मभूमि के रूप में इस कुण्डलपुर की मान्यता प्राचीनकाल से रही है और यह मेरा सौभाग्य है कि इस महान पवित्र भूमि का भारतीय संसद में प्रशासनिक प्रतिनिधित्व करने का दायित्व मुझे मिला है। भगवान महावीर वो महान व्यक्तित्व थे, जिनकी बौद्धिक क्षमताएं असाधारण थीं, जिनके सिद्धांत समस्त विश्वपरिवार के सामाजिक, आर्थिक, नैतिक, सांस्कृतिक हर क्षेत्र संबंधी जीवन को सुचारूरूप से चलाने हेतु सर्वाधिक सक्षम हैं। भगवान महावीर ने जहां अपनी ओर से दूसरे पर आक्रमण करने से मना किया, वहीं स्वयं की रक्षा के लिए हर प्रकार से तत्पर रहने का उपदेश भी हमें उनकी वाणी से ही प्राप्त हुआ है। रक्षामंत्री के रूप में आज देश की सीमाओं की सुरक्षा नीति, अपनी ओर से आक्रमण न करने की नीति इत्यादि सभी भगवान महावीर के सिद्धान्तों को ही प्रतिपादित कर रही हैं। ऐसे युगपुरुष की जन्मभूमि मेरे इस संसदीय क्षेत्र का महान गौरव है। यह बड़ी प्रसन्नता की बात है कि ऐसी पावनभूमि का विकास करने का संकल्प हमारे देश की विभूतिस्वरूप महान जैनसाध्वी श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा लिया गया है। भारत की समाज पर यदि किसी का गहरा असर होता है तो वे ये आध्यात्मिक संत ही हैं, जिनकी वाणी जन-जन के लिए प्रामाणिक हो जाती है। मुझे बताया है कि पूज्य माताजी दिगम्बर जैन समाज की ऐसी साध्वीरत्न हैं जिन्होंने भगवान महावीर के बाद ढाई हजार वर्षों के इतिहास में पहली बार विशाल ग्रंथलेखन किया है। ऐसी महान विद्वान् माताजी के दर्शन का सौभाग्य मुझे मेरे ही संसदीय क्षेत्र में प्राप्त हुआ है तो यह मेरे लिए बहुत ही महत्वपूर्ण बात है। पूज्य माताजी के आह्वान पर भगवान महावीर जन्मभूमि के विकास का ये जो महत्तम कार्य सम्पन्न किया जा रहा है, वह मात्र जैनसमाज के लिए ही यशस्वी नहीं है वरन् इस संपूर्ण नालंदा क्षेत्र एवं बिंहार प्रान्त की कीर्ति संसार में प्रसारित करने वाला है। नालंदा को तो बौद्धिक क्षेत्र में पहले से ही ख्याति इसलिए प्राप्त है क्योंकि भगवान महावीर और गौतम बुद्ध जैसे महापुरुषों ने इस धरती पर निवास करके अपनी ज्ञानरश्मियों को बिखराया है।

बहुत ही अल्पसमय में इस प्रकार के विकास कार्य को देखकर मैं इस विकास के आधारभूत कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन सहित उनकी पूरी टीम को साधुवाद देना चाहता हूँ। नालंदा की जनता इस तीर्थ के माध्यम से महावीर के सिद्धान्तों को पुनः आत्मसात करके जीवन में और भी सुखी हो सकेगी, ऐसी मेरी शुभकामना है।

भारत के प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी जी ने पूज्य माताजी की प्रेरणा एवं सानिध्य में दो बार राजधानी दिल्ली में तीर्थंकर महावीर की परम्परा के प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव से संबंधित दो राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय कार्यक्रमों का उद्घाटन किया। प्रथम तो अप्रैल 1998 में भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार प्रवर्तन का उद्घाटन एवं उसके पश्चात् फरवरी 2000 में भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महोत्सव वर्ष का उद्घाटन। तीर्थंकर भगवन्तों के सिद्धान्तों के प्रचार-प्रसार की माननीय अटल जी ने जो ये परम्परा पूज्य माताजी की प्रेरणा से स्थापित की है, मैं तो उसे ही आगे बढ़ाने आया हूँ।

मेरा प्रयास रहेगा कि सरकारी स्तर पर भगवान महावीर जन्मभूमि के विकास हेतु जो सहयोग संभव है, उसके प्रति मैं सजग होकर अपने कर्तव्य कां निर्वाह करूँ।

दिनाँक–9 फरवरी 2003

भगवान महावीर की जीवनगाथा

रचयित्री–ब्र. कु. सारिका जैन
(संघस्थ–गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी)

जिनधर्म के प्यारे भक्तों तुम इक, नगरी का इतिहास सुनो।
नगरी का इतिहास सुनो, तुम मेरी पूरी बात सुनो।।
ऋषभदेव पहले तीर्थंकर, अंतिम प्रभु महावीरा थे।
नगरि अयोध्या ऋषभदेव की, कुण्डलपुर के वीरा थे।।1।।

श्री सर्वार्थ के सुत सिद्धारथ, कुण्डलपुर के राजा थे।
धन धान्यादिक वैभवयुत वे, सर्वश्रेष्ठ महाराजा थे।।
उनकी रानी त्रिशला नंद्यावर्त महल में रहती थीं।
सोने के उस महल में वह, रत्नों के पलंग पर सोती थीं।।2।।

इक दिन नित्य की भांति ही रानी, रात्री में जब सोई थीं।
सोईं क्या, वह महारानी तो, स्वप्नलोक में खोई थीं।।
एक-दो नहीं, पूरे सोलह सुपने देखे रानी ने।
शुभ्र बैल, गज ऐरावत, आदिक देखा महारानी ने।।3।।

प्रातःकाल खुली जब निद्रा, वह अतिशय रोमांचित थीं।
सुन्दर स्वप्ने लखकर उनकी, खुशियों की नहिं सीमा थी।।
प्रातः रानी त्रिशला राजा सिद्धारथ के पास गईं।
वहाँ पती के निकट योग्य, अर्धासन पर वह बैठ गईं।।4।।

बोलीं राजन्! मैंने पिछली, रात्रि में सपने देखे हैं।
एक-दो नहीं पूरे सोलह, स्वप्ने मैंने देखे हैं।।
स्वप्नों का वर्णन रानी ने, क्रम क्रम से बतलाया था।
सुनकर राजा सिद्धारथ का, रोम-रोम हरषाया था।।5।।

बोले तुम त्रिभुवनपति को अब, पुत्ररूप में पाओगी।
इस युग के अंतिम तीर्थंकर, की माता कहलाओगी।।
सुनकर रानी रोमांचित, होकर खुशियों से झूम उठी।
ऐसा लगा कि मानों उनको, तीर्थंकर सुत मिला अभी।।6।।

नव महिनों के बाद, चैत्र शुक्ला तेरस तिथि आई थी।
तीर्थंकर सुत जन्मे जब, महलों में बजी बधाई थी।।
जन्मे जब तीर्थंकर तब, नरकों में कुछ क्षण शांति हुई।
मध्यलोक अरु ऊर्ध्वलोक में, सबको खुशी अपार हुई।।7।।

स्वर्ग से इन्द्रराज ने आकर, उत्सव खूब मनाया था।
कुण्डलपुर नगरी अरु मात-पिता को शीश नमाया था।।
तीर्थंकर बालक को मेरू-पर्वत पर ले जाकर के।
एक हजार आठ कलशों से, न्हवन किया था इन्द्रों ने।।8।।

जन्म न्हवन के बाद इन्द्र ने, प्रभु का नामकरण कीना।
"वीर" व "वर्धमान" पद देकर, निज को धन्य-धन्य कीना।।
पुनः वीर को कुण्डलपुर, नगरी में वापस लाए थे।
बालक सौंपा मात-पिता को, स्वयं स्वर्ग को जाए थे।।9।।

नंद्यावर्त में इक दिन वीरा, पलने में थे झूल रहे।
दो चारण ऋद्धीधारी मुनि, गगनमार्ग से उतर गए।।
उन दोनों मुनियों के मन में, अती सूक्ष्म इक शंका थी।
ज्यों ही दर्श किया जिनशिशु का, शंका उनकी दूर हुई।।10।।

समाधान पाते ही दोनों, मुनिवर बहुत प्रसन्न हुए।
'सन्मति' नाम रखा जिनशिशु का, जिनसे सन्मति सदा मिले।।
सन्मति प्रभुवर बालपने से, शैशव वय में पहुँच गए।
स्वर्णिम आभाधारी उन, प्रभुवर को हम सब नमन करें।।11।।

इक दिन चर्चा हुई स्वर्ग में, प्रभु की शूरवीरता की।
संगम देव परीक्षा लेने, कुण्डलपुर पहुँचा तब ही।।
'सन्मति' निज सुरमित्रों के संग, उपवन में थे खेल रहे।
भारी वृक्ष के आसपास, ऊपर नीचे चढ़-उतर रहे।।12।।

तभी वहाँ वह देव भयंकर, नागरूप धरकर आया।
उसी वृक्ष से लिपट गया, जहाँ खेल रही कोमल काया।।
ज्यों ही देखा नाग सभी, बालक डर करके भाग गए।
'वर्धमान तुम भी आ जाओ" समझाकर सब हार गए।।13।।

वर्धमान नहिं डरे उन्होंने, सर्प के फण पर पैर रखा।
ऐसी क्रीड़ा की जैसे कि पलंग ही हो वह रत्नों का।।
देखा धैर्य पराक्रम उनका, सर्प देव बन प्रगट हुआ।
नाना स्तुति-भक्ती करके, "महावीर" कह मुदित हुआ।।14।।

धीरे-धीरे समय बिताकर, महावीर जब युवा हुए।
उनके सुन्दर रूप को लखकर, कामदेव भी नमित हुए।।
माता त्रिशला युवा पुत्र को, देख-देखकर हर्षित थीं।
उनके हृदय पटल पर सुन्दर, पुत्रवधू छवि अंकित थी।।15।।

बोलीं बेटा! अब इस महल में,पायल की छम छम होगी।
करो विवाह तभी मेरी, आशाओं की पूर्ती होगी।।
महावीर बोले हे माता! मुझे ब्याह नहिं करना है।
चार बालयति हुए मुझे, पाँचवाँ बालयति बनना है।।16।।

माँ त्रिशला ने पुत्रवीर को, बहुत तरह से समझाया।
राजा सिद्धारथ ने भी निज, पितृप्रेम था दिखलाया।।
लेकिन वीर नहीं माने, क्योंकि वे तो वैरागी थे।
मात-पिता से राग नहीं, पर सिद्धिप्रिया के रागी थे।।17।।

मगसिर कृष्णा दशमी को वे, नग्न दिगम्बर मुनी बने।
उनको प्रथम आहार दिया था, वकुल नाम के राजा ने।।
मुनि वीर भ्रमण करते-करते, कौशाम्बी नगरी में पहुँचे।
वहाँ चंदनबाला को बेड़ी में, जकड़ा था सेठानी ने।।18।।

मिट्टी के एक सकोरे में, कोदों का भात वह खाती थी।
कुछ पूर्व बैर के कारण ही, सेठानी उसे सताती थी।।
महावीर प्रभू की जय जय ध्वनि, चन्दनबाला ने भी थी सुनी।
भक्ती से भाव-विभोर हुई, पड़गाहन करने ज्यों ही उठी।।19।।

उसका मिट्टी का सकोरा त्यों ही, स्वर्णपात्र में बदल गया।
झड़ीं बेड़ियाँ तत्क्षण ही, अरु भात खीर बन गया अहा।।
पड़गाहन कर नवधाभक्ती-पूर्वक मुनि को आहार दिया।
उसी समय देवों ने भी, पंचाश्चर्यों की वृष्टि किया।।20।।

इस चमत्कार को देख सभी ने, वीरप्रभू की जय बोली।
चन्दनबाला के सतीत्व को, देख सेठानी लज्जित थी।।
पुनः वीरचर्या द्वारा, महावीर भ्रमण करते-करते।
पहुँच गए उज्जयिनी नगरी, वहाँ ध्यान में लीन हुए।।21।।

रूद्र ने वहाँ जाकर प्रभु पर, नाना प्रकार उपसर्ग किया।
ध्यानलीन प्रभु को विचलित, करने का बहु पुरुषार्थ किया।।
लेकिन प्रभु महावीर तो निश्चल, ध्यानलीन ही खड़े रहे।
रूद्र की चाल नहीं चल पाई, उसने किये उपाय बड़े।।22।।

होकर असफल रूद्र ने अपनी, भार्या के संग भक्ती से।
प्रभु की नाना स्तुति, भक्ती, नृत्य-गान आदिक करके।।
नाम "महति महावीर" रखा, लख उनका धैर्य-वीरता गुण।
ऐसे पाँच नाम युत प्रभु को, भक्तिभाव से करें नमन।।23।।

बारह वर्ष कठिन तप करके, प्रभु को केवलज्ञान हुआ।
धनकुबेर ने गगनांगण में, समवसरण निर्माण किया।।
समवसरण तो बना किन्तु, छ्यासठ दिन तक प्रभु मौन रहे।
दिव्यध्वनि क्यों नहिं खिरती है? देव-मनुज यह सोच रहे।।24।।

इन्द्रराज ने चिन्तन करके, एक उपाय सुझाया था।
युक्ती से वह गौतम को प्रभु, समवसरण में लाया था।।
गौतम को था ज्ञान का मद, पर ज्यों ही मानस्तंभ लखा।
मद तो चूर हुआ मिथ्यात्व भी, सम्यक्रूप में बदल गया।।25।।

पहुँचे प्रभु के सम्मुख उनकी, वीतराग मुद्रा देखी।
वचन जयति भगवान......उचारे, नाना स्तुति-भक्ती की।।
प्रभु के सम्मुख नग्न दिगम्बर, दीक्षा भी धारण कर ली।
उन संग उनके पाँच शतक, शिष्यों ने भी दीक्षा ले ली।।26।।

गौतम ज्यों ही शिष्य बने, त्यों ही प्रभु दिव्यध्वनी खिरी।
देव-मनुज-तिर्यंच सभी ने, निज-निज भाषाओं में सुनी।।
विपुलाचल पर्वत पर प्रभु की, प्रथम देशना प्रगटी थी।
राजगृही नगरी में श्रावण-कृष्णा एकम की तिथि थी।।27।।

तीस वर्ष तक गगनांगण में, प्रभु ने अधर विहार किया।
समवसरण में दिव्यध्वनि से, जीवों का उद्धार किया।।
आयु हुई बाहत्तर वर्ष तो, पावापुर-जलमंदिर से।
कार्तिक कृष्ण अमावस को प्रभु, मोक्षधाम में जा तिष्ठे।।28।।

प्रभु महावीर तो चले गए, पर उनका शासन आज भी है।
उनके शासनकाल में हमने, जन्म लिया मन हर्षित है।।
महावीर प्रभू को जन्म लिये, अब छब्बिस सदियाँ बीत गईं।
इतने वर्षों में उनकी वह, जन्मभूमि वीरान हुई।।29।।

इक छोटा सा मंदिर ही बस, जन्मभूमि कहलाता था।
दर्शन करके भक्त समूह, चिन्तन करने लग जाता था।।
वीरप्रभू की जन्मभूमि, कब विस्तृत रूप को पाएगी?
जाने कौन सी दिव्यशक्ति आ करके इसे बचाएगी?।।30।।

ईसवी सन् दो हजार इक में, वह स्वर्णिम अवसर आया।
छब्बिस सौवाँ जन्मकल्याणक, महावीर प्रभु का आया।।
उत्सव और महोत्सव शासन, अरु समाज ने कई किए।
एक वर्ष तक वीरप्रभू के, जय-जयकारे खूब किए।।31।।

लेकिन उनकी जन्मभूमि की, ओर किसी का ध्यान नहीं।
उसका भी विकास करना है, ऐसा किसी को भान नहीं।
गणिनी प्रमुख ज्ञानमति माताजी निज संघ सहित चल दीं।
बोलीं जन्मभूमि को विकसित, करने का है समय यही।।32।।

बीस फरवरी ईसवी सन् दो हजार दो का शुभ दिन था।
दिल्ली के इण्डिया गेट से, हुआ विहार शुभारंभ था।।
कितने ही भक्तों ने इस, पदयात्रा का सम्मान किया।
कुण्डलपुर जल्दी ही विकसित, होगा यह विश्वास किया।।33।।

ज्ञानमती माताजी का, हर कार्य अलौकिक भारी है।
तीर्थों के विकास क्रम में अब, कुण्डलपुर की बारी है।।
शहर, नगर अरु, गाँव, गली में, धर्मप्रभावना खूब हुई।
ज्ञानमती माताजी दिसम्बर, में कुण्डलपुर पहुँच गईं।।34।।

वहाँ पहुँचते ही अतिशय, अरु चमत्कार थे प्रगट हुए।
एक वर्ष में पाँच वृहत्-मंदिर के नवनिर्माण हुए।।
महावीर मंदिर, ऋषभेश्वर मंदिर हैं अतिशयकारी।
नवग्रहशान्ती मंदिर-त्रिकाल चौबीसी है सुखकारी।।35।।

इसके साथ ही सुन्दर नंद्यावर्त महल इक निर्मित है।
सात खण्ड ऊँचा सुन्दर, त्रयप्रतिमाओं से वंदित है।।
गणिनी ज्ञानमती माताजी की ही सूझबूझ है ये।
इनके द्वारा ही संस्कृति का, संरक्षण होता सच ये।।36।।

इनके उपकारों का बदला, जगती नहीं चुका सकती।
जो कुछ किया इन्होंने वह, पौरुषशक्ती नहिं कर सकती।।
तीर्थ हस्तिनापुरी-प्रयाग में, नवनिर्माण है करवाया।
तथा अयोध्या-मांगीतुंगी, का उद्धार भी करवाया।।37।।

अन्य कई नगरों-शहरों में, नवनिर्माण प्रेरणा दी।
भक्तों ने निर्माण कराकर, अपनी भक्ति प्रदर्शित की।।
तीर्थों के निर्माण के साथ ही, शिष्यों का भी किया सृजन।
ढाई सौ ग्रन्थों का लेखन, किया साहसिक कार्य प्रथम।।38।।

अष्टसहस्री ग्रन्थ जिसे, कहते हैं कष्टसहस्री सब।
हिन्दी अनुवाद किया उसका, वह न्याय ग्रंथ है सर्वोत्तम।।
षट्खण्डागम की संस्कृत टीका का लेखन जारी है।
माँ सरस्वती की कृपा दृष्टि, इन शारद माँ पर भारी है।।39।।

नित्य नए निर्माणों की, प्रेरिका ज्ञानमती माताजी।
इनकी भक्ती सदा करूँ, हो प्राप्त मुझे ऐसी शक्ती।।
महावीर प्रभू के पावन चरणों, में है यह मेरी विनती।
रहे "सारिका" इन माता से, सदा सुशोभित यह धरती।।40।।

* * *

कुण्डलपुरं विजीयात् तीर्थं त्रिकाले

वैदेहिके सुप्रान्तेऽति रमणीयक्षेत्रे, बड़गाँव पुण्यनालन्दाकोशदेशे।
नानासुकूपसरशोभितशोभनीयं, कुण्डलपुरं विजीयात् तीर्थं त्रिकाले।।1।।
तीर्थेशवीरजिनपुण्यप्रसूतिभूमिः, आगत्य यत्र प्रमुखः सौधर्मशक्रः।
मेरौ विधाय न्हवनं ख्यातो विशेषः, कुण्डलपुरं विजीयात् तीर्थं त्रिकाले।।2।।
सिद्धार्थराजनृपमण्डितमण्डलेशः, तस्य प्रियात्रिशलयाः सूनुर्महात्मा।
अक्रीडयत् सुरगणैः सह यत्र भूमौ, कुण्डलपुरं विजीयात् तीर्थं त्रिकाले।।3।।
यत्रत्यसन्मतिजिनः तपसः सुमार्गे, निर्ग्रन्थसाधुदीक्षामङ्गीचकार।
आध्यात्मिकाः तदारभ्य नमन्ति तद्भुवं, कुण्डलपुरं विजीयात् तीर्थं त्रिकाले।।4।।

—पं. शिवचरनलाल जैन, मैनपुरो

जन्मभूमि कुण्डलपुर का विकास : एक महत्वपूर्ण उपलब्धि

अत्यन्त प्राचीन काल से भारतीय संस्कृति में पुष्पित एवं पल्लवित हुए अनेक धर्मों एवं उनके महापुरुषों के संदर्भ में इतिहास की दृष्टि अत्यंत सीमित है। मात्र जैनधर्म ही नहीं अपितु बौद्ध और वैदिक परम्परा के महापुरुषों के जन्मस्थानों, विहार क्षेत्रों और निर्वाणभूमियों के बारे में व्यापक मतभेद हैं। इसका मुख्य कारण विगत दो सहस्राब्दियों में भारत की संघर्षपूर्ण राजनैतिक परिस्थितियाँ तथा जलवायु आदि रही है। अधिकांश युगसृष्टा महापुरुषों की उपस्थिति एवं क्रियाकलापों के संदर्भ में पुष्ट ऐतिहासिक एवं शिलालेखीय साक्ष्य उपलब्ध नहीं हैं। तथापि भारत की धर्मप्राण जनता अत्यंत श्रद्धा और भक्ति के साथ अपने आराध्य देवों की जन्मभूमियों, निर्वाणभूमियों एवं जीवन की विशिष्ट घटनाओं से संबद्ध क्षेत्रों की पूजा-अर्चना चिरकाल से करती आ रही है।

भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर का उल्लेख तिलोयपण्णत्ती, धवला, जयधवला, उत्तरपुराण, हरिवंशपुराण, वीरजिणिन्दचरिउ आदि अत्यंत प्राचीन आर्ष प्रणीत ग्रंथों में कुण्डलपुर (अथवा कुण्डपुर) के नाम से प्राप्त होते हैं। प्राचीन भारत की राजनैतिक विकास यात्रा में जनपदों, क्षेत्रों और स्वतंत्र भारत में प्रांतों, जनपदों का गठन एक गतिमान प्रक्रिया है। अतः इसके आधार पर परम्परा मान्य क्षेत्रों की अवस्थिति के बारे में शंका उत्पन्न करना समीचीन नहीं है। हमारे परम्परामान्य क्षेत्रों को इतिहास और भूगोल के आधार पर नये सिरे से चिन्हित करने के अब तक के सभी प्रयास चाहे वो भगवान महावीर की निर्वाणभूमि का प्रश्न हो, अथवा शीतलनाथ भगवान की जन्मभूमि या सिद्धक्षेत्रों की पहचान जनसामान्य द्वारा ठुकरा दिये गये हैं।

अभी इसी दशक में महात्मा बुद्ध की जन्मभूमि कपिलवस्तु अथवा भगवान राम की जन्मभूमि अयोध्या की नये स्थानों पर खोज के प्रयास जनता जनार्दन द्वारा पूर्णतः नकार दिये गये हैं। ऐसे में यह मान्यता बलवती होती है कि **श्रद्धा तर्क से परे** होती है। तेरहवीं शताब्दी के देल्ह कवि से लेकर 18वीं, 19वीं शताब्दी के सभी हिन्दी/संस्कृत कवियों ने अपने द्वारा रचित पूजा, भजन एवं आरतियों में मुक्त कंठ से महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर का गुणगान किया है। मुझे बड़ी हँसी आती है जब लोग अपने तर्क में यह कहते हैं कि इनके साथ नालंदा नहीं लिखा है। अरे भई! जब उस समय तक नालंदा जिला बना ही नहीं था तो कुण्डलपुर के साथ नालंदा कहाँ से आ जाता। आगमिक संदर्भों को पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी एवं प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी, पं. शिवचरनलाल जी, मैनपुरी एवं श्रीमती उषा पाटनी, इंदौर ने विस्तार से अपने लेखों में ससंदर्भ संकलित किया है।

अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन शास्त्री परिषद के यशस्वी अध्यक्ष प्राचार्य श्री नरेन्द्र प्रकाश जी ने समसामयिक रूप से कुण्डलपुर के संदर्भ में दिगम्बरेतर ग्रंथों के आधार पर प्रस्तुत की गई शंकाओं का सम्यक्, सटीक, तथ्यपूर्ण, समाधान आपने अनेक महत्वपूर्ण उद्बोधनों, आलेखों एवं सम्पादकीय आदि में प्रस्तुत कर ही दिया है। वस्तुतः 20वीं सदी के प्रारंभ तक भगवान महावीर की जन्मभूमि के संदर्भ में कोई विकल्प था ही नहीं। सभी लोग निर्विवाद रूप से पावापुरी, राजगृही के समान ही तीर्थ त्रिवेणी के तीर्थ कुण्डलपुर की श्रद्धा और भक्ति के साथ वंदना करते थे। भगवान महावीर समकालीन इतिहास पर यदि हम दृष्टि डालें तो हम पाते हैं कि कुण्डलपुर और राजगृही का क्षेत्र भगवान महावीर के व्यापक प्रभाव का क्षेत्र रहा है। बात चाहे इन्द्रभूति गौतम की हो, अन्य गणधरों की हो अथवा अनुयायियों की, इन सभी वर्गों में इस अंचल के लोगों का बाहुल्य रहा, ऐसा पुराणों से विदित होता है। ऐसा पहले भी होता था और आज भी है कि जो जिस क्षेत्र का होता है उस क्षेत्र में उसका प्रभाव होता ही है। सामायिक रूप से मैं यह भी कहना चाहूँगा कि नालंदा अंचल के क्षेत्रों को जैन दृष्टि से

चिन्हित कर पुरातत्वविदों के निर्देशन में खुदाई का कार्य अभी हुआ ही नहीं, ऐसे में पुरातात्विक साक्ष्य कैसे प्राप्त हों? लेकिन फिर भी बौद्ध अध्ययन के केन्द्र नालंदा के खंडहरों में सुरक्षित पुरावशेष एवं नालंदा म्यूजियम में स्थित मूर्तियाँ इस क्षेत्र के समृद्ध जैन पुरावैभव की कहानी कहते हैं। जिससे भगवान महावीर से लेकर आज पर्यंत 2600 साल की इतिहास की टूटी कड़ियों को जोड़ा जा सकता है। यह प्रक्रिया आस्था को बदलने के असफल प्रयासों को विराम देते हुए प्राचीन पारंपरिक मान्यता को पुष्ट करने में सहायक होंगी। यद्यपि यह भी सत्य है कि यदि ऐसे प्रयास न हों तो भी आस्था पर कोई फर्क नहीं पड़ने वाला।

भगवान महावीर 2600वाँ जन्मजयंती महोत्सव के पावन प्रसंग पर पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने सामायिक रूप से दिगम्बर जैन आगम ग्रंथों का अध्ययन कर समाज के सामने वस्तुस्थिति का निरूपण किया। जिससे कतिपय इतिहासकारों द्वारा अपने अध्ययन के क्रम में व्यक्त अनुमानों से उत्पन्न हुई भ्रांति तथा उन इतिहासकारों एवं उनके समर्थकों के प्रखर व्यक्तित्व के कारण शृंखलाबद्ध होती भ्रांत धारणाओं के प्रसार पर विराम लगाया जा सके। तीर्थंकर की जन्मभूमियों पर अटूट श्रद्धा एवं भक्ति रखने वाली गणिनीप्रमुख आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी को जब इस क्षेत्र की उपेक्षा एवं बदहाली की जानकारी मिली तो उन्होंने द्रवित होकर ससंघ दिल्ली से कुण्डलपुर के लिए विहार किया। अनेक प्रतिकूलताओं के बावजूद सहस्राधिक किमी. की यात्रा कर ससंघ कुण्डलपुर पधारीं और दिनाँक 29 दिसम्बर 2002 से कुण्डलपुर विकास के एक नये युग का सूत्रपात हुआ। दूसरे जहाँ भ्रांतियों का निरसन कर दि. जैन आगम सम्मत परम्परामान्य जन्मभूमि कुण्डलपुर का प्रचार-प्रसार तथा जैन-जैनेतर समाज के एक वर्ग में 60-70 वर्षों के संक्रांति काल में हुए दिग्भ्रम से मुक्ति मिली, वहीं जन्मभूमि पर बने प्राचीन मंदिर के जीर्णोद्धार एवं परिसर के विकास का कार्य प्रारंभ हुआ। यह इस परमपावन जन्मभूमि की पुण्य वर्गणाओं का ही प्रताप है कि नवनिर्माण एवं जीर्णोद्धार के कार्य में स्थानीय बुद्धिजीवियों शासन, प्रशासन एवं ग्रामीण जन सभी का बहुत सहयोग रहा। लगभग 100 मी. की दूरी पर 2 एकड़ की जमीन पर विकसित किया गया नंद्यावर्त महल परिसर एक अत्यंत पुण्यवर्धक, रमणीक एवं इतिहास तथा अध्यात्म से ओतप्रोत रचना संकुल है। भगवान महावीर का 108 फीट उत्तुंग भव्य, विशाल, धवल जिनालय और दोनों ओर स्थित भगवान ऋषभदेव और नवग्रहशांति मंदिर अपनी वास्तुकला और सौम्यता के बेजोड़ नमूने हैं। भगवान महावीर जिनालय में स्थित भगवान महावीर का 11 फीट की विशाल सातिशय जिनबिंब अपनी सौम्य मनमोहक मुद्रा तथा भगवान ऋषभदेव जिनालय के ऋषभदेव अपनी रक्ताभ आभा के कारण तीर्थ यात्रियों के मन को मोह लेते हैं। नवग्रह जिनालयों के जिनबिंबों के सम्मुख अनुपमेय शांति की अनुभूति होती है। त्रिकाल चौबीसी जिनालय देखकर जहाँ जैन धर्म की निरन्तरता और शाश्वतता की अनुभूति होती है वहीं नंद्यावर्त महल में महावीर युग जीवंत हो उठा है। इस महल परिसर में स्थित सर्व सुविधायुक्त आवास गृहों में रहने वाले तीर्थयात्रियों को जब यह बतलाया जाता है कि यह सम्पूर्ण विकास का कार्य मात्र बीस महीने की अवधि में हुआ है। तो वे भी क्षेत्रीय ग्रामीणों के इस कथन से सहमति व्यक्त करते हैं कि माताजी केवल **एक साध्वी ही नहीं अद्वितीय दैवी शक्ति से सम्पन्न हैं....**। वरना इतना काम एवं इतनी कम अवधि ! कभी नहीं, कभी नहीं। शायद कर्मयोगी ब्र.रवीन्द्र कुमार जी का समर्पण भाव, विलक्षण संगठन की क्षमता, प्रबंध कौशल एवं निर्माण कार्य का विशद अनुभव ही इस 'नंद्यावर्त महल' की कल्पना को यथार्थ में बदल सका है। भारत की दि. जैन समाज का उदात्त आर्थिक सहयोग, उनकी श्रद्धा, आस्था और महावीर जन्मभूमि के प्रति समर्पण का भाव ही व्यक्त करता है। वरना इस पारंपरिक तीर्थ का नवीन परिसर इतनी जल्दी आकार नहीं ले पाता। जन्मभूमि कुण्डलपुर के प्रति जनजागरण एवं उसको जन-जन की अर्थांजलि समर्पित कराने के भाव

से जन्मभूमि कुण्डलपुर से उद्घाटित एवं इंदौर से प्रवर्तित भगवान महावीर ज्योति रथ का देश के विभिन्न अंचलों में किया गया हृदयग्राही एवं अभूतपूर्व स्वागत भारतीय जनमानस की भावनाओं को व्यक्त करने में सक्षम है। म.प्र हो या राजस्थान, उ.प्र. हो या बिहार, हर अंचल में रथ का स्वागत पूर्णश्रद्धा, भक्ति एवं उत्साह के साथ किया गया। श्री विजय कुमार जैन, कानपुर के संयोजकत्व में प्रवर्तित इस रथ को मिले समर्थन से भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर दि. जैन समिति के पदाधिकारियों को पर्याप्त संबल प्राप्त हुआ और यह संबल ही तीर्थ विकास के कार्य को गति देता रहा। परिणाम आपके सामने है। आप चाहें तो अन्य तीर्थों की विकास गति से इसकी तुलना करके वस्तु स्थिति का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। मैं अपनी ओर से तथा तीर्थंकर ऋषभदेव जैन विद्वत् महासंघ, कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ, इंदौर आदि अनेक संस्थाओं की ओर से तीर्थ विकास की प्रेरणास्रोत परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी तथा इसके आकल्पन में अपने ज्ञान और प्रतिभा का सदुपयोग करने वाली पूज्य प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी एवं निर्माणकार्य को अपने सामयिक निर्देशों से लाभान्वित करने वाले पूज्य क्षुल्लकरत्न श्री मोतीसागर जी महाराज के चरणों में समाज की ओर से वंदना करता हूँ।

कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ में यदि मैं यह उल्लेख न करूँ कि पूज्य माताजी और उनके संघ ने इस प्रवास में केवल इस तीर्थ का ही नहीं अपितु तीर्थ त्रिवेणी कुण्डलपुर, राजगृही और पावापुरी में विकास का पथ प्रशस्त किया तो समीचीन नहीं होगा। मात्र इतना ही क्यों इस पुण्यभूमि में जिनवाणी के सृजन का काम भी निर्वाधरूप से चलता रहा। यहाँ पर माताजी (गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी) ने षट्खण्डागम की 12वीं-13वीं पुस्तकों की संस्कृत टीका की रचना की तथा पूज्य प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी ने भगवान महावीर को समर्पित **भगवान महावीर जैन शब्दकोश** का ऐतिहासिक सृजन एवं वाचना कार्य सम्पन्न किया है। इस जैन शब्दकोश के प्रकाशन में पूज्य बड़ी माताजी, पूज्य क्षुल्लक जी, भाई रवीन्द्र जी सहित संघस्थ ब्र. बहनों विशेषतः ब्र. बहन स्वाति जी तथा प्रिय श्री जीवन प्रकाश जी ने अत्यन्त निस्पृह एवं समर्पणभाव से जो समयदान दिया वह अविस्मरणीय है। क्या-क्या लिखूँ, क्या-क्या गिनाऊँ कहने को बहुत है किन्तु समय और स्थान की सीमा है। अभिनंदन ग्रंथ प्रकाशन के शुभ अवसर पर महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर एवं उसके विकास की प्रेरणास्रोत पूज्य गणिनी माताजी के चरणों में वंदना करता हूँ तथा इस ग्रंथ के सृजन, संपादन, प्रकाशन में प्रत्यक्ष एवं परोक्ष सहयोग देने वाले सभी भाई/बहनों के प्रति आभार।

28-9-2004 **-डॉ. अनुपम जैन, इंदौर**

* * *

अभिनन्दनीय का अभिनन्दन

विश्व के धर्मगुरु के रूप में विख्यात यह रत्नगर्भा भारत वसुन्धरा चिरकाल से ही तीर्थंकरों और महापुरुषों की जन्मस्थली रही है। अनादिकाल से प्रवर्तित अहिंसामय जैनधर्म के प्रभावी प्रचारक एवं धर्मतीर्थ के प्रवर्तक अनन्तानंत तीर्थंकर हुए, जिनकी जन्मस्थली भरत क्षेत्र की शाश्वत अयोध्या नगरी रही। किन्तु हुण्डावसर्पिणी काल दोष के कारण वर्तमान चौबीसी के मात्र पाँच तीर्थंकरों ने अयोध्या नगरी में जन्म लिया शेष उन्नीस तीर्थंकरों ने भारतदेश के विभिन्न स्थानों पर जन्म लिया, जिनका स्पष्ट उल्लेख सर्वज्ञ प्रणीत दिगम्बराचार्यों द्वारा सहस्रों पूर्व लिखित प्राचीनतम ग्रंथ, यथा षट्खण्डागम एवं धवला, जयधवला टीका, तिलोयपण्णत्ति, उत्तरपुराण आदि ग्रंथों में निहित है। तीर्थंकरों की संख्या,

उनके नाम व चित्र, उनकी कल्याणकभूमियाँ, तिथियाँ उनके माता-पिता का नाम उनके प्रमुख गणधर उनकी देशना आदि सभी बातों का ज्ञान हमें दिगम्बराचार्यों द्वारा लिखित ग्रंथों से ही हुआ और मात्र ये ही ग्रंथ हमारे लिए प्रामाणिक हैं, 'आगम' शब्द में समाविष्ट तीन अक्षर क्रमशः 'आ' आप्त (सर्वज्ञ) द्वारा कथित, 'ग' गणधर द्वारा विस्तृत एवं 'म' मुनि द्वारा रचित अथवा उनकी ही बात को आधार बनाकर विदुषी गणिनी आर्यिका द्वारा रचित के अभिप्राय को इंगित करते हैं। इसीलिए सच्चे देव, शास्त्र गुरु को एक ही वर्ग में रखकर, इन पर श्रद्धा रखने को सम्यग्दर्शन कहा गया है। धर्म श्रद्धा का विषय है शोध व तर्क का नहीं। बोध प्राप्ति की भावना से बोध के साथ शोध हो तो शोध के फलस्वरूप अपने प्राचीन ग्रंथों में समाहित धर्म संबंधी अमूल्य धरोहर से वर्तमान पीढ़ी को परिचित कराया जा सकता है। शोध (खोज) व आविष्कार में अन्तर है। शोध में विद्यमान सत्य की जानकारी दी जाती है, आविष्कार में अपने मस्तिष्क की उपज नई चीज पेश की जाती हैं। अतः तीर्थंकरों की जन्मभूमियों, निर्वाणभूमियों आदि से संबंधित विदेशी यात्रियों के लेख कतिपय तथाकथित भारतीय इतिहासकारकों के लेखों के आधार पर प्राप्त जानकारी को शोध व खोज न कहकर उनके स्वतंत्र मस्तिष्क की निष्पत्ति या आविष्कार की संज्ञा दी जानी चाहिए, जो धार्मिकक्षेत्र में कभी मान्यता प्राप्त नहीं कर सकते।

तथाकथित शोध/खोज से प्राप्त परिणामों से फैलाये जा रहे भ्रम से कहीं दिगम्बर जैन आगम ग्रंथों की प्रामाणिकता पर ही प्रश्न चिन्ह न लग जायें, कहीं सर्वज्ञ प्रणीत जिनवाणी पर ही जन-जन की अश्रद्धा न हो जावे, इस आशंका ने ही इस अभिनंदन ग्रंथ को प्रकाशित करने को प्रेरित किया। क्योंकि वर्तमान में कतिपय तथाकथित शोध पत्रिकाओं के विशेषांकों में निहित विषय सामग्री ने तो अपनी माता पर ही प्रश्नचिन्ह लगाने जैसा कार्य कर दिया। हमारे तीर्थंकरों व तीर्थों की निर्णायक जिनवाणी माता ही है। इस युग के अंतिम तीर्थंकर वर्तमान शासन नायक भगवान महावीर तो उनके जन्म से ही सुरनर द्वारा वन्दनीय रहे हैं और तीर्थंकरों की कल्याणकभूमियाँ भी स्वतः ही वन्दनीय हो जाती हैं। उसी क्रम में **इस युग के अंतिम तीर्थंकर महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) तो शाश्वत अभिवन्दनीय रही है और चिरकाल तक श्रद्धालुओं द्वारा वन्दनीय रहेगी।** मिथ्यादृष्टि या अन्य मतावलम्बी तो तीर्थंकरों को भी न मानें, उनके सिद्धान्तों को न माने उनकी कल्याणक स्थलियों, तिथियों को न माने तो उनके मनाने, उनकी अनर्गल बात का प्रतीकार करने में हमें अपना अमूल्य समय नहीं लगाना चाहिए। ऐसे व्यक्तियों का अस्तित्व तो तीर्थंकर के काल में भी रहा था। तत्कालीन क्षुद्र स्वार्थ की पूर्ति हेतु, आर्थिक सहायता की प्राप्ति हेतु, प्रसिद्ध शिक्षण संस्थान में प्रवेश पाने के लिए या नौकरी प्राप्ति हेतु तो अपनी जाति (वर्ग) या आय के संबंध में असत्य प्रमाणपत्र लगाने की घटनाएं तो वर्तमान में दृष्टिगोचर होती हैं किन्तु जो दिगम्बर जैनागम के ज्ञाता कहलाते हैं, उनके द्वारा भी सरकार से प्राप्त आर्थिक अनुदान से मनोवांछित क्षेत्र को विकसित करने हेतु प्राचीन दिगम्बर जैनागम में वर्णित स्पष्ट तथ्यों की उपेक्षा करके उस स्थान को तीर्थंकर की जन्मभूमि होने की पुष्टि करना वास्तव में असह्य कृत्य इसलिए है कि एक भी तथ्य दिगम्बर जैन ग्रंथ का अमान्य हो जाये तो सर्वज्ञ प्रणीत दिगम्बर जैनागम संदेह के घेरे में आ जायेगा।

वर्तमान वैज्ञानिक युग में खोज के आधार पर प्राप्त निष्कर्षों को ही प्रचारित किये जाने के कारण धर्मग्रंथों में उल्लिखित केवली भगवान की वाणी पर से श्रद्धान कम न होने लगे तथा जिनवाणी की शाश्वता, सत्यता, अकाट्यता सर्वकालीन मान्य रहे, इसी पुनीत भावना से जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी बीसवीं सदी की प्रथम बालसती, रत्नत्रय चन्द्रिका, जिनशासन प्रभाविका सिद्धान्तकल्पतरुकलिका, आर्ष परम्परा की संरक्षिका, सरस्वती की प्रतिमूर्ति, विपुल साहित्य की सृजनकर्त्री, महान तीर्थोद्धारिका परमपूज्य गणिनीप्रमुख 105 आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी ने वर्तमानकालीन तीर्थंकरों से संबंधित कल्याणक भूमियों के विकास की सद्प्रेरणा की। उसी क्रम में सन् 1972 में दिगम्बर जैन

त्रिलोक शोध संस्थान की स्थापना हुई। पौराणिक नगरी एवं दानतीर्थ हस्तिनापुर में 'जम्बूद्वीप' की विश्व प्रसिद्ध रचना आपकी प्रेरणा व आशीर्वाद से पूर्ण हुई जिसका विकसित रूप देखकर सभी आश्चर्यान्वित होते हैं। जैनागम में वर्णित भौगोलिक रचना के विषय में जिनने संदेह व्यक्त किया, उनके लिए यह महान रचना आगम सम्मत समाधान है। इस रचना को 'मानव निर्मित स्वर्ग' की संज्ञा दी जाती है। तीन पद के धारी तीन तीर्थंकरों शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ व अरहनाथ की जन्मभूमि के विकास के उपरान्त पूज्य माताजी की प्रेरणा व आशीर्वाद से शाश्वत जन्मभूमि अयोध्या में समवसरण मंदिर और त्रिकाल चौबीसी मंदिर निर्मित हुआ और अयोध्या भगवान ऋषभदेव की जन्मभूमि के रूप में विश्वविख्यात हुई। प्रीतविहार-दिल्ली में ऋषभदेव कमल मंदिर, मांगीतुंगी (महा.) में सहस्रकूट कमल मंदिर, अहिच्छत्र में ग्यारह शिखर वाला तीस चौबीसी मंदिर और इस युग के प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव की दीक्षा एवं केवलज्ञान कल्याणक भूमि प्रयाग में 'तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली' का भव्य निर्माण पूज्य माताजी की ही प्रेरणा के सुफल हैं। सम्पूर्ण भारत में अनेकानेक धर्मायतनों का निर्माण पूज्य माताजी की प्रेरणा एवं आशीर्वाद से सम्पन्न हुए हैं और हो रहे हैं।

पूज्य माताजी सर्वज्ञ की वाणी की दृढ़ श्रद्धानी हैं, ज्ञान वैदुष्य की धनी हैं। लगभग 250 धार्मिक ग्रंथों का उनकी अनवरत चलने वाली दिव्य लेखनी से प्रसूत होना उनके असीम आगम ज्ञान, अनुपम काव्य प्रतिभा व अद्‌भुत अभिव्यक्ति कौशल को दर्शाता है। किन्तु पूज्य माताजी की यह विशेषता रही कि उन्होंने दिगम्बराचार्यों द्वारा प्रणीत प्राचीन ग्रंथों में निहित तथ्यों को यथावत् रखा। उन्होंने अपना मत कभी नहीं थोपा। पूज्य माताजी दिगम्बर जैन संस्कृति, इतिहास व आगम की सजग संरक्षिका हैं। पांच दशक से भी अधिक दीक्षित काल में आपने सदैव जिनागम, जैनधर्म, धर्मायतन व तीर्थों के विकास की, संरक्षण की प्रबल प्रेरणा की और यह सर्वमान्य है कि जिस कार्य की आप प्रेरणा करती हैं, वह अल्पावधि में ही आशातीत सफलता के साथ आपके आशीर्वाद से इसलिए पूर्ण हो जाता है क्योंकि उसके साथ धार्मिकजनों का सहयोग सहज में प्राप्त हो जाता है। तीर्थोद्धार की इसी पुनीत श्रृंखला में चतुर्थकाल की अंतिम रत्नगर्भा, इस युग के अंतिम तीर्थंकर वर्तमान शासन नायक भगवान महावीर की दिगम्बर जैनागमोक्त, सदियों से जन-जन की आराध्य व आस्था का केन्द्र रही जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) का विकास पूज्य माताजी की प्रेरणा से इतना द्रुतगति से हुआ कि भिन्न मत रखने वाले भी यह मानने को विवश हो गये कि साक्षात् तीर्थंकर की जन्मभूमि होने का ही यह चमत्कार है कि काल के थपेड़े से वैभवहीन बनी यह पावन भूमि, इतने अत्यल्प समय में प्राचीन गौरव को प्रदर्शित करने वाली बन गई। उन्नत शिखरयुक्त शताधिक फुट उत्तुंग भगवान महावीर जिनमंदिर जिसमें सात हाथ ऊँची सफेद संगमरमर की नयनाभिराम मनोज्ञ अतिशयकारी भगवान महावीर की खड्‌गासन मूर्ति दर्शनार्थियों के मनोरथ को पूर्ण करती हैं। यहाँ पर निर्मित भगवान ऋषभदेव जिनमंदिर, श्रीनवग्रहशांति जिनमंदिर, त्रिकाल चौबीसी मंदिर, राजकुमार महावीर का शाही निवास नंद्यावर्त महल एवं शांतिनाथ जिनालय के दर्शन कर उन दर्शनार्थियों को अपनी ही आँखों पर विश्वास नहीं होगा जो इस शाश्वत महावीर जन्मभूमि पर दीर्घकाल तक तो अपनी परम्परागत आस्था व्यक्त करने आते रहे किन्तु किसी कारण वहाँ पिछले दो वर्षों में यहाँ नहीं आ पाये। महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) में सदियों पूर्व निर्मित प्राचीन मंदिर परिसर में भी पूज्य माताजी की प्रेरणा से 36 फुट ऊँचे कीर्तिस्तंभ का निर्माण भी सम्पन्न हुआ। महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर के विकास के साथ-साथ यहाँ के प्रवास में ही पूज्य माताजी ने भगवान महावीर की निर्वाणस्थली पावापुर एवं देशनास्थली राजगृही, गौतम स्वामी की निर्वाणस्थली गुणावां एव शाश्वत सिद्धक्षेत्र सम्मेदशिखर जी में भी मंदिरों का निर्माण करवाकर तीर्थों को विकसित करवाया।

परमपूज्या माताजी की प्रेरणा व आशीर्वाद से सम्पन्न इन कार्यों का अवलोकन कर सभी धर्मनेता, विद्वज्जन, राजनेता, श्रेष्ठीगण, ग्रामीणजन सहज भाव से कहते हैं कि इतना आश्चर्यकारी कार्य दैवी

शक्ति से ही संभव है अतः पूज्य गणिनीप्रमुख 105 श्री ज्ञानमती माताजी मात्र जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी ही नहीं वरन् उनमें एक दैवी शक्ति विद्यमान है।

भगवान महावीर और उनकी जन्मस्थली कुण्डलपुर तो विगत 2600 वर्षों से सर्वजन वन्दनीय रहा है और रहेगा, किन्तु इस जन्मभूमि को विकसित करने की प्रबल प्रेरणादात्री परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी भी युगों-युगों तक श्रद्धा से स्मरण की जाती हरेंगी। वर्तमान युग में पूज्य माताजी की प्रेरणा से सम्पन्न जनहित व राष्ट्रहित व विश्व शान्त्यर्थ सम्पन्न विविध कार्यों से प्रभावित होकर ही भारत के राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे. कलाम, प्रधानमंत्री आदि सर्वोच्च नेताओं ने माताजी की प्रेरणा से निष्पन्न कार्यों और योजनाओं की प्रशंसा की और आशीर्वाद प्राप्त किया।

पूज्य माताजी द्वारा प्रेरित सभी कार्यों व योजनाओं को साकार करने में उन्हीं की सुशिष्या अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी प्रज्ञाश्रमणी 105 आर्यिका श्री चंदनामती माताजी व उनके ही शिष्य क्षुल्लकरत्न पीठाधीश 105 श्री मोतीसागर जी महाराज के सामयिक समायोजन व निर्देशन का लाभ प्राप्त होता रहता है। अल्पावधि में वृहद् निर्माणकार्य पूरा कराने का श्रेय कर्मयोगी ब्रह्मचारी श्री रवीन्द्र कुमार जी जैन (अध्यक्ष-दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान) की कर्मठता, अहर्निश सक्रियता, धर्मस्थलों के निर्माण का विशद अनुभव, अद्वितीय प्रशासनिक क्षमता व संगठनशक्ति व्यवहार माधुर्य आदि को ही है।

विगत 5-6 दशकों में कतिपय प्रभावी लोगों द्वारा महावीर जन्मभूमि के संबंध में फैलाये गये भ्रम का आगमोक्त तथ्यों से निरसन करना ही प्रस्तुत अभिनंदन ग्रंथ के प्रकाशन का उद्देश्य है। ताकि दिगम्बर जैन आगम ग्रंथों को संदिग्ध बनाये रखनेके दुष्प्रयासों को विराम लग सके। प्रस्तुत ग्रंथ के प्रकाशन से महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर के प्रति सदियों से प्रदर्शित विशाल जनआस्था से उनका दुस्साहस समाप्त होगा, किंचित् व्याप्त भ्रम दूर हो गया तथा वास्तविक जन्मभूमि अपने प्राचीन गौरव से सम्पन्न हो गयी। मैं तीर्थंकर भगवान महावीर, उनकी जन्मभूमि-कुण्डलपुर व उसके पुर्नरुद्धार की प्रेरणादात्री पूज्य गणिनी प्रमुख आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी ससंघ का बारम्बार वंदन, अभिनंदन करता हूँ।

-प्रो. टीकमचंद जैन, नवीन शाहदरा-दिल्ली
(प्राध्यापक-दिल्ली विश्वविद्यालय)

* * *

विनयांजलि

जैन वाङ्मय में भगवान महावीर का जन्मभूमि विदेह देश में कुण्डलपुर के नाम से उल्लिखित हुआ है। आचार्य पूज्यपाद कृत निर्वाणभक्ति, आचार्य जिनसेन कृत हरिवंशपुराण, आचार्य गुणभद्र कृत उत्तरपुराण, महाकवि असग कृत वर्धमानचरित, श्री दामनंदिकृत पुण्यसार संग्रह, विबुध श्रीधरकृत वड्ढमाणचरिउ एवं पं. आशाधार कृत त्रिषष्टिस्मृतिशास्त्र आदि ग्रंथों में कुण्डलपुर तथा भट्टारक सकलकीर्ति कृत वीर वर्धमानचरित, महाकवि पद्म कृत महावीर रास तथा पाश्चात्यवर्ती साहित्य में प्रायः कुण्डलपुर का भगवान महावीर जन्मभूमि के रूप में उल्लेख हुआ है।

बिहार में नालंदा जिला मुख्यालय से लगभग 3 किमी. दूरी पर बड़गाँव नामक एक ग्राम है। इस ग्राम से बाहर एक जिनालय है। जिसे कुण्डलपुर कहा जाता है। इसे भगवान महावीर की जन्मभूमि माना जाता रहा है। इधर ऐतिहासिक जैन जैनेतर प्रमाणों को आधार बनाकर कुण्डग्राम वैशाली को भगवान महावीर की जन्मभूमि मानने की मान्यता प्रचलित हुई है। मेरा तो स्पष्ट अभिमत है कि जैन

समाज के हित में एक ही जन्मभूमि मानने का विचार स्थिर होना चाहिए।

पूज्य गणिनी आर्यिका ज्ञानमती माताजी के जन्मदिन शरदपूर्णिमा के अवसर पर कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ के लोकार्पण का समाचार प्राकर प्रमुदित हूँ।

इस अवसर पर पूज्य माताजी के चरणों में वंदामि निवेदन करता हुआ मैं सादर विनयांजलि अर्पित करता हूँ।

संघ के चरणों में यथायोग्य नमन।

-डॉ. जयकुमार जैन, मुजफ्फरनगर
(अध्यक्ष-संस्कृत विभाग एस.डी. कालेज)

* * *

अखण्ड लक्ष्य से हुई कार्यसिद्धि

पुराने समय के कवियों द्वारा कही गई सूक्तियाँ बड़ी ही सटीक प्रतीत होती हैं, जब भगवान महावीर का 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव राष्ट्रीय स्तर पर शासन-प्रशासन द्वारा उत्सवों के माध्यम से मनाया जा रहा था, उस समय किसी का ध्यान कुण्लपुर की ओर नहीं था; जिनका जन्मकल्याणक महोत्सव हम इतने श्रद्धा और उल्लास से मना रहे हैं, उनकी जन्मभूमि में भी कोई उत्सव होना चाहिए उसे भी दुनिया के समक्ष लाना चाहिए यह किसी ने भी नहीं सोचा था। तब हमारे आपके इस भारतवर्ष की जैन समाज के पुण्योदय से गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की दृष्टि उस ओर गई और उन्होंने तीर्थविकास का दृढ़ संकल्प लेकर राजधानी दिल्ली से फरवरी 2002 को भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर के लिए विहार किया। पूज्य माताजी ने समूचे भारत की जैन समाज का आह्वान किया, कि हमें कुण्डलपुर तीर्थ बचाना है, समाज ने पूज्य माताजी को आश्वासन दिया, "आधी रोटी खायेंगे-कुण्डलपुर तीर्थ बचायेंगे"। पूज्य माताजी का निर्णय भी अटल था, यदि उनने आगम के परिप्रेक्ष्य में कोई निर्णय ले लिया तो कितनी भी बाधाएं आ जाएं लेकिन उनका कदम पीछे नहीं हटता, सभी विरोधों को गौण करके जिनधर्म की सेवा के लिए प्रतिक्षण तत्पर रहने की भावना को सदैव अपने जीवन में अपनाकर, अपने शिष्यों एवं समाज को भी सदैव यही प्रेरणा दी कि कैसी भी परिस्थिति आ जाए, धर्म और धैर्य को कभी मत छोड़ना और जिनसंस्कृति की रक्षा में प्राण न्योछावर करने से पीछे नहीं हटना, क्योंकि शरीर नश्वर है तो क्यों न इसे जिनधर्म सेवा करते हुए ही छोड़ा जाए। माताजी का यह अखण्ड लक्ष्य ही अल्पावधि में तीर्थ के विकास रूप कार्य को सिद्ध करने में कारण बना।

वास्तव में पूज्य माताजी के द्वारा दिये गये उपदेशों के एक-एक शब्द जीवन में अंगीकार करने योग्य है। पूज्य माताजी कहती हैं कि हर व्यक्ति के नाम में कोई अर्थ अवश्य होता है, यदि हम उसी अर्थ को अपने जीवन में आत्मासत कर लें, तो जीवन सार्थक हो जायेगा।

वैसे तो पूज्य माताजी की प्रेरणा से हुए समस्त कार्य अद्वितीय है और विश्व के लिए अमिट धरोहर के रूप में है, परन्तु उसमें भी वर्तमान में जो भगवान महावीर की जन्मभूमि का उद्धार किया है वह समयोचित, स्वर्णिम इतिहास का स्वर्णिम पृष्ठ है जो कि हम जैसे लोगों को धर्मरक्षा में दृढ़ रहने की प्रेरणा देता रहेगा। वास्तव में पूज्य माताजी ने 'कुण्डलपुर तीर्थ को बनाया नहीं बचाया है" हम इस अवसर पर भगवान महावीर से यही मंगलकामना करते हैं कि पूज्य माताजी दीर्घायु हों और हम सभी को अपना मार्गदर्शन प्रदान करती रहें।

–कृष्ण कुमार जैन, आरा
(मंत्री-हरखेन कुमार जैन पारमार्थिक ट्रस्ट)

* * *

मेरे जीवन के अविस्मरणीय क्षण

सन् 1993 में पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के पावन चरणकमल तीर्थंकरों की शाश्वत जन्मभूमि अयोध्या तीर्थक्षेत्र पर पड़े, उस समय वर्षों से मन में दबी वैराग्य भावना काललब्धि को पाकर प्रस्फुटित हो उठी और पूज्य माताजी की जन्मभूमि टिकैतनगर में जब 41 वर्षों बाद उनका चातुर्मास हुआ तब मुझे ब्रह्मचर्य जैसे महान व्रत को लेने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, इससे पूर्व कितनी ही बार मुझे अपने परिवार के साथ पूज्य माताजी की कर्मस्थली की अद्वितीय रचना जम्बूद्वीप के दर्शनार्थ जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। वास्तव में धरती के स्वर्ग के समान उस रचना को देखकर मन आह्लादित हो उठता था और पूज्य माताजी के प्रति मन श्रद्धा से भर उठता था। ऐसा लगता था कि मानो आचार्य अकलंक देव ही साक्षात् इस रूप में जिनसंस्कृति के रक्षार्थ अवतरित हो गए हों या साक्षात् ब्राह्मी माता इस कलियुग में दिग्भ्रमित मानवों को सही दिशा दिखाने हेतु इस भूतल पर आ गयी हैं और शायद मेरी यह सोच सर्वथा सत्य ही थी क्योंकि जब से पूज्य माताजी ने जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर के विकास के बाद अयोध्या तीर्थ का जीर्णोद्धार एवं विकास करवाकर जनमानस को उसे **ऋषभजन्मभूमि** के नाम से परिचित करवाया, तब से विकास कार्यों की अजस्र धारा निरन्तर प्रवाहमान है और इस मध्य उन्होंने मांगीतुंगी, अहिच्छत्र, प्रयाग, रत्नपुरी, कौशाम्बी, कम्पिलपुरी, सिंहपुरी, चन्द्रपुरी आदि अनेकों तीर्थक्षेत्रों व जन्मभूमियों का विकास किया और प्रेरणा प्रदान की, अनेक महान ग्रंथों का सृजन किया, अनेक शिष्य-शिष्याओं को कल्याण के मार्ग पर लगाया, अनेकों राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय उत्सवों-महोत्सवों के माध्यम से जन-जन को जैनधर्म की प्राचीनता का परिज्ञान करवाया, अनेक शैक्षणिक कार्यक्रमों द्वारा पाठ्यपुस्तकों में लिखित भ्रामक तथ्यों से जनता को अवगत कराकर जैन-जैनेतर सभी के समक्ष जैनधर्म एवं चौबीसों तीर्थंकरों के जीवन के वास्तविक स्वरूप को प्रस्तुत करने का साहसिक कार्य किया, जो आज भी चल रहा है।

इन सभी कार्यों का वर्णन कुछ शब्दों में करना शायद कठिन ही नहीं दुःसाध्य भी है। जिसका उपकार यह संसार युगों-युगों तक नहीं चुका सकता है, पर इन कार्यों में उन्होंने जो चौबीसों तीर्थंकरों की सोलह जन्मभूमियों के विकास कार्य का शंखनाद किया है, वह अलौकिक और विराट है क्योंकि इन्होंने मात्र तीर्थों के विकास का बीड़ा नहीं उठाया है अपितु जैन संस्कृति का संरक्षण एवं संवर्द्धन भी किया है और उसमें भी भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर तीर्थ का विकास तो वह ऐतिहासिक कार्य है, जो वर्णनातीत है। जिन्हें लोग अभी तक जम्बूद्वीप रचना की सम्प्रेरिका के रूप में जानते थे आज तीर्थंकर भगवन्तों की जन्मभूमियों एवं पंचकल्याणक भूमियों के विकास कार्य की सम्प्रेरिका के रूप में जानते हैं।

कुण्डलपुर के विकास के चरण में देखते ही देखते मात्र 1 वर्ष में देवोपुनीत रचना के समान पाँच-पाँच गगनचुम्बी जिनमंदिरों का निर्माण होकर यह तीर्थ भी विश्व के क्षितिज पर **'महावीर जन्मभूमि'** के नाम से चमक उठा और इसी तीर्थ विकास क्रम में अब भगवान पार्श्वनाथ-सुपार्श्वनाथ की जन्मभूमि बनारस की बारी है, जहाँ 6 जनवरी 2005 को 'भगवान पार्श्वनाथ तृतीय सहस्राब्दी महोत्सव" का उद्घाटन होकर 1 वर्ष तक पूरे भारत में इसे मनाया जाएगा।

वास्तव में ब्रह्मचर्य व्रत लेने के बाद मेरे जीवन का प्रत्येक क्षण अविस्मरणीय है जो कि ऐसी आगम की ज्ञाता, साक्षात् सरस्वती माता की अवतार पूज्य माताजी के चरण सानिध्य में रहकर ऐसे ऐतिहासिक व महान कार्यों को देखने का सौभाग्य प्राप्त हो रहा है। मुझे गौरव है कि मुझे भी उसी वंशावलि में जन्म लेकर त्यागमार्ग को अंगीकार करने का एवं ऐसी महान गुरु की सेवा सुश्रूषा करने का सुयोग मिला। ऐसी विराट व्यक्तित्व की धनी माताजी का वरदहस्त सदैव हम पर बना रहे। यही वीरप्रभू से प्रार्थना है।

–ब्र. (कु.) इन्दु जैन

(संघस्थ – गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी)

खुशियों के दीप जले कुण्डलपुर में

"यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचितः। समं भांति ध्रौव्यव्ययजनिलसंतोंतरहिताः।।
जगत्साक्षी मार्ग प्रकटनपरो भानुरिव यो। महावीरंस्वामी नयनपथगामी भवतु मे।।"

कविवर भागचन्द जी ने महावीराष्टक स्तोत्र में भगवान महावीर स्वामी की स्तुति करते हुए लिखा कि जिस प्रकार दर्पण में समस्त पदार्थ झलकते हैं, उसी प्रकार आपके केवलज्ञानरूपी दर्पण में समस्त जीवादि पदार्थ, उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य सहित एकसाथ प्रतिभासित होते हैं अतः जिस प्रकार सूर्य लौकिक मार्गों को प्रकाशित करता है, उसी प्रकार मोक्षमार्ग को प्रकाशित करने वाले आप जगत के ज्ञाता दृष्टा हैं अतः आप मेरे नयनपथगामी बनें अर्थात् मुझे दर्शन दें।

भगवान महावीर स्वामी ने आज से 2603 वर्ष पूर्व कुण्डलपुर नगरी में जन्म लिया और 2530 वर्ष पूर्व पावापुरी से निर्वाणपद को प्राप्त किया, ऐसा प्राचीन जैन ग्रंथों में है। राजा सिद्धार्थ के नंद्यावर्त महल में रानी त्रिशला के गर्भ में भगवान महावीर के आने के छः महीने पहले और छः महीने बाद तक लगातार 15 महीने तक रत्नों की वर्षा हुई।

जब भगवान महावीर का 2600 जन्मजंयती महोत्सव सारे भारत में धूमधाम से मनाया जा रहा था लेकिन भगवान महावीर की जन्मभूमि वीरान पड़ी थी, वहाँ कोई दीपक जलाने वाला भी नहीं था, कोई खुशियाँ मनाने वाला नहीं था, यह जानकर पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी को बहुत ही दुःख हुआ और उन्होंने मन में यह निर्णय कर लिया कि भगवान की जन्मभूमि को विकसित करना है, वहाँ जाकर भगवान की जन्मजयंती को जोरशोर से मनाना है और सचमुच में माताजी ने अपने संकल्प को पूरा किया, जिसका प्रत्यक्षफल आप सभी कुण्डलपुर में देख सकते हैं।

जो मानव दिग्भ्रमित हो रहे हैं, वे इस कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ को पढ़कर अपने भ्रम को छोड़कर भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर को मानें और उसका दर्शन-वंदन करके अपने जीवन को पवित्र करें और मैं भी भगवान की जन्मभूमि में रहकर उनके दर्शन करके अपने जीवन को सफल करूँ, यही मेरी भगवान महावीर के चरणों में विनयांजलि है।

—ब्र. (कु.) अलका जैन
(संघस्थ—गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी)

* * *

कुण्डलपुर के आसपास का क्षेत्र भी पवित्र है

भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर के विकासकार्य की बात सुनकर हृदय प्रफुल्लित हो उठा, उससे भी अधिक प्रसन्नता यह जानकर हुई कि पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी स्वयं चलकर कुण्डलपुर आ रही हैं। कुण्डलपुर के नजदीक होने के कारण मुझे कई बार कुण्डलपुर जाने का अवसर प्राप्त होता रहता है, जब भी वहाँ जाता हूँ हर बार कुछ न कुछ नया काम देखने को मिलता है। वास्तव में कुण्डलपुर का विकास अपनी आँखों के सामने होता देखकर अपने भाग्य पर बड़ा गर्व महसूस करता हूँ। जब भी मौका मिलता है, कुण्डलपुर जाकर भगवान महावीर का एवं पूज्य माताजी के संघ का दर्शन करके हार्दिक प्रसन्नता का अनुभव होता है। वहाँ पहुँचने के बाद घर वापस आने की बिल्कुल इच्छा नहीं होती है परन्तु इच्छा न होते हुए भी वापस आना पड़ता है। भगवान महावीर स्वामी के चरणों में बारम्बार नमन करते हुए उनकी पावन जन्मभूमि के प्रति अपनी विनम्र विनयांजलि समर्पित करता हूँ।

—कमल कुमार जैन, आरा

* * *

इस युग की माँ शारदे

सन् 1993 में जब पूज्य माताजी ने भगवान ऋषभदेव की जन्मभूमि अयोध्या के लिए विहार किया तो मन में बहुत कष्ट हुआ पर फिर यह सोचकर संतोष करना पड़ा कि चलो, साल-दो-साल में माताजी वापस आ ही जाएंगी परन्तु वहाँ से आने के बाद दिल्ली, मांगीतुंगी, प्रयाग की लगातार पदयात्रा चलती ही रही, फिर भी प्रयाग के बाद तो हमने पूरा निश्चय कर लिया था कि अब तो माताजी हस्तिनापुर अवश्य आएंगी और हम अब माताजी को कहीं नहीं जाने देंगे परन्तु ऐसा नहीं हो सका, भगवान ऋषभदेव के 10 वर्ष तक भरपूर प्रचार-प्रसार के पश्चात् पूज्य माताजी भगवान महावीर स्वामी के पीछे पड़ गईं, उनकी जन्मभूमि कुण्डलपुर में जाकर वहाँ विशाल जिनमंदिरों के निर्माण कराए। उसके आसपास स्थित तीर्थों के विकास की प्रेरणा प्रदान की।

इसी शृंखला में मुझे भी पूज्य माताजी के आशीर्वाद से राजगृही के जवाहर नवोदय विद्यालय में भगवान महावीर स्वामी की पद्मासन प्रतिमा विराजमान कराने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, विद्यालय में शिक्षा ग्रहण करने वाले हजारों बालक-बालिकाएं उन भगवान महावीर स्वामी की मनोहारी प्रतिमा का दर्शन करके अपने अध्ययन को प्रारंभ करते हैं।

भगवान महावीर स्वामी के चरणों में बारम्बार नमन करते हुए पूज्य माताजी की स्वस्थता एवं आयु-दीर्घता की मंगलकामना करता हूँ।

—मनोज जैन (हस्तिनापुर वाले),
डिफेन्स कालोनी, मेरठ

* * *

जन्मभूमि कुण्डलपुर-एक निर्विवाद सत्य

जैनधर्म के प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव हैं और 24वें तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी हैं। भगवान ऋषभदेव ने अयोध्या में जन्म लिया यह निर्विवाद है परन्तु भगवान महावीर ने कुण्डलपुर में जन्म लिया इस पर पता नहीं क्यों, विवाद किया जा रहा है? न हमने भगवान महावीर को कुण्डलपुर में जन्म लेते देखा न वैशाली में, परन्तु हमारे शास्त्र-जिनागम हमें बताते हैं कि भगवान महावीर ने कुण्डलपुर में जन्म लिया था अतः हमें इस बात को स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। जब रात्रि भोजन त्याग, जल छानकर पीना, देव-शास्त्र-गुरु की भक्ति करना आदि सारी बातें हम शास्त्र की मान लेते हैं फिर इसी बात को क्यों नहीं स्वीकार करना चाहते हैं कि भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर है? हमारे अन्दर इतनी अधिक बौद्धिक क्षमता तो है नहीं कि हम तीर्थंकरों की जन्मभूमियों का निर्णय करें अतः हमें गुरुओं के द्वारा बताई गई शास्त्र की बातों पर विश्वास करके अपने श्रावकोचित कर्तव्य का पालन करना चाहिए। इस शृंखला में पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के इस जग पर बहुत उपकार हैं ज़िन्होंने हमें वास्तविकता से परिचित कराया।

पूज्य गणिनी माताजी के श्रीचरणों में शत शत नमन।

—राकेश जैन (मवाना वाले), सदर-मेरठ

* * *

युग-युग तक सब दोहराएंगे, तेरी अमिट कहानी

बचपन में कई बार सुना करती थी कि कोई ज्ञानमती माताजी हैं जिन्होंने अवध प्रांत में जन्म लेकर संपूर्ण विश्व में अपने ज्ञान का डंका बजा रखा है, बड़े-बड़े विद्वान भी उनके आगे नतमस्तक होते हैं, विश्व की अद्वितीय जम्बूद्वीप रचना उन्होंने बनवाई है, जिस भूमि पर उनके चरण पड़ जाते हैं, वहाँ जंगल में मंगल हो जाता है, जिन तीर्थों की ओर उनकी दृष्टि पड़ जाती है, वह विकास के चरम लक्ष्य को प्राप्त हो जाते हैं किन्तु उनके दर्शन की भावना होते हुए भी मैं कभी दर्शन न कर सकी थी।

सन् 1996 में जब पूज्य माताजी मांगीतुंगी की ओर विहार कर रही थीं, तब म.प्र. आने पर सुसनेर में उनका मंगल पदार्पण हुआ और उनके दर्शन मात्र से मेरे जीवन की दिशा बदल गयी। पूज्य माताजी द्वारा लिखित **'मेरी स्मृतियाँ'** जब पढ़ती थी, तब लगता था कि क्या सचमुच माताजी एक नारी होकर इतने महान कार्य कर रही हैं? मन में विश्वास नहीं होता था लेकिन जब प्रत्यक्ष में देखा तो यही पाया कि जितना मैंने सुना और पढ़ा था, माताजी उससे कहीं ज्यादा महान हैं। आज लोग जहाँ ऋषभ जन्मभूमि के नाम से अयोध्या को, अनंतानंत सिद्धों की निर्वाणभूमि के नाम से मांगीतुंगी को, शाश्वत निर्वाणभूमि के नाम से सम्मेदशिखर को, भगवान ऋषभदेव की दीक्षा व केवलज्ञान भूमि के नाम से प्रयाग तीर्थ को, जम्बूद्वीप रचना एवं भगवान शांति, कुंथु एवं अरहनाथ की जन्मभूमि के नाम से हस्तिनापुर को एवं भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर के नाम से कुण्डलपुर को जानते हैं, वहीं तीर्थंकर जन्मभूमि विकास की सम्प्रेरिका के नाम से लोग माताजी को जानते हैं। उन्होंने विश्व को जो अमूल्य निधियाँ दी हैं, आने वाले युगों-युगों तक उनकी गौरवगाथा इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित रहेगी और जन-जन उसको गाकर स्वयं को पुण्यशाली व गौरवान्वित महसूस करेंगे। मेरा जीवन धन्य हो गया जो मुझे ऐसी गुरु मिलीं, उनकी छत्रछाया सदैव हम पर बनी रहे, यही वीरप्रभू से मंगल प्रार्थना है।

—ब्र. (कु.) प्रीति जैन

(संघस्थ—गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी)

* * *

जन्म हुआ सार्थक मेरा

भगवान महावीर की जन्मभूमि का विकास पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से हुआ, यह बात तो आप बहुत अच्छी तरह से जान चुके हैं, अब मैं आपको बताता हूँ कि कुण्डलपुर के साथ ही उसके आसपास की तीर्थ त्रिवेणी को पूज्य माताजी ने विकसित करा दिया है। वे तीन तीर्थ हैं—भगवान मुनिसुव्रतनाथ की जन्मभूमि एवं भगवान महावीर की प्रथमदेशना स्थली राजगृही, भगवान महावीर स्वामी की निर्वाणभूमि पावापुरी एवं भगवान महावीर के प्रथम गणधर श्री गौतम स्वामी की निर्वाणभूमि गुणावां जी।

पूज्य माताजी की प्रेरणा से राजगृही में भगवान मुनिसुव्रतनाथ की विशाल खड्गासन प्रतिमा स्थापित हुई, पावापुरी में भगवान महावीर स्वामी की विशाल खड्गासन की स्थापना हुई एवं गुणावां में श्री गौतम स्वामी की पद्मासन प्रतिमा भी पूज्य माताजी की ही प्रेरणा का सुफल है।

मैं अपने आपको बहुत ही सौभाग्यशाली समझता हूँ कि पूज्य माताजी के आशीर्वाद से भगवान महावीर स्वामी की निर्वाणभूमि पावापुरी में मुझे मेरे एवं मेरे साढू श्री सुभाषचंद जैन-ऋषभविहार, दिल्ली को भगवान महावीर स्वामी की प्रतिमा स्थापन एवं लघु कमलाकार मंदिर निर्माण कराने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। यह प्रतिमा और जिनमंदिर युगों-युगों तक असंख्य भव्यप्राणियों को सम्यग्दर्शन प्राप्त कराने में सहायक बने, यही वीरप्रभू से मंगल कामना है तथा पूज्य माताजी चिरकाल तक स्वस्थ एवं चिरायु रहकर हमें इसी प्रकार से मार्गदर्शन प्रदान करती रहें, यही शुभेच्छा है।

—विजय कुमार जैन (पारस प्रिन्टर्स), दरियागंज-नई दिल्ली

* * *

अहिंसा के अवतार-भगवान महावीर स्वामी

वर्तमान में हम और आप जिनके शासनकाल में जीवन यापन कर रहे हैं, वे हैं इस युग के चौबिसवें तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी, जिन्हें सारी दुनिया **"अहिंसा के अवतार"** के नाम से जानती है।

बचपन से ही मैं अपने दादी-बाबा, माता-पिता आदि के साथ सम्मेदशिखर की यात्रा के क्रम में राजगृही, पावापुरी, कुण्डलपुर, गुणावां आदि तीर्थों के दर्शन करके अपना अहोभाग्य समझता था। धीरे-धीरे राजगृही, पावापुरी, गुणावां इन तीर्थों का विकास तो हो गया परन्तु कुण्डलपुर में जैसा एक छोटा सा मंदिर 50 साल पहले था, वैसा ही 2 साल पहले तक भी था। अब मुझे प्रसन्नता है कि पूज्य माताजी की प्रेरणा के फलस्वरूप अन्य तीर्थों की अपेक्षा कुण्डलपुर अधिक विकसित होकर समाज के समक्ष प्रस्तुत हुआ है।

मुझे भी पूज्य माताजी की प्रेरणा से नंद्यावर्त महल परिसर कुण्डलपुर में नवग्रहशांति जिनमंदिर निर्मित कराने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है, नवग्रहों की शांति करने वाली ये नव जिनप्रतिमाएं सभी के लिए कल्याणकारी हों, यही मंगलकामना है तथा भगवान महावीर स्वामी एवं तीर्थ विकास की प्रेरणास्रोत पूज्या माताजी के चरणों में कोटिशः नमन।

–ज्ञानचंद जैन, आरा

* * *

गणिनी ज्ञानमती माताजी की निर्माण प्रेरणाओं का शिखर है-कुण्डलपुर

"पंचम काल में आत्म कल्याण के इच्छुक जीवों को अतिशायी फलप्रदायी वीतराग प्रभु की भक्ति का ही आश्रय लेना श्रेयस्कर है, क्योंकि यही एक ऐसा उत्तमोत्तम साधन है कि जिसके आश्रय से महान पुण्य का संचय करके भव्य जीव जहाँ इहलोक संबंधी अपनी समस्त मनोकामनाओं को पूर्ण कर सकते हैं, वहीं अग्रिम भवों में द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव रूप चतुष्टय की उत्कृष्टता को प्राप्त कर ध्यानाग्नि के द्वारा आत्मा के वीतराग स्वरूप को भी प्रगट कर सकते हैं, अतः प्रत्येक आत्मार्थी जीव को प्रयासपूर्वक अपने तन-मन के कण-कण में महान निर्दोष, राग-द्वेष-मोहरूपी मलों से पूर्ण स्वतंत्र वीतरागी जिनेन्द्र प्रभु को समाहित कर लेना चाहिए, संसार के समस्त राग संबंधों को तिरोहित कर उन्हीं के चरणों के राग में स्वयं को आसक्त कर लेना चाहिए, यही एकमात्र कल्याण का मार्ग है।"

यही सूत्र वाक्य हैं जो कि पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने अपने हृदय में अंकित कर रखे हैं और अपने सानिध्य में आने वाले हर भव्य जीव के मन-मस्तिष्क पर जिन्हें वह पूर्ण कुशलता के साथ अंकित कर देने में लालायित रहती हैं। वस्तुतः यही वह नींव है जिसके ऊपर उनके सार्थकतम जीवन का सुन्दर महल विद्यमान है।

जम्बूद्वीप की स्वर्गतुल्य रचना हो अथवा प्रयाग में भगवान ऋषभदेव के दीक्षाकल्याणक तीर्थ का भव्य निर्माण हो, मांगीतुंगी में निकट भविष्य में निर्मित होने वाली 108 फुट उत्तुंग भगवान ऋषभदेव की प्रतिमा हों अथवा कुण्डलपुर में 'नंद्यावर्त महल तीर्थ' का दिव्यस्वरूप हो, ये सभी पूज्य माताजी की जिनभक्ति के ही प्रतिबिम्ब हैं। 'अर्हद्भक्ति' रूप षोडशकारण भावना की यह निपुणता निश्चित रूप से उनके महान उज्ज्वल भविष्य की निर्मात्री सिद्ध होगी।

दिगम्बर जैन समाज द्वारा मान्य भगवान महावीर की जन्मभूमि-कुण्डलपुर (नालंदा) का विकास करने की एकमात्र विशुद्ध भावना के साथ पूज्य माताजी ने राजधानी दिल्ली से इस भूमि की ओर मंगल-

विहार किया था। हृदय का दृढ़ संकल्प एवं जीवन के प्रत्येक क्षण का अधिकतम उपयोग करने की आतुरता-ये दो दृढ़स्तंभ सदैव ही उनके सहकारी मित्र रहे हैं, इस बार भी शासनपति भगवान महावीर स्वामी के चरणों में अपनी विनम्र विनयांजलि अर्पित करने हेतु इन दोनों सहयोगियों एवं संघस्थ शिष्यों के साथ उन्होंने अपने कदम बढ़ाये, कठिन यात्रा को हँसते-हँसते पूर्ण किया और कुण्डलपुर पहुँचकर मात्र डेढ़-दो वर्ष के अथक परिश्रम एवं समर्पण से तीर्थ के नवीन स्वरूप की धरोहर समाज को प्रदान कर दी, वास्तव में देखा जाये तो कुण्डलपुर नवविकास का यह कार्य पूज्य माताजी के जिनधर्मप्रभावनारूप कार्यक्षेत्र का सुंदर कलश है क्योंकि कुण्डलपुर की भूमि को अद्‌भुत रूप से विकसित कर उन्होंने जनता की श्रद्धा को दृढ़ आधार प्रदान किया है, आने वाला प्रत्येक यात्री जो पहले यहाँ मात्र दस-पाँच मिनट रुकता था, वह अब दिनों-दिन रुककर यहाँ बहती जिनभक्ति की धारा में अवगाहन करना चाहता है, यहाँ के सुंदर निर्माण को देखकर प्रफुल्लित एवं चमत्कृत हो उठता है। जहाँ किसी निर्माणकार्य के लिए सोचने में ही वर्षों लग जाते हैं, वहाँ मात्र 18-20 माह की अल्प अवधि में योजना का सफल क्रियान्वयन किसी आश्चर्य से कम नहीं है। आने वाला प्रत्येक श्रद्धालुभक्त यही कहा उठता है-माताजी! आपकी कार्यक्षमता धन्य है जो आपने जंगल में महामंगल कर दिया है।

हाँ! कतिपय स्वरों ने यह भी इंगित किया कि हस्तिनापुर वालों ने न जाने किस निजी स्वार्थ के वशीभूत कुण्डलपुर का प्रोजेक्ट हाथ में लिया है, पर कतिपय वर्षों से मैंने भी 24 घण्टा पूज्य माताजी के निकट सानिध्य में रहकर देखा है, कहीं न कोई षड्यंत्र है, न कहीं कोई निजी स्वार्थ है, न कोई धन प्राप्ति की लिप्सा है, न कोई दुर्भावना है, मात्र एक स्वभाव माताजी का है, वह है जिनेन्द्र देव के प्रति अगाध समर्पण, जिनधर्म-तीर्थंकर भगवन्तों-उनकी कल्याणक भूमियों की न जाने कितनी प्रभावना कर देने की अभिलाषा उनमें कूट-कूटकर भरी है, अपने एक जीवन में वह न जाने कितने भवों–जन्मों का काम कर लेना चाहती हैं, फिर भी यदि इन विशिष्टताओं में किसी को विपरीत देखना है तो उसका अपना भवितव्य!

वास्तविकता तो ये है कि आज जिनभक्ति का स्वाद दिलाने वाले, आगम की घूँटी पिलाने वाले, त्यागमार्ग को सर्वोपरि बताकर उसके प्रति आकृष्ट करने वाले, दृढ़तम ब्रह्मचर्य की शिक्षा देने वाले, सम्यग्दर्शन रूप रत्न की महत्ता बताने वाले महान व्यक्तित्व हैं कितने? संसार में जुगनू की भाँति उनका प्रकाश आज विद्यमान है, फिर भी अपनी दृष्टि को छिद्रान्वेषी बनाकर भले ही कल्याण का मार्ग और लोगों को शायद प्राप्त हो जाये, पर मुझे तो नहीं हो पायेगा, इसीलिए ऐसी गुरु-माता के प्रति हृदय में पूर्ण समर्थन है और रहेगा।

कुण्डलपुर विकास के वृहद् उद्देश्य की सफल पूर्णता में मूल से चूल तक प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी ने साये की भाँति पूज्य माताजी का साथ दिया है, उनकी आज्ञा का पालन करते हुए कितना अधिक मानसिक एवं शारीरिक श्रम किया है, यह निकट रहने वाले ही जानते हैं, ऐसी गुरूभक्ति मुझे भी प्राप्त हो सके, यही जिनेन्द्रप्रभु से प्रार्थना है। साथ ही पूज्य क्षुल्लक श्री मोतीसागर जी महाराज एवं कर्मयोगी भाई रवीन्द्र कुमार जी की कार्यक्षमता एवं परिश्रम सभी के द्वारा स्तुत्य है क्योंकि जंगल के मध्य समस्त व्यवस्थाएँ बनवाकर नवीन तीर्थ समाज को प्रदान कर देना सबके वश का कार्य नहीं है।

भगवान महावीर के जन्म की पावन भूमि मुझे भी सम्यग्दर्शन की निर्मलता एवं दृढ़ता प्रदान करे, इसी मंगलभावना के साथ,

–ब्र. (कु.) स्वाति जैन
(संघस्थ–गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी)

भगवान महावीर का अमर संदेश–"जिओ और जीने दो"

भगवान महावीर ने आज से 2602 साल पहले बिहार की धरती कुण्डलपुर के मानचित्र को सारे विश्व में अद्वितीय स्थान दिलाया था। यह वही कुण्डलपुर है, जहाँ कभी जैनधर्म के मूलभूत सिद्धान्तों के प्रणेता चौबीसवें तीर्थंकर महावीर स्वामी ने जन्म लिया था। महावीर स्वामी बाल्यकाल से ही अद्भुत पराक्रमी एवं शौर्य के परिचायक थे।

बाल ब्रह्मचारी महावीर विश्व इतिहास के महामानव थे। जिन्होंने सत्य और अहिंसा का मंत्र सर्वसाधारण के लिए प्रचारित किया। पाँच पापों से होने वाले दुष्परिणामों की जानकारी दी। जैनधर्म के मूलभूत सिद्धान्तों को दश धर्मों के माध्यम से उपदेशित किया एवं भगवान महावीर ने कहा कि दूसरों को पीड़ा पहुँचा करके कोई कभी सुखी नहीं रह सकता है अतः खुद जीयो और जीने दो का सार्थक उपदेश दिया। इसी कुण्डलपुर की धरती पर जन्मे वीर प्रभु ने अपने तपोबल से केवलज्ञान प्राप्त किया। इन्द्रों ने समवसरण की रचना कर बारह सभाओं में आने वाले भव्य जीवों की वाणी सुनने का बहुत बड़ा आयोजन किया।

उस जन्मस्थली की मिट्टी के कण-कण में आज भी भगवान महावीर के सिद्धान्तों की, उनके उपदेशों की भीनी सुगंध आ रही है। बस केवल एक बार इस पवित्र भूमि के दर्शन से परिणामों में जो सरलता आती है, वह अद्वितीय है।

मुझे बचपन से लेकर अब तक याद है, जब भी मैं कुण्डलपुर गया एक छोटे से मंदिर में वीर प्रभू का जिनालय अवश्य मिला किन्तु उस मंदिर परिसर में कभी कोई बदलाव या निर्माण नहीं देखा, यह तो सन्मति प्रभु की प्रेरणा है कि गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी को महामानव की जन्मस्थली के पूर्ण उद्धार की प्रेरणा मिली और हजारों किमी. इन्द्रप्रस्थ (दिल्ली) से चलकर कुण्डलपुर में आकर निर्माण कार्य की प्रेरणा प्रदान की। माता ज्ञानमती जी साक्षात् भगवती का प्रतीक हैं, एक बार का निश्चय अटल होता है, प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी, पीठाधीश क्षुल्लक मोतीसागर जी महाराज एवं संघ की ब्रह्मचारिणी बहनों ने कुण्डलपुर के विकास के लिए रात दिन एक कर दिया।

कर्मयोगी कहलाने वाले भाई रवीन्द्र कुमार जैन ने जिस कर्मठता से कुण्डलपुर के विकास कार्य को माताजी की भावना के अनुसार बहुत कम समय में सम्पन्न कराया, वह एक सफल कर्मयोगी ही कर सकते हैं। तीर्थंकर महावीर स्वामी की उत्तुंग सात हाथ की प्रतिमा एवं अति विशाल शिखर, बाजू में भगवान ऋषभदेव की पद्मासन मूर्ति एवं मंदिर जी के दूसरी तरफ नवग्रह शांति मंदिर की विशालता तथा नंद्यावर्त महल एवं त्रिकाल चौबीसी का मंदिर मानो पुकार-पुकार कर कुण्डलपुर की यशोगाथा बखान कर रहा है और बता रहा है कि यहाँ पर कभी वीर प्रभु ने जन्म लिया था।

यह सुखद आश्चर्य है कि जहाँ तक हमारी स्मरण शक्ति जाती है, किसी मुनि संघ या आर्यिका संघ का कुण्डलपुर में चातुर्मास नहीं हुआ था, वहीं पूज्य माताजी का ससंघ एक वर्षायोग हो चुका है और दूसरा हो रहा है। आने वाले समय में जैन-जैनेतर सभी लोग इस अमूल्य धरोहर से सदियों-सदियों तक दर्शन लाभ प्राप्त करते रहेंगे एवं यह कृति अवश्य अमरत्व को प्राप्त होगी।

इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

–कैलाशचंद जैन सर्राफ, लखनऊ

तीर्थोद्धारिका गणिनी ज्ञानमती माताजी

फरवरी सन् 2002 की बात है, जब मुझे मालूम हुआ कि पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर का विकास करने की घोषणा की है और मात्र घोषणा ही नहीं की अपितु उन्होंने स्वयं पदविहार करके वहाँ जाने का निर्णय किया है, उस समय मुझे इतनी प्रसन्नता एवं संतुष्टि हुई जिसे मैं शब्दों में बयान नहीं कर सकता, उस प्रसन्नता एवं संतुष्टि का एक मात्र कारण यही था कि पूज्य माताजी का प्रत्येक निर्णय समसामयिक होता है। वास्तव में यह वर्तमान समय की महती आवश्यकता थी।

हम लोग भले ही सम्मेदशिखर की यात्रा के दौरान हमेशा से ही पावापुर, राजगीर, कुण्डलपुर, गुणावां आदि तीर्थों के दर्शन करते तथा कुण्डलपुर की वीरानियत को देखकर आपस में बातचीत करके वापस आ जाते थे कि देखो! भगवान महावीर की जन्मभूमि में केवल एक छोटा सा मंदिर है, इसका विकास होना चाहिए, ऐसा लगता है कि हम सभी की वर्षों की छिपी भावना को ही सुनकर पूज्य माताजी ने यह बीड़ा उठाया है, खैर....जो भी हो। देर से सही, परन्तु इसके विकास का जो कार्य पूज्य माताजी की प्रेरणा से सम्पन्न हुआ है, वह चिरकाल तक स्मरण किया जाता रहेगा, इसमें कोई संदेह नहीं है।

ऐसी तीर्थोद्धारिका पूज्य गणिनी माताजी के चरणों में कोटिशः नमन।

—**कलीराम जैन,** मॉडल टाउन, दिल्ली

* * *

महिलाओं में अपूर्व संगठन और जागृति उत्पन्न की है– ज्ञानमती माताजी ने

शताब्दियों की पराधीनता, आत्मविस्मृति और निद्रा के बाद नारी चेतना अंततः जाग उठी है और उत्तरोत्तर प्रगति की ओर बढ़ रही है। नारी जागरण का शंखनाद आर्यिका शिरोमणि गणिनीप्रमुख 105 श्री ज्ञानमती माताजी ने किया और ऐतिहासिक धर्मनगरी इंदौर में अखिल भारतीय दिगम्बर जैन महिला संगठन की रचना कर मांगीतुंगी से गुजरात, राजस्थान आदि प्रांतों की पदयात्रा करते हुए 30 मार्च, 1997 को ससंघ दिल्ली पधारीं। ऐतिहासिक लालकिला मैदान पर दिल्ली प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री माननीय श्री साहिब सिंह वर्मा, सांसद श्री जयप्रकाश अग्रवाल, विधायिका कु. पूर्णिमा सेठी एवं विधायक वासुदेव कप्तान ने पूज्य माताजी की चरणवन्दना कर अगवानी की।

दिनाँक 31 मार्च 1997 को पूज्य माताजी ससंघ चांदनी चौक, दिल्ली में पधारीं। मेरा पूज्य माताजी के दर्शन करने जाना, माताजी का मेरा पूरा परिचय लेना और देखते-ही-देखते दिल्ली प्रदेश का शुभारंभ चांदनी चौक इकाई से हो गया और पूज्य माताजी ने श्री दिगम्बर जैन लाल मंदिर के विशाल प्रांगण में भाई चक्रेश कुमार जैन (बिजली वाले), प्रधान–प्राचीन अग्रवाल दिगम्बर जैन पंचायत द्वारा दीप प्रज्ज्वलित करवा दिया। मैंने इस गुरुतर भार को पूज्य माताजी का आदेश एवं आशीर्वाद समझकर स्वीकार किया। मुझे यह बताते हुए अत्यंत प्रसन्नता हो रही है कि वह दिन और आज तक हमारी सभी इकाइयाँ अपने-अपने क्षेत्रों में अधिक से अधिक कार्य कर ख्याति प्राप्त कर रही हैं।

पूज्य प्रज्ञाश्रमणी 105 श्री चंदनामती माताजी व क्षुल्लकरत्न मोतीसागर जी महाराज की सूझबूझ व संगठन बनवाने में पूरी रुचि रखने से थोड़े ही समय में पूरी दिल्ली में 50 इकाइयों का गठन हो गया और पूज्य माताजी ने दिल्ली प्रदेश की अध्यक्षता का दायित्व मुझे संभालने का आदेश दिया। सभी इकाइयों के सहयोग से हर क्षेत्र में, चाहे वह सामाजिक हो, धार्मिक हो अथवा जैन समाज का, हर क्षेत्र में हम बढ़-चढ़कर सहयोग प्रदान कर रहे हैं। इन संगठनों के माध्यम से पूरे समाज में एक नई चेतना जागी है। हम न केवल धार्मिक कार्यक्रम बल्कि राष्ट्र के प्रति भी अपने कर्तव्य निभाने में अग्रणी रही हैं। प्रधानमंत्री राहत कोष में सहयोग, उड़ीसा में बाढ़ पीड़ितों के लिए व गुजरात में भूकम्प पीड़ितों के लिए राहत सामग्री भेजने, शिक्षण शिविरों का आयोजन, रक्तदान शिविरों का आयोजन आदि गतिविधियों में भरपूर सहयोग दे रही हैं।

श्री सम्मेदशिखरजी विकास ट्रस्ट में दिल्ली प्रदेश की कई इकाइयों ने सदस्यता लेकर सहयोग प्रदान किया। आचार्य श्री निर्मलसागर जी के सानिध्य में श्री गिरनारजी में नवनिर्माण हेतु अपना सहयोग दिया। सराक क्षेत्र में भी सराक बंधुओं के उत्थान व समृद्धि के लिए अपना सहयोग दिया।

सभी इकाइयों ने माताजी के सानिध्य में भगवान ऋषभदेव निर्वाण महामहोत्सव, चौबीस कल्पद्रुम महामण्डल विधान, समवसरण श्रीविहार आदि आयोजनों में पूरे तन-मन-धन से सहयोग प्रदान किया। दिल्ली प्रदेश के तत्त्वावधान में कई अधिवेशन किये। सर्वप्रथम पूज्य माताजी के सानिध्य में नाभिराय मण्डप, प्रीतविहार में दिल्ली प्रांतीय अधिवेशन रखा गया। इस अधिवेशन में सभी इकाइयों की महिलाओं में उत्साह, उल्लास और उमंग की झलक दिखाई दे रही थी और इस अधिवेशन में मुख्य अतिथि थीं विधायिका कु. पूर्णिमा सेठी। दूसरा राष्ट्रीय अधिवेशन चौबीस कल्पद्रुम महामण्डल विधान के अवसर पर हुआ, जिसमें मुख्य अतिथि थीं सूचना एवं प्रसारण मंत्री श्रीमती सुषमा स्वराज जी। तीसरा अधिवेशन अशोक विहार में हुआ, यहाँ महिलाओं की भीड़ देखते ही बनती थी। सांस्कृतिक कार्यक्रम के साथ-साथ सभी संरक्षिकाओं को सम्मानित किया गया था। चौथा अधिवेशन प्रयाग में भगवान ऋषभदेव तपस्थली के प्रांगण में हुआ। दिल्ली प्रदेश ने विभिन्न इकाइयों के सहयोग से प्रयाग तपस्थली पर भी एक कमरे के निर्माण में सहयोग दिया। हमारा पांचवां अधिवेशन, राष्ट्रीय महिला प्रतिभाशाली सम्मान समारोह हमारे संगठन के पांच वर्ष पूरे होने पर पाँचवाँ वार्षिकोत्सव 31 मार्च, 2002 को फिक्की सभागार, नई दिल्ली में गणिनीप्रमुख आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी, प्रज्ञाश्रमणी श्री चंदनामती माताजी एवं पीठाधीश क्षुल्लकरत्न श्री मोतीसागर जी महाराज की प्रेरणा एवं आशीर्वाद से राष्ट्रीय अध्यक्ष कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन, जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर की अध्यक्षता में एवं ब्र. कु. सारिका जैन एवं ब्र.कु. स्वाति जैन की उपस्थिति में आयोजित किया गया। इस अधिवेशन में मुख्य अतिथि के रूप में माननीय श्री धनंजय कुमार जी (तत्कालीन कपड़ा राज्य मंत्री, भारत सरकार) ने पधारकर आयोजन की शोभा बढ़ाई।

इस प्रकार पूज्य माताजी की प्रेरणा व आशीर्वाद से नित्य नए कार्यक्रम आयोजित होते रहते हैं। वर्तमान में भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर का विकास एक बहुत बड़ी उपलब्धि है। पूज्य माताजी की प्रेरणा से विकसित कुण्डलपुर तीर्थ युग-युग तक संसारी प्राणियों को सम्यग्दर्शन प्राप्त कराने में निमित्त बने, यही मंगलकामना है।

–**आशा जैन**, दिल्ली
(अध्यक्षा–अ.भा.दि. जैन महिला संगठन, दिल्ली प्रदेश)

महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर : एक वास्तविकता

मिट्टी में दबा सोना कभी पीतल या खदान में पड़ा हीरा कभी काँच का टुकड़ा नहीं हो सकता। बाहरी वस्तुएँ किसी की मूल प्रकृति नहीं बदलतीं, कुछ समय के लिए उनकी चमक को फीका अवश्य कर देती हैं। सदियों से पूज्य शासननायक देवाधिदेव भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर, जो सम्प्रति बिहार प्रदेश के नालंदा जनपद में अवस्थित है, ने भी इन 2600 वर्षों में काल के कई थपेड़े खाये हैं किन्तु यह तीर्थ उत्थान-पतन के झंझावातों को झेलकर आज भी अक्षुण्ण बना हुआ है।

नवीनतम संकट 1950 के दशक में आये हुए कतिपय इतिहासज्ञों ने अनुमानों एवं जैनेतर साहित्य में उपलब्ध भौगोलिक संदर्भों के साथ समय बिठाने की जुगत में वैशाली के समीप स्थित वासुकुण्ड/क्षत्रिय कुण्ड/कुण्डग्राम को महावीर जन्मभूमि घोषित कर दिया। विगत शताब्दियों में न्यूनाधिक ह्रास तो हुए किन्तु अस्मिता का संकट नहीं आया। नये निर्माण, जीर्णोद्धार, विकास कभी कम, कभी ज्यादा हुए किन्तु तीर्थ के प्रबंधकों का शीर्ष नेतृत्व ही यह कह दे कि यह जन्मभूमि ही नहीं है, ऐसा कभी नहीं हुआ।खैर! सम्मेदशिखर आन्दोलन में एक नारा हम सबने उद्घोषित किया था–

तीर्थ किसका–जो पूजे उसका

बस यही बात यहाँ लागू होती है। देश की 95% नहीं 99% दिगम्बर जैन समाज अत्यन्त श्रद्धा, भक्ति एवं समर्पण के साथ महावीर जन्मभूमि के रूप में नालंदा स्थित कुण्डलपुर की वंदना करती रही है और करती रहेगी, ऐसे में तीर्थ पूर्णतः सुरक्षित है एवं जब पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी की चरणरज इस पावनधरा पर पड़ गई तो तीर्थ का विकास हो ही गया।

देश की पत्र-पत्रिकाओं में एक अभियान चलाकर पहले वैशाली को, फिर वैशाली के समीप किसी वासोकुण्ड को, जन्मभूमि घोषित किया गया।जब धर्मनिष्ठ प्रबुद्ध समाज ने इस मुहिम को अनदेखा कर दिया तो फिर मर्यादाविहीन होकर नाना प्रकार के लांछन एवं आरोप संतों, विद्वानों एवं कार्यकर्ताओं पर लगाये जाने लगे। धर्म एवं सत्य के पक्षधर इन कार्यकर्ताओं/ विद्वानों पर इससे कोई फर्क पड़ने का सवाल ही नहीं पड़ता।

प्रारभ्यते न खलु विघ्नभयेन नीचैः, प्रारभ्य विघ्नविहिता विरमन्ति मध्याः।
विघ्नैः पुनः पुनरपि प्रतिहन्यमान्या, प्रारभ्य चोत्तमजनाः न परित्यजंति।।

मैं कुण्डलपुर के विरोधी मित्रों से यह आग्रह करूँगी कि भाषा पर संयम रखें एवं यह जानें कि–

1. वर्तमान जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) सदियों से पूजित है एवं जो सदियों से पूजित है वह निर्विकल्प भाव से उसी रूप में पूज्य है।

2. यह आस्था का प्रश्न है केवल इतिहास का नहीं। यदि इसे इतिहास-भूगोल का प्रश्न बना देंगे तो दर्जनों नये विवाद पुनः सामने आ जायेंगे। फिर क्या करेंगे? जरा विचार करें।

3. वैशाली सिंधु देश की राजधानी थी तो विदेह का कुण्डलपुर वैशाली के अन्तर्गत कैसे हो सकता है?

4. विदेह की सीमा रेखाएं उस काल में क्या थीं? किसी को पता नहीं। यदि मगध के समीप कुण्डलपुर नहीं हो सकता तो सिंधु में कैसे हो जायेगा?

5. वर्तमान में जिन शोधों की बात की जा रही है, वह सब अनुमान एवं जैनेतर ग्रंथों पर आधारित है। कोई निर्णायक/अकाट्य प्रमाण ऐसा नहीं मिला है जिसके आधार पर वर्तमान मान्यता को बदलने की संभावना टटोली जाये।

6. हमारे तीर्थों का निर्धारण दिगम्बर आगमों के आधार पर होगा, बौद्ध या अन्य ग्रंथों के आधार पर नहीं।

7. लगभग सभी प्रमुख आचार्य/उपाध्याय/मुनि/आर्यिका परम्परामान्य जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) को ही मान्यता प्रदान करते हैं। हमारी परम्परा भी यही मानती है।

अंत में भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर को शत-शत नमन करते हुए मेरी यही भावना है कि पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से विकसित यह तीर्थ युगों-युगों तक स्मरण किया जाता रहे।

–सुमन जैन, इंदौर

(महामंत्री-अ.भा.दि. जैन महिला मण्डल)

* *

दिव्य संतों से सुरक्षित है संस्कृति

सदियाँ बीत गई लेकिन समाज को हर समय संतों-महापुरुषों की आवश्यकता रही है। संतों का समागम समाज में रहने वाले प्राणीमात्र को संतुलित जीवन जीने के लिए आवश्यक होता है। व्यक्तिगत जीवन में ही नही अपितु सामाजिक और राष्ट्रीय स्तर पर भी विकृतियों का नाश करने में, सच्चा मार्ग बताने में, अपने अस्तित्व एवं चेतनत्व के प्रति जागरूक करने में संतों की अहं भूमिका रही है। व्यक्तिगत संरक्षण के साथ सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक धरोहर का संरक्षण करने में भी सिर्फ और सिर्फ संत समुदाय ही एकमात्र सशक्त माध्यम है, जिनकी प्रेरणा से सुप्त समाज में जागृति आती है।

वर्तमान दौर में धर्म संरक्षण की श्रृंखला में गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी का योगदान विशेष सराहनीय रहा है। कुण्डलपुर भगवान महावीर स्वामी की जन्मभूमि है। इस बात में कोई विवाद या संशय की स्थिति बनना ही अपने आप में लज्जा की बात है और यदि ऐसी स्थिति बन भी जाती है तो इस सोते हुए समाज द्वारा गलत के प्रति खंडन का आह्वान नहीं छेड़ना उससे भी अधिक लज्जा का विषय बन जाता है। पूज्य ज्ञानमती माताजी की एक पुकार ने समाज के अधिकांश हिस्से को सच के प्रति मोड़ा और एक तरह से जन समर्थन और सामाजिक एकजुटता ने माताजी की प्रेरणा पर भगवान महावीर की जन्मभूमि को विकसित कर कुण्डलपुर की भूमि को नया स्वरूप प्रदान किया, जो आने वाले सैकड़ों बरसों तक संस्कृति के संरक्षण की याद दिलाता रहेगा। इससे आने वाली पीढ़ी को भी यह प्रेरणा मिलती रहेगी कि कभी किसी समय में ज्ञानमती माताजी के दृढ़ निश्चयमयी आह्वान पर हिन्दुस्तान की दिगम्बर जैन समाज ने संस्कृति के संरक्षण में एकजुट होकर योगदान दिया था और सैकड़ों वर्षों के लिए धर्म की पताका को और संस्कृति के संरक्षण को अमर बनाया था। हमें भी इसी तरह देश, धर्म और संस्कृति की रक्षा के लिए हमेशा तत्पर रहना चाहिए।

यह वही कुण्डलपुर की धरती है जहाँ पर प्रभु महावीर ने जन्म लिया, उसकी धूलि में खेल कर अपना बचपन बिताया और स्वयं भगवान बनकर उस धूलि को भी गौरवशाली बना दिया। ऐसी गौरवशाली धूलि में माताजी के चरण पड़े और ये धूलि स्वयमेव बोल उठी और देखते ही देखते मात्र डेढ़ वर्ष की अल्पावधि में अनसोचे भव्य निर्माण ने यहाँ अपना साकाररूप लिया, जिसे देखकर आसपास के ग्रामवासियों एवं भारतवर्ष से आने वाले तीर्थयात्रियों की आँखें खुली की खुली रह जाती हैं और शब्द यही निकलते हैं कि ज्ञानमती माताजी सचमुच इस सृष्टि का ऐसा अवतार हैं जो सतत धर्मसाधना के साथ, आत्मकल्याण के साथ समाज के लिए भी ऐसी अमिट कृतियों और धरोहर को उपहार स्वरूप

दे रही हैं, जिन्हें शायद न कोई दे पाता और न भविष्य में दे पाए। यहाँ आकर भक्तों की भक्ति मानो भगवान महावीर के प्रति उनके हृदय से फूट पड़ती हो और जिसकी जैसी भावना और परिस्थिति हो भरसक कोशिश करता है कि इस तीर्थ के विकास के साथ मेरा भी कहीं नाम जुड़ जाये। और इन्हीं भावनाओं के साथ श्रद्धालु अपना तन-मन-धन से पूर्ण सहयोग एवं समर्थन प्रदान करते हैं। ऐसा लगता है कि इस भूमि के आकाशमंडल की तरंगों में छिपी कोई अद्‌भुत शक्ति ने भक्तों पर कोई ऐसा सम्यक् जादू कर दिया हो कि सम्पूर्ण समाज का आर्थिक और सामाजिक सहयोग एक बंद मुट्ठी की तरह संगठित एवं आकर्षित हो गया हो। ऐसा प्रतीत होता है कि भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर की माटी का पुण्य और उसकी पवित्रता ने दुनिया के सामने सिर चढ़कर बोला हो कि भगवान महावीर का जन्म इस कुण्डलपुर (नालंदा) की धरा पर ही हुआ था। स्वयं इस धूलि द्वारा शक्तिरूप से सच को उजागर करने का प्रयास दैविक ही लगता है। ऐसी पवित्र रज को मैं श्रद्धा के साथ अपने माथे पर लगाता हूँ।

सौभाग्य से माताजी के चरण सानिध्य में मुझे रहने का अवसर प्राप्त हुआ। मैं उनके नजदीक रहा या उनसे दूर रहा, लेकिन जब-जब भी उनके मुखमंडल से विकरित होती रोशन किरणों की तरफ मेरा ध्यान एकाग्र होता, तो यही महसूस होता कि मानो मेरी अन्तर्रात्मा ने किसी पवित्र और धवल स्वरूपी सुगंधित जल से न्हवन किया हो। माताजी का व्यक्तित्व इस क्षितिज पर अपने आप में एक विशेष अवगाहना रखता है। किसी भी विषय में सही विचार-विमर्श के बाद त्वरित निर्णय लेने की क्षमता, पल-पल के समय की महत्ता के साथ कार्य में व्यस्तता, दूरदर्शिता और भगवान के प्रति रोम-रोम में बसी सच्ची श्रद्धा-भक्ति और समर्पण ही उनके सफल जीवन की पहचानरूप में स्थापित नजर आते हैं। तीर्थ निर्माण हो या कोई और निर्माण हो भूमि की सबसे पहली आवश्यकता होती है और भूमि खरीदने के पहले ही किसी तीर्थ के निर्माण की घोषणा कर देना, उसके कार्यक्रम की शुभ मुहुर्त और तिथियों की घोषणा कर देना और घोषणानुसार ही जमीन खरीदकर तीर्थ का निर्माण और प्रतिष्ठा आदि सम्पन्न होकर तीर्थ को एक जीवन्त स्वरूप मिल जाना किसी साधारण व्यक्तित्व के बूते की बात तो नहीं लगती है। ये सिर्फ ज्ञानमती माताजी के दिव्य व्यक्तित्व का प्रतीक है। ऐसी पूज्य माताजी के चरणों में मेरा कोटि-कोटि वंदन अर्पित है।

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी जो कि पूज्य माताजी के साथ में बाल्यकाल से आज पर्यंत एक छाया के रूप में सम्पूर्ण समर्पण भाव के साथ दिव्य दृष्टि को रखते हुए अपने आध्यात्मिक मार्ग पर अग्रसर हैं और जो पूज्य माताजी की आज्ञानुसार, उनकी भावनानुसार एवं उनकी अनुकूलतानुसार उनके चरणों में हमेशा सेवा करती रहती हैं। ऐसी आर्यिका माता को भी मेरा शत-शत नमन। इसी तरह कर्मठ और समर्पित पीठाधीश क्षुल्लकरत्न श्री मोतीसागर जी महाराज को भी मेरा नमन।

आज की महती आवश्यकता ऐसे तीर्थों का विकास करने की ही है जो या तो जीर्ण-शीर्ण अवस्था में चरमरा रहे हैं या भ्रान्तियों के वशीभूत होकर जिन तीर्थों की सत्ता के ही खोने का डर है।

जैन समुदाय हमेशा से आत्मनिर्भर रहा है, हमारे धर्म का विकास करना, जैन ऐतिहासिक धरोहर का संरक्षण करना हमारा परम कर्त्तव्य है, हमारी धरोहर का संरक्षण हमें ही करना है। आज तक हमने अपने तीर्थों का विकास अथवा कोई भी धार्मिक गतिविधि जैनों के अतिरिक्त अन्य सरकारी आदि किसी मदद से पूर्ण नहीं की है। अतएव आज हमारी स्थिति को समझने में स्वयं ही कठिन परिश्रम के साथ अपना अस्तित्व संभालना होगा।

इस महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर विकास के समापन अवसर पर भगवान महावीर एवं पूज्य माताजी के चरणों में मेरा शत-शत नमन।

–जीवन प्रकाश जैन, इंदौर

* * *

भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाणमहोत्सव के समापन अवसर पर पधारे

सांसद एवं विधिवेत्ता श्री एल.एम. सिंघवी जी का अध्यक्षीय उद्‌बोधन

(10 फरवरी 2000, लालकिला मैदान-दिल्ली)

गणिनीप्रमुख, आर्यिकाशिरोमणि श्रद्धेया ज्ञानमती माताजी, प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी, पूज्य क्षुल्लक श्री मोतीसागर जी महाराज, कर्मनिष्ठ भाई श्री रवीन्द्र जी:, समाज के प्रमुख सदस्यगण, युवारत्न भाइयों और बहनों!

भाई विजय कपूर जी ने अभी मुझे कहा कि मैं केवल राजनीतिक आश्वासन नहीं दे रहा हूँ, यह बात आपसे हृदय के अन्तःकरण से कह रहा हूँ कि आप जो भी प्रस्ताव मुझे भेजेंगे उसका मैं पूरा समर्थन करूँगा। कई बार कोई बात कही जाती है सत्ताधारी लोगों को तो वे या तो चुप लगा लेते हैं या हाँ कर देते हैं। उस चुप में भी इंकार होता है और हाँ में भी इंकार होता है किन्तु आज उन्होंने मुझे कहा तो मैंने उन्हें थोड़ा सा उपालम्भ दिया कि लोग बोल तो जाते हैं किन्तु करने के वक्त मुकर जाते हैं और राजनीति का इससे बड़ा ह्रास होता है, लोगों का मनोबल इससे मजबूत नहीं होता। आज मुझे अच्छा लगा कि आज यह अथ से इति नहीं है बल्कि इस एक महासमारोह के बाद में एक बड़े विराट उपक्रम का उद्घाटन हो रहा है। मैं सदा से कहता हूँ कि जहाँ दृष्टि होती है वहीं सृष्टि होती है। आदरणीया, श्रद्धेया माताजी ने एक दृष्टि फिर से हमको दी है और इस दृष्टि के आधार पर एक सम्पन्न सृष्टि होगी, ऐसी मुझे पूरी आशा है और मुझे पूरा विश्वास है।

श्रद्धेया माताजी ने कहा कि जैन परम्परा कोई जाति नहीं है, वास्तव में कोई सम्प्रदाय भी नहीं है वह धर्म है और धर्म एवं सम्प्रदाय में बड़ा फर्क होता है और जैन परम्परा एक धर्म है क्योंकि मर्यादा है। मैं आपसे कहना चाहता हूँ कि संविधान का जन्म होता है संस्कृति में, भारतवर्ष का ही नहीं, पूरे जम्बूद्वीप में, सृष्टि में, सभ्यता के आरंभ में जो पहला संविधान बनाया गया था, वह संविधान भगवानं ऋषभदेव ने बनाया था। पहला संविधान मनुष्यता के लिए, मानवता के लिए और जैसा कि प्रज्ञाश्रमणी जी ने कहा कि असि, मसि और कृषि जीवन के उसी संविधान के तीन पक्ष हैं। जीवन का संविधान बनता है सुरक्षा से, जिसके लिए असि का प्रयोग सम्मत हुआ। कलाएं बनती हैं, ज्ञान बनता है, जानकारी बनती है, संस्कृति बनती है मसि से, वह प्रतीक है और जीवन को स्थिर रूप से यापन कर सकते हैं कृषि से, नहीं तो पहले लोग शिकार खेलते होंगे, पशुवध करते होंगे, एक जगह से दूसरी जगह घूमने चले जाते होंगे किन्तु समाज अगर स्थिर हुआ तो वह हुआ कृषि के माध्यम से। माध्यम बनाया, ये संविधान बनाया, मर्यादाओं का संविधान, मनुष्यता का संविधान और जब यह संविधान उन्होंने बनाया, तो केवल किसी समाज के एक अंग के लिए नहीं बनाया, समूचे विश्व के लिए बनाया। इसीलिए मैं कहता हूँ कि विश्व का पहला संविधान बनायां, हमारे आदि पुरुष आदिनाथ भगवान ने। यह बात हम अक्सर भूल रहे हैं और यह आपने हमको जो आह्वान दिया है, जो एक नया निमंत्रण हमारे सामने, हमारी चेतना के सामने है, वह यह है कि हम अपनी जड़ों की तरफ लौटें। हमारी जड़ कहाँ है? हमारा मूल्य क्या है? मूल है जीवन दर्शन, मूल है मर्यादाओं का संविधान, जो भगवान ऋषभदेव ने हमको दिया था और उस मूल और 24वें तीर्थंकर के बीच में कई हजार वर्षों का इतिहास है कई मिलेनियम उसमें बीत गये। कम से कम 10-15 हजार वर्ष उसके बीच में बीते, यह लोगों की गलत धारण रही। कुछ हम पश्चिम के दिखावे में ज्यादा रहे, अपनी स्वयं की अस्मिताओं को भूल गये इसलिए लोग समझ बैठे कि भगवान महावीर के समय जैन परम्परा की स्थापना हुई थी क्योंकि भगवान ऋषभदेव का उल्लेख तो ऋग्वेद में आता है। भगवान ऋषभदेव का जो चिन्ह है बैल, शिव के नान्दी की तरह है और ऋषभदेव का चिन्ह है वृषभ जो कि मोहन जोदड़ों और हड़प्पा की जो सील व मुहर मिली हैं, उसमें अंकित है। ऋग्वेद में उनका

दे रही हैं, जिन्हें शायद न कोई दे पाता और न भविष्य में दे पाए। यहाँ आकर भक्तों की भक्ति मानो भगवान महावीर के प्रति उनके हृदय से फूट पड़ती हो और जिसकी जैसी भावना और परिस्थिति हो भरसक कोशिश करता है कि इस तीर्थ के विकास के साथ मेरा भी कहीं नाम जुड़ जाये। और इन्हीं भावनाओं के साथ श्रद्धालु अपना तन-मन-धन से पूर्ण सहयोग एवं समर्थन प्रदान करते हैं। ऐसा लगता है कि इस भूमि के आकाशमंडल की तरंगों में छिपी कोई अद्भुत शक्ति ने भक्तों पर कोई ऐसा सम्यक् जादू कर दिया हो कि सम्पूर्ण समाज का आर्थिक और सामाजिक सहयोग एक बंद मुट्ठी की तरह संगठित एवं आकर्षित हो गया हो। ऐसा प्रतीत होता है कि भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर की माटी का पुण्य और उसकी पवित्रता ने दुनिया के सामने सिर चढ़कर बोला हो कि भगवान महावीर का जन्म इस कुण्डलपुर (नालंदा) की धरा पर ही हुआ था। स्वयं इस धूलि द्वारा शक्तिरूप से सच को उजागर करने का प्रयास दैविक ही लगता है। ऐसी पवित्र रज को मैं श्रद्धा के साथ अपने माथे पर लगाता हूँ।

सौभाग्य से माताजी के चरण सानिध्य में मुझे रहने का अवसर प्राप्त हुआ। मैं उनके नजदीक रहा या उनसे दूर रहा, लेकिन जब-जब भी उनके मुखमंडल से विकरित होती रोशन किरणों की तरफ मेरा ध्यान एकाग्र होता, तो यही महसूस होता कि मानो मेरी अन्तर्रात्मा ने किसी पवित्र और धवल स्वरूपी सुगंधित जल से न्हवन किया हो। माताजी का व्यक्तित्व इस क्षितिज पर अपने आप में एक विशेष अवगाहना रखता है। किसी भी विषय में सही विचार-विमर्श के बाद त्वरित निर्णय लेने की क्षमता, पल-पल के समय की महत्ता के साथ कार्य में व्यस्तता, दूरदर्शिता और भगवान के प्रति रोम-रोम में बसी सच्ची श्रद्धा-भक्ति और समर्पण ही उनके सफल जीवन की पहचानरूप में स्थापित नजर आते हैं। तीर्थ निर्माण हो या कोई और निर्माण हो भूमि की सबसे पहली आवश्यकता होती है और भूमि खरीदने के पहले ही किसी तीर्थ के निर्माण की घोषणा कर देना, उसके कार्यक्रम की शुभ मुहुर्त और तिथियों की घोषणा कर देना और घोषणानुसार ही जमीन खरीदकर तीर्थ का निर्माण और प्रतिष्ठा आदि सम्पन्न होकर तीर्थ को एक जीवन्त स्वरूप मिल जाना किसी साधारण व्यक्तित्व के बूते की बात तो नहीं लगती है। ये सिर्फ ज्ञानमती माताजी के दिव्य व्यक्तित्व का प्रतीक है। ऐसी पूज्य माताजी के चरणों में मेरा कोटि-कोटि वंदन अर्पित है।

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी जो कि पूज्य माताजी के साथ में बाल्यकाल से आज पर्यंत एक छाया के रूप में सम्पूर्ण समर्पण भाव के साथ दिव्य दृष्टि को रखते हुए अपने आध्यात्मिक मार्ग पर अग्रसर हैं और जो पूज्य माताजी की आज्ञानुसार, उनकी भावनानुसार एवं उनकी अनुकूलतानुसार उनके चरणों में हमेशा सेवा करती रहती हैं। ऐसी आर्यिका माता को भी मेरा शत-शत नमन। इसी तरह कर्मठ और समर्पित पीठाधीश क्षुल्लकरत्न श्री मोतीसागर जी महाराज को भी मेरा नमन।

आज की महती आवश्यकता ऐसे तीर्थों का विकास करने की ही है जो या तो जीर्ण-शीर्ण अवस्था में चरमरा रहे हैं या भ्रान्तियों के वशीभूत होकर जिन तीर्थों की सत्ता के ही खोने का डर है।

जैन समुदाय हमेशा से आत्मनिर्भर रहा है, हमारे धर्म का विकास करना, जैन ऐतिहासिक धरोहर का संरक्षण करना हमारा परम कर्त्तव्य है, हमारी धरोहर का संरक्षण हमें ही करना है। आज तक हमने अपने तीर्थों का विकास अथवा कोई भी धार्मिक गतिविधि जैनों के अतिरिक्त अन्य सरकारी आदि किसी मदद से पूर्ण नहीं की है। अतएव आज हमारी स्थिति को समझने में स्वयं ही कठिन परिश्रम के साथ अपना अस्तित्व संभालना होगा।

इस महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर विकास के समापन अवसर पर भगवान महावीर एवं पूज्य माताजी के चरणों में मेरा शत-शत नमन।

–जीवन प्रकाश जैन, इंदौर

भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाणमहोत्सव के समापन अवसर पर पधारे

सांसद एवं विधिवेत्ता श्री एल.एम. सिंघवी जी का अध्यक्षीय उद्बोधन

(10 फरवरी 2000, लालकिला मैदान-दिल्ली)

गणिनीप्रमुख, आर्यिकाशिरोमणि श्रद्धेया ज्ञानमती माताजी, प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी, पूज्य क्षुल्लक श्री मोतीसागर जी महाराज, कर्मनिष्ठ भाई श्री रवीन्द्र जी, समाज के प्रमुख सदस्यगण, युवारत्न भाइयों और बहनों!

भाई विजय कपूर जी ने अभी मुझे कहा कि मैं केवल राजनीतिक आश्वासन नहीं दे रहा हूँ, यह बात आपसे हृदय के अन्तःकरण से कह रहा हूँ कि आप जो भी प्रस्ताव मुझे भेजेंगे उसका मैं पूरा समर्थन करूँगा। कई बार कोई बात कही जाती है सत्ताधारी लोगों को तो वे या तो चुप लगा लेते हैं या हाँ कर देते हैं। उस चुप में भी इंकार होता है और हाँ में भी इंकार होता है किन्तु आज उन्होंने मुझे कहा तो मैंने उन्हें थोड़ा सा उपालम्भ दिया कि लोग बोल तो जाते हैं किन्तु करने के वक्त मुकर जाते हैं और राजनीति का इससे बड़ा ह्रास होता है, लोगों का मनोबल इससे मजबूत नहीं होता। आज मुझे अच्छा लगा कि आज यह अथ से इति नहीं है बल्कि इस एक महासमारोह के बाद में एक बड़े विराट उपक्रम का उद्घाटन हो रहा है। मैं सदा से कहता हूँ कि जहाँ दृष्टि होती है वहीं सृष्टि होती है। आदरणीया, श्रद्धेया माताजी ने एक दृष्टि फिर से हमको दी है और इस दृष्टि के आधार पर एक सम्पन्न सृष्टि होगी, ऐसी मुझे पूरी आशा है और मुझे पूरा विश्वास है।

श्रद्धेया माताजी ने कहा कि जैन परम्परा कोई जाति नहीं है, वास्तव में कोई सम्प्रदाय भी नहीं है वह धर्म है और धर्म एवं सम्प्रदाय में बड़ा फर्क होता है और जैन परम्परा एक धर्म है क्योंकि मर्यादा है। मैं आपसे कहना चाहता हूँ कि संविधान का जन्म होता है संस्कृति में, भारतवर्ष का ही नहीं, पूरे जम्बूद्वीप में, सृष्टि में, सभ्यता के आरंभ में जो पहला संविधान बनाया गया था, वह संविधान भगवानं ऋषभदेव ने बनाया था। पहला संविधान मनुष्यता के लिए, मानवता के लिए और जैसा कि प्रज्ञाश्रमणी जी ने कहा कि असि, मसि और कृषि जीवन के उसी संविधान के तीन पक्ष हैं। जीवन का संविधान बनता है सुरक्षा से, जिसके लिए असि का प्रयोग सम्मत हुआ। कलाएं बनती हैं, ज्ञान बनता है, जानकारी बनती है, संस्कृति बनती है मसि से, वह प्रतीक है और जीवन को स्थिर रूप से यापन कर सकते हैं कृषि से, नहीं तो पहले लोग शिकार खेलते होंगे, पशुवध करते होंगे, एक जगह से दूसरी जगह घूमने चले जाते होंगे किन्तु समाज अगर स्थिर हुआ तो वह हुआ कृषि के माध्यम से। माध्यम बनाया, ये संविधान बनाया, मर्यादाओं का संविधान, मनुष्यता का संविधान और जब यह संविधान उन्होंने बनाया, तो केवल किसी समाज के एक अंग के लिए नहीं बनाया, समूचे विश्व के लिए बनाया। इसीलिए मैं कहता हूँ कि विश्व का पहला संविधान बनाया, हमारे आदि पुरुष आदिनाथ भगवान ने। यह बात हम अक्सर भूल रहे हैं और यह आपने हमको जो आह्वान दिया है, जो एक नया निमंत्रण हमारे सामने, हमारी चेतना के सामने है, वह यह है कि हम अपनी जड़ों की तरफ लौटें। हमारी जड़ कहाँ है? हमारा मूल्य क्या है? मूल है जीवन दर्शन, मूल है मर्यादाओं का संविधान, जो भगवान ऋषभदेव ने हमको दिया था और उस मूल और 24वें तीर्थंकर के बीच में कई हजार वर्षों का इतिहास है कई मिलेनियम उसमें बीत गये। कम से कम 10-15 हजार वर्ष उसके बीच में बीते, यह लोगों की गलत धारण रही। कुछ हम पश्चिम के दिखावे में ज्यादा रहे, अपनी स्वयं की अस्मिताओं को भूल गये इसलिए लोग समझ बैठे कि भगवान महावीर के समय जैन परम्परा की स्थापना हुई थी क्योंकि भगवान ऋषभदेव का उल्लेख तो ऋग्वेद में आता है। भगवान ऋषभदेव का जो चिन्ह है बैल, शिव के नान्दी की तरह है और ऋषभदेव का चिन्ह है वृषभ जो कि मोहन जोदड़ों और हड़प्पा की जो सील व मुहर मिली हैं, उसमें अंकित है। ऋग्वेद में उनका

उल्लेख आता है इसलिए कि वह भारतवर्ष के ही नहीं जम्बूद्वीप की संस्कृति के प्रथम पुरुष थे। हमारे यहाँ आज भी जहाँ पूजा-पाठ होता है, तो कहते हैं "जम्बूद्वीपे भरतखण्डे" यह सृष्टि की दृष्टि है और इसीलिए मुझे यह बहुत अच्छा लगा कि यह एक नया उपक्रम शुरू हुआ है। यह उपक्रम बराबर चलता रहे, निरन्तर चलता रहे, इसमें गति हो और बराबर आयाम बढ़े, संवर्धित हों, इसके लिए आपकी प्रेरणा श्रद्धेया माताजी! हमें बहुत ही पौष्टिक पदार्थ की तरह मिल रही है।

मुझे बड़ी श्रद्धा हुई और इस बात का दुःख भी हुआ कि मैं इतने वर्षों तक आपसे क्यूँ नहीं मिला, जब मेरी आपसे बातचीत हुई तो लगा कि आप एक आदर्श हैं, एक निष्ठा हैं, एक प्रेरणा हैं और लगा कि यह प्रेरणा की गंगा-यमुना हमारे बीच में है और सरस्वती भी उसके साथ हैं। एक त्रिवेणी संगम आपके व्यक्तित्व में है। यह जानकर बड़ा अच्छा लगा, इतने ग्रंथों का प्रणयन आपने किया, इतने लोगों को आपने शिक्षा दी, उद्बोधन दिया और यह कि हम अपनी जड़ों की ओर लौटें और दृष्टिपात करें कि यह यात्रा जो 24 तीर्थंकरों की हुई है वह कहाँ से शुरू हुई, कैसे शुरू हुई? आज कैलाशपर्वत भारतवर्ष का हिस्सा नहीं है, मानसरोवर भारतवर्ष के भौगोलिक नक्शे में नहीं है किन्तु आज कैलाश-पर्वत मानसरोवर हमारे हृदय में स्थित है। आपने फिर से हमको कैलाश पर्वत और मानसरोवर की प्रतीति दी है इसके लिए हम आपका जितना आभार मानें कम होता है। यह जो कैलाशपर्वत की परिकल्पना है क्योंकि यथार्थ के पीछे परिकल्पना होती है, मन पहले होता है और पदार्थ बाद में होता है और मन ने एक कल्पना की है कैलाशपर्वत की, इसलिए मैं तो कहूँगा कि आपकी प्रेरणा से देश-देशान्तर में कैलाशपर्वत बनें, देश-देशान्तर में भगवान ऋषभदेव के कीर्तिस्तंभ स्थापित हों, देश-देशान्तर में उन कीर्तिस्तंभों में पूरी जैन परम्परा और विशेषतया भगवान ऋषभदेव ने जो मूलदर्शन जीवन का दिया है, उसकी अच्छी तरह से व्याख्या कर सकें, उसका चित्रांकन कर सकें, उसका प्रस्तारांतण कर सकें कि हमारी संस्कृति कितनी पुरानी है। यह पुरानी संस्कृति बहुत पुरानी भी है और आधुनिक से भी बहुत आधुनिक भी है। यह याद रखें कि आज जो है बहुत पहले था, वह आज संदर्भ खोया हुआ नहीं है। उसका संदर्भ आज भी हमारे बीच में है और नारी शक्ति की प्रेरणा से, एक विदुषी साध्वी की प्रेरणा से जो एक नया उपक्रम हो रहा है, उसमें नई रोशनी भी है और पुरानी रोशनी भी है।

मुझे अच्छा लगा ब्रह्मचारी जी कि आज आपने युवारत्नों का सत्कार किया, बहुत अच्छा लगा क्योंकि हम लोग तो जीवन की संध्या में हैं किन्तु जीवन के अरुणोदय में जो लोग हैं, उनकी मदद हमको चाहिए। उनको चेतना से स्फूर्त कीजिए और कहिए कि चलिए, आगे बढ़िए। एक शायर ने कहा है कि–

पुरानी और नई रोशनी में फर्क है इतना, उन्हें किश्ती नहीं मिलती, इसे साहिल नहीं मिलता।

किश्ती और साहिल को जोड़ना जरूरी है, आदर्शों और यथार्थ के बीच एक सेतु बनाना जरूरी है। आप इस सेतु के निर्माण के लिए हम सभी को प्रेरित कर रही हैं, जिसमें हम सब लोग जुड़ें। केवल जैन ही नहीं जैनेतर भी इसमें जुड़ें। इसीलिए मैंने कहा कि जो असि, मसि और कृषि का संविधान था वह भारत का संविधान था, वह विश्व का संविधान था इसलिए हमको कोशिश यह करनी चाहिए कि भगवान ऋषभदेव की अभ्यर्थना में, उनकी अभिवंदना में, उनकी प्रशस्ति में पूरा भारतवर्ष जुड़े।

बहनों और भाइयों! मैं यहीं अपनी वाणी को विराम देता हूँ और यह आशा करता हूँ कि श्रद्धेया माताजी की प्रेरणा बराबर हमें मिलती रहेगी, हम सब लोग इस कर्त्तव्य की ओर अभिमुख होंगे कि भगवान ऋषभदेव का किस प्रकार पुण्य स्मरण करें। जब मूल का पुण्य स्मरण भूल जाते हैं तो आगे का मार्ग भी अवरुद्ध हो जाता है और जब मूल का स्मरण हम करते हैं तो आगे का मार्ग भी प्रशस्त हो जाता है मुझे आशा है कि भारत, भरत और भगवान ऋषभदेव के वंशधर लोगों का, सबका हमारा मार्ग प्रशस्त होगा और इस शुभकामना के साथ इस समारोह को अथ से इति की यात्रा न मानते हुए एक नये शुभारंभ, एक नई विराट संकल्पना का शुभारंभ मानता हूँ और आपका बहुत आभार प्रकट करता हूँ कि आपने मुझे इतने स्नेह से स्मरण किया, मैं आपका चिरकृतज्ञ हूँ।

“इस युग के अंतिम तीर्थंकर कुण्डलपुर के राजकुमार”

रत्नगर्भा सस्यश्यामला भारत वसुन्धरा में अनादिकाल से महापुरुषों ने जन्म लेकर इस वसुधा को अपने त्याग तपस्या से पावन किया है उसी क्रम में वर्तमान युग के चतुर्थकाल में भगवान आदिनाथ से लेकर भगवान महावीर तक जैन संस्कृति में चौबीस तीर्थंकर हुए हैं उनमें अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी का जन्म कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार के तत्कालीन राजा सिद्धार्थ की महारानी त्रिशला (प्रियकारिणी) के गर्भ से चैत्र शुक्ला 13 के पावन दिन हुआ था। उस समय स्वयं सौधर्मइन्द्र अपनी सप्त सेना के साथ ऐरावत हाथी पर आरूढ़ होकर कुण्डलपुर की पावन धरा पर उपस्थित हुआ था और अपनी शचि इन्द्राणी को प्रसूतिगृह से बालक को लाने की आज्ञा दी। इन्द्राणी प्रसूति-गृह में जाकर जिन बालक का अनुपम रूप निहारती रही और अपने कर्मों की निर्जरा करती रही पुनः कुछ देर बाद जिन बालक को बाहर लेकर आईं और इन्द्र के हाथों में सौप दिया। इन्द्र भगवान के अनुपम रूप को देखकर दो नेत्रों से तृप्त नहीं हुआ, तब उसने सहस्र नेत्र निर्मित करके जिनबालक का रूप देखा पुनः सब देव-देवियों के साथ जम्बूद्वीप के मध्य निर्मित सुदर्शन मेरु पर्वत की पाण्डुक शिला पर ले जाकर जिन बालक का बड़े उत्सव पूर्व जन्माभिषेक किया पुनः इन्द्राणी ने श्रृंगार करके जिनबालक को लाकर माता-पिता को सौंप दिया। तीर्थंकर बालक अपनी बालक्रीड़ा से परिजन-पुरजन का मनोरंजन करते हुए शुक्ल पक्ष के चन्द्रमा की तरह वृद्धि को प्राप्त होकर युवा अवस्था को प्राप्त हुए। जैसा कि संसार में प्रत्येक माता-पिता का स्वप्न होता है कि पुत्र के विवाह योग्य होने पर उसके लिए सुन्दर सी दुल्हन देखकर विवाह सम्पन्न करा दिया जाये। जब माता त्रिशला ने पुत्र महावीर के सामने भी विवाह का प्रस्ताव रखा तो तीर्थंकर महावीर ने मनाकर दिया और 30 वर्ष की अवस्था में सिद्धों की साक्षीपूर्वक जिनदीक्षा को धारण कर लिया। 12 वर्ष की कठिन तपस्या के बाद उन्होंने केवलज्ञान प्राप्त किया। तत्क्षण कुबेर ने आकर भगवान का समवसरण निर्मित किया। प्रभु ने 30 वर्षों तक दिव्यध्वनि से भव्यों को उपदेश देकर जिनधर्म का प्रचार किया, अंत में कार्तिक कृष्णा अमावस्या के दिन पावापुर के मध्य पद्म सरोवर से शेष अघातिया कर्म नाशकर परम सुख मोक्ष धाम को प्राप्त किया।

सन् 2001 में जब भगवान महावीर स्वामी का 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव राष्ट्रीय स्तर पर भारत सरकार द्वारा मनाये जाने की घोषणा हुई और भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी जी ने दीप जलाकर इस समारोह का उद्घाटन किया। उस जन्मकल्याणक महोत्सव वर्ष में पूज्य माताजी ने कुण्डलपुर तीर्थ विकास का संकल्प किया और दिल्ली से भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर की ओर पदविहार कर दिया। कुण्डलपुर (नालंदा) भगवान की जन्मभूमि है जिसे सदियों से समस्त जैन समाज श्रद्धा और भक्ति के साथ नमन करता आ रहा है। उस जन्मभूमि को स्वार्थी लोगों द्वारा बदलने का अनर्गल प्रयास किया जा रहा है यह बिल्कुल गलत है क्योंकि हमारे पूर्वज हजारों वर्षों से जिस जन्मभूमि को नमन कर रहे हैं और जैनाचार्यों ने भी दिगम्बर जैन आगम ग्रंथों में कुण्डलपुर को ही भगवान महावीर की जन्मभूमि माना है। हमारी सभी पूजा पाठ में भी कुण्डलपुर को ही भगवान महावीर की जन्मभूमि माना है। वैशाली नगर तो भगवान महावीर के नाना राजा चेटक की नगरी रही है और आगम में कहीं भी वर्णन नहीं है कि तीर्थंकरों का जन्म उनके ननिहाल में हुआ हो।

परमपूज्य गणिनी ज्ञानमती माताजी ने जैन समाज को प्रेरणा प्रदान की और देश की समस्त जैन समाज ने मिलकर अपनी चंचला लक्ष्मी द्वारा विकास में योगदान दिया जिसके परिणामस्वरूप कुण्डलपुर जन्मभूमि का विकास हुआ। उसे देखकर तो एक दैवी चमत्कार ही लगता है। 18-20 महीने में इतने विशाल विश्व शांति भगवान महावीर जिनालय का भव्य निमाण हुआ जो भूमि से 108 फुट ऊँचाई वाला भव्य शिखर युक्त है तथा जिसमें सफेद 7 हाथ ऊँचाई वाली खड्गासन भगवान महावीर की प्रतिमा

विराजमान है। इस मंदिर में ऊपर तक जाने के लिए अत्यन्त चौड़ाई वाली लगभग 40 सीढ़ियाँ बनी हैं। इस मंदिर के बाईं ओर भगवान ऋषभदेव का भव्य विशाल जिनालय बना है, जिसमें सवा ग्यारह फुट पद्मासन भगवान ऋषभदेव की प्रतिमा विराजमान हैं तथा भगवान महावीर मंदिर के दाईं ओर अति सुन्दर विश्व में प्रथम बार निर्मित नवग्रह शांति जिनमंदिर का निर्माण किया गया है। जिसके अन्दर नवसुन्दर सफेद कमलों पर नव जिनप्रतिमा विराजमान है जिनका दर्शन करने मात्र से मन में अति शांति का अनुभव होता है। इस मंदिर के निकट विशाल उत्तुंग त्रय मंजिला तीन चौबीसी मंदिर का निर्माण किया गया है, जिनके दर्शन से अति सुख का अनुभव होता है। जिसमें 72 जिन प्रतिमाएं अलग-अलग वेदियों में विराजमान हैं और ठीक इसी मंदिर के सामने बहुत सुन्दर नंद्यावर्त महल का निर्माण किया गया है, जिसमें भगवान शांतिनाथ जी के चैत्यालय का दर्शन मनोहारी है। इन मंदिरों के अलावा इस परिसर में विशाल आधुनिक सुविधायुक्त फ्लैटों से युक्त धर्मशाला का निर्माण भी किया गया है। इन सब कार्यों को देखकर ऐसा नहीं लगता कि मनुष्यों ने इस अल्प समय में ये सब कार्य सम्पन्न किये हैं ऐसा लगता है मानो देवों ने ही आकर ये सब कार्य सम्पन्न किये हों।

मैं तो अपने जीवन को धन्य मानता हूँ कि मुझे पूज्य माताजी जैसी गुरु प्राप्त हुईं जिनके चरण सानिध्य में मुझे रहकर विद्याध्ययन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। मैंने पूज्य माताजी के पास ही रहकर विधिविधान के साथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा कराने का ज्ञान प्राप्त किया। यह भी मेरा अहोभाग्य ही था कि कुण्डलपुर जन्मभूमि में पूज्य माताजी के सानिध्य में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा में मुझे प्रतिष्ठाचार्य पद पर नियुक्त किया गया। मुझे इस पंचकल्याणक प्रतिष्ठा में जो आनंदानुभूति हुई, वह शायद ही किसी अन्य प्रतिष्ठा में प्राप्त हुई हो।

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) तीर्थ दिन दूनी रात चौगुनी विकास की ओर अग्रसर रहे, यही भगवान महावीर से प्रार्थना है तथा पूज्य माताजी भी शतायु हों और इसी प्रकार तीर्थ विकास की प्रेरणा प्रदान करती रहें।

–संहितासूरि प्रतिष्ठाचार्य पं. नरेश जैन शास्त्री
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर

⁂

कुण्डलपुर अत्यन्त रमणीक तीर्थस्थल है

भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार प्रान्त में 2603 वर्ष पूर्व राजा सिद्धार्थ की रानी त्रिशला से नंद्यावर्त महल में महावीर का जन्म हुआ। पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी इसके समीप नालंदा में आने वाले प्रत्येक यात्री देश-विदेश के जन-जन को संदेश देने वाला यह अत्यंत रमणीक तीर्थ स्थान बने, इसलिए मंदिरों के साथ नंद्यावर्त महल भी वहाँ निर्मित कराया गया है।

श्री 105 पीठाधीश क्षुल्लक श्री मोतीसागर जी महाराज ने मुझे जंबूद्वीप ज्ञान ज्योति में मध्यप्रदेश प्रवर्तन के साथ में रखकर अनेक तरह से समाज में किस तरह मिलना, यह बताया। मैं उनका उपकार मानता हूँ जो मुझमे ऐसे संस्कार दिये कि मैं परमपूज्य 105 गणिनी आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी का मंगलमय आशीर्वाद प्राप्त कर सका। पूज्य 105 आर्यिका चंदनामती माताजी दीक्षा से पूर्व अनेक स्थानों पर प्रवचन के लिए पहुँचती थीं उनके भी प्रवचन से प्राप्त अष्टमूलगुण की बात मैंने अनेक नगरों की धर्मसभाओं में श्रावक-श्राविकाओं तक पहुँचाई है। माता ज्ञानमती जी तो साक्षात् सरस्वती की प्रतिमूर्ति हैं। जिनकी सूझ-बूझ से जंबूद्वीप की रचना हस्तिनापुर में बनाई गई। उन्हीं के द्वारा भगवान

ऋषभदेव से लेकर 5 तीर्थंकरों की जन्मभूमि अयोध्या तीर्थ का विकास हुआ। भगवान ऋषभदेव तपस्थली प्रयाग (इलाहाबाद) में तीर्थ स्थापित कर भगवान ऋषभदेव के दीक्षा, केवलज्ञान स्थल को जन-जन के दर्शन का लाभ दिया। परम उपकार है जैन समाज पर जो ऐसी तीर्थोद्धारिका माताजी ज्ञानमती जी एवं चंदनामती माताजी ने 105 क्षुल्लक पीठाधीश मोतीसागर जी महाराज, क्षुल्लिका श्रद्धामती माताजी, कर्मयोगी बालब्रह्मचारी श्री रवीन्द्र कुमार जैन जी ने एवं संघ की ब्रह्मचारिणी अनेक बहनों ने एक चातुर्मास 2003 में सम्पन्न कर 2004 के भी चातुर्मास की स्थापना कर तीर्थ को साकाररूप प्रदान किया एवं भगवान महावीर ज्योति रथ का भारत भ्रमण कराने में मुझ जैसे अल्पज्ञ को संचालक बनने का सौभाग्य प्रदान किया। मैं पूरे संघ के आशीर्वाद से जैनधर्म की एवं महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर की यशकीर्ति ध्वजा को पूर्ण शक्ति के साथ फहराता हुआ सफल हुआ।

—**पं. सुधर्मचंद शास्त्री**, तिवरी (जबलपुर) म.प्र.
(संचालक-महावीर ज्योति रथ)

* * *

श्रद्धा के धरातल पर बना भव्य कुण्डलपुर

भगवान महावीर जन्मभूमि, जिसे हमने अपने होश संभालने के साथ ही कुण्डलपुर के रूप में पढ़ा था, जाना था, गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा विकास की प्रेरणा दिये जाने के फलस्वरूप ही दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ। वास्तव में यहाँ की प्राकृतिक छटा में भगवान महावीर के दिव्य परमाणु समाहित प्रतीत होते हैं, ऐसा अहसास यहाँ आने पर ही हुआ और अब चूँकि क्षेत्र विकास की दृष्टि से उपेक्षित रह गया था, पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी ने नवनिर्माण की प्रेरणा देकर, कुण्डलपुर की लुप्त आभा को पुनर्जीवित करने की संभावना को साकार कर दिया है। जैन समाज पूज्य माताजी को और उनके द्वारा तीर्थविकास की दृष्टि से किये गये कार्यों को चाहे हस्तिनापुर में हो, चाहे भगवान ऋषभदेव की तपोभूमि प्रयाग-इलाहाबाद में हो, चाहे अयोध्या और मांगीतुंगी में हो, युगों-युगों तक याद रखेगा। यहाँ पर ध्यान रखने योग्य बात यह है कि पूज्य माताजी ने नये तीर्थ न बनाकर तीर्थंकरों की जन्मभूमि या उनके चरण रज से पवित्र स्थलों को ही विकसित करने की प्रेरणा दी। भगवान महावीर का जीवन तो हर विवाद का समाधान रहा है। मैं उन लोगों से कहना चाहता हूँ कि जन्मभूमि को विवादित न करें। जो अपने समय के ज्ञानी और विद्वान थे, जिन्होंने स्पष्टरूप में कुण्डलपुर को प्रमाणिक तौर पर जन्मभूमि मानते हुए उक्त पंक्तियाँ भगवान महावीर की पूजा में दीं (........कुण्डलपुर कनवरना) तो क्या आप उक्त पंक्तियाँ बदलेंगे या पूजा करना छोड़ देंगे। बदलाव तो संभव नहीं है। आपकी पूजा छूट जायेगी, बेवजह अशुभ कर्म संचय से बचें, सुबह के भूले की तरह घर वापिसी करें। एक बार यहाँ आकर मस्तक अवश्य झुकाएँ, इनका नाम सन्मति है, मुनियों की शंका दूर हो सकती है तो आपकी शंका अवश्य ही दूर हो जायेगी। पूज्य माताजी के व्यक्तित्व में तो विराट चिंतन की झलक दिखाई देती है, उनके बारे में तो सोच-सोच कर मन यही कह उठता है कि–

जिनकी वाणी से समयसार को निकलते देखा-2
जिसने भी श्रद्धा से रखा चरणों में सर,
अपनी तकदीर को बदलते देखा।

पूज्य माताजी की कृपा से मुझे संपूर्ण भारत में सर्वतोभद्र, इन्द्रध्वज आदि विधानों को सातिशयरूप में संपन्न कराने का अवसर मिला है। मैं पूज्य माताजी का उपकार मानता हूँ जो आदर्शों की बात सिर्फ कहती नहीं हैं, उनका तो जीवन ही आदर्शों की कथा कह रहा है। बरबस ये पंक्तियाँ मस्तिष्क में आ जाती हैं–

दीपक की भांति जलता है कोई-कोई,
फलों की भाँति फलता है कोई-कोई।

१–१७

आदर्शों की बात सब लोग किया करते हैं,
आदर्शों के मार्ग पर चलता है कोई-कोई।।

अंत में मैं पूज्य चंदनामती माताजी, पूज्य पीठाधीश क्षुल्लक श्री मोतीसागर जी महाराज, कर्मठ कर्मयोगी श्री भाई जी के चरणों में यथायोग्य विनय ज्ञापित करते हुए, जो कि कुण्डलपुर के नवनिर्माण में किसी भी रूप में सहायक हुए हैं उन्हें शुभकामनाएं देते हुए कहना चाहता हूँ कि-

जय जिनेन्द्र की ध्वनि से जब तक, देवालय गूंजेंगे,
जब तक चंदन तिलक लगा, जिन जिनवर को पूजेंगे,
जब तक जिनगृह की शिखरों पर, केशरिया फहरेगा,
तब तक प्रियवर नाम तुम्हारा, जग में बना रहेगा।

कुण्डलपुर की कीर्ति दिग्दिगन्तव्यापी हो, भक्तों के कल्याण में सहायक हो, यही मंगलकामना है।

—विधानाचार्य-प्रदीप जैन शास्त्री
जंबूद्वीप-हस्तिनापुर

❖ ❖

कुण्डलपुर आने पर पं. धनराज जी के विचार

हमारा जैन सिद्धांत कहता है कि मुनिधर्म और गृहस्थ धर्म, ये दो धर्म हैं। मुनिधर्म धारण करने वाले परमपूज्य 108 मुनिराज, आर्यिका जी, पूज्य 105 श्री ऐलक जी, क्षुल्लक एवं क्षुल्लिका जी होते हैं, जिनका लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति तथा धर्मोपदेश देना अर्थात् श्रावकों को धर्म उपदेश देकर कल्याण के रास्ते पर लगाना है। मैं दिनाँक 11 मार्च 2004 को कुण्डलपुर पहुँचा। संयोगवश पूज्य आर्यिकारत्न गणिनी 105 श्री ज्ञानमती माताजी एवं 105 पूज्य श्री चन्दनामती माताजी एवं 105 पूज्य श्री क्षुल्लक मोतीसागर जी महाराज के दर्शन का लाभ प्राप्त हुआ। साथ ही कुण्डलपुर-भगवान महावीर की जन्मस्थली पर भव्य 3 मंदिरों के कलात्मक शिखरों का एवं धर्मशाला का निर्माण को भी देखने का अवसर मिला। लगभग 10 हजार गज भूमि के अंदर निर्माण हुआ है, यह बड़ी प्रसन्नता की बात है। ऐसा लगता है कि इतने थोड़े समय में इतना विशाल निर्माण जैसे देवों के द्वारा कर दिया गया हो। वैसे तो पूज्य माताजी एवं संघ की हमेशा धारणा रही है कि हमारे सिद्धक्षेत्र और तीर्थ क्षेत्रों का जीर्णोद्धार कराया जाये। पूज्य माताजी ने हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप की रचना, अयोध्या जी और इलाहाबाद में, श्री मांगीतुंगी में, पावापुर जी में, राजगृही में, सम्मेदशिखर जी और काफी तीर्थ क्षेत्रों पर जीर्णोद्धार तथा नवीन निर्माण कराकर जैन इतिहास को पुनः जीवित किया है। धन्य हो; ऐसी पूज्य 105 आर्यिकारत्न गणिनी ज्ञानमती माताजी एवं पूज्य 105 चन्दनामती माताजी एवं 105 क्षुल्लक श्री मोतीसागर जी और साथ में उत्साहपूर्वक कार्य कर रहे ब्र. श्री रवीन्द्र कुमार जी। मेरी धारणा एवं भावना है कि पूज्य माताजी इसी प्रकार तीर्थ क्षेत्रों का विकास कराती रहें और धर्म उपदेश देकर जैन इतिहास को आगे बढ़ाती रहें।

(मार्च 2004)

—पं. धनराज जैन (ज्योतिषरत्न)
अमीनगर सराय, जिला-बागपत (उ.प्र.)

❖ ❖

श्री महावीर भगवान की महिमा

—विधानाचार्य पं. प्रवीणचंद्र जैन शास्त्री
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर

तर्ज—ज़िया बेकरार है..............

महिमा अपार है, गुण का जो आधार है।
महावीर भगवान का, नाम बड़ा सुखकार है।।
महिमा अपार है......................
वीर महा अतिवीर जी भगवन, वर्धमान महावीर जी-2,
सन्मति सन्मति करने वाले, त्रिशलानंदन वीर जी-2।
सिद्धारथ सुकुमार हैं, करुणा के अवतार हैं,
महावीर भगवान का, नाम बड़ा सुखकार है।।
महिमा अपार है......................।।1।।
बिहार प्रांत में कुण्डलपुर है, नालंदा के पास में-2,
चैत्र सुदी तेरस अवतारी, प्रियकारिणी पास में-2।
बाल ब्रह्म सुखकार हैं, त्रिभुवन सुखदातार हैं,
महावीर भगवान का, नाम बड़ा सुखकार है।।
महिमा अपार है......................।।2।।
जिस जिसने भी ध्यान लगाया, उसने सब सुख पाया है-2,
सीता, सोमा और चंदना, सबको पार लगाया है-2।
सब वांछित दातार हैं, धर्म के ये अवतार हैं,
महावीर भगवान का, नाम बड़ा सुखकार है।।
महिमा अपार है......................।।3।।
नंद्यावर्त यहाँ महल बना है, तीन चौबीसी सुन्दर है-2,
आदिनाथ, महावीर प्रभू अरु, नवग्रह मंदिर मनहर है-2।
कैसा चमत्कार है, हुआ यहाँ उद्धार है,
महावीर भगवान का, नाम बड़ा सुखकार है।।
महिमा अपार है......................।।4।।
ज्ञानमती माताजी ने अब, कुण्डलपुर चमकाया है-2,
जन्मभूमि यह वीर प्रभू की, इसका ज्ञान कराया है-2।
'प्रवीण' ग्रंथ आधार है, आगम का ये सार है,
महावीर भगवान का, नाम बड़ा सुखकार है।।
महिमा अपार है......................।।5।।

प्रत्यक्ष को प्रमाण की आवश्यकता नहीं होती

अभी कल की ही बात लगती है कि राजधानी दिल्ली में भगवान महावीर के 2600वें जन्मकल्याणक को मनाने के लिए रूपरेखा बन रही थी। बड़े हर्षोल्लास के साथ अनेक योजनाओं को बनाया गया। इसी क्रम में पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी ने भी जन्मभूमि कुण्डलपुर में एक कीर्ति स्तंभ बनाने की प्रेरणा प्रदान की तब तक माताजी को भी नहीं पता था कि वहाँ और क्या-क्या होने वाला है? कीर्तिस्तंभ तो मात्र बीजरूप ही था।

देखते ही देखते माताजी के कदम कुण्डलपुर की ओर बढ़ गये। लोगों का विरोध भी रहा लेकिन माताजी की दृढ़ता देखकर किसी की भी हिम्मत नहीं पड़ी कि माताजी से सामने आकर कह सके। उलटे विरोधी माताजी के पहुँचने पर मैदान को छोड़कर चले जाते थे। एक कहावत है कि जिस कार्य को बनना है, उसको कोई रोक नहीं सकता है। मैंने बहुत समीप में रहकर माताजी की क्रियाओं को देखा, कि माताजी का विहार गर्मी में हो रहा था। शायद भगवान भी परीक्षा ले रहा था, गर्मी बहुत थी मैं रूट बना रहा था। मार्ग में कोई स्थान अच्छा मिल जाये और मैं एक-दो दिन रूकने का प्रोग्राम बना दूँ तो माताजी कहने लगतीं– विजय! आज यहाँ पूरा दिन क्यों दिया है? मैंने कहा– माताजी यह स्थान अच्छा है, यहाँ रूक जाइये, माताजी कहने लगीं यदि अच्छा ही देखना था तो जम्बूद्वीप के डीलक्स कमरे छोड़कर यहाँ क्यों आते? सुनकर लगता कि माताजी कह तो सही ही रही हैं लेकिन यदि थोड़ा आराम मिल जाएगा तो यात्रा सुलभ हो जायेगी। लेकिन माताजी को तो शायद हर वक्त कुण्डलपुर का ही दृश्य दिखता था। आखिर माताजी 29 दिसम्बर 2002 को कुण्डलपुर पहुँचीं, चारों तरफ खुशहाली थी, देखने में लगता था कि भगवान महावीर भी मुस्करा रहे हों और खुश हों।

माताजी संयम की साधना करते हुए निरन्तर क्षेत्र विकास के कार्यों की प्रेरणा प्रदान करती रहीं और विकास कार्य तेजी से होने लगे। दिन-प्रतिदिन क्षेत्र का रूप सजने-संवरने लगा लेकिन शायद माताजी के मन में संतुष्टि नहीं थी। माताजी शिखर जी यात्रा के मध्य बार-बार यही कहतीं कि यदि कुण्डलपुर का रथ शुरू हो जाये तो जन-जन को कुण्डलपुर के विकास कार्यों की सूचना मिलेगी एवं प्रचार-प्रसार भी हो जायेगा लेकिन कार्य कठिन लगता था। कैसे शुरू हो? कहाँ से प्रवर्तन हो? माताजी शिखर जी से लौटकर आयी और वह शुभ दिन आ गया, जब रथ प्रवर्तन शुरू होना था।

15 अप्रैल 2003 महावीर जयंती के शुभ दिन कुण्डलपुर से पूज्य माताजी का मंगल आशीर्वाद लेकर प्रवर्तन शुरू हुआ सर्वप्रथम मध्यप्रदेश को यह सौभाग्य प्राप्त हुआ। 4 मई, अक्षय तृतीया के पावन दिन आचार्य श्री अभिनंदन सागर जी महाराज के ससंघ सानिध्य में सुदामानगर (इंदौर) पंचकल्याणक के मंच पर सभा प्रारंभ हुई एवं इंदौर नगर के व सारे देश के विद्वानों व श्रेष्ठियों की उपस्थिति में आचार्यश्री ने रथ पर स्वस्तिक बनाकर प्रवर्तन कर दिया। निरंतर एक नगर से दूसरे नगर प्रवर्तन करती हुई रथयात्रा आगे बढ़ने लगी। छोटे-बड़े सभी नगरों में धर्म की ध्वजा को लहराते हुए भगवान महावीर ज्योति रथ का स्वागत होने लगा। लगभग सभी स्थानों पर वहाँ के गणमान्य महानुभावों ने रथ का खूब स्वागत किया। सभी संतों ने पूज्य माताजी की इस योजना को सराहा, सागर में सभी संस्थाओं ने रथ का स्वागत किया, शिवपुरी वालों ने कुण्डलपुर विकास के लिए 101 नाम देने का लक्ष्य रखा एवं अपने नगर में भव्य शोभायात्रा निकाली। गंजबासौदा में नगर पालिकाध्यक्ष कन्छेदीलाल जी जैन एवं जैन समाज बासौदा ने सबको पीछे छोड़ दिया स्वागत में। मध्यप्रदेश के पूरे अंचलों में प्रवर्तन करते हुए लगभग 251 नगरों में भ्रमण किया। शुरू-शुरू में थोड़ी परेशानी हुई लेकिन उसके उपरान्त आशातीत सफलता के साथ प्रवर्तन सम्पन्न हुआ। तत्पश्चात् राजस्थान प्रवर्तन 17 अक्टूबर को कोटा से शुरू हुआ।

राजस्थान प्रवर्तन का शुभारंभ कोटा के गीताभवन से श्री शांतिलाल धारीलाल (कला एवं सांस्कृतिक मंत्री राजस्थान सरकार) ने किया। निरंतर एक नगर से दूसरे नगर रथ का प्रवर्तन करते हुए लगभग 225 नगरों का भ्रमण अब तक सम्पन्न हो चुका है। राजस्थान के 12 जिलों में प्रवर्तन सम्पन्न हो चुका है। इस प्रवर्तन के मध्य सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि आज तक किसी ने भी यह नहीं कहा कि आप जन्मभूमि कुण्डलपुर का गलत प्रचार कर रहे हैं। जिसने सुना उसने ही कहा कि यह माताजी उचित कार्य कर रही हैं। मैं यह सोचता हूँ कि माताजी के पास कुण्डलपुर तो वही जाएगा जो माताजी के विचारों से सहमत होगा,

लेकिन हमें तो सबके पास जाना पड़ता है। आज तक कोई ये कहता नहीं मिला कि आप गलत प्रचार कर रहे हैं। खैर...मैं सैद्धान्तिक विषयों को नहीं जानता, आगम भी नहीं जानता लेकिन मैंने प्रारंभ से ही एक बात जानी कि माताजी 250 ग्रंथों की रचयित्री आगम की प्रतिमूर्ति हैं, वे गलत नहीं कहेंगी। हर व्यक्ति कुण्डलपुर से जुड़ने को तैयार है। अब तक के प्रवर्तन के माध्मय से कई लाख लोगों ने अपनी आकांक्षाओं को तीर्थंकर जन्मभूमि से जोड़ा है। सबसे बड़ी बात सांच को आंच नहीं है। प्रत्यक्ष को प्रमाण की आवश्यकता नहीं है।

–विजय जैन, कानपुर
(संयोजक–महावीर ज्योति रथ प्रवर्तन)

* * *

कुण्डलपुर फिर चमक उठा.........

माता त्रिशला ने जन्म दिया, जगती को वीर मिला है,
कुण्डलपुर की पुण्यधरा पर, शाश्वत फूल खिला है।
नंद्यावर्त महल और चहुँदिश पूर्ण भरा वैभव से,
नृप सिद्धार्थ भी धन्य हुए और विहर उठे गौरव से।
जैनधर्म की धवल पताका दिग् दिगंत फहराई है,
धन्य-धन्य हैं महावीर जिन शासन के हम अनुयायी है।
कालचक्र की आंधी से भूला जनमानस गरिमा को,
कुण्डलपुर एकांतवास ले जपता था जिन महिमा को।
कुण्डलपुर की सतत साधना ने अपना रंग दिखलाया,
ज्ञानमती माता के उर में पुण्य भाव था भर आया।
चलीं इन्द्रप्रस्थ से ले संघ, कुण्डलपुर की राह गही,
सहकर घोर परीषह भी अपने पथ से वो नहीं डिगीं।
दृढ़ निश्चय और कर्मठता ने वैभव फिर पधराया,
धन्य-धन्य माँ ज्ञानमती दुष्कर को सरल बनाया।
साथ चन्दनामति का साहस मोतीसागर की दृढ़ता,
कर्मयोगी भाई रवीन्द्र की पूर्ण समर्पित कर्मठता।
संघपति संग सब बहनों ने मिलकर भार उठाया,
कुण्डलपुर फिर चमक उठा खोया गौरव फिर पाया।
सबकी त्याग तपस्या का फल बंजर में फूल खिला है,
कुण्डलपुर के वैभव के दर्शन का लाभ मिला है।
भव्य भव्यतम जिन मंदिर की शोभा देख "सरोज" कहें,
भवसागर से तरणे को तरणी का फूल मिला है।
सदा चमकता रहे, वृद्धिंगत हो, यह भाव लिये हम,
दृढ़तर हो श्रद्धान हमारा हर पल यह भाव धरें हम।
हे जन्मभूमि उद्धारक माँ, है तुमको नमन हमारा,
दो आशीष सभी को माता, उज्ज्वल कर्म करें हम।

-सरोज जैन, राजगीर

भजन

-गीतकार एवं संगीतकार श्री राजेन्द्र जैन,
कलकत्ता

महावीर की जन्मभूमि को, दो उसका सम्मान।
ज्ञानमती माताजी ने अब, किया है यह आह्वान।।टेक.।।

कुण्डलपुर श्री वर्द्धमान की, जन्मस्थली कहाई।
थे सिद्धार्थ पिता जिनके, माता त्रिशला बतलाईं।।
उस कुण्डलपुर का माताजी, करेंगी अब उत्थान।
महावीर की जन्मभूमि को, दो उसका सम्मान।।1।।

कलियुग का यह है प्रभाव, जो कुण्डलपुर को भूले।
भूल गये महावीर यहीं, मोतियन के पलने झूले।।
इसी धरा पर हुए प्रभू के, गर्भ जन्म कल्याण।
महावीर की जन्मभूमि को, दो उसका सम्मान।।2।।

ज्ञानमती माताजी ने यह, शुभ संकल्प उठाया।
हम इनके वंशज हैं यह, कर्तव्यबोध करवाया।।
अपने प्रभू को भुला दे जो, वह प्राणी पशु समान।
महावीर की जन्मभूमि को, दो उसका सम्मान।।3।।

तन-मन-धन से आगे आओ, कुण्डलपुर जाना है।
नंद्यावर्त महल वहाँ पर अब, फिर से बनवाना है।।
जिस माटी पर जन्मे थे, श्री महावीर भगवान।
महावीर की जन्मभूमि को, दो उसका सम्मान।।4।।

यदि महावीर प्रभू हैं अपने, कुण्डलपुर है अपना।
इसीलिए माँ ज्ञानमती ने, देखा है यह सपना।।
चलो "राजेन्द्र" चलें कुण्डलपुर, गाने को गुणगान।
महावीर की जन्मभूमि को, दो उसका सम्मान।।5।।

* * *

पारस पत्थर है माँ ज्ञानमती जी

कहा जाता है कि पारस पत्थर जब लोहे को छूता है, तो वह लोहा सोना बन जाता है। वैसे ही ज्ञानमती माताजी हैं, जहाँ पर वे अपना हाथ रख देती हैं, वह ासेने के समान चमकाने लगता है।

वर्तमान में जिनके शासन में हम और आप रह रहे हैं, ऐसे भगवान महावीर की जन्मभूमि वीरान पड़ी थी, जहाँ पर ठहरने की कोई व्यवस्था नहीं है, खाने-पीने का साधन नहीं। लोग आते, एक मुट्ठी चावल चढ़ाकर चले जाते। महावीर जयंती सभी लोग अपने-अपने नगरों में खूब धूमधाम से मना लेते लेकिन वहाँ आकर कोई जयंती नहीं मनाता। माताजी ने कुण्डलपुर में अपना हाथ लगाया, तो आज मात्र डेढ़ वर्ष में इतना विशाल मंदिर बनकर तैयार हो गया। जिसे देखकर ऐसा लगता है मानो धनकुबेर ने ही आकर कुण्डलपुर नगरी की पुनः रचना कर दी हो।

कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ का प्रकाशन वर्तमान का एक विशेष आवश्यक कार्य है। भगवान महावीर के चरणों में मेरी यही विनयांजलि है कि ज्ञानमती माताजी दीर्घायु हों, उनके द्वारा आज जो विश्व में जैनधर्म की प्रभावना हो रही है, वह और अधिक होती रही और माताजी मुझे भी अवश्य संसार मार्ग से हटाकर मोक्षमार्ग में लगावें, यही मंगल प्रार्थना है। पूज्य माताजी के चरणकमलों में बारम्बार नमन।

—मनोहरलाल जैन, आगरा

(पूर्व अध्यक्ष—आगरा दि. जैन परिषद)

* * *

कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ का प्रकाशन समय सूचकता का प्रतीक है

जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के व्यक्तित्व की पहचान उनके नाम से ही हो जाती है। 'यथा नाम तथा गुण' को धारण करने वाली माताजी ने वर्तमान में जैन समाज पर जो उपकार किए हैं उसे समाज कभी भुला नहीं सकती।

वर्तमान की आवश्यकता को देखते हुए और जिनके शासन में हम और आप सभी लोग रह रहे हैं, उनकी जन्मभूमि अगर अविकसित है तो यह बड़े दुःख की बात है। पूज्य माताजी ने भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) का विकास करवाकर जैन समाज की शान तो बढ़ायी ही है साथ में भगवान महावीर के 2600 वर्ष पूर्व के इतिहास को जन-जन तक पहुँचाया है। 'नंद्यावर्त महल' का निर्माण इस युग की एक अपूर्व देन है। भगवान महावीर जिस महल में जन्में, पालने में झूले, बड़े हुए उस महल को देखकर तो वास्तव में सभी को 2600 वर्ष पूर्व का भगवान महावीर का इतिहास याद आ जाएगा।

परमविदुषी माताजी ने केवल 250 ग्रंथों की रचना ही नहीं की अपितु जैनधर्म की प्रभावना कें लिए भगवतों की जन्मभूमियों के विकास की प्रेरणा देकर जैन समाज पर महान उपकार किया है।

कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ का प्रकाशन वर्तमान की आवश्यकता है। इसके माध्यम से कुण्डलपुर की सुरभि सारे विश्व में फैलेगी, यह मंगल भावना है। भगवान महावीर के श्रीचरणों में नमन करते हुए पूज्य माताजी के लिए दीर्घायु की प्रार्थना करता हुआ, मैं बारम्बार उनके चरणों में नमन करता हूँ एवं अपनी विनयांजलि समर्पित करता हूँ।

—स्वरूपचंद मार्शन्स, आगरा

(अध्यक्ष—उत्तरांचल तीर्थक्षेत्र कमेटी)

* * *

भजन

तर्ज–कभी प्यासे को पानी......

वीर की जन्मभूमि सजाई नहीं,
जन्म उत्सव मनाना सफल क्या रहा?
अपनी निधियाँ अगर हमने पाई नहीं,
तो महोत्सव मनाने का फल क्या रहा?
हमने इतिहासकारों की बातें सुनीं,
आधुनिक बातें सुन एक चिन्तन जगा।
शास्त्र की सच्ची बातें बताई नहीं,
उनको ही दोष देने का फल क्या रहा?।।
वीर की जन्मभूमि सजाई नहीं,
जन्म उत्सव मनाना सफल क्या रहा?
अपनी निधियाँ अगर हमने पाई नहीं.......,।।1।।
हमने कुण्डलपुरी की परिस्थिति सुनी,
उससे अन्तर्हृदय मानो रोने लगा।
वहाँ हमने जयंती मनाई नहीं,
उनकी जयकार करने का फल क्या रहा?
वीर की जन्मभूमि सजाई नहीं,
जन्म उत्सव मनाना सफल क्या रहा?
अपनी निधियाँ अगर हमने पाई नहीं.......।।2।।
दो चरण ज्ञानमति जी के जब चल पड़े,
कोटि पग फिर तो उस ओर ही चल पड़े।
"चन्दना" अब बजी है बधाई वहीं,
जन्म उत्सव मनाना सफल हो गया।।
वीर की जन्मभूमि सजाई नहीं।
जन्म उत्सव मनाना सफल क्या रहा?
अपनी निधियाँ अगर हमने पाई नहीं.........।।3।।

ज्ञानमती माताजी ज्ञान की गंगा हैं

'गागर में सागर भर देने की' सूक्ति को चरितार्थ करने वाली पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी हैं। माताजी के सभी ग्रंथों में एक-एक शब्द मोती की माला के समान पिरोया हुआ है।

उन्होंने कुण्डलपुर का विकास करवाकर जैन समाज पर जो उपकार किया है, उसे कभी भी कोई भुला नहीं सकता। भगवान महावीर की जन्मभूमि वीराऩ पड़ी रहे और हम सभी अपने-अपने नगरों में धूमधाम से महावीर जयंती मनाते रहें, यह बहुत भारी अज्ञानता है।

माताजी ने अपने ज्ञान के आलोक से हम सभी को सन्मार्ग दिखाया है। आगमनिष्ठ, आर्ष परम्परा की पोषक माताजी का प्रत्येक कार्यविशेष धर्मप्रभावना का कार्य होता है। बीसवीं शताब्दी के प्रथम आचार्य चारित्रचक्रवर्ती श्री शांतिसागर जी महाराज का दर्शन करने वाली, उनका अनुभव ज्ञान प्राप्त करने वाली ज्ञानमती माताजी बीसवीं शताब्दी की प्रथम बालसती, युगप्रवर्तिका, चारित्रचन्द्रिका गणिनीप्रमुख, आर्यिकाशिरोमणि हैं।

कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ के प्रकाशन को सुनकर मेरी भी भावना हुई कि मैं भी कुछ अपनी भावांजलि माताजी के लिए अर्पित करूँ। मैं भगवान महावीर से यही प्रार्थना करता हूँ कि पूज्य माताजी दीर्घायु हों, स्वस्थ रहें और अपने ज्ञान से सभी को सद्‌बुद्धि प्रदान करती रहें।

—**निर्मल जैन एक्सपोर्टर**-आगरा

⁂

त्रैलोक्यपूज्य भगवान महावीर स्वामी

इस असार संसार में अनादिकाल से अनन्तानन्त प्राणी जन्म धारण करते हैं एवं मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं परन्तु जन्म लेना उन्हीं का सार्थक माना जाता है, जो देश व समाज के लिए कुछ अविस्मरणीय कार्य कर जाते हैं। इसी श्रृंखला में तीर्थंकर जैसे महापुरुषों का जन्म इस लोक के लिए तो सुखकारी है ही, उनके जन्म लेते ही नरकों में भी क्षणभर के लिए शांति हो जाती है।

आज से 2603 वर्ष पूर्व जब भगवान महावीर स्वामी ने कुण्डलपुर नगरी में जन्म लिया था उस समय मध्यलोक का कुण्डलपुर नगर रत्नों से भरपूर था, नरकों में नारकियों को एक क्षण के लिए शांति का अहसास उठा और स्वर्गों में सौधर्म इन्द्र के आसन कंपायमान हो उठे और वे अपने विशाल वैभव के साथ कुण्डलपुर आ गए और भगवान का जन्मकल्याणक करके उनके माता-पिता की भी विशेष प्रकार से पूजा की।

इस प्रकार तीन लोक पूजित, त्रैलोक्यनाथ भगवान महावीर स्वामी के चरणों में शत-शत वंदन।

—**महावीर सेठी**, सरिया

⁂

जहाँ जन्मे वीर-वर्धमान जी

चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी हैं जिन्हें पाँच नामों से जाना जाता है—वीर, वर्धमान, सन्मति, महावीर और महतिमहावीर। कहीं-कहीं अतिवीर नाम आता है। अब मैं आपको बताना चाहता हूँ कि उनके 'वीर' और 'वर्धमान' ये दो नाम कब, कहाँ, किनके द्वारा रखे गये?

आज से 2603 वर्ष पूर्व भगवान महावीर स्वामी का जन्म कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) में हुआ। अनेक शुभ

लक्षणों से तीर्थंकर भगवान का जन्म जानकर स्वर्ग से सौधर्मइन्द्र अपने विशाल इन्द्र परिकर के साथ ऐरावत हाथी पर बैठकर कुण्डलपुर नगरी में आया, वहाँ उसने राजा सिद्धार्थ एवं महारानी त्रिशला की पूजा की पुनः उनकी आज्ञा प्राप्त करके इन्द्र तीर्थंकर शिशु को ऐरावत हाथी पर बिठाकर सुमेरु पर्वत की पांडुकशिला पर ले जाकर विराजमान करता है तथा वहाँ बड़े-बड़े कलशों से उनका जन्माभिषेक महोत्सव सम्पन्न करता है। तीन लोक में महिमाशाली इस जन्मोत्सव को सम्पन्न करके इन्द्र अत्यन्त भक्तिभावपूर्वक उन तीर्थंकर शिशु को **'वीर'** और **'वर्धमान'** इन दो नामों से विभूषित करके उनकी नाना प्रकार से स्तुति करके पुनः कुण्डलपुर नगरी आकर माता-पिता को उनका बालक वापस सौंपकर अपने स्वर्गलोक की ओर प्रस्थान कर देता है।

इस प्रकार उन वीर और वर्धमान प्रभु को बार-बार नमन करते हुए मैं उनकी पावन जन्मभूमि के प्रति अपनी विनयांजलि समर्पित करता हूँ।

—आनन्द प्रकाश जैन
धर्मपुरा-गांधीनगर, दिल्ली

* * *

महावीर स्वामी के सिद्धान्तों की आज के युग में आवश्यकता

आज से लगभग 2600 वर्ष पूर्व भगवान महावीर स्वामी ने एक कालजयी ऐतिहासिक युगपुरुष, धर्म तीर्थंकर के रूप में जन्म लिया। जब उनका जन्म हुआ, तब हिंसा अपनी चरम पर थी। रूढ़िवादिता, अहंकारिता, मिथ्याज्ञान का अंधकार छाया हुआ था। ऐसी विषम परिस्थिति में भगवान महावीर का जन्म बिहार प्रान्त के नालंदा जिले के अंतर्गत कुण्डलपुर नगर में हुआ। पूर्व भव में त्याग-तपस्या, सोलह कारण भावना सहित, तीर्थंकर प्रकृति का बंध करके उन्होंने माता त्रिशला के गर्भ से चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन भारत की वसुन्धरा पर जन्म लिया। उनके जन्म पर इस वसुन्धरा ने तो क्या, ऊर्ध्वलोक के देवताओं ने भी खुशी मनाई। सौधर्मइन्द्र ने सुमेरु पर्वत पर ले जाकर 1008 कलशों से महावीर शिशु का अभिषेक कर उन्हें **वीर** नाम से अलंकृत किया। माता के गर्भ में आने के बाद से ही नगर में धन-धान्य, सुख-वैभव और अनेकों प्रकार की समृद्धि की वृद्धि हो जाने के कारण उनका नाम **वर्द्धमान** रखा गया। दो चारण ऋद्धीधारी मुनियों की शंका का समाधान बालक वर्धमान के मुखमंडल के दर्शन मात्र से ही हो जाने के कारण मुनियों ने इनको **सन्मति** नाम दिया। एक विकराल विषधर सर्प को बाल्यावस्था में क्रीड़ा करते समय वश में करने के फलस्वरूप **महावीर** नाम पाया एवं एक रुद्र के द्वारा घोर उपसर्ग पर विजय प्राप्त करके **अतिवीर** नाम पाया।

उनकी आध्यात्मिकता और गहन चिंतन को देखकर माता त्रिशला और पिता सिद्धार्थ ने उनके सामने विवाह का प्रस्ताव रखा लेकिन वे अपने ब्रह्मचर्य व्रत पर दृढ़ रहे और कामदेव को अपने वश में कर वीरातिवीर बनकर राज-वैभव, माता-पिता, कुटुम्ब-परिवार, दास-दासी सबका मोह त्याग, वैराग्य धारणकर वन में जा जैनेश्वरी दीक्षा धारण कर, घोर तपस्या के द्वारा चार घातिया कर्म ज्ञानावरणी, दर्शनावरणी, मोहनीय और अंतराय कर्म को नष्ट कर केवलज्ञान प्राप्त किया। केवलज्ञान प्राप्त करने के बाद उनके ज्ञान में तीनों लोक की प्रत्येक वस्तु की प्रत्येक पर्याय युगपत् दर्पण की भांति झलकने लगी। उनके ज्ञान का प्रकाश चारों ओर फैलने लगा। इन्द्रों ने समवसरण की रचना की। जहाँ पर उनका उपदेश सुनने के लिए इन्द्र-इन्द्राणी, मनुष्य-तिर्यंच, पशु-पक्षी, मुनि-आर्यिका सभी इकट्ठे होने लगे। 66 दिन बीत जाने पर भी उनकी वाणी जब नहीं खिरी, तब सौधर्म इन्द्र ब्राह्मण का वेश बनाकर प्रश्न पूछने के माध्यम से विद्वान् परन्तु घमंडी इन्द्रभूति गौतम को समवसरण में लाये। मानस्तंभ और समवसरण की विभूति देखते ही इन्द्रभूति का मान गलित हो गया और वे जैनेश्वरी दीक्षा धारण कर

महावीर भगवान के गणधर बन गये। भगवान की वाणी खिरने लगी। समवसरण में बैठे सभी जीव अपनी-अपनी भाषा में भगवान का संदेश समझने लगे। महावीर भगवान ने उपदेश दिया– **'अहिंसा परम धर्म है', 'जीओ और जीने दो', 'अनेकान्तवाद, अपरिग्रहवाद धर्म है', 'परस्परोपग्रहो जीवानाम्'...इत्यादि।**

वर्तमान युग में विश्व में भौतिकवादिता, अनर्गल खान-पान, बेहूदा फैशनपरस्ती वाली स्वच्छंदता की प्रतिस्पर्द्धा होने के कारण हिंसा, भ्रष्टाचार, अराजकता, अलगाववाद, स्वार्थपरायणता, हठधर्मिता, बाह्य आडम्बर, ढोंग, पाश्चात्य अंधानुकरण ने हमारे भारत की सभ्यता, संस्कृति को तहस-नहस कर दिया है। आज मानव ही मानव का प्रतिद्वन्दी बनता जा रहा है। कथनी और करनी में विरोधाभास दिखाई देने लगा है। निरीह पशु-पक्षियों का वध कर अपने आपको और अपने घर-द्वारों को सजाया जा रहा है, कत्लखानों और मांस बिक्री की दुकानों की संख्या निरन्तर बढ़ती ही जा रही है। टी.वी. पर मांस, अंडे, शराब इत्यादि के विज्ञापन दिखा कर जनता को गुमराह किया जा रहा है।

आज ऐसी विषम परिस्थिति में भगवान महावीर के सिद्धान्तों को अगर प्रयोग में लाया जाये तो सम्पूर्ण विश्व में कहीं भी कष्ट, आपत्ति, संकट, विपत्ति, क्लेश, अत्याचार, अनाचार, भ्रष्टाचार, अराजकता, झगड़े-झंझट दिखाई नहीं पड़ेंगे। 'अहिंसा परम धर्म है' हम कहते तो हैं, पर आचरण में नहीं लाते। अहिंसा का मतलब है कि वाणी द्वारा भी ऐसी बात न कहना, जिससे दूसरे जीव को कष्ट पहुँचे। अगर हम इस सिद्धान्त को अमल में लायें, तो निरीह प्राणियों को अभयता प्राप्त होगी, हिंसा का तांडव बंद हो जायेगा, कोर्ट कचहरी के चक्कर से बचेंगे, कत्लखाने, मांस बिक्री की दुकानें बंद हो जायेंगी। सभी स्वस्थ और निरोगी बनकर शांतिपूर्ण वातावरण में सांस ले सकेंगे। 'जीओ और जीने दो' सिद्धान्त सार्थक हो जायेगा। अर्थात् खुद भी राग-द्वेष रहित होकर जीयो और दूसरे को भी जीने दो। हम क्रूर परिणामों द्वारा किसी को कष्ट पहुँचायेंगे तो उसे कष्ट पहुँचे या न पहुँचे, परन्तु क्रूर परिणाम होने के कारण हमारी आत्मा का हनन (घात) तो पहले ही हो जाता है। इसीलिए भगवान महावीर ने कहा है कि खुद आत्मा के सरल परिणामों सहित जीयो और दूसरे को भी जीने दो। अनेकान्त से वाद-विवाद खत्म हो जाता है। समता भाव जाग्रत होता है, विरोधाभास नहीं होता। अपरिग्रहवाद से लोभ, लालच, कषाय मंद पड़ती हैं। इच्छाएं सीमित होने के कारण लोग सुखशांति का अनुभव करते हैं। **'परस्परोपग्रहो जीवानाम्'** से आपस में एक-दूसरे के परस्पर प्रेम भाव उत्पन्न होता है, उपकार करने की भावना पैदा होती है। हर जीव पर किसी न किसी का उपकार होता ही है। भगवान महावीर के ये सिद्धान्त सुख, शांतिपूर्वक जीवन निर्वाह करने के लिए आचरण में लाना बहुत जरूरी है, तभी विश्व में शांति का वातावरण बनेगा।

आओ! भगवान महावीर के इन सिद्धान्तों को जीवन में उतारकर उन जैसा बनने की कोशिश करें। उनके पदचिन्हों पर चलना ही उनकी जन्मभूमि के प्रति सच्ची विनयांजलि है।

–**श्रीमती लक्ष्मी जैन**, अंधेरी वेस्ट, मुंबई

⁂

कुण्डलपुर श्रद्धा का विषय है तर्क का नहीं

विगत दिनों विभिन्न जैन पत्र-पत्रिकाओं में भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर अथवा वैशाली? पर विभिन्न विद्वानों एवं संतों के विचार, तर्क और प्रमाण, इतिहास, पुरातत्व, भूगोल और आगम के आधार पर देखने को मिले। सभी ने अपने-अपने दृष्टिकोण से कुण्डलपुर (नालंदा) अथवा वैशाली को भगवान महावीर की जन्मभूमि सिद्ध किया। इस संदर्भ में परमपूज्य आचार्य श्री विद्यासागर जी के पास इंदौर के हम 4 पत्रकार जब चर्चा करने गये तो उन्होंने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि दिगम्बर जैन आगम के प्रकाश में ही हमें तीर्थंकरों के निर्वाण स्थलों अथवा जन्मस्थानों को मान्यता देनी चाहिए क्योंकि पुरातत्व,

इतिहास और भूगोल अथवा बौद्ध एवं अन्य ग्रंथों के आधार पर जब हम निर्णय करते हैं तो हम अपने मूल लक्ष्य से भटकते हैं। उन्होंने कहा कि आचार्य श्री वीरसेन कृत धवला, जय धवला में कुण्डलपुर के अकाट्य प्रमाण हैं। आचार्य पूज्यपाद कृत निर्वाण भक्ति में भी इसकी चर्चा आई है अतः आगम को ही प्रमाण माना जाना चाहिए।

मैं न इतिहास का विशेषज्ञ हूँ न भूगोल का और न ही पुरातत्व की मुझे जानकारी है। मैं आगम का भी मर्मज्ञ नहीं हूँ और ना ही कोई भाषा शास्त्री किन्तु सन् 1959 से जब से होश संभाला है, समाज का छोटा सा कार्यकर्ता हूँ। धर्मचक्र और जनमंगल कलश आदि के माध्यम से तथा महासमिति का तीन वर्ष तक साहू अशोक जी एवं पद्मश्री बाबूलाल जी पाटोदी के साथ अ.भा.दि. जैन युवा प्रकोष्ठ का संयोजक रहने के नाते काम करने का अवसर प्राप्त हुआ। इस कारण समाज के नेतृत्व के साथ रहकर समाज को मैंने निकट से देखा। मेरी मान्यता है कि आम आदमी सिर्फ तीर्थों से श्रद्धा से जुड़ा है। वह श्रद्धा के आगे किसी तर्क को स्वीकार नहीं करता।

मैंने इस संदर्भ में पं. सुमेरचंद जी दिवाकर, इतिहास और भूगोल के विशेषज्ञ डॉ. सुदीप जैन, प्रखर वक्ता एवं चिंतक प्राचार्य श्री नरेन्द्र प्रकाश जैन (सम्पादक-जैन गजट), आर्यिका श्री चंदनामती माताजी (हस्तिनापुर), वरिष्ठ विद्वान पं. शिवचरणलाल जी (मैनपुरी) एवं बाबू कामताप्रसाद जी तथा अन्य विद्वानों के लेखों का अध्ययन किया। मैंने पटना से प्रकाशित स्मारिका भगवान महावीर स्मृति तीर्थ- वैशाली भी देखी। मुझे आश्चर्य हुआ कि कुण्डलपुर के स्थान पर महावीर को सीधे ही वैशाली का राजकुमार निरूपित कर दिया गया। उन्हें कुण्डलपुर का राजकुमार कहें या वैशाली का? क्या नाना के नाम से भगवान महावीर पहचाने जायेंगे? मैंने देश के सर्वाधिक वयोवृद्ध आचार्य श्री सीमंधरसागर जी से इंदौर में चर्चा की और अन्य आचार्यों एवं मुनियों से भी चर्चा की किन्तु किसी ने वैशाली के पक्ष में अपना मत नहीं दिया।

इस संदर्भ में यदि विचार करें तो 2600 वर्ष में हमारा भूगोल बहुत बदला है। नदियों ने अपनी धाराएं बदली हैं। अब हम विदेह और मगध को कैसे स्थापित करेंगे और फिर इतिहासकारों के मत तो रोज बदल रहे हैं। 2600 वर्षों में भूगोल ने कितनी करवटें ली हैं, देशों की सीमाएँ भी या तो सिकुड़ गईं या फिर फैल गईं अतः हम विदेह और मगध की सीमाओं को कहाँ-कहाँ ढूँढेंगे? कैसे ढूँढेंगे? फिर क्या भगवान महावीर से हम जैनधर्म का उद्‌भव मानेंगे? यदि श्वेताम्बर परम्परा और बौद्ध परम्पराओं से स्वीकार करने लगे तो बहुत सी विकृतियाँ पैदा होने लगेंगी? बौद्ध ग्रंथों के आधार पर और पुरातत्व के आधार पर वैशाली को जन्मस्थान मानकर क्या हम मामा से महावीर की पहचान कराना चाहते हैं? फिर क्या सिद्धार्थ का राज्य छोटा-सा राज्य था? जैसे कई विवादों को जन्म मिलेगा। फिर प्रश्न उठता है कि क्या विद्वान् खोज करना बंद कर दें? क्या पुरातत्ववेत्ता अपना काम छोड़ दें? क्या इतिहासकार इतिहास पर कलम चलाना बंद कर दें? नहीं, सभी अपना काम करें किन्तु श्रद्धा के विषय में कलम चलाते समय सावधानियाँ अनिवार्य हैं।

अभी एक स्थान पर पढ़ा था कि जो अभी शिखर जी मधुबन झारखंड में स्थित है, वह तो गया के समीप कोई दूसरे स्थान पर है। यह शिखरजी वास्तविक शिखरजी नहीं है। बीस तीर्थंकरों की निर्वाणभूमि पर भी प्रश्न चिन्ह? कोई कहता है कि कोल्हुआ पहाड़ वास्तविक शिखरजी है, किसी विद्वान ने पावापुरी को भी किसी दूसरे स्थान पर बताया है और हम सभी तीर्थों पर अपनी विद्वत्ता, खोज और इतिहास के आधार पर विवाद पैदा करने लगे और तर्क व प्रमाण जुटाने लगे हैं। आगम में से अपने अनुकूल अर्थ निकालने लगे हैं। विद्वत्ता समाज को सही दिशा देने की अपेक्षा विवाद का कारण बन रही है।

मैं प्रश्न करता हूँ कि क्या प्रमाण है आपके पास कि चंद्रप्रभु भगवान शिखरजी की उसी टोंक से उसी स्थान से मोक्ष गये और इतने करोड़ मुनि वहाँ से मोक्ष गये? कैसे प्रमाणित करेंगे? पुरातत्व के

प्रमाण यदि अयोध्या में राम मंदिर पर नहीं मिले और इतिहासकारों ने मानो उसके पक्ष में मत व्यक्त नहीं किया तो क्या यह सिद्ध हो गया कि रामजन्मभूमि नहीं है? कौन मानेगा आपकी बात को? इसलिए तर्क व प्रमाण के आधार पर तीर्थ नहीं बनते, वह तो श्रद्धा के केन्द्र हैं।

मैं तो अपने अनुभव के आधार पर यह कह सकता हूँ कि सभी विद्वान मिलकर सिर पर सारे तर्क व प्रमाण लेकर पूरे देश में घूम लें और सारे देश की दिगम्बर जैन समाज को यह समझाने का प्रयास करें कि शिखरजी यह तीर्थ क्षेत्र नहीं दूसरा है, यह पावापुरी नहीं दूसरी पावापुरी है और कुण्डलपुर यह नहीं दूसरा कुण्डलपुर है, तो आने वाले 100 वर्षों तक भी समाज की श्रद्धा को नहीं बदल पाएंगे। तीर्थ इतिहास, भूगोल और पुरातत्वों से नहीं सिर्फ श्रद्धा से बनते हैं। पत्थर की मूर्ति में प्राण-प्रतिष्ठा कर भगवान मान लेते हो और तीर्थ में इतिहास, भूगोल और पुरातत्व का तर्क लगाने लगते हो तो ये तर्क समाज की श्रद्धा को नहीं तोड़ सकते।

इसलिए मेरा अपना मत है कि तीर्थ परम्परा एवं पीढ़ियों की श्रद्धा का परिणाम है, जिसको श्रद्धा से स्वीकार किया गया वह तीर्थ बन गया और सैकड़ों वर्षों से जो तीर्थ मान लिया गया, अब उसमें परिवर्तन असंभव है। सरकार, विद्वान, पुरातत्त्ववेत्ता, इतिहास विशेषज्ञ विद्वान क्या मानते हैं, इससे तीर्थ के प्रति श्रद्धा और भक्ति में कोई अंतर नहीं आता। वे अपना काम करते रहें किन्तु श्रद्धा और भक्ति के समक्ष तर्क व्यर्थ हैं। तीर्थ तर्क से नहीं श्रद्धा से बनते हैं। श्रद्धा किसी तर्क, प्रमाण और तथ्य की मोहताज नहीं होती। अतः मेरे तथा आम श्रावक के मत में कुण्डलपुर (नालंदा) ही भगवान महावीर की जन्मस्थली है।

''तीर्थ तर्क से नहीं श्रद्धा से बनते हैं
श्रद्धा तर्क की मोहताज नहीं होती''

—रमेश कासलीवाल, इंदौर
सम्पादक-वीर निकलंक

* * *

COMMENTS OF MR. SOMAIYA ON HIS FIRST VISIT OF KUNDALPUR

Kundalpur is a Teerthsthan adjoining Nalanda where I came to participate in Buddhist seminar. I deem it a rare fortune to visit great centres—both of them sacred—taking us back to history of 2500 years. Most fortunate part of this visit is to pay humble tribute to the birth place of Lord Mahavira.

I have seen personally great development taking place here. This is creation or re-creation of history under pious and reverant guidance of Mataji Gyanmati-erudite scholar and an inspiration to most. There is an aura of Sacredness I find, with the quality of creative development, this place will become a great centre for all pious Digamber Jains to visit as a Teerth. I go very inspired and feel that our Jain Temple proposed in Bombay-The Digamber Jain Temple-will be inspired by Mataji and her brother. I leave feeling blessed and inspired. I am grateful for Ashirvad.

—Shantilal K. Somaiya
(Chairman-Somaiya group) Mumbai

(9-2-04)

मेरे सपने में महावीर आने लगे

मेरे सपने में महावीर आने लगे, वे तो छुप-छुप के दर्शन दिखाने लगे।
मैंने पूछा तुम्हारा क्या है पता?
वे तो कुण्डलपुरी को बताने लगे।
मेरे सपने में महावीर आने लगे, वे तो छुप-छुप के दर्शन दिखाने लगे।।1।।
मैंने पूछा तुम्हारे माता-पिता ?
वे तो सिद्धार्थ-त्रिशला बताने लगे।
मेरे सपने में महावीर आने लगे, वे तो छुप-छुप के दर्शन दिखाने लगे।।2।।
मैंने पूछा तुम्हारा भोजन है क्या ?
वे तो स्वर्गों का भोजन बताने लगे।
मेरे सपने में महावीर आने लगे, वे तो छुप-छुप के दर्शन दिखाने लगे।।3।।
मैंने पूछा तुम्हारे मामा कितने?
वे तो दस-दस मामा गिनाने लगे।
मेरे सपने में महावीर आने लगे, वे तो छुप-छुप के दर्शन दिखाने लगे।।4।।
मैंने पूछा तुम्हारी मौसी कितनी?
वे तो छह-छह मौसी बताने लगे।
मेरे सपने में महावीर आने लगे, वे तो छुप-छुप के दर्शन दिखाने लगे।।5।।
मैंने पूछा तुम्हारी ननिहाल कहाँ?
वे तो वैशाली नगरी बताने लगे।
मेरे सपने में महावीर आने लगे, वे तो छुप-छुप के दर्शन दिखाने लगे।।6।।
मैंने पूछा तुम्हारा निर्वाण कहाँ?
वे तो पावापुरी को बताने लगे।
मेरे सपने में महावीर आने लगे, वे तो छुप-छुप के दर्शन दिखाने लगे।।7।।

–सौ. श्रीमती जैन-बहराइच (उ.प्र.)

वीर जन्मभूमि सच्ची कुण्डलपुरी है

भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर है या वैशाली ? इस बात पर कुछ नेता लोग वाद-विवाद ही करते रह गए और पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने कुण्डलपुर स्वयं जाकर वहाँ एक-दो नहीं, पाँच-पाँच विशाल जिनमंदिर निर्मित करा दिए। अब भी अगर कोई यह कहता है भगवान महावीर की जन्मभूमि वैशाली है कुण्डलपुर नहीं है, तो फिर वह अवश्य ही हंसी का पात्र माना जाएगा क्योंकि वैशाली में **"जन्मभूमि"** संज्ञा को सार्थक करने वाले कोई सूत्र ही नहीं हैं जिनके आधार पर उसे जन्मभूमि कहा जाए अतः भगवान महावीर की वास्तविक जन्मभूमि कुण्डलपुर में प्राचीन एवं नवीन जिनमंदिरों के दर्शन करके अपने मानव-जीवन को सार्थक करें, यही मंगल कामना है।

–श्रीमती अलका जैन ध.प. श्री रजनीश जैन
मॉडल बस्ती, दिल्ली

भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाणमहोत्सव के समापन अवसर पर पधारे

तत्कालीन उपराज्यपाल

श्री विजय कपूर जी का संक्षिप्त उद्बोधन

(10 फरवरी 2000, लालकिला मैदान-दिल्ली)

आदरणीय माताजी, डॉ. सिंघवी, महिलाओं और सज्जनों! मैं आप सबका इस महोत्सव के समापन अवसर पर अभिनंदन करता हूँ। मुझे प्रसन्नता है कि भगवान ऋषभदेव से संबंधित यह महोत्सव आपने सफलता से यहाँ पर चलाया और मैं समझता हूँ कि जैनधर्म व भगवान ऋषभदेव के जो आदर्श व मूल्य हैं, उनके प्रसारण में यह पहला कदम है।

जैसा कहा गया कि ये उत्सव का समापन तो है मगर एक अभियान का प्रारंभ है, मैं आप सबको अपनी शुभकामना देता हूँ। जैनधर्म के जो आदर्श और मूल्य हैं, वे तो शाश्वत हैं। अहिंसा, सत्य, त्याग, अनुशासन इनका उतना ही महत्त्व था, प्राचीन समय में और पिछले बीते हुए समय में, जितना आने वाले समय में होने का है। मैं मानता हूँ कि जैनधर्म ने, जैन परम्परा ने जिस संतुलन के साथ जीवन को देखा है, वह आने वाले युग में बहुत महत्त्वपूर्ण होगा और मैं यह भी मानता हूँ कि जिस तरह से जैन परम्परा हमारे भूत में, हमारे पास्ट में रिलीवेंट रही है, उसी तरह से वह आने वाले समय में भी रिलीवेंट रहेगी और हमको उन्नति और सुख के रास्ते पर ले जाएगी।

अभी भगवान ऋषभदेव से संबंधित यहाँ दिल्ली में कुछ निर्माण की बात हुई, मैं आपको आश्वासन देना चाहता हूँ कि आदरणीय प्रधानमंत्री जी के दिग्दर्शन में जो भी यहाँ से आपको सपोर्ट और सहायता की जरूरत होगी, दी जाएगी। हम दिल्ली को केवल देश की राजधानी नहीं मानते बल्कि पूरे भारत समाज की राजधानी मानते हैं, तो यहाँ पर इस प्रकार के मेमोरियल्स का, इस प्रकार की जगहों का निर्माण हो, उसमें हम अपना गौरव मानते हैं।

पूज्य माताजी के चरणों में पुनः नमन।

पूज्य ज्ञानमती माताजी-सच्ची ज्ञानप्रदाता

प्रायः यह देखने में आता है कि लोग यह तो जानते हैं कि भगवान महावीर स्वामी के कितने नाम हैं परन्तु उनके ये पाँच नाम कहाँ रखे गए? किनके द्वारा रखे गये? इन नामों के पीछे क्या इतिहास है? यह पूछने पर लोग उत्तर देने में असमर्थ हो जाते हैं।

मैं भी एक बार जब भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर में पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के दर्शनार्थ गया तो मुझसे पूज्य माताजी ने यह प्रश्न कर दिया, मुझे उत्तर न आता देख पूज्य माताजी ने जब इन नामों के पीछे छिपे इतिहास को बताया, तब मुझे बहुत ही प्रसन्नता हुई और मैं चिंतन करने लगा कि वास्तव में आज के इस युग को पूज्य माताजी जैसी साध्वी की महान आवश्यकता है, जिनके कारण हमें शास्त्रों में लिखी कई बातों की जानकारी समय-समय पर प्राप्त होती रहती है।

भगवान महावीर से यही विनम्र प्रार्थना है कि पूज्य माताजी चिरायु होकर इसी प्रकार हम अज्ञानीजनों को ज्ञानदान प्रदान करती रहें ताकि हम अपना भविष्य उज्ज्वल बना सकें।

–**सुशील जैन**, अशोक विहार, दिल्ली

दर्शनमात्र से शंका निर्मूल हो गई

भगवान महावीर स्वामी ने आज से 2603 वर्ष पूर्व बिहार प्रान्त के कुण्डलपुर में जन्म लिया था। महाराजा सिद्धार्थ की महारानी त्रिशला ने चैत्र सुदी तेरस को भगवान महावीर को जन्म देकर अपना मातृत्व धन्य किया था। उन विश्ववंद्य भगवान महावीर का नाम **"सन्मति"** कैसे पड़ा? इसकी बहुत ही रोमांचक घटना है।

कुण्डलपुर के नंद्यावर्त महल में एक बार बालक वर्धमान पालने में झूल रहे थे। **"संजय"** **"विजय"** नामक दो चारण ऋद्धिधारी मुनि उस मार्ग से गुजरे, उनके मन में किसी पदार्थ के विषय में बहुत ही सूक्ष्म शंका थी। ज्यों ही उन्होंने पालने में झूलते भगवान वर्धमान को देखा, उनके मन की सूक्ष्मशंका का निवारण हो गया, वे बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने प्रभु की नाना प्रकार से स्तुति करके उनका **"सन्मति"** यह नामकरण किया।

पूज्य गणिनी ज्ञानमती माताजी की कृपाप्रसाद से हम लोगों को पिछले दो वर्षों में अनेक बार कुण्डलपुर के दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है अतः हमने अपनी आँखों से कुण्डलपुर के नूतन विकास को देखा है। मेरे जीजा जी स्व. श्री जम्मनलाल जैन कासलीवाल एडवोकेट ने सन् 2002 में महाराष्ट्र प्रान्त के श्रद्धालुओं को मिलाकर "गणिनी ज्ञानमती भक्तमण्डल" की स्थापना की थी तब से हम लोग निरन्तर संगठित रूप में पूज्य माताजी के पास वर्ष में 2-3 बार पहुँचते हैं। मुझे प्रसन्नता है कि फरवरी 2003 में कुण्डलपुर में सम्पन्न हुए प्रथम पंचकल्याणक महोत्सव के समय देशभर से पधारने वाले समस्त भक्तों को प्रीतिभोज कराने का श्रेय हमारे भक्तमण्डल को ही प्राप्त हुआ था। हम सभी इसी प्रकार से श्रावक धर्म का पालन करते हुए जैनधर्म की प्रभावना में निरन्तर आगे बढ़ते रहें, यही कुण्डलपुर के महावीर बाबा से मेरी मंगल प्रार्थना है।

–**कस्तूरचंद बड़जाते**, औरंगाबाद (महा.)
(संयोजक-गणिनी ज्ञानमती भक्तमण्डल)

* * *

कुण्डलपुर का विकास–2601 रु. के संग्रह से हुआ है!

फरवरी सन् 2002 की बात है, मैं पूज्य माताजी के दर्शनार्थ गया, उस समय माताजी राजा बाजार-कनॉट प्लेस-दिल्ली में विराजमान थीं, वहाँ चर्चा चल रही थी कि "भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर का विकास होना है चूँकि भगवान महावीर को जन्म लेकर 2600 वर्ष हुए हैं अतः 2601 रु. की अल्पराशि श्रावकों को प्रदान करनी है।" मैंने जब यह बात सुनी तो मुझे बहुत ही प्रसन्नता हुई और मैंने अपने पूरे परिवार के सभी 11 सदस्यों के नाम 2601-2601 रु. देने हेतु लिखा दिए, मैंने इसे अपना अहोभाग्य समझा कि हमारी चंचला लक्ष्मी का सदुपयोग ऐसे महान कार्य में होने जा रहा है, यह सब पूज्य माताजी की ही कृपा से संभव हुआ। आज मुझे कुण्डलपुर नगरी को प्रगति के चरम शिखर पर देखकर बहुत खुशी हो रही है कि हमारी जैन समाज द्वारा दिल खोलकर दिये गये 2601-2601 रुपये का सहयोग भी कितना सार्थक हुआ है।

भगवान महावीर स्वामी के चरणों में शत शत वंदन एवं गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी को बारम्बार नमन।

–**राजेन्द्र जैन**, चांदी वाला परिवार,
अशोकविहार-दिल्ली

* * *

भजन

माँ बतलाओ वीर प्रभु क्यों पूजे जाते हैं।
ऐसा क्या कुछ किया कि वो महावीर कहाते है।
माँ बोली बेटा! दुनियां में दो गुण जिसमें हो।
ज्ञान शक्ति का मिले समागम सच्चाज्ञानी वो।।
वर्धमान यह नाम उन्हीं गुणशाली बालक का।
जन्म हुआ शुभ नाम रखा तब वीर प्रभु जी का।।
देख-देख सुंदरता उसकी त्रिशला मुदित हुई।
सिद्धारथ घर छायी खुशियाँ नभ में ध्वनि हुई।।
इंद्र लोग तब आये लेकर वस्त्राभूषण थे।
जो पहनाये शचि ने प्रभु को रत्नजड़ित थे वे।।
रूप सुहाना देख प्रभु का नेत्र हजार किए।
नृत्य किया सबने मिल ऐसा सब जयकार किए।।
एक दिवस की घटना जन वन में वे खेल रहे।
तभी एक विषधर से डर कर थे सब भाग रहे।।
आगे आकर खड़े हो गये सर्प के फण पर वे।
'महावीर' का जयकारा फिर गूंजा था नभ से।।
तीस वर्ष की छोटी वय में गृह को त्याग दिया।
छोड़ सम्पदाएं वन पहुँचे मुनिव्रत धार लिया।।
घोर तपस्या करके वे बन गये फिर अतिवीरा।
मोक्ष प्राप्त कर जग को दी 'सन्मति' श्री 'महावीरा'।।
इसीलिए महावीर वीर अतिवीर कहाते हैं।
वर्धमान सन्मति के देखो सब गुण गाते हैं।।
अगर आज सब अपना ले उनके उपदेशों को।
सत्य अहिंसा का पथ देगा पूर्ण शांति सबको।।

-श्रीमती त्रिशला जैन
(ध.प. श्री चन्द्रप्रकाश जैन, लखनऊ)

विनयांजलि

हमारे 24वें तीर्थंकर भगवान महावीर की जन्मस्थली विदेह क्षेत्र (बिहार) की कुण्डलपुर नगरी है जहाँ 15 माह तक कुबेर ने रत्नों की वर्षा की। भगवान के जन्म से यह नगरी पावन एवं पूज्य हो गयी। विगत 50 वर्षों से कुछ अल्पज्ञ व धर्मपक्षपाती इतिहासकारों द्वारा फैलायी जा रही भ्रान्तियाँ एवं हमारे समाज की सुप्ततावश यह नगरी अपनी एतिहासिकता व संस्कृति को खोती जा रही थी।

जब इस बात की जानकारी हमारे समाज की सर्वोच्च साध्वी पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी को हुई तो उनका ममतामयी हृदय चित्कार उठा और आपने कुण्डलपुर विकास का संकल्प लेकर इण्डिया गेट दिल्ली से मंगल प्रस्थान किया तथा कुंभ नगरी प्रयाग (इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश) में प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली जैन तीर्थ का अभूतपूर्व निर्माण कराया और दिसम्बर 2002 में भगवान महावीर की जन्मस्थली कुण्डलपुर आ पहुँची तथा विगत 18 माह में अपने तप, त्याग व निर्देशन में इस प्राचीन तीर्थ को नवीन रूप देकर 108 फीट ऊँचाई वाला भगवान महावीर जिन मंदिर, इसके दाईं तरफ भगवान ऋषभदेव जिनमंदिर तथा सात मंजिले नंद्यावर्त महल एवं शांतिनाथ जिनालय और बाईं तरफ श्री नवग्रहशांति जैन मंदिर व त्रिकाल चौबीसी जैन मंदिर का निर्माण तथा पुराने मंदिर परिसर में 36 फीट ऊँचे कीर्तिस्तंभ का निर्माण कराकर एक असंभव से कार्य को इतने अल्प समय में साकाररूप में परिणत कर दिखाया है।

मुझे विश्वास है कि कुण्डलपुर तीर्थ विकास के समापन को दर्शाता यह कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ समाज के भटके हुए दिग्भ्रमित लोगो को एकत्रित करने तथा हमें पुरानी संस्कृति एवं प्राचीन गौरवमयी इतिहास को विश्व के क्षितिज पर लाने में सहायक होगा।

लगभग 250 जैन ग्रंथों की रचयिता एवं प्राचीन जैन तीर्थों के विकास की प्रेरणास्रोत आर्यिकाशिरोमणि पूज्य मांताजी के चरणों में अपनी विनयांजलि समर्पित करता हूँ।

-अखिलेश कुमार जैन (अपर जिला जज)
सिवान (बिहार)

* * *

कुण्डलपुर तीर्थ का विकास देवोपनीत जैसा लगता है

इस कुण्डलपुर में जो पलक झपकते विकास हुआ है, यह तो ऐसा लगता है कि किसी देवता ने आकर रातों रात नगरी बसा दी हो। क्षेत्रों का विकास होते मैंने अपनी जिंदगी में बहुत जगह देखा है। सम्मेदशिखर जैसे तीर्थ के विकास का भी मैंने मुआयना किया है, वहाँ की बाहुबली चौबीसी, समवसरण की रचना, तीस चौबीसी, त्रियोग आश्रम, नन्दीश्वर द्वीप रचना, मध्य लोक, सभी को मैंने बड़े ध्यान से देखा कि कितने-कितने वर्षों तक कार्य होने के बाद पूरा हुआ और कहीं-कहीं अधूरा भी है क्योंकि मैं 5 साल की उम्र से होली पर प्रायः प्रत्येक वर्ष शिखरजी जाती रही हूँ पर इस कुण्डलपुर के विकास ने तो मेरे दिल में एक तहलका सा मचा दिया है। पहले भी मैं कुण्डलपुर कभी-कभी राजगीर, पावापुर के दौरान गई हूँ, पर वहाँ 5 मिनट से अधिक रुकती नहीं थी क्योंकि रुकने का कोई साधन भी नहीं था। लेकिन आज माताजी के प्रभाव से जो विकास हुआ है, उससे ऐसा लगता है कि कोई दैवी शक्ति जरूर माताजी के अन्दर छिपी है। अब यात्रियों की संख्या भी अनगिनत आती है। हर महीने अनेकों विधान सम्पन्न होते हैं। लोग कई दिनों तक ठहर भी जाते हैं। मैंने पहले माताजी को कभी देखा नहीं था, हाँ! उनके द्वारा लिखी किताबें जरूर पढ़ती थी। जब

मैं पटना में तीन लोक विधान की पूजा में बैठी थी तो उन लाइनों को पढ़कर ऐसा लगता था कि यह रचना कोई मनुष्य की लिखी नहीं है, साक्षात् सरस्वती ही ऐसा लिख सकती हैं। पुनः जब मैंने पटना में माताजी के दर्शन किये तो दूर से एकटक देखती रह गई और मुझे ऐसा लगा कि स्वर्ग से चलकर कोई देवी तो नहीं आ गई और वास्तव में इस महावीर जन्मभूमि का विकास पुकार-पुकार कर कह रहा है कि देखो! देवी ने आकर वास्तविक जन्मभूमि की रक्षा की है। यह भूमि उन लोगों को चुनौती देकर कह रही है कि अरे! रुपयों के लोभी! तुम तो रुपयों के लालच में तीर्थंकर की जन्मभूमि भी बदलने चले थे लेकिन गवर्नमेंट से रुपये लेकर भी तुम कुछ कर नहीं पाये। करते भी कैसे? कुण्डलपुर के परमाणुओं में इतनी ताकत थी कि माँ को राजधानी दिल्ली से बुलाकर नंद्यावर्त महल की भी रचना करवा ली ताकि मंदिर के दर्शन करते-करते लोग यह भी जान जायें कि महावीर जिस महल में रहते थे, उसका नाम क्या था? और कभी इसी जगह ऐसा महल भी था। माताजी के संघ में चंदनामती माताजी, क्षुल्लक मोतीसागर जी और रवीन्द्र भाई जी तो मुझे तीन रत्नों के समान जान पड़ते हैं। जिस प्रकार सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र के बिना मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती है, उसी प्रकार मुझे तो ऐसा लगता है कि माताजी के निर्देश में जो भी तीर्थ क्षेत्र विकसित हुआ है वो इन रत्नों के अथक परिश्रम का ही फल है। ब्रह्मचारिणी बहनें भी बहुत उदार हृदयी हैं। निरन्तर अपने-अपने काम में लगी रहती हैं। ऐसी हमारी माताजी को भगवान सैकड़ों वर्ष निरोगी रखे।

–श्रीमती सुमती देवी कासलीवाल

(मंत्री–श्री दिगम्बर जैन महिला संगठन, मीठापुर, पटना)

⁂

मेरी निगाह में तीर्थक्षेत्र कुण्डलपुर — एक अनुभव

वैसे तो प्रत्येक जैन भाई शिखरजी की यात्रा के दौरान कुण्डलपुर जो कि वर्तमान युग के शासनपति अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर प्रभु की जन्मभूमि है, दर्शन के लिए आता ही है परन्तु आज तक की यह स्थिति रही कि लोग केवल आते और दर्शन करके तुरंत चले जाते। कोई भी धर्मशाला में एक दिन भी रुकता नहीं था लेकिन दो साल से यहाँ यात्रियों का ताँता लग रहा है, यह कहाँ की माया है?

सन् 2002 में भादों के पर्युषण पर्व में प्रयाग तीर्थराज पर हमने इन्द्रध्वज विधान किया था। करीब 50-60 महानुभावों को लेकर विधान सम्पन्न किया। विधान का कार्य समाप्त करके सभी को लेकर हम तीर्थराज परमपावन सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र की वंदना करने गये।वंदना के पश्चात् कुण्डलपुर की वंदना के लिए भी सभी रवाना हुए। सभी के जुबान पर एक ही बात थी कि कुण्डलपुर जैसा पिछड़ा 25 से 50 साल से है वैसा ही है कुछ बदलाव नहीं है।

भारतवर्ष का भाग्य जगा। भारतवर्ष का क्या ? सिद्ध हुए तीर्थंकरों के पुण्य परमाणु का उदय हुआ। प्रथम गणिनी चारित्रचंद्रिका अनेक ग्रंथों की लेखिका परमपूज्य 105 आर्यिका शिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी ने सभी तीर्थंकरों की जन्मभूमियों, निर्वाण भूमियों के विकास का बीड़ा उठाया। इस योजना में कुण्डलपुर का नाम आया।

सितम्बर 2002 में जमीन ढूँढना चालू हुआ और फरवरी 2003 में जगह पर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा करने का निश्चित हुआ। जहाँ जमीन का पता नहीं, वहाँ उस जगह पर निर्माण कार्य कराकर पंचकल्याणक करना। क्या आश्चर्य नहीं? फरवरी 2003 में 11 फुट की बेदाग अप्रतिम भगवान महावीर

की सफेद प्रतिमा खड़ी हुई। 20-22 फुट ऊँचाई पर स्थापित इस प्रतिमा के साथ-साथ 72 तीन चौबीसी की प्रतिमा, 2 टन वजन की 14 फुट की आदिनाथ भगवान की विशाल प्रतिमा अन्य कितने ही निर्माणों के साथ पंचकल्याणक महोत्सव संपन्न हुआ और आज सितम्बर 2004 में पूरे तीन शिखरबंद मंदिर, तीन चौबीसी का मंदिर, नंद्यावर्त महल, 17 फ्लैट की भव्य धर्मशाला (अटैच कमरों के साथ) आधुनिक भोजनगृह के साथ पूरी सुविधा, 10 फुट ऊँचा पूरे 2 एकड़ का परकोटा, भगवान आदिनाथ मंदिर का और भगवान महावीर का 20 फुट चमचमाता विशाल बुलंद दरवाजा, क्या-क्या बताएं? इतना विशाल निर्माण और समय केवल 2 साल का। यह एक अनोखा चमत्कार केवल आप कुण्डलपुर जो नालंदा जिले में है, यहाँ पर ही देख सकेंगे। मेरी तो बात छोड़िए, हर व्यक्ति देखकर आश्चर्य से दाँतों तले अँगुली दबाता है। यह एक अनोखा चमत्कार ही है। भारत वर्ष में अनेक जगह जैनों के विकास कार्य चालू है, लेकिन अपने आप में है कुण्डलपुर का विकास कार्य। सचमुच माताजी की प्रेरणा, भाई जी और अन्य सभी की कार्य पद्धति सभी अनोखी है और यह सब पैसा, फंड न होते हुए केवल 26-26 सौ रुपया सबसे इकट्ठा करके इस तीर्थ का निर्माण हुआ है।

कुण्डलपुर का विकास कार्य विश्व का एक चमत्कार है। चमत्कार इसलिए है कि काम की गुणवत्ता, काम को पूरा करना। आज हर जगह काम अधूरे पड़े हैं, कहीं फंड नहीं, कहीं करने वाला नहीं, कहीं मूर्तियाँ आती हैं 10-12 साल पंचकल्याणक की राह देखती पड़ी रहती हैं परन्तु यहाँ का प्रत्येक निर्माण अनोखा है सात मंजिला बन रहा नंद्यावर्त महल, सभी कार्य विलक्षण। मैंने अवलोकन किया तो भौचक्का रह गया। विस्मयकारक आश्चर्य हुआ! सब देखकर लिखना भी संभव नहीं। ऐसे अद्भुत विकासकार्य का चमत्कार है-कुण्डलपुर तीर्थक्षेत्र।

यह तीर्थ हमेशा-हमेशा जीवन्त रहे, यही मंगलकामना है।

–राजाभाऊ (राजेंद्र कुमार) पाटनी, नासिक

* * *

कुण्डलपुर के विकास से समाज में हर्ष की लहर आई

हम अवधवासियों के लिए यह अत्यन्त गौरव एवं सौभाग्य की बात है कि युगप्रवर्तिका पूज्य गणिनी आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी का जन्म टिकैतनगर (जिला-बाराबंकी) उ.प्र. में सन् 1934 में शरदपूर्णिमा के दिन हुआ। पूर्णिमा के चाँद की भाँति पूरे विश्व में उनका आलोक चारों दिशाओं में अपनी अद्भुत लेखनी, ओजस्वी वाणी और ज्ञान की दिव्य ज्योति के कारण फैल रहा है। पूज्य माताजी ने जैनधर्म के विभिन्न विषयों पर सैकड़ों ग्रंथों की रचना कर यह सिद्ध कर दिया है कि उनका नाम उनके गुणों के अनुरूप "ज्ञानमती" सार्थक है। आधुनिक युग की ब्राह्मी व सुन्दरी उन्हें कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी।

पूज्य माताजी की यह विशेषता है कि उन्होंने जैन तीर्थों के सर्वांगीण विकास के स्वप्न को मूर्तरूप में साकार कर दिखाया। जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर से लेकर कुण्डलपुर तक और अयोध्या से लेकर तपस्थली प्रयाग-इलाहाबाद तक सभी तीर्थक्षेत्रों को एक नया रूप प्रदान किया। गत वर्ष अपने जन्मदिन के समारोह में पूज्य माताजी ने सभी 24 तीर्थंकरों की 16 जन्मभूमियों को विकसित करने का संकल्प लिया। इससे तीर्थक्षेत्रों के विकास की उनकी इच्छाशक्ति स्पष्टरूप से उजागर होती है।

उन्होंने जिस अदम्य साहस, अटूट श्रद्धा, अतुल शक्ति व विलक्षण बुद्धि व प्रज्ञा से कुण्डलपुर (जिला-नालंदा-बिहार) को ही भगवान महावीर की वास्तविक जन्मभूमि न केवल घोषित किया, वरन्

विभिन्न शास्त्रों व विद्वानों के कथन के प्रमाण के आधार पर प्रमाणित भी किया, जो सराहनीय है। भारत के प्रत्येक कोने से आए विद्वानों ने एक स्वर से कुण्डलपुर को ही तीर्थंकर महावीर की वास्तविक जन्मभूमि स्वीकार किया और सरकारी तंत्र द्वारा वैशाली को जन्मभूमि सिद्ध करने के प्रयासों की निंदा की गई।

इतने कम समय में कुण्डलपुर में पाँच विशाल गगनचुंबी मंदिर, जिनमें भगवान महावीर मंदिर, भगवान ऋषभदेव मंदिर, नवग्रहशांति मंदिर, त्रिकाल चौबीसी मंदिर एवं नंद्यावर्त महल के अन्दर भगवान शांतिनाथ चैत्यालय का निर्माण संभव हो सका और इनके पंचकल्याणक भी पूज्यनीय माताजी के सानिध्य में सम्पन्न हुए। इतने अल्प समय में कुण्डलपुर का इतना विशाल तीर्थक्षेत्र में परिवर्तित हो जाना निश्चित ही पूज्य माताजी के अदम्य साहस, इच्छाशक्ति एवं दृढ़ संकल्प का परिणाम है।

जिस नंद्यावर्त महल में भगवान महावीर का बचपन बीता, उसी महल की प्रतिकृति (नंद्यावर्त महल) को भगवान महावीर ज्योतिरथ के रूप में पूरे देश में भ्रमण कराकर उनके जन्मभूमि होने की जानकारी कराई गई जिससे कि पूरा देश अन्जान एवं अनभिज्ञ था।

वास्तव में पूज्य माताजी द्वारा कुण्डलपुर को वास्तविक जन्मभूमि सिद्ध करने से सभी जैन धर्मावलंबियों के दिलों में उनके प्रति अटूट श्रद्धा व विश्वास जागृत कर दिया है तथा जैनधर्म के इतिहास में अपनी एक पहचान बना ली है। पूज्य माताजी ने जिस धैर्य, उत्साह, लगन व साहस के साथ कुण्डलपुर स्थल को तीर्थस्थल बनाकर अपने ज्ञान के प्रकाश से प्रज्ज्वलित किया है, वह प्रशंसा योग्य है।

पूज्य माताजी के साथ-साथ उनके संघ में विराजमान प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी, पीठाधीश क्षुल्लक श्री मोतीसागर जी, कर्मयोगी ब्रह्मचारी श्री रवीन्द्र कुमार जैन एवं ब्रह्मचारिणी कु. सारिका जैन, कु. बीना जैन आदि का अतुलनीय सहयोग भी प्रत्येक कार्यों में प्राप्त होता रहता है।

मैं कुण्डलपुर अभिनन्दन ग्रंथ के प्रकाशन पर अपनी ओर से तथा समस्त दिगम्बर जैन समाज इंदिरानगर-लखनऊ की ओर से असीमित शुभकामनाएँ एवं हार्दिक बधाई प्रेषित करता हूँ।

—इंजी. पूर्णचन्द्र जैन, लखनऊ

* * *

जिनसंस्कृति की संवर्द्धिका

सन् 1963 की बात है, जब मुझे 17 साल की उम्र में पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी को शाश्वत सिद्धक्षेत्र सम्मेदशिखर की पदयात्रा करवाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, उस समय यात्रा कठिन हुआ करती थी, बैलगाड़ी और साइकिल का युग था, पूरा दिन कहाँ बीत जाता था, पता ही नहीं लगता था लेकिन उस यात्रा का अपना एक अपूर्व ही आनन्द था, जो शायद आज की यात्रा में देखने को न मिले। तब न तो आगे की जगह पूर्व से निर्धारित होती थी और न ही रूट चार्ट बनता था, बस साइकिल उठाई और माताजी के साथ उनका कमण्डलु लेकर चल दिये, उस समय बहन मनोवती (वर्तमान में आर्यिका अभयमती माताजी) भी मेरे साथ थीं जो चौका लगाती थीं।

उस यात्रा के मध्य अनेकों ग्रामों-नगरों व तीर्थस्थानों से होते हुए वह सम्मेदशिखर जी सिद्धक्षेत्र पहुँची थीं, जिसमें वाराणसी, कुण्डलपुरी, पावापुरी, राजगृही, गुणावां जी आदि प्रमुख थे। मैंने भी माताजी के साथ उन तीर्थों के दर्शन किये थे और उनके मुखारविन्द से प्रत्येक तीर्थों की महिमा भी सुनी थी। हालांकि उस समय मैं छोटा था, पर उसकी स्मृति आज भी मेरे मस्तिष्क में तरोताजा है। उस यात्रा के पश्चात् मुझे अपने परिवार के साथ कई बार इन तीर्थों की वन्दना करने का अवसर प्राप्त हुआ परन्तु

वहाँ किसी प्रकार का विकास कार्य किसी साधु, विद्वान या समाज द्वारा हुआ हो, यह देखने में नहीं आया पुनः अब कई वर्षों के बाद जब पुनः मुझे सन् 2004 में इन तीर्थों के दर्शन का सुयोग प्राप्त हुआ तो भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुरी, निर्वाणभूमि पावापुरी, प्रथमदेशना भूमि व मुनिसुव्रतनाथ जन्मभूमि राजगृही, महावीर स्वामी के प्रथम गणधर गौतम स्वामी की निर्वाणभूमि गुणावां जी एवं अनंतानंत तीर्थंकरों एवं सिद्धों की निर्वाणभूमि सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र का विकसित स्वरूप, वहाँ निर्मित भव्य जिनमंदिरों एवं उनमें विराजमान विशालकाय मनोज्ञ जिनप्रतिमाओं को देखकर जहाँ मन आश्चर्यचकित हो उठा, वहीं रोमांचित भी हो उठा कि अरे! एक नारी होकर जिन्होंने इतने महान कार्य कर डाले, अगर यह पुरुष होतीं तो शायद इस कलियुग को फिर से सतयुग में ही बदल देतीं और सर्वत्र प्रेम, भाईचारा, सुख-शांति, समृद्धि, अमन-चैन का वातावरण होता, चहुं ओर जिनधर्म की पताका आकाश की ऊँचाईयों को छूती हुई चौबीसों तीर्थंकरों की वाणी उनके अहिंसामयी सर्वोदयी सिद्धान्तों को सभी ओर निखारती रहती। आज यह सभी तीर्थ आगन्तुक यात्रियों को जिनसंस्कृति के संरक्षण-संवर्धन की प्रेरणा प्रदान कर रहे हैं।

वास्तव में बन्धुओं! पूज्य माताजी मात्र नारी समाज का नहीं अपितु विश्व का गौरव हैं, इनके अन्दर कोई अलौकिक और अद्भुत शक्ति विराजमान है, जिससे इन्हें अन्तर्प्रेरणा प्राप्त होकर विश्व के इतने अद्वितीय एवं महान कार्य हो जाते हैं। यूँ तो इनके सभी कार्य अविस्मरणीय हैं परन्तु इन सभी कार्यों में वर्तमान में जो भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर के विकास का कार्य इनके द्वारा हुआ है, वह अत्यंत प्रेरणास्पद है। यह ठीक उस प्रकार से है जिस प्रकार से कोई सर्वांग सुन्दर नारी अपने को सोलह श्रृंगारों से सुसज्जित तो कर ले, मगर माथे पर एक बिन्दी न होने से उसमें कुछ अधूरापन सा लगे और बिन्दी मात्र लगा लेने से उसकी सुन्दरता द्विगुणित हो उठे, उसी प्रकार जिनशासन की संस्कृतिरूपी नारी पूज्य माताजी के महान कार्यकलापों से सम्पूर्णता को प्राप्त तो हो गयी हो परन्तु महावीर जन्मभूमि के विकास कार्यरूपी बिन्दी से अलंकृत हो जाने से उसकी सुन्दरता असंख्यगुणा वृद्धिंगत हो गयी हो और अविस्मरणीय इसलिए है कि जिन महावीर प्रभू के शासन में रहकर हम और आप अपनी धर्मसाधना कर रहे हैं अगर उनकी जन्मभूमि का ही अस्तित्व खतरे में पड़ जाता, तो हम आने वाली पीढ़ी को क्या संस्कार दे पाते? किस प्रकार उन्हें जैनधर्म, चौबीसों तीर्थंकरों, शासनपति भगवान महावीर एवं उनके सर्वोदयी सिद्धान्तों का परिज्ञान करा पाते?

माताजी दूरदर्शी एवं चुम्बकीय व्यक्तित्व की धनी हैं, इनकी 52 वर्षीय त्याग-तपस्या का तेज अखण्डित है, तभी तो इनके पास जाने वाला प्रत्येक व्यक्ति अपने मनवाञ्छित कार्यों की सिद्धि कर लेता है। ऐसा मैंने इसलिए नहीं कहा कि मुझे इनकी गृहस्थावस्था के लघु भ्राता होने का सौभाग्य प्राप्त है बल्कि इसलिए कहा कि मैंने इन्हें सदैव अपना कुलगुरु मानकर इन पर अटूट श्रद्धा रखी और इनकी त्याग-तपस्या के तेज एवं वात्सल्यपूर्ण आशीर्वाद से मैं कई बार मौत के मुख से बचा हूँ जिसका वर्णन चन्द शब्दों में करना अशक्य है और इसका अनुभव, इनके अलौकिक व्यक्तित्व का आकलन कोई भी स्वयं इनके पास रहकर कर सकता है। ऐसी साक्षात् देवीस्वरूपा माताजी का वरदहस्त सदैव जिनशासन और हम सब पर बना रहे, जिससे हम सब अज्ञानी मानव उनके द्वारा प्रदत्त ज्ञानगंगा में अवगाहन कर संस्कृति के संरक्षण-संवर्धन की प्रेरणा प्राप्त करते रहें और एक दिन इस संसार सागर से स्वयं भी पार हो सकें, ऐसी मंगल भावना है।

–प्रकाशचंद जैन सर्राफ

टिकैतनगर (बाराबंकी)

कुण्डलपुर तीर्थ का विकास-दुनिया का आठवाँ आश्चर्य!

मैंने पूज्य माताजी के दर्शन पहली बार सन् 1986 में हस्तिनापुर में किये थे। उन्हें पहली बार देखकर ऐसा लगा कि मेरा लक्ष्य मुझे मिल गया है। दूर बैठकर एकदम उन्हें देखता रहता था। परन्तु उस पारस के पास मुझ लोहे की जाने की हिम्मत नहीं होती थी। बार-बार जाता था, माताजी के दर्शन करके अपने नयनों की प्यास बुझाकर आ जाता था और पुनः माताजी के दर्शन के समय तक उसे संजोये रखता था।

पुनः मांगीतुंगी जी के पंचकल्याणक में पूज्य माताजी के चरण सानिध्य में उनके आदेशों का पालन (पंचकल्याणक की व्यवस्था में समय) करने का परम सौभाग्य मिला।

मैं ऋषभदेव भगवान की 108 फीट मांगीतुंगी की प्रतिमा के निर्माण में मुझे सौंपे गये कार्य के अलावा कुण्डलपुर के मंदिरों के निर्माण के संदर्भ में मेरा पिछले डेढ़ वर्ष में कई बार आना हुआ और जो कुछ भी डेढ़ वर्ष में निर्माण हुआ है, वह दुनिया का आठवाँ आश्चर्य लगता है। योजनाबद्ध निर्माण, शास्त्रोक्त निर्माण और विधिविधान पूर्वक निर्माण मैंने अपने जीवन में पहली बार देखा और उससे जुड़ने का सौभाग्य भी मिला। मैं श्री जिनेन्द्र देव से पूज्य माताजी के दीर्घ जीवन की कामना करता हूँ और आगे की किसी भी योजना में तन-मन-धन से योगदान देने की तथा किसी भी आदेश को सर आँखों पर रखने के लिए सदैव तैयार हूँ।

–इंजी. सी.आर. पाटिल, पुणे

❖ ❖

कुण्डलपुर तीर्थ-भारत के मानचित्र पर

लगभग 15 वर्ष पूर्व हस्तिनापुर में पूज्य माताजी के दर्शन का सौभाग्य मिला। परिचित नहीं होते हुए भी उस समय पूज्य माताजी से जो वात्सल्य मिला, उसे सचमुच आज तक एक यादगार के रूप में संजोया हुआ हूँ। वर्षों तक दर्शन नहीं होने के बावजूद एक तारतम्य सूत्र जुड़ा हुआ था।

दो वर्ष पूर्व कुण्डलपुर के प्रति माताजी का ध्यान गया तो उन्होंने इस लुप्त मृतप्राय तीर्थ के विकास का बीड़ा उठाया। उन्हीं के आशीर्वाद एवं प्रेरणा से पूरे भारत के मानचित्र में भगवान महावीर की जन्मस्थली कुण्डलपुर स्थापित हो सकी एवं प्रतिदिन हजारों जैन-अजैन यात्री दर्शनार्थ आने लगे।

इसी क्रम में मुझे भी उनके दर्शन का बार-बार सौभाग्य मिला एवं ममतामयी माता का वात्सल्य, आशीर्वाद भरपूर मिला।

माताजी का तीर्थ विकास की ओर पूरा ध्यान रहता है। योजनाओं को दूरदृष्टि से देखती हैं। निर्माण कार्य, मंदिर की भव्यता, लुप्त तीर्थों को मानचित्र पर लाने की योजनाएं उनके आशीर्वाद से स्वयं ही फलीभूत होती हैं।

आपके दीक्षागुरु के ज्ञान में आपकी ज्ञानज्योति अवश्य झलकी होगी, जिससे आपका सार्थक नाम ज्ञानमती रखा। भक्तों के दुःखों को दूर करने के लिए पूज्य माताजी भक्तों को धर्म मार्ग में लगाते हुए मंत्र, जाप, विधान के जरिये सांसारिक एवं पारलौकिक हित पूरा कराने में तत्पर रहती हैं।

मेरी मंगल कामना है कि पूज्य माताजी शतायु हों तथा उनकी प्रेरणा से विकसित कुण्डलपुर तीर्थ चिरकाल तक जिनधर्म की पताका को विश्वव्यापी फहराता रहे, यही वीरप्रभू से प्रार्थना है।

–सुरेश जैन झांझरी, कोडरमा

❖ ❖

भजन

तर्ज-मेरे देश की धरती.......।

कुण्डलपुर धरती वीरप्रभू के जन्म से धन्य हुई है
कुण्डलपुर धरती...........ओ.............।।टेक.।।

छब्बिस सौ वर्षों पूर्व जहाँ, धनपति ने रतन बरसाये थे।
रानी त्रिशला के सपने सुन, सिद्धार्थराज हरषाये थे।।
तीर्थंकर सुत को पाकर त्रिशला, माता धन्य हुई है।।
कुण्डलपुर धरती...............ओ.............।।1।।

पलने में देख वीर प्रभु को, मुनियों की शंका दूर हुई।
इक देव सर्प बनकर आया, उसकी शक्ती भी चूर हुई।।
कुण्डलपुर की ये सत्य कथाएं, जिन आगम में कही हैं।
कुण्डलपुर धरती...............ओ.............।।2।।

गणिनी माताश्री ज्ञानमती के, चरण पड़े कुण्डलपुर में।
अतएव वहाँ पर नंद्यावर्त, महल मंदिर भी शीघ्र बने।।
महावीर जन्मभूमि विकास की, घड़ियाँ धन्य हुई हैं।
कुण्डलपुर धरती...............ओ.............।।3।।

उस जन्मभूमि के दर्शन कर, तुम भी निज शंका दूर करो।
महावीर प्रभू के सन्मुख अपनी, इच्छाएँ परिपूर्ण करो।।
"चन्दनामती" उसके दर्शन, पाकर के धन्य हुई है।
कुण्डलपुर धरती.............ओ............।।4।।

महावीर वास्तव में महावीर ही थे

प्रायः पंचकल्याणक प्रतिष्ठा में ये पंक्तियाँ सुनने को मिलती हैं–

"महावीरा झूले पालना, माँ त्रिशला लोरी गावें"

क्या आप बता सकते हैं कि भगवान महावीर का "महावीर" नाम कैसे पड़ा? क्योंकि जन्माभिषेक के बाद सौधर्म इन्द्र ने तो "वीर" और "वर्धमान" दो ही नाम रखे थे पुनः वीर कैसे महावीर बने? मैं आपको इसकी रोचक घटना सुनाता हूँ–

एक बार स्वर्ग में प्रभुवीर की शूरवीरता की चर्चा सुनकर संगम नामक देव उनकी परीक्षा लेने के अभिप्राय से मध्यलोक के कुण्डलपुर नगर में आया, वहाँ बालक वर्धमान देव बालकों के साथ वृक्ष पर चढ़ने-उतरने का खेल खेल रहे थे वह देव विकराल सर्प का रूप धारणकर उसी वृक्ष से लिपट गया, सब बच्चे डरकर भाग गए परन्तु वर्धमान ने उस सर्प के फण पर पैर रखकर ऐसी क्रीड़ा की कि मानो अपने पलंग पर खेल रहे हों। तब उस देव ने अपना असली रूप प्रगट करके उनकी नाना स्तुति की और प्रभु को **"महावीर"** नाम से विभूषित किया।

ऐसे उन भगवान महावीर स्वामी के पावन चरणों में कोटि-कोटि नमन।

–भागमल जैन, चित्तौड़ (राज.)

मनुष्य जन्म बहुत दुर्लभता से प्राप्त हुआ है

लोहे को सोना करे, पारस जग विख्यात।
तुम जग को पारस करो, स्वयं ज्ञानमति मात।।

वास्तव में इस कलिकाल में हम जैसे अज्ञानी प्राणियों को गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी जैसी विदुषी साध्वी का समागम प्राप्त होना बहुत ही अधिक सौभाग्य की बात है। हम शास्त्रों में पढ़ते हैं कि चतुर्थकाल में तीर्थंकर जन्म लेते हैं, भोगभूमि में नाना प्रकार के सुख मिलते हैं, कल्पवृक्षों से मनवाञ्छित फलों की प्राप्ति होती है परन्तु जहाँ तक मैं सोचता हूँ कि हमारे लिए यह पंचमकाल अत्यन्त महत्वपूर्ण है। जिसमें कि हमें अत्यन्त दुर्लभ मनुष्यजन्म, उत्तमकुल, उत्तमधर्म, सम्यग्दर्शन और इसके साथ ही उत्तम गुरुओं की वाणी का रसास्वादन प्राप्त होता रहता है।

इन उत्तम दुर्लभ संयोगों का प्राप्त करके वीरप्रभू से यही मंगल प्रार्थना है कि हमें हमेशा सद्बुद्धि की प्राप्ति होती रहे, कभी भी हम अपने पथ से विमुख न होने पाएँ तथा जहाँ तक हो सके हम धर्म और धर्मायतन की रक्षा करके अपने कर्तव्य का निर्वाह कर सकें।

—हंस कुमार जैन, प्रियदर्शनी विहार-दिल्ली

* * *

किन शब्दों में अपने भाग्य की सराहना करूँ?

2 साल पूर्व जब से मैं पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के संपर्क में आई हूँ मुझे धर्म के प्रति बहुत श्रद्धा हो गई है यह मेरा परम सौभाग्य है कि मुझे सरिया जैसे नगर में रहने का सौभाग्य प्राप्त है जो कि बीस तीर्थंकरों की निर्वाणभूमि सम्मेदशिखर के नजदीक है तथा भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर से भी अधिक दूर नहीं है। उससे भी अधिक सौभाग्य की बात मेरे लिए यह है कि पूज्य माताजी का वात्सल्यमयी आशीर्वाद हमेशा-हमेशा हम सभी को प्राप्त होता रहता है, आगे भी इसी प्रकार पूज्य माताजी का वरदहस्त हमें प्राप्त होता रहे, यही भगवान महावीर से मंगल प्रार्थना है।

—श्रीमती कुमुद जैन, सरिया

* * *

कुण्डलपुर तीर्थ का विशेष आकर्षण-नंद्यावर्त महल

6 अप्रैल 2001 में भगवान महावीर 2600वें जन्मकल्याणक महोत्सव वर्ष का उद्घाटन राजधानी दिल्ली में किया गया। तत्कालीन प्रधानमंत्री जी ने इसे एक वर्ष तक जगह-जगह मनाने की घोषणा की परन्तु जन्मकल्याणक से जिसका साक्षात् संबंध था, ऐसी उनकी जन्मभूमि की ओर किसी ने ध्यान नहीं दिया, किसी ने यह भी नहीं सोचा कि वहाँ का विकास अगर पिछले सैकड़ों वर्षों से नहीं हो रहा है, तो उसका क्या कारण है? जन्मभूमि की इस उपेक्षा को देखकर ही पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने दिल्ली से स्वयं कुण्डलपुर पहुँचकर उसका विकास कराया, अब वहाँ जाने पर मन प्रसन्न हो जाता है, ऐसा लगता है कि जैसे ज्ञानमती माताजी ने संस्कृति का संरक्षण करने के लिए ही पृथ्वी

पर जन्म धारण किया है।

कुंण्डलपुर तीर्थ पर निर्मित वृहत् जिनमंदिर–भगवान महावीर मंदिर, ऋषभदेव मंदिर, नवग्रहशांति मंदिर, त्रिकाल चौबीसी मंदिर के साथ ही सुन्दर नंद्यावर्त महल का निर्माण मन को आकर्षित करने वाला है। इसको देखकर एक बार यह चिन्तन अवश्य आता है कि साक्षात् भगवान महावीर स्वामी ने जिस सोने के नंद्यावर्त महल में जन्म लिया था, वह वास्तव में कितना अधिक सुन्दर रहा होगा।

इस प्रकार नंद्यावर्त महल परिसर-कुण्डलपुर में निर्मित जिनमंदिर हम सभी को सद्बुद्धि प्रदान करते रहें, यही वीरप्रभू से मंगलकामना है।

–**त्रिलोकचंद जैन**, सब्जीमंडी, दिल्ली

* * *

माता त्रिशला भी महिमाशाली हैं

प्रायः एक सूक्ति कई जगह पढ़ने को मिलती है–"जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी" अर्थात् जननी–माता और जन्मभूमि स्वर्ग से भी अधिक महान हैं। जब यह साधारण मनुष्यों की जन्मभूमि की बात है तो तीर्थंकर जैसे महापुरुषों की जन्मभूमि की महिमा का क्या वर्णन करना? और उस माता की भी कितनी महिमा गाई जाए, जिन्होंने पूर्व दिशा के सूर्य की भाँति मात्र एक ही पुत्र को जन्म देकर उसे "अहिंसा का अवतार" बना दिया।

उन भगवान महावीर स्वामी की पावन जन्मभूमि, उनकी जन्मदात्री माता त्रिशला एवं भगवान महावीर को नमन करते हुए, कुण्डलपुर तीर्थ विकास की प्रेरणास्रोत पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी को शत-शत नमन करता हूँ।

–**कन्हैयालाल सेठी**, औरंगाबाद (बिहार)

* * *

कुण्डलपुर का परिवर्तित स्वरूप–एक अमूल्य भेंट

हमारा देश भारत एक महान देश है, भारत की धरती पर अनेक तीर्थंकर महापुरुषों ने जन्म लेकर अपने महान सिद्धान्तों से हम सभी पर अनन्त उपकार किये हैं, इसी तीर्थंकर श्रृंखला में इस युग के 24 तीर्थंकरों में से अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर थे, उनका जन्म 2602 वर्ष पूर्व बिहार प्रान्त के कुण्डलपुर में चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को हुआ था। उनके पिता सिद्धार्थ राजा एवं माता रानी त्रिशला थी। कुण्डलपुर के नंद्यावर्त महल में उनका जन्म एक स्वर्णिम वरदान से कम नहीं था। उन्होंने आगे चलकर सत्य, अहिंसा के महान सिद्धान्तों से लोगों को परिचित कराया। उन्होंने अपने उपदेशों से "जीओ और जीने दो" का जो अक्षय आलोक जन-जन को समर्पित किया, वह युगों-युगों तक मानवता का पथ आलोकित करता रहेगा। उनका आदर्श जीवन मानव को अपने उत्थान की प्रेरणा देता है। जैन धर्म की महानता को ऊँचाईयों तक ले जाने वाले भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर बहुत ही वैभवपूर्ण नगरी थी, जहाँ कुबेर द्वारा 15 महीनों तक रत्नवृष्टि हुई, जहाँ इन्द्रों ने प्रभु का जन्मोत्सव मनाया, जहाँ के कण-कण में भगवान महावीर के जन्म की पवित्रता आज भी मौजूद है लेकिन बहुत ही अफसोस

की बात है कि काल के अनन्त प्रवाह और अथाह गहराई में परिवर्तन का भँवर ऐसा घूमा कि कुण्डलपुर की वैभवता कम होने लगी, उसकी महान छवि धूमिल पड़ने लगी, किसी का ध्यान इसे विकसित करने की ओर नहीं गया, ऐसे में जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी, तीर्थ विकास की प्रेरिका पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी का ध्यान कुण्डलपुर को विकसित करने की ओर गया, फिर कुण्डलपुर के विकास की प्रक्रिया आरंभ हो गयी। सबसे पहले "भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर दिगम्बर जैन समिति" का गठन हुआ। 15 अगस्त 2002, श्रावण शुक्ला सप्तमी को कुण्डलपुरमें 2 एकड़ जमीन खरीदी गयी, जहाँ 29 दिसम्बर 2002 को माताजी का ससंघ आगमन हुआ, उनके आते ही कुण्डलपुर के विकास में चार-चाँद लग गये। माताजी की प्रेरणा से कुण्डलपुर का जीर्णोद्धार और विकास कार्य तेजी से आरंभ हो गया, देखते ही देखते 2 वर्षों से भी कम अवधि में कुण्डलपुर के नंद्यावर्त महल परिसर में भगवान महावीर का 108 फुट ऊँचा विशाल मंदिर, भगवान ऋषभदेव की विशाल पद्मासन मूर्ति से युक्त भगवान ऋषभदेव मंदिर तथा अद्वितीय नवग्रह शांति मंदिर का निर्माण हुआ। उनके विशालकाय शिखरों पर फहराती ध्वजाएँ जन्मभूमि के गौरव को बढ़ा रही हैं, इसके अलावा अति भव्य तीन चौबीसी मंदिर तथा नंद्यावर्त महल और उसमें शांतिनाथ जिनालय का भी निर्माण हुआ। विकास के इस चरण में यात्रियों की सुविधा हेतु सर्वसुविधायुक्त फ्लैट का निर्माण भी अपनी पूर्णता पर है, इसके अलावा पुराने मंदिर परिसर में भगवान महावीर कीर्तिस्तंभ का भी निर्माण हुआ, यह सब किसी चमत्कार से कम नहीं है। कुण्डलपुर के इस परिवर्तित रूप को देखकर श्रद्धालुओं की आँखें खुशी से भर आती हैं, कुण्डलपुर इतना सुन्दर हो जायेगा इसकी तो किसी ने कल्पना भी नहीं की थी, यहाँ लगातार दर्शनार्थियों का आवागमन लगा रहता है, लगातार भीड़ रहने के कारण कुण्डलपुर की गरीब जनता को रोजगार मिलने लगा, यहाँ का बच्चा-बच्चा आज णमोकार मंत्र की महिमा तथा भगवान महावीर के महान सिद्धान्तों से परिचित है, यहाँ की जनता माताजी की प्रशंसा करते नहीं थकती। ज्ञानमती माताजी ने अपने जीवन में अनेक महान कार्य किये हैं, इन्होंने कितने तीर्थक्षेत्रों का विकास किया, इनकी प्रेरणा से अनेक मंदिर बने।

पूज्य माताजी ने हिन्दी एवं संस्कृत में 250 ग्रंथों की रचना कर अपने ज्ञान को ऊँचाइयों के उस शिखर पर पहुँचा दिया, जहाँ पहुँचने की हम सिर्फ कल्पना ही कर सकते हैं।

ऐसी महान साध्वी की प्रेरणा और प्रयास से ही कुण्डलपुर एक यादगार तीर्थक्षेत्र बन गया है, कुण्डलपुर का परिवर्तित सुन्दर रूप समस्त जनमानस को उनकी अमूल्य भेंट है। ऐसी चतुर्मुखी प्रतिभा की धनी पूज्य माताजी युगों-युगों तक इस धरती को अपने ज्ञान की रोशनी से आलोकित करती रहें, यही हम सब की मंगलकामना है।

–श्रीमती चन्दा जैन बड़जात्या

(अध्यक्ष–अ.भा.दि. जैन महिला संगठन, नवादा इकाई)

* * *

तीर्थंकर की पहचान ननिहाल से नहीं होती

जैनधर्म के चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर का जन्म तेइसवें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ के निर्वाण के दो सौ पचास वर्ष बीत जाने के बाद कुण्डलपुर में हुआ था।

कई महानुभावों एवं इतिहासकारों ने भगवान महावीर की जन्मस्थली वैशाली बताकर विवाद पैदा कर दिया है, जो न्यायसंगत नहीं है। वैशाली भगवान महावीर की ननिहाल थी अतः महावीर जैसे

प्रतापी पुत्र ननिहाल के नाम से सम्मानित हों, यह स्वप्न में भी सोचना गलत है।

हालाँकि माताजी के प्रयास तथा कई संशोधनों के पश्चात् यह प्रमाणित हो चुका है कि कुण्डलपुर ही भगवान महावीर की जन्मस्थली है। भले ही काल के थपेड़ों से यह वैभवहीन बन गयी, पर इसकी पवित्रता में कोई कमी नहीं आई। आज भी कुण्डलपुर की पवित्र रज को अपने मस्तक पर लगाने, वंदन करने देश के कोने-कोने से भक्तगण कुण्डलपुर पहुँचते हैं।

पूज्य माताजी के चरण कुण्डलपुर पर पड़ते ही मानों कुण्डलपुर की कायाकल्प हो गयी। 15 अगस्त 2002 को श्रावण शुक्ला सप्तमी के दिन 2 एकड़ जमीन प्राचीन मंदिर के पास ही क्रय की गयी। 29 दिसम्बर 2002 के दिन भगवान महावीर मंदिर के शिलान्यास से तीर्थ का विकास आरंभ हो गया।

कुण्डलपुर के नये तीर्थ को "नंद्यावर्त महल परिसर" नाम दिया गया। 7 फरवरी से 12 फरवरी 2003 तक भगवान महावीर की अवगाहना प्रमाण (7 हाथ ऊँची) खड्गासन मूर्ति तथा भगवान ऋषभदेव की सवा ग्यारह फुट पद्मासन मूर्ति का पंचकल्याणक एवं महाकुंभ मस्तकाभिषेक महोत्सव सम्पन्न हुआ।

पूज्य माताजी के भक्त भारत के कोने-कोने में व्याप्त हैं, जो माताजी के आदेश की प्रतीक्षा करते हैं, उनके एक इशारे पर बड़े से बड़ा कार्य करने में अपना सौभाग्य मानते हैं, ऐसी चतुर्मुखी प्रतिभा की धनी पूज्य माताजी के चरणों में हमारी भावभीनी विनयांजलि अर्पित है। भगवान जिनेन्द्र से पूज्य माताजी के दीर्घायु होने की मंगलकामना करते हैं।

–श्रीमती निर्मला देवी गंगवाल
कोषाध्यक्ष–जैन महिला संगठन, नवादा

* * *

प्रतिकूल परिस्थितियों में भी कुण्डलपुर बन गया!

कुण्डलपुर शब्द जब बचपन में सुना था, तब एक ही बात ध्यान में थी कि यह भगवान महावीर की जन्मभूमि है। कुण्डलपुर और भगवान महावीर हम अलग-अलग पहचान ही नहीं समझ पाये और वह क्षण प्रत्यक्ष जीवन में आ गया। पूजनीय गणिनी आर्यिकारत्न ज्ञानमती माताजी ने कुण्डलपुर में जिनमंदिर का निर्माण कार्य हाथ में लिया।

समाज चर्चा करता रहा, वैशाली या कुण्डलपुर? किन्तु माताजी अपने संकल्प पर दृढ़ थीं, विश्वास दृढ़ था, तपश्चर्या थी, अतः कार्य कैसे नहीं होता? देखते ही देखते कुण्डलपुर को नया रंग, नया रूप, नयी ऊर्जा प्राप्त हुई। फिर कुण्डलपुर जगमगाने लगा, भगवान महावीर की याद दिलाने लगा।

कार्य कठिन था। पहले विषय, वैशाली और कुण्डलपुर का था। अपने ही समाज में मत परिवर्तन का सामना करना पड़ा। फिर बिहार जैसे वातावरण में निर्माण कार्य करना एक दुर्लभ बात थी। दिल्ली, प्रयाग से माताजी ने यह दूरी बड़ी परिश्रम से पूरी की। निर्माण कार्य में Practically भी काफी परेशानियाँ थीं लेकिन यह निर्माण एक बात अवश्य कहता है कि इंसान अपना विश्वास दृढ़ रखें-अटल रहें तो क्या नहीं हो सकता। हर कार्य का यश और अपयश इंसान की अपनी सोच तथा दृढ़ विश्वास पर निर्भर करता है, श्रद्धान इंसान को नर से नारायण बनाता है, भगवान बनाता है।

कार्य पूरा करने से पहले केवल यहाँ पर भगवान महावीर मंदिर तथा 24 भगवान की बात थी। बात बनते-बनते तीन चौबीसी तथा नवग्रह शांति मंदिर और ऋषभदेव मंदिर समय के साथ अपना रूप ले बैठा। सभी निर्माणों को देखकर ऐसा लगता है कि जैसे कोई अत्यंत सोच समझकर किया गया कार्य हो।

हर मंदिर का निर्माण काफी हद तक वास्तुशास्त्र को ध्यान में रखते हुए किया हुआ है। वास्तु में प्रवेश करते ही मन आनंद से भर जाता है। औरंगाबाद (महा.) से इतनी दूर आने में सफर की थकान क्षणभर में दूर हो जाती है।

पूरा संघ, बहन जी तथा कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र जी इनका हमें हमेशा आशीर्वाद तथा स्नेह रहा।

मुझे पूरा विश्वास है कि माताजी के इस कार्य को इतिहास जरूर याद रखेगा। जब भी कुण्डलपुर कोई यात्री दर्शन के लिए आयेगा, माताजी की याद में वह जरूर नतमस्तक हो जायेगा।

हम सब पर माताजी का उपकार है, आशीर्वाद है।

इतना कहते हुए भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर के प्रति मेरी बारम्बार विनयांजलि।

–पवन कुमार जैन पापड़ीवाल (वास्तुशास्त्री)
औरंगाबाद

* * *

जिनेन्द्र भक्ति में अटूट शक्ति है

कहते हैं कि जो सच्चे मन से भगवान की भक्ति करता है, उसके सभी मनोरथ पूरे हो जाते हैं। पूज्य माताजी अक्सर यह बताया करती हैं कि मैंने अब तक जो कार्य किए हैं, वे सब भगवान की भक्ति के बल पर ही किए हैं। माताजी कहती हैं कि जब मैं कोई ग्रंथ पूरा करती हूँ, तब मुझे ऐसा लगता है कि मैंने कैसे इस ग्रंथ को लिख दिया है। वास्तव में जिनेन्द्रदेव की भक्ति एवं सरस्वती की कृपा प्रसाद से ही ये ग्रंथ लेखन संभव हो पाता है।

जब भक्ति करते-करते भक्त एक दिन भगवान बन सकता है तब अन्य सभी कार्य स्वयमेव पूर्ण हो जाते हैं। भगवान महावीर की जन्मभूमि का विकास मात्र डेढ़ वर्ष में हो जाना भगवान की भक्ति का ही प्रतिफल है। पूज्य माताजी से जब मैंने कहा कि माताजी! इतने कम समय में इतना काम हो गया, यह सब आपका ही चमत्कार है। तब उन्होंने कहा कि भैया! मैंने कुछ नहीं किया है, मैंने तो सिर्फ भगवान महावीर स्वामी की भक्तिवश प्रेरणा दी है, यह सब चमत्कार मेरा नहीं, अपितु भगवान की भक्ति का है। कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ के लिए मेरी बहुत-बहुत शुभकामनाएं हैं। भगवान महावीर एवं पूज्य गणिनी ज्ञानमती माताजी के चरणों में कोटिशः नमन।

–नरेश जैन बंसल-दिल्ली
(प्रवासी गुंडगाँवा, हरियाणा)

* * *

एक अमूल्य धरोहर खोने से बच गई

सिद्धिवधूप्रियनाथ! जिनेश्वर! वीर! महागुणरत्नसुराशे!
कुण्डलपूः त्रिशला जननी बहु, पुण्यवती सुरवृन्दनुतासीत्।।
मंगलदं भुवि हर्षकरं जिन! गर्भमवाप शुचौ सितषष्ठ्यां।
सन्मतिदेव! सदामम सन्मतये, भवतात् प्रणमामि मुदा त्वां।।

भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर है। अनेकों वर्षों से वीरान पड़ी इस भूमि के विकास का

योग पूज्य गणिनी ज्ञानमती माताजी के निमित्त से बना है। हम सभी पूज्य माताजी के बहुत-बहुत आभारी हैं कि उन्होंने जैनसमाज की एक धरोहर को खोने से बचा लिया है।

मुझे तो सबसे ज्यादा गौरव इस बात का है कि जिस अवध प्रान्त में पूज्य गणिनी ज्ञानमती माताजी ने जन्म लिया है, उसी अवधप्रान्त में मुझे भी जन्म लेने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है और उससे भी अधिक गौरव की बात यह है कि पूज्य माताजी की प्रेरणा से मुझे शाश्वत तीर्थ अयोध्या के महामंत्री पद का कार्यभार संभालते हुए उस तीर्थ के प्रति अपना तन-मन-धन से थोड़ा बहुत सहयोग करने का पुण्य अवसर प्राप्त हुआ है।

भगवान ऋषभदेव से भगवान महावीर तक चौबीसों तीर्थंकरों की जन्मभूमियों का क्रम-क्रम से विकास करते हुए वर्तमान में भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर का विकास कार्य द्रुतगति से चल रहा है, इतने कम समय में इतने अधिक निर्माण की कल्पना तो शायद ही किसी ने की हो परन्तु यहाँ तो कल्पना की कोई बात ही नहीं है, सब कुछ साकाररूप में सबके सामने दिख रहा है। सुन्दर नंद्यावर्त महल से प्रसिद्धि को प्राप्त इस कुण्डलपुर का खूब प्रचार-प्रसार हो, यह दिग्दिगन्त व्यापी बने, यही मंगल भावना है एवं भगवान महावीर के श्रीचरणों में विनम्र विनयांजलि है एवं तीर्थ प्रणेत्री गणिनी माताजी के चरणों में मेरा शत-शत नमन है।

—**सरोज जैन**, फतेहपुर (बाराबंकी) उ.प्र.
महामंत्री-श्री अयोध्या तीर्थक्षेत्र कमेटी

❖ ❖

कहीं मैं स्वप्न तो नहीं देख रहा!

मैं पूज्य माताजी के सानिध्य में फरवरी 2003 में हुए पंचकल्याणक में आया था, उसके बाद अभी अगस्त 2004 में इन्द्रध्वज मंडल विधान में सम्मिलित होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। नालंदा पार करने के बाद एक सपाट तथा ऊबड़खाबड़ जमीन के प्लाट पर विशालकाय तीन शिखरबंद मंदिरों के शिखरों को दूर से ही देखकर संदेह हुआ कि कहीं मैं दिवा स्वप्न तो नहीं देख रहा हूँ परन्तु तत्काल मेरा भ्रम दूर हुआ और सन् 1967 से आज तक पूज्य माताजी के चरण सानिध्य में जुड़ी स्मृतियों के सामने आते ही विश्वास हो गया कि जम्बूद्वीप, अयोध्या, प्रयाग और अब कुण्डलपुर में कायाकल्प हमारे लिए ये कल्पना ही रहती परन्तु माताजी के चमत्कारी व्यक्तित्व, दूरदृष्टिता तथा योजनाबद्ध सोच ने इन सब असंभव से कामों को ऐसे संभव बना दिया जैसे आजकल कम्प्यूटर द्वारा बड़े-बड़े महल, कॉलोनियाँ और प्रासाद माउस घुमाते ही बन जाते हैं।

कुण्डलपुर क्षेत्र की एक-एक रचना को देखकर ऐसा लगता है कि वास्तव में भगवान महावीर स्वामी के समय पर कुण्डलपुर ऐसा ही रहा होगा। माताजी के चमत्कारी व्यक्तित्व द्वारा किसी भी योजना को साकार करना कदापि असंभव नहीं है।

माताजी का मुझ पर और मेरे परिवार पर बड़ा उपकार है कि उन्होंने हम सबको परम वीतराग-मोक्षमार्ग पर चलने का रास्ता दिखाया। श्री जिनेन्द्रदेव से प्रार्थना है कि माताजी दीर्घायु हों, हमारी उम्र उन्हें लग जाये ताकि वे युगों-युगों तक हम सभी को ऐसे पावन कार्यों में लगाकर हमारा कल्याण करती रहें।

—**डॉ. देवेन्द्र जैन शाह**, भोपाल

❖ ❖

अखिल भारतीय दिगम्बर जैन महिला संगठन के राष्ट्रीय अधिवेशन के अंतर्गत

श्रीमती सुषमा स्वराज (तत्कालीन राष्ट्रीय महामंत्री-भाजपा) का संक्षिप्त उद्‌बोधन

(9 अक्टूबर 1997—दिल्ली)

यह मेरा परम सौभाग्य है कि आज इस समारोह में मुझे याद किया गया। यहाँ आकर मुझे ज्ञान की साकार प्रतिमूर्ति पूज्य ज्ञानमती माताजी के दर्शन का भी सुयोग प्राप्त हुआ, उनके सानिध्य में कुछ क्षण बिताने का मौका मिला। पूज्य माताजी ने जो पावन कार्य किया है, वह आज के समय की सबसे बड़ी आवश्यकता है।

बहुत समय पहले किसी ने कहा था कि अगला युद्ध समर के रूप में नहीं होगा, शस्त्र और हथियारों से नहीं होगा, अगला युद्ध संस्कृतियों के बीच में होगा और जो कुछ आज सामने दिखाई दे रहा है, उससे यह लगता है कि वह युद्ध शुरू हो चुका है और इस युद्ध का मुकाबला हर घर में, हर माँ, हर बहन कर रही है।

जैन समाज देश का एक संभ्रांत, सम्पन्न समाज है। आज बाहर पढ़ने वालों में सबसे अधिक संख्या जैन बच्चों की है और वह बच्चा चाहे अमेरिका, जापान या कनाडा में पढ़ा हुआ क्यों न हो, भारत में आकर अपनी संस्कृति, पहनावे, खान-पान व रीति-रिवाजों में ही पुनः रम जाता है।

यही संस्कृति व रीति-रिवाज विरासत के रूप में भारत में सभी को मिले, इसके लिए महिला संगठन की स्थापना अत्यन्त आवश्यक है। पूज्य माताजी ने जो नारी जागरण का कार्य प्रारंभ किया है, उसे राजनेता या सामाजिक संगठन नहीं कर सकते क्योंकि इस देश की मिट्टी में धर्म की गंध इतनी रच-बस गई है कि धर्माचार्यों की कही बातों का पालन प्रत्येक मानव करते हैं। आज जितनी भी चीजें हैं, सबके पीछे वैज्ञानिक रहस्य है, पर विज्ञान के नाते बताने पर उसका प्रभाव नहीं पड़ता जबकि सन्तों की बातों का तुरंत असर हो जाता है।

बहुत वर्षों से हमें प्रतीक्षा थी कि कोई धर्माचार्य आगे आवें और इस नारी उत्थान के लिए नारी समाज का संगठन करें क्योंकि नारी संगठन की बात कहते तो बहुत लोग हैं, पर करता कोई नहीं है। आज एक विभूति समाज में है, जिनकी वाणी में ओज ही नहीं बल्कि जिनकी वाणी आदेश के मुताबिक चलती है। इन महिला संगठनों के माध्यम से अवश्य ही एक नई क्रांति का सूत्रपात होगा। पूज्य माताजी के इस पावन कार्य के लिए मैं उन्हें कोटिशः धन्यवाद देते हुए अपनी वाणी को विराम देती हूँ।

"जय हिन्द"

कुण्डलपुर तीर्थ का विकास-धर्मप्रभावना का अभूतपूर्व कार्य है

सम्यग्दर्शन के आठ अंग हैं। निःशंकित, निःकांक्षित, निर्विचिकित्सा, अमूढ़दृष्टि, उपगूहन, स्थितिकरण, वात्सल्य और प्रभावना। कुण्डलपुर का विकास अर्थात् जैनधर्म की प्रभावना सम्यग्दर्शन का एक अंग है। पूज्य ज्ञानमती माताजी ने कुण्डलपुर का विकास करवाकर जैनधर्म की महती प्रभावना की है।

अगर पूज्य माताजी ने कुण्डलपुर तीर्थ के विकास की प्रेरणा न दी होती, तो आगे आने वाली पीढ़ी

शायद वैशाली को ही जन्मभूमि मानकर उसकी पूजा-अर्चना करती जबकि धवला, जयधवला, तिलोयपण्णत्ति आदि बड़े-बड़े ग्रंथों से यह स्पष्ट है कि वैशाली भगवान महावीर की ननिहाल है। तीर्थंकर जैसे महापुरुष के महल में आखिर क्या कमी रहती है जो उन्हें ननिहाल में जन्म लेना पड़े, उनके पिता तो स्वयं ही सबको मुक्तहस्त से किमिच्छक दान बांटते रहते हैं। वास्तव में पूज्य माताजी ने कुण्डलपुर का विकास करवाकर कई भ्रान्तियों का निराकरण कर दिया है। अब जिसको भी भगवान महावीर के प्रति सच्ची श्रद्धा-भक्ति है, उसको उनकी जन्मभूमि कुण्डलपुर होने में जरा भी संदेह नहीं करना है। जन्मभूमि कुण्डलपुर थी, है और रहेगी।

यह कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ जैन समाज के लिए एक अमूल्य धरोहर है। भगवान महावीर के चरणों में बारम्बार विनम्र विनयांजलि।

—**श्रीपाल जैन**, शालीमारबाग-दिल्ली

* * *

चन्दन है इस तीर्थ की माटी

भगवान महावीर स्वामी के महावीर, वीर, सन्मति, वर्धमान और अतिवीर ये पाँच नाम प्रसिद्ध हैं। तीर्थंकर भगवान जहाँ जन्म लेते हैं और जहाँ से मोक्ष जाते हैं, वे स्थान पवित्र हो जाते हैं। उस स्थल की रज को लोग माथे पर लगाकर अपने को पवित्र करते हैं। भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर का कण-कण पवित्र है, इस बात को कोई नकार नहीं सकता।

कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ का प्रकाशन जैन समाज पर विशेष उपकार है एवं प्राचीन संस्कृति का संरक्षण एवं संवर्धन है। क्योंकि किसी ने कहा है कि–

अंधकार है वहाँ, जहाँ आदित्य नहीं है।
निर्बल है वह देश, जहाँ साहित्य नहीं है।।

समय-समय पर प्रकाशित होने वाले ग्रंथों के माध्यम से ही जैनधर्म के बारे में विस्तृत जानकारियाँ प्राप्त होती रहती हैं। हमारे अन्दर तो इतनी बुद्धि प्रखरता है नहीं कि हम बड़े-बड़े पुराणों का स्वाध्याय करें। ग्रंथ प्रकाशन की इसी शृंखला में भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर से प्रकाशित यह अभिनंदन ग्रंथ सभी के हृदय में समीचीन ज्ञान की ज्योति प्रज्वलित करे, यही भगवान महावीर स्वामी के श्रीचरणों में नमन करते हुए मेरी विनम्र विनयांजलि है और तीर्थ प्रणेत्री ज्ञानमती माताजी के चरणों में बारम्बार नमन।

—**विजय जैन**, बहराइच (उ.प्र.)

* * *

जब तक सूरज चाँद रहेगा, कुण्डलपुर का नाम रहेगा

कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ के प्रकाशन की बात सुनकर हार्दिक प्रसन्नता हुई। भगवान महावीर की जन्मभूमि का विकास एक ऐतिहासिक कार्य है। इसकी जितनी प्रशंसा की जाये, उतनी कम है। मैं तो करीब 10-12 वर्षों से पूज्य माताजी के कार्यकलापों को देख रहा हूँ, सबसे पहले अयोध्या में उनके दर्शन करके, उनके चरण सानिध्य में रहकर अपने मनुष्यजीवन को सार्थक करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। जिस द्रुतगति से अयोध्या में जिनमंदिर निर्मित हुए हैं, वह दृश्य देखने का मेरे जीवन में पहला

अवसर था। उसके बाद तो मांगीतुंगी, प्रयाग का भी कायाकल्प होते मैंने अपनी आँखों से देखा है और अब जब यह विदित हुआ कि भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर का विकास पूज्य माताजी की प्रेरणा से हो रहा है, तब मैंने भी जाकर वहाँ का परिवर्तित स्वरूप देखा। देखकर मन में इतना आल्हाद हुआ, जिसे कहना मेरे लिए अशक्य है। अब मैंने ही नहीं सम्पूर्ण देश की जैन समाज ने यह अच्छी तरह से जान लिया है कि पूज्य ज्ञानमती माताजी जहाँ अपने चरण रख देती हैं, वहाँ जंगल में भी मंगल हो जाता है। पूज्य माताजी की प्रेरणा से विकसित यह कुण्डलपुर तीर्थ अमरत्व को प्राप्त करे, यही मेरी मंगलकामना है तथा इस कुण्डलपुर पावन भूमि के लिए मेरी यही विनयांजलि है–

''जब तक सूरज चाँद रहेगा
कुण्डलपुर का नाम रहेगा।''

–कुंवरसेन जैन, बहराइच

* * *

कुण्डलपुर एक चमत्कारिक अतिशय क्षेत्र

जैनधर्म के 24वें तीर्थंकर श्री 1008 भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर का अभूतपूर्व विकास, जो कि पिछले कई दशकों से अधूरा पड़ा था, जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा का एक जीवंत चमत्कारिक स्वरूप है। जब देश की जैन समाज में भगवान महावीर की जन्मभूमि को लेकर अनेकों भ्रांतियाँ पनप रही थीं, ऐसे समय में श्री ज्ञानमती माताजी ने भ्रमित होती जैन समाज को आगे बढ़कर नेतृत्व प्रदान किया और केवल एक नाम दिया, "कुण्डलपुर" यही भगवान महावीर की जन्मभूमि है। वर्षों से अविकसित पड़े इस क्षेत्र के विकास का बीड़ा उठाया। दिल्ली से इलाहाबाद, बनारस, पटना, आदि की गर्मी में पदयात्रा की, रास्ते में पड़ने वाले सभी स्थानों के लोगों को भगवान महावीर की जन्मभूमि की जानकारी देते हुए उन्हें अपने से जोड़ते हुए, क्षेत्र के विकास की प्रेरणा दी।

माताजी के कुण्डलपुर पहुँचते ही जंगल में मंगल हो गया। लोगों के असीम प्रेम व सहयोग से बीस सालों का कार्य दो साल में पूरा हुआ, विशाल मंदिरों के साथ-साथ धर्मशाला आदि भी बनकर तैयार हो गये। आज पूरे भारतवर्ष के जैन दर्शनार्थी व अन्य यात्री भी क्षेत्र में निर्माण एवं विकास कार्य को देखकर आश्चर्य चकित हैं। यह क्षेत्र वर्तमान व आने वाली पीढ़ी के लिए एक उपहारस्वरूप है। माताजी के इस अभूतपूर्व कार्य ने जैन समाज को एक सूत्र में पिरोने का कार्य किया। ऐसी करुणामयी, वात्सल्यमयी, विदुषी ज्ञानमती माताजी के चरणों में शत-शत वंदन, कोटि-कोटि नमन।

–अरुण जैन (बैंक वाले), इलाहाबाद

* * *

कुण्डलपुर अवतारी-त्रिशलानंद विभो

आज से कोड़ा-कोड़ी वर्ष पूर्व प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव ने शाश्वत तीर्थ अयोध्या में जन्म लेकर कैलाशपर्वत से मोक्षधाम प्राप्त किया था उसी तीर्थंकर शृंखला में अंतिम एवं चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी ने कुण्डलपुर नगरी में जन्म लेकर इस भूमि को "तीर्थ" इस संज्ञा से विभूषित कर दिया।

वैसे तो अनन्तानन्त तीर्थंकरों ने अनन्तकाल से अयोध्या नगरी में जन्म लेकर सम्मेदशिखर से

निर्वाण प्राप्त किया है परन्तु इस बार हुण्डावसर्पिणी काल के दोषवश मात्र 5 तीर्थंकर ही अयोध्या में जन्मे हैं, बाकी 19 तीर्थंकर अलग-अलग स्थानों में जन्मे हैं अतः वर्तमान में 24 तीर्थंकरों की 16 जन्मभूमियाँ हैं।

जैन समाज की वरिष्ठतम साध्वी पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी का हमेशा यही कहना रहता है कि "नए-नए स्थानों पर तीर्थ बनाने की बजाए तीर्थंकर भगवन्तों की जन्मभूमियों का विकास वर्तमान समय की महती आवश्यकता है। जिस स्थान पर तीर्थंकर की माता उत्तम-उत्तम सोलह स्वप्नों को देखती है, जिस स्थान पर 15 महीने तक धनकुबेर बहुमूल्य रत्नों की वर्षा करता है, जिस नगरी की सौधर्मइन्द्र स्वर्ग से आकर तीन प्रदक्षिणा लगाता है, ऐसी उन जन्मभूमि नगरियों का अस्तित्व अगर आज समय के साथ समाप्त होने के सन्मुख है तो उस अस्तित्व को पुनर्जीवित करना प्रत्येक श्रावक का परम कर्तव्य है।"

हम अपने श्रावकोचित कर्तव्यों का पालन करते हुए तीर्थंकरों एवं उनकी जन्मभूमियों के प्रति अपने भक्तिसुमन समर्पित करके अपने मानवजीवन को सफल बनाने के पुरुषार्थ में सफलता प्राप्त करें, यही वीरप्रभु से मंगलकामना है।

–प्रमोद कासलीवाल, औरंगाबाद (महा.)

* * *

कुण्डलपुर में आकर मेरा नाच उठा मन मोर

तर्ज–सावन का महीना......................

प्रभु महावीर की नगरी, का जग में मच रहा शोर,
कुण्डलपुर में आकर मेरा, नाच उठा मनमोर।।टेक.।।

राजा सिद्धारथ रानी, त्रिशला महल में।
जन्मे थे वीरा आनन्द, था चहुंदिश में।।
गर्भ, जन्मकल्याणक कर, इन्द्र थे भावविभोर।
कुण्डलपुर में आकर मेरा, नाच उठा मनमोर।।1।।

छब्बिस सौ वर्षों पहले, नगरी थी स्वर्णमय।
किन्तु आज उसकी स्थिति, लगती थी कष्टमय।।
जैन समाज था सोया, या काल का था यह जोर।।
कुण्डलपुर में आकर मेरा, नाच उठा मनमोर।।2।।

दिग्भ्रम में डूबे विद्वत्वर्गों की खोज ने।
प्रश्नचिन्ह ही लगाया, वीर जन्मंभूमि पे।।
विद्वानों और जनता का, अलग-अलग था शोर।
कुण्डलपुर में आकर मेरा, नाच उठा मनमोर।।3।।

जगदम्बे बनकर आईं, गणिनी माँ ज्ञानमती।
आगम के दर्पण में तब, कही सच्ची वस्तुस्थिति।।
कुण्डलपुर ही वीरा की, जन्मभूमि नहिं और।
कुण्डलपुर में आकर मेरा, नाच उठा मनमोर।।4।।

विकसित स्वरूप देखो कुण्डलपुरी का।
तीरथ विकास हुआ, उपकार माता का।।
विश्व के क्षितिज पे छाया, फिर वीरा का जयघोष।
कुण्डलपुर में आकर मेरा, नाच उठा मनमोर।।5।।

-श्रीमती माला जैन, ग्रीनपार्क-दिल्ली

* * *

"आधी रोटी खाएंगे, पर कुण्डलपुर को बनाएंगे"

भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर की ओर विहार करते हुए पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी संघ सहित हमारे आगरा शहर में पधारीं। आगरा की 26 शैलियों (कॉलोनियों) में खूब धर्मप्रभावना हुई। मुझे तो पहली बार इतनी नजदीकी से पूज्य माताजी के संघ की चर्या देखने का अवसर प्राप्त हुआ। मैंने महसूस किया कि पूज्य माताजी एवं संघ में सभी का जीवन एक खुली किताब की तरह है। हर समय संघ में लेखन, अध्ययन, अध्यापन का ही वातावरण देखने को मिला, किसी को भी अनावश्यक बातचीत करते हुए मैंने नहीं देखा।

कुण्डलपुर के विकास का नाम सुनकर मैंने आगरा में ही अपनी भावना व्यक्त की थी कि "आधी रोटी खाएंगे, पर कुण्डलपुर बनाएंगे।" यह केवल घोषणा ही नहीं मेरे दिल की आवाज है इसलिए समय-समय पर मुझे जब भी अवसर मिला कुण्डलपुर गया और वहाँ का द्रुतगति से निर्माण देखकर सदैव नतमस्तक हुआ।

मेरा परम सौभाग्य है कि मुझे भी भगवान महावीर की जन्मभूमि में अपने कुछ पुष्प-पत्र समर्पित करने का सौभाग्य मिला है। नंद्यावर्त महल परिसर में निर्मित वृहत् जिनमंदिरों के उत्तुंग रमणीय शिखर जन्मभूमि कुण्डलपुर के गौरव को आकाश की ऊँचाईयों तक पहुँचाने में सफलता प्राप्त करें तथा हम सभी श्रावकगण भी अपने जीवन को महापुरुषों के आदर्शों के माध्यम से उच्चता प्रदान करें, यही मंगलकामना है।

–सिंघई शिखरचंद जैन, कमलानगर-आगरा

सदियों से थी और सदा ही रहेगी

जैनधर्म के 24वें तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी की जन्मभूमि कुण्डलपुर के दर्शन जब मैंने पूर्व में किए थे, तब वहाँ जाकर मुझे एक सूक्ति याद आ गई "नाम बड़े और दर्शन छोटे" वास्तव में रोज सुबह पूजा में पढ़ते थे "जनम चैत सित तेरस के दिन, कुण्डलपुर कन वरना", शाम को आरती में 'कुण्डलपुर अवतारी" पढ़ते थे तो मन में सोचा करते थे कि भगवान महावीर की जन्मभूमि जरूर खूब विशाल, सुन्दर और विकसित होगी, वहाँ बड़े-बड़े मंदिर बने होंगे परन्तु वहाँ जाकर तो बस एक छोटा सा मंदिर देखकर बहुत अफसोस हुआ परन्तु चूँकि हम लोग बिना किसी प्रेरणा के कुछ कर नहीं सकते थे अतः चुपचाप घर वापस आ गए।

आज मैं बहुत प्रसन्न हूँ कि उसी जन्मभूमि में पाँच बड़े-बड़े जिनमंदिर निर्मित हो गए हैं, पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी का उपकार हम और आप क्या, पूरी दुनिया कई जन्मों तक नहीं चुका सकती हैं। अब इस जन्मभूमि की कीर्ति सदियों-सदियों तक पूरे विश्व में फैल सकेगी, ऐसा मुझे पूरा विश्वास है।

आज से करीब 7-8 साल पहले जब पूज्य माताजी मांगीतुंगी तीर्थ पर पधारी थीं, तब मुझे पहली बार उनके दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। उस समय पूज्य माताजी के दर्शन करके मैं बहुत अधिक प्रभावित हुआ था। पता नहीं माताजी के व्यक्तित्व में कैसा चुम्बकीय आकर्षण था कि मैं इनकी ओर आकर्षित होता चला गया और धर्म से अनभिज्ञ मुझ अज्ञानी को पूज्य माताजी ने धीरे-धीरे धर्म का पाठ पढ़ाना शुरू किया। संघ के साथ रहकर मैंने प्रत्येक साधु की चर्या सूक्ष्मता से देखी है, सभी

लोग हर समय धार्मिक चर्चा ही किया करते हैं इसके अलावा और किसी तरह की बातें मैंने संघ में कभी नहीं सुनीं।

वर्तमान में पूज्य माताजी के कारण ही भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर विस्तृत स्वरूप को प्राप्त करके समस्त विश्व में अपना अलग स्थान बनाने की ओर अग्रसर है।

भगवान महावीर को शत-शत नमन करके उनकी पावन जन्मभूमि को बारम्बार नमन करते हुए मैं अपनी सादर विनयांजलि समर्पित करता हूँ तथा महावीर प्रभू से यह प्रार्थना करता हूँ कि पूज्य माताजी स्वस्थ एवं चिरायु रहकर अनन्तकाल तक हमें इसी प्रकार मार्गदर्शन प्रदान करती रहें।

–जयचंद जैन कासलीवाल (पूर्व विधायक)
चांदवड़-महाराष्ट्र

* * *

कुण्डलपुर के दर्शन करने हजारों यात्री आते हैं

मैं कुण्डलपुर (जो कि भगवान महावीर की जन्मभूमि है) करीबन 28 सालों से आ रहा हूँ और हमेशा भगवान के दर्शन करके चला जाता था। इस प्राचीन मंदिर में इन 28 सालों में कोई विकास होते मैंने नहीं देखा और हर यात्री जल्द से जल्द भागना चाहता था किन्तु आज सिर्फ गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से ही हजारों यात्री कुण्डलपुर आते हैं और जब वे नवनिर्मित मंदिर देखते हैं तो आश्चर्यचकित रह जाते हैं।

दो वर्ष पूर्व जब मैंने सुना था कि ज्ञानमती माताजी कुण्डलपुर तीर्थ का विकास करने हेतु कुण्डलपुर पहुँच गई हैं, तब मैंने भाई रवीन्द्र जी से फोन करके कहा कि भाई जी! कुण्डलपुर में तो कुछ भी नहीं है, आप वहाँ कैसे विकास कर पाएंगे!तब मुझे उन्होंने यही कहा कि भैया! जहाँ कुछ नहीं है, वहीं तो विकास करना आवश्यक होता है।" उनकी बात सुनकर मुझे भी लगा कि बात तो सही है और मुझे पूरा विश्वास हो गया कि अब कुण्डलपुर जल्दी ही विकसित हो जाएगा क्योंकि ज्ञानमती माताजी जैसी महान साध्वी के आशीर्वाद से कोई भी कार्य असंभव नहीं रहता, वे जिस कार्य को करने की बात अपने मन में ठान लेती हैं, उसको पूरा करके ही उनको शांति मिलती है।

भगवान महावीर स्वामी के चरणों में शतशः नमन करते हुए उनकी जन्मभूमि के प्रति मेरी सादर विनयांजलि समर्पित है।

–प्रदीप जैन, लखनऊ
(अध्यक्ष–जयजिनेन्द्र सेवा समिति)

* * *

कुण्डलपुर मानो 2600वें जन्मोत्सव का ही इंतजार कर रहा था!

बहुत प्रसन्नता की बात है कि जन्मभूमि कुण्डलपुर का चमत्कारपूर्ण ढंग से विकास करने के बाद अब **भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ** का प्रकाशन किया जा रहा है।

मुझसे जब कहा गया कि इस अभिनंदन ग्रंथ के लिए आपको अपनी विनयांजलि लिखकर भेजना है, तब काफी देर तक तो मैं सोचता ही रहा कि कहाँ से लिखना शुरू करूँ, क्या लिखूँ, कितना लिखूँ

इत्यादि....... वास्तव में मेरे जैसा प्राणी यह छोटा सा काम करने में इतना सोच विचार में पड़ गया और ज्ञानमती माताजी तो बड़े-बड़े काम करने में ज्यादा सोच-विचार नहीं करती हैं। अगर वे भी मेरी तरह सोचने लग जातीं, तो आज हमें हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप रचना, अयोध्या का अभूतपूर्व विकास, प्रयाग में तपस्थली तीर्थ, कुण्डलपुर में नंद्यावर्त महल आदि तीर्थ जो दिख रहे हैं वें शायद दृष्टिगोचर नहीं हो पाते।

मैंने ज्ञानमती माताजी का नाम तो पहले बहुत सुना था लेकिन जब प्रयाग में साक्षात् उनके कार्यकलाप देखे, उनकी आगमनिष्ठ चर्या देखी, तब मुझे लगा कि मैंने इनके बारे में जितना सुना था, ये तो उससे भी ज्यादा महान हैं।

भगवान महावीर के 2600वें जन्मकल्याणक वर्ष में जन्मभूमि का विकास बहुत बड़ी उपलब्धि है। ऐसा लगता है कि भगवान महावीर की जन्मभूमि में निर्मित वह प्राचीन छोटा सा मंदिर 2600वें जन्मकल्याणक महोत्सव और ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा का ही इंतजार कर रहा था।

हम प्रयागवासियों के लिए वास्तव में बहुत ही सौभाग्य की बात है कि हमें पूज्य माताजी ने इस सदी के शुभारंभ में एक तीर्थ धरोहर के रूप में प्रदान किया है, हम पूज्य माताजी का उपकार एक जन्म क्या, कई जन्मों तक नहीं चुका पाएंगे।

अन्त में भगवान महावीर स्वामी के चरणों में शत-शत नमन करते हुए उनकी पावन-पवित्र जन्मभूमि के प्रति अपनी विनम्र विनयांजलि समर्पित करता हूँ तथा वीर प्रभू से प्रार्थना करता हूँ कि पूज्य ज्ञानमती माताजी चिरायु हों ताकि हमें समय-समय पर मार्गदर्शन प्रदान करती रहें।

–डॉ. प्रेमचंद जैन, इलाहाबाद.

भगवान महावीर स्वामी की दिव्यध्वनि सबके लिए हितकारी

वर्तमान युग की नई खोज में कतिपय आधुनिक विद्वानों द्वारा दिगम्बर जैन आगम ग्रंथों की भरपूर उपेक्षा तथा जैनेतर ग्रंथों के उद्धरणों को दिगम्बर जैनाचार्यों का मत कहकर समाज में भ्रम उत्पन्न करने की कोशिश की गई है। उदाहरण के लिए इन प्रकाशनों में सवस्त्र मुक्ति, केवलज्ञान के बाद भी उपसर्ग, भगवान के नौकाविहार आदि का समर्थन किया जा रहा है। भगवान की माता त्रिशला को सिंधु देश के महाराजा चेटक की बहन, आम्रपाली नामक वेश्या को महावीर के वंशज लिच्छवियों द्वारा वैशाली की नगरवधू के पद पर प्रतिष्ठित किये जाने, गोशालक और गोपालक द्वारा उन्हें सताये जाने जैसी बेतुकी घटनाओं या कथनों को प्रचारित कर अपने जैनागम का अवर्णवाद किया जा रहा है। यदि ऐसे-ऐसे शास्त्र विरुद्ध वर्णनों पर विराम नहीं लगाया गया तो धीरे-धीरे भविष्य में भोले-भाले श्रावक महावीर के दो-दो माता-पिताओं की बात पर भी विश्वास करने लगेंगे। भगवान महावीर के दर्शन से आनन्द नामक श्रावक को केवलज्ञान होने की बात यदि स्वीकार्य होगी तो झाड़ू लगाते-लगाते एक बुढ़िया को केवलज्ञान होने की उनकी बात से हम कैसे इंकार कर सकेंगे? महावीर चरित्र में इस तरह की बेतुकी मिलावट किया जाना एक गंभीर एवं चिंतनीय पहलू है।

इससे सच्चे सिद्धान्तों में मलिनता उत्पन्न होकर विपरीतता आती है, यह सब सच्चे सिद्धान्त के विरुद्ध है, प्राकृतिक नियम के विरुद्ध है। सिद्धान्तों में ऐसी अशुद्धता की मिलावट करने से, मिलावट करने वालों का और उसमें श्रद्धा करने वालों का मोक्षमार्ग बंद होता है और दुर्गति के दरवाजे खुल जाते हैं। यह सत्य सभी पूर्वाचार्यों के ग्रंथ कहते हैं। याने मिलावट करने वालों से धर्म दूरातिदूर हो जाता है।

धर्म करने के लिए जो कर्म करने की प्रेरणा लेते हैं, लेकिन ऐसे विपरीत कर्म करने से धर्म बनने का हेतु ही नष्ट कर देते हैं। निःसंदिग्ध सच यह है कि उनके सब प्रयत्न झूठ हैं। सोच-समझकर ही कहता हूँ कि वह सब झूठ है क्योंकि उससे या उनके सिद्धान्तों से सम्यग्दर्शन होने वाला नहीं है।

तीर्थंकर सर्वज्ञ भगवान महावीर से दिव्यध्वनि में कही गई, विश्व में प्रकृति की वस्तु व्यवस्था और दिगम्बरी (वीतरागी) हेतु से कहा गया प्रत्येक जीव के हित की बात का जैन तत्त्वज्ञान-सिद्धान्तों का स्वानुभवन कर के ही मैंने उपर्युक्त विधान कियां है। याने निजध्रुवशुद्धात्मा का प्रामाण्यसहित प्रत्यक्ष स्वानुभव के बल पर उपर्युक्त कथन किया है। उन्हें ऐसे विपरीत सिद्धान्तों से शुद्धात्मानुभव की प्राप्ति याने निश्चयसम्यग्दर्शन की प्राप्ति नहीं होती, तो केवलज्ञान की प्राप्ति होना तो सर्वथा असंभव है।

अंत में भगवान महावीर स्वामी के चरणों में कोटि-कोटि वंदन।

–पं. नाभिराज नारकर, सोलापुर

* * *

नंद्यावर्त महल भगवान महावीर के युग की याद दिलाता है

संसार में अनादिकाल से अनन्तप्राणी जन्म लेते रहे हैं और मृत्यु को प्राप्त होते रहे हैं परन्तु जन्म लेना उन्हीं का सार्थक होता है जो इस संसार के लिए कुछ अविस्मरणीय कार्य कर जाते हैं। किसी ने कहा भी है–

मूरत से कीरत बड़ी, बिना पंख उड़ ज़ाए।
मूरत तो जाती रही, पर कीरत कभी न जाए।।

भगवान महावीर स्वामी ने आज से 2603 वर्ष पूर्व कुण्डलपुर नगरी में जन्म लिया था, यह तो हम बचपन से पढ़ते, सुनते आए हैं। हमने कभी कल्पना भी नहीं की थी कि कभी उनकी जन्मभूमि के विषय में अपनी ही जैनसमाज में विवाद की स्थिति उत्पन्न हो सकती है परन्तु जैसा कि सुनने में आया कि कुछ आधुनिक विद्वान् उनकी जन्मभूमि को कुण्डलपुर न मानकर वैशाली मान रहे हैं। जहाँ तक मेरा सोचना है कि अब उन विद्वानों को भी यह विश्वास हो गया होगा कि जन्मभूमि कुण्डलपुर ही है क्योंकि अब तो कुण्डलपुर में पूज्य ज्ञानमती माताजी ने एक, दो नहीं अपितु पाँच विशालकाय मंदिर निर्मित करा दिए हैं। इतना ही नहीं, जिस नंद्यावर्त महल में भगवान महावीर स्वामी ने जन्म लिया था, वह महल भी वहाँ पर निर्मित हो गया है। सात खण्ड ऊँचा वह नंद्यावर्त महल वास्तव में भगवान महावीर के युग की याद दिलाता है।

वर्तमान में हुण्डावसर्पिणी काल के दोषवश चौबीस तीर्थंकरों की 16 जन्मभूमियाँ हैं, उनमें से अधिकांश जन्मभूमियाँ पूज्य माताजी की प्रेरणा से विकसित स्वरूप को प्राप्त कर चुकी हैं।

मुझे याद है कि ईसवी सन् 2001 के मई महीने में पूज्य माताजी कौशाम्बी-प्रभासगिरि तीर्थ पर पधारी थीं तब उन्होंने बताया कि भगवान महावीर को चन्दनबाला ने कौशाम्बी में आहारदान दिया था, उस समय चन्दनबाला को कौशाम्बी के सेठ की सेठानी ने द्वेषवश कोठरी में सांकलों से बांध रखा था, उसके केश मुंडा दिये थे, उसे मिट्टी के कटोरे में कोदों का भात खाने को देती थी, ज्यों ही चंदनबाला ने भगवान महावीर का पड़गाहन किया, उसकी बेड़ियाँ झड़ गईं, उसके सिर पर सुन्दर केश आ गए, उसके वस्त्र सुन्दर हो गए इत्यादि चमत्कारिक बातें सुनकर हम सभी को बहुत प्रसन्नता हुई पुनः पूज्य

माताजी ने उस इतिहास को पुनर्जीवित करते हुए वहाँ पर भगवान महावीर की आहार लेते हुए एवं चन्दनबाला की आहार देते हुए ऐसी प्रतिमा स्थापित कराई।

वास्तव में पुराणों में से प्राचीन ऐतिहासिक घटनाओं को निकालकर उसे सरलरूप में समाज के समक्ष प्रस्तुत करना पूज्य माताजी की एक विशेष कला है।

भगवान महावीर स्वामी के श्रीचरणों में बारम्बार नमन करते हुए जन्मभूमि कुण्डलपुर के प्रति अपनी विनयांजलि अर्पित करता हूँ तथा पूज्य माताजी की स्वस्थता एवं आयुदीर्घता की वीरप्रभू से मंगलकामना करता हूँ।

—**पं. पन्नालाल जैन**, इलाहाबाद

क्रान्तिदूत महायोगी महावीर..........!

भगवान महावीर केवल जैनों के नहीं वरन् जन-जन के हैं। उनके संदेश सम्पूर्ण मानवता के कल्याण के लिए हैं। महावीर को पाकर मानवता गौरवान्वित हुई है। भारतवर्ष को इस बात का गर्व होना चाहिए कि उसने तीर्थंकर महावीर जैसा 'प्रज्ञापुरुष' इस विश्व को प्रदान किया है। सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि महावीर ने इस धरित्री के लोगों को ऐसा दर्शन दिया जिससे कि प्रत्येक प्राणी को परमात्मा बनने का मौलिक अधिकार प्राप्त हुआ है।

भगवान महावीर सच्चे अर्थों में एक क्रान्तिदूत थे। उन्होंने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में क्रांति का संदेश देकर जन-जागरण का ऐसा शंखनाद किया था कि सारी सृष्टि ने एक असाधारणं परिवर्तन की अनुभूति की थी। इनका मानना था कि मानव क्रोध को शांति से, अभिमान को नम्रता से, माया को सरलता से तथा लोभ को संतोष से जीत सकता है। उनकी वाणी के द्वारा इस धरती के मानवों को हमेशा यह प्रेरणा मिलती रही कि मानव अपने मन को सदैव 'वासनाओं' से मुक्त रखे। वह अपने जीवन का 'एक लक्ष्य-एक विचार' सुनिश्चित करे। पुरातन काल में लोगों ने उनकी प्रेरणाओं को जीवन में धारण किया और उन्हें उसके अपेक्षित परिणाम भी प्राप्त हुए। यही कारण है कि आज भी हमारी भारतीय संस्कृति या इतिहास अत्यंत समृद्ध और सम्पन्न है।

भगवान महावीर में 'प्रेम' और 'संवेदना' का भाव अत्यंत प्रबल था। वे मनुष्यों के बीच की खाई को 'प्रेम' के द्वारा पाटना चाहते थे। उनका मानना था कि मानवीय संबंधों में 'प्रेम' का स्रोत अबाधरूप में प्रवाहित बना रहे। इसलिए उन्होंने कहा था—"जीवन का सबसे बड़ा सत्य आत्मा है और आत्मा का सबसे बड़ा गुण प्रेम और करुणा है। करुणा और प्रेम से रहित जीवन श्मशान के समान है।

यह बात भी कम महत्वपूर्ण नहीं है कि भगवान महावीर की तरह 'मौन' और 'मुखर व्यक्तित्व इतिहास में कोई दूसरा नहीं हुआ। महावीर नहीं बोले तो फिर बारह वर्ष तक उन्होंने एक शब्द भी नहीं बोला 'अखण्ड-मौन' को धारण किये रहे और जब बोले तो दिव्यध्वनि के रूप में ऐसा बोले कि उनके सर्वांग से ध्वनि निकलने लगी। इसीलिए महावीर का कहना था कि "कम बोलो, पर काम का बोलो। जो नपा-तुला काम का बोलता है उसे दुनिया सदैव याद रखती है। हमें चाहिए कि हम महावीर के बोलों को अपने जीवन का बोल बनायें तो निश्चित ही जीवन में आनन्द की यात्रा प्रारंभ होगी, जीवन धन्य हो जायेगा।

आज आवश्यकता इस बात की है कि हम देश, समाज और मानव कल्याण के लिए भगवान महावीर के संदेशों का अनुसरण करें जिससे कि इस सृष्टि में व्याप्त हिंसा, आतंकवाद, युद्ध और विनाश की विभीषिका से मानव मुक्त हो सके और सुख-शांति से अपना जीवन यापन कर सके परन्तु इसके लिए सर्वप्रथम इस बात की महती आवश्यकता है कि महावीर के सिद्धान्त और संदेशों की दुरूहता, क्लिष्टता को समाप्त कर उन्हें अत्यंत सरल और सरस भाषा में प्रस्तुत किया जाये और यह कृतकार्य इस अभिनंदन ग्रंथ के माध्यम से पूर्ण होगा। मेरा विश्वास है कि आने वाले समय में निश्चित ही यह ग्रंथ महावीर के जीवन दर्शन और सिद्धान्तों को पूर्णता के साथ रेखांकित कर अपनी गरिमा और महिमा से 'कालजयी' होने का सम्बोधन प्राप्त करेगा।

–प्रो.के.एल.जैन-टीकमगढ़
सलाहकार सदस्य-रक्षा मंत्रालय

* * *

कुण्डलपुर से वापस जाने का मन नहीं करता है

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ का प्रकाशन वास्तव में वर्तमान समय की महती आवश्यकता है। इसके माध्यम से हमें विभिन्न साधुओं, विद्वानों, श्रेष्ठियों आदि के विचारों से परिचित होने का सुअवसर प्राप्त होता होगा।

भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर इस युग की अंतिम जन्मभूमि के रूप में समस्त विश्व में पूज्यता को प्राप्त है, हम भले ही सभी जन्मभूमि तीर्थों के दर्शन नहीं कर पाते हैं परन्तु हर वर्ष सम्मेदशिखर की यात्रा के क्रम में भगवान महावीर की निर्वाणभूमि पावापुरी, भगवान मुनिसुव्रतनाथ की जन्मभूमि एवं भगवान महावीर स्वामी की प्रथम देशनास्थली राजगृही, भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर तथा भगवान महावीर के प्रमुख गणधर श्री गौतम स्वामी की निर्वाणभूमि गुणावां जी के दर्शन तो अवश्य करते हैं।

हर बार कुण्डलपुर जाते थे और पाँच मिनट में प्राचीन मंदिर के दर्शन करके वापस लौट आते थे क्योंकि वहाँ पर न तो ठहरने का समुचित साधन था और न ही वहाँ ठहरने का कुछ आकर्षण ही था, अब पिछले दो वर्षों से वहाँ जाता हूँ तो मन प्रसन्नता से भर जाता है। नंद्यावर्त महल परिसर में निर्मित पाँच जिनमंदिर उनमें विराजमान लगभग सौ जिनप्रतिमाएँ, उनके दर्शन करके ऐसा लगता है कि बस, अब यहाँ से कहीं न जाना पड़े परन्तु 8-10 दिन रुककर वापस तो आना ही पड़ता है।

मैं पूरे विश्वास के साथ कह सकता हूँ कि यह कुण्डलपुर तीर्थ भारत के मानचित्र पर तो अपनी अलग पहचान बना ही चुका है, अब इसे विश्व के क्षितिज पर पहुँचने में भी देर नहीं लगेगी।

भगवान महावीर स्वामी के चरणों में बारम्बार नमन करते हुए यही विनती करता हूँ कि तीर्थ विकास की प्रेरणास्रोत पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी शतायु हों, चिरायु हों ताकि हमें उनसे उचित मार्गदर्शन प्राप्त होता रहे, इन्हीं शुभभावों के साथ भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर के प्रति मेरी भावभीनी विनयांजलि समर्पित है।

–प्रकाशचंद जैन, सनावद (म.प्र.)

* * *

कुण्डलपुर नगरी रत्नगर्भा क्यों कहलाती है?

भगवान ऋषभदेव इस युग की आदि में प्रथम तीर्थंकर हुए पुनः इसी क्रम में अंतिम चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी हुए। उन भगवान महावीर स्वामी ने आज से 2603 वर्ष पूर्व महाराजा सिद्धार्थ की महारानी त्रिशला से चैत्र शुक्ला त्रयोदशि को जन्म लिया। जहाँ उन्होंने जन्म लिया उस पवित्र-पावन भूमि का नाम था "कुण्डलपुर"। वह कुण्डलपुर नगरी उस समय "रत्नगर्भा" इस संज्ञा से सुशोभित हो रही थी। अब शायद आप यह पूछ सकते हैं कि उसे "रत्नगर्भा" क्यों कहा गया? तो जहाँ तक मैं समझती हूँ उस भूमि को रत्नगर्भा कहने के दो कारण हैं–

1. उस भूमि पर तीर्थंकर जैसे पुत्ररत्न का जन्म हुआ था।
2. तीर्थंकर के जन्म लेने के छह महीने पहिले से लेकर जन्म लेने तक (15 महीने तक) कुबेर द्वारा उसी भूमि पर रत्नों की वृष्टि हुई थी।

अतः उपर्युक्त दोनों कारणों से इसकी "रत्नगर्भा" संज्ञा सार्थक है।

आज भले ही हमें वे रत्न सुलभ नहीं हैं परन्तु इन तीर्थों के दर्शन से हमें सम्यग्दर्शनरूपी अमूल्य रत्न प्राप्त हो जाता है।

भगवान महावीर स्वामी के चरणों में बारम्बार नमन करते हुए यही प्रार्थना करती हूँ कि इस जन्मभूमि की वन्दना करके मैं भी इतना पुण्य संचित कर लूँ कि उस पुण्य के प्रभाव से मुझे भी कभी ऐसी भूमि पर जन्म लेने का सौभाग्य मिले, जिससे पुनर्जन्म की परम्परा ही समाप्त हो जावे।

–श्रीमती प्रभा जैन,
चाँदनी चौक-दिल्ली

* *

गांधी के दांडीमार्च की प्रतीक बनी माताजी की कुण्डलपुर यात्रा

आवश्यकता आविष्कार की जननी होती है। जिस प्रकार परतंत्र भारत को आजाद कराने के लिए महात्मा गांधी ने मार्च 1930 में दांडी मार्च प्रारंभ किया था और उस यात्रा का महत्व 15 अगस्त 1947 को दिल्ली के लालकिले पर तिरंगा झंडा फहराने के बाद देशवासियों को ज्ञात हुआ था, उसी प्रकार से हमारी राष्ट्रगौरव पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की इण्डियागेट-दिल्ली से प्रारंभ हुई भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार तक की यात्रा जैन समाज के लिए दांडी मार्च से भी अधिक महत्वपूर्ण है।

इस यात्रा के मध्य पूज्य माताजी सौभाग्य से हमारे आगरा शहर में भी पधारीं, उस समय आगरा शहर में जो दृश्य दृष्टिगत हुआ, वह अभूतपूर्व एवं अवर्णनीय है। आज भी मैं जब उन दिनों को याद करता हूँ तो पूज्य माताजी के प्रति मस्तक श्रद्धा से झुक जाता है।

भक्तिगंगा में सराबोर आगरा की जनता ने भी कुण्डलपुर तीर्थ के विकास के लिए उस समय जो समर्पण भाव दर्शाया था, मुझे गौरव है कि सभी ने अपने वायदे को पूरा भी किया।

सच तो यह है कि जम्बूद्वीप रचना, पूजा-विधानों क़ी रचना आदि के माध्यम से मैंने पूज्य ज्ञानमती माताजी का नाम तो बहुत सुना था परन्तु हमने कभी कल्पना नहीं की थी कि इतनी बड़ी माताजी के चरण कभी हमारे आगरा शहर में भी पड़ेंगे लेकिन पूज्य माताजी को अपनी नगरी में देखकर जो प्रसन्नता

का अनुभव हुआ वह शायद शब्दों के गोचर नहीं है।

मैं तो भगवान महावीर स्वामी के चरणों में बार-बार नमन करते हुए उनकी पवित्र जन्मभूमि के प्रति अपनी भावभीनी विनयांजलि समर्पित करता हूँ तथा पूज्य माताजी की छत्रछाया चिरकाल तक हम सभी पर बनी रहे, यह वीरप्रभू से प्रार्थना करता हूँ ।

–मनोज जैन, कमलानगर-आगरा

* * *

हस्तिनापुर में आयोजित ''द्वितीय जम्बूद्वीप महोत्सव एवं पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के 62वें जन्मदिवस'' के अवसर पर पधारे

माननीय चौ. श्री अजीत सिंह (केन्द्रीय खाद्य मंत्री, भारत सरकार) का भाषण अंश

(8 अक्टूबर 1995)

पूज्य ज्ञानमती माताजी! इस जम्बूद्वीप महोत्सव के लिए देश के कोने-कोने से पधारे श्रद्धालुजन! यह मेरे लिए अपार हर्ष का विषय है कि मैं जम्बूद्वीप के इस द्वितीय महामहोत्सव के शुभ अवसर पर आपसे बातचीत कर रहा हूँ। इससे पहले भी वर्ष 1990 में इस प्रथम महामहोत्सव में मैं आप लोगों के बीच आ चुका हूँ, मैं इस महामहोत्सव समिति के प्रति अपना आभार प्रगट करता हूँ जो आपने मुझे बुलाकर कुछ कहने का मौका प्रदान किया।

ऐतिहासिक नगरी हस्तिनापुरी में जम्बूद्वीप के नाम से जो विकास किया गया है, वह मुझे काफी लुभावना लगा। यहाँ के मंदिर, प्रतिमाएं, भवन और पूरा क्षेत्र बहुत ही सुन्दर रूप से विकसित किया गया है।

भारत एक धर्मप्रधान देश है। हमारे शास्त्रों में धर्म की चर्चा समाज को धारण करने वाली शक्ति के रूप में हुई है। जैनधर्म मानवता व अहिंसा पर विशेष जोर देता है। जैन विचारधारा हमारे देश की पुरानी विचारधारा है। भगवान महावीर से पहले इसमें 23 तीर्थंकर हो चुके हैं, वे जैनों के 24वें तीर्थंकर थे, उनका जीवन त्याग-तपस्या का जीवन था। भगवान महावीर ने व्यक्तिगत, सामाजिक और आध्यात्मिक उद्धार के लिए अपनी आत्मा को, अपने मन को शुद्ध-सरल बनाने पर बल दिया है। शांति व अहिंसा का जो संदेश भगवान महावीर स्वामी ने दिया है, उसकी जरूरत आज हमें पहले से अधिक है क्योंकि हमारे चारों तरफ आज सैलाब दिखाई पड़ते हैं कहीं मजहब को लेकर, कहीं जातीय दंगों को लेकर। इस देश के साहित्य, कला, संस्कृति, व्यापार व उद्योग को सुदृढ़ बनाने में जैनों का बड़ा योगदान है। कला के क्षेत्र में बहुत से स्तूप, मूर्तियाँ खासकर श्रवणबेलगोला में गोम्मटेश्वर की मूर्ति, गुफा स्थापत्य आदि जैनियों की देन है।

मैं फिर से आप लोगों का आभार प्रगट करता हूँ। हस्तिनापुर के विकास के लिए आप लोगों ने जो प्रयास किया है, उसकी सराहना करता हूँ और आशा करता हूँ कि यह तीर्थ बड़े तीर्थस्थल और पर्यटन स्थल के रूप में उभर कर आए और इसके लिए आप हमारा जो भी सहयोग चाहेंगे, उसके लिए हम तैयार हैं।

पूज्य माताजी के चरणों में नमन, आप सबको धन्यवाद।

सब धरती कागज करूँ, पर गुरु गुण लिखा न जाए

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर तीर्थ के द्रुतगति से विकास के पश्चात् अब भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ का प्रकाशन जन्मभूमि कुण्डलपुर समिति की ओर से किया जा रहा है, यह बहुत प्रसन्नता की बात है।

पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने भगवान शांतिनाथ, कुंथुनाथ, अरहनाथ की जन्मभूमि हस्तिनापुर से तीर्थंकर जन्मभूमि विकास का कार्य प्रारंभ किया, तब से लगातार वह श्रृंखला चलती आ रही है।

भगवान ऋषभदेव की जन्मभूमि अयोध्या का विकास, दीक्षा एवं ज्ञानकल्याणक भूमि प्रयाग में तपस्थली तीर्थ का नवनिर्माण पूज्य माताजी की ही तपस्या एवं प्रेरणाशक्ति का प्रतिफल हैं।

हम अवधवासियों के लिए गौरव की बात है कि पूज्य माताजी ने हमारे अवध प्रान्त में जन्म लेकर हमारे बाराबंकी शहर से ही सन् 1952 में गृहत्याग एवं आजन्म ब्रह्मचर्यरूप सप्तम प्रतिमा पालन का नियम लेकर त्यागमयी जीवन की यात्रा प्रारंभ की थी, उन्होंने सम्पूर्ण भारत ही नहीं, अपितु समस्त विश्व में इस प्रान्त का नाम रोशन किया है तथा 250 ग्रंथों का लेखन करके एक नया कीर्तिमान स्थापित किया है।

वर्तमान में पूज्य माताजी अपने शरीर-स्वास्थ्य की परवाह न करते हुए भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर का विकास करवाकर प्रसन्नता का अनुभव कर रही हैं। हम लोग यदि छोटे-मोटे काम कर लेते हैं, उतने में ही हम शारीरिक एवं मानसिक थकान महसूस करने लगते हैं परन्तु पूज्य माताजी का मनोबल वास्तव में अत्यन्त सराहनीय है।

विश्ववंद्य भगवान महावीर स्वामी के चरणों में शत-शत वन्दन करते हुए यही मंगल कामना करता हूँ कि पूज्य माताजी चिरकाल तक इस वसुन्धरा को सुशोभित करती रहें।

अन्त में "भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर" के प्रति भावभीनी विनयांजलि समर्पित करते हुए अपनी लेखनी को विराम देता हूँ।

—अजय कुमार जैन

मंत्री-जैन समाज, बाराबंकी (उ.प्र.)

* * *

हर तरफ कुण्डलपुर का गुणगान सुनाई देता है

आज के व्यस्त व भागदौड़ के जीवन में हमें फुर्सत ही नहीं मिल पाती अपने अतीत में झांकने की। उस पर नजर डालने के लिए हम चाह कर भी प्रत्यनशील नहीं हो पाते। हम यह मालूम करने की कोशिश भी नहीं करते कि हमारे पूर्वज हमारे लिए संस्काररूपी क्या धरोहर छोड़कर गये हैं? उस धरोहर को सुरक्षित रखने के लिए हमारे क्या कर्तव्य हैं? यदि वह धरोहर सम्पत्ति के रूप में होती हैं तो उसे पाना हमारा जन्मसिद्ध अधिकार बन जाता है, उसे पाने के लिए हम जी जान लगा देते हैं, यदि आसानी से न मिले तो भी सर्वस्व न्यौछावर करने के लिए तत्पर हो जाते हैं लेकिन क्या कभी हमने धर्मरूपी धरोहर को पाने के लिए व उसे सुरक्षित रखने के लिए अपना कर्तव्य मान कर कुछ किया है? अपने दिन के चौबीस घंटों में से कुछ पल निकाले हैं? उस संस्कारों, संस्कृति

व उस महत्वपूर्ण धरोहर के विषय में जानने की कोशिश की है, जो हमारे जीवन को सुखमय व आदर्शमय बनाने के लिए मार्गदर्शन करती हैं?

ऐसे कठिन क्षणों में हमें पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी जैसी साध्वी का समागम प्राप्त हुआ जिन्होंने अयोध्या का विकास, जम्बूद्वीप की अलौकिक रचना, प्रयाग में दीक्षास्थली का निर्माण, मांगीतुंगी व अनेकों जीर्णोद्धार, विकास, निर्माण कराने के बाद अब भगवान महावीर स्वामी की जन्मस्थली के पुनः उसके वास्तविक स्वरूप को विकसित करने के लिए इस धर्मरूपी धरोहर की रक्षा का बीड़ा अपने कंधों पर ले लिया है। अपने कठिन तप व त्याग से बड़ी सफलता के साथ इतने कम समय में इस जन्मभूमि को जन-जन का समर्थन पा विकास कर दिया है। माताजी के प्रयास से ही आज चारों तरफ कुण्डलपुर का गुणगान सुनाई देता है। एक बार फिर पूज्य माताजी के चरणों में वन्दन करते हुए यही कामना करती हूँ कि भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर युगों-युगों तक भव्यात्माओं की श्रद्धा का केन्द्र बनी रहे।

—**श्रीमती लता जैन**, प्रीतविहार-दिल्ली

* *

कुण्डलपुर में मैंने कुछ असंभव दृश्य देखे

परमपूज्य गणिनी आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी की पावन प्रेरणा एवं आशीर्वाद से तीर्थंकरों की जन्मभूमि जो उपेक्षित थीं उनके चहुँमुखी विकास की योजना बनी और युवा परिषद के राष्ट्रीय अध्यक्ष बाल ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन 'भाई जी' के कुशल नेतृत्व में हस्तिनापुर, अयोध्या, प्रयाग के पश्चात् भगवान महावीर स्वामी की जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) का विकास हुआ।

मैंने स्वयं सन् 1990 में, 1993 में कुण्डलपुर के दर्शन किये तो वहाँ मात्र एक छोटा सा मंदिर था और वह क्षेत्र वीरान था, लोग जाने में डरते थे यदि सामूहिक दल के साथ होते, तभी वहाँ धर्मानुरागी बंधु जाते।

फरवरी 2003 में राजस्थान प्रान्त के 50 स्वयंसेवकों के साथ कुण्डलपुर में आयोजित विशाल पंचकल्याणक महोत्सव एवं महाकुंभ मस्तकाभिषेक में सम्मिलित होने का सौभागय प्राप्त हुआ। 7 से 12 फरवरी तक कुण्डलपुर में रहकर उक्त आयोजन का आनन्द प्राप्त किया। ऐसा लग रहा था कि भगवान महावीर स्वामी का "साक्षात् जन्मोत्सव" परमपूज्य माताजी के सानिध्य में मनाया जा रहा है। माताजी की प्रेरणा से अब वहाँ भव्य 108 फुट ऊँचा मंदिर तैयार हुआ और उसमें भगावन महावीर की अवगाहना प्रमाण सफेद पाषाण की 7 हाथ प्रतिमा विराजमान हुई और महामस्तकाभिषेक के समय ऐसा लग रहा था कि स्वर्ग से इन्द्र आकर भगवान का अभिषेक कर रहे हैं। वास्तव में पूज्य माताजी की कृपाप्रसाद से ही यह सब दृश्य संभव हो सके थे। भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर के प्रति अपनी विनम्र विनयांजलि समर्पित करते हुए तीर्थ विकास की प्रेरणास्रोत पूज्या माताजी के चरणों में शत-शत नमन।

—**उदयभान जैन**, भरतपुर

* *

BHAJAN

Written by-Pragyashramni
Aryika Chandnamati

MUSIC- Kabhi Ram Banke..........

Prince of Kundalpur, King of Universe,
Mahavira,O Lord ! Mahavira,
When You came in Garbh of Trishla,
Sixteen dreams seen by Trishla
Felt very happiness, Siddharth Emperor,
Mahavira,O Lord ! Mahavira
When You had born in the Palace,
Indra and Deva came from heaven
On the Meru Mountain, Celebrated Abhishek
Mahavira, O Lord ! Mahavira.
In Young age you took Deeksha,
Gained Kevalgyan after twelwe years,
Then Samavsaran, formed came all persons,
Mahavira, O Lord ! Mahavira.
When Vira attained liberation,
Indra-human came Pawapuri then
Celebrated Diwali, from then begin Diwali,
Mahavira, O Lord ! Mahavira.
Your Shasan is going today also,
we worship to you "Chandna"so
Give me blessing, Prabhuvar give me knowledge,
Mahavira, O Lord ! Mahavira.

* * *

अविश्वसनीय किंतु सच

बचपन से विभिन्न कथाओं में यह सुनता था कि देवगण अपनी शक्ति से विशाल से विशाल रचनाएं निर्मित कर देते थे। भगवान महावीर या अन्य तीर्थंकरगण जब उपदेश देते थे तो कुबेर क्षणभर में विशाल समवसरण की रचना कर देते थे। इन बातों पर धार्मिकता के चलते आस्था तो थी परन्तु ठोस विश्वास में कुछ पोलापन रह ही जाता था। भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर (वर्तमान नालंदा जिला में स्थित है) के वैभव के बारे में भी सुना करता था एवं विस्मय होता था।

विगत 35 वर्षों से अपने राजगृही प्रवास निवास के दौरान कुण्डलपुर के दर्शन का अनेकों बार सौभाग्य मिला परन्तु जन्मभूमि के वैभव की चर्चा जैसी पढ़ा सुना करता था, उसका दूर-दूर तक नाम निशान या अंश भी नजर नहीं आता था। अन्य चमत्कारी तीर्थों का विकास भी नजर में था परन्तु कुण्डलपुर की दशा देखकर मन ही मन किसी उद्धारक की प्रतीक्षा में प्रार्थना किया करता था। अचानक श्री सरोज कुमार जैन मैनेजर दि. जैन कोठी राजगृही द्वारा जानकारी मिली कि परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी का कुण्डलपुर पदार्पण हो रहा है एवं उन्होंने भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर के सर्वांगीण विकास का संकल्प भी लिया है। परिस्थितियों को देखकर यह कार्य अविश्वसनीय एवं असंभव लग रहा था। परन्तु देखते ही देखते भव्य जिनमंदिरों का निर्माण जिस तीव्र गति से हुआ, यह देख स्वयं भी आँखों पर विश्वास नहीं होता था। विगत दो वर्षों में जितने विशाल निर्माण कार्य हुए, उसे देखकर लगता है कि पूर्व में सुनी कथाएं पूर्णसत्य हैं। विश्वास दृढ़त्तर होता गया और माताजी एवं संघ के प्रति आस्था/श्रद्धा समुद्र का रूप ग्रहण कर गई। कुण्डलपुर में रात-दिन हवन-पूजन-विधान की अविरल धारा प्रवाहित हो रही है। जिस प्रकार चन्दन के आसपास के वृक्ष भी चन्दनमय हो जाते हैं उसी प्रकार माताजी की कृपापूर्ण प्रेरणा से राजगृही में भगवान मुनिसुव्रतनाथ कमल मंदिर, विपुलाचल पर्वत पर हीं प्रतिमा, विभिन्न चरण एवं महावीर उद्यान में मानस्तंभ एवं नवोदय विद्यालय में भगवान महावीर की प्रतिमा स्थापना, पावापुरी का भगवान महावीर मंदिर, गुणावां जी में गौतम गणधर मंदिर का निर्माणकार्य भी इस अल्प अवधि में हो सकना अविश्वसनीय तो लगता है परन्तु पूर्ण सत्य है, जिसे देखकर कोई भी विस्मित एवं अचंभित रह जाता है परन्तु सत्य तो सत्य ही है।

मैं सदैव प्रार्थना करता हूँ कि पूज्य माताजी की प्रेरणा से विकसित कुण्डलपुर तीर्थ अन्य पूज्य गुरु भगवन्तों, श्रेष्ठी वर्गों एवं सामाजिक कार्यकर्ताओं के लिए प्रेरणा का प्रकाशस्तंभ बने।

पूज्य माताजी एवं समस्त संघ के चरणों में बारम्बार त्रिकाल वंदना।

—**ज्ञानचंद जैन पाटनी**, राजगीर

* * *

कुण्डलपुर पूर्ण वैभव के साथ चमक उठा

आज महसूस हो रहा है कि यह उक्ति कि 'चिराग तले अंधेरा' या 'गोद में बच्चा नगर में खोज' कितनी सटीक/सही है।

हम अपने जन्म समय से वीर की निर्वाणभूमि पावापुरी जाकर पूजन निर्वाण लाडू चढ़ाया करते थे परन्तु वीर की जन्मभूमि के बारे में भ्रमित थे। इस अनिश्चय/भ्रम के कारण पूज्य पवित्र भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर के प्रति जो श्रद्धा सम्मान दिया जाना चाहिए था, वह हम दे नहीं पाए। पूज्य

गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के पदार्पण और उनके द्वारा प्रस्तुत की गई सारगर्भित तत्वपूर्ण बातों से यह दृढ़ निश्चय हो गया कि भगवान महावीर की जन्मभूमि यही नालंदा के पास वाला कुण्डलपुर ही है। वैशाली उनकी ननिहाल है, जन्मभूमि नहीं। माताजी के सत् प्रयास से ऐसा लगा कि कोई दिव्य चिनगारी/आग जिस पर समय की गर्त पड़ गई थी, जो माताजी की तपस्या और कर्मठता के चलते दूर हो गई और कुण्डलपुर पूर्ण वैभव के साथ चमक उठा। जबकि पिछले 50/60 वर्षों से प्रचारित वैशाली कभी कोई आस्था ग्रहण नहीं कर सकी।

माताजी की कृपा से हम सबने अपने आराध्य भगवान महावीर की जन्मभूमि को पुनः पा लिया। धन्य हो गया हमारा जीवन! मैं समस्त दिगम्बर जैन समाज हिसुआ की ओर से पूज्य माताजी और संघ के चरणों में बार-बार नमन करता हूँ।

–पवन कुमार जैन, हिसुआ (नवादा)
सदस्य-दिगम्बर जैन समाज

* * *

माताजी अवध की गौरव हैं

हम सभी अवधवासियों का बहुत ही गौरव है कि हमारे प्रान्त में जन्मीं पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी ने आज तक जो कार्य किए हैं, उन्हें युगों-युगों तक याद किया जाता रहेगा। मैंने कई बार माताजी के दर्शन किए, उनका आशीर्वाद प्राप्त किया। माताजी जब मुस्कराकर देख लेतीं हैं और हाथ उठाकर आशीर्वाद देती हैं, तो हृदय गद्‌गद हो जाता है।

एक वर्ष पूर्व मेरे बेटे के आप्रेशन के समय मुझे पूज्य माताजी से मंत्र-जाप्य प्राप्त हुआ, जिसके प्रभाव से उसका आप्रेशन सफल रहा और थोड़े दिन बाद मैं अपने बेटे और परिवार के साथ कुण्डलपुर आई और माताजी से प्रत्यक्ष में आशीर्वाद प्राप्त किया।

अवध में जन्म लेकर माताजी ने केवल अवध का ही उद्धार नहीं किया बल्कि दिल्ली, महाराष्ट्र, बिहार, राजस्थान, गुजरात आदि अनेक प्रान्तों के तीर्थों का उद्धार किया है। माताजी ने चहुँमुखी विकास किया। 250 ग्रंथों का लेखन करना सरल कार्य नहीं है। बहराइच में इनके द्वारा रचित इन्द्रध्वज विधान हुआ, जिसे पढ़कर, सुनकर बहुत ही आनन्द आया, आज तो प्रत्येक स्थानों पर माताजी द्वारा रचित विधानों की धूम मची है।

कुण्डलपुर आकर मैंने जब वहाँ का रूप देखा तो मुझे बहुत आश्चर्य हुआ कि इतनी जल्दी कुण्डलपुर में इतना सारा निर्माणकार्य हो गया। सचमुच में माताजी में कोई दैवी शक्ति है जो कि प्रत्येक कार्य शीघ्रता से पूर्ण करा देती हैं।

वर्तमान की आवश्यकता को देखते हुए कुण्डलपुर का विकास एक विशेष सराहनीय कार्य है। माताजी के बढ़ते चरण को देखकर मेरे हृदय में जितनी खुशी है, मैं उसे व्यक्त नहीं कर सकती। माताजी चिरायु हों और हम सभी भूले–भटके प्राणियों को सद्‌राह दिखाती रहें, इसी भावना के साथ बारम्बार नमोऽस्तु।

–श्रीमती कैलाशो देवी
ध.प. नरेन्द्र कुमार जैन (सेठ जी), बहराइच (उ.प्र.)

* * *

'साँच को आँच नहीं'

भगवान महावीर ने कहा था
मेरी प्यारी संतानों
मेरे जाने के बाद विवाद में मत पड़ना।
तीर्थस्थान, मंदिर, मूर्तियों को लेकर
आपस में कभी न झगड़ना।
पर तुमने एक न सुनी,
मेरी जन्मस्थली पर वाद-विवाद कर रहे हो,
कुण्डलपुर या वैशाली को जन्मभूमि मानकर,
एक-दूसरे पर जहर उगल रहे हो।
मैं तो अंतर्यामी केवलज्ञानी हूँ,
हमारी बात मानो, इतिहास को मत झुठलाओ,
सारे साक्ष्य, कथानक, पुरातत्व, पूजाएं,
कुण्डलपुर (नालंदा) के पक्षधर हैं।
वर्धमान वैशाली के राजकुमार हैं यह
कपोलकल्पित कल्पना मात्र है, अतार्किक
मनगढ़न्त और असंभव है।
संपूर्ण जैन समाज की श्रद्धाभक्ति भावना
और परम्परानुसार महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर ही है।
परमपूज्य गणिनी ज्ञानमती माताजी द्वारा
निरपेक्ष भाव से कुण्डलपुर (नालंदा) में
भगवान महावीर की जन्मभूमि को जीवंत करने के लिए
जीर्णोद्धार और नव निर्माण कार्य किया जा रहा है
अति प्रशंसनीय है।
जितनी लगन, निष्ठा, श्रम, साधना और समर्पित
भाव से ये इस कार्य में संलग्न हैं, उसका
कोई विकल्प नहीं है। जो वे जैसा कार्य कर रही हैं,
किसी और के वश की बात नहीं।
समाज के प्रबुद्ध जन एवं समस्त श्रद्धालुओं की
यही भावना है कि जो सत्य है, उसे स्वीकार करो।
भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) है
इसे आत्मसात करो और
जनम चैत सित तेरस के दिन कुण्डलपुर कन वरना
इन पंक्तियों से प्रेरणा लेकर
समस्त विवाद समाप्त करो।

-डॉ. प्रेमचंद जैन, इंदौर

* * *

कुण्डलपुर का विकसित स्वरूप समाज के समक्ष प्रस्तुत है

तीर्थंकरों की जन्म एवं निर्वाण कल्याणक भूमियाँ पवित्र एवं पूज्यनीय होती हैं, हमारी आस्था एवं श्रद्धा का केन्द्र होती हैं। दुःख का विषय है कि जहाँ नित्य नवीन मंदिरों का निर्माण होता जा रहा है, वहीं हमारे तीर्थंकरों की कल्याणक भूमियाँ घोर उपेक्षा का शिकार होती जा रही हैं। आज हम भगवान महावीर के शासन काल में जी रहे हैं लेकिन मात्र 2600 वर्षों के अन्तराल में उनकी जन्मभूमि को हम भूल गए। प्रातः स्मरणीया पूज्य गणिनी आर्यिका ज्ञानमती माताजी ही एक मात्र ऐसी साध्वी हैं जिन्होंने हमारे तीर्थंकरों की कल्याणक भूमियों के उद्धार की सदैव प्रेरणा दी है।

इसी श्रृंखला में हस्तिनापुर, अयोध्या जी, मांगीतुंगी, प्रयाग और भगवान महावीर के 2600वें जन्मकल्याणक महोत्सव के शुभ अवसर पर कुण्डलपुर विकास के लिए पूज्य माताजी के चरण ससंघ बिहार की धरा पर पड़े, तब से अब तक अनवरत निर्माणकार्य चल रहा है। लगता है स्वयं देव वहाँ पर विराजमान होकर निर्माण कार्य करा रहे हैं। इस विकास कार्य के पीछे पूज्य ज्ञानमती माताजी की यही भावना है कि भगवान महावीर की जन्मभूमि का विकसित रूप संसार के सामने आ सके और दीर्घकाल तक जन मानस को आध्यात्मिकता, पौराणिकता एवं जीवन निर्माण की शिक्षाएँ प्राप्त होती रहें। बिहार की धरा सदैव से समृद्ध रही है। यहाँ तीर्थंकर मुनिसुव्रतनाथ ने जन्म लिया, महावीर प्रभु ने जन्म लिया, भगवान महावीर स्वामी निर्वाण को प्राप्त हुए व गौतम गणधर भी निर्वाण को प्राप्त हुए, भगवान वासुपूज्य की भी पंचकल्याणकभूमि बिहार ही है और आज उसी धरा को पूज्य माताजी के दो चातुर्मास प्राप्त हो रहे हैं, जिससे

न केवल वहाँ कीं जनता धर्मलाभ कर रही है वरन् निरन्तर धार्मिक आयोजनों में सहस्रों मंत्रोच्चारों से कुण्डलपुर की धरा विशुद्ध एवं पावन हो रही है। कुण्डलपुर की धरा पर साक्षात् सरस्वती के रूप में पूज्य ज्ञानमती माताजी विराजमान हैं, वहाँ का वातावरण सुगंधित है। पूज्य आर्यिका चंदनामती माताजी की ज्ञान सुरभि से, क्षुल्लक मोतीसागर जी का निर्देशन, भाई रवीन्द्र जी की कार्य संपादन प्रणाली, ब्रह्मचारिणी बहनों की साधना, सब मिलाकर कुण्डलपुर को गरिमा प्रदान कर रहे हैं।

हम सब का भी यही कर्तव्य है कि कुण्डलपुर तीर्थ के विकास के लिए तन-मन-धन से सहयोग करें। अंत में पूज्य माताजी के चरणों में शतशः नमन करते हुए जन्मभूमि कुण्डलपुर के प्रति विनम्र विनयांजलि समर्पित करती हूँ।

–श्रीमती साधना जैन, इलाहाबाद
(अध्यक्षा-अ.भा.दि.जैन महिला संगठन, प्रयाग इकाई)

* * *

हे महाश्रमण तुमको प्रणाम

हे वर्द्धमान तुमको प्रणाम
हे मुक्तिदूत तुमको प्रणाम।
वैराग्य तपस्या के प्रतीक
हे महाश्रमण तुमको प्रणाम।।1।।
हे अग जग के अनुपम दर्पण
त्रिशलानन्दन तुमको प्रणाम।
निर्वैर निरंजन निर्विकार
हे महाश्रमण तुमको प्रणांम।।2।।
हे विश्वशांति के मूर्तरूप
सर्वाङ्ग सदय तुमको प्रणाम।
हे त्रिभुवन व्यापी कल्पवृक्ष
हे महाश्रमण तुमको प्रणाम।।3।।
भारत भू के अभिनवभूषण
अपरिग्रहधर तुमको प्रणाम।
सहजीवन के हित अनेकांत
हे महाश्रमण तुमको प्रणाम।।4।।
हिंसा-विनाश को वज्रदण्ड
कोमल प्रसून तुमको प्रणाम।
जगजीवों के जीवित जीवन
हे महाश्रमण तुमको प्रणाम।।5।।
चेतन विकास विकसित वैभव
हे ज्ञानेश्वर तुमको प्रणाम।
तीर्थंकर शंकर क्षेमंकर
हे महाश्रमण तुमको प्रणाम।।6।।
दिव्यध्वनि के शुभ सत्य स्रोत
सिद्धार्थ तनय तुमको प्रणाम।
हे श्रमण भारती के भर्त्ता
हे महाश्रमण तुमको प्रणाम।।7।।
समता के आकर करुणाकर
हे वीतराग जिनवर प्रणाम।
सर्वज्ञ हितेश्वर वागीश्वर
हे महाश्रमण तुमको प्रणाम।।8।।
त्रिशला माँ के शुभ दिव्य महल
नंद्यावर्ते क्रीडित ललाम।
कुण्डलपुर में खड्गासन युत
हे महाश्रमण तुमको प्रणाम।।9।।
हे वर्द्धमान तुमको प्रणाम, हे महाश्रमण तुमको प्रणाम।।

–शिवचरनलाल जैन, मैनपुरी

* * *

भजन

-श्रीमती निधि जैन, इलाहाबाद

तर्ज –तेरे इश्क की दीवानगी सर पे चढ़के बोले.........

तेरी पावन भूमि पर, हैं आयीं ज्ञानमती माता
रज सर लगाती सर झुकाती, ज्ञानमती माता।।

(1)

राजा सिद्धारथ माता थी त्रिशला
तीर्थंकर आये बनकर के लल्ला
ढोल बजते हैं, गीत होते हैं
इन्द्र-इन्द्राणी, नृत्य करते हैं
शची इन्द्राणी आती हैं-3
प्रसूतिगृह में जाती हैं-3
लल्ले को पाकर, वारी जाकर, लेकर उसे उठा।
तेरी पावन भूमि..............।

(2)

आज ये मुश्किल का, समय है आया
कुण्डलपुर भूला, वैशाली माना
ऐसी बातों से, माँ चिन्तित हों
कैसे बतलाऊं मन न शंकित हो
त्रिकाल चौबीसी नवग्रह शांति मंदिर को बनवाती हैं
ऋषभदेव और महावीर का मंदिर भी बनवाती हैं
फिर से झूले महावीर यहाँ, अतिवीर यहाँ सो नंद्यावर्त बना।
तेरी पावन भूमि..............।

(3)

ऐसी माँ के, दर्शन को पाने
आते नर-नारी, मस्तक झुकाने
पूजा करते हैं, भजन गाते हैं
माँ की वाणी से, ज्ञान पाते हैं
कुछ प्यार मिले, कुछ ज्ञान मिले
इस 'निधि' को भी समझा।
तेरी पावन भूमि..............।

नंद्यावर्त से नालंदा

भगवान महावीर स्वामी का जन्म कुण्डलपुर में राजा सिद्धार्थ के नंद्यावर्त महल में रानी त्रिशला की कुक्षि से चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को हुआ था किन्तु कतिपय लोग वैशाली भगवान महावीर की जन्मभूमि मानने लगे हैं जो कि आगम एवं पूर्वाचार्यों की आज्ञा से भिन्न है। जैसा कि वर्तमान में भी देखने से प्रतीत होता है कि जो नालंदा विश्वविद्यालय का भवन है, वह सात मंजिला बताया जा रहा है एवं राजा सिद्धार्थ का नंद्यावर्त महल भी सात मंजिल का था। नंद्यावर्त का नाम बिगड़ते-बिगड़ते नालंदा हो गया है, ऐसा प्रतीत होता है क्योंकि विश्वविद्यालय का खण्डहर इस बात को प्रमाणित करता है एवं राजगृही के पास कुण्डलपुर होने के कारण यही कुण्डलपुर भगवान महावीर की जन्मभूमि प्रमाणित होती है क्योंकि पुराणों में राजगृही का जो नाम आया है, उसमें कोई विवाद नहीं है।

जैसा कि गणिनीप्रमुख आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी ने जो भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर के बारे में जन-जन को शुभ संदेश देने का बीड़ा उठाया है, वह अविस्मरणीय रहेगा एवं लोगों के मन से एक न एक दिन भ्रांति दूर हो जायेगी, ऐसी पूर्ण आशा नहीं अपितु विश्वास है।

–**अमरचंद जैन**, टिकैतनगर
(अमर उद्योग)

* * *

तीरथ कर लो, पुण्य कमा लो, प्रभु के गुण गा लो!

भरतक्षेत्र के पावन पुनीत धरा पर जब-जब त्राहि-त्राहि मचती है, हिंसा का तांडव होता है, तब-तब कोई न कोई महान विभूति इस धरा पर जन्म लेती है। इसी श्रृंखला में 2603 वर्ष पूर्व राजा सिद्धार्थ के सात मंजिले "नंद्यावर्त महल" में रानी प्रियकारिणी की कोख से कुण्डलपुर (बिहार) में विश्वहिंसक 1008 भगवान महावीर स्वामी का जन्म हुआ था।

भगवान महावीर स्वामी के जन्म से पवित्र हुआ कुण्डलपुर समृद्ध व वैभवशाली राज्य था। समय के परिवर्तन से आज जीर्णशीर्ण अवस्था को प्राप्त हो रहा था। भगवान के जन्म को 2600 वर्ष पूरे हुए, तब उनका जन्मोत्सव राष्ट्रीय स्तर पर मनाया गया। तब परमपूज्य गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी जो दिगम्बर जैन समाज की गणमान्य विभूति है, उनका मन इस पवित्र क्षेत्र की तरफ आकर्षित हुआ और क्षेत्र का भाग्य खुल गया।

पूज्य माताजी की प्रेरणा से क्षेत्र का जो पुनःनिर्माण हो रहा है, वह एक अनूठी अनुभूति है।

क्षेत्र पर जो कार्य चल रहा है, उससे मन आनंद-विभोर होकर झूम उठता है। क्षेत्र पर सिर्फ निर्माण ही नहीं हो रहा है, वहाँ भगवान महावीर स्वामी के समय जैसा वातावरण था, इसी प्रकार का निर्माण हो रहा है। भगवान के जन्म समय का सात मंजिला महल "नंद्यावर्त" का निर्माण अत्यन्त अद्वितीय है। जो भी इस क्षेत्र पर दर्शनार्थ आयेगा, भगवान महावीर के जीवन का इतिहास क्षण भर में जान जायेगा।

भगवान ऋषभदेव मंदिर, नवग्रह मंदिर और त्रिकाल चौबीसी मंदिर का निर्माण अत्यन्त शास्त्रीय पद्धति से चल रहा है। इन सभी निर्माण कार्य की स्फूर्तिप्रदायनी आर्यिकारत्न गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी व संघ है।

भगवान महावीर की जन्मस्थली में अप्रतिम निर्माण कराकर उन्होंने जैन धर्म के इतिहास को

जनमानस के पटल पर अंकित किया है, इस कार्य के लिए दिगम्बर जैन समाज ज्ञानमती माताजी व संघ का अत्यंत ऋणी रहेगा।

परमपूज्य माताजी के चरणों में विनम्र नमोस्तु अर्पित करते हुए उनके मंगलमय रत्नत्रय की मंगलकामना के साथ–

–**वर्धमान तेजपाल जैन काला**, नांदगांव (नासिक)

* * *

नवमार्ग बनाने वाले, होते हैं बिरले प्राणी

पूज्य गणिनीं प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की श्रेष्ठता शब्दों में नहीं कही जा सकती है। माताजी सौम्य, सरल, सादगी की प्रतिमूर्ति हैं। माताजी ने हमेशा जैनधर्म के तीर्थंकरों की जन्मभूमियों के विकास के बारे में सोचा और उसी श्रृंखला में भगवान महावीर क़ी जन्मभूमि कुण्डलपुर के विकास की प्रेरणा समाज को दी और आज इतनी जल्दी कुण्डलपुर में इतने भव्य विशाल मंदिर बन गये, मानो देवताओं ने आकर यह सभी जिनालय, नंद्यावर्त महल आदि का निर्माण किया हो। यह वही कुण्डलपुर है, जहाँ पर व्यक्ति मात्र चावल चढ़ाकर जल्द से जल्द जाना चाहता था किन्तु आज सिर्फ ज्ञानमती माताजी की वजह से यात्रियों की संख्या में वृद्धि हुई है और इससे आने वाले समय में नई पीढ़ी को राह मिलेगी।

माताजी को कुण्डलपुर के आसपास के गाँव वाले तो साक्षात देवी का अवतार मानते हैं, उनकी एक झलक पाने को लालायित रहते है और कितने ही लोगों ने अहिंसा व्रत पालन का, मांस त्याग, रात्रि भोजन न करने का नियम लिया। आज के युग में माताजी की बहुत जरूरत है, इसलिए मैं वीर प्रभु से माताजी के शतायु होने की कामना करता हूँ, ताकि जन-जन में भगवान महावीर के संदेश पहुँचे क्योंकि राह पर चलना आसान है किन्तु राह बनाना कठिन है और सिर्फ पूज्य माताजी ही इस ज्ञान की राह को आगे बढ़ा सकती हैं।

–**सिद्धार्थ जैन**, लखनऊ
(मीडिया प्रभारी–जय जिनेन्द्र सेवा समिति)

* * *

कुण्डलपुर पुनः विकसित हो गया

पूज्य माताजी के बारे में जितना कहा जाये, उतना कम है। माताजी ने जो कार्य कर दिखाये, वह अद्भुत है और माताजी के चरण जहाँ-जहाँ पड़ गये, वहाँ स्वर्ग हो गया। माताजी ने जो समाज को दिया है, उसकी कोई मिशाल नहीं है। वे ज्ञान व चारित्र की खान हैं। उन्होंने स्वयं दीक्षा लेकर अनेकों को सन्मार्ग पर लगाया है। माताजी की प्रेरणा से आज कुण्डलपुर में फिर वही दिनों का दृश्य देखने को मिल रहा है, जैसे कि भगवान महावीर के समय रहा होगा, नंद्यावर्त महल जहाँ भगवान महावीर खेले थे।

मैं माताजी के चरणों में नमोस्तु करते हुए अपनी विनयांजलि अर्पित करता हूँ।

–**प्रवीनचंद जैन**, लखनऊ
(सदस्य–जय जिनेन्द्र सेवा समिति)

* * *

भगवान ऋषभदेव की जन्मभूमि अयोध्या में

भगवान ऋषभदेव महामस्तकाभिषेक के अवसर पर पधारे

माननीय श्री मुलायम सिंह जी (तत्कालीन मुख्यमंत्री-उत्तरप्रदेश)

का वक्तव्य अंश

(20 फरवरी 1994)

यह मेरा अहोभाग्य है जो उत्तरभारत में प्रथम बार होने वाले इस महोत्सव में भाग लेने का मुझे अवसर मिला। मुझे आयोजकों ने पहले से नहीं बताया अन्यथा मैं अपनी सरकार की ओर से पूर्ण सहयोग इस महोत्सव में करता और स्वयं भी यहाँ कैम्प लगाकर जनता की कुछ सेवा करता।

मैं प्रारंभ से ही जैन परिवार में रहा एवं जैन विद्यालय में ही मैंने अध्ययन भी किया है। जैनधर्म के अहिंसक, सार्वभौम सिद्धान्त हमारे जीवन के महत्वपूर्ण अंग हैं।

इस विशाल महोत्सव की प्रेरणास्रोत पूज्य ज्ञानमती माताजी को नमन करते हुए उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ क्योंकि उनकी वजह से ही मुझे यहाँ आने का सुयोग प्राप्त हुआ। इस अवसर पर मैं अयोध्या क्षेत्र के विकास हेतु कुछ घोषणाएँ करता हूँ-

1. अयोध्या में 'भगवान ऋषभदेव नेत्र चिकित्सालय' खोला जाएगा।
2. अयोध्या में "ज्ञानमती कन्या इण्टर कालेज" खुलेगा, जिसे शीघ्र ही डिग्री कॉलेज घोषित किया जाएगा।
3. अयोध्या में "ज्ञानमती महिला पॉलिटेक्निक कॉलेज" भी शुरू किया जाएगा।
4. राजघाट राजकीय उद्यान का नाम "ऋषभदेव उद्यान" कर दिया जाएगा।
5. अयोध्या को शाकाहारी घोषित किया जाता है।
6. अयोध्या को शहरी क्षेत्र के समान 24 घण्टे बिजली दी जाएगी।
7. फैजाबाद के अवध विश्वविद्यालय में "ऋषभदेव जैन चेयर" की स्थापना हेतु 25 लाख रुपयों का सरकार की ओर से अनुदान दिया जाएगा।
8. अयोध्या में "अवध प्रेस क्लब" की स्थापना और भवन निर्माण हेतु 10 लाख रुपये का अनुदान दिया जाएगा।

इन घोषणाओं के अतिरिक्त अयोध्या के लिए एक बहुत बड़ी योजना जनता के कल्याण की दृष्टि से बना रहा हूँ। समय आने पर उसे भी शीघ्र ही घोषित करके क्रियान्वित करने की तीव्र भावना है।

कुण्डलपुर में चमन हो गया

पूज्य माताजी वर्तमान युग की एक महान् धरोहर हैं, जिन्होंने समय-समय पर विभिन्न प्रकार के धार्मिक कार्यक्रमों का आयोजन कर समाज में धार्मिक चेतना जाग्रत की है। माताजी ने विशाल साहित्य का लेखन, सम्पादन एवं प्रकाशन करवाकर अनेक विद्वत् गोष्ठियाँ, अनेक सेमिनार करवाकर जिनशासन की महत्वपूर्ण सेवा की है।

पूज्य माताजी अपनी धुन की पक्की हैं और वे अपने लक्ष्य की प्राप्ति करने के लिए श्रावक-श्राविकाओं को विशेष प्रेरणा देकर कार्य सम्पादित करने की विशेष क्षमता रखती हैं।

माताजी की ही शक्ति ने आज कुण्डलपुर में चमन कर दिया, वरना कभी वह दिन भी आ जाता कि यहाँ पर यात्री आने के बारे में दस बार सोचता और फिर आता किन्तु आज हजारों यात्री कुण्डलपुर

का अतिशय एवं आकर्षण देखने के लिए आते हैं और आकर लगते हैं कि हाँ, पहले भगवान महावीर की जन्मभूमि इसी तरह रही होगी।

मताजी के चरणों में मेरा सादर वंदामि!

–राकेश जैन, लखनऊ
(सदस्य–जय जिनेन्द्र सेवा समिति)

* * *

उपेक्षित कुण्डलपुर आकाश की ऊँचाईयों को छूता हुआ

बिहार प्रांत में जिस कुण्डलपुर नगरी को आज से 2600 वर्ष पूर्व इन्द्र और देवताओं ने सजाया था, जहाँ सात मंजिल का सुन्दर स्वर्णमयी नंद्यावर्त महल देव कारीगरों द्वारा बनाया गया था, जहाँ नाथवंशी राजा सर्वार्थ और रानी श्रीमती के पुत्र राजा सिद्धार्थ अपनी रानी त्रिशला के साथ रहा करते थे। जिस नंद्यावर्त महल में मणियों के पलंग पर शयन करते हुए रानी त्रिशला ने सोलह स्वप्न देखे और अपने पति राजा सिद्धार्थ से उनके फल में तीर्थंकर पुत्र की माता बनने की जानकारी प्राप्त की थी। जहाँ 2600 वर्ष पूर्व लगातार 15 माह तक धनकुबेर ने प्रतिदिन साढ़े सात करोड़ रत्न बरसाए थे। जहाँ चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को महावीर का जन्म होते ही सिद्धार्थ ने किमिच्छक दान बांटा था और इन्द्रों ने बड़े वैभव के साथ पहले सुमेरु पर्वत पर पश्चात् कुण्डलपुर में आकर जन्मोत्सव मनाया था। जहाँ पालने में झूलते वीरप्रभू को देखने मात्र से दो महामुनियों की सूक्ष्म शंका दूर हो गई थी, जिससे उन्होंने उन्हें 'सन्मति' नाम से अलंकृत किया था। जहाँ बाल्यावस्था में संगमदेव उनके बल की परीक्षा लेने हेतु सर्प का रूप बनाकर आया किन्तु पराजित हो 'महावीर' नाम से स्तुति कर चला गया। जहाँ महावीर ने देवताओं द्वारा लाए गए दिव्य भोजन एवं वस्त्रालंकारों को ग्रहणकर तेजस्वी सूर्य की भाँति युवावस्था को प्राप्त किया था। जहाँ माता त्रिशला के सांसारिक अरमानों को ठुकराकर महावीर ने भरे यौवन में तलवार की धार के समान जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहण करने का संकल्प लिया था। जहाँ एक भवावतारी लौकान्तिक देवों ने भी पधारकर महावीर के वैराग्य भाव की भूरि-भूरि प्रशंसा एवं अनुमोदना की थी, जिस कुण्डलपुर नगरी की पवित्र भूमि के कण-कण महावीर के त्याग-वैराग्य का संदेश दे रहे हैं और जिन शासनपति भगवान महावीर के शासनकाल में हम और आप श्रावक के षट् आवश्यक कर्तव्यों का पालन करते हुए धर्मरूपी गंगा में अवगाहन कर अपने कर्ममल का प्रक्षालन कर रहे हैं। परम, पावन, पूज्यनीय वसुधा आज काल के थपेड़ों से 2600 वर्षों के बाद उपेक्षित और वैभवहीन हो गयी थी, यह शायद काल का ही अभिशाप है।

जहाँ कभी असंख्यातों देव-देवी, नर-नारी आकर इस तीर्थ की अर्चना करते थे वहाँ वर्तमान में लोग आने से भी डरने लगे थे और भगवान महावीर का 2600वाँ जन्मकल्याणक महामहोत्सव वर्ष राष्ट्रीय स्तर पर मनाने के बाद भी जैन समाज के कोई भी विद्वान, नेता, श्रेष्ठी या श्रावक की दृष्टि भी इस ओर नहीं गई थी कि जिनका जन्मकल्याणक महोत्सव हम विविध आयोजनों के माध्यम से सम्पूर्ण देश में मना रहे हैं, उनकी जन्मभूमि आज किस स्थिति में है? अथवा वहाँ भी हमें कोई आयोजन करना चाहिए।

इसे जैन समाज का सौभाग्य ही कहना होगा कि विराट व्यक्तित्व की धनी पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के पावन चरण तीर्थ विकास हेतु उस ओर बढ़े और देखते ही देखते वह उपेक्षित धरा आकाश की ऊँचाईयों को छूने लगी, एक बार पुनः 2600 वर्ष पूर्व का वह इतिहास साकार रूप ले उठा और कुण्डलपुर में अनेक दशाब्दियों के पश्चात् पूज्य माताजी की प्रेरणा एवं समिति के कुशल नेतृत्व में मात्र 18 माह में ही क्षेत्र की कायापलट हो गई। जहाँ लोग आने से डरते थे, आज यात्रियों का तांता लगा है और

लोग वहाँ कई-कई दिन रुकना चाहते हैं, यहाँ निर्मित 5-5 विशालकाय जिनमंदिर एवं गगनचुम्बी शिखर दर्शनार्थियों को मंत्रमुग्ध कर देते हैं। जिन भगवान महावीर की जन्मभूमि का नाम मात्र पुस्तकों में ही सीमित होकर रह गया था, आज वह विश्व के मानसपटल पर है और यह हुआ है पूज्य माताजी की दूरदर्शिता के कारण, जिन्होंने तीर्थों को बनाया नहीं बचाया है। वस्तुतः आकाश की ऊँचाइयों एवं सफलता की बुलंदियों को छूता यह तीर्थ सदैव भगवान महावीर के अहिंसामयी सिद्धान्तों को प्रसारित करता हुआ सम्पूर्ण विश्व में शांति एवं एकता की स्थापना करता रहे, यही मंगलभावना है।

–अभय कुमार कासलीवाल
औरंगाबाद (महाराष्ट्र)

* * *

कुण्डलपुर तीर्थ-त्रिवेणी का संगम

भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर त्रिवेणी का संगम है। एक ओर पावापुर भगवान महावीर की निर्वाणभूमि, दूसरी ओर राजगिरि भगवान महावीर की देशनाभूमि और भगवान मुनिसुव्रत की जन्मभूमि। ऐसी त्रिवेणी संगम में रहकर पूज्य गणिनी ज्ञानमती माताजी ने भगवान महावीर की जन्मभूमि का विकास कराकर एक महान कार्य किया है। भगवान महावीर के साथ पूज्य माताजी को हमेशा याद किया जायेगा। मैं ज्यादा कुछ तो जानता नहीं हूँ पर इतना जरूर जानता हूँ कि वर्तमान में गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी जैन समाज की सर्वाधिक प्राचीन साध्वी हैं, इनको तपस्या करते हुए 52 वर्ष व्यतीत हो गए हैं, इनकी तपस्या में इतनी शक्ति है कि वे जिस कार्य को करने की बात मन में सोच लेती हैं, उसको पूरा होने में समय नहीं लगता है।

हस्तिनापुर, प्रयाग तीर्थ के दर्शन करके कोई भी इनकी कार्यशैली से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता है। मैं तो सिर्फ यही कहना चाहता हूँ कि इतनी महान विदुषी माताजी के रहते हुए हम श्रावकों को अपने मन से किसी तीर्थ के बारे में निर्णय लेने का प्रयास नहीं करना चाहिए, भगवान महावीर स्वामी के शासन परम्परा की रक्षिका पूज्या माताजी के श्रीचरणों में मेरा बारम्बार नमन तथा भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर की कीर्तिपताका दशों-दिशाओं में अपना यश प्रसारित करे, भगवान महावीर के चरणों में नमन करते हुए यही मेरी सादर विनयांजलि है।

–सागरचंद जैन, प्रीतविहार-दिल्ली

* * *

महावीर अवतार हुआ

जन्म हुआ कुण्डलपुर में विश्व आलोकित हो उठा। त्रिशला माता की कुक्षि से महावीर अवतार हुआ।।
थी रक्तिम पृथ्वी सारी पशुओं की होली जलती। आकाश गर्जना करता ज्वाला धधकती रहती।।
मेघों ने अश्रु बहाये वृक्षों पर पतझड़ छाया। नदिया का वेग हुआ कम्पित झरना झर झर आया।।
उस समय अर्ध रात्रि में सोलह स्वप्नों का श्रृंगार हुआ। त्रिशला माता की कुक्षि से महावीर अवतार हुआ।।
हो गया भू मण्डल शान्त चित्त फिर वसन्त लहराया। भारत माँ की जननी ने सुन्दर सुखद अवसर पाया।।
खेतों में हरियाली उमड़ पड़ी अधरों पर मुस्कानें आयीं। नन्हीं नन्हीं बूँदें गिर जग में मोती बन कर छायीं।।

देवों ने किया नमस्कार कुण्डलपुर में मंगलाचार हुआ। त्रिशला माता की कुक्षि से महावीर अवतार हुआ।।
वह युवक सम्राट बना अहिंसा की ध्वनि गूँज उठी। तेज समीर सुगंधि से दूर-दूर तक धूम मची।।
पशुओं को लम्बी सांस मिली अग्नि भी गंभीर हुई। बारह मासी फल फूलों से पृथ्वी फिर कालीन हुई।।
वर्धमान अतिवीर प्रभू का फिर धरती पर अधिकार हुआ। त्रिशला माता की कुक्षि से महावीर अवतार हुआ।।
हो गया देश था धन्य आज कुण्डलपुर अमर रहे। जियो और जीने दो क़ा यह नारा अमर रहे।।
थे चौबीसवें तीर्थंकर जग के कण कण में हैं विद्यमान। रत्नत्रय की सीढ़ी पर चढ़ हो गये आज से सिद्धमान।।
सुशील चरणों को पा हृदय हर्ष विभोर हुआ। त्रिशला माता की कुक्षि से महावीर अवतार हुआ।।

ज्ञानमती माता को मेरा शत-शत वन्दन

ज्ञान ज्योति से ज्ञान किरण फैली ज्ञानाकाश में। ज्ञान सागर से ज्ञान तरंगे फैली विश्व प्रकाश में।।
ज्ञान हिमाचल से निकली ज्ञान सिंधु की धारा। ज्ञानी के मुख में गिरकर बनी रत्नत्रय माला।।
ज्ञान कसौटी पर घिस कर पाया जिसने चन्दन। ऐसी ज्ञानमती माता को मेरा शत-शत वन्दन।।

-**डॉ. सुशील कुमार जैन**, कुरावली (मैनपुरी)
सम्पादक-जैन प्रभात

* * *

"बजे कुण्डलपुर में बधाई, नगरी में वीर जन्में...... महावीर जी......."

ऐसे वीरपुरुष की, तीर्थंकर भगवान की अतिशयकारी भूमि कैसी होगी? पंद्रह मास रत्नों की वर्षा जिस भूमि ने पायी, उसका कल्पनाचित्र भी हम अल्पबुद्धि नहीं कर सकते। ऐसी वैभवशाली जन्मभूमि का आज का चित्र बिल्कुल विपरीत........भगवान महावीर की सुंदर, लुभावनी प्रतिमा अंधकार में......जैनियों द्वारा पूर्णतः दुर्लक्षित! त्रिकाल स्मरणीय पूज्य ज्ञानमती माताजी के मन में इस भूमि के विकास का विचार मन में आया और कुण्डलपुर का चित्र पलक झपकते बदल गया। अहा!......वह नंद्यावर्त महल की कल्पना मात्र मन को सुखद अनुभूति देती......जब हम कुण्डलपुर पहुँचे तो अनायास ही शब्द बोल पड़े......

"क्या इंद्रपुरी सा छा रहा, प्रभू वीर के मंदिर में,
विधानकार्य भी हो रहा, प्रभू वीर के मंदिर में।।"

आज यह क्षेत्र अपनी सांस्कृतिक, आध्यात्मिक तथा सामाजिक चेतना का स्रोत बहा रहा है। यहाँ की हर रचना दिव्य संदेश देती है। ऐसी तीर्थभूमि हमारे चंचल मन को प्रौढत्व, संजीदगी और ऊर्जस्विता प्रदान करती है।

राजगृही, कुण्डलपुर व पावापुरी जी इन तीनों त्रिवेणी तीर्थों का विकास निःसंदेह अध्ययन मनन व चिंतन की त्रिपथिगा प्राप्त कर कल्याणप्रद रहेगा। ऐसे चैतन्यप्रकाश देने वाली, अलौकिक, अपूर्व बुद्धिमत्ता की धनी गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी के चरण कमलों में शतशः नमन।

वीर की जन्मभूमि पर वीर का विधान, जिन्होंने शब्दबद्ध किया, उन्हीं की वाणी से, परमपूज्यनीय श्रद्धेय चंदनामती माताजी के सार्थक सुरों से सजकर पर्युषण पर्व में मनाने का पावन अवसर मिला। सानिध्य पूजनीय क्षुल्लक श्री मोतीसागर जी का तथा निर्देशन परम आदरणीय ब्र. रवीन्द्र जी अर्थात्

भाई जी का, यह सभी बातें निराले संजोग के साथ हुईं।

माताजी के मुखारविंद से निकलकर हमारे मनकंज में समाहित होने वाला हर शब्द आदर्शवत् है। सुन्दर-सुन्दर जयमालाएं मन को उच्चतम स्थली पर प्रतिभासित करते हुए आल्हादतम अनुभूति से ओतप्रोत कर देती है। संगीत की लय पर सहजता से हिलोरे लेता हुआ मन, भगवान के एक-एक गुण से अचंभित होता हुआ रोमांचित हो जाता है, तो विधान करने से कृतकृत्य हो जाता है। ऐसी अनुपम कृति के लिए हम हृदय की अंतस्थली से माताजी के उपकारी हैं।

बिहार जैसे दुर्गम इलाके में नवनिर्माण जैसा कार्य अपने आप में एक ऐसा साहस है, जो तप, साधना तथा प्रबल भक्ति की नींव पर टिका हुआ है। केवल दो वर्ष पहले जहाँ व्यक्ति ठहरना नहीं चाहता था, वहाँ से जाने का अब मन नहीं करता। यह इस अभिनव कार्य का परिपाक है। सच माताजी–

"फिर बिखेर दी सुगंध एक तरफ यहाँ,
जिससे महक उठी ये जमीं और आसमाँ।
हर साँस जिनकी ज्ञान की सुगंध से भरपूर,
आँखों में इक चमक और चेहरे पर एक नूर।"

–सौ. सुवर्णा शीतलकुमार जी पाटणी
गजपंथा, नासिक

* * *

24वें तीर्थंकर कुण्डलपुर जन्मभूमि के महावीर विश्व के जैन समाज को सही परमपिता के रूप में मिले

दिगम्बर जैन समाज की प्रमुख गणिनी परमपूज्य 105 आर्यिकारत्न राजहंसनी ज्ञानमती माताजी के चरणों में मेरा विनम्र नमोस्तु अर्पित करते हुए उनके मंगलमय रत्नत्रय की मंगल कामना के साथ मैं अपने टूटे-फूटे उद्गार आपके सामने रख रहा हूँ।

परमपूज्य माताजी अपने तप, ज्ञान से सही जन्मभूमि कुण्डलपुर का विकास करवाया। जैसे कि भगवान ऋषभदेव की तपस्थली का लोगों को पता भी नहीं था, वैसे ही कुण्डलपुर भगवान महावीर की जन्मभूमि का भी लोगों को पता नहीं था। जैसे भगवान महावीर की जन्मभूमि कुछ लोग कहते हैं कि वैशाली है, पर माताजी ने यह सिद्ध कर दिखाया है कि वैशाली भगवान महावीर की नाना का गाँव था। तीर्थंकर स्वयं अपने ही गाँव में जन्म लेते हैं क्योंकि राजा सिद्धार्थ स्वयं राजा थे। जहाँ सारे विश्व में भगवान महावीर की सही जन्मभूमि पर एक पुराना मंदिर जहाँ शाम को लोग दिया लगाना भूल गये थे। सब लोग अपने घर दिवाली के पर्व पर भगवान महावीर के नाम पर दिया लगाते हैं, जब माताजी दिल्ली से कुण्डलपुर जन्मभूमि जाकर उस कुण्डलपुर का विकास शुरू किया जहाँ के नंद्यावर्त महल से भगवान महावीर का जन्म हुआ था।

तब माताजी ने अठारह माह में कुण्डलपुर का विकास करके पूरे विश्व के जैन भाइयों को आश्चर्य चकित करवा दिया।

जहाँ आज ऐसा लगता है कि कुण्डलपुर आकर आज मैं 2600 वर्ष पूर्व की कुण्डलपुर की नगरी में आकर भगवान महावीर के साथ उनका सखा बनकर उनके साथ खेल रहा हूँ और मैं इन्द्र ने बनाए हुए नगरी में आया हूँ। माताजी ने तो कुण्डलपुर को स्वर्ग बना दिया। माताजी तो स्वयं जो काम को

करने का ठान लेती है तो उसे पूरा करके ही छोड़ती हैं। मुझे तो ऐसा लगता है कि माताजी का तो यश नाम कर्म का उदय है। वे माँ-पिता धन्य हैं जिन्होंने ऐसे रत्न को जन्म दिया और हम सब को ज्ञानमती माता के रूप में इस धरती पर विचरण कर रही है और हम सबको आगे बढ़ने की प्रेरणा देती है। मैं तो माताजी से मांगीतुंगी जी आये जब से मैं माताजी से जुड़ा हूँ। मैंने माताजी के साथ प्रयाग से लेकर कुण्डलपुर तक विहार किया। जब मुझे बहुत अच्छे-अच्छे प्रसंग आये। माताजी के ज्ञान का मुझे अनुभव आया। माताजी तो......

नारी-नारी क्या करें, नारी नर की खान।
नारी ने ही जन्म दिया, महावीर भगवान।।

–प्रदीप कुमार ठोले, सटाणा (महाराष्ट्र)

* * *

विनयांजलि

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी का सानिध्य पाकर जीवन के समस्त पापों के क्षय की शुरूआत महान पुण्योदय से हुई। उस समय को मैं भूल नहीं पाता हूँ जब पूज्य माताजी ने ससंघ तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली प्रयाग को 2001 के नव वर्ष के प्रथम दिवस अपने चरणों की रज से अभिसिंचित किया था और बहुत थोड़े ही समय में तीर्थ विकसित हुआ। पूज्य प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती माताजी एवं श्रद्धेय क्षुल्लकरत्न श्री मोतीसागर जी के निर्देशन में यह तीर्थ उत्तरोत्तर विकास की ओर अग्रसर है। उक्त तीर्थ ने जैन मतावलम्बियों की एक उत्कृष्ट पहिचान जैनेतर समाज में बनायी और अब प्रयाग तीर्थ फिर से जागृत हो गया है।

पूज्य माताजी ने पुनः समाज को जागृत कर भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर के विकास की प्रेरणा देकर जन्मभूमि पर "नंद्यावर्त" महल परिसर का निर्माण करा कर सभी भ्रान्तियों को दूर कर यह स्थापित कर दिया है कि भगवान महावीर की जन्मस्थली, कुण्डलपुर, जिला-नालंदा, बिहार ही निर्विवाद है। इस समय भगवान महावीर जन्मस्थान कुण्डलपुर में विशाल कलापूर्ण मंदिरों का निर्माण कार्य पूर्णता की ओर है और आवास गृह आदि अबाध गति से निर्मित हो रहे हैं।

बड़े सौभाग्य की बात है कि हमने अपने जीवन में पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी की कृपा से तीर्थों को पुनर्जीवित होते हुए देखा है। यह एक अभूतपूर्व घटना है। भगवान ऋषभदेव जन्मस्थली अयोध्या, तपस्थली-प्रयाग, भगवान महावीर जन्मस्थान कुण्डलपुर को पुनर्स्थापित होते हुए देखने का सौभाग्य प्राप्त किया है और निकट भविष्य में विश्व की सबसे बड़ी जैन प्रतिमा मांगीतुंगी में निर्मित हो रही है। यह सब पूज्य माताजी की प्रेरणा से ही संभव हो सका है।

परमपूज्य माताजी की प्रेरणा से "भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर" अभिनंदन ग्रंथ का शीघ्र प्रकाशन होने जा रहा है। ऐसी जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी गणिनीप्रमुख आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी के चरणों में विनयांजलि समर्पित करता हूँ।

-प्रदीप कुमार जैन (एड. हाईकोर्ट), इलाहाबाद

* * *

भजन

रचयित्री-ब्र. कु. इन्दु जैन (संघस्थ)

तर्ज –दीदी तेरा देवर दीवाना..........

कुण्डलपुर तीरथ पुराना, प्रभु वीर जन्मभूमि माना।
है छब्बिस सौ वर्ष पुराना, जिसे पूज्य जगत ने है माना।।टेक.।।
कभी इस धरा पर महावीर प्रभु ने,
लिया था जनम इसको पावन किया था।
माँ त्रिशला तथा राजा सिद्धार्थ पितु थे,
जिन्होंने जनम अपना सार्थक किया था।।
पांच नामों से जाने जमाना, जिसे पूज्य जगत ने है माना।।1।।
हुए गर्भ, जन्मकल्याणक वहाँ पर,
बनी नगरी दिव्य वह स्वर्णपुरी सी,
माँ त्रिशला ने देखे थे सोलह स्वप्न औ,
धनद ने वहाँ रत्नवृष्टि करी थी।।
अद्भुत था वह दृश्य पुराना, जिसे पूज्य जगत ने है माना।।2।।
हुए वीर वैरागी जातिस्मरण से,
लिया दीक्षा वन में सिद्धं नमः कह।
अहिंसा का उपदेश जग को दिया था,
आहार प्रथम कूल नृप घर हुआ था।।
अहिंसा का अवतार माना, जिसे पूज्य जगत ने है माना।।3।।
सती चन्दना जब भी बेड़ी में जकड़ी,
प्रभू उसका उद्धार तुमने किया था।
तेरे दर्श से बेड़ियाँ झड़ पड़ी थीं,
तनू स्वर्ण हो दिव्याहार दिया था।।
चमत्कार जन-जन ने जाना, जिसे पूज्य जगत ने है माना।।4।।
ऋजुकूला नदी का वह तट भी था पावन,
जहाँ दिव्य कैवल्यज्ञान हुआ था।
खिरी दिव्यध्वनि तेरी प्रभु जी जहाँ पर,
वो विपुलाचल पर्वत का अद्भुत समाँ था।।
गौतम गणधर का हुआ आना, जिसे पूज्य जगत ने है माना।।5।।
है पावापुरी का सरोवर कमलयुत,
प्रभु वीर का मोक्षधाम बखाना।
मनाई सभी इन्द्रगण ने दीवाली,
दीपावली पर्व तब से है माना।
कार्तिक कृष्णा मावस को जाना, जिसे पूज्य जगत ने है माना।।6।।
कहें कालदोष या शोधों की अति है,
हुआ दिग्भ्रमित जिससे सारा जमाना।
जनमभूमि वैशाली है यह बताकर,
गलत रूप उसका सभी को दिखाना।।
उनकी बातों में तुम ना आना, उसे पूज्य जगत ने ना माना।।7।।
गणिनीप्रमुख ज्ञानमती माताजी ने,
यथार्थ से सबको है परिचित कराया।
प्राचीन ग्रंथों के साक्ष्य दिखाकर,
जनमभूमि को फिर से विकसित कराया।।
अनुपम निधी उनको माना, जिन्हें पूज्य जगत ने है माना।।8।।
तुम सब भी ले प्रेरणा मातुश्री से,
जनमभूमि का अब विकास कराओ।
जनमभूमि कुण्डलपुरी है, रहेगी,
जन-जन को यह वास्तविक बताओ।।
"इन्दू" पाऊँ मैं मोक्ष पाना, जिसे पूज्य जगत ने है माना।।9।।

"कुण्डलपुर का विकास एक ऐतिहासिक कार्य है"

भगवान महावीर स्वामी की जन्मजयंती सभी स्थानों पर बहुत ही जोरशोर से मनाई जाती है। पूरे शहर में भक्तगण रथयात्रा निकालते हैं और भगवान महावीर की खूब जय बोलते हुए गुणगान करते हैं। लेकिन अभी तक किसी ने ध्यान नहीं दिया कि जहाँ भगवान ने जन्म लिया है वहाँ भी हम सभी एकत्र होकर भगवान की जन्मजयंती मनाएं। पूज्य ज्ञानमती माताजी की दृष्टि इस ओर गई और उन्होंने स्वयं ही राजधानी दिल्ली से चलकर कुण्डलपुर पहुँचकर भगवान महावीर स्वामी की जन्मजयंती धूमधाम, हर्षोल्लास के साथ रथ निकलवाकर धर्मप्रभावना के साथ मनाई।

कुण्डलपुर का विकास वास्तव में एक ऐतिहासिक कार्य है। 2600 वर्ष पूर्व का इतिहास देखकर, पढ़कर, लोगों को वास्तविकता एवं ऐतिहासिकता का ज्ञान होगा। नालंदा का खण्डहर, म्यूजियम आदि पर्यटक स्थल हैं। विदेश से आने वाले लोग भी अब भगवान महावीर की जन्मभूमि को आकर देखेंगे और इतिहास से परिचित होंगे। वास्तव में भगवान महावीर की जन्मभूमि शीघ्र ही नए सिरे से विश्व के क्षितिज पर उभरकर आएगी।

मैं अपने को परम सौभाग्यशाली मानती हूँ कि ऐसी राष्ट्रविभूति माताजी के सानिध्य में कुछ दिन दहने का, उनकी वैयावृत्ति करने का मुझे भी सौभाग्य मिल चुका है। मैंने देखा है उनका एक-एक क्षण अमूल्य रहता है और नित्य नई दिशा, नई योजना, कार्यकलाप को लिए होता है।

कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ के लिए मेरी बहुत-बहुत शुभकामना है। भगवान महावीर के श्रीचरणों में यही विनयांजलि है एवं ज्ञान की भण्डार, सरस्वती की अवतार माता ज्ञानमती जी के चरणों में कोटि-कोटि नमन है।

–श्रीमती चित्रा जैन ध.प. श्री प्रभात कुमार जैन
फरीदाबाद (हरियाणा)

❖ ❖

जिनधर्म प्रभाविका माताजी

यह सत्य है कि आज पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने जो-जो कार्य किए हैं उससे जिनधर्म की बहुत ही अधिक प्रभावना हुई है। युग की पहली बालसती ज्ञानमती माताजी ने कुवाँरी कन्याओं के लिए दीक्षा लेने का मार्ग प्रशस्त किया तो आज सैकड़ों कुवाँरी कन्याएं दीक्षित होकर जिनधर्म की प्रभावना कर रही हैं।

250 ग्रंथों की रचना करके माताजी ने जैन समाज पर बहुत बड़ा उपकार किया है। आज उनके द्वारा रचित इन्द्रध्वज विधान, कल्पद्रुमविधान, सर्वतोभद्र, विश्वशांति महावीर विधान, सिद्धचक्र विधान, तीन लोक आदि विधानों की सर्वत्र धूम मची है और श्रद्धालु इन विधानों को करके लाभान्वित भी होते हैं। कहीं न कहीं स्थानों पर कोई न कोई विधान होते ही रहते हैं।

मुझे भी पूज्य माताजी के चरण सानिध्य में रहने का एवं उनकी वैयावृत्ति का सौभाग्य प्राप्त हो चुका है। माताजी ने अनेक तीर्थों का विकास करवाया है। भगवान महावीर की जन्मभूमि का विकास वर्तमान का सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण कार्य है। जैनधर्म की प्रभावना का कार्य है। माताजी शतायु हों और इनकी धर्मसाधना में निरंतर वृद्धि होते रहे, यही भगवान से प्रार्थना है एवं सविनय विनयांजलि है।

–श्रीमती निशा जैन ध.प. श्री महेन्द्र लाल जैन
चंडीगढ़ (हरियाणा)

❖ ❖

कुण्डलपुर के राजदुलारे

तर्ज–नरेन्द्रं फणीन्द्रं.......................

कुण्डलपुर के राज दुलारे, आज तेरा भक्त तुमको पुकारे,
पाप अनेकों किए मैंने प्रभुवर, क्षमा करो सब पाप हमारे।।
कुण्डलपुर के...........।।1।।

महावीर स्वामी दया मुझपे कीजे, चरण में पड़ा हूँ शरण मुझको दीजे।
तुम हो दयालु करुणा के सागर, विनती मैं करता तेरे पास आकर।।
कुण्डलपुर के...........।।2।।

जिन्हें तीन लोक भी शीश झुकावै, उन्हें त्रिशला माँ पालने में झुलावै।
पिता श्री सिद्धारथ रतन धन लुटावै, नर नारियाँ नाचै खुशियाँ मनावै।।
कुण्डलपुर के...........।।3।।

महलों में तुमने था बचपन बिताया, महलों का सुख फिर भी तुमको न भाया।
विषयों में परिग्रह में सुख नहीं है, मिले सच्चा सुख त्याग से यह बताया।।
कुण्डलपुर के...........।।4।।

सती चन्दना ने पुकारा तुम्हें जब, दिया दर्श तुरतहिं हरा दुःख सब तब।
मैं भी पुकारूँ तुम्हें आज प्रभुवर, कर दो मेरी नैया भी पार जिनवर।।
कुण्डलपुर के...........।।5।।

चरण आप रखते जहाँ भी धरा पर, खिले स्वर्ण पंकज तुरत उस जगह पर।
मेरे दिल में जब आप पूरण बसे हैं, तब क्यों न दुख मेरे सारे नशे हैं।।
कुण्डलपुर के...........।।6।।

किया रागद्वेष न समता को धारा, पड़ा मोह में आत्म हित न विचारा।
मिटा दो ये अज्ञान तुम आज सारा, करो ज्ञान का मेरे मन में उजारा।।
कुण्डलपुर के...........।।7।।

जब तक मेरा हो भ्रमण इस जगत में, सम्यक्त्व प्रभुवर कभी भी न छूटे।
करे विनती कर जोड़कर यह 'प्रदीप', कि जिनधर्म जिनवर कभी भी न छूटे।।
कुण्डलपुर के...........।।8।।

रचयिता–प्रदीप कुमार जैन
बहराइच (उ.प्र.)

शुभ संदेश

यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ का प्रकाशन हो रहा है।

परमपूज्या गणिनीप्रमुख आर्यिकारत्न 105 श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा, प्रयास व मार्गदर्शन से पूरे भारत में अनेक नये धार्मिक दर्शनीय स्थानों का निर्माण हुआ है तथा कई प्राचीन तीर्थ जिनमें मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र प्रमुख है का उत्थान एवं विकास भी हुआ है। रथ प्रवर्तनों ने देश के छोटे-बड़े गाँवों, शहरों में जैनधर्म को प्रतिष्ठापित किया है।

हस्तिनापुर में लाखों पर्यटकों के मन को मोहने वाली, अद्भुत, अनुपम, श्री ज़म्बूद्वीप रचना पूज्या माताजी की दूर दृष्टि का परिणाम है। एक के बाद एक ऐसी अनेक रचनाएं पूज्य माताजी की कल्पना को साकार रूप देती गई, जिनमें प्रयागराज व अयोध्या में 1008 भगवान ऋषभदेव की भव्य प्रतिमाएँ हैं।

भगवान महावीर के 2600वें जन्मकल्याणक वर्ष के उपलक्ष्य में कुण्डलपुर तीर्थ का बहुत सुन्दर ढंग से योजनाबद्ध विकास परमपूज्य माताजी के दिग्दर्शन में कराया गया है। नंद्यावर्त महल इसकी अद्भुत शोभा एवं आकर्षण का केन्द्र है।

मैं कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ के लिए शुभकामनाएं प्रेषित करता हुआ विनयांजलि समर्पित करता हूँ। परमपूज्य माताजी दीर्घायु होकर इसी प्रकार जैनधर्म की प्रभावना एवं जैन वाङ्मय की सेवा करती रहें, जिनेन्द्र भगवान से मैं यही प्रार्थना करता हूँ।

—महावीर मिण्डा, उदयपुर

* * *

धन्य है गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी का जीवन

आप अपने द्वारा जनसाधारण में ज्ञान और चारित्र की ज्योति जगाती रहती हैं। आप तेजस्वी, योगी, दूरदर्शी और महान ज्ञानी साधिका हैं। आपका हृदय विशाल और उदार है। आप बड़ी साहसी हैं। धर्म सद्भावना हेतु आपको अपने कष्ट की तनिक भी परवाह नहीं रहती। आपने अपने जीवन में जिस त्याग, लगन व निष्ठा से जनमानस को सन्मार्ग पर चलने एवं सत्कर्म करने की प्रेरणा दी, वह एक आदर्श है।

आप चलते-फिरते तीर्थ के समान हैं, जहाँ भी आपके चरण पड़ते हैं वह स्थान मंगलमय हो जाता है। आप परमशान्त, निस्पृही, लौकिक आडम्बरों से सर्वथा दूर, आगमानुसार साधुचर्या में निरन्तर प्रवृत्त हैं। आपका जैन समाज को दिया गया योगदान कभी भुलाया नहीं जा सकता।

आपके द्वारा भगवान महावीर स्वामी की जन्मस्थली कुण्डलपुर का जो जीर्णोद्धार हुआ है, वह अपने आप में एक मिसाल है। कुण्डलपुर वासियों को भगवान महावीर स्वामी का जन्मोत्सव मनाने तथा देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। ये सभी आपकी प्रेरणा एवं आपके परिश्रम से फलीभूत हुआ है। देश के हर जैन को इस पर गर्व है।

परमपूज्य गणिनी आर्यिका ज्ञानमती माताजी के लिए दीर्घायु की कामना करते हुए उनके चरणों में कोटिशः प्रणाम! वन्दन!! वंदामि!!

—वीरेन्द्र कुमार जैन (टीकरी वाले)
बड़ौत (बागपत) उ.प्र.

* * *

तीर्थों की प्राण हैं गणिनी ज्ञानमती माताजी

परमपूज्य गणिनी आर्यिका ज्ञानमती माताजी ने तीर्थों के विकास के लिए जो अथक प्रयत्न किया। वह स्मरणीय है। कुण्डलपुर विकास के बाद वर्तमान में उनके लक्ष्य में सबसे महत्वपूर्ण कार्य मांगीतुंगी दि. जैन सिद्धक्षेत्र पर 108 फीट ऊँची प्रतिमा का निर्माण करवाना है जिसका कार्य प्रगति पर है।

जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर का विकास प्रयाग का विकास एवं भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर का विकास अपने आप में अद्वितीय हैं। उनके विकास कार्यों की जितनी प्रशंसा की जाये उतनी कम है।

परमपूज्य आर्यिका ज्ञानमती माताजी का स्वास्थ्य मंगलमय हो यही 1008 विश्व हितंकर सातिशय चिंतामणि भगवान से प्रार्थना है।

–सूरजमल गणेशलाल जैन
(मैनेजर–श्री मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र)

* * *

कुण्डलपुर की अनुपम छवि आश्चर्यकारी है!

युग की आदि में जन्मे भगवान ऋषभदेव की परम्परा में अंतिम-चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी हुए हैं, जिन्होंने सारे विश्व को "जिओ और जीने दो" का संदेश दिया। हम बहुत सौभाग्यशाली हैं जो कि हमें भगवान महावीर के शासनकाल में जन्म लेने का स्वर्णिम अवसर प्राप्त हुआ। बचपन से ही सुनते थे कि भगवान महावीर ने कुण्डलपुर में जन्म लिया है, कुण्डलपुर नगरी बिहार प्रान्त में है आदि बातें सुनकर बड़ी इच्छा होती थी कि उस पावनभूमि के दर्शन अवश्य करना है। आखिर वह सुअवसर भी प्राप्त हुआ और जन्मभूमि कुण्डलपुर के दर्शन करके मन में प्रसन्नता तो हुई परन्तु अफसोस भी हुआ कि हमारे शासनपति भगवान महावीर की जन्मभूमि कितनी उपेक्षित है? यहाँ कितनी वीरानियत छाई हुई है? उस समय मन की बात मन में रह गई परन्तु 2 वर्ष पूर्व जब सुना कि पूज्य गणिनी ज्ञानमती माताजी स्वयं कुण्डलपुर तीर्थ का विकास करवाने जा रही हैं, तो हृदय प्रफुल्लित हो उठा। प्रयाग चातुर्मास के पश्चात् कुण्डलपुर विहार के क्रम में पूज्य माताजी हमारे बनारस भी पधारीं, तब मुझे नजदीकी से उनके दर्शन करने का, उनके प्रवचनों को सुनने का लाभ प्राप्त हुआ। पूज्य माताजी दिसम्बर 2002 में कुण्डलपुर पहुँची और मात्र डेढ़ वर्ष में वहाँ की अनुपम छवि देखकर मैं तो आश्चर्यचकित रह गया, मुझे तो स्वयं अपनी आँखों पर ही विश्वास नहीं हो रहा था, सब कुछ स्वप्नसदृश लग रहा था परन्तु सच तो सच ही है।

अब पूज्य माताजी ने हम सभी को "भगवान पार्श्वनाथ तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव" मनाने की प्रेरणा प्रदान की है। जिसका उद्घाटन 6 जनवरी 2005 को बनारस में पूज्य माताजी के सानिध्य में किया जाएगा। पूज्य माताजी इसी प्रकार हम सभी को चिरकाल तक अपना मार्गदर्शन प्रदान करती रहें, यही वीरप्रभू से प्रार्थना है।

–अरुण जैन
(महामंत्री–भेलूपुर दि. जैन समाज, बनारस)

* * *

वीर जन्म कल्याणक

(1)

प्रियकारिणी को लाल, तीन लोक नमे भाल,
नंद्यावर्त महल में बजत बधाई हैं।
शचि, इन्द्र दोनों साथ कर रहे नृत्य आज,
हर्ष-हर्ष सिद्धार्थ रतन लुटाये हैं।
"सर्वार्थ" "श्रीमती" पौत्र प्रकटे जो वर्द्धमान,
नाथवंशी कुल सुख गौरव बढ़ाये हैं।
पाण्डुक शिला पे जाय इन्द्र अभिषेक कर्यो,
जिनशिशु जन्मानन्द तीन लोक छाये हैं।

(2)

महावीर पालना

पलना में ललना को झूले सखि त्रिशला को,
हँसि-हँसि शचि-सूर पालनो झुलावे है।
रत्न जड़ित पालने में कहीं लालन को,
सरसों का दाना चुभ-चुभ नहीं जावे है।
रेशम की डोरी बँधी शचि ओ संभाल रहीं,
देखो सखि लाला मेरो रोय नहीं पावे हैं।
हाल ही में सोयो है वो नींद ही में खोयो है वो,
भोले ओ नादान कूँ नजर लगि जावे हैं।

(3)

जिनवेश (जैन श्रमण संस्कृति पर)

जिन संस्कृति हमारी भोगवादी तुम न बनो,
यही मूर्तिरूप महावीर भगवान का।
नग्न वेष दे रहा संदेश मेरे विश्व को,
यही सत्यरूप सदा शाश्वत कल्याण का।
एषणा का त्याग करो मनसा वाचा कर्मणा से,
रूप मिल जायेगा तुझे भी भगवान का।
बन निर्मोही मत मोह करो जग से,
यही वेष राह देगा तुझे मोक्ष धाम का।

(4)

वीरोपदेश

देव दूत बन आओ अहिंसा पुजारी वीर,
मूक पशु आज तेरी याद में कराहते।
मानव हुआ है आज लोभवश घोरपापी,
लाखों पशुओं को खुले आम कटवावते।
मांसाहारी जीव भये पशु लाख दुःख सहे,
दूध, दही मेट खून पीप बहवावते।
तो कर्णधारों देश की कमान को संभालो आप,
खान पान पशुधन काहे मिटवावते।

(1)

महावीर महिमा

रोशनी की किरण बन गये।
बे-मिसाल आचरण बन गये।
करके क्षय कर्म वीर स्वामी,
मोक्ष को गमन कर गये।

(2)

निर्वाण महोत्सव

वीर तुम साधना के शिखर चढ़ गये।
शुचि दीये आरती के भी कम पड़ गये।
तुमको पलकें निहारे चले आओ तुम,
तज के जग को सदा मोक्ष को बढ़ गये।।

(3)

वीर जन्मकल्याणक

इन्द्र ने वीर बालक शचि से लिया।
खूब चूमा उठा शीश पर रख लिया।
और उनको न्हवन वो कराने लगे,
इन्द्र ने आके ही जन्म उत्सव किया।

(4)

वीरोपदेश

साँस-साँस जिंदगी ढल रही।
मौत के आगोश में चल रही।
फिर भी नहीं है आदमी निहारता,
राग, भोग भावना ही पल रही।

-श्रीमती चन्द्रेश जैन कवियित्री, एटा

नवनिर्मित जम्बूद्वीप रचना के उद्घाटन अवसर पर हस्तिनापुर पधारे

उत्तरप्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री

श्री नारायणदत्त तिवारी का उद्बोधन

(30 अप्रैल 1985)

आज मेरा यह परम सौभाग्य है कि इस पवित्र स्थल पर आकर पूज्य माताजी के दर्शन का एवं आप सबसे मिलने का अवसर प्राप्त हुआ। प्रातःस्मरणीया ज्ञानमती माताजी ने प्राचीन संस्कृति में वर्णित जम्बूद्वीप की, सुमेरुपर्वत की परिकल्पना को यहाँ पर साकार मूर्तरूप करके मेरठ जनपद को उजागर किया है, इसके लिए मैं उनका हार्दिक अभिनंदन करता हूँ। आप समस्त जनता का, जो दूर-दूर प्रदेशों से यहाँ पधारी है, उन सभी लोगों का उत्तरप्रदेश में यहाँ का मुख्य सेवक होने के नाते मैं स्वागत करता हूँ।

आज हम यहाँ पर भौतिकता एवं आध्यात्मिकता के उस ज्योतिपुंज का संस्मरण करने आये हैं जिसे तीर्थंकरों ने प्राप्त किया था। आज नित्य नई समस्याएं न केवल हमारे देश और समाज में बल्कि सारे विश्व में फैली हुई हैं, उनके समाधान के लिए जो महावीर आदि समस्त तीर्थंकरों ने अहिंसा का संदेश दिया था, वह जीवन में उतारना आवश्यक है। माताजी ने हस्तिनापुर जम्बूद्वीप को ही केवल साकार नहीं किया बल्कि सारे विश्व को हस्तिनापुर की ऐतिहासिकता का परिचय कराया है। हम ने यहाँ के महोत्सव में शासन की ओर से जो भी कार्य किए हैं, उसके लिए मैं बधाई का पात्र नहीं हूँ। यह तो सब आप लोगों का ही है, मैं तो केवल निमित्त मात्र हूँ। श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है– "कर्मण्येवाधिकारस्ते मां फलेषु कदाचन।" अर्थात् कार्य करते जाइये, फल की इच्छा मत करिए, यही भगवान आदिनाथ से लेकर महावीर का संदेश रहा है। तो आइये! हम सभी ज्ञान की अखण्ड ज्योति के समक्ष, सुमेरु पर्वत और जम्बूद्वीप के तले यह संकल्प करें कि देश की अखण्डता के लिए, सर्वजन मैत्री के लिए, सर्वधर्मसमभाव की भावनाओं को धार्मिक सहिष्णुता के रूप में अपने हृदय में स्थान देंगे। मैं अपने मध्य विराजमान गुरुजनों से तथा पूज्य माताजी से इसी आशीर्वाद की अभिलाषा करता हूँ कि मानव को मानवता की ओर बढ़ाने के लिए सदा शासन को और समाज को आप लोगों के अहिंसामयी उपदेश प्राप्त होते रहें। प्रातःस्मरणीया माताजी को मैं विश्वास दिलाता हूँ कि आप मुझ सेवक के लिए जब अपना कोई आदेश भेजेंगी मैं अवश्य ही उसे पालन करने में अपना सौभाग्य समझूँगा।

अन्त में उन्होंने कहा–

"हम सागर यदि न उलीच सकें,
आँखों में दो बूँदें भर लें।
हम पर्वत उठा सकें न मगर,
बोझे को सर के कम कर लें।।"

"बहुजनहिताय सबजन सुखाय" का यह नारा प्रत्येक महापुरुष का रहा है। माता ज्ञानमती जी ने भी इसी दृष्टिकोण से जम्बूद्वीप का निर्माण कराया है। जम्बूद्वीप का अर्थ है–जहाँ हम सभी विश्व के प्राणी निवास करते हों, उसी पृथ्वी का नाम जम्बूद्वीप है। आप सभी लाखों लोग यहाँ पर इस गर्मी के मौसम में आए हैं, आपको अनेकों असुविधाएँ भी हुई होंगी, उन सबके लिए मैं आप समस्त जनता का पुनः हार्दिक अभिनंदन करता हूँ।

१-२५

नमामि कुण्डलपुरं

(पालि भाषा में)

नमस्सित्वा जिनरतनं, नत्वा मुनितयं तथा।
कुण्डलपुरं पुञ्ञभूमिं, बद्धाञ्जलि पणमामहं।।1।।
पुरा नालन्दपीठस्स, परिपस्से उत्तरे ठितो।
गोवरसंखातको गामो, जिनसासनपकासको।।2।।
एत्थ येव अहेसुं ते, गोतमादिबहुस्सुता।
तेसु जेट्ठवरो होति, पठमो जिनसिस्सको।।3।।
इन्द्रभूतीं ति नामेन, लोके ख्यातिं गतो हि सो।
वरो सिस्सो जिनेन्दस्स, अहुसो धम्मनायको।।4।।
जिनभासितधम्मानं, सम्फुटेन पकासका।
दिवंगता गणधरा, केवल्लस्स पदस्सका।।5।।

कुण्डलपुर को नमस्कार (हिन्दी अर्थ)

चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर एवं तीनों मुनियों (इन्द्रभूति, वायुभूति और अग्निभूति) को नमस्कार कर पुण्यभूमि कुण्डलपुर को मैं दोनों हाथों को जोड़कर प्रणाम करता हूँ।

प्राचीन नालन्दा विश्वविद्यालय के उत्तर भाग में स्थित भगवान महावीर के धर्मों के प्रकाशक गोवर नाम से प्रख्यात एक गाँव था।

इसी गोवर गाँव के प्रसिद्ध गौतम कुल में उत्पन्न तीनों भाइयों में ज्येष्ठ भगवान-महावीर के प्रथम शिष्य (गणधर) हुए।

इन्द्रभूति के नाम से प्रख्यात श्रेष्ठ शिष्य भगवान महावीर के धर्मनायक थे।

भगवान महावीर के द्वारा उपदिष्ट धर्मों को सम्पूर्ण रूप से प्रकाशित करने वाले कैवल्य पद के प्रदर्शक तीनों गणधर पंचतत्त्व में विलीन हो गये।

-डॉ. विजय कुमार शर्मा (पालि प्राध्यापक)
नव नालंदा महाविहार, नालंदा

⁂

कुण्डलपुर का बदला हुआ स्वरूप

तीर्थ का विकास कहने सुनने और देखने में फर्क होता है। आज कुण्डलपुर का बदला हुआ स्वरूप स्वयं अपनी कहानी बताता है। इस तीर्थ के जीवंत स्वरूप को प्रत्यक्ष रूप से भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) में जाकर देखा जा सकता है। भगवान महावीर का जन्म जिस महल में हुआ था, आज उसका साकाररूप सिर्फ यहीं पर देखने को मिलता है। पूज्य माताजी की प्रत्येक योजना ऐतिहासिक होती है। जिसमें जैन संस्कृति की प्राचीनता का दिग्दर्शन होता है। मुझे भी माताजी के अनेक कार्यक्रमों में जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। जिसमें मैंने देखा कि प्रत्येक कार्य पूर्व नियोजित एवं प्रभावनात्मक होते हैं। भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर का बदला स्वरूप देखकर मन प्रसन्नता से भर जाता है। इसी के साथ पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी के चरणों में मेरा शत्-शत् नमन।

–ज्ञानचंद झांझरी, जयपुर

⁂

विनयांजलि

चारित्रचक्रवर्ती शिरोमणि 108 आचार्य श्री शांतिसागर जी महाराज की शिष्या एवं आचार्यश्री वीरसागर जी महाराज से आर्यिका दीक्षा प्राप्त परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के जन्मदिवस के अवसर पर हार्दिक विनयांजलि अर्पित करता हूँ।

परमपूज्य माताजी द्वारा जो भी तीर्थक्षेत्रों की रचना-जीर्णोद्धार व लगभग 250 ग्रंथों का लेखन किया है, वह अपने आप में एक कीर्तिमान है माताजी द्वारा हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप की रचना, इलाहाबाद में प्रयाग तीर्थ की रचना व भगवान महावीर के 2600वें जन्मजयंती के अवसर पर भगवान महावीर की जन्मभूमि नंद्यावर्त महल कुण्डलपुर की रचना करता एक अलौकिक व ऐतिहासिक कार्य हैं। इलाहाबाद-प्रयाग में भगवान ऋषभदेव के तप या ज्ञान प्राप्ति की याद दिलाने वाले किसी तीर्थ का न होना एक बहुत बड़ी कमी थी, जिसे माताजी ने तपस्थली का निर्माण कराकर पूरा किया। इसी प्रकार भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर जहाँ पर एक छोटा प्राचीन मंदिर था तथा कोई यात्री ठहरना भी पसंद नहीं करते थे तथा दर्शन करके ही चल देते थे ऐसे स्थान पर माताजी ने अपनी प्रेरणा से भगवान महावीर की मूर्ति स्थापना, नंद्यावर्त महल तथा धर्मशाला आदि बनवाकर बहुत बड़ा उपकार किया है। जिसे दिगम्बर जैन समाज कभी भी नहीं भुला सकती। इसी प्रकार 5 तीर्थंकरों की जन्मभूमि अयोध्या जहाँ पर आचार्य देशभूषणजी महाराज द्वारा 31 फुट ऊँची प्रतिमा की स्थापना करने के बाद भी उस स्थान का पूर्णरूप से प्रचार-प्रसार न होने के कारण गौण हो गया था। वहाँ पर महामस्तकाभिषेक करवाकर व 2 सुन्दर धर्मशालाओं व भोजनालय का निर्माण से उक्त स्थान को आज महत्ता प्रदान कर दी गई है। उसी प्रकार कौशाम्बी भगवान पदमप्रभु की जन्मभूमि का भी जीर्णोद्धार करवाकर वहाँ भी कार्फी कुछ निर्माण किया गया है तथा लगभग 250 पुस्तकों का प्रकाशन कर जिसमें इन्द्रध्वज मंडल विधान, कल्पद्रुम मंडल विधान, महावीर मण्डल विधान, सिद्धचक्र मण्डल विधान, बाल भारती, कई मण्डल विधान की रचना कर जो अनमोल रत्न समाज को दिये हैं, उनकी जितनी भी प्रशंसा की जाए वह कम है। ऐसी 105 गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी के जन्मदिवस पर मैं अपनी हार्दिक विनयांजलि समर्पित करता हूँ। मुझे पूज्य माताजी का आशीर्वाद व सहयोग मिलता रहे तथा माताजी दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति करते हुए प्रगति की ओर अग्रसर होती रहें, यही मेरी वीर प्रभु से प्रार्थना है।

–उत्तमचंद निर्खी

(मंत्री–सकल दि. जैन समाज, कोटा-राज.)

* * *

Message

I am pleased to know that Kundalpur Abhinandan Granth is going to be published on the occasion of Kundalpur Mahotsava 2004. The book will contain compositions of various articles from great saints and learned scholars about the life of Lord Mahavir and about the shrine Kundalpur. I am sure that this book will be an inspiring treasure for Shravak, Shravikas and the devotees across the country. I wish all the Best.

-K.B. Awade, Ichalkaranji

* * *

भजन

तर्ज–तुम अगर साथ देने का.......

वीर की जन्मभूमि सच्ची कुण्डलपुरी, इसकी महिमा पुराणों में वर्णित हुई।
इसकी गाथा कही पूर्वाचार्यों ने भी, सुर नर मुनिजन के द्वारा ये वंदित हुई।।

जन्मभूमि सदा से ही पावन कही, स्वर्ग से इसकी तुलना सदा की गई।
जननी और जन्मभूमि है जग में महान, हमने यह बात ग्रंथों में खूब सुनी।।
जन्मभूमी की माटी को सिर पर धरो, इसकी अर्चा सदा सौख्य ही देवेगी।
इसकी गाथा कही पूर्वाचार्यों ने भी, सुर नर मुनिजन के द्वारा ये वंदित हुई।।1।।

भारतभूमी की शाश्वत अयोध्या जहाँ, जन्म लेते हैं चौबीस जिनवर सदा।
किन्तु है काल का दोष इस युग में जो, जन्में कई अन्य स्थल से प्रभुवर यहाँ।।
हर जन्मभूमियों को नमन अब करो, इसकी भक्ति भवोदधि से तारक बनी।
इसकी गाथा कही पूर्वाचार्यों ने भी, सुर नर मुनिजन के द्वारा ये वंदित हुई।।2।।

श्री ऋषभ, अजित, अभिनंदन, सुमति अनंत, पांच प्रभु ने अयोध्या में जन्म लिया।
संभव श्रावस्ती, चन्द्रप्रभु चन्द्रपुरी, पद्मप्रभुवर ने कौशाम्बी धन्य किया।।
पारस और सुपारस भगवान के, जन्म से धन्य वाराणसी नगरी भी।
इसकी गाथा कही पूर्वाचार्यों ने भी, सुर नर मुनिजन के द्वारा ये वंदित हुई।।3।।

पुष्पदंत प्रभू जन्में काकन्दी में, भद्रिकापुर में शीतलप्रभू जन्मे थे,
वासुपूज्य प्रभू चम्पापुर नगरी में, सिंहपुरी में श्रेयांस जिनेश्वर हुए।
धर्मनाथ जी जन्मे थे रत्नपुरी, वन्दना उसकी रत्नत्रय को देवेगी।
इसकी गाथा कही पूर्वाचार्यों ने भी, सुर नर मुनिजन के द्वारा ये वंदित हुई।।4।।

शांति कुंथू व अरनाथ प्रभुवर से तो, हस्तिनापुर की भूमी भी पावन हुई।
मल्लि, नमिप्रभु जन्म लेते मिथिलापुरी, शौरीपुर नेमीनाथ की जन्मस्थली।।
मुनिसुव्रत प्रभू को भजो भक्ति से, राजगृही नगरी भी धन्य हो गयी।
इसकी गाथा कही पूर्वाचार्यों ने भी, सुर नर मुनिजन के द्वारा ये वंदित हुई।।5।।

इस तरह चौबीस जिनवर की यह जन्म भू, जिनकी माटी के कण-कण में सुरभी भरी।
जैन संस्कृति की अद्‌भुत धरोहर हैं ये, धर्म की ये कही गयीं उद्‌गमस्थली।।
जीर्णोद्धार और विकास करो, ज्ञानमती मात की प्रेरणा मिल रही।
इसकी गाथा कही पूर्वाचार्यों ने भी, सुर नर मुनिजन के द्वारा ये वंदित हुई।।6।।

जन्मभूमि पर गर प्रश्नचिन्ह लगे, सद्प्रयासों से है दूर करना हमें।
आगमों के प्रमाणों के ले साक्ष्य फिर भ्रान्ति उनकी है मिलकर हटाना हमें।।
गूंजे फिर से अहिंसा का जयनाद औ, प्रभु के सिद्धान्तों की गूंज भी फैलेगी।
इसकी गाथा कही पूर्वाचार्यों ने भी, सुर नर मुनिजन के द्वारा ये वंदित हुई।।7।।

–निकलंक जैन-टिकैतनगर

* * *

न्यूनता से पूर्णता

हर रात के बाद सुबह होती है, रात कितनी ही लम्बी एवं काली हो लेकिन सूरज की एक किरण पड़ते ही अंधकार स्वयं चला जाता है। ठीक उसी प्रकार से पूज्य गणिनी ज्ञानमती माताजी रूपी सूर्य की किरण जैसे ही कुण्डलपुर तीर्थ पर पड़ी, वैसे ही हजारों वर्षो से उपेक्षित तीर्थ जगमगा उठा। भले ही देर से विकास कार्य प्रारंभ हुआ लेकिन जब शुरू हुआ तो सभी तीर्थों को पीछे करता हुआ आगे निकल गया। आज तक के जैन तीर्थों के इतिहास में पहला तीर्थ है, जो इतने कम समय में लगभग सभी कार्य पूर्णता की ओर है।

मूल से लेकर चूल शिखर तक तीरथ का निर्माण हो चुका है। हर आने जाने वाले व्यक्ति के मुख से निकल जाता है कि वाकई कमाल हो गया। माताजी के रूप में देवी का अवतार है मन में सोचते ही कार्य हो जाता है। आसपास की जनता स्वयं कहती है कि आज तक जहाँ कोई छोटे कार्यक्रम भी नहीं हुए हैं, वहीं इस धरा पर इतने विशाल स्तर के राष्ट्रीय कार्यक्रम का होना आश्चर्य नहीं तो क्या है।

मैंने बचपन से कुण्डलपुर के उस छोटे से मंदिर के दर्शन किये थे किन्तु तब क्या पता था कि यहाँ पर साल में कई बार आना होगा। मैंने पूज्य माताजी के साथ विहार के समय मार्ग में रहकर पूज्य माताजी की तीर्थ भक्ति को देखा है। आज विश्वास नहीं होता है कि वास्तव में इतने विशाल जिनालय साकार हो चुके हैं। कल जहाँ मैदान था, आज गगनचुम्बी शिखरयुक्त जिनालय अपनी आध्यात्मिक घटाओं को बिखेरते हुए शांति का संदेश दे रहे हैं। पूज्य माताजी एवं कुण्डलपुर की पावन धरा को शत-शत नमन।

–श्रीमती कुमुदिनी जैन ध.प. स्व. श्री प्रकाशचंद जैन
कानपुर (उ.प्र.)

* * *

विनयांजलि

ज्ञान का भंडार, जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी, तीर्थोद्धारिका, सैकड़ों ग्रंथों की लेखिका पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी के चरणों में मेरा शत शत बार वंदन।

पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी वर्तमान युग की सबसे प्राचीन दीक्षित आर्यिका हैं जिन्हें कोई जम्बूद्वीप रचना की पावन प्रेरिका के रूप में पहचानता है तो कोई सरस्वती की प्रतिमूर्ति के रूप में देखता है। कोई अहिच्छत्र, अयोध्या, मांगीतुंगी आदि अनेक तीर्थों की उद्धारिका कहते हैं, कोई पूजा-विधानों की रचयित्री, तो कोई तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली प्रयाग की प्रणेत्री मानते हैं, जैसे माताजी प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की इष्ट आराधिका हैं वैसे ही अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) के विकास की सम्प्रेरिका एवं महावीर शासन की रक्षिका का रूप इनके अंदर दृष्टिगत हो रहा है।

नहीं लेखनी लिख सकती है माता की स्वर्णिम गाथा।
सरस्वती की प्रतिमूर्ति हैं, गणिनी ज्ञानमती माता।।

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ के लिए विनयांजलि लिखने का जो सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है, उसके लिए मैं अपने को परम सौभाग्यशालिनी समझती हूँ। भगवान महावीर स्वामी

की जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) का विकास कार्य पूज्य माताजी की प्रेरणा से हो रहा है, जो वर्षों से अनदेखा था। माताजी के पावन चरणों की रज पाकर वह पावन जन्मभूमि कुण्डलपुर सचमुच एक वास्तविक तीर्थ क्षेत्र जैसी बनी गई है, वहाँ पर ऐसा लगता है मानो वैसा ही कुण्डलपुर में नंद्यावर्त महल का निर्माण हो रहा है जैसा कि पहले कभी रहा होगा। जहाँ भगवान महावीर अपनी बाल्यावस्था में बाल सुलभ क्रीड़ाओं से सबका मन बहलाते होंगे। माताजी की चरण-रज जिस-जिस क्षेत्र पर पड़ती है, वह क्षेत्र मानो तीर्थ क्षेत्र में बदल जाता है। मुझे अभी जनवरी 2004 में कुण्डलपुर जाने का अवसर मिला था तो वहाँ पर भगवान महावीर स्वामी कीर्तिस्तंभ, भगवान महावीर मंदिर, भगवान ऋषभदेव मंदिर, नवग्रहशांति जिनमंदिर, त्रिकाल चौबीसी मंदिर, नंद्यावर्त महल सहित भगवान महावीर की विशाल खड्गासने प्रतिमा की स्थापना आदि अनेक निर्माण इस क्षेत्र पर चल रहे थे।

अंत में इस पावन तीर्थक्षेत्र भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर को मेरा शत-शत बार नमन।

–श्रीमती क्षमा जैन ध.प. शुभचंद जैन,टिकैतनगर

⁂

मनुज प्रकृति से शाकाहारी

(अंग्रेजी पद्यानुवाद सहित)

मनुज प्रकृतिं से शाकाहारी, मांस उसे अनुकूल नहीं है।
पशु भी मानव जैसे प्राणी, वे मेवा फल-फूल नहीं हैं।।
Vegetarian is by nature man, No flesh can ever him suit.
Like men, are animals blessed with life, Don't use as flowers & fruit.

(1)

वे जीते हैं अपने श्रम पर, होती उनके नहीं दुकानें।
मोती देते उन्हें न सागर, हीरे देतीं उन्हें न खानें।।
नहीं उन्हें है आय कहीं से, और न उनके कोष कहीं हैं।
नहीं कहीं के 'बैंकर' बकरे, नहीं 'क्लर्क' खरगोश कहीं हैं।।
स्वर्णाभरण ने मिलते उनको, मिलते उन्हें दुकूल नहीं हैं।
अतः दुखी को और सताना, मानव के अनुकूल नहीं हैं।।
They live by dint of labour hard, On markets have no hold.
Nor oceans ever give them pearls, Nor mines give them gold.
They have no mines, they have no mills, They have no post or rank.
No goat clerk, no sheep is Judge, No rabbit owns a bank.
They neither have any ornament, Nor garment any to wear.
They always keep aloof from us, Then why to interfere?

(2)

कभी 'दिवाली' 'होली' में भी, मिलती उनको खीर नहीं है।
कभी 'ईद' औ 'क्रिसमस' में भी, मिलता उन्हें पनीर नहीं है।।
फिर भी तृण से क्षुधा शांत कर, वे संतोषी खेल रहे हैं।
नङ्गे तन पर धूप जेठ की, ठंड पूस की झेल रहे हैं।।

इतने पर भी चले कभी वे, मानव के प्रतिकूल नहीं हैं।
अतः स्वाद हित उन्हें निगलना, मानव के अनुकूल नहीं है।।
On festivities and ceremonies, They have no delicious food,
On holy christmas, happy Id, They have no jolly mood.
They always play and jump with joy, Have what but grass to eat.
They on their bare bodies bear, Cold's winter, summer's heat.
Their life is hard, but what of that, They on their ways, their wills.
It's selfishness of man, it them, For sake of taste, he kills.

(3)

नदियों का मल खाकर, खारा-पानी पी जी रहीं मछलियाँ।
कभी मनुज के खेतों में घुस, चरतीं वे न मटर की फलियाँ।।
अतः निहत्थी जल कुमारियों-के घर जाकर जाल बिछाना।
छल से उन्हें बलात् पकड़ना, नङ्गे तन पर छुरी चलाना।।
दुराचार है, अनाचार है; यह छोटी सी भूल नहीं है।
अबलाओं पर दृष्टिपात भी, सज्जन के अनुकूल नहीं है।।
They live on dirt of lake & seas, And drink their salty water.
They never harm a farmers crops, Nor break the pots of potter.
Men spread fatal nets for them, And catch these poor fishes.
They cut and boil and cook their flesh, And fill their empty dishes.
This violent view, this treacherous job, This dirty trick and tact.
Is greatest quilt, hugest sin, Is most inhuman act.

(4)

भोले मृग ये कभी स्वप्न में-भी न मनुज को देते गाली।
पहुँच मनुज की भोजन शाला-में न छीनते व्यंजन-थाली।।
किंतु मनुज घुस उनके घर में, सहसा गोली मार गिराता।
खा जाता है भून कलेवर, आंगन में मृग चर्म बिछाता।।
यह अपराध मेरु सा गुरुतर, बन सकता यह तूल नहीं है।
पशु भी मानव जैसे प्राणी, वे मेवा फल-फूल नहीं हैं।।
These simple deers abuse a man, Not even in their dreams.
Nor reaching in their dining rooms, They snatch their eating creams.
But a savage hunter shoots them down, And breaks their breasts with bullets.
He boils and cooks and eats their flesh, Takes skins for carpets.
This sin is big as mountain, Can never be passed over.
Like men, are animals full of life, Don't use as fruit & flower.

(5)

कभी प्रसव के लिए न चिड़ियाँ, खोजा करती हैं सतखण्डे।
किसी वृक्ष पर बना घोंसला, से लेती हैं अपने अण्डे।।
धूल भरे उन हीरों को नर, देता तो सौगात नहीं है।
और उन्हें कर लेता भक्षण, क्या यह अनुचित बात नहीं है?

अण्डे, उनके नन्हें मुन्ने, वंश-वृक्ष के मूल वही हैं।
वे ही उनके राजा बेटा, वे मेवा फल-फूल नहीं हैं।।
Birds don't require big mansions, for their delivery's sake.
To hatch their eggs at lonely place, Their little nets they make.
They themselves are the livings gems, Need not the human wealth?
It's most unkind to eat them up, In greed or gaining helth.
Their eggs are for their family's growth, Are neither fruits, nor honey.
Then why to snatch & sell them off, To earn the blackish money.

(6)

मनुजों को भी कभी पकड़ने-को फिरते लंगूर नहीं हैं।
पाकर पास मनुज की आहट, भग जाते वे दूर कहीं हैं।।
पर अब इन्हें पकड़ने को भी, मानव वन वन घूम रहा है।
इन्हें तड़पते मरते लखकर, वह 'अमेरिका' झूम रहा है।।
वानर नर से कहीं बड़ा है, वह संजीवनि-मूल नहीं है।
अतः मारकर मर्कट जीना-मानव के अनुकूल नहीं है।।
Entraping & misusing man, Monkeys are never found.
They fear him much & flee away, On hearing human sound.
But man is going on catching them, In forests and in towns.
He cuts and tears and tortures them, For earning shillings & crowns?
More human are than man himself, Must not be killed for food.
Their lives are for their lives sake. Not for your livelihood.

(7)

क्योंकि मनुज को खेत लुटाते-गेहूँ, मक्का, धान, चने हैं।
औ फल देने हेतु किमिच्छक-दानी से उद्यान तने हैं।।
अतः बना पकवान चखो तुम, फल खाकर सानन्द जियो तुम।
मेवों से लो सभी विटामिन, बलवर्द्धक घी-दूध पियो तुम।।
तुम्हें पालने में असमर्था, धरती माँ की धूल नहीं है।
अतः अन्न-फल-मेवे रहते, मांस तुम्हें अनुकूल नहीं है।।
These lavishing lands & flurishing farms, Unfold the welth unseen.
These nourtshing fruits & smilling flowers, Give gardens ever green.
Are not their grains & fruits & milk, Is not there water & air.
Why live a life on foul means, When there are so many fair.
With all its good vegetarian gifts, Can not your mother land feed.
Then why to dip your hands in blood, Then why the flesh you need.

(8)

मित्र! मांस को तजकर उसका-उत्पादन तुम आज घटाओ।
बनो निरामिष, अन्न उगाने-में तुम अपना हाथ बँटाओ।।
तजो शिकारी! ये बंदूकें, नदियों में अब जाल न डालो।
और चला हल खेतों में तुम, अब गेहूँ की बाल निकालो।।

शाकाहारी और अहिंसक-बनो, धर्म का मूल यही है।
पशु भी मानव जैसे प्राणी, वे मेवा फल-फूल नहीं हैं।।
Control your tounges, divert your tastes, And throw your fatal knives.
Eatables eat, leave noneatables, Don't play with others lives.
O honters! throw your savage guns, These snares do not spread.
Grow more food grains by ploughing fields, Honestly earn your bread.
Be true vegetarian, non-violent, For this is religious route.
Like men are animals full of life, Dont use as flowers & fruit.

कवि–'सुधेश' जैन, नागौद
अंग्रेजी अनुवादक–रामखेलावन वर्मा (एम.ए.)

कुण्डलपुर को नमन

भगवान महावीर की पावन जन्मभूमि कुण्डलपुर सम्पूर्ण जैन समाज का प्राचीन तीर्थक्षेत्र है। इस पावन तीर्थक्षेत्र का अपेक्षित विकास न हो पाने के कारण यह तीर्थक्षेत्र धीरे-धीरे सभी से विस्मृत सा होने लगा। जैन समाज के कुछ शीर्ष नेताओं ने तीर्थ को ही अपनी राजनीति का अंग बनाकर वैशाली को भगवान महावीर की जन्मभूमि के रूप में प्रचारित करने का असफल प्रयास किया, किन्तु भगवान महावीर के 2600वें जन्मजयंती महामहोत्सव वर्ष में जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी गणिनीप्रमुख आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी का ध्यान इस ओर गया और उन्होंने समाज का भ्रम दूर करने एवं वास्तविक स्थिति से परिचित कराने के लिए कुण्डलपुर के लिए अपना मंगल विहार करके समाज पर बहुत बड़ा उपकार किया है।

कुण्डलपुर में पूज्य माताजी के पावन सानिध्य में नंद्यावर्त महल व चार अन्य जिनमंदिरों का निर्माण हुआ और पुनः भगवान महावीर के जन्मदिवस व उनकी पावन जन्मभूमि की याद ताजा हो गयी है।

जैन समाज पूज्य माताजी द्वारा किये गये इस उपकार के लिए सदैव उनका ऋणी रहेगा।

–विजय कुमार जैन (पत्रकार),
तह. फतेहपुर (बाराबंकी) उ.प्र.

विनयांजलि

भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर में पूज्य गणिनी आर्यिका ज्ञानमती माताजी की पुण्य प्रेरणा से निर्मित नंद्यावर्त महल का कलापूर्ण वैभव और निर्माण कला के प्रथम बार दर्शन करते ही मैं सचमुच अभिभूत हो उठा। राजा सिद्धार्थ के नंद्यावर्त महल की यह प्रतिमूर्ति निश्चय ही हम सभी के मन में एक बारगी भगवान महावीर के आध्यात्मिक दर्शन की पहचान कराने में सक्षम है। अद्भुत स्थापत्य-कला की बेजोड़ पहचान का यह महल हमें महावीर के जन्म से मोक्ष प्राप्ति तक की पूर्ण यात्रा

करा कर हमारा बड़ा उपकार करेगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

पूज्य गणिनी माताजी के चरणों में सविनय वंदना करता हूँ एवं उनके उत्तम स्वास्थ्य की कामना भी।

–डॉ. हेमचंद जैन

(पूर्व प्रोफेसर, दिल्ली विश्वविद्यालय)

* * *

जय जय महावीर

(1)

वह कौन ? कि जिसने हिंसा को, दे दिया धर्म से निर्वासन।
किसने दिया अहिंसा देवी को, ऊँचा पावन आसन।।
सुन पशुओं की चीत्कार, बन गया कौन उनका रक्षक।
कौन बिलखती मानवता का, हुआ प्रमाणित संरक्षक।।
किसने सशस्त्र, हिंसक जग को, होकर निशस्त्र भी जीत लिया।
किसने औरों को बांट सुधा, खुद ने हालाहल जहर पिया।।
किसने सद्धर्म तरणि बैठा, जग को पहुँचाया जगत् तीर।
हे वर्धमान् ! अतिवीर! वीर!, हे सन्मति! जय जय महावीर।।

(2)

जो कुण्डलपुर में था जन्मा, पर था त्रैलोक्य हुआ हर्षित।
होकर त्रिशला का नंदन भी, जिस पर हर माता थी गर्वित।।
होकर सिद्धार्थ दुलारा जो, हर उर-पुर का वासी था।
रह कर प्रासादों में भी जो, रहा सदा सन्यासी था।।
जो था बचपन में ज्ञानवृद्ध, यौवन में विषयों से विरक्त।
कोई भी राजकुमारी तो, कर सकी न उसका मनासक्त।।
जो आया था इस भूतल पर, हरने दुखियों की दुखद पीर।
हे वर्धमान! अतिवीर! वीर! हे सन्मति! जय जय महावीर।।

(3)

थी जिसकी काली केश राशि, ज्यों सावन के घन छाये हों।
भौंहों में था वह बांकापन, मानों धनु-बाण सजाये हों।।
दैदीप्यमान उन्नत ललाट, था नेत्रों में कारुण्य भरा।
जिसके अरुण चरण पद्मों से, परमधन्य हो गई धरा।।
मुखमंडल पर परमतेज से, हतप्रभ हुआ दिवाकर था।
जिसके अमृतमय वचनों से, लज्जित हुआ सुधाकर था।।
पावनता नित्य सुतप करती, आ बैठी जिसके चरण तीर।
हे वर्धमान! अतिवीर! वीर!, हे सन्मति! जय जय महावीर।।

(4)

भर यौवन में राजपाट तज, किसने कानन घर माना।
द्वादशतप द्वादश वर्षों तक, तपकर आतम को जाना।।

पाकर केवल ज्ञान जगत को, हितकारी उपदेश दिया।
निष्कारण बन्धुत्व था जिसमें, राग-द्वेष का लेश न था।।
कहा कि "जो व्यवहार आपको, लगता आतम के प्रतिकूल।
उसे और के संग अपनाने की, तुम प्रियवर! करो न भूल।।
साम्यभाव नित मन में लाओ, चाहे सुख हो अथवा पीर।
हे वर्धमान! अतिवीर! वीर!, हे सन्मति! जय जय महावीर।।

(5)

घृणा पाप से सुकरणीय है, पापी का करना उद्धार।
तिल-तिल पंथ गढ़ो जीवन का, कभी न जाना हिम्मत हार।।
वैर-विरोध-क्रोध-मद-मत्सर, ये हैं जीवन पथ के शूल।
इन्हें त्याग कर प्रेम अहिंसा के, बरसाओ सुरभित फूल।।
सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चरित्र, ये जीवन की त्रिवेणी हैं।
भवसागर के सेतु यही हैं, मोक्ष महल की श्रेणी हैं।
है असह्य सुई चुभन तुम्हें, तो क्यों औरों को दो शमशीर।।"
हे वर्धमान! अतिवीर! वीर! हे सन्मति! जय जय महावीर।।

-पं. लालचंद जैन "राकेश"
गंजबासोदा, विदिशा (म.प्र.)

⁂

नंद्यावर्त महल की भव्यता सराहनीय है!

मैं 13 अक्टूबर 2004 को अपने मम्मी-पापा के साथ भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर के दर्शन करने पहुँचा तो मुझे वहाँ सुन्दर-सुन्दर शिखर देखकर बहुत अच्छा लगा। इतने सारे मंदिरों के दर्शन करके मैं सोचने लग गया कि 2 साल पहले तक भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर में केवल एक छोटा सा मंदिर था, उसका विकास करवाने की बात किसी ने क्यों नहीं सोची? हमारे लखनऊ में किन्हीं भगवान का जन्म नहीं हुआ है, तो भी वहाँ पर 10-15 मंदिर तो हैं ही।

2 साल पहले पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी कुण्डलपुर पधारीं और उन्होंने कुण्डलपुर में इतने सारे मंदिर निर्मित करा दिए। यहाँ निर्मित सभी जिनमंदिरों में मुझे नंद्यावर्त महल सबसे ज्यादा सुन्दर लगा, वहाँ इतने अच्छे तरीके से कारीगरी की जा रही थी कि मन कर रहा था कि देखता ही रहूँ।

मैं अपने आपको सौभाग्यशाली समझता हूँ कि मुझे भी ऐसी महान माताजी के परिवार में जन्म लेने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। पूज्य माताजी के चरणों में नमन करता हुआ मैं यही प्रार्थना करता हूँ कि मुझे भी उनके कुछ संस्कार प्राप्त हों ताकि मैं अपने जीवन का कल्याण कर सकूँ।

–अरिहंत जैन
(सुपुत्र–श्रीमती त्रिशला जैन, लखनऊ)

⁂

भजन

तर्ज–मैया यशोदा ये तेरा कन्हैया

ज्ञानमती मैया दे चरणों की छैया
तेरी कृपा से करूँ पार नैया
द्वार तेरे आये हैं भक्त सभी मिलके
ज्ञान का तू उजाला दे हमें.........।।टेक.।।

टिकैतनगर में जन्मी माता,
हर्षित हुई मन मोहनी माता।
दर्शन हुआ तेरा बाजी बधाई,
टिकैतनगर तेरी जन्मभूमि कहाई।
कल्याण कर दे मेरी झोली भर दे,
किरपा मिले तेरी, उपकार कर दे।
तुझको ही याद करूँ, तेरा ही ध्यान करूँ,
ज्ञान का तू उजाला दे हमें...........।।1।।

पहले तो माता पहुँची हस्तिनापुर नगर में,
जम्बूद्वीप रचना का ध्यान था मन में।
रचना को साकार करके दिखाया,
जम्बूद्वीप अतिशय क्षेत्र कहाया।।2।।

फिर माता आ पहुँची अयोध्या नगर में,
ऋषभदेव प्रभु का ध्यान था मन में।
क्षेत्र का काया कल्प कराया,
अयोध्या है जैन तीर्थ सबको बताया।।3।।

फिर माता जा पहुँची प्रयाग नगर में,
तपोभूमि प्रभु की है, बतलाया तुमने।
'ऋषभदेव तपस्थली' तीर्थ बनाया,
इस ओर सबका था ध्यान दिलाया।।4।।

फिर माता पहुँची कुण्डलपुर में
महावीर जन्मभूमि विस्मृत थी सबसे।
माता ने सबका है ध्यान दिलाया,
'नंद्यावर्त महल' एक तीर्थ बनाया।
आओ भक्ति कर लें, प्रभु को सुमिर लें,
तीरथ की महिमा का गुणगान कर लें।
धूली यहाँ की तो मस्तक लगाना है,
ज्ञान का तू उजाला दे हमें.........।।5।।

मांगीतुंगी, पावापुर, राजगृही में,
महावीर जी, सम्मेदशिखर और तीरथ हैं कितने।
सभी ओर माता का ध्यान गया है,
तीर्थ ही तीर्थ का विकास हुआ है।
कुछ कह न पाऊँ, जब-जब मैं आऊँ,
विनती करो जो भी वो ही मैं पाऊँ।
महिमा है प्यारी तेरा दर है प्यारा,
ज्ञान का तू उजाला दे हमें.............।।6।।

अब माता आयेंगी 'वाराणसी' में,
पार्श्वनाथ जन्मभूमि का ध्यान है मन में।
तीन हजार वर्ष पूरे होने को आये,
आओ सब मिलकर महोत्सव मनाएं।
एक बार फिर माता अयोध्या पधारों,
विनती है सबकी इसे स्वीकारो।
पावन धरा है तुमने किया है,
सुमिरन करूँ तेरा, भाग्य जगा है।
'स्वाती' को चरणों की रज को लगाना,
ज्ञान का तू उजाला दे हमें..........।।7।।

-स्वाती जैन, तह. फतेहपुर (बाराबंकी)

कुण्डलपुर तीर्थ वंदना

-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

जो भवसमुद्र से तिरवाता, वह तीर्थ कहा जाता जग में।
वह द्रव्य तीर्थ औ भावतीर्थ, दो रूप कहा जिन आगम में।।
तीर्थंकर के जन्मादिक से, पावन हैं द्रव्यतीर्थ सच में।
हर प्राणी की आत्मा परमात्मा भावतीर्थ मानी जग में।।1।।

सतयुग में चौबिस तीर्थंकर, जन्में जब इस पृथिवी तल पर।
इन्द्राज्ञा से तब धनकुबेर ने, रत्नवृष्टि कर दिया सुखद।।
उन सब तीर्थंकर भगवन्तों की, जन्मभूमि को नमन करूँ।
फिर महावीर की जन्मभूमि, कुण्डलपुर तीरथ को प्रणमूँ।।2।।

धवला तिलोयपण्णत्ति आदि, प्राचीन ग्रंथ अध्ययन किया।
उनमें कुण्डलपुर के राजा, सिद्धार्थ का शासन कथन मिला।।
वे नंद्यावर्त महल में रानी, त्रिशला के संग रहते थे।
छब्बिस सौ वर्षों पूर्व जहाँ पर, रत्न असंख्य बरसते थे।।3।।

तिथि चैत्र सुदी तेरस के दिन, वहाँ महावीर का जन्म हुआ।
माता त्रिशला के साथ-साथ, पूरा कुण्डलपुर धन्य हुआ।।
वह नगरी काल थपेड़ो से, वीरान हुई थी कलियुग में।
लेकिन फिर से आ गया समय, छब्बीससौंवें जन्मोत्सव में।।4।।

श्री गणिनीप्रमुख ज्ञानमति माताजी की सम्प्रेरणा मिली।
प्रभु महावीर की जन्मभूमि, कुण्डलपुर में नव ज्योति जली।।
कुण्डलपुर के प्राचीन जिनालय, का कुछ जीर्णोद्धार हुआ।
कीर्तिस्तंभ के निर्माण से प्रभु-इतिहास वहाँ साकार हुआ।।5।।

इक नंद्यावर्त महल परिसर में, स्वर्ग उतर आया मानो।
प्रभु वीर का युग स्मरण हुआ, अतिशय साक्षात् इसे जानो।।
यहाँ मुख्य द्वार से विश्वशांति, महावीर जिनालय दिखता है।
अतएव सभी भक्तों का मन, ऊपर जाने को करता है।।6।।

महावीर प्रभू की जय बोलो, फिर चालिस सीढ़ी पार करो।
अंतर का दीप जलाकर प्रभु, चालीसा का फल प्राप्त करो।।
यहाँ प्रतिमा अवगाहन प्रमाण, महावीर प्रभू की खड्गासन।
उस दुग्ध सदृश उज्ज्वल प्रतिमा के, दर्शन से हो मन प्रसन्न।।7।।

इक शतक आठ फुट ऊँचे इस, मंदिर का है अतिशय भारी।
उत्तुंग शिखर में भी जिनवर, प्रतिमाएँ शोभ रहीं प्यारी।।
प्रभु की प्रदक्षिणा कर उनका, अभिषेक व पूजन पाठ करो।
कुण्डलपुर अवतारी त्रिशलानंदन, आरति का ठाठ करो।।8।।

प्रभु नाम मंत्र जपते-जपते, सीढ़ी उतरो आगे को चलो।
फिर प्रदक्षिणा क्रम से तीर्थंकर, ऋषभदेव के द्वार चलो।।
इस मंदिर में वृषभेश्वर की, चौदह फुट पद्मासन प्रतिमा।
इनका दर्शन करके जानो, जिनधर्म की है शाश्वत महिमा।।9।।

आगे चलकर नवग्रह शांती, जिनमंदिर के दर्शन कर लो।
नव कमलों पर वहाँ राज रहे, नव जिनवर को वंदन कर लो।।
जिस ग्रह का हो तुम पर प्रकोप, उस ग्रहनाशक प्रभु को भज लो।
पूजन विधान औ जाप्य आदि के, द्वारा ग्रह शांती कर लो।।10।।
इस मंदिर के ही निकट विशाल, जिनालय तीन मंजिला है।
त्रैकालिक चौबीसी मंदिर के, नाम से इसकी गरिमा है।।
सबसे नीचे इस मंदिर में हैं, भूतकाल की प्रतिमाएँ।
फिर वर्तमान व भविष्यत् की, क्रमशः ऊपर जिनप्रतिमाएँ।।11।।
तीनों मंजिल में चौबिस चौबिस, प्रतिमाओं को नमन करो।
आगे खुद भी तीर्थंकर बनने, हेतु पुण्य को ग्रहण करो।।
देखो इस मंदिर के समक्ष है, नंद्यावर्त महल सुन्दर।
छब्बिस सौ वर्षों बाद पुनः, इतिहास दिखाया है अन्दर।।12।।
कैसे-प्रभु वीर जन्म से पहले, इन्द्र यहाँ पर आते थे।
तब माता त्रिशला के आंगन में, धनद रत्न बरसाते थे।।
इन्द्रों ने आकर इसी महल में, प्रभु का जन्म कल्याण किया।
अन्दर जाकर देखो इन दृश्यों, का कैसा निर्माण हुआ।।13।।
इस महल के अन्दर महावीर के, जीवन के कुछ दृश्य दिखे।
सिद्धार्थ राज का सिंहासन, रानी त्रिशला का पलंग दिखे।।
देखो जो दो चारण मुनिवर, निःशंक हुए थे प्रभु ढिग आ।
दोनों ने अतिशय खुश होकर, जिनशिशु को सन्मति नाम दिया।।14।।
इन मुनियों को कर नमन महल के, सभी दृश्य देखो रुचि से।
फिर सबसे ऊपर शांतिनाथ, चैत्यालय दर्श करो मन से।।
है तीन लोक आकार एक, वहाँ ऊपर सिद्धशिला देखो।
हैं सिद्ध अनंतानंत जहाँ उस, सिद्धलोक को नमन करो।।15।।
इस तरह तीर्थ कुण्डलपुर के, दर्शन कर मन संतुष्ट हुआ।
अतिशायी नंद्यावर्त महल, देखा तो हृदय प्रफुल्ल हुआ।।
जिस नगरी का कण-कण मस्तक पर, धारण करने योग्य कहा।
वह जन्म सफल करने वाला, तीरथ जन-जन से पूज्य महा।।16।।
निज जन्म सफल करना हो तो, प्रभु जन्मभूमि को नमन करो।
यदि कर्म सुखद करना हो तो, तीर्थंकर को स्मरण करो।।
ऐसी ही पावन धरती पर, प्रभुवर! हो कभी जनम मेरा।
बन सकूँ अजन्मा कभी अगर, तो समझूँ पूर्ण भ्रमण मेरा।।17।।
तीर्थंकर श्री महावीर प्रभू, मंगलकारी हों जगभर में।
उनकी अतिशायी जन्मभूमि, कुण्डलपुर को हर भक्त नमे।।
नवनिर्मित सभी जिनालय, कुण्डलपुर के मंगलमय होवें।
"चंदनामती" प्रभु दर्शन से, मेरा भी जन्म सफल होवे।।18।।

* * *

सोलहकारण भक्ति

रचयित्री–गणिनी ज्ञानमती

(जिन सोलहकारण भावनाओं को भाकर भगवान महावीर ने पूर्वभव में तीर्थंकर प्रकृति का बंध किया था। उन सोलहकारण भावनाओं को आप भी पढ़ें और सातिशय पुण्य संचित करें)

(उपजाति छन्द)

सिद्धिप्रदाः षोडश भावना याः।
तीर्थंकरैः प्राक् खलु भावितास्ताः।।
प्रवर्तयंते भुवि धर्मतीर्थं।
तास्तांश्च नित्यं प्रणुमः स्वसिद्ध्यै।।1।।

(नरेन्द्र छंद)

सिद्धि प्रदाता सोलह कारण, भावनायें मुनि गाते।
तीर्थंकर भगवान् इन्हें ही, पहले भव में भाते।।
पुनः जगत् में धर्मतीर्थ का, सफल प्रवर्तन करते।
भावनाओं को तीर्थंकरों को, सिद्धि हेतु हम नमते।।1।।

सद्दृग्विशुद्धिः शिवसौख्यदात्री।
प्रसूरिवानन्तगुणान् प्रसूते।।
पंचोत्तरा विंशतिदोषशून्या।
गुणाष्टमुख्या तां नंनमीमि।।2।।

दर्शविशुद्धी शिवसुख देती, प्रथम भावना जग में।
माता सम अनंतगुण गण को, पैदा करती सच में।।
पच्चिस दोष रहित यह सम्यग्दर्शन शुद्ध कहा है।
संवेगादि आठ गुणयुत को, मैंने नमन किया है।।2।।

दृग्ज्ञानवृत्तेषु तथोपचारे।
विनेयवृत्तिर्विनयानुरक्ता।।
आनम्रलोकापि च मोक्षद्वारा।
संपन्नतां तां विनयेन नौमि।।3।।

दर्शन ज्ञान चरित्र तथा, उपचार विनय चारों हैं।
इनमें इनके धारी में अनुराग विनययुत जो हैं।।
सभी जगत को नम्र बनावें, शिव का द्वार कहावें।
द्वितिय विनय सम्पन्न भावना, इसे सदा शिर नावें।।3।।

शीलव्रतेषूचितधीरजस्रं।
श्रुतानुसारैरतिचारशून्या।
संपूर्णशीलव्रतपूर्णकर्त्री।
वंदे तृतीयां शुभभावनां ताम् ।।4।।

शील व्रतों में उचित प्रवृत्ति, सदा शास्त्र अनुसारे।
अतिचारों से रहित धरें जो, तृतीय भावना धारें।।
श्रेष्ठ भावना शील व्रतों में, अनतिचार को वंदूं।
सकल शील व्रत पूर्ण करे ये, इसको धर भव खंडूं।।4।।

चतुः प्रकारांश्च जिनोक्तवेदान् ।
योऽध्यापयेच्चापि स्वयं त्वधीते।।
ज्ञानोपयोगं विदधीत्यभीक्षणम् ।
तं भावनां चापि नमामि नित्यम् ।।5।।

जिनवर कथित वेद हैं चारों, ये अनुयोग कहाते।
स्वयं पढ़ें जो चतुःसंघ को, रुचि से नित्य पढ़ाते।।
वे अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग को, धरते उन्हें नमूं मैं।
सदा भावना को भी प्रणमूं, परमानंद भजूं मैं।।5।।

वैराग्यभावो भवदेहभोगे।
धर्मेषु प्रीतिः परमा प्रशस्ता।।
स्वात्मोत्थपीयूषरसैकतृप्तिः।
संवेगतां तां हृदि भावयामि।।6।।

जो संसार देह भोगों से, विरति भाव को धारें।
श्रेष्ठ धर्म में परम प्रीति धर, वर संवेग विचारें।।
स्वात्मा से उत्पन्न परम, अमृत से तृप्त हुए हैं।
उस संवेग भावना को नित, भावूं धरूं हिये में।।6।।

रत्नत्रयं भव्यजनाय दद्यात्।
महामुनिः प्रासुकदानदक्षः।।
दानं चर्तुधापि हिताय लोके।
तं शक्तितस्त्यागमहं महामि।।7।।

रत्नत्रयनिधि भव्यजनों को, देते साधू नाते।
प्रासुक दान यही है उत्तम, महामुनि कर पाते।।
दान चतुर्विध भी इस जग में, सबका है हितकारी।
यथाशक्ति यह त्याग भावना, नमूं इसे सुखकारी।।7।।

अंतर्बहिर्द्वादशभेदयुक्तं।
तपश्च कुर्वन् मुनिरात्मशक्त्या।।
ध्यानैकसिद्ध्यै चरतीह सर्वं।
तपांसि सर्वाण्यपि भावयामि।।8।।

अंतरंग छह बाहर के छह, बारह तप माने हैं।
मुनिवर निजशक्ती सम इनको, करते अघ हाने हैं।।

ध्यानसिद्धि के लिए सभी ये, तपश्चरण मुनि करते।
मैं भी नितप्रति सभी तपों को, भावूं अतिशय रुचि से।।8।।

साधोः समाधिर्महतां पुनाति।
धर्म्ये च शुक्लेऽविचलं करोति।।
पीडाः समस्ताश्च मुनेर्धिनोति।
एनां सदा भावय भव्य! चित्ते।।9।।

साधु समाधि महापुरुष के, मन को पावन करती।
धर्मध्यान अरु शुक्ल ध्यान में, निश्चल मन को धरती।।
मुनियों के संपूर्ण कष्ट को, दूर करें जो रुचि से।
ऐसी साधुसमाधि भावना, भव्य धरो नित चित में।।9।।

निर्दोषरीत्यैव रुजादिहर्त्री।
सेवा गुरूणां गुणपुंजदात्री।।
या भावना सर्वतपस्सु प्राणं।
तां नौमि नित्यं नवमीं गुणाप्त्यै।।10।।

प्रासुक औषधि से सेवा से, गुरु की वैयावृत्ती।
गुरुओं के रोगादि दूर कर, गुण के पुंज धरें भी।।
सर्वतपों का प्राण कही यह, वैयावृत्ति भावना।
जिनगुण प्राप्ती हेतु नमूं मैं, उत्तम यही भावना।।10।।

अर्हत्सु भक्तिर्भुवि कामधेनुः।
एकाकिनी सर्वसुखानि दत्ते।।
दौर्गत्यदुःखानि क्षणात् लुनीते।
नमाम्यहं तामनुरागभावैः।।11।।

अर्हंतों की भक्ति भुवन में, कामधेनु कहलाती।
यही अकेली सर्वसुखों को, देती मोक्ष दिलाती।।
दुर्गति के संपूर्ण दुःखों को, क्षण में दूर भगाती।
नित्य नमूं अनुराग भाव से, हो निजसुख की प्राप्ती।।11।।

आचार्यभक्त्या बहुमंत्रविद्याः।
सिद्ध्यंति भक्तस्य श्रुतौ प्रणीतं।।
मुक्तेश्च दातारमहं प्रवंदे।
गुणानुरागादपि भावनां तां।।12।।

गुरूवर्य आचार्यभक्ति से, बहुत मंत्र विद्यायें।
सिद्धी होतीं भक्तगणों को, ऐसा शास्त्र बतायें।।
दीक्षादाता मुक्ति प्रदाता, उनके गुण का रागी।
उन्हें नमूं आचार्यभक्ति भी, वंदू गुरु अनुरागी।।12।।

शास्त्राब्ध्युपाध्यायगुरुं प्रणौमि।
यस्य प्रसादात् श्रुतवार्धिपारं।।
गच्छन्ति शीघ्रं निजसौख्यपूरं।
ज्ञानामृतं चापि पिबंति भव्याः।।13।।

श्रुतसमुद्र गुरुउपाध्याय को, सदा नमूं भक्ती से।
श्रुतसमुद्र पारंगत होऊँ, उन प्रसाद को पाके।।
बहुश्रुत भक्ती से निजसौख्यपूर पा जाते भविजन।
वे ही ज्ञानामृत को भी नित पीते रहते मुदमन।।13।।

प्रकृष्टवाचामनुरागभक्त्या।
चित्ते स्मरन्तः सततं स्तुवंति।
चतुर्विधं संघमपीह प्रीत्या।
नमंति ते स्वात्मनिधिं लभंते।।14।।

जिनवर के प्रकृष्ट वचनों में अनुराग भक्ती से।
मन में नित स्मरण करें, स्तुति करें भी रुचि से।।
चउविध संघ को नमन करें भी,जो मन में धर प्रीती।
स्वात्मनिंधी को पाते वे ही, वंदूं प्रवचन भक्ती।।14।।

आवश्यकान् षट् प्रतिपालयन्तः।
हानिं कदाचित् नहि कुर्वते ये।
त एव वश्यां विदधत्यपूर्वां।
लक्ष्मीं स्तुवेऽहं किल भावनां तां।।15।।

छह आवश्यक को नित पालें, कभी न करते हानी।
अपूर्व लक्ष्मी को वश करते, वे ही मुनिवर ज्ञानी।।
यह आवश्यक अपरिहाणि है, श्रेष्ठ भावना मानी।
मैं इसकी संस्तुति करूं नित, पाऊँ निज रजधानी।।15।।

ज्ञानेन पूजाविधिना तपोभिः।
मार्गप्रभावी जिनशासने यः।
रत्नत्रयेणापि स्वयं च स्वस्मिन्।
प्रभावयेत् नौमि प्रभावनां तां।।16।।

श्रेष्ठ ज्ञान पूजा विधान से, घोर तपश्चर्या से।
जो जिनशासन में रत शिवपथ की प्रभावना करते।।
रत्नत्रय गुणतेज स्वयं धर, निज की करें प्रभावन।
मार्ग प्रभावन नमूं भावना, करूं स्वगुण उद्भावन।।16।।

प्रकृष्टवाचीह सुवत्सलत्वं।
संघे श्रुतौ चापि विशिष्टमोदः।।
माता गुणानां च शिवस्य सास्ति।
नमोऽस्तु तस्यै जिनसंपदाप्त्यै।।17।।

जिनवर वचनों में वत्सलता, प्रवचन वत्सलता है।
संघ में आगम में भी अतिशय, प्रीति हर्षपरता है।।
सबगुण को पैदा करने में, जननी शिव की दात्री।
जिनगुण संपत्ती हेतू मैं, नमूं यही सुखकर्त्री।।17।।

(अनुष्टुप्)

जगत्सत्त्वान् समुद्धर्तुं,
तीर्थकृत्पुण्यहेतुकाः।
भावनाः षोडशाप्यल्प-
ज्ञानमत्यां विभांतु मे।।18।।

त्रिभुवन के सब जीवों का, उद्धार करन में हेतू।
तीर्थंकर का अतिशय पुण्य उपार्जन में यह हेतू।।
ये सोलह कारण सुभावना, अल्प "ज्ञानमति" मुझमें।
नित्य रहें दैदीप्यमान ये, नमूं इन्हें नितप्रति मैं।।18।।

(अंचलिका)

इच्छामि भंते! सोलसकारणभत्तिकाओसग्गो कओ तस्सालोचेउं, तित्थयरपयडिणामकम्मबंधकारणभूदाणं दंसणविसुद्धिविणयसंपण्णदासीलव्वद-णिरदिचारदा-अभिक्खण-णाणोवजोगसंवेग-जधाथाम-चाग-तव-साहुसमाहि-वेज्जावच्चकरण-अरंहतभत्तिआइरियभत्ति-बहुसुदभत्ति - पवयणभत्ति - आवासय - अपरिहीणदा-मग्गप्पभावण-पवयणवच्छलदाणं इमाणं सोलसकारण-भावणाणं णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमंसामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

(अंचलिका)

हे भगवन् ! इच्छा करता मैं, सोलह कारण भावन।
भक्ती कायोत्सर्ग किया अब, करता हूँ आलोचन।।
तीर्थंकर शुभ नामकर्म की, प्रकृति बंध में कारण।
दरश विशुद्धी विनययुक्तता, शीलव्रता-नतिचारण।।1।।

सतत ज्ञानउपयोग तथा, संवेग शक्तितस्त्यागो।
यथाशक्ति तप साधु समाधी, वैय्यावृत में लागो।।
अर्हद् भक्ति सूरिभक्ती, बहुश्रुत और प्रवचन भक्ती।
आवश्यक में हानि नहीं, शिवपथ प्रभावना युक्ती।।2।।

प्रवचनवत्सलता ये सोलह, कारण भावन सुन्दर।
नित्यकाल मैं अर्चूं पूजूं वंदूं, नमूं शिवंकर।।
दुःखों का क्षय कर्मों का क्षय, बोधिलाभ भी होवे।
सुगतिगमन मम समाधिमरणं, जिनगुणसंपत होवे।।3।।

4847

दशलक्षण भक्ति

रचयित्री–गणिनी ज्ञानमती

(भगवान महावीर ने इन दशधर्मों का उपदेश प्राणीमात्र के हित के लिए दिया है। इन धर्मों की भक्ति हृदय में धर्मों को अवतरित कराने वाली है)

(वसन्ततिलका छन्द)

योगी क्षमागुणमयो भुवनैकबंधुः।
क्रोधं निहत्य निजशांतरसे निमग्नः।।
स्वात्मैकजन्यपरमामृतसंप्रतृप्तः।
तं योगिनं हृदि दधे परमां क्षमां च।।1।।

(शंभु छंद)

योगीश्वर उत्तमक्षमा सुगुणमय, त्रिभुवन के इक बांधव हैं।
वे क्रोध कषाय नाशकर अपने, शांतभाव में तन्मय हैं।।
निज आत्मा से उत्पन्न परम, पीयूष पियें संतृप्त रहें।
उन योगी को वर क्षमाधर्म को, हृदय कमल में धारूँ मैं।।1।।

भावो मृदोर्भवति मार्दवधर्म एषः।
अष्टौ मदानपि निरस्य विभाति साधौ।।
वश्यं करोति भुवनं विनयैश्चतुर्धा।
तं योगिनं हृदि दधे वरमार्दवं च।।2।।

मृदु का जो भाव वही मार्दव, यह उत्तम धर्म जगत में है।
जो आठों मद को नष्ट करे, उन साधू में ही शोभे है।।
जो दर्शन ज्ञान चरित तप चार, विनय से जग को वश्य करें।
उन योगी को वर मार्दव को, नित हृदय कमल में धारूं मैं।।2।।

मायामपास्य सरलं कुरुते त्रियोगं।
एकाग्रध्यानमपि साम्यतया विधत्ते।।
मुक्तिर्भवेत् ऋजुगतेः खलु तस्य साधोः।
तं योगिनं हृदि दधे परमार्जवं च।।3।।

जो माया दूर हटा मन वच, तन योग सरल कर लेते हैं।
वे ही एकाग्रध्यान धरते, समता अमृत रस पीते हैं।।
उन साधू को सीधे ऋजुगति से, निश्चित मुक्ती मिलती है।
उन योगी को उत्तम आर्जव को, हृदय कमल में धारूं मैं।।3।।

लोभं निरस्य शुचितां हृदये दधाति।
ब्रह्मव्रतैः कलिलकर्ममलं धुनोति।।
अंतर्बहिःशुचिपरो भुवि पूज्यतेऽसौ।
तं योगिनं हृदि दधे शुचये च शौचम् ।।4।।

जो लोभ दूर कर शौचधर्म को, मनपकंज में धरते हैं।
वे पावन ब्रह्मचर्य द्वारा, सब पाप कर्ममल धोते हैं।।
अंतर बाहिर शुचिता धर कर, वे जग में पूजित होते हैं।
उन योगी को वर शौच को शुचि-हित, हृदय कमल में धरते हैं।।4।।

सम्यक्-प्रशस्तवचनं भुवनैकसारं।
सौख्याकरं सकलसद्गुणरत्नराशिं।
गृण्हाति दिव्यध्वनिहेतुमिदं मुनींद्रः।
तं योगिनं हृदि दधे वरसत्यधर्मं।।5।।
जो सम्यक् सत्य प्रशस्त वचन, वे जग में सारभूत माने।
वे सर्व सुखों की खान सकल-गुण रत्नों की राशी माने।।
मुनिराज दिव्यध्वनि हेतु सुउत्तम, सत्यधर्म को पाले हैं।
उन मुनि को उत्तम सत्यधर्म को, हृदय कमल में धरते हैं।।5।।

संयम्य पंचकरणानि मनश्च यत्नात्।
षट्कायजीवपरिरक्षणदक्षचेताः।।
स्वाधीनसौख्यमुपलभ्य वसेत् च स्वस्मिन्।
तं योगिनं हृदि दधे वृषसंयमं च।।6।।
जो बहु प्रयत्न से पंचेन्द्रिय, अरु मन का निग्रह करते हैं।
छह काय जीव की रक्षा करने, में दयार्द्र मन रखते हैं।।
स्वाधीन सौख्य को पा करके, वे निज आत्मा में बसते हैं।
उन मुनि को उत्तम संयम को, हम हृदय कमल में धरते हैं।।6।।

साधुः सदा तपति द्वादशधा तपोभिः।
कायं कृशीकुरुत एव किलात्मपुष्ट्यै।।
कर्माणि निर्जरयतीह शिवस्य हेतोः।
तं योगिनं हृदि दधे सुतपश्च धर्मं।।7।।
जो मुनिवर बारह तप द्वारा, निज काय तपाते ही रहते।
वे तन को कृश करते फिर भी, आत्मा को हृष्ट पुष्ट करते।।
वे मोक्ष हेतु सब कर्मों को, निर्जीर्ण स्वयं कर देते हैं।
उन मुनि को उत्तम तप को भी, हम हृदय कमल में धरते हैं।।7।।

रत्नत्रयं भविगणाय ददाति योगी।
तत्त्याग एव परमो यतिभिस्तथोक्तं।।
आहारदानप्रभृतीनपि देहि मुक्त्यै।
तं योगिनं हृदि दधे वरत्यागधर्मं।।8।।
मुनिवर ही भव्यजनों को प्रासुक, रत्नत्रय का दान करें।
वो ही है उत्तम त्याग कहा, ऋषियों ने परमागम में खरे।
आहार व औषधि शास्त्र अभय, इनको भी देना शिवहेतू।
उन मुनि को त्यागधर्म को चित में, धारूं ये भवदधिसेतू।।8।।

त्रैलोक्यसंपदमपीह ददाति शीघ्रं।
देहेऽपि निर्ममरुचिः स अकिंचनः स्यात्।।
ध्यायन् स्वमेव गिरिगह्वरके हि तिष्ठेत्।
तं योगिनं हृदि दधे ह्यपरिग्रहं च।।9।।
त्रिभुवन की संपति भी देता, यह उत्तम आकिंचन्य धरम।
नहिं मेरा किंचित् तन में भी, निर्ममता ये ही आकिंचन।।
ऐसे मुनि पर्वत शिखर गुफा में, शुद्धात्मा को ध्याते हैं।
उन मुनि को आकिंचन को भी, हम हृदय कमल में भाते हैं।।9।।

ब्रह्मस्वरूप इह स्वात्मनि चर्यते यो।
संघेऽप्यसौ वसति सद्गुणसंपदाप्त्यै।।
त्रैलोक्यपूज्यमपि सूत्तमधर्ममीडे।
तं योगिनं हृदि दधेऽपि च ब्रह्मचर्यं।।10।।
जो ब्रह्मस्वरूप निजात्मा में, चर्या करते सुस्थिर होकर।
सद्गुणसंपत की प्राप्तिहेतु, मुनिसंघ में रहते श्रुततत्पर।।
त्रैलोक्य पूज्य भी उत्तम ब्रह्मचर्य इसको नित नमते हैं।
उन मुनि को ब्रह्मचर्य वृष को भी, हृदय कमल में धरते हैं।।10।।

(अनुष्टुप्)

सिद्धिप्रासाद-निःश्रेणी-पंक्तिवत् भव्यदेहिनां।
दशलक्षण-धर्मोऽयं, नित्यं चित्तं पुनातु नः।।1।।

हे धर्मकल्पवृक्ष! त्वां, वंदे भक्त्या त्रिशुद्धितः।
'ज्ञानमत्या' समं मह्यं, स्वर्गमोक्षफलं दिश।।2।।
ये सिद्धि महल की सीढ़ी हैं, भव्यों के हेतु दशलक्षण।
ये धर्म हमारा चित्त पवित्र, करें वर पावन दशलक्षण।।
हे धर्म कल्पतरु! त्रयशुद्धी युत, भक्ती से वंदूं तुमको।
"सज्ज्ञानमती" के साथ स्वर्ग अरु, मोक्ष सुफल देओ मुझको।।11।।

(अंचलिका)

इच्छामि भंते! दसलक्खण-धम्मभत्तिकाओसग्गो कओ तस्सालोचेउं, णिच्छयववहार-मोक्खमग्ग-सेढिभूदाणं उत्तमखमा-मद्दव-अज्जव-सउच्च-सच्च-संजम-तव-चाग-आकिंचण-बंभचेरणाम-दसलक्खण-धम्माणं णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमंसामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

(अंचलिका)

हे भगवन् ! इच्छा करता हूँ, दशलक्षण उत्तम धर्मों की।
भक्ती का कायोत्सर्ग किया, उसके आलोचन करने की।।
निश्चय व्यवहार द्विविध वृष शिवपथ में चढ़ने की सीढ़ी हैं।
ये उत्तम क्षमा व मार्दव आर्जव, शौच सत्य संयम तप हैं।।1।।

वर त्याग अकिंचन ब्रह्मचर्य-नामा ये दशविध धर्म कहे।
मैं नित्यकाल अर्चूं पूजूं, वंदूं भक्ती से नमूं इन्हें।।
दुःखों का क्षय कर्मों का क्षय, होवे मम बोधिलाभ होवे।
हो सुगतिगमन व समाधिमरण, मुझको जिनगुण संपति होवे।।2।।

इति दशलक्षण भक्तिः

भगवान महावीर चालीसा

दोहा

सिद्धिप्रिया के नाथ हैं, महावीर भगवान। सिद्धारथ सुत वीर को, मेरा कोटि प्रणाम।।1।।
वर्धमान अतिवीर प्रभु, सन्मति हैं सुखकार। पाँच नाम युत वीर को, वन्दन बारम्बार।।2।।
चालीसा महावीर का, पढ़ो भव्य मन लाय। रोग शोक संकट टलें, सुख सम्पति मिल जाय।।3।।

चौपाई

जय जय श्री महावीर हितंकर। ज़य हो चौबिसवें तीर्थंकर।।1।।
जय प्रभु तुम जग में क्षेमंकर। जय जय नाथ तुम्हीं शिवशंकर ।।2।।
जन्म लिया प्रभु कुण्डलपुर में। चैत्र सुदी तेरस शुभ तिथि में।।3।।
त्रिशला माता धन्य हो गईं। अपने सुत में मग्न हो गईं।।4।।
राजा सिद्धारथ हरषाये। पुत्र जन्म पर दान बंटाये।।5।।
स्वर्गों में भी खुशियाँ छाईं। इन्द्रों की टोली वहाँ आई।।6।।
नंद्यावर्त महल में जाकर। सिद्धारथ से आज्ञा पाकर।।7।।
पहुँची शची प्रसूती गृह में। माता की त्रय प्रदक्षिणा दे।।8।।
त्रिशला माँ का वन्दन करके। उनको निद्रा सम्मुख करके।।9।।
मायामय बालक को सुलाया। गोद में जिनबालक को उठाया।।10।।
तत्क्षण स्त्रीलिंग विनाशा। शिवपद की मन में अभिलाषा।।11।।
जिन शिशु को बाहर लाकर के। दिया इन्द्र के करकमलों में।।12।।
इन्द्र प्रभू को ले अति हरषा। हर्षाश्रु की हो गई वर्षा।।13।।
दो नेत्रों से निरख न पाया। नेत्र सहस्र तब उसने बनाया।।14।।
निरखा अंग अंग जिनवर का। फिर भी उसका मन नहिं भरता।।15।।
मेरु सुदर्शन पर ले जाकर। किया जन्म अभिषेक प्रभू पर।।16।।
उस जन्मोत्सव का क्या कहना। तीन लोक में उसकी महिमा।।17।।
इन्द्र ने नामकरण किया प्रभु का। वीर व वर्धमान पद उनका।।18।।
जन्म न्हवन के बाद शची ने। प्रभु को किया सुसज्जित उसने।।19।।
फिर कुण्डलपुर नगरी आकर। मात पिता को सौंपा बालक।।20।।
वहाँ पुनः जन्मोत्सव करके। नृत्य किया था कुण्डलपुर में।।21।।
पलना खूब झुलाया प्रभु का। नंद्यावर्त महल परिसर था।।22।।
एक बार दो मुनिवर आये। जिनशिशु को लख अति हर्षाये।।23।।
दूर हुई उनकी मनशंका। "सन्मति" नाम उन्होंने रक्खा।।24।।
बालपने में क्रीड़ा करते। मात पिता के मन को हरते।।25।।

संगमदेव एक दिन आया। उसने सर्प का वेष बनाया।।26।।
वर्धमान तब खेल रहे थे। देवबालकों के संग वन में।।27।।
उनके बल की हुई परीक्षा। सर्प देव की थी यह इच्छा।।28।।
चढ़े सर्प के फण पर वे तो। मानो माँ की गोदी में हों।।29।।
सर्प ने देवरूप प्रगटाया। "महावीर" कह शीश झुकाया।।30।।
बालपने से यौवन पाया। लेकिन ब्याह नहीं रचवाया।।31।।
जातिस्मरण हुआ जब उनको। दीक्षा लेने चल दिये वन को।।32।।
बारह वर्ष कठिन तप करके। केवलज्ञान प्रगट हुआ उनके।।33।।
प्रथम देशना विपुलाचल पर। प्रगटी शिष्य मिले जब गणधर।।34।।
तीस वर्ष तक समवसरण में। दिव्य देशना दी जिनवर ने।।35।।
पावापुर से मोक्ष पधारे। तीर्थंकर महावीर हमारे।।36।।
सबने दीपावली मनाई। तब से ही दीवाली आई।।37।।
चला वीर संवत्सर जग में। सर्वाधिक प्राचीन सुखद है।।38।।
कार्तिक शुक्ला एकम तिथि से। प्रारंभ होता नया वर्ष है।।39।।
महावीर की जय सब बोलो। आत्मा के सब कल्मष धो लो।।40।।

शंभु छन्द

प्रभु महावीर का चालीसा, जो चालिस दिन तक पढ़ते हैं।
उनकी स्मृति में दीवाली के, दिन दीपोत्सव करते हैं।।
विघ्नों का शीघ्र विलय होकर, उनको मनवाञ्छित फल मिलता।
लौकिक वैभव के साथ साथ, आध्यात्मिक सौख्यकमल खिलता।।1।।

पच्चिस सौ उनतिस वीर संवत्, शुभ ज्येष्ठ कृष्ण मावस तिथि में।
रच दिया ज्ञानमति गणिनी की, शिष्या "चन्दनामती" मैंने।।
पावापुर में जलमंदिर का, दर्शन कर मन अति हर्षित है।
प्रभु महावीर के चरणों में, मेरी यह कृती समर्पित है।।2।।
रत्नत्रय की हो वृद्धि प्रभो, बोधी समाधि की प्राप्ती हो।
नश्वर इस मानव तन द्वारा, अविनश्वर पद की प्राप्ती हो।।
उससे पहले प्रभु आर्त रौद्र, ध्यानों की सहज समाप्ती हो।
मैं धर्मध्यान में रम जाऊँ, तब ही सच्ची सुख शांती हो।।3।।

* * *

सम्मेदशिखर टोंक वन्दना

रचयित्री-आर्यिका चन्दनामती

शंभु छंद –

तीर्थराज सम्मेदशिखर है, शाश्वत सिद्धक्षेत्र जग में।
एक बार जो करे वन्दना, वह भी पुण्यवान सच में।।
ऊँचा पर्वत पार्श्वनाथ हिल, नाम से जाना जाता है।
जिनशासन का सबसे पावन, तीरथ माना जाता है।।1।।

जब प्रत्यक्ष करें यात्रा, उस पुण्य का वर्णन क्या करना।
लेकिन प्रतिदिन भी परोक्ष में, गिरि का ध्यान किया करना।।
आँख बन्दकर करो कल्पना, मेरी यात्रा शुरू हुई।
प्रातःकाल चले सब यात्री, जय जयकारा शुरू हुई।।2।।

एक हाथ में छड़ी दूसरे, में चावल की झोली है।
ज्यादातर सब पैदल हैं, पर किसी-किसी की डोली है।।
कभी न चलने वाले भी, हिम्मत कर पर्वत चढ़ते हैं।
पारस प्रभु के पास पहुँचने, हेतु कदम बढ़ चलते हैं।।3।।

चढ़ते-चढ़ते आठ किलोमीटर, का पथ जब तय होता।
दायें हाथ तरफ तब इक, चौपड़ा कुंड दर्शन होता।।
वहाँ दिगम्बर जिनमंदिर, संस्कृति की अमिट धरोहर है।
पार्श्वनाथ चन्द्रप्रभु बाहूबलि की मूर्ति मनोहर हैं।।4।।

उस मन्दिर में रुककर अपने, प्रभु का दर्शन कर लेना।
सुन्दर बनी धर्मशाला में, इच्छा हो तो ठहर लेना।।
मंदिर दर्शन करके फिर, यात्रा प्रारंभ करो अपनी।
बायें हाथ चलो चढ़ कर जहाँ, गौतम स्वामी टोंक बनी।।5।।

यहाँ पहुँचकर ठंडी-ठंडी, हवा थकान मिटाती है।
गणधर चरण वन्दना से, यात्रा की शक्ती आती है।।
प्रथम टोंक यह हुई पास में, दुतिय टोंक कुंथू जिन की।
तीर्थंकर क्रम में यह पहली, टोंक नमूँ कुंथु प्रभु की।।6।।

इन टोंकों के दर्शन से, उपवास का फल प्रारंभ हुआ।
त्रय प्रदक्षिणा देने से, आगे शुभ गति का बंध हुआ।।
शुभ भावों से आगे बढ़कर, टोंक तीसरी आती है।
श्रीनमिनाथ जिनेश्वर की, वन्दना सहज हो जाती है।।7।।

चौथा नाटक कूट तीर्थंकर, अरहनाथ का आया है।
जहाँ करोड़ों मुनियों ने भी, तपकर शिवपद पाया है।।
वन्दन कर आगे बढ़ने से, मल्लिनाथ के चरण मिले।
आगे छठे टोंक पर श्री, श्रेयाँसनाथ पदकमल मिले।।8।।

इन सबका वन्दन कर मैंने, सिद्धशिला को नमन किया।
वहाँ विराजे सिद्धों को, अपने मन में स्मरण किया।।
थकना नहिं अब पुष्पदंत की, सप्तम टोंक पे चलना है।
आगे चढ़ने हेतु वहीं से, आतमशक्ती भरना है।।9।।

पुष्पदंत प्रभु के चरणों में, अर्घ्य चढ़ाकर नमन किया।
और चले आठवीं टोंक पर, पदमप्रभू की शरण लिया।।
नवमीं टोंक विराजे श्री, मुनिसुव्रत जिन के चरणकमल।
इन सबके पावन पद में, श्रद्धा से मैंने किया नमन।।10।।

हे भव्यात्मन्! अब दसवीं, चन्द्रप्रभ टोंक पे चलना है।
पहले दौड़-दौड़ कर उतरो, फिर ऊँचाई चढ़ना है।।
चन्द्रप्रभ मंदिर में जाकर, चरणवन्दना करना है।
अपने सारे सुख-दुख को, प्रभु चरण बैठकर कहना है।।11।।

अब ग्यारहवीं टोंक पे चलकर, ऋषभदेव को नमन करो।
गिरि कैलाश से मुक्त हुए, यहाँ उनके चरण चिन्ह प्रणमो।।
श्री शीतल जिनवर की है, बारहवीं टोंक प्रसिद्ध कही।
मन-वच-तन से वन्दन कर, पाओ यात्रा का पुण्य सही।।12।।

श्री अनंत तीर्थंकर का, तेरहवाँ कूट स्वयंभू है।
उनके चरणों में श्रद्धायुत, शीश झुकाकर वन्दूँ मैं।।
संभव जिनवर का चौदहवाँ, धवलकूट माना जाता।
वासुपूज्य जिनका पन्द्रहवां, टोंक सभी को सुखदाता।।13।।

इनको वन्दन कर आगे, अभिनन्दन प्रभु के पास चलो।
बन्दर चिन्ह सहित उन प्रभु की, टोंक पे बन्दर से न डरो।।
अभिनन्दन के चरणों में, कर नमन चलो जलमंदिर तक।
चढ़ो वहाँ से जहाँ है गौतम, गणधर प्रभु की टोंक प्रथम।।14।।

फिर सत्रहवीं टोंक से अपनी, अगली यात्रा करना है।
धर्मनाथ प्रभु के चरणों में, नमन सभी को करना है।।
सुमतिनाथ का अट्ठारहवाँ, टोंक है अविचल कूट कहा।
नौ करोड़ बत्तीसलाख, उपवास का फल मिलता है यहाँ।।15।।

उन्निसवाँ है टोंक शांतिजिन, का जो यहाँ से मोक्ष गये।
नौ करोड़ से अधिक मुनी, इस कुंदकूट से मोक्ष गये।।
शांतिनाथ के संग सब मुनियों, को श्रद्धा से नमन किया।
पुनः बीसवीं टोंक पे जाकर, वीरप्रभू की शरण लिया।।16।।

श्री सुपार्श्व तीर्थंकर इक्कीसवीं टोंक पर राजे हैं।
कहते हैं यहाँ की मिट्टी से, रोग सभी नश जाते हैं।।
इनको वंदन करके पास में, विमलनाथ की टोंक चलो।
बाइसवीं इस टोंक को नमकर, अजितनाथ के निकट चलो।।17।।

थके कदम से तेइसवीं इंस, टोंक का वंदन कठिन तो है।
लेकिन यात्रा पूरी करने, का शुभ भाव हृदय में है।।
धीरे-धीरे चढ़कर आखिर, अजितनाथ तक पहुँच गये।
उन चरणों में नमन किया फिर, नेमिनाथ जी प्राप्त हुए।।18।।

इस चौबिसवीं टोंक पे नेमीनाथ चरण को नमन किया।
पारसनाथ प्रभू पाने हेतू फिर मैंने गमन किया।।
स्वर्णभद्र यह टोंक है अंतिम, यात्रा पूर्ण यहाँ होती।
पार्श्वनाथ की पूजन करके, मन सन्तुष्टि यहाँ होती।।19।।

कुछ क्षण ध्यान करो फिर नीचे, गुफा में स्थित चरण नमो।
खुशी-खुशी वन्दना पूर्ण कर, पर्वत से नीचे उतरो।।
यही वन्दना आत्मा की, भव्यत्व शक्ति बतलाती है।
तभी "चन्दनामती" सभी में, भक्ति स्वयं आ जाती है।।20।।

भगवन् ! इस सम्मेदशिखर का, पुनः पुनः दर्शन पाऊँ।
यही भावना है मन में, सिद्धों के गुण में रम जाऊँ।।
इसी क्षेत्र से कभी मुझे, निर्वाण धाम भी मिल जावे।
सिद्ध भक्ति मेरे जीवन में, सिद्ध अवस्था दिलवाये।।21।।

कुण्डलपुराष्टकम्

शिखरिणी छन्द–

(1)

न याचेऽहं स्वर्गं विविध सुखभोगैर्विलसितम्,
प्रभुत्वं राज्यं वा न मम मनसे प्रीतिजनकम्।
विदेहे देशे वा भ्रमणममि मह्यं श्रमकरम्,
निवासो स्यान्नित्यं सुजनशरणे कुण्डलपुरे।।

(2)

महावीरो जातो महति नगरे कुण्डलपुरे,
यदीया माताऽऽसीत् विमलचरिता सौम्यत्रिशला।
पितां सिद्धार्थोऽभून्नरपतिवरो नीतिकुशलः,
महावीरो वीरो हरतु घनजाड्यं मम मतेः।।

(3)

स्वमित्रैः सार्धं यः शिशुवयसि क्रीडासु निरतः,
सदा विद्याभ्यासे सुरगुंरुरिवासीन्मति निधिः।
सुरो सर्पो भूत्वा न भय विकलं वीरमकरोत्,
प्रभुर्वीरो धीरो हरतु मम चित्ताद् भवभयम् ।।

(4)

कुमारावस्थायां विषय विमुखोऽभून्नृपसुतः,
विरक्तो भोगेभ्यो भवति जलजं वारिणि यथा।
न बद्धुं शक्तास्तं स्वजनसकलाः सौधविभवैः,
महावीर स्वामी भवतु जगते मंगलकरः।।

(5)

तपस्तप्तुं त्यक्त्वा जनकसदने राज्य विभवान्,
अगच्छत्कान्तारं सकलजनरुद्धोऽपि बहुशः।
अकार्षीन्मोक्षार्थी बहुकठिनचर्यां हि तपसाम्,
कृपाभिर्वीरस्य प्रवहतु मनःशान्तिसरिता।।

(6)

महावीरो जातस्त्रिभुवनपतिः कुण्डलपुरे,
धरित्री यत्रत्या जयति वरदा गौरवमयी।
समस्तैवेयं कुण्डलपुरधरा पावनतमा,
प्रभोः पादाम्भोजैः सुरभितकणा स्पर्शसुखदा।।

(7)

वरिष्ठा साध्वी सा प्रमुखगणिनी ज्ञान सु मती,
विहारं कुर्वन्ती विहितचरणा कुण्डलपुरे,
दशां दृष्ट्वा जाता मनसि विकला तीर्थविषये,
तदीयैर्निर्देशैः नयनसुखदं क्षेत्रमभवत् ।।

(8)

कृतैः कायाकल्पैः रमयति मनः क्षेत्रमधुना,
महन्नन्द्यावर्ते नवलरचनाः सन्ति रुचिराः।
प्रबन्धो यात्रिभ्यां विपुलसुविधादानकुशलः,
सुपुण्यानां प्राप्तिः जनननगरी दर्शनफलम् ।।

-डॉ. प्रकाशचंद जैन, साहिबाबाद (उ.प्र.)

गौतम गणधर स्वामी स्तुति

रचयित्री-गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी

–रोला छंद –

जय जय गणधर देव, जय जय गुणगण स्वामी।
महावीर जिनदेव, समवसरण में नामी।।
जय जय विघ्न समूह, नाशक विश्व प्रसिद्धा।
सप्तऋद्धि परिपूर्ण, चार विज्ञान समृद्धा।।1।।

इन्द्रभूति तुम नाम, महाविभूति प्रदाता।
ब्राह्मण कुल अवतंस, गौतम गोत्र विख्याता।।
शास्त्र महोदधि तीर्ण, पांच शतक तुम छात्रा।
तुम सम ही दो भ्रात, गर्वित सहित सुछात्रा।।2।।

छ्यासठ दिन पर्यंत, प्रभु की खिरी न वाणी।
सौधर्मेंद्र उपाय, कीनो अति सुखठानी।।
गौतमशाला मांहि, वृद्धरूप धर आया।
तुम सब विद्याधीश, इससे तुम तक आया।।3।।

मेरे गुरु महावीर, आतम ध्यान लगाये।
भूल गया मैं अर्थ, जो जो श्लोक पढ़ाये।।
यदि दो अर्थ बताय, तो तुम शिष्य बनूँ मैं।
नहिं तो होवो शिष्य, मुझ गुरु के ये चहूँ मैं।।4।।

त्रैकाल्यं इत्यादि, जब यह श्लोक पढ़ा है।
अर्थ बोध से हीन, मन आश्चर्य बढ़ा है।।
चलो गुरू के पास, मैं शास्त्रार्थ करूँगा।
तुम हो छात्र अजान, गुरु से अर्थ कहूँगा।।5।।

उभय भ्रात के साथ, सब शिष्यों को लेके।
चले इंद्र के साथ, समवसरण अवलोके।।
मानस्तंभ निहार, मान गलित हुआ सारा।
वचन "जयतु भगवान्" स्तुति रूप उचारा।।6।।

निज मिथ्यात्व विनाश, जिनदीक्षा को लीना।
दिव्यध्वनि तत्काल, प्रगटी भवि सुख दीना।।
द्वादशांगमय ग्रंथ, गौतम गुरु ने कीने।
गणधर पद को पाय, सब ऋद्धी धर लीने।।8।।

वीर प्रभू निर्वाण, के दिन केवल पायो।
इन्द्र सभी मिल आय, गंधकुटी रचवायो।।
केवलज्ञान कल्याण, पूजा इन्द्र रचे हैं।
केवलज्ञान महान, लक्ष्मी को भी जजे हैं।।8।।

इसी हेतु सब लोग, दीपावली निशा में।
गणपति लक्ष्मी देवि, पूजें धनरुचि मन में।।
बारह वर्ष विहार, भवि उपदेश दिया है।
पुनः अघाति विनाश, मोक्ष प्रवेश किया है।।9।।

गणधर वंदन सत्य, सर्वसंपदा देवे।
धन धान्यादि पूर, मोक्ष संपदा देवे।।
इस हेतू हम आज, गणधर चरण नमे हैं।
"केवलज्ञान" प्रकाश, हेतू पद प्रणमें हैं।।10।।

–दोहा –

चौबीसों जिनराज की, गणधर गणना जान।
चौदह सौ बावन कही, तिनपद नमूँ महान् ।।11।।

जो वन्दें गणधर चरण, करें विघ्नघन हान।
जग के सब सुख भोग के, क्रम से लें निर्वाण।।12।।

BARAH-BHAVNA

[TWELVE ANUPREKSHAS]

By : Aryika Chandnamati

(Tune - Chalat Musafir Moh liyo Re......)

I'm praying to you Jinavar deva!
I'm praying to you
Praying to you, I'm saying to you-2
I'm praying to you Jinvar deva. I'm....
I did not know about my soul,
I could not think about myself.
So tell me that path deva.......
I'm praying to you........

1. ANITYA BHAVNA

All things are momentary in world,
Everybody doing the birth and death.
It is also nature of Universe......
I'm praying to you.........1

2. ASHARAN BHAVNA

Unprotected are the souls of creatures
They are feeling fruitition of Karmas.
Any body doesn't help here.......
I'm praying to you.........2

3. SANSAR BHAVNA

Soul moves in Universe from eternal,
And could not attain true happiness.
Now I want ending sorrow
I'm praying to you........3

4. EKATVA BHAVNA

I came alone and will go alone too,
There is neither any friend nor enemy.
None takes my Manifold sufferings......
I'm praying to you.....4

5. ANYATVA BHAVNA

Soul is separate from my body,
All relatives are different from me,
I think, my soul is as God.....
I'm praying to you....5

6. ASHUCHI BHAVNA

Although my soul is so sacred,
But He became impure by Karmas.
Please bless me to get pure soul...
I'm praying to you.....6

7. ASHRAV BHAVNA

The inflow of Karmas grows my Universe,
And it also originates the Passions.
Sacrad and sinful kinds of Ashravas...
I'm praying to you....7

8. SAMVAR BHAVNA

The inflow of Karmas stopped where,
That condition is known by Samvar.
I want to attain this manner.....
I'm praying to you....8

9. NIRJARA BHAVNA

After the fruitition of those Karmas,
Dissociation of them then takes place.
Two kinds of this holy Nirjara.....
I'm praying to you....9

10. LOK BHAVNA

Universe is situated from eternal,
Which is divided in three Lokas.
We are wandering without knowledge....
I'm praying to you...10

11. BODHIDURLABHA BHAVNA

Human life is the best than all lives,
But difficult is, to attain Ratnatraya.
Give me that Right Path, deva......
I'm praying to you....11

12. DHARMA BHAVNA

Religion is the nature of thing, say Granthas,
I want to receive nature of the soul.
Then, I will get Salvation........
I'm praying to you...12
These are called as twelve Anupreksha,
Meditated by all great persons.
"Chandnamati" wants to get them......
I'm praying to you..

भगवान महावीर का बारहमासा

रचयित्री–आर्यिका चन्दनामती

(तर्ज–रामजी की निकली सवारी......)

महावीर का बारहमासा,
सुनें हम मन में ले के आशा-आशा।
एक ओर राग था, एक ओर वैराग्य,
वैराग्य से जीवन को प्रकाशा।
महावीर का बारहमासा।।टेक.।।

मधुमास बन गये सब मास जिनके।
मन में हुआ जब वैराग्य प्रभु के।।
कुण्डलपुरी की धरती है पावन।
उनमें जहाँ पर महावीर भगवन।।
बन ब्रह्मचारी, दीक्षा स्वीकारी,
निज ज्ञान से जिनने जग को प्रकाशा।
महावीर का बारहमासा.......।।1।।

शुभ चैत्र में जन्मे, महावीर स्वामी।
अक्षय बना वह, मासों का स्वामी।।
होली का रंग चढ़ा वीरा के तन पर।
भाई थी भावना, जब सोलहकारण।।
माँ त्रिशला ने देखे, सोलह सपने,
सिद्धार्थ पितु ने फल को विकासा।
महावीर का बारहमासा.......।।2।।

वैशाख में बने कैवल्यज्ञानी।
गणधर मिले बिन थे मौन ध्यानी।।
बैशाख को ज्ञान का मास मानो।
महावीर की गुण गाथा बखानो।।
जिनवर चलें अधर, पगतल थे स्वर्ण कमल,
समवसरण नभ में अद्भुत बना था।
महावीर का बारहमासा.........।।3।।

शुभ ज्येष्ठ का मास अति उष्ण माना।
महावीर ने तप करने को ठाना।।
निज तप से कितने पतितों को तारा।
यह मास तप के लिए समझो प्यारा।।
सबसे बड़ा मास, मासों में यह खास,
वीरा ने इसको निज में प्रकाशा।
महावीर का बारहमासा.........।।4।।

आषाढ़ में आष्टान्हिक परब है।
निज ध्यान में निश्चल वीर प्रभु हैं।।
माँ त्रिशला के सपनों का मास है यह।
सिद्धार्थ ने जिनका फल था बताया।।
चौमासा का मास, जग में है विख्यात,
लेकिन जिनेन्द्र प्रभु करते न चौमासा।
महावीर का बारहमासा........।।5।।

श्रावण की एकम दिन वीर शासन।
दिव्यध्वनी झेलने आए गौतम।।
युग का प्रथम मास वह माना जाता।
महावीर का जुड़ गया उससे नाता।।
छ्यासठ दिनों बाद, ओंकार का नाद,
गूंजा तभी हुआ श्रुत का विकासा।
महावीर का बारहमासा...........।।6।।

पर्वों का महिना है भाद्रपद का।
महावीर ने पर्व का फल चखा था।।
इस मास में व्रत तप करते हैं सब।
महावीर वाणी सुनते थे सुर नर।।
सोलह सुकारण, दशधर्म लक्षण,
उत्तम क्षमावाणी पर्व आता।
महावीर का बारहमासा...........।।7।।

आश्विन शरद ऋतु प्रारंभ करता।
यह मास शारद का पक्ष धरता।।
महावीर की दिव्यध्वनि खिरती रहती।
भव्यों के मन को पावन वो करती।।
जिनवर की वाणी, है कल्याणी,
सुनकर सभी ने निज को प्रकाशा।
महावीर का बारहमासा......।।8।।

कार्तिक अमावस निर्वाण तिथि है।
प्रभु वीर निर्वाण थल पावापुरि है।।
निर्वाण लाडू चढ़ा उस दिवस पर।
तभी से चला वीर निर्वाण संवत् ।।
दीवाली उत्सव, है वह महोत्सव,
देवों ने धरती पे जिसको प्रकाशा।
महावीर का बारहमासा.........9।।

मगशिर वदी दशमी दीक्षा तिथि है।
प्रभु ने बताई जब तप की विधि है।।
तप लीन वीरा की भक्ति करें हम।
तप करने की कुछ शक्ती लहें हम।।
जा ज्ञातृवन में, कुछ सोचा मन में,
वीरा ने तप से निज का प्रकाशा।
महावीर का बारहमासा.....।।10।।

सर्दी भयंकर थी पौष में जब।
महावीर की काया तब भी निश्चल।।
तपवृद्धि से नाम सार्थक किया है।
श्री वीर अतिवीर का पद लिया है।
लेना हो शक्ती, तो कर लो भक्ती,
प्रभु ने सभी कर्म तप से विनाशा।
महावीर का बारहमासा......।।11।।

आया बसन्तोत्सव माघ महिना।
प्रभु ने बसंती तप वस्त्र पहना।।
मनपर्ययी ज्ञान था उनका गहना।
थे मौन फिर भी उनका था कहना।।
नहिं भोग में सुख, है योग में सुख,
अतएव सबने उसको ही साधा।
महावीर का बारहमासा.......।।12।।

फाल्गुन में आष्टान्हिक पर्व आता।
महावीर प्रभु से इसका भी नाता।।
इस मास में भी की थी तपस्या।
फिर ज्ञान के बाद त्रैलोक्य देखा।।
बारह महीने, यूँ देखे प्रभु ने,
हो गयी देखो, सफल वीर गाथा।
महावीर का बारहमासा.........।।13।।

पच्चीस सौ सत्ताइस वीर संवत।
तिथि आई श्रावण शुक्ला इकादशि।।
आता इसी मास में रक्षा बन्धन।।
यह "चंदनामती" महावीर का युग।।
छब्बीस सौवाँ, प्रभु जन्म उत्सव,
भक्ती में रचा वीर का बारहमासा।
महावीर का बारहमासा......।।14।।

विनयांजलि

आज भी वह दिन स्मृति में तरोताजा है, जब अद्वितीय प्रतिभा की धनी परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने भगवान महावीर 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव वर्ष के अंतर्गत राजधानी दिल्ली में 26 महामंडल बनवाकर **"विश्वशांति महावीर विधान"** का विराट आयोजन किया था। तब तक ऐसा लगता था कि माताजी की प्रेरणा से ऐसे ही सुन्दर और ऐतिहासिक कार्य होते हैं, परन्तु अचानक सुनने में आया कि माताजी भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) की ओर मंगल विहार करने वाली हैं, तब मन में कुछ हर्ष और कुछ दुःख हुआ, प्रसन्नता इसलिए कि शासनपति भगवान महावीर की वर्षों से उपेक्षित एवं वैभवहीन हो चुकी जन्मभूमि पुनः अपना वास्तविक स्वरूप पाकर वैभवयुक्त हो जायेगी और दुःख इसलिए कि पूज्य माताजी हम लोगों को छोड़कर चली जाएंगी, तो हमें मार्गदर्शन कौन देगा। आखिर देखते ही देखते वह घड़ी आ गई और पूज्य माताजी दिल्ली से विहार करके कुण्डलपुर पहुँच गईं। वहाँ खूब तेजी से विकासकार्य के नाम पर अनेक आकर्षक निर्माण हो गये।

कहने का आशय यह है कि पूज्य माताजी सचमुच ऐतिहासिक एवं आगमानुसार योग्य कार्यों की जननी है, हम सभी उनसे प्रेरणा लेकर सदैव अच्छे कार्यों में जीवन लगाना चाहिए और धर्म की रक्षा में सतत् संलग्न रहना चाहिए।

-सुनील जैन सर्राफ, सदर बाजार-मेरठ (उ.प्र.)

* * *

गुर्वावली लिख्यते

जैवंत-दयावंत सुगुरू देव हमारे।
संसारविषम खारसों जिनभक्त उधारे।।टेक.।।

जिनवीर के पीछे यहाँ निर्वान के थानी।
बासठ बरस में तीन भये केवलज्ञानी।।
फिर सौ बरस मैं पाँच श्रुत केवली भये।
सर्वांग द्वादशांग के उमंग रस लये।।जैवंत.1।।

तिस बाद वर्ष एकशतक और तिरासी।
इसमैं हुयेदशपूर्व ग्यारै अंग के भाषी।।
ग्यारै महामुनीश ज्ञानदानके दाता।
गुरूदेव सोई देहिंगे भविवृंदको साता।।जैवंत.2।।

तिस बाद वर्ष दोय शतक बीसके माहीं।
मुनि पांच ग्यारै अंगके पाठी हुए ह्यांहीं।।
तिसबाद वरष एकसौ अठारमें जानी।
मुनि चार हुए एकआचारांगके ज्ञानी।।जैवंत.3।।

तिसबाद हुये हैं जु सुगुरु पूर्वके धारक।
करुणानिधान भक्तको भवसिंधु उधारक।।
करकंजतैं गुरु मेरे ऊपर छांह कीजिए।
दुख द्वंद्वको निकंदके आनंद दीजिए।।जैवंत.4।।

जिनवीरके पीछेसोंवरष छहसौ तिरासी।
तबतक रहे इक अंगके गुरुदेव अभ्यासी।।
तिसबाद कोई फिर न हुए अंग के धारी।
पर होते भये महा सुविद्वान उदारी।।जैवंत.5।।

जिनसों रहा इस कालमें जिनधर्म का शाका।
रोपा है सात भंग का अभंग पताका।।
गुरुदेव नयन्धर को आदि दे बड़े नामी।
निरग्रन्थ जैनपंथ के गुरूदेव जो स्वामी।।जैवंत.6।।

भाषों कहां लों नाम बड़ी बार लगैगा।
प्रणाम करों जिससे बेड़ा पार लगैगा।।
जिसमें से कछुइक नाम सूत्रकारके कहों।
जिन नामके प्रभाव से परभाव को दहों।।जैवंत.7।।

तत्त्वार्थसूत्र नामि उमास्वामी किया है।
गुरुदेव ने संक्षेपसे क्या काम किया है।।
जिसमें अपार अर्थने विश्राम किया है।
बुधवृंद कर जोर से प्रणाम किया है।।जैवंत.8।।

वह सूत्र है इस काल में जिनपंथ की पूंजी।
सम्यक्त्व ज्ञानभाव है जिस सूत्र की कूंजी।।
लड़ते हैं उसी सूत्रसों परवाद के मूंजी।
फिर हारके हट जाते हैं इक पक्ष के लूंजी।।जैवंत.9।।

स्वामी समंतभद्र महाभाष्य रचा है।
सर्वंग सात भंग का उमंग मचा है।।
परवादियों का सर्वगर्व जिससे पचा है।
निर्वान सदनका सोई सोपान जचा है।।जैवंत.10।।

अकलंकदेव राजवारतीक बनाया।
परमान नय निक्षेपसों सब वस्तु बताया।।
श्लोक बारतीक विद्यानंदजी मंडा।
गुरुदेव ने जडमूल सो पाखंड को खंडा।।जैवंत.11।।

गुरु पूज्यपाद जी हुए मरजादके धोरी।
सर्वार्थसिद्धि सूत्र की टीका जिन्हों जोरी।।
जिसके लखेसों फिर न रहे चित्तमें भरम।
बस जीव को भाषै है स्व पर भाव का मरम।।जैवंत.12।।

धरसेन गुरुजी हरो भविवृंदकी व्यथा।
अग्रायणीय पूर्व का कुछ ज्ञान जिन्हें था।।
तिनके हुए दो शिष्य पुष्पदंत भूतबली।
धवलादिकों का सूत्र किया जिससे मग चली।।जैवंत.13।।

गुरु और ने उस सूत्र का सब अर्थ लहा है।
तिन धवल महाधवल जयसुधवल कहा है।।
गुरु नेमिचंद्र जी हुए धवलादिके पाठी।
सिद्धान्त के चक्रीशकी पदवी जिन्हों गांठी।।जैवंत.14।।

तिन तीनों ही सिद्धान्त के अनुसारसों प्यारे।
गोमट्टसार आदि सुसिद्धांत उच्चारे।।
यह पहिले सुसिद्धांतका विरतंत कहा है।
अब और सुनो भावसों जो भेद महा है।।जैवंत.।।15।।

गुणधर मुनीशने पढ़ा था तीजा पराभृत।
ज्ञानप्रवाद पूर्व में जो भेद हैं आश्रित।।

गुरु हस्तिनागजी ने सोई जिनसौं लहा है।
फिर तिनसों, यतीनायकने मूल गहा है।।जैवंत.।।16।।

तिन चूर्णिका स्वरूप तिस्से सूत्र बनाया।
परमान छै हजार यों सिद्धांत में गाया।।
तिसको किया उद्धरण समुद्धरण जु टीका।
बारह हजार के प्रमान ज्ञानकी टीका।।जैवंत.17।।

तिसही से रचा कुंदकुंदजी ने सुशासन।
जो आत्मीक पर्मधर्म का है प्रकाशन।।
पंचास्तिकाय समयसार सारप्रवचन।
इत्यादि सुसिद्धांत स्यादवाद का रचन।।जैवंत.18।।

सम्यक्त्वज्ञान दर्श सुचारित्र अनूपा।
गुरुदेव ने अध्यात्मिक धर्म निरूपा।।
गुरुदेव अमीइंदुने तिनकी करी टीका।
झरता है निजानंद अमीवृंद सरीका।।जैवंत.19।।

रचनानुवेदभेद के निवेद के करता।
गुरुदेव जे भये हैं पापतापके हरता।।
श्रीबट्टकेर देवजी वसुनंदजी चक्री।
निरग्रंथ ग्रंथ पंथ के निरग्रंथ के शक्री।।जैवंत.20।।

योगीन्द्रदेव ने रचा परमात्मप्रकाश।
शुभचंद्र ने किया है ज्ञान आरणव विकास।।
की पद्मनंदजी ने पद्मनंदि पचीसी।
शिवकोटिने आराधना सुसार रचीसी।।जैवंत. 21।।

दोसंध तीनसंध चारसंध पांचसंध।
षटसंध सातसंधलों गुरु रचा है प्रबंध।।
गुरु देवनंदिने किया जैनेंद्र व्याकरन।
जिस्से हुआ परवादियों के मानका हरन।।जैवंत.22।।

गुरुदेव ने रची हे रुचिर जैनसंहिता।
वरनाश्रमादि की क्रिया कहैं हैं जु संहिता।।
वसुनंदि वरनंदि यशोनंदि संहिता।
इत्यादि बनी हैं दशों प्रकार संहिता।।जैवंत.23।।

परमेय कमल मारतंड के हुए कर्ता।
प्रभेन्दु माणिक्यनंदि नयप्रमाण के भर्ता।।
जैवंत सिद्धसेन सुगुरु देव दिवाकर।
जै वादिसिंह देवसिंह जैति यशोधर।।जैवंत 24।।

श्रीदत्त काणभिक्षु और पात्रकेशरी।
श्रीवज्रसूर महासेन श्रीप्रभाकरी।।
शिरी जटाचार गुरु वीरसेन हैं।
जैसेन शिरीपाल मुझे कामधेन हैं।।जैवंत. 25।।

इन एक-एक गुरु ने जो ग्रंथ बनाया।
कहि कौन सकै नाम कोई पार न पाया।।
जिनसेन गुरू ने महापुराण रचा है।
मरजाद क्रियाकांड का सब भेद खजा है।।जैवंत.26।।

गुणभद्र गुरू ने रचा उत्तरपुरान को।
सो देव गुरूजी कल्याण थान कौ।।
रविषेण गुरूजी ने रचा राम का पुरान।
सो मोहतिमिर हनने को भानुके समान।।जैवंत.27।।
पुन्नाटगणविषै हुए जिनसेन दूसरे।
हरिवंश को बना के दास आसको भरे।।
इत्यादि जे वसुबीस सुगुण मूल के धारी।
निर्ग्रंथ हुए हैं गुरू जिनग्रंथ के कारी।।जैवंत. 28।।

वंदों तिन्हें मुनि जे हुए कवि काव्य करैया।
वंदामि गमक साधु जो टीका के धरैया।।
वादी नमों मुनिवाद में परवाद हरैया।
गुरु वागमीकको नमों उपदेशकरैया।।जैवंत. 29।।

ये नाम सुगुरु देवका कल्याण करै है।
भविवृंदका तत्काल ही दुख द्वंद्व हरै है।।
धनधान्य ऋद्धि सिद्धि नवों निद्धि भरे हैं।
आनंद कंद देहि सभी विघ्न टरै है।।जैवंत.30।।

इह कंठ में धारै जो सुगुरु नाम की माला।
परतीतसों उरप्रीतिसों ध्यावै जु त्रिकाला।।
इहलोक का सुखभोग सो सुरलोक मैं जावै।
नरलोक में फिर आयके निरवान को पावै।।
जैवंत दयावंत सुगुरुदेव हमारे।
संसार बिषमखारसों जिन भक्त उधारे।।जैवंत.31।।

इति

राजगृही तीर्थ वंदना

रचयित्री—आर्यिका चन्दनामती

शेरछन्द

मुनिसुव्रतेश जन्मभूमि को प्रणाम है।
श्रीराजगृही तीर्थ की महिमा महान है।।टेक.।।
यूँ तो जगत में जन्मते हैं प्राणि अनन्ते।
मरते हैं प्रतिक्षण भी यहाँ प्राणि अनन्ते।।
मुनिसुव्रतेश जन्मभूमि को प्रणाम है।
श्रीराजगृही तीर्थ की महिमा महान है।।1।।
एकेन्द्रि से पंचेन्द्रि तक जो जीव आतमा।
उन सबमें छिपा शक्ति से भगवान आतमा।। मुनिसुव्रतेश..।।2।।
भगवान आतमा प्रगट पुरुषार्थ से होता।
पुरुषार्थ बिना मात्र जग में खाना है गोता।। मुनिसुव्रतेश..।।3।।
तीर्थंकरों का सिद्धपद निश्चित है यद्यपी।
फिर भी तपस्या करके वे पाते हैं शिवगती।। मुनिसुव्रतेश..।।4।।
मैंने भी मनुष जन्म जो पाया अमोल है।
वह मोक्षमार्ग के लिए सचमुच ही मूल है।। मुनिसुव्रतेश..।।5।।
इस काल में निर्वाणपद की प्राप्ति नहीं है।
पर जन्म सार्थ करने की युक्ति यहीं है।। मुनिसुव्रतेश..।।6।।
पुरुषार्थ के द्वारा प्रथम तो कार्य शुभ करें।
जीवन में सदाचार से सारे अशुभ टलें।। मुनिसुव्रतेश..।।7।।
प्रभु जन्मभूमि वंदना का अर्थ है यही।
आत्मा में रागद्वेष अल्प होवें शीघ्र ही।। मुनिसुव्रतेश..।।8।।
इस राजगृही में जनम मुनिसुव्रतेश का।
प्रभु वीर की खिरी यहीं पे प्रथम देशना।। मुनिसुव्रतेश..।।9।।
है पंच पहाड़ी में एक विपुलाचल गिरी।
जिस पर बनी रचना है प्रभू गंधकुटी की।। मुनिसुव्रतेश..।।10।।
गणधर सुधर्मा ने यहीं से सिद्धपद लिया।
कुछ मुनि के सिद्धपद से सिद्धक्षेत्र यह हुआ।। मुनिसुव्रतेश..।।11।।
जिननाथ मुनिसुव्रतेश की बड़ी प्रतिमा।
श्री ज्ञानमती मात प्रेरणा की है महिमा।। मुनिसुव्रतेश..।।12।।
भगवान श्री जिनेन्द्र से विनती यही मेरी।
मिट जावे "चन्दनामती" संसार की फेरी।। मुनिसुव्रतेश..।।13।।

* * *

पावापुरी सिद्धक्षेत्र वंदना

रचयित्री – आर्यिका चन्दनामती

(स्रग्विणी छन्द)

वंदना मैं करूँ पावापुर तीर्थ की, जो है निर्वाणभूमी महावीर की।
अर्चना मैं करूँ पावापुर तीर्थ की, जो है कैवल्यभूमी गणाधीश की।।
जैनशासन के चौबीसवें तीर्थंकर, जन्मे कुण्डलपुरी राजा सिद्धार्थ घर।
रानी त्रिशला ने सपनों का फल पा लिया, बोलो जय त्रिशलानंदन महावीर की।।1।।
वीर वैरागी बनकर युवावस्था में, दीक्षा ले चल दिये घोर तप करने को।
मध्य में चन्दना के भी बंधन कटे, बोलो कौशाम्बी में जय महावीर की।।2।।
प्रभु ने बारह बरस तक तपस्या किया, केवलज्ञान तब प्राप्त उनको हुआ।
राजगिरि विपुलाचल पर प्रथम दिव्यध्वनि, खिर गई बोलो जय जय महावीर की।।3।।
तीस वर्षों में प्रभु का भ्रमण जो हुआ, सब जगह समवसरणों की रचना हुई।
पावापुर के सरोवर से शिवपद लिया, बोलो जय पावापुर के महावीर की।।4।।
मास कार्तिक अमावस के प्रत्यूष में, कर्मों को नष्ट कर पहुँचे शिवलोक में।
तब से दीपावली पर्व है चल गया, बोलो सब मिल के जय जय महावीर की।।5।।
पावापुर के सरोवर में फूले कमल, आज भी गा रहे कीर्ति प्रभु की अमर।
वीर प्रभु के चरण की करो अर्चना, बोलो जय सिद्ध भगवन् महावीर की।।6।।
पंक में खिल के पंकज अलग जैसे हैं, मेरी आत्मा भी संसार में वैसे है।
उसको प्रभु सम बनाने का पुरुषार्थ कर, जय हो अंतिम जिनेश्वर महावीर की।।7।।
पूरे सरवर के बिच एक मंदिर बना, जो कहा जाता जल मंदिर है सोहना।
पारकर पुल से जाकर करो वंदना, बोलो जय पास जाकर महावीर की।।8।।
लोग प्रतिवर्ष दीपावली के ही दिन, पावापुर में मनाते हैं निर्वाणश्री।
भक्त निर्वाणलाडू चढ़ाते जहाँ, बोलो उस भूमि पर जय महावीर की।।9।।
वीर के शिष्य गौतम गणीश्वर ने भी, पाया कैवल्यपद वीर सिद्धि दिवस।
पूजा महावीर के संग करो उनकी भी, जय हो गौतम के गुरु प्रभु महावीर की।।10।।
पावापुर में नमूँ वीर के पदकमल, और गौतम, सुधर्मा के गणधर चरण।
"चन्दनामति" चरणत्रय का वन्दन करो, बोलो जय रत्नत्रयपति महावीर की।।11।।

तीर्थंकर जन्मभूमि वंदना

(मंगलचतुर्विंशतिका)

रचयित्री – गणिनी ज्ञानमती

(अनुष्टुप् छंद)

अयोध्या मंगलं कुर्या-दनन्ततीर्थकर्तृणाम्।
शाश्वती जन्मभूमिर्या, प्रसिद्धा साधुभिर्नुता।।1।।

ऋषभोऽजिततीर्थेशोऽप्यभिनंदनतीर्थकृत्।
श्रीमान् सुमतिनाथश्चा-नन्तनाथजिनेश्वरः।।2।।

पंचतीर्थकृतां गर्भ-जन्मकल्याणकादिषु।
इन्द्रादिभिः सदा वंद्या, वंद्यते वंदयिष्यते।।3।।

संप्रति कालदोषेण, शेषास्तीर्थंकराः पृथक्।
संजातास्ता अपिजन्म-भूमयो मंगलं भुवि।।4।।

श्रावस्ती मंगलं कुर्यात्, संभवनाथजन्मभूः।
तनुतान्मे मनःशुद्धिं, भव्यानां भवहारिणी।।5।।

कौशाम्बी मंगलं कुर्यात्, पद्मप्रभस्य जन्मभूः।
जिनसूर्यो मनोऽब्जं मे, प्रफुल्लीकुरुतादपि।।6।।

वाराणसी जगन्मान्या, मंगलं तनुतान्मम।
जन्मभूमिः सुरैः पूज्या, सुपार्श्वपार्श्वनाथयोः।।7।।

चन्द्रपुरी सुरैर्मान्या, मंगलं कुरुतात्सदा।
चन्द्रप्रभजिनेंद्रस्य, जन्मभूर्जन्मपावनी।।8।।

काकंदी मंगलं कुर्यात्, पुष्पदन्तस्य जन्मभूः।
आनंदं तनुताद् भूमौ, सर्वमंगलकारिणी।।9।।

मंगलं कुरुतान्नित्यं, जन्मभूर्भद्रकावती।
शीतलस्य जिनेंद्रस्य, मनो मे शीतलं क्रियात्।।10।।

सिंहपुरी जगन्मान्या, मंगलं कुरुतान्मम।
श्रीश्रेयांसजिनेंद्रस्य, जन्मभूमिः शिवंकरा।।11।।

चंपापुरी जगद्वंद्या, मंगलं तनुताद् ध्रुवं।
वासुपूज्यजिनेंद्रस्य, जन्मभूमिर्नुतामरैः।।12।।

सा कंपिलापुरी नित्यं, मंगलं कुरुतान्मम।
मच्चित्तं विमलीकुर्यात्, विमलेश्वरजन्मभूः।।13।।

रत्नपुरी यतीन्द्राणां, मंगलं कुरुताच्च नः।
सद्धर्मवृद्धये भूयाद्, धर्मनाथस्य जन्मभूः।।14।।

हस्तिनागपुरी नित्यं, मंगलं तनुतान्मम।
शांतिकुंथ्वरतीर्थेशां, जन्मभूमिर्जगन्नुता।।15।।

या मिथिलापुरी शश्वत्, मंगलं कुरुतान्मम।
जन्मभूमिः प्रसिद्धाभूत्, मल्लिनाथनमीशयोः।।16।।

मंगलं संततं कुर्यात्, राजगृही सुजन्मभूः।
मुनिसुव्रतनाथस्य, दद्यान्मे सुव्रतं त्वसौ।।17।।

शौरीपुर्यर्द्धचक्र्याद्यैः, मान्या मे मंगलं क्रियात्।
इन्द्रादिभिः सदा वंद्या, नेमिनाथस्य जन्मभूः।।18।।

या कुण्डलपुरी पूज्या, मंगलं कुरुताद् भुवि।
जन्मभूमिः प्रसिद्धास्ति, महावीरस्य संप्रति।।19।।

राजधानीह सिद्धार्थ-भूपतेः साधुभिर्नुता।
नंद्यावर्तं च प्रासादं, रत्नवृष्ट्या सुमंगलम्।।20।।

चतुर्विंशतितीर्थेशां, षोडश जन्मभूमयः।
वंद्यास्ता मंगलं कुर्युः, घ्नन्तु जन्मपरम्परां।।21।।

दीक्षाज्ञानस्थलं पूज्यं, प्रयागश्चाहिच्छत्रकं।
संततं मंगलं कुर्यात्, पूर्णज्ञानर्द्धये भवेत् ।।22।।

कैलाशचंपापावोर्ज-यन्तसम्मेदशृंगिषु।
निर्वाणभूमयो यास्ताः, कुर्वन्तु मम मंगलम्।।23।।

पंचकल्याणकैः पूज्या, भूमिसरोवराद्रयः।
तास्तान् ज्ञानमती याचे, दद्युः सिद्धिं च मे ध्रुवम्।।24।।

तीर्थंकर जन्मभूमि तीर्थ वंदना

रचयित्री–आर्यिका चन्दनामती

शेर छन्द–

जय जय जिनेन्द्र जन्मभूमियाँ प्रधान हैं।
जय जय जिनेन्द्र धर्म की महिमा महान है।।
जय जय सुरेन्द्रवंद्य ये धरा पवित्र हैं।
जय जय नरेन्द्र वंद्य ये तीरथ प्रसिद्ध हैं।।1।।

मिश्री से जैसे अन्न में मिठास आती है।
वैसे ही पवित्रात्मा तीरथ बनाती हैं।।
हो गर्भ-जन्म-दीक्षा व ज्ञान जहाँ पर।
वे तीर्थ कहे जाते हैं आज धरा पर।।2।।

जिनवर जनम से पहले वहाँ इन्द्र आते हैं।
नगरी को सुसज्जित कर उत्सव मनाते हैं।।
सुंदर महल सजाया जाता है वहाँ पर।
जिनवर के पिता-माता रहते हैं वहाँ पर।।3।।

पहली जनमभूमि है नगरि तीर्थ अयोध्या।
शाश्वत जनमभूमी प्रभू की कीर्ति अयोध्या।।
इस युग में किन्तु पाँच जिनेश्वर वहाँ जन्में।
वृषभाजित अभीनंदन सुमति अनंत वे।।4।।

श्रावस्ती ने संभव जिनेन्द्र को जनम दिया।
कौशाम्बी में श्रीपद्मप्रभू ने जनम लिया।।
वाराणसी सुपार्श्व पार्श्व से पवित्र है।
श्रीचन्द्रपुरी चन्द्रप्रभू से प्रसिद्ध है।।5।।

काकन्दी को सौभाग्य मिला पुष्पदंत का।
है भद्रपुरी जन्मस्थल शीतल जिनेन्द्र का।।
श्रेयाँसनाथ से पवित्र सारनाथ है।
जिनशास्त्रों में जो सिंहपुरी से विख्यात है।।6।।

श्रीवासुपूज्य जन्मभूमि चम्पापुरी है।
कम्पिल जी विमलनाथ जिन की जन्मस्थली है।।
तीरथ रतनपुरी है धर्मनाथ की भूमी।
रौनाही से प्रसिद्ध है वह आज भी भूमी।।7।।

श्रीशांति कुंथु अरहनाथ हस्तिनापुर में।
जन्मे जिनेन्द्र तीनों त्रयलोक भी हरषे।।
मिथिलापुरी में मल्लि व नमिनाथ जी जन्मे।
तीर्थेश मुनिसुव्रत जी राजगृही में।।8।।

है जन्मभूमि शौरीपुर नेमिनाथ की।
महावीर से कुण्डलपुरी नगरी सनाथ थी।।
चौबीस जिनवरों की जन्मभूमि को नमूँ।
कर बार-बार वंदना सार्थक जनम करूँ।।9।।

श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा मिली।
कई जन्मभूमियों में नई ज्योति तब जली।।
उन प्रेरणा से जन्मभूमि वन्दना रची।
प्रभु जन्मभूमि तीर्थों की भक्ति मन बसी।।10।।

प्रभु बार-बार मैं जगत में जन्म ना धरूँ।
इक बार जन्मधार बस जीवन सफल करूँ।।
इस भाव से ही जन्मभूमि वन्दना करूँ।
निज भाव तीर्थ प्राप्ति की अभ्यर्थना करूँ।।11।।

यह भक्तिसुमन थाल है गुणमाल का प्रभु जी।
अर्पण करूँ है भावना यात्रा करूँ सभी।।
बस "चन्दनामती" की इक आश है यही।
संयम की ही परिपूर्णता जीवन की हो निधी।।12।।

कुण्डलपुर तीर्थ पूजा

रचयित्री – आर्यिका चन्दनामती

स्थापना (चौबोल छन्द)

महावीर प्रभु जहाँ जन्म ले, सचमुच बने अजन्मा हैं।
जिस धरती पर त्रिशला मां ने, एक मात्र सुत जनमा है।।
उस बिहार की कुण्डलपुर, नगरी को वन्दन करना है।
वन्दन कर उस तीरथ का, हर कण चन्दन ही समझना है।।

दोहा

आह्वानन स्थापना, सन्निधिकरण प्रधान।
अष्टद्रव्य का थाल ले, पूजा करूँ महान।।2।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीमहावीरजन्मभूमिकुण्डलपुरतीर्थक्षेत्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीमहावीरजन्मभूमिकुण्डलपुरतीर्थक्षेत्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीमहावीरजन्मभूमिकुण्डलपुरतीर्थक्षेत्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अष्टक (शंभु छंद)

जिनवर ने कर्मों की ज्वाला, समता के जल से शांत किया।
भक्तों ने ले जल की धारा, जिनवर का पद प्रक्षाल किया।।
महावीर प्रभू की ज़न्मभूमि, कुण्डलपुर तीर्थ का अर्चन है।
मेरी आत्मा भी तीर्थ बने, इस हेतु करूँ शत वन्दन मैं।।1।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीमहावीरजन्मभूमिकुण्डलपुरतीर्थक्षेत्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जहाँ प्रभु सन्मति को लखते ही, मुनियों की शंका दूर हुई।
जहाँ की चंदनसम माटी से, भव की बाधा निर्मूल हुई।।
महावीर प्रभू की जन्मभूमि, कुंडलपुर तीर्थ का अर्चन है।
मेरी आत्मा भी तीर्थ बने, इस हेतु करूँ शत वन्दन मैं।।2।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीमहावीरजन्मभूमिकुण्डलपुरतीर्थक्षेत्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु ने अक्षय पद पाने का, जिस धरती पर संकल्प लिया।
अक्षत के पुंज चढ़ा मैंने, उन प्रभु अर्चन का यत्न किया।।
महावीर प्रभू की जन्मभूमि, कुण्डलपुर तीर्थ का अर्चन है।
मेरी आत्मा भी तीर्थ बने, इस हेतु करूँ शत वन्दन मैं।।3।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीमहावीरजन्मभूमिकुण्डलपुरतीर्थक्षेत्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

महलों का सुख वैभव तज कर, जहाँ वीर बने वैरागी थे।
कर कामदेव पर विजय चले, शिवपथ के वे अनुरागी थे।।
महावीर प्रभू की जन्मभूमि, कुण्डलपुर तीर्थ का अर्चन है।
मेरी आत्मा भी तीर्थ बने, इस हेतु करूँ शत वन्दन मैं।।4।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीमहावीरजन्मभूमिकुण्डलपुरतीर्थक्षेत्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पम् निर्वपामीति स्वाहा।

देवों द्वारा लाया भोजन, महावीर सदा ही खाते थे।
क्षुधरोग विनाशन हेतु तथापी, वे निज काय तपाते थे।।
महावीर प्रभू की जन्मभूमि, कुण्डलपुर तीर्थ का अर्चन है।
मेरी आत्मा भी तीर्थ बने, इस हेतु करूँ शत वन्दन मैं।।5।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीमहावीरजन्मभूमिकुण्डलपुरतीर्थक्षेत्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मतिश्रुत व अवधि त्रय ज्ञान सहित, तो वीर प्रभू थे जन्म से ही।
मनपर्ययज्ञान हुआ प्रगटित, प्रभुवर के दीक्षा लेते ही।।
महावीर प्रभू की जन्मभूमि, कुण्डलपुर तीर्थ का अर्चन है।
मेरी आत्मा भी तीर्थ बने, इस हेतु करूँ शत वन्दन मैं।।6।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीमहावीरजन्मभूमिकुण्डलपुरतीर्थक्षेत्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु शुक्ल ध्यान की अग्नी में, कर्मों की धूप जलाते थे।
उनकी सौरभ पाने हेतु, प्रभु पास भक्तगण आते थे।।
महावीर प्रभू की जन्मभूमि, कुण्डलपुर तीर्थ का अर्चन है।
मेरी आत्मा भी तीर्थ बने, इस हेतु करूँ शत वन्दन मैं।।7।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीमहावीरजन्मभूमिकुण्डलपुरतीर्थक्षेत्राय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

महावीर प्रभू ने तप करके, कैवल्य महाफल पाया है।
भक्तों ने इच्छा पूर्ति हेतू, फल प्रभु चरणों में चढ़ाया है।।
महावीर प्रभू की जन्मभूमि, कुण्डलपुर तीर्थ का अर्चन है।
मेरी आत्मा भी तीर्थ बने, इस हेतु करूँ शत वन्दन मैं।।8।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीमहावीरजन्मभूमिकुण्डलपुरतीर्थक्षेत्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

निज अष्टकर्म के नाशक प्रभु की, अष्टद्रव्य से पूजन है।
"चन्दनामती" शिवपद हेतू, सन्मति से मेरा निवेदन है।।
महावीर प्रभू की जन्मभूमि, कुण्डलपुर तीर्थ का अर्चन है।
मेरी आत्मा भी तीर्थ बने, इस हेतु करूँ शत वन्दन मैं।।9।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीमहावीरजन्मभूमिकुण्डलपुरतीर्थक्षेत्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शेर छन्द

महावीर प्रभु की भक्ति की रसधार ज़ो बही।
उससे मनुज व देवों में सुमति प्रगट हुई।।
निज शांति व शीतल सहज अनुभूति मैं करूँ।
जिनवर का ज्ञान अंश मैं भी निज हृदय भरूँ।।1।। **शांतये शांतिधारा........**

निज ज्ञान के पुष्पों को बिखेरा जो प्रभू ने।
उसकी सुगन्ध ग्रहण कर ली बहुत जनों ने।।
भगवान मुझे यदि तेरे, गुण पुष्प मिल सकें।
तो मेरा मोक्षमार्ग बन्द, स्वयं खुल सके।।**दिव्य पुष्पांजलिः..........**

अथ कल्याणक अर्घ्य (शंभु छन्द)

कुण्डलपुर में सिद्धार्थ नृपति, निज राज्य का संचालन करते।
प्रियकारिणि त्रिशला रानी के संग, पुण्य का संपादन करते।।
आषाढ़ सुदी छठ तिथि में नंद्यावर्त, महल का भाग्य जगा।
जहाँ गर्भ कल्याणक हुआ वीर का, मैं पूजूँ वह धाम महा।।1।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीमहावीरजिनेन्द्रगर्भकल्याणकपवित्रकुण्डलपुरतीर्थक्षेत्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सित चैत्र त्रयोदशि को महावीर, प्रभू जन्मे कुण्डलपुर में।
स्वर्गों में बाजे बाज उठे, सुरपति के स्वयं ही मुकुट नमे।।
सुरशैल शिखर पर जन्मोत्सव कर, कुण्डलपुर प्रभु को लाये।
उस जन्मभूमि का अर्चन कर, हम सब मन में अति हरषाये।।2।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीमहावीरजिनेन्द्रजन्मकल्याणकपवित्रकुण्डलपुरतीर्थक्षेत्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हुआ जातिस्मरण वीर प्रभु को, दीक्षा का भाव हृदय जागा।
दीक्षा लेते ही प्रगट हुए, चउ ज्ञान मोहप्रभु का भागा।।
वैराग्य भूमि कुण्डलपुर को, मैं जजूँ मुझे वैराग्य मिले।
नृप कूल ने प्रथम आहार दिया, मैं नमूँ पुण्य साम्राज्य मिले।।3।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीमहावीरजिनेन्द्रदीक्षाकल्याणकपवित्रकुण्डलपुरतीर्थक्षेत्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुण्डलपुर निकट जृंभिका में, ऋजुकूला तट पर ज्ञान हुआ।
उसके ऊपर गगनांगण में, प्रभु समवसरण निर्माण हुआ।।
मैं केवलज्ञान कल्याणक की, भूमी का नित्य यजन कर लूँ।
सम्यग्दर्शन की प्राप्ति हेतु, सन्मति प्रभु को वन्दन कर लूँ।।4।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीमहावीरजिनेन्द्रकेवलज्ञानकल्याणकपवित्रजृंभिकातीर्थक्षेत्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

जिस नगरी की रज महावीर के, कल्याणक से पावन है।
जहाँ इन्द्र इन्द्राणी की भक्ती का, सदा महकता सावन है।।
उस कुण्डलपुर में नंद्यावर्त, महल का सुन्दर परिसर है।
पूर्णार्घ्य चढ़ाकर नमूँ वहाँ, महावीर की प्रतिमा मनहर है।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्र गर्भजन्मदीक्षाआदिकल्याणकपवित्रकुण्डलपुरतीर्थक्षेत्राय पूर्णार्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य मंत्र—**ॐ ह्रीं कुण्डलपुरजन्मभूमिपवित्रीकृतश्रीमहावीरजिनेन्द्राय नमः।**

जयमाला

तर्ज—जरा सामने तो आओ.........

जहाँ जन्मे वीर वर्धमान जी, जहाँ खेले कभी भगवान जी।
उस कुण्डलपुरी की करूँ अर्चना, जय हो सिद्धार्थ त्रिशला के लाल की।।टेक.।।

कुण्डलपुर में राजा सर्वारथ, के सुत सिद्धार्थ हुए।
जो वैशाली के नृप चेटक, की पुत्री के नाथ हुए।।

रानी त्रिशला की खुशियाँ अपार थीं, सुन्दरता की वे सरताज थीं।
उस कुण्डलपुरी की करूँ अर्चना, जय हो सिद्धार्थ त्रिशला के लाल की।।1।।

राजहंस से मानसरोवर, जैसे शोभा पाता है।
वैसे ही प्रभु जन्म से जन्म, नगर पावन बन जाता है।।
जय जय होती है प्रभु पितु मात की, इन्द्र गाता है महिमा महान भी।
उस कुण्डलपुरी की करूँ अर्चना, जय हो सिद्धार्थ त्रिशला के लाल की।।2।।

प्रान्त बिहार में नालंदा के, निकट बसा कुण्डलपुर है।
छब्बिस सौंवे जन्मोत्सव में, गूंजा ज्ञानमती स्वर है।।
तभी आई घड़ी उत्थान की, होती दर्शन से जनता निहाल भी।
उस कुण्डलपुर की करूँ अर्चना, जय हो सिद्धार्थ त्रिशला के लाल की।।3।।

प्रभु तेरी उस जन्मभूमि का , कण-कण पावन लगता है।
छोटा सा भी उपवन तेरा, नन्दन वन सम लगता है।।
अर्घ्य का लाके इक लघु थाल जी, करूँ अर्पण झुका निज भाल भी।
उस कुण्डलपुरी की करूँ अर्चना, जय हो सिद्धार्थ त्रिशला के लाल की।।4।।

इस तीरथ के अर्चन से, आत्मा तीरथ बन सकती है।
इसकी कीरत के कीर्तन से, कीर्ति स्वयं की बढ़ती है।।
करूँ "चन्दनामती" प्रभु आरती, भरूँ मन में सुगुण की भारती।
उस कुण्डलपुरी की करूँ अर्चना, जय हो सिद्धार्थ त्रिशला के लाल की।।5।।

ॐ ह्रीं तीर्थंकरश्रीमहावीरजन्मभूमिकुण्डलपुरतीर्थक्षेत्राय जयमाला पूर्णार्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।।

शान्तये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

गीता छन्द – जो भव्य प्राणी जिनवरों की, जन्मभूमि को नमें।
तीर्थंकरों की चरणरज से, शीश उन पावन बनें।।
कर पुण्य का अर्जन कभी तो, जन्म ऐसा पाएंगे।
तीर्थंकरों की श्रृंखला में, चन्दना वे आएंगे।।

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिः।

* * *

समवसरण वंदना

–गणिनी ज्ञानमती

–दोहा–

चिन्मय चिंतामणि प्रभो! गुण अनंत की खान।
समवसरण वैभव सकल, वह लवमात्र समान।।1।।

–शंभु छंद–

जय जय तीर्थंकर महावीर, तुम धर्मचक्र के कर्ता हो।
जय जय अनंतदर्शन सुज्ञान, सुख वीर्य चतुष्टय भर्ता हो।।
जय जय अनंत गुण के धारी, प्रभु तुम उपदेश सभा न्यारी।
सुरपति की आज्ञा से धनपति, रचता है त्रिभुवन मनहारी।।2।।

प्रभु समवसरण गगनांगण में, बस अधर बना महिमाशाली।
यह इन्द्र नीलमणि रचित गोल, आकार बना गुणमणिमाली।।
सीढ़ी इक एक हाथ ऊँची, चौड़ी सब बीस हजार बनी।
नर बाल वृद्ध लूले लंगड़े, चढ़ जाते सब अतिशायि घनी।।3।।

पहला परकोटा धूलिसाल, बहुवर्ण रत्न निर्मित सुंदर।
कहिं पद्मराग कहिं मरकतमणि, कहिं इन्द्रनीलमणि से मनहर।।
इसके अभ्यंतर चारों दिश, हैं मानस्तंभ बने ऊँचे।
ये बारह योजन से दिखते, जिनवर से द्विदश गुणे ऊँचे।।4।।

इनमें चारों दिश जिनप्रतिमा, उनको सुरपति नरपति यजते।
ये सार्थक नाम धरें दर्शन से, मानो मान गलित करते।।
इस समवसरण में चार कोट, अरु पांच वेदिकायें ऊँची।
इनके अंतर में आठ भूमि, फिर प्रभु की गंधकुटी ऊँची।।5।।

इस धूलिसाल अभ्यंतर में है, भूमि चैत्य प्रासाद प्रथम।
एकेक जैन मंदिर अंतर से, पांच पांच प्रासाद सुगम।।
चारों गलियों में उभय तरफ, दो दोय नाट्यशालाएं हैं।
अभिनय करतीं जिनगुण गातीं, सुर भवनवासि कन्यायें हैं।।6।।

फिर वेदी वेढ़ रही ऊँची, गोपुर द्वारों से युक्त वहाँ।
द्वारों पर मंगलद्रव्य निधी, ध्वज तोरण घंटा ध्वनी महा।।
फिर आगे खाई स्वच्छ नीर, से भरी दूसरी भूमी है।
फूले कुवलय कमलों से युत, हंसों के कलरव की ध्वनि है।।7।।

फिर दूजी वेदी के आगे, तीजी है लताभूमि सुन्दर।
बहुरंग बिरंगे पुष्प खिले, जो पुष्पवृष्टि करते मनहर।।
फिर दूजा कोट बना स्वर्णिम, गोपुर द्वारों से मन हरता।
नवनिधि मंगल घट धूप घटों युत, में प्रवेश करती जनता।।8।।

आगे उद्यान भूमि चौथी, चारों दिश बने बगीचे हैं।
क्रम से अशोक वन सप्तपर्ण, चंपक अरु आम्र तरू के हैं।।
प्रत्येक दिशा में एक-एक, तरु चैत्य वृक्ष अतिशय ऊँचे।
इनमें जिन प्रतिमा प्रातिहार्ययुत, चार-चार मणिमय दीखें।।9।।

इसके आगे वेदी सुन्दर, फिर ध्वजाभूमि ध्वज से शोभे।
फिर रजतवर्णमय परकोटा, गोपुर द्वारों से युत शोभे।।
फिर कल्पवृक्ष भूमी छट्ठी, दशविध के कल्पवृक्ष इसमें।
प्रतिदिश सिद्धार्थ वृक्ष चारों हैं, सिद्धों की प्रतिमा उनमें।।10।।

चौथी वेदी के बाद भवन, भूमी सप्तमि के उभय तरफ।
नव नव स्तूप रत्न निर्मित, उनमें जिनवर प्रतिमा सुखप्रद।।
परकोटा स्फटिकमयी चौथा, मरकत मणि गोपुर से सुन्दर।
उस आगे श्रीमंडप भूमी, बारह कोठों से जनमनहर।।11।।

फिर पंचम वेदी के आगे, त्रय कटनी सुन्दर दिखती हैं।
पहली कटनी पर यक्ष शीश पर, धर्मचक्र चारों दिश हैं।।
दूजी कटनी पर आठ महाध्वज, नवनिधि मंगल द्रव्य धरे।
तीजी कटनी पर गंधकुटी पर, जिनवर दर्शन पाप हरें।।12।।

जय जय जिनवर सिंहासन पर, चतुरंगुल अधर विराज रहे।
जय जय जिनवर की दिव्यध्वनि, सुनकर सब भविजन तृप्त भये।।
सब जातविरोधी प्राणीगण, आपस में मैत्री भाव धरें।
जो पूजें ध्यावें गुण गावें, वे ज्ञानमती कैवल्य करें।।13।।

–दोहा–

चतुर्मुखी ब्रह्मा तुम्हीं, ज्ञान व्याप्त जग विष्णु।
देवों के भी देव हो, महादेव अरि जिष्णु।।14।।

PRAYER OF TIRTHANKARAS' BIRTHPLACES

-Aryika Chandnamati

Tune-Tumhi Ho Mata, Pita Tumhi Ho.......

(1)
Holy **Ayodhya** is first birthplace,
Where born Rishabh Ajit Abhinandannath.
Sumatinath Anantnath also born there,
So I bow to Pilgrimage Ayodhya.

(2)
Second birthplace is **Shravasti,**
Where was born Sambhavnath Jinvar.
Crore of crores Jewels were rained there,
So I bow to Pilgrimage Shravasti.

(3)
Kaushambi is third holy Pilgrimage,
Shri Padmaprabha Lord was born there.
Indra celebrated Festival then,
So I bow to Pilgrimage Kaushambi.

(4)
Two Tirthankaras' birthplace is **Banaras,**
Who were Suparas and Lord Paras.
Both of mothers seen sixteen dreams there,
So I bow to Pilgrimage **Banaras.**

(5)
Shri **Chandrapuri** is near Banaras,
Which is the birthplace of Chandraprabhu ji.
his place is waiting for us to progress,
I bow to that Pilgrimage Chandrapuri.

(6)
Kakandi is sixth birthplace Tiratha,
There was born Pushpadanta Jinvar.
Saudharm Indra came from heaven,
So I bow to Kakandi Pilgrimage.

(7)
The birthplace of Tirthankara tenth,
Bhaddilpuri is auspicious place.
Shitalnath was born at that place,
So I bow to Bhaddilpur Pilgrimage.

(8)
Mother-land of Shreyansa Jinvar,
Shri **Singhapuri** is near Banaras.
That is today famous as Sarnath,
I bow to that Singhapuri Pilgrimage.

(9)
Champapuri is nineth pilgrimage,
Which is the birthplace of Vasupujya Jin.
There became five Kalyanaks also,
So I bow to Champapuri tirth.

(10)
Holy Pilgrimage is **Campilaji,**
The birthplace of Vimalnath ji.
His four Kalyanaks became too there,
So I bow to Campila Pilgrimage.

(11)
Fifteenth Tirthankar Dharmanath,
Was born in **Ratnapuri** Pilgrimage.
Many heavenly deities came there ,
So I bow to Ratnapuri Tirath.

(12)
Shri Shanti Kunthu Arah Tirthankars,
Were born in **Hastinapuri** Tirth.
Jambudvip is famous of there,
So I bow to Pilgrimage Hastinapur.

(13)
Mithilapuri is holy Pilgrimage,
Where born Mallinath Naminath Jinvar.
Kuber rained then many Jewels there,
So I bow to Mithilapuri Tirath.

(14)
Rajagrihi is historical place,
Where born Munisuvrat Jineshwar.
Five Mountains are famous of there,
So I bow to Rajgiri Pilgrimage.

(15)
Twenty second Lord is Neminath,
Shauripur is his holy birthplace.
He got there four Kalyanak also,
So I bow to Shauripur Pilgrimage.

(16)
Twenty fourth Tirthankar Mahavir,
He was born at **Kundulpuri** Tirth.
Situated there Nandyavarta Palace,
So I bow to Kundalpur Pilgrimage.

(17)
These are sixteen holy Pilgrimages,
Birthplaces of twenty four Tirthankars.
Many developed by Ganini Gyanmatiji,
She says to you conserve also them.

(18)
Twenty four Tirthankars' birthplaces
All are holy places of our country.
All of you travel to these Pilgrimages,
"Chandnamati" wants Ratnatraya Tirtha.

* *

सुदर्शनमेरु भक्ति

–गणिनी ज्ञानमती माताजी

(वसंततिलका छंद)

तीर्थंकर - स्नपननीर - पवित्रजातः, तुङ्गोऽस्ति यस्त्रिभुवने निखिलाद्रितोऽपि।
देवेन्द्र - दानव - नरेन्द्र - खगेन्द्रवंद्यः, तं श्रीसुदर्शनगिरिं सततं नमामि।।1।।
यो भद्रसालवन - नंदन - सौमनस्यैः, भातीह पांडुकवनेन च शाश्वतोऽपि।
चैत्यालयान् प्रतिवनं चतुरो विधत्ते, तं श्रीसुदर्शनगिरिं सततं नमामि।।2।।
जन्माभिषेकविधये जिनबालकानाम्, वंद्याः सदा यतिवरैरपि पांडुकाद्याः।
धत्ते विदिक्षु महनीयशिलाश्-चतसृः, तं श्रीसुदर्शनगिरिं सततं नमामि।।3।।
योगीश्वराः प्रतिदिनं विहरन्ति यत्र, शान्त्यैषिणः समरसैक-पिपासवश्च।
ते चारणर्द्धि-सफलं खलु कुर्वतेऽत्र, तं श्रीसुदर्शनगिरिं सततं नमामि।।4।।
ये प्रीतितो गिरिवरं सततं नमन्ति, वंदन्त एव च परोक्षमपीह भक्त्या।
ते प्राप्नुवंति किल 'ज्ञानमतिं' श्रियं हि, तं श्रीसुदर्शनगिरिं सततं नमामि।।5।।

–अंचलिका –

इच्छामि भंते! सुदंसणमेरु-भत्तिकाओसग्गो कओ तस्सालोचेउं, इमम्हि मज्झलोए जंबूदीवमज्झट्ठिद-सव्वोच्चमंदरसेले भद्दसालणंदणसोमणसपांडुकवणेसु चउचउदिसासु सोलसजिनायदणाणं पांडुवणविदिसासु तित्थयर-ण्हवणपवित्त-पांडु-पहुदिसिलाणं जिण-जिणघरवंदणट्ठ-विहरमाण-चारणरिद्धिजुत्तरिसीणं णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमंसामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिनगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

सुदर्शनमेरु वंदना

यह मेरु सुदर्शन त्रिभुवन में, सबसे ऊँचा कहलाता है।
योजन इक लाख कहा ऊँचा, इक सहस नींव में जाता है।।
चालिस योजन चूलिका कही, वैडूर्यमणीमय प्यारी है।
यह भू पर चौड़ा दश हजार, इसकी छवि जग से न्यारी है।।1।।
पृथ्वी पर भद्रशाल वन है, नंदनवन पांच शतक ऊपर।
इससे साढ़े बासठ हजार, योजन पर सौमनसं सुन्दर।।
इससे ऊपर छत्तिस हजार, योजन जाकर पांडुक वन है।
चारों वन में शुभ चार-चार, जिनमंदिर अतिशय सुन्दर है।।2।।
इकसठ हजार योजन तक गिरि, बहुवर्णमयी बहुरत्नमयी।
ऊपर में पांडुक वन तक है, अतिसुंदर श्रेष्ठ सुवर्णमयी।।
पांडुक वन की विदिशाओं में, वर पांडुक आदिक चार शिला।
तीर्थंकर के जन्माभिषेक, से पावन पूज्य हुई विमला।।3।।
ईशान दिशा में शिला कही, जो पांडुक नामा कनकमयी।
हो भरत क्षेत्र के जिनवर का, इस पर अभिषेक अनूपम ही।।
आग्नेय दिशा में शिला कही, जो पांडुकम्बला रजतमयी।
पश्चिम विदेह के जिनवर का, होता अभिषेक सुपुण्यमयी।।4।।
नैऋत दिश में रक्ता नामा, है शिला तपाये स्वर्णसमा।
ऐरावत के तीर्थंकर का, उस पर अभिषेक कहा सुषमा।।
वायव्य दिशा में लाल शिला, जो रक्तकम्बला नाम धरे।
अभिषेक वहाँ पूरब विदेह, तीर्थंकर का इंद्रादि करें।।5।।
ये अर्ध चंद्र आकार शिला, सौ योजन लम्बी मानी है।
योजन पचास चौड़ी ऊँची, है आठ कहे जिनवाणी है।।
इन मध्य श्रेष्ठ सिंहासन हैं, जो तीर्थंकर के लिए कहे।
द्वय पार्श्व भाग दो भद्रासन, सौधर्म ईशान के लिए रहे।।6।।
जब-जब तीर्थेश जन्मते हैं, इंद्रों के आसन कंपते हैं।
इंद्रों के मुकुट स्वयं झुकते, सब वाद्य स्वयं बज उठते हैं।।
ऐरावत हाथी पर चढ़कर, सौधर्म इन्द्र आ जाता है।
उस समय असंख्यों देवों का, समुदाय उमड़कर आता है।।7।।
इन्द्राणी जिनशिशु को लाकर, सौधर्म इन्द्र को देती है।
तत्क्षण ही स्त्रीलिंग छेद, निज एक ही भव कर लेती है।।
प्रभु को सुमेरु पर ले जाकर, क्षीरोदधि से जल भर लाते।
इक सहस आठ कलशों द्वारा प्रभु न्हवन करें अति हर्षाते।।8।।
मेरु के सोलह जिनमंदिर, भक्ती से उन दर्शन कीजे।
जिन प्रतिमाओं का वंदन कर, पूजन कर पाप शमन कीजे।।
जिन वचनों से श्रद्धा करके, निज सम्यक् "ज्ञानमती" कीजे।
रत्नत्रय निधि को पा करके, क्रम से जिनगुण संपति लीजे।।9।।

भगवान महावीर और जैन धर्म

ॐ
'Narayan' SIGN ART,

द्वितीय खंड

4847

दिगम्बर जैन आगम के आलोक में भगवान महावीर

लेखिका–गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी

श्री महावीर स्तवन

स्रग्धरा छन्द –

श्रीमान् वीरोऽतिवीरः त्रिभुवनमहितः सौख्यराशिर्जिनेन्द्रः।
यो जातः कुण्डलाख्ये भुवि प्रथितपुरे सोऽस्ति सिद्धार्थपुत्रः।।
आषाढे शुक्लषष्ठ्यां सुरनरविनुतो गर्भमायात् जनन्यां।
पित्रोः पूजां विदध्युः किल दिविजगणाः रत्नधारा ववर्षुः।।1।।

चैत्रे शुक्ले जिनेशः त्रययुतदशमे पावने जायतेस्म।
हृद्यैः संगीतवाद्यैः सुरगिरिशिखरे सोऽभिषिक्तः सुराद्यैः।।
मार्गे कृष्णे दशम्यां व्रतगुणमणिभिर्भूषितो जातरूपः।
ध्याने लीनः कदाचित् समदभवकृतस्तूपसर्गस्य जेता।।2।।

राधे शुक्लादशम्यां ग्रसितकलितमाः उद्ययौ ज्ञानसूर्यः।
लोकालोकप्रकाशी ह्यनवधिकिरणैः ध्वस्तमोहांधकारः।।
कृष्णस्याद्ये दिने ते किल नभसि महावीर!दिव्यध्वनिः स्यात्।
त्वत्स्याद्वादामृतं भोः भवगदहरणं देव! अद्यावधीह।।3।।

ऊर्जे कृष्णे निशांते चतुरधिदंशमे वासरे मुक्तिमाप्नोत्।
पावापुर्यां च वीरः सहजसुखमयः सप्तहस्तोच्छ्रितोऽसौ।।
कौमार्ये ध्वस्तमारः भुवि किल चरमस्तीर्थकृन्नाथवंशी।
स्वर्णाभो वर्धमानो हतदुरितरविः सिंहचिन्हेन ज्ञातः।।4।।

मातंगो यक्षदेवो जिनवचनरता सात्र सिद्धायिनी च।
ताभ्यां ते पादपद्मं विजितभव! सदा पूजितं विश्ववंद्यं।।
त्रैलोक्येशं जिनं त्वामहमपि सततं सन्मते! वीर! वंदे।
याचेऽहं तत्फलं भोः! जिनवरगुणभृत् संपदं देहि मह्यं।।5।।

अनुष्टुप् छन्द –

वर्ष – द्वासप्ततेरायुः, त्रिशलानंदनो जिनः।
भक्त्यानिशं स्तवीमि त्वां, ज्ञानमत्यै श्रियै त्वरं।।6।।

२-३१

अर्थ–श्री अर्थात् अन्तरंग और बहिरंग लक्ष्मी से सहित वीर, अतिवीर जिनेन्द्र सम्पूर्ण सुखों की राशिस्वरूप तीनों लोकों में पूज्य हैं। पृथ्वीतल पर "कुंडलपुर" नाम से प्रसिद्ध नगरी में भव्यरूपी कमल को विकसित करने वाले सूर्य, महाराज सिद्धार्थ के पुत्र वे वीर जिनेन्द्र हैं। आषाढ़ शुक्ला षष्ठी तिथि के दिन माता त्रिशला के गर्भ में तीर्थंकर वीर के अवतरित होने पर स्वर्ग से देवताओं ने वहाँ आकर माता-पिता की पूजा करके रत्नों की धारा बरसाई थी।।1।।

चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के पवित्र दिवस जब भगवान ने जन्म लिया तब गीत-संगीत आदि के द्वारा खुशियाँ मनाते हुए इन्द्र एवं देवताओं ने सुमेरु पर्वत के शिखर-पाण्डुकशिला पर उनका जन्माभिषेक महोत्सव किया था पुनः मगशिर कृष्णा दशमी के दिन वे महाव्रतरूप गुणमणियों से विभूषित होकर जातरूप-नग्न दिगम्बर जैनेश्वरी दीक्षा धारण कर ध्यान में लीन हो गये और किसी समय ध्यान में विघ्न डालने के निमित्त से भव नामक एक रुद्र ने उन पर घोर उपसर्ग किया किन्तु अपने अविचल ध्यान एवं कठोर तपस्या से वीर प्रभु ने उपसर्ग पर विजय प्राप्त कर लिया।

भावार्थ–जन्माभिषेक के बाद इन्द्र ने भगवान के **वीर** और **वर्द्धमान** दो नाम रखे थे। संजय-विजय महामुनियों ने **'सन्मति'** एवं संगम देव ने **'महावीर'** नाम रखा था। रुद्र ने उपसर्ग विजय के बाद **'अतिवीर' (महतिमहावीर)** नाम रखा था।।2।।

उपसर्ग विजेता बनकर प्रभु ने वैशाख शुक्ला दशमी तिथि में समस्त पापान्धकार को नष्ट कर असीमित किरणों से समन्वित केवलज्ञान सूर्य को प्रगट कर लिया, जिससे सम्पूर्ण मोहरूपी अंधेरा ध्वस्त हो गया और पूरा लोक-अलोक चराचर दिखाई देने लगा। हे महावीर स्वामी! केवलज्ञान होने के छ्यासठ दिनों बाद श्रावण कृष्णा एकम के दिन आपकी दिव्यध्वनि खिरी थी, तब हे देव! भव्यों के संदेह को हरण करने वाली आपकी जो स्याद्वाद अमृतरूपी वाणी निकली, वह आज तक भी पृथ्वीतल पर प्रवाहित हो रही है अर्थात् आज तक आपका अनेकान्त शासन चल रहा है।। 3।।

सात हाथ ऊँचे शरीर वाले, स्वर्ण वर्ण की कांति के धारक, सिंह चिन्ह से ज्ञात, नाथवंशी, चरम–अंतिम चौबीसवें तीर्थंकर वर्धमान महावीर कुमारावस्था में ही कामदेव को ध्वस्त करके कार्तिक कृष्णा चतुर्दशी की पिछली रात्रि में तथा अमावस के प्रभात में पावापुरी नगरी से मोक्ष धाम को प्राप्त कर सहज सुख में लीन हो गये।। 4।।

हे संसारचक्र के विजेता महावीर भगवन्! आपके जिनवचनों में अनुरक्त रहने वाले आपके शासनदेवता मातंग यक्ष एवं सिद्धायिनी यक्षी सदैव आपके चरणकमलों की पूजा करते हैं, इसलिए हे विश्ववंद्य त्रिलोकीनाथ सन्मति जिनेन्द्र! वीर प्रभो! मैं भी आपसे सतत याचना करता हूँ कि हे नाथ! जिनगुणसम्पत्ति की प्राप्ति का फल प्रदान कीजिए।। 5।।

बहत्तर वर्ष की आयु वाले हे त्रिशला माता के पुत्र महावीर जिनेन्द्र! मैं ज्ञानमती लक्ष्मी कीं शीघ्र प्राप्ति हेतु आपका भक्तिपूर्वक सदा स्तवन करता हूँ।

अर्थात् मुझ गणिनी ज्ञानमती ने पूर्ण ज्ञान सहित संपत्ति को प्राप्त करने के लिये भगवान महावीर का यह स्तवन किया है।। 6।।

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर

जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में आर्यखण्ड है। इस आर्यखण्ड में "**विदेह**" नाम से एक प्रसिद्ध देश माना गया है। कभी यह देश खेट, खर्वट, मटंब, पुटभेदन, द्रोणामुख, आकर–सुवर्ण, चाँदी आदि की खान, खेत, ग्राम और घोषों से विभूषित था। जैसा कि वर्णन है–

सखेटखर्वटाटोपिमटंबपुटभेदनैः। द्रोणामुखाकरक्षेत्रग्रामघोषैर्विभूषितः[1]।।3।।

जो देश नगर, नदी और पर्वत से घिरा हो वह "**खेट** है। जो केवल पर्वतों से घिरा हो वह "**खर्वट**" है। जो पाँच सौ गाँवों से घिरा हो वह "**मटम्ब**" है। जो समुद्र के किनारे हो तथा जहाँ पर लोग नाव से उतरते हों वह "**पत्तन**" या "**पुटभेदन**" कहलाता है। जो नदी के किनारे बसा हो उसे "**द्रोणामुख**" कहते हैं। जहाँ सोना, चाँदी आदि निकलते हैं उसे "**खान**" कहते हैं। अन्न उत्पन्न होने की भूमि क्षेत्र–"**खेत**" है। जिसमें बाढ़ से घिरे हुए घर हों, जिसमें अधिकतर किसान लोग निवास करते हों, जो बाग-बगीचा और मकानों से सहित हों उन्हें "**ग्रामं**" कहते हैं और जहाँ अहीर लोग

---

[1] हरिवंशपुराण-सर्ग 2।

रहते हों उसे **"घोष"** कहते हैं। ये सब शास्त्रीय प्राचीन परिभाषाएँ हैं। इन सभी से सहित वह **"विदेह"** देश था।

इस देश की राजधानी कुण्डपुर या कुण्डलपुर प्रसिद्ध थी। यह परकोटा एवं खाई आदि से विभूषित बहुत ही वैभवपूर्ण नगरी थी। इसका वर्णन बहुत ही सुन्दर किया गया है। यहाँ आचार्य कहते हैं कि –

एतावतैव पर्याप्तं, पुरस्य गुणवर्णनम्।
स्वर्गावतरणे तद्यद्वीरस्याधारतां गतम्[1]।।12।।

इस नगर के गुणों का वर्णन तो इतने से ही पर्याप्त हो जाता है कि वह नगर स्वर्ग से अवतार लेते समय भगवान महावीर का आधार हुआ था अर्थात् साक्षात् महावीर स्वामी जहाँ अवतीर्ण हुए थे।

राजा सिद्धार्थ के माता-पिता का नाम हरिवंशपुराण में वर्णित है –

सर्वार्थश्रीमतीजन्मा, तस्मिन् सर्वार्थदर्शनः।
सिद्धार्थोऽभवदर्काभो, भूपः सिद्धार्थपौरुषः[2]।।3।।

यहाँ के राजा **"सर्वार्थ"** महाराज थे और उनकी महारानी का नाम **"श्रीमती"** था। इनके पुत्र का नाम **"सिद्धार्थ"** था। इनकी रानी महाराजा चेटक की पुत्री **"प्रियकारिणी"** थीं जिनका दूसरा नाम **"त्रिशला"** था। जो राजा सिद्धार्थ वर्तमान में भगवान वर्द्धमान के पिता के पद को प्राप्त हुए थे भला उनके उत्कृष्ट गुणों का वर्णन कौन कर सकता है? तथा अपने पुण्य से तीर्थंकर महावीर को जन्म देने वाली उन त्रिशला के गुणों का वर्णन भी कोई मनुष्य नहीं कर सकता है।

महावीर प्रभु का जन्म कुण्डलपुर में हुआ ऐसा वर्णन तिलोयपण्णत्ति एवं षट्खण्डागम में भी आया है। यथा –

सिद्धत्थरायपियकारिणीहिं, णयरम्मि कुंडले वीरो।
उत्तरफग्गुणिरिक्खे, चित्तसिया तेरसीए उप्पण्णे।।549।।

अब भगवान महावीर के नाना के कुल का संक्षिप्त वर्णन आपके लिए प्रस्तुत है –

सिंध्वाख्ये विषये भूभृद्वैशाली नगरेऽभवत्।
चेटकाख्योऽतिविख्यातो विनीतः परमार्हतः[3]।।3।।

सिंधुदेश के वैशालीनगर में चेटक नाम के प्रसिद्ध राजा थे, इनकी रानी का नाम भद्रा-सुभद्रा था। इनके दश पुत्र थे जिनके नाम धनदत्त, धनभद्र, उपेन्द्र, शिवदत्त, हरिदत्त, कम्बोज, कम्पन, प्रयंग, प्रभंजन और प्रभास थे, ये दशों पुत्र दशधर्मों के समान निर्मल गुणों से विभूषित थे। इन्हीं राजा चेटक की महारानी ने सात ऋद्धियों के समान ही सात पुत्रियों को जन्म दिया था जो क्रमशः प्रियकारिणी, मृगावती, सुप्रभा, प्रभावती, चेलिनी, ज्येष्ठा और चन्दना इन नाम को धारण करने वाली थीं।

विदेहदेश की कुण्डपुरी कुण्डलपुरी नगरी में **"नाथवंश"** के राजा सिद्धार्थ के साथ राजा चेटक ने अपनी बड़ी पुत्री प्रियकारिणी **"त्रिशला"** का विवाह किया था। वत्सदेश में कौशाम्बी नगरी के चंद्रवंशी राजा शतानीक के साथ दूसरी पुत्री मृगावती का विवाह हुआ था। दशार्ण देश के हेरकच्छनगर में सूर्यवंशी राजा दशरथ राज्य करते थे, राजा चेटक की तृतीय पुत्री सुप्रभा इन दशरथ की पट्टरानी हुई थीं। कच्छदेश के **"रोरुकनगर"** में राजा उदयन राज्य करते थे, चतुर्थ पुत्री प्रभावती उनकी महारानी हुई थीं। पांचवी पुत्री चेलिनी राजगृही के राजा श्रेणिक की पट्टरानी हुई थीं[4] तथा ज्येष्ठा और चन्दना कुमारिका ने आर्यिका दीक्षा से अपना जीवन विभूषित किया था।

यही प्रकरण **"वीरजिणिंदचरिउ"** ग्रंथ में भी आया है –

जम्बूद्वीप के विदेहप्रदेश में कुण्डपुर–कुण्डलपुर में राजा सिद्धार्थ की महारानी प्रियकारिणी से भगवान महावीर जन्में हैं[5]।

इसी ग्रन्थ में राजा चेटक की राजधानी वैशाली का वर्णन आया है इसे सिंधुदेश में माना है। इन राजा के दश पुत्र और प्रियकारिणी आदि सात पुत्रियाँ थीं। जिनमें से बड़ी पुत्री प्रियकारिणी को कुण्डलपुर के राजा सिद्धार्थ की महारानी बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था[6]।

1-2. हरिवंशपुराण-सर्ग 2। 3. उत्तरपुराण-पर्व 75। 4. उत्तरपुराण-पर्व 75। 5. वीरजिणिंदचरिउ-पृ. 11। 6. वीरजिणिंदचरिउ, पृ. 60।

गर्भकल्याणक

गर्भावतरण–भगवान महावीर होने वाले महापुरुष सोलहवें स्वर्ग के पुष्पोत्तर विमान में थे। जब उनकी आयु मात्र छह महिने की शेष रही तब सौधर्मेन्द्र की आज्ञा से कुबेर ने विदेहदेश की राजधानी कुण्डलपुरी में राजा सिद्धार्थ के आँगन में रत्नों की वृष्टि करना शुरू कर दी। ये रत्न प्रतिदिन साढ़े सात करोड़ बरसते थे।

जैसा कि उत्तरपुराण में लिखा है –

तस्मिन् षण्मासशेषायुष्यानाकादागमिष्यति।
भरतेऽस्मिन् विदेहाख्ये, विषये भवनांगणे।।251।।
राज्ञः कुंडपुरेशस्य, वसुधाराप तत्पृथु।
सप्तकोटीमणीः सार्द्धाः, सिद्धार्थस्य दिनं प्रति।।252।।

यहाँ यह बात ध्यान में रखना है कि राजा सिद्धार्थ वैशाली के राजा नहीं थे और न ही वे वैशाली के अन्तर्गत छोटे से कुण्डग्राम के छोटे–मोटे राजा थे किन्तु वे तत्कालीन वैशाली के राजा चेटक जो कि उनके श्वसुर थे, ये सिद्धार्थ इनसे भी श्रेष्ठ तथा इन्द्रों से भी पूज्य महान राजा थे।

इन राजा के महल का नाम **''नंद्यावर्त''** था। यह सात खन का बहुत ही सुन्दर था। एक दिन महारानी त्रिशला अपने **''नंद्यावर्त''** महल में रत्ननिर्मित सुंदर पलंग पर सोई हुई थीं, रात्रि में रत्नों के द़ीपों का प्रकाश फैला हुआ था। आषाढ़ शुक्ला षष्ठी के दिन पिछली रात्रि में रानी ने सोलह स्वप्न देखे। प्रातः पतिदेव से उनका फल पूछने पर **''आप तीर्थंकर पुत्र को जन्म देंगी''** ऐसा सुनकर प्रसन्नता को प्राप्त हुईं। तभी इन्द्रादिदेवगण ने आकर **''गर्भकल्याणक''** उत्सव मनाया।

आचार्य श्री सकलकीर्ति विरचित **''श्री महावीर पुराण''** में भी कहा है –

जंबूद्वीप के भरतक्षेत्र में 'विदेह' नाम का एक विस्तृत देश है। धार्मिक पुरुषों का निवास स्थान होने के कारण वह विदेहक्षेत्र तीर्थ तुल्य ही शोभायमान है। इस स्थान से कितने ही मुनियों ने मोक्ष को प्राप्त किया है अतः नाम के अनुसार इसका गुण भी सार्थक़ है। यहाँ के निवासी कोई-कोई सोलहकारण आदि भावनाओं को भाकर तीर्थंकर नामकर्म का बंध किया करते हैं। यहाँ के वन पर्वत भी ध्यानस्थ योगियों से विशेषरूप से शोभायमान हैं एवं भव्य उत्तुंग जिनमंदिरों को देखकर किसी महान धार्मिक स्थान का बोध होता है। विदेह प्रदेश के ग्राम-मुहल्ले सभी जिनालयों से सुशोभित हैं। यहाँ पर मुनिसमूह चारों प्रकार के संघ के साथ धर्म प्रवृत्ति के लिये सदा विहार किया करता है।

इसी विदेह देश–जनपद के ठीक मध्य में **'कुण्डलपुर'** एक अत्यंत रमणीय नगर है। यहाँ के कोट द्वार एवं अलंघ्य खाइयों को देखकर अपराजिता–अयोध्या नगरी का भान होता हैं। देवगणों के आवागमन से इस नगर में सदा क़ोलाहल सा मचा रहता था। यहाँ के ऊँचे-ऊँचे जैन मंदिरों को देखकर लोगों को कुण्डलपुर के प्रति अपार श्रद्धा होती थी। वह नगर धर्म का समुद्र जैसा प्रतीत होता था। वहाँ के जिनालय 'जय-जय' शब्द, स्तुति, नृत्य, गीत आदि से सर्वदा मुखरित रहते थे। स्वर्ग के दिव्य उपकरणों सहित रत्नमयी प्रतिमाओं का दर्शन कर वहाँ के लोग कृतार्थ हो जाया करते थे। उस नगर के ऊँचे परकोटे को देखकर यह भान होता था कि वे उच्च स्थान देने के लिये स्वर्ग के देवों को बुला रहे हैं। उस नगर के निवासी दाता, धर्मात्मा, शूरवीर, व्रत-शीलादि से युक्त संयमी होते थे। वे पुरुष जिनेन्द्रदेव की भक्ति, निर्ग्रन्थ गुरु भक्ति, सेवा एवं पूजा में सदा तत्पर रहा करते थें।

उस नगरी–राजधानी के राजा का नाम **'सिद्धार्थ'** था। वे नाथवंशरूपी गगन को सुशोभित करने वाले साक्षात् सूर्य थे। वे महाराज मति, श्रुत, अवधि तीनों ज्ञान को धारण करने वाले थे। उन्होंने सदा नीतिमार्ग को प्रश्रय दिया था। वे जिनदेव के भक्त, महादानी एवं दिव्य ज्ञान के धारक थे। उनके चरणों की सेवा बड़े-बड़े विद्याधर, भूमिगोचरी एवं देव किया करते थे। वे समस्त राजाओं में इन्द्र के समान शोभायमान थे।

उनकी त्रिशला नाम की अत्यन्त रूपवती महारानी थी। वे पति-परायणा सरस्वती के समान एवं सर्वगुण संपन्न थीं।

एक दिन सौधर्म स्वर्ग के इन्द्र ने कुबेर से कहा –

हे धनपते! तुम भरतक्षेत्र के कुण्डलपुर में राजा सिद्धार्थ की महारानी त्रिशला के आंगन में दिव्य रत्नों की वर्षा करना प्रारम्भ कर दो। उस समय यह रत्न–सुवर्णमयी वर्षा आकाश से गिरती हुई ऐसी प्रतीत होती थी मानों प्रकाशरूपी माला श्रीजिनेन्द्र के माता-पिता की सेवा करने को आ रही हो। गर्भाधान के छह माह पूर्व से ही कल्पवृक्ष के पुष्प, सुगंधित जल, सुवर्ण एवं रत्नों के ढेर से राजमहल जगमगा उठा।

सोलह स्वप्न

एक दिन रात्रि के पिछले प्रहर में कोमल शय्या पर सोती हुई महारानी त्रिशला ने सोलह स्वप्न देखे जो सर्वथा कल्याणकारी एवं सौभाग्य सूचक थे।

सोलह स्वप्नों में उन्होंने सर्वप्रथम मदोन्मत्त गजराज को देखा। बाद में चन्द्रमा के सदृश शुभ्र कांतियुक्त, ऊँचे कन्धेवाला बैल गम्भीर शब्द करता हुआ दिखलाई दिया। तीसरा स्वप्न अपूर्व कान्तिवान वृहद्‌काय लाल कन्धे वाला सिंह था। चौथे स्वप्न में कमलरूपी सिंहासन पर विराजमान लक्ष्मी देवी को उन्होंने देव-हस्तियों द्वारा अभिषेक करते हुए देखा। पाँचवें में दो सुगन्धित मालायें थीं। छट्‌ठे में ताराओं से घिरे हुए चन्द्रमा को देखा, जिससे सारा संसार आलोकित हो रहा था। सातवें स्वप्न में देवी ने अन्धकार का विनाश करने वाले सूर्य को उदयाचल पर्वत से निकलते हुए देखा। आठवें स्वप्न में कमल के पत्तों से आच्छादित मुखवाले सुवर्ण के दो कलश देखे। नवमें स्वप्न में तालाब में क्रीड़ा करती हुई मछलियाँ देखीं। वह तालाब खिली हुई कुमुदिनी एवं कमलिनी से शोभायमान हो रहा था। दशवें स्वप्न में उन्होंने एक भरपूर तालाब देखा, जिसमें कमल पुष्पों की पीत रज तैर रही थी। ग्यारहवें स्वप्न में गम्भीर गर्जन करता हुआ चंचल तरंगों से युक्त समुद्र दिखलाई दिया। बारहवें स्वप्न में उन्होंने दैदीप्यमान मणि से युक्त ऊँचा सिंहासन देखा। तेरहवाँ स्वप्न बहुमूल्य रत्नों से प्रकाशित स्वर्ग का विमान था। चौदहवें स्वप्न में पृथ्वी को भेद कर ऊपर की ओर जाता हुआ फणीन्द्र (भवनवासी देव) का ऊँचा भवन दिखलाई दिया। पन्द्रहवें स्वप्न में उन्होंने रत्नों की विशाल राशि देखी, जिसकी किरणों से आकाश तक दैदीप्यमान हो रहा था। सोलहवें स्वप्न में माता ने निर्धूम अग्नि देखी।

उपरोक्त सोलह स्वप्नों को देखने के पश्चात् महारानी त्रिशला ने पुत्र के आगमनसूचक ऊँचे शरीर वाले उत्तम गजराज को मुख-कमल में प्रवेश करते हुए देखा। माता के स्वप्न देखने के थोड़ी देर बाद ही प्रातःकाल हुआ। महारानी त्रिशला को जगाने के लिए राजमहल में सुमधुर वाद्य बजने लगे। बन्दीजनों ने कहना आरम्भ किया 'हे महादेवी! अब जागने का समय हो गया है। अतएव आप को अपनी शैय्या त्याग कर अपने योग्य शुभ कार्यों को आरम्भ कर देना चाहिये, जिससे कल्याणकारी वस्तुएँ आपको बड़ी सरलता से प्राप्त हों।

कुछ समय तक इसी प्रकार वाद्यों के शब्द एवं बन्दीजनों द्वारा मंगल गान होते रहे। महारानी त्रिशला एकाएक जाग उठीं। उन्हें प्रातःकाल के देखे हुए स्वप्नों से अतीव प्रसन्नता हुई। शैय्या त्याग कर उन्होंने मोक्ष प्राप्ति के उद्‌देश्य से स्तवन, सामायिक आदि उत्तम नित्य- कर्म करना आरम्भ किया। इस प्रकार की नित्य क्रिया सर्वथा कल्याणंकारिणी है एवं सब प्रकार से मंगल करने वाली है।

तत्पश्चात् महारानी ने स्नान समाप्त कर अपना श्रृंगार किया। वे आभूषणों से सुसज्जित हो सेवकों को साथ लेकर राज्यसभा में गयीं। महाराज अपनी प्राणप्रिया को अपनी ओर आती हुई देख कर बड़े प्रसन्न हुए। बैठने के लिए उन्होंने रानी को अपना आधा आसन समर्पित कर दिया। महारानी प्रसन्नचित्त होकर उक्त आसन पर बैठ गयीं। उन्होंने बड़े मधुर शब्दों में महाराज से निवेदन किया–'हे देव! आज रात्रि के तीसरे प्रहर में मैंने अत्यन्त आश्चर्यजनक स्वप्न देखे हैं। मेरी अभिलाषा है कि गजराज इत्यादि इन सोलह स्वप्नों का फल आप मुझे अलग-अलग सुनायें।'

महारानी के मुख से स्वप्न की बातें सुनकर मति-श्रुति-अवधि तीनों ज्ञान के धारक महाराज सिद्धार्थ ने कहा – 'हे सुन्दरी! मैं इन स्वप्नों के शुभ फलों का शीघ्र ही वर्णन कर रहा हूँ। तुम सावधान होकर श्रवण करो।' महाराज ने कहना आरम्भ किया–हे कान्ते!

1. **गजराज** देखने का फल यह हुआ कि तेरा पुत्र तीर्थंकर होगा।

2. **बैल** देखने से फल यह हुआ कि वह धर्मचक्र का संचालक होगा।

3. **सिंह** के दर्शन से वह पुत्र कर्मरूपी गजराजों को विनष्ट करने वाला अत्यन्त बलवान होगा।

4. **लक्ष्मी का अभिषेक** देखने का फल यह है कि सुमेरु पर्वत पर इन्द्रादि देवों के द्वारा इस बालक का स्नान कराया जायेगा।

5. स्वप्न में **मालाओं** के देखने से सुगन्धित शरीर वाला एवं श्रेष्ठ ज्ञानी होगा।

6. **पूर्ण चन्द्रमा** के दर्शन से वह पुत्र अपने धर्मरूपी अमृत–वर्षण से भव्य जीवों को प्रसन्न करने वाला होगा।

7. **सूर्य** के देखने से वह अज्ञानरूपी अन्धकार का विनाशक तथा उन्हीं के समान कान्ति वाला होगा।

8. जल से परिपूर्ण **घड़ों** के देखने का फल यह है कि वह अनेक निधियों का स्वामी तथा ज्ञान- ध्यानरूपी अमृत का घट होगा।

9. **मछली की जोड़ी** देखने से सबके लिए कल्याणकारी तथा स्वयं महान सुखी होगा।

10. **सरोवर** देखने से शुभ लक्षण तथा व्यंजनों से सुशोभित शंरीरधारी होगा।

11. **समुद्र** के देखने से नौ केवल-लब्धियों वाला केवलज्ञानी होगा।

12. **सिंहासन** के देखने से महाराज पद से वाच्य जगत् का स्वामी होगा।

13. **स्वर्ग का विमान** देखने का फल यह हुआ कि वह पुत्र स्वर्ग से आकर अवतार धारण करेगा।

14. **नागेन्द्र भवन** के अवलोकन से अवधिज्ञानरूपी नेत्र को धारण करने वाला होगा।

15. **रत्नों का ढेर** देखने से वह सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र आदि रत्नों की खानि होगा।

16. **निर्धूम अग्नि** के दर्शन से वह कर्मरूपी ईंधन को भस्म करने वाला होगा।

अन्त में गजेन्द्र के दर्शन का फल यह हुआ कि वह अन्तिम तीर्थंकर स्वर्ग से आकर तुम्हारे निर्मल पवित्र गर्भ में प्रवेश कर चुका है।

महाराज के मुख-कमल से सोलहों स्वप्नों का फल सुनकर पतिव्रता महारानी का हृदय प्रफुल्लित हो उठा। उन्हें ऐसा लगा कि जैसे उन्हें पुत्र की प्राप्ति ही हो गई हो। वे बड़ी प्रसन्न हुईं।

देवियों द्वारा माता की सेवा

उसी समय सौधर्म इन्द्र का आदेश पाकर पद्म आदि सरोवरों में निवास करने वाली श्री, ह्री आदि छः देवियाँ राजमहल में आ गयीं। उन्होंने तीर्थंकर के गर्भाधान के लिए स्वर्ग से लाई हुई पवित्र वस्तुओं से माता के गर्भ का शोधन किया, जिससे उन्हें पुण्य की प्राप्ति हो पुनः वे अपने-अपने शुभ गुणों को माता में स्थापित कर उनकी सेवा में संलग्न हो गयीं।

श्री देवी ने शोभा, ह्री देवी ने लज्जा, धृति देवी ने धैर्य, कीर्ति देवी ने स्तुति, बुद्धि देवी ने श्रेष्ठ बुद्धि तथा लक्ष्मी देवी ने भाग्य ऐसे इन गुणों की वृद्धि की। वे जिनमाता बड़ी गुणवती हुईं। यों तो महारानी पूर्व में ही स्वभाव से पवित्र थीं, पर जब देवियों ने शुद्ध वस्तुओं से उन्हें शुद्ध किया, तब तो वे मानों स्फटिक मणि से ही बनाई गई हों ऐसी शोभायमान प्रतीत होने लगीं। आषाढ़ मास के शुक्ल पक्ष की शुद्ध तिथि षष्ठी को आषाढ़ नक्षत्र में एवं शुभ लगन में वह देव (अच्युतेन्द्र) स्वर्ग से चय कर माता के शुद्ध गर्भ में आया। महावीर प्रभु के गर्भ में आते ही स्वर्ग के कल्पवासी देवों के विमानों में घण्टे की ध्वनि होने लगी एवं इन्द्र का आसन काँप उठा।

ज्योतिषी देवों के यहाँ स्वयं सिंहनाद होने लगा। भवनवासी देवों के यहाँ शंख की प्रचण्ड ध्वनि हुई। साथ ही व्यन्तर देवों के महलों में भेरी की विशेष ध्वनि हुई। केवल यही नहीं अन्य भी अनेक आश्चर्यजनक घटनायें घटीं। उक्त

आश्चर्यजनक घटनाओं को घटते देखकर चारों निकायों के देवों को यह ज्ञात हो गया कि महावीर प्रभु का गर्भावतरण हो गया है। तत्पश्चात् वे देवगण भगवान् का गर्भकल्याणक उत्सव मनाने के उद्देश्य से नगर में पधारे। उस समय देवों के समूह को देखते ही बनता था। वे सर्वोत्तम सम्पदाओं से सुशोभित थे, अपनी-अपनी सवारियों पर आरूढ़ थे, उत्तम धर्म का पालन करने वाले उद्यमी थे। वे अपने अंग के आभूषणों एवं तेज से दशों दिशाओं को प्रकाशित करने वाले थे। उन्होंने अपने ध्वजा – छत्र – विमानादिकों से आकाश को मानो ढँक दिया था। वे देव अपनी देवियों के साथ 'जय-जय' शब्द कर रहे थे।

उस समय नगर का वातावरण देखने योग्य ही था। विमानों, अप्सराओं एवं देवों की सेनाओं से घिरा हुआ वह नगर स्वर्ग जैसा सर्वोत्तम प्रतीत होने लगा। देवों के साथ इन्द्र ने भगवान के माता-पिता को सिंहासन पर बिठाकर सोने के कलशों से स्नान कराया तथा उन्हें दिव्य आभूषण-वस्त्र पहनाये। माता के गर्भस्थ शिशु (भगवान) की सभी ने तीन प्रदक्षिणा देकर उन्हें प्रणाम किया अर्थात् माता की तीन प्रदक्षिणा देकर उन्हें प्रणाम किया।

इस प्रकार सौधर्म इन्द्र भगवान का गर्भकल्याणक सम्पन्न कर जिनमाता की सेवा में उपयुक्त देवियों को नियुक्त कर देवों के साथ पुण्य उपार्जन कर बड़ी प्रसन्नता के साथ पुनः स्वर्ग को वापस चले गये।

स्वर्ग से आई हुई देवियों में से कोई तो जिन-माता के समक्ष मंगल द्रव्य रखती थीं, कई देवियों ने महादेवी की शय्या को सुसज्जित करने का भार अपने ऊपर लिया, किसी ने दिव्य आभूषण पहिनाने का भार लिया तथा किसी ने माला तथा रत्नों के गहने देने का। कई देवियाँ माता की अंग-रक्षा के लिए खुले खड्गों से सज्जित होकर पहरा देती थीं एवं कई उनके लिए भोग्य सामग्रियों को एकत्रित करने में संलग्न थीं। कई एक देवियाँ पुष्प-रज से आच्छादित राज्य-प्रांगण की सफाई में लगी थीं एवं चन्दन-जल का छिड़काव करती जाती थीं।

उक्त देवियों ने रत्नों के चूर्ण से स्वस्तिक आदि की रचना की एवं महल को कल्पवृक्ष के पुष्पों से सजाया। किसी ने महलों के ऊँचे शिखरों पर रत्नों के दीप जलाये, जो अन्धकार को विनष्ट करने वाले थे। वस्त्र पहनाना, आसन बिछाना आदि समस्त कार्य देवियाँ ही करती थीं। महादेवी की वन-क्रीड़ा के समय मधुर गीत, सुन्दर नृत्य एवं धार्मिक कथायें सुनाकर वे माता को सुख पहुँचाया करती थीं। इस प्रकार जिनदेव की माता महादेवी त्रिशला की सेवा देवियों द्वारा होती रही एवं उनकी शोभा अनुपम थी।

जब नवम मास निकट आया, तो गर्भवती महादेवी की बुद्धि अति प्रखर होती गई। उन्हें प्रसन्न रखने के उद्देश्य से देवियाँ मनोहर प्रहसन किया करतीं एवं तरह-तरह की कवितायें सुनाया करती थीं। देवियाँ कुछ गूढ़ अर्थपूर्ण पहेलियाँ महादेवी से पूछा करती थीं एवं महादेवी उनका समुचित उत्तर दे दिया करती थीं। उदाहरण के रूप में निम्न पहेली एवं उसका उत्तर मनन करने योग्य है –

विरक्ता नित्यकामिन्या, कामुकोऽकामुको महान्।
सस्पृहो निःस्पृहो लोके, परात्मान्यश्च यः स कः।।1।।

अर्थात् जो वैरागी होने पर भी सर्वदा कामिनी की इच्छा रखता है एवं निस्पृही होने पर भी इच्छा किया करता है, वह विलक्षण पुरुष इस संसार में कौन है? यह तो हुई पहेली। महादेवी ने पहेली का श्लोक में ही उत्तर दिया। महादेवी का उत्तर था – 'परमात्मा'। कारण, 'परमात्मा' का एक अर्थ तो विलक्षण पुरुष होता है एवं दूसरा अर्थ परमात्मा भी होता है। परमात्मा नित्य – कामिनी अर्थात् अविनाशी मोक्षरूपी स्त्री में अनुरागी है एवं उसी की इच्छा रखने वाला होता है। दूसरी एक पहेली भी सुनिये –

दृश्योऽदृश्योऽस्ति चिद्भूषः, प्रकृत्या निर्मलोऽव्ययः।
हन्ता देहविधेर्देवो, नाऽयं को वर्ततेऽद्य सः ।।2।।

अर्थात् जो अदृश्य है, फिर भी देखने योग्य है; स्वभाव से निर्मल होने पर भी देह की रचना का नाशक है, पर महादेव नहीं है, ऐसा वह कौन है? इस श्लोक का महादेवी ने 'देवोना' शब्द से उत्तर दिया। 'देवोना' का अर्थ है – देवरूपी

मनुष्य श्री अर्हन्त देव।

इस प्रकार उन देवियों ने प्रश्नोत्तर के रूप में महादेवी से अनेक पहेलियाँ पूछीं। वे भिन्न प्रकार की हैं– 'हे सुन्दरी! असंख्यात मनुष्य एवं देवों द्वारा पूज्य तीनों जगत् का गुरु तेरा पुत्र अनेक उत्तम गुणों से युक्त तथा विजयी हो। जिसने दूसरी स्त्रियों से प्रेम करना त्याग दिया है, पर फिर भी अविनाशी मोक्ष-सुख में अनुरागी है, ऐसा गुणों का समुद्र तेरा पुत्र हमारी रक्षा करे। हे जगत् का कल्याण करने वाली, तीन लोकों के स्वामी को गर्भ में धारण करने वाली! हरिहरादि के मन की रक्षा कर।

जगत् के कल्याण के लिए अपने गर्भ में तीर्थंकर को धारण करने वाली, हे महादेवी! धर्म-तीर्थ स्थापित करनेवाले की उत्पत्ति में देव–विद्याधर–भूमिगोचरी जीवों का तीर्थ-स्थान बन। (इसमें 'अठ' क्रिया गुप्त है)

देवी का प्रश्न –हे देवी महारानी! इहलोक एवं परलोक में कल्याण करने वाला कौन है?

माता का उत्तर –जो धर्म-तीर्थ के प्रवर्तक हैं, वे ही श्री अर्हन्त देव तीनों जगत् का कल्याण करने वाले हैं।

देवी का प्रश्न –गुरुओं में सबसे महान कौन है?

माता का उत्तर –जो तीन जगत् का गुरु एवं सब अतिशयों से तथा दिव्य अनन्त गुणों से सुशोभित है, ऐसे श्री जिनेन्द्र देव ही महान् गुरु हैं।

देवी का प्रश्न –इस जगत् में किसके वचन श्रेष्ठ एवं प्रामाणिक हैं?

माता का उत्तर –जो सबको जानने वाले, दुनिया का हित करने वाले, अठारह दोषरहित एवं वीतरागी हैं, ऐसे श्री अर्हन्त भगवान के वचन ही श्रेष्ठ एवं मानने योग्य हैं। इसके सिवा दूसरे मिथ्यामतियों के नहीं।

देवी का प्रश्न –जन्म-मरणरूपी विष को दूर करने वाला अमृत के समान क्या पीना चाहिये?

माता का उत्तर –श्री जिनेन्द्र के मुख–कमल से निकला हुआ **'ज्ञानामृत'** पीना चाहिये। दूसरे मिथ्या–ज्ञानियों के विषरूपी वचन नहीं मानने चाहिये।

देवी का प्रश्न –इहलोक में बुद्धिमानों को किसका ध्यान करना चाहिये?

माता का उत्तर –पंच-परमेष्ठी का, जैन शास्त्र का एवं आत्म-तत्त्व का ध्यान करना चाहिये, दूसरा आर्त-रौद्र रूप खोटा ध्यान कभी नहीं करना चाहिये।

देवी का प्रश्न –शीघ्र कौन-सा काम करना चाहिए?

माता का उत्तर –जिससे संसार के भोगों का नाश हो, ऐसे अनन्त ज्ञान-चारित्र का पालन करना चाहिए, मिथ्यात्वादिकों का नहीं।

देवी का प्रश्न –इस संसार में सज्जनों के साथ में जाने वाला कौन है?

माता का उत्तर –दयामय धर्म ही सहायता करने वाला बन्धु है; जो सब दुःखों से रक्षा करने वाला है। इसके अतिरिक्त अन्य कोई सहगामी नहीं है।

देवी का प्रश्न –धर्म के क्या–क्या लक्षण हैं एवं कार्य क्या हैं?

माता का उत्तर –बारह तप, रत्नत्रय, महाव्रत, अणुव्रत, शील एवं उत्तम क्षमा आदि दशलक्षण धर्म–ये सब धर्म के कार्य एवं लक्षण हैं।

देवी का प्रश्न –इहलोक में धर्म का फल क्या है?

माता का उत्तर –तीन लोक के स्वामियों की इन्द्र–धरणेन्द्र–चक्रवर्ती पद-रूप सम्पदायें, श्री जिनेन्द्र का अनन्त सुख, ये सब धर्म के ही उत्तम फल हैं।

देवी का प्रश्न –धर्मात्माओं के चिन्ह क्या हैं?

माता का उत्तर –शान्त स्वभाव, अभिमान का न होना एवं रात-दिन शुद्ध आचरणों का पालन–ये ही धर्मात्माओं की पहिचान है।

देवी का प्रश्न –पाप के चिन्ह क्या-क्या हैं?

माता का उत्तर –मिथ्यात्वादि, क्रोधादि कषाय, खोटी संगति एवं छः तरह के अनायतन–ये पाप के चिन्ह हैं।

देवी का प्रश्न –पाप का फल क्या है?

माता का उत्तर –जो अपने को अप्रिय है, दुःख का कारण एवं दुर्गति कराने वाला, अन्य रोग-क्लेशादि देने वाला है–ऐसे सभी निन्दनीय कार्य पाप के फल हैं।

देवी का प्रश्न –पापी जीवों की पहिचान क्या है?

माता का उत्तर –क्रोध आदि कषायों का बहुत होना, दूसरों की निन्दा, अपनी प्रशंसा एवं रौद्रादि खोटे ध्यान का होना–ये सब पापियों के चिन्ह हैं।

देवी का प्रश्न –असली लोभी कौन है?

माता का उत्तर –बुद्धिमान, मोक्ष का चाहने वाला भव्य जीव निर्मल आचरण से तथा कठिन तप से केवल धर्म का सेवन करने वाला ही असली लोभी है।

देवी का प्रश्न –इहलोक में विचारशील कौन है?

माता का उत्तर –जो मन में निर्दोष देव-शास्त्र-गुरु का एवं उत्तम धर्म का विचार करता है, दूसरे का नहीं।

देवी का प्रश्न –धर्मात्मा कौन है?

माता का उत्तर –जो श्रेष्ठ उत्तम क्षमा आदि दशलक्षणयुक्त धर्म का पालन करता है। श्री जिनेन्द्रदेव की आज्ञा का पालन करने वाला ही बुद्धिमान, ज्ञानी एवं व्रती है–वही धर्मात्मा है, दूसरा कोई नहीं।

देवी का प्रश्न –परलोक जाते समय मार्ग का भोजन क्या है?

माता का उत्तर –दान, पूजा, उपवास, व्रत, शील एवं संयमादि से उपार्जन किया गया जो निर्मल पुण्य है, वही परलोक के मार्ग का उत्तम भोजन है।

देवी का प्रश्न –इहलोक में किसका जन्म सफल है?

माता का उत्तर –जिसने मोक्ष-लक्ष्मी के सुख के प्रदाता उत्तम भेद–विज्ञान को पा लिया, उसी का जन्म सफल है, दूसरे का नहीं।

देवी का प्रश्न –संसार में सुखी कौन है?

माता का उत्तर –जो सब परिग्रह की उपाधियों से रहित एवं ध्यानरूपी अमृत का पान करने वाला वन में रहता है अर्थात् योगी है, वही सुखी है, अन्य कोई नहीं।

देवी का प्रश्न –इस संसार में चिन्ता किस वस्तु की करनी चाहिए?

माता का उत्तर –कर्मरूपी शत्रुओं के नाश करने की एवं मोक्ष-लक्ष्मी पाने की चिन्ता करनी चाहिये, दूसरे इन्द्रियादिक विषय–सुखों की नहीं।

देवी का प्रश्न –महान उद्योग किस कार्य में करना चाहिये?

माता का उत्तर –मोक्ष देने वाले रत्नत्रय, तप, शुभ योग, सुज्ञानादिकों के पालने में महान यत्न करना चाहिये, धन एकत्रित करने में नहीं। कारण, धन तो धर्म से प्राप्त होगा ही।

देवी का प्रश्न –मनुष्यों का परम मित्र कौन है?

माता का उत्तर –जो तप-दान-व्रतादिरूप धर्म को आग्रहपूर्वक समझाकर पालन करावे एवं पाप कर्मों को छुड़ावे।

देवी का प्रश्न –इस संसार में जीवों का शत्रु कौन है?

माता का उत्तर –जो हित करने वाले तप-दीक्षा-व्रतादिकों का पालन नहीं करने दे, वह दुर्बुद्धि अपना एवं दूसरे का– दोनों का शत्रु है।

देवी का प्रश्न –प्रशंसा करने योग्य क्या है?

माता का उत्तर –थोड़ा धन होने पर भी सुपात्र को दान देना, निर्बल शरीर होने पर भी निष्पाप तप करना, यही प्रशंसनीय है।

देवी का प्रश्न –हे महादेवी! आप के समान महारानी कौन है?

माता का उत्तर –जो धर्म के प्रवर्तक, जगत् के गुरु, ऐसे तीर्थंकर देवाधिदेव को उत्पन्न करे, वही मेरे समान है, दूसरी कोई नहीं।

देवी का प्रश्न –पण्डिताई क्या है?

माता का उत्तर –शास्त्रों को जानकर खोटा आचरण, खोटा अभिमान जरा भी नहीं करना एवं अन्य पाप की क्रियायें भी नहीं करना, यही पण्डिताई है।

देवी का प्रश्न –मूर्खता किसे कहते हैं?

माता का उत्तर –ज्ञान के हित का कारण, निर्दोष तप, धर्म की क्रिया को जानकर आचरण नहीं करना।

देवी का प्रश्न –बड़े भारी चोर कौन हैं?

माता का उत्तर –जो मनुष्यों के धर्मरत्न को चुराने वाले, पाप के कर्ता एवं अनर्थ करने वाले हैं। ऐसे पाँच इन्द्रियरूपी चोर हैं।

देवी का प्रश्न –इस संसार में शूरवीर कौन हैं?

माता का उत्तर –जो धैर्यरूपी खड्ग से परिषहरूपी महायोद्धाओं को, कषायरूपी शत्रुओं को तथा काम-मोह आदि शत्रुओं को जीतने वाले हों।

देवी का प्रश्न –देव कौन हैं?

माता का उत्तर –जो सबको जानने वाले, क्षुधादि अठारह दोषों से रहित, अनन्त गुणों के समुद्र, धर्म के प्रवर्तक हों, ऐसे अर्हन्त प्रभु ही देव हैं।

देवी का प्रश्न –महान गुरु कौन हैं?

माता का उत्तर –जो इस संसार में बाह्य-आभ्यन्तर दोनों प्रकार के परिग्रहों से रहित हों। जगत् के भव्य जीवों के हित-साधन में उद्यत हों एवं स्वयं भी मोक्ष के लिए इच्छुक हों, वही महान गुरु हैं। दूसरा मिथ्यामती धर्मगुरु नहीं हो सकता।

इस प्रकार देवियों द्वारा किये गए प्रश्नों का उत्तर माता ने गर्भस्थ तीर्थंकर शिशु के प्रभाव से दिया। प्रथम तो महारानी की बुद्धि स्वभाव से ही निर्मल थी पुनः अपने उदर में तीन ज्ञान के धारक प्रकाशमान तीर्थंकर देव को धारण करने से वे अत्यधिक पवित्र हो गई थीं। महारानी के गर्भ में स्थित तीर्थंकर बालक को कोई कष्ट नहीं हुआ, क्योंकि सीप में रहने वाली जल-बिन्दु में कभी विकार उत्पन्न नहीं हो सकता है। उस महादेवी के उदर की त्रिवली भी भंग नहीं हुई। उदर पूर्व जैसा ही रहा, पर गर्भ की क्रमशः वृद्धि होती गई–यह सब प्रभु का ही प्रभाव था।

गर्भ में स्थित प्रभु के प्रभाव से महारानी की मुखाकृति बड़ी ही शोभायमान हो गई। उन्हें देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि मानो वे असंख्य रत्नों को धारण करने वाली पृथ्वी ही हों। अप्सराओं के साथ इन्द्र के द्वारा भेजी गई इन्द्राणी ही जिनकी सेवा कर रही हो, उनकी कान्ति एवं उनके मुख का वर्णन नहीं किया जा सकता है। इस प्रकार लगातार नौ महीने तक महान उत्सव सम्पन्न होते रहे।

जन्मकल्याणक

देखते-देखते नवमा महीना पूर्ण हो गया। शुभ चैत्र मास की शुक्ला त्रयोदशी के दिन अर्यमा नाम के शुभ योग में एवं शुभ लग्न में त्रिशला महादेवी ने अलौकिक पुत्र को जन्म दिया है। वह पुत्र अपने उज्ज्वल शरीर की कान्ति से अन्धकार को विनष्ट करने वाला, जगत् का हित करने वाला मति–श्रुत–अवधि तीनों ज्ञान को धारण करने वाला, महादैदीप्यमान एवं धर्म–तीर्थ का प्रवर्तक तीर्थंकर हुआ।

भगवान महावीर का जन्म तेरस की रात्रि में हुआ है ऐसा जयधवला में वर्णित है–

"आसाढ़ जोण्हपक्खछट्ठीए कुंडलपुरणगराहिव-णाहवंस-सिद्धत्थणरिंदस तिसिला-देवीए गब्भमागंतूण तत्थ अट्ठदिवसाहियणवमासे अच्छिय चइत्तसुक्कपक्ख–तेरसीए रत्तीए उत्तरफग्गुणीणक्खत्ते गब्भादो णिक्खंतो वड्ढमाणजिणिंदो।"

आषाढ़ मास की शुक्ल पक्ष की षष्ठी के दिन कुंडलपुर नगर के स्वामी नाथवंशी सिद्धार्थ नरेन्द्र की रानी त्रिशला देवी के गर्भ में आकर और वहाँ नव मास आठ दिन रहकर चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन रात्रि में उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र के रहते हुये वर्द्धमान जिनेंद्र ने जन्म लिया।

उनके जन्म के साथ-साथ सभी दिशायें निर्मल हो गयीं। आकाश में निर्मल वायु बहने लगी। स्वर्ग से कल्पवृक्षों के पुष्पों की वर्षा हुई एवं चारों निकायों के देवों के आसन कम्पायमान हो गये। स्वर्ग में बिना बजाये ही वाद्यों की ध्वनि होने लगी, मानो वे भी भगवान का जन्मोत्सव मना रहे हों। इसके अतिरिक्त अन्य तीनों जातियों (निकायों) के देवों के महलों में शंख–भेरी आदि के शब्द होने लगे।

कल्पेषु घण्टा भवनेषु शंखो, ज्योतिर्विमानेषु च सिंहनादः।
दध्वान भेरी वनजालयेषु, यज्जन्मनि ख्यात ज़िनः स एषः।।

कल्पवासी देवों के यहाँ घंटे बजने लगे, भवनवासी देवों के यहाँ शंखध्वनि होने लगी, ज्योतिष्क देवों के यहाँ सिंहनाद होने लगा और व्यंतर देवों के यहाँ भेरी बजने लगी। जिनके जन्म के समय ऐसा हुआ ये जिन भगवान् वे ही हैं।

जैसे कि आज टेलीविजन या रेडियो का बटन दबाते ही हजारों किलोमीटर दूर के भी दृश्य और संगीत सामने आ जाते हैं किंतु वहाँ तो बटन दबाने की आवश्यकता ही नहीं पड़ी प्रत्युत् तीर्थंकर प्रकृति का पुण्यरूपी बटन अपने आप हीं दब गया और 40 करोड़ मील से अधिक ऊँचाई पर स्थित स्वर्गलोक में अतिशय फैल गया। तत्क्षण ही सौधर्म इंद्र असंख्य देव परिवारों के साथ मध्यलोक में आये और जन्मजात शिशु को सुमेरु पर्वत पर ले जाकर 1008 कलशों से उनका जन्माभिषेक संपन्न किया।

कुछ विद्वान सहज ही कह देते हैं कि वे तीर्थंकर हम आप जैसे साधारण मानव थे लेकिन ऐसा नहीं है वे तीर्थंकर प्रकृति नामकर्म के बंध करने तक तो साधारण कहे जा सकते हैं किन्तु तीर्थंकर प्रकृति को बांध लेने के बाद उनमें कुछ विशेष ही अतिशय प्रगट हो जाते हैं इसीलिए तो श्रीसमन्तभद्रस्वामी ने कहा है–

मानुषीं प्रकृतिमभ्यतीतवान्, देवतास्वपि च देवता यतः।
तेन नाथ! परमासि देवता, श्रेयसे जिनवृष! प्रसीद नः।।

हे नाथ! आपने मनुष्य योनि में जन्म तो लिया है किंतु आप मानुषी प्रकृति का उल्लंघन कर चुके हैं इसलिए आप देवताओं के भी देवता हैं यही कारण है कि आप परमदेवता हैं।

हे जिनधर्म तीर्थंकर! आप हमारे कल्याण के लिए हम पर प्रसन्न होइये।

सौधर्म स्वर्ग का इन्द्र भगवान के जन्म का समाचार पाकर उनका जन्मकल्याणक मनाने का विचार करने लगा। उसी समय इन्द्र की आज्ञा से देवों की सेनायें 'जय-जयकार' करती हुई स्वर्ग से उतरीं। उनकी विशाल सेनायें समुद्र से उठती हुई प्रचण्ड लहरों के समान प्रतीत होती थीं। गजराज, अश्व, रथ, गन्धर्व, नर्तकी, पैदल एवं बैल आदि से युक्त

सात प्रकार की सेनायें निकलीं। तत्पश्चात् सौधर्म स्वर्ग का स्वामी इन्द्र अपनी इन्द्राणी सहित ऐरावत हाथी पर आरूढ़ होकर चला। उसके चारों ओर देवों की सेनायें फैली हुईं थीं।

इन्द्र के पीछे–पीछे बड़ी विभूतियों के साथ सामानिक देव आदि चल रहे थे। उस समय दुन्दुभी आदि वाद्यों की ध्वनि एवं देवों की 'जय-जयकार' से सारा आकाश गूँजने लगा। मार्ग में कितने ही देव गाते हुए चल रहे थे। कोई नृत्य करता जाता था एवं कोई प्रसन्नता के कारण दौड़ लगा रहा था। उनके छत्र–चमर एवं ध्वजाओं से समस्त आकाश-मण्डल आच्छादित हो गया था। वे चारों निकाय के देव बड़ी विभूति के साथ क्रम-क्रम से कुण्डलपुर जा पहुँचे। उस समय आकाश में ऊपर एवं बीच का भाग देव–देवियों से घिर गया था। राजमहल का आँगन इन्द्रादिक देवों से बिलकुल भर गया था।

इन्द्राणी ने तत्काल प्रसूतिग्रह में जाकर दिव्यशरीरधारी कुमार एवं जिनमाता का दर्शन किया। वे बारम्बार उन्हें प्रणाम कर जिनमाता के आगे खड़ी होकर उनके गुणों की प्रशंसा करने लगीं। इन्द्राणी ने कहा–'हे महादेवी! आप तीनों ज़गत् के स्वामी को उत्पन्न करने के कारण समग्र विश्व की माता हो एवं आप ही महादेवी भी हो। महान देव उत्पन्न कर आपने अपना नाम सार्थक कर लिया है। संसार में आपकी तुलना की अन्य कोई स्त्री नहीं है।'

इस प्रकार महादेवी की स्तुति कर इन्द्राणी ने उन्हें निद्रित कर दिया। जब जिनमाता सो गयीं, तो इन्द्राणी ने उनके आगे एक माया का बालक बना कर सुला दिया एवं स्वयं अपने हाथों से शिशु भगवान को उठाकर उनके शरीर का स्पर्श किया। वे बारम्बार उनके मुख का चुम्बन करने लगीं। भगवान के शरीर से निकलती हुई उज्ज्वल ज्योति को देखकर उनके हर्ष का ठिकाना न रहा। तत्पश्चात् वह उस बालक भगवान को लेकर आकाश-मार्ग की ओर चलीं। वे भगवान आकाश में ठीक सूर्य की तरह जान पड़ते थे। समस्त दिक्कुमारियाँ छत्र, ध्वजा, कलश, चमर एवं स्वस्तिक आदि आठ मांगलिक द्रव्यों को लेकर इन्द्राणी के आगे-आगे चल रही थीं।

उस समय इन्द्राणी ने जगत् को आनन्द प्रदान करने वाले जिनदेव को लाकर बड़ी प्रसन्नता से इन्द्र को सौंप दिया। भगवान की अपूर्व सुन्दरता व उनकी तेजोमय दीप्ति देखकर देवों का स्वामी इन्द्र उनकी स्तुति करने लगा–'हे देव! आप हमें परम आनन्द प्रदान करने के लिए बाल-चन्द्रमा की भांति लोक को प्रकाश देने के लिए प्रगट हुए हो। हे ज्ञानी! आप विश्व के स्वामी इन्द्र–धरणेन्द्र–चक्रवर्ती के भी स्वामी हो। धर्म-तीर्थ के प्रवर्तक होने के कारण आप ही ब्रह्मा भी हो।'

'हे देव! योगीराज आपको ज्ञानरूपी सूर्य का उदयाचल मानतें हैं। आप भव्य पुरुषों के रक्षक एवं मोक्षरूपी स्त्री के पति हो। आप मिथ्याज्ञानरूपी अन्धकूप में पड़े हुए अनेक भव्य जीवों को धर्मरूपी हाथ का सहारा देकर उद्धार करने वाले हो। संसार के सभी विचारशील व्यक्ति आपकी अलौकिक वाणी सुनकर अपने कर्मों को नष्ट कर परम पवित्र मोक्ष प्राप्त करेंगे एवं अनेक भव्य जीवों को स्वर्ग की प्राप्ति होगी। आज आपके अभ्युदय से सन्त पुरुषों को बड़ी प्रसन्नता हुई। वस्तुतः आप ही धर्म की प्रवृत्ति के कारण हैं।'

अतएव हे देव! हम आपको प्रणाम करते हैं, आपकी सेवा करते हैं, भक्ति प्रकट करते हैं एवं प्रसन्नतापूर्वक केवल आपकी आज्ञा का पालन करते हैं–अन्य मिथ्यात्वी देव की नहीं।' इस तरह देवों का स्वामी सौधर्म स्वर्ग का इन्द्र भगवान की स्तुति कर उन्हें गोद में उठा कर सुमेरु पर्वत पर चलने को उद्यत हुआ। उसने अन्य देवों को भी सुमेरु पर्वत पर चलने के लिए आज्ञा दी। उस समय सभी देवों ने 'प्रभु की जय हो, आनन्द की वृद्धि हो' आदि शब्दों से 'जय-जयकार' की। उनकी ध्वनि समस्त दिशाओं में फैली।

इन्द्र के साथ-साथ आये देव भी 'जय-जय' शब्द करते हुए आनन्द मनाने लगे। प्रसन्नता के कारण उनका शरीर रोमांचित हो उठा। आकाश में प्रभु के समक्ष अप्सरायें नृत्य करने लगीं। गन्धर्वदेव भी वीणा आदि वाद्यों के साथ गान करने लगे। देवों की दुन्दुभी की आवाज से सारा आकाश-मण्डल गूँज उठा। किन्नरियाँ हर्षित होकर अपने किन्नरों के साथ जिनदेव का गुणगान करने लगीं। उस समय सब देव भगवान का दर्शन कर अपने जीवन को सार्थक समझने लगे। वे बड़ी देर तक भगवान का दिव्य रूप देखते रहे। इन्द्र की गोद में विराजमान भगवान को ऐशान स्वर्ग के इन्द्र ने दिव्य छत्र लगाया। सनतकुमार एवं माहेन्द्र स्वर्ग के इन्द्र भी चमर ढुराते हुए भगवान की सेवा करने लगे। श्री जिनेन्द्र भगवान की ऐसी विभुता देखकर अनेक देवों ने उसी समय सम्यक्त्व धारण किया। उन्होंने इन्द्र के वचनों को प्रमाण माना। वे इन्द्रादि देव ज्योति-चक्र को लाँघकर अपने शरीर के आभूषणों की किरणों से आकाश को प्रकाशित करते हुए जा रहे थे।

जन्माभिषेक

परस्पर सैकड़ों उत्सव मनाते हुए वे देव बड़ी विभूति के साथ उत्तुंग सुमेरु पर्वत पर जा पहुँचे। उस सुमेरु पर्वत की ऊँचाई एक लाख योजन की है। पर्वत के आरम्भ में ही 'भद्रशाल वन' है। उस वन में परकोटा एवं ध्वजाओं से सुशोभित कल्याणकारकं चार जैन-मन्दिर सुशोभित हैं। उस वन से 500 योजन ऊपर 'नंदनवन' है, यह पाँच सौ योजन प्रमाण कटनीरूप है। इसकी भी चारों दिशाओं में चार चैत्यालय हैं। इसके बाद साढ़े बासठ हजार योजन की ऊँचाई पर महा रमणीक 'सौमनस वन' है, जहाँ पर सभी ऋतुओं में फल देने वाले एक सौ आठ वृक्ष हैं एवं जिन-चैत्यालयों की संख्या चार है। उस सौमनस वन से छत्तीस हजार योजन की ऊँचाई पर चौथा एवं अन्तिम 'पाण्डुक वन' है। वहाँ जिन-चैत्यालयों के ऊँचे-ऊँचे समूह हैं। उस वन की सुन्दरता अपूर्व है। वन के बीच में एक चूलिका है। वह चालीस योजन ऊँची है। उसी चूलिका के ऊपर स्वर्ग है। मेरु की ईशान दिशा में सौ योजन लम्बी, पचास योजन चौड़ी, आठ योजन ऊँची एक 'पाण्डुक' नाम की शिला है। वह सिद्ध शिला चन्द्रमा के समान सुशोभित है। छत्र, चमर, स्वस्तिक, दर्पण, कलश, ध्वजा, ठोना, पंखा ये अष्ट मंगलद्रव्य उस शिला पर रक्खे हुए थे।

शिला के मध्य भाग में वैडूर्यमणि के सदृश रंगीन एक सिंहासन है। उसकी लम्बाई-चौड़ाई एवं ऊँचाई आधा योजन प्रमाण है। जिनेन्द्र भगवान के स्नान-जल से पवित्र हुए रत्नों के तेज से वह सिंहासन ऐसा प्रतीत होता था कि मानो सुमेरु का दूसरा शिखर ही हो। उसके ठीक दक्षिण की ओर दूसरा सिंहासन सौधर्म इन्द्र का है एवं उत्तर दिशा की ओर ईशान इन्द्र के बैठने का आसन है। सौधर्म स्वर्ग के इन्द्र ने अन्य देवों के साथ महोत्सव सम्पन्न करते हुए, स्नान कराने के उद्देश्य से भगवान को उसी शिला पर विराजमान किया। देवराज ने सर्वप्रथम उस पर्वतराज की परिक्रमा की।

इस प्रकार देवेन्द्र ने पुण्योदय से बड़ी विभूति के साथ वर्तमान कालखण्ड के अन्तिम तीर्थंकर (शिशु) को शिला पर विराजमान किया अतः भव्यजन यदि ऐसी अतुलनीय सम्पदा एवं अपरम्पार सुख की आकांक्षा रखते हैं, तो उन्हें सोलहकारण भावनाओं के चिन्तवन से निर्मल पुण्य का उपार्जन करना चाहिए। 'तीर्थंकर' सदृश अक्षुण्ण सम्पदा प्राप्त कराने में पुण्य ही सहायक होता है। पुण्य से इस जगत् में पवित्रता की वृद्धि होती है। पुण्य के अतिरिक्त इस जगत् में दूसरी कोई वस्तु सुख प्रदान करने वाली नहीं है। इस पुण्य का मूल कारण व्रत है। प्राणियों को पुण्य के बल से ही अनेक गुणों की प्राप्ति हुआ करती है।

श्री जिनेन्द्र भगवान के महान अभिषेक उत्सव को देखने की इच्छा रखनेवाले धार्मिक देव उस पर्वतराज को घेर कर बैठ गये। दिक्पाल देव अपनी-अपनी मण्डली को साथ लेकर अपनी दिशा की ओर बैठे। उस स्थान पर देव शिल्पियों ने एक ऐसे मण्डप का निर्माण किया था, जिसमें सभी देव सुखपूर्वक बैठ सकते थे। मण्डप में यत्र-तत्र कल्पवृक्ष की मालायें लटक रही थीं। उन मालाओं पर बैठे हुए भौंरे इस प्रकार गूँज रहे थे, मानो वे प्रभु का गुण-गान ही कर रहे हों।

गन्धर्व देव एवं किन्नरियों ने बड़े ही सुमधुर स्वरों में जिनदेव के कल्याणकारी गुणों का गान आरम्भ किया। अनेक देवियाँ हाव-भावपूर्वक नृत्य करने लगीं। देवों के विविध प्रकार के वाद्य बजने आरम्भ हो गये। कुछ देव पुण्यादि की अभिलाषा से पुष्पों की वर्षा करने लगे। इसके पश्चात् इन्द्र ने अभिषेक करने के लिए प्रस्ताव रख कलशों की रचना की। कलश-निर्माण-मंत्र जानने वाले सौधर्म इन्द्र ने मोतियों की माला एवं चन्दन से युक्त कलश को हाथ में लिया एवं सब कल्पवासी देव 'जय-जय' शब्द करते हुए कल्याणक संबंधी कार्य करने लगे। इन्द्राणी एवं देवियाँ भी कार्य करने में संलग्न हो गईं। उनके हर्ष का पारावार नहीं था। 'स्वयम्भू' भगवान का शरीर स्वभाव से ही पवित्र है। उनके रक्त का रंग दुग्ध के सदृश श्वेत है। अतएव उनके लिए क्षीर-समुद्र के जल के अतिरिक्त अन्य कोई जल स्पर्श करना उचित नहीं है, ऐसा सोच कर वे देवगण पर्वत से लेकर समुद्र तक कतारें बाँध कर खड़े हो गये। उस समय इन्द्र ने श्रीजिनेन्द्र को स्नान कराने के लिए मोतियों के हार से सुशोभित आठ योजन गहरे एवं एक योजन मुखवाले सुवर्णमय कलश को पकड़ने के उद्देश्य से दिव्य आभूषणों से युक्त हजार भुजायें बना ली। उस समय इन्द्र की शोभा देखने ही योग्य थी। एक सहस्र हाथों से एक हजार कलशों को पकड़े हुए इन्द्र ऐसा प्रतीत होता था, मानो वह 'भाजनांग' जाति का कल्पवृक्ष ही हो।

सौधर्म इन्द्र ने 'जय-जय' शब्द का गम्भीर उच्चारण करते हुए भगवान के मस्तक पर पहली जलधारा छोड़ी। अन्य देव भी उस समय 'जय हो, हमारी रक्षा करो' आदि जयघोष करने लगे। उनके गम्भीर निनाद से पर्वतराज पर बड़ा कोलाहल मचा। दूसरे देवेन्द्र भी सौधर्म इन्द्र के साथ भगवान के मस्तक पर गंगा की तीव्र धारा के सदृश जलधारा डालने लगे।

वह जलधारा बड़ी तीव्र गति से भगवान के मस्तक पर पड़ने लगी। वह धारा यदि दूसरे किसी पहाड़ पर पड़ती, तो उसके खण्ड-खण्ड हो जाते पर अतुलित बलशाली होने के कारण भगवान के शरीर पर वह पुष्प जैसी सुकोमल अनुभूत हुई। जल के छींटे आकाश में बहुत ऊँचे उछलते हुए ऐसे प्रतीत होते थे, मानो वे भगवान के शरीर का स्पर्श करने से पापों से मुक्त होकर ऊर्ध्व गति को जा रहे हैं। स्नान-जल के कितने ही छींटे मोतियों जैसे मालूम पड़ते थे। स्नान-जल का ऊँचा प्रवाह उस पर्वतराज के वनों में ऐसे वेग से बढ़ा कि देखने से मालूम होने लगा कि पर्वतराज को खण्ड-खण्ड कर देगा।

भगवान के स्नान किये हुए जल से डूबी हुई वनस्थली ऐसी दीखने लगी, मानो वह दूसरा क्षीरसमुद्र ही हो। महान उत्सवों से सम्पन्न, नृत्य-गीतादि से युक्त उस समय का उत्सव देखकर देवों के आनन्द की सीमा न रही। इन्द्र ने आत्म-शुद्धि के लिए भगवान को शुद्ध स्नान कराया।

स्नान की जलधारा भगवान के शरीर का स्पर्श कर अत्यन्त पवित्र हो गई। अपार पुण्य प्राप्त कराने वाली एवं संसार की समस्त इच्छाओं की पूर्ति करने वाली वह जलधारा हमें एवं भव्य जीवों को मोक्ष-लक्ष्मी प्रदान करे। जो जलधारा पुण्यास्त्र जलधारा के समान मनवांछित पदार्थों को प्रदान करने वाली है, वह समस्त भव्य जीवों को इच्छित वस्तुयें प्रदान करे।

वह जलधारा तीक्ष्ण खड्ग के सदृश सत्पुरुषों के विघ्नों का नाश कर देती है। वह दुःख एवं असह्य वेदना का नाश करने वाली है। जो जलधारा भगवान के शरीर से लगकर पवित्र हो चुकी है, वह हमारे दुःख (कर्मरूपी मैल) को हटा कर हमें पवित्र करे। इस प्रकार देवों के अधिपति ने भगवान का अभिषेक कर के 'भव्यों को शान्ति हो' ऐसा कहा। उस सुगन्धित जल (गन्धोदक) को देवों ने शुद्धि के लिए मस्तक पर लगाया।

अभिषेक का उत्सव सम्पन्न होने के पश्चात् तीर्थंकर, इन्द्र एवं देवताओं द्वारा पूजे गये उन भगवान श्री महावीर की दिव्य गन्ध, मोतियों के अक्षत, कल्पवृक्ष के पुष्प, अमृत के पिण्डरूपी नैवेद्य, रत्नों के दीप, अष्टांग धूप, कल्पवृक्ष के फल, अर्घ, पुष्पांजलि आदि के साथ पूजा की गई। इस प्रकार इन्द्र ने बड़ी भक्ति के साथ भगवान की प्रार्थना करते हुए अभिषेक उत्सव सम्पन्न किया पुनः इन्द्र ने इन्द्राणी एवं अन्य देवों के साथ भगवान को प्रणाम किया।

उस समय का प्राकृतिक दृश्य बड़ा ही मनोरम था। आकाश से सुगन्धित जल के साथ पुष्पों की वर्षा होने लगी। देवों ने मन्द सुगन्ध एवं शीतल वायु प्रवाहित की। वस्तुतः जिन (प्रभु) के जन्माभिषेक का सिंहासन सुमेरु पर्वत है एवं स्नान कराने वाला इन्द्र है, मेघ के समान दुग्ध से भरे हुए कलश हैं, स्वयं देवियाँ नृत्य प्रस्तुत करने वाली हैं, स्नान के लिए क्षीर-समुद्र है एवं जिस जगह देवगण सेवक हैं, भला ऐसे जन्माभिषेक की महिमा का कोई कैसे वर्णन कर सकता है? अर्थात् कोई नहीं कर सकता।

अभिषेक किये हुए भगवान (शिशु) के सर्वांग को इन्द्राणी ने उज्ज्वल वस्त्र से पोंछा। इसके बाद उसने भक्तिपूर्वक सुगन्धित द्रव्यों से उनका लेपन किया। यद्यपि वे प्रभु तीनों जगत् के तिलक थे, फिर भी भक्तिवश उसने उनके मस्तक पर तिलक लगाया। जगत् के चूड़ामणि भगवान के मस्तक में चूड़ामणि रत्न बाँधा गया। यद्यपि भगवान के नेत्र स्वभाव से ही काले थे, फिर भी लोक-व्यवहार दिखलाने के लिए उनके नेत्रों में इन्द्राणी ने अंजन लगाया।

भगवान के कानों में इन्द्राणी ने रत्नों के कुण्डल पहिनाये। प्रभु के कण्ठ में रत्नों का हार, बाहों में बाजूबन्द, हाथों में कड़े एवं अँगुलियों में अँगूठी पहिनाई। कमर में छोटी घण्टियों वाली मणियों की करधनी पहिनाई, जिसके तेज से सारी दिशायें व्याप्त हो गयीं। प्रभु के पैरों में मणिमय गोमुखी कड़े पहिनाये गये। इस प्रकार असाधारण दिव्य मण्डनों (गहनों) की कान्ति एवं स्वाभाविक गुणों से प्रदीप्त वे प्रभु ऐसे प्रतीत होने लगे, मानो लक्ष्मी के पुंज ही हों।

भगवान का दिव्य शरीर आभूषणों से द्विगुणित शोभायमान हो गया। आभूषणों से सजे हुए इन्द्र की गोद में

विराजमान श्री महावीर प्रभु को देखकर इन्द्राणी को परम आश्चर्य हुआ। इन्द्र को भी कम आश्चर्य नहीं हुआ दोनों नेत्रों से उन्हें देखने से जब इन्द्र को तृप्ति नहीं हुई, तब उसने अपने हजार नेत्र कर लिये। अन्य देव-देवियाँ भी भगवान की रूप-सुधा का पान कर अत्यन्त हर्षित हुईं।

तत्पश्चात् सौधर्म स्वर्ग का इन्द्र प्रभु की स्तुति करने के लिए प्रस्तुत हुआ। वह तीर्थंकर के पुण्योदय से उत्पन्न उनके गुणों की प्रशंसा करने लगा। उसने कहा–हे देव! बिना स्नान के ही आप का सर्वांग पवित्र है, पर मैंने अपने पापों की शान्ति के लिये आज भक्तिपूर्वक आप को स्नान कराया है। आप तीनों जगत् के आभूषण हैं, पर मैंने अपने सुखों की प्राप्ति के लिए आपको आभूषणों से विभूषित किया है। हे प्रभो! आपकी महान सत्ता आज सारे संसार पर अपने प्रभाव का विस्तार कर रही है।'

हे देव! कल्याण की कामना रखने वाले लोगों का कल्याण आपके ही द्वारा होगा। आप मोह के सागर में गिरे हुए व्यक्तियों के लिए सहारा हो। आप की अमृतमयी वाणी मोह-शत्रु का विनाश करेगी। आप धर्म-तीर्थरूपी जलपोत के द्वारा भव्य जीवों को संसार-समुद्र से पार उतारोगे। हे नाथ! आपकी वचनरूपी किरणें जीवों के मिथ्याज्ञानरूपी अन्धकार का सर्वथा विनाश करेंगी, इसमें सन्देह नहीं। हे स्वामिन्! आप केवल मोक्ष-प्राप्ति के उद्देश्य से ही नहीं उत्पन्न हुए हैं, आप का उद्देश्य मोक्ष की आकांक्षा रखने वाले जीवों को मार्ग दिखलाना भी है। आप सम्यग्दर्शनादि रत्नत्रय की वर्षा करते हुए सत्पुरुषों को निर्मल बनायेंगे। आपका जन्मधारण करना सर्वथा स्तुत्य है।

हे महाभाग! मोक्षरूपी स्त्री आप में आसक्त हो रही है। भव्य जीव तो आपकी प्रतीक्षा करते ही हैं। वे बड़े प्रेम एवं भक्ति के साथ आप की चरण-सेवा के लिए सन्नद्ध हैं। वे आप को मोहरूपी महायुद्ध के विजेता, शरण में आये हुए के रक्षक, कर्मरूपी शत्रुओं के विनाशक एवं मोक्ष-मार्ग प्रशस्त करनेवाला मानते हैं। हे प्रभो! वस्तुतः आज हम आपका जन्माभिषेक कर अत्यन्त कृतार्थ हो गये हैं एवं आप का गुणानुवाद करने से हमारा मन अत्यन्त निर्मल हो गया है।

हे गुणों के अपार सागर! आपकी स्तुति करने से हमारा जन्म सफल हो गया एवं आपकी देह-सेवा से हमारा शरीर भी सफल हुआ। जिस प्रकार खान से निकलने वाले रत्न का संशोधन करने पर उसमें और अधिक चमक आने लगती है, ठीक उसी प्रकार आप स्नान आदि से बहुत सुशोभित हो रहे हैं। हे नाथ! आप समस्त संसार के नाथ हैं एवं आप बिना किसी कारण के ही लोक-हित-चिन्तक हैं। परमानंद प्रदान करने वाले हे विभो! आप को शत शत प्रणाम है। तीनों ज्ञानरूपी नेत्रों के धारक आप को बारम्बार प्रणाम है।

धर्म-तीर्थ के प्रवर्तक हे भगवन्! उत्तम गुणों के सागर एवं मल-स्वेद आदि से रहित शरीर धारण करने वाले आपको प्रणाम है। हे देव! निर्वाण का मार्ग दिखलाने वाले, कर्मरूपी शत्रुओं के संहारक, पंचेन्द्रियों के मोह को परास्त करनेवाले, पंच-कल्याणकों के भागी, स्वभाव से निर्मल, स्वर्ग-मोक्ष प्रदान करने वाले, अनन्त महिमा से मण्डित, बिना स्वार्थ के समस्त संसारी जीवों का हित करने वाले, मोक्षरूपी भार्या के स्वामी, संसार का अन्धकार नष्ट करनेवाले, तीनों जगत् के स्वामी एवं सत्पुरुषों के गुरु, आप को करबद्ध प्रणाम है।

हे देव, मैं आपकी स्तुति इसलिये नहीं करता कि मुझे तीनों जगत् की सम्पदा प्राप्त हो, बल्कि मुझे ऐसी सम्पदा प्रदान करो, जिससे मोक्ष का मार्ग सुलभ हो। वस्तुतः इस संसार में आप के सदृश अन्य कोई दाता नहीं है।' इस प्रकार श्री महावीर स्वामी की स्तुति कर सौधर्म स्वर्ग के इन्द्र ने व्यवहार की प्रसिद्धि के लिए उनके दो नाम रख दिये कर्म-शत्रु पर विजय प्राप्त करने के कारण 'श्रीमहावीर'[1] एवं सद्गुणों की वृद्धि होने से 'वर्द्धमान'। इस प्रकार भगवान का नामकरण कर इन्द्र ने देवों के साथ उनको ऐरावत गजराज पर बिठा कर कुण्डलपुर की ओर प्रस्थान किया।

कुण्डलपुर में जन्म महोत्सव

उस समय सारा नगर देव-देवियों से भर गया था। तत्पश्चात् इन्द्र ने थोड़े से देवों को साथ लेकर राजभवन में प्रवेश किया। वहाँ अत्यन्त रमणीक महल के आँगन में रत्नों के सिंहासन पर शिशु-भगवान को विराजमान किया। अपने बन्धु-

---

[1] महावीर पुराण में इंद्र द्वारा 'श्रीमहावीर' नाम आया है। किन्तु उत्तरपुराण में 'वीर' नाम आया है।

बान्धवों के साथ महाराज सिद्धार्थ अनुपम गुण-कांतियुक्त पुत्र को देखने लगे।

इन्द्राणी ने जाकर मायामयी निद्रा में लीन महारानी को जगाया। उन्होंने बड़े प्रेम से आभूषणों से युक्त अपूर्व कान्तिवाले पुत्र को देखा। इन्द्राणी सहित इन्द्र को देखकर जगत्-पिता की माता को बड़ी प्रसन्नता हुई। उन्होंने समझ लियां कि आज हमारा मनोरथ सिद्ध हो गया। इसके पश्चात् ही सब देवों ने मिल कर माता-पिता को वस्त्राभूषणों से अलंकृत कर उनकी विधिवत् पूजा की। इन्द्र ने बड़ी श्रद्धा के साथ माता-पिता की स्तुति की। उसने कहा'आप दोनों संसार में धन्य हो, आप श्रेष्ठ पुण्यवान एवं चराचर में प्रधान हो।'

आप विश्व के सम्मान एवं विश्व के माता-पिता हो। तीनों लोक के पिता को उत्पन्न करने के कारण आज आपकी मान्यता सारे संसार में है। आपकी कीर्ति अक्षुण्ण है, क्योंकि भविष्य में सबका उपकार एवं कल्याण होने में आप दोनों सहभागी हो। आज से आपका यह गृह चैत्यालय मंदिर के सदृश हो गया है एवं गुरु (तीर्थंकर) के सम्बन्ध से आप हमारे पूज्य एवं मान्य हो'। इस प्रकार इन्द्र ने माता-पिता की स्तुति कर एवं भगवान को उन्हें सौंप कर सुमेरु पर्वत पर अभिषेक महोत्सव का पूर्ण विवरण सुनाया। वे दोनों ही जन्माभिषेक का विवरण सुन कर अत्यन्त प्रसन्न हुए तथा उनके आनन्द की सीमा न रही।

इन्द्र की सम्मति से उन दोनों (माता-पिता) ने बन्धुवर्ग के साथ भगवान का जन्मोत्सव सम्पन्न किया। सर्वप्रथम श्री जिन-मन्दिर में भगवान की अष्ट द्रव्यों से पूजा की गई। इसके पश्चात् ही बन्धुओं एवं दास-दासियों को अनेक प्रकार के दान दिये गये। बन्दी[1] एवं दीन अनाथों को भी उनकी योग्यता के अनुसार दान देकर उन्हें संतुष्ट किया गया। नगर को तोरण एवं मालाओं से खूब सजाया गया। वाद्य एवं शंख की गम्भीर ध्वनि होने लगी। ऐसे ही नृत्य-गीतादि सैकड़ों उत्सवों से वह नगर स्वर्ग जैसा प्रतीत होने लगा।

इस उत्सव से नगर की प्रजा एवं कुटुम्बीजनों को भी बड़ी प्रसन्नता हुई। पुरवासी एवं नगर-निवासी जनों को प्रसन्नता प्रगट करते देख कर देवेन्द्र ने भी स्वयं प्रसन्नता प्रकट की। उस समय इन्द्र ने प्रभु की सेवा के लिए देवियों के साथ त्रिवर्ग साधक फल का प्रदायक दिव्य नृत्य-नाटक मंचस्थ किया। इन्द्र का नृत्य आरम्भ होने पर गन्धर्व देवों ने वाद्य एवं गान आरम्भ किये। राजा सिद्धार्थ नवजात पुत्र को गोद में लेकर बैठे। आरम्भ में इन्द्र ने जन्माभिषेक सम्बन्धी दृश्य दिखलाया पुनः जिनेन्द्र के पूर्व जन्म के अवतारों को नाटक की तरह दिखलाता हुआ एवं नृत्य करता हुआ इन्द्र कल्पवृक्ष-सा प्रतीत हो रहा था। रंगभूमि के चारों ओर नृत्य करता हुआ वह इन्द्र विमान की भांति शोभायमान हुआ।

इधर इन्द्र का तांडव नृत्य चल रहा था एवं उधर देवगण भक्तिवश इन्द्र पर पुष्प-वृष्टि कर रहे थे। नृत्य के साथ अनेकों सुमधुर वाद्य बजने आरम्भ हुए। किन्नरी देवियाँ भगवान का गुणगान करने लगीं। इन्द्र अनेक रसों से मण्डित ताण्डव नृत्य कर रहा था। हजारों भुजाओं वाले इन्द्र के नृत्य से पृथ्वी चंचल हो उठी। इन्द्र कभी एक रूप एवं कभी अनेक रूप, कभी स्थूल एवं कभी सूक्ष्म रूप धारण कर लेता था। क्षणभर में समीप, क्षण भर में दूर एवं क्षणभर में ही आकाश में पहुँच जाता था। इस प्रकार वह नृत्य-नाट्य बड़ा ही मनोरंजक एवं प्रभावोत्पादक हुआ। साथ-साथ देवांगनाओं के नृत्य भी बड़े आकर्षक हुए। वे बड़ी लय के साथ गातीं एवं हाव-भाव के साथ नृत्य करती थीं। उनमें से कई तो ऐरावत गजराज के ऊपर विराजमान इन्द्र की भुजाओं में से निकलती हुई एवं पुनः प्रवेश करती हुई कल्पबेलि के समान प्रतीत होती थीं। अनेक अप्सरायें इन्द्र की हस्तांगुलि पर अपनी नाभिरख कर नृत्य करने लगीं। इन्द्र की प्रत्येक भुजा पर नृत्य करती हुई अनेक अप्सरायें सबको प्रसन्न करने लगीं।

अप्सरायें प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष दोनों प्रकार का नृत्य करती थीं। इस प्रकार नृत्य में सम्मिलित इन्द्र चतुर ऐन्द्रजालिक (पक्का जादूगर) मालूम होता था। इन्द्र की सारी कलायें उन नर्तकी देवियों में बँट गयीं। विक्रिया ऋद्धि से नृत्य करता हुआ इन्द्र भगवान के माता-पिता आदि सभी दर्शकों को मंत्र-मुग्ध करने लगा।

तत्पश्चात् श्री जिनेन्द्र देव की सेवा के लिए अनेक देवियों को तथा असुर कुमार देवों को वहाँ रखकर इन्द्र शेष

---

[1] राजा का गुणगान करने वाले।

देवों के साथ बड़ी प्रसन्नतापूर्वक स्वर्ग में चला गया। इस प्रकार पुण्य के फलस्वरूप तीर्थंकर स्वामी सम्पूर्ण सम्पदाओं से पूर्ण हुए। अतएव भव्यजनों को चाहिये कि वे सर्वदा धर्म का पालन करते रहें।

बाल्यकाल की विशेषतायें

एक बार 'संजय' और 'विजय' नामक दो चारण मुनियों को किसी पदार्थ में संदेह हुआ, भगवान् के जन्म के बाद ही वे उनके समीप आये और प्रभु के दर्शन मात्र से ही उनका संदेह दूर हो गया। इसलिए उन्होंने बड़ी भक्ति से बालक का **'सन्मति'** यह नाम रखा। इन्द्र की आज्ञा से कुबेर प्रतिदिन भगवान् के समय, आयु और इच्छा के अनुसार स्वर्ग से भोगोपभोग की वस्तुओं को लाया करता था। अर्थात् भगवान के भोजन, आभूषण आदि स्वर्ग से ही आते थे।

पूर्व के अध्याय में बतलाया जा चुका है कि भगवान की सेवा के लिए सौधर्म इन्द्र अनेक देव-देवियों को राजमहल में नियुक्त कर गये थे। उनमें से कोई धाय का काम करती, कोई वस्त्र-आभूषण आदि से उनके अंगों को सजाती, कोई अनेक प्रकार के खिलौने आदि के द्वारा उनका विशेष मनोरंजन करती थी। जब वे देवियाँ उन्हें सम्बोधन कर बुलातीं, तो भगवान मुस्कुराते हुए उनके पास चले जाते थे। तीर्थंकर भगवान चन्द्रकला की भाँति बढ़ने लगे। उनकी बाल-सुलभ चपलता से माता-पिता को बड़ा ही आनन्द होता था।

जब उनकी अवस्था कुछ अधिक बढ़ी, तो उनके मुख से सरस्वती की भाँति वाणी निकलने लगी। रत्नजटित भूमि पर चलते हुए उनके आभूषण सूर्य की किरणों की तरह दमदमाते थे एवं वे स्वयं किरणों से परिवेष्टित सूर्य-से प्रतीत होते थे। उनकी क्रीड़ा के लिए देव स्वयं गजराज, अश्व आदि का कृत्रिम रूप ले लिया करते थे। वे उनके साथ क्रीड़ा किया करते थे। इस प्रकार विभिन्न क्रीड़ाओं से स्वयं प्रसन्न हो कर दूसरों को प्रसन्न करते हुए वे भगवान कुमार अवस्था को प्राप्त हुए। पूर्व में उनका जो क्षायिक सम्यक्त्व था, उससे उन्हें समग्र पदार्थों का ज्ञान स्वतः हो गया।

उस समय प्रभु के दिव्य शरीर में स्वाभाविक मति-श्रुति-अवधि आदि ज्ञान वृद्धि को प्राप्त हुए। उन्हें समस्त कलायें एवं विद्यायें स्वतः प्राप्त हो गयीं। इसलिए वे प्रभु मनुष्यों तथा देवों के लिए गुरु सदृश हो गये, पर उनका कोई गुरु नहीं था। ठीक आठवें वर्ष में भगवान ने बारह व्रतों को ग्रहण किया। प्रभु का शरीर स्वेद-रहित कान्तिवान एवं मल-मूत्रादि से रहित स्वर्ण सदृश था। श्वेत रुधिरयुक्त एवं महान सुगन्धित आठ शुभ लक्षणों से वे शोभायमान थे। आगे चलकर भगवान वज्रवृषभ-नाराच-संहनन एवं समचतुरस्र संस्थान वाले उत्तम रूपयुक्त एवं विशालकाय बलवान पुरुष हुए।

संगमदेव द्वारा बालक वर्द्धमान की परीक्षा

वे सबके हितकारक एवं कर्णमधुर शब्दों का उच्चारण करते थे। इस प्रकार जन्मकाल से ही दिव्य दश अतिशयों से युक्त, धीरज आदि अपरिमित गुण, कीर्ति-कला-विज्ञान आदि सभी से वे सुशोभित थे। उनके शरीर का वर्ण तपाये हुए स्वर्ण के वर्ण जैसा था। वे दिव्य देह के धारक धर्म की प्रतिमूर्ति के सदृश जगत् के धर्मगुरु थे।

एक दिन की घटना है इन्द्र की सभा में देवों ने भगवान की दिव्य कथा पर चर्चा की। वे कहने लगे 'देखो, वीर जिनेश्वर तो कुमार अवस्था में ही धीर-वीरों में अग्रणी, अतुल पराक्रमी, दिव्य रूपधारी एवं अनेक गुणों के धारी सांसारिक क्षेत्र में क्रीड़ा करते हुए कितने मनोज्ञ प्रतीत होते हैं।' उसी स्थान पर संगम नाम का एक देव बैठा हुआ था। देवों की बातें सुनकर भगवान की परीक्षा लेने के लिए वह स्वर्ग से चल पड़ा। वह उस वन में आया, जहाँ प्रभु अन्य राजपुत्रों के साथ क्रीड़ा कर रहे थे। उस देव ने प्रभु को डराने के उद्देश्य से काले सर्प का विकराल रूप बनाया। वह एक वृक्ष की जड़ से लेकर स्कन्ध तक लिपट गया। उस सर्प के भय से अन्यान्य राजकुमार वृक्ष से कूद कर घबराये हुए दूर भाग गये।

किन्तु कुमार महावीर जरा भी भयभीत नहीं हुए। वे उस विकराल सर्प के ऊपर आरूढ़ होकर क्रीड़ा करने लगे। ऐसा मालूम हो रहा था, मानो वे माता की गोद में ही क्रीड़ा कर रहे हों। कुमार का धैर्य देख कर सर्परूपी देव बड़ा चकित हुआ। वह प्रगट होकर प्रभु की स्तुति करने लगा। उसने बड़े नम्र शब्दों में कहा 'हे देव! आप संसार के स्वामी हो, आप महान धीर-वीर हो, आप कर्मरूपी शत्रु के विनाशक तथा समग्र जीवों के रक्षक हो।'

वह कहने लगा 'हे देव! आपके अतुल पराक्रम से प्रगट हुई कीर्ति स्वच्छ चांदनी के सदृश लोक के कण-कण में विस्तृत हो रही है। आपका नाम स्मरण करने मात्र से ही प्रयोजनों को सिद्ध कराने वाला धैर्य प्राप्त होता है। अत्यन्त दिव्य मूर्ति वाली सिद्धि-वधू के स्वामी श्री महावीर मैं आपको बारम्बार प्रणाम करता हूँ।' इस प्रकार वह देव भगवान की स्तुति कर उनका 'महावीर' नाम सार्थक करता हुआ स्वर्ग को चला गया।[1] कुमार ने भी अपने यशगान को बड़े ध्यान से सुना। देव की स्तुति बड़ी ही कर्णप्रिय तथा भगवान के यश को संसार में विस्तृत करने वाली थी।

इस प्रकार भगवान श्री महावीर स्वामी का गुणानुवाद बारम्बार हुआ करता था। वे भगवान किन्नरी देवियों द्वारा गाये गये अनेक गुणानुवाद को बड़े ध्यानपूर्वक सुना करते थे। कभी नेत्रों को तृप्त करने वाले स्वर्ग की अप्सराओं के नृत्य तथा विभिन्न प्रकार के नाटक देखते थे, तो कभी स्वर्ग से प्राप्त आभूषण-वस्त्र-माला आदि अन्य को दिखाकर प्रसन्न होते थे। अन्य देव कुमारों के साथ कभी जल-क्रीड़ा तथा कभी अपनी इच्छा से वन-क्रीड़ा करते थे। इस प्रकार क्रीड़ा में संलग्न धर्मात्मा कुमार का समय बड़े सुख से व्यतीत होने लगा।

सौधर्म स्वर्ग का इन्द्र भी अपनी कल्याण-कामना के लिए देवियों से अनेक प्रकार के नृत्य-गीत करवाने लगा। काव्य आदि की गोष्ठी तथा धर्म-चर्चा में समय व्यतीत करते हुए कुमार ने संसार को सुखी करने वाली यौवनावस्था को प्राप्त किया। कुमार के मस्तक का मुकुट धर्म-रूपी पर्वत के शिखर की भाँति शोभायमान हो रहा था। इनके कपोल तथा मस्तक की कान्ति ऐसी मालूम पड़ती थी, मानो पूर्णिमा के चन्द्रमा की ज्योत्सना ही हो। प्रभु की सुन्दर भौंहों से शोभित कमल-नेत्रों का वर्णन भला यह तुच्छ लेखनी क्या कर सकती थी, जिसके खुलने-मात्र से संसार के प्राणी तृप्त हो जाते थे।

प्रभु के कानों के कुण्डल बड़े ही भव्य दीखते थे। वे ऐसे शोभायमान होते थे, मानो ज्योतिष्क चक्र से घिरे हुए हों। भला प्रभु के मुखरूपी चन्द्रमा का क्या वर्णन किया जा सकता है, जिसके द्वारा संसार का हित करने वाली ध्वनि निकलती है। प्रभु की नासिका-ओष्ठ-दन्त एवं कण्ठ की स्वाभाविक सुन्दरता जैसी थी, उसे बतलाने की शक्ति किसी में नहीं है। उनका विस्तृत वक्षस्थल रत्नों के हार से ऐसा सुसज्जित होता था, मानो लक्ष्मी का निवास ही हो।

अनेक प्रकार के आभूषणों से सुसज्जित उनकी भुजायें ठीक कल्पवृक्ष के सदृश प्रतीत होती थीं। अंगुलियों के दशों नख अपनी किरणों से ऐसे प्रतिभासित हो रहे थे, मानो वे धर्म के दश अंग ही हों। उनकी गहरी नाभि सरस्वती एवं लक्ष्मी की क्रीड़ास्थली (सरोवर) जैसी प्रतीत होती थी। प्रभु के वस्त्र-पट की करधनी ऐसी मालूम होती थी, जैसे वह कामदेव को बांधने के लिए नाग-पाश ही हो।

प्रभु के दोनों जानु विस्तीर्ण एवं पुष्ट थे। यद्यपि वे कोमल थे, फिर भी व्युत्सर्गादि तप करने में उनकी समानता नहीं की जा सकती थी। भला प्रभु के ऐसे चरणकमलों की तुलना किससे की जा सकती है, जिनकी सेवा इन्द्र-धरणेन्द्र आदि सभी देव किया करते हैं। इस प्रकार शिखा से नख तक प्रभु के अंग-प्रत्यंग की शोभा अपूर्व थी। उसका वर्णन करना असाध्य है, मानो ब्रह्मा अथवा कर्म ने तीन जगत् में रहनेवाले दिव्य प्रकाशमान, पवित्र एवं सुगन्धित परमाणुओं से प्रभु का अद्वितीय शरीर बनाया था। उस शरीर का पहिला गुण वज्र-वृषभ-नाराच-संहनन था।

प्रभु के शरीर में मद, स्वेद, दोष, रागादिक तथा वातादिक तीन दोषों से उत्पन्न रोग किसी समय भी नहीं होते थे। उनकी वाणी समस्त संसार को प्रिय थी। वह सबको सत्य एवं शुभ मार्ग दिखलाने वाली धर्ममाता के समान थी, दूसरे खोटे मार्ग को व्यक्त करनेवाली नहीं थी। दिव्य शरीर को पाकर वे प्रभु ऐसे सुशोभित हो रहे थे, जैसे धर्मात्माओं को पाकर धर्मादि गुण सुशोभित होते हैं। भगवान के लक्षण ये हैं

श्रीवृक्ष, शंख, पद्म, स्वस्तिक, अंकुश, तोरण, चमर, श्वेत छत्र, ध्वजा, सिंहासन, दो मछलियाँ, दो घड़े, समुद्र, कछुआ, चक्र, तालाब, विमान, नाग-भवन, पुरुष-स्त्री का जोड़ा, बड़ा भारी सिंह, तोमर, गंगा, इन्द्र, सुमेरु, गोपुर, चन्द्रमा, सूर्य, घोड़ा, बींजना, मृदंग, सर्प, माला, वीणा, बांसुरी, रेशमी वस्त्र, दैदीप्यमान कुंडल, विचित्र आभूषण, फल सहित बगीचा, पके हुए अनाजवाला खेत, हीरा रत्न, बड़ा दीपक, पृथ्वी, लक्ष्मी, सरस्वती, सुवर्ण कमलबेल, चूड़ारत्न,

---

[1] महावीर पुराण के आधार से।

महानिधि, गाय, बैल, जामुन का वृक्ष, पक्षिराज, सिद्धार्थ वृक्ष, महल, नक्षत्र, ग्रह, प्रातिहार्य आदि दिव्य एक सौ आठ लक्षणों से तथा नौ सौ सर्वश्रेष्ठ व्यंजनों से, विचित्र आभूषणों से एवं मालाओं से प्रभु का स्वभाव-सुन्दर, दिव्य, औदारिक शरीर अत्यन्त सुशोभित हुआ।

विशेष वर्णन ही क्या किया जाय? संसार में जितनी भी शुभ-लक्षणरूप सम्पदा एवं प्रिय वचन-विवेकादि गुण हैं, वे सब पुण्य कर्मों के उदय से तीर्थंकर भगवान में स्वतः ही समाविष्ट थे। अधिष्ठित स्वामी सदा उनकी सेवा में रत रहते थे। वे महावीर कुमार धर्म की सिद्धि के लिए मन-वचन-काय की शुद्धि से अतिचार रहित भक्तिपूर्वक गृहस्थों के बारह व्रतों का पालन करते थे। वे सर्वदा शुभ-ध्यान की ओर विचार किया करते थे। पुण्य के शुभोदय से प्राप्त हुए सुखों का उपभोग करते हुए वे कुमार आनन्दपूर्वक जीवन व्यतीत कर रहे थे।

भगवान का वैराग्य

विश्वपति, मन्दरागी उन महाप्रभु ने तीस वर्ष का समय मानो क्षणभर में ही व्यतीत कर दिया। एक बार अच्छे होनहार के कारण चारित्र-मोह-कर्म के क्षयोपशम से उन्हें स्वतः अपने पूर्व के करोड़ों जन्मों का संसार-भ्रमण ज्ञात हो गया। वे इस प्रकार की पूर्व-घटित घटनाओं पर विचार कर बड़े ही क्षुब्ध हुए। उन्हें तत्काल ही वैराग्य उत्पन्न हो गया। वे विचार करने लगे कि मोहरूपी महान शत्रु का सर्वनाश करने के लिए रत्नत्रयरूप तप का पालन ही श्रेयस्कर है। उन्होंने सोचा – चारित्र के अभाव में मेरा इतने दिन का समय व्यर्थ ही व्यतीत हो गया, जो अब लौट नहीं सकता। पूर्वकाल में ऋषभादि जितने भी तीर्थंकर हो गये हैं, उनकी आयु पर्याप्त दीर्घ थी, इसलिये वे सब कुछ कर सकने में समर्थ हुए थे, पर हम सरीखे थोड़ी-सी आयुवाले मनुष्य सांसारिक कार्य कुछ भी नहीं कर सकते। वे श्री नेमिनाथादि तीर्थंकर धन्य हैं, जिन्होंने अपने जीवन की अवधि थोड़ी-सी समझकर अल्पायु में ही मोक्ष के उद्देश्य से तपोवन की ओर प्रस्थान किया था अतः संसार हित चाहनेवाले थोड़ी आयुवाले व्यक्तियों को एक क्षण भी संयम के बिना व्यर्थ नहीं जाने देना चाहिए।

वस्तुतः वे बड़े अज्ञानी हैं, जो थोड़ी आयु पाकर भी तपस्या के बिना अपनें अमूल्य समय को नष्ट कर देते हैं। वे यहाँ तो दुःख भोगते ही हैं एवं नरकादि में यातनायें भी। मैं ज्ञानी होते हुए भी संयम के अभाव में एक अज्ञानी की भांति भटक रहा हूँ। अब गृहस्थाश्रम में रहकर समय व्यतीत करना उपयुक्त नहीं कहा जा सकता। वे तीनों ज्ञान ही किस काम के, जिनके द्वारा आत्मा को एवं कर्मों को अलग-अलग न किया जाय तथा मोक्षरूपी लक्ष्मी की उपासना न की जाय? ज्ञान प्राप्त करने का उत्तम फल उन्हीं महापुरुषों को प्राप्त है, जो निष्पाप तप का आचरण करते रहते हैं। दूसंरों का ज्ञान तप के बिना नितान्त निष्फल है।

उस व्यक्ति के नेत्र निष्फल हैं, जो नेत्र होते हुए भी अन्धकूप में गिरता है। वही दशा ज्ञानी पुरुषों की है जो ज्ञान होते हुए भी मोहरूपी कूप में गिरे रहते हैं। वस्तुतः अज्ञान (अनजान) में किये गये पाप से छुटकारा तो ज्ञान प्राप्त होने पर मिल भी जाता है, पर ज्ञानी (जानकार) का पाप से मुक्त होना बड़ा ही दुष्कर होता है। अतएव ज्ञानी पुरुषों को मोहादि निंद्य कर्मों के द्वारा किसी प्रकार पाप का बंध नहीं करना चाहिये। इसका कारण यह है कि मोह से राग-द्वेष उत्पन्न होते हैं एवं राग-द्वेष से घोर पाप होता है। उस पाप के फलस्वरूप जीव को बहुत दिनों तक दुर्गतियों में भटकना पड़ता है। वह भटकना भी साधारण नहीं, अनन्तकाल तक का, जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता।

ऐसा समझ कर ज्ञानियों को चाहिये कि वे मोहरूपी शत्रु को वैराग्यरूपी खड्ग से मार दें। कारण, यह मोह ही सारे अनर्थों की जड़ है, पर यह स्मरण रहे कि यह मोह गृहस्थों द्वारा नहीं छोड़ा जा सकता इसलिये पाप के बन्धन गृह को तो त्यागना ही पड़ेगा। गृह-बन्धन बाल्यावस्था में तथा यौवनावस्था में सारे अनर्थ उत्पन्न करता रहता है। अतः धीर-वीर पुरुष मोक्ष की प्राप्ति के उद्देश्य से गृह-बन्धन का सर्वथा परित्याग कर देते हैं। वे संसार में पूज्य एवं महापुरुष हैं, जो यौवनावस्था में दुर्जेय कामदेव को भी परास्त करने में समर्थ होते हैं।

यौवनावस्थारूपी राजा ने कामदेव को पंचेन्द्रिय आदि चारों काय के जीवों के जीवन को विकृत करने के लिए भेजा है; पर जब यौवन की अवस्था मन्द हो जाती है, तब उसके साथ बुढ़ापेरूपी फन्दे में बंधे हुए वे कामदेवादि भी ढीले पड़

जाते हैं। अतएव यह उचित होगा कि मैं यौवनावस्था में ही उग्र तप आरम्भ कर दूँ, जिससे कामदेव एवं पंचेन्द्रिय विषयरूपी शत्रुओं का सर्वनाश हो। इस प्रकार की चिन्ता कर वे महाबुद्धिमान महावीर प्रभु अपने चित्त को निर्मल कर राज्य-भोगादि से विरक्त हुए एवं मोक्ष-साधन में संलग्न हो गये।

दीक्षा कल्याणक

वीर भगवान को वैराग्य उत्पन्न होने के पश्चात् आठों लौकान्तिक देवों ने अपने अवधिज्ञान से यह निश्चय कर लिया कि भगवान के तप-कल्याणक का उत्सव मनाना चाहिये। तत्पश्चात् वे भगवान श्रीमहावीर के पास आये। उन देवों ने अपने पूर्व जन्म में द्वादशांग श्रुत का अभ्यास किया था तथा वैराग्य भावनाओं का चिन्तवन किया था। चौदह श्रुत के जानने वाले, देवों में श्रेष्ठ वे देवर्षि कहलाते थे।

कर्मरूपी बैरियों को नाश करने में जो प्रयत्नशील हैं, ऐसे वीर भगवान को प्रणाम कर तथा स्वर्ग से लाये हुए पवित्र द्रव्यों से भगवान की पूजन कर वैराग्यमय परिणाम हो जाय, ऐसी वैराग्यमयी स्तुति के द्वारा वे विद्वान लौकान्तिक देव भगवान का गुणगांन करने लगे।

हे वीर प्रभु! आप जगत् के स्वामी हैं, गुरुओं के श्रेष्ठ महान गुरु हैं, ज्ञानियों में श्रेष्ठ ज्ञानी हैं, समझदारों में आप सर्वश्रेष्ठ समझदार हैं। आपको हम विशेष क्या समझा सकते हैं? इसलिये स्वयंबुद्ध तथा सर्व पदार्थों के ज्ञाता आपको हम क्या समझावें? क्योंकि आप स्वयं हमको सद्बुद्धि देने वाले हैं। जिस प्रकार प्रकाशमान दीपक समस्त पदार्थों को प्रकाशित करता है, उसी तरह आप भी संसार के समस्त पदार्थों को प्रकाशित करेंगे। परन्तु हे भगवन्! हमें सन्तोष होता है कि हम आपको समझाने के बहाने से आपके दर्शन एवं आपकी भक्ति करने को यहाँ आने का सौभाग्य प्राप्त कर लेते हैं। आप तो तीन ज्ञान के धारी हैं, आपको भला शिक्षा कौन दे सकता है? क्या सूर्य का दर्शन करने के लिए दीपक की आवश्यकता होती है? कदापि नहीं। हे देव! बलवान मोहरूपी शत्रु को जीतने के लिए आपने जो उद्यम किया है, उसे देख कर संसार-समुद्र पार होने की इच्छा रखने वाले अनेक भव्य आत्माओं का महान हित होगा। आप जैसे दुर्लभ जलपोत को पाकर असंख्यात भव्य जीव विकट संसार-सागर से पार हो सकेंगे। कितने ही भव्य जीव आपके पवित्र उपदेश से रत्नत्रय को अंगीकार कर उसके द्वारा 'सर्वार्थसिद्धि' जैसे स्थान में गमन करेंगे। कितने ही प्राणी आपकी वाणी को सुनकर मिथ्याज्ञानरूपी अन्धकार का निवारण कर सब पदार्थों के साथ-ही-साथ मोक्ष-लक्ष्मी को भी देखेंगे। हे प्रभु! आप से बुद्धिमानों को मनचाहे इष्ट पदार्थों की सिद्धि होगी। हे देव! आपके प्रसाद से ही स्वर्ग एवं मोक्ष की प्राप्ति हो सकेगी।

हे दीनानाथ! मोहरूपी फन्दे में फंसे हुए भव्य प्राणियों को आप ही लगातार सहारा देंगे, क्योंकि आप ही तीर्थ को चलानेवाले धर्म-प्रवर्तक हैं। आपके वचनरूपी मेघ से वैराग्यरूपी अपूर्व वज्र को पाकर असंख्यात बुद्धिमान बहुत ऊँचे मोहरूपी शिखर को बात-की-बात में खण्ड-खण्ड कर देंगे। आपके उपदेश से पापी प्राणी अपने पापों को एवं कामी व्यक्ति काम-शत्रु को शीघ्र ही परास्त कर डालेंगे, इसमें रंचमात्र भी सन्देह नहीं है। हे स्वामी! यह भी निश्चय है कि बहुत से प्राणी आपके चरण-कमलों के सेवन से दर्शन-विशुद्ध्यादि सोलह भावनाओं को स्वीकार करके आप ही के समान महान हो जायेंगे।

हे प्रभो! संसार से बैर करनेवाले, वैराग्यरूपी अस्त्र को रखने वाले आपके अवलोकनमात्र से मोह एवं इन्द्रियरूपी शत्रु अपनी जीवन-लीला समाप्त होने के भय से कांप रहे हैं क्योंकि हे दीनबन्धु! आप बलवान सुभट हैं, दुर्जय परीषहरूपी वीरों को क्षण-मात्र में जीतने की सामर्थ्य रखते हैं। इसलिये हे वीर प्रभो! आप मोह एवं इन्द्रियरूपी बैरियों को जीतने में तथा भव्यात्माओं का उपकार करने के लिए चारों घातिया कर्मरूपी शत्रुओं के नाश करने का शीघ्र उपाय करें, क्योंकि अब यह उत्तम समय तपस्या करने के लिए एवं भव्यों को मोक्ष में ले जाने के लिए आपके हाथ में आया है।

हे वीर प्रभु! आपको प्रणाम है, आप जगत्-हितैषी हैं, आप ही मोक्षरूपी रमणी की प्राप्ति के लिए उद्योगी हैं, इसलिये आपको हम पुनः प्रणाम करते हैं। अपने ही शरीर के भोगों के सुख में इच्छारहित हैं, इसलिये भी आपको प्रणाम है। मोक्षरूपी स्त्री के साथ रमण करने की इच्छा रखते हैं, इसलिये आपको प्रणाम है। महान पराक्रमी, बाल ब्रह्मचारी,

राज्यलक्ष्मी के त्यागी, अविनाशी लक्ष्मी में लीन आपको प्रणाम है। योगियों के भी आप महान गुरु हैं, इसलिये आपको प्रणाम है। सब जीवों के परम बन्धु हैं, सर्वज्ञ हैं, इसलिये पुनः आपको प्रणाम है।

"हे महान प्रभु! इस स्तुति द्वारा हम यही प्रार्थना करते हैं कि परलोक में चारित्र की सिद्धि के लिए आप हमें पूरी शक्ति दें। हे वीर प्रभु! वह शक्ति मोहरूपी शत्रु का नाश करने वाली है।" इस प्रकार जगत्पूज्य श्रीवीर भगवान की स्तुति एवं अनेक प्रार्थनाएँ करके वे लौकान्तिक देव अपने-अपने स्थान को चले गये।

उसी समय समस्त देवादि सहित चारों जाति के इन्द्रों ने घण्टादि के स्वतः बजने से भगवान का संयमोत्सव समझकर भक्तिभाव से अपनी इन्द्राणियों के साथ महान विभूति से विभूषित होकर अपनी-अपनी सवारियों पर आरूढ़ होकर नगरी में प्रवेश किया। देवों की सेना ने अपनी पत्नियों सहित, सवारियों पर चढ़े हुए नगर एवं वन को चारों ओर से घेर लिया। तत्पश्चात् इन्द्र ने भगवान महावीर स्वामी को एक सिंहासन पर बैठाकर अत्यन्त प्रसन्नता प्रदर्शित करते हुए गीत, नृत्य, 'जय-जयकार' शब्दों का उच्चारण करते हुए क्षीर-सागर से भरे हुए एक हजार आठ स्वर्ण के कलशों से उनका अभिषेक किया। इन्द्र ने उन त्रिलोकीनाथ को दिव्य आभूषणों एवं वस्त्रों से अलंकृत किया, सुगन्धित दिव्य मालायें पहिनाईं। इस तरह इन्द्र ने भगवान को खूब सजाया। तत्पश्चात्, भगवान ने जन्म देने वाली अपनी माता को ज्ञानामृत से सिंचित प्रभावशाली, सरल एवं मीठे शब्दों में सान्त्वना प्रदान कर, वैराग्य को उत्पन्न करनेवाले उपदेशों के सैकड़ों वाक्यों से अपनी दीक्षा की बात समझा दी। संयमरूपी लक्ष्मी के सहवास-सुख में उद्यमी वे वीर प्रभु हर्ष के साथ समस्त राज-पाट, माता-पिता एवं बन्धुओं को त्याग कर इन्द्र द्वारा लाई हुई दैदीप्यमान **'चन्द्रप्रभा'** नाम की पालकी पर आरूढ़ होकर दीक्षा के लिए वन की ओर चले गये। उस समय वे जगत् के स्वामी समस्त देवों से घिरे हुए, दिव्य आभूषणों से युक्त, अत्यन्त मनोज्ञ प्रतीत होते थे।

सबसे पहिले भूमिगोचरी मनुष्यों ने पालकी को उठाया एवं सात पैंड आगे ले जाकर रख दिया। तत्पश्चात् विद्याधर आकाश-मार्ग से सात पैंड ले गये, उसके बाद धर्म से प्रेम रखने वाले समस्त देवों ने अपना-अपना कन्धा लगाया एवं आकाश-मार्ग से चलने लगे। इस समय की शोभा का वर्णन करना इसलिये असम्भव है कि जिस पालकी को ले जाने वाले स्वयं इन्द्र एवं स्वर्ग के देवता लोग हों, उसकी अनुपम छटा का वर्णन क्या सामान्य लेखनी द्वारा हो सकता है? उस समय हर्ष से पुलकित समस्त देव पुष्पों की वर्षा कर रहे थे, वायुकुमार देव गंगाजल के कणों से युक्त मधुर पवन चला रहे थे, कुछ देव भेरी बजा रहे थे। इन्द्र की आज्ञा से उन देवों ने यह घोषणा की कि भगवान का यह समय मोहादि शत्रुओं को जीतने का है। यह सुन समस्त देवों ने हर्षित होकर प्रभु के सामने खूब उत्सव मनाया–'जयवन्त हो', 'आनन्दयुक्त' हो, 'वृद्धि पाओ'–आदि शब्द होने लगे। दुन्दुभी वाद्यों के शब्द होने लगे, अप्सरायें नृत्य करने लगीं, किन्नरी देवियाँ मधुर शब्द में मोहरूपी शत्रु को जीतने का यश गान करने लगीं। प्रभु के आगे दिक्कुमारी देवियाँ मंगल-अर्घ लेकर चलने लगीं।

महापुराण में लिखा है–

अग्रेसरीषु लक्ष्मीषु पंकजव्यग्रपाणिषु।
समं समंगलार्घाभि-र्दिक्कुमारीभिरादरात्[1]।।

हाथों में कमल धारण किए हुए लक्ष्मी आदि देवियां आगे-आगे जा रही थीं और बड़े आदर से मंगलद्रव्य तथा अर्घ्य लेकर दिक्कुमारी देवियां उनके साथ-साथ जा रही थीं।

इस प्रकार भगवान महावीर नगर से वन को चले गये। नगरवासियों ने प्रभु की भूरि-भूरि प्रशंसा की। कितने ही लोग यह भी कहते थे कि अभी जिनराज कुमार ही हैं, फिर भी थोड़ी-सी उम्र में इन्होंने कामरूपी शत्रु को पराजित कर बड़ा भारी उच्च कोटि का काम किया है एवं आज मोक्ष-लक्ष्मी की प्राप्ति के लिए तपोवन को चले जा रहे हैं।

इस तरह के वाक्य सुन कर अन्य लोग भी इसी तरह कहने लगे कि मोह को तथा कामदेव-रूपी शत्रु को प्रभु ने

---

1. आदिपुराण पर्व 6, पृ. 383।

ही जीत पाया है, दूसरे में यह सामर्थ्य नहीं है। उसके पंश्चात् सूक्ष्म विचारवाले इस तरह कहने लगे कि यह सब वैराग्य का ही माहात्म्य है, जो अन्तरंग शत्रुओं का नाश करनेवाला है। वैराग्य के प्रभाव से पंचेन्द्रियरूपी चोरों को मारने के लिए स्वर्ग के भोग, तीन लोक की सम्पदायें त्याग दी जाती हैं, क्योंकि जिसके हृदय में पूर्ण वैराग्य का स्रोत बहता हो, वही चक्रवर्ती की विभूति को क्षण-भर में त्याग सकता है। दरिद्र मनुष्य अपनी कच्ची झोपड़ी को भी छोड़ने में समर्थ नहीं है। कुछ मनुष्य यह भी कहते सुने गये कि यह बात सत्य है कि वैराग्य के बिना मन पवित्र नहीं हो सकता। इस तरह की बातचीत करते हुए बहुत-से नगर-निवासी इस कौतुक को देखने के लिए वन में जा पहुँचे। किन्तु भगवान के दर्शन होते ही उनका मस्तक स्वयं झुक गया। इस प्रकार वे त्रिलोकीनाथ नगर के बाहर जा पहुँचे।

जब माता ने भगवान के वन-गमन का संवाद सुना, तो पुत्र-वियोग में वे मूर्च्छित होकर कोमल बेल के समान मुरझा गईं। तत्पश्चात् इस शोक को क्रमशः सहन करती हुई अनेक पुरजनों एवं बंधुओं के साथ उनके पीछे-पीछे चली गईं। ज़ाती हुई माता विलाप करती थीं 'हे पुत्र! तू तो मुक्ति से प्रेम लगा कर तपस्या करने चला, पर मुझे तेरे बिना कैसे चैन मिलेगा? किस तरह जीवन व्यतीत करूँगी? इस छोटी-सी अवस्था में तू तपस्या के महान उपसर्गों को किस प्रकार सहन करेगा? हे पुत्र! शीत-काल की कँपकँपाती पवन में जब तू दिगम्बर भेष में वन में विचरेगा, तब कैसे उस शीत को सहन करेगा? ग्रीष्म-काल की ज्वालाओं से समस्त वन जल जाता है, उस ज्वाला को कैसे सहेगा? श्रावण-भादों की काली घटाओं को देखकर अच्छे-अच्छे साहसियों के भी छक्के छूट जाते हैं–हे बेटा! इन सब कष्टों को क्या तू सहन कर सकेगा? बस, ज्यों-ज्यों मेरा हृदय इन सब बातों को विचारता है, त्यों-त्यों मुझे अत्यधिक कष्ट होता है। हे पुत्र! अति दुर्निवार इन्द्रिय-समूहों को, त्रैलोक्य-विजयी कामदेव को एवं कषायरूपी महा शत्रुओं को धैर्यपूर्वक तू अपने वश में कैसे कर सकेगा? हे बेटा! तू बालक है तथा अकेला है; फिर इस भयंकर वन की गुफाओं में किस प्रकार रह सकेगा? क्योंकि उन गुफाओं में नाना प्रकार के हिंसक जंगली जीव रहा करते हैं।'

इस तरह जिन-माता अत्यन्त करुण स्वर में विलाप करती हुई मार्ग में अति कष्ट से पैरों को बढ़ाती हुई चली जा रही थीं कि इतने में उनके पास प्रमुख-प्रमुख देव आये। उन्होंने सान्त्वना देते हुए कहा 'हे महादेवी! क्या आप इन्हें नहीं पहिचानतीं? ये आपके पुत्र संसार के स्वामी एवं अनुपम शक्तिशाली जगद्‌गुरु हैं। आत्मवेशी संसाररूपी समुद्र में अपने-आपको विलीन कर लेने के पहिले ही ये अपना उद्धार तो कर ही लेंगे, साथ ही अन्य कितने ही भव्य जीवों का भी उद्धार कर देंगे यह ध्रुव सत्य है। जिस तरह कि भयानक सिंह भी मजबूत रस्सी से जकड़े जाने पर सहज ही में वशवर्ती हो जाता है, उसी तरह आपके ये महान पुत्र भी मोहादि पराक्रमी शत्रुओं को तपरूपी रस्सियों से बांधकर उन्हें अपने वश में कर लेंगे। जिनके लिए संसाररूपी समुद्र का दूसरा किनारा पा लेना कतई दुर्लभ नहीं है, ऐसे सामर्थ्यशाली आपके ये पुत्र भला दीनतापूर्वक कल्याणहीन घर में कैसे रह सकेंगे? इनके ज्ञानरूपी तीन नेत्र हैं। संसार को इन्होंने सम्यक्‌रूपेण जान लिया है। फिर भला, वैराग्य उत्पन्न हो जाने पर कोई अन्धकूप में क्यों गिरेगा? इसलिये हे महादेवी! आप इस पापरूपी शोक को त्याग दो। त्रैलोक्य को अनित्य समझकर अपने घर जाओ एवं वहीं पर धर्म-साधना में अपने मन् को लगाओ। अपनी प्रिय एवं इच्छित वस्तु के वियोग-काल में ज्ञानहीन पुरुष ही शोक किया करते हैं। जो ज्ञानी एवं बुद्धिमान होते हैं, वे सदैव संसार से डरा करते हैं एवं कल्याणकारी धर्म की ही उपासना किया करते हैं।' महत्तर देव की इन बातों को सुनकर जिन-माता कुछ शान्त हो गयीं। उनके हृदय में विवेकरूपी प्रकाशमयी किरणों का प्रादुर्भाव हुआ एवं हृदय का शोकान्धकार दूर हो गया। वे अपने विशाल हृदय में पवित्र धर्म को धारण कर अपने कुटुम्बियों एवं भृत्यजनों को साथ लेकर राजमहल को वापस लौट गयीं।

इसके बाद जिनेन्द्र महावीर प्रभु पार्श्ववर्ती देवों के साथ मानव समाज का मंगल-गान आरम्भ करने के पूर्व ज्ञातृषंडवन नाम के विशाल वन में संयम धारण करने के लिए जा पहुँचे। वह वन अत्यन्त रमणीक था। वहाँ फल-पुष्पों से युक्त शीतल छायावाले सुन्दर-सुन्दर वृक्ष थे, जो अध्ययन एवं ध्यान के लिए नितान्त उपयुक्त थे। महावीर स्वामी अपनी पालकी से उतर कर 'चन्द्रकान्तमयी' एक स्वच्छ शिला पर बैठ गये। उस सुन्दर शिला की शोभा विचित्र थी। महावीर स्वामी के आने के पहिले ही देवों ने आकर उस शिला को सुरम्य बना दिया था। वह शिला गोलाकार थी। उस शिला

पर विशाल वृक्षों की शीतल एवं घनी छाया पड़ रही थी। चन्द्रकिरणों से भीगी सुरभित जल की बूदें उस शिला पर छिड़की हुई थीं। बहुमूल्य रत्नों के चूर्ण द्वारा स्वयं इन्द्राणी के हाथ से उस शिला पर साथिये बनाये हुए थे। ऊपर वस्त्र का मण्डप बना हुआ था। उसमें ध्वजा एवं रंग-बिरंगी सुन्दर मालाएँ टँगी हुई थीं। चारों ओर धूप का सुगन्धित धुँआ फैल रहा था एवं पास में अनेक मंगल द्रव्य सजाये हुए थे।

महावीर स्वामी उस सुन्दर स्वच्छ शिला पर उत्तराभिमुख होकर बैठ गये एवं मनुष्यों का कोलाहल शांत हो जाने पर देह इत्यादि की इच्छा से विरक्त एवं मुक्ति-साधन में तत्पर हो कर शत्रु-मित्रादि के प्रति उत्तम समान भाव का चिंतवन करने लगे। सर्वप्रथम उन्होंने पल्यंकासन लगा कर मोह-बन्धन में फँसानेवाले केशों का लोंच किया (केश उखाड़ डाले)। उन्होंने क्षेत्र इत्यादि चेतन एवं अचेतन रूप बाह्य दस परिग्रहों का, मिथ्यात्व इत्यादि चौदह अन्तरंग परिग्रहों का तथा वस्त्र, अलंकार एवं माला इत्यादि वस्तुओं का परित्याग कर दिया तथा मनसा-वाचा-कर्मणा पवित्र होकर शरीरादि में निस्पृहतापूर्वक आत्म-सुख की प्राप्ति में लग गये। बाद में जिनेश्वर महावीर स्वामी सम्पूर्ण पाप-क्रियाओं से निर्मुक्त होकर सामायिक संयम को पालन करने में तत्पर हो गये। आतापनादि योग से उत्पन्न उत्तर गुणों को भी उन्होंने धारण किया। वे सबके प्रति समता भाव को धारण करने लगे तथा सम्पूर्ण दोषों से हीन एवं सर्वश्रेष्ठ सामायिक संयम को उन्होंने स्वीकार किया। इस प्रकार उन्होंने मार्गशीर्ष कृष्ण दशमी तिथि के सायंकाल, हस्त-उत्तरा नक्षत्र के मध्य वाले शुभ समय में दुष्प्राप्य जिन-दीक्षा को ग्रहण किया। यह जिन-दीक्षा मुक्तिरूपी कामिनी की सहचरी (सखी) के समान थी।

महावीर स्वामी के मस्तक में चिरकाल रहने के कारण परम पवित्र उनके केशों को स्वयं इन्द्र ने रत्न-जड़ित मंजूषा (पिटारी) में अपने हाथों से संवार कर रक्खा। फिर इन्द्र ने केशों की पूजा की, उन्हें उत्तम बहुमूल्य वस्त्रों से ढांका एवं समारोहपूर्वक क्षीर-सागर के नैसर्गिक शुद्ध जल में डाल दिया। जब केश जैसी हीन वस्तु का भी, जिनेश्वर के संसर्ग में रहने के कारण, इतना अधिक सम्मान किया जा सकता है; तब जो पुरुष साक्षात् जिनेश्वर भगवान की निरन्तर सेवा-पूजा में लगे रहते हैं, उन्हें संसार में कौन-सी ऐसी अलभ्य वस्तु है, जो नहीं मिल सकती? उनकी सेवा से सभी कुछ प्राप्त हो जाता है। इस संसार में जिन भगवान के चरण कमलों के आश्रय में आ जाने से जिस प्रकार यक्षों को सम्मान प्राप्त हो जाता है, उसी प्रकार अरहन्त प्रभु का जो लोग सहारा लेते हैं, वे चाहे नीच पुरुष ही क्यों न हों, उनकी पूजा होती है एवं उन्हें अत्यन्त आदर की दृष्टि से देखा जाता है। इस प्रकार महावीर स्वामी ने दिगम्बर रूप को धारण किया। जब वे दिगम्बर हो गये, तब उनका शरीर तपाये हुए स्वर्ण जैसा प्रकाशमान एवं तेजस्वी दीखने लगा मानो वह कान्ति एवं दीप्ति का स्वाभाविक तेजोमय समूह ही हो। इसके बाद परम आल्हादित इन्द्र स्वयं परमेष्ठी प्रभु (महावीर) का गुण-गौरव-गान (स्तुति) करने लगे

हे देव! इस संसार में सर्वश्रेष्ठ परमात्मा आप हो। इस चराचर जगत् के स्वामी आप हो। आप जगद्गुरु हो, गुण-सागर हो, शत्रु-विजेता हो एवं अत्यन्त निर्मल स्वयं हो। हे प्रभो! जब आपके असंख्य एवं अनन्त गुणों का वर्णन स्वयं गणधरादि देव नहीं कर सकते, तब मैं मन्दमति कहाँ तक आपके महान गुण एवं ऐश्वर्यों का वर्णन कर सकूँगा? ऐसा सोच कर यद्यपि मेरी बुद्धि जड़ हो जाती है तथापि आपके प्रति हमारी अचल भक्ति ही आपकी स्तुति करने के लिए मुझे निरन्तर प्रोत्साहित कर रही है। हे योगीन्द्र! जिस प्रकार कि मेघ का आवरण हट जाने पर सूर्य-किरणों की स्वाभाविक छटा बिखर पड़ती है, उसी तरह आज आपके बाह्य एवं आभ्यन्तर मलों के एकदम नष्ट हो जाने के कारण, आपके निर्मल गुण समूह प्रकाशमान हो रहे हैं। हे स्वामिन्! यद्यपि आपने इन्द्रिय-विषयजन्य चंचल सुखों को क्षणस्थायी जान कर त्याग दिया है तथापि आपकी इच्छा अत्यन्त उत्कृष्ट आत्म-सुख की प्राप्ति के लिए लालायित है। अतः आपको 'निस्पृह' (इच्छाहीन) कैसे कहा जा सकता है? यद्यपि आपने स्त्री के शरीर को नितान्त हेय, घृणित एवं अस्पृश्य समझकर उस पर से अपना अनुराग (प्रेम) हटा लिया है तथापि मुक्ति-रूपी स्त्री में तो आपका अनन्य अनुराग बना हुआ है फिर आपको हम 'वीतराग' (प्रीति-रहित) भी कैसे कह सकते हैं? जिन्हें लोग 'रत्न' कहा करते हैं, यद्यपि उन पत्थरों को आपने त्याग दिया है तथापि सम्यक्दर्शन आदि रत्नत्रय को आपने धारण कर लिया है। फिर आपको त्यागी भी कैसे कहा जाये? यद्यपि आपने क्षणभंगुर राज्य-सत्ता को पाप का आश्रय जान कर छोड़ दिया है तथापि नित्य, अविनाशी एवं अनुपमेय

त्रैलोक्य के विशाल साम्राज्य पर एकाधिपत्य तो आप ही स्थापित करने जा रहे हैं। फिर भला आप निस्पृह कैसे रहे? (यह निन्दा-स्तुति है।) हे जगत् के स्वामी! आपने इस संसार की चंचला लक्ष्मी का परित्याग करके लोकोत्तर सम्पत्ति (मोक्ष-लक्ष्मी) को प्राप्त करने की इच्छा की है, फिर आपको इच्छा-रहित कैसे समझा जाय? हे देव! यद्यपि आपने अपने ब्रह्मचर्यरूपी तीक्ष्ण बाण से अपने शत्रु कामदेव को परास्त कर दिया है तथापि कामदेव की स्त्री रति को आपने विधवा भी बना दिया है। फिर आप कृपालु कहाँ रहे? हे नाथ! आपने अपने ध्यान-रूपी अस्त्र से मोह-नृपति के साथ-ही-साथ अन्य सब कर्म-रूपी शत्रुओं का नाश कर डाला है। फिर आपके हृदय में दयालुता कहाँ रही? हे प्रभो! यद्यपि आपने अपने गिने-गिनाये अल्पसंख्यक बन्धुओं का परित्याग कर दिया है तथापि अब तो स्वयं अपने गुणों के प्रभाव से सम्पूर्ण जगत् को ही अपना बन्धु बनाने जा रहे हैं, फिर आपको कैसे कोई बान्धवहीन कह सकता है? हे चतुर शिरोमणि! आपने सांसारिक भोगों को सर्प की काँचुली के समान त्याग कर शुक्लध्यानरूपी अमृत को पी लिया है फिर आपका 'प्रोषधव्रत' कैसे पूर्ण होगा।

हे स्वामिन्! आपकी इस दीक्षा को बुद्धिमानों ने आदर की दृष्टि से देखा है एवं इसने संसार के दाह को एकदम शान्त कर दिया है। आप की यह परम पवित्र महादीक्षा पुण्य-धारा के समान सदैव हम भव्य-जीवों की रक्षा करे। हे देव! मन-वचन-काय की विशुद्धतापूर्वक सम्पूर्ण जगत को पवित्र कर देने वाली दीक्षा को आपने ग्रहण किया है। इसी महादीक्षा के बल पर मोक्ष चाहने वाले आपको प्रणाम है। आप शरीर आदि के सुख से मुख मोड़ चुके हैं, मोक्ष-मार्ग में निरन्तर अग्रसर हो रहे हैं, तप-रूपी लक्ष्मी से प्रीति करनेवाले हैं, अन्तरंग-बहिरंग परिग्रहों को त्यागनेवाले हैं। आपको प्रणाम है।

हे ईश! सम्यक्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप तीन बहुमूल्य आभूषणों से अलंकृत, किन्तु अन्य पार्थिव आभूषणों से हीन आपको प्रणाम है। आपने सम्पूर्ण वस्त्रों का परित्याग कर दिशा-रूपी शून्य वस्त्रों को धारण किया है, ईश्वरत्व प्राप्ति की साधना में सोत्साह प्रवृत्त हैं, अतः आपको प्रणाम है। हे जिनेश्वर! आप सकल परिग्रहों से हीन एवं गुणरूपी सम्पत्तियों से युक्त हैं, आपको मुक्ति अत्यन्त प्यारी है, इसलिये आपको प्रणाम है। हे नाथ! आप इन्द्रियातीत अक्षय सुख में चित्त को लगाने वाले विरक्त पुरुष हैं, उपवास करके शुक्लध्यानरूपी अमृत के भोक्ता हैं, आपको प्रणाम है। हे देव! आप दीक्षित होकर ज्ञान-रूपी चार नेत्रों के धारक हैं बाल- ब्रह्मचारी हैं, तीर्थेश हैं एवं स्वयंबुद्ध हैं, आपको प्रणाम है। आप कर्मरूपी शत्रुओं की सन्तति के नाशकर्त्ता हैं, गुणसागर हैं एवं उत्तम क्षमा इत्यादि शुभ-लक्षणों से युक्त हैं, आपको प्रणाम है। हे देव! आप इस संसार की सम्पूर्ण आशाओं को पूर्ण करने वाले हैं, परन्तु हम जो आपकी स्तुति कर रहे हैं, वह संसार की उत्तम सम्पदाओं को पाने के लिए नहीं है, किन्तु जिस शक्ति के प्रभाव से बाल्यावस्था में ही आपने तप-दीक्षा ग्रहण की है, वही अतुलनीय शक्ति हमें भी प्राप्त हो। इस तरह देवों के इन्द्र ने भगवान महावीर की पूजा-स्तुति की एवं फिर करबद्ध प्रणाम करके अपार पुण्य का उपार्जन किया।

इसके बाद महावीर स्वामी ने निश्चेष्ट होकर अपने सम्पूर्ण अंग-प्रत्यंगों का अवरोध किया एवं कर्म-रूपी शत्रुओं की नाशक योग-क्रिया का अवलम्बन लिया। उस समय वे चेष्टाशून्य, सुन्दर पत्थर की मूर्ति के समान जान पड़ते थे। उस परमोत्तम ध्यान के प्रभाव से उन्हें चतुर्थ मनःपर्यय ज्ञान प्रादुर्भूत हुआ, जो कि महावीर प्रभु के लिए केवलज्ञान प्राप्त होने का निर्देशन था। उन अनुपमेय महान गुणशाली वीरनाथ की मैं स्तुति करता हूँ एवं उन्हें करबद्ध प्रणाम करता हूँ।

भगवान का प्रथम आहार

इसके बाद महावीर स्वामी यद्यपि छः मास पर्यंत अनशन तप करने में पूर्ण योग्य थे तथापि अन्य मुनीश्वरों को चर्या-मार्ग की प्रवृत्ति दिखलाने की इच्छा से उन्होंने 'पारणा' कर लेने का निश्चय किया। यह पारणा (उपवास के बाद का आहार) शरीर की स्थिति को शक्ति प्रदान करती है। महावीर प्रभु ईर्यापथ की शुद्धि को ध्यान में रखकर विचरने लगे– आहार-दान देने वाला निर्धन है या धनवान? इत्यादि विकल्प न करके वे अपने चित्त में तीन प्रकार के वैराग्य का चिन्तवन करते हुए अनेक दानियों को अपनी चर्या से सन्तुष्ट करते हुए स्वयं विशुद्ध आहार की खोज में घूमने लगे। वे न तो मन्दगति से चलते थे एवं न एकदम तीव्रगति से ही। साधारण-सी चाल से पैरों को बढ़ाते हुए उन्होंने **'कूल' नाम के एक सुन्दर नगर में प्रवेश किया। उस नगर का राजा 'कूल'[1] अत्यन्त परिश्रम के बाद** प्राप्त हुए प्रिय धन-कोष (खजाना)

---

[1] कहीं-कहीं वकुल नाम भी आता है।

की तरह अनायास ही आये हुए जिनदेव जैसे उत्तम पात्र को देखकर परम प्रसन्न हुआ। राजा **'कूल' ने महावीर स्वामी की तीन प्रदक्षिणा** दी एवं भूमि पर पाँचों अंगों को फैला कर प्रणाम किया। बाद में आनन्दोल्लास के कारण 'तिष्ठ-तिष्ठ' (ठहरिये-ठहरिये) ऐसा कहा। धर्म-बुद्धि राजा ने प्रभु को एक पवित्र एवं ऊँचे स्थान पर बैठाया एवं उनके कमल जैसे सुन्दर एवं कोमल चरणों को पवित्र जल से धोया। **उन प्रभु के पाद-प्रक्षालित जल को राजा ने अपने सम्पूर्ण अंगों में लगाया।** इसके बाद राजा ने जलादि आठ प्रकार के प्रासुक द्रव्यों से प्रभु की भक्तिपूर्वक पूजा की। राजा ने अपने मन में विचारा कि आज घर में सुपात्र उत्तम अतिथि के आ जाने से मेरा गार्हस्थ्य-जीवन सफल हुआ। मैं पुण्यकर्मा हूँ। इस पवित्र विवेक से राजा का मन विशेष रूप से पवित्र हो गया। 'हे देव! हे प्रभो! आज आपके आगमन से मैं धन्य हो गया, आपने मेरे घर को परम पवित्र बना दिया'ऐसा कहने से राजा का वचन पवित्र हो गया। 'पात्रदान करने से मेरा हाथ एवं शरीर पवित्र हो गया'ऐसा सोचने से राजा की काय-शुद्धि हो गयी। उसने कृत आदि दोषों सें हीन प्रासुक अन्न से होनेवाले विमल आहार-दान से 'एषणा' को शुद्ध किया। इस प्रकार उस राजा 'कूल' ने नवधा-भक्तिपूर्वक महान पुण्य का उपार्जन किया।

'यह परम दुर्लभ उत्तम पात्र मेरे भाग्य से प्राप्त हुआ है; इसलिये मेरा यह आहार-दान सविधि एवं पूर्णरूपेण सम्पूर्ण है–ऐसा श्रेष्ठ विचार करके वह राजा अत्यन्त श्रद्धावान बन कर अपनी शक्ति के अनुसार पात्र-दान के महान उद्योग में लग गया। उस महादान के प्रभाव से उत्पन्न अजस्त्र रत्नवृष्टि एवं कीर्ति की अभिलाषा उस राजा ने नहीं की थी। वह सेवा-पूजा इत्यादि के द्वारा प्रभु की भक्ति में लग गया एवं धर्म-सिद्धि के निमित्त वह जो अन्य कर्मों को किया करता था, उन सबको तिलांजलि दे दी। उस राजा ने सोचा कि यह प्रासुक आहार है एवं दान देने का यही श्रेष्ठ समय है। यह संयमशील पुरुष उपवासों के उन असह्य क्लेशों को धैर्यपूर्वक सहन कर लेते हैं, इसलिये इन्हें उत्तम विधि से आहार देना ही चाहिये। इस प्रकार राजा ने महान फल को देनेवाले श्रेष्ठ-दाता के उत्तम गुणों को अपने में ग्रहण किया। इसके बाद राजा ने हितकारक उत्तम पात्र को मनसा-वाचा-कर्मणा से पवित्र होकर श्रद्धा-भक्ति के साथ विधिपूर्वक खीर का आहार-दान दिया। वह विशुद्ध आहार प्रासुक एवं स्वादिष्ट था, निर्मल तप को बढ़ाने वाला था एवं क्षुधा-पिपासा को शांत करने वाला था।

उस राजा के दान से देवता लोग बहुत प्रसन्न हुए एवं पुण्योदय के कारण राज-प्रासाद के आँगन में रत्नों की अविरल वर्षा हुई। उस रत्न-वर्षा के साथ-ही-साथ पुष्प-वृष्टि एवं जल-वृष्टि भी हुई। उसी समय आकाश-मंडल में 'दुन्दुभि' इत्यादि वाद्यों की गम्भीर तुमुल ध्वनि हुई। उन वाद्यों के मधुर स्वरों को सुनने से ऐसा जान पड़ता था, मानो वे राजा के पुण्य एवं उत्तम यश का गम्भीर स्वर में गान कर रहे हों। उसी समय देव भी 'जय-जय' इत्यादि शुभ शब्दों का उच्चारण करते हुए कहने लगे'हे प्राणियों! यह परमोत्तम पात्र (महावीर प्रभु) दाता को इस संसार-रूपी महासमुद्र से अनायास ही पार उतार देनेवाले हैं। वह दाता निश्चय ही अत्यन्त भाग्यशाली एवं धन्य है, जिसके यहाँ जिनराज स्वयं पहुँच जायें। ऐसे उत्तम दान के प्रभाव से दाता को स्वर्ग एवं मोक्ष दोनों ही कालक्रम से प्राप्त होते हैं। इहलोक में तो आपने देखा कि उत्तम पात्र को दान देने से बहुमूल्य अपार रत्न-राशि की प्राप्ति होती है एवं विमल यश का विस्तार होता है; वैसे ही परलोक में भी स्वर्ग-सम्पदायें एवं भोग-विभूतियाँ प्राप्त होती हैं, जिनके द्वारा चिरकाल तक आनन्दोपभोग किया जाता है।

रत्न-वृष्टि के कारण राज-महल का आँगन भर गया। आँगन में पड़े हुए उन रत्नों के ढेर को देखकर बहुत-से लोग परस्पर कहने लगे कि देखो, दान का फल कैसा उत्तम होता है? नेत्रों से देखते-ही-देखते यह राज-प्रासाद बहुमूल्य रत्नों की वर्षा से भर गया। दूसरे ने कहा यहाँ क्या देखते हो? इस अत्यन्त सामान्य फल को ही तुम अपने नेत्रों से देख रहे हो। उत्तम पात्र-दान से तो स्वर्ग एवं मोक्ष के अक्षय सुख भी अनायास ही प्राप्त हो ज़ाते हैं। इन लोगों के कथोपकथन को सुनकर एवं अपने नेत्रों से प्रत्यक्ष पात्र-दान की महिमा को देखकर बहुत-से ज़ीव स्वर्ग एवं मोक्ष की कल्पना करने लगे एवं पात्र-दान की महत्ता में विश्वास रखने लगे।

आहार-दान के समय वीतरागी तीर्थंकर महावीर ने अपने शरीर की स्थिति के विचार से **अंजलिरूपी पात्र के द्वारा** खीर का आहार ग्रहण किया तथा इस आहार-ग्रहण के उत्तम फल से राजा को अनुगृहीत **कर एवं उसके घर को पवित्र**

२-३४

कर पुनः वन को चले गये। राजा ने भी अपने जन्म, घर एवं धन को अप्रत्याशित पुण्योदय से प्राप्त हुआ समझा एवं इसे वे अपना अहोभाग्य समझने लगे। इस श्रेष्ठ दान का मन-वचन-काय द्वारा अनुमोदन करने के कारण अर्थात् दाता एवं पात्र की प्रशंसा करके बहुत से लोगों ने दाता के समान ही उत्तम पुण्य का उपार्जन कर लिया।

भगवान पर उपसर्ग

अतुलनीय पराक्रमी महावीर प्रभु ने सम्पूर्ण कठिन परिषहों को तथा वन के अति उग्र उपद्रवों को अपनी विलक्षण शक्ति के प्रभाव से जीत लिया तथा उत्तम ज्ञान-प्राप्ति के लिए अतिचार-रहित तथा भावना-सहित पंच महाव्रतों का पालन किया। पाँच समिति एवं तीन गुप्ति इन आठ का वे नित्यशः पालन करते हुये इनके द्वारा कर्म-धूलि को नष्ट करने के लिए सदैव तत्पर रहते थे। वे महावीर प्रभु सर्वश्रेष्ठ थे, इसलिये निरालस होकर सम्पूर्ण अन्यान्य गुणों के साथ ही सारे मूलगुणों की पालना में सचेष्ट होकर किसी भी दोष को स्वप्न में भी अपने पास नहीं फटकने देते थे।

अर्थात् यद्यपि तीर्थंकरों को दीक्षा लेने के बाद एक सामायिक चारित्र ही होता है फिर भी समिति, गुप्ति आदि सब उसी में अन्तर्भूत माने जाते हैं। जैसा कि कहा भी है–

चतुर्थज्ञाननेत्रस्य निसर्गबलशालिनः।
तस्याद्यमेव चारित्रं द्वितीयं तु प्रमादिनाम्[1]।।

मनःपर्ययज्ञानरूपी नेत्र को धारण करने वाले और स्वाभाविक बल से सुशोभित उन भगवान के पहला सामायिक चारित्र ही था क्योंकि दूसरा छेदोपस्थापना चारित्र प्रमादी जीवों के होता है।

इस प्रकार के परमोज्वल चारित्रयुक्त महावीर प्रभु सम्पूर्ण पृथ्वी पर विहार करते हुए **उज्जयिनी** नाम की एक महानगरी के **'अतिमुक्तक'** नामक श्मशान में जा पहुँचे। उस महाभयानक श्मशान में पहुँचकर महावीर प्रभु ने मोक्ष प्राप्ति के लिए शरीर का ममत्व त्याग कर 'प्रतिमायोग' धारण कर लिया तथा पर्वत के समान अचल भाव से अवस्थित हो गये। सुमेरु पर्वत के उन्नत श्रृङ्ग के समान एवं परमात्मा के ध्यान में लीन श्रीजिनेन्द्र महावीर प्रभु को देखकर उनके धैर्य की परीक्षा करने के लिए वहाँ के **स्थाणु** नामक अन्तिम रुद्र को उपसर्ग करने की इच्छा हुई। इसी समय पूर्वकृत कुछ कर्म का असाता उदय जिनेन्द्र के होनेवाला था। वह स्थाणु रुद्र अनेक भयंकर स्थूलकाय पिशाचों को अपने संग लेकर महावीर स्वामी के ध्यान को भंग करने के लिये प्रस्तुत हुआ। रात्रि के समय में वह अपने बड़े-बड़े रक्तवर्ण नेत्रों को फाड़-फाड़ कर देखते हुए जिनेन्द्र प्रभु के सन्मुख आया। उस समय वह किलकारियाँ भर रहा था, नुकीले भयानक दाँतों को दिखला-दिखला कर अट्टहास कर रहा था, भगवान का ध्यान भंग करने के लिए प्रचण्ड ताल, स्वर एवं लय में गान-वाद्य कर नाच रहा था, साथ ही विशाल मुख-विवर को फाड़े हुए तथा हाथों में तीक्ष्ण आयुधों को धारण किये हुए था। इस प्रकार के महाभयोत्पादक स्वरूप को लेकर वह महावीर स्वामी के सन्मुख आया तथा उनके ध्यान को भंग करने के लिये उन पर बड़ा भारी उपसर्ग किया। परन्तु इन उपद्रवों का महावीर प्रभु पर किसी प्रकार का प्रभाव नहीं पड़ा तथा उनका ध्यान यथापूर्व अचल एवं अटूट बना रहा।

जब इतना करने पर भी जिनेन्द्र के ध्यान को वह भंग नहीं कर सका, तब उसने दूसरे उपायों का अवलम्बन लिया। **स्थाणुरुद्र** ने सर्प, सिंह, गजराज, प्रबल वायु तथा अग्नि इत्यादि के रूप में आकर तथा उत्पीड़क वचनों के द्वारा उग्र उपसर्गों को आरम्भ किया। इन उपसर्गों से निर्बल हृदयों में तो भय का संचार हो सकता था, किन्तु भगवान महावीर के हृदय में डर कहाँ? वे तो लगातार अचल ही बने रहे। उनका ध्यान भंग होना तो दूर रहा, उत्तरोत्तर ध्यान की गम्भीरता बढ़ती ही गयी। जब स्थाणुरुद्र को इतने पर भी सफलता नहीं मिली, तब वह अन्य प्रकार के घोर उपसर्गों को करने लगा। भीलों का रूप धारण कर भयानक शस्त्रास्त्रों को दिखला कर प्रभु के हृदय में उसने भय उत्पन्न करना चाहा, परन्तु इन अनेक उग्र उपद्रवों के होते रहने पर भी जगत् स्वामी जिनेन्द्र (महावीर प्रभु) रंचमात्र भी चलायमान नहीं हुए एवं पर्वत के समान एकदम अचल बने रहे, किंचित्मात्र भी खिन्नता का आभास उनकी मुखाकृति से नहीं मिला। आचार्य देव ने

---

[1] उत्तरपुराण पृ. 464।

कहा है कि सम्भव है कि अचल पर्वत भी चलायमान हो जाय, परन्तु श्रेष्ठ योगियों का चित्त हजारों उग्र उपद्रव के द्वारा भी कदापि चलायमान नहीं हो सकता। इस संसार में वे ही लोग धन्य हैं, जो कि ध्यानमग्न हो जाने पर अनेक उग्र उपद्रवों के होते रहने पर भी विकारयुक्त होकर ध्यान भंग कदापि नहीं होने देते।

इसके बाद जब जिनेन्द्र (महावीर प्रभु) के ध्यान को भंग करने में स्थाणुरुद्र को कुछ भी सफलता प्राप्त करने की आशा नहीं रही, तब हताश एवं लज्जित हो कर वह वहीं उनकी स्तुति करने लगा–'हे देव! इस संसार में आप ही बली हो, आप ही जगद्गुरु हो, एवं वीर-शिरोमणि हो, इसलिये आपका नाम **'महावीर'** है। आप महा ध्यानी हो, सम्पूर्ण जगत् के स्वामी हो, सकल परीषहों के विजेता हो, वायु के समान निःसंग वीर हो एवं कुलाचल की तरह अचल हो। आप क्षमा में पृथ्वी के समान, गम्भीरता में समुद्र के समान एवं प्रसन्नचित्त होने के कारण निर्मल जल के समान हो। कर्मरूपी जंगल को नष्ट करने के लिए आप अग्नि अंगार के समान हो। हे प्रभो! आप त्रिलोक में वर्द्धिष्णु हो एवं श्रेष्ठ बुद्धिशाली होने के कारण **'सन्मति'** हो। आप ही महाबली तथा परमात्मा हो। हे नाथ! आप निश्चलरूप के धारण करनेवाले हैं एवं प्रतिमा-योग के धारण करने वाले हैं। आप परमात्मा-स्वरूप हैं, आपको सदैव नमस्कार है।' इस प्रकार स्थाणुरुद्र ने महावीर प्रभु की स्तुति करके प्रणाम किया तथा भगवान के प्रति ईर्ष्या त्याग कर अपनी प्रिय पत्नी के साथ आनन्दित होकर अपने स्थान को चला गया। जब महापुरुषों के योगजन्य साहस तथा शक्ति को देखकर दुर्जन भी परम आनन्दित हो जाते हैं, तब सत्पुरुषों का तो कहना ही क्या? सज्जनों का तो दूसरों के गुणों पर मुग्ध हो जाने का स्वभाव ही होता है।

उत्तरपुराण में महतिमहावीर नाम एवं अन्यत्र अतिवीर नाम भी आया है। भगवान महावीर पर केवल एक बार उज्जयिनी में ही उपसर्ग हुआ है। जो अनेकों बार उपसर्ग मानते हैं वह गलत है।

भगवान महावीर के पाँच नाम

उत्तरपुराण ग्रन्थ के आधार से भगवान महावीर के पांचों नामों का वर्णन यहां बताया जा रहा है–

विदेहदेश के **कुण्डपुर- कुंडलपुर** नगर के राजा **सिद्धार्थ** की महारानी **त्रिशला ने आषाढ़ शुक्ला षष्ठी** तिथि को गर्भ में तीर्थंकर शिशु को धारण किया पुनः नवमाह बाद **चैत्र शुक्ला त्रयोदशी** को तीर्थंकर पुत्र को जन्म दिया। त्रिशला माता का दूसरा नाम **प्रियकारिणी** था। रानी प्रियकारिणी ने उन जिनबालक को जन्म देकर मनुष्यों, तिर्यंचों और देवों पर बहुत भारी प्रेम उत्पन्न किया था इसीलिए उनका **''प्रियकारिणी''** यह नाम सार्थक हुआ था।

वीर और वर्धमान नाम

तभी सौधर्मेन्द्र ने जिनबालक को सुमेरुपर्वत पर ले जाकर प्रभु का 1008 कलशों से जन्माभिषेक महोत्सव किया पुनः वस्त्राभरणों से अलंकृत कर **''वीर''** और **''वर्धमान''** ऐसे दो नाम रखे थे। कहा भी है–

अलं तदिति तं भक्त्या, विभूष्योद्घविभूषणैः।
वीरः श्रीवर्धमानश्चेत्यस्याख्याद्वितयं व्यधात्।। 276।।

सन्मति नाम

किसी समय **''संजय''** और **''विजय''** नाम के दो चारणऋद्धिधारी मुनियों को किसी पदार्थ में संदेह उत्पन्न हुआ तभी वे जन्म के बाद जिनबालक के समीप आए और उनके दर्शनमात्र से उनका संदेह दूर हो गया तभी उन्होंने बड़ी भक्ति से जिनशिशु का **''सन्मति''** यह नामकरण करके अतीव प्रसन्नता व्यक्त की थी। कहा भी है–

संजयस्यार्थसंदेहे संजाते विजयस्य च।
जन्मानन्तरमेवैन-मभ्येत्यालोकमात्रतः ।। 282।।

तत्संदेहे गते ताभ्यां चारणाभ्यां स्वभक्तितः।
अस्त्वेष सन्मतिर्देवो भावीति समुदातः ।। 283।।

महावीर नाम

जिनबालक देव बालकों के साथ क्रीड़ा किया करते थे। एक समय की घटना है कि स्वर्ग में **सुधर्मा सभा** में प्रभु के गुणों की चर्चा हो रही थी साथ ही उनकी शूरवीरता की भी प्रशंसा हो रही थी तभी **संगम** नाम के एक देव ने उनकी परीक्षा करनी चाही। एक समय बालक वर्धमान अनेक राजकुमारों के साथ बगीचे में वृक्ष पर चढ़े हुए क्रीड़ा में तत्पर थे। यह देख संगमदेव ने उन्हें भयभीत करने की इच्छा से बहुत बड़े सांप का रूप धारणकर उस वृक्ष की जड़ से लेकर स्कंध तक लिपट गया। सब बालक उस सांप को देखकर भय से कांप उठे और शीघ्र ही डालियों से कूद-कूदकर इधर-उधर भाग गए। इस महाभय के उपस्थित होने पर भी तीर्थंकर के अवतार **''वीर'' ''वर्धमान''** किंचित् भी भयभीत नहीं हुए प्रत्युत् लहलहाती हुई सौ जिह्वाओं से अत्यन्त भयंकर ऐसे सर्प के फणा पर पैर रखकर खड़े हो गए और उसके साथ क्रीड़ा करते हुए नीचे उतर आए। वर्धमान कुमार की इस क्रीड़ा से प्रसन्न हो संगमदेव ने अपनी विक्रिया समेटकर भगवान की स्तुति की और प्रभु का ''महावीर'' यह नाम घोषित कर दिया।इस सन्दर्भ में उत्तरपुराण की पंक्ति देखिए–

ललज्जिह्वाशतात्युग्रमारुह्य तमहिं विभीः।
कुमारः क्रीडयामास मातृपर्यंकवत्तदा ।। 294।।
विजृंभमाणहर्षाम्भोनिधिः संगमकोऽरमः।
स्तुत्वा भवान्महावीर इति नाम चकार सः।। 295।।

महतिमहावीर नाम

भगवान महावीर जब तीस वर्ष की अवस्था में थे तब एक समय उन्हें पूर्वभव का **''जातिस्मरण''** हो गया। तत्क्षण ही उन्हें वैराग्य हो गया। लौकांतिक देवों द्वारा स्तुति को प्राप्त भगवान ने **षण्डवन** या **ज्ञातृवन** में **''सालवृक्ष''** के नीचे जैनेश्वरी दीक्षा ले ली।

उज्जयिन्यामथान्येद्युस्तं श्मशानेऽतिमुक्तके।
वर्धमानं महासत्त्वं प्रतिमायोग-धारिणम्।। 331।।
निरीक्ष्य स्थाणुरेतस्य दौष्ट्याद्धैर्यं परीक्षितुम्।
उत्कृत्य कृत्तिकास्तीक्ष्णाः प्रविष्टजङ्गराण्यलम्।। 332।।
व्यात्ताननाभिभीष्माणि नृत्यन्ति विविधैर्लयैः।
तर्जयन्ति स्फुरद्ध्वानैः साट्टहासैर्दुरीक्षणैः।। 333।।
स्थूलवेतालरूपाणि निशि कृत्वा समन्ततः।
पराण्यपि फणीन्द्रेभसिंहवन्ह्यानिलैः समम्।। 334।।
किरातसैन्यरूपाणि पापैकार्जनपंडितः।
विद्याप्रभावसंभावितोपसर्गैर्भयावहैः।। 335।।
स्वयं स्खलयितुं चेतः समाधेरसमर्थकः।
समहतिमहावीराख्यां कृत्वा विविधाः स्तुतीः।। 336।।
उमया सममाख्याय नर्तित्वागादमत्सरः।
पापिनोऽपि प्रतुष्यन्ति प्रस्पष्टं दृष्टसाहसाः।। 337।।

कई वर्षों तक तपश्चरण करते हुए एक बार प्रभु **उज्जयिनी नगरी** के **अतिमुक्तक** नाम के श्मशान में प्रतिमायोग से विराजमान थे। उन्हें देखकर रूद्र ने उनके धैर्य की परीक्षा के लिए रात्रि में बड़े-बड़े वेतालों का रूप लेकर उपसर्ग करना शुरू कर दिया। ये वेताल भयंकर शब्दों को करते हुए अट्टहास और विकराल दृष्टि से डरा रहे थे। इनके सिवाय उसने सर्प, हाथी, सिंह, अग्नि और वायु के साथ भीलों की सेना बनाकर उपसर्ग किया। उस रूद्र द्वारा विद्या के बल से नाना

प्रकार के भयंकर उपसर्गों से भी भगवान महावीर ध्यान से चलायमान नहीं हुए। तब उसने अपनी विद्या समेटकर भगवान की खूब स्तुति करते हुए उनका **''महतिमहावीर''** नाम रखा पुनः अपनी पत्नी के साथ-साथ प्रसन्नतापूर्वक नृत्य करते हुए प्रभु की भक्ति करके अपने स्थान पर चला गया।

कहीं-कहीं यह पांचवां नाम **''अतिवीर''** नाम से प्रसिद्धि को प्राप्त है।

इस प्रकार भगवान महावीर के **''वीर''** और **''वर्धमान''** ये दो नाम इन्द्र द्वारा रखे गए हैं। **''सन्मति''** नाम **''संजय-विजय''** नाम के चारणऋद्धिधारी मुनियों द्वारा रखा गया है। **''संगमदेव''** ने **''महावीर''** नाम रखा है एवं **''रुद्र''** ने **''महतिमहावीर''** नाम रखा है।

प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की तीर्थंकर परम्परा में पांच नामों से विभूषित अंतिम एवं चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी हम और आप सबका कल्याण करें।

चन्दनां के बन्धन टूट गये

एक बार महामुनि भगवान महावीर कौशाम्बी में आहार के लिए आये। वहां के सेठ वृषभदत्त की पत्नी-भद्रा, सेठ के प्रति संदिग्ध दृष्टि होने से चन्दना को खाने के लिए मिट्टी के सकोरे में कांजी से मिश्रित कोदों का भात दिया करती थी और क्रोधवश उसे सांकल से बांधे रखती थी। किसी दिन उस कौशाम्बी नगरी में आहार के लिए भगवान् महावीर स्वामी आ गये। उन्हें देखकर चन्दना उनके सामने जाने लगी। उसी समय उसके सांकल के सब बन्धन टूट गये, उसके शिर पर केश आ गये, वस्त्र-आभूषण सुन्दर हो गये। शील के माहात्म्य से मिट्टी का सकोरा स्वर्ण पात्र और कोदों का भात चावल की खीर बन गया। उस चन्दना ने भगवान को पड़गाह कर नवधा भक्ति से आहारदान दिया। उसके वहाँ पंचाश्चर्यों की वर्षा हुई अनंतर अपने बंधुओं के साथ उसका समागम हो गया।

महासती चंदना का संक्षिप्त परिचय

सिन्धु नामक देश की वैशाली नगरी में चेटकं नामका अतिशय प्रसिद्ध, विनीत और जिनेन्द्र देव का अतिशय भक्त राजा था। उसकी रानी का नाम सुभद्रा था। उनके दश पुत्र हुए जो कि धनदत्त, धनभद्र, उपेन्द्र, शिवदत्त, हरिदत्त, कम्बोज, कम्पन, पतंगक, प्रभंजन और प्रभास नाम से प्रसिद्ध थे तथा उत्तम क्षमा आदि दश धर्मों के समान जान पड़ते थे। इन पुत्रों के सिवाए सात ऋद्धियों के समान सात पुत्रियां भी थीं। जिनमें सबसे बड़ी प्रियकारिणी थी, उससे छोटी मृगावती, उससे छोटी सुप्रभा, उससे छोटी प्रभावती, उससे छोटी चेलिनी, उससे छोटी ज्येष्ठा और सबसे छोटी चन्दना थी।

विदेह देश के कुण्डपुर नगर में नाथवंश के शिरोमणि एवं तीनों सिद्धियों से सम्पन्न राजा सिद्धार्थ राज्य करते थे। पुण्य के प्रभाव से प्रियकारिणी उन्हीं की रानी हुई थीं। वत्सदेश की कौशाम्बी नगरी में चन्द्रवंशी राजा शतानीक रहते थे। मृगावती नाम की दूसरी पुत्री उनकी स्त्री हुई थी। दशार्ण देश के हेमकच्छ नामक नगर के स्वामी राजा दशरथ थे जो कि सूर्यवंशरूपी आकाश के चन्द्रमा के समान जान पड़ते थे। सूर्य की निर्मलप्रभा के समान सुप्रभा नाम की तीसरी पुत्री उनकी रानी हुई थी, कच्छ देश की रोरुका नामक नगरी में उदयन नाम का एक बड़ा राजा था। प्रभावती नामकी चौथी पुत्री उसी की हृदयवल्लभा हुई थी। अच्छी तरह शीलव्रत धारण करने से इसका दूसरा नाम शीलवती भी प्रसिद्ध हो गया था। पांचवी पुत्री चेलना राजगृही के राजा श्रेणिक की पट्टरानी हुई थीं तथा ज्येष्ठा और चंदना बालब्रह्मचारिणी थीं।

किसी एक समय वह चन्दना अपने परिवार के लोगों के साथ अशोक नामक वन में क्रीड़ा कर रही थी। उसी समय दैवयोग से विजयार्ध पर्वत की दक्षिण श्रेणी के सुवर्णाभ नगर का राजा मनोवेग विद्याधर अपनी मनोवेगा रानी के साथ स्वच्छन्द क्रीड़ा करता हुआ वहाँ से निकला और क्रीड़ा करती हुई चन्दना को देखकर काम के द्वारा छोड़े हुए बाणों से जर्जर शरीर हो गया। वह शीघ्र ही अपनी स्त्री को घर भेजकर रूपिणी विद्या से अपना दूसरा रूप बनाकर उसे सिंहासन पर बैठा आया और अशोक वन में आकर तथा चन्दना को लेकर शीघ्र ही वापिस चला गया। उधर मनोवेगा उसकी माया को जान गई जिससे क्रोध के कारण उसके नेत्र लाल होकर भयंकर दिखने लगे। उसने उस विद्या देवता को बाएं पैर की ठोकर देकर मार दिया जिससे वह अट्टहास करती हुई सिंहासन से उसी समय चली गई। तदनन्तर वह मनोवेगा

रानी आलोकिनी नाम की विद्या से अपने पति की सब चेष्टा जानकर उसके पीछे दौड़ी और आधे मार्ग.में चन्दना सहित लौटते हुए पति को देखकर बोली कि यदि आप अपना जीवन चाहते हो तो इसे छोड़ दो। इस प्रकार क्रोध से उसने उसे बहुत ही डाँटा। मनोवेग अपनी रानी से बहुत ही डर गया। इसलिए उसने हृदय में बहुत ही शोककर सिद्ध की हुई पर्णलघ्वी नामकी विद्या से उस चन्दना को भूतरमण नामक वन में ऐरावती नदी के दाहिने किनारे पर छोड़ दिया।

पंचनमस्कार मंत्र का जप करने में तत्पर रहने वाली चन्दना ने वह रात्रि बड़े कष्ट से बिताई। प्रातःकाल जब सूर्य का उदय हुआ तब भाग्यवश एक कालक नामका भील वहां स्वयं आ पहुँचा। चन्दना ने उसे अपने बहुमूल्य देदीप्यमान आभूषण दिये और धर्म का उपदेश भी दिया जिससे वह भील बहुत ही संतुष्ट हुआ। वहीं कहीं भीमकूट नामक पर्वत के पास रहने वाला एक सिंह नाम का भीलों का राजा था, जो कि भयंकर नामक पल्ली का स्वामी था। उस कालक नामक भील ने वह चन्दना उसी सिंह राजा को सौंप दी। सिंह पापी था अतः चन्दना को देखकर उसका हृदय काम से मोहित हो गया। वह क्रूर ग्रह के समान निग्रह कर उसे अपने आधीन करने के लिए उद्यत हुआ। यह देख उसकी माता ने उसे समझाया कि हे पुत्र! तू ऐसा मत कर, यह प्रत्यच्छ देवता है, यदि कुपित हो गई तो कितने ही संताप, शाप और दुःख देने वाली होगी। इस प्रकार माता के कहने से डरकर उसने स्वयं दुष्ट होने पर भी वह चन्दना छोड़ दी। तदनन्तर चन्दना ने उस भील की माता के साथ निश्चिन्त होकर कुछ काल वहीं पर व्यतीत किया।

अथानन्तर-वत्स देश के कौशाम्बी नामक श्रेष्ठ नगर में एक वृषभसेन नाम का सेठ रहता था। उसका मित्रवीर नामका एक कर्मचारी था जो कि उस भीलराज का मित्र था। भीलों के राजा ने वह चन्दना उस मित्रवीर को दे दी और मित्रवीर ने भी बहुत भारी धन के साथ भक्तिपूर्वक वह चन्दना अपने सेठ के लिए सौंप दी। किसी एक दिन वह चन्दना उस सेठ को जल पिला रही थी उस समय उसके केशों का कलाप छूट गया था और जल से भीगा हुआ पृथिवी पर लटक रहा था। उसे वह बड़े यत्न से एक हाथ से संभाल रही थी। सेठ की स्त्री भद्रा नामक सेठानी ने जब चन्दना का रूप देखा तो वह शंका से भर गई। उसने मन में समझा कि हमारे पति का इसके साथ संपर्क है। ऐसा विचार कर वह बहुत ही कुपित हुई। क्रोध के कारण उसके ओंठ काँपने लगे। उस दुष्टा ने चन्दना को साँकल से बाँध दिया तथा खराब भोजन और ताड़न-मारण आदि के द्वारा वह उसे निरन्तर कष्ट पहुंचाने लगी परन्तु चन्दना यही विचार करती थी कि यह सब मेरे द्वारा किए हुए अशुभ-कर्म का फल है। यह बेचारी सेठानी क्या कर सकती है? ऐसा विचारकर वह निरन्तर आत्मनिन्दा करती रहती थी। उसने यह सब समाचार अपनी बड़ी बहिन मृगावती के लिए भी कहलाकर नहीं भेजे थे।

तदनन्तर किसी दूसरे दिन भगवान् महावीर स्वामी ने आहार के लिए उसी नगरी में प्रवेश किया। उन्हें देख चन्दना बड़ी भक्ति से आगे बढ़ी। आगे बढ़ते ही उसकी साँकल टूट गयी और आभरणों से उसका सब शरीर सुन्दर दिखने लगा। उन्हीं के भार से मानो उसने झुककर शिर से पृथिवी तल का स्पर्श किया, उन्हें नमस्कार किया और विधिपूर्वक पड़गाहन कर उन्हें आहार दिया। इस आहार दान के प्रभाव से वह मानिनी बहुत ही संतुष्ट हुई, देवों ने उसका सम्मान किया, रत्नधारा की वृष्टि की, सुगन्धित फूल बरसाए, देव-दुन्दुभियों का शब्द हुआ और दान की महिमा की घोषणा होने लगी सो ठीक ही है क्योंकि उत्कृष्ट पुण्य अपने बड़े भारी फल के साथ तत्काल ही फलते हैं।

तदनन्तर चन्दना की बड़ी बहिन मृगावती यह समाचार जानकर उसी समय अपने पुत्र उदयन के साथ उसके समीप आई और स्नेह से उसका आलिंगन कर पिछला समाचार पूछने लगी। तब वह पिछला समाचार सुनकर बहुत ही व्याकुल हुई। तदनन्तर रानी मृगावती उसे अपने घर ले जाकर सुखी हुई। यह देख भद्रा सेठानी और वृषभसेन सेठ दोनों ही भय से घबड़ाये और मृगावती के चरणों की शरण में आये। दयालु रानी ने उन दोनों से चन्दना के चरण-कमलों में प्रणाम कराया। चन्दना के क्षमा कर देने पर वे दोनों बहुत ही प्रसन्न हुए और कहने लगे कि यह मानो मूर्तिमती क्षमा ही है। इस समाचार के सुनने से उत्पन्न हुए स्नेह के कारण वैशाली से चंदना के भाई-बंधु भी उसके पास आ गये।

कालांतर में चंदना ने भगवान महावीर के समवसरण में आर्यिका दीक्षा लेकर सभी आर्यिकाओं में गणिनीपद को प्राप्त किया है।

केवलज्ञान कल्याणक

जगद्‌बंधु वर्द्धमान भगवान ने निर्ग्रंथ मुद्रा में नगर, वन आदि में विहार करते हुये छद्‌मस्थ अवस्था के बारह वर्ष व्यतीत कर दिये। श्री पूज्यपाद स्वामी कहते हैं–

> **ग्रामपुरखेटकर्वट-मटम्बघोषाकरान् प्रविजहार।**
> **उग्रैस्तपोविधानैर्द्वादशवर्षाण्यमरपूज्यः।।**

देवों द्वारा पूज्य भगवान महावीर ने उग्र-उग्र तपश्चरण करते हुये ग्राम, पुर, खेट कर्वट, मटम्ब, पत्तन, घोष, आकर आदि स्थलों में विहार करते हुये दीक्षित जीवन में बारह वर्ष व्यतीत कर दिये।

किसी एक दिन वे भगवान जृंभिक ग्राम के समीप ऋजुकूला नदी के किनारे मनोहर नाम के वन के मध्य सालवृक्ष के नीचे रत्नमयी एक बड़ी शिला पर दो दिन के उपवास का नियम लेकर प्रतिमायोग से विराजमान हो गये। शुक्लध्यान में आरूढ़ भगवान वैशाख शुक्ला दशमी के दिन अपराण्ह काल में हस्त और उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र के बीच में चन्द्रमा के रहते हुये परिणामों की विशुद्धि को बढ़ाते हुये क्षपकश्रेणी में स्थित हो गये।

उसी समय द्वितीय शुक्लध्यान के द्वारा घातिया कर्मों को नष्ट कर भगवान ने दिव्य केवलज्ञान प्राप्त कर लिया। उसी समय भगवान के जन्म समय के समान ही चारों प्रकार के देवों के यहां बिना बजाये बाजे बजने लगे। सौधर्मेंद्र ने भगवान के केवलज्ञान की प्रगटता को जानकर तत्क्षण ही कुबेर को समवसरण रचना बनाने की आज्ञा दी एवं स्वयं चारों निकाय के देवों के साथ अर्धनिमिष मात्र में वहाँ आ गया।

भगवान महावीर का समवसरण

केवलज्ञान के उत्पन्न होते ही तीर्थंकर का परमौदारिक शरीर पृथ्वी से पाँच हजार धनुष[1] (20000 हाथ प्रमाण) ऊपर चला जाता है। उस समय तीनों लोकों में अतिशय क्षोभ उत्पन्न होता है और सौधर्म आदि इन्द्रों के आसन कंपायमान हो जाते हैं। भवनवासी देवों के यहाँ अपने आप शंख का नाद होने लगता है। व्यंतर देवों के यहाँ भेरी बजने लगती है, ज्योतिषी देवों के यहाँ सिंहनाद होने लगता है और कल्पवासी देवों के यहाँ घण्टा बजने लगता है। इंद्रों के मुकुट के अग्रभाग स्वयमेव झुक जाते हैं और कल्पवृक्षों से पुष्पों की वर्षा होने लगती है। इन सभी कारणों से इन्द्र और देवगण तीर्थंकर के केवलज्ञान की उत्पत्ति को जानकर भक्तियुक्त होते हुये सात पैर आगे बढ़कर भगवान् को प्रणाम करते हैं। जो अहमिन्द्रदेव हैं, वे भी आसनों के कंपित होने से केवलज्ञान की उत्पत्ति को जानकर सात पैर आगे बढ़कर वहीं से परोक्ष में जिनेंद्रदेव की वंदना कर अपना जीवन सफल कर लेते हैं। सोलह स्वर्ग तक के देव-देवियाँ तो भगवान् की वंदना के लिये चले आते हैं।

उसी क्षण सौधर्म इन्द्र की आज्ञा से कुबेर विक्रिया के द्वारा तीर्थंकर के समवसरण (धर्मसभा) को विचित्र रूप से रचता है। उस समव्रसरण के अनुपम संपूर्ण स्वरूप का वर्णन करने के लिये साक्षात् सरस्वती भी समर्थ नहीं हैं। यहाँ पर लेशमात्र वर्णन किया जाता है[2]। इस समवसरण के वर्णन में यहाँ 31 विषय बताये जा रहे हैं–

सामान्य भूमि, सोपान, विन्यास, वीथी, धूलिशाल, चैत्यप्रासाद भूमि, नृत्यशाला, मानस्तम्भ, वेदी, खातिका, वेदी, लताभूमि, साल, उपवनभूमि, नृत्यशाला, वेदी, ध्वजाभूमि, साल, कल्पभूमि, नृत्यशाला, वेदी, भवनभूमि, स्तूप, साल, श्रीमण्डप, ऋषि आदि गणों का विन्यास, वेदी, प्रथम पीठ, द्वितीय पीठ, तृतीय पीठ और गंधकुटी।

1.सामान्य भूमि–समवसरण की संपूर्ण सामान्य भूमि सूर्यमण्डल के सदृश गोल, इन्द्रनीलमणिमयी होती है। यह सामान्यतया बारह योजन प्रमाण होती है। विदेह क्षेत्र के संपूर्ण तीर्थंकरों की समवसरण भूमि का यही प्रमाण है। भरत और ऐरावत क्षेत्र के तीर्थंकरों की समवसरण भूमि का उत्कृष्ट प्रमाण यही है, जघन्य प्रमाण एक योजन मात्र है, मध्यम के अनेक भेद हैं। जैसे कि भगवान ऋषभदेव का समवसरण बारह योजन का था शेष तीर्थंकरों का घटते-घटते अंतिम

---

[1] यहाँ धनुष में 4 हाथ माने हैं अतः 20000 हाथ ऊपर चला जाता है। [2] यहाँ समवसरण का वर्णन तिलोयपण्णत्ति ग्रंथ के आधार से है।

भगवान महावीर का एक योजन मात्र था।

2. सोपान–समवसरण में चढ़ने के लिए भूमि से 1 हाथ ऊपर से आकाश में चारों ही दिशाओं में से प्रत्येक दिशा में ऊपर-ऊपर 20,000 सीढ़ियाँ होती हैं। ये सीढ़ियाँ 1 हाथ ऊँची और इतनी ही विस्तार वाली रहती हैं ये सब स्वर्ण से निर्मित होती हैं। देव-मनुष्य और तिर्यंच गण अंतर्मुहूर्त मात्र में ही इन सभी सीढ़ियों को पार कर समवसरण में पहुँच जाते हैं।

3. विन्यास–समवसरण में चार कोट, पाँच वेदियाँ, इनके बीच में आठ भूमियाँ और सर्वत्र प्रत्येक अन्तर भाग में तीन पाठ होते हैं। इस क्रम से समवसरण में सारी रचनायें रहती हैं। इन सबका वर्णन क्रम से आ जावेगा।

4. वीथी–प्रत्येक समवसरण में प्रारम्भ से लेकर प्रथम पीठ (कटनी) पर्यंत, सीढ़ियों की लम्बाई के बराबर विस्तार वाली चार वीथियाँ होती हैं। यहाँ 'वीथी' से जाने का मार्ग (सड़क) समझना चाहिये। इन वीथियों के पार्श्व भाग में स्फटिकपाषाण से बनी हुई वेदियाँ होती हैं। ये बाउंड्रीवाल के समान हैं। जो आठ भूमियाँ कही जायेंगी उन आठों भूमियों के मूल में वज्रमय कपाटों से सुशोभित बहुत से तोरणद्वार होते हैं। जिनमें देव, मनुष्य और तिर्यंचों का संचार बना रहता है।

5. धूलिसाल–सबके बाहर विशाल एवं समान गोल, मानुषोत्तर पर्वत के आकार वाला धूलिसाल नाम का कोट होता है यह पंचवर्णी रत्नों से निर्मित होता है, इसलिये इसका धूलिसाल नाम सार्थक है। इस कोट में मार्ग, अट्टालिकायें और पताकायें रहती हैं। चार गोपुर द्वार (मुख्य फाटक) होते हैं यह तीनों लोकों को विस्मित करने वाला बहुत ही सुन्दर दिखता है। इस कोट के चारों गोपुर द्वारों में से पूर्वद्वार का नाम 'विजय' है, दक्षिणद्वार का 'वैंजयंत' है, पश्चिमद्वार को 'जयंत' और उत्तरद्वार को 'अपराजित' कहते हैं। ये चारों द्वार सुवर्ण से बने रहते हैं, तीन भूमियों (खनों) से सहित, देव और मनुष्य के जोड़ों से संयुक्त और तोरणों पर लटकती हुई मणिमालाओं से शोभायमान होते हैं। प्रत्येक द्वार के बाहर और मध्य भाग में, द्वार के पार्श्व भागों में मंगलद्रव्य, निधि और धूपघट से युक्त विस्तीर्ण पुतलियाँ होती हैं। झारी, कलश, दर्पण, चामर, ध्वजा, पंखा, छत्र और सुप्रतिष्ठ (ठोना) ये 8 मंगलद्रव्य हैं। ये प्रत्येक 108-108 होते हैं। काल, महाकाल, पाण्डु, माणवक, शंख, पद्म, नैसर्प, पिंगल और नानारत्न, ये नव निधियाँ प्रत्येक 108 होती हैं। ये निधियाँ क्रम से ऋतु के योग्य द्रव्य-माला आदि, भाजन, धान्य, आयुध, वादित्र, वस्त्र, महल, आभरण और सम्पूर्ण रत्नों को देती हैं। वहाँ एक-एक पुतली के ऊपर गोशीर्ष, मलयचन्दन और कालागरु आदि धूपों के गंध से व्याप्त एक-एक धूप घट होते हैं।

इन विजय आदि द्वार के प्रत्येक बाह्य भाग में सैकड़ों मकरतोरण और अभ्यंतर भाग में सैकड़ों रत्नमय तोरण होते हैं। इन द्वारों के बीच दोनों पार्श्व भागों में एक-एक नाट्यशाला होती है जिसमें देवांगनायें नृत्य करती रहती हैं। इस धूलिसाल के चारों गोपुर द्वारों पर ज्योतिष्कदेव द्वार रक्षक होते हैं जो कि हाथ में रत्नदण्ड को लिये रहते हैं। इन चारों दरवाजों के बाहर और अन्दर भाग में सीढ़ियाँ बनी रहती हैं जिनसे सुखपूर्वक संचार किया जाता है। प्रत्येक समवसरण के धूलिसाल कोट की ऊँचाई अपने तीर्थंकर के शरीर से चौगुनी होती है। इस कोट की ऊँचाई से तोरणों की ऊँचाई अधिक रहती है और इससे भी अधिक विजय आदि द्वारों की ऊँचाई रहती है।

6. चैत्यप्रासाद भूमि–धूलिसाल के अभ्यंतर भाग में 'चैत्यप्रासाद' नामक भूमि सकलक्षेत्र को घेरे हुये बनी रहती है। इसमें एक-एक जिन भवन के अन्तराल से 5-5 प्रासाद बने रहते हैं जो विविध प्रकार के वनखण्ड और बावड़ी आदि से रमणीय होते हैं। इन जिन भवन और प्रासादों की ऊँचाई अपने तीर्थंकर की ऊँचाई से बारह गुणी रहती है।

7. नृत्यशाला–प्रथम पृथ्वी में पृथक्-पृथक् वीथियों के दोनों पार्श्व भागों में उत्तम सुवर्ण एवं रत्नों से निर्मित दो-दो नाट्यशालायें होती हैं। प्रत्येक नाट्यशाला में 32 रंगभूमियाँ और प्रत्येक रंगभूमि में 32 भवनवासी देवियाँ नृत्य करती हुई नाना अर्थ से युक्त दिव्य गीतों द्वारा तीर्थंकरों के विजय के गीत गाती हैं और पुष्पांजलि क्षेपण करती हैं। प्रत्येक नाट्यशाला में नाना प्रकार की सुगंधित धूप से दिग्मंडल को सुवासित करने वाले दो-दो धूपघट रहते हैं।

8. मानस्तम्भ–प्रथम पृथ्वी के बहुमध्य भाग में चारों वीथियों के बीचों-बीच समान गोल मानस्तम्भ भूमियाँ होती हैं। उनके अभ्यंतर भाग में चार गोपुर द्वारों से सुन्दर, कोट होते हैं। इनके भी मध्य भाग में विविध प्रकार के दिव्य वृक्षों

से युक्त वनखण्ड होते हैं। इनके मध्य में पूर्वादि दिशाओं में क्रम से सोम, यम, वरुण और कुबेर इन लोकपालों के रमणीय क्रीड़ानगर होते हैं। उनके अभ्यंतर भाग में चार गोपुरद्वार से युक्त कोट और इसके आगे वनवापिकायें होती हैं जिनमें नीलकमल खिले रहते हैं। उनके बीच में लोकपालों के अपनी-अपनी दिशा तथा चार विदिशाओं में भी दिव्य क्रीड़ानगर होते हैं। उनके अभ्यंतर भाग में उत्तम विशाल द्वारों से युक्त कोट होते हैं और फिर इनके बीच में पीठ होते हैं। इनमें से पहला पीठ वैडूर्यमणिमय, उसके ऊपर दूसरा पीठ सुवर्णमय और उसके ऊपर तीसरा पीठ बहुत वर्ण के रत्नों से निर्मित होता है। ये तीन पीठ तीन कटनी रूप होते हैं। इन पीठों के ऊपर मानस्तम्भ होते हैं। इन मानस्तम्भों की ऊँचाई अपने-अपने तीर्थंकर की ऊँचाई से बारहगुणी होती है। प्रत्येक मानस्तम्भ का मूलभाग वज्र से युक्त और मध्यम भाग स्फटिकमणि से निर्मित होता है। इन मानस्तम्भों के उपरिमभाग वैडूर्यमणिमय रहते हैं। ये मानस्तम्भ गोलाकार होते हैं। इनमें चमर, घंटा, किंकणी, रत्नहार और ध्वजायें सुशोभित रहती हैं। इनके शिखर पर प्रत्येक दिशा में आठ प्रातिहार्यों से युक्त रमणीय एक-एक जिनेन्द्र प्रतिमायें होती हैं। दूर से ही मानस्तम्भों के देखने से मान से युक्त मिथ्यादृष्टि लोग अभिमान से रहित हो जाते हैं, इसीलिये इनका 'मानस्तम्भ' यह नाम सार्थक है।

सभी समवसरण में तीनों कोटों के बाहर चार दिशाओं में से प्रत्येक दिशा में क्रम से पूर्वादि वीथी (गली) के आश्रित वापिकायें होती हैं। पूर्व दिशा के मानस्तम्भ के पूर्वादि भागों में क्रम से नंदोत्तरा, नंदा, नंदवती और नंदिघोषा नामक चार वापिकायें होती हैं। दक्षिण मानस्तम्भ के आश्रित पूर्वादि भागों में विजया, वैजयंता, जयन्ता और अपराजिता नामक चार वापिकायें होती हैं। पश्चिम मानस्तम्भ के आश्रित पूर्वादि भागों में क्रम से अशोका, सुप्रबुद्धा, कुमुदा और पुण्डरीका ये चार वापिकायें होती हैं। उत्तर मानस्तम्भ के आश्रित पूर्वादि भागों में क्रम से हृदयानन्दा, महानन्दा, सुप्रतिबुद्धा और प्रभंकरा ये चार वापिकायें होती हैं। ये वापिकायें समचतुष्कोण, कमलादि से संयुक्त, टंकोत्कीर्ण, वेदिका, चार तोरण एवं रत्नमालाओं से रमणीय होती हैं। सब वापिकाओं के चारों तटों में से प्रत्येक तट पर जलक्रीड़ा के योग्य दिव्य द्रव्यों से परिपूर्ण मणिमयी सीढ़ियाँ होती हैं। इन वापिकाओं में भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और कल्पवासी देव तथा मनुष्य क्रीड़ा किया करते हैं। प्रत्येक वापिकाओं के आश्रित, निर्मल जल से परिपूर्ण दो-दो कुण्ड होते हैं, जिनमें देव, मनुष्य और तिर्यंच अपने पैरों की धूलि धोया करते हैं।

9. प्रथम वेदी–इस समवसरण में उत्तम रत्नमय ध्वजा, तोरण और घंटाओं से युक्त प्रथम वेदिका होती है। इसमें गोपुर द्वार, पुत्तलिका, 108 मंगलद्रव्य एवं नव निधियाँ पूर्व के समान ही होती हैं। इन वेदियों के मूल और उपरिम भाग का विस्तार धूलिशाल कोट के मूलविस्तार के समान होता है।

10. खातिका–इसके आगे स्वच्छ जल से परिपूर्ण और अपने जिनेन्द्रदेव की ऊँचाई के चतुर्थभाग प्रमाण खातिका (खाई) होती है। इस खातिका में खिले हुये कुमुद, कुवलय और कमल अपनी सुगन्धि फैलाते रहते हैं, इनमें मणिमय सीढ़ियाँ बनी रहती हैं एवं हंस, सारस आदि पक्षी सदा क्रीड़ा किया करते हैं।

11. द्वितीय वेदी–यह वेदिका भी अपनी पूर्व वेदी के सदृश है। इसका विस्तार प्रथम वेदिका से दूना माना गया है।

12. लताभूमि–इसके आगे पुन्नाग, नाग, कुब्जक, शतपत्र और अतिमुक्त आदि से संयुक्त, क्रीड़ा पर्वतों से सुशोभित, फूले हुये कमलों से सहित जल भरी बावड़ियों से मनोहर ऐसी लताभूमि शोभायमान होती है।

13. साल–इसके आगे दूसरा कोट है इसे ही साल कहते हैं। इसका सारा वर्णन धूलिसाल कोट के समान है। अन्तर इतना ही है कि यह विस्तार में उससे दूना रहता है, रजतमयी है एवं यक्ष जाति के देव इसके चारों द्वारों पर खड़े रहते हैं।

14. उपवन भूमि–द्वितीय कोट के आगे चौथी उपवन भूमि होती है। इसमें पूर्वादि दिशाओं के क्रम से अशोकवन, सप्तपर्णवन, चम्पकवन और आम्रवन, ये चार वन शोभायमान होते हैं। यह भूमि विविध प्रकार के वन समूहों से मण्डित, विविध नदियों के पुलिन और क्रीड़ा पर्वतों से तथा अनेक प्रकार की उत्तम वापिकाओं से रमणीय होती है। इस भूमि में अशोक, सप्तपर्ण, चम्पक और आम्र ये चार सुन्दर वृक्ष होते हैं इन्हें चैत्यवृक्ष कहते हैं। इनकी ऊँचाई अपने तीर्थंकर की ऊँचाई से बारहगुणी रहती है। एक-एक चैत्यवृक्ष के आश्रित आठ प्रातिहार्यों से संयुक्त चार-चार मणिमय जिनप्रतिमायें

होती हैं। इस उपवन भूमि की बावड़ियों के जल में निरीक्षण करने पर प्रत्येक जन अपने अतीत-अनागत सात भवों को देख लेते हैं।

एक-एक चैत्यवृक्ष के आश्रित तीन कोटों से वेष्टित व तीन कटनियों के ऊपर चार-चार मानस्तम्भ होते हैं। इन मानस्तम्भों के चारों तरफ भी क़मल आदि फूलों से युक्त स्वच्छ जल से भरिंत वापियाँ होती हैं। वहाँ कहीं पर रमणीय भवन, कहीं क्रीड़नशाला और कहीं नृत्य करती हुई देवांगनाओं से युक्त नाट्यशालायें होती हैं। ये रमणीय भवन पंक्तिक्रम से इस भूमि में शोभायमान होते हैं। ये भवन भी कई खनों से निर्मित अपने तीर्थंकर की ऊँचाई से बारहगुणे ऊँचे होते हैं। अपनी प्रथम भूमि की अपेक्षा इस उपवन भूमि का विस्तार दूना होता है।

15. नृत्यशाला—सब वनों के आश्रित सब वीथियों (गलियों) के दोनों पार्श्व भागों में दो-दो नाट्यशालायें होती हैं। इनमें से आदि की आठ नाट्यशालाओं में भवनवासिनी देवांगनायें और इससे आगे की आठ नाट्यशालाओं में कल्पवासिनी देवांगनायें नृत्य किया करती हैं। इन नाट्यशालाओं का सुन्दर वर्णन पूर्व के समान है।

16. तृतीय वेदी—यह तीसरी वेदिका अपनी दूसरी वेदिका के समान है, अन्तर इतना ही है कि यहाँ के चारों द्वारों के रक्षक यक्षेन्द्र रहते हैं।

17. ध्वजाभूमि—वेदिका के आगे इस पंचम ध्वजाभूमि में दिव्य ध्वजायें होती हैं। जिनमें सिंह, गज, वृषभ, गरुड़, मयूर, चन्द्र, सूर्य, हंस, पद्म और चक्र ये दश प्रकार के चिन्ह बने रहते हैं। चारों दिशाओं में से प्रत्येक दिशा में इन दश प्रकार की ध्वजाओं में से प्रत्येक 108 रहती हैं और इनमें से भी प्रत्येक ध्वजा अपनी 108 क्षुद्रध्वजाओं से संयुक्त रहती हैं। इस प्रकार इस ध्वजाभूमि में महाध्वजा 10 × 108 × 4 = 4320 व क्षुद्रध्वजायें 10 × 108 × 108 × 4 = 466560 समस्त ध्वजायें 4320 + 466560=470880 होती हैं। ये समस्त ध्वजायें रत्नों से खचित सुवर्णमय स्तम्भों में लगी रहती हैं। इन ध्वजस्तम्भों की ऊँचाई अपने तीर्थंकर की ऊँचाई से बारहगुणी रहती है।

18. साल—इस ध्वजभूमि के आगे चाँदी के समान वर्णवाला तीसरा कोट अपने धूलिसाल कोट के ही सदृश है। इस कोट का विस्तार द्वितीय कोट की अपेक्षा दूना है और इसके द्वार रक्षक भवनवासी देव रहते हैं।

19. कल्पभूमि—इस छठी भूमि का नाम कल्पभूमि है, यह दश प्रकार के कल्पवृक्षों से परिपूर्ण है। पानांग, तुर्यांग, भूषणांग, वस्त्रांग, भोजनांग, आलयांग, दीपांग, भाजनांग, मालांग और तेजांग, ये दशप्रकार के कल्पवृक्ष हैं। इस भूमि में कहीं पर कमल, उत्पल से सुगंधित बावड़ियाँ हैं, कहीं पर रमणीय प्रासाद, कहीं पर क्रीड़नशालायें और कहीं पर जिनेन्द्रदेव के विजयचरित्र के गीतों से युक्त प्रेक्षणशालायें होती हैं। ये सब भवन बहुत भूमियों (खनों) से सुशोभित, रत्नों से निर्मित पंक्तिक्रम से शोभायमान होते हैं। इस कल्पभूमि के भीतर पूर्वादि दिशाओं में नमेरू, मंदार, संतानक और पारिजात ये चार-चार महान् सिद्धार्थ वृक्ष होते हैं। ये वृक्ष तीन कोटों से युक्त और तीन मेखलाओं के ऊपर स्थित होते हैं। इनमें से प्रत्येक वृक्ष के मूलभाग में विचित्र पीठों से युक्त, रत्नमय चार-चार सिद्धों की प्रतिमायें होती हैं। ये वंदना करने मात्र से तुरंत संसार के भय को नष्ट कर देती हैं। एक-एक सिद्धार्थ वृक्ष के आश्रित, तीन कोटों से वेष्टित, पीठत्रय के ऊपर चार-चार मानस्तम्भ होते हैं। कल्पभूमि में स्थित सिद्धार्थ वृक्ष, क्रीड़नशालायें और प्रासाद जिनेन्द्र की ऊँचाई से बारहगुणे ऊँचे होते हैं।

20. नाट्यशाला—इस कल्पभूमि के पार्श्वभागों में प्रत्येक वीथी (गली) के आश्रित, दिव्य रत्नों से निर्मित और अपने चैत्यवृक्षों के सदृश ऊँचाई वाली चार-चार नाट्यशालायें होती हैं। सब नाट्यशालायें पांच भूमियों (खनों) से विभूषित, बत्तीस रंगभूमियों से सहित और नृत्य करती हुई ज्योतिषी देवांगनाओं से रमणीय होती हैं।

21. वेदी—इस नाट्यशाला के आगे प्रथम वेदी के सदृश ही चौथी वेदी होती है। यहाँ भवनवासी देव द्वारों की रक्षा करते हैं।

22. भवनभूमि—इस वेदी के आगे भवनभूमि नाम से सातवीं भूमि होती है। इसमें रत्नों से खचित, फहराती हुई ध्वजा-पताकाओं से सहित और उत्तम तोरण युक्त उन्नत द्वारों वाले भवन होते हैं। वे एक-एक भवन सुरयुगलों के गीत, नृत्य एवं बाजे के शब्दों से तथा जिनाभिषेकों से शोभायमान होते हैं। यहाँ पर भी उपवन, वापिका आदि की सुन्दर शोभा

पूर्व के समान रहती है।

23. स्तूप—इस भवनभूमि के पार्श्वभागों में प्रत्येक वीथी के मध्य जिन और सिद्धों की अनुपम प्रतिमाओं से व्याप्त नौ-नौ स्तूप होते हैं। इन स्तूपों की छतों पर छत्र फिरते रहते हैं, ध्वजायें फहराती रहती हैं, ये दिव्यरत्नों से निर्मित रहते हैं और आठ मंगल द्रव्यों से सहित होते हैं। एक-एक स्तूप के बीच में मकर के आकार के सौ तोरण होते हैं। इन स्तूपों की ऊँचाई अपने चैत्यवृक्षों की ऊँचाई के समान होती है। भव्यजीव इन स्तूपों का अभिषेक, पूजन और प्रदक्षिणा किया करते हैं।

24. साल—स्तूपों के आगे आकाश स्फटिक के सदृश और मरकत मणिमय चार गोपुर द्वारों से रमणीय चौथा कोट होता है। यहाँ के द्वारों पर कल्पवासी देव उत्तम रत्नमय दण्डों को हाथ में लेकर खड़े रहते हैं। ये जिनेन्द्र भगवान् के चरणों की परम भक्ति से द्वारपाल का कार्य करते हैं।

25. श्रीमण्डप भूमि—इस आठवीं भूमि का नाम 'श्रीमण्डप' है। यह अनुपम उत्तमरत्नों के खम्भों पर स्थित और मुक्ताजालादि से शोभायमान रहती है। इसमें निर्मल स्फटिकमणि से निर्मित सोलह दीवालों के बीच में बारह कोठे होते हैं। इन कोठों की ऊँचाई अपने जिनेन्द्र की ऊँचाई से बारहगुणी होती है।

26. गणविन्यास—इन बारह कोठों के भीतर पूर्वादि प्रदक्षिणा क्रम से पृथक्-पृथक् ऋषि आदि बारहगण बैठते हैं। उनका क्रम यह है - प्रथम कोठे में संपूर्ण ऋद्धियों के धारक गणधरदेव और सर्वदिगंबर मुनिगण बैठते हैं। स्फटिकमणि की दीवाल से व्यवहित दूसरे कोठे में कल्पवासिनी देवियाँ, तीसरे कोठे में अतिशय नम्र आर्यिकायें तथा श्राविकायें बैठती हैं। चतुर्थ कोठे में ज्योतिर्वासी देवियाँ, पांचवें में व्यंतर देवियाँ, छठे में भवनवासी देवियाँ, सातवें में भवनवासी देव, आठवें में व्यंतरदेव, नौवें में सूर्य, चन्द्र आदि ज्योतिषीदेव, दशवें में कल्पवासीदेवी, ग्यारहवें में चक्रवर्ती, मण्डलीक राजा एवं अन्य मनुष्य तथा बारहवें में परस्पर वैरभाव को छोड़कर सिंह, व्याघ्र, नकुल, हरिण आदि तिर्यंचगण बैठते हैं।

27. वेदी—इसके अनंतर निर्मल स्फटिक पाषाण से बनी हुई पाँचवीं वेदिका होती है। जिसका सर्व वर्णन प्रथम वेदी के सदृश ही है।

28. प्रथम पीठ —इस पाँचवी वेदी के आगे वैडूर्यमणि से निर्मित प्रथम पीठ होती है। इन पीठों की ऊँचाई भी अपने मानस्तम्भ की पीठ के सदृश है। इस प्रथमपीठ के ऊपर बारह कोठों में से प्रत्येक कोठे के प्रवेश द्वारों में और समस्त (चार) वीथियों के सन्मुख सोलह-सोलह सीढ़ियाँ होती हैं। चूड़ी के सदृश गोल नाना प्रकार के पूजा द्रव्य और मंगल द्रव्यों से सहित इस पीठ पर चारों दिशाओं में अपने शिर पर धर्मचक्र को रखे हुये यक्षेंद्र स्थित रहते हैं। वे गणधर देव आदि बारहगण इस पीठ (कटनी) पर चढ़कर और प्रदक्षिणा देकर जिनेन्द्रदेव के सम्मुख हुये यथा योग्य वंदना, पूजा, भक्ति आदि करते हैं। सैकड़ों स्तुतियों द्वारा गुणकीर्तन करके असंख्यात गुणश्रेणीरूप से अपने कर्मों की निर्जरा करते हुये प्रसन्नचित्त होकर अपने-अपने कोठों में प्रवेश करते हैं।

29. द्वितीय पीठ —प्रथम पीठ (कटनी) के ऊपर दूसरा पीठ होता है। यह पीठ भी नाना रत्नों से खचित भूमि युक्त होता है। इस सुवर्णमय पीठ पर चढ़ने के लिये चारों दिशाओं में पांच वर्ण के रत्नों से निर्मित सीढ़ियाँ होती हैं। इस पीठ के ऊपर मणिमय स्तम्भों पर लटकती हुई ध्वजायें होती हैं, जिनमें सिंह, बैल, कमल, चक्र, माला, गरुड़, वस्त्र और हाथी ऐसे आठ प्रकार के चिन्ह बने रहते हैं। इसी पीठ पर धूपघट, मंगलद्रव्य, पूजनद्रव्य और नवनिधियाँ रहती हैं जिनका वर्णन करने के लिये कोई भी समर्थ नहीं है।

30. तृतीय पीठ —द्वितीय पीठ के ऊपर विविध प्रकार के रत्नों से खचित तीसरा पीठ (कटनी) होता है। सूर्यमण्डल के समान गोल इस पीठ के चारों ओर रत्नमय और सुखकर स्पर्शवाली आठ-आठ सीढ़ियाँ होती हैं।

31. गंधकुटी—इस तृतीय पीठ के ऊपर एक गंधकुटी होती है। यह चामर, किंकणी, वन्दनमाला और हार आदि से रमणीय, गोशीर, मलय, चंदन, कालागरु आदि धूपों के गंध से व्याप्त, प्रज्वलित रत्नों के दीपकों से सहित तथा फहराती हुई विचित्र ध्वज पंक्तियों से संयुक्त होती है। ऋषभदेव के समय गंधकुटी की ऊँचाई 900 धनुष थी। आगे घटते-

घटते वीरनाथ के समय 75 धनुष प्रमाण रह गई थी। गंधकुटी के मध्य में पादपीठ सहित, उत्तम स्फटिक मणि से निर्मित, घंटाओं के समूहादि से रमणीय सिंहासन होता है। रत्नों से खचित उस सिंहासन की ऊँचाई तीर्थंकर की ऊँचाई के ही योग्य हुआ करती है।

इस प्रकार यहाँ 31 अधिकारों द्वारा समवसरण का वर्णन किया गया है। लोक और अलोक को प्रकाशित करने के लिये सूर्य के समान भगवान् अर्हंतदेव उस सिंहासन के ऊपर आकाश मार्ग में चार अंगुल के अन्तराल से स्थित रहते हैं।

अतिसंक्षेप में पुनः इस समवसरण को बताते हैं–

समवसरण में आठ भूमि और तीन कटनी

1. **पहली**–'चैत्यप्रासाद भूमि' है, इसमें एक-एक जिन मंदिर के अंतराल में पाँच-पाँच प्रासाद हैं।

2. **दूसरी**–खातिका भूमि है, इसके स्वच्छ जल में हंस आदि कलरव कर रहे हैं और कमल आदि पुष्प खिले हुये हैं।

3. **तीसरी**–लताभूमि है, इसमें छहों ऋतुओं के पुष्प खिले हुये हैं।

4. **चौथी**–उपवनभूमि है, इसमें पूर्व आदि दिशा में क्रम से अशोक, सप्तच्छद, चंपक और आम्र के वन हैं। प्रत्येक वन में एक-एक चैत्यवृक्ष हैं जिनमें 4-4 जिनप्रतिमायें विराजमान हैं।

5. **पाँचवी**–ध्वजाभूमि है, इसमें सिंह, गज, वृषभ, गरुड़, मयूर, चन्द्र, सूर्य, हंस, पद्म और चक्र इन दशचिन्हों से सहित महाध्वजायें और उनके आश्रित लघु ध्वजायें सब मिलाकर 4,70,880 हैं।

6. **छठी**–कल्पभूमि है, इसमें भूषणांग आदि दश प्रकार के कल्पवृक्ष हैं। चारों दिशा में क्रम से नमेरु, मंदार, संतानक और पारिजात ऐसे एक-एक सिद्धार्थवृक्ष हैं। इनमें चार-चार सिद्धप्रतिमायें विराजमान हैं।

7. **सातवीं**–भवनभूमि में भवन बने हुये हैं। इस भूमि के पार्श्व भागों में अर्हंत और सिद्ध प्रतिमाओं से सहित नौ-नौ स्तूप हैं।

8. **आठवीं**–श्रीमण्डपभूमि है, इसमें 16 दीवालों के बीच में 12 कोठे हैं जिनमें 1- गणधरादि मुनि 2-कल्पवासिनी देवी 3-आर्यिका और श्राविका 4-ज्योतिषी देवी 5-व्यंतर देवी 6-भवनवासिनी देवी 7-भवनवासी देव 8-व्यंतर देव 9-ज्योतिष देव 10-कल्पवासी देव 11-चक्रवर्ती आदि मनुष्य और 12-सिंहादि तिर्यंच, ऐसे बारह गण के असंख्यातों भव्यजीव बैठकर धर्मोपदेश सुनते हैं। वहां पर रोग, शोक, जन्म, मरण, उपद्रव आदि बाधायें नहीं हैं।

पुनः प्रथम कटनी पर आठ महाध्वजायें, आठ मंगलद्रव्य आदि हैं। तृतीय कटनी पर गंधकुटी में सिंहासन पर लाल कमल की कर्णिका पर भगवान महावीर चार अंगुल अधर विराजमान हैं। इनका मुख एक तरफ होते हुये भी चारों तरफ दिखने से ये चतुर्मुख ब्रह्मा कहलाते हैं। भगवान के पास अशोक वृक्ष, तीन छत्र, सिंहासन, भामंडल, चौंसठ चंवर, सुरपुष्पवृष्टि, दुंदभि बाजे और हाथ जोड़े सभासद ये आठ महाप्रातिहार्य होते हैं। वहीं पर भगवान महावीर के जिनशासन देव मातंगयक्ष और शासनदेवी सिद्धायिनी यक्षी विद्यमान हैं।

चौंतीस अतिशय

तीर्थंकर के जन्म से लेकर अन्त तक 34 अतिशय होते हैं, जिनका वर्णन निम्न प्रकार है–

जन्म के 10 अतिशय, घातिकर्म क्षय से 11 अतिशय और देवों के द्वारा किये गये 13 अतिशय, ऐसे कुल मिलाकर 34 अतिशय[1] होते हैं।

पसीना का न होना, शरीर में मल-मूत्र का न होना, दूध के समान सफेद रुधिर का होना, वज्रवृषभनाराचसंहनन, समचतुरस्रसंस्थान, अत्यन्त सुन्दर शरीर, नवचंपक की उत्तम गंध के समान सुगन्धित शरीर, 1008 उत्तम लक्षणों का होना, अनंत बल-वीर्य, हित-मित एवं मधुर भाषण, प्रत्येक तीर्थंकर के जन्मकाल से ही ये स्वाभाविक दश अतिशय होते हैं।

---

[1] यह गणना तिलोयपण्णत्ति के आधार से है। अन्य ग्रंथों में जन्म के 10, केवलज्ञान के 10 और देवकृत 14 ऐसे 34 अतिशय गिनाये हैं।

अपने पास से चारों दिशाओं में 100 योजन तक सुभिक्षता, आकाश में गमन, हिंसा का अभाव, भोजन का अभाव, उपसर्ग का अभाव, सबकी ओर मुख करके स्थित होना, छाया का न होना, पलकों का न झपकना, सर्व विद्याओं की ईश्वरता, नख और केशों का न बढ़ना, अठारह महाभाषा, सात सौ क्षुद्र भाषा तथा और भी जो संज्ञी जीवों की समस्त अक्षर-अनक्षरात्मक भाषायें हैं उनमें तालु, दाँत, ओष्ठ और कण्ठ के व्यापार से रहित होकर एक साथ भव्यजनों को दिव्य उपदेश देना। भगवान जिनेन्द्रदेव की स्वभावतः अस्खलित और अनुपम दिव्यध्वनि तीनों संध्या कालों में नव मुहूर्तों तक निकलती है और एक योजन पर्यंत जाती है। इससे अतिरिक्त गणधर देव, इन्द्र अथवा चक्रवर्ती मुख्यश्रोता के प्रश्नानुरूप अर्थ के निरूपणार्थ वह दिव्यध्वनि शेष समयों में भी निकलती है। यह दिव्यध्वनि भव्यजीवों को छह द्रव्य, नव पदार्थ, पाँच अस्तिकाय और सात तत्त्वों का नाना प्रकार के हेतुओं द्वारा निरूपण करती है। इस प्रकार घातिया कर्मों के क्षय से उत्पन्न हुये ये महान् आश्चर्यजनक ग्यारह अतिशय तीर्थंकर को केवलज्ञान के होने पर प्रगट होते हैं।

तीर्थंकर के माहात्म्य से संख्यात योजनों तक वन असमय में ही पत्ते, फूल और फलों की समृद्धि से युक्त हो जाता है। कंटक और रेती को दूर करती हुई सुखदायक वायु चलने लगती है। जीव पूर्व वर को छोड़कर मैत्रीभाव से रहने लगते हैं। उतनी भूमि दर्पण तल के सदृश स्वच्छ और रत्नमय हो जाती है। सौधर्म इन्द्र की आज्ञा से मेघकुमार देव सुगंधित जल की वर्षा करता है। देव विक्रिया से फलों के भार से नम्रीभूत शालि और जौ आदि खेत को रचते हैं। सब जीवों को नित्य आनंद उत्पन्न होता है। वायुकुमार देव विक्रिया से शीतल पवन चलाता है। कुँये और तालाब आदि निर्मल जल से पूर्ण हो जाते हैं। आकाश धुआँ और उल्कापात आदि से रहित होकर निर्मल हो जाता है। संपूर्ण जीवों को रोगादि की बाधायें नहीं होती हैं। यक्षेन्द्रों के मस्तकों पर स्थित और किरणों से उज्ज्वल ऐसे दिव्य धर्मचक्रों को देखकर जनों को आश्चर्य होता है। तीर्थंकर की (विदिशाओं सहित) चारों दिशाओं में छप्पन सुवर्ण कमल, एक पाद पीठ और दिव्य एवं विविध प्रकार के पूजनद्रव्य होते हैं। इस प्रकार ये चौंतीस अतिशय कहे गये हैं।

आठ महाप्रातिहार्य—ऋषभ आदि तीर्थंकरों को जिन वृक्षों के नीचे केवलज्ञान उत्पन्न हुआ है वे ही अशोक वृक्ष कहलाते हैं। ये जिनेन्द्रदेव के शरीर की ऊँचाई से बारह गुणे अधिक ऊँचे होते हैं। ये इतने सुन्दर होते हैं कि इनको देखकर इन्द्र का चित्त भी अपने नन्दन वनों में नहीं रमता है। तीर्थंकर के मस्तक के ऊपर बिना स्पर्श किये ही चंद्रमण्डल के सदृश, मुक्ता के समूह से युक्त तीन छत्र शोभित होते हैं। निर्मल स्फटिक पाषाण से निर्मित और उत्कृष्ट रत्नों से खचित सिंहासन होता है। गाढ़ भक्ति में आसक्त, हाथों को जोड़े हुये, विकसित मुख कमल से संयुक्त, बारह गण के मुनिगण आदि भव्य जीव भगवान को घेरकर स्थित रहते हैं। मोह से रहित होकर जिनप्रभु के शरण में आवो, आवो, ऐसा कहते हुये ही मानों देवों का दुंदुभी बाजा बजता रहता है। भगवान् के चरणों के मूल में देवों के द्वारा की गई पुष्पवृष्टि होती रहती है। करोड़ों सूर्य के समान देदीप्यमान प्रभामण्डल अपने दर्शनमात्र से ही सम्पूर्ण लोगों को सात भवों को दिखला देता है। कुंदपुष्प के समान श्वेत चौंसठ चंवर देवों के द्वारा ढुराये जाते हैं। ये आठ महाप्रातिहार्य कहलाते हैं।

इन चौंतीस अतिशय और आठ महाप्रातिहार्य से संयुक्त मोक्षमार्ग के नेता और तीनों लोकों के स्वामी ऐसे अर्हंतदेव की मैं वंदना करता हूँ।

समवसरण में कितने जीव रहते हैं ?—प्रत्येक समवसरण में पल्य के असंख्यातवें भाग प्रमाण अर्थात् असंख्यात जीव जिनेन्द्रदेव की वंदना में प्रवृत्त हुये स्थित रहते हैं। कोठों के क्षेत्र से यद्यपि जीवों का क्षेत्रफल असंख्यात गुणा है, फिर भी वे सब भव्यजीव जिनदेव के माहात्म्य से एक दूसरे से अस्पृष्ट रहते हैं। वहाँ पर बालक से लेकर वृद्ध तक संभी लोग प्रवेश करने में अथवा निकलने में अंतर्मुहूर्त काल (48 मिनट) के भीतर संख्यात योजन चले जाते हैं। इन कोठों में मिथ्यादृष्टि, अभव्य और असंज्ञी जीव कदापि नहीं होते, तथा अनध्यवसाय, संदेह और विपरीतता से युक्त जीव भी नहीं होते हैं। इससे अतिरिक्त वहाँ पर जिन भगवान् के माहात्म्य से आतंक, रोग, मरण, उत्पत्ति, वैर, काम बाधा तथा भूख और प्यास की बाधायें भी नहीं होती हैं।

यक्ष-यक्षिणी—गोवदन, महायक्ष, त्रिमुख, यक्षेश्वर, तुम्बुरू, कुसुम् वरनन्दि, विजय, अजित, ब्रह्म, ब्रह्मेश्वर, कुमार, षण्मुख, पाताल, किन्नर, किंपुरुष, गरुड़, गंधर्व, महेन्द्र, कुबेर, वरुण, विद्युत्प्रभ, सर्वाण्ह, धरणेन्द्र और मातंग

चौबीस तीर्थंकरों के ये चौबीस यक्ष हैं। अपने-अपने तीर्थंकर के ये यक्ष अपने-अपने जिनेंद्रदेव के पास में स्थित रहते हैं। इन्हें जिनशासन देव कहते हैं।

चक्रेश्वरी, रोहिणी, प्रज्ञप्ति, वज्रश्रृंखला, पुरुषदत्ता, मनोवेगा, काली, ज्वालामालिनी, महाकाली, मानवी, गौरी, गांधारी, वैरोटी, अनन्तमती, मानसी, महामानसी, जया, विजया, अपराजिता, बहुरूपिणी, चामुण्डी, कूष्माण्डी, पद्मावती और सिद्धायिनी चौबीस तीर्थंकरों के क्रम से ये चौबीस यक्षिणी हैं। अपने-अपने तीर्थंकर के समीप में एक-एक यक्षिणी रहा करती हैं। इन्हें जिनशासनदेवी कहते हैं।

दिव्यध्वनि का माहात्म्य—जैसे चन्द्रमा से अमृत झरता है उसी प्रकार खिरती हुई जिन भगवान् की वाणी को अपने कर्तव्य के बारे में सुनकर वे बारह गणों के भिन्न-भिन्न जीव नित्य ही अनन्तगुणश्रेणीरूप से विशुद्ध परिणामों को धारण करते हुये अपने असंख्यात-गुणश्रेणीरूप कर्मों को नष्ट कर देते हैं। वहाँ पर रहते हुये वे भव्य जीव जिनेन्द्रदेव के चरणकमलों में परम आस्थावान होते हुये परम भक्ति में आसक्त होकर अतीत, वर्तमान और भावीकाल को भी नहीं जानते हैं अर्थात् बहुत सा काल व्यतीत कर देते हैं। इस प्रकार से तीर्थंकर को जब आर्हंत्य पद नामक परमस्थान प्राप्त होता है तब समवसरण की विभूति आदि महा अतिशय प्रगट होते हैं।

आर्हंत्य परमस्थान में यह समवसरण आदि विभूति तो बहिरंग वैभव है। इसके साथ चार घातिया कर्मों के नाश होने से चार अनंत गुण प्रगट हो जाते हैं। ज्ञानावरण कर्म के अभाव से अनन्तज्ञान, दर्शनावरण के नाश से अनन्तदर्शन, मोहनीय के नाश से अनन्तसुख और अन्तराय के क्षय से अनन्तवीर्य प्रगट हो जाते हैं। ये चार गुण ही अनन्तचतुष्टय कहे जाते हैं।

भगवान् की सभा में द्वादशांग श्रुत के ज्ञाता, मनःपर्ययज्ञान पर्यंत चार ज्ञान के धारी और चौंसठ ऋद्धियों से समन्वित गणधर देव रहते हैं जो भगवान् की दिव्यध्वनि को श्रवण कर जन-जन में उसका विस्तार करते हैं। गणधर के अभाव में तीर्थंकर की दिव्यदेशना नहीं होती है ऐसा नियम है। भगवान की बारह सभा में मुनि, आर्यिका, श्रावक, श्राविका, यह चतुर्विध संघ रहता है। असंख्यातों देव-देवियाँ रहते हैं और संख्यातों तिर्यंच रहते हैं। ये सभी भगवान् के दिव्य उपदेश को सुनकर सम्यक्त्व को और अपने योग्य व्रतों को ग्रहण कर अपनी आत्मा को मोक्षमार्गी बना लेते हैं।

विपुलाचल पर्वत पर प्रथम दिव्यध्वनि खिरी

भगवान महावीर का समवसरण बन गया था किन्तु भगवान की दिव्यध्वनि नहीं खिरी थी। जब प्रभु का श्रीविहार होता था तब समवसरणं विघटित हो जाता था एवं प्रभु का श्रीविहार आकाश में अधर होता था। देवगण भगवान के श्रीचरण कमलों के नीचे-नीचे स्वर्णमयी सुगंधित दिव्य कमलों की रचना करते रहते थे पुनः जहाँ भगवान रुकते, अर्धनिमिष मात्र में कुबेर आकाश में अधर ही समवसरण बना देता था।

हरिवंश पुराण में आया है कि छ्यासठ दिन तक मौन से विहार करते हुये प्रभु राजगृह में पहुँचे—

षट्षष्टिदिवसान् भूयो मौनेन विहरन् विभुः।
आजगाम जगत्ख्यातं जिनो राजगृहं पुरम्।।61।।

आरूरोह गिरिं तत्र विपुलं विपुलश्रियं।
प्रबोधार्थं स लोकानां भानुमानुदयं यथा।।62।।

इन्द्राग्निवायुभूताख्याः कौडिन्याख्याश्च पण्डिताः।
इन्द्रनोदनयाऽऽयाताः समवस्थानमर्हतः।।68।।

प्रत्येकं सहिताः सर्वे शिष्याणां पंचभिः शतैः।
त्यक्ताम्बरादिसंबंधाः संयमं प्रतिपेदिरे।।69।।

सुता चेटकराजस्य कुमारी चंदना तदा।
धौतैकाम्बरसंवीता जातार्याणा पुरःसरी।।70।।

श्रेणिकोऽपि च संप्राप्तः सेनया चतुरंगया।
सिंहासनोपविष्टं तं प्रणनाम जिनेश्वरम्।।71।।
प्रत्यक्षीकृतविश्वार्थं कृतदोषत्रयक्षयम्।
जिनेंद्रं गौतमोऽपृच्छत् तीर्थार्थं पापनाशनम्।।89।।
स दिव्यध्वनिना विश्वसंशयच्छेदिना जिनः।
दुन्दुभिध्वनिधीरेण योजनान्तरयायिना।।90।।
श्रावणस्यासिते पक्षे नक्षत्रेऽभिजिति प्रभुः।
प्रतिपद्यन्हि पूर्वाण्हे शासनार्थमुदाहरत्।।91।।[1]

तदनन्तर छ्यासठ दिन तक मौन से विहार करते हुय श्रीवर्धमान जिनेन्द्र जगत्प्रसिद्ध राजगृह नगर आये। वहाँ जिस प्रकार सूर्य उदयाचल पर आरूढ़ होता है उसी प्रकार वे लोगों को प्रतिबद्ध करने के लिये विपुल लक्ष्मी के धारक विपुलाचल पर्वत पर आरूढ़ हुये।।61-62।।

इन्द्रभूति, अग्निभूति, वायुभूति तथा कौण्डिन्य आदि पण्डित इन्द्र की प्रेरणा से श्रीअर्हंत देव के समवसरण में आये। वे सभी पंडित अपने पाँच-पाँच सौ शिष्यों से सहित थे, इन सभी ने वस्त्रादि का त्याग कर संयम धारण कर लिया।. उसी समय राजा चेटक की पुत्री कुमारी 'चन्दना' एक स्वच्छ वस्त्र धारण कर आर्यिकाओं में प्रमुख गणिनी हो गयीं। राजा श्रेणिक भी अपनी चतुरंगिणी सेना के साथ समवसरण में पहुँचे और वहाँ पर सिंहासन पर विराजमान श्रीवर्द्धमान भगवान को नमस्कार किया।।68-71।।

तीनों लोकों के समस्त पदार्थों को प्रत्यक्ष जानने वाले एवं राग-द्वेष और मोह को क्षय करने वाले, पापनाशक श्री जिनेन्द्रदेव से श्री गौतम गणधर ने तीर्थ की प्रवृत्ति करने के लिये प्रश्न किया।

अनंतर श्रीमहावीर स्वामी ने श्रावण मास के कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा के प्रातःकाल के समय अभिजित् नक्षत्र में समस्त संशयों को छेदने वाले, दुन्दुभि के शब्द के समान गंभीर तथा एक योजन तक फैलने वाली दिव्यध्वनि के द्वारा शासन की परंपरा चलाने के लिये उपदेश दिया।।80-81।।

अन्यत्र ग्रन्थों में आया है कि–

जब इंद्रराज ने देखाभगवान को केवलज्ञान होकर 65 दिन व्यतीत हो गये, फिर भी प्रभु की दिव्यध्वनि नहीं खिर रही है क्या कारण है? चिंतन कर यह पाया कि गणधर का अभाव होने से ही दिव्यध्वनि नहीं खिरी है। तब सौधर्मेंद्र ने इन्द्रभूति ब्राह्मण को इस योग्य जानकर उस अभिमानी को लेने के लिये युक्ति से वृद्ध का रूप बनाया और वहाँ 'गौतमशाला' में पहुँचे। वहाँ के प्रमुख गुरु 'इंद्रभूति' से बोले–

'मेरे गुरु इस समय ध्यान में लीन होने से मौन हैं अतः मैं आपके पास इस श्लोक का अर्थ समझने आया हूँ।

गौतम गौत्रीय इन्द्रभूति ब्राह्मण ने विद्या से गर्विष्ठ होकर पूछा–

'यदि मैं इसका अर्थ बता दूंगा तो तुम क्या दोगे?'

तब वृद्ध ने कहा'यदि आप इसका अर्थ कर देंगे, तो मैं सब लोगों के सामने आपका शिष्य हो जाऊँगा और यदि आप अर्थ न बता सके तो इन सब विद्यार्थियों और अपने दोनों भाइयों के साथ आप मेरे गुरु के शिष्य बन जाना!'

महाअभिमानी इंद्रभूति ने यह शर्त मंजूर कर ली, क्योंकि वह यह समझता था कि मेरे से अधिक विद्वान् इस भूतल पर कोई है ही नहीं। तब वृद्ध ने वह काव्य पढ़ा–

धर्मद्वयं त्रिविधकालसमग्रकर्म, षड्द्रव्यकायसहिताः समयैश्च लेश्याः।
तत्त्वानि संयमगती सहितं पदार्थै-रंगप्रवेदमनिशं वद चास्तिकायम्।।[2]

---

[1] हरिवंशपुराण, सर्ग 2। [2] गौतम स्वामी चरित।

तब गौतम गोत्र से 'गौतम' नाम से प्रसिद्ध इन्द्रभूति ने कुछ देर सोचकर कहा– 'अरे ब्राह्मण! तू अपने गुरु के पास ही चल। वहीं मैं इसका अर्थ बताकर तेरे गुरु के साथ वाद-विवाद करूँगा।'

सौधर्मेंद्र तो यही चाहते थे। तब वेषधारी इंद्रराज गौतम को लेकर भगवान के समवसरण की ओर चल पड़े।

वहाँ मानस्तम्भ को देखते ही गौतम का मान गलित हो गया और उन्हें सम्यक्त्व प्रगट हो गया। समवसरण के सारे वैभव को देखते हुए महान् आश्चर्य को प्राप्त उन्होंने भगवान महावीर स्वामी का दर्शन किया और भक्ति में गदगद् होकर स्तुति करने लगे–

'जयति भगवान् हेमाम्भोज-प्रचार-विजृंभिता-वमर मुकुटच्छायोद्गीर्ण-प्रभापरिचुम्बितौ।।
कलुषहृदया मानोद्भ्रान्ताः परस्परवैरिणो। विगतकलुषाः पादौ यस्य प्रपद्य विशश्वसुः[1]।।1।।

स्तुति करके विरक्त मना होकर उन इंद्रभूति ने प्रभु के चरण सानिध्य में जैनेश्वरी दीक्षा ले ली। तत्क्षण ही उन्हें मति-श्रुत ज्ञान के साथ ही अवधिज्ञान और मनःपर्यय ज्ञान प्रगट हो गया। वे गणधर पद को प्राप्त हो गये तभी भगवान की दिव्यध्वनि खिरी थी।

'कषायपाहुड़' ग्रन्थ में प्रथम दिव्यध्वनि के बारे में प्रश्नोत्तर रूप में बहुत ही सुंदर वर्णन किया है–

जिन्होंने धर्मतीर्थ की प्रवृत्ति करके समस्त प्राणियों को संशयरहित किया है, जो वीर हैं जिन्होंने विशेषरूप से समस्त पदार्थ समूह को प्रत्यक्ष कर लिया है, जो जिनों में श्रेष्ठ हैं तथा राग, द्वेष और भय से रहित हैं ऐसे भगवान महावीर धर्मतीर्थ के कर्ता हैं।

प्रश्न–भगवान महावीर ने धर्मतीर्थ का उपदेश कहाँ पर दिया?

उत्तर–'सेणियराए सचेलणे महामंडलीए सयलवसुहामंडलं भुंजति मगहामंडल-तिलओवम..? रायगिहणयर - णेरयि -दिसमहिट्ठिय - विउलगिरिपव्वए सिद्धचारणसेविए बारहगण-परिवेड्ढिएण कहियं।

जब महामण्डलीक श्रेणिक राजा अपनी चेलना रानी के साथ सकल पृथिवी मंडल का उपभोग करता था तब मगधदेश के तिलक के समान राजगृह नगर को नैऋत्य दिशा में स्थित तथा सिद्ध और चारणों द्वारा सेवित विपुलाचल पर्वत के ऊपर बारह गणों सभाओं से परिवेष्टित भगवान महावीर ने धर्मतीर्थ का प्रवर्तन किया।

राजगृह नगर के पास स्थित पंचशैलपुर है जिसे पंचपहाड़ी कहते हैं। पूर्व दिशा में चौकोर आकार वाला ऋषिगिरि नाम का पर्वत है। दक्षिण दिशा में वैभार पर्वत, नैऋत्य दिशा में विपुलाचल नाम का पर्वत है, ये दोनों त्रिकोण आकार वाले हैं। पश्चिम, वायव्य और उत्तर दिशा में धनुष के आकार वाला 'छिन्न' नाम का पर्वत है। ऐशान दिशा में गोलाकार पांडु नाम का पर्वत है। ये सब पर्वत कुश के अग्रभागों से ढके हुये हैं।

प्रश्न–किस काल में धर्मतीर्थ की उत्पत्ति हुई है?

उत्तर–भरतक्षेत्र संबंधी अवसर्पिणी काल के दुःषमसुषमा नामक चौथे काल में नौ दिन, छह महिना अधिक तेतीस वर्ष अवशिष्ट होने पर धर्मतीर्थ की उत्पत्ति हुई है। कहा भी है–

इम्मिस्सेवसप्पिणीए चउत्थकालस्स पच्छिमे भाए। चोत्तीसवासावसेसे किंचि विसेसूणकालम्मि[2]।।

इस अवसर्पिणी काल के दुःषमसुषमा नामक चौथे काल के पिछले भाग में कुछ कम चौंतीस वर्ष बाकी रहने पर धर्मतीर्थ की उत्पत्ति हुई है।

आगे इसी को स्पष्ट करते हैं चौथे काल में पंद्रह दिन और आठ महीना अधिक पचहत्तर वर्ष बाकी रहने पर आषाढ़ शुक्ला षष्ठी के दिन बहत्तर वर्ष की आयु लेकर मति-श्रुत-अवधि ज्ञान के धारक भगवान महावीर पुष्पोत्तर विमान से च्युत होकर गर्भ में अवतीर्ण हुये। उन बहत्तर वर्षों में तीस वर्ष कुमार काल है, बारह वर्ष, छद्मस्थ काल है तथा तीस वर्ष केवलीकाल है। इन तीनों कालों का जोड़ बहत्तर वर्ष होता है। इस 72 वर्ष प्रमाण काल को पंद्रह दिन और आठ

---

1. चैत्यभक्ति । 2. कसायपाहुड़ पु. 1 पृ. 76-81।

महीना अधिक 75 वर्ष में घटा देने पर वर्द्धमान जिनेंद्र के मोक्ष जाने पर जितना चतुर्थ काल शेष रहता है उसका प्रमाण होता है।

इस काल में छ्यासठ दिन कम केवलिकाल अर्थात् 29 वर्ष, नौ महीना और चौबीस दिन के मिला देने पर चतुर्थकाल में नौ दिन और छह महीना अधिक तैतीस वर्ष बाकी रहते हैं।

शंका–केवलिकाल में से छ्यासठ दिन किसलिये कम किये हैं?

समाधान–भगवान महावीर को केवलज्ञान की उत्पत्ति हो जाने पर भी छ्यासठ दिन तक धर्मतीर्थ की उत्पत्ति नहीं हुई थी, इसलिये केवलिकाल में से छ्यासठ दिन कम किये गये हैं।

जयधवला में कहा है–

"दिव्वज्झुणीए किमट्ठं तत्थापउत्ती?

गणिंदाभावादो।

सोहम्मिंदेण तक्खणे चेव गणिंदो किण्ण ढोइदो?

ण, काललद्धीए विणा असहेज्जस्स देविंदस्स तड्ढोयणसत्तीए अभावादो।"

शंका–केवलज्ञान की उत्पत्ति के अनंतर छ्यासठ दिन तक दिव्य-ध्वनि की प्रवृत्ति क्यों नहीं हुई?

समाधान–गणधर न होने से उतने दिन तक दिव्यध्वनि की प्रवृत्ति नहीं हुई।

शंका–सौधर्मेन्द्र ने केवलज्ञान प्राप्त होते ही गणधर देव को क्यों नहीं उपस्थित किया?

समाधान–नहीं, क्योंकि काललब्धि के बिना सौधर्म इन्द्र गणधर को उपस्थित करने में असमर्थ था, उसमें उसी समय गणधर को उपस्थित करने की शक्ति नहीं थी।

शंका–जिसने अपने तीर्थंकर पादमूल में महाव्रत स्वीकार किया है ऐसे पुरुष को छोड़कर अन्य के निमित्त से दिव्यध्वनि क्यों नहीं खिरती है?

समाधान–ऐसा ही स्वभाव है और स्वभाव दूसरों के द्वारा प्रश्न करने योग्य नहीं होता है, क्योंकि यदि स्वभाव में ही प्रश्न होने लगे तो कोई व्यवस्था ही न बन सकेगी।

अतएव कुछ कम चौतीस वर्ष प्रमाण चौथे काल के रहने पर तीर्थ की उत्पत्ति हुई यह सिद्ध हुआ।

कोई अन्य आचार्य "भगवान वर्द्धमान की आयु 71 वर्ष, 3 माह 25 दिन प्रमाण है" ऐसा कहते हैं।

आषाढ़ शुक्ला षष्ठी से चैत्र शुक्ला त्रयोदशी तक 9 माह 8 दिन हुये। चैत्र शुक्ला चतुर्दशी से अठ्ठाईस वर्ष व्यतीत कर पुनः मगसिर कृष्णा दशमी तक लेने से अठ्ठाईस वर्ष सात माह बारह दिन (28 वर्ष 7 माह 12 दिन) होते हैं। मगसिर कृ.11 से आगे बारह वर्ष के बाद वैशाख शुक्ला दशमी को केवलज्ञान हुआ अतः 12 वर्ष, 5 माह 15 दिन बाद केवली हुये हैं। वैशाख शुक्ला 11 से आगे वैशाख शुक्ला 10 तक उनतीस वर्ष पुनः वैशाख शुक्ला 11 से कार्तिक कृष्णा अमावस्या तक पाँच माह बीस दिन ऐसे 29 वर्ष, 5 माह, 20 दिन का केवली काल है। इस प्रकार वर्द्धमान जिनेन्द्र की आयु 71 वर्ष, 3 माह, 25 दिन प्रमाण मानी गयी है।

भगवान महावीर की आयु बहत्तर वर्ष की थी। दूसरे मत से इकहत्तर वर्ष, तीन माह, पच्चीस दिन की थी। ये दोनों मत जयधवला ग्रंथ में आये हैं।[1]

श्रावणकृष्णा एकम के दिन भगवान की प्रथम दिव्यध्वनि खिरी थी जब इंद्रभूति ब्राह्मण ने वर्द्धमान भगवान से जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहण की थी। उत्तर पुराण में कहा है–

'श्रीवर्द्धमानमानम्य संयमं प्रतिपन्नवान्।'

---

[1] कसायपाहुड़ पु. 1, पृ. 76।

श्रीवर्द्धमान स्वामी को नमस्कार करके सकलसंयम ग्रहण कर लिया था।

दिव्यध्वनि का वर्णन तिलोयपण्णत्ति ग्रन्थ में आया है।

जोयणपमाणसंठ्ठिद - तिरियामरमणुव णिवहपडिबोधो।
मिदमधुरगभीतरा - विसदविसयसयल भासाहिं।
अट्ठरसमहाभासा खुल्ल्यभासा वि सत्तसयसंखा।
अक्खरअणक्खरप्पय सण्णीजीवाण सयलभासाओ।।
एदासिं भासाणं तालुवंदतोट्ठकंठवावारं।
परिहरिय एक्ककालं भव्वजणाणंदकर-भासो।।[1]

एक योजन प्रमाण तक स्थित तिर्यंच देव और मनुष्यों के समूह को बोध प्रदान करने वाली भगवान की दिव्यध्वनि होती है। यह दिव्यध्वनि मृदु-मधुर, अतिगंभीर और विशद-स्पष्ट विषयों को कहने वाली संपूर्ण भाषामय होती है। यह संज्ञी जीवों की अक्षर और अनक्षररूप अठारह भाषा और सात सौ लघु भाषाओं में परिणत होती हुई, तालु-ओंठ-दाँत तथा कंठ के हलन-चलन रूप व्यापार से रहित होकर एक ही समय में भव्यजीवों को आनंदित करने वाली होती हैं ऐसी दिव्यध्वनि के स्वामी तीर्थंकर भगवान होते हैं।

षट्खंडागम ग्रन्थ में श्रीवीरसेनस्वामी कहते हैं–

''तेण महावीरेण केवलणाणिणा कहिदत्थो तम्हि चेव काले तत्थेव खेत्ते खयोवसम -जणिदचउ- रमलबुद्धिसंपण्णेण बह्मणेण गोदमगोत्तेण सयलदुस्सुदि-पारएण जीवाजीवविसयसंदेह -विणासणट्ठ -मुवगयवड्ढमाणपादमूलेण इंदिभूदिणावहारिदो।[2]''

इस प्रकार केवलज्ञानी भगवान महावीर के द्वारा कहे गये पदार्थ को उसी काल में और उसी क्षेत्र में क्षयोपशम विशेष से उत्पन्न चार प्रकार के -मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्ययरूप निर्मल ज्ञान से युक्त संपूर्ण दुःश्रुति-अन्यमतावलंबी वेद-वेदांग में पारंगत, गौतमगोत्रीय ऐसे इन्द्रभूति ब्राह्मण ने जीव-अजीव विषयक संदेह को दूर करने के लिये श्रीवर्द्धमान भगवान के चरणकमल का आश्रय लेकर ग्रहण किया अर्थात् प्रभु की दिव्य ध्वनि को सुना।

इसीलिये भगवान महावीर 'अर्थकर्ता' कहलाये हैं।

'पुणो तेणिदंभूदिणा भावसुदपज्जय-परिणदेण बारहंगाणं चोद्दसपुव्वाणं च गंथणमेक्केण चेवमुहूत्तेण रयणा कदा।[3]'

पुनः उन इन्द्रभूतिं गौतमस्वामी ने भावश्रुत पर्याय से परिणत होकर बारह अंग और चौदह पूर्वरूप ग्रन्थों की रचना एक ही मुहूर्त में कर दी।

सारांश यह है कि आज से पच्चीस सौ अट्ठावन वर्ष पूर्व श्रावण कृष्णा प्रतिपदा को राजगृही के विपुलाचल पर्वत पर भगवान महावीर की दिव्यध्वनि खिरी थी यही प्रथम देशना दिवस- 'वीरशासन जयंती' के नाम से प्रसिद्ध है। उसी दिन श्री गौतमस्वामी ने गणधर पद प्राप्त करके द्वादशांगरूप श्रुत की रचना की थी जोकि मौखिक मानी गई उसे लिपिबद्ध नहीं किया जा सकता है। इन द्वादशांग श्रुत में क्या विषय है उसका नाममात्र वर्णन आगे किया जा रहा है।

भगवान महावीर के पूर्व भव

पुरुरवा भील–इस जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह क्षेत्र में सीता नदी के उत्तर किनारे पर 'पुष्कलावती' नाम का देश है। उसकी 'पुण्डरीकिणी' नगरी में एक 'मधु' नाम का वन है। उसमें 'पुरुरवा' नाम का एक भीलों का राजा अपनी 'कालिका' नाम की स्त्री के साथ रहता था[4]। किसी दिन दिग्भ्रम के कारण 'श्री सागरसेन' नामक मुनिराज को इधर-उधर भ्रमण करते हुये देखकर यह भील उन्हें मारने को उद्यत हुआ उसकी स्त्री ने यह कहकर मना कर दिया कि 'ये वन के देवता

---

1. तिलोयपण्णत्ति अध्याय 1, गाथा 60-61।2. वीर निर्वाण संवत् 2528 से यह संख्या लिखी गई है। 3. षट्खंडागम धवला टीका समन्वित पृ. 65-66। 4. भगवान ऋषभदेव के जन्म के पूर्व इसी आर्यखंड में भोगभूमि की व्यवस्था थी। उस विदेह क्षेत्र की यह घटना है।

घूम रहे हैं इन्हें मत मारो।' वह पुरुरवा उसी समय मुनि को नमस्कार कर तथा उनके वचन सुनकर शांत हो गया। मुनिराज ने उससे मद्य, मांस और मधु इन तीन मकारों का त्याग करा दिया। मांसाहारी भील भी इन तीनों के त्यागरूप व्रत को जीवन पर्यन्त पालन कर आयु के अंत में मरकर सौधर्म स्वर्ग में एक सागर की आयु को धारण करने वाला देव हो गया। कहाँ तो वह हिंसक क्रूर भील पाप करके नरक चला जाता और कहाँ उसे गुरु का समागम मिला कि जिनसे हिंसा का त्याग करके स्वर्ग चला गया!

मरीचि कुमार–जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र सम्बन्धी आर्यखंड के मध्य भाग में कौशल नाम का देश है। इस देश के मध्य भाग में अयोध्या नगरी है। वहां ऋषभदेव भगवान के ज्येष्ठ पुत्र भरत चक्रवर्ती की अनंतमती रानी से 'यह पुरुरवा भील का जीव देव' मरीचि कुमार नाम का पुत्र हुआ। अपने बाबा भगवान ऋषभदेव की दीक्षा के समय स्वयं ही गुरु भक्ति से प्रेरित होकर मरीचि ने कच्छ आदि चार हजार राजाओं के साथ दिगम्बर दीक्षा धारण कर ली। भगवान तो छह महीने का उपवास लेकर ध्यान में लीन हो गये। मरीचि आदि चार हजार राजा स्वयं ही फल, आवरण आदि को ग्रहण करने लगे तब वनदेवता ने प्रगट होकर कहा-"निर्ग्रंथ दिंगबर-जिनमुद्रा को धारण करने वालों का यह क्रम नहीं है अर्थात् यह अर्हतमुद्रा तीनों लोकों में पूज्य है इसको धारण कर यह स्वच्छंद प्रवृत्ति करना कथमपि उचित नहीं है अतः तुम लोग अपनी-अपनी इच्छानुसार अन्य वेष ग्रहण कर लो।"

ऐसा सुनकर प्रबल मिथ्यात्व से प्रेरित हुये मरीचि ने भी सबसे पहले परिव्राजक की दीक्षा धारण कर ली। वास्तव में जिनका संसार दीर्घ होता है उनके लिये यह मिथ्यात्व कर्म मिथ्यामार्ग ही दिखलाता है। उस समय उसे उन सब विषयों का ज्ञान भी स्वयं ही प्रगट हो गया सो ठीक ही है क्योंकि सज्जनों के समान दुर्जनों को भी अपने विषय का ज्ञान स्वयं ही हो जाता है। उसने तीर्थंकर भगवान के वचन सुनकर भी समीचीन धर्म ग्रहण नहीं किया था। वह मरीचि साधु सोचता रहता था कि जिस प्रकार भगवान ऋषभदेव ने अपने आप समस्त परिग्रहों कर त्याग कर तीनों लोकों में क्षोभ उत्पन्न करने वाली सामर्थ्य प्राप्त की है उसी प्रकार मैं भी संसार में अपने द्वारा चलाये हुये दूसरे मत की व्यवस्था करूंगा और उसके निमित्त से होने वाले बड़े भारी प्रभाव के कारण इन्द्र की प्रतीक्षा को प्राप्त करूंगा-इन्द्र द्वारा की हुई पूजा को प्राप्त करूंगा। मैं समझता हूं कि मेरे यह सब अवश्य होगा। इस प्रकार मान कर्म के उदय से वह पापबुद्धि सहित हुआ खोटे मत से विरक्त नहीं हुआ और अनेक दोषों से दूषित वही वेष धारण कर रहने लगा।

तभी कच्छ आदि चार हजार राजा जो दीक्षित हुये उन सभी मुनिवेषधारियों ने भी अनेक वेष बना लिये।

मरीचि का भवभ्रमण–मरीचिकुमार आयु के अंत में मरकर ब्रह्मस्वर्ग में दस सागर आयु वाला देव हो गया। वहाँ से आकर जटिल ब्राह्मण हुआ, पुनः पारिव्राजक बना पुनः मरकर सौधर्म स्वर्ग में देव हुआ पुनः वहां से आकर अग्निसह ब्राह्मण होकर पारिव्राजक दीक्षा ले ली पुनः मरकर देव हुआ, वहां से च्युत होकर अग्निमित्र ब्राह्मण होकर पारिव्राजक तापसी हुआ पुनरपि माहेन्द्र स्वर्ग में देव हुआ, वहाँ से आकर भारद्वाज ब्राह्मण होकर त्रिदण्डी साधु बन गया और पुनरपि स्वर्ग में गया, वहां से च्युत होकर मिथ्यात्व के निमित्त से यह मरीचि कुमार त्रस-स्थावार योनियों में असंख्यात वर्ष तक परिभ्रमण करता रहा।

वह मरीचि कुमार का जीव इस तरह असंख्यात वर्षों तक इन कुयोनियों में भ्रमण करते हुये श्रांत हो गया। कुछ पुण्य से राजगृह नगर के शांडिल्य ब्राह्मण की पारशरी पत्नी से 'स्थावर' नाम का पुत्र हुआ। वहां भी सम्यग्दर्शन से शून्य पारिव्राजक की दीक्षा लेकर अंत में मरकर माहेन्द्र स्वर्ग में सात सागर की आयु वाला देव हो गया।

विश्वनंदी–इसी मगधदेश के राजगृह नगर में 'विश्वभूति' राजा की 'जैनी' नामकी रानी से यह मरीचि कुमार का जीव स्वर्ग में आकर 'विश्वनंदी' नाम का राजपुत्र हो गया। विश्वभूति राजा का एक विशाखभूति नाम का छोटा भाई था, उसकी लक्ष्मणापत्नी से 'विशाखनन्दि' नाम का मूर्ख पुत्र हो गया। किसी दिन विश्वभूति राजा ने विरक्त होकर छोटे भाई विशाखभूति को राज्य देकर अपने पुत्र 'विश्वनन्दि' को युवराज बना दिया और स्वयं तीन सौ राजाओं के साथ श्रीधर मुनि के पास दीक्षित हो गये।

किसी दिन विश्वनंदी युवराज अपने 'मनोहर' नामक उद्यान में अपनी स्त्रियों के साथ क्रीड़ा कर रहे थे। उसे देख,

चाचा के पुत्र विशाखनंदी ने अपने पिता के पास जाकर उस उद्यान की याचना की। विशाखभूति ने भी युवराज विश्वनंदी को 'विरुद्ध राजाओं को जीतने के बहाने' बाहर भेजकर पुत्र को बगीचा दे दिया। विश्वनंदी को इस घटना का तत्काल पता लग जाने से वह क्रुद्ध होकर वापस विशाखनंदी को मारने को उद्यत हुआ। तब विशाखनंदी कैथे के वृक्ष पर चढ़ गया, इसने कैथे के वृक्ष को उखाड़ दिया। तब वह भागा और पत्थर के खम्भे के पीछे हो गया, यह विश्वनंदी पत्थर के खंभे को उखाड़कर उससे उसे मारने को दौड़ा। विशाखनंदी वहां से डर कर भागा तब युवराज के हृदय में सौहार्द और करुणा जाग्रत हो गयी। उसने उसी समय उसे अभयदान देकर बगीचा भी दे दिया और स्वयं 'संभूत' नामक मुनि के पास दीक्षा धारण कर ली, तब विशाखभूति ने भी पापों का पश्चाताप कर दीक्षा ले ली।

किसी दिन मुनि विश्वनंदी अत्यन्त कृश शरीरी मथुरा में आहार के लिए आये, उस समय यह विशाखनंदि वेश्या के महल की छत से मुनि को देख रहा था। मुनि को गाय ने धक्के से गिरा दिया यह देख विशाखनंदि बोला 'तुम्हारा पत्थर का खम्भा तोड़ने वाला पराक्रम कहाँ गया'? मुनि ने यह दुर्वचन सुने उन्हें क्रोध आ गया अन्त में निदान सहित संन्यास से मरकर महाशुक्र स्वर्ग में देव हो गये, वहीं पर चाचा विशाखभूति भी देव हो गये। दोनों की आयु सोलह सागर प्रमाण थी।

अर्धचक्री त्रिपृष्ठकुमार—सुरम्य देश के पोदनपुर नगर में प्रजापति महाराज की जयावती रानी से 'विशाखभूति का जीव' विजय नाम का पुत्र हुआ और महाराज की दूसरी रानी मृगावती से 'विश्वनंदी का जीव' त्रिपृष्ठ नाम का पुत्र हुआ। विजय बलभद्रपद के धारक हुये और ये त्रिपृष्ठ अर्धचक्री पद के धारक हुये। उधर विशाखनंदि का जीव चिरकाल तक संसार में भ्रमण करता हुआ कुछ पुण्य से विजयार्ध पर्वत की उत्तर श्रेणी के अलकापुर नगर में मयूरग्रीव विद्याधर की नीलांजना रानी से 'अश्वग्रीव' पुत्र हुआ। यह प्रतिनारायण हुआ था। कालांतर में युद्ध में अश्वग्रीव के चक्ररत्न से ही अश्वग्रीव को मारकर त्रिखण्डाधिपति राजा त्रिपृष्ठ ने अपने भाई विजय के साथ बहुत काल तक राज्यलक्ष्मी का उपभोग किया, अन्त में भोगलिप्सा में मरकर सप्तम नरक में चला गया क्योंकि सम्यग्दर्शन और पांच अणुव्रतों से रहित राज्य वैभव नरक का ही कारण है।

नरक में इस मरीचि कुमार के जीव ने क्या-क्या कष्ट सहे हैं उनको असंख्य जिह्वाओं से भी नहीं कहा जा सकता? करोंत से चीरना, कुंभी-पाक में पकाना, अग्नि में जलाना, तिल-तिल खंड करना आदि के अनेकों दुख भोगे फिर भी आयु पूर्ण हुये बिना मर नहीं सका। वहाँ पर तेंतीस सागरों की आयु भोगकर सिंह हुआ और गर्मी-सर्दी, भूख, प्यास आदि बाधाओं से दुःखी हुआ, वहाँ पर प्राणी हिंसा से मांसाहार करते हुये पुनः मरकर पहले नरक चला गया। वहाँ के दुःखों को भोगकर वहाँ से निकल कर पुनरपि इसी जम्बूद्वीप में सिंधुकूट की पूर्व दिशा में हिमवान् पर्वत के शिखर पर सुन्दर बालों से युक्त सिंह हुआ।

पुण्यशाली मृगेन्द्र—वह सिंह किसी समय एक हिरण को पकड़कर खा रहा था। उसी समय अतिशय दयालु 'अजितञ्जय' और 'अमितगुण' नामक दो चारणऋद्धिधारी मुनि आकाशमार्ग से उतरकर उस सिंह के पास पहुंचे और शिलातल पर बैठकर जोर-जोर से उपदेश देने लगे। उन्होंने कहा कि 'हे भव्य मृगराज! तू अर्धचक्री त्रिपृष्ठ के भव में पांचों इन्द्रियों के विषयों का सेवन कर तृप्त नहीं हुआ तथा सम्यग्दर्शन से रहित होने के कारण तू नरक में चला गया, वहां अत्यन्त प्रचंड और लोहे के घनों की चोट से तेरा चूर्ण किया जाता था, इत्यादि दुःखों को भोगकर तू वहां से निकलकर सिंह हुआ पुनः हिंसा के पाप से मरकर नरक गया, वहां से निकलकर पुनः सिंह होकर हिंसा से रत है। तू ऋषभदेव के समय मरीचि के भव में तीर्थंकर वृषभदेव के वचनों का अनादर कर त्रसस्थावर योनियों में असंख्यात वर्ष तक भ्रमण करता रहा। अब इस भव से दसवें भव में तू अन्तिम तीर्थंकर होगा। यह सब मैंने श्रीधर तीर्थंकर से सुना है। इन सब बातों को सुनते ही सिंह को जातिस्मरण हो गया। संसार के भयंकर दुःखों की स्मृति से उसका शरीर कांपने लगा तथा आंखों से अश्रु गिरने लगे। बहुत देर तक अश्रु गिरते रहने से ऐसा मालूम होता था कि मानों हृदय में सम्यक्त्व को स्थान देने की इच्छा से मिथ्यात्व ही बाहर निकल रहा है।

उसकी शांत भावना को देखकर मुनि ने उसे सम्यक्त्व और अणुव्रत ग्रहण कराये। सिंह ने मुनिराज की भक्ति से

बार-बार प्रदक्षिणाएं दीं, बार-बार प्रणाम किया और तत्काल ही काललब्धि के आ जाने से तत्त्वश्रद्धानपूर्वक श्रावक के व्रत ग्रहण किये। सिंह का मांसाहार के सिवाय और कोई आहार नहीं, अतः मांस का त्याग करने से उसने "निराहार व्रत" ग्रहण किया था।

सम्यग्दर्शन –सच्चे देव, शास्त्र, गुरु और तत्वों का श्रद्धान करना।
अहिंसाणुव्रत –मनवचनकाय से किसी भी जीव को नहीं मारना।
सत्याणुव्रत –स्थूल झूठ नहीं बोलना।
अचौर्याणुव्रत –बिना दी हुई पर की वस्तु नहीं लेना।
ब्रह्मचर्याणुव्रत –अपनी स्त्री के सिवाय सबको माता, बहन समझना।
परिग्रह परिमाणाणुव्रत –धन-धान्य आदि परिग्रह का जीवन भर के लिए प्रमाण कर लेना।

तिर्यंचों के संयमासंयम के आगे व्रत नहीं हो सकते इसलिए वह देशव्रती कहलाया। वह सिंह सब कुछ त्याग कर शिलातल पर बैठकर चित्रलिखित (पत्थर की मूर्ति) के समान हो गया था। चारण मुनि उसे शिक्षा देकर बार-बार उसका स्पर्श करते हुये चले गये।

महावीर चरित[1] में लिखा है कि–

'यह मरा हुआ है ऐसा समझ मदोन्मत्त हाथियों ने उसकी जटाओं को नष्ट कर दिया, डांस, मक्खी और मच्छरों ने मर्म स्थानों को काट डाला, लोमड़ी और श्रृगाल मृतक समझकर उस सिंह को तीक्ष्ण नखों के द्वारा नोंच-नोंच कर खाने लगे तो भी उस सिंह ने अपनी परम समाधि नहीं छोड़ी, क्षमा भाव से सब सहन करता रहा। पूर्वोक्त प्रकार से एक महीने तक निश्चल रहकर अनशन धारण कर पाप रहित हुआ प्राणों से शरीर को छोड़ा।' इस प्रकार सन्यास विधि से मरा और शीघ्र ही सौधर्म स्वर्ग में सिंहकेतु नाम का देव हो गया वहां दो सागर तक उत्तम सुख भोगे।

पुनः मरीचि कुमार के जीव की जैनेश्वरी दीक्षा–स्वर्ग से आकर, धातकीखंड द्वीप के पूर्व मेरु सम्बंधी पूर्व विदेह के मंगलावती देश के विजयार्ध पर्वत की उत्तर श्रेणी में कनकप्रभ नगर के राजा कनकपुंख विद्याधर और कनकमाला रानी के 'कनकोज्जवल' नाम का पुत्र हुआ। किसी दिन प्रियमित्र नाम के अवधिज्ञानी मुनि से दयामय जैनधर्म का उपदेश सुनकर दीक्षा ले ली। बहुत काल तक तपश्चरण करते हुये 'कनकोज्जवल' मुनिराज सन्यास विधि से मरकर सातवें स्वर्ग में देव हो गये। वहां के भोगों को भोगकर समाधिपूर्वक प्राण छोड़े और इसी अयोध्या के राजा वज्रसेन की रानी शीलवती 'हरिषेण' पुत्र हो गया। राज्य वैभव का अनुभव करके हरिषेण ने श्रुतसागर मुनि से दीक्षा ले ली। तपश्चरण के प्रभाव से महाशुक्र स्वर्ग में देव हो गये। वहां से चयकर धातकी खंड की पुंडरीकिणी नगरी के राजा सुमित्र की रानी मनोरमा से 'प्रियमित्र' नाम का पुत्र हो गया। यह प्रियमित्र चक्रवर्तीपद को प्राप्त हुआ, चक्ररत्न से छहखंड को जीतकर बत्तीस हजार मुकुटबद्ध राजाओं से सेवित अठारह करोड़ घोड़े, चौरासी लाख हाथी, छ्यानवे हजार रानियों के वैभव का अनुभव करते हुये क्षेमंकर जिनेन्द्र धर्मोपदेश सुनकर दीक्षित हो गया। यह प्रियमित्र मुनि आयु के अंत में समाधिकपूर्वक मरण करके सहस्रार स्वर्ग में 'सूर्यप्रभ' नाम के देव हुये। वहां पर अठारह सागर तक दिव्य सुखों का अनुभव कर जम्बूद्वीप के छत्रपुर नगर के राजा नंदिवर्धन की वीरवती रानी से 'नंद' नाम का एक सज्जन पुत्र हुआ। यहां भी अभिलषित राज्य का उपभोग कर 'प्रोष्ठिल' नाम के श्रेष्ठ गुरु के पास दीक्षा ले ली और ग्यारह अंगों का ज्ञान प्राप्त कर लिया।

सिंहकेतु देव

वह सिंह सल्लेखना विधि से मरकर सौधर्म स्वर्ग में सिंहकेतु नाम का देव हो गया। वहां उसकी आयु दो सागर प्रमाण थी। स्वर्ग में देव उपपादशय्या से सोलह वर्ष के नवयुवक के समान शरीर से परिपूर्ण होकर उठकर बैठ जाते हैं। तभी वहां वाद्यों की ध्वनि आदि से अन्य परिवार देवगण-देवांगना आदि आकर जय-जयकार करते हुये नव आगत देव का स्वागत करते हैं।

---

[1] अशगकविकृत।

वहां देव जन्म लेकर तत्क्षण सोचते हैं कि मैं यहाँ कौन हूँ? कहाँ से आया हूँ ? इत्यादि सोचते ही उन्हें भवप्रत्यय नाम के अवधिज्ञान से सभी जानकारी मिल जाती है। इन सिंहकेतु देव ने भी जान लिया कि मैं सिंह की पर्याय में दिगंबर महामुनि के संबोधन से सम्यक्त्व और अणुव्रतों को प्राप्त कर समाधिपूर्वक मरण करके यहां प्रथम स्वर्ग में देवपद को प्राप्त हुआ हूँ। अनंतर अपने परिवार देवों का अवलोकन करके वस्त्राभरणों से अलंकृत हो अपने जिनमंदिर में गया, विधिवत् अभिषेक पूजन किया। कभी-कभी देव-देवांगनाओं के साथ सभा में नानाप्रकार की चर्चा किया करता था।

कभी-कभी वह देव अपने देव परिवार एवं देवांगनाओं के साथ मध्यलोक में आकर अनेक तीर्थों की वंदना किया करता था। कभी वह सिंहकेतु देव पंचमेरुओं की वंदना करके नंदीश्वर द्वीप में पहुंचकर बावन जिनमंदिरों की वंदना करने पहुंच जाता था।

नंदीश्वर द्वीप—मध्यलोक में सर्वप्रथम द्वीप का नाम जंबूद्वीप है एवं आठवें द्वीप का नाम नंदीश्वर द्वीप है। वहां चारों दिशाओं में एक-एक अंजनगिरि पर्वत हैं। इस अंजनगिरि के चारों तरफ एक-एक विशाल बावड़ियां हैं ये बावड़ियां चौकोन हैं। इन प्रत्येक बावड़ियों के मध्य एक-एक 'दधिमुख' पर्वत हैं। इस प्रकार चार अंजनगिरि संबंधी चार-चार दधिमुख पर्वत होने से सोलह दधिमुख माने हैं।

इन बावड़ियों के बाहिरी कोनों पर दो-दो रतिकर पर्वत हैं ऐसे ये रतिकर बत्तीस हो गये हैं।

इस प्रकार चार अंजनगिरि, सोलह दधिमुख एवं बत्तीस रतिकर ऐसे 4+16+32=52 बावन पर्वतों पर एक-एक जिनमंदिर बने हुये हैं। ये अकृत्रिम जिनमंदिर हैं।

वह सिंहकेतु देव इन मंदिरों की वंदना किया करता था। इस प्रकार दो सागर की आयु पूर्ण कर वह देव वहां से च्युत होकर मध्यलोक में आ गया।

विद्याधर राजा कनकोज्ज्वल

तदनंतर वहां से च्युत होकर धातकीखंड द्वीप के पूर्वमेरू से पूर्व की ओर जो विदेहक्षेत्र है उसके मंगलावती देश के विजयार्ध पर्वत की उत्तर श्रेणी में अत्यंत श्रेष्ठ 'कनकप्रभ' नगर है। वहां के राजा कनकपुंख विद्याधर और उनकी महारानी कनकमाला के कनकोज्ज्वल नाम का पुत्र हुआ। कालांतर में राजा कनकपुंख ने पुत्र को राज्यभार सौंप दिया। एक दिन राजा कनकोज्ज्वल अपनी रानी कनकवती के साथ वंदना करने के लिये मंदरगिरि-सुमेरू पर्वत पर पहुंच गये। वहां भगवंतों की प्रतिमाओं के दर्शन करके महामुनि 'श्रीप्रियमित्र' गुरू के दर्शन किये वे मुनिराज अवधिज्ञानी थे। उन विद्याधर राजा कनकोज्ज्वल ने भक्तिपूर्वक महामुनि की तीन प्रदक्षिणा देकर उन्हें नमस्कार किया और प्रश्न किया—

हे भगवन्! धर्म का स्वरूप कहिए।

महामुनि ने कहा—

धर्मो दयामयो धर्मं, श्रय धर्मेण नीयसे।
मुक्तिं धर्मेण कर्माणि, छिंधि धर्माय सन्मतिम्।।
देहि नापेहि धर्मात्त्वं, याहि धर्मस्य भृत्यताम्।
धर्मे तिष्ठ चिरं धर्मं, पाहि मामिति चिंतय।।

हे वत्स! धर्म दयामय है, तुम धर्म का आश्रय करो, धर्म के द्वारा ही तुम मोक्ष के निकट पहुंच सकते हो, धर्म के द्वारा तुम कर्मबंधन का छेदन करो, धर्म के लिये सद्बुद्धि दो-लगावो, धर्म से पीछे मत हटो, धर्म की दासता स्वीकार करो, धर्म में स्थिर रहो और हे धर्म! तुम मेरी रक्षा करो। इस प्रकार धर्म का निश्चय करके सातों विभक्तियों के द्वारा धर्म का चिंतन करते रहो। ऐसा करने से तुम कुछ ही समय में-भवों में मोक्ष को प्राप्त कर लोगे।

राजा कनकोज्ज्वल मुनिराज से धर्मरूपी रसायन का पान कर ऐसे संतुष्ट हुये जैसे कि प्यासा मनुष्य जल पाकर संतुष्ट होता है। राजा ने उसी क्षण भोगों से विरक्त हो वैराग्य भावना का चिंतन किया और समस्त परिग्रह का त्यागकर

गुरुदेव से दीक्षा ग्रहण कर ली।

बहुत दिनों तक अट्ठाईस मूलगुणों का पालन करते हुये विहार किया। कभी वे वनों में आत्मा का ध्यान करते थे, कभी आतापन योग से स्थित हो संसार, शरीर और भोगों की असारता का चिंतन करते हुये चिच्चैतन्य स्वरूप आत्मा का चिंतन करते थे, कभी जिनमंदिरों में जाकर भगवंतों की वंदना करके नाना प्रकार की स्तुति करते हुये महान पुण्य का संचय किया करते थे।

इस प्रकार संयम की साधना करते हुये आयु के अंत में संन्यास विधि से मरण करके संयम के प्रभाव से सातवें स्वर्ग में देव हो गये।

सातवें स्वर्ग में देव

वहां देव उपपादशय्या से उठकर अवधिज्ञान को प्राप्त करके चिंतन करने लगे–

मैंने जैनेश्वरी दीक्षा लेकर जो संयम धारण किया था उसी के फलस्वरूप यह देवों का वैभव प्राप्त किया है अतः धर्म के फल का चिंतन करते हुये सर्वप्रथम भगवान के मंदिर में जाकर भक्तिपूर्वक भगवान की पूजा की। अनंतर अपने देवपरिवार के बीच में बैठकर सभासदों में चर्चा करते थे। कभी-कभी अप्सराओं के नृत्य को देखते हुये देवों के सुखों का अनुभव करते थे।

कभी-कभी मध्यलोक में आकर भगवान के समवसरण में पहुंचकर भगवान की स्तुति-वंदना करके कल्पवासी देवों की सभा में बैठ गये। भगवान की दिव्यध्वनि सुनकर संतुष्ट हुये पुनः अपने पूर्वभवों को तथा अग्रिम भवों को पूछने लगे। भगवान की दिव्यध्वनि से अपने आगे के भवों को सुनकर अतीव प्रसन्न हुए कि मैं अब सातभवों के बाद नियम से संसार के दुःखों से छुटकारा प्राप्त कर लूंगा।

कभी-कभी ये देव समवसरण के वैभव को देखकर चिंतन किया करते थे कि सचमुच में एक दिन भरतक्षेत्र के अंतिम तीर्थंकर के रूप में मेरा भी समवसरण देवों द्वारा बनाया जावेगा यह सब पुण्य की ही महिमा है।

कभी-कभी ये देव स्वर्ग में ही अपने नंदनवन में देव-देवांगनाओं के साथ जलक्रीड़ा, गीत, संगीत, नृत्य आदि करते हुये आमोद-प्रमोद में समययापन करते थे।

कभी तत्त्वचर्चा में निमग्न होते थे तो कभी अकृत्रिम चैत्यालयों की वंदना करते हुये महान पुण्य का संचय करते थे।

पुनः पुनः मध्यलोक में आकर भगवान के समवसरण में नाना प्रकार के प्रश्नों से बारहगणों के भव्यों को भी संतुष्ट कर रहे थे। प्रश्नों के उत्तर में श्रीगणधर देव कहते थे–

भव्यात्माओं! सुनो, यह अहिंसा प्रधान धर्म चार प्रकार का है। जीवदया, रत्नत्रय, वस्तुस्वभाव और दशलक्षणस्वरूप। प्राणीमात्र के प्रति करुणा भावना, संकल्पीहिंसा का त्याग या पूर्णरूपेण त्रस, स्थावरस्वरूप षट्काय के जीवों की हिंसा का त्याग करना 'अहिंसा धर्म-जीवदया धर्म है।

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्रस्वरूप रत्नत्रय को स्वीकारना रत्नत्रय धर्म है।

जीव का स्वरूप ज्ञानदर्शनमय है, पुद्गल का स्वभाव अचेतन-जड़ है। इत्यादि प्रकार से द्रव्यों के स्वरूप का चिंतन करना। अनेकांत स्वरूप वस्तु का चिंतन करना वस्तु स्वभाव धर्म है।

उत्तम क्षमा, मार्दव, आर्जव, शौच, सत्य, संयम, तप, त्याग, आकिंचन्य और ब्रह्मचर्य ये दशधर्म ही सर्वश्रेष्ठ धर्म हैं। श्रावक इन धर्मों का एकदेश पालन करते हैं और साधुगण इन्हें पूर्णरूप से पालन करते हुये उसी भव से या दो चार भवों से मोक्ष प्राप्त कर लेते हैं।

इस प्रकार वहां सातवें-लांतव नामक स्वर्ग में तेरह सागर की आयु प्रमाण सुखों का अनुभव कर अंत में समाधिपूर्वक प्राणों को छोड़कर इस मध्यलोक में अवतीर्ण हो गये।

राजा हरिषेण

इसी जंबूद्वीप के भरतक्षेत्र में कौशल देश है। उसकी राजधानी साकेतपुरी-अयोध्या में राजा वज्रसेन की रानी शीलवती थीं। सातवें स्वर्ग से च्युत होकर उस देव का जीव रानी शीलवती के गर्भ में आ गया। रानी ने उत्तम-उत्तम दोहले प्राप्त किये। नव माह के बाद पुत्र का जन्म होते ही राजा ने पूरे शहर में उत्सव मनाया। पुत्र का नाम 'हरिषेण' रखा। बाल्यक्रीड़ाओं के द्वारा माता-पिता आदि परिवार के जनों को हर्षित करते हुये जहां राजमहल में आनंद की वृद्धि कर रहे थे वहीं पूरी अयोध्या के नागरिकों के आनंद समुद्र को बढ़ा रहे थे। युवावस्था में राजा वज्रसेन ने अपने पुत्र को राज्य सौंप दिया।

कभी-कभी ये राजा हरिषेण अपनी राज्यसभा में नर्तकियों का नृत्य आदि देखते हुये आनंद विभोर हो जाते थे। कभी-कभी धर्मानुष्ठानों से प्रजा को धर्म में लगाकर आनंद का अनुभव करते थे। एक बार विरक्त होकर सारहीन माला के समान समस्त राज्यलक्ष्मी का त्याग कर दिया तथा उत्तम व्रत और शास्त्रज्ञान से सुशोभित श्री श्रुतसागर महामुनि के पास जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहण कर ली। दीक्षा के समय उनके गुरु ने 'शिष्य हरिषेण' के मस्तक पर विधिवत् मंत्रों से अट्ठाईस मूलगुणों के संस्कार किये थे। दीक्षा के अनंतर कुछ समय गुरु के निकट रहकर पश्चात् गुरु की आज्ञा से जिनकल्पी एकलविहारी महामुनि बन गये।

तब ये हरिषेण मुनिराज पर्वतों की चोटी पर बैठकर ध्यान करते थे। गर्मी के दिनों में पर्वत की चोटी पर ध्यान करना आतापन योग है। वर्षाऋतु में वृक्षों के नीचे ध्यान लगाकर बैठ जाना एवं शीतऋतु में खुले मैदान में ध्यान करना यह त्रिकाल योग कहलाता है। कहा भी है-

गिम्हे गिरिसिहरत्था वरिसायाले रुक्खमूलरयणीसु।
सिसिरे बाहिरसयणा ते साहू वंदिमो णिच्चं।।

ग्रीष्मकाल में पर्वत के शिखर पर स्थित होकर, वर्षाकाल में रात्रि में वृक्षों के नीचे बैठकर एवं शीतकाल में खुले मैदान में स्थित होकर जो तपस्या करते हैं ऐसे साधुओं की हम नित्य ही वंदना करते हैं।

कभी-कभी ये महामुनि उद्यान में आये हुये शिष्यसमूह के लिये धर्म का उपदेश दिया करते थे। यह धर्मामृत की वर्षा सच्चे साधु ही कर सकते हैं। आज कल इस पंचमकाल में यहां इस भरतक्षेत्र में ऐसे सत्यधर्म के उपदेशक मुनि बहुत ही दुर्लभ हैं। कहा भी है-

कलिप्रावृड् मिथ्यादिङ्मेघच्छन्नासु दिक्ष्विह।
खद्योतवत् सुदेष्टारो हा द्योतन्ते क्वचित-क्वचित।।

इस कलिकालरूपी वर्षाकाल में चारों तरफ से मिथ्यात्व के बादल छाये हुये हैं। ऐसे समय में सच्चे धर्म के उपदेष्टा जुगुनू के समान कहीं-कहीं ही चमकते हैं। यह बड़े खेद की बात है।

किंतु महामुनि हरिषेण तो चतुर्थकाल में एक महान साधु हुये हैं। इन्होंने व्रतों की विशुद्धि को बढ़ाते हुये अंत में समाधिपूर्वक शरीर को छोड़ा और महाशुक्र नाम के दसवें स्वर्ग में देवपद को प्राप्त हो गये।

दसवें स्वर्ग में देव

वहां पर महाशुक्र स्वर्ग में हरिषेणचर देव अपनी देवांगनाओं और देवपरिवार के साथ अनेक दिव्यसुखों का अनुभव करते रहते थे। कभी-कभी वे मध्यलोक में संयम की मूर्ति महामुनियों के दर्शनार्थ आ जाते थे, यहां आकर मुनियों की वंदना, भक्ति करके उनके प्रवचन सुनते थे अनेक प्रकार के प्रश्नों से जिनधर्म का विशेष ज्ञान प्राप्त करते थे। कभी-कभी वे मध्यलोक के 458 जिनमंदिरों की वंदना करते थे। कभी-कभी जंबूद्वीप के भरतक्षेत्र के हिमवान पर्वत पर आकर पद्मसरोवर आदि के कमलों की सुंदरता देखते हुये 'श्रीदेवी' के महल में मंदिर का भी दर्शन करते थे। हिमवान पर्वत के ग्यारह कूटों में जो पूर्व दिशा का सिद्धकूट है वहां जाकर अकृत्रिम जिनमंदिर के जिन प्रतिमाओं की वंदना करते पुनः विजयार्ध पर्वत के नव कूटों में से जो

पूर्व दिशा का एक सिद्धकूट है उसके जिनमंदिर की वंदना करके गंगा-सिंधु नदियों की रमणीयता देखते थे। जो भरतक्षेत्र की रचना है उसका अवलोकन करते हुये छह खण्डों का विभाजन एवं आर्यखंड में अयोध्या, सम्मेदशिखर जैसे शाश्वत तीर्थों की वंदना करके विजयार्ध के विद्याधरों की श्रेणियों में भी जो कृत्रिम जिनमंदिर हैं तथा वहां जो केवली, श्रुतकेवली, महामुनि आदि तत्काल में विद्यमान थे उनके दर्शन करके प्रसन्न होते थे।

देवों में सम्यग्दृष्टि देवों का तो यह स्वभाव ही मानना चाहिये कि मध्यलोक में आकर धर्मायतनों के दर्शन करना, तीर्थंकरों के समवसरण में जाना,अकृत्रिम-कृत्रिम जैन मंदिर और जिनप्रतिमाओं के दर्शन करना।

जंबूद्वीप, धातकीखंड, पुष्करार्धद्वीप ऐसे ढ़ाई द्वीप के तथा नंदीश्वर द्वीप, कुंडलवर द्वीप और रुचकवर द्वीप के अकृत्रिम जिन मंदिरों की वंदना करना, सर्वत्र विक्रिया के बल से विचरण करते हुये भरतक्षेत्र आदि की सुंदरता को देखना इत्यादि आनंद के लिये ही नहीं प्रत्युत् महान सातिशय पुण्यबंध के लिये भी कारण माने गये हैं।

वर्तमान में यह जंबूद्वीप नाम के प्रथम द्वीप की सुंदर भव्य आकर्षक रचना हस्तिनापुर तीर्थ क्षेत्र पर बनी हुई है। इसे देखकर आप सभी भव्यात्मा जंबूद्वीप की, भरतक्षेत्र की एवं विदेहक्षेत्र आदि की सुंदरता का अनुमान लगा सकते हैं। आज जो महानुभाव हस्तिनापुर पहुँचकर जम्बूद्वीप का दर्शन करते हैं उनके मुख से एकबार सहसा यह वाक्य निकलता है कि -'अहो! हम तो स्वर्ग में आ गये! इससे अच्छा स्वर्ग भला और क्या होगा ?

जब कृत्रिम रचना को देखकर इतना आनंद होता है तब भला जो अकृत्रिम रचनाओं का साक्षात्कार करते होंगे उन्हें कितना आनंद प्राप्त होता होगा? वास्तव में देवगण ऐसे आनंद का अनुभव करते रहते हैं।

इस प्रकार यह हरिषेणचर देव वहां दसवें स्वर्ग में सोलह सागर की आयुपर्यंत दिव्यसुखों का अनुभव करके अंत में वहां की आयुपूर्ण कर वहां से च्युत होकर मध्यलोक में आ गया।

प्रियमित्र चक्रवर्ती

धातकी खंड द्वीप की पूर्वदिशा संबंधी विदेहक्षेत्र के पूर्वभाग में स्थित पुष्कलावती देश की पुण्डरीकिणी नगरी के राजा सुमित्र थे उनकी रानी का नाम मनोरमा था। इनके एक पुत्ररत्न का जन्म हुआ उसका नाम 'प्रियमित्र' रखा गया। यह बालक धीरे-धीरे वृद्धि को प्राप्त हुआ पुनः चक्रवर्ती पद को प्राप्त कर समस्त भोगों का उपभोग किया।

चक्रवर्ती का वैभव–ऐरावत हाथी के समान चौरासी लाख हाथी, वायु के समान वेगशाली रत्नों से निर्मित चौरासी लाख रथ, पृथ्वी की तरह आकाश में भी गमन करने वाले अठारह करोड़ उत्तम घोड़े एवं योद्धाओं का मर्दन करने वाले ऐसे चौरासी करोड़ पदाति-पियादे थे।

स्वयं चक्रवर्ती का शरीर वज्रमय-वज्रवृषभनाराचसंहनन, समचतुरस्रसंस्थान का था। छहखंड के सभी राजाओं में जितना कुछ बल होता है उन सबसे अधिक बल उनके एक शरीर में था। उनके चक्ररत्न के प्रभाव से छह खंड के सभी राजा उनकी आज्ञा को सिर पर धारण करते थे। बत्तीस हजार मुकुटबद्ध राजा उनके चरणों में नत थे।

चक्रवर्ती के छियानवे हजार रानियां थीं, जिनमें से बत्तीस हजार रानियां आर्यखंड की, बत्तीस हजार रानियां विद्याधरों की कन्यायें एवं बत्तीस हजार रानियां म्लेच्छ खंड में जन्में राजाओं की थीं। ये सब अप्सराओं के समान सुंदर थीं।

बत्तीस हजार नाट्यशालायें थीं जिनमें हमेशा गीत, नृत्य, वाद्य आदि चलते रहते थे। स्वर्गपुरी के समान बहत्तर हजार नगर, नंदनवन जैसे बगीचों से शोभायमान छियानवें करोड़ गांव थे, निन्यानवें हजार द्रोणमुख थे जो कि समुद्र के समीपवर्ती थे एवं धन धान्य से अतिशय समृद्ध थे, अड़तालीस हजार पत्तन जोकि रत्नों की खान होने से रत्नाकर के समान थे, सोलह हजार 'खेट' जोकि कोट, अटारी, खाई और परकोटों से शोभायमान थे, समुद्र के बीच में होने वाले और कुभोगभूमिज मनुष्यों से भरे छप्पन अंतर्द्वीप थे जिनके चारों ओर खाई थी ऐसे चौदह हजार संवाह अर्थात् पर्वतों पर बसने वाले शहर थे।

भोजनशाला में चावल पकाने के लिये एक करोड़ बड़े-बड़े हंडे थे जिनमें बीज बोने की नली लगी हुई है ऐसे एक

करोड़ हल थे, सात सौ कुक्षिवास थे, अठारह हजार आर्यखंड के म्लेच्छ राजा थे।

नवनिधियां—काल, महाकाल, नैसर्प, पांडुक, पद्म, माणव, पिंगल, शंख और सर्वरत्न ये नवनिधियों के नाम हैं।

काल निधि—से काव्य, कोष, अलंकार, व्याकरण आदि शास्त्र और वीणा, बांसुरी, नगाड़े आदि मिलते रहते हैं।

महाकाल निधि से—असि, मषि, कृषि आदि छह कर्मों के साधन ऐसे समस्त पदार्थ और संपदायें निरंतर उत्पन्न होती रहती हैं।

नैसर्प निधि—शय्या, आसन, मकान आदि देती है।

पांडुक निधि—समस्त धान्य और छहों रसों को उत्पन्न करती है।

पद्मनिधि—रेशमी, सूती आदि वस्त्र प्रदान करती थी।

शंखनिधि—सूर्य की प्रभा को तिरस्कृत करने वाले सुवर्ण को देती है।

सर्वरत्ननिधि—इन्द्रनील, पद्मराग, वैडूर्य, स्फटिक आदि अनेक प्रकार के रत्नों को एवं नाना प्रकार की मणियों को देती है।

इन नवनिधियों के साथ चक्रवर्तियों के चौदह रत्न होते हैं। जिनमें सात सजीव होते हैं और सात निर्जीव माने हैं। ये सब रत्न पृथ्वी की रक्षा, विशाल ऐश्वर्य और उपयोग के साधन हैं। चक्र, छत्र, दण्ड, खड्ग, मणि, चर्म और कांकिणी ये सात निर्जीव रत्न हैं। सेनापति, गृहपति, हाथी, घोड़ा, स्त्री, तक्ष-सिलावट और पुरोहित ये सात सजीव रत्न हैं।

प्रियमित्र चक्रवर्ती ने सुदर्शन नामक चक्ररत्न से छहों खंडों को जीत लिया था। उनका **'सूर्यप्रभ'** नाम का छत्र राजसभा में जगमग ज्योति फैलाता हुआ सूर्य की प्रभा को भी लज्जित करता रहता था। **दण्डरत्न** से विजयार्ध पर्वत की गुफा का द्वार खोला गया था। **सौजन्दक तलवार** को देखकर वैरी राजा कंपित होकर चक्रवर्ती की शरण में आ जाते थे। **मणि-चूड़ामणि** रत्न अंधकार को दूर कर देता था। **चर्मरत्न** से मेघकृत जल के उपद्रव से सेना की रक्षा होती थी। **कांकिणीरत्न** से गुफा में सूर्यचंद्र के आकार बनाकर प्रकाश फैलाया जाता था। **सेनापति रत्न** दिग्विजय में सभी योद्धाओं से अजेय रहता था। **कामवृष्टि नामक गृहपति रत्न** घर के सारे काम काज संभालता था। विजयगिरि नाम का उत्तम **हाथी रत्न** चक्रवर्ती का वाहन था। पवनंजय नाम का **अश्वरत्न** (घोड़ा) स्थल के समान समुद्र में भी दौड़ लगाता था। **युवति** नाम की स्त्रीरत्न चक्रवर्ती के भोगसुख का साधन थी जोकि अपने हाथ की शक्ति से वज्र को भी चूर कर सकती थी। **भद्रमुख** नाम का तक्षरत्न दिग्विजय के समय स्थान-स्थान पर सुंदर महलों का निर्माण करता था और **पुरोहित** रत्न सभी निमित्तज्ञान आदि में प्रवीण हुआ संपूर्ण धार्मिक कार्यों को संपन्न कराता था।

दशांग भोग—चक्रवर्ती के रत्नों के साथ ही दशांग भोग माने गये हैं—

1. नवनिधियाँ 2. पट्टरानियाँ 3. नगर 4. शय्या 5. आसन 6. सेना 7. नाट्यशालायें 8. भाजन 9. भोजन और 10. वाहन ये दश प्रकार के भोगोपभोग के साधन रहते हैं।

सोलह हजार गणबद्ध जाति के व्यंतर देव हाथ में तलवार लेकर निधिरत्न और चक्रवर्ती की रक्षा करने में तत्पर रहते थे। प्रियमित्र चक्रवर्ती ने पूर्वपुण्य के प्रभाव से ऐसे चक्रवर्ती के वैभव को प्राप्त किया।

उन्होंने चक्ररत्न के प्राप्त होने पर दिग्विजय के लिये प्रस्थान करके छहखंड पृथ्वी को जीत लिया पुनः न्यायनीतिपूर्वक एकछत्र शासन करते हुये प्रजा को पुत्र के समान सुख प्रदान किया।

एक दिन 'क्षेमंकर' भगवान के समवसरण में पहुंचकर भगवान के दर्शन किये। मनुष्यों के कोठे में बैठकर भगवान की दिव्यध्वनि से तत्वों का उपदेश सुना पुनः संसार के समस्त भोगों को क्षणभंगुर मानकर विरक्त हो गये। वापस आकर 'सर्वमित्र' नाम के अपने ज्येष्ठ पुत्र को राज्य देकर एक हजार राजाओं के साथ प्रभु के श्रीचरणों में दीक्षित हो गये। उस समय पांच समितियों और तीन गुप्तियोंरूप आठ प्रवचनमातृकाओं के साथ-साथ अहिंसा महाव्रत आदि पांच महाव्रत उन मुनिराज में पूर्ण प्रतिष्ठा को प्राप्त हुये थे। बहुत काल तक पृथ्वी तल पर विहरण करते हुये निर्जनवनों में ध्यान करते

थे। कभी-कभी शरीर को रत्नत्रय का साधन मानकर श्रावक के घर में छ्यालीस दोष और बत्तीस अंतराय टालकर करपात्र में शुद्ध प्रासुक आहार ग्रहण करते थे पुनः वन में जाकर आत्मसिद्धि हेतु योगसाधना में लीन हो जाते थे। इस प्रकार मुनिचर्या का पालन करते हुये अन्त में समाधिपूर्वक शरीर को छोड़कर महान त्याग के प्रभाव से बारहवें स्वर्ग में देव हो गये।

बारहवें स्वर्ग के देव

प्रियमित्र चक्रवर्ती महामुनि ने सहस्रार स्वर्ग में देवपद प्राप्त किया, सूर्यप्रभ इनका नाम था। वहां उनकी आयु अठारह सागर प्रमाण थी। अणिमा, महिमा आदि अनेक ऋद्धियों से सहित थे। सबसे पहले ये देव जिनमंदिरों में पहुंचते हैं। जिनमंदिर में प्रतिमाओं की वंदना स्तुति करके पूजा की। इन जिनमंदिरों में एक सौ आठ जिनप्रतिमायें विराजमान रहती हैं। प्रत्येक मंदिर में झारी, कलश, दर्पण, चंवर, बीजना, सिंहासन, छत्र और ठो ये आठ मंगल द्रव्य एक सौ आठ-एक सौ आठ रहते हैं। इन मंदिरों में दुंदुभि, मृदंग, मर्दल, जयघंटा, भेरी, झांझ, वीणा और बांसुरी आदि वाद्यों के उत्तम-उत्तम शब्द सदैव होते रहते हैं।

प्रत्येक जिनप्रतिमायें आठ प्रातिहार्यों से सहित हैं। अशोकवृक्ष, सुरपुष्पवृष्टि, दिव्यध्वनि, चामर, सिंहासन, छत्रत्रय, भामंडल और देव-दुंदुभि ये आठ प्रातिहार्य माने हैं।

सम्यग्दृष्टि देव कर्मक्षय के निमित्त गाढ़ भक्ति से सहित होकर विविध अष्ट द्रव्यों से जिनेंद्र प्रतिमाओं की पूजा करते हैं।

तीनों लोकों में अकृत्रिम जिनमंदिरों की संख्या का प्रमाण बताया है। अधोलोक में नरकधरा के ऊपर भवनवासी देवों के सात करोड़ बहत्तर लाख जिनमंदिर हैं। मध्यलोक में जंबूद्वीप नाम के प्रथम द्वीप से लेकर रुचकवर' नाम के तेरहवें द्वीप तक चार सौ अट्ठावन मंदिर हैं । इनमें से जंबूद्वीप में सुमेरूपर्वत के 16, गजदंत के 4, जंबूवृक्ष शाल्मलिवृक्ष के 2, सोलह वक्षारों के 16, चौंतीस विजयार्ध पर्वतों के 34 एवं षट् कुलाचलों के 6 ये 16+4+2+16+34+6=78 हुये। ऐसे पूर्वधातकी खंड के 78, पश्चिम धातकी खंड के 78, पूर्व पुष्करार्धद्वीप के 78, पश्चिम पुष्करार्ध द्वीप के 78, इष्वाकार के 4, मानुषोत्तर पर्वत के 4, नंदीश्वर द्वीप के 52, कुंडलवर द्वीप के 4 और रुचकवर द्वीप के 4 ऐसे 78+78+78+78+78+4+4+52+4+4=458 हो गये।

ऊर्ध्वलोक के चौरासी लाख, सत्तानवे हजार तेईस हैं। स्वर्गों के एवं नवग्रैवेयक आदि के जितने विमान हैं उतने ही जिनमंदिर हैं। सौधर्मस्वर्ग में 32 लाख, ईशान में 28 लाख, सानत्कुमार में 12 लाख, माहेन्द्र में 8 लाख, ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर युगल में 4 लाख, लांतव-कापिष्ठ में 50 हजार, शुक्र-महाशुक्र में 40 हजार, शतार सहस्रार में 6 हजार, आनत-प्राणत, आरण और अच्युत ऐसे चार कल्पों में सात सौ तीन अधोग्रैवेयक 111, तीन मध्यग्रैवेयक में 107, तीन ऊर्ध्वग्रैवेयक में 91, नव अनुदिश में 9 और पांच अनुत्तर में 5 ऐसे सब मिलाकर 3200000+2800000+1200000+800000+400000+50000+40000+6000+700+111+107+91+9+5=8497023 अकृत्रिम जिनमंदिर हैं। कुल मिलाकर 77200000+458+8497023=85697481 अकृत्रिम जिनमंदिर हैं।

इसके आगे व्यंतर देवों के यहां और ज्योतिषी देवों के यहां असंख्यातों जिनमंदिर माने गये हैं। इन प्रत्येक जिनमंदिरों में 108-108 जिनप्रतिमायें विराजमान हैं अतः उपयुर्क्त जिनमंदिरों के जिन प्रतिमाओं की संख्या नव सौ पचीस करोड़ त्रेपन लाख, सत्ताइस हजार, नव सौ अड़तालीस हैं।

नव सौ पचीस कोटी त्रेपन, लाख सताइस सहस प्रमाण।
नव सौ अड़तालिस जिनप्रतिमा, शिवसुख हेतू करूँ प्रणाम।।

सम्यग्दृष्टि देव इन मंदिरों में से मध्यलोक के अकृत्रिम जिन मंदिरों की तो अतीव भक्ति से पूजा करते ही हैं जहां जहां संभव है वहां-वहां जाकर वे सूर्यप्रभ देव जिनप्रतिमाओं की वंदना किया करते हैं शेष जिनमंदिरों की परोक्ष से हीं वंदना का पुण्य संचय किया करते थे।

कभी-कभी ये देव अपने देव परिवार के साथ मध्यलोक में आकर महामुनियों की वंदना करके उनके श्रीमुख से धर्मोपदेश सुन कर प्रसंन्न होते हैं। इस प्रकार धर्माराधना में समय व्यतीत किया करते हैं।

आयु के अंत में स्वर्ग में ही सुंदर उद्यान में कल्पवृक्ष के नीचे महामंत्र का स्मरण करते हुये ध्यान में लीन हो गये। देव शरीर से प्राण निकल गये और वैक्रियिक शरीर तत्क्षण ही कपूर जैसा विलीयमान हो गया। वे मध्यलोक में इसी भरत क्षेत्र के छत्रपुर नगर में रानी के पुत्र हो गये।

नंदनमहाराज

जंबूद्वीप के भरतक्षेत्र के आर्यखंड में एक छत्रपुर नाम का नगर था। वहां के राजा नंदिवर्धन की रानी वीरवती के गर्भ में उपर्युक्त सूर्यप्रभ देव का जीव आ गया। नव माह के बाद रानी ने पुत्र को जन्म दिया। पूरे राज्य में आनंद मंगल होने से राजा ने पुत्र का नाम 'नंद' रखा इसे नंदन भी कहते थे। नंदन बालक माता की अंगुली पकड़कर खेलते हुये महाराजा नंदिवर्धन का मनोरंजन किया करता था।

पुत्र के यौवनावस्था को प्राप्त होने पर राजा ने अपना राज्यभार पुत्र को सौंप दिया, क्योंकि यही सनातन परंपरा है। राजा नंद ने भी चिरकाल तक राज्य संचालन करते हुये प्रजा को खूब संतुष्ट किया। इष्ट-अभिलषित राज्य का उपभोग कर राजा नंद ने 'प्रोष्ठिल' नाम के गुरू के पास जैनेश्वरी दीक्षाग्रहण कर ली। मुनियों के संघ में धर्मोपदेश देकर सच्चे मोक्षमार्ग का दिग्दर्शन कराते रहते थे।

इन्होंने ज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम विशेष से गुरु के सान्निध्य में ग्यारह अंगों का ज्ञान प्राप्त कर लिया। अंग और पूर्वरूप श्रुत का ज्ञान गुरु के मुख से ही प्राप्त होता है कभी किसी को बिना गुरु के नहीं होता है।

तीर्थंकर प्रकृति का बंध—दिगम्बर मुनि पंचमहाव्रत, पंचसमिति, पंचेन्द्रिय निरोध, षट् आवश्यक क्रिया, केशलोंच, वस्त्रों का पूर्ण त्याग, स्नान का त्याग, पृथ्वी पर शयन, दंतधावन का त्याग, खड़े होकर भोजन और एक बार भोजन इस प्रकार अट्ठाईस मूलगुणों का पालन करते हैं। सम्पूर्ण आरम्भ और परिग्रह से रहित ज्ञान ध्यान में रत रहते हैं। परीषह और उपसर्गों को शांति और क्षमाभाव से सहन करते हैं। उत्तम क्षमादि दस धर्मों का पालन करते हैं। नंद मुनिराज ने घोर तपश्चरण से अपनी आत्मा को निर्मल बना लिया एवं दर्शनविशुद्धि आदि सोलह कारण भावनाओं का चिंतवन करने लगे। सातिशय तीर्थंकर प्रकृति का बंध कराने में समर्थ उन भावनाओं का संक्षिप्त लक्षण इस प्रकार है-

सोलह कारण भावना –

1. **दर्शन विशुद्धि** – पच्चीस मल दोषरहित विशुद्ध सम्यग्दर्शन को धारण करना।
2. **विनय सम्पन्नता** – देव शास्त्र गुरु तथा रत्नत्रय का विनय करना।
3. **शीलव्रतों में अनतिचार** – व्रतों और शीलों में अतिचार नहीं लगाना।
4. **अभीक्ष्णज्ञानोपयोग** – सदा ज्ञान के अभ्यास में लगे रहना।
5. **संवेग** – धर्म और धर्म के फल में अनुराग होना।
6. **शक्तितस्तप** – अपनी शक्ति को न छिपा कर अन्तरंग बहिरंग तप करना।
7. **शक्तितस्त्याग** – अपनी शक्ति के अनुसार आहार, औषधि, अभय और शास्त्र दान देना।
8. **साधु-समाधि** – साधुओं का उपसर्ग आदि दूर करना या समाधि सहित वीर मरण करना।
9. **वैयावृत्यकरणं** – व्रती, त्यागी साधर्मी की सेवा करना, वैयावृत्ति करना।
10. **अर्हंत भक्ति** – अरहंत भगवान की भक्ति करना।
11. **आचार्य भक्ति** – आचार्य की भक्ति करना।
12. **बहुश्रुत भक्ति** – उपाध्याय परमेष्ठी की भक्ति करना।

13. प्रवचन भक्ति – जिनवाणी की भक्ति करना।

14. आवश्यक अपरिहाणि – छह आवश्यक क्रियायों का सावधानी से पालन करना।

15. मार्ग प्रभावना – जैन धर्म का प्रभाव फैलाना।

16. प्रवचन वत्सलत्व – साधर्मीजनों में अगाध प्रेम करना।

इन सोलह भावनाओं में दर्शन विशुद्धि भावना का होना बहुत जरूरी है फिर उसके साथ दो तीन आदि कितनी भी भावनायें हों या सभी हों तो तीर्थंकर प्रकृति का बंध हो सकता है। नन्द मुनिराज ने इन भावनाओं से तीन लोक में आश्चर्य को उत्पन्न कराने वाली 'तीर्थंकर' प्रकृति का बंध कर लिया। आयु के अंत में आराधना से मरकर अच्युत स्वर्ग के पुष्पोत्तर विमान में श्रेष्ठ इंद्र हो गये।

पाठक वृंद ! देखिये ! पुरुरवा भील मद्य मांस मधु के त्याग से सौधर्म स्वर्ग के सुख का अनुभव कर चक्रवर्ती का पुत्र हुआ पुनः मिथ्यात्व और मानकषाय से सहित था फिर भी अल्प आरम्भ परिग्रह रखने से और मंद कषायों के होने से तथा कुतपश्चरण के प्रभाव से देव हो गया। पांच बार पारिव्राजक बना व छह बार देव पद पाया किंतु आगे मिथ्यात्व के निमित्त से त्रस-स्थावर और निगोद रूप घोर कुयोनियों में असंख्यात वर्ष पर्यन्त घूमता रहा। कदाचित् विश्वनंदी मुनि भी हुआ तो निदान से दूषित होकर अर्धचक्री पद का अनुभव करके भी नरकों के महान् दुःख भोगे। जब सिंह पर्याय में सम्यक्त्वरत्न को प्राप्त कर लिया तब अणुव्रत के प्रभाव से और सल्लेखना के माहात्म्य से उत्तम देव हुआ। अब यह सम्यक्त्व के निमित्त से उत्तम-उत्तम देव सुख और राज्य सुखों का अनुभव करता रहा। देखिये ! सिंह के जीव ने आगे चलकर चार बार सम्यक्त्व सहित मुनि व्रत धारण किया तथा 'संसारी जीवों को दुःख से निकालकर मैं उत्तम सुख में पहुँचा दूँ', इस प्रकार उत्कृष्ट भावनारूप अपायविचय धर्मध्यान से 'नंदमुनिराज' ने असंख्य प्राणियों पर अनुग्रह करने में समर्थ ऐसी तीर्थंकर प्रकृति बांध ली।

अच्युतेन्द्र

नंद महामुनि समाधिमरण के प्रभाव से सोलहवें स्वर्ग में पुष्पोत्तर विमान में 'इन्द्र' हो गये। इस सोलहवें स्वर्ग का नाम अच्युत है अतः ये इन्द्र अच्युतेन्द्र कहलाते थे।

देवों की उत्पत्ति के बारे में मूलाचार में कहा है–

देहस्स य णिव्वत्ती भिण्णमुहुत्तेण होइ देवाणं।
सव्वंगभूसणगुणं जोव्वणमवि होदि देहम्मि।।

टीका में – जोव्वणं-यौवनं प्रथमवयः परमरमणीयावस्था सर्वालंकारसमन्विता अतिशयमतिशोभनं सर्वजननयनाल्हादनपरं, होदि- भवति, देहम्मि-देहे शरीरे। देवानां यौवनमपि शोभनं सर्वांगभूषणयुतं तेनैव भिन्नमुहूर्तेन भवतीति।

भवनवासी आदि चारों प्रकार के देवों के कुछ कम दो घड़ी के काल से-कुछ काम अंतर्मुहूर्त के काल से छहों पर्याप्तियां पूर्ण हो जाती हैं। सर्वकार्य करने में समर्थ शरीर भी पूर्ण बन जाता है। हाथ-पैर, मस्तक, कंठ आदि को विभूषित करने वाले वस्त्र आभूषण और नाना गुण भी पूर्ण हो जाते हैं। वह देव शरीर नव यौवन से संपन्न, परमरमणीय, सर्वालंकार से समन्वित, अतिशय सुंदर और सर्वजनों को आल्हादित करने वाला हो जाता है।

इन अच्युतेन्द्र की आयु बाईस सागर प्रमाण थी, तीन हाथ ऊंचा शरीर था, द्रव्य से- शरीर वर्ण से और भाव से दोनों ही शुक्ल लेश्यायें थीं, बाईस पक्ष में एक बार श्वास लेते थे। बाईस हजार वर्ष में एक बार मानसिक अमृत का आहार था, सदा मानसिक प्रवीचार-कामसेवन था अर्थात् मन में ही देवांगनाओं का स्मरण करने से कामभोग की तृप्ति हो जाती थी। अणिमा, महिमा आदि दिव्य ऋद्धियों से नाना प्रकार के सुखों का अनुभव करते थे। उनका अवधिज्ञान छठी पृथ्वी तक की बातों को जान लेता था, उनके विक्रिया की सीमा थी अर्थात् उनके अवधिज्ञान क्षेत्र के बराबर थी। अपने सामानिक आदि देवों और देवांगनाओं से घिरे हुये वे इंद्रराज अपने पुण्य कर्म के विशेष उदय से सुखरूपी सागर

में सदा निमग्न रहते थे।

कभी वे अपनी इन्द्रसभा में देव अप्सराओं का नृत्य देखते थे। कभी देव-देवियों के साथ मध्यलोक में जाकर द्वीप-समुद्रों की शोभा देखकर आनंद का अनुभव किया करते थे।

मध्यलोक में अकृत्रिम जिनमंदिर तेरह द्वीपों तक ही हैं अतः कभी-कभी ये इन्द्रराज रुचकवर द्वीप आदि में पहुंचकर 1008 दिव्य क्षीर सागर के जल से भरे कलशों से जिनप्रतिमाओं का महाभिषेक करके उत्सव मनाते थे, अष्टद्रव्य से पूजा करते थे और महान पुण्य का संचय कर लिया करते थे।

इस प्रकार ये अच्युतेन्द्र बाइस सागर पत दिव्य सुखों का अनुभव करके जब मनुष्य लोक में आने वाले थे, आयु में छह माह शेष रह गये तक सौधर्मेन्द्र ने कुबेर को आज्ञा दी कि इस जंबूद्वीप के भरतक्षेत्र के आर्यखंड में कुंडलपुर नगर में अंतिम तीर्थंकर का जन्म होने वाला है अतः तुम जाकर जन्म से पंद्रह महिने पूर्व से ही रत्नों की वर्षा करना प्रारंभ कर दो। अच्युतेन्द्र सुरराज अपने पुष्पोत्तर विमान में ही थे और यहां कुंडलपुर का माहात्म्य बढ़ने लगा था।

पंचकल्याणक वैभव एक दृष्टि में

जब अच्युतेन्द्र की आयु छह मास बाकी रह गई तब इस भरत क्षेत्र के विदेह नामक देश में कुंडलपुर[1] नगर के राजा सिद्धार्थ के भवन के आँगन में प्रतिदिन साढ़े सात करोड़ प्रमाण रत्नों की धारा बरसने लगी। आषाढ़ शुक्ल षष्ठी के दिन रात्रि के पिछले प्रहर में रानी प्रियकारिणी ने सोलह स्वप्न देखे और पुष्पोत्तर विमान से अच्युतेन्द्र का जीव च्युत होकर रानी के गर्भ में आ गया। प्रातःकाल राजा के मुख से स्वप्नों का फल सुनकर रानी अत्यन्त संतुष्ट हुई। तदनंतर देवों ने आकर गर्भ कल्याणक उत्सव मनाकर माता-पिता का अभिषेक करके उत्सव मनाया।

नव मास पूर्ण होने के बाद चैत्र शुक्ल त्रयोदशी के दिन रानी त्रिशला ने पुत्र को जन्म दिया। भगवान महावीर का जन्म तेरस की रात्रि में हुआ है ऐसा जयधवला में वर्णित है–

"आषाढजोण्हपक्खछट्ठीए कुंडलपुरणगराहिव-णाहवंस-सिद्धत्थणरिंदस्स तिसिलादेवीए गब्भमागंतूण तत्थ अट्ठदिवसाहियणवमासे अच्छिय चइत्तसुक्कपक्ख-तेरसीए रत्तीए उत्तरफग्गुणीणक्खत्ते गब्भादो णिक्खंतो वड्ढमाणजिणिंदो[2]।।"

आषाढ़ मास की शुक्ल पक्ष की षष्ठी के दिन कुंडलपुर नगर के स्वामी नाथवंशी सिद्धार्थ नरेन्द्र की रानी त्रिशला देवी के गर्भ में आकर और वहां नव मास आठ दिन रहकर चैत्रशुक्ल त्रयोदशी के दिन रात्रि में उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र के रहते हुये वर्द्धमान जिनेन्द्र ने जन्म लिया। उस समय देवों के स्थानों में अपने आप वाद्य बजने लगे, तीनों लोकों में सर्वत्र एक हर्ष की लहर दौड़ गई। सौधर्म इन्द्र ने बड़े वैभव के साथ सुमेरूपर्वत की पांडुकशिला पर क्षीरसागर के जल से भगवान का जन्माभिषेक किया। इन्द्र ने उस समय उनके "वीर" और "वर्धमान" ऐसे दो नाम रखे।

श्री पार्श्वनाथ तीर्थंकर के बाद दो सौ पच्चास वर्ष बीत जाने पर श्री महावीर स्वामी उत्पन्न हुए थे।

तिलोयपण्णत्ति ग्रन्थ में लिखा है–

भगवान पार्श्वनाथ के मोक्ष जाने के बाद दो सौ पचास वर्षों के बीत जाने पर वीर भगवान् सिद्ध हुए हैं। अतः वर्तमान वीर निर्वाण संवत् 2530+250=2780 इसमें भगवान पार्श्वनाथ की आयु मिलाने पर 2780+100=2880 वर्ष भगवान पार्श्वनाथ को जन्म लेकर हो चुके हैं[3]। उनकी आयु भी इसी में शामिल है। कुछ कम बहत्तर वर्ष की आयु थी, सात हाथ ऊँचे, स्वर्ण वर्ण के थे। एक बार संजय और विजय नाम के चारणऋद्धिधारी मुनियों को किसी पदार्थ में संदेह उत्पन्न होने से भगवान के जन्म के बाद ही वे उनके समीप आकर उनके दर्शन मात्र से ही संदेह से रहित हो गये तब उन मुनि ने उन बालक का "सन्मति" नाम रखा। किसी समय संगम नामक देव ने सर्प बनकर परीक्षा ली और भगवान को सफल देखकर उनका "महावीर" यह नाम रखा।

---

[1] तिलोयपण्णत्ति, अधिकार 4। [2] कसायपाहुड़, पु. 1,पृ. 77।

[3] तेसीदिसहस्सेसुं पण्णाधियसगसएसु अदिरित्ते। पासजिणुप्पत्तीदो उप्पत्ती वड्ढमाणस्स।।577।। (तिलोयपण्णत्ति पृ. 309)

तीस वर्ष के बाद भगवान को पूर्वभव का स्मरण होने से वैराग्य हो गया तब लौकान्तिक देवों द्वारा स्तुति को प्राप्त भगवान ने ज्ञातृवन में सालवृक्ष के नीचे जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहण कर ली और तत्काल मनःपर्यय ज्ञान प्राप्त कर लिया। पारणा के दिन कूलग्राम की नगरी के कूल नामक राजा के यहाँ खीर का आहार ग्रहण किया। किसी समय उज्जयिनी के अतिमुक्तक वन में ध्यानारूढ़ भगवान पर महादेव नामक रुद्र ने भयंकर उपसर्ग करके विजयी भगवान का "महतिमहावीर" नाम रखकर स्तुति की। किसी दिन कौशाम्बी नगरी में सांकलों में बंधी चंदनबाला ने भगवान को पड़गाहन किया तब उसकी बेड़ी आदि टूट गई। मिट्टी का सकोरा स्वर्णपात्र बन गया एवं कोदों का भात शालीचावल की खीर बन गया तभी सती चंदना ने नवधाभक्ति पूर्वक महामुनि महावीर को आहार देकर पंचाश्चर्य प्राप्त किया।

छद्मस्थ अवस्था के बारह वर्ष बाद जृंभिक ग्राम की ऋजुकूला नदी के किनारे मनोहर नामक वन में सालवृक्ष के नीचे वैशाख शुक्ला दशमी के दिन भगवान को केवलज्ञान प्राप्त हो गया। उस समय इन्द्र ने केवलज्ञान की पूजा की। भगवान की दिव्यध्वनि के न खिरने पर इन्द्र गौतम गोत्रीय इन्द्रभूति ब्राह्मण को युक्ति से लाये तब उनका मान गलित होते ही वे भगवान से दीक्षित होकर मनःपर्यय ज्ञान और सप्तऋद्धि से विभूषित होकर प्रथम गणधर हो गये तब भगवान की दिव्यध्वनि खिरी। श्रावण कृष्ण एकम के दिन दिव्यध्वनि को सुनकर गौतम गणधर ने सायंकाल में द्वादशांग श्रुत की रचना की। इसके बाद वायुभूति आदि ग्यारह गणधर हुए हैं। भगवान के समवसरण में मुनीश्वरों की संख्या चौदह हजार थी, चंदना आदि छत्तीस हज़ार आर्यिकाएं थीं, एक लाख श्रावक, तीन लाख श्राविकायें, असंख्यात देव-देवियाँ और संख्यातों तिर्यंच थे। बारह गणों से वेष्टित भगवान ने विपुलाचल पर्वत पर और अन्यत्र भी आर्य खंड में बिहार कर सप्ततत्त्व आदि का उपदेश दिया।

अंत में पावापुर नगर के मनोहर नामक वन में अनेक सरोवरों के बीच शिलापट्ट पर विराजमान होकर कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी की रात्रि के अंतिम प्रहर में स्वाति नक्षत्र में एक हजार मुनियों के साथ मोक्ष पद को प्राप्त कर लिया। तब देवों ने मोक्ष कल्याणक की पूजा कर दीप मालिका जलायी थी। तब से लेकर आज तक कार्तिक कृष्णा अमावस्या को दीपावली पर्व मनाया जाता है।

भगवान के जीवन वृत्त से हमें यह समझना है कि मिथ्यात्व के फलस्वरूप जीव त्रस स्थावर योनियों में परिभ्रमण करता है। सम्यक्त्व और व्रतों के प्रसाद से चतुर्गति के दुखों से छूटकर शाश्वत सुख को प्राप्त कर लेता है अतः मिथ्यात्व का त्याग कर सम्यग्दृष्टि बन करके व्रतों से अपनी आत्मा को निर्मल बनाना चाहिए।

भगवान महावीर निर्वाणभूमि पावापुरी जल मंदिर

पावापुरी में सरोवर के मध्य स्थित जल मंदिर ही भगवान महावीर की निर्वाणभूमि है।

श्री पूज्यपाद आचार्य ने निर्वाणभक्ति में कहा है–

पद्मवनदीर्घिकाकुल-विविधद्रुमखण्डमण्डिते रम्ये।
पावानगरोद्याने व्युत्सर्गेण स्थितः स मुनिः।।16।।

कार्तिककृष्णस्यान्ते स्वातावृक्षे निहत्य कर्मरजः।
अवशेषं संप्राप्द्-व्यजराममरमक्षयं सौख्यम् ।।17।।

परिनिर्वृतं जिनेन्द्रं, ज्ञात्वा विबुधा ह्यथाशु चागम्य।
देवतरुरक्तचंदन - कालागुरुसुरभिगोशीर्षैः।।18।।

अग्नीन्द्राज्जिनदेहं मुकुटानलसुरभिधूपवरमाल्यैः।
अभ्यर्च्य गणधरानपि, गता दिवं खं च वनभवने।।19।।

पुनश्च –

पावापुरस्य बहिरुन्नतभूमिदेशे, पद्मोत्पलाकुलवतां सरसां हि मध्ये।
श्री वर्द्धमानजिनदेव इति प्रतीतो, निर्वाणमाप भगवान् प्रविधूतपाप्मा।।24।।

श्रीगुणभद्र आचार्य ने उत्तरपुराण में कहा है–

क्रमात्पावापुरं प्राप्य मनोहरवनान्तरे।
बहूनां सरसां मध्ये महामणिशिलातले।।509।।

स्थित्वा दिनद्वयं वीतविहारो वृद्धनिर्जरः।
कृष्णकार्तिकपक्षस्य चतुर्दश्यां निशात्यये।।510।।

स्वातियोगो तृतीयेद्धः शुक्लध्यानपरायणः।
कृतत्रियोगसंरोधः समुच्छिन्नक्रियं श्रितः।।511।।

हताघातिचतुष्कः सन्नशरीरो गुणात्मकः।
गन्ता मुनिसहस्रेण निर्वाणं सर्ववाञ्छितम्।।512।।

तदेव पुरुषार्थस्य पर्यन्तोऽनन्तसौख्यकृत्।
अथ सर्वेऽपि देवेन्द्रा यद्वन्द्रमुकुटस्फुरत्।।513।।

हुताशनशिखान्यस्त-तद्देहा मोहविद्विषम्।
अभ्यर्च्य गन्धमाल्यादि-द्रव्यैर्दिव्यैर्यथाविधि।।514।।

वन्दिष्यन्ते भवातीतमर्थ्यैर्वन्दारवः स्तवैः।
वीरनिर्वृतिसम्प्राप्तदिन एवास्तघातिकः।।515।।

भविष्याम्यहमप्युद्यत्केवलज्ञानलोचनः।
भव्यानां धर्मदेशेनविहृत्य विषयांस्ततः[1]।।516।।

यहाँ अभिप्राय यह है कि पावापुरी के मनोहर नाम के उद्यान में कमलों से व्याप्त सरोवर के मध्य महामणिमयी शिला पर भगवान विराजमान हुए उस समय समवसरण विघटित हो चुका था। श्रीविहार बंद कर दो दिन तक ध्यान में लीन हुए महावीर स्वामी ने कार्तिक कृष्णा चतुर्दशी की रात्रि के अंत में अघातिया कर्मों को नष्ट कर निर्वाणपद प्राप्त कर लिया। तभी सौधर्मेन्द्र आदि इन्द्रों ने अग्निकुमार इन्द्र के मुकुट के अग्रभाग से निर्गत अग्नि पर प्रभु का शरीर स्थापित कर दिव्य चन्दन आदि के द्वारा पूजा करके संस्कार कर दिया। उसी दिन गौतमस्वामी को वहीं पर केवलज्ञान प्रगट हुआ है।

हरिवंशपुराण में भी यही लिखा है एवं दीपावली पर्व तभी प्रारंभ हुआ, ऐसा कहा है–

जिनेंद्रवीरोऽपि विबोध्य संततं, समन्ततो भव्यसमूहसन्ततिम्।
प्रपद्य पावानगरीं गरीयसीं, मनोहरोद्यानवने तदीयके।।15।।

चतुर्थकालेऽर्धचतुर्थमासकै-र्विहीनताविश्चतुरब्दशेषके।
स कार्तिके स्वातिषु कृष्णभूतसु-प्रभातसन्ध्यासमये स्वभावतः।।16।।

अघातिकर्माणि निरुद्धयोगको, विधूय घातीन्धनवद् विबंधनः।
विबन्धनस्थानमवाप शंकरो, निरन्तरायोरुसुखानुबन्धनम् ।।17।।

स पञ्चकल्याणमहामहेश्वरः, प्रसिद्धनिर्वाणमहे चतुर्विधैः।
शरीरपूजाविधिना विधानतः, सुरैः समभ्यर्च्यत सिद्धशासनः।।18।।

ज्वलत्प्रदीपालिकया प्रवृद्धया, सुरासुरैर्दीपितया प्रदीप्तया।
तदा स्म पावानगरी समन्ततः, प्रदीपिताकाशतला प्रकाशते।।19।।

तथैव च श्रेणिकपूर्वभूभुजः, प्रकृत्य कल्याणमहं सहप्रजाः।
प्रजग्मुरिन्द्राश्च सुरैर्यथायथं, प्रभुचमाना जिनबोधिमर्थिनः।।20।।

---

1. उत्तरपुराण, पर्व 76।

ततस्तु लोकः प्रतिवर्षमादरात्, प्रसिद्धदीपालिकयात्र भारते।
समुद्यतः पूजयितुं जिनेश्वरं, जिनेन्द्रनिर्वाणविभूतिभक्तिभाक्[1]।।21।।

सार यही है कि भगवान महावीर पावापुरी के मनोहर उद्यान में विराजमान हुए। जब चतुर्थकाल में तीन वर्ष साढ़े आठ मास बाकी रहे तब स्वाति नक्षत्र में कार्तिक अमावस्या के दिन प्रातः-उषाकाल के समय स्वभाव से योग निरोधकर शुक्लध्यान के द्वारा सर्वकर्म नष्ट कर निर्वाण को प्राप्त हो गये। उस समय चार निकाय के देवों ने विधिपूर्वक भगवान के शरीर की पूजा की। अनन्तर सुर-असुरों द्वारा जलाई हुई बहुत भारी देदीप्यमान दीपकों की पंक्ति से पावानगरी का आकाश सब ओर से जगमगा उठा। श्रेणिक आदि राजाओं ने भी प्रजा के साथ मिलकर भगवान के निर्वाणकल्याणक की पूजा की पुनः रत्नत्रय की याचना करते हुए सभी इन्द्र, मनुष्य आदि अपने-अपने स्थान चले गये।

उस समय से लेकर भगवान के निर्वाण कल्याणक की भक्ति से युक्त संसार के प्राणी इस भरतक्षेत्र में प्रतिवर्ष आदरपूर्वक प्रसिद्ध दीपमालिका के द्वारा भगवान महावीर की पूजा करने के लिए उद्यत रहने लगे अर्थात् भगवान् के निर्वाणकल्याणक की स्मृति में दीपावली पर्व मनाने लगे।

इन्द्र ने प्रभु के चरण उत्कीर्ण किए–एक प्रकरण हरिवंशपुराण में आया है कि–

जब भगवान नेमिनाथ गिरनार पर्वत से निर्वाण प्राप्त कर चुके तब इन्द्रों ने भगवान की निर्वाणकल्याणक पूजा के बाद गिरनार पर्वत पर वज्र से चरण उत्कीर्ण कर इस लोक में पवित्र सिद्धशिला का निर्माण किया तथा उसे जिनेन्द्र भगवान के लक्षणों के समूह से युक्त किया। यथा-

ऊर्जयन्तगिरौ वज्री वज्रेणालिख्य पावनीम्।
लोके सिद्धशिलां चक्रे जिनलक्षण पंक्तिभिः[2]।।14।।

श्री समन्तभद्रस्वामी ने भी स्वयंभूस्तोत्र में लिखा है–

ककुदं भुवः खचरयोषिदुषितशिखरैरलंकृतः।
मेघपटलपरिवीत तटस्वतव लक्षणानि लिखिताने वज्रिणा।।127।।
वहतीतिं तीर्थमृषिभिश्च, सततमभिगम्यतेऽद्य च।
प्रीतिविततहृदयैः परितो, भूसमूर्जयन्त विश्रुतोऽचलः।।128।।

बीसवीं सदी के प्रथम आचार्य चारित्रचक्रवर्ती श्री शांतिसागर जी महाराज के प्रथम पट्टाधीश आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज कहते थे कि-इसी प्रकार से पावापुरी सरोवर के मध्य मणिमयी शिला से भगवान के मोक्ष जाने के बाद इन्द्रों ने वज्र से यहाँ पर भी चरणचिन्ह उत्कीर्ण करके इस शिला को सिद्धशिला के समान पूज्य पवित्र बनाया था।

एक बात यह भी ध्यान देने योग्य है कि भगवान केवलज्ञान होने के बाद पाँच हजार धनुष-बीस हजार हाथ प्रमाण ऊपर आकाश में अधर पहुँच जाते हैं। अधर में ही कुबेर द्वारा समवसरण की रचना की जाती है। जब भगवान श्रीविहार करते हैं तब समवसरण विघटित हो जाता है और भगवान आकाश में अधर चलते हैं तब देवगण प्रभु के चरणों के नीचे स्वर्णमयी दिव्य कमलों की रचना करते रहते हैं। निर्वाणगमन के पूर्व भी जब भगवान योग निरोध करते हैं तब वे आकाश में अधर ही रहते हैं। फिर भी उनके ठीक नीचे की भूमि भगवान की निर्वाणभूमि मानी जाती है चूँकि सिद्ध भगवान सिद्धशिला पर भी ठीक उसी भूमि के ऊपर विराजमान हैं।

इससे यह स्पष्ट है कि भगवान महावीर स्वामी जहाँ से मोक्ष गये हैं ठीक वहीं पर उनके शरीर का संस्कार किया गया है और वहीं पर सरोवर के मध्य मणिमयी शिला पर इन्द्रों ने चरण उत्कीर्ण किए थे। ऐसे ही सम्मेदशिखर पर्वत के सभी टोंकों पर इन्द्रों द्वारा चरण उत्कीर्ण किए गये हैं ऐसा मानना चाहिए।

ऐसी सिद्धभूमि पावापुरी को मेरा अनन्त-अंनन्त बार नमस्कार होवे।

* * *

---

[1] उत्तरपुराण, पर्व 66। [2] उत्तरपुराण, पर्व 65।

२–३८

दीपावली पर्व एवं वीर निर्वाण संवत्

–गणिनी ज्ञानमती

जैन इतिहास के अनुसार आज से 2530 वर्ष पूर्व तीर्थंकर भगवान महावीर ने बिहार प्रान्त के पावापुरी नगर में जलमंदिर से समस्त कर्मों का नाश कर मोक्षधाम को प्राप्त किया था। जैसा कि आचार्यश्री पूज्यपाद स्वामी ने निर्वाणभक्ति में कहा है–.

पावापुरस्य बहिरुन्नतभूमिदेशे, पद्मोत्पलाकुलवतां सरसां हि मध्ये।
श्रीवर्धमानजिनदेव इति प्रतीतो, निर्वाणमाप भगवान् प्रविधूतपाप्मा।।24।।

पावापुर के बाह्य सरोवर, पद्म कुमुदनी से शोभित।
मध्यभाग में उसके उन्नत, भूमि देश में प्रभु राजित।।
श्रीमन् वर्धमान जिनदेवा, त्रिभुवन विश्रुत पाप रहित।
कर्म अघाती धो करके, निर्वाण गये भगवन् सन्मति।।

इसी स्मृति में प्रतिवर्ष भक्तगण दीपावली के दिन कृष्णा अमावस्या की प्रभात बेला में पावापुरी के जलमंदिर में भक्तिपूर्वक निर्वाणलाडू चढ़ाते हैं। वर्तमान में श्वेताम्बर समुदाय की कमेटी ने पावापुरी जलमंदिर के पास बोर्ड लगा दिया है कि–

"आज से लगभग छठी शताब्दी ईसा पूर्व जैनधर्म के चौबीसवें अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर का निर्वाण होने पर देवताओं द्वारा यहाँ पर अंतिम संस्कार किया गया। इस पवित्र स्थान की भस्म व मिट्टी को उठाते-उठाते ही एक बड़ा सा गड्ढा बन गया, जिसने एक विशाल सरोवर का स्थान ले लिया। इस सरोवर में कमल रहने से इसे कमल सरोवर भी कहते हैं। वर्तमान में इस सरोवर की लम्बाई 1451 फुट एवं चौड़ाई 1223 फिट है।"

दिगम्बर जैन परम्परानुसार उपर्युक्त वर्णन पूर्णतया निराधार है, तदनुसार महावीर स्वामी ने इसी जल मंदिर में ही दो दिन का योग निरोध करके कार्तिक कृष्णा अमावस की प्रत्यूष बेला में मोक्ष प्राप्त किया उसके पश्चात् सौधर्म इन्द्र आदि सभी देवताओं ने मिलकर उनका निर्वाणकल्याणक महोत्सव मनाया पुनः अग्निकुमार देवों ने अपने मुकुट से अग्नि निकालकर भगवान् के शरीर का अंतिम संस्कार किया था। वहाँ पर इन्द्र ने वज्र से भगवान् के चरण उत्कीर्ण किये थे, उस विषय में भी पूज्य आचार्य श्री समन्तभद्र स्वामी ने स्वयंभूस्तोत्र में लिखा है–

ककुदं भुवः खचरयोषिदुषितशिखरैरलंकृतः।
मेघपटलपरिवीत तटस्तव लक्षणानि लिखितानि वज्रिणा।।127।।
वहतीति तीर्थमृषिभिश्च, सततमभिगम्यतेऽद्य च।
प्रीतिविततहृदयैः परितो, भृशमूर्जयन्त इति विश्रुतोऽचलः।।128।।

अर्थात् गिरनार पर्वत से भगवान नेमिनाथ के मोक्षगमन के पश्चात् इन्द्रों ने भगवान की निर्वाण कल्याणक पूजा के बाद गिरनार पर्वत पर वज्र से चरण उत्कीर्ण किया था। इसी प्रमाण को उद्धृत करते हुए मेरे दीक्षा गुरुवर परमपूज्य आचार्य श्री वीरसागर महाराज कहते हैं कि-इसी प्रकार से पावापुरी सरोवर के मध्य मणिमयी शिला से भगवान के मोक्ष जाने के बाद इन्द्रों ने वज्र से यहाँ पर भी चरणचिन्ह उत्कीर्ण करके इस शिला को सिद्धशिला के समान पूज्य पवित्र बनाया था।

इस दीपावली पर्व के महत्व एवं वीर निर्वाण संवत् के बारे मैंने "मेरी स्मृतियाँ" ग्रंथ में भी विस्तार से दिया है ताकि पढ़ने वालों को जैनधर्म से संबंधित इतिहास की जानकारी मिल सके।

नूतन-वर्ष अभिनंदन–

आज भारत देश में वीरनिर्वाण संवत्, विक्रम संवत्, शालिवाहन शक और ईसवी सन् प्रचलित हैं। इनके प्रथम दिवस को वर्ष का प्रथम दिन मानकर नववर्ष की मंगल कामनाएँ की जाती हैं। जैन धर्मानुयायी महानुभावों को किस संवत् का कौन सा दिवस नववर्ष का मंगल दिवस मानना चाहिए? इस विषय पर विचार करना चाहिए।

आज ईसवी सन् अत्यधिक प्रचलित है। प्रायः केलेंडर, तिथि-दर्पण और डायरियां भी इसी सन् से छपने लगी हैं। वास्तव में अंग्रेजों ने अपने भारत पर शासन करके अपना ऐसा प्रभाव छोड़ा है कि उसे मिटाना असंभव है। खैर! कोई बात नहीं, 1 जनवरी से प्रति वर्ष ईसवी सन् प्रारंभ होता है।

कर्नाटक, महाराष्ट्र तथा गुजरात में विक्रम संवत् को अधिक महत्व दिया जाता है। मैंने श्रवणबेलगोल में देखा, जो लोग वहीं रहकर भी ऊपर जाकर भगवान का दर्शन नहीं करते थे, वे भी जैन बंधु चैत्रवदी अमावस्या (दक्षिण व गुजरात के अनुसार फाल्गुन कृ. अमावस्या) की रात्रि में ऊपर पहाड़ पर जाकर सोते हैं और प्रातः उठते ही भगवान बाहुबली का दर्शन कर नूतन-वर्ष की मंगल-कामना करते हुए नीचे उतरते हैं। चैत्र शुक्ला एकम् से विक्रम संवत् का नया वर्ष शुरू होता है। आज पंचांग इसी संवत् से चल रहे हैं।

वर्तमान में तो वीरनिर्वाण महोत्सव की चर्चा जैन क्या जैनेतरों में भी सारे देश में फैल चुकी है। सन् 1974 में भगवान महावीर का पच्चिससौवां निर्वाण महोत्सव भी एक वर्ष तक जैनों के चारों सम्प्रदायों के महारथियों ने आगे होकर मनाया, जिससे जैन के अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर के अहिंसा धर्म का प्रचार-प्रसार खूब ही हुआ है। अब तिथि-दर्पण भी "वीरनिर्वाणसंवत्" से निकाले जाने लगे।

आज जैन समाज में ही नहीं, जैनेतर समांज में भी वीरनिर्वाण दिवस (दीपावली के दिन) रात्रि में गणेश पूजा और लक्ष्मी पूजा करके दुकान पर नूतन वसना और नूतन बही आदि बदलने की प्रथा है। इस दिन अनेक प्रबुद्ध जैन अपनी-अपनी दुकान पर यंत्र अथवा जिनवाणी रखकर भगवान महावीर की पूजा, सरस्वती की पूजा आदि करके मंगलाष्टक पढ़कर, नूतन बहियों और वसनों पर स्वस्तिक, श्री आदि बनाकर "श्री महावीराय नमः" आदि मंत्र लिखकर, बही बदलने का मुहूर्त करके संवत् लिख देते हैं।

इस दिन लक्ष्मी-गणेश की पूजा के बारे में सही स्थिति का बोध कराने के लिए मैंने श्री गौतम गणधर की पूजा और केवलज्ञांन महालक्ष्मी की पूजा, ऐसी दो पूजाएँ बनाई हैं जो "जम्बूद्वीप पूजांजलि" पुस्तक एवं "दीपावली पूजन" नामक पुस्तक में प्रकाशित हैं क्योंकि कार्तिक कृ. अमावस्या को प्रातः प्रत्यूष बेला में भगवान महावीर स्वामी ने पावापुरी से निर्वाण प्राप्त किया था, उसी के उपलक्ष्य में स्वर्ग से इन्द्रों ने, असंख्य देव-देवियों ने आकर यहाँ पावापुरी में भगवान का निर्वाणोत्सव मनाया था और पावापुरी में दीपों को जलाकर उत्सव किया था। उसी समय से आज तक प्रतिवर्ष अपने भारत देश में सायंकाल में सर्वत्र दीपक जलाकर "दीपमालिका" या दीपावली दिवस मनाया जाता है। जैसा कि हरिवंशपुराण में कहा भी है—

ततस्तु लोकः प्रतिवर्षमादरात्प्रसिद्धदीपालिकयात्र भारते।
समुद्यतः पूजयितुं जिनेश्वरं जिनेन्द्रनिर्वाणविभूतिभक्तिभाक्।।21।।

भगवान के निर्वाण कल्याणक की भक्ति से युक्त संसार के प्राणी इस भरतक्षेत्र में प्रतिवर्ष आदरपूर्वक प्रसिद्ध दीपमालिका के द्वारा भगवान महावीर की पूजा करने के लिए उद्यत रहने लगे अर्थात् उन्हीं की स्मृति में दीपावली का उत्सव मनाने लगे।।21।।

यह हुई दीपावली की बात, पुनः जो उसी दिन रात्रि में नूतन बही पूजन के समय लक्ष्मी और गणेश की पूजा की प्रथा है, उसमें भी रहस्य है। उसी दिन पावापुर में भगवान महावीर स्वामी के मोक्ष जाने के बाद सायंकाल में श्री गौतम गणधर को केवलज्ञान प्रगट हुआ था, तत्क्षण ही इन्द्रों ने आकर उनकी गंधकुटी की रचना करके उनके केवलज्ञान की पूजा की थी। 'गणानां ईशः गणेशः, गणधरः' ये पर्यायवाची नाम श्री गौतमस्वामी के ही हैं। सब लोग इस बात को न समझकर गणेश और लक्ष्मी की पूजा करने लगे। वास्तव में गणधर देव की, केवलज्ञान महालक्ष्मी की पूजा करनी चाहिए। खास कर जैनों को तो यही कार्तिक शुक्ला प्रतिपदा का नूतन वर्ष मानना चाहिए। इसी दिन से तिथि दर्पण व केलेंडर छपाना चाहिए।

युगादि—वैसे मेरी दृष्टि में "युगादि दिवस" भी बहुत ही महत्वपूर्ण है। इसकी तरफ प्रायः जैन धर्मानुयायियों का लक्ष्य नहीं है। यह मंगलमय दिवस है। "श्रावण कृष्णा प्रतिपदा" यह प्रत्येक युग का आदि दिवस है इसलिए इसे "युगादि" कहा है। उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी के छह-छह काल माने हैं। अवसर्पिणी के सुषमा सुषमा, सुषमा, सुषमादुःषमा, दुःषमासुषमा, दुःषमा और अतिदुःषमा। ये ही उत्सर्पिणी में उल्टे क्रम से चलते हैं। जैसे अतिदुःषमा आदि। इन सब कालों की समाप्ति आषाढ़ शुक्ला पूर्णिमा को होती है और प्रारंभ श्रावण कृष्णा प्रतिपदा से होता है।

इस मंगल दिवस को ही भगवान महावीर की दिव्यध्वनि खिरी थी अतः आज इसे "वीरशासन जयंती" दिवस के नाम से मनाने की प्रथा है। इस विषय में आप प्रमाण देखिये (तिलोयपण्णत्ति अध्याय 1, पृ. 9 से उद्धृत)—

"एत्थावसप्पिणीए चउत्थकालस्स चरिमभागम्मि।
तेत्तीसवासअडमासपण्णरसदिवससेसम्मि ।।68।।
वासस्स पढममासे सावणणामम्मि बहुलपडिवाए।
अभिजीणक्खत्तम्मिं य उप्पत्ती धम्मतित्थस्स।।69।।
सावणबहुले पाडिवरुद्दमुहुत्ते सुहोदये रविणो।
अभिजस्स पढमजोए जुगस्स आदी इमस्स पुढं।।70।।

यहाँ अवसर्पिणी के चतुर्थ काल के अंतिम भाग में तेतीस वर्ष, आठ माह और पन्द्रह दिन शेष रहने पर वर्ष के श्रावण नामक प्रथम महीने में, कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा के दिन अभिजित् नक्षत्र के उदित रहने पर धर्मतीर्थ की उत्पत्ति हुई।।68-69।।

श्रावण कृष्णा एकम् के दिन रुद्र मुहूर्त के रहते हुए सूर्य का शुभ उदय होने पर अभिजित् नक्षत्र के प्रथम योग में इस युग का प्रारंभ हुआ, यह स्पष्ट है।।70।।

धवला में भी लिखा है–

सावण-बहुण-पडिवदे, रुद्द-मुहुत्ते सुहोदए रविणो।
अभिजिस्स पढम-जोए, एत्थ जुगाई मुणेयव्वो।।57।।

श्रावण कृष्णा प्रतिपदा के दिन, रुद्र मुहूर्त में, सूर्य का शुभ उदय होने पर और अभिजित् नक्षत्र के प्रथम योग में जब युग की आदि हुई, तभी तीर्थ की उत्पत्ति समझना चाहिए।।57।।

राजगृही नगर का जो स्थान भगवान महावीर की दिव्यध्वनि से पवित्र हुआ था, उसके बारे में भी तिलोयपण्णत्ति (अध्याय 1, पृ. 8) में वर्णन आया है–

सुरखेयरमणहरणे, गुणणामे पंचसेलणयरम्मि।
विउलम्मि पव्वदवरे, वीरजिणो अट्ठकत्तारो।।65।।
चउरस्सो पुव्वाए, रिसिसेलो दाहिणाए वेभारो।
णइरिददिसाए विउलो, दोण्णि तिकोणट्ठिदायारा।।66।।
चावसरिच्छोछिण्णो, वरुणाणिलसोमदिसविभागेसु।
ईसाणाए पंडू वण्णा सव्वे कुसग्गपरियरणा।।67।।

अर्थ–देव और विद्याधरों के मन को मोहित करने वाले और सार्थक नाम से प्रसिद्ध पंचशैल (पांच पहाड़ों से सुशोभित) नगर अर्थात् राजगृही नगरी में, पर्वतों में श्रेष्ठ विपुलाचल पर्वत पर श्रीवीरजिनेन्द्र अर्थशास्त्र के कर्ता हुए।।65।।

राजगृह नगर के पूर्व में चतुष्कोण ऋषिशैल, दक्षिण में वैभार और नैऋत्य दिशा में विपुलाचल पर्वत है। ये दोनों वैभार और विपुलाचल पर्वत त्रिकोण आकृति से युक्त हैं।।66।।

पश्चिम, वायव्य और सोम (उत्तर) दिशा में फैला हुआ धनुष के आकार वाला छिन्न नाम का पर्वत है और ईशान दिशा में पाण्डु नाम का पर्वत है। उपर्युक्त पाँचों ही पर्वत कुशाग्रों से वेष्टित हैं।।67।।

इन उद्धरणों से स्पष्ट है कि "श्रावण कृष्णा प्रतिपदा" युग की आदि है। भगवान महावीर के मोक्ष जाने के बाद पाँचवां काल प्रवेश होने में तीन वर्ष, आठ माह, पन्द्रह दिन बाकी रहे थे। तीन वर्ष, कार्तिक शुक्ला के पन्द्रह दिन और मगसिर से आषाढ़ तक आठ माह गिनने चाहिए।

कर्नाटक में लोग चैत्र शु. 1 को ही "युगादि अब्बा" कहते हैं किन्तु वह तो विक्रमादित्य राजा से चला है अतः वह "युगादि अब्बा" न होकर श्रावण कृष्णा एकम् ही युगादि पर्व है। दक्षिण में पर्व को "अब्बा" कहते हैं।

इसे यहाँ बताने का मेरा अभिप्राय यही है कि आप जैन लोग वीरनिर्वाण संवत् से ही "नूतन वर्ष" मनावें तथा श्रावण कृष्णा एकम् को "वीरंशासन जयन्ती" और युगादि दिवस-पर्व अवश्य मनावें। यदि जैन ही अपनी संस्कृति का प्रचार-प्रसार नहीं करेंगे, तो भला और कौन करेंगे? इसलिए वीर निर्वाण के दिन रात्रि में जैन विधि से बही और वसना आदि बदलकर कार्तिक शुक्ला एकम् से "नूतन वर्ष" मानना चाहिए तथा नव संवत्सर की पूजा आदि करके अपने वर्ष को मंगलमय बनाना चाहिए।

* * *

LIFE OF MAHAVIRA

(Extracted from the book TIRTHANKAR MAHAVIR LIFE AND PHILOSOPHY)

By - Late Shri Sumeruchand Diwakar

1- Descent of the Saviour

When the entire Universe is enveloped in impenetrable darkness, the dawn descends followed by the radiant Sun, which brightens the world. In the like manner the arrival of Superman bestows light and delight, banishing the darkness of infatuation and delusion, uplifts and elevates the benighted souls.

Lord Mahavira was amongst the galaxy of such ennobling and enlightened souls. His father was king Siddhartha, the ruler of Kundalpur in the province of Bihar. Queen Priya-Karini, alias, Trishala Devi was the mother of the Saviour of humanity.

Auspicious dreams of the mother

On the Sixth day of the bright half of Ashadha month (July), the queen had visualized sixteen objects in her dream. She had seen (1) a beautiful white celestial elephant, (2) a bull, (3) a lion, (4) Lakshmi-the Goddess of wealth, (5) a pair of garlands, (6) a moon, (7) a sun, (8) a pair of fish, (9) two pitchers full of water, (10) a lake, (11) an ocean, (12) a royal seat, (13) a beautiful car adorned with the Lord of Celestials, (14) the palace of Nagendra, (15) a heap of lustrous gems and, (16) smokeless fire.

The queen was much elated and happy. She went to her lord and reported her marvellous dreams to king Siddhartha. The King told her that the auspicious dreams augur the conception of a world saviour and spiritual victor, who will establish the glory of the religion of universal love & brotherhood all over the world and will ultimately become the pure soul, Parmataman after destroying the karmic filth in the conflagration of supreme concentration.

Explaining the dreams in detail the king observed thus. The first object of the dream, the white celestial elephant, presages the birth of a child with excellent character, the bull implied that he will be highly religious, the lion in the third dream indicates that the son will be endowed with the wealth of valour. Goddess Lakshmi shows that he will be blessed with immense wealth and splendour. The garlands foretell that he will be respected by all; the moon indicated that he will remove the anguish of the people; the sun suggests his supreme brilliance; the pair of fish signifies that he will be exquisitely handsome; the two golden vases presage that he will be full of sympathy and compassion; the ocean suggests that he will be blessed with placid and dignified temperament; the throne predicts that he will adorn the throne; the celestial car indicates the arrival of the heavenly bodies to honour him; the advent of Nagkumar devas suggests that the lords of the lower world will adore him; the heap of glittering jewels indicated that he will be blessed with innumerable virtues and spiritual attainments, and the smokeless blazing fire predicts that he will burn the karmas and attain salvation adorned with everlasting bliss.

Auspicious Birth of the Lord

On the thirteenth day of the bright half of the month of Chaitra (the spring season) Queen Trishla gave birth to an exquisitely lovely and glorious child with white complexion. The entire world experienced unbounded happiness on that auspicious occasion. The celestials and their lords, the Indras were pioneers in expressing their supreme joy along with the human and sub-human beings. Even the denizens of hell enjoyed peace for 48 minutes.

In view of the marvellous prosperity of the royal family and the subjects, king Siddhartha named the child Vardhaman (One who brings prosperity). The child was provided with superb celestial comforts, all-alluring and desired superfine objects agreeable to the senses. But as he was blessed with a philosophic bent of mind he kept himself mentally detached from royal pomp, splendour & pleasures. He was like a lotus in a tank.

Spiritual megnetism-

The spiritual advancement and personal magnetism of the Divine child was marvellous and beyond expression. Two great erudite saints--Adityagati and Amitteja were unable to solve an intricate and puzzling philosophical problem. They happened to see the Divine child Vardhaman and their doubt was forthwith removed, so they called the child 'Sanmati'-(bestower of right knowledge).

Supreme hero-

Once the Divine child was playing hide and seek with other princes and friends over a tree. A celestial named Sangamdeva thought of testing the valour and prowess of Vardhaman. He transformed himself into the form of a terrifying huge cobra and entwined the tree, over which the children were playing. All the boys ran away from the tree out of terror, but Vardhaman was altogether unmoved by the ghastly sight. He had complacently put his foot over the hood of the terrifying Cobra and came down calmly. Sangam Deva was much surprised to witness the intrepidity and composure of the Divine-child and called him 'Mahavira' (Supreme hero). It is to be noted that the Lord is always remembered by the nomenclature 'Mahavira'.

Since his birth Mahavira was endowed with unparalleled wisdom, adroitness and marvelleous dexterity in all branches of learning without any training or teaching as a result of learing without any training or teaching as a result of supreme penances practised in the past incarnations. He was born as a clairvoyant. He was blessed with wondorous intellectual advancement and awe-inspiring attainments and Siddhis (miraculous powers).

Vow of celibacy

After passing the age of adolescence his beautiful and lovely body looked exquisitely handsome and charming. One day king Siddhartha and mother Trishla Devi thought of finding out a suitable match for the marriage of the prince.

When Mahavira heard of the royal proposal of his wedding, he politely declined and added: "In view of the great sufferings of men; and the inhuman atrocities perpetrated by callous and selfish persons by killing innumerable dumb and innocent animals to propitiate some imaginary deity and eat the carcass to please their own palate, I do not think it wise to waste a moment of my precious life in evanescent personal comforts and luxurious enjoyments. I am now determined to lead the life of a celibate abjuring sensual pleasures and perform penances and austerities to attain omniscience and Divinity. After the attainment of spiriutal all-embracing knowledge and perfection, I would try to dispel the spiritual darkness of the people and lead them to the glorious life of compassion and mercy so that the benighted humanity may become humane, pious and compassionate".

"My span of life is too short-only 72 years. My heart is deeply wounded with anguish to hear the agonies of the innoent, dumb and defenceless animals killed in sacrifices. I do not deem it proper to lose a single moment to enjoy the fleeting and futile carnal pleasures. I have to achieve a great and noble objective. This is my sacred ambition. I have had the good fortune to enjoy the supermost pleasures and the life of plenty, but my desires and longings for enjoyment are not at all satisfied. The fire of desire is still burning furiously. Oh, noble father, my loving mother! be pleased to bless me in my sublime mission of wiping out the tears from the eyes of the innocent, tormented, tortured, butchered and voiceless animals and establish the kingdom of mercy, love, kindness and fraternity. You know that this soul has been wandering in this world from times immemorial due to ignorance and infatuation. I want to cut the Gordian knot of attachment for worldly objects, animal appetites and carnal cravings."

The forceful, balanced and convincing words of Mahavira made the king and the Queen mother speechless. The pious and prudent parents very seriously thought over their son's innermost superb and noble desire and ultimately they blessed him for supreme success in his glorious goal to ennoble and elevate the world.

He decided to observe the five-fold major vows of non-injury, truth, non-stealing, celibacy and possession-lessness for they are indispensable for spiritual advancement and self purification.

2. Renunciation

Now Mahavira renounces the royal pleasures and splendour and becomes a nude monk. As a small pebble dropped in placid and calm water disturbs it by engendering ripples therein; in the like manner worldly possessions disturb the serenity and tranquillity of mind. A Persian poet oberves; "A cloth-clad person's mind moves towards a washerman. This does not occur in the case of a nude saint, Who is adorned with Light Divine." Saint Lord Mahavira had invincible determination to subdue his appetites, anger, avarice, vanity, duplicity and other internal blemishes, which are the root causes of death and transmigration in the universe. External and internal nudity both are imperative and essential for the observance of the supreme vow of Ahimsa (non-injury) as well as supreme serenity of mind, which are essential ingredients for superb concentration.

Saint Samanta Bhadra says: "This truth is known all over the world that Ahimsa is the supreme Brahma. It exists, where complete absence of injury to life is observed". With this end in view the merciful Lord Jina-(Spiritual victor) had abandoned all possessions-external as well as internal. He therefore did not put on the unnatural garments and had renounced all material possessions in consonance with his vow of complete non-injury.

It must be borne in mind that Mahavira's Ahimsa was not the absence of physical violence only but mental attitude as well. This internal purity will be a mere prattle of an indolent, unless it is associated with the life of supreme compassion towards all creatures. Both must go hand in hand. If we want polished rice, we will have to first remove the husk from the paddy and then only we will be in a position to cleanse it of its internal impurity; likewise the outward causes of the impurity of mind should be first cautiously warded off. It is practically impossible for a wicked vicious and licentious person to keep his mental purity unperturbed. In his Tiruk-kural Ācharya Kunda Kunda says, "The essential nature of true penance consists of not to possess anything. Even a simple single material possession will engender impurity and imperceptible attachment for property. Only those, who have completely renounced all possessions, will reach the highest goal of life-Moksha. On the other hand, others with attachment get entangled in the net of transmigration."

The liberator of India, Gandhiji remarked once; "I aspire to be a nude monk. In fact one must be physically and mentally nude. Such a person will freely move like a bird without any habitation, without clothing in the 'Awadhuta state'." He also added, "Real reform and civilization do not consist in increasing wordly belongings: on the other hand they depend upon intentional and wilful curtailment of one's possessions. Peace and contentment thrive in proportion to the abandonment of material objects. This also develops the capacity to render service."

Nudity and purity-

It is to be noted that nudity is not an end in itself. Mental purity is most essential, without which mere nudity cannot save the soul from the woes and sufferings of transmigration. Acharya Kunda Kunda in his Bhava-Pahuda clarifies this point in these significant words: "Outworldly all are naked, the entire group of the denizens of hell, the sub-human beings are nude. But they do not attain the mental purity of noble saints due to inner ignoble and impure dispositions."

"If a nude person is devoid of purity of mind and self-control he will endure sufferings and will wander in the ocean of mundane existence. He will never be blessed with inner illumination"

"It is mental purity whereby the happiness of heaven and the bliss of beatitude are achieved. The ascetic devoid of mental purity is polluted by Karmic filth and he is reborn as a beast."

The rationale of renunciation-

It may be said that if every type of spiritual progress depends upon purity of disposition, what is the utility of abandoning external objects?

This point has been clarified by the author of Samayasara in these significant words: Thought in an empirical self is always conditioned by an object in the external world. Neverthless it is not the external object, that is the cause of bondage, it is by thought that bondage is caused.

Thought without the basis of an external object never occurs in the consciousness of Self. If it is possible to have thought without the basis of an external object then thought corresponding to non-existing objects must also appear. In the case of a person born of a real mother, you can entertain the thought, I am going to kill her son? But in the case of a barren woman, the thought, I am going to kill her son, would be meaningless, because there can be no son born to a barren woman. Hence it is certain that there can be no thought without a basis in reality. Hence it necessarily follows that condemnation of corresponding objects of reality. For it is only by preventing the cause that the effect can be prevented from occuring." (Vide commentary on Samayasara by Prof. A. Chakravarti P. 166-167).

Procedure-

Before adopting asceticims, Mahavira offered his salutaions to the Siddhas-the liberated souls, for his ultimate aim was to attain the status of Siddhahood, which is not tainted with material karmas and which is free from birth, death and transmigration. His ideal was to achieve the pure, perfect and perennial status of the soul, which is endowed with infinite attributes like omniscience, infinite bliss, infinite power and infinite conation.

He had abandoned all his belongings and also longings for them. He had arrived at a decision after mature thought and deliberation with his own Self: " I do not belong to other objects nor do other objects belong to me; nothing is mine. Due to nescience and infatuation, I have been misleading myself with false notions that this body is mine, I am the son, he is my father, she is my mother, this is my palace, these are my belongings etc; but truth, has unravelled reality. Now I clearly understand after deep thought and keen observation that not an iota of matter is mine. I am the ocean of bliss".

Saint's life-

Thus determined he pulled off his hair from his head. This penance is called "Keshalocha". This is in consonance with the sacred vow of Ahimsa and dependence on one's own self. The ascetic is not required to beg for money for shaving. If he keeps long hair, small insects will be born and they will be killed inadvertently, when they will move about the head and thus they will distrub the concentration of mind and cause distraction. He had resolved to control his mind, body and speech. He had taken a vow of complete silence, till the acquisition of omniscience, for in fact silence is the element in which great things fashion themselves. He had taken a vow of non-injury and feeling of love towards all living beings, honesty, non-stealing, complete continence (brahmacharya) although he was already a staunch celibate, and Aparigraha (possession-lessness), sleeping on the ground, taking meals in the palm of his hands in the standing posture once during day-time only. He was looking towards all, a friend or a foe, with equanimity. He was very keen and cautious that his mental equilibrium may not be disturbed by attachment, aversion, delusion, conceit, greed, anger and other internal pollutions.

Outwardly when deeply immersed in meditation it appeared that monk Mahavira was inactive and was doing nothing, but in reality he was performing the most arduous and risky duty of a valiant spiritual-soldier. He was waging a war against the hordes of terrible karmas, commanded by the world-victor Mohaniya Karma, which stupefies the soul. Attachment and vanity bring a fall of the inner man. Passions, anger, pride, deceit, greed and evil thoughts have been dethroning the soul from its innate glory of God-hood. When the spiritual aspirant tries for concentration of mind to develop his inner-self, the forces of evil assail the mind and cause distraction. Poet Ravindranath Tagore in his memorable lectures delivered in America had remarked "In this material world with the help of science man is turning the forces of nature into obedience, but in the moral world he has a harder task to accomplish. He has to turn his own passions and desires from tyranny into obedience.

Concentration-

It is easy to talk about the control of passions and the way to concentrate upon the self; but the important and crucial point is; how to achieve the objective?

It has been observed in the sacred Jain scriptures that for concentration of mind one is required to abandon all possessions, to control anger, abandon conceit, deceit and avarice, to practise complete vows of non-injury, truth, nonstealing, celibacy, non-covetousness, and to subjugate all the senses and mental activities. Without these observances and complete renunciation the illuminating discourse on concentration has no meaning and significance.

Penances-

Monk Mahavira carefully observed the tenfold virtues, i.e. supreme forbearance, modesty, straightforwardness, non-covetousness, honesty, self-restraint, austerity, renunciation, non-attachment and celibacy. All his activities and movements never violated his sublime vow of non-injury and universal brotherhood.

He did not walk during the night with a view to keep his vow of non-injury unassailed. True to his name (a great hero) he moved all over the world whether it is a ferocious forest infested with wild beasts or a cemetery without any hitch or fear. He did not mind the inclemecy of weather. During the hottest scorching summer he performed his meditation seated on burning rocks of mountains. In the winter season, extremely chilly winds, snow fall and biting cold could not disturb him. Even the heavy downpour during the rainy season could not distract his mental equipose. He needed no shelter or habitation. He looked like a part and parcel of nature.

Supreme Wisdom-

This supreme wisdom that "I am the conscious soul and the material body is quite distinct and different from me" helped him to remain peaceful and unperturbed against untold calamities and horrifying vissicitudes. My soul is imperishable. Outward agencies can effect the mortal coil only. I am different from the body, which possesses different characteristics. The body comprises of senseorgans but I am devoid of them. In the course of transmigration I had put on innumerable bodies because of infatuation and delusion. Now I am determined to burn this body and its causes once for all in the bonfire of supreme concentration. I have absolutely no relationship with the worldly objects. They are

२-३१

not mine. I am alone. I am Brahma, Parmatman-pure soul".

A saint of high order thinks that during his initiation into monkhood he gets new life; rather he is reborn spiritually. Therefore past relationship with the world is altogether out of question. He utilises his every precious moment cautiously in his march towards his ideal of perfection and Godhood. In fact he is a warrior, adorned with his trident of right faith, right knowledge and right conduct, to vindicate the invincible forces of infatuation and spiritual impenetrable darkness with a view to attain real independence or Swarajya i.e. sovereignty of the soul.

Immortality-

His mission is to attain immortality and everlasting bliss. He has given an open challenge to world-terrifying Death that he is going to destroy it and attain the status of supreme Divinity. Poet John Donne conveys the invincible determination in these significant words:

Death be not proud, though some have called thee
Mighty and dreadful,'for thou art not so.
For those whom thou think'st thou dost overthrow.
Die not, poor Death, nor yet canst thou kill me.......
......Death, thou shalt die.

Aura of Purity-

Monk Mahavira was a life-long celibate with spotless character and his practice of severest types of penances made him look like lustrous gold, which has been purified by intense fire. His aura of purity and spiritual halo purified and pleased all. All animals in his vicinity became calm and peaceful and they exhibited a marvellous spectacle, wherein the tigress loved a calf, the cow treated a cub with motherely affection, a peacock became friendly with a cobra, a cat loved a swan and so on. The inborn feeling of perpetual animosity disappeared merely at the sight of asceitic Mahavira. As his heart was replete with love towards all creatures, like wise the entire animal world reciprocated the similar feelings of affection and harmony.

Intrepidity-

It is said that the glory of Mahavira's enchanting personality and spiritual attainments had influenced all persons, even the celestials. One Rudra was haunted with a mischievous idea to test the mental strength and tranquillity of the saint under horrifying and dreadful environments. He, by his devilish and satanic miraculous power created terrifying objects like hobgoblins, apparitions etc. to disturb the saint. But Mahavira was unmoved like a rock. His serenity of mind was like an ocean. This had won the heart of the Rudra who praised the Lord highly and called him by the name-'Mahati Mahavira'-a warrior whose valour and prowess are supreme and superb.

3- Dawn of Omniscience

The long period of twelve years of penance was nearing completion. The saint came near a village named Jhrimbhaka, situated on the bank of a river called Rijukula. It was the month of Vaishakha, probably, May, and the tenth day of the bright half of the month. Mahavira developed his mental attitude of auspicious-concentration (Dharma Dhyan) to pure-concentration (Shukla Dhyan). This supreme type of concentration brought about the destruction of Mohaniya karma (deluding karma) along with knowledge-covering, perception-covering and obstructive karmas.

Omniscience-

Now Saint Mahavira becomes omniscient God possessed of infinite power, infinite bliss and infinite intuition or conation. The tree of austerities and penances has now borne the desired fruit. Now the Lord is fully equipped and qualified to deliver ennobling sermons to the benighted and bewildered world on the true path of salvation and everlasting rectitude.

Confirmation-

It is interesting to note that Buddhist scripture Majhama Nikaya says that "Niganth Nataputta i.e. Mahavira had become omniscient. He comprehended all things and had got universal conation" (Darshan) निगण्ठो आवुसो नातपुत्तो सव्वञ्जु सव्वदरसावी अपरिसेसं णाणदस्सनं परिजानाति'' (Majhama Nikaya pp 91-93 P.J.S.)

When Buddha was communicated the message of Mahavira's omniscience he did not contradict it; rather he was pleased and said, "This information is pleasing to me." 'तच्चाह्याकं रुच्चदि'.

In Buddhist books there is reference of Buddha's miraculous knowledge-Sarvagyata; but it was of different type. In the Buddhist book Milinda Prashna, reverend Bhikshu Nagasena tells king Milinda, "Buddha knows all things of the whole world. His sarvagyata consists of the knowledge of those things regarding which Buddha concentrated his mind. This type of limited knowledge was called ''आवर्जन-प्रतिबद्ध-सर्वज्ञता''

This evidence of Mahavira's omniscience in contemporary Buddhist literature is very significant, for it corroborates the point that Lord Mahavira's omniscience was a historical fact and not a mere conjecture. It also throws light upon the utility, veracity and reliability of Mahavira's dissertations dealing with the science of salvation. The great Sanskrit poet Dhananjaya says:-"As the voice of a healthy person indicates that, he is not down with fever, likewise, O Lord Jinendra, your beneficial speech representing all aspects of reality enables one to infer that your soul is devoid of all blemishes."

Divine discourses delayed-

Inspite of the fact that Mahavira was equipped with complete knowledge and that the assemblage of the devotees was eagerly awaiting to hear the Divine discourses in the Samava-Saran (hall of audience over which Omniscient Lord presides), there was no sermon. What a wonder is this! Saudharamendra, the Lord of Saudharma heaven by his Avadhi Gyan (clairvoyance) understood that the presence of Gandhara-the head of ascetics equipped with remarkable talent and marvellous memory to fully grasp the sermon of the omniscient Arhat and compose scriptures for the good of the world was much needed. Indra most tactfully and intelligently handled the awkward situation. Through his tactful, noble and sagacious efforts lasting for sixty six days, the deficiency was removed by the presence of an extraordinary genius in the person of scholar Gautama, who embraced the faith of the Lord. His conversion was astonishing. Due to the marvellous spiritual influence of the Lord, he became a nude saint. His spiritual advancement and purity were so great that he was immediately blessed with supreme type of clairvoyance (Avadhi Gyan) and Manahaparyaya Gyan (the capacity to read other's mind and mental dispositions).

4- Sermon on Vipula Mount

It was the month of Shravana (July), when on the morn of Pratipada-the first day of the bright half of the month, the first sermon of Omniscient God Mahavira was delivered on the Vipula Mount of Rajgir (Bihar). The audience comprised of celestials, men of all nationalities as well as animals. Due to marvellous spiritual attainments of the omniscient Lord, the entire audience clearly understood the teachings and preachings of the world benefactor with rapt attention. The sermon was as pleasing to the ear and the soul as the ambrosia is tasty to the palate.

Central Point of the Sermon-

The Divine discourse threw light upon the universe which consists of the living and non-living objects. The omniscient Lord said, this world is eternal. It is not created by any outward agency. It consists of six substances i.e. Jiva (soul), time, space, medium of motion (Dharma), medium of rest (Adharma) and matter (Pudgala).

The Jiva is of two kinds-the embodied soul is associated with karmic bondage, the other disembodied one is pure soul, which is free from transmigration and karmic impurities. The pure soul should be the ideal of every aspirant for perfection, perennial peace and omniscience. The nature of soul must be carefully borne in mind. The emotional states such as attachment, aversion and delusion dethrone the Self from its pristine and natural perfection and it becomes the victim of nescience, which is the root cause of all troubles.

The impure soul attracts karmic matter as a magnet attracts iron filings. The absence of correct knowledge of the Self produces impure psychie states, which cause the inflow of material karmas.

External Effects of Omniscience-

When a Tirthankar attains omniscience, many wonderful things are witnessed. By the orders of the Lord of the first Heaven-Saudharmendra, the celestial artisans under the guidance of Kubera construct the Samavasaran-a heavenly pavilion specially erected for the Lord's preachings.

Due to the spiritual influence and yogic attainments the nature presents the spectacle of abundance and plenty within an area of hundred yojans (eight hundred miles). Near the Samava-sarana fruits and flowers of all seasons had adorned the land. It appeared that the whole nature expressed its joy and extended its welcome to the Lord of compassion and benevolence.

Vidya Varidhi Barrister Champat Rai Jain in his "Rishabha Deva, the Founder of Jainism" depicts the picture when Tirthankara attains omniscience in these significant words. "Among the wonderful acquisitions of the Tirthankaras, which are obtained as a result of the destruction of the karmic energies that stand in the way of the manifestation of the Divinity of the soul, may be mentioned the following. They are able to conquer gravitation and possess the power of levitation; they live without food and water, their eye-lids are never closed, shadow is not cast by their bodies, and their hair and nails do not grow any more. They are not liable to be assailed by trouble or distress in any form and peace and plenty prevail wherever they go. Naturally hostile animals become friends in their presence, ferocious natures are tamed. Flowers and fruits appear out of season wherever they go. When seated in the Samava-sarana, a Tirthankara appears to be looking in all the four directions, though He only sits facing the East.

The speech of the Lord is like the roar of many waters and is distinctly heard by every one present. It is produced independently of volition and is for that reason termed 'anakshari' (without letters). The Apostles arrange the teachings of Truth under twelve main heads (angas) and it is termed Sruti because of its having been heard (from the Teacher).

The devas, too, contribute their quota to the glory of the Tirthankara. They clarify the directions for a considerable distance all round, making the ground look like a polished surface, devoid of thorns. They also translate the anakshari speech of the God into different tongues and place golden lotuses under His feet when He walks, raining flowers and fragrant water all the time.

The cries of: "Jaya, Jaya" (Victory, Victory) are also raised by the devas, men joining them in swelling the diapason. All this, no doubt, reads like a romance, but as stated above the Tirthankaras are not ordinary beings nor are Their devotees all helpless and powerless like man".

Sevenfold Essentials—Right faith, right knowledge, right conduct together constitute the path of liberation. The soul, the non-soul, the Karmic influx, the bondage, the stoppage of the Karmic influx, the gradual dissociaton of Karmas and the liberation from the Karmas constitute the central point for right faint.

These are known as seven essentials. The soul consists of consciousness, the non-soul is bereft of the faculty of cognition or conation. The inflow of auspicious or evil karmas into the soul is influx. The mutual inter-mingling of the soul and the karmic molecules is bondage. The obstruction of the karmic inflow is Samvara or stoppage. The Partial separation of karmic matter from the soul is dissociation (Nirjara). The complete separation of all karmic filth from the individual Self is liberation or salvation (Moksha).

Supreme object-

The attainment of liberation is the supreme object. The liberated self is eulogized as God, Parmatma, Shiva, Bramha, Shankara, Buddha, Jina, Swayambhu etc. It is to be noted that the liberation of the individual soul does not annihilate the independent and separate existence of the Self. The number of the liberated souls is infinite. The residence of pure, resplendent, omniscient and blissful souls is the topmost place of the universe. This Parliament of the liberated ones enjoys the unperturbed sovereignty over their inner kingdom for ever. They are passionless spectators of the everlasting drama enacted by the embodied souls displaying infinite forms and exhibiting innumerable psychic dispositions.

The blessed ones are never entangled in the formation or destruction of the physical world. They are free from the blemished like anger, aversion, attachment, favouritism, greed, delusion, sportive attitude, hatred and karmic impulses. They are above want and all sorts of longings and material belongings.

Salient Point-

This point is pertinent and needs rational solution. Why will the pure, omniscient and blissful Self partake in the creation and destruction of the world and unnecessarily invite worries to disturb the supreme serenity of the bliss of beatitude and perfection? It does not stand to reason and conviction that the omniscient and perfect God will create a world full of miseries, barbarities and inequalities. Due to omniscience and passionlessness the perfect soul will not take a wrong step to be a victim of impending worries.

The body is in fact the prison-house of impure and empirical soul. The imperfect soul, intoxicated by the liquor of delusion, undergoes indescribable anguish and pain. The beginningless nescience is the main cause of soul's unhealthy status and impure dispositions resulting in the four-fold animate feelings of appetite, fear, coition and attachment. These animate feelings weaken the power of the soul like high fever to a sick person.

First Requisite-

The first requisite for an aspirant is to understand the correct position of the self. "Not even an atom of alien objects is related to me as mine. I am non-corporeal. Perception and knowledge are my inherent attributes. The empirical ego possesses mortal coil, but from the realistic point of view I am alone; I am single." The soul and body are mingled like milk and water. Each exists distinct from the other. The human body is a bundle of flesh, blood, pus, excreta and is defiled by bones, fat and the like and has nine outlets through which filthy matter flows. Therefore the wise live in the world with a detached mind like a lotus in a lake. The detached mental attitude implanted into actual practice helps the Self in burning the Karmic fuel by the conflagration of supreme concentration.

The advanced ascetic always reflects: "In this universe I am alone, nothing is mine". He chastises his passions, controls his senses and mind. He possesses the treasure of austerity, cleanses his soul by a dip into the ocean of virtues. Faculty of discrimination, power of meditation, concentration, the life of purity, and non-injury bless the truthseeker with enlightenment and transcendental bliss, whereby the anguish and agony of the sensetormented soul automatically disappear.

Right Belief-

The right believer must understand that his soul resides in the body but he is not the body. His self is not a child, a man or a woman etc. He is in fact the repository of infinite knoweldge, infinite power. This is the realistic point of view.

As long as the soul is contaminated by karmic molecules, the self is hadicapped from rising to the status of Godhood. The empirical self can be compared to a dirty mirror. As long as the dirt from the mirror is not removed, it cannot help a person to see his reflection therein. The evolved soul is like a clean and clear mirror. The right believer must bear in mind that he is at present imperfect and he has to strain every nerve for perfection. If he remains an idler and indolent lotos-eater his pious prattle, that he is God, he is Brahma, would serve no useful purpose. Faith without action is in fact dead.

Right Knowledge-

The second requisite is that Right faith must be accompained by Right knowledge, which should be free from doubt, perversity and vagueness. He should understand that truth is manifold. Comprehension of one facet of truth does not mean the knowledge of the whole truth. Due to confusion or ignorance some people hold one-sided view as whole truth. This misconception leads them astray and far away from reality.

Right belief and Right knowledge are contemporaneous, yet they are related as cause and effect e.g. lamp and light go together, still light is the effect of the lamp and lamp is the cause of the light.

Substance

It must be borne in mind that every substance is characterized by infinite attributes. It is possessed of origination, destruction and permanence. From one point of view substance is permanent; while from other point of view it is not permanent but perishable. There is no contradiction in these predications. As a milkmaid obtains butter out of curd by drawing one side of the rope and loosening the other side; similarly one attribute becomes essential from a particular point of view and then other attributes become secondary. From the stand-point of modifications substance is transitory, but from the viewpoint of its qualities it is imperishable. The wise cautiously holds judicious and balanced approach to reality and truth.

Right Conduct-

The third important factor for liberation is Right conduct. Some maintain that mere knowledge of truth will free the soul from the thraldom of karmas. This view is incorrect. A person in chains cannot get his freedom as long as his shackles are not broken, so the soul will attain liberation only when it takes to right action or adopts right conduct. Mere knowledge or wisdom will not solve the problem. Action is also necessary and is indispensable.

Ingredients-

Right Conduct consists of control over all censurable activities motivated by passions. Abstinence from injury, falsehood, theft, unchastity and attachment for mundane objects, constitute right conduct. The pre-requisite for right conduct is right faith and right knowledge, because conduct bereft of these two essential factors will not lead to complete emancipation of the soul. Complete abstention from sinful activities is practised by saints, who have abandoned all worldly belongings including even apparel. Partial abstention is practised by the householders and laity.

Supreme vow-

Amongst the five-fold vows, the observance of the vow of non-injury is supreme. Other vows of truth etc. are the supplementary vows. The absence of attachment and other passions is Ahimsa (Non-injury). He, who has passions, causes injury to his mental purity; whether injury is caused to other living beings or not, it is immaterial. The severance of ten vitalities or principles of life (namely the five senses, energy, respiration, life-duration, the organ of speech and mind) out of passion is injury. If the psychic disposition is tainted with passion one is charged of committing the offence and sinful act of injury.

When a saint observes a fast the small parasites, the small insects living in the abdomen die for want of necessary nourishment, but the saint's soul is not contaminated with sin, since he has no intention to destroy them. His mind was not contaminated with impure thought. The spiritual progress can be measured by the advancement of the aspirant by his control over passions.

Misconception-

Some misguided people think that their thoughts are always pure and unattached, therefore they should not be judged by their life of licentiousness.

This is a wrong and erroneous attitude. External conduct and way of life have their repercussions over the psychic plane. When the mind is not muddled with devilish thoughts, why will it try to choose such objects or way life, which are associated with vicious thoughts and conduct? External objects are the basis of thoughts. There will be no thought without a basis in reality. Outward conduct and possessions help us to read other's mind and internal attitude. This fact must be borne in mind that if the mind is pure and noble, the conduct will also be accordingly noble and pure. If the outward character is saintly the mind may be pure or it may not be pure. The hypocrite's outward conduct dupes the world, for his mind is wicked and crooked. He makes a false show.

Code of conduct-

In this context it is to be noted that although a mere contact with internal objects will not make a person guilty of violence (Himsa); but for the purification of mental dispositions it is advisable to abjure the external objects, which are instrumental causes of violence. The house-holder is ordained to renounce wine, flesh, honey, such fruits which possess small insects in them. Impure diet produces impure thoughts. A deer, which lives on vegetarian diet like blades of grass, is more peaceful than a cat that eats mice. Therefore one must be careful about his diet for mental purity. Pride, fear, disgust, ridicule, ennui, grief, sex impulse, anger, greed, deceit and other ignoble dispositions are forms of mental violence.

Householder's duty-

A house-holder should at the outset renounce injury to mobile beings. Perfect renunciation is avoidance of injury by body, speech, mind by oneself, through agent, or approval. A house-holder is not in a position to practise highest type of Ahimsa. He should avoid intentional injury at any cost. He should be mireiful as far as the circumstances permit him.

Animal sacrifice is an act of highest cruelty because it contains the element of 'mens rea'-evil intention.

For the attainment of spiritual advancement a saint performs a special type of 'Atma yagya'-

spiritual sacrifice. In the fire of anger he offers forgiveness; in the fire of sex impulse the offering consists of detachment and in the fire of hunger the offering of fasts is made. This spiritual sacrifice leads to liberation.

Futility of animal sacrifice-

Animal sacrifice on the other hand brings the downfall of man whereby the undergoes indescribable agonies and anguish in hell or in subhuman forms of life. The law 'as you sow, so you reap' is of universal application. One who sows a bramble will never pluck a rose.

Those who believe that God is pleased by animal sacrifice forget that Godhood is the state of perfection and purity. God is neither pleased nor becomes irritated. Pure, perfect, omniscient and passionless God does not send a person to hell or heaven. The soul wanders in the world according to its auspicious or inauspicious actions. The soul with attachment, desires and cravings transmigrates, where-as the passionless self manifests its latent Godhood. The progress on the path of Nirvana-liberation depends upon soul's complete reliance & dependence upon oneself. Dependence upon outward objects is the source of misery and transmigration. Self help, self-dependence, Self-reliance lead to spiritual sovereignty and bliss of beatitude.

The pilgrim on the path of liberation contemplates benevolence towards all living creatures, joy at the sight of the virtuous, compassion and sympathy for the afflicted and tolerance towards the insolent persons.

The karmic influx can be stopped by controlling mental, vocal and physical vibrations. In case this is not possible, careful and regulated activities and movements are ordained avoiding injuries to living animals and insects. Practice of virtues like supreme forbearance, modesty, truthfulness, selfrestraint, celibacy, non-attachment etc., purifies the soul.

Sacred Reflection-

Concentrating the mind upon twelvefold reflections regarding the nature of the universe, transitoriness, loneliness etc. will ennoble and enlighten the mind. Such sacred reflection brightens the attitude of the aspirant i.e., "I am always alone When I am born and when after playing my part I leave this body and put on other physical form I am still alone. Not a particle of worldly possessions or relations follows me. Relations accompany the body upto the burial ground. Virtue only is my faithful companion". This type of serious and sober thought banishes the stygian, impenetrable and stupefying darkness of delusion and gives wonderful strength and courage to the mind to fight the debasing forces and march ceaselessly on the right path of salvation and Godhood.

Concentration-

All omniscients agree that only pure concentration destroys the invulnerable army of destructive karmas. The mundane soul has been concentrating its mind upon objects which stupify the self and hinder its progress towards self-realisation.

Sometimes the mind is attached towards disagreeable objects and ultimately becomes unhappy. One forgets that according to the universal rule of cause and effect he is reaping the harvest of the seeds in the form of deeds sown by him in the past. At times cruel concentration captures the heart and one erroneously feels satisfied to see that his mischievous and destructive machinations are bearing desired fruits but ultimately he has to pay the price for his misdeeds after the perios of maturity. Thus the soul wanders in the universe according to its deeds. It is most difficult to have control over the mind, change its vicious and pernicious habit and direct it towards the resplendent self.

Nature of self-

Every sober thinker preaches about 'Know Thyself' philosophy, but he is found entangled in such misconceptions about soul which are merely imaginary and far from truth. Reality, corroborated by one's experience consists of the fact that the embodied soul assumes the form of the body, wherein it dwells. Due to its capability of contraction and expansion it contracts or expands according to the small or large body, like the light of a lamp which pervades the place, where the lamp is placed.

The stand, that the soul is not limited to the size of the body, but it is all-pervading for ever, is contradicted by our own experience in as much as the sensations of pleasure or pain are limited to the dimensions of the physical body.

The argument, that the soul will become perishable if it is not accepted as all pervading or of the small size like the seed of a banyan tree, is unsound, since all objects are perishable from the view-point of modifications and that all are permanent from the stand-point of substance. One must understand that this embodied-soul is body-sized, therefore when he wants to concentrate his mind upon the self, he should not adopt unreal and imaginary outlook. Small error regarding the object of concentration will be a great hurdle and real impediment in spiritual advancement. The essence of all teachings and preachings is that the tranquillity of mind should not be disturbed by attachment or aversion. Outward possessions disturb the mental equipoise due to attachment, therefore all objects along with longings for them should be abandoned. The ascetic should rivet his sole attention upon his aoul which is conscious and blissful.

Adverse Time factor

The present cycle of time is a great handicap for pure self-contemptation. This is the fifth arc (spoke) of the 'Ava-Sarpinikala', the arc of descent called' Dukhamạ'-the period, where misery is the lot of the majority. In this age the physical frail frame is not fit to undertake the great strain of superb asceticism required for final liberation. The ascetic can ascend to the seventh stage on the ladder of spiritual progress; but for salvation one has to cross even the fourteenth stage of spiritual advancement (Gunasthana). In this age the virtuous meditation (Dharma Dhyan) is only approachable. Those who are born in 'Videha Kshetra' can attain Salvation thereform, because the time factor is agreeable in the unique land. Virtuous meditation results in the shedding away of inauspicious karmas, but it causes the accumulation of auspicious karmas, which will bear sweet fruits of celestial life etc. After that the soul will be reborn as a human being and will attain liberation, if it makes proper progress in combating the karmic forces, which are the sources of all miseries.

It is very easy to deliver an illuminating and elevating discourse on meditation and concentration, but it is an uphill task to practise the same since the mind is extremely fickle by nature. It is wise to keep the wavering mind engaged in noble and holy activities and lead a benevolent and pious life based upon love, compassion and kindness.

Human Form-

All sages observe that this human form is extremely precious and irrevocable. It is not meant for the enjoyment of evanescent sensual pleasures. It is to be wisely utilised for the attainment of Divinty. The life must therefore be adorned with sacred vows of truth, celibacy, non-stealing, non-injury and control over greed.

Don't be coward, sluggish or chickeh-hearted and don't postpone the adoption of the ennobling and sacred vows for future in the vain hope that right belief (Samyak Darshan) will descend upon you from heaven or by some magic and after that you will be pleased to renounce your life of lust and licentiousness. Remember that if proper time (Kala-labdhi) has not approached, you will be bereft of right faith. This may take infinite time, therefore lose no time to observe sacred vows.

Recollections-

Lord Mahavira referred his previous incarnations thus. "I was born as a grandson of first Tirthankara Rishabha Deva and a son of Bharat Chakravarti. I was provided with every possible means for self realisation. The entire environment was wonderfully spiritualised, but as my time for spiritual advancement was not ripe I had to wander in the ocean of transmigration for about one Kodakodi Sagar.

Spiritual awakening-

When the hour of spiritual awakening dawned I got right vision, against most adverse circumstances which were causing impenetrable darkness to my soul. I was then a ferocious and cruel lion. I was blessed by the ennobling and elevating sermon of two spiritually advanced great Saints.

This spiritual touch worked wonders in my life. I got insight into reality immediately and I remembered my past lives of ignorance. I profoundly repented for my lapses and horrifying blunders. Afterwards I made remarkable and astounding progress."

"In the light of my personal life it is advisable for all seekers after truth not to lose a moment and immediately adopt the beneficial and sacred vows. The purity achieved by vows will do no harm, even if the person is devoid of right faith, the primary requisite for salvation. It will at least check your wanderings in the torturours low conditions of life life sub-human beings or hellish.beings.

First you can very easily abandon those eatables which disturb your physical health. You can also adjure thouse objects, which you are not going to enjoy for a particular period due to their non-availability. In view of your very few needs you can abandon those objects which you are not going to enjoy then. Those practices, which are harmful to the individual, society or nation, should also be given up.

Since you are a man, behave like a sensible and rational person. You are supposed to be superior to other beings. In fact you are superior to other creatures. Remember the pertinent point that you are not a beast. Even sub-human animals subdue their passions, take vows and make progress on the path of salvation. I made my progress when I was a beast. Therefore, O wise soul, do not miss a moment in the slavery of senses and animal appetites. Take courage and chastise your passions so that they may not chastise you and mar your glorious future."

Noble resolve needed-

"It is not at all difficult to adorn life with sacred vows. Strong will is needed. I took the vow of non-killing when I was a ferocious lion. It is known that lion is a carnivore and cannot live without meat, but then I had abjured meat and had embraced peaceful and pious death. Iron determination and strong will enable you to perform desired deeds, Your can subjugate your mental weakness and your strenuous efforts will invariably be crowned with success. There is no doubt about this."

Admonition-

"Just think of your own-self, which has become a slave of sensual life and animal appetites. You yourself invite worries and anguish. You should be kind to your own-self and give up the misconception caused by nescience. You ought to remember that at present you are not real God, but you can attain Godhood by your own efforts, if you are not 'abhavya',-one who is devoid of the capacity for liberation and who has to pass his time in the five-fold cycles of transmigration."

"If you are a householder immediately adopt the course of noble conduct agreeable to a layman. You will then be guided by the Vyavahara Naya-Practical point of view. Only advanced and highly cultured nude saints are qualified for realistic point of view (Nishchaya Naya). The advanced souls are advised to depend upon their own-self. They need not depend upon outward objects; but the less-advanced souls cannot progress without outward help."

The layman's mental make up is different from that of a Digambar muni, who has renounced all out-ward possessions, and who is a real and well-equipped warrior to fight against the invulnerable forces of infatuation, anger, deceit, avarice, conceit etc. The householder's mind is wanting in sufficient spiritual strength since worldly attractions and allurements have made him a weakling. Therefore he is advised to worship the idols of the Conqueror (Jina) to remind him of the ideal to be achieved. He should devotedly serve the enlightened saints, study the holy scriptures, which contain the Teachings of the omniscients regarding salvation and which correctly guide the wandering soul regarding the right path of rectitude and liberation.

This point is to be borne in mind that the idols of passionless and perfect souls, who have obtained liberation are in fact ideals for inspiration to lead the peaceful and pious life of self-control and self-dependence.

It is incorrect to understand that the idols shower blessings, if they are praised or flatterred. As the statue of a warrior impels the mind to valiant actions, the idols of peaceful and passionless ideals uplift the mind towards sublime conduct and purity.

"Remember the fact that you have to accomplish a glorious but stupendous task which will enable you to ultimately become God. One, who has subdued his senses, whose mind is not contaminated with wicked dispositions, who is used to lead virtuous life, and who is always ready to help the afflicted, is the ideal householder, for whom the gates of salvation will be open, no sooner he becomes a perfect saint adorned with the trident of self-knowledge, self-conduct coupled with right-faith."

"Don't be too selfish, and short-sighted, to think of your own comforts and happiness. It becomes a noble soul to try his level best to help others to live happily and peacefully. This will give you wonderful peace of mind and inner joy."

Noble Suggestion-

"Let this dictum of nature be enshrined in your mind that all objects are perishable and intransient. The worldly prosperity and glory are superficial and shortlived. You will have to definitely die, someday. At present you cannot run away from death. Your material gains will not follow you. Look at the world and you will understand the point. You will depart all alone. Pious and peaceful death opens the portals of heaven and happiness. Equanimous departure is attained by those whose entire life is noble, benevolent, compassionate and virtuous. Get yourself ready to face death with no attachment for worldly objects. Real glory lies in death with equanimity and unperturbed peace."

"Devote some time for introspection. Be introvert and think about yourself and its intrinsic Divine attributes. Make a resolve that you will earnestly strain every nerve to control your carnal cravings. You need not be a slave of lust and senses. You are the master of your destiny. Why do you foolishly hold that you are a toy of the fickle fortune. Oh! aspirant for salvation; arise, awake, be ready and fight against the forces of evil and temptations. Take courage to control and curtail your requirements as far as possible. Just have a look at a nude Jain ascetic, who has renounced house, wealth and other worldly things and who does not even care for his meals and compare yourself with the noble saint and counsel with yourself as to who enjoys real peace and tranquillity and why?"

Essence of Teaching

"Master this golden rule that all types of miseries spring up from Himsa-injury or violence. The bliss of beatitude can be attained by one who practises Ahimsa-non-injury by thought, word or deed towards all beings. Every thing is within your reach. You can attain the status of Godhood through your own noble efforts, life of self-reliance, self control and self-denial. Have courage and sincerely endevour for spiritual advancement. You will soon attain your Godhood". The Divine Sermon Lasted for six 'ghadis'-two hours and four and twenty minutes. Those present in the Samavasaran (The hall of audience) felt as if they had drunk delicious and invigorating ambrosia. Several persons had taken vows, even the subhuman beings-animals took vows according to their capacity and capability. The celestial beings under the grip of uncontrollable desires could not take any vow, but they developed firm faith in the Teachings of the omniscient Lord Jina and were inspired to perform worship of the Lord with deep devotion, which is indispensable for Moksha and self-purification.

Noteworthy Point-

At Vipulgiri Shrenika Mahamandilika King known as Bimbasar Maharaj, the ruler of Magadha was the head of the lay-disciples and Saint Gautama was the chief of the assemblage of Shramanas-saints. The conversion of the inimical brahmin, the doyen of scholars and an opponent of Jainism to a nude devotee of God Mahavira was the object of great attraction and admiration for his superbspiritual and intellectual attainments. This fact exposes the hollowness of the canard of perpetual bitterness and animosity between the Shramanas and Brahmans. This shows that in ancient India the Shramanas and Brahmans had cordial relations.

5. Tour for universal good-

The Divine discourses were imparted by the Omnisceint Lord four times in twenty-four hours. The Lord moved with his Samavsharana in many parts of the world to establish the rationality and utility of the doctrine of universal love, compassion and harmony. The effect of teaching was marvellous, since Mahavira Bhagwan was blessed with Sarvagyata-Omniscience. He was able to present the complete and correct picture of Reality and Truth and the real cause of conflicting and contradictiory approaches of eminent thinkers, scholars, seers and philosophers. By the magic wand of his Syadvad doctrine-the philosophy of harmonious and coordinating approach to reality, he was able to pave the way for intellectual amity and concord.

His unfolding of the intricacies of material karma and its influence upon the empirical self etc. are marvellous.

What is a karma? How does it work in this world? All these approaches are worthy of deep study by our scholars and philosophers.

Scientific Exposition of Reality

The teachings of the omniscient Lord are scientific, rational and convincing to the brain and the heart. In fact Jainism is the science of life and liberation. It is the science of sciences. Dr. Hermann Jacobi had rightly observed, "The theory of Karma is the key-stone of the Jain system."

Sacred Jain literature

The Head of the saints called Gautama Ganadhara had wonderful memory and faculty of retention. He remembered the whole sermon of the World Teacher and he had recorded it in four major divisons, called Anuyogas.

The first division Prathamanuyoga deals with the history and biography of the great personages of the world i.e. the 24th Tirthankaras, the 12 Chakravarties, the 9 Narayanas, the 9 Prati Narayanas and the 9 Balabhadras called 63 Shalakapurusha.

The Karnanuyoga explains about the cosmology and the universe etc. The Charnanuyoga deals with the code of conduct for laymen and for ascetics.

The fourth is Dravyanuyoga, which deals with substances-the soul, the non-soul etc. It deals with philosophy and spiritualism.

These four subdivisions are in fact the four Vedas of the Shramanic Sacred Jain literature. In reality Veda means the repository of supreme learning and erudition.

Twelve Sub divisons of Canonical Scriptures

The sacred Jain literature is also divided into twelve Angas. The Acharanga comprises of complete explanation and exposition of the rules of conduct for ascetics.

The second scripture Sutrakritanga deals with religious rites along with one-sided views. It has 23 chapters.

The last chapter is called Nalandadhi-kara, which deals with the luminous bodies like stars and stellar divinities. It gives us an idea why the University of ancient India In Bihar was named Nalanda. A university is in fact the light-house of learning. This gives one a clue to the point that during the period of Mahavira and also after him Nalanda might also have been a Jain centre of learning.

The third Sthana-anga deals with sthanas or numerical point of view in considering the Jiva, matter and other objects.

The fourth Samavayanga, gives an account of common points in different substances.

The fifth Vyakhayapragpti-anga records 60,000 questions asked to the Omniscient Lord along with their answers.

The sixth 'Gyatri-dharma-kathaanga' explains about nine categories as well as replies given to the questions of Gandhara.

The seventh is 'Upaskadhyayananga' which elaborately explains the code of conduct for householders.

Antakritdasanga, the eighth deals with the biographies of ten saints who got salvation after undergoing heavy sufferings.

The ninth anga (Part) is Anuttaropa-padikadasha-anga, gives an account of the ascetics, who were reborn in the five supreme heavens.

The tenth anga 'Prashna-vyakaranaanga' gives instructions about questions relating to present, past and future gain and loss, life and death etc. It also furnishes the account of four kinds of narrations like Akshepani; Vikhshepani, Samvejini & Nirvejini.

The eleventh 'Vipakasutra-anga' explains the bondage, operation and existence of karmas.

The twelfth is Drishtivada which is divided into Parikarma, Sutra, Prathamanuyoga, Purvagata, Chulika. The Purvagata sub-division is classified into fourteen purvas.

These angas and purvas are authoritative being the inter-pretations of the Word of the Omniscient God. They are according to poet Jinasenacharya.

Most of the sacred ancient original Jain literature is lost or forgotten. A small fraction of the teachings of the Lord is availbale, but it contains priceless and most precious matter and provides valuable material for scholars of comparative religion and men of erudition.

The sermons of the Lord mainly expounded the path of salvation. The Divine discourses death with history, ethics, philosophy, cosmology and all branches of learning.

6- Central Truth

The central teaching was that the wandering soul should have right knowledge and should adopt the life of non-injury and purity to attain Nirvana. The attachment for evanescent and alluring objects of the world and the physical body is the root cause of all miseries and transmigration. Right faith and renunciation pava the way to perfection, everlasting bliss and God-hood. One must have distinct idea and firm faith in his mind, that he is a soul endowed with consciousness and the non-soul is quite separate and distinct from him self. This unswerving faith in the soul-force is the first requisite for Nirvana.

Queries-

Once Gautama Ganadhar asked the world Teacher, "What is the most precious object in this world?"

The reply was, "Compassion, renunciation, the vows of non-injury, non-stealing, truth, chastity and possessionlessness are the most precious objects and amongst them the faculty of concentration upon the soul is the quintessence of all virtues. It is pure and supreme concentration (Shukla Dhyana) that burns the huge forest of karmas within 48 minutes (Antar-Muhurta).

Question-

"What is the way for supreme concentration?" Answer-"The first requisite is to have correct knowledge of the cognizant Self.

The Omniscient Lord said, : "The main characteristic of the soul is knowledge. It is bodysized. It is neither larger nor less than the dimensions of the body. (1) The soul is not the slave of senses. In fact it is the master of its destiny. It reaps the fruits of its actions in the course of transmigrations. It can carve out its own salvation. No outward agency can disturb this natural working.

the aspirant for Nirvana should be equipped with right belief regarding soul's inherent infinite power. and fauclty. He should adorn his heart with genuine compassion and love towards all living beings. Thou shall not kill, all living benigs should be his sacred motto and ideal without any reservation or limitation. He should cautiously move and work so that he may cause least possible injury to small creatures even.

Remarkable point-

In this context saint Gautama asked the Lord, "Holy Master, kindly tell me how should I move, how should I stand, how should I sit, how should I lie down, how should I eat, how should I speak, so that my soul may not contact sin ?"

The Lord said, "You should carefully move, carefully stand, carefully sit, carefully lie down, carefully eat, carefully speak, thus you will not contact sin".

This clearly indicates that In all walks of life one should not be indolent or sluggard, but he should vigilantly act in such a way that the golden principle of non-injury and universal love may not be violated unnecessarily. In the light of this sublime ideal, the aspirant is ordained to take only vegetarian diet during the day time, for in the night innumerable insects are killed along with the meals. Due to the absence of sun-light small insects are born. He should not drink unfiltered water, which contains small insects; hence the devotee of Ahimsa is advised to drink water filtered through cloth. This ordinance is now corroborated by science. through such code of conduct the ideal of universal brotherhood is translated into action. It does not remain a mere talk. The life of compassion must be adorned with control over senses. The fickle senses distract and disturb the tranquillity of mind and the purity of heart.

This sense-control should be followed by renunciation. All worldly belongings including the apparel must be abandoned, otherwise the wind of attachment will definitely disturb the serenity of mind and retard your spiritual progress. The psychic disturbing factors like anger, vanity, crookedness of mind, avarice, hatred and the like are to be carefully warded off. The aspirant thus equipped will be able to march on the arduous path of supreme concentration leading to eternal bliss.

Advice for the Wise-

Suppose there is a boat with holes therein and water flows into it. The wise person repairs the holes and removes the accumulated water, thus the boat does not sink; likewise the boat of life must be checked and the inlets wherefrom impurities enter and contaminate the soul should be stopped. Bodily activitiy, the vocal activity and thought activity cause vibration in the soul and very small infinite molecules are attacted by the soul and the karmic molecules captivate it after the fusion of soul and matter. This state of fusion is known as bondage. The soul and karmas are blended together.

Question-

What are the causes of bondage?

Answer-

Wrong belief, non-abstinence, negligence, passions and vibrations of the soul due to physical vocal or mental activities are the causes of bondage.

Belief in things as they really exist is right faith, the reverse of right belief is wrong faith. Abandonment of injury, untruth, stealing, unchastity and attachment for objects of the universe constitute abstinence. The opposite of this way of life is non-abstinence. Negligence consists of tardiness, indolence and carelessness in the observance of sacred vows, noble deeds and scriptural injunctions.

The passions are the primary sources of mental impurity and bondage. Just as the gastric fluid in the stomach absorbs the food, in the like manner the self attracts karmas according to the virulent, mild or moderate form of the passions. Due to the fruition of karmas the self is imbued with passions.

The bondage of the self with matter is beginningless. Just as the mixture of several object in a vessel produces intoxicating liquor, so also matter mixed up with the empirical self is transformed into karmas. The matter which assumes the form of karmas is the real hindrance in the path of soul's attainment of perfection and intrinsic Divinity of Siddha-hood. The rise and fall of the mundane soul depend upon its auspicious or inauspicious karmas, which are material.

Necessary Details Regarding Bondage-

It is to be borne in mind that excessive infliction of pain and suffering to living beings and extreme attachment are the causes of the influx of inauspicious karma, which leads to the life in the infernal region i.e. hell, where the wicked souls undergo indescribable sufferings for innumerable years. The heinous and harrowing cruelities perpetrated by hunting innocent, mute, helpless and poor animals, eating the flesh of the butchered animals, leading dissolute and licentious life of lust and corruption and similar actions are the causes of rebirth in hell. Alas; the wicked and callous heart does not remember this simple point due to infatuation and lust.

The life of treachery and deceitful disposition causes the rebirth as an animal, where the fraudulent person suffers indescribable agonies.

Modesty, noble frame of mind, contented life with few necessary objects, compassionate living and slight passions etc. lead to human form. The life of self-restraint, sense control, observance of austerities, noble deeds, peaceful and pious conduct lead to rebirth as celestial being.

Scientific clarification-

The omniscient Lord's discourses clarified the point, that the Supreme Being or pure and perfect soul has neither direct or indirect hand in the working of the universe or fashioning of the destiny of the living bings. The karmic forces constitute an important and potent factor to present variegated, amazing changes and shows on the world stage. Like creates like. An iron ring cannot be created out gold. Likewise the imperfect soul cannot be the handiwork of a blissfull, perfect and omniscient Being. People, unable to grasp the working of the karmas, erroneously put the burden upon the perfect, pure and liberated souls. If the clear stream of reason has not lost its way into the dreary desert of dead-habits, the solution of worldly working through the media of material karmic forces would receive due attention of the right thinking, impartial and judicious people.

Complete Truth-

It is universally acknowledged that the world teacher dealt with the philosophy of 'Live, let live and help others to live', and also brought about intellectual understanding through the Syadvada doctrine or philosophy of stand-points The sermons which were delivered by the Omniscient Lord for thirty years dealt with philosophy, history, geography, ethics, cosmology and all sciences and arts. Unfortunately major portion of the teachings is lost into oblivion and hundreds of thousands of Jain books were destroyed by the fury of bigoted fanatics who were opposed to this religion of the Sharmanas. The remaining Jain literature is still precious, valuable and conspicuous.

7- Nirvana

The world Teacher's Samavasharan-celestial pavilion moved over many parts of the world for 30 years and ultimately it came to Pavapuri in Bihar. On Kartika Sudi 13th, the thirteenth day of the bright half of Kartika, the Lord resorted to the supreme concentration for final liberation-Parinirvana. The Divaydhavani-the divine discourses came to a sudden stop. All the devotees understood this as an indication that the Lord is to leave his mortal coil soon and attain Siddhahood. All people inculding several kings, chieftains, eminent persons and great sages along with Devas, assembled there to have the last Darshan of the world Teacher, the Light Divine personified. It was the memorable dawn of Kartika Krishna Amavasya, the 14th day of the dark half of (October) Kartika, when Lord Mahavira destroyed the remaining non-destructive karmas by supreme concentration and got final liberation. He became free from the pangs of death and births for ever.

The body was left in the central part of the lake of Pavapuri, which was full of blooming fragrant lotuses. The last rites of the sacred body were performed by the Lord of celestials Saudhramendra. It is to be noted that the body of the liberated Lord was completely nude and without any attire, because He was Digambar before attaining Nirvana.

Solemn celebrations-

The occasion was most dignifiedly honoured and celebrated with great joy to commemorate the liberation of the World Teacher. During the night innumerable lamps were kindled as a token of homage and respect for the Great Lord who gave spiritual light of compassion and love to the entire world. Spiritual light was gone, therefore material light was symbolic of the Divine light.

This event took place 527 years before the birth of Christ. On the October of 1974 we enter into the year when 2500 years of Nirvan come to completion. Late Prime Minister Jawaharla Nehru on the sacred occasion of Mahavira Jayanti in New Delhi had observed "Our world is engulfed in horrifying circumstances. At this critical juncture it is our duty to remember the Teachings of Mahavira".

Siddhahood-

Lord Mahavira got final liberation from the tank of Pavapuri. The body left there was burnt in the fire by the lord of celestials, Saudharmendra. But what happened to the soul, which was the embodiment of consciousness?

The Jain sacred books throw light on this point in these words. The liberated soul destroyed Knowledge obscuring karma (Gyanavarniya Karma) and attained perfect knowledge or omniscience. He destroyed conation-obscuring (Darshana Varniya) karma; obstructive (Antaraya) karma, deluding (Mohaniya) karma; feeling (Vedaniya) karma; body-building (Nama) karma; age (Ayu) karma & family determining (Gotra) karma. He attained Infinite conation (Anant Darshan) infinite power (Anant Virya), Perfect right-belief (Samyakadarshan), Undisturbability (Avyavaghata), Extreme fineness (Sukshmatva), Interpenetrability (Avagahanatva) respectively.

Thus the liberated souls are free from eight kinds of karmas and are possessed of eight qualities. They are blissful, undefiled by karmic inflow, everlasting, having accomplished all that was to be accomplished. They reside over the summit of the universe. The above description contradicts the views of the Sadashiva school, which holds that the soul was never bound by karmas; the Samkhya philosophy, which holds that bondage and liberation are caused by Prakriti and Purusha has no hand in it; the Maskari school of thought, which holds that the liberated souls again return to the world; the Buddhists, who believe that every thing is transient therefore liberation is also transient, the Vaisheshiks and Naiyayikas, who believe that liberation results after the destruction of knowledge, happiness and other qualities of the soul; the Ishavara school which holds that God is always free and creates the world, and the Mandali who affirms that the liberated soul always goes on moving upward and infinitum.

Distinct Individuality-

It is worthy of note that the soul after salvation maintains its distinct individuality and it does not mixup with some universal soul or Brahma, e.g. There are several of lamps in a room; each lamp has its own light. There is similarity in the light, but the light of each lamp has its separate existence; in the like manner all liberated souls are blessed with intrinsic innumerable attributes; and so they are similar, but not same. They have independent existence.

Reality of Nirvana-

The student of comparative religion and philosophy will be surprised that Jain religious literature deals with the biographies of the liberated souls, the place, time and other important points which go to establish that the Salvation of perfect souls is not a matter of belief, conjecture or religious dogma, but it is a real fact. This is not the case with other systems of thought with respect to the attainment of Godhood or Salvation. Lord Mahavira's life shows the way to the bliss of beatiude and immortality.

We humbly pray the lord of compassion for real inner light, so that the boat of life of modern matter mad world may be saved from sinking into the sea of violence and hatred. All should try to drink deep the nectar of Ahimsa, which can only protect humanity at this critical juncture from universal annihilation. Tirthankara Mahavira's message is the real guide in this encircling gloom and anguish.

* * *

संसार के किसी भी धर्म ने अहिंसा की इतनी सूक्ष्म और व्यापक परिभाषा नहीं की है, जितनी जैनधर्म ने की है। उसने इसे विशेषरूप से मन, वचन, काय से आचरण में उतारने पर बल दिया है। अहिंसा का यह उदात्त सिद्धांत जब भी संसार में व्यवहार में आएगा तो निश्चय ही जैनधर्म का विशेष योगदान रहेगा और भगवान महावीर का नाम अहिंसा के अग्रदूत के रूप में लिया जायेगा। यदि किसी ने अहिंसा के सिद्धान्त को विकसित किया है तो वे महावीर हैं। इस पर विचार करें और इसे जीवन में उतारें।

-महात्मा गांधी (भारत)

भगवान महावीरः संक्षिप्त जीवन दर्शन

-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

लगभग 2600 वर्ष पूर्व नाथवंशीय राजा सिद्धार्थ बिहार प्रदेश के कुण्डलपुर में राज्य करते थे, उनकी रानी का नाम त्रिशला (प्रियकारिणी) था। कुण्डलपुर में अवस्थित नंद्यावर्त महल उनका निवास स्थान था। यह 7 मंजिला महल अत्यंत रमणीक था।

सिद्धार्थ के पिता का नाम राजा सर्वार्थ एवं माता का नाम श्रीमती था।

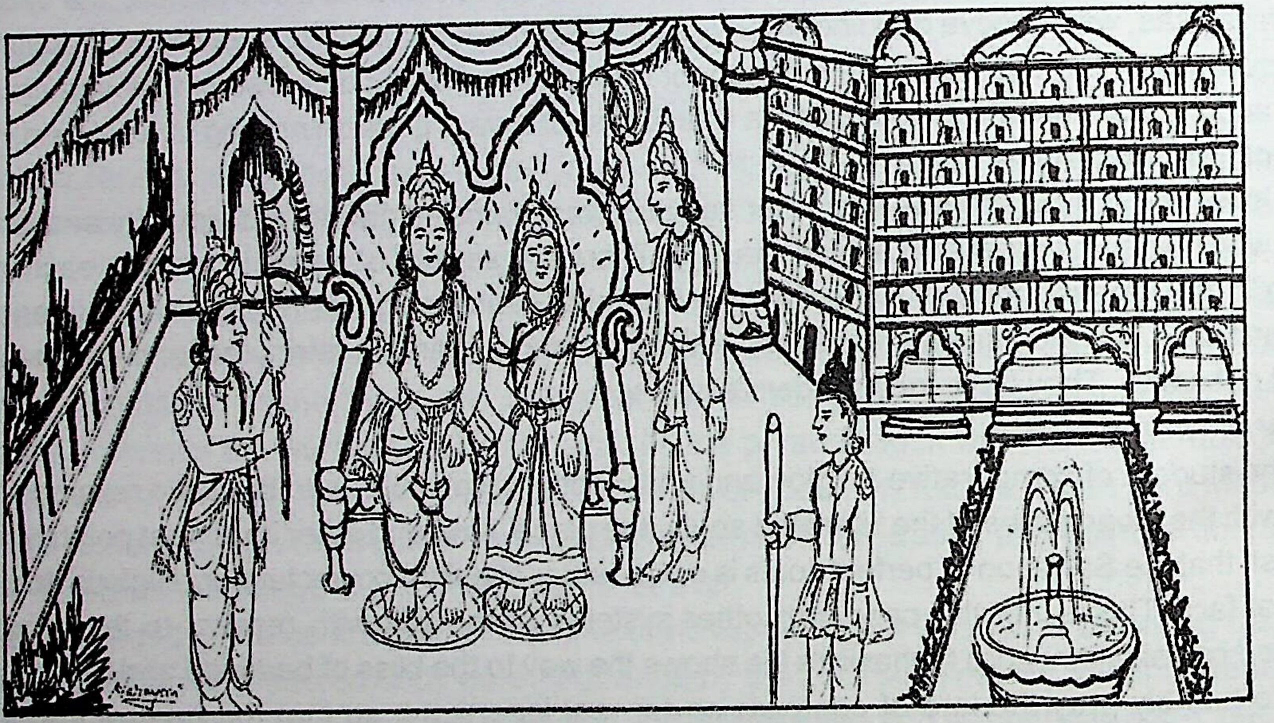

LIFE OF LORD MAHAVIRA

-Pragyashramni Aryika Chandnamati

About two thousand six hundred years ago, King Siddhartha of Nath Dynasty ruled at Kundalpur of Bihar state in India. The name of his wife was Trishala (Priyakarini).

Both of them lived at 7 storeyed **Nandyavarta Palace** of Kundalpur.

The name of the parents of Siddhartha was king Sarvartha & queen Shrimati.

एक बार महारानी त्रिशला ने रात्रि में क्रम से 16 स्वप्न देखे-ऐरावत हाथी, उत्तम बैल, सिंह, हाथियों द्वारा अभिषेक को प्राप्त होती हुई लक्ष्मी, दो मालाएँ, चन्द्रमा, उगता हुआ सूर्य, मछलियों का युगल, जल से भरे दो कलश, कमलों से युक्त सरोवर, समुद्र, सिंहासन, स्वर्ग से आता हुआ विमान, नागेन्द्र भवन, रत्नों की राशि और बिना धुएँ की अग्नि। प्रातःकाल महाराज सिद्धार्थ से स्वप्नों का फल पूछने पर उन्होंने अत्यन्त हर्षपूर्वक महारानी को बताया कि हे देवी! आप महान सौभाग्यशालिनी हैं क्योंकि आपके गर्भ में तीर्थंकर प्रभु का जीव अवतरित हुआ है। यह सुनकर महारानी प्रियकारिणी को अपार हर्ष हुआ।

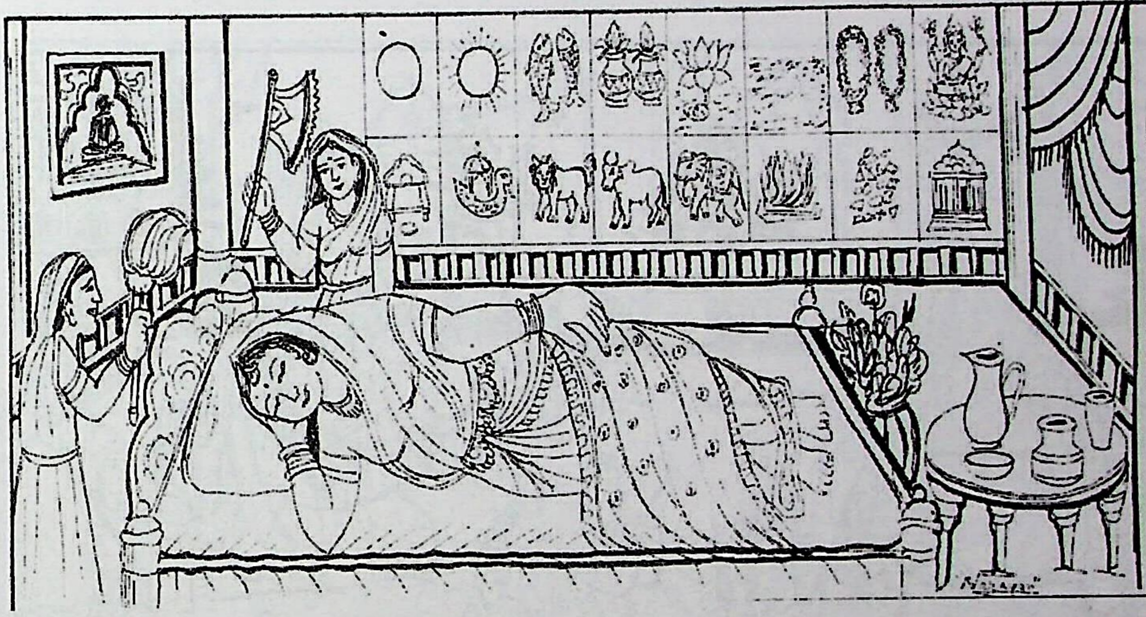

One night queen Trishala saw sixteen dreams serially-Aeravat elephant, Bull, Lion, Laxhmi (being anointed by elephants), A pair of garlands, Moon, Sun, A pair of fish, Two pitchers filled with water, Pond with lotuses, Sea, Throne, *Viman* coming from the heaven, *Nagendra bhawan*, A heap of jewels & Fire without smoke.

In the morning she asked her husband King Siddharth the meaning of her dreams. He told her with lot of happiness-

"O Devi Trishala! Yor are very lucky because the great soul of Lord Tirthankar has come in your womb."

Queen Trishala became very much delighted and returned to her palace with her divine lady attendants.

नव माह और सात दिन के उपरांत चैत्र शुक्ला तेरस की रात्रि में रानी त्रिशला ने सूर्य से भी अधिक तेजस्वी, तीन लोक के नाथ तीर्थंकर शिशु को जन्म दिया। तीर्थंकर भगवान के जन्म को जानकर सौधर्म इन्द्र अपने समस्त देव परिवार के साथ कुण्डलपुर आये, पुनः ऐरावत हाथी पर चढ़कर जिनशिशु को सुमेरु पर्वत पर ले गये। वहाँ इन्द्र ने जन्माभिषेकपूर्वक भगवान का जन्मकल्याणक महोत्सव सम्पन्न किया तथा उनके 'वीर' और 'वर्धमान' दो नाम रखे, पश्चात् कुण्डलपुर में आकर भी देवों द्वारा राजा सिद्धार्थ, रानी त्रिशला एवं कुण्डलपुरवासियों के मध्य भगवान का जन्मकल्याणक महोत्सव महान हर्ष एवं उल्लास के साथ मनाया।

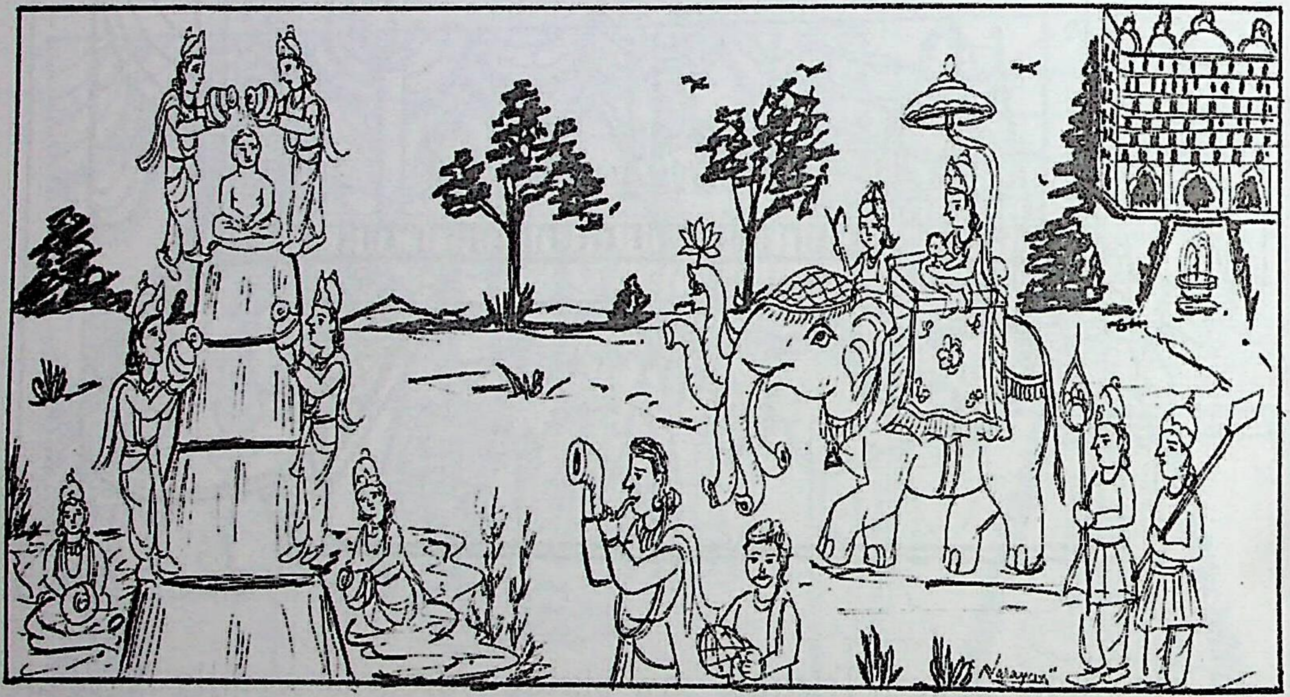

After nine months and seven days a son more lustrous than the Sun, was born to queen Trishala without any pain in the night of Chaitra Shukla 13. Knowing the birth of Lord Tirthankar, Saudharma Indra came to Kundalpur with his divine family from the heaven. He took the Tirthankar-child to Sumeru mountain on Aeravat elephant and with performing His birth anointment (ceremonial bathing) celebrated gracious *Janma Kalyanak Mahotsava*. At that time, Indra gave Him two names-**VEER & VARDHAMAN**. Later the same Mahotsava was celebrated at Kundalpur also with great zeal & happiness by the deities in the presence of King Siddharth & Queen Trishala.

एक बार नंद्यावर्त महल में शिशु वर्धमान पालने में झूल रहे थे। तभी संजय और विजय नाम के दो चारणऋद्धिधारी मुनि वहाँ पधारे। जिनशिशु को देखने मात्र से ही उनके मन में स्थित सूक्ष्म शंका का तत्क्षण ही समाधान हो गया, अतः महान प्रसन्नता से उन्होंने भगवान का नाम 'सन्मति' रखा।

शिशु वर्धमान इन्द्र द्वारा अंगूठे में रखे गये अमृत को चूसते हुए चंद्रमा की कलाओं के समान बढ़ने लगे और धीरे-धीरे घुटने के बल चल-चलकर अपनी तोतली बोली एवं बालचेष्टाओं से परिवार को खूब आनंदित करने लगे।

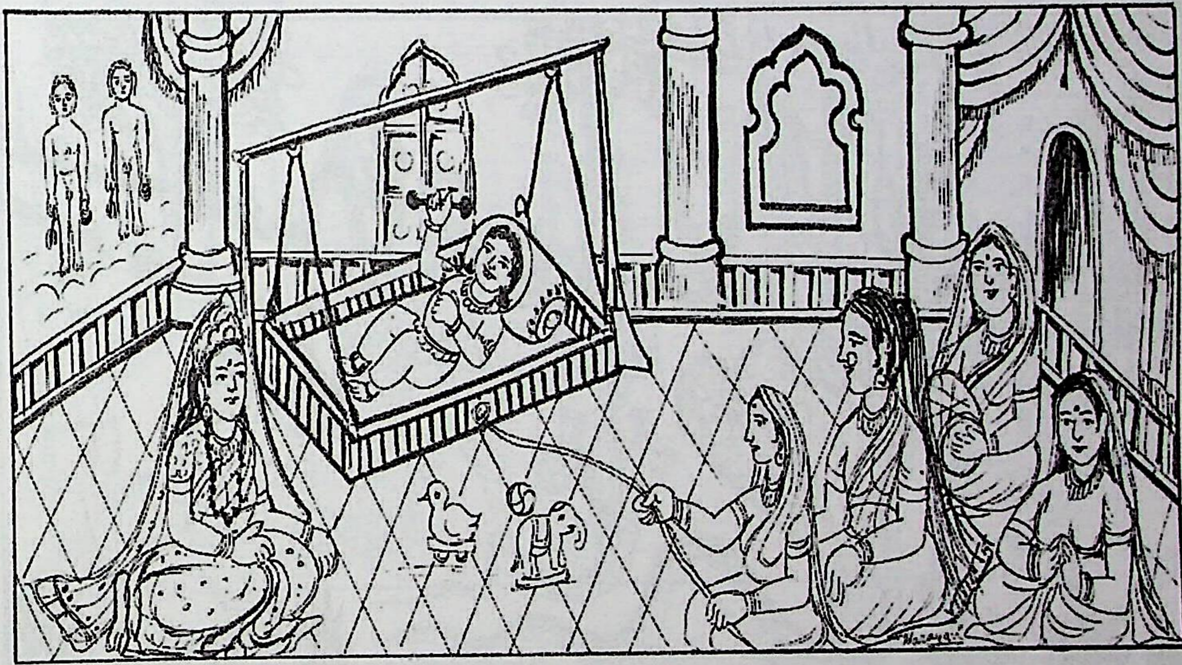

Once child Vardhaman was swinging in the cradle at Nandyavarta Palace. By chance, two great Digambar Jain Munis named Sanjay and Vijay came there and only by looking at the Tirthankar-child, the existing slight suspicion about some matter *(Tattva)* in their heart was at once cleared and so with great delight, they named Him as **SANMATI.**

Divine child Vardhaman was growing up with sucking the nectar, placed in His thumb by Indra. Both the parents and the whole family were very much delighted seeing the charming childish activities of the divine child.

एक दिन बालक वर्धमान अपने बहुत से देव मित्रों के साथ नंद्यावर्त महल के बगीचे में खेल रहे थे। तभी उनकी बहादुरी की परीक्षा लेने हेतु स्वर्ग से संगम नाम का एक देव विशालकाय सर्प का रूप बनाकर वहाँ आया। सभी बच्चें डरकर इधर-उधर भागने लगे किन्तु बालक वर्धमान किंचित् भी भयभीत नहीं हुए। महान वीरता का परिचय देते हुए वह उस सर्प के फण पर माँ की गोदी की भाँति खेलने लगे। तब संगम देव ने अपना असली रूप प्रगट कर दिया और वर्धमान के बल एवं धैर्य की बारम्बार प्रशंसा करते हुए उनका नाम 'महावीर' रखा।

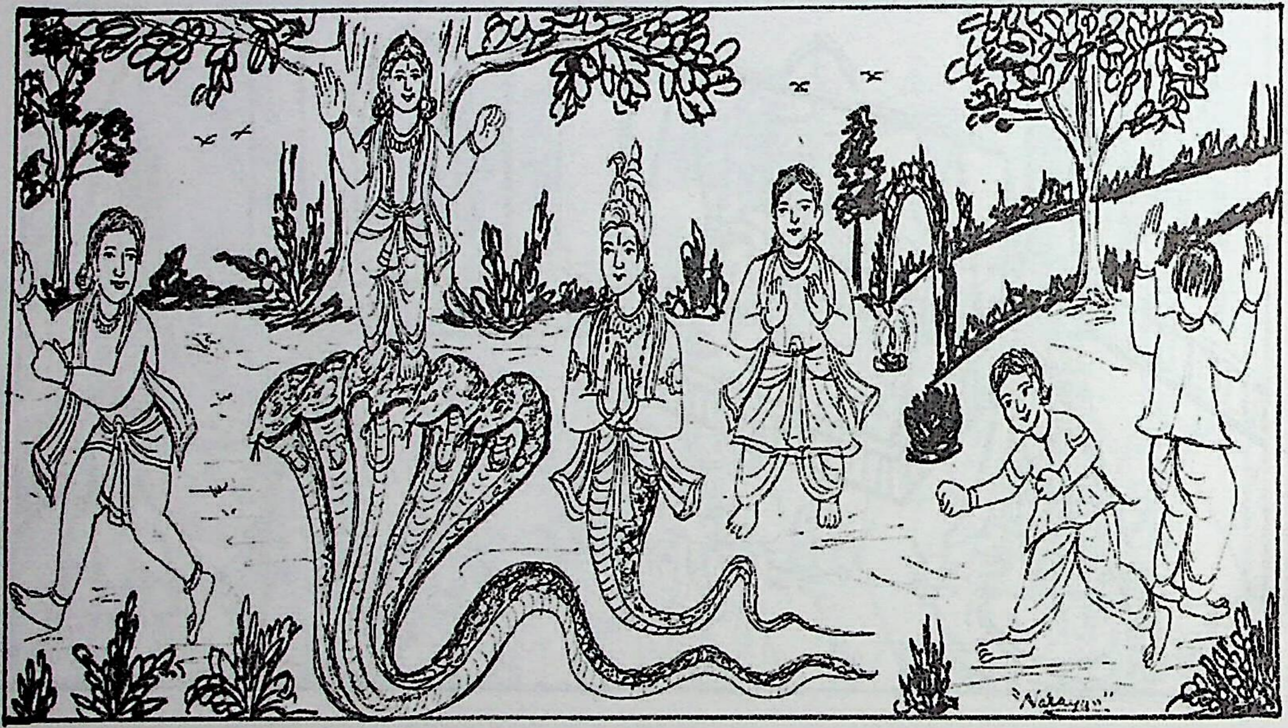

One day Tirthankar child Vardhaman was playing in the garden of Nandyavarta Palace with his divine friends. Listening about his bravery & courage a deity named Sangam came there from the heaven to test His qualities in the form of a large ferocious cobra. All the children started running here & there, but Vardhaman was not disturbed at all. Showing great courage, he started playing on the hood of the snake like the lap of mother. Then S1 angam dev appeared in his real form and appreciating the strength & patience of Vardhaman again & again, named Him as **'MAHAVIRA'**.

धीरे-धीरे महावीर बड़े होने लगे। उनके लिए सदैव स्वर्ग से ही भोजन, वस्त्र एवं आभूषण आदि आते थे। उन्होंने कभी भी अपने घर का भोजन नहीं किया क्योंकि सभी तीर्थंकरों के लिए यही नियम है कि वे स्वर्ग का दिव्य भोजन ही करते हैं।

युवावस्था को प्राप्त करने पर एक दिन महारानी त्रिशला ने उन्हें विवाह करने के लिए समझाया परन्तु युवराज महावीर ने विवाह न करके जैनेश्वरी दीक्षा लेकर मुक्तिरूपी कन्या का वरण करने का अपना संकल्प माँ को बताया, जिससे माता त्रिशला बहुत दुःखी हुईं किन्तु महावीर ने उन्हें समझा-बुझा कर शांत किया और देवों द्वारा लाई पालकी में बैठकर दीक्षा लेने हेतु वन में चले गये।

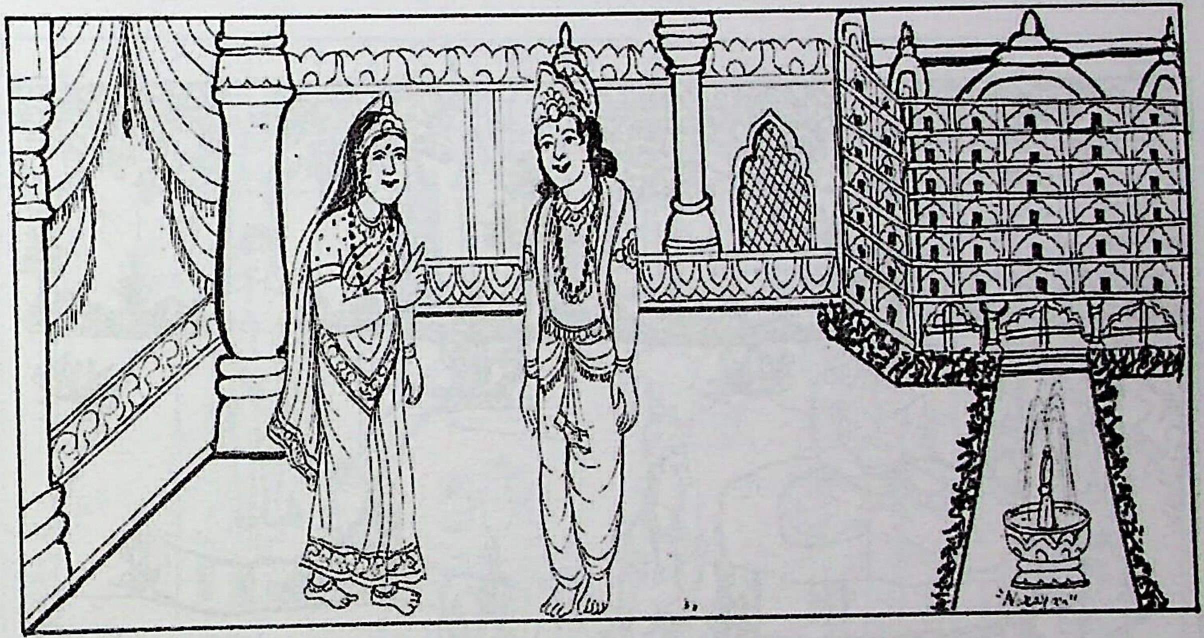

Vardhaman was growing up gradually. He had always eaten the food of *Kalpvrikshas* of heaven, so he did not eat the food of his house any time. He also used to wear the clothes & jewellery brought from the heaven.

Vardhaman entered the young age from Childhood and passed thirty years. One day queen Trishala asked Him to give consent for the marriage but the Prince Mahavira expressed His keen intention to take *Jaineshwari Deeksha* to get free from the worldly transmigration at the place of being married with some girl. Mother Trishala became very anxious to listen to this but somehow Mahavira pacified her. Later He went to the forest to take *Deeksha* being seated in *Palki*.

30 वर्ष की अवस्था में भगवान ने मगशिर कृष्णा दशमी को कुण्डलपुर के निकट मनोहरवन में सालवृक्ष के नीचे पंचमुष्टि केशलोंच करके जैनेश्वरी दीक्षा धारण कर ली। देवों ने आकर भगवान का दीक्षाकल्याणक महोत्सव मनाया। दो दिन का योग धारण करके महामुनि महावीर अविचल खड़े हो गये।

इन्द्र ने उनके पवित्र केशों को ले जाकर क्षीरसागर में विसर्जित कर दिया और प्रतिदिन अपने कर्तव्य का पालन करते हुए वे किंकररूप में भगवान की सेवा में सदा तत्पर रहने लगे।

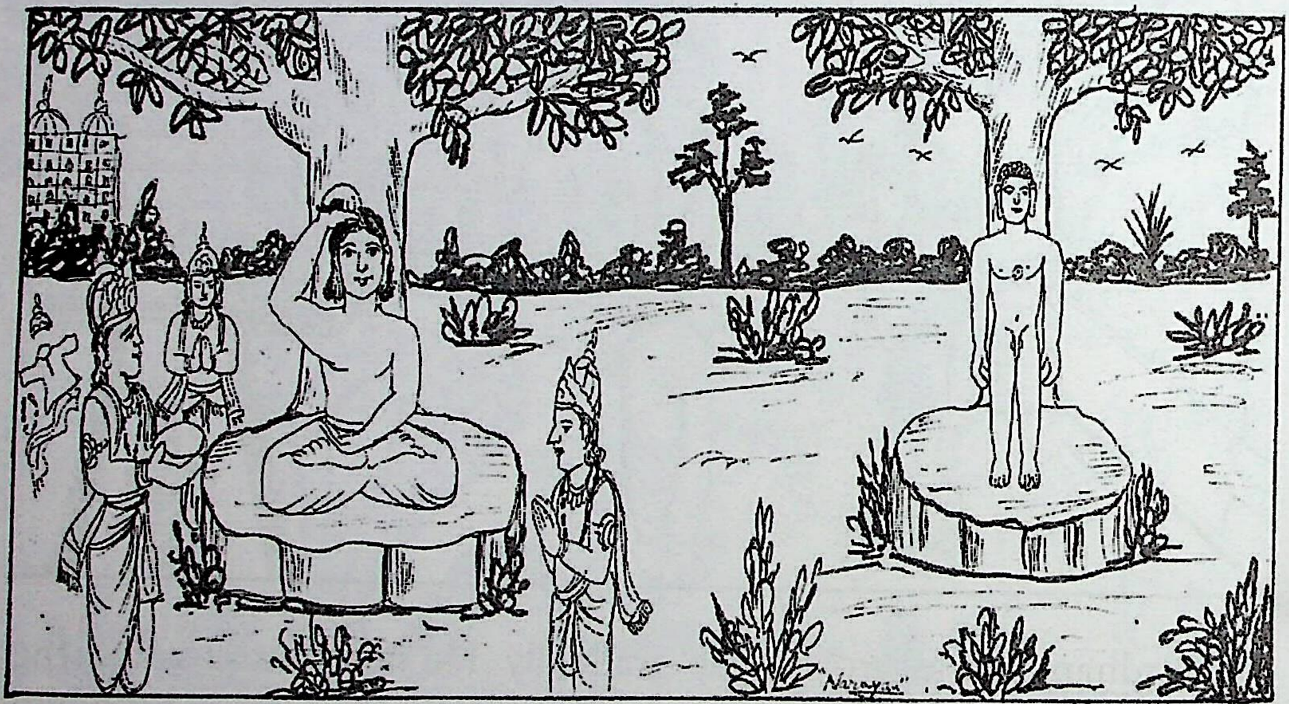

At the age of 30 years Bhagwan took *Jaineshwari Deeksha* below the *Sal* tree at Manohar forest near Kundalpur on Magshir Krishna Dashmi with performing *Panchmushti Keshlonch* (fist-plucking of own hairs in 5 times). Deities came and celebrated the *Deekshakalyanak Mahotsava* of Bhagwan. Mahamuni Mahavira stood up in meditation for 2 days.

Indra took away His hairs & consigned them to the water of *Ksheer Sagar*. He used to attend Bhagwan like a servant daily taking it as his holy duty.

दीक्षा के दो दिन के पश्चात् भगवान प्रथम पारणा के लिए निकले। कूल ग्राम के राजा कूल (अपरनाम वकुल) के यहाँ उनका प्रथम पड़गाहन हुआ। महामुनि को अत्यन्त प्रफुल्लित भाव से राजा एवं रानी ने खीर का आहार प्रदान किया। देवताओं ने महामुनि महावीर के इस प्रथम आहार पर आकाश से रत्न, पुष्प आदि पंचाश्चर्य की वृष्टि की।

पुनः महावीर स्वामी मौनपूर्वक विचरण करते हुए सबको जैन मुनि की चर्या से परिचित कराने लगे। दिगम्बर जैन परम्परानुसार तीर्थंकर भगवान दीक्षा के बाद मौन ही रहते हैं, पुनः केवलज्ञान होने पर ही उनकी दिव्यध्वनि खिरती है।

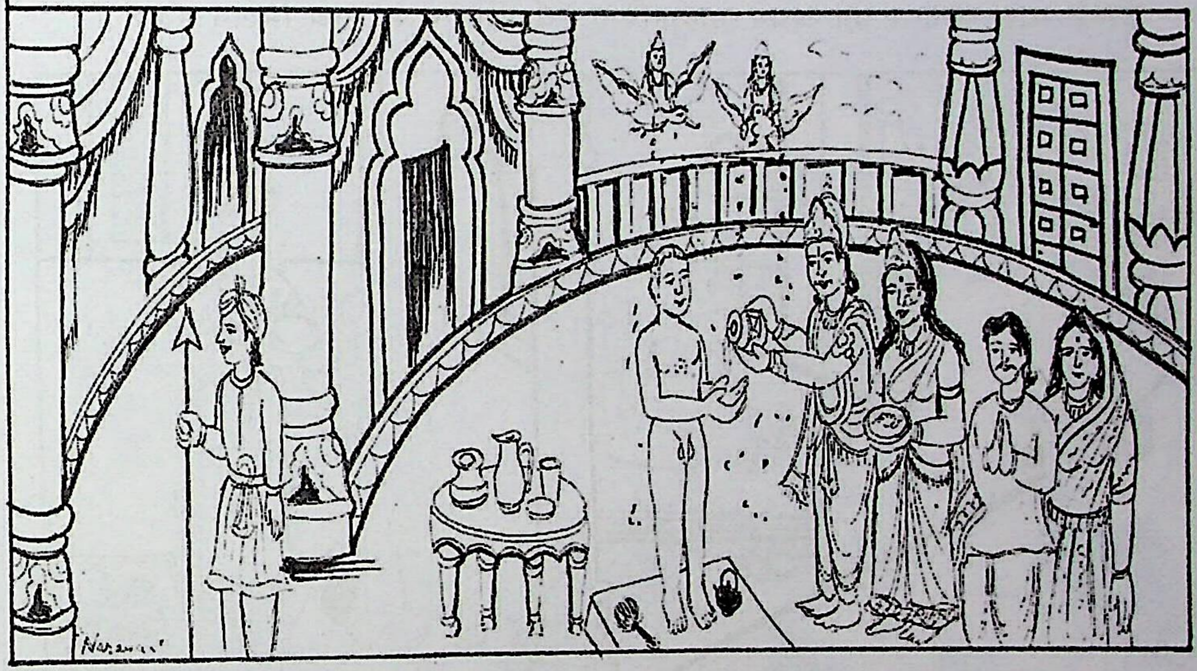

After two days of taking Deeksha, Tirthankar Mahamuni Mahavira went for taking the first *Ahar* (meals). The king Kool (other name-Vakul) of Kool village had the fortune of giving the first *Ahar* to Mahamuni Mahavira. He along with his wife gave *Kheer* (delicious milk food) to Mahamuni with great happiness. *Kuber* (the deity of wealth) showered five wonderful things like jewels, flowers etc. from the sky at this occasion.

According to the Digamber Jain tradition, Tirthankar Bhagwan keep silence after taking *Deeksha* and His *Divya-Dhvani* becomes available only after getting *Kevalgyan* (enlightenment).

दीक्षा के बाद विहार करते हुए एक बार भगवान कौशाम्बी नगरी में पधारे जहाँ महारानी त्रिशला (महावीर की माता) की सबसे छोटी बहन महासती चन्दना को एक सेठानी सुभद्रा ने सिर मुंडवा कर बेड़ियों में जकड़कर रखा था। महामुनि को आया देख चन्दना के मन में उन्हें आहार देने की उत्कट अभिलाषा जागृत हो गई। महावीर के पधारते ही चन्दना की समस्त बेड़ियाँ टूट गईं, सिर पर सुन्दर केश आ गये और शरीर सुन्दर वस्त्र-आभूषणों से अलंकृत हो गया, मिट्टी का सकोरा सोने का पात्र बन गया और कोदों का भात मीठी खीर के रूप में बदल गया। चंदना ने अत्यन्त भक्तिभावपूर्वक महामुनि को आहार दान दिया, पुनः स्वर्ग से पंचाश्चर्यों की वृष्टि होने लगी।

उसके बाद चन्दना का अपने माता-पिता एवं परिवार के साथ मिलन हुआ।

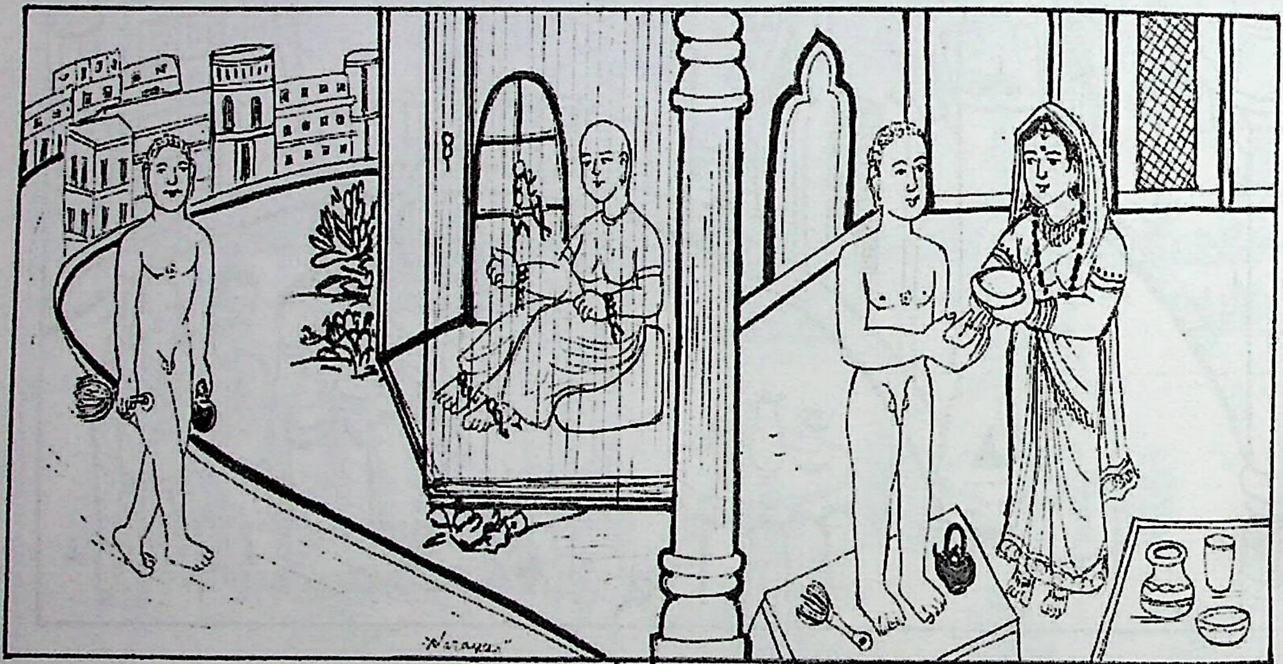

Once Bhagwan came to Kaushambi, where Mahasati Chandna, the younger sister of queen Trishala (the mother of Mahavira) was prisoned by Sethani Subhadra. Seeing Mahamuni Mahavira, Chandna developed the keen desire to give *Ahar* to Him. As soon as Mahavira came to her, all her shackles were broken, beautiful hairs developed on her tonsured head, attractive garments & jewellery beautified her body, her earthen pot was converted into the golden bowl and the low quality rice (*Kodo*) became delicious milk food (*Kheer*) by the impact of her dedication for Mahavira.

Chandna gave *Ahar* to Mahamuni with full devotion and again the deities showered jewels, flowers etc. from the heaven.

एक बार महामुनि महावीर उज्जयिनी नगरी के श्मशान घाट (अतिमुक्तक वन) में ध्यान लीन थे। तभी एक रुद्र वहाँ आया और उन पर भयंकर उपसर्ग करने लगा परन्तु धीर-वीर महामुनि अपने ध्यान से किंचित् भी विचलित नहीं हुए। उनके इस साहस और धैर्य को देखकर रुद्र अत्यन्त प्रभावित हुआ और अनेक प्रकार से उनकी पूजा करके उन्हें 'महति महावीर' नाम प्रदान किया। व्यवहार में महावीर का यह नाम 'अतिवीर' के नाम से प्रचलित है।

इस प्रकार भगवान महावीर के वीर, वर्धमान, सन्मति, महावीर और अतिवीर ये पाँच नाम प्रसिद्ध हुए हैं।

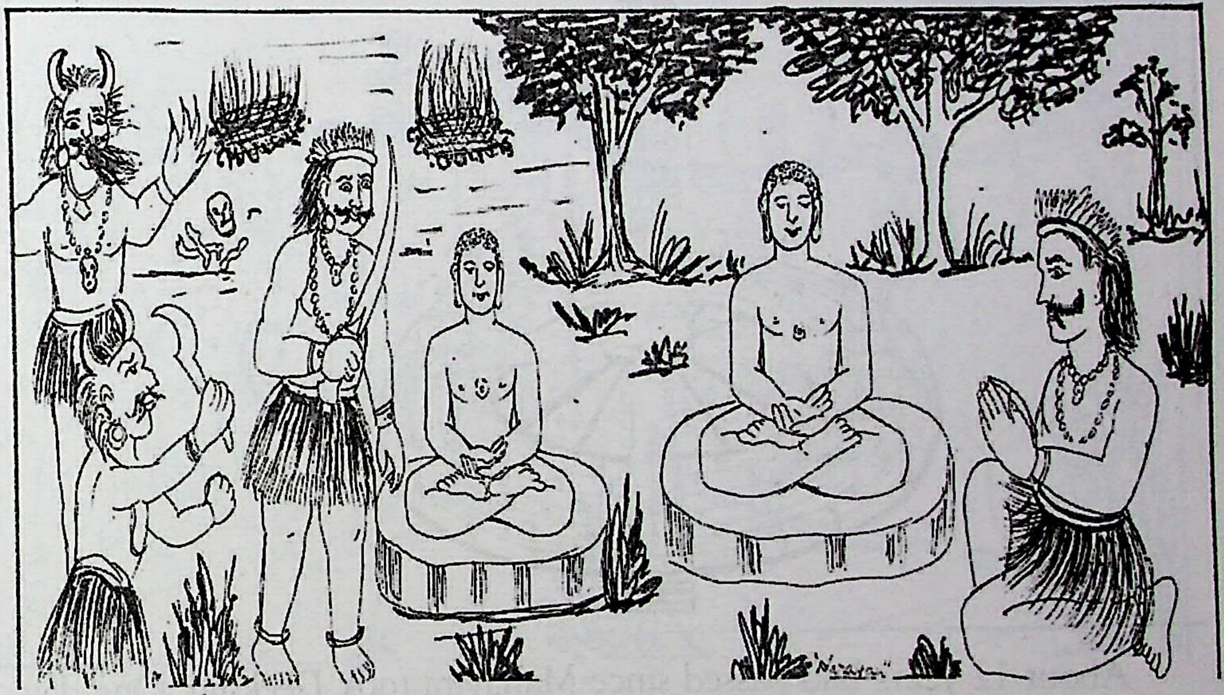

Once Mahamuni Mahavira was meditating in the cremation ground (Atimuktak forest) of Ujjaini Nagari. A *Rudra* came there and started teasing Him in various ways but courageous Mahavira was not perturbed at all in His meditation.

The *Rudra* was very much impressed by the courage and patience of Mahavira and after worshipping Him, he gave Him the name **MAHATI MAHAVIRA**. Usually, Mahavira is known by the name of **Ativira** also.

Thus the five famous names of Lord Mahavira are—**Veer, Vardhaman, Sanmati, Mahavira & Ativira.**

महावीर को तपस्या करते हुए लगभग 12 वर्ष व्यतीत हो गये। एक दिन वह बिहार प्रान्त में (कुण्डलपुर के पास) जम्भिृका गाँव के निकट ऋजुकूला नदी के तट पर गहरे ध्यान में लीन थे। ध्यान की परमविशुद्धि से उन्होंने चारों घातिया कर्मों का नाश करके केवलज्ञान को प्राप्त कर लिया। यह वैशाख शुक्ला दशमी का दिन था जब महावीर अरिहंत परमेष्ठी बन गये।

इन्द्र ने तत्क्षण ही कुबेर को समवसरण बनाने की आज्ञा दी। भगवान की दिव्य प्रवचन सभा 'समवसरण' कहलाती है, जिसकी 12 सभाओं में बैठकर मनुष्य, देवता, पशु-पक्षी आदि सभी भगवान की ॐकारमयी दिव्यध्वनि का पान करते हैं। यह समवसरण पृथ्वी से 20,000 (बीस हजार) हाथ ऊपर अधर आकाश में रहता है।

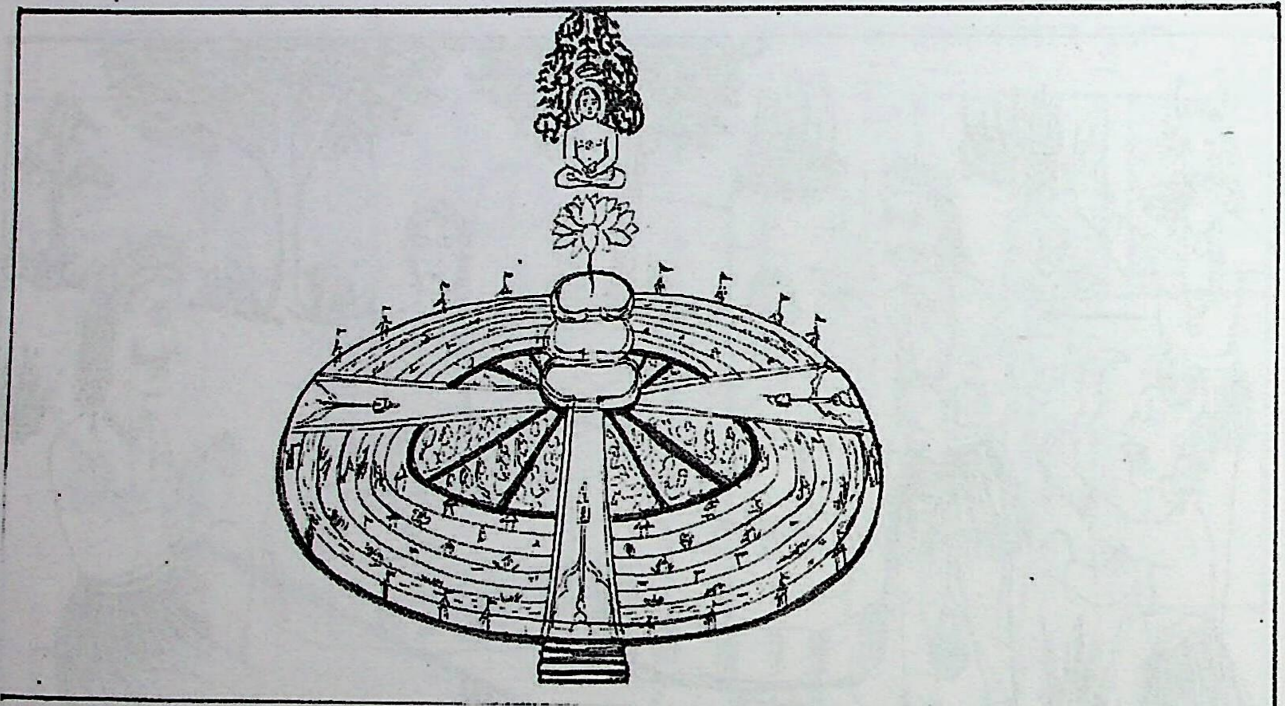

About 12 years had passed since Mahavira took ***Deeksha***. One day He was immersed in deep meditation at the bank of Rijukula river at the village named Jambhrika (near Kundalpur). His concentration became so pious and acute that He destroyed His four *Ghati Karmas* and attained Enlightenment i-e. *Kevalgyan*. It was the day of Vaishakh Shukla Dashmi. Mahavira became **ARIHANT PERMESHTHI.**

Indra ordered Kuber to form *Samavsaran*, the divine assembly of Tirthankar Bhagwan. Innumerable beings–Human, Deities, Animals-birds sit in 12 *Sabhas* (divisions) of *Samavsaran* and listen to the *Omkarmayi Divya-Dhvani* (Sermons or Preachings in divine voice) of Bhagwan. *Samavsaran* remains in the midsky at the height of 20,000 hands above the earth.

भगवान महावीर को केवलज्ञान उत्पन्न हुए 66 दिन बीत गये परन्तु उनकी दिव्यध्वनि नहीं खिरी। सौधर्मइन्द्र ने विचार किया कि गणधर का अभाव ही इसका कारण है। इन्द्र ब्राह्मण का वेश धरकर ब्राह्मण गाँव के इन्द्रभूति गौतम नामक प्रकाण्ड ज्ञानी ब्राह्मण के पास उनके आश्रम में आया एवं युक्तिपूर्वक उनसे कुछ प्रश्न पूछा, गौतम उन प्रश्नों का उत्तर नहीं दे पाये, अतः बोले कि मैं तुमसे इस विषय में बात न करके तुम्हारे गुरु महावीर के पास चलकर ही वाद-विवाद करूँगा। इस प्रकार इन्द्र उन्हें भगवान महावीर के समवसरण में ले आये।

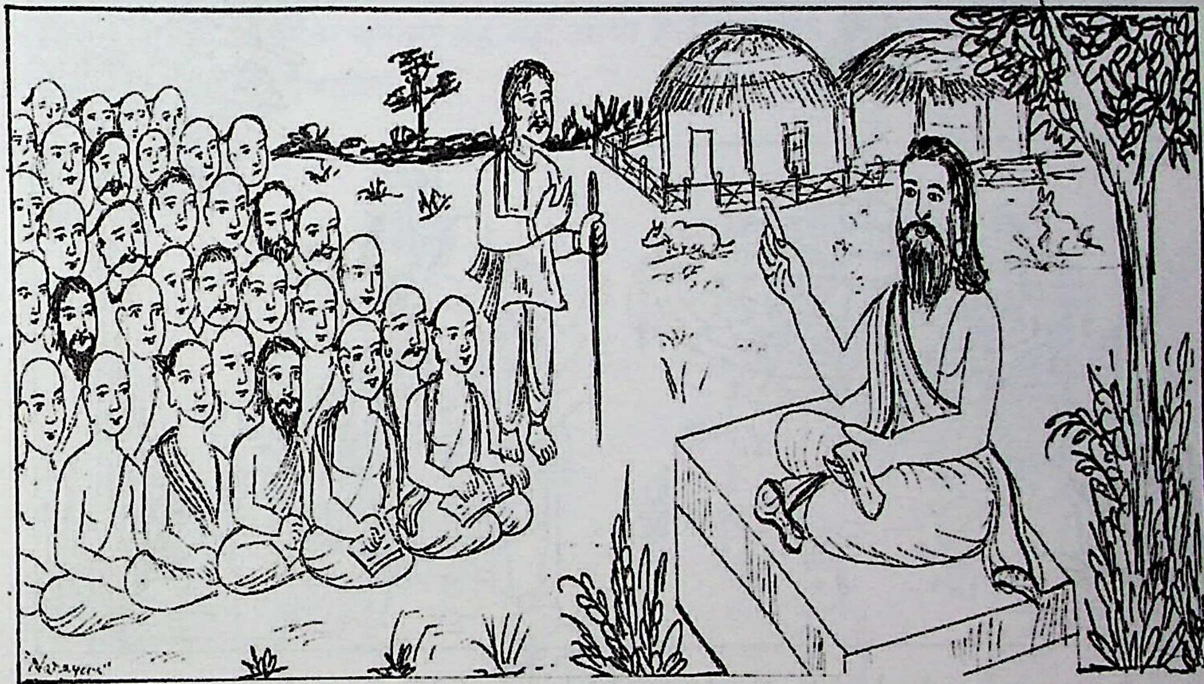

Days were passing since Tirthankar Mahavira attained *Kevalgyan* but to the surprise of all, His *Divya-Dhvani* remained unavailable. After thinking a lot, Saudharma Indra came to the conclusion that the reason was the lack of *Gandhar.* He went to the *Ashram* of a great Brahman scholar named Indrabhuti Gautam of Brahman village and trickfully asked him some question. Gautam could not reply, so he said that I will not give reply to you but will argue with your *Guru* only, thus Indra persuaded him trickfully to come to Lord Mahavira once.

जैसे ही इन्द्रभूति ब्राह्मण अपने 500 शिष्यों के साथ राजगृही के विपुलाचल पर्वत पर स्थित भगवान के समवसरण में पहुँचा, उसका सारा मान भंग हो गया और वह तुरंत जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहण कर महावीर के प्रथम गणधर बन गये। उसी समय केवलज्ञान होने के 66 दिन बाद श्रावण कृष्णा एकम के दिन भगवान महावीर की प्रथम दिव्यध्वनि खिरी और तब से ही यह दिवस 'वीरशासन जयंती दिवस' के रूप में प्रसिद्ध हो गया। भगवान की दिव्यध्वनि 718 भाषाओं में खिरती थी जिससे प्रत्येक प्राणी अपनी-अपनी भाषा में भगवान की देशना ग्रहण कर लेते थे। इन्द्रभूति गौतम गणधर ने भगवान की दिव्यध्वनि को द्वादशांगरूप में निबद्ध किया।

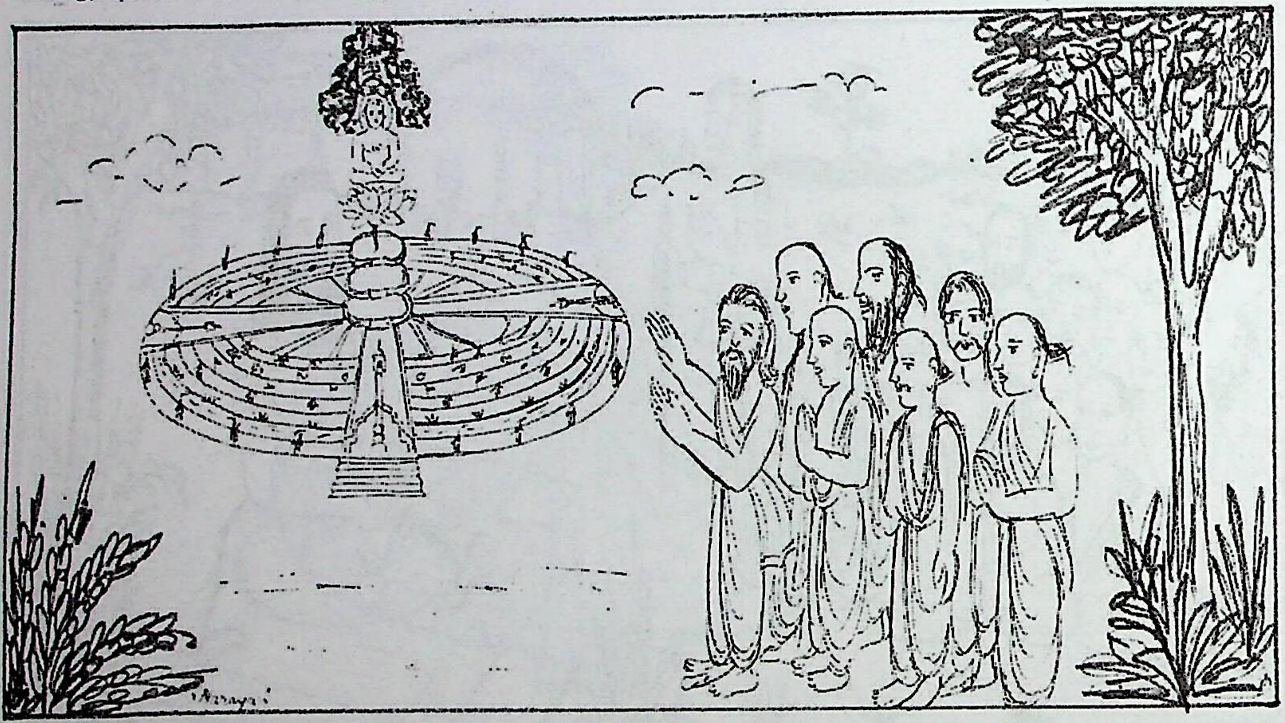

As soon as Indrabhuti along with his 500 disciples reached the *Samavsaran* at Vipulachal Mountain of Rajgrahi, all his proud was shed away and he took *Jaineshwari Deeksha* & became the first *Gandhar* of Lord Mahavira. At once the **FIRST DESHNA** (Sermon) of Bhagwan became available through *Divya-Dhvani* on Shravan Krishna Ekam (the first day of Shravan month)after 66 days of His Enlightement. Since then this day is celebrated as *Veer Shasan Jayanti Diwas* (day). The sermons of Bhagwan were in 718 languages, so that each creature could understand them in its own language. Gautam Gandhar prepared scriptures in the form of 12 *Angas* (Parts) compiling the *Divya-Dhvani* of Bhagwan.

राजगृही नगरी की घटना है कि एक बार एक मेंढक अपने मुख में कमल की पांखुड़ी दबाए अत्यन्त भक्तिभावपूर्वक समवसरण में विराजमान भगवान महावीर के दर्शन करने के लिए विपुलाचल पर्वत की ओर जा रहा था। मार्ग में वह राजा श्रेणिक के हाथी के पाँव के नीचे दबकर मर गया। भगवान की भक्ति के प्रभाव से वह तत्क्षण ही स्वर्ग में जाकर देव हो गया।

राजा श्रेणिक के पहुँचने से पूर्व ही समवसरण में पहुँचकर मुकुट में मेंढक के चिन्ह से युक्त वह देव भक्ति में अत्यन्त तन्मय होकर नृत्य करने लगा। उसे ऐसी भक्ति करते देखकर राजा श्रेणिक ने भगवान महावीर से उसके बारे में पूछा, तब गौतम गणधर ने बताया कि राजन्! एक मेंढक अभी-अभी आपके हाथी के पग तले दबकर मरा है और भक्ति के प्रभाव से देवता बनकर यह यहाँ आया है। जिनभक्ति की इस महिमा को जानकर सभी लोग अत्यन्त प्रभावित हुए।

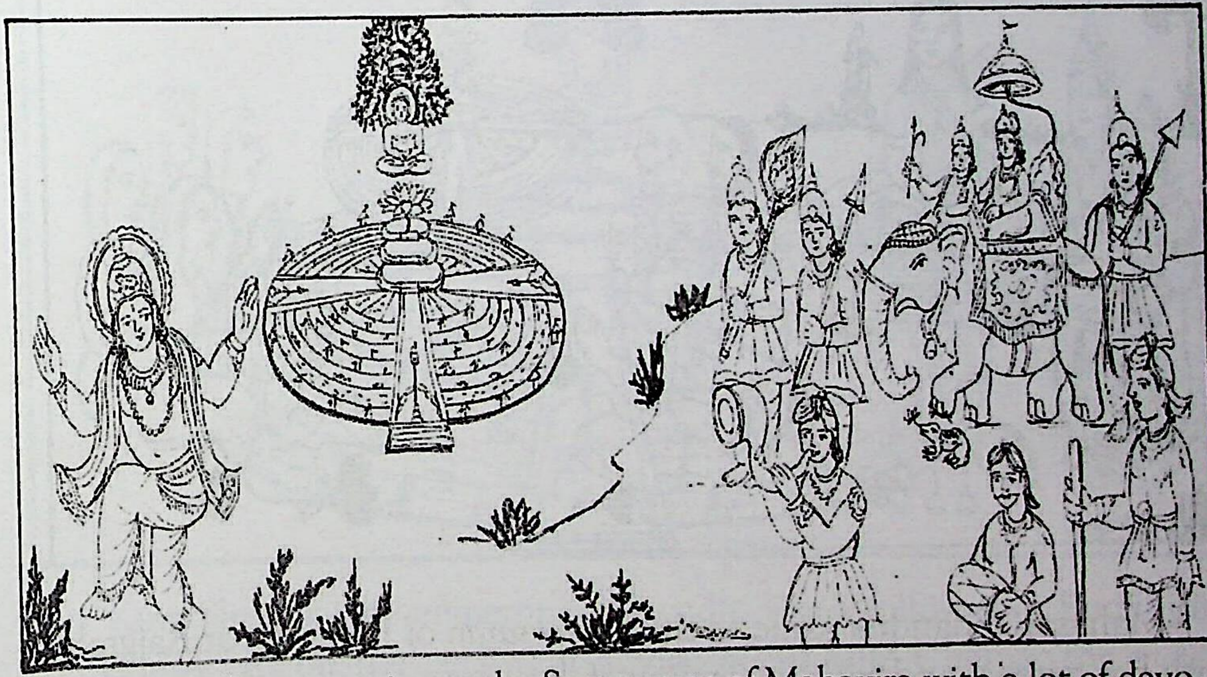

Once a frog was going to the *Samavsaran* of Mahavira with a lot of devotion to Him. It had picked up a petal of a lotus in its mouth. In the way, it was crushed to death under the foot of the elephant of the king Shrenik.

At once it became a *Dev*(deity) in the heaven due to the effect of devotional spirits. The deity with the mark of frog in its crown started dancing with joy after reacthing the *Samavsaran* even before Shrenik could reach there. Knowing this greatness of **JIN-BHAKTI**, all were v17

ery much impressed. Since then, this story of "frog turned deity" became immortal.

एक दिन महासती चन्दना अपने माता-पिता के साथ राजगृही नगरी में भगवान महावीर के समवसरण में आईं और उत्कट वैराग्यभावना से उन्होंने प्रथम आर्यिका दीक्षा ग्रहण कर ली। अनन्तर उन्होंने गणिनीपद को प्राप्त किया और भगवान महावीर के समवसरण की छत्तीस हजार आर्यिकाओं में प्रमुख हो गईं।

भगवान महावीर के समवसरण में श्री इन्द्रभूति आदि 11 गणधर, 14,000 मुनिराज, चंदना आदि 36,000 आर्यिकाएँ, एक लाख श्रावक और तीन लाख श्राविकाएँ थीं। भगवान के शासनयक्ष मातंगदेव एवं शासनयक्षी सिद्धायिनी देवी हैं।

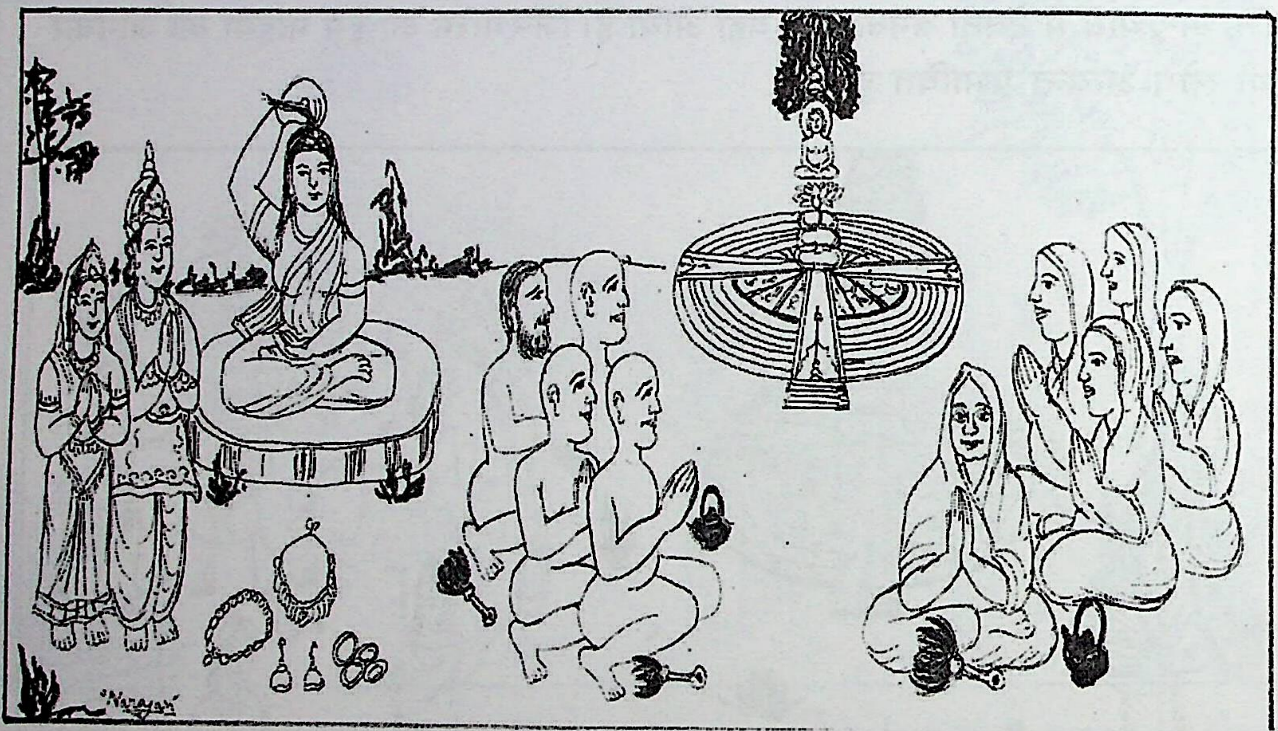

Mahasati Chandna came to the *Samavsaran* of Bhagwan at Rajgrahi with her parents and with the feeling of deep renunciation, she took first *Aryika Deeksha* , the highest rank in the female life. Later she became *Ganini*, the head of the group of 36,000 Aryikas of the *Samavsaran* of Bhagwan Mahavira.

In the *Samavsaran* of Bhagwan, there were Indrabhuti etc. 11 *Gandhars*, 14,000 *Munis*, Chandna etc. 36,000 *Aryikas*, 1 lac *Shravaks* and 3 lacs *Shravikas*. The ruling demigod is Matang Dev and ruling female demigod is Siddhayani Devi.

मगध के सम्राट् राजा श्रेणिक पूर्व में बौद्ध धर्म के अनुयायी थे परन्तु अपनी पत्नी चेलना (महावीर की गृहस्थावस्था की मौसी) के बार-बार समझाने पर वह जैनधर्म की ओर आकृष्ट हुए और धीरे-धीरे जैनधर्म के शाश्वत एवं सर्वोदयी सिद्धान्तों को जानकर भगवान महावीर के कट्टर अनुयायी बन गये। वह भगवान के समवसरण में जाकर उनके प्रति अपार भक्ति किया करते थे।

समवसरण के मुख्य श्रोता के रूप में श्रेणिक ने भगवान से साठ हजार प्रश्न किए। इन प्रंश्नों के उत्तर में खिरी भगवान की दिव्यध्वनि के आधार पर ही आज का उपलब्ध श्रुतज्ञान निबद्ध हुआ है।

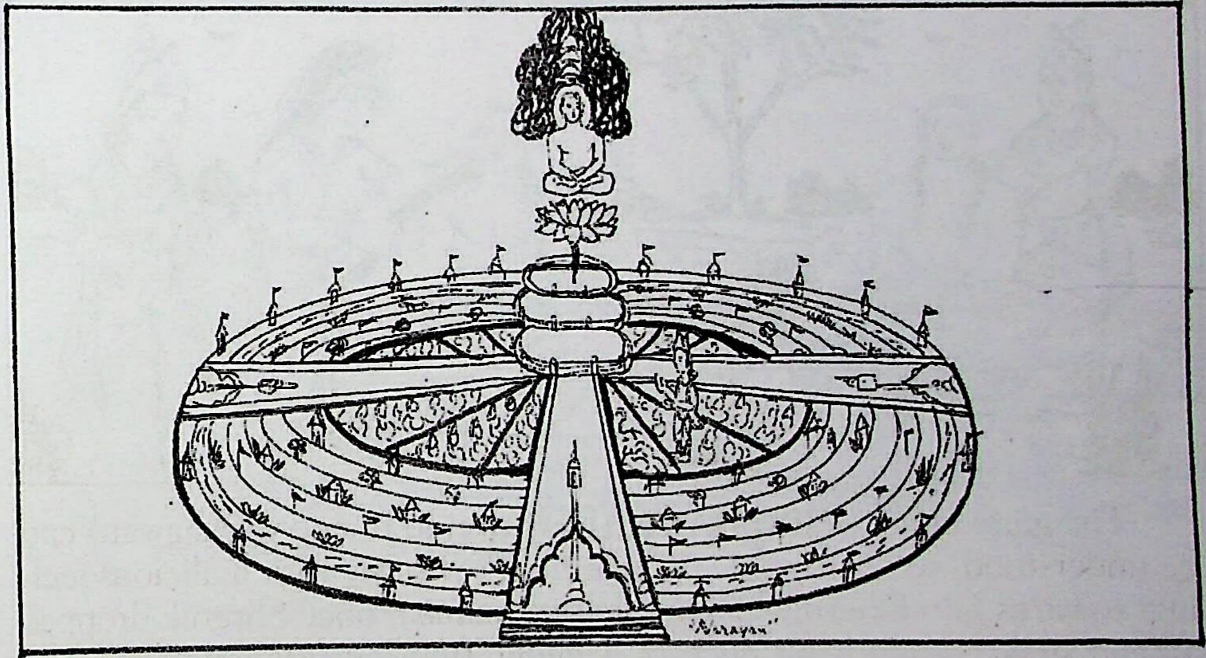

King Shrenik, the emperor of Magadh, was a follower of Buddhism previously but on the persistent advice of his wife Chelna, the *mausi* (aunt) of Bhagwan Mahavira, he got attracted towards Jain Dharma. Gradually he became a strict follower of Lord Mahavira knowing the eternal & universal principles of Jainism. He used to go to the *Samavsaran* of Bhagwan and got immersed into deep devotion for Him.

Shrenik asked 60,000 questions from Bhagwan Mahavira being the Chief "Shrota" (listener) in His *Samavsaran*. The scriptural knowledge of today is based on the replies given by Bhagwan in response to the questions of Shrenik.

जिनेन्द्र भक्ति का महात्म्य राजा श्रेणिक के जीवन से भली प्रकार समझा जा सकता है। पूर्व में जैनधर्म और जैन साधुओं के प्रति विद्वेषभाव रखकर एक बार श्रेणिक ने एक मरा हुआ सर्प ध्यान करते हुए महामुनिराज के गले में डाल दिया और उसी समय इस दुष्कृत्य के प्रभाव से 33 सागर की सातवें नरक की आयु का बंध कर लिया परन्तु बाद में मुनिराज की क्षमाशीलता को देखकर उन्हें अत्यन्त पश्चाताप हुआ।

भगवान महावीर के समवसरण में दिगम्बर साधुओं और सच्चे मोक्षमार्ग की महानता को जानकर उन्होंने स्वयं को भगवान के चरण कमलों में समर्पित कर दिया, इस भक्ति के प्रभाव से उनकी सातवें नरक की 33सागर की आयु घटकर प्रथम नरक की (मध्यम आयु) 84 हजार वर्ष की रह गई। इतना ही नहीं सोलहकारण भावनाओं को भाकर उन्होंने तीर्थंकर प्रकृति का बंध कर लिया और आने वाली भविष्यत काल की चौबीसी में वह 'महापद्म' नाम के प्रथम तीर्थंकर होंगे।

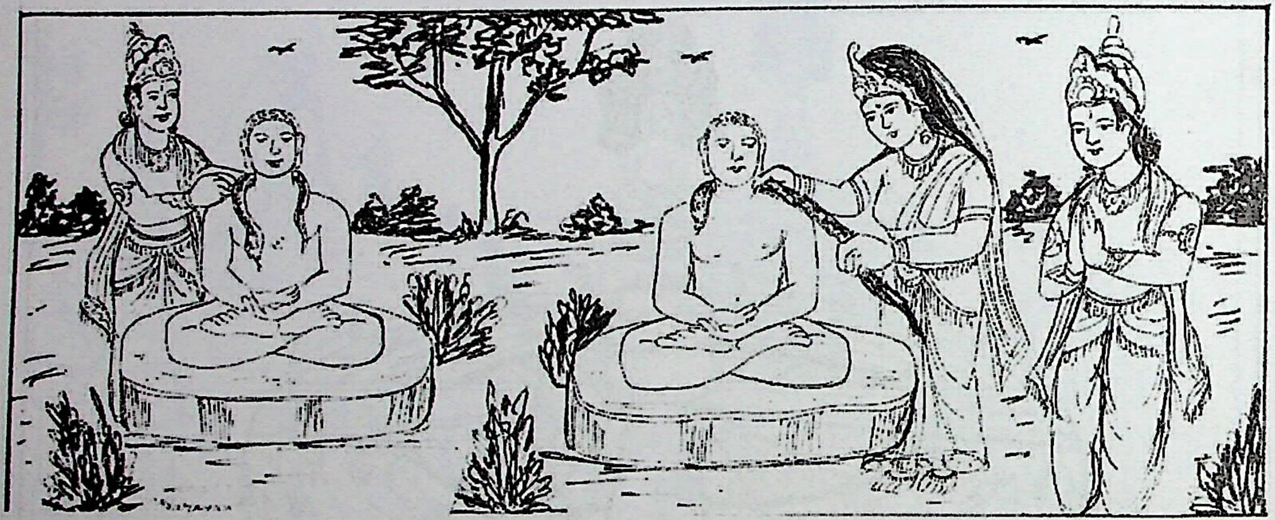

The great effect of **JINBHAKTI** (Devotion to Jinendra Bhagwan) can be understood well by the life of Shrenik. Previously with malicious feelings towards Jain Dharma & Jain Sadhus (*munis*), once Shrenik dropped a dead snake around the neck of a meditating Jain Mahamuni and at the same moment he became destined to go the seventh hell for 33 *Sagars* (infinitely large time unit), although later Shrenik developed the feeling of repentance seeing the forgiving nature of Mahamuni.

Gradually Shrenik understood the greatness of Digamber Sadhus and the real path of Salvation (Moksha) in the *Samavsaran* of Bhagwan Mahavira. He humbly dedicated himself in the lotus feet of the Lord and due to his pure inner devotion to Him, he reduced his *Narakayu* (lifetime at hell) of 33 *Sagars* of the 7th hell to 84,000 years of the 1st hell. Not only this, he bounded *Tirthankar Prakriti* by following *Solahkaran Bhavnas* in the feet of Mahavira and now he will become the first Tirthankar named **Mahapadma** in the coming *Chaubeesi* (tradition of 24 Tirthankars) of the next age (*Yug*) after completing the lifetime of 84,000 years of the 1st hell.

भगवान महावीर ने 30 वर्षों तक सम्पूर्ण आर्यखण्ड में असंख्य जीवों को धर्म का उपदेश प्रदान किया। 72 वर्ष की आयु में वह एक बार (अन्त समय में) पावापुरी पधारे और वहाँ स्थित कमल सरोवर के मध्य में विशाल रत्नमयी शिला पर खड्गासन मुद्रा में विराजमान हो गये। अब तक संमवसरण विघटित हो चुका था। विशुद्ध ध्यान की अवस्था में उन्होंने शेष चार अघातिया कर्मों का भी नाश कर दिया और कार्तिक कृष्णा अमावस्या की प्रातःकाल वह सिद्धपरमेष्ठी बन पावापुरी सरोवर के ठीक ऊपर सिद्धशिला पर जाकर विराजमान हो गये। संसार परिभ्रमण का नाश कर वह सिद्धभगवान अब अनन्तकाल तक मोक्ष में विराजमान रहेंगे।

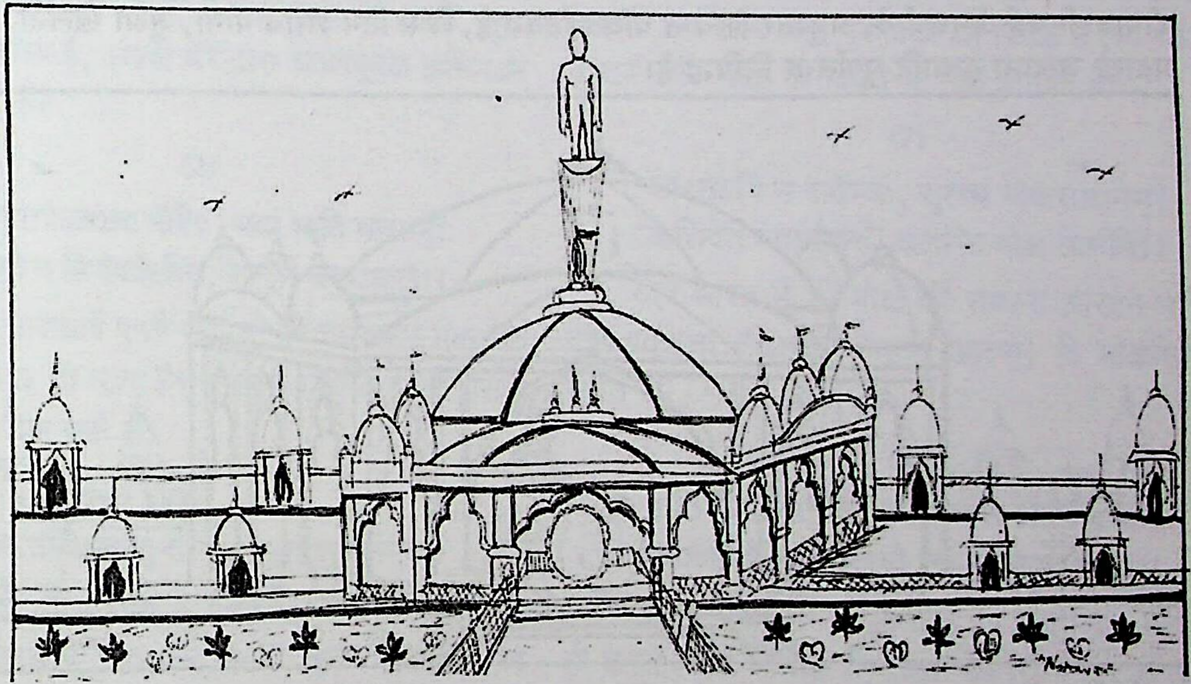

Lord Mahavira preached for 30 years all over the *Aryakhand* in the form of *Arihant Permeshthi.* His age had become about 72 years. Once He came to Pawapuri and got seated on a great gem-rock in the middle of the Pond, with abundant lotus flowers. The *Samavsaran* had been diminished till then:

Bhagwan was immersed into deep meditation and He destroyed His remaining 4 *Aghati Karmas* to become *Siddha Parmatma* on the dawn of Kartik Krishna Amavasya. As all the eight Karmas had been destroyed, the soul became completely pure and at once proceeded up to the *Siddhashila* just above the Pawapuri pond. Now the *Siddha* soul of Lord Mahavira will remain consecrated at *Moksha* (*Siddhashila*) for infinite times to come being liberated from the worldly transmigration (cycle of death & birth).

असंख्य देवों के साथ सौधर्म इन्द्र भगवान का मोक्षकल्याणक मनाने पधारे और भगवान के दिव्य शरीर की विधिपूर्वक पूजा की, अग्निकुमार देव के मुकुट से उत्पन्न अग्नि से शरीर का संस्कार सम्पन्न हुआ। निर्वाणकल्याणक पूजा करके इन्द्र ने अपने वज्ररत्न से भगवान के निर्वाण स्थान पर उनके चरणचिन्हों को अंकित कर दिया जो आज भी पावापुरी (नालंदा) स्थित जल मंदिर में विराजमान हैं।

सायंकाल गौतम गणधर ने केवलज्ञान प्राप्त किया और इस अवसर पर देवताओं द्वारा असंख्य दीपक प्रज्वलित किए गए। उसी समय से दीपावली का पर्व प्रारंभ हुआ। आज भी हजारों श्रद्धालुओं द्वारा कार्तिक कृष्णा अमावस्या की प्रातःकाल जलमंदिर एवं देश-विदेश के स्थानीय मंदिरों में निर्वाणलाडू चढ़ाया जाता है और सायंकाल गौतमगणधर, केवलज्ञान महालक्ष्मी और सरस्वती की पूजा करने के उपरांत हजारों दीपक जलाये जाते हैं। भगवान महावीर के मोक्षगमन का प्रतीक दीपावली पर्व जैनधर्म के अनुसार अत्यन्त पवित्र दिवस है, जिस दिन शराब पीना, जुआ खेलना, पटाखे जलाना इत्यादि पूर्णतया निषिद्ध है।

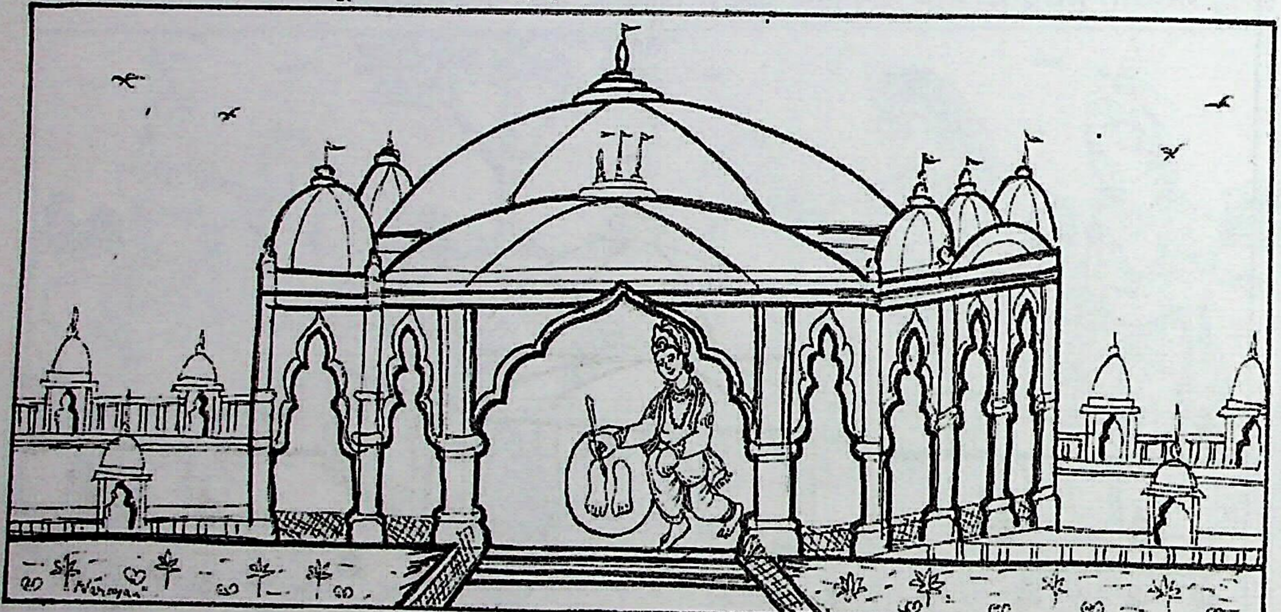

Saudharma Indra came to celebrate the *Moksha Kalyanak* of Bhagwan along with innumerable deities. After worshipping the remaining divine body of Lord, its holy cremation was performed by the flames coming out from the crown of Agnikumar Dev. Indra performed *Nirvankalyanak Pooja* & inscribed the foot-prints of Bhagwan at the same place from where He got Nirvan i.e. present *Jal-Mandir* of Pawapuri (Nalanda).

In the evening Gautam Gandhar obtained *Kevalgyan* and innumerable *Deepaks* were illuminated by Devtas to mark the occasion. The festival of Deepawali started from then. Even today Nirvan Ladoo is offered at Jal Mandir, Pawapuri by thousands of devotees at the dawn of Kartik Krishna Amavasya along with the temples throughout the country & abroad and worships of Gautam Gandhar, Kevalgyan Mahalaxhmi & Saraswati are performed along with the illumination of numerous *Deepaks* in the evening.

कुण्डलपुरस्य महावीरः

सं. 4847

–डॉ. प्रकाशचंद जैन,
जैनदर्शन–साहित्याचार्य,
साहिबाबाद (गाजियाबाद)

(1)

कुण्डलपुर-रम्या भूः, श्रीमहावीर-जन्मदा।
पुण्यदा सुखदा पूता, सादरमभिवन्द्यते।।

कुण्डलपुर की सुन्दर पृथ्वी, जो कि श्री भगवान् महावीर को जन्म देने वाली है, वह पुण्य देने वाली, सुख देने वाली, पवित्र है, उसका मेरे द्वारा आदरपूर्वक अभिनंदन किया जाता है।

(2)

भुवो भालोज्ज्वला मौलिः, भव्यं भाति भारतम्।
तत्समो न हि देशोऽस्ति, सम्पूर्णे वसुधातले।।

सुन्दर भारतवर्ष पृथ्वी के माथे पर चमकदार मुकुट के समान शोभित हो रहा है। सम्पूर्ण पृथ्वीतल पर उसके समान कोई देश नहीं है।

(3)

भारतेऽत्रास्तिवस्तूनां, श्रेष्ठानां शुभसंगमः।
तन्नास्ति वस्तु कुत्रापि, यन्नास्ति मम भारते।।

यहाँ भारत में श्रेष्ठ वस्तुओं का सुन्दर संगम है। मेरे भारतवर्ष में जो वस्तु नहीं है, वह पृथ्वी पर कहीं भी नहीं है।

(4)

धर्मार्थकाममोक्षाख्यं, पुरुषार्थचतुष्टयम् ।
साधनीयं जनैः सर्वैः, जीवन-लक्ष्य-सिद्धये।।

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष नाम वाले चार पुरुषार्थों को जीवन के लक्ष्यों की सिद्धि के लिए सभी लोगों को साधना चाहिए।

(5)

भारतीयाः जनाः नित्यं, पुरुषार्थ-चतुष्टयम्।
साधयन्ति प्रयत्नेन, जीवनानन्दलब्धये।।

भारतीय लोग चारों पुरुषार्थों को जीवन में आनन्द प्राप्त करने के लिए सदा कोशिश के साथ साधते रहते हैं।

(6)

भारतेतरदेशेषु, भौतिक - सुखलिप्सवः।
धर्ममोक्षौ न जानन्ति, अर्थकामपरायणाः।।

भारत के अलावा सभी देशों में भौतिक सुख के लालची अर्थ और काम पुरुषार्थों की सिद्धि में लगे रहते हैं। वे धर्म और मोक्ष के विषय में नहीं जानते हैं।

(7)

भारतेऽपि न सर्वेभ्यः, सुलभं मोक्षसाधनम्।
केचिदेव महात्मानः, चलन्ति मोक्ष वर्त्मनि।।

यहाँ भारत में भी मोक्ष की साधना आसान नहीं है। कुछ महात्मा (विलक्षण महान आत्मा) ही मोक्षमार्ग पर चलते हैं।

(8)

कठिनं मोक्षमार्गं तु, साधयन्ति जितेन्द्रियाः।
त्यक्त्वा भौतिक लिप्सास्ते, लभन्ते स्वात्म-संपदः।।

कठिन मोक्षमार्ग की साधना तो जितेन्द्रिय महापुरुष ही करते हैं। वे भौतिक लिप्साओं को त्याग कर ही आत्म-संपदाओं को प्राप्त करते हैं।

(9)

मोक्षं प्राप्तुं यतन्तेऽत्र, जैन धर्मानुयायिनः।
त्याग-वैराग्यमुख्यास्ति, जैनदर्शनसंस्कृतिः।

जैन धर्मानुयायी ही मोक्ष प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं क्योंकि जैनधर्म की संस्कृति त्याग–वैराग्य प्रधान है।

(10)

जैन तीर्थंकरैर्लब्धं, मोक्षपदं सुदुर्लभम् ।
त्यक्त्वा भौतिक-संसारं, तैर्दग्धं कर्मणां वनम्।।

अत्यन्त दुर्लभ मोक्षपद तो जैन तीर्थंकरों के द्वारा ही प्राप्त किया गया है। क्योंकि उनके द्वारा भौतिक संसार को त्याग कर कर्मों का वन जला दिया गया है।

(11)

सर्वज्ञाः वीतरागास्ते, कृतकृत्याः जितेन्द्रियाः।
भगवन्तस्तीर्णसंसाराः, जन्ममृत्यु विनाशकाः।।

जैन तीर्थंकर सर्वज्ञ, वीतराग, कृतकृत्य, जितेन्द्रियवान् हैं। उन्होंने संसार-समुद्र को पार कर जन्म-मृत्यु का नाश कर दिया है।

(12)

मोक्षमार्ग प्रणेतारः, सर्वजीव हितंकराः।
तीर्थंकराः महानात्मः, निर्ग्रन्थाः समदर्शिनः।।

वे तीर्थंकर मोक्षमार्ग के नेता, सब जीवों का हित करने वाले, महान् आत्मा, निर्ग्रन्थ और समदर्शी हैं।

(13)

ये वर्तमानकालीनाः, तीर्थंकराः जिनेश्वराः।
तेषां भगवतां संख्या, चतुर्विंशतिरुच्यते।।

जो वर्तमानकालीन जिनेश्वर – तीर्थंकर हैं। उन भगवन्तों की संख्या चौबीस है।

(14)

वृषभः प्रथमस्तेषाम्, आदीशो नाभिनन्दनः।
कल्पवृक्षविकल्पानां, कर्मणां सः प्रवर्तकः।।

उन चौबीस तीर्थंकरों में नाभिपुत्र आदीश्वर ऋषभदेव प्रथम हैं। जो कल्पवृक्षों के स्थान पर असि, मसि, कृषि आदि कर्मों के प्रवर्तक हैं।

(15)

अन्तिमस्तु महावीरः, चतुर्विंशो जिनाधिपः।
तस्यैव कृपया लोके, जैनं जयति शासनम्।।

और उनमें अंतिम चौबीसवें तीर्थंकर महावीर हैं। उनकी ही कृपा से लोक में जैनशासन की विजय हो रही है।

(16)

मया त्वत्र हि काव्येस्मिन्, महावीरस्य जीवनम्।
पद्यात्मकेन रूपेण, संक्षेपेण निरूप्यते।।

मेरे द्वारा यहाँ संक्षेप में पद्यरूप से भगवान महावीर के जीवन का निरूपण किया जा रहा है।

(17)

षड्विंशतिशतं द्वे च, वर्षपूर्वमजायत।
चतुर्विंशो महावीरः, तीर्थंकरोऽत्र भारते।।

आज से छब्बीस सौ दो वर्ष पूर्व तीर्थंकर महावीर भारतवर्ष में पैदा हुए थे।

(18)

प्रदेशोऽस्ति बिहाराख्यः, आर्यभूमौ हि भारते।
जैनधर्मस्य केन्द्रः सः, श्रमणानां विहार-भूः।।

आर्य भूमि भारत में बिहार नाम का प्रदेश है। जैनधर्म का केन्द्र वह बिहार श्रमणों (जैन साधुओं) के विहार की भूमि है।

(19)

तत्रास्ति विश्वविख्यातं, कुण्डलपुरनामकम्।
पुरं स्वर्गोपमं रम्यं, पृथिव्याः कर्णकुण्डलम्।।

वहाँ बिहार में विश्व प्रसिद्ध, स्वर्ग के समान सुन्दर, मानो पृथ्वी के कान का कुण्डल ऐसा कुण्डलपुर नाम का नगर है।

(20)

पुरस्य तस्य राजाऽऽसीत्, सिद्धार्थो लोकरञ्जकः।
न्यायी, दानी दयालुश्च, प्रजापालन-तत्परः।।

उस कुण्डलपुर नगर के राजा सिद्धार्थ थे, जो लोगों को खुश करने वाले, न्यायी, दानी और प्रजा के पालन में तत्पर थे।

(21)

शिल्पकाराः कलाकाराः, वणिजः, श्रमिकाः जनाः।
विद्वांसः कृषकाः विप्राः, सन्तुष्टाः न्यवसन् पुरे।।

उस कुण्डलपुर नगर में शिल्पकार, कलाकार, बनिये, मजदूर, विद्वान्, किसान, ब्राह्मण आदि सभी संतुष्ट होकर रहते थे।

(22)

नासीत् कोऽपि दुर्वृत्तः, निर्धनस्तस्करः शठः।
लोलुपः कृपणो दीनः तस्य राज्ये महीपतेः।।

उन सिद्धार्थ राजा के राज्य में कोई भी व्यक्ति दुराचारी, निर्धन, चोर, लालची, कंजूस, दीन और धूर्त नहीं था।

(23)

तस्य राज्ञो महिस्यासीत्, त्रिशला प्रियकारिणी।
वैशालीशस्य पुत्री सा, चेटकस्य प्रतापिनः।।

उन राजा सिद्धार्थ की पट्टरानी प्रियकारिणी त्रिशला थी। जो वैशाली के प्रतापी राजा चेटक की पुत्री थी।।

(24)

पतिव्रता सुशीला सा, विदुषी मृदुभाषिणी।
धार्मिकवृत्तिरक्रूरा, सर्वसेवापरायणा।।

वह त्रिशला रानी पतिव्रता, अच्छे आचरण वाली, विदुषी, मीठा बोलने वाली, धार्मिक आचरण वाली, कठोरता रहित और सभी की सेवा करने वाली थी।

(25)

प्रेम-हर्ष-विनोदैश्च, यापयन्तौ स्वजीवनम्।
आनन्दमन्वभूतां तौ, सहयोगैः परस्परम्।।

प्रेम, हर्ष और मनोरंजन से अपने जीवन को बिताते हुए आपसी सहयोगों से वे दोनों पति-पत्नी आनन्द का अनुभव कर रहे थे।

(26)

एकदा सुख-निद्रायां, नन्द्यावर्ते स्व सद्मनि।
प्रसुप्ता त्रिशला राज्ञी, ददर्श स्वप्नमालिकाम् ।।

एक बार अपने नंद्यावर्त महल में सुख की नींद में सोई हुई त्रिशला रानी ने स्वप्नों के समूह को देखा।

(27)

षोडश स्वप्न चित्राणि, निशायाः प्रहरेऽन्ति मे।
वीक्ष्य विस्मय-विभ्रान्ता, तत्कालं जागृताऽभवत् ।।

रात्रि के अंतिम प्रहर में सुन्दर सोलह स्वप्न को देखकर सुखद आश्चर्य से सहित वह त्रिशला तत्काल जाग गई।

(28)

प्रातः स्वपतिं सिद्धार्थं, दृष्टस्वप्नान्यवेदयत्।
अपृच्छच्च फलं तेषां त्रिशला हर्षमानसा।।

प्रातःकाल हर्षित मन से त्रिशला ने अपने पति सिद्धार्थ को देखे हुए स्वप्नों को बताया और उनका फल पूछा।

(29)

स्वप्नवृत्तान्तमाकर्ण्य, सिद्धार्थो मुदितोऽभवत्।
राज्ञीं च स्वप्न-निष्कर्षं, उवाच मेदिनीपतिः।।

स्वप्नों के वर्णन को सुनकर सिद्धार्थ प्रसन्न हो गए और रानी को स्वप्नों का निष्कर्ष (फल) बताया।

(30)

देवि! त्वं कृतपुण्याऽसि, तव गर्भे समागतः।
तीर्थंकरो जगत्पूज्यः लोकत्रयस्य दीपकः।।

हे देवि! तुमने बड़ा पुण्य किया है। तुम्हारे गर्भ में जगत्पूज्य, तीन लोक के दीपक तीर्थंकर आए हैं।

(31)

निश्चिन्ता भव चित्ते त्वं, न माता त्वत्समाऽपरा।
काष्ठा प्राची यथा सूर्यं, दधासि उदरे जिनम् ।।

तुम चित्त में निश्चिन्त रहो। तुम्हारे जैसी दूसरी कोई माता नहीं है। जिस प्रकार पूर्व दिशा सूर्य को धारण करती है, उसी प्रकार तुम अपने उदर में जिनेन्द्र को धारण कर रही हो।

(32)

श्रुत्वा फल हि स्वप्नानां, त्रिशला प्रियकारिणी।
परमानन्दिता चित्ते, प्रसन्नवदनाऽभवत् ।।

प्रियकारिणी त्रिशला स्वप्नों के फल को सुनकर मन में बहुत आनन्दित हुई और उसका मुख प्रसन्नता से खिल उठा।

(33)

सौधर्मेन्द्रस्तदा स्वर्गे, अवधिज्ञान-चक्षुषा।
गर्भावतार-वृत्तान्तं, जिनदेवस्य ज्ञातवान् ।।

तभी स्वर्ग में सौधर्म इन्द्र ने अपने अवधिज्ञानरूपी नेत्र से जिनेन्द्रदेव के गर्भावतरण के वृत्तान्त को जान लिया।

(34)

आषाढ़-शुक्ल-षष्ठ्यां सः, शक्रो देवैः परिवृतः।
कुण्डलपुरमागच्छत्, गर्भोत्सव-चिकीर्षया।।

आषाढ़ शुक्ला षष्ठी के दिन वह इन्द्र देवों से घिरा हुआ गर्भ कल्याणक मनाने की इच्छा से कुण्डलपुर आया।

(35)

नृत्य-वादन-संगीतैः, दान-वर्धापनैः समम् ।
इन्द्रः पौराः मिलित्वैव, चक्रुर्गर्भमहोत्सवम् ।।

इन्द्र ने नगरवासियों के साथ मिलकर नृत्य, बाजों, संगीत, दान और बधाईयों के आदान-प्रदान के साथ गर्भकल्याणक मनाया।

(36)

जननी-गर्भ-सेवायै, दिव्याः देव्यः समागताः।
ताः नवमास-पर्यन्तम् अतिष्ठन् मातृसन्निधौ।।

इस अवसर पर माता के गर्भ की सेवा के लिए स्वर्ग की देवियाँ आईं और वे नौ माह तक माता के पास ही रहीं।

(37)

कुबेरः कृतवान्नित्यं, त्रिशलायाः गृहांगणे।
सार्धसप्तकोटीनां, रत्नानां सुवर्षणम् ।।

कुबेर ने त्रिशला-माता के घर के आंगन में प्रतिदिन साढ़े सात करोड़ रत्नों की वर्षा की।

(38)

ररक्ष त्रिशला गर्भं, नवमासान् बिना व्यथाम्।
पुत्र-जन्मप्रतीक्षायां, नीतवती सुरखैः सह।।

त्रिशला ने बिना कष्ट के नौ महीने पुत्र के जन्म की प्रतीक्षा में सुख से गर्भ की रक्षा करते हुए बिता दिए।

(39)

नवमासाः यदा पूर्णाः, जन्मबेला समागता।
चैत्र शुक्ल त्रयोदश्यां, त्रिशलाऽजनयत् सुतम्।।

जब जन्म के नौ माह पूर्ण हो गए और जन्म का समय आ गया तब चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन त्रिशला ने पुत्र को जन्म दिया।

(40)

सिद्धार्थ-भवने स्नुः, जातः श्रुत्वेति नागराः।
मंगलाचार संलग्नाः, राजभवनं समागताः।।

सिद्धार्थ के घर में पुत्र पैदा हुआ है, यह सुनकर मंगलाचार करते हुए नगर निवासी राजमहल में आने लगे।

(41)

अभिवादन-सत्कारैः, वर्धापनैरुपायनैः।
गायन-नृत्य-संगीतैः, सर्वैः हर्षः प्रकाशिताः।।

अभिवादन, सत्कार, बधाइयाँ, भेंट, गाना, नृत्य और संगीत के द्वारा सभी के द्वारा हर्ष प्रकट किया गया।

(42)

प्रसन्न देव-देवीभिः, सार्द्धं सौधर्म देवराट्।
जन्माभिषेक-विध्यर्थं, कुण्डलपुरमाययौ।।

प्रसन्न देव-देवियों के साथ सौधर्म इन्द्र जन्माभिषेक की विधि सम्पन्न करने के लिए कुण्डलपुर आ गया।

(43)

तीर्थंकर शिशु नीत्वा, मुदितः सकलैः सह।
जन्माभिषेक सत्कार्यं, सुमेरु पर्वतेऽकरोत् ।।

प्रसन्न इन्द्र ने सबके साथ तीर्थंकर शिशु को मेरु पर्वत पर ले जाकर जन्माभिषेक की विधि को सम्पन्न किया।

(44)

कुण्डलपुर-भूमिस्तु, गुंजिता मंगलैः रवैः।
जन्मकल्याणके रम्ये, सर्वे मंगलमाचरन् ।।

कुण्डलपुर की भूमि-मंगल-शब्दों से गूँज उठी। जन्म-कल्याणक के अवसर पर सभी ने मंगल–आचरण किया।

(45)

बालस्य जन्मना साकं, वर्धिताः राज्य संपदः।
तस्मान्नव शिशोर्नाम, वर्धमानः कृतं जनैः।।

बालक के जन्म के साथ ही राज्य की संपदाएँ बढ़ने लगी, इसीलिए सभी ने बालक का नाम वर्धमान रखा।

(46)

जन्माभिषेक बेलायाम्, अनुमीय शिशोर्बलम्।
वीरोऽयमिति शक्रेण, वीर नाम कृतं तदा।।

जन्माभिषेक के समय बालक के बल का अनुमान लगाकर इन्द्र के द्वारा यह वीर है इस प्रकार कहकर उसका नाम वीर रखा।

(47)

दोला-स्थितं शिशुं दृष्ट्वा, संजय-विजयद्वयोः।
मुन्योर्मनोगताः शंकाः, स्वयमेव निराकृताः।।

झूले में स्थित बालक को देखकर संजय और विजय दोनों मुनियों के मन की शंकाएँ स्वतः मिट गईं।

(48)

बालस्य बुद्धि-माहात्म्यं, वीक्ष्य तौ द्वौ अभाषताम्।
सन्मतिरिति बालोऽयं, सन्मतिर्नाम प्राचलत् ।।

बालक की बुद्धि महत्ता को देखकर वे दोनों बोले–यह बालक सन्मति है। तभी से उसका नाम "सन्मति" चल पड़ा।

(49)

एकदा वर्धमानः सः, मित्र-शिशुभिः समम्।
वृक्षारोहण क्रीडायां, आसीद् व्यस्तो घने वने।।

एक बार वह वर्धमान अपने मित्र-बालकों के साथ घने जंगल में वृक्ष पर चढ़ने-उतरने के खेल में व्यस्त था।

(50)

तदैव संगमो देवः, कर्तुं धैर्य-परीक्षणम् ।
सर्परूपं विधायैवं, भीतं कर्तुं प्रयत्नवान्।।

एक बार संगम नाम देव ने उनके धैर्य की परीक्षा लेने के लिए सर्प का रूप धारण करके इन्हें भयभीत करने की कोशिश की।

(51)

वर्धमानस्य मित्राणि, सर्पं वीक्ष्य भयंकरम् ।
प्रधावितानि सर्वाणि, वीरोऽतिष्ठत् विना भयम्।।

भयंकर सर्प को देखकर सभी मित्र तेजी से भाग गए। लेकिन वीर वहाँ बिना भय के ठहरे रहे।

(52)

वर्धमानस्तु एकाकी, सर्पं फणे गृहीतवान् ।
फूत्कारं तस्य श्रुत्वापि, अगुञ्चन्नैव तत्फणम्।।

वर्धमान ने अकेले ही सर्प के फण को पकड़ लिया और उसकी फुंकार को सुनकर भी उसके फण को नहीं छोड़ा।

(53)

वीरस्य साहसं दृष्ट्वा, संगमः प्रकटितोऽभवत्।
दर्शयित्वा निजं रूपम्, महावीरस्त्वमुक्तवान्।।

वीर के साहस को देखकर संगम देव सामने प्रकट हुआ और अपना रूप दिखाकर, 'तुम महावीर हो' ऐसा कहा। अर्थात् उन्हें "महावीर" नाम से सम्बोधित कर चरणों में नमन किया और स्वर्ग वापस चला गया।

(54)

सुस्वस्थः प्रतिभाशाली, बलिष्ठश्चतुरो गुणी।
सः सन्मतिर्महावीरः, जातः बालशिरोमणिः।

अत्यन्त स्वस्थ, प्रतिभाशाली, बलिष्ठ और गुणी वह सन्मति महावीर बालकशिरोमणि बन गए।

(55)

शैशवोचित क्रीडासु, बहुविद्यासु कीर्तिमान्।
शनैः शनै र्महावीरः, बाल्यात्तारुण्यमाप्तवान्।।

बालोचित क्रीड़ाओं में तथा सर्वविद्याओं में यश प्राप्त करते हुए महावीर धीरे-धीरे बाल्यावस्था से जवानी को प्राप्त हो गए।

(56)

रूप-यौवन संपन्नः, प्राप्त संपूर्ण वैभवः।
अतिष्ठत् किन्तु भोगेभ्यः, विरक्त एव सर्वदा।।

सौन्दर्य और जवानी से युक्त, संपूर्ण वैभवों को प्राप्त किए हुए भी महावीर हमेशा सभी भोगों से उदासीन ही रहे।

(57)

लक्षितः सर्वदा वीरोऽयं, गंभीर-धैर्यसागरः।
यौवनोचित चाञ्चल्यम्, व्यकरोन्नास्य मानसम्।।

यह महावीर सदा गाम्भीर्य और धैर्य के सागर रूप में देखे गये। यौवन में भी चंचलता ने इनके मन को विकृत नहीं किया।

(58)

राज्य-वैभव मध्येऽपि, न लिप्तस्तैरयमभूत्।
गृहेऽप्ययमवातिष्ठत्, यथा वारिणि वारिजम्।।

राज्य के वैभवों के बीच भी वह उनसे निर्लिप्त थे। घर में भी वह उसी प्रकार ठहरे हुए थे, जैसे जल में कमल।

(59)

विरक्तस्तु महावीरा, संसाराय निरुत्सुकः।
स्वजनेभ्यस्तु सर्वेभ्यः, चिन्तायाः विषयोऽभवत्।।

संसार के लिए निरुत्सुकं, विरक्त महावीर अपने सभी लोगों के लिए चिन्ता का विषय बन गए। अर्थात् महावीर की संसार से विरक्ति देखकर माता-पिता आदि सभी चिन्तित हो गए।

(60)

नारभत मनस्तस्य, मनोरञ्जन कर्मसु।
स्वादिष्ट भोज्यपानेषु, अम्बराभरणे स्वपि।।

उन महावीर का मन मनोरंजन कार्यों में, स्वादिष्ट भोजन-पान में और वस्त्राभूषणो में आनन्द नहीं प्राप्त करता था।

(61)

मात्रा कृतश्च प्रस्तावः, विवाहस्य वृथाऽभवत्।
पित्रा प्रस्तावितं राज्यं, स्वीकृतवान्न सन्मतिः।।

माता के द्वारा किया गया उनके विवाह का प्रस्ताव व्यर्थ तथा पिता के द्वारा प्रस्तावित राज्य भी उन सन्मति ने स्वीकार नहीं किया।

(62)

तं गृहाभिमुखं कर्तुं, जाताः यत्नाः निरर्थकाः।
वैराग्य परिपक्वोऽयं, दृढो यथा हिमालयः।।

उन्हे घर की ओर मोड़ने के सारे प्रयत्न निरर्थक रहे। वैराग्य भाव में परिपक्व वह हिमालय की तरह दृढ़ थे।

(63)

एकाक्येकान्तभूमिस्थः, मग्नश्चिन्तनसागरे।
शरीर-लोक संबंधे, बहुधा सः व्यचिन्तयत्।।

अकेले एकान्त स्थल में बैठे हुए, विचार-सागर में डूबे हुए, वह ज्यादातर शरीर और संसार के संबंध में सोचते रहते थे।

(64)

अनित्याः सन्ति संबन्धाः, नश्वराः भोग संपदः।
यथास्ति गगने विद्युत्, चंचला जगतः स्थितिः।।

संबंध नित्य नहीं हैं, भोग-संपदाएँ नाशवान् हैं। जिस प्रकार आकाश में बिजली, उसी प्रकार संसार की स्थिति भी चंचल है।

(65)

एकाकी जायते जीवः, एकाकी म्रियते सदा।
मृत्यु-काले समापन्ने, नापरो रक्षितुं क्षमः।।

जीव अकेला जन्म लेता है और अकेला ही मरता है। मृत्युकाल के निकट आने पर दूसरा कोई उसे नहीं बचा सकता।

(66)

सर्वे सन्त्यत्र संसारे, प्राणिनः दुःख-भोगिनः।
धनहीनाः धनाभावैः, धनवन्तश्च तृष्णया।।

इस संसार में सभी प्राणी दुःख भोगते रहते हैं। धनहीन धन की कमी से तथा धनवान् तृष्णा से।

(67)

मल-मूत्रास्थिरक्तैश्च, माँस-मज्जाप्रपूरिते।
घृणास्पदे शरीरेऽस्मिन्, प्रीतिं कुर्वन्ति मोहिनः।।

मल, मूत्र, हड्डी, रक्त, माँस और मज्जा से भरे हुए घृणा के स्थानभूत इस शरीर में मोही व्यक्ति प्रीति करते हैं।

(68)

सच्चिदानन्दपिण्डात्मा, कर्मचौरैः प्रदूस्यते।
संसार पाश बद्धात्मा, कर्मागमं न पश्यति।।

यह आत्मा सत्, चित् और आनन्द का पिण्ड है। कर्मरूपी चोर इसे दूषित कर रहे हैं। संसाररूपी जाल में बंधा हुआ यह आत्मा कर्मों के आने को नहीं देख पाता है।

(69)

व्रत-समिति गुप्तिभ्यः, कर्मबंधो निरुध्यते।
कर्मबन्ध निरोधाय, जीवः प्रयत्नमाचरेत् ।।

व्रत, समिति और गुप्तियों के द्वारा कर्मबंध रोका जा सकता है। जीव को कर्मबंध रोकने के लिए प्रयत्न करना चाहिए।

(70)

तपश्चर्यैव मोक्षाय, साधनमस्ति केवलम् ।
तपस्तप्तुं हि गन्तव्यं, गृहं त्यक्त्वा मुमुक्षुणा।।

केवल तपश्चरण ही मोक्ष का साधन है। मोक्ष की इच्छा रखने वाले के द्वारा घर छोड़कर तप के लिए जाना चाहिए।

(71)

तपसि बाधकं मत्वा, गृहं त्यक्तुं हि तत्परः।
महावीरो गतमोहः, वायुवेग इवोत्थितः।।

घर को तप में बाधक मानकर, घर को छोड़ने के लिए तत्पर मोहरहित, महावीर वायु के वेग के समान उठ खड़े हुए।

(72)

मातरं पितरं बन्धून्, स्व निश्चयं न्यवेदयत्।
अनुमतिं वनं गन्तुम्, सः सकलानयाचत।।

उन्होंने माता-पिता और बन्धुओं को अपना निश्चय बताया और उन सबसे वन जाने के लिए अनुमति माँगी।

(73)

निवारितोऽपि सर्वैः सः, अनुनीतश्च पुनः पुनः।
स्व निश्चये दृढो वीरः, चिच्छेदमोहबन्धनम्।

सभी के द्वारा रोके गए और बार-बार मनाए गए भी अपने निश्चय में दृढ़ वीर ने मोह के बंधन को काट डाला।

(74)

त्रिंशत् वर्षीय महावीरः, सर्वं त्यक्त्वा वनं ययौ।
तपोभिः कर्मनाशार्थं, मुमुक्षुः सः जितेन्द्रियः।।

तीस. वर्ष के मोक्षाभिलाषी जितेन्द्रिय महावीर तप से कर्मों को नष्ट करने के लिए सब कुछ छोड़कर वन को चले गए।

(75)

मार्गशीर्षस्य शुक्लायां, दशम्यां शुभवासरे।
ज्ञातृवने शालिच्छायायां, जैन दीक्षां गृहीतवान्।।

मार्गशीर्ष-शुक्ल दशमी के शुभ-दिन महावीर ने ज्ञातृवन में शाल वृक्ष के नीचे जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहण कर ली।।

(76)

आहार-दान-सौभाग्यं, प्रथमं वीर-तपस्विने।
प्राप्तवान् वकुलो राजा, कूलग्रामस्य श्रावकः।।

महावीर मुनि के लिए प्रथम आहारदान का सौभाग्य कूलग्राम के श्रावक राजा वकुल ने प्राप्त किया।

(77)

तपन् तपांसि घोराणि, निर्जरायै स्वकर्मणाम्।
बाह्याभ्यन्तर द्वन्द्वेभ्यः, मुक्तो गतपरिग्रहः।।

अपने कर्मों की निर्जरा के लिए घोर तप करते हुए, बाह्य और अन्तरंग परिग्रह से रहित महावीर सभी द्वन्द्वों से रहित हो गए।

(78)

मोक्षमार्गोपि देशाय, विहरन् वसुधातले।
सः जगामैकदा वीरः, कौशाम्बीं महतीं पुरीम्।।

मोक्षमार्ग के उपदेश के लिए पृथ्वीतल पर विहार करते हुए एक बार वीर-मुनि कौशाम्बी नामक विशाल नगरी में गए।

(79)

स्वामिन्या निगडैर्बद्धा, बालैका तत्र चन्दना।
दृष्टवती महावीरम्, आहाराय विनिर्गतम्।।

वहाँ स्वामिनी के द्वारा बेड़ियों में बंधी हुई एक युवती चन्दना ने आहार के लिए निकले हुए महावीर को देखा।

(80)

दृष्ट्वा मुनिं महावीरम्, त्रुटिता सर्वशृंखला।
आहारं प्रददौ तस्मै, क्षीरान्नस्य हि चन्दना।।

मुनि महावीर को देखकर उसकी सभी बेड़ियाँ टूट गई और चन्दना ने उनको खीर का (कोदों का भात ही खीर रूप में परिणत हो गया था) आहार दिया।

(81)

धन्यो मुनिर्महावीरः धन्या बाला हि चन्दना।
आहारदान महत्त्वेन, जाता या गतबन्धना।।

मुनि महावीर धन्य हैं वह चन्दनबाला भी धन्य है जो आहार-दान के महत्व से बंधनरहित हो गई।।

(82)

तदानीं महावीरस्यः काले, पाखण्डि साधवः।
बाह्याडम्बर संलग्नाः, सत्साधुत्वं व्यनाशयन्।।

उस समय महावीर के समय में जैनेतर साधु बाह्याडम्बरों मे लगे हुए सच्चे साधुत्व को नष्ट कर रहे थे।

(83)

पाखण्ड-खण्डनं कृत्वा, सोढ्वा विरोधयातनाः।
निज जीवन-चर्योभिः, सत्साधुत्वमुपादिशत्।।

पाखण्डों का खण्डन करके विरोधियों द्वारा दिए गए कष्टों को सहकर भी महावीर ने अपनी जीवन चर्या से सच्चे साधुत्व का उपदेश दिया।

(84)

हिंसां च वैदिकीं वीरः, पापमेवोदघोषयत् ।
मूकानां च पशूनां सः, बलिदानं न्यवारयत्।

महावीर ने वैदिक हिंसा को भी पाप ही बताया। उन्होंने मूक पशुओं के बलिदान को रोका।

(85)

एकदोज्जयिनीं प्राप्तः, विहरन् वीर-तापसः।
श्मशाने तत्र ध्यानाय, खड्गासनं गृहीतवान्।।

महावीर-तपस्वी एक बार विहार करते हुए उज्जयिनी आए। वहाँ श्मशान में ध्यान के लिए उन्होंने खड्गासन ग्रहण किया।

(86)

रुद्रैकस्तत्र ध्यानात्, च्युतं कर्तुं प्रयत्नवान्।
सोढ्वा तद्दत्त-कष्टानि, वीरो ध्यानं न त्यक्तवान्।।

वहाँ एक रुद्र ने उन्हें ध्यान से च्युत करने की कोशिश की। उसके द्वारा दिए गए कष्टों को सहन करके भी वीर ने ध्यान को नहीं छोड़ा।

(87)

रुद्रश्च धैर्यमालोक्य, स्तुतिं भक्तिं तदाकरोत्।
भूषितवान् महावीरं, सः अतिवीर-संज्ञया।।

और तब रुद्र ने उनका धैर्य देखकर उनकी स्तुति एवं भक्ति की तथा उन्हें अतिवीर नाम से विभूषित किया।

(88)

द्वादश भेदभिन्नानि, तपांसि सः समाचरत् ।
पंच महाव्रतैः सार्धं, दशधर्मानधारयत् ।।

उन वीर भगवान ने बारह प्रकार के तपों को किया तथा पाँच महाव्रतों के साथ दश धर्मों को हृदय में धारण किया।

(89)

समिति-गुप्ति रक्षायां, सावधानः सुसंयमी।
द्वादश भावना-चिन्तां, कृतवान् वीर-साधकः।।

वह वीर-साधक समिति और गुप्तियों की रक्षा में सावधान रहकर बारह भावनाओं का चिन्तन करते थे।

(90)

दग्ध्वा सः घाति-कर्माणि, शुक्लध्यान महानले।
तपस्वी वीतरागोऽयं, निजात्मन्येव तन्मयः।।

शुक्लध्यानरूपी अग्नि में चार घातिया कर्मों को जलाकर वह वीतराग तपस्वी अपनी आत्मा में ही तन्मय हो गए।

(91)

दशम्यां वैशाख-शुक्लायां, केवलज्ञानमाप्तवान्।
येन सर्वाणि द्रव्याणि, हस्तस्थितीव दृष्टवान् ।।

उन्होंने वैशाख शुक्ल दशमी के दिन केवलज्ञान प्राप्त किया जिससे वे सभी द्रव्यों को हाथ में स्थित के समान देखने लगे।

(92)

गणधरं विना किन्तु, दिव्यध्वनिर्न निर्गतः।
षट्षष्टि, दिनानि जातानि, वाणी नैव प्रकाशिता।।

किन्तु गणधर के बिना दिव्यध्वनि प्रकट नहीं हुई। छ्यासठ दिन बीत गए, वाणी प्रकाशित नहीं हुई।

(93)

पुण्योदयेन लोकस्य, गणधरो हि गौतमः।
आगत्य वन्दनां कृत्वा, समक्षं समुपस्थितः।।

लोगों के पुण्योदय से गौतम गणधर आकर वन्दना करके सामने उपस्थित हो गया।

(94)

आगच्छद् गौतमः स्वामी, दिव्यध्वनिश्च गुंजितः।
अज्ञान तिमिर नाशाय, उन्नते विपुलाचले।।

गौतम स्वामी आए और अज्ञानान्धकार के नाश के लिए ऊँचे विपुलाचल पर महावीर की दिव्यध्वनि गूँजने लगी।

(95)

त्रिंशद् वर्षेषु जातेषु, वाणी गंगा प्रवाहिता।
यथा मुमुक्षवो भव्याः आत्मोद्धाराय स्नापिताः।।

तीस वर्ष बीत जाने पर वाणी-गंगा प्रवाहित हुई जिसके द्वारा भव्य मुमुक्षु आत्मोद्धार के लिए स्नान कराए गए।

(96)

केवलज्ञाननेत्रेण, सर्वद्रव्याणि पश्यतः।
दिव्यध्वनिस्तु वीरस्य, अकरोद् धर्मदेशनाम्।।

केवलज्ञानरूपी नेत्र से सभी द्रव्यों को देखने वाले भगवान वीर की धर्मदेशनारूप दिव्यध्वनि खिरने लगी।

(97)

नर-पशु-सुराः सर्वे, समवसरणस्थिताः।
हितोपदेशमाकर्ण्य, चक्रुः कल्याणमात्मनः।।

समवसरण में स्थित मनुष्य, पशु और देव सभी ने हितोपदेश सुनकर आत्म-कल्याण किया।

(98)

जगत्कल्याण कर्तुं सः, व्यहरत् जगतीतले।
सूर्यकान्तिर्महावीरः, पावापुरं हि प्राप्तवान्।।

जगत् का कल्याण करने के लिए सूर्य के समान कान्ति वाले महावीर पृथ्वीतल पर विहार करते रहे और अन्त में पावापुर पहुँच गए।

(99)

अमावस्या-निशायां सः, कृष्ण पक्षे च कार्तिके।
दग्ध्वावशिष्ट कर्माणि, प्रपेदे मोक्षमन्दिरम्।।

कार्तिक कृष्णपक्ष में अमावस्या की रात्रि में अवशिष्ट अघातिकर्मों को जलाकर भगवान महावीर मोक्ष मंदिर को प्राप्त हुए।

(100)

लब्धनिर्वाणलाभस्य, पावापुरसरोवरे।
महावीरस्य भक्तास्तु, परं प्रमोदमाप्नुयुः।।

पावापुर सरोवर में मुक्तिलाभ को प्राप्त हुए महावीर को देखकर उनके भक्त अत्यन्त हर्ष को प्राप्त हुए।

(101)

कर्तुं हर्षाभिव्यक्तिं च, तैः प्रदीपाः प्रकाशिताः।
आरभ्य तद्दिनादेव, दीपावली प्रकाश्यते।।

और उन भक्तों के द्वारा हर्ष की अभिव्यक्ति करने के लिए दीपक जलाए। उसी दिन से प्रारंभ हुए दीपावली पर्व के दिन दीपमालिका प्रकाशित की जाती है।

(102)

वर्धमानं महावीरम्, वीरं सन्मति दायकम्।
अतिवीरमहं वन्दे, कुण्डलपुर-भू सुतम् ।।

मै कुण्डलपुर-भूमि के पुत्र वर्धमान महावीर, वीर,

सन्मति, अतिवीर को नमस्कार करता हूँ।

(103)

कुण्डलपुरजातः सः, महावीर जिनेश्वरः।
विश्व-शान्ति-विधाता सः, जैनशासन नायकः।।

कुण्डलपुर में उत्पन्न वे महावीर जिनेश्वर विश्वशांति करने वाले तथा जैनशासन के नायक हैं।

(104)

कुण्डलपुर-भूभागस्तु, महावीरस्य जन्मना।
पवित्रः पुण्यदश्चैव, मनः शान्तिप्रदायकः।

महावीर के जन्म से पवित्र-कुण्डलपुर का भूमि-भाग पुण्य देने वाला और मन की शांति देने वाला है।

(105)

कुण्डलपुर-माहात्म्यं, शब्दैर्मया न वर्ण्यते।
यत्रोत्पन्नो महावीरः, सर्वोदयस्य प्रेरकः।।

कुण्डलपुर का महत्व मेरे द्वारा शब्दों से वर्णित नहीं किया जा सकता। जहाँ उत्पन्न महावीर ने सर्वोदय शासन की प्रेरणा प्रदान की है।

(106)

दीर्घकाल प्रभावात्तु, उपेक्षायाच्च कारणात्।
प्राचीन शिल्प-सम्पत्तिः, न दृश्यतेऽत्र साम्प्रतम्।।

लम्बे समय के प्रभाव से तथा उपेक्षा के कारण से यहाँ अब प्राचीन-शिल्प की कोई वस्तु नहीं प्राप्त हैं।

(107)

वर्तमानेतुतत्रासीत्, प्राचीनं लघु मंदिरम्।
यात्रिणश्चाल्प संख्यायाम् गच्छन्तिस्म यदा कदा।।

वर्तमान में तो यहाँ एक छोटा सा प्राचीन मंदिर था और यात्री भी कभी-कभी थोड़ी संख्या में जाया करते थे।

(108)

प्रबंध-सुविधाऽभावात्, आगन्तुमत्र यात्रिणः।
दर्शनार्थं तु क्षेत्रेऽस्मिन्, नोत्सहन्ते पुनः पुनः।।

प्रबंध और सुविधाओं के अभाव के कारण यात्री दर्शनों के लिए बार-बार यहाँ आने का उत्साह नहीं करते थे।

(109)

दिग्भ्रमिताः जनाः केचित्, प्रमाणैः प्रबलैः बिना।
कल्पन्ते जन्म वीरस्य, अन्यत्रैव नवे स्थले।।

कुछ दिशाहीन लोग प्रबल प्रमाणों के बिना भगवान् महावीर का जन्म किसी दूसरी जगह मानते हैं।

(110)

एतेषां भ्रान्तचिन्त्ततानाम्, अन्यत्र जन्म वादिनाम्।
दुष्प्रचारोऽपि क्षेत्राय, जातो विकास बाधकः।।

भगवान् महावीर के जन्म को अन्यत्र मानने वाले इन भ्रान्तचित्त लोगों के द्वारा कुण्डलपुर क्षेत्र के प्रति दुष्प्रचार करने से तीर्थ विकास में बाधा उत्पन्न हुई अर्थात् क्षेत्रविकास अवरुद्ध हो गया था।

(111)

वरिष्ठा गणिनी माता, ज्ञानमती तपस्विनी।
लेखिका विदुषी साध्वी, जैनशासनदीपिका।।

बीसवीं सदी की वरिष्ठ गणिनी तपस्विनी माता ज्ञानमती हैं जो कि लेखिका, विदुषी और जैन शासन को चमकाने वाली साध्वी हैं।

(112)

जैन तीर्थ विकासाय, प्रेरिका मार्गदर्शिका।
जैनागमोक्तमार्गेण, तीर्थोद्धाराय चिन्तिता।।

आगमों के अनुसार जैन तीर्थों के विकास के लिए प्रेरणा और मार्गदर्शन करने वाली वे माता प्राचीन तीर्थों के जीर्णोद्धार के लिए चिन्तनरत रहती हैं।

(113)

विहरन्ती तु सा साध्वी, कुण्डलपुरमागता।
क्षेत्रस्थितिं समालोक्य, मनसि व्यथिताऽभवत्।।

विहार करती हुई वह ज्ञानमती माता जी कुण्डलपुर आईं। क्षेत्र की स्थिति को देखकर मन में व्यथित हुईं।।

(114)

कुण्डलपुर भूमिश्च, न महावीर-जन्मदा।
श्रुत्वा मतं हि केषांचित्, साऽऽश्चर्यचकिताभवत्।।

कुण्डलपुर की भूमि महावीर को जन्म देने वाली नही है, किन्हीं के इस मत को सुनकर माताजी आश्चर्यचकित रह गईं।

(115)

प्रमाणैर्बहुभिर्माता, तर्कैरेतदसाधयत् ।
कुण्डलपुरमेवास्ति, महावीरस्य जन्मभूः।।

माताजी ने बहुत से प्रमाणों और तर्कों से सिद्ध किया कि महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर ही है।

(116)

मातुः पादार्पणेनैव, निर्मिताः नवयोजनाः।
कायाकल्पाय क्षेत्रस्य, प्रारब्धा कार्य-शृंखला।।

माताजी के पदार्पण करते ही क्षेत्र के कायाकल्प के लिए नई योजनाएँ बनीं तथा कार्यश्रृंखला आरंभ हो गई।

(117)

मन्दिराणां मनोज्ञानां, विनिर्माणमिहाभवत् ।
महोन्नत प्रतिमाभिः, शोभितानि चाभवन् ।।

अनेक मनोज्ञ मंदिरों का यहाँ निर्माण हुआ और वे ऊँची प्रतिमाओं से सुशोभित हुए।

(118)

सप्त खण्डात्मके रम्ये, नन्द्यावर्ताभिधेनवे।
प्रासादे सन्ति दृष्टव्याः, सुरचनाः मनोहराः।।

सात मंजिलों वाले नंद्यावर्त नामक सुन्दर और नए महल में देखने योग्य बहुत सी मनोहारिणी रचनाएँ हुई हैं।

(119)

नद्यावर्ते च तत्रास्ति, महावीरस्य मंदिरम्।
महोन्नतं सुरम्यं च, उत्तुंग-मूर्ति शोभितम्।।

और उसी नंद्यावर्त महल में एक बहुत ऊँचा और सुन्दर महावीर का मंदिर है, जो भगवान महावीर की उत्तुंग प्रतिमा से सुशोभित है।

(120)

तत्रैव ऋषभस्यापि, भगवतः सुमन्दिरम् ।।
तस्मिन्नापि सुमनोज्ञा, भव्या मूर्तिर्विराजते।।

वहीं पर भगवान ऋषभदेव का भी सुन्दर मंदिर है उसमें भी भव्य और मनोज्ञ प्रतिमा विराजमान है।

(121)

परिसरे च तत्रैव, नवग्रहाख्य - मंदिरम्।
विघ्नहारि-जिनेशानां, विराजन्तेऽत्र मूर्तयः।।

उसी नंद्यावर्त परिसर में नवग्रह शांति नाम का मंदिर है। उसमें विघ्नहर्ता नव जिनेन्द्र देवों की मूर्तियाँ विराजमान हैं।

(122)

त्रिकालेषु च वर्तन्ते, द्वि सप्ततिर्हि ये जिनाः।
शोभते मूर्तिभिस्तेषां, चतुर्विंशतिर्मन्दिरम् ।।

तीनों कालों में जो 24×3=72 (बहत्तर) तीर्थंकर हैं, उनकी मूर्तियाँ त्रिकाल चौबीसी जिनालय में शोभित हैं।

(123)

समं तु नव निर्माणैः, क्षेत्र माहात्म्यवर्धकैः।
आकर्षणमयी जाता, कुण्डलपुर-मेदिनी।।

क्षेत्र के महत्त्व से बढ़ाने वाले नए निर्माणों के साथ कुण्डलपुर की पृथ्वी आकर्षणमय बन गई।

(124)

यात्रिभ्यः सुखदानाय, व्यवस्थात्र मनोहरा।
भोजन-वास-सम्बद्धः, प्रबंधोऽत्र सुखायते।।

यात्रियों को सुख देने के लिए यहाँ मन को हरण करने वाली व्यवस्था हेतु भोजन और आवास से संबंधित प्रबन्ध सुख देता है।

(125)

धर्मशालाश्च वर्तन्ते, स्वच्छा, रम्या मनोरमाः।
अनुभवन्ति सौख्यानि, यात्रिणस्ते यथा गृहे।।

यहाँ धर्मशालाएँ स्वच्छ, सुन्दरं और मन को आनन्द देने वाली हैं, यात्री यहाँ ऐसा सुख अनुभव करते हैं, जैसा कि वे अपने घर में ही हैं।

(126)

पानाय निर्मलं नीरम्, विद्युत् वायोश्च शुद्धता।
प्राकृतिकं च सौन्दर्यं, सन्ति क्षेत्र विशिष्टताः।।

पीने के लिए निर्मल पानी, प्रकाश हेतु बिजली, शुद्धवायु और प्राकृतिक सौन्दर्य आदि इस क्षेत्र की विशेषताएँ हैं।

(127)

नवं रूपं तु क्षेत्रस्यः, सर्वैरेव प्रशस्यते।
निर्माण प्रक्रियायाश्च, क्रमोऽद्यापि प्रगच्छति।।

क्षेत्र के नये रूप की सभी के द्वारा प्रशंसा की जा रही है। वहाँ निर्माणप्रक्रिया आज भी चल रही है।

(128)

साध्वीं ज्ञानमतीं वन्दे, गणिनीं विदुषीमहम्।
यस्याः कृपाप्रसादेन, क्षेत्रोन्नतिर्विधीयते।।

मैं साध्वी, गणिनी विदुषी ज्ञानमती की वन्दना करता हूँ, जिनकी कृपा के प्रसाद से तीर्थ क्षेत्र का विकास किया जा रहा है।

* * *

हिन्दी पद साहित्य में भगवान महावीर

–(स्व.) डॉ. कस्तूरचंद कासलीवाल
जयपुर (राज.)

हिन्दी साहित्य में पदों का विशेष महत्व है। इस भाषा के प्रायः सभी भक्त एवं सन्त कवियों ने पद साहित्य का निर्माण किया है। कबीरदास, सूरदास, मीरा, तुलसीदास जैसे महाकवियों ने भक्तिपरक, आध्यात्मिक एवं शृंगार परक पद लिखकर हिन्दी साहित्य का ही महत्व नहीं बढ़ाया किन्तु उनके माध्यम से जन-जन में भक्ति एवं आध्यात्म की भावना को कूट-कूट कर भरने का प्रयास किया है। वैष्णव कवियों के समान जैन कवियों ने भी हिन्दी में अनगिनत पदों की रचना करके हिन्दी साहित्य की श्री वृद्धि में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। लेकिन जैन कवियों ने पदों की रचना मुख्यतः प्राणी मात्र को एवं विशेषतः मानव को जाग्रत रखने एवं उसे कुमार्ग से हटाकर सम्यक् मार्ग पर लगाने के लिए की है।

कवि पहले अपने जीवन को सुधारता है इसलिए बहुत से पद उसने अपने आपको सम्बोधित करते हुए लिखे हैं। उसे परमात्मा की भक्ति की ओर इसलिए प्रेरित करता है कि उसके अवलम्बन से उसे सुमार्ग मिल जावे तथा वह भी स्वयं परमात्मा बनने की दिशा की ओर आगे बढ़ सके। यह तो वह जानता है कि मुक्तात्मा न तो किसी को कुछ दे सकते हैं और न किसी से कुछ ले सकते हैं। फिर भी जैन कवियों ने परमात्मा की भक्ति में पर्याप्त संख्या में पद लिखे हैं। वे वैष्णव एवं सूफी क़वियों के समान सगुण व निर्गुण के चक्कर में नहीं पड़े क्योंकि उनका रूप तो शुद्ध निर्विकल्प दशा का है। तीर्थंकर अवस्था में यद्यपि उनके अनेक वैभवों की कल्पना की है फिर भी उन्हें शरीराश्रित कहकर अधिक महत्व नहीं दिया है।

जैन कवियों ने अपने हिन्दी पदों में सरसता, संगीतात्मकता एवं भावप्रवणता को सबसे अधिक महत्व दिया है। उन्होंने पदों की रचना भक्ति विह्वल होकर की है लेकिन उस भक्ति में भी संयत होकर चले हैं। वैराग्यमूलक प्रद लिखने में तथा ज़गत का सही चित्रण करने में उन्हें काफी सफलता मिली है। इन कवियों द्वारा निर्मित पदों को हम भक्ति परक पद, अध्यात्मिक पद, दार्शनिक पद एवं सैद्धान्तिक पद, शृंगार एवं विरहात्मक पद एवं समाज चित्रण वाले पदों में विभाजित कर सकते हैं।

जैन कवियों द्वारा रचित पदों की संख्या 5 हजार से कम नहीं हैं। दो हजार पद तो हमारे संग्रह में हैं और अभी सैकड़ों गुटकों में पद लिखे हुए मिलते हैं जिनका संकलन करना शेष है। इन पदों में तीर्थंकरों पर भी अच्छी संख्या में पद मिलते हैं। इन तीर्थंकरों में ऋषभदेव, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ एवं महावीर पर सबसे अधिक पद लिखे गये हैं।

हिन्दी में भगवान महावीर पर 100 से भी अधिक पद मिलते हैं। जो विभिन्न कवियों द्वारा निबद्ध हैं। इन कवियों में भट्टारक शुभचन्द्र, जयसागर, हर्षकीर्ति, द्यानतराय, समय सुन्दर, जिनहर्ष, दौलत राम, बलदेव, देवाषह्न, नयनसुरण, सुरेन्द्र कीर्ति, नवलराम आदि कवियों के नाम प्रमुख हैं। इन कवियों के पदों के आधार पर पूरे महावीर के जीवन का परिज्ञान हो सकता है। अधिकांश पद भक्तिपरक हैं और तीर्थंकर महावीर के महान् व्यक्तित्व के दर्शन कराने वाले हैं इन पदों में वीर, महावीर, सन्मति जैसे नामों का प्रयोग किया हुआ मिलता है। पदों की भाषा हिन्दी एवं राजस्थानी, व्रज एवं पंजाबी मिश्रित हिन्दी सभी हैं। कुछ पदों में रागों का उल्लेख किया हुआ है। इन रागों में कन्नड़ी, कान्हरों, सोरठ, जंगला, बिलावन, खमावच आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। इन रागों से पता चलता है कि स्वयं पद निर्माता कवि भी अच्छे संगीतज्ञ एवं रागविशेषज्ञ थे वे स्वयं गाते होंगे तथा वे इसी तरह संगीत के माध्यम से भगवान महावीर का स्तवन स्मृति पाठ की अन्य पाठकों से आशा करते थे।

जैन कवियों ने महावीर स्वामी को सृष्टि का कर्त्ताधर्ता नहीं मानते हुए भी उनसे अपने दुःख-दर्द को मिटाने की प्रार्थना की है तथा कुछ अन्य कवियों ने अपने को भव सागर में तारने की कामना की है। कुछ कवियों ने महावीर का समवसरण आने पर उनकी वंदना के लिए चलने का आग्रह किया है तथा कुछ कवियों ने अपने आपको ही उनके चरणों में समर्पित कर दिया है।

प्रस्तुत पेपर में मैंने विभिन्न जैन कवियों द्वारा प्रस्तुत उनके जीवन की विचित्र घटनाओं को प्रस्तुत करने का प्रयास

किया है।

राजस्थानी जैन कवि बलदेव ने भगवान महावीर के जन्म का वर्णन करते हुए लिखा है कि महावीर के पिता राजा सिद्धार्थ एवं माता त्रिशला रानी थी। कुण्डलपुर में उनका जन्म हुआ था तथा देवों ने आकर जन्मोत्सव मनाया था–

आज महावीर स्वामी बन्दू मन लायके।।
सिद्धारथ राजा पिता त्रिशलादे राणी माता।
कुण्डलपुर में जन्म उत्सव कीनो इन्द्र आयके।।1।।
सुर नर मुनिजन करत सेव है प्रभु देवाधिदेव।
गणधरादि ध्याय के गुणानुवाद गायके।।2।।

अपने एक पद "सिद्धारथ राजा दरयारे बटत बधाई रंग भरी हो" में राजस्थान के दूसरे कवि महाचंद ने भगवान महावीर के जन्म लेने के पश्चात् कुण्डलपुर में घर-घर में उत्सव मनाया गया। उनके जन्म लेने के पूर्व 15 महीनों तक नगर में रत्नों की वर्षा होती रही। आकाश स्वच्छ एवं निर्मल हो गया और जन्म होते ही समस्त विश्व नें सुख का अनुभव किया। राजा सिद्धारथ ने अपार दान देकर याचकों की भावना पूरी की–

सिद्धारथ राजा दरबारे बजत बधाई रंग भरी हो।।
त्रिशला देवी ने सुत जायो वर्द्धमान जिनराज बरी हो।।
कुण्डलपुर में घर-घर द्वारे हो रही आनन्द घरी हो।।
रत्नन की वर्षा को होते पन्द्रह मास भये सगरी हो।
आज गगन दिश निरमल दीखत पुष्प वृष्टि गंधोद झरी हो।।
जन्मत जिनके जग सुक्ख पाया दरि गये सब दुख टरी हो।
अन्तर मुहूर्त नारकी सुखिया, ऐसे अतिशय जन्मधरी हो।।
दान देय नृप ने बहुतेरो जाचिक जन-जन हर्ष करी हो।
ऐसे वीर जनेश्वर चरणो "बुध महाचन्द्र" जु सीस धरी हो।।

महावीर की शिशु अवस्था पूरी हुई और बचपन आया और लगे अपने ही साथियों के साथ खेलने। राजाराम कवि ने अपने एक पद "त्रिशला के आंगन में खेले वर्द्धमान" में उनकी बालक्रीड़ा का बहुत सुन्दर वर्णन किया हैं। वे अपने साथियों के साथ खेलते हुए ऐसे लगते हैं जैसे नवोदित सूर्य हो। यही नहीं उनकी वाणी भी सबको आकृष्ट करने वाली है तथा इन्द्र स्वयं भी उनकी प्रशंसा करते हुए नहीं थकते हैं–

त्रिशला के आंगन में खेले वर्धमान। खेलै वर्धमान खेलै वर्धमान।।
सुन्दर सुरति अभिनव नव भान। मंगल मूरति गुण गण पान।।1।।
बाल सखा एकट्ठे भये आन। डोलत बोलत मधुरी वान।।2।।
क्रीड़ा करत अनेक विधान। सुरपति ताके करत बखान।।3।।
नाचै अपछर किंनर गान। 'राजा राम' चाहै दरसन ध्यान।।4।।

मोती कवि ने तो "घुघरू बाजत झनन नन नननन" पद में मातात्रिशला की गोद में खेलते हुए शिशु महावीर का स्तवन किया है तथा बालपन की मुद्रा के दर्शन करके उनके चरणों में साष्टांग नमस्कार किया है–

घुघरू बाजत झनन नन नननन।।
त्रिशला माता की गोद मै जी आबत है ते सन नन नन नन।।1।।
अष्ट द्रव्य ले पूजन आयौ गावत हैं ते तन नन नन नन।।2।।
'मोती' बालपने की मुद्रा देत ढोक चरन न नन नन नन।।3।।

महावीर बालक से युवा हुए और अवसर पाकर संयत व्रत धारण किया तथा तपस्या करके घातिया कर्मों का घात

करके कैवल्य प्राप्त किया। इसी घटना का एक कवि ने अपने पद में निम्न प्रकार वर्णन किया है–

स्वामी भेटै महावीर आज आनन्द भर्‍या।
श्री त्रिशला रानी के नन्दन वरधैमान सुख दया।।
ओसर पाये संजम व्रत लीनो। गिरसम धीरज धरया।।
घातीया घात अस्ट करम खय कै केवल पया।।

देवा ब्रह्म कवि के एक पद में इसके बाद होने वाली घटना का वर्णन मिलता है। पद के अनुसार कैवल्य प्राप्ति के पश्चात् महावीर ने महान विद्वान् ब्राह्मण गौतम को अपना प्रमुख गणधर बनाया तथा बौद्ध धर्म को मानने वाले राजा श्रेणिक को अपने धर्म में दीक्षित किया–

स्वामी महावीर उपगार कीयो। उपगार कियौ प्रतिपाल कीयौ।।
गौतम ब्राह्मण मान कियो अति। जाकूं गणधर थापि लियो।।
बौध मती छो राजा श्रेणिक। ताकूं साचां ग्यान दीयो।।

इसके पश्चात् देवा ब्रह्म ने पुनः अपने एक "महावीर जी ग्यान बतावै, मुनि गौतम समझायौ" में दिव्यध्वनि के बाद की स्थिति को प्रस्तुत किया है। समवसरण में राजा श्रेणिक प्रश्न करते हैं। भगवान महावीर की दिव्य ध्वनि खिरती है तथा गौतम गणधर उसका अर्थ स्पष्ट करते हैं। देवा ब्रह्म ने अपने एक पद में इसी घटना का वर्णन प्रस्तुत किया है–

महावीर जी ग्यान बतावै, मुनि गौतम समझायो।
राजा श्रेणिक की पूछणा लागो जी, जीव स्वरूप बतावो।।

महाकवि द्यानतराय ने महावीर के समवसरण की महिमा का निम्न शब्दों में वर्णन प्रस्तुत किया है–

हे री सखी महावीर जिनराय चलो जिन वंदीए।।
विपुलाचल पर्वत सौ आए समौसरण भौ भाय।।
मुसावलि गाय सिंघ सु प्रीत करै मन लाय।।
गौतम रिणा से गणधर जाके। सेवत सुरनर पाँव।।
भूपति सहित चेलना राणी अंगि-अंगि हुलसाय।।
द्यानत प्रभु जी को दरसण देखत मनवांछित फल पाय।।

इसी तरह पंडित महाचंद ने भी समवसरण की महिमा का एक पद में वर्णन किया है। जिसके अनुसार समवसरण में देव, मनुष्य तिर्यञ्च सभी अपने-अपने स्थानों में बैठते हैं और धर्म श्रवण करते हैं। जहाँ महावीर का समवसरण जाता है वहाँ वसंत ऋतु आ जाती है और चारों ओर फल-फूलों से लदे हुए वृक्ष दिखलाई देते हैं। यहीं नहीं समवसरण में एक ही स्थान पर सिंह और गाय, चूहा और बिल्ली, सर्प और नेवला अपने परस्पर में बैर भाव को छोड़कर धर्मोपदेश सुनने लगते हैं–

विपुलाचल शिखर आजि और रूप राजै।
आये जिन वर्द्धमान समवसरण युत महान।।
सुर नर तिर्यंच आनि निज स्थान विराजै।।1।।
षट ऋतु फल फूल सवै फलिये इक काल।
अबै दाडिम अरु दाख फवै आम्र पुंग ताजै।।2।।
सिंह गौवत्स हेत मूषक माजरि पेत न्योला।
अरू नागकेत बैर रहित छाजै।।3।।
सुणियो अतिशय प्रवीन श्रेणिक नृप धर्म लीन।
कर में वसु द्रव्य कीन पूजन के काजै।।4।।
कीनूं बहु पुन्य जिन तय करिकै रैन दिनै।
पंडित महाचन्द्र तिनै देखे महाराजै।।5।।

२-४५

भगवान महावीर के निर्वाण कल्याणक का भट्टारक सुरेन्द्र कीर्ति ने बहुत ही सुन्दर एवं विस्तृत वर्णन किया है। राग भैरू में निर्मित उनका यह पद अत्यधिक रोचक है। उनका निर्वाण कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी के अंतिम प्रहर एवं अमावस्या के प्रातः हुआ। उस समय स्वाति नक्षत्र था। निर्वाण महोत्सव में चार प्रकार के देव शामिल हुए और अग्नि कुमार देवों के मुकुट से निकली हुई अग्नि से उनके पावन शरीर का दाह संस्कार सम्पन्न हुआ। उनकी भस्मी को सभी ने मस्तक पर लगाया–

महावीर प्रभु निरवाण सिधारे। पावापुर कमल जुत सरमध्य भारे।।
कार्तिक कृष्ण चतुर्दशि पछिले रात पहर अमावस उख कारे।
स्वाति नक्षत्र सिद्धारथ नृप सुत प्रियकारनि कुखि उजयारे।।1।।
चतुरनि काय सुरपति सब आए पंच कल्याण सब विधि करारे।
अगनि कुमार मुकुट वह्नि चन्दन प्रमुख सुगंधि मध्य तनु जारे।।2।।

इसके बाद की घटना का नयन कवि ने अपने पद में वर्णन किया है। निर्वाण के पश्चात् पावापुर में प्रत्येक घर में दीपक जलाये गये तथा सभी से सम्पूर्ण देश के प्रत्येक गाँव एवं नगर में उस दिन पूजन की प्रथा आरंभ हुई–

वीर जिनेश्वर आजि शिवालै, पहुँचे भवि जन तारि कृपाले।।
कार्तिक कृष्ण चतुर्दशि का निशि, एक घड़ी अवशेष सुकालै।।1।।
इन्द्रादिक निर्वाण कल्याणक, कीनू उत्सव सहित विशालै।।
पावापुर मैं घरि घरि मंगल, दीपक ज्योति भई तमगालै।।2।।
तब तै देश-देश पुर-पुर में, प्रतिवर्ष पूजन थायन चालै।।
शिव मारग की सरधा कारन, है नीको यह पंचम कालै।।3।।

लेकिन 17वीं शताब्दी में होने वाले जगराम कवि ने अपने एक पद में महावीर के निर्वाण कल्याणक का जो वर्णन किया है वह अत्यधिक श्लाघनीय है–

महावीर जिन मुक्ति पधारे। तब सुर नर मिलि आये सारे।।
कार्तिक कृष्ण चतुर्दशि कारे। पिछली निसि कैंइक घटि कारे।।1।।
पावापुर में घरि-घरि द्वारे। दीपक ज्योति भये उजियारे।।
नर-नारी वंदन को चालै। पूजन की कर मोदक धारे।।2।।

इस प्रकार इन पदों में महावीर के सम्पूर्ण जीवन को संजोया जा सकता है लेकिन हिन्दी पदों में जैन कवियों ने महावीर के जीवन की घटनाओं पर ही प्रकाश नहीं डाला है किन्तु भक्तिवश होकर द्यानतराय जैसे कवि ने 'अब मोहे तार लेहु महावीर" पद में महावीर के गुणों का वर्णन करते हुए उनसे तार लेने की प्रार्थना की है। पूरा पद निम्न प्रकार है जिसमें आप देखेंगे कि कवि ने कितने भावपूर्ण शब्दों में भगवान महावीर का स्तवन किया है–

अब मोहे तार लेहु महावीर।।
सिद्धारथ नंदन जग वंदन-पाप निकन्दन धीर।।1।।
ज्ञानी ध्यानी दानी जानी, बानी गहन गंभीर।
मोक्ष के कारण दोष निवारण, रोष विदारण वीर।।2।।
समता सूरत आनन्द पूरत, तुरत आयह पीर।
बालयती द्रढ़वती समकिती, रुख दावानल नीर।।3।।
गुण अनन्त भगवंत अंत नहीं, शशि कपूर हिम हीर।
'द्यानत' एकहू गुण हम पावें, दूर करै भवभीर।।4।।

कविवर दौलतराम अपने आध्यात्मिक एवं भक्ति परक पदों के लिए प्रसिद्ध हैं। उन्होंने महावीर के स्तवन में दो बहुत ही अर्थ भरे पद लिखे हैं और महावीर का गुणानुवाद किया है। वे अनन्त सुख के धनी हैं, भ्रम तम को नाश करने वाले हैं। जिन्होंने दो प्रकार के धर्म 'निश्चय और व्यवहार' का निरूपण किया है जो मोक्ष को देने वाला है–

जय शिव कामिनी कंत वीर भगवंत अनन्त सुखकार हैं।
विधिगिरि गंजन बुधमन रंजन भ्रमतम भंजन भाकर हैं।
जिन उपदेश्यो दुविध धर्म जो सो सुर सिद्धि रमाकर हैं।
भवि उर कुमुदनि मोहन भवतय हरन अनूप निशाकार हैं।।

अपने दूसरे पदों में भी इसी तरह मंगल शब्दों में महावीर की वंदना की है जो निम्न प्रकार है–

वंदो अदभुत चन्द्र वीर जिन छवि चकोर चितहारी।
सिद्धारथ नृप कुल नभ मंडन, खंडन भ्रमतम हारी।
परमानंद जलधि विस्तारन, पाप ताप छय कारी।।1।।
उदित निरन्तर त्रिभुवन अंतर कीरति किरन पसारी
दोष मलंक कलंक अंटकित मोह राहु निरवारी।।2।।
कर्मावरन-पयोद अरोधित बोधित शिवमग चारी।
गणधरादि मुनि उडुगन सेवत, नित पूनम तिथि धारी।।3।।
अखिल अलोकाकाश-उलंघन जासु ज्ञान उजियारी
"दौलत" मनसा-कुमुदनि मोदन जयो चरम जगतारी।।4।।

18वीं शताब्दी में होने वाले जिनहर्ष कवि ने राजस्थानी-भाषा में एक अच्छा पद लिखा है जिसमें संसार के दुखों की अनभिज्ञता प्रगट की है तथा भगवान महावीर की एक मात्र शरण की याचना की है–

में जाण्यु वहीं भवदुष अइसउ रे होई।
मोर मगन माया में घूतऊ, निज भवहारे दोइ।।1।।
जनम मरण ग्रभवास असुचिमइ, रहिवनु सहिपनु सोइ।
भूष त्रिषा परवश बध बंधन, टारि सके नहीं कोइ।।2।।
छेदन भेदन कुंभी पाचन, वर वैतरिणी तोइ।
कोई छुराई सक्यु नहीं ज्वर दुष, मइ सर भरीया रोइ।।3।।
सवहि सगाई जगत ठगाई, स्वारथ के सब लोइ।
एक जिनहरष 'चरम जिनवर' कुं, सरण हीया मइ ढोइ।।4।।

इसी कवि ने अपने एक अन्य पद में भगवान महावीर से स्पष्ट शब्दों में प्रार्थना की है तथा अपने आपको बतलाकर चरणों में नमन किया है–

मुनि जिनवर चउवीसमा जी, सेवक नी अरदास।
तुझ आगलि बालक परइ रे, हुँ तउ करूँ वेरवास रे।।1।।
जिनजी अपराधी नइ रे तारि
तु तउ करूणा रसभर्युं जी, तु उ सुहनइ हितकार रे।।
हुँ अवगुण नउ ओरड़ऊ जी, गुण तउ नहीं लव लेस।
परगुण देखी नवि सकु जी, किम संसार तरेसि रे।।2।।

इस प्रकार जैन कवियों द्वारा निर्मित हिन्दी पदों में भगवान महावीर का सम्पूर्ण जीवन मिलता है। जो साहित्य एवं इतिहास की दृष्टि में अत्यधिक महत्वपूर्ण है। अभी तो बीसों कवियों के हिन्दी पदों का संकलन करना शेष है जिनमें और भी विस्तृत सामग्री प्राप्त हो सकती है।

* * *

"शासनपति भगवान महावीर"

–आर्यिका श्री श्रेयांसमती माताजी
मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र

इस नश्वर संसार में अनन्त प्राणी सदा जन्म-मृत्यु की गोद में झूला करते हैं अतः किसी का जन्म लेना और मरण करना प्राकृतिक नियमानुसार कोई विशेष महत्त्व की बात नहीं है किन्तुं जिन्होंने ऐसा अपूर्व जन्मधारण किया हो, जिसके बाद पुनः जन्म ही न लेना पड़े, जिन्हें सुर-नर-असुर-खगेन्द्र आदि नमस्कार कर स्वयं को धन्य समझते हों, ऐसे तीर्थंकर भगवान का जन्म अलौकिक एवं अपूर्वता सम्पन्न होता है। सारा संसार उनके जन्म की बेला में अद्भुत आनन्द का अनुभव करता है।

अनादिनिधिन एवं शाश्वत जैनधर्म में अनन्त तीर्थंकर होते रहे हैं और आगे भी होते रहेंगे, ऐसा वर्णन शास्त्र-पुराणों में आया है। वर्तमान युग में जन्में 24 तीर्थंकर भगवन्तों में जहाँ प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव ने अयोध्या नगरी में जन्म लेकर उसे सनाथ किया वहीं जैनधर्म के 24वें तीर्थंकर भगवान महावीर ने आज से 2600 वर्ष पूर्व भारतवर्ष के बिहार प्रान्त के नालंदा जिले में स्थित कुण्डलपुर नगरी में जन्म लेकर उसे जगत्पूज्य बना दिया था।

आचार्यश्री गुणभद्र स्वामी ने उत्तरपुराण नामक ग्रंथ में भगवान महावीर के जन्म का वर्णन करते हुए कहा कि- भगवान आषाढ़ शुक्ला षष्ठी के दिन सिद्धार्थ राजा की महारानी प्रियकारिणी के गर्भ में नंद्यावर्त नाम के सप्ततलयुक्त राजप्रसाद में आये और चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन भगवान महावीर का जन्म हुआ।

भगवान की माता प्रियकारिणी-त्रिशला देवी वैशाली नगर के स्वामी राजा चेटक की पुत्री थीं। उत्तरपुराण नामक ग्रंथ में उसे सिंधुदेश में बताते हुए राजा चेटक की सात पुत्रियों एवं दशपुत्रों का वर्णन किया गया है। भगवान जैसी लोकोत्तर आत्मा की जननी होने के कारण प्रियकारिणी देवी विश्वपूज्य हो गईं। वस्तुतः भगवान का जन्म दया के अवतार, विश्वप्रेम की दिव्यमूर्ति का ही जन्म था अर्थात् यह कहना कोई अतिश्योक्ति की बात नहीं है साक्षात् अहिंसा ने ही नर-नारायण का रूप धारण कर जन्म लिया था। जीवों को अहिंसा का उपदेश देकर उन्हें विकारी जीवन से विमुख कराकर अपने आदर्श चरित्र एवं वाणी द्वारा प्राकृतिक पथ पर प्रवृत्त कराने वाले उन प्रभु के जन्म के साथ सचेतन एवं अचेतन प्रकृति का समस्त परिकर रमणीय और सुन्दर हो गया था।

महाकवि जिनसेन के अनुसार–

दिशः प्रसत्तिमासेदुः आसीन्निर्मलमम्बरम् ।
गुणानामस्य वैमल्यं अनुकर्तुमिव प्रभोः।।महापुराण।।5-13।।

उन वीरप्रभू के 5 नामं जगप्रसिद्ध हैं। महावीर चरित्र में वर्णन आया है कि सौधर्मेन्द्र ने कर्म शत्रु पर विजय प्राप्त करने के कारण उनका नाम वीर रखा और सद्गुणों की वृद्धि होने के कारण दूसरा नाम वर्धमान रखा। एक बार संजय-विजय नामक दो चारण ऋद्धिधारी मुनियों के मन में सूक्ष्म शंका होने पर मार्ग से जाते समय प्रभु वीर पर उनकी दृष्टि पड़ी और उसी क्षण ही उनकी शंका दूर हो गई जिससे सन्मतिदाता जान उन्होंने उनका नाम 'सन्मति' रखा। पुनः एक बार सौधर्मेन्द्र की सुधर्म सभा में वर्धमान के पराक्रम और वीरता की चर्चा सुन संगमदेव प्रभु की वीरता की परीक्षा हेतु भयंकर नागराज का रूप धारणकर क्रीड़ा करते हुए वीरप्रभू को डराने आया किन्तु प्रभु को अद्भुत धैर्यमूर्ति देखकर हर्षित हो त्रिलोकपूज्य आत्मा जान 'महावीर' यह सार्थक नामकरण कर उनकी स्तुति कर चला गया। इसी प्रकार दीक्षित अवस्था में प्रभु महावीर एक बार उज्जयिनी नगरी आए और अतिमुक्तक नामक श्मशान में प्रतिमायोग धारण कर तप में स्थित हो गये वहाँ पर निवास करने वाले रुद्र ने रुद्रतम रूप धारण कर प्रभु के चित्त में भय उत्पन्न कर विचलित करने का प्रयत्न किया किन्तु उपसर्ग की इस घड़ी में भी वे भगवान अविचल धैर्यमूर्ति रहे। इससे प्रभावित हो रुद्र ने सौम्यताधारणकर उन तपोमूर्ति की स्तुति की और उन्हें "महति-महावीर" कहा। इस प्रकार पंचपरावर्तन रूप संसार से उद्धार करने वाले उन प्रभु के 5 नाम विख्यात हैं।

भगवान महावीर दिव्यदृष्टि सम्पन्न एवं आध्यात्मिक ज्योति पुंज थे। वे जन्म से ही मति, श्रुत, अवधि इन तीन ज्ञान के धारक थे। वे स्वयं ही विश्व के गुरुदेव थे अर्थात् उन्हें दूसरों के पास जाकर अध्ययन योग्य कोई बात शेष नहीं बची थी। माता के गर्भ में आने से जब उनकी आयु के आठ वर्ष बीत गए। तब उन महावीर भगवान ने स्थूल रूप में हिंसा पापों के त्याग का व्रत धारण किया और वे संयमी हो गए। बाल्यावस्था के अनन्तर यौवनश्री ने उनके शरीर को समलंकृत किया तब उनका सौंदर्य शरद्काल के चन्द्रमा के सदृश मनोरम लगता था ऐसा वर्णन महापुराण में आया है। आचार्य कहते हैं कि–

अथास्य यौवने पूर्णे वपुरासीन्मनोहरम् ।
प्रकृत्यैव शशी कान्तः किं पुनश्शरदागमे।।15-1।।

मांता त्रिशला और महाराजा सिद्धार्थ ने अनुकूल समय देख भगवान के विवाह की चर्चा चलाई, तब उन वीरप्रभु ने अत्यन्त नम्रतापूर्वक निवेदन किया और कहा कि हमारे पूर्व तीर्थंकर पार्श्वनाथ ने विवाह बंधन को इसलिए स्वीकार नहीं किया कि उनकी आयु केवल सौ वर्ष थी फिर मेरी आयु तो मात्र 72 वर्ष है। इस अल्प जीवन में मैं विषयों की दासता का परित्याग कर पूर्ण ब्रह्मचर्य की साधना करना चाहता हूँ इसलिए आपके द्वारा प्रदर्शित राग के पथ पर प्रवृत्ति करने में मैं असमर्थ हूँ। इस प्रकार वे बालब्रह्मचारी रहे और आध्यात्मिक चिंतन द्वारा वचनागोचर सुख का आस्वादन करने लगे। शनैः-शनैः 30 वर्ष व्यतीत हो गए, एक दिन उन प्रभु की दृष्टि अपने पूर्वजन्मों की ओर चली गई और उससे उन्हें यह स्पष्ट हो गया कि किस प्रकार वे इस विश्व के रंगमंच पर एक नट के समान नाना रूपों को धारण करते हुए कर्मों के कुचक्र में फंसे हुए अपने जीवन को व्यतीत कर चुके हैं। बस उन्होंने अपने माता-पिता को येन-केन-प्रकारेण समझाकर तपश्चर्या द्वारा कर्मचक्र का क्षय कर विश्व को शांतिपथ पर लगाने की भावना प्रगट कर दी और माता-पिता का मोहजाल सुदृढ़ निश्चय वाले महावीर की विचारधारा में तनिक भी परिवर्तन नहीं कर सका फिर तो अपने तर्कमयी परिशुद्ध वाणी द्वारा सभी के मोहान्धकार को दूर कर मगशिर कृष्णा दशमी की शुभ तिथि में उन्होंने सर्वपरिग्रह का त्यागकर दिगम्बर दीक्षा ले ली। दीक्षा के पश्चात् भगवान का प्रथम आहार कूल ग्राम के राजा वकुल के घर खीर का हुआ। पुनः एक बार भगवान कौशाम्बी नगरी भी पहुँचे जहाँ कर्मों के द्वारा सताई गई महासती चंदना की भक्ति के प्रभाव से उसके बंधन टूट गए, मिट्टी का सकोरा स्वर्णपात्र बन गया, कोदों का भात शालि तंदुल रूप परिणमन हुआं और चंदना ने उन्हें विधिपूर्वक आहार दिया उससे देवकृत पंचाश्चर्य हुए। यही चंदना भगवान के समवसरण में मुख्य गणिनी हुई हैं।

महाश्रमण महावीर नामक ग्रंथ में पं. सुमेरचंद दिवाकर ने लिखा है कि-दिगम्बर मुद्रा को धारणकर ज्ञानत्व में ध्यान करने वाले भगवान महावीर ने मोहनीय कर्म के विरुद्ध अपना युद्ध छेड़ दिया और महान उग्र तपश्चर्या करने लगे, उस काल में उन्होंने अनेक स्थानों पर भ्रमण किया। उनके दिव्य प्रभाव से जन्म विरोधी जीवों में मैत्री की भावना उत्पन्न हो जाती थी, उनका जीवन अनेक सिद्धियों का केन्द्र बन गया था; किन्तु वे उन चमत्कारों से पूर्णतः विमुख थे। उनकी द्वादशविधि तपश्चर्या के 12 वर्ष पूर्ण हो रहे थे और वैशाख सुदी दशमी की लोकोत्तर एवं पावन बेला समीप आ गई, उस समय का वर्णन करते हुए उत्तरपुराण में आचार्यश्री कहते हैं कि–

"वे जगद्बन्धु भगवान बारह वर्ष तपश्चर्या को व्यतीत कर जृम्भिका गाँव के समीप ऋजुकूला नदी के किनारे मनोहर नामक वन में महारत्न शिला पर प्रतिमायोग धारणकर विराजमान थे। वैशाख शुक्ल दशमी के दिन संध्या के समय हस्त और उत्तरनक्षत्र के मध्यभाग में चन्द्रमा के आ जाने पर प्रभु क्षपक श्रेणी पर आरूढ़ हो शुक्लध्यान में विराजमान हो गये।"

धीरे-धीरे उन्होंने घातिया कर्मों का क्षय किया और 46 गुणों के अधीश्वर बन गए अर्थात् अब वे सर्वज्ञ अर्हन्त हो गए। भगवान का समवसरण ऋजुकूला के तट से चलकर राजगिरी के विपुलाचल पर्वत पर आ गया। कुशल सुरराज इन्द्र के सप्रयत्न से गौतमगोत्रीय इन्द्रभूति ब्राह्मण भगवान के समीप पहुँचे, मानस्तंभ के दर्शन से उनका अहंकार दूर हो गया और दिगम्बर मुद्रा धारण कर भावों की विशुद्धता के फलस्वरूप इन्द्रभूति विप्रराज सात ऋद्धियों से समन्वित गौतम गणधर बन गए। श्रावण कृष्णा प्रतिपदा के मंगल प्रभात में मेघध्वनी का अनुकरण करती हुई भगवान की

दिव्यध्वनि प्रगट हुई। गौतम स्वामी उनके प्रथम गणधर एवं दस अन्य गणधर रूप मुख्य शिष्य थे। उन प्रभुवर के दिव्य उपदेशों को पाकर मानो सारी धरती सनाथ हो उठी और सर्वत्र सुख-शांति, प्रेम-मैत्री व अहिंसा की लहर चल पड़ी। इस प्रकार विहार करते-करते लगभग 30 वर्ष व्यतीत हो गए, अब भगवान पावापुरी पहुँच गए और कमलवापिका से युक्त रमणीक उद्यान में कायोत्सर्ग मुद्रा में विराजमान हो गए जहाँ उनकी अंतिम दिव्यदेशना खिरी और उन्होंने योग निरोध करना प्रारंभ कर दिया, उनके योग निरोध का समय मात्र 2 दिन था। कार्तिक कृष्णा चतुर्दशी की रात्रि का अंतिम प्रहर और ब्रह्म मुहूर्त था जब भगवान शेष अघातिया कर्मों का नाशकर अयोगी जिन हो गए और सिद्ध भगवान बन गए तब सबने निर्वाण कल्याणक का जय-जयकार आरंभ किया। उस समय वह नगर परमपूज्य बन गया। अग्निकुमार देवों के इन्द्रों ने आकर उनके शरीर का अंतिम संस्कार किया और पवित्र भस्म लगाकर स्वयं को पवित्र किया। भगवान के निर्वाण के उपलक्ष्य में देव, देवेन्द्रों ने दीपावली उत्सव मनाया था, ऐसा वर्णन हरिवंशपुराण में आता है आज भी लोग भगवान के निर्वाणकल्याणक की स्मृति में दीपावली पर्व मनाकर अगणित दीपपंक्तियाँ सजाकर उन महामानव को नमस्कार करते हैं।

ऐसे आध्यात्मिक ज्योति के पुंज भगवान महावीर हम सभी की आत्मा में भी दिव्यज्ञान की ज्योति जलावें और उनके शासनकाल में रहने वाले प्रत्येक भव्यप्राणी उनके द्वारा बताए गए अहिंसामयी-सर्वोदयी सिद्धान्तों को अपने जीवन में अपनाते हुए निज-पर का उत्थान करें, यही मंगलभावना है।

* * *

भजन

रचयित्री–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

तर्ज–मेरे देश की धरती.......।

कुण्डलपुर धरती वीरप्रभू के जन्म से धन्य हुई है
कुण्डलपुर धरती...........ओ.............।।टेक.।।
छब्बिस सौ वर्षों पूर्व जहाँ, धनपति ने रतन बरसाये थे।
रानी त्रिशला के सपने सुन, सिद्धार्थराज हरषाये थे।।
तीर्थंकर सुत को पाकर त्रिशला, माता धन्य हुई है।।
कुण्डलपुर धरती...............ओ.............।।1।।
पलने में देख वीर प्रभु को, मुनियों की शंका दूर हुई।
इक देव सर्प बनकर आया, उसकी शक्ती भी चूर हुई।।
कुण्डलपुर की ये सत्य कथाएं, जिन आगम में कही हैं।
कुण्डलपुर धरती................ओ.............।।2।।
गणिनी माताश्री ज्ञानमती के, चरण पड़े कुण्डलपुर में।
अतएव वहाँ पर नंद्यावर्त, महल मंदिर भी शीघ्र बने।।
महावीर जन्मभूमि विकास की, घड़ियाँ धन्य हुई हैं।
कुण्डलपुर धरती...............ओ.............।।3।।
उस जन्मभूमि के दर्शन कर, तुम भी निज शंका दूर करो।
महावीर प्रभू के सन्मुख अपनी, इच्छाएँ परिपूर्ण करो।।
"चन्दनामती" उसके दर्शन, पाकर के धन्य हुई है।
कुण्डलपुर धरती..............ओ.............।।4।।

कुण्डलपुर के राजकुमार महावीर (नाटिका)

प्रस्तुति – आर्यिका चन्दनामती

कुण्डलपुर नगर का दृश्य है। खूब सजी हुई नगरी दिखाएँ। सब तरफ पुष्प, रत्न आदि बिखरे हुए हैं। नगरवासी सब बड़ी प्रसन्नमुद्रा में दिखाई दे रहे हैं। जगह-जगह पर लोग बैठे हंस-हंसकर बातें कर रहे हैं। तभी उस नगर में किसी दूसरी नगरी से एक व्यक्ति आता है और उस नगर की शोभा को देख-देखकर अचम्भित हो रहा है–

व्यक्ति –हे भगवान् ! मैं यह कहाँ आ गया? कहीं मैं सपना तो नहीं देख रहा हूँ?

कुण्डलपुरवासी –कहो भाई! तुम कहाँ से आए हो? और इतने आश्चर्यचकित क्यों हो रहे हो?

व्यक्ति –भाई! मैं बहुत दूर से आया हूँ और इस नगर की स्वर्ग जैसी शोभा को देख-देखकर बहुत हैरान हूँ। मैं समझ नहीं पा रहा हूँ कि.....

कुण्डलपुरवासी –(बीच में बात काटते हुए) समझाता हूँ, समझाता हूँ, भैया! तुम इतना चिन्ता काहे को करते हो? चलो, कहीं बैठकर बात करते हैं। (दोनों पास ही एक पेड़ के नीचे बैठकर वार्तालाप करते हैं)–

व्यक्ति –हाँ भाई! अब बताओ, इस नगरी की सुन्दरता का क्या राज है?

कुण्डलपुरवासी –सुनो! यहाँ के राजा सिद्धार्थ हैं न! उनकी महारानी त्रिशला ने जिस दिन से गर्भ धारण किया है उसके छह महीने पहिले से यहाँ रोज खूब रतन बरसते हैं।

व्यक्ति –(आश्चर्य से) अच्छा! तो ये बात है!

(तभी कई नर-नारी झूमते-नाचते हुए आते हैं और कुण्डलपुर के राजा सिद्धार्थ की जय-जयकार करते हैं-)

सामूहिक स्वर –जय हो, महाराजा सिद्धार्थ की जय हो, महारानी त्रिशला की जय हो, कुण्डलपुर के राजकुमार की जय हो!

व्यक्ति –क्या हुआ! आप लोग ये जय-जयकार क्यों कर रहे हैं?

कुण्डलपुरवासी –भैया! हमें इतने दिनों से इंतजार था, वह रत्न हमें आज मिल गया।

व्यक्ति –तुम्हारा मतलब, रानी त्रिशला ने पुत्र रत्न को जन्म दे दिया है।

(यह सुनते ही सभी लोग पुनः नाचने लगते हैं।)-

आओ रे आओ खुशियां मनाओ, मंगल बेला आई।
कुण्डलपुर के कण कण में, प्रभु जन्म की खुशियाँ छाईं।।
बोलो जय जय जय, बोलो जय जय जय।

(पुनः सभी लोग जय-जयकार करते हुए राजा सिद्धार्थ के राजदरबार में प्रवेश करते हैं)-

(राजा सिद्धार्थ का राजदरबार दिखाएँ, सब तरफ खुशियाँ मनाई जा रही हैं, सभी को किमिच्छक दान बाँटा जा रहा है। राजा बहुत ही प्रसन्नमुद्रा में राजसिंहासन पर बैठे हैं)-

सामूहिक स्वर –महाराज सिद्धार्थ की जय हो! सिद्धार्थ के दुलारे की जय हो!

व्यक्ति (1) –बधाई हो महाराज, बधाई हो!

व्यक्ति (2) –आज तो बहुत ही खुशी का दिन है महाराज!

व्यक्ति 3) –महाराज! हम भी भगवान बालक का मुख देखना चाहते हैं।

(यह सुनते ही राजा मंत्री को आदेश देते हैं)–

राजा सिद्धार्थ –मंत्रिवर! इन सभी को ले जाकर महल के स्वागत कक्ष में बिठाओ।

मंत्री –जो आज्ञा महाराज! (प्रजाजन की ओर देखकर) आइए आप लोग मेरे साथ आइए।

(सभी लोग अन्दर जाकर जिन बालक के दर्शन का इंतजार करते हैं)

द्वितीय–दृश्य

(स्वर्ग का सुन्दर दृश्य है, सौधर्मइन्द्र की सुधर्मा सभा लगी हुई है तभी अचानक सौधर्मइन्द्र का आसन कम्पायमान होने लगता है।

सौधर्म इन्द्र –अरे! ये क्या हुआ! मेरा आसन क्यों कंपित हो रहा है?

शचि इन्द्राणी –नाथ! सिंहासन हिलने का कारण क्या हो सकता है?

सौधर्मइन्द्र –हाँ-हाँ समझ गया! भरतक्षेत्र की कुण्डलपुर नगरी में सिद्धार्थ महाराज की रानी त्रिशला ने तीर्थंकर पुत्र को जन्म दिया है (परोक्ष से ही भगवान को नमस्कार करते हैं)।

कुबेर –जैसी आज्ञा इन्द्रराज! (चला जाता है)

(सौधर्मन्द्र ऐरावत हाथी पर आरूढ़ होकर कुबेर इन्द्र, शचिइन्द्राणी तथा और भी बहुत से इन्द्रों के साथ मध्यलोक पहुँचकर कुण्डलपुर नगरी की तीन प्रदक्षिणा लगाते हैं पुनः सभी लोग जय-जयकार करते हुए राजा सिद्धार्थ के राजदरबार में प्रवेश करते हैं-पुनः राजा सिद्धार्थ को प्रणाम करते हैं)–

सौधर्म इन्द्र –राजा सिद्धार्थ की जय हो! महारानी त्रिशला की जय हो! कुण्डलपुर के युवराज की जय हो!

राजा सिद्धार्थ –आइये इन्द्रराज! आपका स्वागत है।

सौधर्म इन्द्र –राजन् ! हम लोग स्वर्गलोक से जिनबालक के जन्मोत्सव की खुशियाँ मनाने आये हैं। हम जिन शिशु को सुमेरु पर्वत की पांडुकशिला पर ले जाकर उनका 1008 कलशों से जन्माभिषेक करेंगे, आप हमें आज्ञा प्रदान करें।

राजा सिद्धार्थ –(प्रसन्न मुद्रा में) जैसी आपकी इच्छा देवराज!

सौधर्म इन्द्र –(शचि इन्द्राणी से) देवी! आप प्रसूतिगृह में जाकर सर्वप्रथम जिन शिशु का दर्शन करे और उन्हें लाकर हम लोगों को भी दर्शनलाभ प्रदान करें।

शचि इन्द्राणी –जैसी आपकी आज्ञा, स्वामी!

(शचि इन्द्राणी प्रसूतिगृह में जाकर माता त्रिशला को मायामयी निद्रा में सुला देती हैं तथा उनके पास एक मायामयी बालक को रखकर जिनशिशु को बाहर ले जाती हैं)-

(जिनशिशु का दर्शन करके सब लोग खुशी में झूमने लगते हैं फिर बालक को ऐरावत हाथी पर बिठाकर सौधर्म इन्द्र सुमेरु पर्वत की पांडुक शिला पर ले जाते हैं और वहाँ जन्मजात बालक का 1008 कलशों से जन्माभिषेक करके उनको "वीर" और "वर्धमान" इन दो नामों से अलंकृत करके पुनः माता त्रिशला के पास पूर्ववत् रख देते हैं और राजा से आज्ञा लेकर वापस स्वर्गलोक की ओर चले जाते हैं)।

तृतीय दृश्य

(राजमहल का सुन्दर दृश्य है। एक पालने में बालक वर्धमान झूल रहे हैं पास में माता त्रिशला बैठी हुई हैं तभी अचानक उधर आकाश मार्ग से संजय और विजय नामक दो चारणऋद्धि धारी महामुनिराज गुजरते हैं)–

संजय मुनि –विजय मुनि! अभी कुछ देर पहले मैंने आपसे कहा था न कि मेरे मन में एक शंका है!

विजय मुनि –हाँ मुनिराज! आपने कहा तो था!

संजय मुनि –तो वह शंका अब मेरी दूर हो गयी है।

विजय मुनि –कैसे महात्मन् ?

संजय मुनि – वो सामने राजभवन में बालक वर्धमान झूल रहे हैं न! इनका दर्शन करते ही मुझे मेरी का शंका का समाधान मिल गया।

विजय मुनि – जय हो! बालक वर्धमान की जय हो!

संजय मुनि – इनके देखने मात्र से मेरी शंका दूर हुई है अतः मैं इनका "सन्मति" यह नामकरण करता हूँ।

(दोनों मुनी एक साथ) जयवंत हों! सन्मति भगवान चिरकाल तक धरती पर जयवंत हों और सबको सद्बुद्धि प्रदान करते रहें।

(इस प्रकार बालक सन्मति दूज के चांद की तरह बढ़ने लगे, अपनी बालसुलभ क्रीड़ाओं से सबका मन अनुरंजि करने लगे, महाराज सिद्धार्थ और रानी त्रिशला तो पुत्र को देखकर मानो फूले ही नहीं समाते थे)।

महावीर की बाल सभा एवं सर्प क्रीड़ा

तीर्थंकर वर्धमान के साथ सौधर्म इन्द्र अनेक देवों को छोटे बालक के रूप में भेजकर तरह-तरह से क्रीड़ा करवाते हैं तब वे देवगण बालक बनकर उनके साथ खेल खेलने में अपना अहोभाग्य समझते हैं।

इन देवबालकों के साथ दिव्य क्रीड़ा करते हुए जिनबालक वर्धमान कभी-कभी कुण्डलपुर के उद्यान में बालसभा का आयोजन करके देवताओं को भी अपने अवधिज्ञान से अनेक शास्त्रीय, लौकिक, सामाजिक तथा व्यावहारिक विषयों का ज्ञान प्रदान करते थे। वैसी ही एक "महावीर बाल सभा एवं सर्पक्रीड़ा" का रूपक यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है–

राजमहल का दृश्य है, बीचों बीच में लगभग 8 वर्ष के बालक को महावीर के रूप में सुसज्जित करके सिंहासन पर बिठावें और बगल की कुर्सी पर महावीर के प्रिय सखा के रूप मे 8 वर्ष के एक बालक को उनके प्रिय देवसखा के प्रतीक में दिखावें। आजू-बाजू में 7-7 बालक और भी (लगभग 5 से 7 वर्ष की उम्र वाले) सुन्दर वेषभूषा में बिठाकर बालसभा का कार्यक्रम प्रारंभ करें-(एक देव का कत्थक नृत्य दिखावें) पुनः–

देवसखा – हे तीर्थंकर सखा वर्धमान! इस धरती पर सबसे बहुमूल्य पर्याय कौनी सी होती है?

बालक वर्धमान – मित्रवर! धरती पर मनुष्य पर्याय सबसे अधिक बहुमूल्य मानी जाती है।

देवसखा – ऐसा क्यों? मेरे वीर मित्र!

वर्धमान – इसलिए कि मनुष्य पर्याय से ही सबसे ऊँचा पद मोक्ष प्राप्त किया जा सकता है। इसके अलावा किसी भी पर्याय से मोक्ष की प्राप्ति नहीं हो सकती है।

देवबालक नं. 1 – हे वीर! देव लोग मनुष्य पर्याय कैसे पा सकते हैं? यह तो बताइये।

वर्धमान – मित्रों! देवता भी भगवान की भक्ति और सम्यग्दर्शन की दृढ़ता से अगले जन्म में उस बहुमूल्य मनुष्य शरीर को धारण कर सकते हैं।

देवबालक नं. 2 – हे सन्मति! कुछ लोग मनुष्य पर्याय पाकर भी लूले-लंगड़े हो जाते हैं, वह किस कारण से?

वर्धमान – सुनो भाइयो! इस प्रश्न का उत्तर यह है कि जो लोग पूर्व जन्म में दूसरों को दुःख देते हैं अथवा दूसरे अंगहीन लोगों को देखकर उनकी हंसी उड़ाते हैं वे मनुष्य जन्म पाकर भी लूले-लंगड़े हो जाते हैं।

देवबालक नं. 3 – हे महावीर! कुछ मनुष्य बेचारे गूंगे और बहरे देखे जाते हैं, सो उसका क्या कारण है?

वर्धमान – मेरे सखा! इसका भी उत्तर सुनो, जो लोग दूसरों की बुराई करते हैं या झूठ बोलते हैं वे तो गूंगे हो जाते हैं और जो बुराई सुनते हैं वे बहरे हो जाते हैं।

देवबालक नं. 4 – (राजस्थानी भाषा में) अरे ओ सिद्धारथ पुत्र! म्हारे भी एक प्रश्न का उत्तर दे दीजो।मैं पूछवा चाहूँ कें थांके बाबा को कांई नाव है, मने को मालुम कोनी?

वर्धमान – सुण सुण म्हारो सखो। म्हारे बाबा को नाव है राजा सर्वार्थ। समझा या कोनी समझा। म्हारा बात जी तो राजा सिद्धार्थ है और वाका बापजी राजा सर्वारथ है।

देवबालक नं. 5 – (गुजराती भाषा में) अरे वाह! त्रिशलानन्दन तो आजे सबने बतावा मा लागा छे तो मू पण एक प्रश्न

जरूर पूछवा माटे व्याकुल छूं। हे महावीर! तीर्थंकर भगवन्त ऋषभदेव ने दीक्षा क्यां लीधी थी?

वर्धमान –आ आ देवसखा! आ प्रश्न न उत्तर जानवा माटे थारी इच्छा छे तो सुण, प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव भगवान ज्यां दीक्षा लीधी त्यासना नाम छे-प्रयाग। वर्तमान मा त्यां "तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली" नाम तीरथ बणी गया छे, त्यां अक्षवटवृक्ष तले भगवान ऋषभदेव नी प्रतिमा ध्यानस्थ मुद्रा मा विराजमान छे।

देवबालक नं. 6 –(अंग्रेजी में) ओ माई डियर फ्रेन्ड महावीर! आई वान्ट टू आस्क यू वन क्वेश्चन दैट हू आर काल्ड रीयल गॉड?

वर्धमान –दिस इस वेरी गुड क्वेश्चन मिस्टर देव! हू हैव डेस्ट्रायड एट कर्माज एण्ड अटेन्ड निर्वान पदवी दे आर काल्ड रीयल गॉड।

देवबालक नं. 7 –अरे ओ महावीर! जरा हमहू का एक बात बताय देव कि हमारे सौधर्मइन्द्र महाराज कौन अइसा पूरब जनम मा पुन्य किहिन हैं कि आप जइसे कितनेव तीर्थंकर भगवन्तन के इ जन्माभिषेक करे का सौभाग्य पावत हैं?

वर्धमान –हाँ हाँ देव महाराज! तुम तो अब अवधी भाषा मा पूछे लागेव, हमका यहू बोली बोलेक आवत है। तुम सौधर्म इन्द्र के पुन्य की बात जाना चाहत हौ ना तौ सुनौ ई हमरे इन्द्र राजा अपने पूरब जनम मा खूब भगवान की भक्ति करिन और फिर निर्दोष चारित्र का पालन करिन, तपस्या करिन, वही पुन्य के परताप से ई मनुष्य का चोला छोड़ के सौधर्म इन्द्र भये हैं।

देवबालक नं. 8 –(बुंदेलखंडी भाषा में) अरे ओ लल्ला महावीर! ई इन्द्र महाराज कबै मोक्ष जैहें?

वर्धमान –बस, हिंया से जब इनकी उमर पूरी हुई जई है तो एक मनुष्य का जनम लइकै, तपस्या करिकै सीधे इनका मोक्ष होय जई है।

देवबालक नं. 9 –(नीमाड़ी भाषा में) महावीर! तुम जवान हुइन ब्याह करोगा कि नई?

वर्धमान –हउं तो बड़ो हुइन दीक्षा लेऊँगा, ब्याव नि करूँगा।

देवबालकों का सामूहिक स्वर-जय हो महावीर! तुम्हारी जय हो। तुम्हारी जय हो। त्रिशला माता की जय हो, कुण्डलपुर नगरी की जय हो।

(इसी बीच माता त्रिशला उस बाल सभा में आकर पुत्र महावीर का चुम्बन लेकर उनसे कहती हैं)–

त्रिशला –बेटा, चलो उद्यान में तुम्हें झूला झुलाऊँगी।

वर्धमान –चलो माँ, आपके साथ झूलने में तो कुछ और ही आनन्द आएगा।

(माता-पुत्र झूले पर बैठ जाते हैं और देव-देवियाँ उन्हें झुला रहे हैं। सामूहिक गीत गा-गाकर खूब मनोरंजन करते हैं।)

गीत–

अरे माता, तेरे गुणों की महिमा जगत में छाई है भारी।
महावीर से तीर्थंकर की जननी।
महाराज सिद्धार्थ की धर्मपत्नी।।
अरे माता, कुण्डलपुर नगरी में, खुशियाँ छाई हैं भारी।।1।।

देवबालक नं. 1 –माता! मैं भी आपकी गोदी में बैठकर झूला झूलूँगा।

त्रिशला –हाँ, हाँ, आओ पुत्र! तुम भी मेरे साथ झूला झूलो।

(झूलने लगते हैं)

देवबालक नं. 2 –माँ! मुझे भी दुलार करो ना!

त्रिशला –(पुचकराते हुए) आओ मेरे प्यारे बच्चों! तुम सभी के साथ जो आज मुझे बड़ा ही आनन्द आ रहा है।

(सभी देवबालक वहीं पास में आकर माता को घेरकर गाना गाने लगते हैं।)–

छोटे छोटे बालकों की प्यारी मइया।
छूने को चाहें हम तेरी पइयां।।
खेलें प्रभु वीर संग हम छइयां।
कुण्डलपुर में बजें शहनाइयां।।
आँख मिचौली खेलेंगे, वीर की लीला देखेंगे।
फिर माँ के आँचल में आकर, साथ में झूला झूलेंगे।।
देख देखे खुश होगी मइया।
छूने को चाहें हम तेरी पइयां।।1।।

त्रिशला –सुनो बच्चों! अब मैं जा रही हूँ, तुम लोग खेल कर थोड़ी देर में घर आ जाना।

सभी बालक –ठीक है माँ, ठीक है। हम महावीर को लेकर जल्दी ही आपके पास आ जाएंगे।

(माता चली जाती है, पुनः सभी बालक महावीर के साथ कबड्डी, खो-खो गेंद-फुटबाल आदि खेल खेलते हैं। तभी एक देव भयंकर अजगर का रूप धारणकर महावीर की परीक्षा लेने आता है। सभी बालक उसे देखकर डर के मारे पेड़ पर चढ़ जाते हैं और कुछ पेड़ से गिर-गिरकर इधर-उधर भागने लगते हैं।

(पेड़ पर चढ़े बालकों का दृश्य एवं इधर-उधर भागते बालक)

वर्धमान –(बालकों से) अरे! तुम सब लोग पेड़ पर क्यों चढ़ गये?

देवबालक नं. 1 –जल्दी से तुम भी ऊपर आ जाओ, वर्धमान! नहीं तो सांप काट लेगा।

देवबालक नं. 2 –अरे अरे, देखो! सांप उधर वर्धमान की ओर ही भाग रहा है, कहीं काट न ले।

देवबालक नं. 3 –इन्हें कुछ हो गया तो हम माता के सामने क्या मुँह दिखाएंगे?

देवबालक नं. 4 –(महावीर को जबर्दस्ती पेड़ पर चढ़ाते हुए) चलो चलो, ऊपर पेड़ पर बैठकर देखते हैं कि यह साँप कहाँ जाता है।

वर्धमान –क्या तुम्हें भी डर लग रहा है मित्र! मैं तो इसे पछाड़ सकता हूँ।

देव बालक –नहीं मित्र! ऐसा साहस मत करना, यह सांप साधारण नहीं, अजगर है। इसके अंदर इतना जहर होता है कि एक फुंकार से ही मनुष्य के प्राण निकल जाते हैं।

एक बालक –यह क्या? यह सांप तो इसी पेड़ के ऊपर चढ़ा आ रहा है, क्या हम सभी की जान लेना चाहता है?

सभी बालक –अरे बचाओ, बचाओ! कुण्डलपुर के वनमाली! जल्दी आओ, नहीं तो यह
अजगर आज हम सबको खा जाएगा।

वर्धमान –(पेड़ की एक डाल पर खड़े होकर बीन बजाने लगते हैं) ऐ मेरे मित्र! सुनो, तुम किसी को काटना मत। अपनी शक्ति ही तुम दिखाना चाहते हों, तो मैं आता हूँ तुम्हारे पास।लेकिन मेरे मित्रों को तुम बिल्कुल मत सताना। (तुरंत पेड़ से लिपटे हुए अजगर सर्प के फण पर पैर रखकर बालक वर्धमान नीचे उतर आए और सर्प को अपने हाथों में लेकर उसके साथ क्रीड़ा करने लगे।

देवबालक –अरे मित्र! छोड़ दो, छोड़ दो, इस सर्प को छोड़ दो। अन्यथा मौका पाते ही तुम्हारे ऊपर हमला कर देगा।

बालक नं. 2 –हे प्रभो! कितना धैर्य और बल है इस बालक में। मेरी तो डर के माने जान ही सूखी जा रही है।

बालक नं. 3 –बस, यही मनाओ कि वर्धमान की रक्षा हो और माता त्रिशला तक हम इन्हें सुरक्षित पहुँचा सकें।

वर्धमान –मित्रों! तुम सभी निर्भय होकर नीचे उतर आओ, यह सर्प तुम लोगों का कुछ भी नहीं बिगाड़ेगा।

(अकस्मात् वहाँ संगम नामक देव प्रगट होकर कहने लगता है)–

संगमदेव –(नमस्कार मुद्रा में) जय हो जय हो, वर्धमान महावीर की जय हो।

वर्धमान –आप कौन हैं?

संगमदेव –मैं एक देव हूँ और मैं ही सांप का रूपधारण कर आपके पराक्रम की परीक्षा लेने आया था। हे वर्धमान! आज मै आपको "महावीर" के नाम से अलंकृत कर आपको बारम्बार नमन करता हूँ। धन्य हैं आप। बोलो महावीर तीर्थंकर भगवान की जय।

सभी बालक –(नीचे उतरकर) हे महावीर! सचमुच में आपका बल-पौरुष सराहनीय है।

सामूहिक गीत –

सब मिलकर आज जय कहो, महावीर प्रभू की।
मस्तक झुकाकर जय कहो, श्री वीर प्रभू की।।
ज्ञानी बनो दानी बनो, बलवान भी बनो।
महावीर सम बन जय कहो, महावीर प्रभू की।।1।।
देकर परीक्षा नाग को, परास्त कर दिया।
हम सब भी मिल वन्दन करें, महावीर प्रभू की।।2।।

सामूहिक स्वर –जय बोलो, महावीर भगवान की जय।

⁂

कौन कहता है भगवान महावीर जैनधर्म के संस्थापक हैं?

यह धर्मपरायण देश है, यहाँ मजहबी भेदभाव नहीं है। उपासना पद्धति को लेकर शास्त्रार्थ तो होते रहे हैं लेकिन इस देश की विशेषता रही है कि दूसरे के सत्य को भी स्वीकार करने की तत्परता रही है। यह प्रसन्नता की बात है कि भगवान ऋषभदेव जी का निर्माण महोत्सव मनाया जा रहा है। चौबीस तीर्थंकर हुए हैं, सभी आदरणीय हैं, पूजनीय हैं लेकिन सबके बारे में जितनी जानकारी चाहिए, उतनी नहीं है। अभी पूज्य माताजी कह रही थीं कि कई लोग तो यह समझते हैं कि जैनधर्म की स्थापना भगवान महावीर ने की, जबकि सच्चाई यह है कि वे 24वें तीर्थंकर थे, उनसे पहले 23 तीर्थंकर और हुए हैं। मेरे सरकारी दफ्तर के कमरे में तेईसवें तीर्थंकर पार्श्वनाथ जी की मूर्ति रखी हुई है। बहुत से लोग आते हैं, पहचान नहीं पाते हैं उनको बताने का काम श्री धनंजय जी ही करते हैं। लेकिन जानकारी होनी चाहिए। जैसे-जैसे हम महापुरुषों के बारे में, देवताओं के बारे में जानते हैं, जानने की कोशिश करते हैं, ज्ञान के नये आयाम हमारे सामने खुलते हैं।

(४ फरवरी २००० को भगवान ऋषभदेव निर्वाण महोत्सव के उद्घाटन समारोह में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा दिये गये राष्ट्र के नाम संदेश का एक अंश)

–अटल बिहारी वाजपेयी
(भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री)

भगवान महावीर के जीवन से संबंधित दिगम्बर एवं श्वेताम्बर परम्परानुसार भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण

–पीठाधीश क्षुल्लक मोतीसागर

श्वेताम्बर– महावीर पहले देवानंदा नामक ब्राह्मणी के गर्भ में आये पुनः इन्द्र ने उनका गर्भपरिवर्तन करके रानी त्रिशला के गर्भ में स्थापित किया।

दिगम्बर– भगवान महावीर ने त्रिशला के गर्भ में ही अवतार लिया।

श्वेताम्बर– बिहार प्रान्त के 'लिछवाड़' ग्राम में महावीर का जन्म हुआ था।

दिगम्बर– महावीर का जन्म विदेह देश (वर्तमान बिहार प्रान्त) की कुण्डलपुर नगरी (वर्तमान नालंदा जिला) में हुआ था।

श्वेताम्बर– वे माता-पिता एवं गुरु को नमस्कार करते थे।

दिगम्बर– महावीर अपने माता-पिता, मुनि आदि किसी को भी नमस्कार नहीं करते थे। तीर्थंकर प्रकृति के नियमानुसार सभी तीर्थंकर केवल सिद्धों को नमन करते हैं और किसी को नहीं।

श्वेताम्बर– यशोदा नामक राजकुमारी के साथ उनका विवाह हुआ और उनकी प्रियदर्शना नामक पुत्री थी। उसके पश्चात् राज्य संचालन कर वे दीक्षाधारण कर देवदूष्य वस्त्रों को पहनते थे और दीक्षा के दूसरे वर्ष में उन्होंने उसका भी त्याग कर दिया था और वे अचेलक हो गये थे।

दिगम्बर– महावीर ने 30 वर्ष की युवावस्था में दिगम्बर जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहण की, वे बालब्रह्मचारी थे। महावीर अपनी माता के इकलौते पुत्र थे क्योंकि तीर्थंकर माता मात्र एक पुत्र को ही जन्म देती है।

श्वेताम्बर– महावीर यत्र-तत्र ग्रामों में विहार करते रहे और सबसे वार्तालाप करते रहे। चंडकौशिक सर्प के काटने पर उनके पैरों से दूध की धारा निकल पड़ी, उनके शरीर पर कीलें ठोकी गईं।

दिगम्बर– दीक्षा के बाद महावीर ने मौनपूर्वक विहार किया और 12 वर्ष की तपस्या करके केवलज्ञान प्राप्त किया।

श्वेताम्बर– महावीर के ऊपर जगह-जगह तमाम नगरों में उपसर्ग हुआ। लोगों ने उन्हें बांधा, मारा, जेल में डाल दिया, उछालकर फेंक दिया, आग लगा दी......इत्यादि।

दिगम्बर– महावीर पर उज्जयिनी के अतिमुक्तक वन में ध्यानावस्था में रुद्र ने मात्र एक बार उपसर्ग किया और ध्यान के बल पर उपसर्ग को जीतकर महावीर तीर्थंकर बने। दिगम्बर परम्परानुसार कोई भी उपसर्गकर्ता तीर्थंकर के शरीर को स्पर्श नहीं कर सकता है, उपसर्ग उनके चारों ओर होता है, तीर्थंकर को कोई कष्ट नहीं हो सकता है। महावीर अपने जीवन में कभी बीमार नहीं हुए, क्योंकि तीर्थंकर के शरीर में प्रारंभ से अंत तक कोई रोग नहीं होता है।

श्वेताम्बर– गोशालक ने भगवान महावीर पर तेजोलेश्या का प्रहार किया।

दिगम्बर– गोशालक नामक कोई व्यक्ति भगवान महावीर के जीवनकाल में नहीं हुआ।

श्वेताम्बर– भगवान महावीर ने दीक्षा के पश्चात् चातुर्मास किये।

दिगम्बर– तीर्थंकर दीक्षा के पश्चात् वर्षायोग नहीं करते।

श्वेताम्बर– श्वेताम्बर में दिगम्बर चित्र बनाते हुए उसके आगे पेड़ आड़ा कर देते हैं, सामने सर्प या आशीर्वाद का हाथ आड़ा करके नग्नता को ढक देते हैं।

दिगम्बर– भगवान महावीर को दीक्षा लेने के पश्चात् नग्न दिगम्बर अवस्था में दिखाया जाता है।

श्वेताम्बर– भगवान महावीर ने गौतम गणधर को निर्वाण जाने के समय अन्यत्र भेज दिया ताकि उनको वियोग का दुःख न हो।

दिगम्बर– भगवान महावीर ने अपने निर्वाण काल की बेला में गौतम गणधर को अन्यत्र जाने का आदेश नहीं दिया क्योंकि वे तो पूर्ण वीतरागी थे।

श्वेताम्बर– महावीर की माता ने 14 स्वप्न देखे।

दिगम्बर– महावीर की माता ने 16 स्वप्न देखे जैसा कि प्रत्येक तीर्थंकर की माता अपने गर्भ में तीर्थंकर के आने के पहले 16 स्वप्न ही देखती हैं।

श्वेताम्बर– रानी त्रिशला के महावीर से पहले एक पुत्र नंदीवर्धन तथा पुत्री सुदर्शना थे अर्थात् महावीर से पूर्व उनके एक भाई और एक बहन थी।

दिगम्बर– रानी त्रिशला के केवल एक ही पुत्र भगवान महावीर थे।

श्वेताम्बर– महावीर का एक नाम वैशालिक भी माना है।

दिगम्बर– किन्हीं भी ग्रंथों में भगवान महावीर का नाम वैशालिक नहीं आया।

श्वेताम्बर– महावीर से पूर्व महाश्रमण केशी कुमार हुए ऐसा माना है।

दिगम्बर– भगवान महावीर से पूर्व केशी कुमार नाम के कोई महामुनि नहीं हुए।

श्वेताम्बर– माता त्रिशला ने महाराजा के शयनकक्ष में जाकर उनको जगाकर अपने स्वप्न बताये। उनका फल राजदरबार में विद्वान पंडितों को बुलाकर पूछा।

दिगम्बर– माता त्रिशला पिछली रात्रि में स्वप्न देखकर अगले दिन प्रातः राजदरबार में जाकर महाराज सिद्धार्थ से स्वप्नों का फल पूछती हैं।

श्वेताम्बर– गर्भ में यह जानकर कि माता को कष्ट हो रहा है महावीर ने हलन-चलन बंद कर दिया था। उनका यह नियम था कि जब तक माता-पिता जीवित रहेंगे तब तक दीक्षा नहीं लूंगा।

दिगम्बर– गर्भधारण करने से माता को कोई कष्ट नहीं था, न ही गर्भ में महावीर ने ऐसा कोई नियम लिया कि माता-पिता के जीवित रहने तक दीक्षा नहीं लूंगा।

श्वेताम्बर– पांडुकशिला पर इन्द्र भगवान को गोद में लेकर बैठता है।

दिगम्बर– जन्माभिषेक के समय इन्द्र भगवान को गोद में लेकर पांडुकशिला पर नहीं बैठता है।

श्वेताम्बर– बाल्यावस्था में महावीर स्कूल में पढ़ने गये।

दिगम्बर– तीर्थंकर स्कूल में पढ़ने नही जाते हैं वे तो जन्म से ही तीन ज्ञान के धारी होते हैं।

श्वेताम्बर– माता-पिता आदि को प्रणाम करते हैं।

दिगम्बर– दीक्षा के पूर्व या पश्चात् तीर्थंकर माता-पिता अथवा मुनियों को भी नमस्कार नहीं करते।

श्वेताम्बर– भगवान ने अशोक वृक्ष के नीचे दीक्षा धारण की।

दिगम्बर– भगवान ने साल वृक्ष के नीचे दीक्षा धारण की।

श्वेताम्बर– ध्यानस्थ अवस्था में गोशालक उनके पास बैल बांध गया पुनः आने पर बैल नहीं मिले तो उस गोशालक ने महावीर स्वामी को कोड़े मारे।

दिगम्बर– महावीर स्वामी के दीक्षा लेने के पश्चात् किसी भी गोशालक ने कोई उपसर्ग नहीं किया।

श्वेताम्बर– इन्द्र ने भगवान महावीर के दीक्षा काल में आने वाले उपसर्गों से रक्षा के लिए साथ में रहने का निवेदन किया किन्तु भगवान ने मना कर दिया।

दिगम्बर– इन्द्र ने कभी भी भगवान महावीर को दीक्षा काल में यातनाओं से बचाने के लिए साथ में रहने का निवेदन नहीं किया।

श्वेताम्बर– मोराक ग्राम के तापस आश्रम में चातुर्मास किया तथा कुटिया की घास गायों द्वारा खा जाने पर कुलपति ने महावीर को उपालंभ दिया। इस पर महावीर आश्रम छोड़कर अन्यत्र चले गये।

दिगम्बर– मुनि अवस्था में मोराक नगर के तापस आश्रम में नहीं ठहरे।

श्वेताम्बर– भिक्षा, गवेषणा मार्ग, ज्ञान तथा पूछे गये प्रश्नों के उत्तर के अतिरिक्त मौनपूर्वक रहने का नियम लिया।

दिगम्बर– दीक्षा लेने के पचात् तीर्थंकर किसी से किसी भी प्रकार का वार्तालाप, चर्चा, शंका-समाधान आदि नहीं करते। (दीक्षा लेने से केवलज्ञान होने तक)

श्वेताम्बर– भ्रमण काल में अस्तिक ग्राम में एक सुनसान वैदिक मंदिर में ठहरे वहाँ के यक्ष ने घोर उपसर्ग किया। अंत में हारकर भक्त बन गया।

दिगम्बर– विहारकाल में अस्तिक ग्राम में किसी भी वैदिक मंदिर में नही ठहरे।

श्वेताम्बर– कनखल आश्रम से श्वेताम्बी जाने के रास्ते में ध्यान में खड़े महावीर पर चण्डकौशिक सर्प ने दंशा घात किया जिसमें महावीर के पैर से दूध की धारा बह निकली। सर्प शांत हो गया उसे घी शक्कर अर्पित करने लगे जिससे उस पर असंख्य चीटियाँ चढ़ गई जिससे मरकर देव बन गया।

दिगम्बर– भगवान के विहार में कनखल आश्रम में जाने का कोई विवरण नहीं आता।

श्वेताम्बर– संगम देव ने दीक्षित अवस्था में कभी पत्नी बनकर, कभी रूप लावण्य स्त्री का रूप धरकर, कभी पक्षी बनकर, कभी भगवान को चोरीकला का गुरु घोषित कर, कभी हाथी आदि जंगली जानवर बनकर 6 माह तक घोर उपसर्ग किया।

दिगम्बर– संगम देव ने सर्प बनकर भगवान महावीर की बाल्यकाल में मात्र एक दिन वीरता की परीक्षा ली थी।

श्वेताम्बर– संगमदेव की पापवर्धित क्रियाओं को देखकर उसके प्रति करुणा भाव से भगवान महावीर के नेत्र सजल हो गये।

दिगम्बर– भगवान महावीर दीक्षित अवस्था में कष्टों से अथवा स्नेहवश कभी भी रोये नहीं (अश्रुपात नहीं हुए)।

श्वेताम्बर– गोकुल ग्राम में गोपी वत्सपालिका के यहाँ छह मास के उपवास के बाद पारणा हुआ।

दिगम्बर– ऐसा कोई पारणा नहीं हुआ क्योंकि महावीर इस तरह यत्र-तत्र भोजन–पारणा/आहार नहीं करते थे।

श्वेताम्बर– दीक्षा के 13वें वर्ष में घम्माणी ग्राम में एक ग्वाले ने घोर उपसर्ग किया। अपने बैल ध्यानस्थ भगवान के पास छोड़ गया। लौट कर आने पर बैल नहीं मिलने पर क्रोधित होकर उस ग्वाले ने भगवान के दोनों कानों में लकड़ी की कीलें ठोंकी, इस असहनीय कष्ट को भगवान ने मौनभावपूर्वक सहन किया। कीलें ठुकी अवस्था में मध्यमा नगरी में एक श्रावक के यहाँ भिक्षार्थ आये, यहाँ एक वैद्य ने उनकी दारुण पीड़ा को देखकर तेल आदि का लेपकर कीलें खींची जिसके कारण खून की तेजधार निकल पड़ी। जिससे भगवान को अपार वेदना हुई। फिर भी वे विचलित नहीं हुए। उपसर्गों का प्रारंभ बैलों के निमित्त से हुआ तथा उपसर्गों का समापन भी बैलों के निमित्त से हुआ।

दिगम्बर– ऐसा कोई उपसर्ग नहीं हुआ।

श्वेताम्बर– चंदनबाला से आहार वाले दिन भगवान ने 13 नियमों की विधि ली थी।

दिगम्बर– चंदनबाला को भक्तिवश सहज में महावीर को आहारदान देने का योग प्राप्त हुआ था।

श्वेताम्बर– चंदनबाला को उड़द के बाकले सूप में खाने के लिए दिये जाते थे।

दिगम्बर– चंदनबाला को मिट्टी के सकोरे में कोदों का भात दिया जाता था।

श्वेताम्बर– चंदना को कौशाम्बी में नीलाम कर दिया गया सेठ ने दासी के रूप में रखा।

दिगम्बर– इस प्रकार का कथानक नहीं है। सेठ ने पुत्री के रूप में अपने यहाँ रखा था किन्तु सेठानी ने शंकित होकर उसे कष्ट दिया।

श्वेताम्बर– गोशालक ने भगवान महावीर पर तेजोलेश्या फेकी।

दिगंम्बर– गोशालक नाम का कोई व्यक्ति भगवान के संपर्क में नहीं आया। न ही ऐसी कोई घटना हुई।

श्वेताम्बर– भगवान महावीर को गोदुह्य आसन से केवलज्ञान प्राप्त हुआ।

दिगम्बर– भगवान को पद्मासन मुद्रा में केवलज्ञान प्राप्त हुआ।

श्वेताम्बर– केवलज्ञान होने के पश्चात् भी उपसर्ग हुए।

दिगम्बर– केवलज्ञान होने के पश्चात् किसी भी प्रकार का कोई उपसर्ग तीर्थंकर पर नहीं होता है।

श्वेताम्बर– केवलज्ञान होने के पश्चात् भी तीर्थंकर भगवान महावीर भक्तों से वार्तालाप करते थे, हाथ से आशीर्वाद देते थे। 30 नगरों में चातुर्मास किये।

दिगम्बर– केवलज्ञान के पश्चात् तीर्थंकर किसी से न तो वार्तालाप करते हैं और न ही हाथ उठाकर आशीर्वाद देते हैं और न ही कहीं चातुर्मास करते हैं क्योंकि वे पूर्ण वीतरागी भगवान हो जाते हैं।

श्वेताम्बर– भगवान महावीर सामान्य देहधारी मनुष्य थे।

दिगम्बर– वे सामान्य देहधारी मनुष्य नहीं थे, उनको जन्म से ही असाधारण तीर्थंकर प्रकृति का माहात्म्य था। वे दिव्य परमौदारिक देह के धारी थे।

श्वेताम्बर– एक मदमस्त हाथी को वश में किया (दीक्षापूर्व-घर में रहते हुए)

दिगम्बर– हाथी को वश में करने वाली घटना का कहीं उल्लेख नहीं मिलता।

श्वेताम्बर– चातुर्याम (पांच महाव्रतों में से ब्रह्मचर्य को छोड़कर शेष चार महाव्रत चातुर्याम धर्म के रूप में भगवान पार्श्वनाथ तक माने गये हैं तथा अतिरिक्त ब्रह्मचर्य महाव्रत की मान्यता भगवान महावीर के समय से चली है, ऐसी मान्यता श्वेताम्बर परम्परा में है)।

दिगम्बर– अनादिकाल से पांचों महाव्रत सभी तीर्थंकरों ने पालन किये एवं बताये हैं।

श्वेताम्बर– आम्रपाली नाम की वेश्या को वैशाली की नगरवधू के रूप में सम्मान प्रदान किया गया है।

दिगम्बर– आम्रपाली वेश्या का कोई उल्लेख नहीं है, न ही वेश्याओं के इस प्रकार सम्मान की कोई बात ही आती है।

श्वेताम्बर– भगवान महावीर का निर्वाण पावापुरी में भिन्न स्थान पर हुआ। भगवान महावीर के निर्वाण के बाद उनके शरीर का जहाँ अग्नि संस्कार किया गया, वहाँ की भस्म नगरजनों ने मस्तक पर लगाई। जब भस्म नहीं रही तो लोग थोड़ी-थोड़ी मिट्टी ले गये जिससे वहाँ बड़ा सा खड्डा बन जाने से तालाब बन गया। अनंतर उसमें कमल खिलने लगे जिससे उसका नाम जलमंदिर पड़ गया।

दिगम्बर– पावापुरी में कमल सरोवर के मध्य.....अधर आकाश से निर्वाण हुआ। वहीं पर इन्द्रों तथा देवों ने मिलकर अग्नि संस्कार किया था।

श्वेताम्बर– कार्तिक कृष्णा चतुर्दशी की पिछली रात्रि में दिव्यध्वनि होते-होते अचानक बंद हो गई। तभी निर्वाण हो गया।

दिगम्बर– कार्तिक कृष्णा चतुर्दशी से दो दिन पूर्व योग निरोध किया। समवसरण विघटित हो गया। दो दिन सभी मनुष्य तथा देव जान गये कि अब भगवान का निर्वाण होने वाला है। सभी हाथ जोड़े हुए भगवान को निहार रहे थे। कार्तिक कृष्णा अमावस्या के ऊष्ण काल की बेला (सूर्योदय से 2 घड़ी पूर्व) भगवान मोक्ष पधार गये।

* * *

> भगवान महावीर पुनः जैनधर्म के सिद्धांत को प्रकाश में लाए। भारत में यह धर्म बौद्धधर्म से पहले मौजूद था। प्राचीनकाल में असंख्य पशुओं की बलि दे दी जाती थी। इस बलि-प्रथा को समाप्त कराने का श्रेय जैनधर्म को है।
>
> –बाल गंगाधर तिलक (भारत)

वैशाली की राजकुमारी एवं कुण्डलपुर की राजवधू महारानी त्रिशला का परिचय

–ब्र. कु.बीना जैन

(संघस्थ–गणिनी ज्ञानमती माताजी)

आचार्य मानतुंग ने भक्तामर स्तोत्र में तीर्थंकर भगवान की माता की स्तुति करते हुए कहा है–

स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान् , नान्यासुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता।
सर्वादिशो दधतिं भानि सहस्र रश्मिम्, प्राच्येव दिग्जनयतिस्फुर दंशुजालम् ।।

अर्थात् सैकड़ों स्त्रियां सैकड़ों पुत्रों को पैदा करती हैं परन्तु आप जैसे पुत्र को दूसरी मां पैदा नहीं कर सकती है क्योंकि नक्षत्रों को सब दिशाएं धारण करती हैं परन्तु किरणों के समूह वाले सूर्य को पूर्व दिशा ही प्रकट करती है।

जैनधर्म के चौबीसवें सूर्य, अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर को कुण्डलपुर की पवित्र धरती पर जन्म देने वाली माता त्रिशला भी वह जगज्जननी एवं त्रिलोकपूजनीय माता हैं जो कि वैशाली के राजा चेटक की ज्येष्ठ पुत्री थीं। दिगम्बर जैनशास्त्रानुसार "वैशाली नगरी" सिन्धुदेश में थी जहां राजा केक के पुत्र "चेटक" राज्य करते थे। "उत्तरपुराण" नामक आर्षग्रंथ में श्री गुणभद्राचार्य ने सिंधुदेश के अंतर्गत वैशाली नगरी, महाराजा चेटक एवं उनके पुत्र-पुत्रियों का वर्णन करते हुए कहा है–

सिन्ध्वाख्यविषये.........................ततः संयममग्रहीत् ।।3-14।।

सिन्धु नामक देश की वैशाली नगरी में चेटक नाम के अतिशयप्रसिद्ध, विनीत और जिनेन्द्रदेव के अतिशय भक्त राजा थे उनकी रानी का नाम सुभद्रा था। उन दोनों के दश पुत्र हुए जो कि धनदत्त, धनप्रभ, उपेन्द्र, सुदत्त, सिंहभद्र, सुकुम्भोज, अकम्पन, पतंगक, प्रभंजन और प्रभास नाम से प्रसिद्ध थे तथा उत्तम क्षमा आदि दश धर्मों के समान जान पड़ते थे। इन पुत्रों के सिवाय सात ऋद्धियों के समान सात पुत्रियां भी थीं जिनमें सबसे बड़ी प्रियकारिणी थी, उससे छोटी मृगावती, उससे छोटी सुप्रभा, उससे छोटी प्रभावती, उससे छोटी चेलिनी, उससे छोटी ज्येष्ठा और सबसे छोटी चंदना थी। विदेहदेश के कुण्डलपुर में नाथवंश के शिरोमणि एवं तीनों सिद्धियों से सम्पन्न राजा सिद्धार्थ राज्य करते थे। पुण्य के प्रभाव से प्रियकारिणी (त्रिशला) उन्हीं की स्त्री हुई थी। वत्सदेश की कौशाम्बी नगरी में चन्द्रवंशी राजा शतानीक रहते थे, मृगावती नाम की दूसरी पुत्री उनकी स्त्री हुई थी। दर्शाणदेश के हेमकच्छ नामक नगर के स्वामी राजा दशरथ थे जोकि सूर्यवंशरूपी आकाश के चन्द्रमा के समान जान पड़ते थे। सूर्य की निर्मल प्रभा के समान सुप्रभा नाम की तीसरी पुत्री उनकी रानी हुई थी। कच्छदेश की रोरुका नाम की नगरी में उदयन नाम का एक बड़ा राजा था प्रभावती नाम की चौथी पुत्री उसी की हृदयवल्लभा हुई थी। अच्छी तरहसे शीलव्रत धारण करने से इस का दूसरा नाम शीलवती भी प्रसिद्ध हो गया था। गान्धारदेश के महीपुर नगर में राजा सत्यक रहता था उसने राजा चेटक से उसकी ज्येष्ठा नाम की पुत्री की याचना की परन्तु राजा ने नहीं दी इससे उस दुर्बुद्धि मूर्ख ने कुपित होकर रणांगण में युद्ध किया परन्तु युद्ध में वह हार गया जिससे मानभंग होने से लज्जित होने के कारण उसने शीघ्र ही दमवर नामक मुनिराज के समीप जाकर दीक्षा धारण कर ली।

इन महाराज चेटक की पाँचवी पुत्री चेलना मगध देश के राजगृही नगरी के राजा श्रेणिक की रानी हुई हैं तथा ज्येष्ठा और चन्दना ने आर्यिका दीक्षा धारण की। ये राजा चेटक सोमवंशी थे जैसा कि उत्तरपुराण में कहा है–

सुरलोकादभूः सोम-वंशेत्वं चेटको नृपः।

इन पंक्तियों से स्पष्ट है कि राजा सिद्धार्थ नाथवंशी थे और वैशाली के राजा चेटक सोमवंशी थे अतः इन दोनों राजाओं के देश अलग-अलग हैं, राजधानी अलग-अलग हैं और वंश, गोत्र आदि भी अलग-अलग हैं।

दिगम्बर जैनागम में जहाँ भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर बताई गई वहीं उनकी जननी प्रियकारिणी

त्रिशला की जन्मभूमि वैशाली बताई गई है। वीरजिणिन्दचरिउ ग्रंथ की पांचवी संधि में पृष्ठ 60में श्री पुष्पदंत महाकवि कहते हैं कि राजा श्रेणिक ने भगवान महावीर के समवसरण में गौतम गणधर से जब आर्यिका चंदना के चरित्र को पूछा तब गौतम स्वामी ने कहा–

सिन्धु-विसइ वइसाली पुरवरि। घर-सिरि-ओहामिय-सुर-वर-घरि।
चेडउ णाम णरेसरु णिवसइ। देवि अखुद्द सुहद्द महासइ।।

अर्थात् सिन्धु देश में वैशाली नामक नगर है जहाँ के घर अपनी शोभा से देवों के विमानों की शोभा को भी जीतते हैं। उस नगर में चेटक नामक नरेश्वर निवास करते हैं। उनकी महारानी सुभद्रा से उनके धनदत्त आदि दस पुत्र उत्पन्न हुए।

उनकी अत्यन्त रूपवती सात पुत्रियाँ भी हुई, जिनके नाम हैं-प्रियकारिणी,मृगावती, सुप्रभादेवी, प्रभादेवी, चेलिनी, ज्येष्ठा, चन्दना। इनमें से प्रियकारिणी (त्रिशला) का विवाह श्रेष्ठ नाथवंशी कुण्डलपुर नरेश सिद्धार्थ के साथ कर दिया गया।

इसी प्रकार से हरिषेणाचार्यकृत वृहत्कथाकोष में भी राजा चेटक की सातों पुत्रियों का वर्णन करते हुए सबसे बड़ी कन्या प्रियकारिणी (त्रिशला) को बताया है। साथ ही यह भी कहा है कि ये सातों ही पुत्रियां स्वर्गलोक से चलकर आई थीं, उनका चरित्र विद्वानों के चित्त को हरण करेगा।

हरिवंशपुराण में प्रियकारिणी महारानी त्रिशला के विषय में आचार्य जिनसेन के शब्द मार्मिक तथा यथार्थ में गौरवपूर्ण है–

कस्तां योजयितुं शक्तास्त्रिशलां गुणवर्णनैः। या स्वपुण्णैर्महावीरप्रसवाय नियोजिता।।8।।

ऐसी सामर्थ्य किसमें हैं, जो महारानी प्रियकारिणी-त्रिशला के गुण वर्णन की योजना कर सके, क्योंकि अपने पुण्य के कारण ही वह भगवान महावीर की जननी बनी थीं।

उन होनहार जननी की स्वर्ग से आई देवांगनाएं किस प्रकार सेवा करती हैं और उनके गुणों का कथन करते हुए स्तुति करती हैं इसका बहुत ही सुन्दर चित्रण आचार्यश्री ने किया है। वह कहते हैं कि देवियों द्वारा की गयी स्तुति कोई अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं थी, अपितु यह वास्तविकता से पूर्ण कथन था। प्रभात में जैसे प्राची दिशा प्रत्येक के प्रेम को प्राप्त करती है और सभी इसी ओर अपनी दृष्टि पुनः-पुनः डाला करते हैं, इसके समान ही स्थिति माता के विषय में भी थी जिन्होंने चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर को जन्म देकर सम्पूर्ण लोक को सनाथ कर दिया था।

अनेक दिगम्बर जैन आर्षग्रंथों में पूर्वाचार्यों ने माता त्रिशला की स्तुति करते हुए उनके गुणों का वर्णन किया है।

ऐसी त्रिलोकपूज्यनीय, जगत्जननी, वंदनीय माता त्रिशला जिनके जन्म से वैशाली नगरी पावन हुई हो उनका स्मरण सबके लिए मंगलकारी होवे।

* *

महावीर के वचन मानवी-आचरण की उज्ज्वलतम प्रस्तुति है। अहिंसा का महान सिद्धांत, जिसे पश्चिम जगत में 'लॉ ऑफ नॉन-वायलेंस' के नाम से जाना जाता है, सर्वाधिक मूलभूत सिद्धांत है, जिसके द्वारा मानवता के कल्याण के लिए आदर्श संसार का निर्माण किया जाता है।

-डॉ. एल्फ्रेड डब्ल्यू पार्कर (इंग्लैण्ड)

भगवान महावीर का संक्षिप्त परिचय

–गीता जैन, स्योहारा

भगवान महावीर का जीव पूर्व में सोलहवें स्वर्ग के पुष्पोत्तर विमान में उत्तम इन्द्र था। वहाँ पर उसकी आयु बाईस सागर की थी, जब उसकी आयु छह महीने की रह गई और वह स्वर्ग से अवतार लेने के सन्मुख हुआ तब सौधर्म इन्द्र की आज्ञा से कुबेर द्वारा कुण्डलपुर नगर में राजा सिद्धार्थ के घर प्रतिदिन साढ़े सात करोड़ मणियों की भारी वर्षा होने लगी। आषाढ़ शुक्ला षष्ठी के दिन माता त्रिशला प्रसन्नचित्त होकर सतखने राजभवन के भीतर रत्नों के दीपकों से प्रकाशित होने वाले नंद्यावर्त के राजभवन में हंस के समान सफेद चादर से सुशोभित ऐसे रत्नों के बनें हुए पलंग पर सो रही थी। तीन पहर बीत जाने के बाद रात्रि में मनोहर नाम का चौथा प्रहर आया तब रानी त्रिशला ने विशेष फल देने वाले सोलह स्वप्न देखे बाद में अपने मुख में एक बैल प्रवेश करते हुए देखा। सुबह उठने के बाद महारानी ने सभी स्वप्न राजा सिद्धार्थ को बताये और उनसे अपने स्वप्नों का फल पूछा। स्वप्न सुनकर महाराज ने बताया कि इसका फल अति उत्तम है, तुम्हारे गर्भ में एक महान तीर्थंकर आत्मा अवतरित हुई है जो जन्म लेकर आत्म-कल्याण करते हुए विश्व एवं प्राणीमात्र का महान कल्याण करेगी।

सब इन्द्रदेव अपनी-अपनी विभूति के साथ नंद्यावर्त भवन में आये और सबने गर्भकल्याणक का उत्सव मनाया और 56 कुमारिका देवियों को माता की सेवा के लिए नियुक्त कर दिया।

देखते ही देखते नौ माह पूर्ण हो गये। शुभ चैत्र मास की शुक्ला त्रयोदशी के दिन महादेवी त्रिशला ने अलौकिक पुत्र (महावीर) को जन्म दिया।[1]भगवान को जन्म देकर त्रिशला ने मनुष्य और तिर्यंच सबके हृदय में गाढ़ प्रेम प्रकट कर दिया था इसलिए महारानी त्रिशला का यथार्थ नाम प्रियकारिणी भी पड़ गया। देवों के स्थान में बिना बजाये वाद्यध्वनि होने लगी। सौधर्म इन्द्र का आसन कम्पायमान हो गया। अवधिज्ञान के बल से तीर्थंकर महापुरुष के जन्म को जानकर इन्द्र ऐरावत हाथी पर चढ़कर अपने वैभव के साथ आकर कुण्डलपुर नगर की प्रदक्षिणा करके जिनबालक को लेकर सुमेरु पर्वत पर गये और वहाँ क्षीरसागर के जल से भरे हुए 1008 कलशों द्वारा पांडुक शिला पर जिन भगवान का अभिषेकोत्सव मनाया पुनः उत्तमोत्तम आभूषणों से विभूषित करके इन्द्र ने "**वीर**" और "**वर्धमान**" ऐसे दो नाम रखे और वापस लाकर माता-पिता को देकर स्वस्थान चले गये। कवि वृन्दावनलालजी ने महावीर पूजा में जन्मकल्याणक में कहा है।

"जनम चैत्र सित तेरस के दिन, कुण्डलपुर कन वरना।
सुर गिरि सुरगुरु पूज रचायो, मैं पूजो भवहरना।।"

अर्थात् चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन कुण्डलपुर में जन्म लिया तब इन्द्रों ने सुमेरु पर्वत पर जाकर अभिषेक, पूजन कियां। मैं भी भवों के अंत करने के लिए आपकी पूजन करता हूँ। भगवान महावीर चन्द्रकला की भाँति बढ़ने लगे। उनकी बालसुलभ चपलता से माता-पिता को बड़ा ही आनन्द आता था। उनका शरीर का वर्ण तपाये हुए सोने के वर्ण जैसा था, धर्म की प्रतिमूर्ति सदृश जगत के धर्मगुरु थे। जब उनकी अवस्था कुछ अधिक बढ़ी तो उनके मुख से सरस्वती की भाँति वाणी निकलने लगी। उनके खेलने के लिए देव स्वयं हाथी, घोड़ा आदि का कृत्रिम रूप बना लिया करते थे। वे उनके साथ क्रीड़ा किया करते थे। उनके जीवन की अनेक महत्वपूर्ण घटनाओं की चर्चाएँ हमें पुराणों से मिलती हैं। एक दिन की घटना है जब वह आठ वर्ष के थे। इन्द्र की सभा में देवों में परस्पर यह कथा चल रही थी कि इस समय सबसे शूरवीर श्री वर्द्धमान स्वामी हैं उसे सुनकर संगम नाम का देव उनकी परीक्षा के लिए आया। उस समय राजकुमार भगवान वीरनाथ अनेक राजकुमारों के साथ उद्यानवन में वृक्ष पर चढ़ने-उतरने का खेल खेल रहे थे। वहाँ पर आये उस देव ने उन्हें डराने की इच्छा से महानाग का रूप धारण किया और वह वृक्ष की जड़ से लेकर स्कंध तक बराबर लिपट गया। उसे देखकर सब बालक डर से घबड़ाकर अपने-अपने अनुसार वृक्ष से पृथ्वी पर कूदकर भाग गये परन्तु महावीर बिना

---

1. चैत्र शुक्ल त्रयोदशी, ई. पू. 598।
मानुषाणां सुराणां च तिरश्चां च चकार सा। तत्प्रीत्या पृथुप्रीतिं तत्सत्यं प्रियकारिणी।।268।। (उत्तरपुराण, पर्व 74, पृष्ठ 618)।

डरे उस सर्प के मस्तक पर क्रीड़ा करने लगे। भगवान के समागम से संगम देव का हर्षरूपी महासागर उमड़ आया और उसने भगवान की स्तुति की तथा वीर से **महावीर** नाम रखा।

देखते ही देखते इस प्रकार भगवान के कुमार काल के तीस वर्ष व्यतीत हो गये। मतिज्ञान के विशेष क्षयोपशम से उन्हें आत्मज्ञान प्रगट हुआ और पहले भव का जातिस्मरण हुआ। अपने पूर्व घटित घटनाओं पर विचार कर वे बड़े ही क्षुब्ध हुए। उन्हें तत्काल ही वैराग्य उत्पन्न हो गया।

"हन्ता शत्रु स्व-कर्म के, वीर आत्मरस लीन।
जगद् वंद्य पद कंज में, नमें भक्तिवश दीन।।" (महावीर पुराण)

उसी समय लौकांतिक देवों ने आकर समयानुसार उनकी स्तुति की और देवों ने आकर उनके दीक्षाकल्याणक का उत्सव मनाया। देवताओं द्वारा लाई गई पालकी 'चन्द्रप्रभा' में बैठकर ज्ञातृवनंखण्ड को चले गये। पंचमुष्ठी केशलोंच करके मुनि दीक्षा ले ली और तपश्चर्या में लीन हो गये। दो दिन की तपश्चर्या के पश्चात् उन्होंने प्रथम आहार कूल ग्राम में राजा कूल से लिया। किसी एक दिन तपश्चरण की इच्छा से विहार करते हुए उज्जैन नगर के अतिमुक्तक नाम के श्मशान में प्रतिमायोग धारण किया। उन्हें देखकर रुद्र ने अपनी विद्या से उनके धैर्य की परीक्षा करने का विचार किया और अपनी विद्या से अंधेरा कर दिया फिर अनेक बेताल आकर मुँह फाड़कर अत्यंत भयानक रूप धारण कर अनेक तरह के लयों से नाचने लगे और कठोर शब्द, अट्टहास तथा विकराल दृष्टि से देखकर डराने लगे। उस रुद्र ने अपनी विद्या के प्रभाव से अनेक भयानक उपसर्ग किये परन्तु भगवान के चित्त को समाधि से च्युत करने में समर्थ नहीं हुआ। उस समय उसने भगवान का नाम **महतिमहावीर** रखा।

भगवान महावीर में जितनी निर्भीकता और दृढ़ता थी, उनके हृदय में संसार के समस्त जीवों के प्रति उतनी ही व्रात्सल्यता भी भरी हुई थी। यही कारण है कि उनके शरीर के रुधिर का रंग श्वेत था, जो कि तीर्थंकर के जन्म के 10 अतिशयों में से एक है। लोक व्यवहार में भी जब माता का हृदय अपने बच्चे के प्रति प्रेम वात्सल्य में भरा होता है तो उसके स्तन से दूध निकलता है। जब थोड़े से वात्सल्य में माता के स्तन से सफेद दूध निकलने लगता है तब तीन लोक के जीवों से वात्सल्य रखने वाले के समस्त शरीर में दूध ही दूध हो जाये तो कोई आश्चर्य नहीं। सोलहकारण पूजा में आता है–

"वत्सल अंग सदा जो ध्यावै, सो तीर्थंकर पदवी पावैं।"

भगवान महावीर ने बारह वर्ष तक तपश्चरण किया। वैशाख सुदी दशमी के दिन ऋजुकूला नदी के तट पर उन्हें केवलज्ञान की प्राप्ति हुई, वे सर्वज्ञ बने। त्रैलोक्याधिपति एवं जगद्गुरु श्री महावीर ने शनैः शनैः विहार करते हुए अनेक देशों और नगरों में रहने वाले भक्त एवं श्रद्धालु भव्य जीवों को धर्मोपदेश के द्वारा ज्ञान प्रदान किया तथा मोक्षमार्ग में बाधक अज्ञानान्धकार को अपनी वचनरूपी किरणों से परास्त कर उसे आलोकमय कर दिया। इस प्रकार तीस वर्ष पर्यन्त विहार करते हुए अनेक सुन्दर फल-पुष्पों से सुशोभित पावापुरी के उपवन में वे पहुँचे। वहीं पर कार्तिक कृष्णा अमावस्या तिथि को स्वाति नक्षत्र एवं प्रातःकाल के समय में भगवान को मोक्ष प्राप्त हुआ।

'सिद्धारथ नृप नंद द्वंद दुख दोष मिटावन। दुरित दवानल ज्वलित ज्वाल जग जीव उधारन।।
कुण्डलपुर करि जन्म जगंत जिय आनंद कारन। वर्ष बहत्तर आयु पाय सब ही दुख टारन।।"

(सामायिक पाठ के पंचम वंदना कर्म से उद्धृत)

* * *

जैनधर्म मानव को ईश्वरत्व की ओर ले जाता है और सम्यक् आचरण के जरिए पुरुषार्थ से उसे परमात्मा पद प्राप्त करा देता है।

-डॉ. मुहम्मद हाफिज (भारत)

शाकाहार एवं अहिंसा के प्रति विभिन्न धर्मों का मत

जैनधर्म

अहिंसा जैन धर्म का सबसे मुख्य सिद्धांत है। अहिंसा जैनधर्म का प्राण है। किसी भी जीव की हिंसा मत करो, हिंसा करने वाले का सब धर्म-कर्म व्यर्थ हो जाता है। संसार में सब को अपनी जा़न प्यारी है, कोई मरना नहीं चाहता, अतः किसी भी प्राणी की हिंसा मत करो। सम्पूर्ण जीव 'सृष्टि के प्रति अपनेपन, प्रेम और आपस में सहिष्णुता, यही अहिंसा का अंग है। 'जिओ और जीने दो' यही भगवान महावीर का संदेश है।

हिन्दू (सनातन) धर्म

मांसाहार करने वाले, मांस का व्यापार करने वाले और मांस के लिए जीव हत्या करने वाले लोग समान रूप से दोषी हैं। उन्हें स्वर्ग की प्राप्ति कभी भी नहीं हो सकती है। दूसरे का मांस खाकर अपना मांस बढ़ाने की इच्छा जो रखता है, वह आदमी पापी और सबसे अधिक निर्दयी होता है।

-अनुशासन पर्व (महाभारत)

क्रिश्चियन (ईसाई) धर्म

पशु वध करने के लिए नहीं है। मैं दया चाहूँगा, बलिदान नहीं।

तुम रक्त बहा़ना छोड़ दो, अपने मुँह में मांस मत डालो। ईश्वर बड़ा दयालु है उसकी आज्ञा है कि मनुष्य पृथ्वी से उत्पन्न शाक, फल और अन्न से अपना जीवन निर्वाह करे। ईसा मसीह (जीसस क्राईस्ट) के दो प्रमुख सिद्धांत-

तुम जीव हत्या नहीं करोगे,
अपने पड़ोसी से प्यार करो।

इस्लाम धर्म

'बिस्मिल्ला हिर्रहामार्निरहीम'

खुदा का विश्लेषण 'रहीम' है अर्थात् समस्त विश्व पर रहम, दया करने वाला चिराग-दीपक। सभी सूफी संतों ने नेक जीवन, दया, सादे शाकाहारी भोजन पर बहुत जोर दिया है। इस्लामधर्म के संस्थापक पैगम्बर मुहम्मद अपने अनुयायियों को कहते हैं, 'पशु मनुष्य के छोटे भाई हैं' "अल्लाह के पास पशु बलि का न मांस पहुँचता है, न खून, बल्कि वो वहाँ पहुँचता है जो आपके पास शुद्ध है, पवित्र है।"

यदि तुम्हें बलि देनी है तो अपने अहम भाव और अभिमान की बलि दो।

सिक्ख धर्म

सिक्ख धर्म के प्रवर्तक गुरु नानक ने जीवों पर दया करने का उपदेश दिया है।

"उनसे परमात्मा कभी प्रसन्न नहीं हो सकता, जो जीव हत्या करते हैं।"

अपने शिष्यों को उपदेश देते समय वे उन्हें मांस भक्षण और मद्यसेवन से दूर रहने की सलाह देते थे। मांस भक्षी लोगों को वे राक्षस कहते थे। गुरुद्वारों में लंगर में अनिवार्यतः शाकाहार ही बनता है।

यहूदी धर्म

पृथ्वी के हर पशु को और उड़ने वाले पक्षी को तथा उस हर प्राणी को जो धरती पर रेंगता है, जिसमें जीवन है, उन सबके लिए मैंने मांस की जगह हरी पत्ती दी है, जब तुम प्रार्थना करते हो तो मैं उसे नहीं सुनता, यदि तुम्हारे हाथ खून से रंगे हैं।

बौद्ध धर्म

सारे प्राणी मरने से डरते हैं, सब मृत्यु से भयभीत हैं, उन्हें अपने समान समझो। अतः न उन्हें कष्ट दो और न उनके प्राण लो। बौद्ध धर्म के पंचशील अर्थात् सदाचार के पांच नियमों में प्रथम व प्रमुख नियम किसी प्राणी को दुःख न देना, अहिंसा ही है व पांचवाँ नियम शराब आदि नशीले पदार्थों से परहेज की शिक्षा है। वही भोजन उचित बताया गया है, जिसमें माँस व खून का अंश न हो।

GEOGRAPHICAL DESCRIPTION OF JAMBUDVIP

By - Ganini Gyanmati

Translated by - Dr. S.S. Lishk, Patiyala

Jambudvipa, the circular land mass, is divided in seven regions namely Bharata (भरत), Haimavata (हैमवत), Hari (हरि), Videha (विदेह), Ramyaka (रम्यक), Hairanyavata (हैरण्यवत) and Airavata (ऐरावत), by the placement of six mountains viz. Himavana (हिमवन), Mahahimavana (महाहिमवन), Nishadha (निषध), Neel (नील), Rukmi (रुक्मी) and Shikhari (शिखरी). The north-southern stretch of Bharata region is 525 x 6/19 Yojanas. The stretch goes on doubling till we reach Videha region after which it again goes on reducing by one half.

Due to Kala Parivartana (काल परिवर्तन) (six variations of time-measurement e.g. Sushama-Sushama (सुषमा सुषमा) etc.) the existence of different bhumis in different Kshetras (क्षेत्र) (regions) are given as under :

Kshetras (क्षेत्र)	**Bhumi (भूमि)**
Bharata and Airavata (भरत और ऐरावत)	Karmabhumi (कर्मभूमि)
Haimavata (हैमवत) and Hairanyavata (हैरण्यवत)	Jaghanya Bhogabhumi (जघन्य भोगभूमि)
Hari (हरि) and Ramyaka (रम्यक)	Madhyama Bhogabhumi (मध्यम भोगभूमि)
Devakuru (देवकुरु) and Uttarakuru (उत्तरकुरु) in Videha	Uttama Bhogabhumi (उत्तम भोगभूमि)

In VidehaKshetra, due to the existence of 16 Vakshara Mountains and 12 Vibhanga rivers there become 32 Kshetras whose names are Kaccha, Sukaccha etc. In all these 32 Kshetras, Karmabhumi exists for ever and is therefore called as universal Karmabhumi.

The north-southern stretch of Videha Kshetra is 33684 x 4/19 Yojanas and east-western length 100000 Yojanas; right at its centre, there exists the mount Sudarsana Meru having 100040 Yojanas height and 10000 Yojanas base-diameter which continuously reduces to 4 Yojanas at the top. On four directions each of meru there exists a Gajadanta mountain touching Meru on one side and Neel mountain on the other side. These mountains have also demarcated the four directions of Videha. Towards north of Sumeru, there is Jambu tree situated in the Ishana Kona (north-western direction) in Uttarakuru. Similarly towards south of Sumeru, there is Shalmali tree situated in the Agneya Kona (south-eastern direction) in Devkuru. In both the Kuru regions there are ten types of Kalpa trees and there exists Uttama Bhogabhumi for ever.

In east-western directions of Smeru in Videha, the rivers-Sita and Sitoda-flow. This causes the division of eastern and western regions of Videha into northern and southern portions each. In east of Sumeru and north of Sita river, first of all there occurs Vedika of Bhadrashalavana, followed by Kshetra, and Vakshara mountain having a stretch of 500 Yojanas and lenght of 16592 x 2/19 Yojanas and height of 400 Yojanas near Neel mountain and 500 Yojanas near Sita river. This is a golden mountain with four Kutas. There is a Jina temple at the Kuta near the river and gods and goddesses live at rest of the three Kutas. This mountain is followed by Kshetra, Vibhanga river, again Kshetra and Vakshara paravata. In this series there exist four Vakshara mountains and three Vibhanga rivers which divide Videha into eight regions. Similarly there are eight regions towards the south of Sita river. Similarly in western Videha, towards south and north of Sita river there are eight regions each. Thus there are 32 Kshetras in all whose names are given as under :

Kaccha, Sukaccha, Mahakaccha, Kacchakavati, Avarta, Langalavarta, Pushkala, Pushkalavati, Vatsa, Suvatsa, Mahavatsa, Vatsakavati, Ramya, Suramya, Ramaniya, Ramyakavati, Padma, Supadma, Mahapadama, Padamakavati, Sankha, Nalini, Kumuda, Sarita, Vapra, Suvapra, Mahavapra, Vaprakavati, Gandha, Sugandha, Gandhila and Gandhamalini.

Description of Kaccha Videha (कच्छा विदेह)

Kaccha Videha Kshetra is stretched over 2212 x 7/8 Yojanas and 1659 x 2/19 Yojanas in the east-western and south-northern directions respectively. In this region, there exists Vijayardha mountain having 50 Yojanas breadth, 2212 x 7/18 Yojanas length and 25 Yojanas height, on both sides of which there exist two Vidyadhara Shrenis each. On every Vidyadhara Shreni there are 55 villages of human beings. There are nine Kutas over Vijayardha mountain. There is a Jina temple at one Kuta and palaces of Devas on rest of the eight Kutas. Ganga and Sindhu rivers starting from two Kundas situated at the bottom of Neel mountain, passing through the Timisra and Khandaprapata caves of Vijayardha mountain fall into Sita river. Vijayardha mountain and Ganges and Sindhu rivers divide Kaccha region into six portions. The portion situated near the middle of river is Aryakhanda and rest of the five portions are Mlecchakhandas. Aryakhanda has 714 Yojanas breadth and 8271 x 1/17 Yojanas length. At central place of Aryakhanda there exists Kshema town which is capital of Aryakhanda. This ends the description of Kaccha Videha. Similarly the description of rest of the 31 regions of Videha may be understood.

Establishment of Videha Kshetra

Every Videha has 96 crores villages, 26000 towns, 16000 Khetas, 24000 Kharvadas, 4000 Matambas, 48000 Pattanas, 99000 Dronas, 14000 Samvahas and 28000 Durgatavis.

The area fenced with thorns all around is called a Gram (village), the area having four gates and encircled with high walls is called Nagara (town). The area encircled with river and mountain is called Kheta. Kharvada is the region encircled by mountains. Five hundred villages make a Matamba. The place with mines of precious stones is known as Pattana. The region encircled with river is called Drona, encircled with the ocean Samvaha and situated at the mountain Durgatavi. In every Videha Kshetra, in the Aryakhanda situated in between the capital and the major river, there exists a sub-ocean with an island having 56 sub-islands, 26000 Ratnakaras and 700 Kuksivasas for purchase and sale of precious stones.

In the eastern direction near the water of Sita and Sitoda rivers there exist three islands-Magadha, Varatanu and Prabhasa-where Vyantara devas reside.

Rainy Season in Videha Kshetra

Through seven kinds of black clouds (कालमेघ) it rains for 7 days each i.e. 49 days in all. Though 12 kinds of white clouds known as Drona, it rains for 7 days each i.e. 84 days in all. Thus 49 + 84 make 133 days on which it rains in Videha Kshetra in rainy season.

What Nots in Videha Kshetra

In Videha Kshetra, a famine never takes place. Sevan kinds of 'excesses' do not exist, viz. 1. Over-rainfall, 2. Under-rainfall. 3. Rats trouble. 4. Locust trouble. 5. Parrots trouble. 6. Sacakra (self-created) trouble. 7, Paracakra (created by others) trouble.

Mari Rog (epidemic) i.e. unsual deaths of human beings or cows, does not take place. Devils, emotionally disturbed saints, and bad natured beings also do not exist. (See Trilokasara, vv. 674-680).

In Videha, human beings of 500 Utkrishta Dhanushas Avagahana with an age of one Koti Purva years, belonging to Kshatriya, Vaishya and Shudra castes and earning their livelihood through Asi, Masi and Krishi (agriculture) respectively reside. The general public follow their duties and responsibilities according to rules mentioned for Shravakas, while there exist Munis also who follow their Dharma (Muni dharma). Tirthankaras, Chakravartis, Balabhadras, Narayanas and Pratinarayanas do come at all times. The number of Tirthankaras varies from 4 to 32 at any time. Four Tirthankaras, viz. Simandhara (सीमंधर), Yugamandhara (युगमन्धर), Bahu (बाहु) and Subahu (सुबाहु), also known as Virahamana Tirthankaras, exist at present. Likewise in connection with five Merus, there are 160 (32 x 5) Videhas. In all, the number of Tirthankaras and Chakravartis etc. varies from 20 to 160 (see Trilokasara v. 681).

Fourteen Rivers

At 6 mountains viz. Himavan etc., there exist six oceans, namely Padma (पद्म), Mahapadma (महापद्म), Tigincha (तिगिञ्छ), Kesari (केसरी), Mahapundarika (महापुण्डरीक) and Pundarika (पुण्डरीक). From Padma and Pundarika oceans there flow three rivers viz. each and from rest of the four oceans only two rivers flow from each. Thus there are 14 rivers viz. Ganga (गंगा) and Sindhu (सिंधु), Rohita (रोहित) and Rohitasya (रोहितास्या), Harita (हरिता) and Harikanta (हरिकान्ता), Sita (सीता) and Sitoda (सीतोदा), Nari (नारी) and Narakanta (नरकान्ता), Suvarnakula (सुवर्णकूला) and Rupyakula (रूप्यकूला) and Rakta (रक्ता) and Raktoda (रक्तोदा). In the 7 regions viz. Bharata etc. these 14 rivers flow, 2 rivers in each region.

Bharata Kshetra

Bharata Ksetra is stretched over 526 x 6/19 Yojanas. In east-western direction, Vijayardha mountain having 50 Yojanas breadth and 25 Yojanas length passes through its middle. In the northern and southern sides of this mountain there exist towns of Vidyadharas. This mountain has two caves, namely, Tamisra and Khandaprapata. Ganga and Sindhu rivers originating from Padma lake of Himavana mountain flow for 500 Yojanas each upon the mountain in the east-western direction and then turning towards south fall down as streams resembling Gomukha (face of the cow). At the bottom of Himavana mountain, the falling water produce Kundas (pits) of Ganga and Sindhu respectively. At the Kutas (peaks) of these two pools, there are Bhavanas at the roofs of which real Jina statues in lotus poses are situated having thick hair at the forehead of each. The Ganga and Sindhu rivers touching the Lord-heads flow ahead (see Trilokasara, v. 68). These rivers coming out of Kundas move along wavy paths in the region and passing through the caves of Vijayardha move through the region again and ultimately fall into the Lavana Samudra (salt ocean).

Therefore Vijayardha mountain and Ganga, Sindhu rivers cause the division of Bharata Kshetra into 6 portions, one of which situated in the southern direction is Aryakhanda and rest of the 5 are Mleccha Khandas. Amidst the three Mleccha Khandas in the northern direction there exists Vrishabhachala mountain where the Chakravarti celebrates his victory after winning over the six regions. The distance between Aryakhanda of Bharata Kshetra and Videha Kshetra is more than 20 crore miles. In Bharata and Airavata Kshetras, the six-cyclic changes of time always go on moving.

Six-Cyclic Changes of Time

In Bharata and Airavata Kshetras, the six-cyclic changes of time move along Avasarpini and Utsarpini periods. During the period of Avasarpini, the age, body etc. of living beings go on decreasing and the reverse is true during the period of Utsarpini. (See Triloksara, Gatha 779). The division of these periods is given as under :

Period	Sub-Period	Duration	Bhumi
Avasarpini	Sushama-Sushama	4 Kodakodi Sagara	Uttama
	Sushama	3 Kodakodi Sagara	Madhyama
	Sushama-Dushama	2 Kodakodi Sagara	Jaghanya
	Dushama-Sushama	1 Kodakodi Sagara + 42000 years	Karma
	Dushama	21000 years	Karma
Utsarpini	Dushama-Dushama	21000 years	Karma

The human beings have their height 3 Koshas, and age 3 Palyas in Uttama Bhogabhumi, height 2 Koshas and age 2 Palyas in Madyama Bhogabhumi, and height 1 Kosha and age 1 Palya in Jaghanya Bhogabhumi. Here the material for use is obtained from 10 types of Kalpa trees.

At the central place of Aryakhanda in Bharata Kshetra there is situated Ayodhya town, 119 Yojanas south of which exists the Vedika of salt ocean and at an equal distance towards the northern direction exists the Vedika of Vijayardha mountain. Ganga and Sindhu rivers are situated in the eastern and north-western directions at a distance of 1000 Yojanas each from Ayodhya town. Thus Aryakhanda is demarcated by Lavana-Samudra in south, Vijayardha mountain in north, Ganga river in east and Sindhu river in west.

From Ayodhya town, towards south at a distance of 47600 miles there exists Lavana Samudra, towards north at a distance 47600 miles there exists Vijayardha mountain, towards east and west at a distance of 400000 miles there exist Ganga and Sindhu rivers each. The whole of the modern world exists within Aryakhanda and we all here live Bharatavarsha (India) in Aryakhanda.

The human beings have their height 500 Dhanusas and age 11 Purvakoti years in the fourth sub-period i.e. Dushama-Sushama, height 7 Hastas (hands) and age 120 years in Dushama, and height 2 Hastas and age 20 years in Dushama-Dushama.

In the present age of Avasarpini, at 1/8 Palya as balance of third sub-period, i.e., Sushama-Dushama, several Kulakaras namely Pratishruti (प्रतिश्रुति), Sanmati (सन्मति), Kshemankara (क्षेमंकर), Kshemandhara (क्षेमन्धर), Simankara (सीमंकर), Simandhara (सीमंधर), Vimalavahana (विमलवाहन), Chaksusmana (चक्षुष्मान), Yashasvi (यशस्वी), Abhichandra (अभिचन्द्र), Chandrabha (चन्द्राभ), Marudeva (मरुदेव), Prasenajita (प्रसेनजित), Nabhiraya (नाभिराय) and his son Rishabhdev were born. It is worth noticing that here Rishabhadeva, the first Tirthankara, has also been considered as a Kulakara whereas in some other texts, Nabhiraya has been termed as 14th and the last Kulakara (cf. Triloksara, vv. 792-794).

In this age, when the public brought the living problems before the Lord Rishabhadeva, the Indra, by the order of the Lord, constructed villages, cities, etc. Again the Lord through clairvoyance (अवधिज्ञान), knew the whole order in Videha Kshetra, established the communal system and showed them the means of livelihood.

The same fact has been revealed by Nemicandracarya : "Lord Rishabhanatha, the Originator Brahma, got constructed cities, villages towns, etc. and established universal behavioural texts, war, writting, agriculture, as well as established the religion of kindness in origin." (पुरगामंपट्टणादी लोहियसत्थं चलोयववहारो। धम्मो वि दयामूलो विणिम्मियो आदिब्रह्मेण।।802।।) (Cf. Trilokasara, v. 802.)

Dimensions of Mountains in Jambudvipa-Sumeru Mountain (सुमेरु पर्वत)

At the central portion of Mahavideha Kshetra (महाविदेह क्षेत्र), the mount Mandara (मंदर) (alternate name of Sumeru) is situated where the birth of all the Tirthankaras in celebrated at respective times. Its dimensions are given as under :

Depth of foundation in earth =1000 Yojanas
Height above the earth = 99000 Yojanas
Diameter at base deep into the earth = 10090 x 10/11 Yojanas
Diameter at the surface of earth = 10000 Yojanas
Regular reduction of diameter at Nandanavana (नन्दनवन), a height = 500 Yojanas
of 500 Yojanas above the earth i.e. above Bhadrashalavana
Reduction of diameter at a height of 11000 Yojanas above Nandanavana = Nil
Then regular reduction of diameter at Saumanasavana (सौमनसवन),
i.e. at a height of 51500 Yojanas = 500 Yojanas
Then reduction of diameter at a height of 11000 Yojanas = Nil
Then regular reduction of diameter at Pandukavana (पांडुकवन), = 494 Yojanas
i.e. at a height of 25000 Yojanas

Right at the centre of Pandukavana, there exists Chulika (चूलिका) having a diameter of 12 Yojanas at Pandukavana and it regularly reduces to 4 Yojanas at its top, a height of 40 Yojanas. The heights of different regions of sumeru when added up together, i.e.

1000 + 500 + 11000 + 51500 + 11000 + 25000 = 100000 Yojanas.

It is easily discernible that the diameter 10000 Yojanas at the surface of earth reduces to 1000 Yojanas, at top i.e. 99000 Yojanas above the earth. Thus the average decrease of diameter comes out to be 1/11 [=(100000-1000)/ (99000)] Yojanas per Yojana (see Trilokasara, v. 614). The average rate of decrease of diameter can be easily converted into any other length-units also. (See Tiloya Pannatti, pp. 375 to 378). The average decrease in diameter of Chulika comes out to be 1/5=[(12-4)/(40)]

Yojana. (See Tiloya Pannatti, p. 337.)

The part of mount Meru is Vajramaya (वज्रमय) for 1000 Yojanas deep into earth, made up to precious stone till 61000 Yojanas above the earth, and golden 38000 Yojanas above that. Culika is made up of blue-coloured Vaidurya (वैडूर्य) jewel. (See Tiloya Pannatti, p. 379).

Apparently, the Mount meru is made up of frustums of cones unlike the other irregular mounatins in general. Bhadrashala Vana (भद्रशाल वन), Saumanasa Vana (सौमनस वन) and Pandukavana (पाण्डुक वन) have earthly appearance and they have multiple rows of trees, Vanavedikas (वनवेदिका), precious stones, golden flowers, emerald colourd leaves, Champaka (चम्पक) and Ashoka trees, Kalpa trees, Vaidurya coloured fruit and coral coloured branches. (See Tiloya Pannatti, p. 377 and Jambudiva Pannatti, p. 93). All the four Vanas (forests) have a Jina temple in all the four directions each respectively. Thus there exist 16 Jina temples.

Jagati-Parakota of Jambudvipa

Jambudvipa has been encircled by a Jagati (जगती) having a height of 8 Yojanas. The breadth of Jagati is 12 Yojanas, 8 Yojanas and 4 Yojanas at its base, middle and top respectively. Thus is regularly decreases by 8 Yojanas for a height of 8 Yojanas from base to the top. Thus the average rate of decrease of breadth of Jagati at any place, say 'x' Yojanas below the top, is calculated to be x + 4 Yojanas. For example, for 'x' = 1¼, the breadth of Jagati at a place 1¼ Yojanas below its top becomes 1¼+4=5¼ Yojanas. (See Jambudvip Pannatti, p. 4). The construction of Jagati is regular at every place.

Mountains like Himavana Mountain

There are six mountains, viz. Himvan (हिमवान्), Mahahimvan (महाहिमवान), Nishadha (निषध), Neel (नील), Rukmi (रुक्मी) and Shikhari (शिखरी). They have a uniform diameter throughout. They reach the extremities of Lavana Samudra (लवण समुद्र) in the east-western direction. (See Trilokasara, 565; Tattvartha Sutra, 3; Tiloya Pannatti vv. 94-95). The precious stones exist on the northern and southern sides of them. They are golden, silvery, hot-golden, Vaidurya-stone like, silvery and golden respectively and have a hight of 100, 200,400, 400, 200 and 100 Yojanas respectively. Therefore these mountains are wall-like, greasy, filled with precious stones, beautiful and coloured in the southern and northern sides. They have 11, 8, 9, 9, 8 and 11 Kutas respectively. The lenght, breadth and height of these Kutas look like those of the mounts respectively. All the Kutas are round. The height of a Kuta is one-fourth of the height of the mountain and breadth at the base is also equal to that, Breadth decreases regularly to its half at the top. For example, at the Himavan mountain starting from the eastern direction there exist 11 Kutas, viz, Siddha Kuta (सिद्धकूट), Himavan Kuta (हिमवानकूट), Bharata Kuta (भरतकूट), Tilaka Kuta (तिलककूट), Ganga Kuta (गंगाकूट), Shri Kuta (श्रीकूट), Rohitasya Kuta (रोहितास्यकूट), Sindhu Kuta (सिंधुकूट), Sur Kuta (सुरकूट), Haimvat Kuta (हैमवतकूट) and Vaishravan Kuta (वैश्रवणकूट). Every Kuta has a height of 25 Yojanas and breadth of 25 Yojanas at base which decreases to 12½ Yojanas at the top, thus 18 x 3/4 [(25+12 x 1/2)/(2)] Yojanas at middle. There exists a Jina palace at Siddha Kuta (सिद्धकूट). On other Kutas, there exist palaces of Vyantara Devas (व्यंतर देव) called after the name of the Kuta. (See Tiloya Pannatti, p. 357).

Gajadanta Mountain

Starting from Vayavya (वायव्य) (north-west) direction of Sumeru, there exist four Gajadanta (गजदंत) mountains (पर्वत), viz. Saumanasa (सौमनस), Vidyutprabha (विद्युत्प्रभा), Gandhamadana (गंधमादन) and Malyavana (माल्यवान); two of them are stretched upto Nishadha mountain (निषध पर्वत) and two upto Neel Mountain. Their breadth is 500 Yojanas each. Their height is 400 Yojanas each near Nishadha and Neel Mountains, and increases regularly to 500 Yojanas in the viscinity of Meru mountain. (See Tiloya Pannatti, vol. 1. p. 402). The height of a Kuta on this mountain is one-fourth of the height of the mountain at that place. On a Gajadanta mountain, there exist 9 Kutas having their heights 125, 121 x 7/8, 111 x 3/4, 115 x 5/8, 112 x 4/8, 109 x 6/8, 106 x 1/4, 103 x 1/8 and 100 Yojanas respectively. (See Tiloya Pannatti, vol. 1, pp. 406-407).

Vakshara Mountain

In the northern and southern sides of Sita river, there are 4 Vakshara mountains and 3 Vibhanga rivers each. Thus each side of Sita river is divided into 8 regions viz. Citra Kuta, Nạlina Kuta, Padma Kuta and Eka Shaila etc. Every Vakshara Shaila is stretched over 500 Yojanas. (See Tiloya Pannatti, vol., 1, p. 425). These Vaksharas have a height of 500 Yojanas near the bank of Sita river and 400 Yojanas in the vicinity of Neel and Nishadha mountains after a regular decrease in height. Every Vakshara has 4 Kutas, the height of which is one-fourth of the height of the mountain at that place respectively. Siddha Kuta, the first one, is 125 Yojanas high and the last Kuta is 100 Yojanas high. (See Tiloya pannatti, p. 435).

These descriptions of mountains clearly indicate that they are well-type structures and not made up of small pieces of round stones as most of the scholars think. The study of Agamas proves to be an eye-opener in case of any doubt or suspicion.

Table of Dimensions of Regions and Mountains
(All distances have been measured inYojanas)

Regions	Stretch South-Northern	Length East-Western	Height of Mountains	Bhumi in Ksetras (Regions)	Varna of Mountains	Number of Kutas on Mountains	Height of Kutas	Breadth of Kutas at the	
								Base	Top
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)	(9)	(10)
Kshetra-Bharata	526 x 6/19	1447 x 5/19	—	Karma and Bhoga (Non-Universal)	—	—	—	—	—
Parvata-Himavan	1052 x 12/19	24931 x 18/19	100	—	Golden	11	25	25	12½
K-Haimavata	2105 x 5/19	37674 x 16/19	—	Bhoga(Jaghanya)	—	—	—	—	—
P-Mahahimavan	4210 x 10/19	53931 x 6/19	200	—	Silvery	8	50	50	25
K-Hari	8421 x 1/19	93901 x 17/19	—	Bhoga (Madhyama)	—	—	—	—	—
P-Nishadha	16842 x 2/19	94156 x 2/19	400	—	Hotgolden	9	100	100	50
K-Videha	33684 x 4/19	100000	—	Karma (East-west) (Universal) Bhoga (Shouth-North) (Utkrishata)	—	—	—	—	—
P-Neel	16842 x 2/19	94156 x 2/19	400	—	Vaidurya Jewel (Baryl)	9	100	100	50
K-Ramyaka	8421 x 1/19	93901 x 17/19	—	Bhoga (Madhyama)	—	—	—	—	—
P-Rukmi	4210 x 10/19	53931 x 6/19	200	—	Silvery	8	50	50	25
K-Hairanyavata	2105 x 5/19	37674 x 16/19	—	Bhoga (Madhyama)	—	—	—	—	—
P-Shikhari	1052 x 12/19	24931 x 18/19	100	—	Golden	11	25	25	12½
K-Airavata	526 x 6/19	14471 x 5/19	—	Karma and Bhoga (Non-Universal)	—	—	—	—	—

The above description is based on the ancient scriptures of Digambar Jain tradition. However the exact structural placement of various mountains, rivers, temples etc. can be observed in Jambudvip structure constructed at Hastinapur (Meerut, U.P.) by Digambar Jain Trilok Shodh Sansthan.

ETERNAL JAINISM

By - Ganini Gyanmati

Translated by - Rajneesh Jain, New Delhi

नमो नमः सत्त्वहितंकराय, वीराय भव्याम्बुजभास्कराय।
अनंतलोकाय सुरार्चिताय, देवाधिदेवाय नमो जिनाय।।

Namo Namah Satvahitankarai, Veerai Bhawyambujbhaskarai,
Anantlokai Surarchirtai, Devadhidevai Namo Jinai

In the holy scriptures of Jainism, the universe has been called "Anadinidhan". Like

"लोगो अकिट्टिमो खलु अणाइणिहणो सहावणिव्वत्तो।"

"Logo Akitimmo Khalu Anainihano Sahavanivatto."

In the centre of this universe, the first island is the "Jambu Dweep". In this there are Shatkaal changes in the Bharat Kshetra and the Eravat Kshetra. The first period has two parts called Avsarpini and Utsarpini. Each part has six further periods. For the Avsarpini Kal these are—Sushma-Sushma, Sushma, Sushma-Dushma, Dushma-Sushma, Dushma and Atidushma. The six periods of Utsarpini Kal are—Atidushma, Dushma, Dushma-Sushma, Sushma-Dushma, Sushma and Sushma-Sushma.

At the end of the third period of the present Avsarpini Kaal, fourteen Kulkars originated when only the eighth part of the Palya was left. The names of these Kulkars are : Pratishruti, Sanmati, Kdshemankar, Kshemandhar, Seemankar, Seemandhar, Vimalvadhan, Chakshushman, Yashasvi, Abhichandra, Chandrabh, Marudev, Prasenjit and Nabhirai. Lord Rishabh Dev was born to the last Kulkar Nabhirai.

The Names of the Twenty-four Tirthankars—

Shri Rishabh Dev, Ajitnath, Sambhav Nath, Abhinandan Nath, Sumati nath, Padamprabh, Suparshwanath, Chandrprabh, Pushpdant Nath, Sheetal Nath, Shreyans Nath, Vasupujya, Vimal Nath, Anantnath, Dharmnath, Shanti Nath, Kunthu Nath, Arnath, Malli Nath, Munisuvrat Nath, Naminath, Neminath, Parshwanath and Mahaveer Swami. We all bow to these twenty-four tirthankars of the Bharat Kshetra. With their teaching the people can attain their ultimate goal of Nirvan.

In the fourth period of the next Utsarpini Kaal, the following shall be the twenty-four tirthankars :

Shri Mahapadm, Surdev, Suparshwa, Swayamprabh, Sarwprabh, Devputra, Kulputra, Undaknath, Proshtilnath, Jaikirti, Munisuvrat, Arnath, Apapnath, Nishkashai Nath, Vipulnath, Nirmalnath, Chitrgupt, Samadhigupt, Swayambhu Nath, Anivriti Nath, Jainath, Vimalnath, Devpal and Anantveerya, King Shrenik, who was in the era of Lord Mahaveer, shall be the first Tirthankar Mahapadm. Shri Krishna Narayan Shall be the sixteenth Tirthankar. Nirmal Nath and Rudra Mahadev would be the last Tirthankars.

The present period is the Dushma Kaal of the Avsarpini Kaal. The avsarpini Kaal is also known as Hundavsarpini. In this a few unique, never before, instances have taken place. There have also been twenty-four tirthankars in the last Utsarpini Kaal prior to the present Avsarpini Kaal. The names of these twenty-four tirthankars are-Shri Nirvan, Sagarnath, Mahasadhu, Vimalnath, Shridhar Nath, Sudatt Nath, Amalparbh Nath, Udhwar Nath, Angirnath, Sanmati Nath, Sindhunath, Kusumanjali Nath, Shivgan Nath, Utsahnath, Gyaneshwar, Parmeshwar, Vimleshwar, Yashodhar, Krishnamati Nath, Gyanmati Nath, Shudhmatinath, Shribhadra nath, Atikrantnath and Shantnath. These have been the past tirthankars.

Maximum Number of Tirthankars—

There are one hundred and seventy inhabited worlds in the two and a half island in the Madhyalok.

Out of these one hundred and sixty belong to the Videh Kshetra, five to the Bharat Kshetra and the remaining five to the Eravat Kshetra. Out of the five inhabited worlds in the Bharat Kshetra, there is one in the southern part known as the Jambu Dweep. We are at present living in one of the Aryakhand of the Jambu Dweep. So, in all the 170 inhabited globes there would be a maximum of 170 tirthankars at one time or there could be a minimum of 20. At present, the prominent tirthankars of the Videh Kshetra are Shri Seemandhar, Shri Yugmandhar, etc. In the Vedic literature also, we find the resemblance between the fourteen Kulkars and the incarnations, as has been said in the Manusmriti-

कुलादिबीजं सर्वेषां प्रथमो विमलवाहनः।
चक्षुष्मान् यशस्वी वाभिचन्द्रोऽथ प्रसेनजित् ।।1।।
मरुदेवश्च नाभिश्च भरते कुलसत्तमाः।
अष्टमो मरुदेव्यां तु नाभेजीत उरक्रमः।।2।।

Kuladibeejam Sarvesham Prathmo Vimalvahanah
Chakshushman Yashashvi Vabhichandroth Prasenjit
Marudevashch Nabhishch Bharate Kulsattama
Ashtamo Marudevyam Tu Nabhejit Urkramah

The first is Kul Vimalvahan, The second being Chakshushman, followed by Yashasvi, Abhichandra, Prasenjit, Marudev and the seventh being Nabhiraj. These have been the Kulkars of the Bharat Kshetra. Out of these, Lord Rishabh Dev, the eighth incarnation, was born to Marudevi from Nabhiraj. In Bhagwat also Rishabh Dev has been described as the eighth incarnation of Vishnu.

"भगवान् परमर्षिभिः प्रसादितो नाभेः प्रियचिकीर्षया तदव़रांधायने मेरुदेव्यां धर्मान् दर्शयितुकामो वातरशनानां श्रमणानामृषीणामूर्ध्वमंथिनां शुक्लया तनुवावतार।"

Bhagwan Paramrishibhih Prasadito Nabheh Priyachikirshya Tadavarodhayane Merudevyam Dharman Darshyitukamo Vaatarshananam Shramananamrishinamudharvmanthinam Shuklya Tanuvavtar.

In the religious sacrifices Shri Bhagwan in order to please Maharaj Nabhiraj was born to his wife Maharani Marudevi as a Digambar saint and appeared from Shudhsatvamay vigreh sharir to manifest the religion for the udhvarcheta saints.

It has been said in Vayupuran—

नाभिस्त्वजनयत् पुत्रं, मेरुदेव्यां महाद्युतिः।
ऋषभं पार्थिवं श्रेष्ठं, सर्वक्षत्रस्य पूर्वजम् ।।
ऋषभाद् भरतो जज्ञे, वीरः पुत्रशताग्रजः।
सोऽभिषिच्याथ भरतं, पुत्रं प्राव्राज्यमास्थितः।।
हिमाह्वं दक्षिणं वर्षं, भरताय न्यवेदयत् ।
तस्माद् भारतं वर्षं, तस्य नाम्ना विदुर्बुधाः।।

Nabhisatvajnayat Putram, Merudevyam Mahadyutih
Rishabham Parthivam Shreshtham, Sarvashatrasya Purvajam
Rishbhad Bharato Jagye, Veer Putrashatagrajah
Sobhishichyath Bharatam, Putram Pravrajyamasthitah
Himaham Dakshinam Varsham, Bharatay Nyavedyat
Tasmad Bharatam Varsham, Tasyam Namna Vidurburdhah

It is said that queen Marudevi of Nabhiraj gave birth to Rishabh. Rishabh Dev had one hundred sons; Bharat was the eldest. Rishabh Dev took to asceticism after coronating Bharat and giving him the territory starting from Himachal to the south to rule. This country is called Bharat after the King Bharat.

There are also evidences in other Vedic literatures–

"येषां खलु महायोगी भरतो ज्येष्ठः श्रेष्ठगुण आसीद् येनेदं वर्षं भारत-मिति व्यपदिशन्ति।"

Yesham Khalu Mahayogi Bharato Jayeshthah Shreshthagun Aaseed Yenedam Varsham Bharat-miti Vyapadishanti

"ऋषभाद् भरतो भरतेन चिरकालं धर्मेण पालितत्वादिदं भारतं वर्षमभूत्।"

Rishabhad Bharato Bharaten Chirkalam Dharmen Palitatvadidam Bharatam Varashambhutam.

Not only Lord Rishabh Dev has been accepted in the Rigveda and other Vedic literature but there have also been acceptance of the twenty-four tirthankars at some places.

"ॐ त्रैलोक्यप्रतिष्ठितान् चतुर्विंशतितीर्थंकरान् ऋषभाद्यान वर्द्धमानान्तान् सिद्धान् शरणं प्रपद्ये।"

Om Trailokyapratishthitan Chaturvinshatitirthakaran Rishabhadyan Vardhamanantan Siddhan Sharanam Prapdya. (Om consecrated in the three worlds from Rishabh Dev to Vardhman the twenty-four Tirthankars and Siddhs, I take your shelter.)

At other instances also–

"ॐ नमो अर्हतो ऋषभाय।"

Om Namo Arhato Rishabhay

The famous scholar of Buddhism Acharya Dharmkirti writes–

"ऋषभो वर्धमानश्च तावादौ यस्य स ऋषभवर्धमानादिः दिगंबराणां शास्ता सर्वज्ञ आप्तश्चेति।"

Rishabhyo Vardhmanashch Tavadao Yyasya Sa Rishabhvardhmanadi Digambaranam Shasta Sarvagya Aaptshcheti

It is evident that even in the eighth century the Jain scholars used to worship the first preacher, Lord Rishabhdev, and the last one, Lord Vardhman.

From all these instances, it is now evident that every one has somehow accepted Lord Rishabh Dev as the first tirthankar. In Buddhism it has not only been accepted that Lord Rishabh Dev was the first tirthankar but also that it was his son Bharat after whose name this country has been named.

Jainism is Independent–

Jainism is an independent religion. There are strong evidences to suggest that this is not a branch of any other religion.

The names of Shatdharshan:

जैना मीमांसका बौद्धाः, शैवा वैशेषिका अपि।
नैयायिकाश्च मुख्यानि, दर्शनानीहं सन्ति षट् ।।

Jaina Meemanska Bauddhah, Shaiva Vaisheshika Api
Naiyayikashch Mukhyani, Sarshananeeh Santi Shat.

Jain, Meemansak, Boddh, Shaiv, Vaisheshik and Naiyayik. These are the six main philosophies in this country.

It has been written in the Vayupuran–

उपासनाविधिश्चोक्तः कर्मसंशुद्धिचेतसाम् ।
ब्राह्मं शैवं वैष्णवं च, सौरं शाक्तं तथार्हतम् ।।
षट्दर्शनानि चोक्तानि स्वभावनियतानि च।
एतद्न्यच्च विविधं पुराणेसु निरुपितम् ।।

Upasanavidhishchoktah Karmasanshudhichetasaam
Brahman Shaiv Vaishnavam Cha, Sauram Shaaktam Tathahartam
Shattdarshanani Choktani Swabhavniyatani Cha
Etdanyachcha Vividhi Puraneshu Nirupitam

All the six philosophies have independent worshipping procedures and these are, by nature, firm and idependent. As such the Jainism cannot be taken as a branch of Hinduism.

Innumerable Tirthankars in Jain Religion—

It is written in Tiloypannanati, "The avsarpini and utsarpini periods are a never ending process. After innumerable avsarpini-utsarpini periods come one 'Hundavsarpini period". It is thus clear that in every avsarpini and utsarpini period there are twenty-four tirthankars and in total innumerable twenty-four tirthankars have existed in this period. Thus, it is wrong to say that jainism has been founded by Bhagwan Mahaveer Swamy.

Jainism in Indus valley Civilisation—

Harappa and Mohen-jo-daro civilisations, which are commonly known as the Indus Valley Civilisations, have also confirmed the existence of Jainism at that time. After a thorough study of the archeological survey, it has been accepted that at that time the Shraman culture and Jain culture had a vide impact. The gods worshipped by Jains have also been found on the currencies and seals of that era.

In the same context, a human sculpture has been found which is estimated to be around three thousand years old. The scholars are of the opinion that this sculpture is on Nabhiraj, the father of the first tirthankar, Lord Rishabhdev. This sculpture is of the era when Nabhiraj had decided to take to asceticim after coronating his son Rishabhdev. There is a clear reference of this instance in Shreemadbhagwat—

"विदितानुरागमहापौर-प्रकृतिजनपदो राजा नाभिराजात्मजं समयसेतुरक्षायामभिषिच्य सह मरुदेव्या विशालायां प्रंसन्ननिपुणेन तपसा समाधियोगेन महिमानमवाप्त।"

Viditanuragmahapaur-Prakartijanpado Raja Nabhirajatmajam Samayseturakshayam-bhishichya Sah Marudevya Vishalayam Prasannipunen Tapsa Samadhiyogen Mahimanamvapt.

It means Nabhiraj after giving his kingdom to his son Rishabhdev took to asceticism along with his wife Marudevi and attained the ultimate goal.

This also proves that Lord Rishabhdev era has been the oldest. Jainism thus has been in existence since then.

Description of Jainism—

Those who conquer the Karma shatru are called "Jin". Like "Karmaratin Jayatiti Jinah." (**'कर्मारातीन् जयतीति जिनः'**) Thus those who worship these "Jin" are called Jains-"Jino Devatasyeti Jainah" (**'जिनो देवतास्येति जैनः'**).

The vyuptpatti of religion is-"Uttame Sukhe Dhartiti Dharmah" (**'उत्तमे सुखे धरतीति धर्मः'**).

The best religion is that which takes the people to the eternal heaven, the best pleasure of moksha. That religion can be only one which preaches non-violence.

Shri Gautam Swami Indrabhuti Gandhar Dev has said—

धर्मः सर्वसुखाकारो हितकारो धर्म बुधाश्चिन्वते।
धर्मेणैव समाप्यते शिवसुखं धर्माय तस्मै नमः।।1।।
धर्मान्नास्त्यपरः सुहृद् भवभृतां धर्मस्य मूलं दया।
धर्मे चित्तमहं दये प्रतिदिनं हे धर्म! मां पालय।।2।।

Dharmah Sarvasukhakaro Hitkaro Dharmam Budhashchinvate
Dharmenev Samapyete Shivsukham Dharmay Tasme Namah
Dharmannastayparah Suhrid Bhavbhrita Dharmasya Mulam Daya
Dharme Chitmaham Dadhe Pratidinam He Dhram Ma Paalay

(The religion is the source of all satisfaction and charity. Scholars used to practise Jainism. It takes one to the ultimate moksha, sukh. I bow to such a religion. There is no better friend than religion in this world. The basic ingredient of religion is mercy. I conserve such a religion in my heart. O religion be on my side and save me.)

It is also said–

'अहिंसा परमोधर्मः यतो धर्मस्ततो जयः।'
Ahinsa Parmodharmah Yato Dharmastato Jayah

(Non-violence is the best of all religions. Where there is religion there is victory.)

The five Anuvrat–

For following non-violence, five anuvrats have been prescribed: Ahinsanuvrat, Satyanuvrat, Achoryanuvrat, Brahamcharyanuvrat and Parigrehparimananuvrat.

Hinsa (violence) is of four kinds. Sankalpi hinsa, Arambhi hinsa, Udyogini hinsa and Virodhini hinsa. Meaningful killing of any creature is sankalpi hinsa. In domestic life any killing of creature, buring of fire for cooking or filling of water is arambhi hinsa. Any hinsa while doing one's business activity is udyogini hinsa. Any hinsa to save the religion, country or killing in war is virodhini hinsa. In domestic life one can only vow to give up the sankalpi hinsa. In the rest of the three hinsa, one can exercise restraint. This type of vrat is called ahinsanuvrat.

Giving up telling lies is called satyanuvrat. But one should not speak any truth which may bring harm to religion or difficulities to others or may result in death of any creature.

Not to steal the wealth of any other person is achoryanuvrat.

Eschewing adultery is called brahamcharyanuvrat. This should be practised by females as well just like Sati Sita who turned fire into water by the strength of her brahamcharyanuvrat Sheelvrat.

To confine one's wealth and needs is parigreh parimananuvrat. Any one who practises all these five vrats is called anuvrati. These anuvratis are always happy and prosperous in their present life and are entitled to the prosperity of heaven.

The five Mahavrats–

Any one who gives up violence (hinsa), stealing (chori), telling lies, adultery (kusheel) and confinement of needs (parigreh) is called mahavrati. He is also known as a saint, mahamuni, maharishi, digambar muni, etc.

Lord Rishabh Dev was born in Ayodhya. Since he belonged to Ikshwakoo dynasty, he was known as Ikshwakoovanshiya. In the absence of Kalpavriksha at that time, the Lord taught the people the art of living. This art consists of six activities comprising asi, mashi, krishi, vidya, vanijya and shilpa. As per the Videh Kshetra, people were divided in classifications of Kshatriya, Vanijya, etc. He also taught the science of politics by making one Mahamandalik king and again making other kings under him. In the end he took to asceticism and attained Kewalgyan and preached the Moksha marg.

When Lord Rishabh Dev was ready to give up all his worldly belongings to take to asceticism, he crowned his eldest son Bharat. Later on Bharat crowned his eldest son Arkkirti and took to Jain asceticism. Arkkirti, in turn handed over the kingdom to his son Smityash before doing the same. The descendends of the Ikshwakoo dynasty thus attained Moksha by taking to asceticism after handing over the kingdom to their sons. It has been written in Harivansh puran that this custom was practised uninterrupted by all the kings in the dynasty totalling 14 lacs.

Hence, one can understand that in the fourth kaal Jainism was practised by brahmans, kshatriyas, vaishyas and shudras. In the fifth kaal also, there have been Jain kings in Mysore in southern India. Unfortunately, today, Jainism is confined to the vaishyas only.

Jainism is a Religion, not a Caste—

Jainism is a religion, not a caste. One should understand jaati, gotra and dharm. At present, it is estimated there are eighty-four castes among the Jain community like, Aggarwal, Porwal, Khandelwal, Padmavati Purval, Parwar, Lamechu, Chaturth, Pancham, Bagherwal, Shetwal, etc. Every caste has its own gotras. Like in Aggarwals, there are Goel, Singhal, Mittal, etc. In Khandewals, there are Sethi, Ranvka, Gangwal, etc. Thus caste and gotra are two different things and religion is another. But still due to some compulsions it became necessary to write Jain in the column of Caste at the time of population census.

Jains should write "Jain" after their names. Normally in Marwaar and South, people use their gotra after their names instead of Jain. As a result, the Jains remain a minority community in the population census.

It was once written in a Tirthankar magazine—

Those Jains who do not write Jain after their names number well over crore and 14 lacs. Those Jains who do not use Jain in their names or use some local surname, speak some local language and normally do the craft work or farming amount to a total of one crore and 14 lacs in numbers. They are spread all over the country and are known by different surnames. As per a recent survey such people account for 15 lacs in Maharashtra, 35 lacs in Bihar, Bengal and Orissa, 15 lacs in Karnataka, 12 lacs in Gujarat, 2 lacs in Tamil Nadu, 15 lacs in Madhya Pradesh, 10 lacs in Rajasthan and 10 lacs in other parts of the country.

The Convener of Jain Parishad, Shri Mahaveer Chavhan, has demanded a separate entity for Jain religion.

Namokar Mahamantra—

Namokar Mahamantra is the eternal mantra of Jainism. Every one should recite this mantra daily. It should be written in bold letters at the entry and shikhar of every Jain temple. It may also be inscribed on a stone and affixed on a wall so that any one can recognise a Jain temple from a distance. Every Jain should also inscribe the namokar mantra at the entrance of his house, shop, office or any other organisation. This not only symbolises Jainism but also protects against evil spirits, thieves, dacoits, snakes, etc. Being a raksha mantra it would also act as a shield.

Hence, we should accept Jainism as the eternal religion and should have compassionate feelings towards others.

* * *

> भगवान महावीर ने प्राणीमात्र के कल्याण के लिए महान संदेश दिया है ताकि सभी प्राणी शांति से रह सकें। हम उनके बताए रास्ते पर चलकर उनके योग्य उत्तराधिकारी बनें।
>
> -जस्टिस टी.के. टुकोल (भारत)

।। ॐ नमः सिद्धेभ्यः।।

षट्खण्डागम-एक अनुशीलन

—गणिनी ज्ञानमती

सिद्धान् सिद्ध्यर्थमानम्य, सर्वांस्त्रैलोक्यमूर्धगान् ।
इष्टः सर्वक्रियान्तेऽसौ, शान्तीशो हृदि धार्यते।।1।।

संपूर्ण अंग और पूर्वों के एक देश ज्ञाता, श्रुतज्ञान को अविच्छिन्न बनाने की इच्छा रखने वाले, महाकारुणिक भगवान श्रीधरसेनाचार्य हुए हैं। उनके मुखकमल से पढ़कर सिद्धान्तज्ञानी श्री पुष्पदंत और श्रीभूतबलि आचार्य हुए हैं। उन्होंने **'अग्रायणीय पूर्व'** नामक द्वितीय पूर्व के **'चयनलब्धि'** नामक पांचवीं वस्तु के **'कर्मप्रकृति प्राभृत'** नामक चौथे अधिकार से निकले हुए जिनागम को छह खण्डों में विभाजित करके **'षट्खण्डागम'** यह सार्थक नाम देकर सिद्धान्त सूत्रों को लिपिबद्ध किया है।

छह खंड के नाम—1. जीवस्थान 2. क्षुद्रकबंध 3. बंधस्वामित्वविचय 4. वेदनाखण्ड 5. वर्गणाखण्ड 6. महाबंध ये नाम हैं।

इनमें से पाँच खण्डों में छह हजार सूत्र हैं और छठे खण्ड में तीस हजार सूत्र हैं, ऐसा 'श्रुतावतार' ग्रंथ में लिखा है।

वर्तमान में मुद्रित सोलह पुस्तक—वर्तमान में छपी हुई सोलह पुस्तकों में पाँच खण्ड माने हैं। उनके सूत्रों की गणना छह हजार, आठ सौ, तीस हैं (6830)।

प्रथम खण्ड में दो हजार तीन सौ पचहत्तर सूत्र हैं। दूसरे खण्ड में पंद्रह सौ चौरानवे, तृतीय खण्ड में तीन सौ चौबीस, चतुर्थ खंड में पंद्रह सौ चौदह और पांचवें खण्ड में एक हजार तेईस हैं। 2375+1594+324+1514+1023=6830 हैं।

मुद्रित सोलह पुस्तकों में पाँच खण्डों का विभाजन—छपी हुई प्रथम पुस्तक से लेकर छह पुस्तकों तक प्रथम खण्ड है। सातवीं पृस्तक में द्वितीय खण्ड है। आठवीं पुस्तक में तृतीय ख़ण्ड है। नवमी से लेकर बारहवीं ऐसे चार पुस्तकों में चतुर्थ खण्ड है और तेरहवीं से लेकर सोलहवीं तक चार पुस्तकों में पाँचवां खंड है।

प्रथम खण्ड के विषय—प्रथम खण्ड में आठ अनुयोगद्वार हैं एवं अंत में एक चूलिका अधिकार है, इस चूलिका के भी नव भेद हैं। **आठ अनुयोगद्वार के नाम**—1. सत्प्ररूपणा, 2. द्रव्यप्रमाणानुगम, 3. क्षेत्रानुगम 4. स्पर्शनानुगम 5. कालानुगम 6. अन्तरानुगम 7 भावानुगम और 8. अल्पबहुत्वानुगम।

चूलिका के नाम और भेद—1. प्रकृतिसमुत्कीर्तन चूलिका 2. स्थानसमुत्कीर्तन चूलिका 3. प्रथम महादण्डक 4. द्वितीय महादण्डक 5. तृतीय महादण्डक 6. उत्कृष्टस्थितिबंध 7. जघन्यस्थितिबंध 8. सम्यक्त्वोत्पत्तिचूलिका और 9. गत्यागती चूलिका।

छह पुस्तकों में प्रथम खण्ड का विभाजन—प्रथम पुस्तक में सत्प्ररूपणा है, द्वितीय पुस्तक में 'आलाप अधिकार' नाम से इसी सत्प्ररूपणा का विस्तार है। तृतीय पुस्तक में द्रव्यप्रमाणानुगम है। चतुर्थ पुस्तक में क्षेत्रानुगम, स्पर्शनानुगम और कालानुगम का वर्णन है। पंचम पुस्तक में अंतरानुगम, भावानुगम और अल्पबहुत्वानुगम है। छठी पुस्तक में नव चूलिकायें हैं।

सातवीं पुस्तक में **'क्षुद्रकबंध'** नाम से **द्वितीय खण्ड** है। आठवीं पुस्तक में **'बंध स्वामित्वविचय'** नाम से **तृतीय खण्ड** है।

चतुर्थ-पंचम खण्ड का विभाजन—अग्रायणीय पूर्व के अर्थाधिकार चौदह हैं—1. पूर्वान्त 2. अपरान्त 3. ध्रुव 4. अध्रुव 5. चयनलब्धि 6. अध्रुवसंप्रणिधान 7. कल्प 8. अर्थ 9. भौमावयाद्य 10. कल्पनिर्याण 11. अतीतकाल 12. अनागतकाल 13. सिद्ध और 14 बुद्ध[1]।

---

[1] षट्खण्डागम धवलाटीकासमन्वित, पुस्तक 9, पृ. 226।

यहाँ 'चयनलब्धि' के अधिकार में 'महाकर्म प्रकृतिप्राभृत' संगृहीत है। उसमें चौबीस अनुयोगद्वार हैं–

1. कृति 2. वेदना 3. स्पर्श 4. कर्म 5. प्रकृति 6. बंधन 7. निबंधन 8. प्रक्रम 9. उपक्रम 10. उदय 11. मोक्ष 12. संक्रम 13. लेश्या 14. लेश्याकर्म 15. लेश्या परिणाम 16. सातासात 17. दीर्घ ह्रस्व 18. भवधारणीय 19. पुद्गलात्त 20. निधत्तानिधत्त 21. निकाचितानिकाचित 22. कर्मस्थिति 23. पश्चिमस्कंध 24. अल्पबहुत्व[1]।

वेदनाखण्ड–

चतुर्थ वेदनाखण्ड में 9, 10, 11, 12 ऐसी 4 पुस्तकें हैं।

नवमी पुस्तक में उपर्युक्त 24 अनुयोगद्वारों में से प्रथम 'कृति' नाम का अनुयोग द्वार है।

दशवीं पुस्तक में वेदना अनुयोगद्वार का वर्णन करते हुए वेदना के 16 भेद किये हैं–

1. वेदनानिक्षेप 2. वेदनानयविभाषणता 3. वेदनानामविधान 4. वेदनाद्रव्यविधान 5. वेदनाक्षेत्रविधान 6. वेदनाकालविधान 7. वेदनाभावविधान 8. वेदनाप्रत्ययविधान 9. वेदनास्वामित्वविधान 10.वेदनावेदनाविधान 11. वेदनागतिविधान 12. वेदनाअनंतरविधान 13. वेदनासन्निकर्षविधान 14. वेदनापरिमाणविधान 15. वेदनाभागाभागविधान और 16. वेदनाअल्पबहुत्वविधान।

दसवीं पुस्तक में–आदि के चार अनुयोग द्वार हैं–

1. वेदनानिक्षेप 2. वेदनानयविभाषणता 3. वेदनानामविधान और 4. वेदनाद्रव्यविधान।

ग्यारहवीं पुस्तक में–वेदनाक्षेत्र विधान और वेदनाकाल विधान ये 5वें, छठें दो अनुयोग द्वार हैं।

बारहवीं पुस्तक में–'वेदनाभाव विधान' नाम के सातवें अनुयोग द्वार से 'वेदना अल्पबहुत्व विधान' तक ये 10 अनुयोगद्वार हैं। इस प्रकार इन तीन ग्रंथों में 'वेदना अनुयोगद्वार' का ही वर्णन होने से यह चौथा खण्ड 'वेदनाखण्ड' नाम से विभक्त है।

वर्गणाखण्ड–तेरहवीं पुस्तक में–चौबीस अनुयोगद्वार में से स्पर्श, कर्म और प्रकृति इन तीसरे, चौथे और पाँचवें अनुयोगद्वारों का वर्णन है।

चौदहवीं पुस्तक में–'बंधन' नाम के छठे अनुयोगद्वार का कथन है।

पंद्रहवीं पुस्तक में–निबंधन, प्रक्रम, उपक्रम और उदय इन 7वें, 8वें, 9वें और 10वें अनुयोगद्वार का कथन है।

सोलहवीं पुस्तक में–मोक्ष, संक्रम, लेश्या आदि से लेकर अल्पबहुत्व पर्यंत 11वें से 24वें तक 14 अनुयोगद्वार वर्णित हैं।

इन चार ग्रंथों में वर्णित विषय 'वर्गणाखण्ड' नाम से कहा गया है।

संक्षेप में षट्खण्डागम के इन पांच खण्डों का 16 पुस्तकों में विभाजन एवं सूत्रसंख्या दी जा रही है।

षट्खण्डागम (16 ग्रंथों-पुस्तकों में)

पुस्तक संख्या	**विषय**	**सूत्र संख्या**
	प्रथम खण्ड–जीवस्थान (इसमें छह पुस्तकें हैं)	
पुस्तक 1	सत्प्ररूपणा (14 गुणस्थान, 14 मार्गणा)	177
पुस्तक 2	आलाप अधिकार	0
पुस्तक 3	द्रव्यप्रमाणानुगम (संख्या)	192
पुस्तक 4	क्षेत्र-स्पर्शन-कालानुगम	619
पुस्तक 5	अंतर-भाव-अल्पबहुत्वानुगम	872
पुस्तक 6	जीवस्थान चूलिका (नव चूलिकायें)	512

---

[1] षट्खण्डागम, धवलाटीकासमन्वित, पुस्तक 9, पृ. 134।

द्वितीय खण्ड–क्षुद्रकबंध

पुस्तक 7	क्षुद्रकबंध	1594

तृतीय खण्ड–बंधस्वामित्वविचय

पुस्तक 8	बंधस्वामित्वविचय	324

चतुर्थ खण्ड–वेदना खण्ड

पुस्तक 9	'कृति' अनुयोगद्वार (वेदनाखंड)	76
पुस्तक 10	'वेदना' के 16 भेदों में 4 भेद	224
पुस्तक 11	वेदना क्षेत्रविधान, वेदनांकालविधान	378
पुस्तक 12	वेदना के 7वें भेद से 16 तक वर्णन	533

पंचम खण्ड–वर्गणा खण्ड

पुस्तक 13	स्पर्श, कर्म, प्रकृति अनुयोगद्वार	206
पुस्तक 14	बंधन अनुयोग द्वार	797
पुस्तक 15	निबंधन, प्रक्रम, उपक्रम, उदय अनुयोगद्वार	20
पुस्तक 16	'मोक्ष' नाम के 11वें अनुयोगद्वार से 24वें तक सूत्र नहीं है	0

षट्खण्डागम की टीकायें

इस 'षट्खण्डागम' ग्रंथराज पर छह टीकायें लिखी गई हैं। ऐसा आगम में उल्लेख है। उनके नाम–

1. श्री कुन्दकुन्ददेव ने तीन खण्डों पर 'परिकर्म' नाम से टीका लिखी है जो कि 12 हजार श्लोक प्रमाण थी।

2. श्री शामकुंडाचार्य ने 'पद्धति' नाम से टीका लिखी है जो कि संस्कृत, प्राकृत और कन्नड़ मिश्र थी, ये पांच खण्डों पर थी और 12 हजार श्लोक प्रमाण थी।

3. श्री तुंबुलूर आचार्य ने 'चूड़ामणि' नाम से टीका लिखी। छठा खण्ड छोड़कर षट्खण्डागम और कषायप्राभृत दोनों सिद्धान्त ग्रंथों पर यह 84 हजार श्लोक प्रमाण थी।

4. श्री समंतभद्रस्वामी ने संस्कृत में पांच खण्डों पर 48 हजार श्लोक टीका लिखी।

5. श्री वप्पदेवसूरि ने 'व्याख्याप्रज्ञप्ति' नाम से टीका लिखी, यह पांच खण्डों पर और कषायप्राभृत पर थी एवं 60 हजार श्लोक प्रमाण प्राकृत भाषा में थी।

6. श्री वीरसेनाचार्य ने छहों खण्डों पर प्राकृत-संस्कृत मिश्र टीका लिखी, यह 'धवला' नाम से टीका है एवं 72 हजार श्लोक प्रमाण है।

वर्तमान में ऊपर कही हुई पांच टीकाएं उपलब्ध नहीं हैं, मात्र श्री वीरसेनाचार्य कृत 'धवला' टीका ही उपलब्ध है जिसका हिंदी अनुवाद होकर छप चुका है। इस ग्रंथ को ताड़पत्र से लिखाकर और हिंदी अनुवाद कराकर छपवाने का श्रेय इस बीसवीं सदी के प्रथमाचार्य चारित्र चक्रवर्ती श्री शांतिसागर जी महाराज को है। उनकी कृपा प्रसाद से हम सभी इन ग्रंथों के मर्म को समझने में सफल हुये हैं।

सिद्धान्तचिन्तामणि टीका–

मैंने सरल संस्कृत भाषा में यह 'सिद्धान्तचिंतामणि' नाम से टीका लिखी है। भगवान शांतिनाथ, कुंथुनाथ और अरनाथ की जन्मभूमि हस्तिनापुर 'जंबूद्वीप' तीर्थ पर आश्विन शुक्ला पूर्णिमा वीर नि. सं. 2521 दिनाँक 8-10-1995 को मैंने यह टीका लिखना प्रारंभ किया था। अभी श्रावण शुक्ला सप्तमी वीर नि. सं. 2530, दिनाँक 22-8-2004 को मैंने भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर 'नंद्यावर्त महल' तीर्थ पर तेरहवीं पुस्तक 'वर्गणाखण्ड' की टीका पूर्ण की है।

इस टीका को लिखने का मेरा भाव केवल 'षट्खण्डागम' महाग्रन्थराज के रहस्य को समझने का, अपने ज्ञान के

क्षयोपशम की वृद्धि का एवं परिणामों की विशुद्धि का ही है।

यह 'षट्खण्डागम' कितना प्रामाणिक है, देखिए श्रीवीरसेनस्वामी के शब्दों में–

लोहाइरिये सग्गलोगं गदे आयार-दिवायरो अत्थमिओ। एवं बारससु दिणयरेसु भरहखेत्तम्मि अत्थमिएसु सेसाइरिया सव्वेसिमंगपुव्वाणमेगदेसभूद-पेज्जदोस-महाकम्मपयडिपाहुडादीणं धारया जादा। एवं पमाणीभूदमहारिसिपणालेण आगंतूण महाकम्मपयडिपाहुडामियजलपवाहो धरसेणभडारयं संपत्तो। तेण वि गिरिणयरचंदगुहाए भूदबलि-पुप्फदंताणं महाकम्मपयडिपाहुडं सयलं समप्पिदं। तदो भूदबलिंभडारएण सुदणईपवाहवोच्छेदभीएण भवियलोगाणुग्गहट्ठं महाकम्मपयडिपाहुडमुवसंहरिऊण छखंडाणि कयाणि। तदो तिकालगोयरासेसपयत्थविसयपच्चक्खाणंतकेवलणाणप्पभावादो पमाणीभूदआइरियपणालेणागदत्तादो दिट्ठिट्ठविरोहाभावादो पमाणमेसो गंथो। तम्हा मोक्खकंखिणा भवियलोएण अब्भसेयव्वो। ण एसो गंथो थोवो त्ति मोक्खकज्जजणणं पडि असमत्थो, अमियघडसयवाणफलस्स चुलुवामियवाणे वि उवलंभादो[1]।

लोहाचार्य के स्वर्गलोक को प्राप्त होने पर आचारांगरूपी सूर्य अस्त हो गया। इस प्रकार भरतक्षेत्र में बारह सूर्यों के अस्तमित हो जाने पर शेष आचार्य सब अंग-पूर्वों के एकदेशभूत 'पेज्जदोस' और 'महाकम्मपयडिपाहुड' आदिकों के धारक हुए। इस प्रकार प्रभाणीभूत, महर्षि रूप प्रणाली से आकर महाकम्मपयडिपाहुड रूप अमृत जल-प्रवाह धरसेन भट्टारक को प्राप्त हुआ। उन्होंने भी गिरिनगर की चन्द्र गुफा में सम्पूर्ण महाकम्मपयडिपाहुड भूतबलि और पुष्पदन्त को अर्पित किया। पश्चात् श्रुतरूपी नदी प्रवाह के व्युच्छेद से भयभीत हुए भूतबलि भट्टारक ने भव्यजनों के अनुग्रहार्थ महाकम्मपयडिपाहुड का उपसंहार कर छह खण्ड (षट्खण्डागम) किये। अतएव त्रिकालविषयक समस्त पदार्थों को विषय करने वाले प्रत्यक्ष अनन्त केवलज्ञान के प्रभाव से प्रमाणीभूत आचार्यरूप प्रणाली से आने के कारण प्रत्यक्ष व अनुमान से चूँकि विरोध से रहित है अतः यह ग्रंथ प्रमाण है। इस कारण मोक्षाभिलाषी भव्य जीवों को इसका अभ्यास करना चाहिए। चूँकि यह ग्रंथ स्तोक है अतः वह मोक्षरूप कार्य को उत्पन्न करने के लिए असमर्थ है, ऐसा विचार नहीं करना चाहिए; क्योंकि अमृत के सौ घड़ों के पीने का फल चुल्लु प्रमाण अमृत के पीने में भी पाया जाता है।

अतः यह ग्रंथराज बहुत ही महान है, इसका सीधा संबंध भगवान महावीर स्वामी की वाणी से एवं श्री गौतम स्वामी के मुखकमल से निकले 'गणधरवलय' आदि मंत्रों से है। इस ग्रंथ में एक-एक सूत्र अनंत् अर्थों को अपने में गर्भित किये हुए हैं। अतः हम जैसे अल्पज्ञ इन सूत्रों के रहस्य को, मर्म को समझने में अक्षम ही हैं। फिर भी श्रीवीरसेनाचार्य ने 'धवला' टीका को लिखकर हम जैसे अल्पज्ञों पर महान् उपकार किया है।

इस धवला टीका को आधार बनाकर मैंने टीका लिखी है। इसमें कहीं-कहीं धवला टीका की पंक्तियों को ज्यों का त्यों ले लिया है। कहीं पर उनकी संस्कृत (छाया) कर दी है। कहीं-कहीं उन प्रकरणों से संबंधित अन्य ग्रंथों के उद्धरण भी दिये हैं। श्रीवीरसेनाचार्य के द्वारा रचित टीका में जो अतीव गूढ़ एवं क्लिष्ट सैद्धांतिक विषय हैं अथवा जो गणित के विषय हैं उनको मैंने छोड़ दिया है एवं 'धवला टीकायां दृष्टव्यं' धवला टीका में देखना चाहिए, ऐसा लिख दिया है। अर्थात् इस धवला टीका के सरल एवं सारभूत अंश को ही मैंने लिया है। चूँकि यह श्रुतज्ञान ही 'केवलज्ञान' की प्राप्ति के लिए 'बीजभूत' है।

जैसे कि मैंने लिखा है–

सिद्धांतचिंतामणिनामधेया, सिद्धान्तबोधामृतदानदक्षा।
टीका भवेत्स्वात्मपरात्मनोर्हि, कैवल्यलब्ध्यै खलु बीजभूता[2]।।17।।

'षट्खण्डागम' में–पाँच खण्डों में सूत्र संख्या छह हजार आठ सौ तीस (6830) है। तेरह पुस्तकों तक सूत्रों की संख्या 5630 है। इतने–पाँच हजार छह सौ तीस सूत्रों की मेरी टीका हो चुकी है। अब मात्र 14वीं, 15वीं और 16वीं पुस्तकों की, उनमें आये 1200 सूत्रों की टीका शेष है। मैं भगवान श्री महावीर स्वामी के चरणकमलों में यही प्रार्थना करती हूँ कि इन तीनों ग्रंथों की टीका लिखने का भी सुयोग मुझे प्राप्त हो और निर्विघ्न संपन्न हो।

---

1. षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित), पुस्तक 9, पृ. 133-134।
2. षट्खण्डागम, सिद्धान्तचिन्तामणिटीका समन्वित, पुस्तक 1, पृ. 4।

षट्खंडागम का विषय

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं।।1।।

षट्खण्डागम की प्रथम पुस्तक सत्प्ररूपणा में सर्वप्रथम 'णमोकार महामंत्र' से मंगलाचरण किया है। इसमें 177 सूत्र हैं। इस ग्रंथ की रचना श्रीमत्पुष्पदंत आचार्य ने की है। इसके आगे के संपूर्ण सूत्र श्रीमद् भूतबलि आचार्य प्रणीत हैं।

इस मंगलाचरण की धवला टीका में पांचों परमेष्ठी के लक्षण बताये हैं।

यह मंत्र अनादि है या श्री पुष्पदन्ताचार्य द्वारा रचित सादि है?

मैंने 'सिद्धान्तचिन्तामणि' टीका में इसका स्पष्टीकरण किया है। धवला टीका में इसे 'निबद्धमंगल' कहकर आचार्यदेव रचित 'सादि' स्वीकार किया है। इसी मुद्रित प्रथम पुस्तक के टिप्पण में जो पाठ का अंश उद्धृत है वह धवलाटीका का ही अंश माना गया है। उसके आधार से यह मंगलाचरण 'अनादि' है। आचार्य श्री पुष्पदंत द्वारा रचित नहीं है, ऐसा स्पष्ट होता है। इस प्रकरण को मैंने दिया है। यथा–

अयं महामंत्र सादिरनादिर्वा?

अथवा षट्खण्डागमस्य मु प्रतौ पाठांतरं। यथा–(मुद्रितमूलग्रन्थस्य प्रथमावृत्तौ)

''जो सुत्तस्सादीए सुत्तकत्तारेण णिबद्धदेवदाणमोक्कारो तं णिबद्धमंगलं। जो सुत्तस्सादीए सुत्तकत्तारेण कयदेवदाणमोक्कारो तमणिबद्धमंगलं''[1]।

अस्यायमर्थः-यः सूत्रस्यादौ सूत्रकर्त्रा निबद्धः–संग्रहीतः न च ग्रथितः देवतानमस्कारः स निबद्धः मंगलं। यः सूत्रस्यादौ सूत्रकर्त्रा कृतः-ग्रथितः देवतानमस्कारः स अनिबद्धमंगलं। अनेन एतज्ज्ञायते-अयं महामंत्रः मंगलाचरणरूपेणात्र संग्रहीतोऽपि अनादिनिधनः, न तु केनापि रचितो ग्रथितो वा।

उक्तं च णमोकारमंत्रकल्पे श्रीसकलकीर्तिभट्टारकैः –

महापंच गुरोर्नाम नमस्कारसुसम्भवम्। महामंत्रं जगज्जेष्ठ-मनादिसिद्धमादिदम्[2]।।63।।
महापंचगुरूणां पंचत्रिंशदक्षरप्रमम्। उच्छ्वासैस्त्रिभिरेकाग्र-चेतसा भवहानये[3]।।68।।

श्रीमदुमास्वामिनापि प्रोक्तम्–

ये केचनापि सुषमाद्यरका अनन्ता, उत्सर्पिणी-प्रभृतयः प्रययुर्विवर्ताः।
तेष्वप्ययं परतरः प्रथितप्रभावो, लब्ध्वामुमेव हि गताः शिवमत्र लोकाः[4]।।3।।

यह महामंत्र सादि है अथवा अनादि?

अथवा, मुद्रितमूल प्रति में (प्रथम आवृत्ति में) पाठान्तर है। जैसे–

जो सूत्र की आदि में सूत्रकर्त्ता के द्वारा देवता नमस्कार निबद्ध किया जाता है, वह निबद्धमंगल है और जो सूत्र की आदि में सूत्रकर्त्ता के द्वारा देवता नमस्कार किया जाता है-रचा जाता है वह अनिबद्धमंगल है।

इसका अर्थ यह है–सूत्र ग्रंथ के प्रारंभ में ग्रंथकार जो देवता नमस्कार रूप मंगल कहीं से संग्रहीत करते हैं, स्वयं नहीं रचते हैं वह तो निबद्धमंगल है और सूत्र के प्रारंभ में ग्रंथकर्त्ता के द्वारा जो देवतानमस्कार स्वयं रचा जाता है वह अनिबद्धमंगल है। इससे यह ज्ञात होता है कि यह णमोकार महामंत्र मंगलाचरण रूप से यहाँ संग्रहीत होते हुए भी अनादिनिधन है वह मंत्र किसी के द्वारा रचित या गूँथा हुआ नहीं है। प्राकृतिक रूप से अनादिकाल से चला आ रहा है।

"णमोकार मंत्रकल्प" में श्री सकलकीर्ति भट्टारक ने कहा भी है–

---

1. षट्खण्डागम पुस्तक 1, भाग 1,पृ. 42, टिप्पणौ। 2. आदिदं-प्रथममित्यर्थः। 3-4. णमोकारमंत्रकल्पे।

श्लोकार्थ—नमस्कार मंत्र में रहने वाले पाँच महागुरुओं के नाम से निष्पन्न यह महामंत्र जगत् में ज्येष्ठ—सबसे बड़ा और महान है, अनादिसिद्ध है और आदि अर्थात् प्रथम है।।63।।

पाँच महागुरुओं के पैंतीस अक्षर प्रमाण मंत्र को तीन श्वासोच्छ्वासों में संसार भ्रमण के नाश हेतु एकाग्रचित होकर सभी भव्यजनों को जपना चाहिए अथवा ध्यान करना चाहिए।।68।।

श्रीमत् उमास्वामी आचार्य ने भी कहा है—

श्लोकार्थ—उत्सर्पिणी, अवसर्पिणी आदि के जो सुषमा, दुःषमा आदि अनन्त युग पहले व्यतीत हो चुके हैं उनमें भी यह णमोकार मंत्र सबसे अधिक महत्त्वशाली प्रसिद्ध हुआ है। मैं संसार से बहिर्भूत (बाहर) मोक्ष प्राप्त करने के लिए उस णमोकार मंत्र को नमस्कार करता हूँ।।3।।

मैंने 'सिद्धान्तचिन्तामणि टीका' में सर्वत्र सूत्रों का विभाजन एवं समुदायपातनिका आदि बनाई हैं। यहाँ मैंने 'समयसार' 'प्रवचनसार' 'पंचास्तिकाय' ग्रंथों की 'तात्पर्यवृत्ति' टीका का अनुसरण किया है। श्री जयसेनाचार्य की टीका के सर्वत्र गाथासूत्रों की संख्या एवं विषयविभाजन से स्थल-अन्तरस्थल बने हुए हैं। उनकी टीका के अनुसार ही मैंने यहाँ स्थल-अन्तरस्थल विभाजित किये हैं।

सर्वत्र अधिकारों मंगलाचरणरूप में मैंने कहीं पद्य कहीं गद्य का प्रयोग किया है। तीर्थ और विशेष स्थान की अपेक्षा से प्रायः वहाँ-वहाँ के तीर्थंकरों को नमस्कार किया है।

यहाँ पर उनके कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—

जिनेन्द्रदेवमुखकमलविनिर्गत-गौतमस्वामिमुखकुण्डावतरित-पुष्पदंताचार्यादिविस्तारितगंगायाः जलसदृशं ''नद्या नवघटे भृतं जलमिव'' इयं टीका सर्वजनमनांसि संतर्पिष्यत्येवेतिमया विश्वस्यते।

अथाधुना श्रीमत्पुष्पदन्ताचार्यदेवविनिर्मिते गुणस्थानादिविंशतिप्ररूपणान्तर्गर्भितसत्प्ररूपणा—नाम ग्रंथे अधिकारशुद्धिपूर्वकत्वेन पातनिका व्याख्यानं विधीयते। तत्रादौ 'णमो अरिहंताणं' इति पंचनमस्कारगाथामादिं कृत्वा सूत्रपाठक्रमेण गुणस्थानमार्गणा-प्रतिपादनसूचकत्वेन 'एत्तो इमेसिं' इत्यादिसूत्रसप्तकं। ततः चतुर्दशगुणस्थाननिरूपणपरत्वेन ''संतपरूवणदाए'' इत्यादि-षोढशसूत्राणि। ततः परं चतुर्दशमार्गणासु गुणस्थानव्यवस्था-व्यवस्थापन-मुख्यत्वेन ''आदेसेण गदियाणुवादेण'' इत्यादिना चतुःपञ्चाशदधिक-एकशतसूत्राणि सन्ति। एवं अनेकान्तरस्थलगर्भित-सप्त-सप्तत्यधिकएकशतसूत्रैः एते त्रयो महाधिकारा भवन्तीति सत्प्ररूपणायाः व्याख्याने समुदायपातनिका भवति।

अत्रापि प्रथममहाधिकारे 'णमो' इत्यादि मंगलाचरणरूपेण प्रथमस्थले गाथासूत्रमेकं। ततो गुणस्थानमार्गणा-कथनप्रतिज्ञारूपेण द्वितीयस्थले 'एत्तो' इत्यादि सूत्रमेकम्। ततश्च चतुर्दशमार्गणानां नामनिरूपणरूपेण तृतीयस्थले सूत्रद्वयं। ततः परं गुणस्थानप्रतिपादनार्थं अष्टानुयोगनामसूचनपरत्वेन चतुर्थस्थले 'एदेसिं' इत्यादिसूत्रत्रयं। एवं षट्खण्डागमग्रन्थराजस्य, सत्प्ररूपणायाः पीठिकाधिकारे चतुर्भिरन्तरस्थलैः सप्तसूत्रैः समुदायपातनिका सूचितास्ति।

अथ श्रीमद्भगवद्धरसेनगुरुमुखादुपलब्धज्ञानभव्यजनानां वितरणार्थं पंचमकालान्त्यवीरांगजमुनिपर्यंतं गमयितुकामेन पूर्वाचार्यव्यवहारपरंपरानुसारेण शिष्टाचारपरिपालनार्थं निर्विघ्नसिद्धान्तशास्त्रपरिसमाप्त्यादिहेतोः श्रीमत्पुष्पदन्ताचार्येण णमोकारमहामन्त्रमंगलगाथासूत्रावतारः क्रियते—

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व-साहूणं।।1।।

जिनेन्द्रदेव के मुखकमल से निकलकर जो गौतमस्वामी के मुखरूपी कुण्ड में अवतरित गिरी है तथा पुष्पदन्त आचार्य आदि के द्वारा विस्तारित गंगाजल के समान ''नदी से भरे हुए नये घड़े के जल सदृश'' यह टीका सभी प्राणियों के मन को संतृप्त करेगी, ऐसा मेरा विश्वास है।

अब यहाँ श्रीमान् पुष्पदन्त आचार्यदेव द्वारा रचित गुणस्थान आदि बीस प्ररूपणाओं में अन्तर्गर्भित इस सत्प्ररूपणा नामक ग्रंथ में अधिकार शुद्धिपूर्वक पातनिका का व्याख्यान किया जाता है। उसमें सबसे पहले ''णमो अरिहंताणं'' इत्यादि

इस पञ्चनमस्कार गाथा को आदि में करके सूत्र पाठ के क्रम से गुणस्थान, मार्गणा के प्रतिपादन की सूचना देने वाले "एत्तो इमेसिं" इत्यादि सात सूत्र हैं। उसके बाद चौदह गुणस्थानों के निरूपण की मुख्यता से "ओघेण अत्थि" इत्यादि सोलह सूत्र हैं। पुनः आगे चौदह मार्गणाओं में गुणस्थान व्यवस्था की मुख्यता से "आदेसेण गदियाणुवादेण" इत्यादि एक सौ चौव्वन (154) सूत्र हैं। इस प्रकार अनेक अन्तर्स्थलों से गर्भित एक सौ सतत्तर (177) सूत्रों के द्वारा ये तीन महाधिकार हो गए हैं। सत्प्ररूपणा के व्याख्यान में यह समुदायपातनिका हुई।

यहाँ भी प्रथम महाधिकार में "णमो" इत्यादि मंगलाचरण रूप से प्रथम स्थल में एक गाथ सूत्र है। पुनः द्वितीय स्थल में गुणस्थान-मार्गणा के कथन की प्रतिज्ञारूप से "एत्तो" इत्यादि एक सूत्र है और उसके बाद चौदह मार्गणाओं के नाम निरूपण रूप से तृतीय स्थल में दो सूत्र हैं। उसके आगे गुणस्थानों के प्रतिपादन हेतु आठ अनुयोग के नाम सूचना की मुख्यता से चतुर्थ स्थल के 'एदेसिं" इत्यादि तीन सूत्र हैं।

इस प्रकार षट्खण्डागम ग्रंथराज की सत्प्ररूपणा के पीठिका अधिकार में चार अन्तरस्थलों के द्वारा सूत्रों में समुदायपातनिका सूचित-प्रदर्शित की गई है।

अब श्रीमत् भगवान् धरसेनाचार्य गुरु के मुख से उपलब्ध ज्ञान को भव्यजनों में वितरित करने के लिए पंचमकाल के अन्त में वीरांगज मुनि पर्यन्त इस ज्ञान को ले जाने की इच्छा से, पूर्वाचार्यों की व्यवहार परम्परा के अनुसार, शिष्टाचार का परिपालन करने के लिए, निर्विघ्न सिद्धान्त शास्त्र की परिसमाप्ति आदि हेतु को लक्ष्य में रखते हुए श्रीमत्पुष्पदन्ताचार्य के द्वारा णमोकार महामंत्र मंगल गाथा सूत्र का अवतार किया जाता है–

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व-साहूणं।।1।।

अतिशय क्षेत्र महावीर जी में मैंने 'तृतीय महाधिकार' प्रारंभ किया था अतः श्री महावीर स्वामी को नमस्कार किया है। यथा–

महावीर जगत्स्वामी, सातिशायीति विश्रुतः।
तस्मै नमोऽस्तु मे भक्त्या, पूर्णसंयमलब्धये।।1।।

श्री वीरसेनाचार्य ने कहा है–

"सुत्तमोदिण्णं अत्थदो तित्थयरादो, गंथदो गणहरदेवादोत्ति[1]।।

ये सूत्र अर्थप्ररूपणा की अपेक्षा से तीर्थंकर भगवान से अवतीर्ण हुए हैं और ग्रंथ की अपेक्षा श्री गणधर देव से अवतीर्ण हुए हैं।

अथाव 'जिनपालित' शिष्य को निमित्त कहा है।

श्री पुष्पदंताचार्य अपने भानजे 'जिनपालित' दीक्षा लेकर प्रारंभिक 177 सूत्रों की रचना करके भूतबलि आचार्य के पास भेजा था। ऐसा 'धवलाटीका' में एवं श्रुतावतार में वर्णित है।

इस मंगलाचरण को सूत्र 1 संज्ञा दी है। आगे द्वितीय सूत्र का अवतार हुआ है–

एत्तो इमेसिं चोद्दसण्हं चोद्दसण्हं जीवसमासाणं मग्गणट्ठदाए तत्थ इमाणि चोद्दस चेवट्ठाणाणि णादव्वाणि भवंति।।2।।

इस द्रव्यश्रुत और भावश्रुतरूप प्रमाण से इन चौदह गुणस्थानों के अन्वेषण रूप प्रयोजन के लिए यहाँ से चौदह ही मार्गणा स्थान जानने योग्य हैं।

ऐसा कहकर पहले चौदह मार्गणाओं के नाम बतायें हैं। यथा–गति, इंद्रिय, काय, योग, वेद, कषाय, ज्ञान, संयम, दर्शन, लेश्या, भव्यत्व, सम्यक्त्व, संज्ञी और आहार ये चौदह मार्गणा हैं।

पुनः पांचवें सूत्र में कहा है–

---

1. षट्खण्डागम (सिद्धान्तचिन्तामणिटीका समन्वित) पु. 1, पृ. 60।

इन्हीं चौदह गुणस्थानों का निरूपण करने के लिए आगे कहे जाने वाले आठ अनुयोगद्वार जानने योग्य हैं।।6।।

इन आठों के नाम–1. सत्प्ररूपणा 2. द्रव्यप्रमाणानुगम 3. क्षेत्रानुगम 4. स्पर्शनानुगम 5. कालानुगम 6. अन्तरानुगम 7. भावानुगम और 8. अल्पबहुत्वानुगम।

आगे प्रथम 'सत्प्ररूपणा' का वर्णन करते हुए ओघ और आदेश की अपेक्षा निरूपण करने को कहा है।

इसी में ओघ की अपेक्षा चौदह गुणस्थानों का वर्णन है और आगे चौदह मार्गणाओं का वर्णन करके उनमें गुणस्थानों को भी घटित किया है। मार्गणाओं के नाम ऊपर लिखे गये हैं। गुणस्थानों के नाम–

1. मिथ्यात्व 2. सासादन 3. मिश्र 4. असंयतसम्यग्दृष्टि 5. देशसंयत 6. प्रमत्तसंयत 7. अप्रमत्तसंयत 8. अपूर्वकरण 9. अनिवृत्तिकरण 10. सूक्ष्मसांपराय 11. उपशांतकषाय 12. क्षीणकषाय 13. सयोगिकेवली और 14. अयोगिकेवली ये चौदह गुणस्थान हैं।

इस ग्रंथ में मैंने तीन महाधिकार विभक्त किये हैं। प्रथम महाधिकार में सात सूत्र हैं जो कि ग्रंथ की पीठिका-भूमिकारूप हैं। दूसरे महाधिकार सत्प्ररूपणा के अंतर्गत 16 सूत्रों में चौदह गुणस्थानों का वर्णन हैं एवं तृतीय महाधिकार में मार्गणाओं में गुणस्थानों की व्यवस्था करते हुए विस्तार से 154 सूत्र लिए हैं।

इस प्रथम ग्रंथ में प्रारंभ में पंच परमेष्ठियों के वर्णन में एक सुन्दर प्रश्नोत्तर धवला टीका में आया है जिसे मैंने जैसे का तैसा लिया है। यथा–

"संपूर्णरत्नानि देवो न तदेकदेश इति चेत् ?

न,रत्नैकदेशस्य देवत्वाभावे समस्तस्यापि तदसत्त्वापत्तेः......। इत्यादि।

शंका–संपूर्णरत्न–पूर्णता को प्राप्त रत्नत्रय ही देव है, रत्नों का एकदेश देव नहीं हो सकता है?

समाधान–ऐसा नहीं कहना, क्योंकि रत्नत्रय के एकदेश में देवपने का अभाव होने पर उसकी संपूर्णता में भी देवपना नहीं बन सकता है।

शंका–आचार्य आदि में स्थित रत्नत्रय समस्त कर्मों का क्षय करने में समर्थ नहीं हो सकते, क्योंकि उसमें एकदेशपना ही है पूर्णता नहीं है?

समाधान–यह कथन समुचित नहीं है, क्योंकि पलालराशि–घास की राशि को जलाने का कार्य अग्नि के एक कण में भी देखा जाता है इसलिए आचार्य, उपाध्याय और साधु भी देव हैं[1]।"

यह समाधान श्री वीरसेनाचार्य ने बहुत ही उत्तम बताया है।

प्रथम पुस्तक 'सत्प्ररूपणाग्रंथ' की टीका को पूर्ण करते समय मैंने उस स्थान का विवरण दे दिया है। यथा–

"वीराब्दे द्वाविंशत्यधिकपंचविंशतिशततमे फाल्गुनशुक्लासप्तम्यां ख्रिष्टाब्दे षण्णवत्यधिकैकोनविंशतिशततमे पंचविंशे दिनांके द्वितीयमासि (25-2-1996) राजस्थान प्रान्ते 'पिडावानामग्रामे' श्री पार्श्वनाथसमवसरणमंदिरशिलान्यासस्य मंगलावसरे एतत्सत्प्ररूपणाग्रन्थस्य 'सिद्धान्तचिन्तामणिटीकां' पूरयन्त्या मया महान् हर्षोऽनुभूयते। टीकासहितोऽयं ग्रन्थो मम श्रुतज्ञानस्य पूर्त्यै भूयात्[1]।"

पुनः वीर निर्वाण संवत् पच्चीस सौ बाईसवें वर्ष में ही फाल्गुन शुक्ला सप्तमी तिथि को ईसवी सन् 1996 के द्वितीय मास की 25 तारीख को राजस्थान प्रान्त के पिड़ावा ग्राम में श्रीपार्श्वनाथ समवसरण मंदिर के शिलान्यास के मंगल अवसर पर इस 'सत्प्ररूपणा' ग्रंथ की 'सिद्धान्तचिन्तामणिटीका' को पूर्ण करते हुए मुझे अत्यंत हर्ष की अनुभूति हो रही है। टीका सहित यह सत्प्ररूपणा नामक 'षट्खण्डागम' ग्रंथ मेरे श्रुतज्ञान की पूर्ति के लिए होवे, यही मेरी प्रार्थना है।

---

1. षट्खण्डागम, सिद्धान्तचिन्तामणि टीकासमन्वित, पु. 1, पृ. 498।

पुस्तक 2–आलाप अधिकार

यह द्वितीय ग्रंथ सत्प्ररूपणा के ही अंतर्गत है। इसमें सूत्र नहीं है।

''संपहि संत-सुतविवरण-समत्ताणंतरं तेसिं परुवणं भणिस्सामो।''

सत्प्ररूपणा के सूत्रों का विवरण समाप्त हो जाने पर अनंतर अब उनकी प्ररूपणा का वर्णन करते हैं–

शंका–प्ररूपणा किसे कहते हैं?

समाधान–सामान्य और विशेष की अपेक्षा गुणस्थानों में, जीवसमासों में, पर्याप्तियों में, प्राणों में, संज्ञाओं में, गतियों में, इन्द्रियों में, कायों में, योगों में, वेदों में, कषायों में, ज्ञानों में, संयमों में, दर्शनों में, लेश्याओं में, भव्यों में, अभव्यों में, संज्ञी-असंज्ञियों में, आहारी-अनाहारियों में और उपयोगों में पर्याप्त और अपर्याप्त विशेषणों से विशेषित करके जो जीवों की परीक्षा की जाती हैं, उसे प्ररूपणा कहते हैं। कहा भी है–

गुणस्थान, जीवसमास, पर्याप्ति, प्राण, संज्ञा, चौदह मार्गणाएं और उपयोग, इस प्रकार क्रम से बीस प्ररूपणाएं कही गई हैं।

इनके कोष्ठक गुणस्थानों के एवं मार्गणाओं के बनाये गये हैं।

गुणस्थान 14 हैं, जीवसमास 14 हैं–एकेन्द्रिय के बादर-सूक्ष्म ऐसे 2, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय ऐसे 3, पंचेन्द्रिय के संज्ञी-असंज्ञी ऐसे 2, ये 7 हुए इन्हें पर्याप्त-अपर्याप्त से गुणा करने पर 14 हुए। पर्याप्ति 6–आहार, शरीर, इन्द्रिय, श्वासोच्छ्वास, भाषा और मन। प्राण 10 हैं–पांच इन्द्रिय, मनोबल, वचनबल, कायबल, आयु और श्वासोच्छ्वास। संज्ञा 4 हैं–आहार, भय, मैथून और परिग्रह। गति 4 हैं–नरकगति, तिर्यंचगति, मनुष्यगति और देवगति। इन्द्रियां 5 हैं–एकेन्द्रियजाति, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पंचेन्द्रियजाति। काय 6 हैं–पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, वनस्पति और त्रसकाय। योग 15 हैं–सत्यमनोयोग, असत्यमनोयोग, उभयमनोयोग, अनुभयमनोयोग, सत्यवचनयोग, असत्यवचनयोग, उभयवचनयोग, अनुभयवचनयोग, औदारिककाययोग, औदारिकमिश्र, वैक्रियिक, वैक्रियिकमिश्र, आहारक, आहारकमिश्र और कार्मणकाय योग। वेद 3 हैं–स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसकवेद। कषाय 4 हैं–क्रोध, मान, माया, लोभ। ज्ञान 8 हैं–मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय, केवलज्ञान, कुमति, कुश्रुत और विभंगावधि। संयम 7 हैं–सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहारविशुद्धि, सूक्ष्मसांपराय, यथाख्यात, देशसंयम और असंयम। दर्शन 4 हैं–चक्षुर्दर्शन, अचक्षुर्दर्शन, अवधिदर्शन और केवलदर्शन। लेश्या 6 हैं–कृष्ण, नील, कापोत, पीत, पद्म और शुक्ल। भव्य मार्गणा 2 हैं–भव्यत्व और अभव्यत्व। सम्यक्त्व 6 हैं–औपशमिक, क्षायोपशमिक, क्षायिक, मिथ्यात्व, सासादन और मिश्र। संज्ञी मार्गणा के 2 भेद हैं–संज्ञी, असंज्ञी। आहार मार्गणा 2 हैं–आहार, अनाहार। उपयोग के 2 भेद हैं–साकार और अनाकार।

इस ग्रंथ को मैंने दो महाधिकारों में विभक्त किया है। इसमें कुल 545 कोष्ठक–चार्ट हैं। उदाहरण के लिए पांचवें गुणस्थान का एक चार्ट दिया जा रहा है–

नं. 13

संयतासंयतों के आलाप

गु.	जी.	प.	प्रा.	सं.	ग.	इं.	का.	यो.	वे.	क.	ज्ञा.	संय.	द.	ले.	भ.	स.	संज्ञि.	आ.	उ.
१ देश.	१ सं.प.	६	१०	४	२ म. ति.	१ पंचे.	१ त्रस.	९ म.४ व. ४ औ.१	३	४	३ मति. श्रुत. अव.	१ संयमा.	३ के.द. विना.	द्र.३ भा.३ शुभ.	१ भ.	३ औ. क्षा. क्षायो.	१ सं.	१ आहार	२ साकार अनाकार

इनमें से संयतासंयत के कोष्ठक में–

गुणस्थान 1 है–पाँचवां देशसंयत। जीवसमास 1 है–संज्ञीपर्याप्त। पर्याप्तियाँ छहों हैं, अपर्याप्तियाँ नहीं हैं। प्राण 10 हैं। संज्ञायें 4 हैं। गति 2 हैं–मनुष्य, तिर्यंच। इंद्रिय 1 है–पंचेन्द्रिय। काय 1 है–त्रसकाय। योग 9 हैं–4 मनोयोग,

4 वचनयोग 1 औदारिक काययोग। वेद 3 हैं। कषाय 4 हैं। ज्ञान 3 हैं—मति, श्रुत, अवधि। संयम 1 है—संयमासंयम। दर्शन 3 हैं—केवलदर्शन के बिना। लेश्या द्रव्य से—वर्ण से छहों हैं, भावलेश्या शुभ 3 हैं। भव्यत्व 1 है। सम्यक्त्व 3 हैं—औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक। संज्ञीमार्गणा 1 है—संज्ञी। आहार मार्गणा 1 है—आहारक। उपयोग 2 हैं—साकार और अनाकार। यही सब चार्ट में दिखाया गया है।

इस प्रकार यह दूसरी पुस्तक का सार अतिसंक्षेप में बताया गया है।

पुस्तक 3—द्रव्यप्रमाणानुगम

इस ग्रंथ में श्री भूतबलि आचार्य वर्णित सूत्र हैं अब यहाँ से संपूर्ण 'षट्खण्डागम' सूत्रों की रचना इन्हीं श्रीभूतबलि आचार्य द्वारा लिखित है। कहा भी है—

''संपहि चोद्दसण्हं जीवसमासाणमत्थित्तमवगदाणं सिस्साणं तेसिं चेव परिमाणपडिबोहणट्ठं भूदबलियाइरियो सुत्तमाह[1]—''

जिन्होंने चौदहों गुणस्थानों के अस्तित्व को जान लिया है, ऐसे शिष्यों को अब उन्हीं के चौदहों गुणस्थानों के—चौदहों गुणस्थानवर्ती जीवों के परिमाण—संख्या के ज्ञान को कराने के लिए श्रीभूतबलि आचार्य आगे का सूत्र कहते हैं—

इसमें प्रथम सूत्र—

''दव्वपमाणाणुगमेण दुविहो णिद्देसो ओघेण आदेसेण य।।1।।

द्रव्यप्रमाणानुगम की अपेक्षा निर्देश दो प्रकार का है, ओघ निर्देश और आदेशनिर्देश। ओघ—गुणस्थान और आदेश—मार्गणा इन दोनों की अपेक्षा से उन-उन में जीवों का वर्णन किया गया है।

इस ग्रंथ में भी मैंने दो महाधिकार किये हैं। प्रथम महाधिकार में चौदह सूत्र हैं एवं द्वितीय 178 हैं, ऐसे कुल सूत्र 192 हैं।

चौदह गुणस्थानों में जीवों की संख्या बतलाते हैं—

प्रथम गुणस्थान में जीव अनंतानंत हैं। द्वितीय गुणस्थान में 52 करोड़ हैं। तृतीय गुणस्थान में 104 करोड़ हैं। चतुर्थ गुणस्थान में सात सौ करोड़ हैं। पाँचवे गुणस्थान में 13 करोड़ हैं।

प्रमत्तसंयत नाम के छठे गुणस्थान से लेकर अयोगकेवली नाम के चौदहवें गुणस्थान के महामुनि एवं अरहंत भगवान 'संयत' कहलाते हैं। उन सबकी संख्या मिलाकर 'तीन कम नव करोड़' है। धवला टीका में कहा है—

''एवं परूविदसव्वसंजदरासिमेकट्ठे कदे अट्ठकोडीओ णवणउदिलक्खा णवणउदिसहस्स-णवसद-सत्ताणउदिमेत्तो होदि[1]।''

इसी तृतीय पुस्तक में दूसरा एक और मत प्राप्त हुआ है—

''एदे सव्वसंजदे एयट्ठे कदे सत्तरसद-कम्मभूमिगद-सव्वरिसओ भवंति। तेसिं पमाणं छक्कोडीओ णवणउइलक्खा णवणउदिसहस्सा णवसयछण्णउदिमेत्तं हवदि[2]।'' सर्व संयतों की संख्या—छह करोड़, निन्यानवे लाख, निन्यानवे हजार, नव सौ छ्यानवे है।

इन दोनों मतों को श्री वीरसेनाचार्य ने उद्धृत किया है।

वर्तमान में प्रसिद्धि में 'तीन कम नव करोड़' संख्या ही है।

इस सर्वमुनियों को नमस्कार करके यहाँ इस ग्रंथ का किंचित् सार दिया है। इसकी सिद्धान्तचिंतामणि टीका में मैंने अधिकांश गणित प्रकरण छोड़ दिया है, जो कि धवलाटीका में द्रष्टव्य है।

---

1. षट्खण्डागम, धवलाटीकासमन्वित, पु. 3, पृ. 97। 2. षट्खण्डागम, धवलाटीकासमन्वित, पु. 3, पृ. 92।

पुस्तक 4—क्षेत्र-स्पर्शन-कालानुगम

इस चतुर्थ ग्रंथ—पुस्तक में क्षेत्रानुगम, स्पर्शनानुगम एवं कालानुगम इन तीन अनुयोगद्वारों का वर्णन है।

इन तीनों की सूत्र संख्या 92+185+342=619 है।

क्षेत्रानुगम—'सिद्धान्तचिन्तामणि टीका' में मैंने क्षेत्रानुगम में दो महाधिकार किये हैं। प्रथम गुणस्थान की अपेक्षा से है और द्वितीय में मार्गणाओं की अपेक्षा से जीवों के क्षेत्र का वर्णन किया गया है।

श्री वीरसेनाचार्य ने आकाश को क्षेत्र कहा है। आकाश का कोई स्वामी नहीं है, इस क्षेत्र की उत्पत्ति में कोई निमित्त भी नहीं है यह स्वयं में ही आधार-आधेयरूप है। यह क्षेत्र अनादिनिधन है और भेद की अपेक्षा लोकाकाश-अलोकाकाश ऐसे दो भेद हैं। इस प्रकार निर्देश, स्वामित्व, साधन, अधिकरण, स्थिति और विधान से क्षेत्र का वर्णन किया है।

क्षेत्र में गुणस्थानवर्ती जीवों को घटित करते हुए कहा है—

''ओघेण मिच्छाइट्ठी केवडिखेत्ते? सव्वलोगे।।2।।

मिथ्यादृष्टि जीव कितने क्षेत्र में हैं? सर्वलोक में हैं।।2।।

सासणसम्माइट्ठिप्पहुडि जाव अजोगिकेवलि त्ति केवडिखेत्ते? लोगस्स असंखेज्जदिभाए।।3।।

सासादनसम्यग्दृष्टि से लेकर अयोगिकेवली पर्यंत कितने क्षेत्र में हैं? लोक के असंख्यातवें भाग में हैं।।3।।

इसमें एक प्रश्न हुआ है—

लोकाकाश असंख्यातप्रदेशी है उसमें अनंतानंत जीव कैसे समायेंगे?

यद्यपि लोक 'असंख्यात प्रदेशी है फिर भी उसमें अवगाहन शक्ति विशेष है जिससे उसमें अनंतानंत जीव एवं अनंतानंत पुद्गल समाविष्ट हैं। जैसे मधु से भरे हुए घड़े में उतना ही दूध भर दो उसी में समा जायेगा'[1]।

इस अनुयोगद्वार में स्वस्थान, समुद्घात और उपपाद ऐसे तीन भेदों द्वारा जीवों के क्षेत्र का वर्णन किया है।

स्पर्शनानुगम—इसमें भी मैंने गुणस्थान और मार्गणा की अपेक्षा दो महाधिकार किये हैं। यह स्पर्शन भूतकाल एवं वर्तमानकाल के स्पर्श की अपेक्षा रखता है। पूर्व में जिसका स्पर्श किया था और वर्तमान में जिसका स्पर्श कर रहे हैं इन दोनों की अपेक्षा से स्पर्शन का कथन किया जाता है।

स्पर्शन में छह प्रकार के निक्षेप घटित किये हैं—नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावस्पर्शन।

'तत्र स्पर्शनशब्दः' नाम स्पर्शनं निक्षेपः, अयं द्रव्यार्थिकनयविषयः।

सोऽयं इति बुद्धया अन्यद्रव्येण सह अन्यद्रव्यस्य एकत्वकरणं स्थापनास्पर्शनं यथा घटपिठरादिषु अयं ऋषभोऽजितः संभवोऽभिनंदनः इति। एषोऽपि द्रव्यार्थिकनयविषयः[2]।''

स्पर्शन शब्द नामस्पर्शन है। यह द्रव्यार्थिकनय का विषय है। यह वही है ऐसी बुद्धि से अन्य द्रव्य के साथ अन्यद्रव्य का एकत्व करना स्थापनास्पर्शन निक्षेप है जैसे घट आदि में ये ऋषभदेव हैं, अजितनाथ हैं, संभवनाथ हैं, अभिनंदननाथ हैं इत्यादि। यह भी द्रव्यार्थिक नय का विषय है। इत्यादि निक्षेपों का वर्णन है।

पर्यायार्थिक नय की अपेक्षा से प्ररूपणा करते हुए कहा है—

स्वस्थानस्वस्थान-वेदना-कषाय-मारणांतिक-उपपादगतमिथ्यादृष्टियों ने भूतकाल एवं वर्तमानकाल से सर्वलोक को स्पर्श किया है।

इसी प्रकार गुणस्थान और मार्गणाओं में जीवों के भूतकालीन, वर्तमानकालीन स्पर्शन का वर्णन किया है।

कालानुगम—इसमें भी गुणस्थान और मार्गणा की अपेक्षा दो महाधिकार कहे हैं। काल को नाम, स्थापना, द्रव्य और भाव ऐसे चार भेद रूप से कहा है पुनश्च—'नो आगमभावकाल' से इस ग्रंथ में वर्णन किया है।

---

1. षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 4, पृ. 23। 2. षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 4, पृ. 142।

यह काल अनादि अनंत है, एक विध है यह सामान्य कथन है। काल के भूत, वर्तमान और भविष्यत् की अपेक्षा तीन भेद हैं।

एक प्रश्न आया है–

स्वर्गलोक में सूर्य के गति की अपेक्षा नहीं होने से वहां मास, वर्ष आदि का व्यवहार कैसे होगा?

तब आचार्यदेव ने समाधान दिया है–

यहाँ के व्यवहार की अपेक्षा ही वहाँ पर 'काल' का व्यवहार है। जैसे जब यहाँ 'कार्तिक' आदि मास में आष्टान्हिक पर्व आते हैं तब देवगण नंदीश्वर द्वीप आदि में पूजा करने पहुँच जाते हैं इत्यादि।

नाना जीव की अपेक्षा मिथ्यादृष्टि का सर्वकाल है।।2।।

एकजीव की अपेक्षा किसी का अनादिअनंत है, किसी का अनादिसांत है, किसी का सादिसांत है। इनमें से जो सादि और सांत काल है उसका निर्देश इस प्रकार है। एक जीव की अपेक्षा मिथ्यादृष्टि जीव का सादिसांत काल जघन्य से अंतर्मुहूर्त है[1]।।3।।

वह इस प्रकार है–

कोई सम्यग्मिथ्यादृष्टि अथवा असंयतसम्यग्दृष्टि, अथवा संयतासंयत, अथवा प्रमत्तसंयतजीव, परिणामों के निमित्त से मिथ्यात्व को प्राप्त हुआ। सर्वजघन्य अंतर्मुहूर्त काल रह करके, फिर भी सम्यक्त्वमिथ्यात्व को, अथवा असंयम के साथ सम्यक्त्व को, अथवा संयमासंयम को, अथवा अप्रमत्तभाव के साथ संयम को प्राप्त हुआ। इस प्रकार से प्राप्त होने वाले जीव के मिथ्यात्व का सर्वजघन्य काल होता है[1]।

इस प्रकार यह कालानुगम का संक्षिप्त सार या नमूना दिखाया है।

पुस्तक 5–अन्तर-भाव-अल्पबहुत्वानुगम

इस ग्रंथ में अन्तरानुगम में 397 सूत्र हैं। भावानुगम में 93 सूत्र हैं एवं अल्पबहुत्वानुगम में 382 सूत्र हैं। इस प्रकार 397+93+382=872 सूत्र हैं।

अन्तरानुगम–इस ग्रंथ में सिद्धान्तचिन्तामणि टीका में मैंने दो महाधिकार विभक्त किये हैं। प्रथम महाधिकार में गुणस्थानों में अंतर का निरूपण है। द्वितीय महाधिकार में मार्गणाओं में अंतर दिखाया गया है।

नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के भेद से छहविध निक्षेप हैं। अंतर, उच्छेद, विरह, परिणामान्तरगमन, नास्तित्वगमन और अन्यभावव्यवधान, ये सब एकार्थवाची हैं। इस प्रकार के अन्तर के अनुगम को अन्तरानुगम कहते हैं।

एक जीव की अपेक्षा जघन्य अन्तर काल अन्तर्मुहूर्त है।।3।।

जैसे एक मिथ्यादृष्टि जीव, सम्यग्मिथ्यात्व, अविरतसम्यक्त्व, संयमासंयम और संयम में बहुत बार परिवर्तित होता हुआ परिणामों के निमित्त से सम्यक्त्व को प्राप्त हुआ और वहाँ पर सर्वलघु अंतर्मुहूर्त काल तक सम्यक्त्व के साथ रहकर मिथ्यात्व को प्राप्त हुआ। इस प्रकार सर्वजघन्य अंतर्मुहूर्त प्रमाण मिथ्यात्वगुणस्थान का अंतर प्राप्त हो गया।

मिथ्यात्व का उत्कृष्ट अंतर कुछ कम दो छ्यासठ सागरोपम काल है।।4।।

इन ग्रंथों के स्वाध्याय में जो आल्हाद उत्पन्न होता है वह असंख्यात गुणश्रेणीरूप से कर्मों की निर्जरा का कारण है। यहाँ तो मात्र नमूना प्रस्तुत किया जा रहा है।

भावानुगम–इसमें भी महाधिकार दो हैं। नाम, स्थापना, द्रव्य और भाव इनकी अपेक्षा यह भाव चार प्रकार का है। इसमें भी भावनिक्षेप के आगमभाव एवं नोआगमभाव ऐसे दो भेद हैं। नोआगमभाव नामक भावनिक्षेप के औदयिक, औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक और पारिणामिक ये पाँच भेद हैं।

---

1. षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 4, पृ. 324।

असंयतसम्यग्दृष्टि में कौन सा भाव है?

औपशमिकभाव भी है, क्षायिकभाव भी है और क्षायोपशमिक भाव भी है।।5।।

यहाँ सम्यग्दर्शन की अपेक्षा से ये भाव कहे हैं। यद्यपि यहाँ औदयिक भावों में से गति कषाय आदि भी हैं। किन्तु उनसे सम्यक्त्व उत्पन्न नहीं होता इसलिए उनकी यहाँ विवक्षा नहीं है।

अल्पबहुत्वानुगम–इस अनुयोगद्वार के प्रारंभ में मैंने गद्यरूप में श्री महावीर स्वामी को नमस्कार किया है। इसमें भी दो महाधिकार विभक्त किये हैं।

इस अल्पबहुत्व में गुणस्थान और मार्गणाओं में सबसे अल्प कौन हैं? और अधिक कौन हैं? यही दिखाया गया है। यथा–

सामान्यतया–गुणस्थान की अपेक्षा से अपूर्वकरण आदि तीन गुणस्थानों में उपशामक जीव प्रवेश की अपेक्षा परस्पर तुल्य हैं तथा अन्य सब गुणस्थानों के प्रमाण से अल्प हैं[1]।।2।।

और 'मिथ्यादृष्टि सबसे अधिक अनंतगुणे हैं[2]।।14।।

इस ग्रंथ में भी बहुत से महत्वपूर्ण विषय ज्ञातव्य हैं। जैसे कि-"दर्शन मोहनीय का क्षपण करने वाले–क्षायिक सम्यक्त्व प्रगट करने वाले जीव नियम से मनुष्यगति में होते हैं।"

जिन्होने पहले तिर्यंचायु का बंध कर लिया है ऐसे जो भी मनुष्य क्षायिक सम्यक्त्व के साथ तिर्यंचों में उत्पन्न होते हैं उनके संयमासंयम नहीं होता है, क्योंकि भोगभूमि को छोड़कर उनकी अन्यत्र उत्पत्ति असंभव है[3]।"

यह सभी साररूप अंश मैंने यहाँ दिये हैं। अपने ज्ञान के क्षयोपशम के अनुसार इन-इन ग्रंथों का स्वाध्याय श्रुतज्ञान की वृद्धि एवं आत्मा में आनंद की अनुभूति के लिए करना चाहिए।

पुस्तक 6–जीवस्थान चूलिका

इस ग्रंथ में चूलिका के नौ भेद हैं–1. प्रकृतिसमुत्कीर्तन, 2. स्थान समुत्कीर्तन 3. प्रथम महादण्डक 4. द्वितीय महादण्डक 5. तृतीय महादण्डक 6. उत्कृष्टस्थिति 7. जघन्यस्थिति 8. सम्यक्त्वोत्पत्ति एवं 9. गत्यागती चूलिका।

इसमें क्रमशः सूत्रों की संख्या–46+117+2+2+44+43+16+243=515 है।

चूलिका–पूर्वोक्त आठों अनुयोगद्वारों के विषय–स्थलों के विवरण के लिए यह चूलिका नामक अधिकार आया है।

1. प्रकृतिसमुत्कीर्तन–इस चूलिका में ज्ञानावरणीय आदि आठ प्रकृतियों का वर्णन करके उनके 148 भेदों का भी निरूपण किया है।

2. स्थानसमुत्कीर्तन–स्थान, स्थिति और अवस्थान ये तीनों एकार्थक हैं। समुत्कीर्तन, वर्णन और प्ररूपण इनका भी अर्थ एक ही है। स्थान की समुत्कीर्तना–स्थान समुत्कीर्तन है।

पहले प्रकृति समुत्कीर्तन में जिन प्रकृतियों का निरूपण कर आये हैं, उन प्रकृतियों का क्या एक होता है? अथवा क्रम से होता है? ऐसा पूछने पर इस प्रकार होता है। यह बात बतलाने के लिए यह स्थान समुत्कीर्तन है।

वह प्रकृतिस्थान मिथ्यादृष्टि के अथवा सासादन के, सम्यग्मिथ्यादृष्टि के, असंयतसम्यग्दृष्टि के, संयतासंयत के और संयत के होता है। ऐसे यहाँ छह स्थान ही विवक्षित हैं। क्योंकि 'संयत' पद से छठे, सातवें, आठवें, नवमें, दशवें, ग्यारहवें, बारहवें और तेरहवें गुणस्थानवर्ती संयतों को लिया है। अयोगकेवली गुणस्थान में बंध का ही अभाव है अतः उन्हें नहीं लिया है।

जैसे ज्ञानावरण की पाँचों प्रकृतियों का बंध छहों स्थानों में अर्थात् दशवें गुणस्थान तक संयतों में बंध होता है इत्यादि।

1-2. षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 5, पृ. 243-252। 3. षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 5, पृ. 256।

3. प्रथम महादण्डक—प्रथमोपशम सम्यक्त्व को ग्रहण करने के लिए अभिमुख मिथ्यादृष्टि जीवों के द्वारा बंधने वाली प्रकृतियों का ज्ञान कराने के लिए यहाँ तीन महादण्डकों की प्ररूपणा आई है।

इसमें प्रथम महादण्डक का कथन सम्यक्त्व के अभिमुख जीवों के द्वारा बध्यमान प्रकृतियों की समुत्कीर्तना करने के लिए हुआ है। विशेषता यह है कि—

"एदस्सवगमेण महापावक्खयस्सुवलंभादो[1]।"

क्योंकि इसके ज्ञान से महापाप का क्षय पाया जाता है।

4. द्वितीय महादण्डक—प्रकृतियों के भेद से और स्वामित्व के भेद से इन दोनों दण्डकों में भेद कहा गया है।

5. तृतीय महादण्डक—प्रथमोपशम सम्यक्त्व के अभिमुख ऐसा नीचे सातवीं पृथ्वी का नारकी मिथ्यादृष्टि जीव, पांचों ज्ञानावरण, नवों दर्शनावरण, साता वेदनीय, मिथ्यात्व, अनंतानुबंधी आदि 16 कषाय, पुरुषवेद, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा इन प्रकृतियों को बांधता है इत्यादि।

6. उत्कृष्ट कर्मस्थिति—कर्मों की उत्कृष्ट स्थिति को बांधने वाला जीव प्रथमोपशमसम्यक्त्व को नहीं प्राप्त करता है, इस बात का ज्ञान कराने के लिए कर्मों की उत्कृष्ट स्थिति का निरूपण किया जा रहा है।

7. जघन्यस्थिति—उत्कृष्ट विशुद्धि के द्वारा जो स्थिति बंधती है, वह जघन्य होती है। इत्यादि का विस्तार से कथन है।

8. सम्यक्त्वोत्पत्ति चूलिका—जिन प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशों को बाँधता हुआ, जिन प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशों के द्वारा सत्त्वस्वरूप होते हुए और उदीरणा को प्राप्त होते हुए यह जीव सम्यक्त्व को प्राप्त करता है, उनकी प्ररूपणा की गई है।

"प्रथमोपशम सम्यक्त्व को प्राप्त करने वाला जीव पंचेन्द्रिय, संज्ञी, मिथ्यादृष्टि, पर्याप्त और सर्वविशुद्ध होता है[2]।।4।।"

आगे—"दर्शनमोहनीय कर्म का क्षपण करने के लिए आरंभ करता हुआ यह जीव कहाँ पर आरंभ करता है? अढ़ाई द्वीप समुद्रों में स्थित पंद्रह कर्मभूमियों में जहाँ जिस काल में जिनकेवली और तीर्थंकर होते हैं, वहाँ उस काल में आरंभ करता है[3]।।11।।"

ऐसे दो नमूने प्रस्तुत किये हैं।

9. गत्यागती चूलिका—इसमें सम्यक्त्वोत्पत्ति के बाह्य कारणों को विशेषरूप से वर्णित किया है—

प्रश्न हुआ-"तिर्यंच मिथ्यादृष्टि कितने कारणों से सम्यक्त्व उत्पन्न करते हैं?।।21।।

तीन कारणों से—कोई जातिस्मरण से, कितने ही धर्मोपदेश सुनकर, कितने ही जिनबिंबों के दर्शन से।।22।।

पुनः प्रश्न होता है—जिनबिंब दर्शन प्रथमोपशमसम्यक्त्वोत्पत्ति में कारण कैसे हैं? उत्तर देते हैं—

"जिणबिंबदंसणेण णिधत्तणिकाचिदस्स वि मिच्छत्तादिकम्मकलावस्स खयदंसणादो। तथा चोक्तं—

दर्शनेन जिनेन्द्राणां पापसंघातकुंजरम्। शतधा भेदमायाति गिरिर्वज्रहतो यथा[4]।।1।।"

जिनप्रतिमाओं के दर्शन से निधत्त और निकाचितरूप भी मिथ्यात्वादि कर्मकलाप का क्षय देखा जाता है, जिससे जिनबिंब का दर्शन प्रथम सम्यक्त्व की उत्पत्ति में कारण देखा जाता है। कहा भी है—जिनेन्द्रदेवों के दर्शन से पापसंघातरूपी कुंजरपर्वत के सौ-सौ टुकड़े हो जाते हैं, जिस प्रकार वज्र के गिरने से पर्वत के सौ-सौ टुकड़े हो जाते हैं।

216 सूत्र की टीका में अन्य ग्रंथों के उद्धरण भी दिये गये हैं। नमूने के लिए प्रस्तुत हैं—

आत्मज्ञातृतया ज्ञानं, सम्यक्त्वं चरितं हि सः। स्वस्थो दर्शनचारित्रमोहाभ्यामनुपप्लुतः[5]।।

---

1. षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 6, पृ.133। 2. षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 6, पृ. 206। 3. षट्खण्डागम (धवलाटींकासमन्वित) पु. 6, पृ.242। 4. षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 6, पृ.428। 5. तत्त्वार्थसार का उद्धरण।

इस प्रथमखण्ड 'जीवस्थान' की छठी पुस्तक की टीका मैंने अपनी दीक्षाभूमि "माधोराजपुरा" राजस्थान में पूर्ण की है। उसमें मैंने संक्षेप में तीन श्लोक दिये हैं–

देवशास्त्रगुरून् नत्वा, नित्यं भक्त्या त्रिशुद्धितः। षट्खण्डागमग्रंथोऽयं, वन्द्यते ज्ञानवृद्धये।।1।।
द्वित्रिपंचद्विवीराब्दे, फाल्गुनेऽसितपक्षाके। माधोराजपुराग्रामे, त्रयोदश्यां जिनालये।।2।।
नमः श्रीशांतिनाथाय, सर्वसिद्धिप्रदायिने। यस्य पादप्रसादेन, टीकेयं पर्यपूर्यत।।3।।

मैंने शरदपूर्णिमा को वी.सं.2521 में हस्तिनापुर में यह टीका लिखना प्रारंभ किया था। मुझे प्रसन्नता है कि फाल्गुन कृष्णा 13, वी. नि. सं. 2523, दि. 7-3-1997 को माधोराजपुरा में मैंने यह प्रथम खंड की टीका पूर्ण की है। यह टीका मांगीतुंगी यात्रा विहार के मध्य आते-जाते लगभग 36 सौ किमी. के मध्य में मार्ग में अधिकरूप में लिखी गई है।

मैंने इसे सरस्वती देवी की अनुकंपा एवं माहात्म्य ही माना है। इसमें स्वयं में मुझे 'आश्चर्य' हुआ है। जैसा कि मैंने लिखा है–

"पुनश्च हस्तिनापुरतीर्थक्षेत्रे विनिर्मितकृत्रिमजंबूद्वीपस्य सुदर्शनमेर्वादिपर्वतामुपरि विराजमानसर्वजिनबिंबानि मुहुर्मुहुः प्रणम्य यत् सिद्धान्तचिंतामणिटीकालेखनकार्यं एकविंशत्युत्तरपंचविंशतिशततमे मया प्रारब्धं, तदधुना मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्रस्य यात्रायाः मंगलविहारकाले त्रयोविंशत्युत्तरपंचविंशतिशततमे वीराब्दे मार्गे एव निर्विघ्नतया जिनदेवकृपाप्रसादेन महद्हर्षोल्लासेन समाप्यते। एतत् सरस्वत्या देव्यः अनुकंपामाहात्म्यमेव विज्ञायते, मयैव महदाश्चर्यं प्रतीयते[1]।"

इस खंड में कुल सूत्र संख्या 177+192+619+872+515=2375 है।

मेरे द्वारा लिखित पेजों की संख्या 161+88+83+235+193+187=947 है।

इस प्रकार 'जीवस्थान' नामक प्रथम खण्ड (अंतर्गत छह पुस्तकों) का यह संक्षिप्त सार मैंने लिखा है।

द्वितीय खण्ड–क्षुद्रकबंध

इसे प्राकृत भाषा में 'खुद्दाबंध' कहते हैं एवं संस्कृत भाषा में 'क्षुद्रकबंध' नाम है।

इसे क्षुद्रक बंध कहने का अभिप्राय यह है कि–

आगे स्वयं भूतबलि आचार्य ने 'तीस हजार' सूत्रों में 'महाबंध' नाम से छठा खण्ड स्वतंत्र बनाया है। इसीलिए 1589 सूत्रों में रचित यह ग्रंथ "क्षुद्रकबंध' नाम से सार्थक है।

इस ग्रंथ की टीका को मैंने 'पद्मपुरा' तीर्थ पर प्रारंभ किया था अतः मंगलाचरण में श्रीपद्मप्रभ भगवान् को नमस्कार किया है। यथा–

श्रीपद्मप्रभदेवस्य, विश्वातिशयकारिणे।
नमोऽभीप्सितसिद्ध्यर्थं, ते च दिव्यध्वनिं नुमः।।1।।

इस खण्ड में जीवों की प्ररूपणा स्वामित्वादि ग्यारह अनुयोगों द्वारा गुणस्थान विशेषण को छोड़कर मार्गणा स्थानों में की गई है। इन ग्यारह अनुयोग द्वारों के नाम–1. एक जीव की अपेक्षा स्वामित्व 2. एक जीव की अपेक्षा काल 3. एक जीव की अपेक्षा अन्तर 4. नाना जीवों की अपेक्षा भंगविचय 5. द्रव्यप्रमाणानुगम 6. क्षेत्रानुगम 7. स्पर्शनानुगम 8. नाना जीवों की अपेक्षा काल 9. नाना जीवों की अपेक्षा अन्तर 10. भागाभागानुगम और 11. अल्पबहुत्वानुगम। अंत में ग्यारहों अनुयोगद्वारों की चूलिका रूप से 'महादण्डक' दिया गया है। यद्यपि इसमें अनुयोग द्वारों की अपेक्षा 11 अधिकार ही हैं फिर भी प्रारंभ में प्रस्तावनारूप में 'बंधक सत्त्वप्ररूपणा' और अंत में चूलिकारूप में महादण्डक ऐसे 13 अधिकार भी कहे जा सकते हैं।

बंधक सत्त्वप्ररूपणा–इसमें 43 सूत्र हैं। जिनमें चौदह मार्गणाओं के भीतर कौन जीव कर्मबंध करते हैं और कौन

---

1. षट्खण्डागम (सिद्धांतचिन्तामणि टीका) पु. 6, अंतिम प्रकरण।

नहीं करते यह बतलाया गया है।

1. एक जीव की अपेक्षा स्वामित्व–इस अधिकार में मार्गणाओं संबंधी गुण व पर्याय कौन से भावों से प्रगट होते हैं इत्यादि विवेचन है।

2. एक जीव की अपेक्षा काल–इस अनुयोगद्वार में प्रत्येकगति आदि मार्गणा में जीव की जघन्य और उत्कृष्ट कालस्थिति का निरूपण किया गया है।

3. एक जीव की अपेक्षा अंतर–एक जीव का गति आदि मार्गणाओं के प्रत्येक अवान्तर भेद से जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल-विरहकाल कितने समय का होता है?

4. नाना जीवों की अपेक्षा भंगविचय–भंग-प्रभेद, विचय-विचारणा, इस अधिकार में भिन्न-भिन्न मार्गणाओं में जीव नियम से रहते हैं या कभी रहते हैं या कभी नहीं भी रहते हैं, इत्यादि विवेचना है।

5. द्रव्यप्रमाणानुगम–भिन्न-भिन्न मार्गणाओं में जीवों का संख्यात, असंख्यात और अनंतरूप से अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी आदि काल प्रमाणों की अपेक्षा वर्णन है।

6. क्षेत्रानुगम–सामान्यलोक, अधोलोक, ऊर्ध्वलोक, तिर्यक्लोक और मनुष्यलोक, इन पाँचों लोकों के आश्रय से स्वस्थानस्वस्थान, विहारवत्स्वस्थान, सात समुद्घात और उपपाद की अपेक्षा वर्तमान क्षेत्र की प्ररूपणा की गई है।

7. स्पर्शनानुगम–चौदह मार्गणाओं में सामान्य आदि पांचों लोकों की अपेक्षा वर्तमान और अतीतकाल के निवास को दिखाया है।

8. नाना जीवों की अपेक्षा कालानुगम–नाना जीवों की अपेक्षा अनादि अनंत, अनादिसांत, सादि अनंत और सादि सान्त काल भेदों को लक्ष्य करके जीवों की काल प्ररूपणा की गई है।

9. नाना जीवों की अपेक्षा अन्तरानुगम–मार्गणाओं में नाना जीवों की अपेक्षा बंधकों के जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल का निरूपण किया गया है।

10. भागाभागानुगम–इसमें मार्गणाओं के अनुसार सर्वजीवों की अपेक्षा बंधकों के भागाभाग का वर्णन है।

11. अल्पबहुत्वानुगम–चौदह मार्गणाओं के आश्रय से जीवसमासों का तुलनात्मक प्रमाण प्ररूपित किया है।

अनन्तर चूलिकारूप 'महादण्डक' अधिकार में गर्भोपक्रांतिक मनुष्य पर्याप्त से लेकर निगोद जीवों तक के जीवसमासों का 'अल्पबहुत्व' निरूपित है।

इस प्रकार क्रमशः इस द्वितीय खण्ड में सूत्रों की संख्या–

43+91+216+151+23+171+124+274+55+68+88+205+79=1594 है।

मेरे द्वारा सिद्धांतचिंतामणि टीका में पृष्ठ संख्या–281 है।

महत्वपूर्ण विषय–इस ग्रंथ में एक महत्वपूर्ण विषय आया है, जिसे यहाँ उद्धृत किया जा रहा है–

"बादरणिगोदपदिट्ठिदअपदिट्ठिदाणमेत्थ सुत्ते वणप्फदिसण्णा किण्ण णिद्दिट्ठा?

गोदमो एत्थ पुच्छेयत्वो। अम्हेहि गोदमो बादरणिगोदपदिट्ठिदाणं वणप्फदिसण्णं णेच्छदि त्ति तस्स अहिप्पाओ कहिओ[1]।"

शंका–वनस्पति नामकर्म के उदय से संयुक्त जीवों के वनस्पति संज्ञा देखी जाती है। बादरनिगोद प्रतिष्ठित और अप्रतिष्ठित जीवों को यहाँ सूत्र में 'वनस्पतिसंज्ञा' क्यों नहीं निर्दिष्ट की?

समाधान–'गौतम गणधर से पूछना चाहिए।' गौतम गणधरदेव बादर निगोद प्रतिष्ठित जीवों की वनस्पति संज्ञा नहीं मानते। हमने यहाँ उनका अभिप्राय व्यक्त किया है।

---

[1] षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 7, पृ. 541।

२-५१

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि जहाँ सूत्रों में जैन ग्रंथों में दो मत आये हैं वहाँ टीकाकारों ने अपना अभिमत न देकर दोनों ही रख दिये हैं।

इस ग्रंथ की टीका का समापन मैंने हस्तिनापुर में 'रत्नत्रयनिलयवसतिका' में मगसिर शुक्ला त्रयोदशी, वीर नि. संवत् 2524, दिनाँक-12-12-1997 को पूर्ण की है।

उसकी संक्षिप्त प्रशस्ति इस प्रकार है–

वीराब्दे दिग्द्विखद्वयंके, शांतिनाथस्य सन्मुखे। रत्नत्रयनिलयेऽस्मिन्, हस्तिनागपुराभिधे।।1।।
षट्खण्डागमग्रंथेऽस्मिन्, खण्डद्वितीयकस्य हि। क्षुद्रकबंधनाम्नोऽस्य, टीकेयं पर्यपूर्यत।।2।।
गणिन्या ज्ञानमत्येयं, टीकाग्रन्थश्च भूतले। जीयात् ज्ञानर्द्धये भूयात् भव्यानां मे च संततम्।।3।।

तृतीय खण्ड–बंधस्वामित्वविचय

पुस्तक 8–

इस तृतीय खण्ड में नाम के अनुसार ही बंध के स्वामी के बारे में विचार किया गया है। यथा–

"जीवकम्माणं मिच्छत्तासंजमकसायजोगेहि एयत्तपरिणामो बंधो[1]।"

जीव और कर्मों का मिथ्यात्व, असंयम, कषाय और योगों से जो एकत्व परिणाम होता है, वह बंध है।

और बंध के वियोग को मोक्ष कहते हैं।

बंध के स्वामित्व का विचय–विचारणा, मीमांसा और परीक्षा ये एकार्थक शब्द हैं।

वर्तमान में जो साधु या विद्वान् मिथ्यात्व को बंध में 'अकिंचित्कर' कहते हैं उन्हें इन षट्खण्डागम की पंक्तियों पर ध्यान देना चाहिए। अनेक स्थलों पर आचार्यों ने कहा है–"मिच्छत्तासंजमकसायजोगभेदेण चत्तारि मूलपच्चया[2]।" मिथ्यात्व, असंयम, कषाय और योग ये चार बंध के मूलप्रत्यय–मूलकारण हैं।

यहाँ भी गुणस्थानों में बंध के स्वामी का विचार करके मार्गणाओं में वर्णन किया गया है।

सूत्रों में बंध-अबंध का प्रश्न करके उत्तर दिया है। यथा-"पाँच ज्ञानावरणीय, चार दर्शनावरणीय, यशःकीर्ति, उच्चगोत्र और पाँच अंतराय इनका कौन बंधक है और कौन अबंधक है?[3]।।5।।

सूत्र में ही उत्तर दिया है–

"मिथ्यादृष्टि से लेकर सूक्ष्मसांपरायिक शुद्ध संयत उपशमक व क्षपक तक पूर्वोक्त ज्ञानावरणादि प्रकृतियों के बंधक हैं। सूक्ष्मसांपरायिक काल के अंतिम समय में जाकर इन प्रकृतियों का बंध व्युच्छिन्न होता है। ये बंधक हैं, शेष अबंधक हैं[4]।।6।।

यहाँ पाँचवें प्रश्नवाचक सूत्र में टीकाकार ने इस सूत्र को देशामर्शक मानकर तेईस पृच्छायें की हैं–

1. यहाँ क्या बंध की पूर्व में व्युच्छित्ति होती है? 2. क्या उदय की पूर्व में व्युच्छित्ति होती है? 3. या क्या दोनों की साथ में व्युच्छित्ति होती है? 4. क्या अपने उदय के साथ इनका बंध होता है? 5. क्या पर प्रकृतियों के उदय के साथ इनका बंध होता है? 6. क्या अपने और पर दोनों के उदय के साथ इनका बंध होता है? 7. क्या सांतर बंध होता है? 8. क्या निरंतर बंध होता है? 9. या क्या सांतर-निरंतर बंध होता है? 10. क्या सनिमित्तक बंध होता है? 11. या क्या अनिमित्तक बंध होता है? 12. क्या गति संयुक्तबंध होती है? 13. या क्या गति संयोग से रहित बंध होता है? 14. कितनी गति वाले जीव स्वामी हैं? 15. और कितनी गति वाले स्वामी नहीं हैं? 16. बंधाध्वान कितना है–बंध की सीमा किस गुणस्थान से किस गुणस्थान तक है? 17. क्या अंतिम समय में बंध की व्युच्छित्ति होती है?

1-2. षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 8, पृ. 2-161।

3-4. षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 8, पृ. 7-13।

18. क्या प्रथम समय में बंध की व्युच्छित्ति होती है? 19. या अप्रथम अचरिम समय में बंध की व्युच्छित्ति होती है? 20. क्या बंध सादि है? 21. या क्या अनादि है? 22. क्या बंध ध्रुव ही होता है? 23. या क्या अध्रुव होता है?

इस प्रकार ये 23 पृच्छायें पूछी गईं इस पृच्छा में अंतर्भूत हैं, ऐसा जानना चाहिए।

पुनः इनका उत्तर दिया गया है।

इस प्रकार इस ग्रंथ में कुल 324 सूत्र हैं।

इस ग्रंथ की संस्कृत टीका मैंने मार्गशीर्ष कृ. 13 को (दिनाँक 12-12-97) हस्तिनापुर में प्रारंभ की थी। उस समय 'श्री ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार' की योजना बनाई थी। भगवान ऋषभदेव का धातु का एक सुंदर 8'×8' फुट का समवसरण बनवाया गया था। इसके उद्घाटन की तैयारियाँ चल रही थीं। इसी संदर्भ में मैंने मंगलाचरण में तीन श्लोक लिखे थे। यथा–

सिद्धान् नष्टाष्टकर्मारीन्, नत्वा स्वकर्महानये। बंधस्वामित्वविचयो, ग्रंथः संकीर्त्यते मया।।1।।
श्रीमत्-ऋषभदेवस्य, श्रीविहारोऽस्ति सौख्यकृत्। जगत्यां सर्वजीवाना-मतो देव! जयत्विह।।2।।
यास्त्यनन्तार्थगर्भस्था, द्रव्यभावश्रुतान्विता। सापि सूत्रार्थयुङ्मान्ये! श्रुतदेवि! प्रसीद नः।।3।।

पुनः दिल्ली में मैंने द्वि. ज्येष्ठ शु. 5 श्रुतपंचमी वीर नि.सं. 2525 को (दि. 18-6-1999 को) डेढ़ वर्ष में प्रीतविहार में श्रीऋषभदेव कमलमंदिर में पूर्ण किया है।

इस ग्रंथ के अंत में मैंने ध्यान करने के लिए 148 कर्मप्रकृतियों से विरहित 148 सूत्र बनाये हैं। यथा–

''मतिज्ञानावरणीयकर्मरहितोऽहं शुद्धचिन्मयचिन्तामणिस्वरूपोऽहम् ।।1।।

पूर्णता का अंतिम श्लोक–

ग्रन्थोऽयं बंधस्वामित्व-विचयो मंगलं क्रियात्।
श्री शांतिनाथतीर्थेशः, कुर्यात् सर्वत्र मंगलम् ।।8।।

इस प्रकार संक्षेप में इस तृतीय खण्ड का सार दिया है।

चतुर्थ–वेदना खण्ड

पुस्तक 9–

इस चतुर्थ और पंचम खण्ड में जो विषय विभाजित हैं, उनका विवरण इस प्रकार है–

अग्रायणीय पूर्व के अर्थाधिकार चौदह हैं–1. पूर्वांत 2. अपरान्त 3. ध्रुव 4. अध्रुव 5. चयनलब्धि 6. अध्रुवसंप्रणिधान 7. कल्प 8. अर्थ 9. भौमावयाद्य, 10. कल्पनिर्याण 11. अतीतकाल 12. अनागतकाल 13. सिद्ध और 14. बुद्ध[1]।

यहाँ 'चयनलब्धि' नाम के पाँचवें अधिकार में 'महाकर्म प्रकृतिप्राभृत' संगृहीत है। उसमें ये चौबीस अनुयोगद्वार ज्ञातव्य हैं। 1. कृति 2. वेदना 3. स्पर्श 4. कर्म 5. प्रकृति 6. बंधन 7. निबंधन 8. प्रक्रम 9. उपक्रम 10. उदय 11. मोक्ष 12. संक्रम 13. लेश्या 14. लेश्याकर्म 15. लेश्या परिणाम 16. सातासात 17. दीर्घ-ह्रस्व 18. भवधारणीय 19. पुद्गलात्त 20. निधत्तानिधत्त 21. निकाचितानिकाचित 22. कर्मस्थिति 23. पश्चिमस्कंध और 24. अल्पबहुत्व[2]।

इन चौबीस अनुयोगद्वारों को षट्खण्डागम की मुद्रित नवमी पुस्तक से लेकर सोलहवीं तक में 'वेदना' और 'वर्गणा' नाम के दो खंडों में विभक्त किया है। वेदना खण्ड में 9, 10, 11 और 12 ऐसे चार ग्रंथ हैं।

इस नवमी पुस्तक में मात्र प्रथम 'कृति' अनुयोग द्वार ही वर्णित है। छ्यालिसवें सूत्र में कृति के सात भेद किये हैं–

1. नामकृति 2. स्थापनाकृति 3. द्रव्यकृति 4. गणनकृति 5. ग्रन्थकृति 6. करणकृति और 7. भावकृति।

---

1. षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 9, पृ. 226। 2. षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 9, सूत्र 45, पृ. 134।

इन कृतियों का विस्तार से वर्णन करके अंत में कहा है कि–यहाँ 'गणनकृति' से प्रयोजन है[1]।

इस ग्रंथ में श्रीभूतबलि आचार्य ने 'णमो जिणाणं' आदि गणधरवलय मंत्र लिए हैं जो कि श्री गौतमस्वामी द्वारा रचित हैं। यहाँ "णमो जिणाणं" से लेकर "णमो वड्ढमाणबुद्धरिसिस्स।" चवालीस मंत्र लिए हैं। अन्यत्र 'पाक्षिक प्रतिक्रमण' एवं 'प्रतिक्रमणग्रन्थत्रयी' टीकाग्रंथ तथा भक्तामर स्तोत्र ऋद्धिमंत्र आदि में अड़तालीस मंत्र लिये गये हैं।

इन 48 मंत्रों को 'श्रीगौतमस्वामी' द्वारा रचित कृतियों में इसी ग्रंथ में दिया गया है।

इस नवमी पुस्तक में टीकाकार श्री वीरसेनाचार्य ने बहुत ही विस्तार से इन मंत्रों का अर्थ स्पष्ट किया है। अनंतर 'सिद्धान्त ग्रंथों' के स्वाध्याय के लिए द्रव्यशुद्धि, क्षेत्रशुद्धि, कालशुद्धि और भावशुद्धि का विवेचन विस्तार से किया है।

इस ग्रंथ की 'सिद्धान्तचिन्तामणि' टीका मैंने शरदपूर्णिमा वी.नि.सं. 2525 को (24-10-99 को) दिल्ली में राजाबाजार के दिगम्बर जैन मंदिर में प्रारंभ की थी।

श्री गौतमस्वामी के मुखकमल से विनिर्गत गणधरवलय मंत्रों की टीका लिखते समय मुझे एक अपूर्व ही आल्हाद प्राप्त हुआ है। इसकी पूर्णता मैंने आश्विन शु.15–शरद्पूर्णिमा वीर.नि.सं. 2526 को (13-10-2000 को) दिल्ली में ही प्रीतविहार-श्रीऋषभदेव कमलमंदिर में की है। जिसका अंतिम श्लोक निम्नलिखित है–

"अहिंसा परमो धर्मो, यावद् जगति वर्त्स्यते।
यावन्मेरूश्च टीकेयं, तावन्नंद्याच्च नः श्रियै।।9।।

इस प्रकार नवमी पुस्तक का किंचित् सार लिखा गया है।

पुस्तक 10–

इस ग्रंथ में 'वेदना' नाम का द्वितीय अनुयोगद्वार है। इस वेदनानुयोग द्वार के 16 भेद हैं–1. वेदनानिक्षेप 2. वेदनानयविभाषणता 3. वेदनानामविधान 4. वेदनाद्रव्यविधान 5. वेदनाक्षेत्रविधान 6. वेदनाकालविधान 7. वेदनाभावविधान 8. वेदनाप्रत्ययविधान 9. वेदनास्वामित्वविधान 10. वेदनावेदनाविधान 11. वेदनागतिविधान 12. वेदनाअनंतरविधान 13. वेदनासन्निकर्षविधान 14. वेदनापरिमाणविधान 15. वेदनाभागाभागविधान और 16. वेदनाअल्पबहुत्वविधान[2]।

इस दशवीं पुस्तक में प्रारंभ के 4 अनुयोगद्वारों का वर्णन है। सूत्र संख्या 224 है। आगे 11वीं और 12वीं पुस्तक में सभी वेदनाओं का वर्णन होने से इस तृतीय खण्ड को वेदनाखण्ड कहा है।

यहाँ प्रथम 'वेदना निक्षेप' के भी नामवेदना, स्थापनावेदना, द्रव्यवेदना और भाववेदना ऐसे निक्षेप की अपेक्षा चार भेद हैं।

दूसरे 'वेदनानयविभाषणा' में नयों की अपेक्षा वेदना को घटित किया है। तीसरे 'वेदनानामविधान' के ज्ञानावरण आदि आठ कर्मों की अपेक्षा आठ भेद कर दिये हैं[3]।

वेदना द्रव्यविधान के तीन अधिकार किये हैं–पदमीमांसा, स्वामित्व और अल्पबहुत्व। इस ग्रंथ में इनका विस्तार से वर्णन है।

आश्विन शु. 15–शरदपूर्णिमा (13-10-2000) को दिल्ली में मैंने टीका लिखना प्रारंभ किया था। पुनः माघ शु. 5 वी.नि.सं. 2528 (दि.17-2-2002) राजाबाजार दि. जैन मंदिर में पूर्ण किया है। उसमें प्रशस्ति में दो श्लोक उद्धृत हैं–

भारते राजधान्यां हि, जयसिंहपुरेऽधुना। टीका पूर्णीकृता सिद्ध्यै, श्रीचन्द्रप्रभमंदिरे।।12।।
अष्टद्विपंचद्वयंकेऽस्मिन्, वीराब्दे पंचमीतिथौ। माघे शुक्लेऽद्य टीका हि, श्रुतभक्त्या प्रपूर्यते।।13।।

इस प्रकार संक्षिप्त सार दिया गया है।

---

[1] षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 9, पृ. 452। [2] षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 10, सूत्र 1।
[3] ष़ट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 10, पृ. 13।

पुस्तक नं. 11–

इस ग्रंथ में वेदनाक्षेत्रविधान और वेदनाकालविधान इन दो भेदों का विस्तार है। सूत्र संख्या 378 है।

वेदनाक्षेत्रविधान के भी पदमीमांसा, स्वामित्व और अल्पबहुत्व ऐसे तीन भेद किये हैं। पुनः वेदनाकालविधान के भी पदमीमांसा, स्वामित्व और अल्पबहुत्व भेद करके विस्तार से कथन किया है। आगे प्रथम चूलिका और द्वितीय चूलिका भेद करके विषय को विशद किया है।

इस ग्रन्थ की टीका मैंने कुण्डलपुर तीर्थ विकास के लिए दिल्ली से विहार करके मार्ग में आगरा शहर में चैत्र कृ. 1 वी.सं. 2528 (29-3-2002) को प्रारंभ किया था। पुनः प्रयाग में 'तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली' तीर्थ पर आश्विन शु. 15–शरदपूर्णिमा, (21-10-2002) को पूर्ण की है।

अंतिम श्लोक में लिखा है–

यावत् श्रीजैनधर्मोऽयं, यावन्मेरूकुलाचलाः।
तावद् ग्रन्थोऽप्ययं स्थेयात्, भव्यानां मंगलं क्रियात् ।।11।।

इस प्रकार संक्षेप में सार दिया है।

पुस्तक 12–

इस ग्रन्थ में वेदनाअनुयोगद्वार के 16 भेदों में से 7वें से लेकर 16वें तक भेद वर्णित हैं–7. वेदनाभावविधान 8. वेदनाप्रत्ययविधान 9. वेदनास्वामित्वविधान 10. वेदनावेदनाविधान 11. वेदनागतिविधान 12. वेदनाअनंतरविधान 13. वेदनासन्निकर्षविधान 14. वेदनापरिमाणविधान 15. वेदनाभागाभागविधान और 16. वेदनाअल्पबहुत्वविधान।

इन दश वेदना अनुयोगद्वारों का इस ग्रंथ में विस्तार से वर्णन है। इसमें सूत्र संख्या 533 है।

इसमें प्रथम 'वेदनाभावविधान' में पदमीमांसा, स्वामित्व और अल्पबहुत्व ये तीन अधिकार हैं। आगे चलकर प्रथम, द्वितीय और तृतीय ऐसी तीन चूलिकाएं हैं।

पुनश्च 'वेदनाप्रत्ययविधान' में जीवहिंसा, असत्य आदि प्रत्यय–निमित्त से ज्ञानावरण आदि कर्मों की वेदना होती है। जैसे कि–

मुसावादपच्चए।।3।।

......मिथ्यात्व, असंयम, कषाय और प्रमाद से उत्पन्न वचनसमूह असत् वचन है इत्यादि।

ऐसे संपूर्ण वेदनाओं का वर्णन किया गया है।

इस ग्रंथ की टीका मैंने 'तीर्थंकर ऋषभदेवतपस्थली' प्रयाग (इलाहाबाद) में शरद्पूर्णिमा के दिन ही शुरू की थी पुनः यहाँ कुण्डलपुर तीर्थ पर पौष कृ. 11 वी.नि.सं. 2530 के दिन पूर्ण की है। इसी संदर्भ में मैंने लिखा है–

अस्यां पौषकृष्णैकादश्यां तिथौ काशीदेशे वाराणस्यां नगर्यां महानृपतेः अश्वसेनस्य महाराज्ञ्यः वामादेव्यो गर्भात् भगवान् पार्श्वनाथो जज्ञे। उग्रवंशशिरोमणिः मरकतमणिसन्निभः त्रयस्त्रिंशत्तमस्तीर्थंकरोऽयं अस्मात् वीरनिर्वाणसंवत्सरात् द्विसहस्र-अष्टशताशीतिवर्षपूर्वं अवततार।

उक्तं च तिलोयपण्णत्तिग्रंथे–

अट्ठत्तरिअधियाए वेसदपरिमाणवासअदिरित्ते।
पासजिणुप्पत्तीदो उप्पत्तीवड्ढमाणस्स ।।577।।

भगवान पार्श्वनाथ की उत्पत्ति के 278 वर्ष बाद वर्धमान भगवान की उत्पत्ति हुई है अतः 278 में भगवान महावीर को जन्म लिये 2602 वर्ष हुए वह संख्या जोड़ देने से 278+2602=2880 वर्ष हो गये अतः मैंने यह घोषणा की थी कि

---

1. षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 12, पृ. 279।

आगे आने वाले पौष कृ. 11 (6-1-2005) को भगवान पार्श्वनाथ का 'तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव' प्रारंभ करें पुनः एक वर्ष तक सारे भारत में भगवान पार्श्वनाथ का गुणगान करें।

इस प्रकार इस बारहवीं पुस्तक का विषय संक्षेप में लिखा है।

पंचम खण्ड–वर्गणाखण्ड

पुस्तक 13–

नवमी पुस्तक में चयनलब्धि के 'महाकर्मप्रकृतिप्राभृत' के 'कृति, वेदना, स्पर्श, कर्म, प्रकृति आदि चौबीस अनुयोगद्वार कहे गये हैं। वेदना खण्ड में मात्र 'कृति और वेदना' ये दो अनुयोग द्वार आये हैं। शेष 22 अनुयोगद्वार इस 'वर्गणाखण्ड' नाम के पांचवे खण्ड में वर्णित हैं। इस खण्ड में भी 13वीं, 14वीं, 15वीं एवं 16वीं ऐसी चार पुस्तके हैं। इस खण्ड में 'बंधनीय' का आलंबन लेकर वर्गणाओं का सविस्तार वर्णन किया गया है अतः इसे 'वर्गणाखण्ड' नाम दिया है।

इस तेरहवीं पुस्तक में 'स्पर्श, कर्म और प्रकृति' इन तीन अनुयोगद्वारों का वर्णन है।

इसमें 'स्पर्श अनुयोगद्वार' के सोलह अनुयोगद्वार ज्ञातव्य हैं-स्पर्शनिक्षेप, स्पर्शनयविभाषणता, स्पर्शनामविधान, स्पर्शद्रव्यविधान, स्पर्शक्षेत्रविधान, स्पर्शकालविधान, स्पर्शभावविधान, स्पर्शप्रत्ययविधान, स्पर्शस्वामित्वविधान, स्पर्शस्पर्शविधान, स्पर्शगतिविधान, स्पर्शअनंतरविधान, स्पर्शसन्निकर्षविधान, स्पर्शपरिमाणविधान, स्पर्शभागाभागविधान और स्पर्शअल्पबहुत्व।[1]

पुनश्च प्रथम भेद 'स्पर्शनिक्षेप' के 13 भेद किये हैं–नामस्पर्श, स्थापनास्पर्श, द्रव्यस्पर्श, एकक्षेत्रस्पर्श, अनंतरक्षेत्रस्पर्श, देशस्पर्श, त्वक्स्पर्श, सर्वस्पर्श, स्पर्शस्पर्श, कर्मस्पर्श, बंधस्पर्श, भव्यस्पर्श और भावस्पर्श[2]।

इस तेरहवें ग्रंथ में सूत्र की टीका के अनंतर मैंने प्रायः 'तात्पर्यार्थ' दिया है। जैसे कि–स्पर्श अनुयोगद्वार में सूत्र 26 में टीका के अनंतर लिखा है।

"अत्र तात्पर्यमेतत्-अष्टसु कर्मसु मोहनीयकर्म एव संसारस्य मूलकारणमस्ति। दर्शनमोहनीयनिमित्तेन जीवा मिथ्यात्वस्य वंशगताः सन्तः अनादिसंसारे परिभ्रमन्ति। चारित्रमोहनीयबलेन तु असंयताः सन्तः कर्माणि बध्नन्ति।

उक्तं च श्री पूज्यपादस्वामिना–

बध्यते मुच्यते जीवः सममः निर्ममः क्रमात् ।
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन निर्ममत्वं विचिन्तयेत् ।।

एतज्ज्ञात्वा कर्मस्पर्शकारणभूतमोहरागद्वेषादिविभावभावान् व्यक्त्वा स्वस्मिन् स्वभावे स्थिरीभूय स्वस्थो भवन् स्वात्मोत्थपरमानंदामृतं सुखमनुभवनीयमिति।"

कर्म अनुयोगद्वार में भी प्रथम ही 16 अनुयोगद्वाररूप भेद कहे हैं–कर्मनिक्षेप, कर्मनयविभाषणता, कर्मनाम विधान आदि। पुनश्च कर्मनिक्षेप के दश भेद किये हैं-नामकर्म, स्थापनाकर्म, द्रव्यकर्म, प्रयोगकर्म, समवदानकर्म, अव्यःकर्म, ईर्यापथकर्म, तपःकर्म, क्रियाकर्म और भावकर्म।

इसमें 'तपःकर्म' के बारह भेदों का विस्तार से वर्णन किया गया है। इसी प्रकार 'क्रियाकर्म' में–

"तमादाहीणं पदाहीणं तिक्खुत्तं तियोणदं, चदुसिरं बारसावत्तं तं सव्वं किरियाकम्मं णाम[3]।।28।।"

यह क्रियाकर्म विधिवत् सामायिक–देववंदना में घटित होता है। इसी सूत्र को उद्धृत करके अनगारधर्मामृत, चारित्रसार आदि ग्रंथों में साधुओं की सामायिक को 'देववंदना' रूप में सिद्ध किया है। इसका स्पष्टीकरण मूलाचार, आचारसार आदि ग्रंथों में भी है। 'क्रियाकलाप' जिसका संपादन पं. पन्नालाल सोनी ब्यावर वालों ने किया था उसमें तथा

---

[1] षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 13, सूत्र 2 । [2] षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 13, सूत्र 4।
[3] षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 13, सूत्र 28, पृ. 88 ।

मेरे द्वारा संकलित (लिखित) 'मुनिचर्या' में भी यह विधि सविस्तार वर्णित है। इन प्रकरणों को लिखते हुए, पढ़ते हुए मुझे एक अद्भुत ही आनंद का अनुभव हुआ है।

तृतीय 'प्रकृति' अनुयोगद्वार में भी सोलह अधिकार कहे हैं-प्रकृतिनिक्षेप, प्रकृतिनयविभाषणता, प्रकृतिनामविधान, प्रकृतिद्रव्यविधान आदि।

इसमें प्रथम प्रकृतिनिक्षेप के चार भेद किये हैं-नामप्रकृति, स्थापनाप्रकृति, द्रव्यप्रकृति और भावप्रकृति।

इसमें द्रव्यप्रकृति के दो भेद हैं-आगमद्रव्यप्रकृति और नोआगमद्रव्यप्रकृति। नोआगमद्रव्यप्रकृति के भी दो भेद हैं-कर्मप्रकृति और नोकर्म प्रकृति।

कर्मप्रकृति के ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम, गोत्र और अंतराय कर्म प्रकृति।

इस तेरहवीं पुस्तक में प्रकृति अनुयोगद्वार में व्यंजनावग्रहावरणीय के 4 भेद किये हैं। धवला टीका में श्री वीरसेनस्वामी ने श्रोत्रेन्द्रिय के विषयभूत शब्दों के अनेक भेद करके कहा है-

''सद्दपोग्गला सगुप्पत्तिपदेसादो उच्छलिय दसदिसासु गच्छमाणा उक्कस्सेण जाव लोगंतं ताव गच्छंति।

कुदो एदं णव्वदे?

सुत्ताविरूद्धाइरियवयणादो। ते किं सव्वे सद्दपोग्गला लोगंतं गच्छंति आहो ण सव्वे इति पुच्छिदे सव्वे ण गच्छंति, थोवा चेव गच्छंति।......

जहण्णेण अंतोमुहुत्तकालेण लोगंतपत्ती होदि त्ति उवदेसादो[1]।''

शब्द पुद्गल अपने उत्पत्ति प्रदेश से उछलकर दशों दिशाओं में जाते हुए उत्कृष्टरूप से लोक के अंतभाग तक जाते हैं।

यह किस प्रमाण से जाना जाता है?

यह सूत्र के अविरुद्ध व्याख्यान करने वाले आचार्यों के वचन से जाना जाता है।

क्या वे सब शब्दपुद्गल लोक के अंत तक जाते हैं या सब नहीं जाते?

सब नहीं जाते हैं, थोड़े ही जाते हैं। यथा-शब्द पर्याय से परिणत हुए प्रदेश में अनंत पुद्गल अवस्थित रहते हैं। दूसरे आकाश प्रदेश में उनसे अनंतगुणे हीन पुद्गल अवस्थित रहते हैं।

इस तरह वे अनंतरोपनिधा की अपेक्षा वातवलयपर्यंत सब दिशाओं में उत्तरोत्तर एक-एक प्रदेश के प्रति अनंतगुणे हीन होते हुए जाते हैं।

आगे क्यों नहीं जाते?

धर्मास्तिकाय का अभाव होने से वे वातवलय के आगे नहीं जाते हैं। ये सब शब्द पुद्गल एक समय में ही लोक के अंत तक जाते हैं, ऐसा कोई नियम नहीं है। किन्तु ऐसा उपदेश है कि कितने ही शब्द पुद्गल कम से कम दो समय से लेकर अंतर्मुहूर्त काल के द्वारा लोक के अंत को प्राप्त होते हैं।

अष्टसहस्री ग्रंथ में भी शब्द पुद्गलों का आना पकड़ना, टकराना आदि सिद्ध किया है। क्योंकि ये पौद्गलिक हैं-पुद्गल की पर्याय हैं।

इन सभी प्रकरणों के अध्ययन से यह स्पष्ट है कि-

आज जो शब्द टेलीविजन-दूरदर्शन, रेडियो-आकाशवाणी, टेलीफोन-दूरभाष आदि के द्वारा हजारों किमी. दूर से सुने जाते हैं। टेलीफोन से कई हजार किमी. दूर से वार्तालाप किया जाता है। टेपरेकार्ड, वी.डी.ओ. आदि में भरे जाते हैं, महीनों, वर्षों तक ज्यों की त्यों सुने जाते हैं। यह सब पौद्गलिक चमत्कार है।

वास्तव में ये शब्द मुख से निकलने के बाद लोक के अंत तक फैल जाते हैं। इसीलिए इनका पकड़ना, दूर तक पहुँचाना, भेजना, यंत्रों में भर लेना आदि संभव है।

---

1. षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 13, पृ. 222।

इन्हीं भावनाओं के अनुसार मैंने 30 वर्ष पूर्व भगवान 'शांतिनाथ स्तुति' में यह उद्गार लिखे थे। यथा–

सुभक्तिवरयंत्रतः स्फुटरवा ध्वनिक्षेपकात्। सुदूरजिनपार्श्वगा भगवतःस्पृशन्ति क्षणात्।
पुनः पतनशीलतोऽवपतिता नु ते स्पर्शनात्। भवन्त्यभिमतार्थदाः स्तुतिफलं ततश्चाप्यते[1]।।20।।

हे भगवन्! आपकी श्रेष्ठ भक्ति वो ही हुआ ध्वनिविक्षेपण यंत्र (रेडियो आदि) उससे स्फुट–प्रगट हुईं शब्द वर्गणाएं बहुत ही दूर सिद्धालय में–लोक के अग्रभाग में विराजमान आपके पास जाती हैं और वहाँ आपका स्पर्श करती हैं। पुनः पुद्गलमयी शब्दवर्गणायें पतनशील होने से यहाँ आकर–भक्त के पास आकर आपसे स्पर्शित होने से ही भव्यजीवों के मनोरथ को सफल कर देती हैं, यही कारण है कि इस लोक में स्तुति का फल पाया जाता है अन्यथा नहीं पाया जा सकता था।

इसमें ज्ञानावरण के अंतर्गत श्रुतज्ञानावरण के विषय में कहते हुए 'श्रुतज्ञान' के विषय में बहुत ही विस्तृत वर्णन किया है।

प्रश्न हुआ है–"श्रुतज्ञानावरणीय कर्म की कितनी प्रकृतियाँ हैं?

उत्तर दिया है–श्रुतज्ञानावरणीय कर्म की संख्यात प्रकृतियाँ हैं।

जितने अक्षर हैं और जितने अक्षर संयोग हैं उतनी प्रकृतियां हैं।[2]"

पुनश्च–श्रुतज्ञानावरणीयकर्म के बीस भेद किये हैं–पर्यायावरणीय, पर्यायसमासावरणीय, अक्षरावरणीय, अक्षरसमासावरणीय, पदावरणीय, पदसमासावरणीय, आदि से पूर्वसमासावरणीय पर्यंत ये बीस भेद हैं।[3] इनसे पहले श्रुतज्ञान के बीस भेद हैं, जिनके ये आवरण हैं।

उन श्रुतज्ञान के नाम–पर्याय, पर्यायसमास, अक्षर अक्षरसमास, पद, पदसमास, संघात, संघातसमास, प्रतिपत्ति, प्रतिपत्तिसमास, अनुयोगद्वार, अनुयोगद्वारसमास, प्राभृतप्राभृत, प्राभृतप्राभृतसमास, प्राभृत, प्राभृतसमास, वस्तु, वस्तुसमास, पूर्व और पूर्वसमास, ये श्रुतज्ञान के बीस भेद हैं।

इस ग्रंथ की टीका के लेखन में मैंने जो परम आल्हाद प्राप्त किया है वह मेरे जीवन में अचिन्त्य ही रहा है।

एक तो षट्खण्डागमरूपी परम ग्रंथराज, दूसरे श्रीभूतबलि, महान आचार्य के सूत्र, तीसरे श्रीवीरसेनाचार्य की धवला टीका और चौथा भगवान महावीर तीर्थ त्रिवेणी का संगम। यही कारण है कि यह ग्रंथ मेरा यहाँ 'तीर्थ त्रिवेणी संगम' में अतिशीघ्र मात्र नव माह में पूर्ण हुआ है।

इस ग्रंथ में श्री वीरसेनाचार्य ने अगणित रत्न भर दिये हैं। यथा–**'श्रुतज्ञानमन्तरेण चारित्रानुत्पत्तेः।"**

"द्वादशांगस्य सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राविनाभाविनो मोक्षमार्गत्वेनाभ्युपगमात्।

श्रुतज्ञान के बिना चारित्र की उतपत्ति नहीं होती है इसलिए चारित्र की अपेक्षा श्रुत की प्रधानता है।

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र के अविनाभावी द्वादशांग को मोक्षमार्गरूप से स्वीकार किया गया है।

यहाँ पर 50वें सूत्र में श्रुतज्ञान के इकतालीस (41) पर्याय शब्द बताये हैं। जैसे–प्रावचन, प्रवचनीय आदि।

इस ग्रंथ में श्रुतज्ञान के पर्याय, पर्यायसमास आदि बीस भेद किये हैं और उन्हीं का विस्तार किया है।

तब प्रश्न यह हुआ है कि–उन्नीसवां 'पूर्व' और बीसवां 'पूर्वसमास' भेद तो इन बीस भेदों में आ गया है पुनः–

अंगबाह्य चौदह प्रकीर्णकाध्याय, आचारांग आदि ग्यारह अंग, परिकर्म, सूत्र, प्रथमानुयोग और चूलिका, इनका किस श्रुतज्ञान में अन्तर्भाव होगा?

तब श्रीवीरसेनस्वामीं ने समाधान दिया है कि–

---

1. जिनस्तोत्रसंग्रह (वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला से प्रकाशित) पृ. 151।
2. षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 13, सूत्र 43-44-45, पृ. 245 से।
3. षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 13, सूत्र 48, पृ. 261।

इनका अनुयोगद्वार और अनुयोगद्वारसमास में अंतर्भाव होता है अथवा प्रतिपत्तिसमास श्रुतज्ञान में इनका अंतर्भाव कहना चाहिए। परंतु पश्चादानुपूर्वी की विवक्षा करने पर इनका 'पूर्वसमास' श्रुतज्ञान में अंतर्भाव होता है, ऐसा कहना चाहिए[1]।

इस प्रकार इस ग्रंथ में मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय और केवलज्ञान का बहुत ही सुन्दर विवेचन हैं।

अनंतर सर्व कर्मों का वर्णन करके अंत में कहा है कि यहाँ 'कर्म प्रकृति' से ही प्रयोजन है।

यहाँ तक इन 13 ग्रंथों में 5630 सूत्रों की मेरे द्वारा लिखित संस्कृत टीका के पृष्ठों की संख्या-281+191+140+83+124+287+257=1356+948=2304 है।

इस प्रकार संक्षेप में इस ग्रंथ का सार दिया है।

पुस्तक 14–

इस ग्रंथ में 'कृति, वेदना' आदि 24 अनुयोगद्वारों में से छठे बंधन अनुयोगद्वार का निरूपण है। सूत्र संख्या 797 है। इसमें बंध, बंधक, बंधनीय और बंधविधान ये भेद किये हैं। पुनश्च बंध के नाम बंध, स्थापनाबंध, द्रव्यबंध और भावबंध ये चार भेद कहे हैं।

भावबंध के आगमभावबंध और नोआगमभावबंध दो भेद हैं।

आगम भावबंध के स्थित, जित, परिजित, वाचनोपगत, सूत्रसम, अर्थसम, ग्रंथसम, नामसम और घोषसम ये नव भेद हैं। इनके विषय में वाचना, पृच्छना, प्रतीच्छना, परिवर्तना, अनुप्रेक्षणा, स्तव, स्तुति, धर्मकथा तथा इनसे लेकर जो अन्य उपयोग हैं उनमें भावरूप से जितने उपयुक्त भाव हैं वे सब आगमभावबंध हैं।[2]

नोआगमभावबंध के भी दो भेद हैं–जीव भावबंध और अजीव भावबंध।

इनमें से जीवभावबंध के 3 भेद हैं–विपाकप्रत्ययिक जीवभावबंध, अविपाकप्रत्ययिकजीवभावबंध और तदुभयप्रत्ययिकजीवभावबंध।

इनमें देवभाव, मनुष्यभाव आदि विपाकप्रत्ययिक जीव भावबंध हैं।

अविपाकप्रत्ययिक जीवभावबंध के औपशमिक अविपाकप्रत्ययिकजीवभावबंध और क्षायिकअविपाकप्रत्ययिकजीवभावबंध, ऐसे दो भेद हैं।

औपशमिक के उपशांत क्रोध, उपशांत मान आदि भेद हैं।

क्षायिक के क्षीणक्रोध, क्षीणमान आदि भेद हैं।

तदुभयप्रत्यधिक जीवभावबंध के क्षायोपशमिक एकेन्द्रियलब्धि, क्षायोपशमिक द्वीन्द्रियलब्धि आदि बहुत भेद हैं।

इस प्रकार सूत्र 13 से 19 तक इन सबका विस्तार है।

ऐसे ही अजीव भावबंध के भी तीन भेद हैं–विपाकप्रत्ययिक, अविपाकप्रत्ययिक और तदुभयप्रत्ययिक अजीवभावबंध। विपाकप्रत्ययिक अजीव भावबंध के प्रयोगपरिणतवर्ण, प्रयोगपरिणतशब्द आदि भेद हैं।

अविपाकप्रत्ययिक अजीव भावबंध के विस्रसापरिणतवर्ण आदि भेद हैं।

तथा तदुभयप्रत्ययिक अजीव भावबंध के प्रयोग परिणत वर्ण और विस्रसापरिणतवर्ण आदि भेद हैं।

इसके अनंतर द्रव्यबंध के आगम, नोआगम आदि भेद प्रभेद किये हैं।

इस प्रकार 'बंध' भेद का प्ररूपण किया गया है।

अनंतर 'बंधक' अधिकार में मार्गणाओं में बंधक-अबंधक को विचार करने का कथन है।

---

1. षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 13, पृ. 276। 2. षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 14, पृ. 7।

२-५२

अनंतर–

बंधनीय के प्रकरण में–वेदनस्वरूप पुद्गल है, पुद्गल स्कंधस्वरूप हैं और स्कंध वर्गणा स्वरूप हैं[1], ऐसा कहा है।

वर्गणाओं का अनुगमन करते हुए आठ अनुयोग द्वार ज्ञातव्य हैं–

वर्गणा, वर्गणाद्रव्य समुदाहार, अनंतरोपनिधा, परंपरोपनिधा, अवहार, यवमध्य, पदमीमांसा और अल्पबहुत्व।

वर्गणा के प्रकरण होने से यहां वर्गणा के 16 अनुयोगद्वार बताये हैं–1. वर्गणा निक्षेप 2. वर्गणानयविभाषणता 3. वर्गणाप्ररूपणा 4. वर्गणानिरूपणा 5. वर्गणाध्रुवाध्रुवानुगम 6. वर्गणासांतरनिरंतरानुगम 7. वर्गणाओजयुग्मानुगम 8. वर्गणाक्षेत्रानुगम 9. वर्गणास्पर्शनानुगम 10. वर्गणाकालानुगम 11. वर्गणाअनंतरानुगम 12. वर्गणाभावानुगम 13. वर्गणाउपनयनानुगम 14. वर्गणापरिमाणानुगम 15. वर्गणाभागाभागानुगम और 16. वर्गणा अल्पबहुत्वानुगम[1]।

इन सबका विस्तार करके अंत में 797वें सूत्र में 'बंध विधान' के चार भेद किये हैं–प्रकृतिबंध, स्थितिबंध अनुभागबंध और प्रदेशबंध।।797।।

इस सूत्र की टीका में श्री वीरसेनाचार्य ने कह दिया है कि–'श्री भूतबलिभट्टारक' ने 'महाबंध' खण्ड में इन चारों भेदों को विस्तार से लिखा है अतः मैंने यहाँ नहीं लिखा है। यथा–

यहाँ 'भट्टारक' पद से महान पूज्य अर्थ विवक्षित है। ये भूतबलि आचार्य महान् दिगम्बर आचार्य थे, ऐसा समझना।

''एदेसिं चदुण्णं बंधाणं विहाणं भूदबलिभडारएण महाबंधे सप्पवंचेण लिहिदं त्ति अम्मेहिं एत्थ ण लिहिदं। तदो सयले महाबंधे एत्थ परूविदे बंधविहाणं समप्पदि[2]।''

इस प्रकार अतिसंक्षेप में इस ग्रंथ का सार दिया है।

पुस्तक 15–

इस ग्रंथ में चौबीस अनुयोगद्वारों में से 7वाँ निबंधन, 8वाँ प्रक्रम, 9वाँ उपक्रम, 10वाँ उदय इन चार अनुयोगद्वारों का कथन है। सूत्र संख्या 20 है। यह 'निबंधन' अनुयोगद्वार तक है।

आगे प्रक्रम्, उपक्रम और उदय अनुयोगद्वारों में सूत्रसंख्या नहीं मिल पायी है।

इसमें मंगलाचरण में श्रीवीरसेनाचार्य ने प्रथम निबंधन अनुयोगद्वार में 'श्री अरिष्टनेमि' भगवान को नमस्कार किया है।

द्वितीय 'प्रक्रम' अनुयोग द्वार में श्री शांतिनाथ भगवान को, तृतीय 'उपक्रम' अनुयोगद्वार में श्री अभिनंदन भगवान को एवं चौथे 'उदय' अनुयोगद्वार में पुनरपि श्रीशांतिनाथ भगवान को नमस्कार किया है।

निबंधन–'निबध्यते तदस्मिन्निति निबंधनम्' इस निरूक्ति के अनुसार जो द्रव्य जिसमें संबद्ध है उसे 'निबंधन' कहा जाता है। उसके नाम निबंधन, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावनिबंधन ऐसे छह भेद हैं।

इनमें से नाम, स्थापना को छोड़कर शेष सब निबंधन प्रकृत हैं। यह निबंधन अनुयोगद्वार यद्यपि छहों द्रव्यों के निबंधन की प्ररुपणा करता है तो भी यहाँ उसे छोड़कर कर्मनिबंधन को ही ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि यहाँ अध्यात्म विद्या का अधिकार[3] है।

प्रश्न–निबंधनानुयोगद्वार किसलिए आया है?

उत्तर–द्रव्य, क्षेत्र, काल और योगरूप प्रत्ययों की भी प्ररूपणा की जा चुकी है, उनके मिथ्यात्व, असंयम, कषाय और योगरूप प्रत्ययों की भी प्ररूपणा की जा चुकी है तथा उन कर्मों के योग्य पुद्गलों की भी प्ररूपणा की जा चुकी है। आत्मलाभ को प्राप्त हुए उन कर्मों के व्यापार का कथन करने के लिए निबंधनानुयोग द्वार आया है[4]।

उनमें मूलकर्म आठ हैं, उनके निबंधन का उदाहरण देखिये–''उनमें ज्ञानावरण सब द्रव्यों में निबद्ध है और नो सर्वपर्यायों में अर्थात् असर्वपर्यायों में–कुछ पर्यायों में वह निबद्ध है[5]।।1।।''

---

1. षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) सूत्र 70, पृ. 51। 2. षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) सूत्र 797 पृ. 564।
3. षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 15, पृ. 3। 4. षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 15, पृ. 3।
5. षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 1, पृ. 4।

यहाँ 'सब द्रव्यों में निबद्ध है।' यह केवल ज्ञानावरण का आश्रय करके कहा गया है। क्योंकि वह तीनों कालों को विषय करने वाली अनंत पर्यायों से परिपूर्ण ऐसे छह द्रव्यों को विषय करने वाले केवलज्ञान का विरोध करने वाली प्रकृति है। 'असर्व–कुछ पर्यायों में निबद्ध है' यह कथन शेष चार ज्ञानावरणीय प्रकृतियों की अपेक्षा कहा गया है।

इत्यादि विषयों का इस अनुयोग में विस्तार है।

2. प्रक्रम अनुयोगद्वार के भी नाम, स्थापना आदि की अपेक्षा छह भेद हैं। द्रव्य प्रक्रम के प्रभेदों में कर्म प्रक्रम आठ प्रकार का है। नोकर्म प्रक्रम सचित्त, अचित्त और मिश्र के भेद से तीन प्रकार का है।

क्षेत्रप्रक्रम ऊर्ध्वलोक, अधोलोक और तिर्यगलोकप्रक्रम के भेद से तीन प्रकार का है। इत्यादि विस्तार को धवला टीका से समझना चाहिए।

3. उपक्रम अनुयोगद्वार में भी पहले नाम, स्थापना आदि से छह भेद किये हैं पुनः द्रव्य उपक्रम के भेद में कर्मोपक्रम के आठ भेद, नो कर्मोपक्रम के सचित्त, अचित्त और मिश्र की अपेक्षा तीन भेद हैं पुनः क्षेत्रोपक्रम–जैसे ऊर्ध्वलोक उपक्रांत हुआ, ग्राम उपक्रांत हुआ व नगर उपक्रांत हुआ आदि।

काल उपक्रम में–बसंत उपक्रांत हुआ, हेमंत उपक्रांत हुआ आदि। यहाँ ग्रंथ में कर्मोपक्रम प्रकृत होने से उसके चार भेद हैं–बंधन उपक्रम, उदीरणा उपक्रम, उपशामना उपक्रम और विपरिणाम उपक्रम।

इसी प्रकार इन सबका इस अनुयोगद्वार में विस्तार है।

4. उदय अनुयोगद्वार में नामादि छह निक्षेप घटित करके 'नोआगमकर्मद्रव्य उदय' प्रकृत है, ऐसा समझना चाहिए।

वह कर्मद्रव्य उदय चार प्रकार का है–प्रकृति उदय, स्थितिउदय, अनुभाग उदय और प्रदेश उदय।

इन सभी में स्वामित्व की प्ररूपणा करते हुए कहते हैं। जैसे–

प्रश्न–पांच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पाँच अंतराय इनके वेदक कौन हैं?

उत्तर–इनके वेदक सभी छद्मस्थ जीव होते हैं।[1] इत्यादि। इस प्रकार से यहाँ संक्षेप में इन अनुयोगद्वारों के नमूने प्रस्तुत किये हैं।

पुस्तक 16–

'कृति, वेदना, स्पर्श, कर्म, प्रकृति, बंधन, निबंधन, प्रक्रम, उपक्रम, उदय ये दश अनुयोगद्वार नवमी पुस्तक से पंद्रहवीं पुस्तक तक आ चुके हैं। अब आगे के 11. मोक्ष, 12. संक्रम, 13. लेश्या, 14. लेश्या कर्म 15. लेश्या परिणाम 16. सातासात 17. दीर्घ-ह्रस्व, 18. भवधारणीय, 19. पुद्गलात्त 20. निधत्तानिधत्त 21. निकाचितानिकाचित 22. कर्मस्थिति 23. पश्चिमस्कंध और 24. अल्पबहुत्व ये 14 अनुयोगद्वार शेष हैं। इस सोलहवीं पुस्तक में इन सबका वर्णन है।

इस ग्रंथ में सूत्र नहीं हैं, मात्र धवला टीका में ही इन अनुयोगद्वारों का विस्तार है।

1. मोक्ष–इसमें श्री मल्लिनाथ भगवान को नमस्कार करके टीकाकार ने मोक्ष के चार निक्षेप कहकर नो आगम द्रव्यमोक्ष के तीन भेद किये हैं–मोक्ष, मोक्षकरण और मुक्त।

जीव और कर्मों का पृथक् होना मोक्ष है। ज्ञान, दर्शन और चारित्र ये मोक्ष के कारण हैं। समस्त कर्मों से रहित अनंत दर्शन, ज्ञान आदि गुणों से परिपूर्ण, कृतकृत्य जीव को मुक्त कहा गया है।[2]

2. संक्रम–अनुयोग द्वार के भी छह भेद करके पुनः कर्मसंक्रम के प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेश संक्रम भेद किये हैं।

विस्तृत वर्णन करते हुए कहा है कि–चार आयु कर्मों का संक्रम नहीं होता है, क्योंकि ऐसा स्वभाव है। आदि।

3. लेश्या–इसके भी नाम लेश्या, स्थापना लेश्या, द्रव्यलेश्या और भावलेश्या भेद किये हैं।

कर्म पुद्गलों के ग्रहण में कारणभूत जो मिथ्यात्व, असंयम और कषाय से अनुरंजित योग प्रवृत्ति होती है उसे नो आगमभाव लेश्या कहते हैं।[3]

---

[1] षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 15, पृ. 285। [2] षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 16।

[3] षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 16, पृ. 485।

भावलेश्या के कृष्ण, नील, कापोत, पीत, पद्म, शुक्ल ये छह भेद हैं।

4. लेश्याकर्म—इसमें छहों लेश्याओं के लक्षण—'चंडो ण मुवइ वेरं' इत्यादि बताये गये हैं।

5. लेश्यापरिणाम—कौन लेश्याएं किस स्वरूप से और किस वृद्धि अथवा हानि के द्वारा परिणमन करती हैं, इस बात के ज्ञापनार्थ 'लेश्या परिणाम' अनुयोगद्वार प्राप्त हुआ है।[1]

इसमें 'षट्स्थान पतित' का स्वरूप कहा गया है।

6. सातासात अनुयोगद्वार—इसके संमुत्कीर्तना, अर्थपद, परमीमांसा, स्वामित्व और अल्पबहुत्व, ऐसे पांच अवान्तर अनुयोगद्वार हैं। समुत्कीर्तना में-एकांत सात, अनेकात सात, एकांत असात और अनेकांत असात।

अर्थ पद में—सातास्वरूप से बांधा गया जो कर्म संक्षेप व प्रतिक्षेप से रहित होकर साता स्वरूप से वेदा जाता है वह एकांतसात है। इससे विपरीत अनेकांत सात है[1] इत्यादि।

7. दीर्घ-ह्रस्व— इन अनुयोगद्वार के भी चार भेद हैं—प्रकृतिदीर्घ, स्थितिदीर्घ, अनुभागदीर्घ और प्रदेशदीर्घ।

आठ प्रकृतियों का बंध होने पर प्रकृति दीर्घ और उनसे कम का बंध होने पर नो प्रकृतिदीर्घ होता है[2]।

ऐसे ही ह्रस्व में प्रकृति ह्रस्व, स्थिति ह्रस्व आदि चार भेद हैं।

एक-एक प्रकृति को बांधने वाले के प्रकृति ह्रस्व है इत्यादि।

8. भवधारणीय—इस अनुयोगद्वार में भव के तीन भेद हैं—ओघभव, आदेशभव और भवग्रहण भव।

आठ कर्मजनित जीव के परिणाम का नाम ओघभव है। चारगति नामकर्मों का या उनसे उत्पन्न जीव परिणामों को आदेश भव कहते हैं।

भुज्यमान आयु को निर्जीण करके जिससे अपूर्व आयु कर्म उदय को प्राप्त हुआ है। उसके प्रथम समय में उत्पन्न 'व्यंजन' संज्ञा वाले जीव परिणाम को अथवा पूर्व शरीर के परित्यागपूर्वक उत्तरशरीर के ग्रहण करने को 'भवग्रहणभव' कहा जाता है। उनमें यहाँ भवग्रहण भव प्रकरण प्राप्त है।[3]

9. पुद्गलात्त—इस अनुयोगद्वार में नाम पुद्गल, स्थापना पुद्गल, द्रव्यपुद्गल और भावपुद्गल ऐसे चार भेद हैं।

यहाँ आत्त-शब्द का अर्थ गृहीत है अतः यहाँ 'पुद्गलात्त' पद से आत्मसात् किये गये पुद्गलों का ग्रहण है। वे पुद्गल छह प्रकार से ग्रहण किये जाते हैं—ग्रहण से, परिणाम से, उपभोग से, आहार से, ममत्व से और परिग्रह से। इत्यादि।

10. निधत्तानिधत्त—इस अनुयोगद्वार में भी प्रकृतिनिधत्त, स्थितिनिधत्त, अनुभागनिधत्त और प्रदेशनिधत्त, ऐसे चार भेद हैं।

जो प्रदेशाग्र निधत्तीकृत हैं—अर्थात् उदय में देने के लिए शक्य नहीं है, अन्य प्रकृति में संक्रमण करने के लिए शक्य नहीं है, किन्तु अपकर्षण व उत्कर्षण करने के लिए शक्य हैं ऐसे प्रदेशाग्र की निधत्त संज्ञा है। अनिवृत्तिकरण गुणस्थान में प्रविष्ट मुनि के सब कर्म अनिधत्त हैं। इत्यादि।

11. निकाचितानिकाचित—इस अनुयोगद्वार में प्रकृति निकाचित आदि चार भेद हैं। जो प्रदेशाग्र, अपकर्षण, उत्कर्षण, संक्रमण और उदय में देने के लिए भी शक्य नहीं हैं वे निकाचित हैं। अनिवृत्तिकरणवर्ती मुनि के सर्वकर्म अनिकाचित हैं। इत्यादि।

12. कर्मस्थिति—इस अनुयोग में जघन्य और उत्कृष्ट स्थितियों के प्रमाण की प्ररूपणा कर्मस्थिति 'प्ररूपणा है,. ऐसा श्री 'नागहस्तीश्रमण' कहते हैं। किन्तु आर्यमंक्षु क्षमाश्रमण का कहना है कि—'कर्मस्थिति संचित सत्कर्म की प्ररूपणा का नाम 'कर्मस्थिति' प्ररूपणा है। यहाँ दोनों उपदेशों के द्वारा प्ररूपणा करना चाहिए। ऐसा श्री वीरसेनस्वामी ने कहा[4] है।

13. पश्चिमस्कंध—इस अनुयोगद्वार में ओघ भव, आदेशभव और भवग्रहण भव ऐसे तीन भेद करके यहाँ भवग्रहण भव प्रकरण प्राप्त है। जो अंतिम भव है उसमें उस जीव के सब कर्मों की बंधमार्गणा, उदयमार्गणा, उदीरणामार्गणा, संक्रममार्गणा और सत्कर्ममार्गणा ये पाँच मार्गणाएं पश्चिम स्कंध अनुयोगद्वार में की जाती हैं।

प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशाग्र का आश्रय करके इन पांच मार्गणाओं की प्ररूपणा कर चुकने पर तत्पश्चात्

---

1. षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 16, पृ. 498। 2. षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 16, पृ. 507।
3. षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 16, पृ. 512। 4. षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 16, पृ. 518।

पश्चिम भव ग्रहण में सिद्धि को प्राप्त होने वाले जीव की यह अन्य प्ररूपणा करना चाहिए[1] इत्यादि।

14. अल्पबहुत्व—इस अनुयोगद्वार में 'नागहस्तिमहामुनि' सत्कर्म की मार्गणा करते हैं और यह उपदेश प्रवाहस्वरूप से आया हुआ परंपरागत है। सत्कर्म चार प्रकार का है—प्रकृतिसत्कर्म, स्थिति सत्कर्म, अनुभाग सत्कर्म और प्रदेश सत्कर्म। इनमें से प्रकृति सत्कर्म के मूल और उत्तर की अपेक्षा दो भेद करके मूल प्रकृतियों के स्वामी को लेकर कहते हैं—"पाँच ज्ञानावरणीय, चार दर्शनावरणीय और पांच अंतराय प्रकृतियों के सत्कर्म का स्वामी कौन है? इनके सत्कर्म के स्वामी सब छद्मस्थ जीव हैं। इत्यादि रूप से अल्पबहुत्व का विस्तार से कथन किया गया है।[2]

इस प्रकार यहाँ सोलहवें ग्रंथ में इन उपर्युक्त कथित शेष 14 अनुयोगद्वारों को पूर्ण किया है।

उपसंहार यह है कि—कृति, वेदना, स्पर्श आदि चौबीस अनुयोगद्वारों में से 'कृति और वेदना' नाम के मात्र दो अनुयोग द्वारों में 'वेदनाखण्ड' नाम से चौथा खण्ड विभक्त है। पुनश्च 'स्पर्श' आदि से लेकर अल्पबहुत्व तक 22 अनुयोगद्वारों में 'वर्गणाखण्ड' नाम से पांचवां खण्ड लिया गया है। यहाँ तक पाँच खंडों की सोलह पुस्तकों में विभक्त किया है। छठे महाबंध खण्ड में सात पुस्तकें विभक्त हैं जो कि हिन्दी अनुवाद होकर छप चुकी हैं।

भगवान महावीर की वाणी से संबंध—इन 'षट्खण्डागम' सूत्रग्रंथराज का भगवान महावीर की वाणी से सीधा संबंध स्वीकार किया गया है। जैसा कि श्री वीरसेनाचार्य ने नवमी पुस्तक मे लिखा है—

"लोहाइरिए सग्गलोगं गदे[3]..........।

इस प्रकरण को मैंने प्रारंभ में ही उद्धृत किया है।

जयउ धरसेणणाहो जेण महाकम्मपयडिपाहुडसेलो। बुद्धिसिरेणुद्धरिओ समप्पिओ पुप्फयंतस्स।।

श्रीधरसेनाचार्य महामुनीन्द्र जयवंत होवें कि जिन्होंने 'महाकर्मप्रकृतिप्राभृत' नाम के शैल-पर्वत को बुद्धिरूपी मस्तक से उद्धृत करके-उठा करके श्रीपुष्पदंत एवं श्री भूतबलि ऐसे दो महामुनियों को समर्पित किया है। अनंतर—

जो टीकाएं उपलब्ध नहीं हैं उनके रचयिता सभी टीकाकारों को मेरा कोटि-कोटि नमन हैं कि जिनके प्रसाद से श्रीवीरसेनस्वामी ने ज्ञान प्राप्त किया होगा। पुनश्च—

श्री वीरसेनस्वामी के हम सभी पर आज अनंत उपकार हैं कि जिनकी इस धवल-शुभ्र-उज्ज्वल-धवलाटीका के किंचित् मात्र अंश को मैंने समझा है।

इसमें पूर्वजन्म के संस्कार, वर्तमान में सरस्वती की महती कृपा, दीक्षागुरु श्री आचार्य देशभूषण जी एवं आर्यिका दीक्षा के गुरु के गुरु इस बीसवीं सदी के प्रथमाचार्य चारित्रचक्रवर्ती श्री शांतिसागराचार्य एवं उनके प्रथम शिष्य पट्टाचार्य श्री वीरसागर जी महाराज (आर्यिका दीक्षा के गुरु) का मंगल आशीर्वाद ही मेरे इस श्रुतज्ञान में निमित्त है, ऐसा मैं मानती हूँ।

आगे भविष्य में मैं इस षट्खण्डागम की शेष 14वीं, 15वीं एवं 16वीं पुस्तकों का भी अध्ययन करके उन पर 'सिद्धान्तचिन्तामणि' टीका लिखकर अपने परिणामों की विशुद्धि को वृद्धिंगत कर सकूँ यही श्री महावीर स्वामी के चरणों में प्रार्थना करती हूँ पुनः इस 'महावीर तीर्थ त्रिवेणी संगम' को भी नमन करती हूँ। अनंतर भावश्रुत की प्राप्ति के लिए महाग्रंथराज 'षट्खण्डागम' को भी अनंतअनंत बार नमस्कार करती हूँ।

अष्टादशमहाभाषा, लघुसप्तशतान्विता।
द्वादशांगमयी देवी, सा चित्ताब्जेऽवतार्यतें[4]।।

* * *

---

[1] षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 16, पृ. 519। [2] षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 16, पृ. 522।
[3] षट्खण्डागम (धवलाटीकासमन्वित) पु. 9, पृ. 133। [4] षट्खण्डागम (सिद्धान्तचिन्तामणिटीकासमन्वित) पु. 1, पृ. 2।

कषाय पाहुड़

–पं. शिवचरनलाल जैन, मैनपुरी

यह ज्ञान-प्रवाद पूर्व की दसवीं वस्तु महाधिकार का तीसरा प्राभृत अधिकार कषायपाहुड़ नाम का है। इस पाहुड़ का ज्ञान ज्ञान आचार्य गुणधर (आज से लगभग 2000 वर्ष पूर्ववर्त्ती) को था। उन्होंने करुणा और वात्सल्य से पूरित होकर भव्य प्राणियों के हित के लिए इस बृहत्यकाय कषाय पाहुड़ के सारांश रूप में अति संक्षिप्त सूत्र शैली में दो सौ तेंतीस गाथाओं में "कषाय पाहुड़" नाम के ही सूत्र ग्रंथ की रचना की थी। कहा जाता है कि उपलब्ध वर्तमान जैन वाङ्मय में यह प्रथम रचना है। इसका संबंध साक्षात् रूप से गौतम गणधर के द्वादशांग श्रुत से है। यह प्रथम लिपिबद्ध षट्खण्डागम के बाद लिपिबद्ध की गई। इसका दूसरा नाम 'पेज्जदोसपाहुड" भी है। 'पेज्ज' का अर्थ राग है तथा "दोस" का अर्थ द्वेष है। राग-द्वेष कषाय का ही विस्तार है अतः कषाय पाहुड़ और पेज्जदोस पाहुड़ एकार्थवाची हैं। पाहुड़ की संस्कृतच्छाया प्राभृत होती है अतः इसे कषायप्राभृत भी कहते हैं। इसके उद् गम के बारे में आ. गुणधर स्वामी ने कहा है–

पुव्वम्मि पंचम्मि दु दसमे वत्थुम्हि पाहुडे तदिए।
पेज्जं ति पाहुडिम्मि दु हवदि कसायाण पाहुडं णाम।।1।।

अर्थ–"ज्ञान प्रवाद नामक पाँचवे पूर्व की दसवीं वस्तु में तीसरा पेज्ज पाहुड है उसे प्राकृत कषायपाहुड़ की उत्पत्ति हुई है "पेज्जदोस पाहुड" का संक्षिप्त नाम पेज्जापाहुड है। वैसे तो वस्तु शब्द शास्त्र अनेक अर्थों में रहता है तथापि प्रकरण वश यहाँ वस्तु शबद वाचक लेना चाहिए। गौतम स्वामी द्वारा रचित मूल कषायप्राभृत के चौबीस अनुयोगद्वार व 16000 पद थे। यह वर्तमान में अनुपलब्ध है। यहाँ मध्यम पद का ग्रहण है। एक मध्यम पद में 16348307888 अक्षर होते हैं अतः मूल कषाय प्राभृत के अक्षरों की संख्या पद संख्या में अक्षर का गुणा करने पर 261572926208000 होती है।

पाहुड़- "पाहुडेत्ति का णिरुत्ती"? जम्हा पदेहिं फुडं तम्हा पाहुड़ं।" -कषायपाहुड चूर्त्रिसूत्र, जयधवला पृ. 297

पाहुड़ का निरूक्त्यर्थ क्या है? जो पदों से स्फुट अर्थात् व्यक्त है वह पाहुड़ है। प्रकृत कषाय पाहुड़ ग्रंथ पन्द्रह अर्थाधिकारों में विभक्त किया गया है। स्वयं गुणधर भट्टारक ने लिखा है–

पेज्जदोसविहत्ती ट्ठिदि-अणुभागे च बंधगे चेय।
वेदग उवजागे वि य चउट्ठाण-वियंजणो चेय।।13।।

सम्मत्त देसविरदी संजम उवसामणा च खवणा च।
दंसण चरित्तमोहे, अद्धा परिमाण णिद्देसो।।14।।

उपरोक्त कषायपाहुड़ की गाथाओं के अनुसार कषाय पाहुड के निम्न पन्द्रह अर्थाधिकार हैं। 1. पेज्जदोसविहत्ती 2. स्थितिविभक्ति 3. अनुभागविभक्ति 4. प्रदेश विभक्तिझीणा-झीणविभक्ति-स्थत्यन्तक 5. बंधक 6. वेदक 7. उपयोग 8. चतुःस्थान 9. व्यंज्जन 10. दर्शनमोहोपशामना 11. दर्शनमोहक्षपणा 12. देशविरति 13.. संयमलब्धि 14. चारित्रमोहोपशमना 15. चारित्रमोह की क्षपणा।

'कषायपाहुड का विषय–

इसका मुख्य विषय कषाय है। जो जीव को कष्ट देता है वह कषाय है। इसके दो रूप है-राग व द्वेष। चारित्र मोह कर्म के उदय से पर पदार्थों में प्रीति भाव राग कहलाता है तथा अप्रीति एवं अरुचि द्वेष कहलाता है। कुल कषाय पच्चीस हैं। सोलह कषाय तथा नौ नौकषाय। अनन्तानुबन्धी, अप्रत्याख्यान, प्रत्याख्यान और संज्वलन के भेदों से क्रोध, मान, माया व लोभ, कुल सोलह कषायें हैं तथा हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसकवेद ये नौ नोकषाय हैं।

जैन परम्परा में जीव और पौद्गलिक कर्म का संबंध अनादि काल से स्वीकार किया है। यह बंधन अविच्छिन्न धारा रूप से है। सारांश यह है कि आत्मा मूल रूप से शुद्ध नहीं है यदि शुद्ध हो, तो उसमें मुक्त आत्मा की तरह विकृति कदापि नहीं हो सकती अतः यह निश्चित होता है कि संसार में अनादि काल से ही जीव कर्मबद्ध एवं अशुद्ध है। उसमें स्व (उपादान) और पर (निमित्त) कारणों से अनेक प्रकार के विकार होते हैं। इनमें सर्वाधिक घातक मोह नाम का विकार है। कारण यह है कि इसी से अन्य विकारों का पोषण होता है तथा मोह के दो रूप हैं-1. मिथ्यात्व 2. कषाय। कषाय से अभिभूत होकर आत्मा लोहे के प्रतप्त लाल गोले के समान विकृत हो जाता है, क्षोभ को प्राप्त हो जाता है जैसे उण्ण लोहे का गोला पानी को चतुर्दिक खींचता है, उसी प्रकार राग-द्वेष से संतप्त आत्मा कर्मों को आकर्षित करता है, अष्ट कर्मों का आस्रवित करता है। मोह के हट जाने पर अन्य विकार धीरे-धीरे निष्प्राण हो जाते हैं। बंध के कारणों में इसी मोह की प्रधानता है। इसके बिना बंध के अन्य कारण अपनी उत्कृष्ट स्थिति या तीव्रतम अनुभाग से कर्मों को नहीं बांध सकते। जैन-ग्रंथों में मोह को कर्मों के राजा के रूप में अंकित किया गया है। इस मोह राजा के बल पर समस्त कर्म सेना में कार्य क्षमता बनी रहती है। इसके अभाव में अन्य कर्म निर्बल पड़ जाते हैं। कहा भी है-"मोहक्षयाज्ज्ञानदर्शनावरणान्तरायक्षयाच्च केवलं"-तत्त्वार्थ सूत्र। मोह कर्म के क्षय होने पर एक साथ शेष तीन घातिया कर्म ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अन्तराय कर्मों का नाश होता है, इससे केवलज्ञान प्रकट होता है।

मोहनीय कर्म के उदय से आत्मा में मोह उत्पन्न होता है। मोहकर्म के दो भेद हैं–1. दर्शन मोहनीय 2. चारित्रमोहनीय। दर्शन मोह के उदय से अतत्त्वश्रद्धान रूप मिथ्या दर्शन होता है तथा चारित्र मोहनीय के उदय से रागद्वेष (कषाय य नोकषाय) उत्पन्न होता है। "कषायपाहुड़" में उपरोक्त रागद्वेष-मोह का वर्णन है अतः कषाय पाहुड़ नाम सार्थक है। क्योंकि कषाय को ही रागद्वेष कहते हैं। राग को पेज्ज तथा द्वेष को दोस कहते हैं अतः इसका नाम "पेज्जदोसपाहुड" भी है अतः बिना पेज्ज के दोस उत्पन्न नहीं हो सकता, अतः द्वेष का मूल राग मानकर इस-ग्रंथ का नाम पेज्जापाहुड़ भी सार्थकता के लिए हुए है।

चूर्णिसूत्रकर्त्ता आ. यतिवृषभ ने कषायों के आठ भेद गिनाये हैं–1. नाम कषाय 2. स्थापना कषाय 3. द्रव्य कषाय 4. भाव कषाय 5. प्रत्यय कषाय 6. समुत्पत्ति कषाय 7. आदेश कषाय 8. रस कषाय। इन आठ भेदों में ऐसे पदार्थों का संग्रह हो जाता है, जिनमें किसी भी दृष्टि से कषाय व्यवहार किया जा सकता है। इनमें भाव कषाय मुख्य कषाय है। इस "कषाय पाहुड़" ग्रंथ में भाव कषाय का तथा इसको उत्पन्न कराने में प्रबल कारण मोहनीय के भेद कषाय द्रव्य कर्म अर्थात् प्रत्यय कषाय का वर्णन है। इससे ज्ञान होता है कषाय स्वतः नहीं होता, अपितु कर्म के उदय से होता है। यदि कषाय बिना कर्म निमित्त के हो जाता हो तो आचार्य इस ग्रंथ में द्रव्य कषाय कर्म का वर्णन न करते। मुख्यतः इस कषायपाहुड़ में चारित्र मोहनीय और दर्शन मोहनीय कर्म का विविध अनुयोग द्वारों में निरूपण है। ज्ञान-प्रवाद पूर्व की परिभाषाओं से यद्यपि सामान्य तौर पर यह ज्ञान नहीं होता कि उसमें भाव कषाय और कषायोत्पादक द्रव्य कर्मों का समावेश है, किन्तु वर्ण्य विषय में ज्ञान के साथ अज्ञान भी सम्मिलित होना अनिवार्य है। अज्ञान की परिणति कषाय के रूप में होती है और इसी हेतु से ज्ञान-प्रवाद के अंगभूत कषायपाहुड़ को रचित किया गया है।

ऊपर कषाय पाहुड़ के 15 अर्थाधिकारों के नाम बतला आये हैं। उनको द्वितीय, तृतीय चतुर्थ आदि रीतियों से आ. यतिवृषभ और आ. वीरसेन स्वामी ने वर्णित किया है। कुछ अधिकारों के नाम आदि प्रकारान्तर से हैं वहाँ देख लेना चाहिए। सब का सारांश एक सा है। पृष्ठ 22 पर प्रकारान्तर से 15 अधिकार लिखे हैं।

यहाँ कषाय पाहुड़ के वर्ण्य विषय को अधिकारों के स्वरूप द्वारा प्रस्तुत किया जाता है।

1. **पेज्जदोसविभक्ति**–कषायप्राभृत का द्वितीय नाम पेज्जदोसप्राभृत की मुख्यता से प्रथम अध्याय का नाम पेज्जदोषविभक्ति रखा गया है। अगले चौदह अधिकारों में जिस प्रकार कषाय की बंध, उदय या सता आदि विविध दशाओं के द्वारा कषायों का विस्तृत व्याख्यान किया गया है, उस प्रकार व्याख्यान करके केवल उदय की प्रधानता से इसमें वर्णन किया गया है। अगले चौदह अधिकारों में कषाय का व्याख्यान करते हुए यथासंभव तीन दर्शनमोहनीय को गर्भित करके और पृथक् रूप से उनकी विविध दशाओं का भी जिस प्रकार व्याख्यान किया है वैसा पेज्जदोषविभक्ति

अधिकार में नहीं किया है, किन्तु यहाँ उसके व्याख्यान को पूर्णतः छोड़ दिया गया है।

2. स्थितिविभक्ति–जब कोई विवक्षित पदार्थ किसी दूसरे पदार्थ को आवृत करता है या उसकी शक्ति का घात करता है तब साधारणतया आवरण करने वाले पदार्थ में आवरण करने का स्वभाव, आवरणकरने का काल, आवरण करने की शक्ति का हीनाधिक भाव तथा आवरण करने वाले पदार्थ का परिमाण, ये चार अवस्थाएं एक साथ प्रकट होती हैं। आत्मा आव्रियमाण है और कर्म आवरण अतः कर्म के द्वारा आत्मा के आवृत होने पर कर्म की भी उक्त चार अवस्थाएं होती हैं, जो कि आवरण करने के पहले समय में ही सुनिश्चित हो जाती हैं। आगम में इनको प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशबंध कहा है। आ. गुणधर स्वामी ने इस अधिकार में प्रकृतिविभक्ति और स्थितिविभक्ति दोनों का वर्णन किया है।

प्रकृति का अर्थ स्वभाव और विभक्ति का अर्थ विभाव है। प्रकृति में द्रव्यविभक्ति के तद्व्यतिरिक्त भेद का जो कर्मविभक्ति भेद है वह लिया गया है। प्रकृतिविभक्ति के दो भेद हैं-1. मूल प्रकृतिविभक्ति 2. उत्तर प्रकृतिविभक्ति। इसमें से मूल प्रकृतिविभक्ति का सादि आदि अनुयोग द्वारों के द्वारा विवेचन किया गया है। उत्तर प्रकृतिविभक्ति के एकैक उत्तरप्रकृतिविभक्ति और प्रकृतिस्थान उत्तर प्रकृतिविभक्ति के दो भेद हैं। जहाँ मोहनीय की अट्ठाईस सत्ताईस आदि प्रकृतिरूप सत्त्वस्थानों का कथन किया है उसे प्रकृतिस्थान उत्तरप्रकृतिविभक्ति कहते हैं। इनमें से एकैकउत्तरप्रकृतिविभक्ति का समुत्कीर्त्तना आदि अनुयोग द्वारों के द्वारा और प्रकृतिस्थान उत्तरप्रकृतिविभक्ति का स्थानसमुत्कीर्त्तना आदि के द्वारा कथन किया है।

जिसमें चौदह मार्गणाओं का आश्रय लेकर मोहनीय के अट्ठाईस भेदों की जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति बताई है, उसे स्थिति-विभक्ति कहते हैं। इसके मूल प्रकृतिस्थितिविभक्ति हैं उनके समूह को मूल प्रकृति कहते हैं। इसकी स्थिति को मूलप्रकृतिस्थिति कहते हैं तथा अलग-अलग मोहनीय कर्म की अट्ठाईस प्रकृतियों की स्थिति को उत्तर प्रकृतिस्थिति कहते हैं। इनमें से मूल प्रकृति स्थितिविभक्ति का सर्वविभक्ति आदि अनुयोग द्वारों के द्वारा कथन किया है और उत्तरप्रकृतिस्थिति का अद्धाच्छेद आदि अनुयोगद्वारों के द्वारा कथन किया है।

3. अनुभागविभक्ति–कर्मों में अपने कार्य करने की जो शक्ति पाई जाती है उसे अनुभाग कहते हैं। इसका विस्तार से इस अध्याय में व्याख्यान है। मूलप्रकृति-अनुभागविभक्ति और उत्तर प्रकृतिअनुभागविभक्ति इन दोनों का क्रमशः संज्ञा आदि अनुयोग द्वारों के द्वारा तथा संज्ञा आदि अधिकारों में कथन किया है।

4. प्रदेशविभक्ति-झीणाझीण-स्थित्यन्तक–प्रदेश विभक्ति के दो भेद हैं-1. मूल प्रकृति 2. उत्तर प्रकृति। इन दोनों का भागाभाग आदि अधिकारों में कथन किया गया है। किस स्थिति में स्थित प्रदेश उत्कर्षण, अपकर्षण, संक्रमण और उदय के योग्य और अयोग्य हैं, इसका झीणाझीण अधिकार में कथन किया गया है। जो प्रदेश ऊपर कहे अवस्थाचतुष्क के योग्य हैं उन्हें क्षीण तथा अयोग्य हैं उन्हें अक्षीण कहते हैं। इस क्षीणाक्षीण का समुत्कीर्त्तना आदि चार अधिकारों में वर्णन है। स्थिति को प्राप्त होने वाले प्रदेश स्थितिक या स्थित्यन्तक कहलाते हैं अतः उत्कृष्ट स्थिति को प्राप्त आदि प्रदेशों का भी इस अधिकार में कथन है।

5. बंधक–बंधक के बंध और संक्रम ये दो भेद हैं। मिथ्यात्वादि कारणों से कर्मभाव के योग्य पुद्गलस्कन्धों का जीव प्रदेशों के साथ एकक्षेत्रावगाह संबंध को बंध कहते हैं। जिस अनुयोगद्वार में इसका कथन है उसे बंध अनुयोग द्वार कहते हैं। इस प्रकार बंधे हुए कर्मों का यथायोग्य अपने अवान्तर भेदों में संक्रांत होने को संक्रम कहते हैं। इसका वर्णन संक्रम अनुयोगद्वार में है। बंध के अकर्मबंध और कर्मबंध दो भेद हैं। इस संपूर्ण विषय का वर्णन इस बंधक अधिकार में है, यह अध्याय बहुत विस्तृत है।

6. वेदक–इस अधिकार में उदय और उदीरणा का वर्णन है। कर्मों का अपने समय पर जो फलोदय होता है उसे उदय कहते हैं और उपायविशेष से उस समय से पूर्व में ही उनका जो फलोदय होता है, उसे उदीरणा कहते हैं, दोनों में ही फल का वेदन होता है इसलिए उदय और उदीरणा दोनों को ही वेदक कहा गया है। इन अधिकार में चार गाथाएँ हैं। यह अधिकार भी बहुत विस्मृत है।

7. उपयोग—इस अधिकार में कषायों के उपयोग का स्वरूप बताया है। इसमें साथ गाथाएँ हैं। इनमें बताया गया है कि एक जीव के एक कषाय का उदय कितनी काल तक रहता है? किस जीव के कौन सी कषाय बार-बार उदय में आती है? एक भव में एक कषाय का उदय कितनी बार होता है व कितने भवों तक रहता है? आदि कषाय विषयक बातों का विवेचन इस अधिकार में है।

8. चतुःस्थान—घातियाकर्मों की शक्ति की अपेक्षा लता आदि रूप चार स्थानों का विभाग किया गया है, उन्हें क्रमशः एक स्थान, द्विस्थान, त्रिस्थान और चतुःस्थान कहते हैं। इस अधिकार में क्रोध, मान, माया, लोभ के उन चारों स्थानों का वर्णन है इसलिए इस अधिकार का नाम चतुःस्थान है। इसमें सोलह गाथाएँ हैं।

9. व्यंजन—इस अधिकार में पाँच गाथाओं के द्वारा क्रोध, मान, माया, लोभ के पर्यायवाची शब्दों को बताया गया है। जैसे क्रोध के रोष, द्वेष तथा मान के मद, दर्प स्तंभ आदि। इनके द्वारा कषायों में समाविष्ट भावों का ज्ञान होता है। कषाय का स्वरूप स्पष्ट हो जाता है।

10. दर्शनमोहपोशाभना—दर्शनमोह की उपशामना के लिए जीव तीन करण करता है-अधःकरण, अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण। इसका वर्णन इस अधाय में सोलह गाथाओं में है। पहली गाथा में प्रश्न किया गया है कि दर्शनमोह की उपशामना करने वाले जीव के परिणाम कैसे होते हैं, उनके कौन योग, कौन कषाय, कौन उपयोग, कौन लेश्या और कौन वेद होता है आदि। इन सब प्रश्नों का समाधान करके चूर्णिसूत्रकार ने तीनों करणों का स्वरूप तथा उनमें होने वाले कार्यों का विवेचन किया है। इसके बाद पन्द्रह गाथाओं में दर्शनमोह के उपशामक की विशेषाताएं तथा सम्यग्दृष्टि का स्वभाव आदि बताया है।

11. दर्शनमोह की क्षपणा—इस अधिकार के प्रारंभ में पाँच गाथाओं द्वारा बताया गया है कि दर्शनमोह की क्षपणा का प्रारंभ कर्मभूमिज मनुष्य करता है। उसके बाद के तीन भवों तक मोक्ष प्राप्त करता है। इस क्षपणा का काल अन्तर्मुहूर्त होता है तथा प्रारंभ के बाद के तीन भवों तक मोक्ष प्राप्त करता है। इस क्षपणा के लिए भी तीन करण होते हैं। इन सबका विस्तार से वर्णन इसमें है।

12. देशविरत—इस अधिकार में संयमासंयमलब्धि का वर्णन है। अप्रत्याख्यानावरण कषाय के उदयाभाव से देशचारित्र को प्राप्त करने वाले जीव के जो विशुद्ध परिणाम होते हैं, उन्हें संयमासंयम लब्धि कहते हैं। इस अधिकार में अधःकरण और अपूर्वकरण में होने वाले कार्यों का विवेचन स्वरूप एक ही गाथा है।

13. संयम लब्धि—जो गाथा 12वें देशविरत अधिकार में है वही इस अधिकार में भी है। संयमासंयलब्धि के मान ही विवक्षित संयमालब्धि में भी दो ही करण होते हैं, जिनका विवेचन संयमासंयमलब्धि के समान ही किया गया है। अन्त में संयमलब्धियुक्त जीवों को आठ अनुयोगद्वारों से बताया है।

14. चारित्र मोहनीय की उपशामना—इस अधिकार में आठ गाथाएं हैं। चार गाथाओं के द्वारा उपशामक का निरूपण किया गया है और चार गाथाओं द्वारा उपशामक के पतन का निरूपण किया गया है, जिसमें प्रतिपात के भेद आदि का सुन्दर विवेचन है।

15. चारित्रमोह की क्षपणा—यह अधिकार बहुत विस्तृत है। इसमें क्षपकश्रेणी का विवेचन विस्तार से किया गया है। अधःकरण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण के बिना-चारित्र मोह का क्षय नहीं हो सकता है अतः प्रारंभ में चूर्णिसूत्रकार ने इन करणों के कार्य का वर्णन किया है पश्चात् क्षपणा का विस्तृत वर्णन है। इस अध्याय में मूल 28 गाथाएं तथा 86 भाष्य गाथाएं हैं। कुल एक सौ ग्यारह गाथाएं है। चारित्रमोह के क्षय से लेकर, द्वितीय शुक्लध्यान के बल से ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अन्तराय का नाश करके जीव सर्वज्ञ होकर विहार करता है। तदनन्तर अघातिया कर्मों का नाशकर मोक्ष प्राप्त करता है। यह सम्पूर्ण विषय पन्द्रहवें अधिकार का है।

उपरोक्त प्रकार संक्षेप में ये अधिकार कषाय प्राभृत में वर्णित हैं।

कषाय पाहुड़ की रचना शैली-सामान्यतया शास्त्र रचना के प्रारंभ में मंगलाचरण का विधान है। कहा—

२-५३

नास्तिकत्वपरीहारः शिष्टाचारप्रपालनम्।
पुण्यावाप्तिश्च निर्विघ्न शास्त्रादावाप्तसंस्तवात्।

आ. गुणधर ने कषाय पाहुड़ के प्रारंभ में तथा उसकी वृत्ति चूर्णिसूत्रों के प्रारंभ में आ. यतिवृषभ ने मंगल नहीं किया है। यह विशेषता है। इस विषय में आ. वीरसेन स्वामी लिखते हैं कि-"संपहि गुणहरभडारएण गाहासुत्ताणमादीए जइवसहत्थेरेण वि चुण्णसुत्तरस्स आदीए मंगलं-किण्ण कयं? ण एस दोसो मंगलं हि कीरदे पारद्धक-ज्जविग्घयरकम्मविणासणट्ठं। तं च परमागमुवजोगादो चेव णस्सदि।"

प्रश्न-गुणधर भट्टारक ने गाथासूत्रों के आदि में तथा यतिवृषभ स्थविर ने भी चूर्णिसूत्रों के आदि में मंगल क्यों नहीं किया? समाधान इस प्रकार है-यह कोई दोष नहीं क्योंकि प्रारंभ किए हुए कार्य में विघ्नों को उत्पन्न करने वाले कर्मों का विनाश करने के लिए मंगल किया जाता है और वे कर्म परमागम के उपयोग से ही नष्ट हो जाते हैं। यहाँ यह बात स्पष्ट हो जाती है कि कषाय पाहुड के समान कतिपय अन्य परमागम ग्रंथों, जिनका संबंध साक्षात् रूप से भगवान् की वाणी से हैं, में भी इसी हेतु से मंगलाचरण नहीं किया गया है। शेष ग्रंथों में मंगलाचरण अनिवार्य हैं।

प्रकृत ग्रंथ की रचना गाथा सूत्रों में की गई है। वे गाथा सूत्र अत्यन्त संक्षिप्त हैं और उनमें प्रतिपाद्य विषय की सूचना मात्र है। यह गुणधराचार्य का उद्भट बुद्धिकौशल और अगाध आगम ज्ञान एवं अपार पाण्डित्य ही है कि विशालकाय 16000 पदों को मात्र 233 लघुकाय गाथाओं में निबद्ध कर दिया है। उन्होंने ग्रंथ लिखते समय तो 108 गाथाओं की सूचना दी थी किन्तु अधिकारों से अतिरिक्त प्रतिपाद्य विषय संबंधी कुछ सहायक गाथाओं को लिखना भी उन्होंने उपयोगी समझा। वे गाथाएं भाष्य गाथाएं कहीं जा सकती हैं अतः कुल 233 गाथाएं रचित हुई। बहुत सी गाथाएं केवल प्रश्नात्मक हैं, यथा गाथा नं. 22, यदि चूर्णिसूत्रकार चूर्णिसूत्रों के द्वारा इनका हार्द न खोलते तो इन गाथा सूत्रों का रहस्य उन्हीं में छिपा रह जाता। विस्तृत टीकाओं के पढ़ने से ज्ञान होता है कि ग्रंथकार ने गागर में सागर भर दिया है। यह उनके प्रवचनवात्सल्य और अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग का परिणाम है।एक अति विशाल प्राभृत को जिसके अक्षरों की संख्या पन्द्रह अंकों में है, मात्र 233 गाथाओं में गूँथे जाने का जो अति दुरूह एवं क्लिष्ट कार्य गुणधर भट्टारक ने किया है वह अनुपमेय है। इसका दूसरा उदाहरण नहीं मिलता। इस पर चूर्णिसूत्र, उच्चारणाएं बृहत्काय साठ हजार श्लोक प्रमाण जल धवला लिखी गई है। इससे ज्ञात होता है कि गुणधर स्वामी का उद्देश्य विलुप्त होते हुए पेज्जदोसप्राभृत का उद्धार करना था। हम पर उनका असीम उपकार है कि उन्होंने आज हमें उस ग्रंथराज का स्वाद लेने का अवसर दिया है। निर्ग्रन्थ दिगम्बर मुनिराजों का स्वभाव करुणामय होता है। इस ग्रंथ में दो प्रकार की गाथाएं हैं-सूत्र व भाष्य। उन्हें जहाँ आवश्यक प्रतीत हुआ वहाँ भाष्य गाथाएं लिखीं हैं। रचना शैली गूढ़ होते हुए भी क्रमिक एवं संगत है। कथन सीधे रूप में किया गया है।

कषायप्राभृत की टीकाएँ—इन्द्रनन्दि के श्रुतावतार में लिखा है कि गुणधर आचार्य ने "कषायप्राभृत की रचना करके नागहस्ती तथा आर्यमंक्षु आचार्य को उनका व्याख्यान किया। उनके पास में कषायप्राभृत को पढ़कर आचार्य यतिवृषभ ने उस छः हजार प्रमाण चूर्णिसूत्रों की रचना की। यतिवृषभ आचार्य ने उन चूर्णिसूत्रों का अध्ययन करके उच्चारणाचार्य ने बारह हजार प्रमाण उच्चारणा सूत्रों की रचना की। इस प्रकार कषायप्राभृत उपसंहृत किया गया। षट्खण्डागम और कषायप्राभृत ये दोनों ही सिद्धान्त ग्रंथ ग्रहपरिपाटी से कुण्दकुण्द नगर में श्री पद्मनन्दि मुनि का प्राप्त हुए। उन्होंने षट्खण्डागम के आदि के तीन खण्डों पर बारह हजार प्रमाण परिकर्म नाम का टीकाग्रंथ लिखा। कतिपय काल व्यतीत होने पर शामकुण्ड नाम के आचार्य ने दोनों आगमों को जानकर महाबंध नाम के छठे खण्ड को छोड़कर शेष दोनों ग्रंथों पर बारह हजार प्रमाण प्राकृत, संस्कृत तथा कन्नड़ भाषा से मिश्रित पद्धति रूप ग्रंथ की रचना की। उसके बाद तुम्बलूर आचार्य ने षष्ठ खण्ड के सिवा पाँचों खण्डझें पर तथा कषायप्राभृत पर कर्णाटक भाषा में 84 हजार प्रमाण चूड़ामणि नाम की महती व्याख्या रची। उसके कुछ काल बाद स्वामी समतभद्र हुए। उन्होंने षट्खण्डागम के प्रथम पाँच खण्डों पर अति सुन्दर संस्कृत भाषा में 48 हजार श्लोक प्रमाण टीका की रचना की। जब वे कषायप्राभृत पर व्याख्या लिखने को तैयार हुए तो एक अन्य आचार्य ने उन्हें ऐसा करने से रोक दिया, क्या कारण रहा होगा, यह कहना संभव नहीं है-संभवतः

आयु कम बची हो और वे इस अल्पावधि में टीका सम्पूर्ण न कर सकते हों।

आगे चलकर वप्पदेवाचार्य ने षट्खण्डागम के प्रथम पाँच खण्डों पर व्याख्याप्रज्ञप्ति नाम की तथा कषायप्राभृत पर भी टीका लिखी। इसका प्रमाण 60 हजार श्लोक था। यह प्राकृत भाषा में थी तथा छहे खण्ड महाबंध पर आठ हजार श्लोक प्रमाण टीका लिखी। उसके बाद कितना ही काल व्यतीत हो जाने पर चित्रकूटपुर में निवास करने वाले एलाचार्य सिद्धान्तों के ज्ञाता हुए। उनके पास में सकल सिद्धान्तों का अध्ययन करके श्री वीरसेन स्वामी ने वाटग्राम में आनतेन्दु के द्वारा बनवाये गये चैत्यालय में ठहर कर व्याख्याप्रज्ञप्ति नाम की टीका को पाकर षट्खण्डागम पर 72 हजार श्लोक प्रमाण धवला टीका की रचना की तथा कषायप्राभृत की चार विभक्तियों पर बीस हजार श्लोक प्रमाण "जय धवला" नाम की टीका लिखी। इसके पश्चात् वीरसेन स्वामी का स्वर्गवास हो गया। तब उनके शिष्य जिनसेन स्वामी ने शेष कषाय पाहुड़ पर चालीस हजार श्लोक प्रमाण उपरोक्त जयधवला का अवशिष्ट भाग लिया। ये दोनों मिलाकर 60 हजार श्लोक प्रमाण हैं।

श्रुतावतार के उपरोक्त वर्णन के आधार पर तथा अन्य आधार पर कषायपाहुड़ की कुल निम्न टीकाएं स्वीकृत हैं।

1) चूर्णिसूत्र – आचार्य यतिवृषभ

2) उच्चारणावृत्ति – आचार्य उच्चारणाचार्य

3) पद्धतिरूप टीका – आचार्य शामकुण्ड

4) चूडामणि – आचार्य तुम्बलूर

5) व्याख्याप्रज्ञप्ति – आचार्य बप्पदेव

6) (उच्चारणा वृत्ति) जय धवला – आचार्य वीरसेन एवं आचार्य जिनसेन

इनके अतिरिक्त अन्य टीकाएं भी थीं। जयधवला के आधार से ऐसा ज्ञान होता है। मूल कषायपाहुड़, चूर्णिसूत्र, उच्चारणा तथा जयधवला वर्तमान में उपलब्ध हैं इन सबको ही सिद्धान्त ग्रंथ समझना चाहिए, स्वयं वीरसेनाचार्य ने जयधवला को सिद्धान्त ग्रंथ बताया है। मूल कषाय पाहुड का रचना काल प्रथम शताब्दी ज्ञात होता है, शेष टीकाएं मूल ग्रंथ के बाद से लेकर आठवीं-नवमीं शताब्दी तक रचित की गई है।

कुल उपलब्ध जैन साहित्य में षट्खण्डागम और कषायपाहुड़ अपनी-अपनी टीकाओं सहित सिद्धान्त ग्रंथों के नाम से विख्यात हैं। ये ग्रंथ दक्षिण भारत में मूडबिद्री नामक स्थान में अधिष्ठित थे। इसी शताब्दी में पं. श्री फूलचंद जी, श्री महेन्द्र कुमार जी; श्री कैलाशचंद जी, डा. हीरालाल जी और ए.एन. उपाध्ये ने इनका हिन्दी अर्थ के साथ सम्पादन किया है। धवला टीकां जैन श्रमण संस्कृति संरक्षक संघ सोलापुर से प्रकाशित हुई है, जयधवला भा.दि. जैन संघ चौरासी मथुरा से तथा महाधवला टीका (षष्ठ खण्ड) की भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली से प्रकाशित हुई है। इस महत्कार्य की जितनी प्रशंसा की जाय, थोड़ी है।

उपरोक्त कषाय प्राभृत पर चर्चा की गई। वर्तमान में "ज्ञानप्रवाद पूर्व" तो अप्राप्त है, उसके धारक मुनिराज नहीं हैं। केवल यह कषाय प्राभृत का सारांश है इसका विशद विवेचन टीकाओं में है। इससे ही संतोष करके ज्ञान के स्वरूप का अनुमान कर सकते हैं तथा रसवास्वादन कर सकते हैं।

* * *

> महावीर का जीवन अनन्तवीर्य से ओत-प्रोत है। अहिंसा का प्रयोग उन्होंने स्वयं अपने ऊपर किया और फिर सत्य और अहिंसा के शाश्वत धर्म को सफल बनाया। जो काल को भी चुनौती देते हैं उन भगवान को 'जिन और वीर' कहना सार्थक है। आज के लोगों को उनके आदर्श की आवश्यकता है।
>
> -डॉ. फर्नेंडो बेल्लिनी फिलिप (इटली)

'दिव्य-औदारिक व्यक्तित्व महावीर'

(संस्कृत पुराणों के परिप्रेक्ष्य में)

—डॉ. संगीता मेहता, इंदौर (म.प्र.)
स.प्रा.-संस्कृत शा. कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय

पुराण भारतीय संस्कृति की आधारशिला है। पुराणों में इतिहास, काव्य और पुरातत्त्व का सम्मिश्रण होता है। विष्णु पुराण में पुराण को पंचलक्षण समन्वित माना गया है, जिनमें सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश, मन्वन्तर और वंशानुचरित आते हैं।

'सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च।
वंशानुचरितं चैव पुराणं पञ्च लक्षणम्'।।

जैन पुराणकारों ने भी कुछ परिवर्तन के साथ पुराण के इन लक्षणों का पालन किया है। जैनधर्म विश्व को जड़ चेतन रूप से आदि अनन्त मानता है, किन्तु उसका विकास कालचक्र के आरोह-अवरोह से परिवर्तनशील है। अतः जैन पुराणों में सर्ग और प्रतिसर्ग के स्थान पर विश्व का यही स्वरूप तथा कालचक्र के आरों का उत्सर्पिणी अवसर्पिणी रूप परिवर्तन एवम् लोक व्यवस्था में परिवर्तन का विवरण मिलता है। वंशों, मनुओं (कुलकरों) तथा वंशानुचरितों का भी जैन पुराणों में परम्परागत वर्णन है।

जैन पौराणिक साहित्य अत्यन्त समृद्ध है। संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, तमिल, कन्नड़, हिन्दी आदि अधिकांश भाषाओं में शताधिक पुराणों की रचना की गई है। इन पुराणों में 24 तीर्थंकर, 12 चक्रवर्ती, 9 बलदेव, 9 वासुदेव तथा 9 प्रतिवासुदेव प्रभृति त्रेसठशलाका पुरुषों का जीवन चरित वर्णित है। जैनधर्म में वीरपूजा की मान्यता है। इसमें अंतिम तीर्थंकर भगवान वर्धमान को वीर तथा महावीर नाम से सम्बोधित किया है तथा सम्मानपूर्वक पुराणों की पीठिका पर उनके चरित को प्रतिष्ठित किया है।

समृद्ध जैन संस्कृत साहित्य में त्रेसठशलाका पुरुषों के अंतर्गत तथा कतिपय पुराणों में स्वतंत्र रूप से भी वर्धमान महावीर के अलौकिक चरित का उदात्त वर्णन किया गया है। वर्धमान महावीर के चरित वर्णन से सम्बद्ध संस्कृत पुराणों में आचार्य रविषेण कृत 'पद्मपुराण', आचार्य जिनसेन प्रणीत 'हरिवंशपुराण', आचार्य जिनसेन एवम् गुणभद्र कृत 'महापुराण', श्रीचन्द्र कृत 'पुराणसार', मल्लिषेण प्रणीत 'महापुराण', आचार्य हेमचन्द्र प्रणीत 'त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र', कवि अमरचन्द्र कृत 'चतुर्विंशतिजिनचरित', दामनन्दि कृत 'पुराणसारसंग्रह', पं. आशाधर प्रणीत 'त्रिषष्ठिस्मृतिशास्त्र', भट्टारक सकलकीर्ति कृत 'पुराणसारसंग्रह' एवं 'उत्तरपुराण', केशवसेन तथा प्रभाचन्द्र कृत 'कर्णामृत पुराण', मेरुतुंग प्रणीत 'महापुराण' एवं उपाध्याय पद्मसुन्दर प्रणीत 'रायमल्लाभ्युदय' नामक पुराण उल्लेखनीय हैं। इन पुराणों में पद्मपुराण, हरिवंशपुराण तथा उत्तरपुराण विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

आचार्य रविषेण कृत 'पद्मपुराण' के द्वितीय पर्व में भगवान महावीर का चरित वर्णित है। इसमें वर्धमानमहावीर के शैशवकालीन अनेक अलौकिक कार्यों का वर्णन है।[1] इसमें भगवान महावीर वीतराग सर्वज्ञ महात्मा, उत्तम सार्थवाह, लोक मंगलकारी व्यक्तित्व के रूप में चित्रित हैं। इसी संदर्भ में आचार्य रविषेण ने महावीर के समवसरण[2] एवं धर्मोपदेशों का भी वर्णन किया है।[3] धर्मोपदेश सुनकर अनेक लोगों ने अणुव्रत धारण किये, संसार से भयभीत अनेक लोगों ने दीक्षा ग्रहण की, सम्यग्दर्शन धारण किया और अनेक लोगों ने स्वसामर्थ्यानुसार पाप कर्मों का त्याग किया।[4]

पद्मपुराण के बीसवें पर्व में त्रेसठशलाकापुरुषचरित वर्णन के प्रसंग में जैनधर्म के चौबीसवें तीर्थंकर वर्धमान महावीर का इतिवृत्तात्मक जीवनचरित वर्णित है। तदनुसार वर्धमान महावीर के पूर्वभव का नाम प्रोष्ठिल, पूर्वभव की नगरी का नाम छत्राकासुर एवं पिता का नाम पुष्पोत्तर था।[5] भगवान महावीर की जन्मनगरी कुण्डलपुर, जन्म नक्षत्र उत्तराफाल्गुनी, माता-पिता का नाम प्रियकारिणी एवं सिद्धार्थ, वैराग्यवृक्ष सालवृक्ष एवं मोक्षस्थान पावापुर है[6]। तीर्थंकर पार्श्वनाथ के ढाई सौ वर्ष पश्चात् भगवान महावीर का जन्म हुआ। वे सात हाथ उन्नत थे एवं उनकी आयु बहत्तर वर्ष थी।[7]

आचार्य जिनसेन कृत 'हरिवंशपुराण' के द्वितीय एवं तृतीयसर्ग में भी वर्धमान महावीर का इतिवृत्त वर्णित है। तदनुसार वर्धमान महावीर ने तीस वर्ष की अवस्था में दीक्षा ग्रहण कर साढ़े बारह वर्ष तक कठोर तप किया और

ऋजुकूला नदी के तट पर कैवलज्ञान प्राप्त किया। 66 दिन तक मौन विहार[8] के पश्चात् राजगृह के विपुलाचल पर्वत पर समवसरण की रचना हुई। देवों के मध्य महावीर ग्रहों के मध्य चन्द्रमा के समान सुशोभित हो रहे थे। इन्द्रभूति, अग्निभूति, वायुभूति एवं कौण्डिन्यादि पण्डित अपने पाँच-पाँच सौ शिष्यों सहित वहाँ आये और दीक्षा ग्रहण की। राजा चेटक की पुत्री चन्दना भी आर्यिका होकर गणिनी हुई। श्रावण कृष्ण प्रतिपदा के दिन अभिजित नक्षत्र में वर्धमान महावीर की प्रथम देशना हुई। उसमें द्वादश अंगों, चौदह पूर्वों, चूलिकाओं, अंगप्रविष्ट और अंगबाह्यश्रुत का वर्णन, गुणस्थान, मार्गणा, जीव समास तथा जीवाजीवादि तत्त्वों, श्रमण धर्म एवं मुनि धर्म का निरूपण किया। भगवान महावीर के आर्यखण्ड संबंधी देशों में विहार, चौंतीस अतिशय, अष्ट प्रातिहार्य, गणधर तथा अन्य शिष्य समूह का वर्णन किया गया है।

आचार्य जिनसेन तथा आचार्य गुणभद्र प्रणीत 'महापुराण' में 76 पर्व हैं। यह दो भागों में विभक्त है। महापुराण के 1 से 47 पर्व तक की रचना आदि पुराण है। इसके रचयिता आचार्य जिनसेन हैं। 48 से 76 तक का रचना उत्तर पुराण के नाम से अभिहित है। इसके रचयिता आचार्य गुणभद्र हैं। गुणभद्र कृत 'उत्तरपुराण' के 74वें पर्व में वर्धमान महावीर का जीवनवृत्त वर्णित है। इसमें वर्धमान महावीर के पुरुरवा भील से लेकर 33 पूर्वभवों का वर्णन किया गया है।[9] चैत्र शुक्ल त्रयोदशी को अर्यमा के शुभ योग में वर्धमान महावीर का जन्म नृप सिद्धार्थ की रानी प्रियकारिणी के गर्भ से हुआ। शैशवकाल में ही श्रीवर्धमान ने 'सन्मति' एवं 'महावीर' नाम प्राप्त किये।[10] कुमारकाल व्यतीत कर तीस वर्ष की अवस्था में दीक्षा ग्रहण की। तपश्चरण काल में रुद्र द्वारा असह्य उपसर्ग करने पर अविचलित रहे। तब रुद्रदेव ने 'महति' एवं 'महावीर' नाम से विभूषित किया।[11] साढ़े बारह वर्ष तक कठोर तप कर वैशाख शुक्ला दशमी को केवलज्ञान प्राप्त किया।[12] चौंतीस अतिशयों से सुशोभित वर्धमान महावीर परमेष्ठी कहलाने लगे और उन्हें परमात्म पद की प्राप्ति हो गई। समवसरण सभा में गौतम इन्द्रभूति द्वारा पूछे गये प्रश्नों के उत्तर के रूप में वर्धमान महावीर ने जीवाजीवादि-तत्त्वों की व्याख्या की। 76वें पर्व में गुणभद्राचार्य ने भगवान महावीर की शिष्य परम्परा का उल्लेख किया है।[13]

इस प्रकार आचार्य रविषेणकृत पद्मपुराण, जिनसेन कृत हरिवंशपुराण, गुणभद्र प्रणीत उत्तरपुराण में वर्धमान महावीर के उदात्त चरित का इतिवृत्तात्मक वर्णन मिलता है। उनका व्यक्तित्व अलौकिक था। वे वीर, निर्भय, साहसी, वीतरागी, उपसर्ग एवं परीषहजयी, उग्र तपस्वी, लोक कल्याणकारी, महान उपदेशक तथा दार्शनिक थे। उनकी अनेक चारित्रिक विशेषताओं का प्रसंगोपात्त विवरण प्रस्तुत है–

अलौकिक व्यक्तित्व–

वर्धमान महावीर के गर्भावतरण के छह माह पूर्व से ही पृथ्वी पर रत्नों की वृष्टि होने लगी।[14] जन्म होते ही देवलोक में देवेन्द्रों के सिंहासन एवं मुकुट कांपने लगे एवं शंख, भेरी, सिंह एवं घण्टानाद होने लगा।[15] दशों दिशाएं प्रकाशित हो गई स्वर्ग से सौधर्मादि देव आये और इन्द्र ने सुमेरु पर्वत पर बालक वर्धमान का जन्माभिषेक किया उन्हें आभूषणों से विभूषित किया और वीर और वर्धमान नामकरण किया।[16] बालक वर्धमान के दर्शनमात्र से ही संजय एवं विजय नामक मुनियों का संशय दूर हो गया अतः उन्होंने 'सन्मति'[17] नाम से विभूषित किया।

गर्भ एवं जन्म के समय ही नहीं अपितु वर्धमान महावीर को विरक्त जानकर लौकान्तिक देवों के साथ सौधर्मेन्द्र उनकी स्तुति एवं अभिषेकादि क्रियाओं को सम्पन्न कर दीक्षाकल्याणक मनाते हैं।[18] कैवल्य प्राप्ति होने पर ज्ञानकल्याणकोत्सव[19] सम्पन्न कर वैभवयुक्त समवसरण की रचना करते हैं। भगवान के विहार के समय दो सौ योजन तक दुर्भिक्ष, अतिवृष्टि, अनावृष्टि आदि संकट नहीं होते थे, समस्त जीवों में मैत्री भाव रहता था, विहार के अनुकूल मंद-मंद वायु प्रवहित होती, वृक्ष सभी ऋतुओं के फलफूल धारण करते, पवनदेव एक योजन पर्यन्त भूमि को धूलि, पाषाण एवं कण्टक रहित करते, स्तनितकुमार तथा मेघकुमारादि देव बिजली की माला से शोभा बढ़ाते, भूमि को सुगंधित जल से सींचते थे। भगवान आकाश में विहार करते थे। उनके विहार के समय देवगण उनके चरणों के नीचे अत्यन्त कोमल कमलों की रचना करते थे, आकाश शरद ऋतु के तालाब के समान निर्मल एवं दिशाएं धूमादि दोषों से रहित अत्यन्त सुंदर लगती थीं।[20] भगवान के उपदेशों को सुनने देव, दानव, मनुष्य एवं पशु-पक्षी सभी अपना वैरभाव भूलकर आते थे।[21]

भगवान के निर्वाण के अवसर पर भी चारों निकाय के देवगण आकर निर्वाण कल्याणकोत्सव मनाते हैं। भगवान

के निर्वाण कल्याणक की भक्ति से युक्त संसार के प्राणी आज भी दीपमालिकाओं द्वारा उत्सव मनाते हैं।[22] इस प्रकार पुराणों में सर्वत्र महावीर के अलौकिक व्यक्तित्व का दिग्दर्शन होता है।

वीर, निर्भय और साहसी–

जैन संस्कृत पुराणों में वर्धमान महावीर की वीरता, निर्भयता एवं साहस के अनेक उदाहरण मिलते हैं। आठ वर्ष की अवस्था में उनके साहस की परीक्षा लेने के लिए आये हुए संगमदेव ने उनकी वीरता और धैर्य से प्रसन्न होकर उन्हें 'महावीर' नाम से विभूषित किया।[23]

दीक्षोपरान्त वे एकान्त दुर्गम स्थानों में निवास करते थे। शूरवीरता, एकान्तवास एवं वन में निवास इन तीन विशेषताओं में वे सिंहवृत्ति का अनुकरण करते थे।[24]

यथा–**शौर्येकत्व वनस्थानैरन्वयान्मृगविद्विषम्।** (उत्तरपुराण 74/316)

रुद्र कृत भयंकर उपर्सग भी वर्धमान महावीर की समाधि भंग न कर सके। उनके साहस को देखकर दुष्ट रुद्र ने मात्सर्य त्यागकर उन्हें 'महति' और 'महावीर' नामों से विभूषित किया।[25]

वीतरागी–

वर्धमान महावीर अनासक्त एवं वीतरागी थे। जल में रहते हुए भी उससे निर्लिप्त कमल की भांति संसार में रहते हुए भी सांसारिक विषयों से अनासक्त ही रहे।[26] सिंह के कुटिल नखों में न ठहर सकने वाले मोती के समान राजकुमार वर्धमान का मन चिरकाल तक भोगों में नहीं ठहर सका।[27] वे आजीवन अविवाहित ही रहे।[28] स्वयं बुद्ध वर्धमान महावीर बिजली की चमक के समान समस्त संसार को क्षण-भंगुर जानकर विरक्त हो गये।

विद्युद्विलसिताकारं ज्ञात्वा यः सर्वसंपदम् ।
प्रवव्राज स्वयंबुद्धः कृतलौकान्तिकागमः ।। पद्मपुराण 2/85

उपसर्ग एवं परीषहजयी–

बारह वर्ष के तपश्चरण काल में जितेन्द्रिय महावीर ने अनेक उपसर्गों पर विजय प्राप्त की तथा शीत उष्ण, आंधी वर्षा आदि परिषहों को समभाव से सहन किया।

एक बार उज्जयिनी के अतिमुक्तक नामक श्मशान में प्रतिमायोग से विराजमान वीर वर्धमान को देख महादेव नामक रुद्र ने अपनी दुष्टता से उनके धैर्य और स्थैर्य की परीक्षा लेनी चाहिए। रात्रि में अनेक बड़े-बड़े बेतालों का रूप बनाकर भयंकर और वीभत्स क्रियाओं से उपसर्ग किये, कठोर शब्द, भीषण अट्टहास विकराल दृष्टि तथा सर्प हाथी, सिंह, अग्नि, वायु आदि के साथ भीलों की सेना बनाकर उपसर्ग किये। किन्तु उन्हें विचलित करने में वह रुद्र समर्थ नहीं हुआ। अन्त में उसने 'महति' और 'महावीर' इन दो नामों से विभूषित कर भगवान की अनेक प्रकार से स्तुति की।[29]

उग्रतपस्वी–

तपो द्वादश वर्षाणि चकार द्वादशात्मकम् -हरिवंशपुराण-2/56

वर्धमान महावीर ने अनेक बाह्य आभ्यन्तर तप किये। उनका जीवन तपोमय था। दुर्लंघ्य पर्वत, निर्जन नदी तट, बीहड़ वन एवम् सुनसान श्मशान भूमि आदि स्थानों पर साढ़े बारह वर्ष तक आत्मोदय की प्राप्ति हेतु कठोर तपश्चरण किया। अगणित उपसर्ग एवम् परीषहों को समभाव से सहन किया।

महान उपदेशक एवम् दार्शनिक–

वर्धमान महावीर ने सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवम् सम्यक्चारित्र की आराधना कर समस्त कर्मों का क्षय कर लोकालोक को प्रकाशित करनें वाला केवलज्ञान प्राप्त किया और लोक कल्याण के लिए धर्मतीर्थ का प्रवर्तन किया।[30]

आचाराङ्गस्य तत्वार्थं तथा सूत्रकृतस्य च।
जगाद भगवान् वीरः संस्थानसमवाययोः।। हरिवंशपुराण-2/92

वर्धमान महावीर ने आचारांग, सूत्रकृतांग, स्थानांग, समवायांग, व्याख्याप्रज्ञप्ति, ज्ञातधर्म कथा. श्रावकाध्ययन, अन्तकृद्दशा, अनुत्तरोपपादिकदशांग, प्रश्नव्याकरण, विपाकसूत्र और दृष्टिवाद प्रभृति द्वादशांगों का उपदेश दिया। परिकर्म, सूत्रगत, प्रथमानुयोग और पूर्वगत चौदह भेदों तथा वस्तुओं सहित चूलिकाओं का वर्णन किया। सामायिक

प्रकीर्णक, चतुर्विंशति स्तवन, पवित्र वन्दना, प्रतिक्रमण, वैनयिक, कृतिकर्म, दशवैकालिक, उतराध्ययन, कल्पव्यवहार, कल्पाकल्प, महाकल्प, पुण्डरीक, महापुण्डरीक एवम् निषद्य इन चौदह प्रकीर्णकों का वर्णन कर मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय और केवल इन पांच ज्ञान का स्वरूप बताया। तदनन्तर चौदह मार्गणा, चौदहगुणस्थान और चौदह जीव समास के द्वारा जीवद्रव्य का उपदेश दिया, चतुर्गति के दुःख एवं उसमें उत्पन्न होने के कारणों का वर्णन किया। तत्पश्चात् संख्या, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अन्तर, भाव और अल्प बहुत्व इन आठ अनुयोग द्वारों से तथा नाम, स्थापना, द्रव्य और भाव इन चार निक्षेपों से द्रव्य का निरूपण किया। पुद्गलादि द्रव्यों का उत्पाद, व्यय और ध्रौव्यात्मकता तथा मोक्ष का स्वरूप समझाया। तदनन्तर मुनि धर्म का उपदेश दिया।[31]

वर्धमान महावीर ने अपने उपदेशों के माध्यम से जन-जन को कल्याण का संदेश दिया। उस समय जिन लोगों ने श्री वर्धमान एवम् उनके दिव्य वैभव का साक्षात् दर्शन किया, उनकी दिव्य ध्वनि का साक्षात् श्रवण किया, वे उनसे इतने प्रभावित हुए कि उनकी आसक्ति अन्य पुरुषों के वचनों में नहीं रह गई थी।[32]

राजा श्रेणिक, भक्त, सामन्त, महामंत्री, पुरोहित तथा प्रजाजनों ने नगर, ग्राम, घोष, पर्वतों के अग्रभाग, नदियों के तट और वनान्त प्रदेशों में अनेक मंदिरों का निर्माण किया।[33] अनेक राजाओं, सम्राटों, श्रेष्ठियों, विद्वानों और सामान्यजनों ने उनका शिष्यत्व स्वीकार किया और यथाशक्ति श्रावक और मुनिधर्म स्वीकार किया। उनका चतुर्विध संघ उनके उपदेश का ही प्रभाव था।

लोककल्याणकारी–

'जीओ और जीने दो' इस महामंत्र के जनक वर्धमान महावीर ने अपनी साधना द्वारा सिद्धि प्राप्त कर आत्मकल्याण के साथ-साथ विश्वकल्याण का संदेश भी दिया। तीर्थंकर महावीर मानवमात्र का ही नहीं अपितु प्राणीमात्र का उदय चाहते थे। उन्होंने समतावाद का प्रतिपादन कर सर्वजीव समभाव और सर्वजाति समभाव का प्रवर्तन किया।

पौराणिक पृष्ठभूमि में पूर्वभवों के वर्णन के साथ वर्धमान महावीर के दिव्यादिव्य गुणों से मण्डित उदात्त चरित का विशद और काव्यात्मक वर्णन है जो इतिहास और कवि कल्पना का मंजुल मणिकांचन संयोग है।

1. पदमपुराण 2/77-101
2. पदमपुराण 2/126-134
3. पदमपुराण 2/155/194
4. पदमपुराण 2/195/198
5. पदमपुराण 20/30, 16, 25
6. पदमपुराण 20/60
7. पदमपुराण 20/115/122
8. आचार्य जिनसेन-हरिवंशपुराण 2/61
9. गुणभद्र-उत्तरपुराण 74/14-246, 76/534-543
10. गुणभद्र-उत्तरपुराण 74/282, 283; 295
11. गुणभद्र-उत्तरपुराण 74/336
12. गुणभद्र-उत्तरपुराण 74/350, 351
13. गुणभद्र-उत्तरपुराण 76/516-532
14. गुणभद्र-उत्तरपुराण 74/251-252, जिनसेन हरिवंशपुराण 2/19, 20 रविषेण पदमपुराण 2/74
15. जिनसेन-हरिवंशपुराण 2/26-28
16. गुणभद्र-उत्तरपुराण 74/276
17. गुणभद्र-उत्तरपुराण 74/282-283
18. हरिवंशपुराण 2/50-55
19. जिनसेन-हरिवंशपुराण 2/60
20. रविषेण-पदमपुराण 2/91-100
21. रविषेण-पदमपुराण 2/94, 103, हरिवंशपुराण-2/63, 87
22. जिनसेन-हरिवंशपुराण 66/18-21
23. गुणभद्र-उत्तरपुराण 74/289-295
24. गुणभद्र-उत्तरपुराण 74/316
25. गुणभद्र-उत्तरपुराण 74/336
26. आचार्य रविषेण-पदमपुराण 2/84
27. आचार्य जिनसेन-हरिवंशपुराण 2/48
28. वासुपूज्यों महावीरो मल्लिपार्श्वो यदुत्तमः। कुमार निर्गता गेहात् पृथ्वीपतयोऽपरे। पदमपुराण 20/67
29. उत्तरपुराण-74/131-135
30. आचार्य रविषेण-पदमपुराण 2/86,87
31. जिनसेन-हरिवंशपुराण 2/92-131 3/66-177
32. जिनसेन-हरिवंशपुराण 3/9
33. जिनसेन-हरिवंशपुराण 2/146-150

भगवान महावीर और उनका संदेश

-प्रोफेसर डॉ. भागचन्द जैन ''भागेन्दु'', (दमोह) म.प्र.

विश्व के इतिहास में ईसा पूर्व छठवीं शती सांस्कृतिक क्रान्ति का युग माना जाता है, इस युग में सम्पूर्ण संसार में अनेक प्रकार की उथल-पुथल हुई है। परिणाम स्वरूप अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन सामने आये। धर्म और दर्शन के क्षेत्र भी इससे अछूते नहीं रहे। इस क्रान्ति में भारत और विशेष रूप से बिहार प्रान्त (तत्कालीन मगध) की गौरवान्वित वसुन्धरा भला कैसे पीछे रह सकती थी? महामहिम महावीर और गौतम बुद्ध जैसे महापुरुषों का प्रादुर्भाव उसी समय का सुपरिणाम है।

व्यक्तित्व–ज्ञातृवंशीय राजा सिद्धार्थ और महारानी त्रिशला से ईसापूर्व 599 में चैत्र शुक्ला 13 को कुण्डलपुर (नालंदा) में जनमे बालक वर्द्धमान को शाही, शानःशौकत और चमक-दमक तनिक भी प्रभावित नहीं कर सकी। कुण्डलपुर के राजकुमार वर्द्धमान बहुत साहसी, निर्भीक और विवेक पूर्ण थे।

वह परम्परा और परिस्थिति के अनुसार नहीं चले बल्कि उन्होंने परिस्थितियों को अपने अनुरूप बनाया। उनके जीवन की विभिन्न गतिविधियों के कारण उन्हें सन्मति, वीर, महावीर, अतिवीर, वर्धमान, नाथान्वय आदि नामों से भी सम्बोधित किया जाता है। उन्होंने अपने व्यक्तित्व का ऐसा विकास किया जिससे कि वह सामान्य मानव न रहकर 'महामानव', 'महापुरुष' और 'महात्मा' की कोटि में अधिष्ठित हो गये।

अपने विकास के मार्ग में महावीर ने आत्मसाधना के अतिरिक्त चिन्तन, मनन, प्राणि-मात्र की हितेषिता एवं सर्वप्राणी समभाव की उदात प्रवृत्तियों को भी आत्मसात् किया। साधना और ज्ञानोपलब्धि के पश्चात् उन्होंने सम्पूर्ण विश्व को बिना किसी भेदभाव के कल्याण के प्रशस्त मार्ग का निर्देश किया। ''मित्ती मे सव्वभूएसु'' (सब प्राणियों से मेरी मित्रता है) यह था भगवान महावीर का आदर्श। वे अहिंसा के मूर्तमान प्रतीक थे। उनका जीवन त्याग और तपस्या से ओतप्रोत था। उन्हें रंचमात्र भी परिग्रह और ममता नहीं थी।

दिव्य संदेश–भगवान महावीर ने अपनी दिव्य देशना के द्वारा प्राणिमात्र को सम्बोधित किया। पशु, पक्षी तथा विविध योनियों के प्राणी भी उनके उपदेश सुन सकते थे। उपदेश का माध्यम था-जन सामान्य की भाषा अर्द्धमागधी प्राकृत। उन्होंने कहा कि सुख-दुख की अनुभूति सभी को एक जैसी होती है अतः कोई ऐसा कार्य मत कीजिए जो आपको और दूसरों को अप्रिय हो। उन्होंने दया को धर्म का मूल बताया है–

इष्टं यथात्मनो देहः, सर्वेषां प्राणिनां तथा। एवं ज्ञात्वा सदा कार्या, दया सर्वा-सुधारिणाम् ।। (पद्मपुराण, 14.186)

भगवान महावीर ने कहा कि सृष्टि में जितने प्राणी हैं सभी को जीने का हक है अतः जानते हुए अथवा नहीं जानते हुए उनकी हिंसा न तो स्वयं करें और न दूसरों से ही करवाएँ।

सुव्वे पाणा पियाउसा, सुहतावा, दुक्खमोडकूला आप्पयवहा।
पियजीविणो जीविउकागा, सव्वेसिं जीवियं पियं। (आचारांग सूत्र, 1.78-श्वेताम्बर ग्रंथ)

सभी प्राणियों को अपने-अपने प्राण प्रिय हैं, सब सुख चाहते हैं, दुख पसंद नहीं करते हैं। हिंसा नहीं चाहते। जीनें की इच्छा सभी में है। अतः सबकी रक्षा करना मानव का कर्तव्य है।

प्रमाद सभी प्रकार के अनर्थों की जड़ है। उससे व्यक्ति का भविष्य अंधकार के गर्त में पड़ता है। भगवान महावीर ने समाज से आग्रह किया है कि वह प्रमाद को छोड़कर अपने कर्तव्यों का पालन करे।

महावीर स्वामी ने क्रोध, मान, माया और लोभ जैसे विकारी भावों को अपना अहित और अपयश कराने वाले बताकर उन्हें सभी अनर्थों के रूप में निरूपित किया है। उन्होंने कहा-क्रोध को शांति से जीतो। क्रोध से मनुष्य नीचे गिरता है। अभिमान से अधम गति को पाता है।

भगवान महावीर समाज में राष्ट्रीय जागृति लाना चाहते थे। इसके लिए उन्होंने 'विवेक' को जागृत करना आवश्यक बताया। विवेक होने पर ही उपदेश की सार्थकता है।

उपदेश की आवश्यकता सामान्य व्यक्ति को होती है, विवेकी के लिए कदापि नहीं। अपनी राग-द्वेष से ग्रस्त और कष्टों से पीड़ित तथा विषय भोगों को कल्याणकारी मानकर उसमें आसक्त रहने वाला मनुष्य, उनसे उत्पन्न होने वाले दुःखों को शान्त नहीं कर पाता। अतः शारीरिक और मानसिक दुखों से पीड़ित वह दुःख-चक्रों में ही भटकता रहता है।

संसारी प्राणियों को दिव्यध्वनि के द्वारा इस प्रकार के उपदेश देने के पश्चात् भगवान महावीर ने अपने समस्त कर्मों को नष्ट करके मोक्षपद प्राप्त कर लिया उन आत्मजेता भगवान महावीर एवं उनकी पवित्र जन्मभूमि कुण्डलपुर को मेरा कोटि-कोटि वंदन।

विश्ववंद्य भगवान महावीर

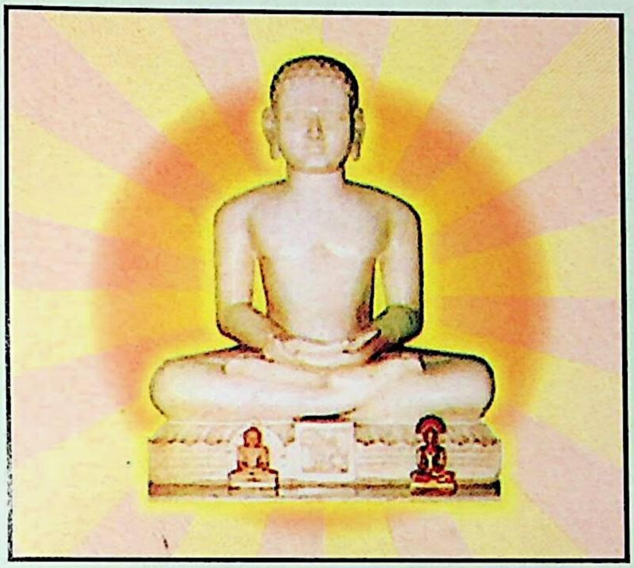

जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार के
प्राचीन दिगम्बर जैन मंदिर में विराजमान भगवान महावीर

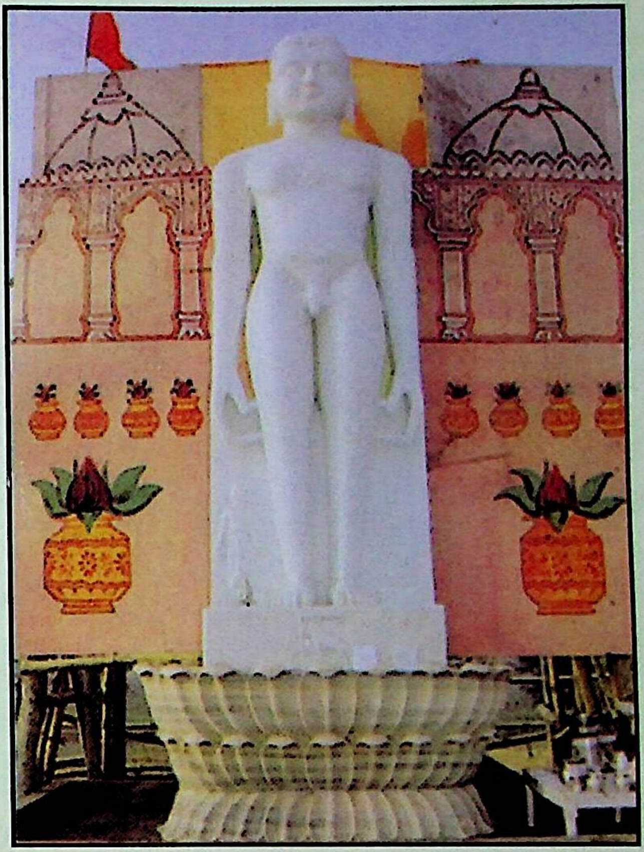

नवनिर्मित नंद्यावर्त महल परिसर कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार में
१२ फरवरी २००३ को प्रतिष्ठापित
भगवान महावीर की सात हाथ उत्तुंग भव्य मनोज्ञ प्रतिमा

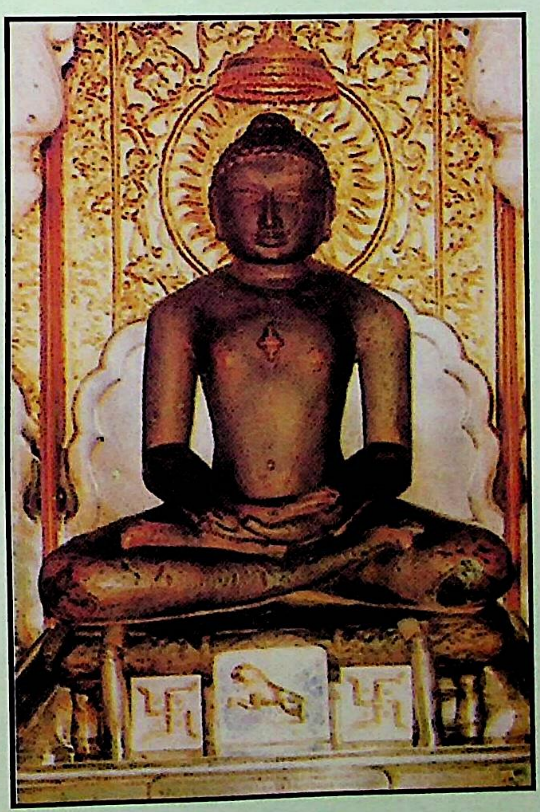

अतिशयक्षेत्र चांदनपुर श्री महावीर जी के भगवान महावीर

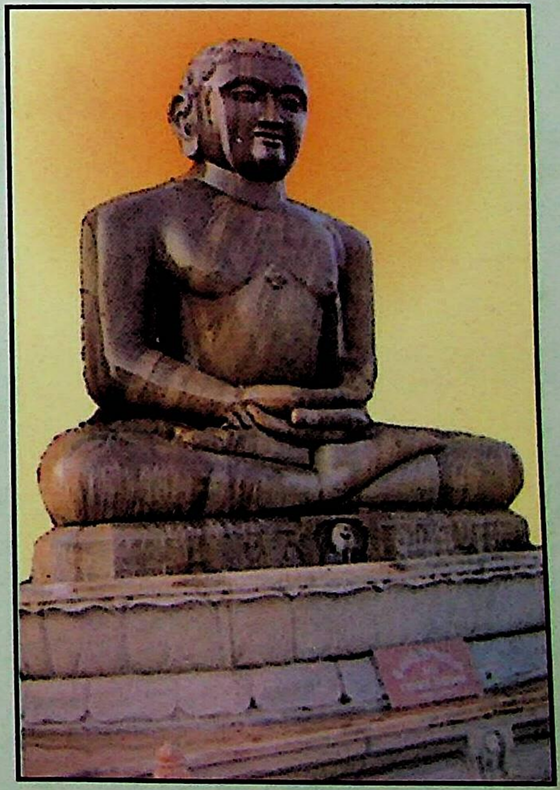

अहिंसा स्थल दिल्ली में विराजमान भगवान महावीर

भगवान महावीर की निर्वाण भूमि पावापुर (नालंदा) बिहार में जलमंदिर के दर्शन के उपरान्त
पूज्य गणिनीप्रमुख श्रीज्ञानमती माताजी से आशीर्वाद लेते हुए
महामहिम राष्ट्रपति श्री ए०पी०जे० अब्दुल कलाम

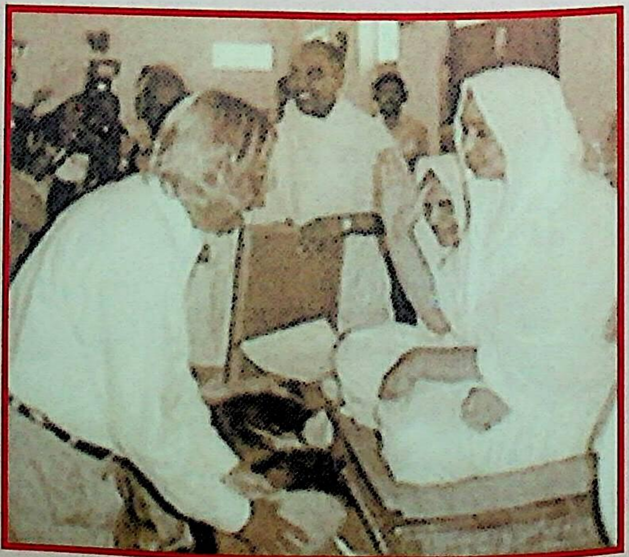

भगवान महावीर के २६०० वें जन्मकल्याणक महोत्सव का बिगुल बजा राजधानी दिल्ली से

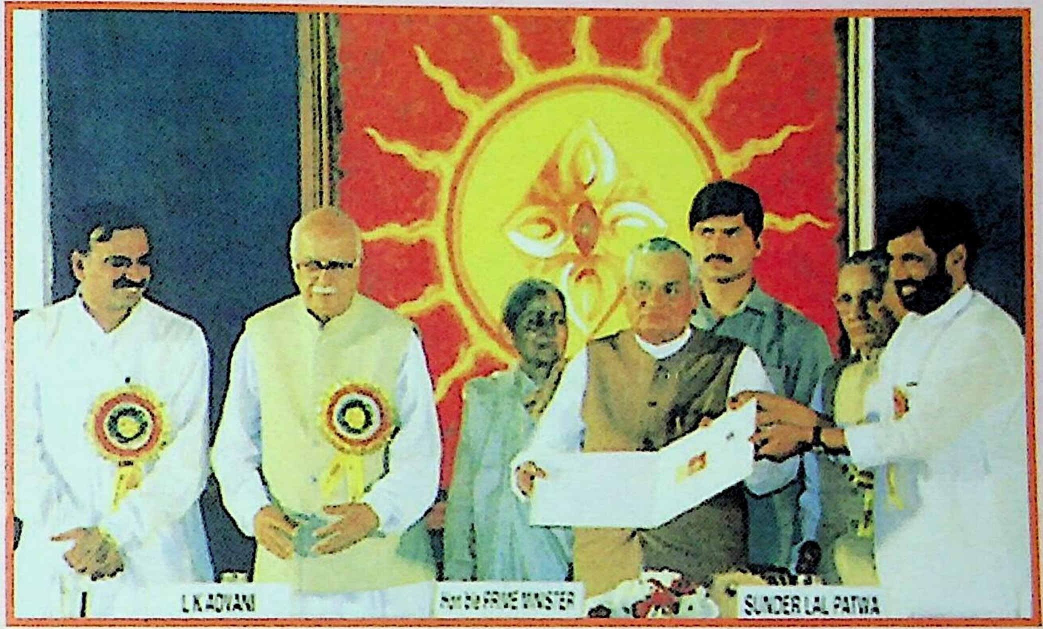

प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ६ अप्रैल, २००१ को इन्दिरा गांधी इन्डोर स्टेडियम, नई दिल्ली में भगवान महावीर के २६००वें जन्म कल्याणक महोत्सव की स्मृति में डाक-टिकट का विमोचन करते हुये। साथ में खड़े हैं – संचार मंत्री श्री राम विलास पासवान, खान मंत्री श्री सुन्दरलाल पटवा, महासमिति की कार्याध्यक्ष श्रीमती इन्दु जैन, गृहमंत्री श्री लालकृष्ण आडवाणी, संस्कृति मंत्री श्री अनन्त कुमार।

महावीरजयंती ६ अप्रैल २००१ को ही सायंकाल उत्तरप्रदेश की राजधानी लखनऊ में भगवान महावीर २६००वाँ जन्मकल्याण का उद्घाटन किया माननीय मुख्यमंत्री श्री राजनाथ सिंह ने। साथ में हैं नगर आवास विकास मंत्री श्री लाल जी टण्डन एवं समारोह के मुख्य वक्ता कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन, उत्तरप्रदेश के संयोजक श्री कैलाशचंद जैन सर्राफ, श्री रज्जूमल जैन लखनऊ एवं श्री आनंद जैन, जैन मार्बल, मेरठ आदि।

भगवान महावीर २६००वाँ जन्म कल्याणक महोत्सव की शृंखला में राष्ट्रीय स्तर पर राजधानी दिल्ली में आयोजित विश्वशांति महावीर विधान की सचित्र झलकी। सानिध्य एवं प्रेरणा - गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी, प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी, क्षुल्लकरत्न श्री मोतीसागरजी महाराज, कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन एवं विशिष्ट अतिथिगण - श्री वी. धनंजय कुमार (केन्द्रीय मंत्री भारत सरकार), श्रीमती इन्दू जैन, श्री एल.एम. सिंघवी (विधिवेत्ता), श्री शांती देसाई (महापौर दिल्ली), साहू श्री रमेश चंद जैन, अध्यक्ष - तीर्थक्षेत्र कमेटी, प्रमुख इन्द्र श्री कमल चंद जैन खारी बावली, दिल्ली तथा देश के कोने-कोने से पधारे हुए भक्तगण। संघपति श्री महावीर प्रसाद जैन, श्री प्रेमचंद जैन, श्री अनिल जैन प्रीत विहार, डॉ. पन्नालाल पापड़ीवाल आदि।

श्री दिगम्बर जैन मंदिर राजा बाजार, कनाट प्लेस, नई दिल्ली में पूज्य गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से पावापुरी की स्थायी रचना बनाकर २६०० निर्वाणलाडू चढ़ाने का दृश्य। यहीं पर कीर्तिस्तंभ का भी नवनिर्माण हुआ है।

भगवान महावीर 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव वर्ष
पावापुरी रचना के सम्मुख दीपावली के शुभदिन
2600 निर्वाणलाडू चढ़ाने का भव्य आयोजन
सान्निध्य- गणिनी आर्यिका प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ससंघ
स्थान- श्री अग्रवाल दिगम्बर जैन मंदिर, राजा बाजार, कनॉट प्लेस, दिल्ली
15 नवम्बर 2001 प्रातः 9-30 बजे

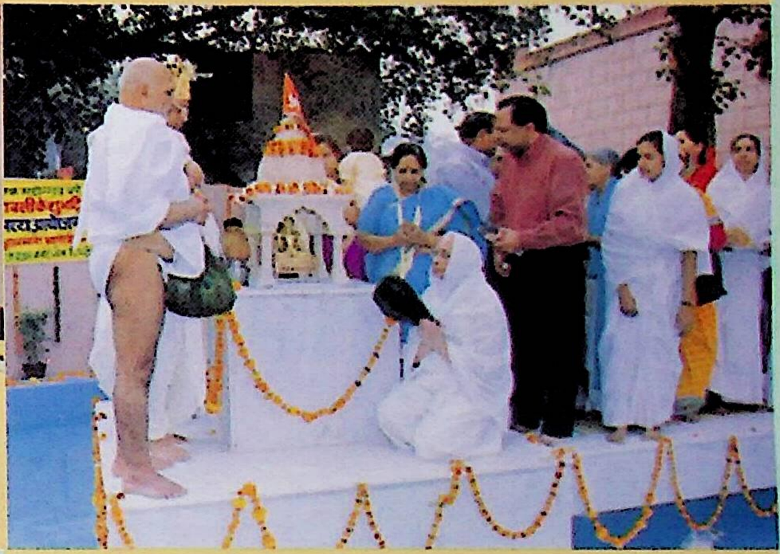

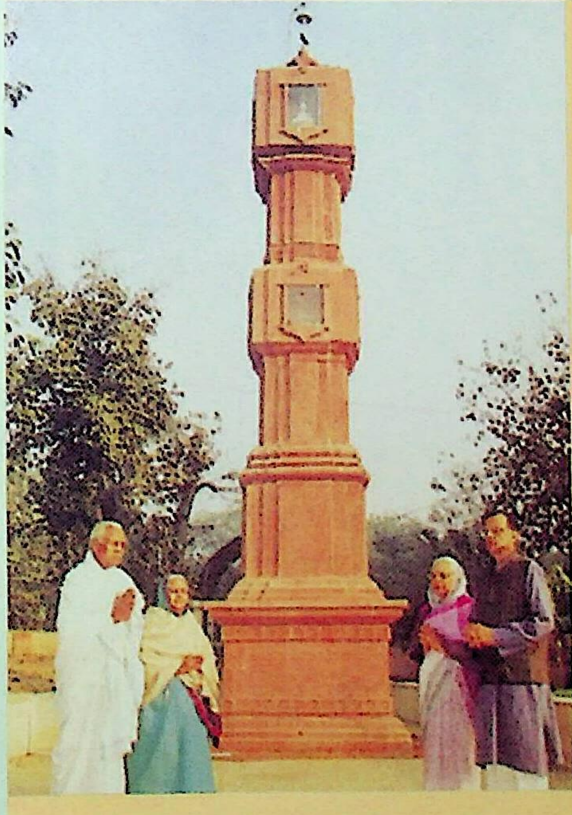

श्री जिनेन्द्र प्रसाद जैन ठेकेदार एवं
श्री महेन्द्र प्रसाद जैन ठेकेदार
सपरिवार कीर्तिस्तंभ की वंदना करते हुए।

निर्वाणलाडू चढ़ाने वाले भक्तगण बाएं से –
श्री अनिल जैन, श्री सुशील जैन,
श्री राज कुमार जैन वीरा बिल्डर्स,
श्रीपाल जैन मोटर वाले, संघपति श्री महावीर प्रसाद जैन,
विजय जैन दरियागंज, श्री कमल चंद जैन,
श्री कैलाशचंद जैन, ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन,
श्री जितेन्द्र प्रसाद ठेकेदार, श्री कैलाशचंद प्रीतविहार,
श्री प्रेमचंद जैन, श्री मुकेश जैन, बंगाली मार्केट,
श्री अजय जैन, श्री सुरेन्द्र जैन।

भगवान महावीर २६०० वां जन्म कल्याणक महोत्सव समिति दिल्ली प्रदेश द्वारा आयोजित राजधानी दिल्ली में ऐतिहासिक इंडियागेट के समक्ष विशाल अहिंसा रैली एवं मौन जुलूस का अनुपम दृश्य १८.११.२००१

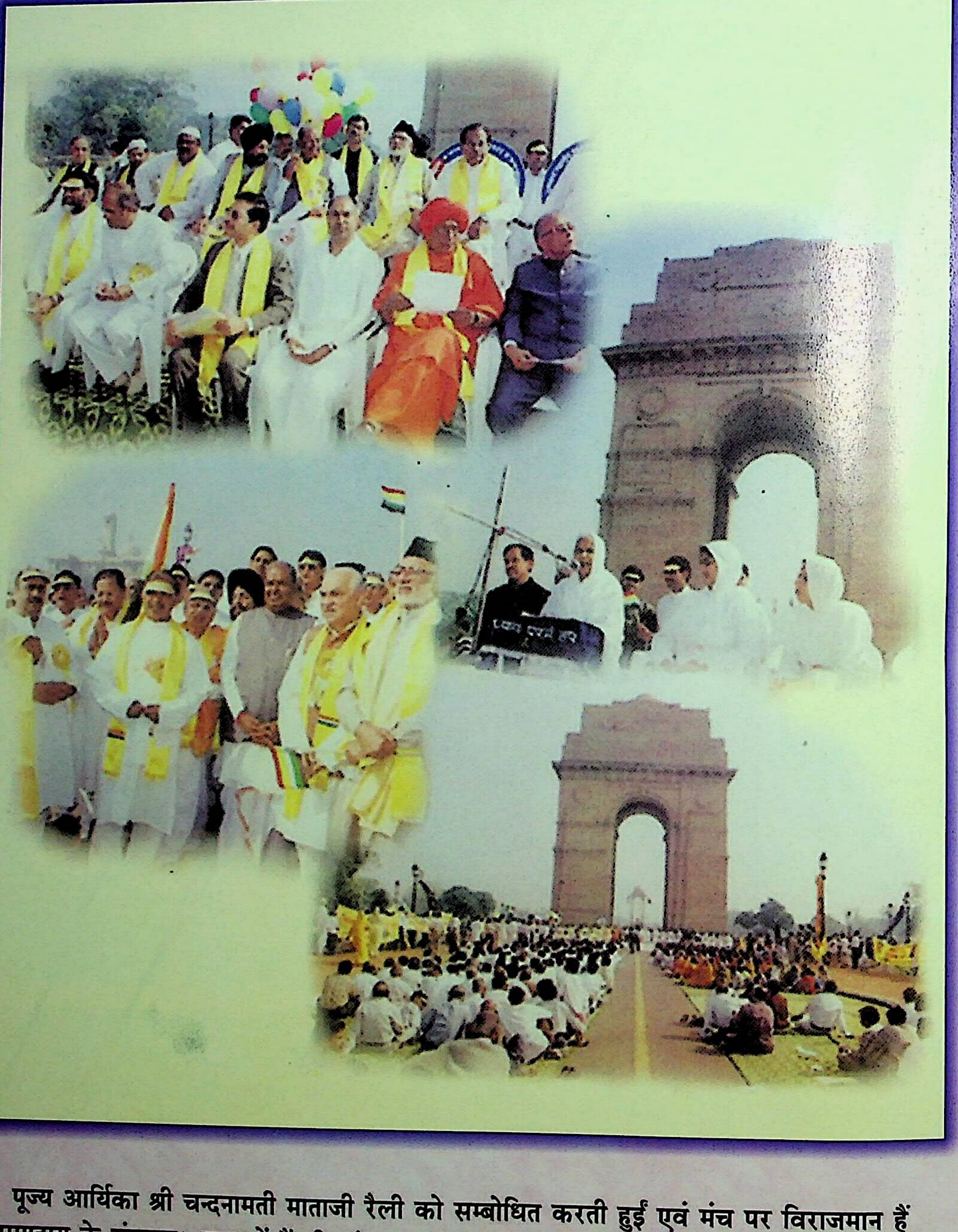

पूज्य आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी रैली को सम्बोधित करती हुईं एवं मंच पर विराजमान हैं अनेक सम्प्रदाय के संतगण। साथ में हैं श्री सांसद मदनलाल खुराना, श्री मांगेलाल गर्ग भाजपा अध्यक्ष दिल्ली, महामंत्री प्रो. रतन जैन, ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन एवं समिति व समाज के गणमान्य महानुभाव।

भगवान महावीर दीक्षा कल्याणक महोत्सव तालकटोरा इन्डोर स्टेडियम में समग्र जैन समाज के
लगभग २०० साधुसाध्वियों के सानिध्य में १० दिसम्बर २००१ को मनाया गया। दिगम्बर जैन समाज से
पूज्य गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने ससंघ सानिध्य प्रदान किया तथा अतिथियों में प्रमुख पधारे
डा० श्री कर्णसिंह (सांसद), प्रसिद्धविधिवेत्ता श्री एल.एम. सिंघवी, श्री मांगेराम गर्ग अध्यक्ष भा.ज.पा, दिल्ली प्रदेश
एवं श्री दिलीप गांधी (सांसद)। झण्डारोहण श्री संघपति श्री महावीर प्रसाद जैन ने किया।
साथ में कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन, श्री अनिल जैन, श्री कैलाश चंद जैन, श्री कलीराम जैन आदि उपस्थित थे।

भगवान महावीर दीक्षा
महोत्सव

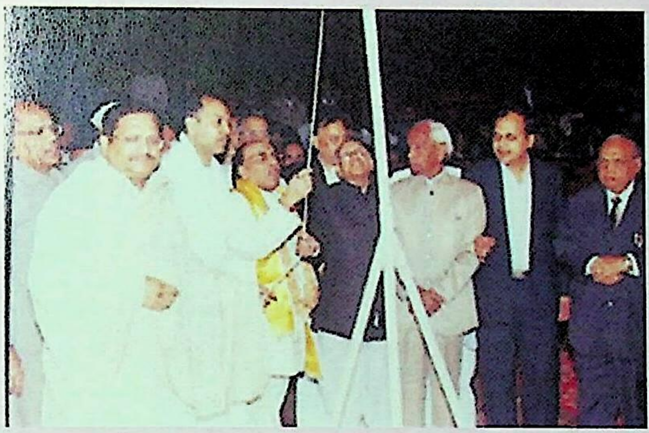

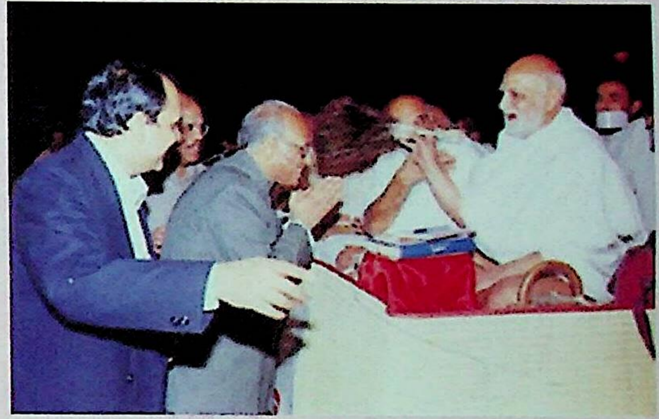

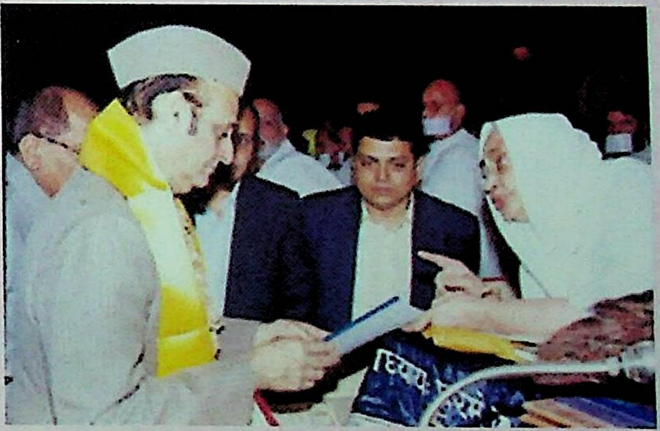

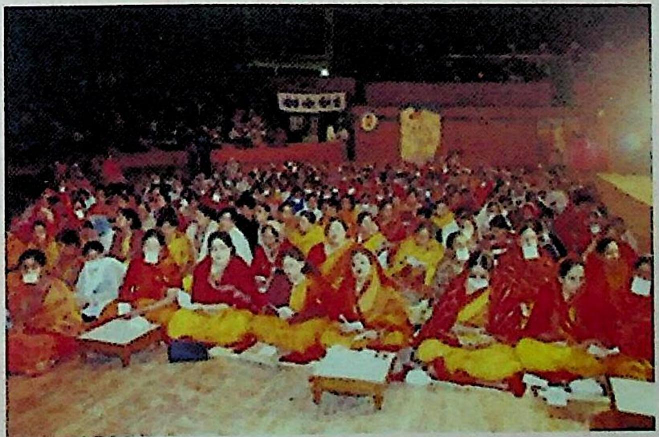

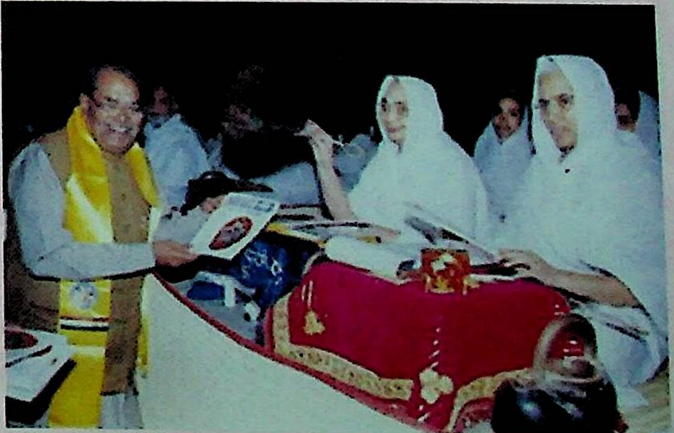

"तीरथ विकास क्रम जारी है अब कुण्डलपुर की बारी है"

भगवान महावीर जन्म भूमि कुण्डलपुर-नालंदा के विकास का संकल्प लेकर
पूज्य गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी का इंडिया गेट-दिल्ली से मंगल प्रस्थान २०.२.२००२

कुण्डलपुर यात्रा के संघपति श्री महावीर प्रसाद जैन सपरिवार एवं
सहयोगी श्री प्रेमचंद जैन, खारी बावली, दिल्ली का पगड़ी बांधकर सम्मान।
साथ में श्री अनिल जैन प्रीत विहार।

कुण्डलपुर विकास का प्रथम चरण

भगवान महावीर कीर्तिस्तंभ का शिलान्यास २४ मार्च २००२
दानवीर समाजरत्न श्री कमलचंद जैन, खारी बावली, दिल्ली एवं समस्त परिवार द्वारा
दिल्ली में पूज्य माताजी से आशीर्वाद लेकर किया गया।

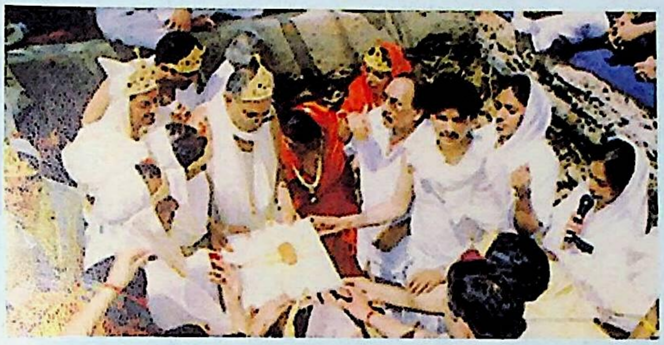

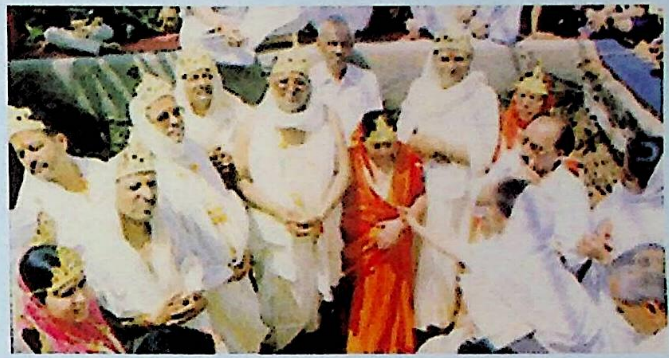

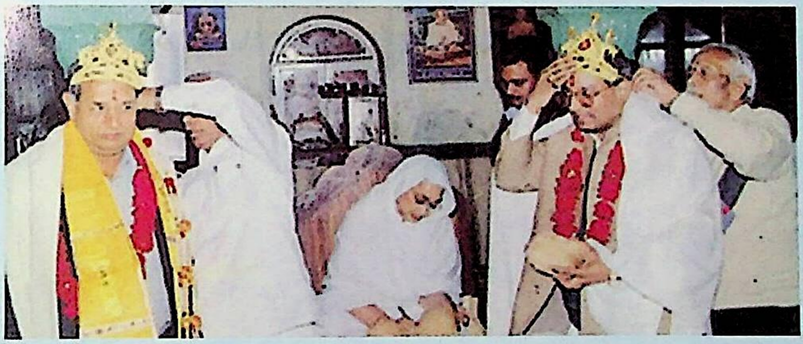

कीर्तिस्तम्भ शिलान्यास समारोह
24 मार्च

कीर्तिस्तम्भ शिलान्यास समारोह
24 मार्च 200

इस शुभ अवसर पर कुण्डलपुर में श्री कमलचंद जैन एवं लघु भ्राता श्री कैलाश चंद तथा बिहारप्रांतीय न्यास बोर्ड के अध्यक्ष श्री रामगोपाल जैन, पटना, श्री अजय कुमार जैन, आरा-पटना (बिहार प्रांतीय तीर्थ क्षेत्र कमेटी के मानद मंत्री) एवं कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन, कैलाश चंद चौधरी, सनावद, संघपति श्री महावीर प्रसाद जैन आदि का सम्मान किया गया।

२० फरवरी २००२ को राजधानी दिल्ली से कुण्डलपुर के लिए पूज्य माताजी का ससंघ मंगल विहार हुआ। रास्ते में इलाहाबाद में सन् २००२ का वर्षायोग सम्पन्न करने के बाद इलाहाबाद से कुण्डलपुर के लिए १० नवम्बर २००२ को मंगलविहार हुआ। इलाहाबाद चातुर्मास के मध्य अक्टूबर माह में तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली प्रयाग में आयोजित कुण्डलपुर महासम्मेलन की सचित्र झलकियाँ।

अखिल भारतवर्षीय दि. जैन युवा परिषद द्वारा कुण्डलपुर महासम्मेलन

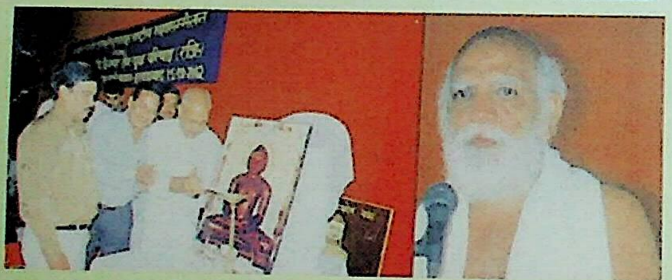

युवा परिषद द्वारा आयोजित कुण्डलपुर महासम्मेलन का दीप प्रज्ज्वलित करते हुए श्री कैलाशचंद जैन सर्राफ, लखनऊ। साथ में हैं युवा परिषद के पदाधिकारीगण उदयभान जैन एवं दिलीप जैन, जयपुर (राज.) तथा सानिध्य प्रदान करते हुए पीठाधीश क्षुल्लक श्री मोतीसागर जी महाराज।

तीर्थंकर ऋषभदेव विद्वत् महासंघ द्वारा कुण्डलपुर महासम्मेलन

जैन समाज के मूर्धन्य विद्वान एवं शास्त्री परिषद के अध्यक्ष प्राचार्य श्री नरेन्द्र प्रकाश जी जन्मभूमि कुण्डलपुर के संदर्भ में समाज को सम्बोधित करते हुए।

अ.भा.दि. जैन महिला संगठन द्वारा कुण्डलपुर महासम्मेलन

सम्मेलन का दीप प्रज्जवलन कर उद्घाटन करते हुए श्रीमती निर्मला जैन, श्रीमती कुसुमलता जैन, श्रीमती सुलोचना जैन सभी दिल्ली, श्रीमती साधना जैन एवं श्रीमती आरती जैन, इलाहाबाद।

ऋषभदेव तपस्थली पर माननीय मुख्य न्यायाधीश

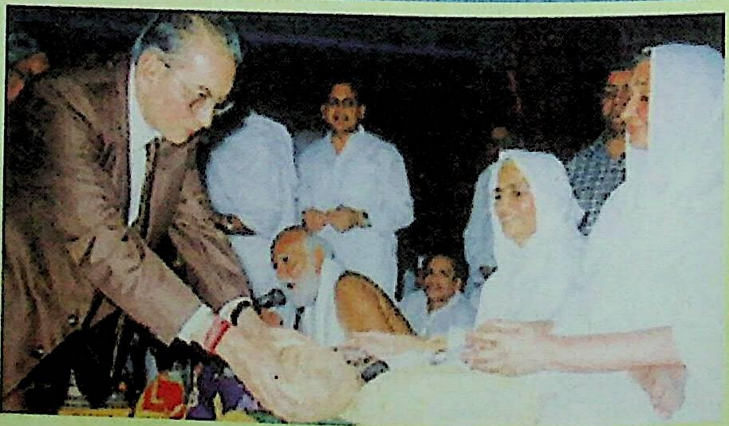

इलाहाबाद हाईकोर्ट के मुख्य न्यायाधीश पूज्य माताजी से आशीर्वाद प्राप्त करते हुए।

इलाहाबाद एवं कुण्डलपुर के मध्य वाराणसी में पूज्य माताजी का पदार्पण

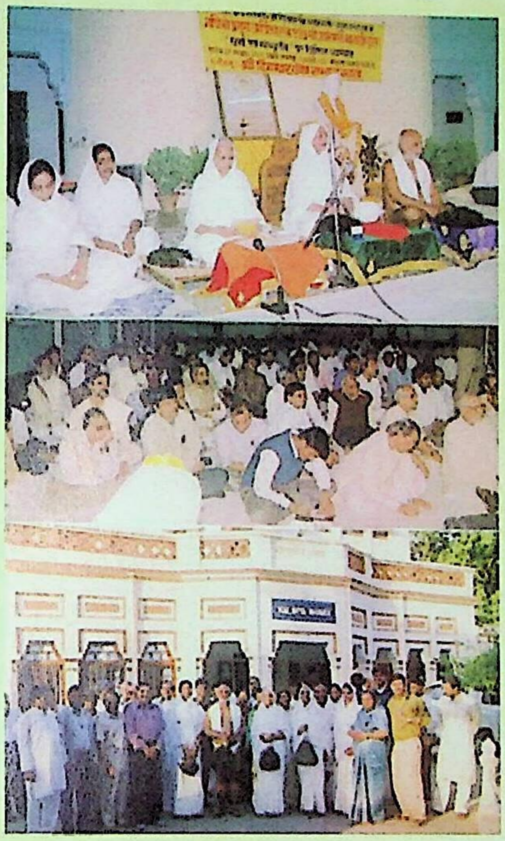

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी (बीएचयू) के मालवीय हॉल में पूज्य गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के मंगल प्रवचन

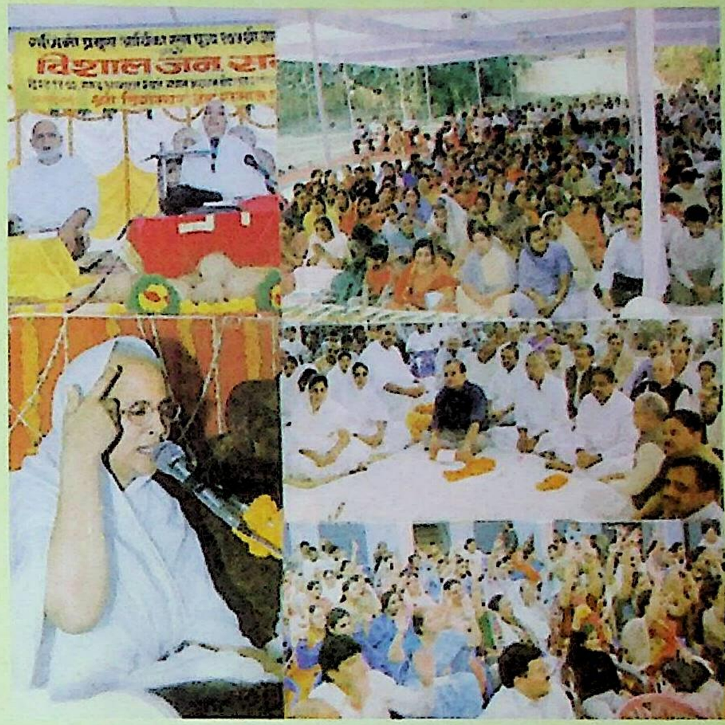

वाराणसी में जनसमुदाय को पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी एवं प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी का मंगल उद्बोधन।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के कुलपति माननीय प्रो. श्री रामचन्द्र राव पूज्य माताजी से आशीर्वाद प्राप्त करते हुए।

माननीय कुलपति जी का सम्मान करते हुए श्री दीपक जैन, वाराणसी।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के कुलपति का सम्मान करते हुए श्री दीपक जैन, वाराणसी।

सम्पूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. राजेन्द्र मिश्र पूज्य माताजी से आशीर्वाद प्राप्त करते

२० फरवरी २००२ को राजधानी दिल्ली से कुण्डलपुर के लिए पूज्य माताजी का ससंघ मंगल विहार हुआ। रास्ते में इलाहाबाद में सन् २००२ का वर्षायोग सम्पन्न करने के बाद इलाहाबाद से कुण्डलपुर के लिए १० नवम्बर २००२ को मंगलविहार हुआ। इलाहाबाद चातुर्मास के मध्य अक्टूबर माह में तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली प्रयाग में आयोजित कुण्डलपुर महासम्मेलन की सचित्र झलकियाँ।

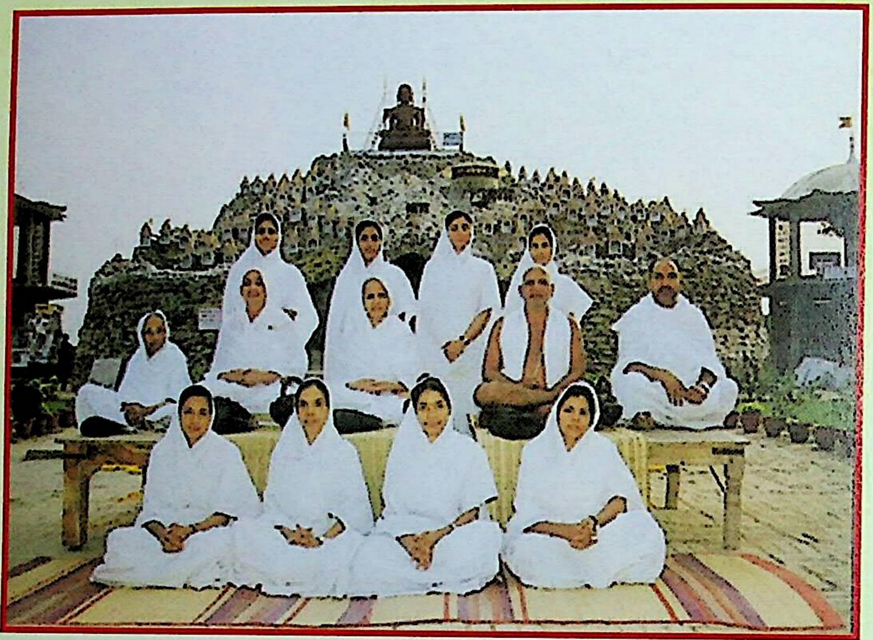

अखिल भारतवर्षीय दि. जैन युवा परिषद द्वारा कुण्डलपुर महासम्मेलन

युवा परिषद द्वारा आयोजित कुण्डलपुर महासम्मेलन का दीप प्रज्जवलित करते हुए श्री कैलाशचंद जैन सर्राफ, लखनऊ। साथ में हैं युवा परिषद के पदाधिकारीगण उदयभान जैन एवं दिलीप जैन, जयपुर (राज.) तथा सानिध्य प्रदान करते हुए पीठाधीश क्षुल्लक श्री मोतीसागर जी महाराज।

तीर्थंकर ऋषभदेव विद्वत् महासंघ द्वारा कुण्डलपुर महासम्मेलन

जैन समाज के मूर्धन्य विद्वान एवं शास्त्री परिषद के अध्यक्ष प्राचार्य श्री नरेन्द्र प्रकाश जी जन्मभूमि कुण्डलपुर के संदर्भ में समाज को सम्बोधित करते हुए।

अ.भा.दि. जैन महिला संगठन द्वारा कुण्डलपुर महासम्मेलन

सम्मेलन का दीप प्रज्जवलन कर उद्घाटन करते हुए श्रीमती निर्मला जैन, श्रीमती कुसुमलता जैन, श्रीमती सुलोचना जैन सभी दिल्ली, श्रीमती साधना जैन एवं श्रीमती आरती जैन, इलाहाबाद।

ऋषभदेव तपस्थली पर माननीय मुख्य न्यायाधीश

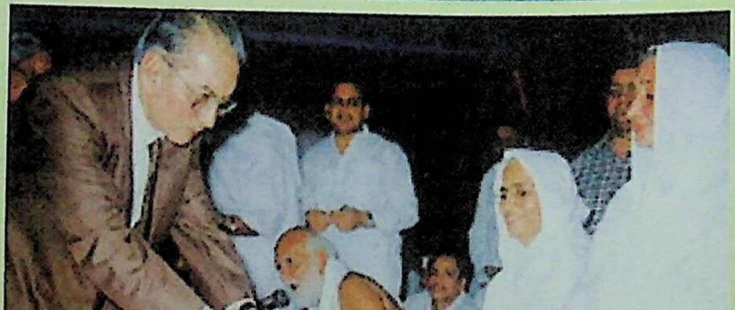

इलाहाबाद हाईकोर्ट के मुख्य न्यायाधीश पूज्य माताजी से आशीर्वाद प्राप्त करते हुए।

इलाहाबाद एवं कुण्डलपुर के मध्य वाराणसी में पूज्य माताजी का पदार्पण

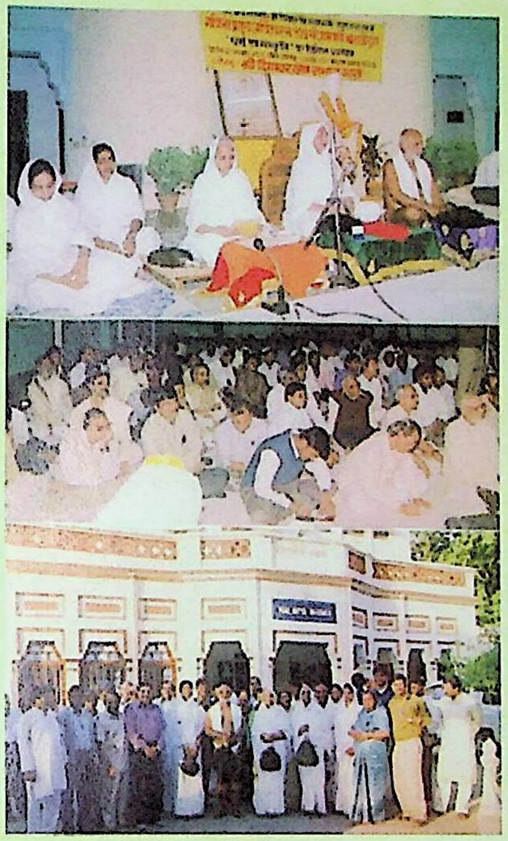

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी (बीएचयू)
के मालवीय हॉल में पूज्य गणिनी प्रमुख
श्री ज्ञानमती माताजी के मंगल प्रवचन

वाराणसी में जनसमुदाय को पूज्य गणिनीप्रमुख
श्री ज्ञानमती माताजी एवं प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका
श्री चंदनामती माताजी का मंगल उद्बोधन।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के कुलपति माननीय
प्रो. श्री रामचन्द्र राव पूज्य माताजी से
आशीर्वाद प्राप्त करते हुए।

माननीय कुलपति जी का सम्मान करते हुए
श्री दीपक जैन, वाराणसी।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के कुलपति का सम्मान
करते हुए श्री दीपक जैन, वाराणसी।

सम्पूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय के कुलपति
प्रो. राजेन्द्र मिश्र पूज्य माताजी से आशीर्वाद प्राप्त करते

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर विकास हेतु पूज्य माताजी का ससंघ २९ दिसम्बर २००२ को मंगल पदार्पण एवं भगवान महावीर मंदिर के शिलान्यास के साथ नंद्यावर्त महल परिसर के निर्माण का सूत्रपात।

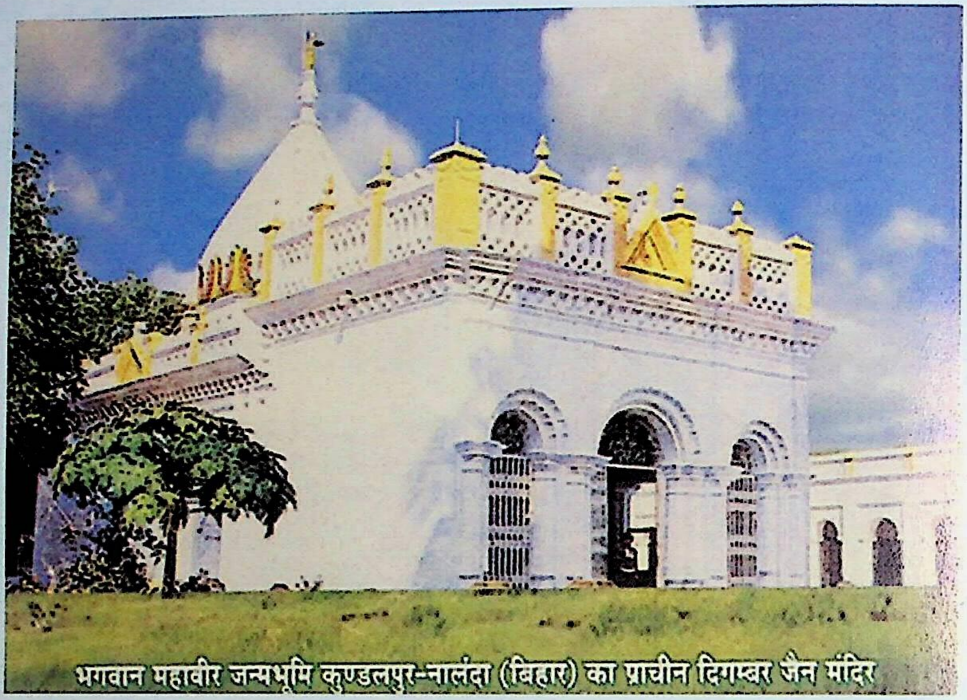

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर-नालंदा (बिहार) का प्राचीन दिगम्बर जैन मंदिर

शिलान्यास कर्ता - श्री दीपक जैन वाराणसी सपरिवार, अध्यक्ष - संघपति श्री महावीर प्रसाद जैन एवं स्वागत हेतु दूर-दूर से पधारे हुए भक्तगण।

भगवान महावीर जन्म भूमि कुण्डलपुर गूंज उठी आयोजन से

भगवान महावीर, भगवान ऋषभदेव एवं कीर्तिस्तंभ के ८ भगवन्तों तथा त्रिकालचौबीसी की ७२ प्रतिमाओं कीपंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं महामस्तकाभिषेक महोत्सव ७ से १२ फरवरी २००३

भगवान महावीर का
पंचामृत अभिषेक करते हुए

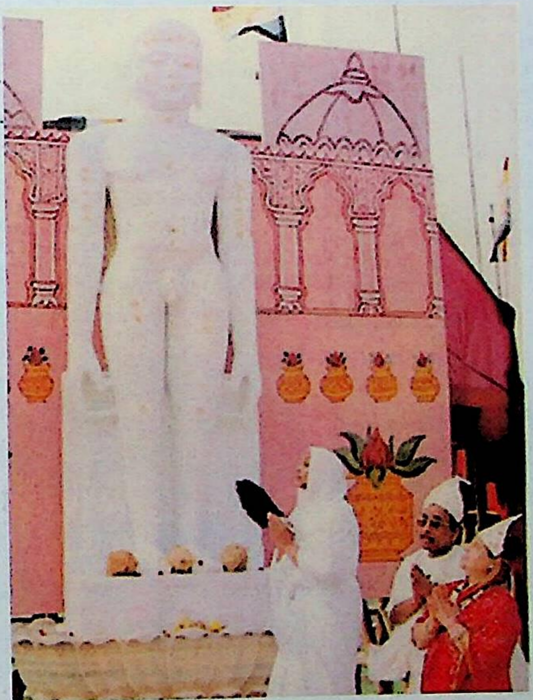

जन्मभूमि कुण्डलपुर में स्थापित
भव्य भगवान महावीर स्वामी की प्रतिमा के दर्शन
करती हुईं पूज्य गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी
एवं प्रतिमा स्थापितकर्ता श्री महावीर प्रसाद जैन दिल्ली, सपत्नीक।

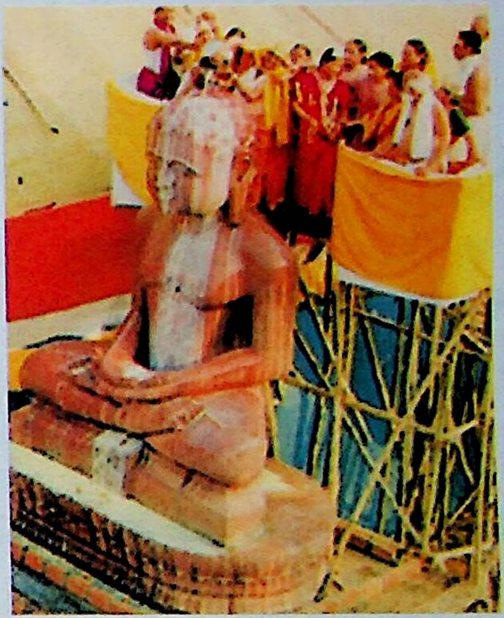

भगवान ऋषभदेव की प्रतिमा का
प्रथम पंचामृत अभिषेक करते हुए भक्तगण।

कीर्तिस्तंभ में विराजमान करने के लिए
प्रतिष्ठित प्रतिमाओं को ले जाते हुए श्री
कमलचंद जैन एवं परिवार के सदस्यगण

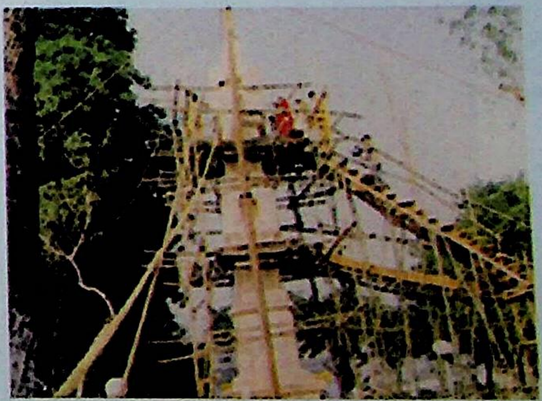

कुण्डलपुर के प्राचीन मंदिर में निर्मित
किया गया कीर्तिस्तंभ
प्रेरणा - गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी

कुण्डलपुर के मनोहारी दृश्य ने २६०० वर्ष पुरानी याद को ताजा किया

भगवान महावीर की प्रतिमा का महाकुंभ मस्तकभिषेक 12 फरवरी

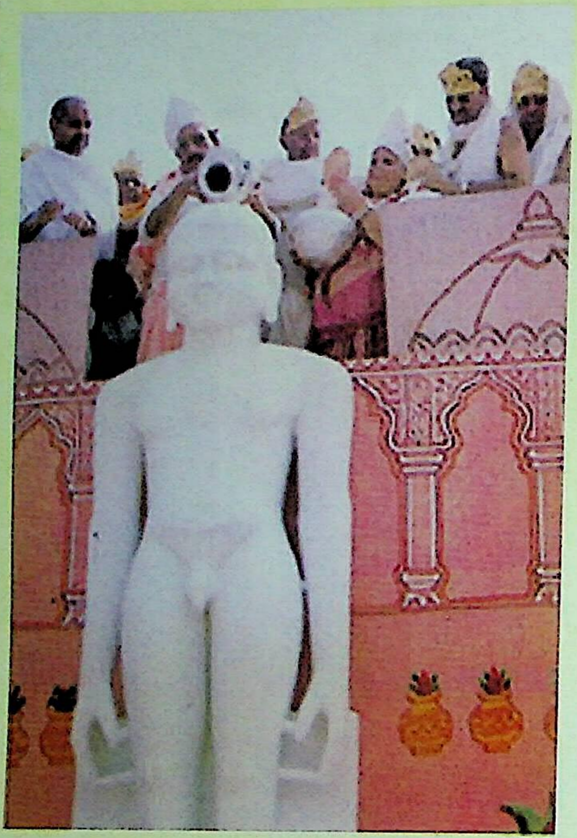

संघपति श्री महावीर प्रसाद जैन दिल्ली
सपरिवार प्रथम कलश अभिषेक करते हुए।

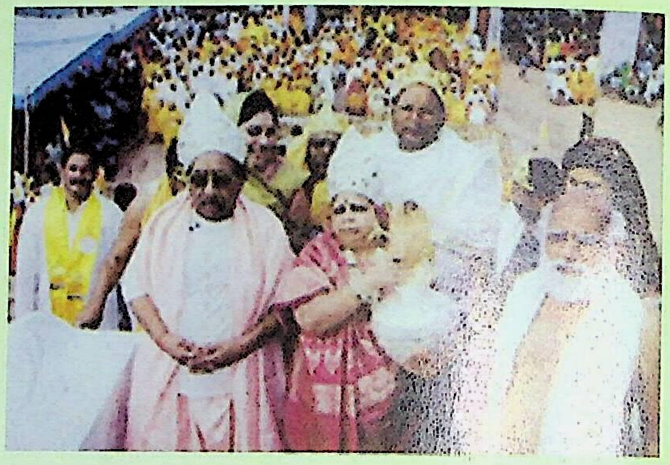

श्री महावीर प्रसाद जैन संघपति दिल्ली एवं
ध.प. श्रीमती कुसुमलता जैन भगवान महावीर की
विशाल प्रतिमा केमस्तकाभिषेक हेतु
प्रथम कलश ले जाते हुए।

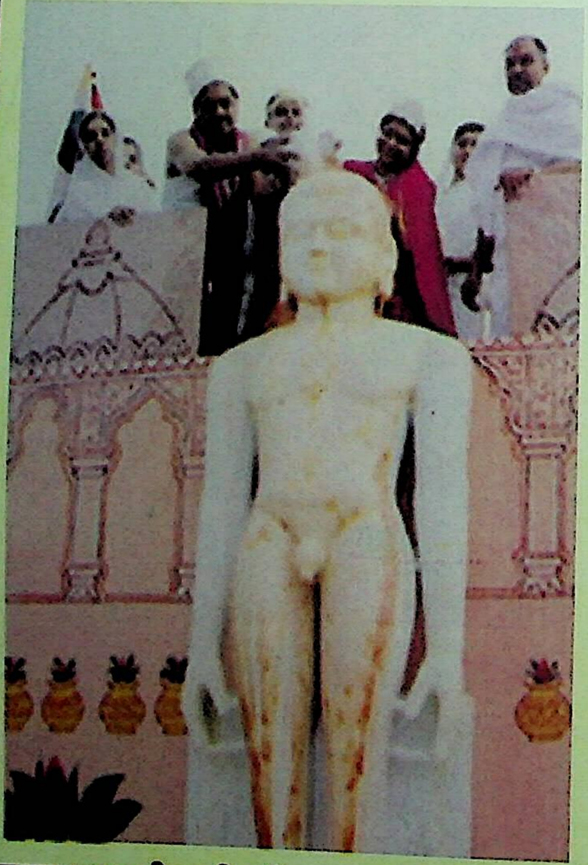

भगवान महावीर की प्रतिमा का अभिषेक करते हुए
सौधर्मइन्द्र इन्द्राणी श्री दीपक जैन वाराणसी

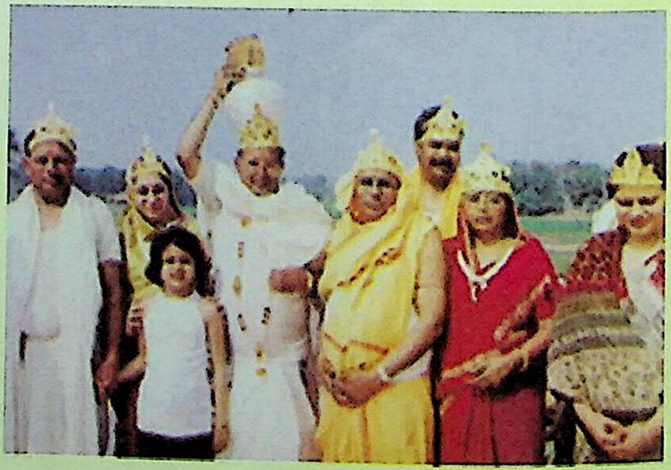

भगवान महावीर की प्रतिमा का अभिषेक
करने के लिए कलश ले जाते हुए श्री कमलचंद जैन,
कैलाश चंद जैन खारीबावली दिल्ली सपरिवार।

सौभाग्यशाली भक्तगण जिन्होंने कुण्डलपुर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा में प्रमुख यजमान बनकर पुण्य अर्जित किया।

भगवान के माता पिता - संघपति श्री महावीर प्रसाद जैन एवं
धर्मपत्नी श्रीमती कुसुमलता जी

सौधर्मइन्द्र- श्री दीपक जैन वाराणसी एवं
ध०प० श्रीमती सुभाषिनी जैन

सौधर्म इन्द्र के माता-पिता श्री ऋषभदास जैन वाराणसी सपरिवार

कुबेरइन्द्र - श्री कमल कुमार जैन आरा एवं
ध०प० श्रीमती अनुपमा जैन

आयोजन के झण्डारोहणकर्त्ता श्री बाबू लाल जी पहाड़े
पूज्य माता जी से आशीर्वाद लेते हुए।

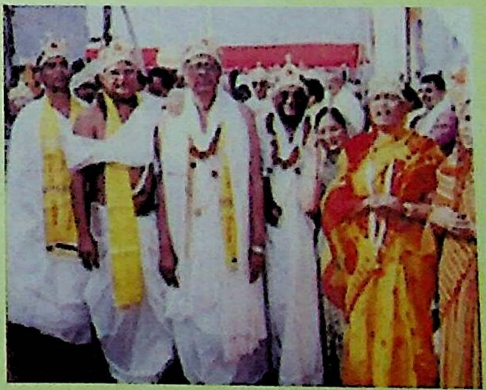

श्री बाबूलाल पहाड़े एवं मित्रगण सपरिवार
झण्डारोहण के लिए

कुण्डलपुर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा के मध्य नेताओं ने पधारकर पूज्य माताजी का आशीर्वाद प्राप्त किया

माननीय रक्षामंत्री श्री जार्ज फर्नाण्डीज
पूज्य माताजी से आशीर्वाद लेते हुए

माननीय श्री फर्नाण्डीज का [illegible] [illegible]
समिति के पदाधिकारी[illegible]

माननीय रेलमंत्री श्री नितीश कुमार
पूज्य माताजी से आशीर्वाद लेते हुए

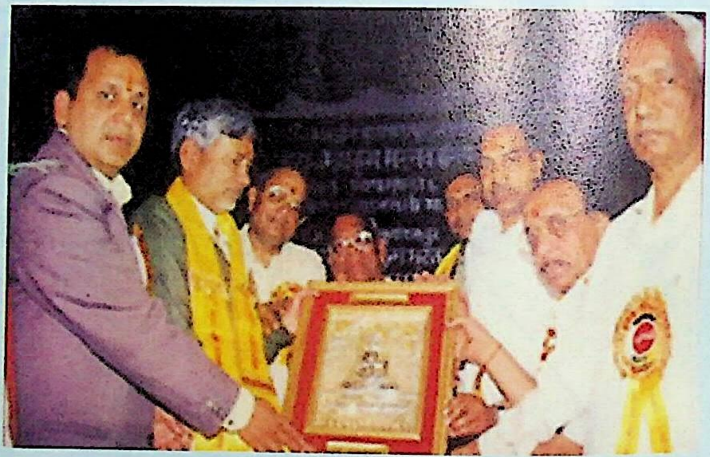

माननीय नितीश जी का
सम्मान करते हुए पदाधिकारीगण

महामहिम श्री विनोदचंद पाण्डे, राज्यपाल बिहार प्रदेश
पूज्य माताजी से आशीर्वाद लेते हुए।

महामहिम राज्यपाल जी का
सम्मान करते हुए पदाधिकारीगण

सैकड़ों वर्षों बाद कुण्डलपुर की धरती पर उमड़ा जनसैलाब

फरवरी २००३ में आयोजित पंचकल्याण प्रतिष्ठा में पधारे केन्द्रीय रक्षा मंत्री जार्ज फर्नाण्डीज एवं रेल मंत्री श्री नितीश कुमार

कुण्डलपुर में अनेक वर्षों के पश्चात् अपार जनसमूह को सम्बोधित करते हुए पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी, रक्षामंत्री श्री जार्ज फर्नाण्डीज, रेलमंत्री श्री नितीश कुमार जी एवं प्रतिष्ठा समिति के अध्यक्ष ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन।

कुण्डलपुर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा के मध्य नेताओं ने पधारकर पूज्य माताजी का आशीर्वाद प्राप्त किया

माननीय रक्षामंत्री श्री जार्ज फर्नाण्डीज
पूज्य माताजी से आशीर्वाद लेते हुए

माननीय श्री फर्नाण्डीज का सम्मान करते हुए
समिति के पदाधिकारीगण

माननीय रेलमंत्री श्री नितीश कुमार
पूज्य माताजी से आशीर्वाद लेते हुए

माननीय नितीश जी का
सम्मान करते हुए पदाधिकारीगण

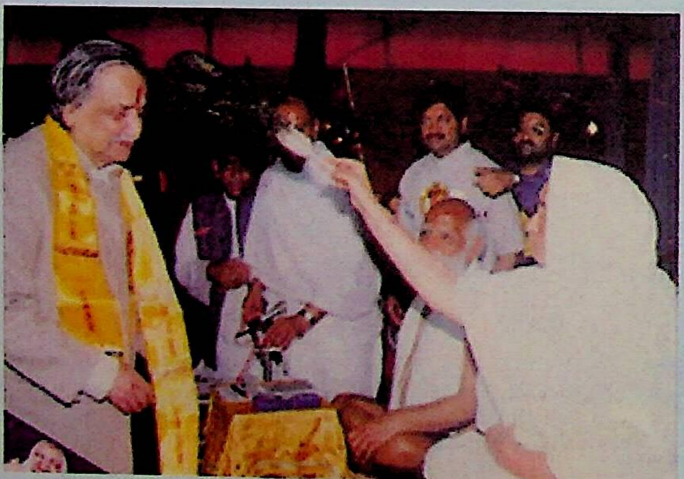

महामहिम श्री विनोदचंद पाण्डे, राज्यपाल बिहार प्रदेश
पूज्य माताजी से आशीर्वाद लेते हुए।

महामहिम राज्यपाल जी का
सम्मान करते हुए पदाधिकारीगण

सैकड़ों वर्षों बाद कुण्डलपुर की धरती पर उमड़ा जनसैलाब

फरवरी २००३ में आयोजित पंचकल्याण प्रतिष्ठा में पधारे केन्द्रीय रक्षा मंत्री जार्ज फर्नाण्डीज एवं रेल मंत्री श्री नितीश कुमार

कुण्डलपुर में अनेक वर्षों के पश्चात् अपार जनसमूह को सम्बोधित करते हुए पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी, रक्षामंत्री श्री जार्ज फर्नाण्डीज, रेलमंत्री श्री नितीश कुमार जी एवं प्रतिष्ठा समिति के अध्यक्ष ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन।

पूज्य गणिनी प्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माता जी के सानिध्य में भगवान महावीर निर्वाणभूमि पावापुर सिद्ध क्षेत्र पर २५२८वां निर्वाण महोत्सव (नवम्बर २००३)

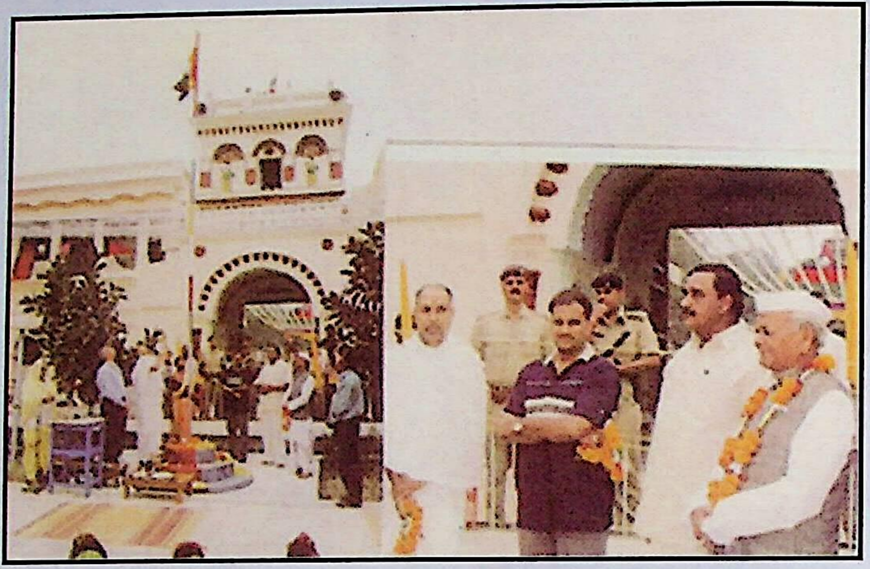

पावापुर सिद्धक्षेत्र पर निर्वाण महोत्सव दीपावली का झण्डोत्तोलन करते हुए ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन एवं माननीय जिलाधिकारी श्री हुकुम सिंह मीणा एवं विधान परिषद के सदस्य श्री कपिल देव एवं श्री सुरेन्द्र कुमार तरुण एवं क्षेत्र के मंत्री-श्री अजय कुमार जैन आदि।

भगवान महावीर निर्वाणभूमि जलमंदिर पावापुर में दीपावली के दिन प्रातः निर्वाण महोत्सव को प्रथमबार सानिध्य प्रदान करते हुए पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी, प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी एवं प्रथम २६ किलो का लाडू चढ़ाने का पुण्य प्राप्त करते हुए श्री कैलाशचन्द जैन सर्राफ (लखनऊ) सपरिवार।

निर्वाणलाडू चढ़ाते हुए श्री कैलाशचंद जैन के पुत्र श्री आदीश जैन एवं श्री भंवरलाल फूलचंद जैन (रंगिया-आसाम) आदि।

श्री कैलाश चंद जैन की सुपुत्री कु. मंजू जैन एवं पुत्रवधू स्मृति जैन (लखनऊ) निर्वाणलाडू चढ़ाते हुए।

कुण्डलपुर पंचकल्याणक में अतिथियों का सम्मान

माननीय सांसद श्री राजीव रंजन सिंह का सम्मान करते हुए स्वागताध्यक्ष श्री रिषभदास जैन वाराणसी। साथ में श्री कमल चंद जैन खारीबावली।

माननीय विधायक श्री श्रवण कुमार जी पूज्य गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी से आशीर्वाद लेते हुए।

माननीय श्री सुरेन्द्र कुमार तरुण जी (पूर्व शिक्षा राज्यमंत्री) का सम्मान करते हुए श्री रामगोपाल जी।

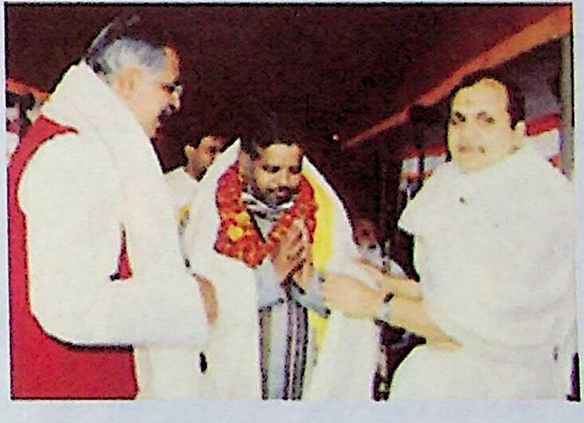

माननीय विधायक श्री श्रवण कुमार जी का सम्मान करते हुए समिति के महामंत्री द्वय श्री अनिल कुमार जैन दिल्ली एवं श्री अजय कुमार जैन आरा-पटना।

माननीय श्री श्यामकिशोर शर्मा जिला सत्र न्यायाधीश नालंदा का सम्मान करते हुए श्री ज्ञानचंद जैन, अध्यक्ष आरा जैन समाज एवं स्वागताध्यक्ष श्री रिषभदास जैन वाराणसी आदि।

श्री विजय कुमार एस.एच.ओ. नालंदा को प्रशस्ति द्वारा सम्मान करते हुए समिति के पदाधिकारीगण ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन, राकेश जैन, मेरठ, कैलाशचंद जैन, एवं श्री महेशचंद जैन मॉडलटाउन, दिल्ली।

कुण्डलपुर (बिहार) में गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माता जी ससंघ का चातुर्मास स्थापना समारोह

चातुर्मास स्थापना
दिनांक-12 जुलाई 2003

कुण्डलपुर में संघपति श्री महावीर प्रसाद जैन एवं श्री प्रेमचंद जी जैन (दिल्ली) माताजी के चरणों में श्रीफल समर्पित करते हुए एवं महामंत्री श्री अजय कुमार जैन (आरा-पटना) चातुर्मास हेतु प्रार्थना करते हुए।

धार्मिक न्यास बोर्ड के अध्यक्ष- श्री रामगोपाल जी जैन (पटना) आदि पूज्य माताजी से चातुर्मास हेतु प्रार्थना करते हुए।

महाराष्ट्र प्रान्तीय तीर्थ क्षेत्र समिति के अध्यक्ष - डा. पन्नालाल पापड़ीवाल, श्री जम्मनलाल एडवोकेट (औरंगाबाद), श्री राजाभाऊ पाटनी (नासिक), प्रदीप सटाणा आदि।

श्री ज्ञानचंद जी जैन अध्यक्ष- दि. जैन समाज, आरा एवं अन्य प्रतिनिधिगण, आरा की ओर से प्रार्थना करते हुए।

अयोध्या जैन तीर्थ के महामंत्री- श्री सरोज कुमार जैन एवं श्री कैलाशचंद जैन सर्राफ (लखनऊ), श्री प्रकाश जैन, विजय जैन, आदिश जैन, अवध की ओर से।

स्थानीय श्वेताम्बर श्रेष्ठी श्री सुनीलचंद जी सुचंती मंत्री- श्वेताम्बर भंडार तीर्थ कुण्डलपुर पूज्य माताजी को श्रीफल चढ़ाकर निवेदन करते हुए।

श्री अशोक कुमार सिन्हा- प्लानिंग पर्यटन ऑफिसर पटना का कुण्डलपुर में समिति की ओर से सम्मान करते हुए श्री दीपक जैन (वाराणसी) एवं श्री भागचंद जैन पहाड़िया (कलकत्ता)।

सम्मेदशिखर पर्वतराज पर पूज्य माताजी ससंघ

श्री पार्श्वनाथ टोंक सम्मेदशिखर में चरणवेदी के पास दिगम्बर एवं श्वेताम्बर दोनों आम्नाय के पुजारी।

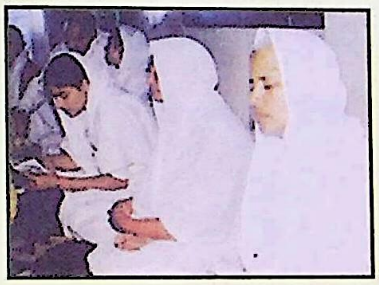

श्री पार्श्वनाथ टोंक पर पूज्य गणिनी माताजी एवं आर्यिका चंदनामती माताजी भगवान का ध्यान करते हुए।

भगवान चंद्रप्रभ की टोंक सम्मेदशिखर में पूज्य माताजी ससंघ।

सम्मेदशिखर पहाड़ पर प्रत्येक टोंक की वंदना करते हुए पूज्य ज्ञानमती माताजी व आर्यिका चंदनामती माताजी।

सम्मेदशिखर पहाड़ पर पूज्य माताजी ससंघ

सम्मेदशिखर में भगवान ऋषभदेव प्रतिमा विराजमान हेतु शिलान्यास

श्रावक महा सम्मेलन
तीर्थ संरक्षण एवं विकास

सम्मेदशिखर में मध्यलोक शोध संस्थान में आयोजित श्रावक महासम्मेलन के अवसर पर पूज्य माताजी का उद्बोधन।

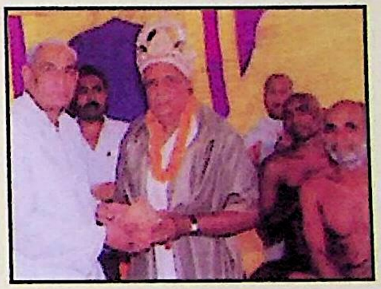

ऋषभदेव मंदिर का सम्मेदशिखर में निर्माण हेतु डा. पन्नालाल पापड़ीवाल का सम्मान बीसपंथी कोठी के मंत्री श्री महावीर प्रसाद जैन, सरिया द्वारा।

ऋषभदेव मंदिर के निर्माण हेतु पूज्य माताजी की प्रेरणा एवं शिलान्यास के लिए उपस्थित संघ एवं जनसमुदाय।

ऋषभदेव मंदिर निर्माण हेतु डा. पन्नालाल पापड़ीवाल एवं उनके पुत्र तथा पुत्रवधु व वास्तुकार श्री पवन जैन पापड़ीवाल शिलान्यास करते हुए।

ऋषभदेव मंदिर शिलान्यास के दृश्य में ट्रस्टी श्री कन्हैयालाल सेठी, औरंगाबाद (महा.), अनिल जैन, दिल्ली सपरिवार, कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन आदि

पूज्य माताजी की प्रेरणा से पावापुर में निर्मित भगवान महावीर मंदिर

भगवान महावीर की निर्वाण भूमि पावापुर (नालंदा) बिहार में पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के सानिध्य में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा

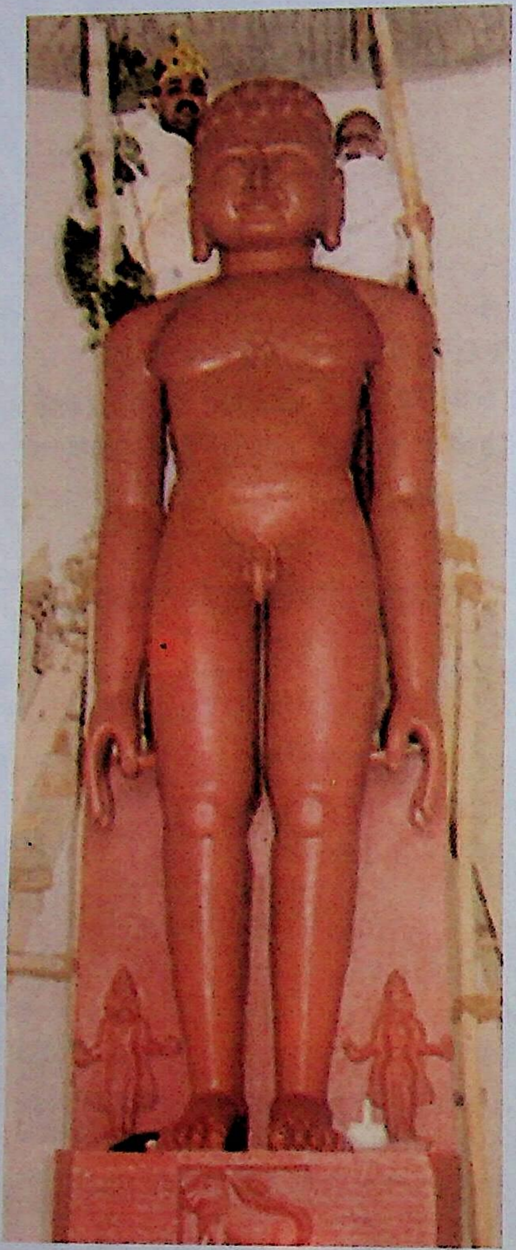

पावापुर में प्रतिष्ठित भगवान महावीर की लालवर्ण की सवा ११ फुट की उत्तुंग प्रतिमा।

प्रतिष्ठा के मध्य भगवान को मुनि अवस्था में आहार देते हुए श्री विजय कुमार जैन साथ हैं श्री सुभाष चन्द्र जैन ऋषभ विहार, सपरिवार एवं प्रतिष्ठाचार्य पं० नरेश कुमार जैन शास्त्री (हस्तिनापुर)

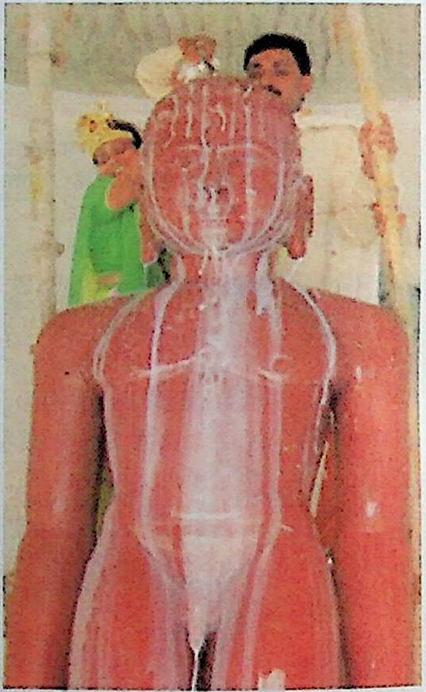

भगवान महावीर का मस्तकाभिषेक करते हुए श्रीमती रश्मि जैन ध. प. श्री विजय कुमार जैन, दरियागंज-दिल्ली।

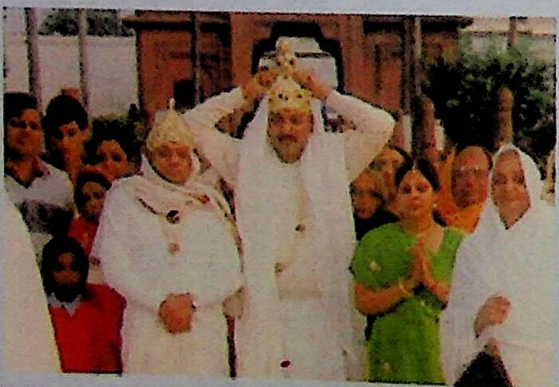

श्री विजय कुमार जैन सपरिवार भगवान को ले जाते हुए। साथ में गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी।

तीर्थंकर महावीरस्वामी
भगवान महावीर जिनबिम्ब पंचकल
पावापुरी दिगम्बर जैन

श्री सुभाष चंद जैन ऋषभ विहार, दिल्ली सपरिवार का स्वागत

भगवान महावीर जन्म भूमि में उनकी जन्म जयंती मनाने का पुण्य ही कुछ और है

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर में १५ अप्रैल पूज्य गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के सानिध्य में महावीर जयंती की रथयात्रा एवं मस्तकाभिषेक

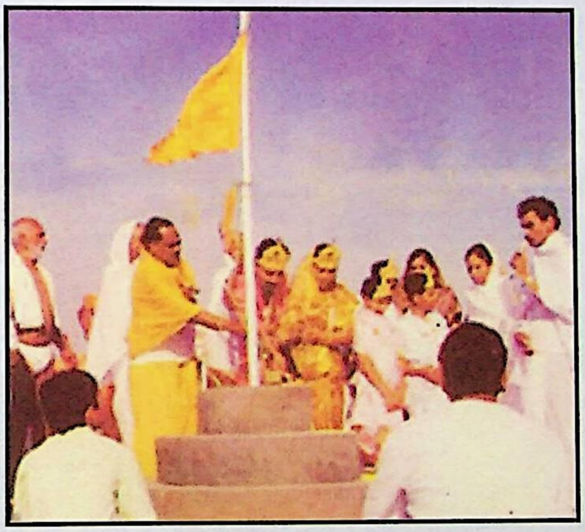

कुण्डलपुर में महावीर जयंती समारोह का झण्डारोहण करते हुए श्री कमलकुमार जैन सपरिवार, आरा।

माननीय जिलाधिकारी श्री हुकुम सिंह मीणा पूज्य माताजी से आशीर्वाद लेते हुए।

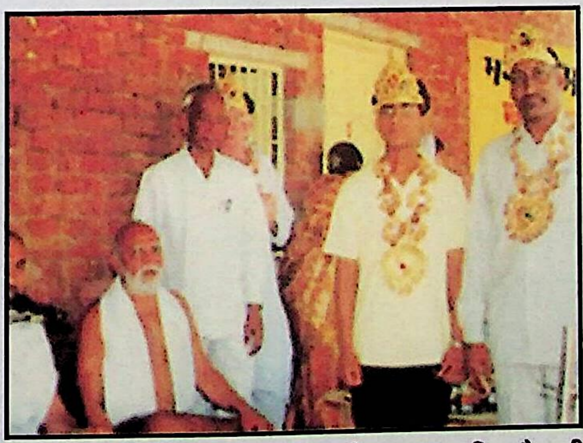

श्री राजेन्द्र दोशी (महामंत्री- चोपड़ाकुण्ड दि. जैन तीर्थ सम्मेदशिखर) का कुण्डलपुर में सम्मान।

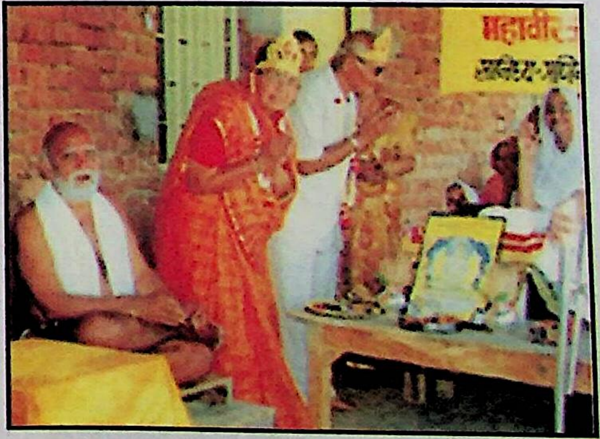

श्री हीराचन्द्र जी कासलीवाल, औरंगाबाद का कुण्डलपुर में सम्मान।

राजगीर तीर्थ पर भगवान मुनिसुव्रतनाथ मंदिर का निर्माण पूज्य माताजी की प्रेरणा से

भगवान मुनिसुव्रतनाथ की जन्म भूमि राजगृही तीर्थ क्षेत्र (नालंदा) में पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के सानिध्य में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा

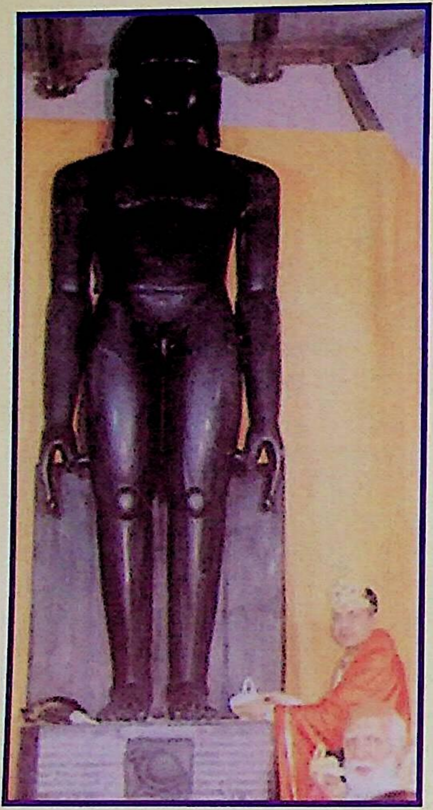

राजगीर में प्रतिष्ठापित भगवान श्री मुनिसुव्रतनाथ की श्यामवर्णी साढ़े १२ फुट उत्तुंग प्रतिमा।

प्रतिष्ठा के सौधर्म इन्द्र व इन्द्राणी श्री अनिल जैन एवं श्रीमती अनीता जैन, प्रीतविहार-दिल्ली भगवान की पूजा करते हुए।

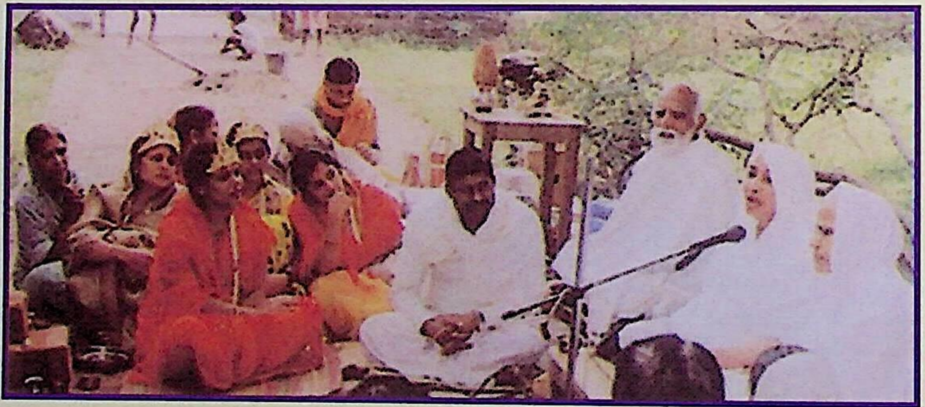

पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी प्रवचन करते हुए साथ में प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माता जी एवं पीठाधीश क्षुल्लक श्री मोतीसागर जी महाराज।

भगवान के माता-पिता श्रीमती कुसुमलता जैन एवं संघपति श्री महावीर प्रसाद जैन।

श्री मनोज कुमार जैन, गुड़गाँवा सपरिवार भगवान का पालना झुलाते हुए।

कुण्डलपुर महोत्सव २००३ में मुख्यअतिथि महामहिम राज्यपाल एम० रामा० जोइस

श्री वी० धनंजय कुमार जैन (पूर्व केन्द्रीय मंत्री) को ऋषभदेव नेशनल एवार्ड से सम्मान ।
प्रशस्ति प्रदान करते हुए महामहिम राज्यपाल एवं संस्था के अध्यक्ष ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन, महामंत्री श्री अनिल जैन

महामहिम राज्यपाल जी पूज्य माताजी से आशीर्वाद लेते हुए

महामहिम राज्यपाल जी का सम्मान करते हुए महामंत्री
श्री अजय कुमार जैन, श्री अनिल जैन, श्री रामगोपाल जैन,
संघपति जी आदि

महामहिम राज्यपाल जी एवं उनकी धर्मपत्नी पूज्य माताजी से
स्वाध्याय हेतु ग्रंथ लेते हुए, साथ में श्री कैलाश चंद जैन, दिल्ली

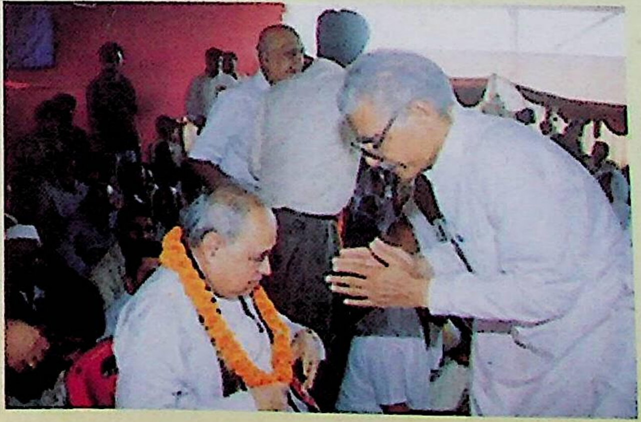

महामहिम जी का सम्मान करते हुए
श्री प्रकाशचंद जैन, सनावद

कुण्डलपुर महोत्सव २००३ में केन्द्रीय मंत्री श्री सी० पी० ठाकुर एवं वी० धनंजय कुमार

केन्द्रीय मंत्री माननीय श्री सी. पी. ठाकुर
पूज्य माताजी से आशीर्वाद लेते हुए,
साथ में कैलाशचंद, ब्र. रवीन्द्र कुमार, अनिल जैन,
राकेश जैन, मेरठ (९.१०.०३)

माननीय श्री सी. पी. ठाकुर को स्मृति चिन्ह
देकर सम्मानित करते हुए श्री वी. धनंजय कुमार,
ब्र. रवीन्द्र कुमार, संघपति श्री महावीर प्रसाद,
श्री माणिकचंद पाटनी इन्दौर, कैलाशचंद,
मनोज जैन, मेरठ, अनुपम जैन

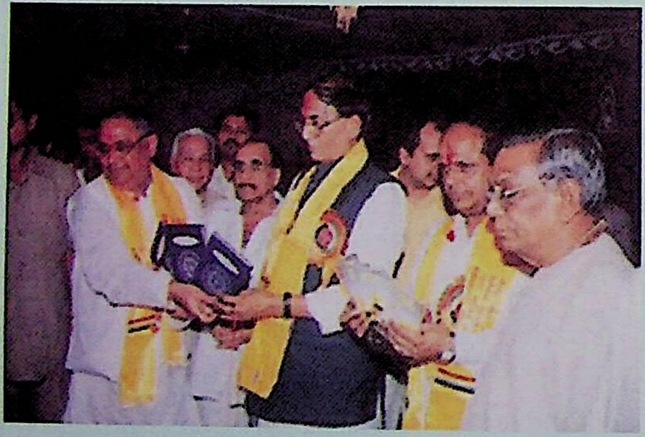

माननीय मंत्री जी श्री सी. पी. ठाकुर एवं
श्री वी. धनंजय कुमार ग्रंथ एवं पुस्तक
का विमोचन करते हुए । श्री प्रेमचंद जैन,
खारीबावली, दिल्ली विमोचन कराते हुए
एवं अन्य सदस्य

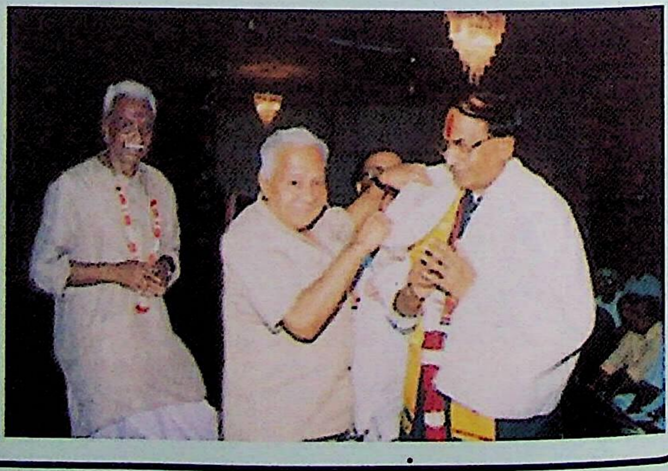

माननीय श्री सी. पी. ठाकुर का सम्मान करते हुए
श्री माणिकचंद पाटनी, इन्दौर,
साथ में श्री नेमकुमार

कुण्डलपुर महोत्सव २००३ में बोलते चेहरे

पूज्य गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी, महामहिम राज्यपाल श्री एम. रामा. जोइस, केन्द्रीय मंत्री श्री सी. पी. ठाकुर एवं केन्द्रीय मंत्री श्री वी. धनंजय कुमार विशाल जन संप्रदाय को संबोधित करते हुए।

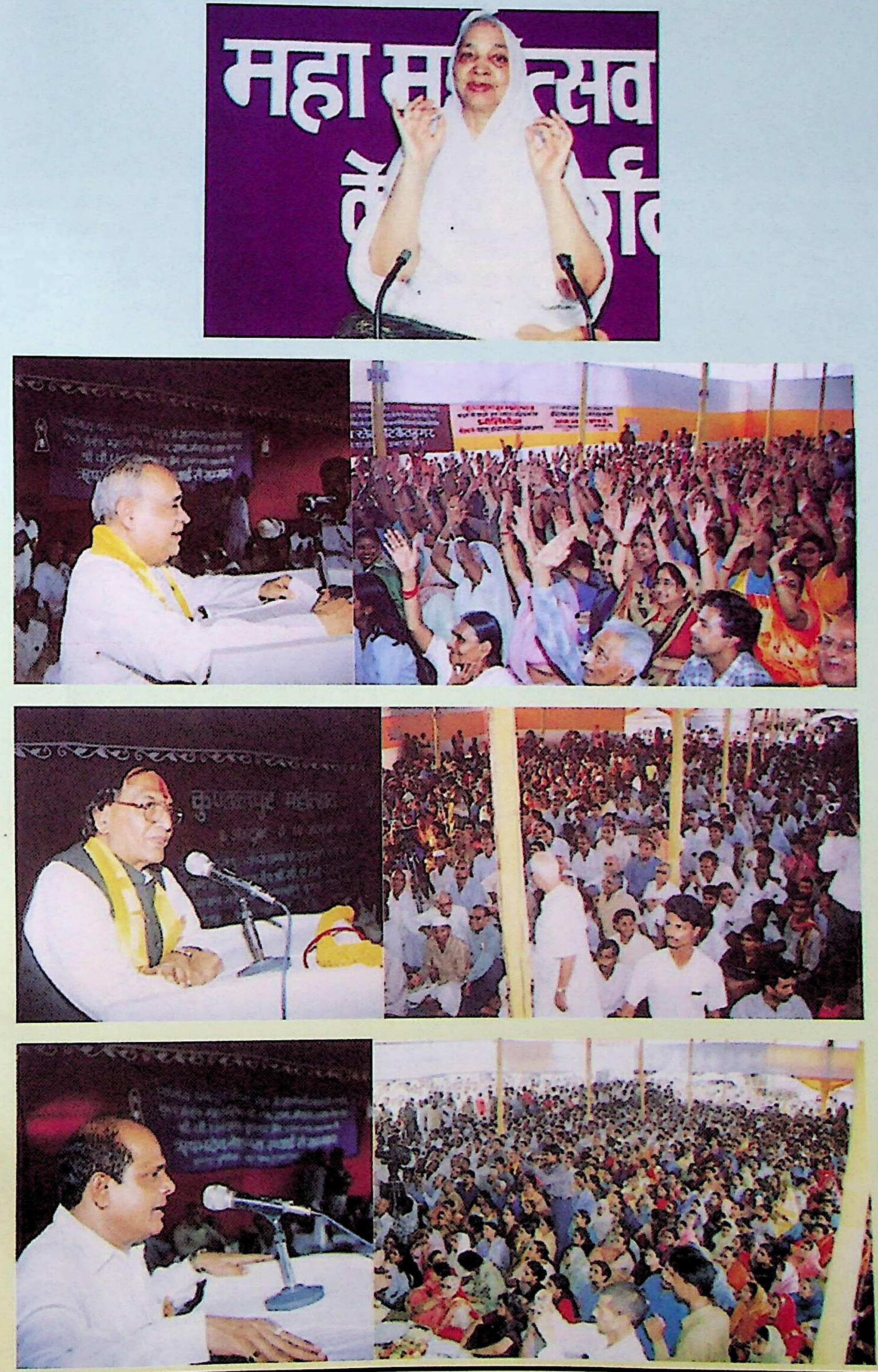

कुण्डलपुर महोत्सव (८ से १० अक्टूबर, २००३) की सचित्र झलकियाँ

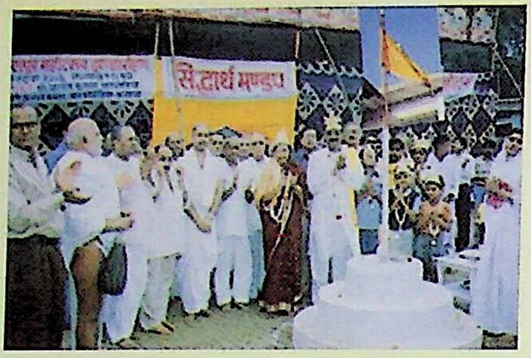
कुण्डलपुर महोत्सव का झण्डारोहण करते हुए
श्री आमोद कुमार कनोडिया सपरिवार, कलकत्ता।
साथ में संस्था के पदाधिकारीगण

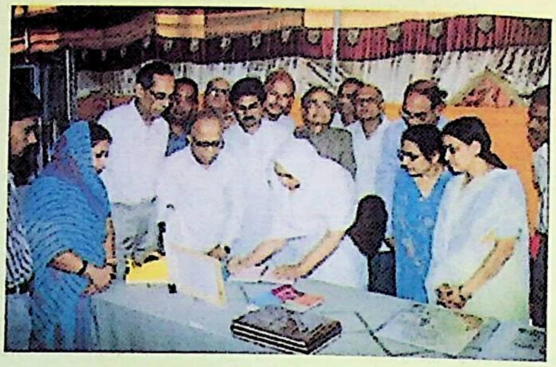
कुण्डलपुर महोत्सव के शुभ अवसर पर प्रदर्शित
इतिहास वीथिका का अवलोकन करके आशीर्वाद
लिखती हुई पूज्य माताजी। श्री सूरजमल बोबरा, इन्दौर,
डा. अनुपम जैन, इन्दौर एवं अन्य विद्वानगण

महोत्सव का दीपप्रज्वलन करते हुए श्री सुनीलचंद जैन
सर्राफ, मेरठ।साथ में समिति के पदाधिकारीगण।

श्री रवीन्द्र पंत, निदेशक - नव नालंदा महाविहार-नालंदा
का सम्मान करते हुए संघपति श्री महावीर प्रसाद,
श्री प्रेमचंद जी, एवं भाई जी

महोत्सव के शुभ अवसर पर
श्री जम्मनलाल कासलीवाल एडवोकेट के नेतृत्व में
महाराष्ट्र प्रांतीय भक्त मंडल पूज्य माताजी से आशीर्वाद लेते हुए।

श्री ए. के. पाण्डे (सहायक अधीक्षक- पुरातत्त्व संग्रहालय
नालंदा) का सम्मान करते हुए श्री मनोज कुमार जैन,
राकेश कुमार जैन, मेरठ एवं अनिल जैन, दिल्ली

विद्वतमहासंघ के पूर्व अध्यक्ष एवं मूर्धन्य विद्वान
पं. शिवचरणलाल जैन, मेनपुरी सभा
को संबोधित करते हुए

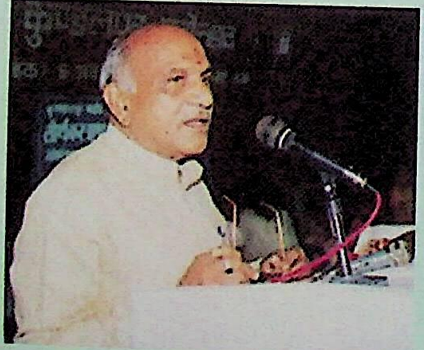
विद्वत महासंघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष
डॉ. शेखरचंद जैन, अहमदाबाद का संबोधन

केन्द्रीय महिला संगठन की महामंत्री
श्रीमती सुमन जैन वक्तव्य देती हुईं

मंदिर वेदी प्रतिष्ठा एवं शिखर कलशारोहण २३ फरवरी २००३ के बोलते चित्र

मन्दिर वेदी प्रतिष्ठा एवं
शिखर कलशारोहण समारोह
23 फरवरी 2004

पूज्य माताजी के मंगल प्रवचन

पूज्य माताजी के सानिध्य में नवगृह शांति जिन मंदिर में
९ प्रतिमाएँ विराजमान करते हुए श्री ज्ञानचंद जैन, आरा, सपरिवार

शिखर पर कलश चढ़ाते हुए श्री दीपक जैन वाराणसी

पूज्य माताजी एवं कलशारोहणकर्ता श्री दीपक जैन, वाराणसी,
श्री ज्ञानचंद जैन, आरा एवं अन्य पदाधिकारीगण

माननीय जिलाधिकारी श्री आनंद किशोर जी को स्मृतिचिन्ह भेंटकर
सम्मान करते हुए अध्यक्ष ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन, महामंत्री
श्री अजय कुमार जैन, दीपक जैन, कैलाशचंद जैन

शिखर कलशारोहण
23 फरवरी 2004

श्री ज्ञानचंद जैन सपरिवार, आरा का सम्मान करते हुए
श्री प्रेमचंद जैन, दिल्ली एवं श्री महावीर प्रसाद पाटनी, झुमरीतलैया

श्री ऋषभदास जैन, दीपक जैन सपरिवार वाराणसी का सम्मान

कुण्डलपुर (नालंदा) में महावीर जयंती महोत्सव - ३ अप्रैल २००४

रथयात्रा में पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी, आर्यिका
श्री चंदनामती माताजी एवं क्षुल्लक श्री मोतीसागर जी महाराज।

विधायक श्री श्रवण कुमार जी को भगवान का
प्रतीक चिन्ह प्रदान करते हुए श्री कैलाशचंद चौधरी-सनावद।

भगवान महावीर जयन्ती महोत्सव
नंद्यावर्त महल, कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार

मंच पर विराजमान पूज्य माताजी ससंघ।

पूर्व शिक्षा मंत्री श्री सुरेन्द्र प्रसाद 'तरुण' को प्रतीक चिन्ह
प्रदान करते हुए श्री महावीर प्रसाद सेठी - सरिया।

दिगम्बर जैन महासमिति मध्यांचल-इंदौर से पधारे १५०
प्रतिनिधियों की ओर से पूज्य माताजी को नारियल
समर्पित करते हुए श्री माणिकचंद पाटनी-इंदौर
एवं अन्य कार्यकर्ता।

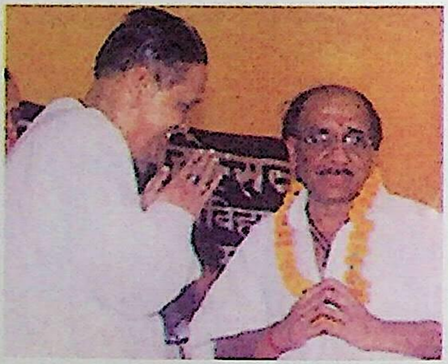

संघपति श्री महावीर प्रसाद जैन का स्वागत
करते हुए श्री कन्हैयालाल सेठी - औरंगाबाद।

महिला संगठन, गया की महिलाओं का सम्मान
करते हुए संघस्थ ब्र. कु. बीना जैन।

गया जैन समाज के अध्यक्ष - श्री वीरेन्द्र कुमार जैन का सम्मान
करते हुए समिति के महामंत्री श्री अनिल कुमार जैन

नंद्यावर्त महल कुण्डलपुर में भगवान शांतिनाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा २८ जून से २ जुलाई २००४

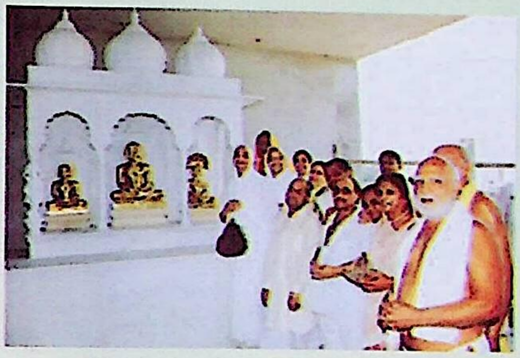

नंद्यावर्त महल में प्रतिष्ठापित भगवान शांतिनाथ, भगवान चन्द्रप्रभु एवं भगवान पार्श्वनाथ के समक्ष पूज्य माताजी एवं भक्तगण

प्रतिष्ठा के सौधर्म इन्द्र - श्री कमल कुमार जैन, आरा व इन्द्राणी श्रीमती अनुपमा जैन के साथ भगवान का पालना झुलाते हुए।

प्रतिष्ठा में भगवान की दीक्षा का दृश्य, पूज्यमाताजी, क्षुल्लकजी एवं सौधर्म इन्द्र-इन्द्राणी

भगवान की पालकी ले जाते हुए इन्द्रगण

नंद्यावर्त महल में चैत्यालय की वंदना करते हुए सौधर्म इन्द्र कमल कुमार जैन एवं इन्द्राणी श्रीमती अनुपमा जैन, आरा

भगवान के माता-पिता श्री ऋषभदास जैन एवं श्रीमती पार्वती जैन, वाराणसी

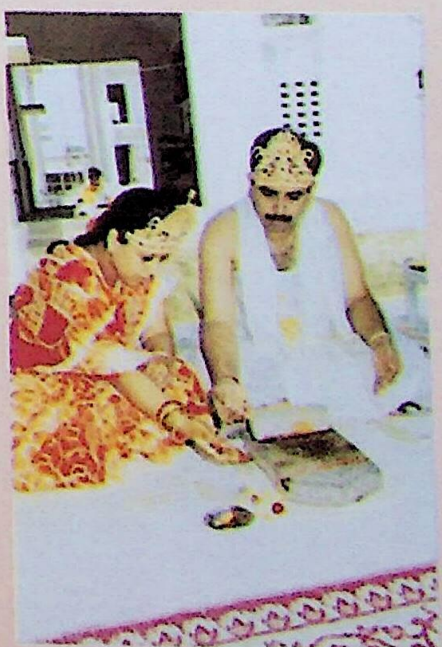

सौधर्म इन्द्र-इन्द्राणी प्रतिष्ठा की विधि करते हुए

कुण्डलपुर में चातुर्मास स्थापना समारोह, १ जुलाई २००४ की सचित्र झलकियाँ एवं त्रिकाल चौबीसी मंदिर में भगवान विराजमान

कुण्डलपुर (नालन्दा) में
श्री ज्ञानमती माताजी ससंघ का
चातुर्मास स्थापना समारोह
दोपहर ३ बजे

श्री ज्ञानचंद जैन (अध्यक्ष - जैन समाज, आरा)
द्वारा चातुर्मास के लिए पूज्य माताजी से निवेदन

त्रिकाल चौबीसी मंदिर में भगवान विराजमान करते हुए
श्री चिंरजीलाल कासलीवाल, पटना एवं श्री आनंद प्रकाश जैन, दिल्ली

संघपति श्री महावीर प्रसाद जैन
श्रीफल चढ़ाकर निवेदन करते हुए

माननीय जिलाधिकारी श्री मिश्रीप्रसाद पासवान
पूज्य माताजी को श्रीफल चढ़ाकर आशीर्वाद लेते हुए

महाराष्ट्र प्रांतीय तीर्थक्षेत्र कमेटी के अध्यक्ष
डा. पन्नालाल पापड़ीवाल के नेतृत्त्व में भक्त मंडल द्वारा निवेदन

श्री भागमल जैन, चित्तौड़ एवं श्री जय प्रकाश जैन फिरोजपुर
पूज्य माताजी को पिच्छी प्रदान करते हुए

श्री ऋषभदास जैन, दीपक जैन द्वारा चातुर्मास की प्रार्थना

श्री कमलचंद जैन, दिल्ली आदि द्वारा
श्री कैलाश चंद जैन सर्राफ लखनऊ का सम्मान

कुण्डलपुर से प्रवर्तित भगवान महावीर ज्योति रथ को सन्तों के आशीर्वाद

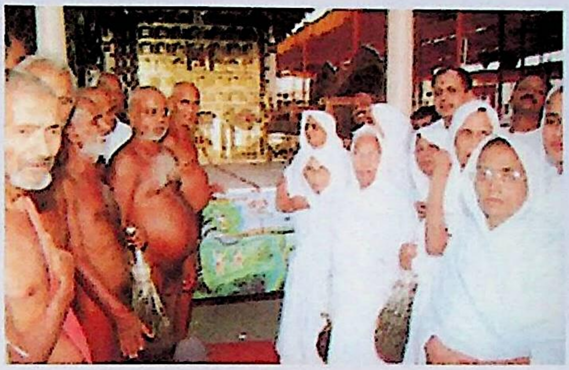

आचार्यरत्न श्री अभिनंदन सागर जी महाराज,
उपाध्याय श्री निजानंद सागर जी एवं
आर्यिका श्री प्रज्ञामती माता जी ससंघ (इन्दौर - ४ मई २००३)

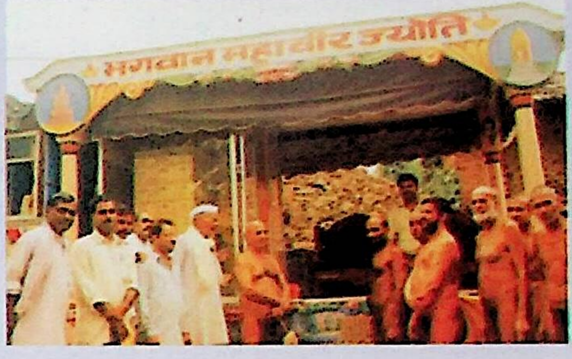

आचार्य श्री वर्धमान सागर जी एवं
आचार्य श्री रयण सागर जी ससंघ
(पारसोला, राज. - ७ मई २००३)

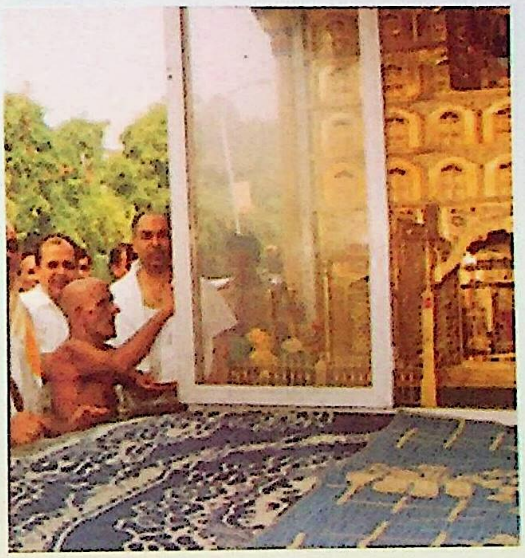

आचार्य श्री बाहुबली सागर जी रथ पर
स्वस्तिक बनाते हुए (ऋषभ विहार, दिल्ली १८ जुलाई २००४)

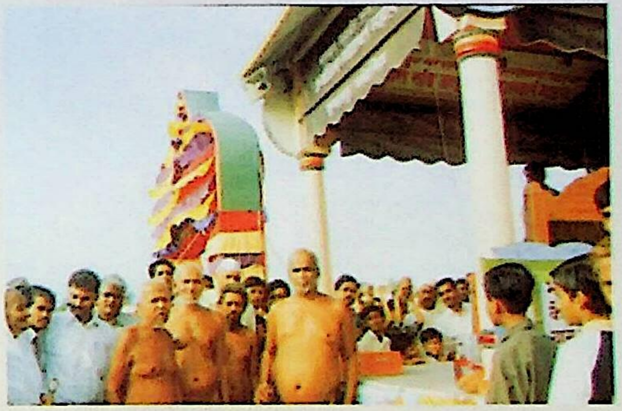

बालाचार्य श्री योगीन्द्र सागर जी ससंघ
(पुनर्वास कालोनी, बासवाड़ा, १५ मई २००४)

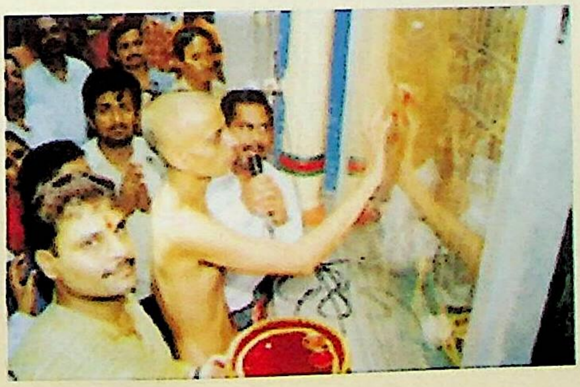

आचार्य श्री शांतिसागर जी महाराज रथ पर
स्वस्तिक बनाते हुए (शांति मोहल्ला, दिल्ली,
१९ जुलाई २००४)

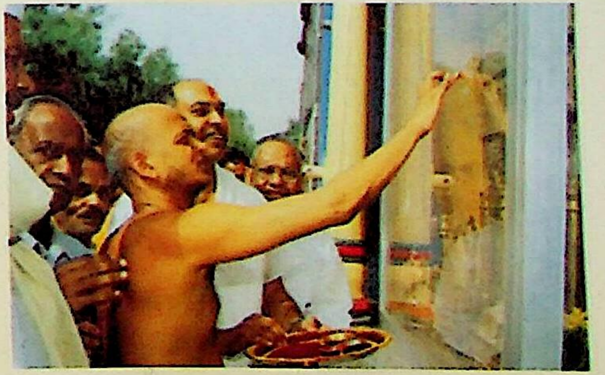

उपाध्याय श्री कामकुमार नन्दिजी रथ पर
स्वस्तिक बनाते हुए (२० जुलाई, प्रीत विहार, दिल्ली)

भगवान महावीर ज्योति रथ को सन्तों के आशीर्वाद

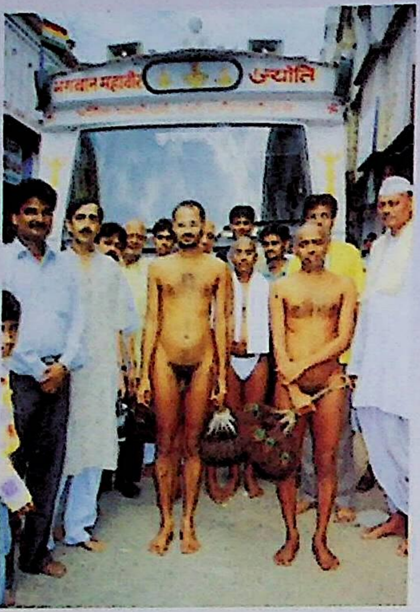

मुनि श्री कर्म विजय नंदिजी एवं
मुनि श्री पुण्यसागर जी - (झुमरीतलैया ३१ जुलाई)

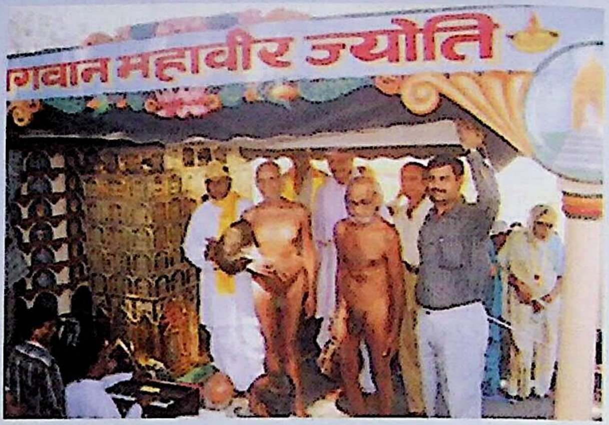

मुनि श्री विरागसागर जी व
मुनि श्री हेमंत सागर जी, मंदसौर (१५ अक्टूबर, २००३)

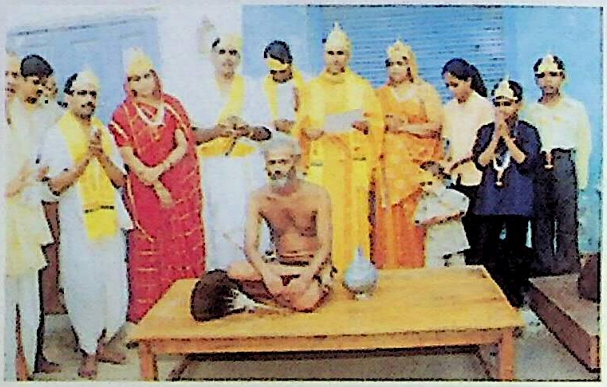

मनि श्री रविनंदिजी (चीतरी, राज. १७ मई २००४)

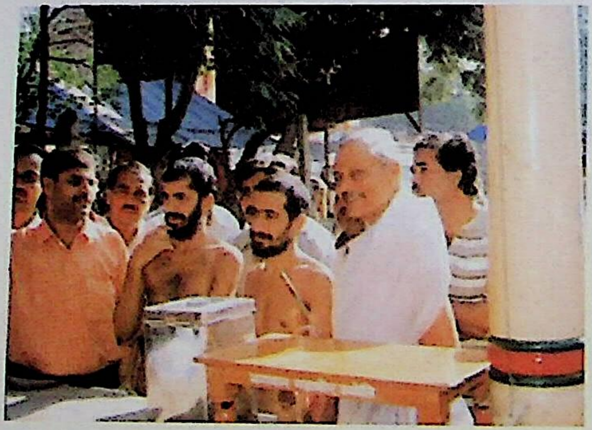

मुनि श्री प्रार्थना सागर जी व मुनि श्री प्रमुख सागर जी
(नीमच १७ अक्टूबर, २००३)

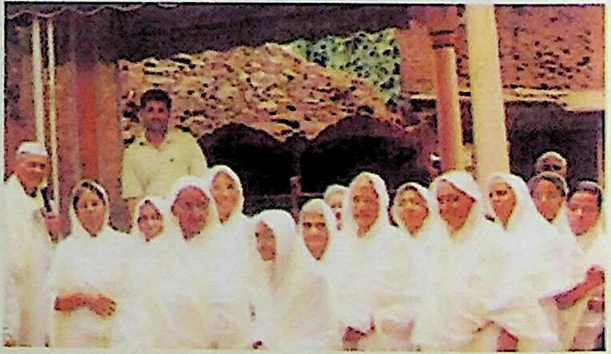

गणिनी आर्यिका श्री सुपार्श्वमती माताजी
एवं आर्यिका वृंद, पारसोला (७ मई २००४)।
साथ में ब्रं. सुधर्म चंद व विजय जैन

मुनि श्री समन्वयसागर जी (वाराणसी २४ जुलाई २००४)

आर्यिका श्री विशिष्टमती माताजी ससंघ
(सिवनी, म० प्र०) रथ की
शोभायात्रा के साथ

ऐलक श्री गोसलसागर जी (कलकत्ता, १५ अगस्त ०४),
साथ में संचालक - पं० सुधर्म चंद, संयोजक - विजय जैन

पूज्य स्वस्ति भट्टारक श्री भुवनकीर्तिस्वामी,
साथ में पं. अकलंक जैन, विजय जैन
आदि (आरा, २५ जुलाई २००४)

भगवान महावीर ज्योति रथ के स्वागत समारोह में नेता गण।

श्रीमती वसुन्धरा राजे सिंधिया, मुख्यमंत्री राजस्थान का स्वागत करते हुए संयोजक श्री विजय जैन (बागी दौरा २ मई २००४)

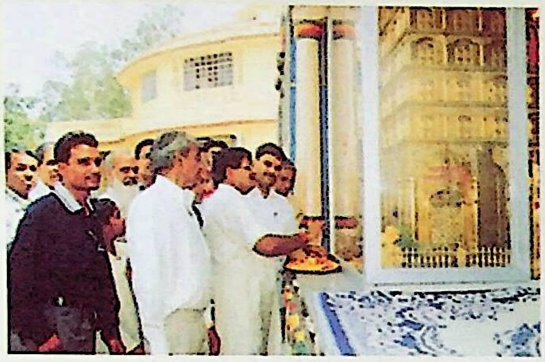

माननीय श्री गुलाबचंद कटारिया, लोक निर्माण मंत्री, राजस्थान (उदयपुर २३ मई ०४)। साथ में विजय जैन संयोजक

श्रीमती किरण माहेश्वरी सांसद उदयपुर, साथ में श्री विजय जैन, संयोजक - (२३ मई ०४)

श्री आसू जैन (इंन्कमटैक्स डिपार्टमेंट) लखनऊ एवं रिटायर्ड इंजी. श्री धर्मवीर जी जैन रथ पर स्वस्तिक बनाते हुए (लखनऊ, २२ जुलाई २००४)

राजस्थान के मंत्री श्री शांति कुमार धारीवाल, विधायिका श्रीमती पूनम गोयल (कोटा, राज. १९ अक्टूबर, २००३), साथ में ब्र. रवीन्द्र कुमार, कैलाश चंद, रमेश तिजारिया, विजय जैन

फिरोजाबाद में प्राचार्य श्री नरेन्द्र प्रकाश जैन एवं नगरपालिका के अध्यक्ष श्री मनीष आसीजा आदि गणमान्य महानुभाव

जयपुर (राज.) में रथप्रवर्तन १८ जनवरी २००४, मंच पर श्री महावीर प्रसाद जैन, विधायक, ब्र. रवीन्द्र कुमार, अनिल जैन, पं. सुधर्म चंद, विजय जैन, पं. प्रदीप जैन

कलकत्ता बेलगछिया में रथप्रवर्तन (१५ अगस्त ०४)

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर में इन्द्रध्वज मंडल विधान, सर्वतोभद्र मंडल विधान एवं विश्व शांति महावीर विधान अगस्त-सितम्बर २००४। सानिध्य - पूज्य माताजी ससंघ

महाराष्ट्र प्रदेश दिगम्बर जैन तीर्थ क्षेत्र कमेटी के अध्यक्ष डॉ० पन्ना लाल पापडीवाल सौधर्म इन्द्र बनकर एवं सुपुत्र श्री संजय पापड़ीवाल सपरिवार इन्द्र ध्वज विधान की पूजा करते हुए निर्देशन कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन

श्री भागमल जैन (चित्तौड़) सौधर्म इन्द्र बनकर एवं श्री राजकुमार जैन (गाजियाबाद), इंजी. श्री गुणसागर जैन (दिल्ली), श्री ज्ञानसागर जैन (दिल्ली), सपरिवार सर्वतोभद्र मंडल विधान की पूजा करते हुए

श्री सुरेश चन्द्र झांझरी व श्री नरेन्द्र झांझरी (झुमरीतलैया) सपरिवार, पं० अकलंक जैन (लखनऊ) सपरिवार, डॉ० देवेन्द्र जैन (भोपाल) सपरिवार इन्द्रध्वज विधान करते हुए।

पर्यूषण पर्व सितम्बर २००४ में पूज्य माताजी के सानिध्य में महाराष्ट्र प्रान्तीय भक्तगणों द्वारा विश्व शांति महावीर विधान का आयोजन किया गया। सौधर्म इन्द्र बनने का सौभाग्य प्राप्त किया श्री कस्तूरचंद बड़जाते - सौ. पुष्पाबड़जाते औरंगाबाद (महा.) ने ।

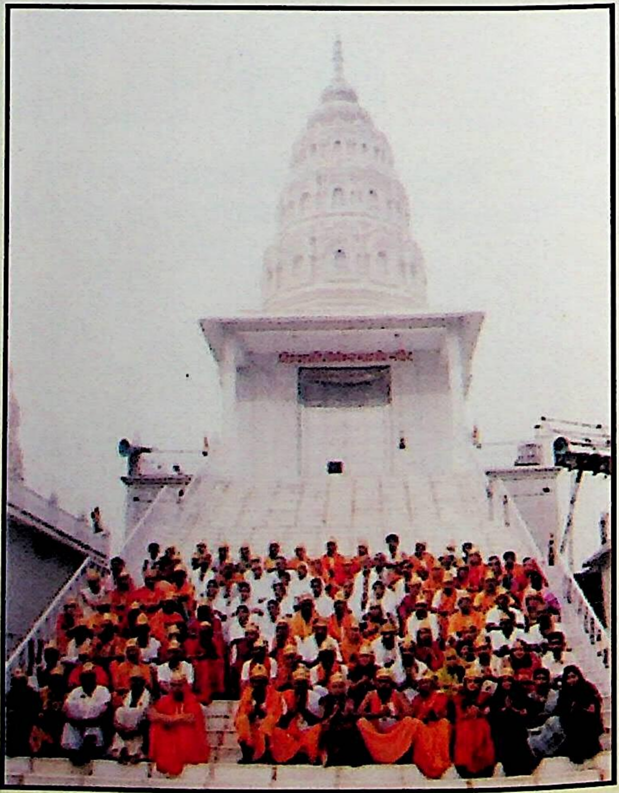

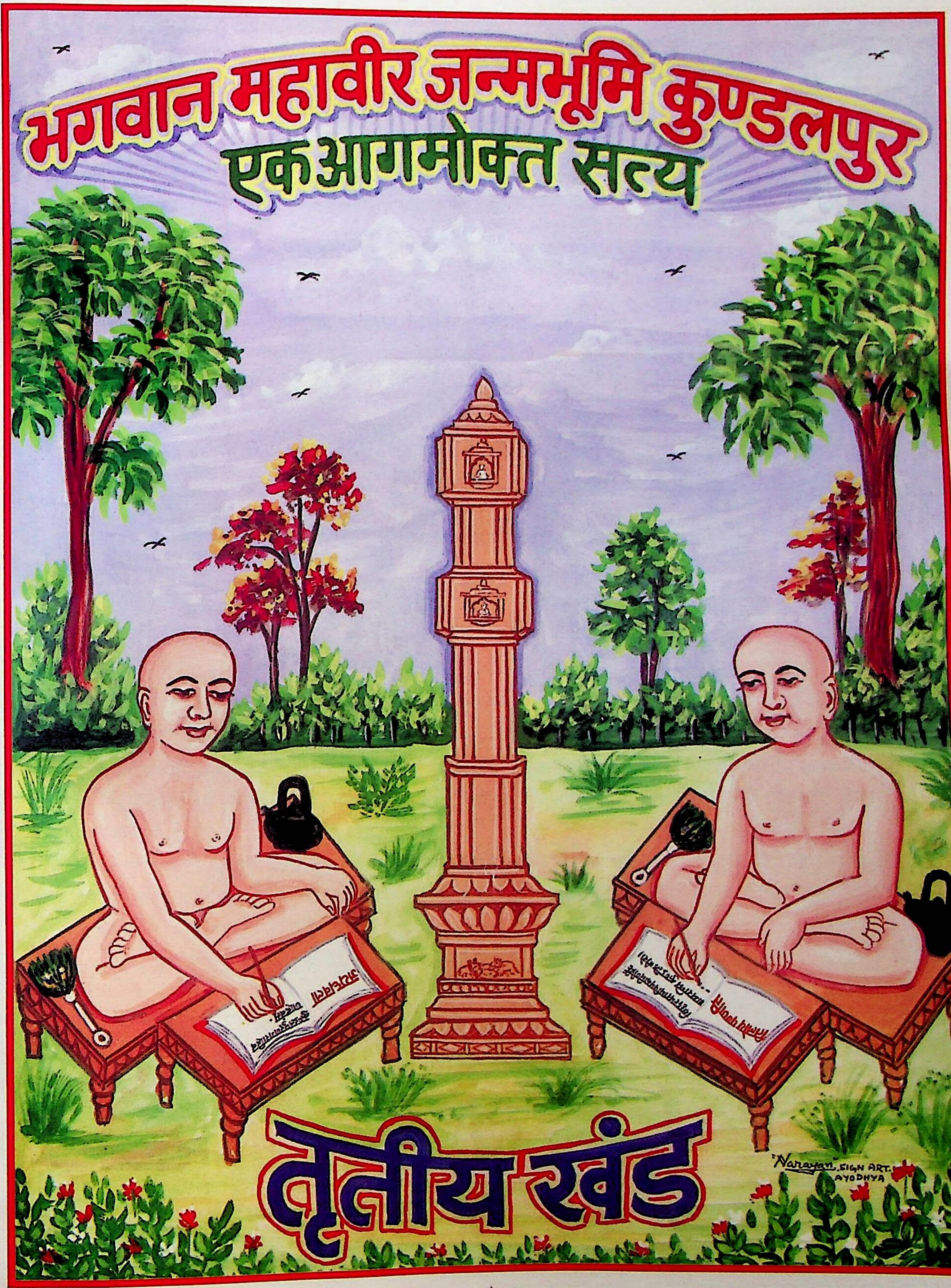

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर

एक आगमोक्त सत्य

तृतीय खंड

Narayan, SIGN ART. AYODHYA

4847

''आगम के दर्पण में कुण्डलपुर और वैशाली''

–गणिनीप्रमुख आर्यिका ज्ञानमती

भगवान महावीर की जन्मभूमि ''कुण्डलपुर'' है ऐसा वर्णन श्रीयतिवृषभआचार्यदेव ने अतिप्राचीन तिलोयपण्णत्ति ग्रंथ में कहा है–

सिद्धत्थरायपियकारिणीहिं, णयरम्मि कुण्डले वीरो।
उत्तरफग्गुणिरिक्खे, चित्तसियातेरसीए उप्पण्णो।।546।।

भगवान महावीर कुण्डलपुर नगर के राजा सिद्धार्थ की रानी प्रियकारिणी के गर्भ से चैत्र शुक्ला तेरस के दिन उत्पन्न हुए हैं।

षट्खण्डागम महाग्रंथ के चतुर्थ खंड में वर्तमान में प्रकाशित 9वीं पुस्तक में लिखा है–

''आषाढ़जोण्हपक्खछट्ठीए कुंडलपुरणगराहिव णाहवंस-सिद्धत्थ-णरिन्दस्स तिसिलादेवीए गब्भमागंतूण तत्थ अट्ठदिवसाहिय णवमासे अच्छिय चइत्तसुक्कपक्ख तेरसीए रत्तीए उत्तराफग्गुणी णक्खत्ते गब्भादो णिक्खंतो।।''

आषाढ़ मास की शुक्ला षष्ठी के दिन कुण्डलपुर नगर के अधिपति नाथवंशी राजा सिद्धार्थ की रानी त्रिशला देवी के गर्भ में आकर वहाँ आठ दिन अधिक नवमाह पर्यंत रहकर चैत्र शुक्ल पक्ष की त्रयोदशी के उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में भगवान महावीर ने जन्म लिया था।

भगवान का जन्म रात्रि में हुआ था ऐसा कथन इसी ग्रंथ में है–

कुण्डपुरपुरवरिस्सर, सिद्धत्थक्खत्तियस्स णाहकुले।
तिसिलाए देवीए, देवीसदसेवमाणाए।।23।।

अच्छित्ता णवमासे, अट्ठ य दिवसे चइत्त-सियपक्खे।
तेरसिए रत्तीए, जादुत्तरफग्गुणीए दु।।24।।

अर्थात् कुण्डलपुर नगर के सिद्धार्थ क्षत्रिय के घर नाथकुल में सैकड़ों देवियों से सेवमान त्रिशला देवी के गर्भ में महावीर का जीव आया और वहां नौ माह आठ दिन रहकर चैत्र शुक्ला त्रयोदशी की रात्रि में उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र के रहते हुए भगवान का जन्म हुआ।

इस कुण्डलपुर को अनेक ग्रंथों में कुंडपुर भी कहा है लेकिन यह छोटा सा कुण्डग्राम नहीं है प्रत्युत् विदेहदेश की महान-विशाल राजधानी थी। देखिए–

अथ देशोऽस्ति विस्तारी, जम्बूद्वीपस्य भारते।
विदेह इति विख्यातः स्वर्गखण्डसमः श्रिया।।1।।
प्रतिवर्षविनिष्पन्नधान्यगोधनसंचितः।
सर्वोपसर्गनिर्मुक्तः प्रजासौस्थित्य सुन्दरः।।2।।

सखेटखर्वटाटोपिमटम्बपुटभेदनैः।
द्रोणामुखाकरक्षेत्रग्रामघोषैर्विभूषितः।।3।।
किं तस्य वर्ण्यते यत्र स्वयं क्षत्रियनायकाः।
इक्ष्वाकवः सुखक्षेत्रे संभवंति दिवश्च्युताः।।4।।

तत्राखण्डलनेत्रालीपद्मनीखण्डमण्डलम् ।
सुखाम्भः कुण्डमाभाति नाम्ना कुण्डपुरं पुरं।।5।।
यत्र प्रासादसंघातैः शंखशुभ्रैर्नभस्तलम् ।
धवलीकृतमाभाति शरन्मेघैरिवोन्नतैः।।6।।

चन्द्रकान्तकरस्पर्शाच्चन्द्रकान्तशिलाः निशि।
द्रवन्ति यद्गृहाग्रेषु प्रस्वेदिन्य इव स्त्रियः।।7।।
सूर्यकान्तकरासंगात् सूर्यकान्ताग्रकोटयः।
स्फुरन्ति यत्र गेहेषु विरक्ता इव योषितः।।8।।

पद्मरागमणिस्फीतिर्यत्र प्रासादमूर्धनिं ।
इनपादपरिष्वंगादंगनेवातिरज्यते।।9।।
मुक्तामरकतालौकर्वज्रवैडूर्यविभ्रमैः।
एकमेवं सदा धत्ते यत्समस्ताकरश्रियम् ।।10।।

शाल शैलमहावप्रपरिखापरिवेषिणः।
यस्योपरि परं गच्छत्यमित्रेतरमण्डलम् ।।11।।
एतावतैव पर्याप्तं पुरस्य गुणवर्णनम् ।
स्वर्गावतरणे तद्यद्वीरस्याधारतां गतम् ।।12।।

सर्वार्थश्रीमतीजन्मा तस्मिन् सिद्धार्थदर्शनः।
सिद्धार्थो भवदर्काभो भूपः सिद्धार्थपौरुषः।।13।।
यत्र पाति धरित्रीयमभूदेकत्र दोषिणी।
धर्मार्थिन्योपि यत्त्यक्तपरलोकभयाः प्रजाः।।14।।

कस्तस्य तान् गुणानुद्धान्नस्तुलयितुं क्षमः।
वर्द्धमानगुरुत्वं यः प्रापितः स नराधिपः।।15।।
उच्चैःकुलाद्रिसंभूता सहजस्नेहवाहिनी।
महिषी श्रीसमुद्रस्य तस्यासीत् प्रियकारिणी।।16।।

चेतश्चेटकराजस्य यास्ताः सप्तशरीरजाः।
अतिस्नेहाकुलं चक्रुस्तास्वाद्या प्रियकारिणी।।17।।

कस्तां योजयितुं शक्तस्त्रिशलां गुणवर्णनैः।
या स्वपुण्यैर्महावीरप्रसवाय नियोजिता।।18।।

अर्थात् इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में लक्ष्मी से स्वर्गखण्ड की तुलना करने वाला विदेह इस नाम से प्रसिद्ध एक बड़ा विस्तृत देश है। यह देश प्रतिवर्ष उत्पन्न होने वाले धान्य तथा गोधन से संचित है, सब प्रकार के उपसर्गों से रहित है, प्रजा की सुखपूर्ण स्थिति से सुन्दर है और खेट, खर्वट, मटम्ब, पुटभेदन, द्रोणामुख, सुवर्ण-चांदी आदि की खानों, खेत, ग्राम और घोषों से विभूषित है।

जो नगर, नदी और पर्वत से घिरा हो उसे बुद्धिमान पुरुष खेट कहते हैं, जो केवल पर्वत से घिरा हो उसे खर्वट कहते हैं, जो पांच सौ गांवों से घिरा हो उसे पण्डितजन मटम्ब कहते हैं, जो समुद्र के किनारे हो तथा जहां पर लोग नाव से उतरते हों उसे पत्तन या पुटभेदन कहते हैं, जो किसी नदी के किनारे बसा हो उसे द्रोणामुख कहते हैं, जहां सोना-चांदी आदि निकलता हो उसे खान कहते हैं, अन्य उत्पन्न होने की भूमि को क्षेत्र या खेत कहते हैं जिनमें बाड़ से घिरे हुए घर हों, जिनमें अधिकतर शूद्र और किसान लोग रहते हैं तथा जो बाग-बगीचा और मकानों से सहित हों उन्हें ग्राम कहते हैं और जहां पर अहीर लोग रहते हैं उन्हें घोष कहते हैं। वह विदेहदेश इन सबसे विभूषित था। उस देश का क्या वर्णन किया जाये जहां के सुखदायी क्षेत्र में क्षत्रियों के नायक स्वयं इक्ष्वाकुवंशी राजा स्वर्ग से च्युत हो उत्पन्न होते हैं।

उस विदेहदेश में कुण्डपुर नाम का एक ऐसा सुन्दर नगर है जो इन्द्र के नेत्रों की पंक्तिरूपी कमलिनियों के समूह से सुशोभित है तथा सुखरूपी जल का मानो कुण्ड ही है। जहां शंख के समान सफेद एवं शरदऋतु के मेघ के समान उन्नत महलों के समूह से सफेद हुआ आकाश अत्यन्त सुशोभित होता है? जिसके महलों के अग्रभाग में लगी हुई चन्द्रकांतिमणि की शिलाएं रात्रि के समय चन्द्रमा रूपी पति के कर अर्थात् किरण स्पर्श से स्वेदयुक्त स्त्रियों के समान द्रवीभूत हो जाती हैं। जहाँ के मकानों पर लगे हुए सूर्यकान्तमणि के अग्रभाग की कोटियां, सूर्यरूपी पति के कर अर्थात् किरण के स्पर्श से विरक्त स्त्रियों के समान देदीप्यमान हो उठती हैं। जहां के महलों के शिखर पर लगे हुए पद्मराग मणियों की पंक्ति सूर्य की किरणों के संसर्ग से स्त्री के समान अत्यन्त अनुरक्त हो जाती है। उस नगर में कहीं मोतियों की मालाएं लटक रही हैं, कहीं मरकत मणियों का प्रकाश फैल रहा है, कहीं हीरा की प्रभा फैल रही है और कहीं वैडूर्यमणियों की नीली-नीली आभा छिटक रही है। उन सबसे वह एक होने पर भी सदा सब रत्नों की खान की शोभा धारण करता है। कोटरूपी पर्वत, बड़े-बड़े धूलि कुट्टिम और परिवार से घिरे हुए उस नगर के ऊपर यदि कोई जाता था तो मित्र अर्थात् सूर्य का मण्डल ही जा सकता है अमित्र अर्थात् शत्रुओं का मण्डल नहीं जा सकता था। इस नगर के गुणों का वर्णन तो इतने से ही पर्याप्त हो जाता है कि वह नगर स्वर्ग से अवतार लेते समय भगवान महावीर का आधार हुआ आर्थात् भगवान महावीर वहां स्वर्ग से आकर अवतीर्ण हुए।

राजा सर्वार्थ और रानी श्रीमती से उत्पन्न, समस्त पदार्थों को देखने वाले, सूर्य के समान देदीप्यमान और समस्त अर्थ-पुरुषार्थ सिद्ध करने वाले "सिद्धार्थ" वहां के राजा थे। जिन सिद्धार्थ के रक्षा करने पर पृथिवी इसी एक दोष से युक्त थी कि वहां की प्रजा ने धर्म की इच्छुक होने पर भी परलोक का भय छोड़ दिया था अर्थात् जो प्रजा धर्म की इच्छुक होती है उसे स्वर्ग, नरक आदि परलोक का भय अवश्य रहता है परन्तु परलोक का अर्थ शत्रु लोगों से विरोध दूर हो जाता है अर्थात् वहां की प्रजा धर्म की इच्छुक थी और शत्रुओं के भय से रहित थी। जो राजा सिद्धार्थ साक्षात् भगवान वर्द्धमान के पितृ पद को प्राप्त हुए थे उनके गुणों का वर्णन करने के लिए कौन मनुष्य समर्थ हो सकता है। जो उच्चकुलरूपी पर्वत से उत्पन्न स्वाभाविक स्नेह की मानो नदी थी ऐसी रानी प्रियकारिणी लक्ष्मी के समुद्रस्वरूप राजा सिद्धार्थ की प्रिय पत्नी थी। जिन सात पुत्रियों ने राजा चेटक के चित्त को अत्यधिक स्नेह से व्याप्त कर रखा था उन पुत्रियों में प्रियकारिणी सबसे बड़ी पुत्री थी जो अपने पुण्य से भगवान महावीर को जन्म देने के लिए प्रवृत्त हुई। उस त्रिशला के गुणवर्णन के लिए कौन समर्थ है?

श्री असगकवि विरचित "वर्द्धमान चरित"में भी कुण्डलपुर का सुन्दर वर्णन आया है यथा–

तत्रास्त्यथो निखिलवस्त्ववगाहयुक्तं, भास्वत्कलाधरबुधैः सवृषं सतारं।
अध्यासितंवियदिवस्वसमानशोभं ख्यातं पुरं जगति कुण्डपुराभिधानं।।
प्राकारकोटिघटितारुणरत्नभासां छायामयैः परिगता पटलैः समंतात्।
आभातिवारिपरिखा नितरामनेकां संध्याश्रियं विदधतीव दिवापि यत्र।।
धौतेन्द्रनीलमणिकल्पितकुट्टिमेषु यत्रोपहाररचितान्यसितोत्पलानि।
एकीकृतान्यपि सलीलतया प्रयांति व्यक्तिं पतद्भ्रमरहुकृंतिभिः समंतात्।।
जैत्रेषवः सुमनसो मकरध्वजस्य निस्तेजितांबुजरुचो शशलक्ष्मभासः।
अप्रावृषोः नवपयोधरकांतयुक्ता यस्मिनविभान्त्यसरितः सरसा रमण्यः।।
अत्युन्नताः शशिकरप्रकरावदाता मूर्धस्थरत्नरुचिपल्लवितांतरिक्षाः।
उत्संगदेशसुनिविष्टमनोज्ञरामाः पौरा विभांति भुवि यत्र सुधालयाश्च।।
लीलामहोत्पलमपास्य कराग्रसंस्थं कर्णोत्पलंच विगलन्मधु यत्र भृंगाः।
निश्वाससौरभरता वदने पतन्ति स्त्रीणां मृदुर्मृदुकराहतिभीप्सवश्च।।

कुण्डलपुर का वर्णन महाकवि असग ने अपने "वर्द्धमानचरित" में किया है। यह नगर सभी प्रकार की वस्तुओं से युक्त परकोटा, खातिका, वापिका एवं वाटिकाओं से परिपूर्ण था। कोट के प्रांत भागों में लगी हुई अरुणमणियां, पन्नाओं की प्रभा के छायामय पटलों से परिपूर्ण होने के कारण संध्याकालीन श्री का सृजन करती थीं। भूमि पर जटित इन्द्रनीलमणियां अपनी आभा से भ्रमरों की भ्रांति उत्पन्न करती थीं। उन्नत भवन और रत्नजटित गोपुर अपने सौन्दर्य से पथिकों के मन को आकृष्ट करते थे। मुक्ताओं की आभा के कारण इस नगर में श्वेत किरणों का वितान तना रहता था। धन-धान्य, पशु-सम्पत्ति आदि से युक्त यह नगर प्रजाजनों को अत्यन्त सुखप्रद था।

भगवान महावीर के समय यह कुण्डलपुर कितना वैभवपूर्ण था उसका वर्णन आपने पढ़ा। वास्तव में जहां सौधर्मइन्द्र की आज्ञा से कुबेर लगातार पन्द्रह महिने तक प्रतिदिन साढ़े सात करोड़-साढ़े सात करोड़ प्रमाण रत्नों की वर्षा करता हो और माता का महल नंद्यावर्त नाम से सात खन का हो तथा जहां माता का पलंग ही रत्नों से निर्मित हो उसके वैभव का हम और.आप क्या अनुमान लगा सकेंगे?

ऐसे ही "वीरजिणिंद चरिउ" और "महावीर पुराण"में भी विदेहदेश के अंतर्गत कुण्डपुर में भगवान महावीर का जन्म माना है। ऐसी पावन नगरी कुण्डलपुर जन्मभूमि को मेरा शत-शत नमन।

वैशाली

सिन्ध्वाख्यविषये भूभृद्वैशाली नगरेऽभवत्, चेटकाख्योऽतिविख्यातो विनीतः परमार्हतः।।3।।
तस्य देवी सुभद्राख्या तयोः पुत्र दशाभवन्, धनाख्यौ दशभद्रान्तावुपेन्द्रोऽन्यः सुदशवाक्।।4।।
सिंहभद्रः सुकम्भोजोऽकम्पनः सपतंङ्गकः, प्रभञ्जनः प्रभासश्च धर्मा इव सुनिर्मलाः।।5।।
सप्तर्धयो वा पुत्रयश्च ज्यायसी प्रियकारिणी, ततो मृगावती पश्चात्सुप्रभा च प्रभावती।।6।।
चेलनी पंचमी ज्येष्ठा षष्ठी चान्त्या च चन्दना, विदेहविषये कुण्डसन्ज्ञायां पुरि भूपतिः।।7।।
नाथो नाथकुलस्यैकः सिद्धार्थास्त्रिसिद्धिभाक्, तस्य पुण्यानुभावेन प्रियासीत्प्रियकारिणी।।8।।
विषये वत्सवासाख्ये कौशाम्बीनगराधिपः, सोमवंशे शतानीको देव्यस्यासीन्मृगावती।।9।।
दशार्णविषये राजा हेमकच्छपुराधिपः, सूर्यवंशाम्बरे राजसमो दशरथोऽभवत्।।10।।
तस्याभूत्सुप्रभा देवी भास्वतो वा प्रभामला, कच्छाख्यविषये रोरुकाख्यायां पुरि भूपतिः।।11।।
महानुदयनस्तस्य प्रेमदाऽभूत्प्रभावती, प्राप शीलवतीख्यातिं सा सम्यक्छीलधारणात्।।12।।

गान्धारविषये ख्यातो महीपालो महीपुरे, याचित्वा सत्यको ज्येष्ठामलब्ध्वा क्रुद्धवान् विधीः।।13।।
युद्धवा रणाङ्गणे प्राप्तमानभङ्ग स सत्रपः, सद्यो दमवरं प्राप्य ततः संयममग्रहीत्।।14।।

सिन्धु नामक देश की वैशाली नगरी में चेटक नाम का अतिशयप्रसिद्ध, विनीत और जिनेन्द्रदेव की अतिशय भक्त राजा था उसकी रानी का नाम सुभद्रा था। उन दोनों के दश पुत्र हुए जोकि धनदत्त, उपेन्द्र, सुदत्त, सिंहाभद्र, सुकुम्भोज, अकम्पन, पतंगक, प्रभंजन और प्रभास नाम से प्रसिद्ध थे तथा उत्तम क्षमा आदि दश धर्मों के समान जान पड़ते थे। इन पुत्रों के सिवाय सात ऋद्धियों के समान सात पुत्रियां भी थीं जिनमें सबसे बड़ी प्रियकारिणी थी, उससे छोटी मृगावती, उससे छोटी सुप्रभा, उससे छोटी प्रभावती, उससे छोटी चेलिनी, उससे छोटी ज्येष्ठा और सबसे छोटी चन्दना थीं। विदेहदेश के कुण्डनगर में नाथवंश के शिरोमणि एवं तीनों सिद्धियों से सम्पन्न राजा सिद्धार्थ राज्य करते थे। पुण्य के प्रभाव से प्रियकारिणी उन्हीं की स्त्री हुई थी। वत्सदेश की कौशाम्बी नगरी में चन्द्रवंशी राजा शतानीक रहते थे, मृगावती नामकी दूसरी पुत्री उनकी स्त्री हुई थी। दशार्णदेश के हेमकच्छ नामक नगर के स्वामी राजा दशरथ थे जोकि सूर्यवंशरूपी आकाश के चन्द्रमा के समान जान पड़ते थे। सूर्य की निर्मलप्रभा के समान सुप्रभा नामकी तीसरी पुत्री उनकी रानी हुई थी, कच्छदेश की रोरुका नामकी नगरी में उदयन नाम का एक बड़ा राजा था प्रभावती नामकी चौथी पुत्री उसी की हृदयवल्लभा हुई थी। अच्छी तरह से शीलव्रत धारण करने से इसका दूसरा नाम शीलवती भी प्रसिद्ध हो गया था। गन्धारदेश के महीपुर नगर में राजा सत्यक रहता था उसने राजा चेटक से उसकी ज्येष्ठा नामकी पुत्री की याचना की परन्तु राजा ने नहीं दी इससे उस दुर्बुद्धि मुर्ख ने कुपित होकर रणांगण में युद्ध किया परन्तु युद्ध में वह हार गया जिससे मानभंग होने से लज्जित होने के कारण उसने शीघ्र ही दमवर नामक मुनिराज के समीप जाकर दीक्षा धारण कर ली।

इन महाराज चेटक की पांचवी पुत्री चेलना मगधदेश के राजगृही नगरी में राजा श्रेणिक की रानी हुई हैं। तथा ज्येष्ठा और चन्दना कुमारी रही हैं। ये राजा चेटक सोमवंशी थे जैसा कि उत्तरपुराण में कहा है-

सुरलोकादभूः सोम-वंशेत्वं चेटको नृपः।

इन पंक्तियों से स्पष्ट है कि राजा सिद्धार्थ नाथवंशी थे और वैशाली के राजा चेटक सोमवंशी थे अतः इन दोनों राजाओं के देश अलग-अलग हैं, राजधानी अलग-अलग हैं और गोत्र भी अलग-अलग हैं। पिता के राजमहल में माता के आंगन में पन्द्रमहीनों तक रत्नों की वर्षा होती है। गर्भकल्याणक महोत्सव में इन्द्रों द्वारा भगवान के माता-पिता की पूजा की जाती है न कि नाना-नानी की। जैसा कि कहा भी है-

श्रुतस्वप्नफला देवी, तुष्टा प्राप्तेव तत्फलम्। अथामराधिपाः, सर्वे, तयोरभ्येत्य सम्पदा।।260।।
कल्याणाभिषवं कृत्वा, नियोगेषु यथोचितम्। देवान् देवीश्च संयोज्य, स्वं स्वं धाम ययुःपृथक्।।261।।

स्वप्नों का फल सुनकर वह त्रिशला महारानी इतनी संतुष्ट हुई मानों उनका फल उसने उसी समय ही प्राप्त कर लिया हो तदन्तर इन्द्रादि सभी देवों ने आकर बड़े वैभव के साथ राजा सिद्धार्थ और रानी प्रियकारिणी का गर्भकल्याणकसंबंधी अभिषेक करके देव-देवियों को यथायोग्य कार्यों में नियुक्त करके वे सब देवगण अपने-अपने स्थान चले गए।

इसी प्रकार दिगम्बर जैन परम्परा के ग्रन्थों में कहीं पर भी तीर्थंकर भगवनतों के चातुर्मास का वर्णन नहीं आया है। "तीर्थंकर महावीर और उनकी आचार्य परम्परा" नाम की पुस्तक में छठे परिच्छेद में भगवान महावीर स्वामी के बारह वर्ष के दीक्षित जीवन में बारह चातुर्मासमाने हैं और भिन्न-भिन्न उपसर्गो का वर्णन किया है जो दिगम्बर जैन ग्रन्थों के आलोक में संभव नहीं हो सकता है। भगवान के ऊपर मात्र उज्जयिनी नगरी के अतिमुक्तक वन में केवल एक बार ही रुद्र द्वारा उपसर्ग हुआ है न कि प्रतिदिन बार-बार व अनेकों बार। यह सब (चातुर्मास एवं अनेक बार उपसर्ग आदि) प्रकरण श्वेताम्बर ग्रन्थों से ही उद्धृत है ऐसा जानना।

* * *

भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर एक वास्तविक तथ्य

(मई 2001 में प्रस्तुत)

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

इस युग के प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की तीर्थंकर परम्परा में अन्तिम चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर के 2600वें जन्मजयंती महोत्सव के संदर्भ में प्राचीन जैनसिद्धान्त एवं पुराणग्रन्थों के अनुसार महावीर स्वामी का शोधपूर्ण वास्तविक परिचय यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है–

लगभग दो हजार वर्ष पूर्व श्रीयतिवृषभआचार्य द्वारा रचित **''तिलोयपण्णत्ति''** ग्रन्थ में वर्णन आया है कि–

सिद्धत्थरायपियकारिणीहिं, णयरम्मि कुंडले वीरो।
उत्तरफग्गुणिरिक्खे, चित्तसियातेरसीए उप्पण्णो।।549।। (चउत्थो महाधियारो पृ. 210)

अर्थात् भगवान महावीर कुण्डलपुर में पिता सिद्धार्थ और माता प्रियकारिणी से चैत्रशुक्ला त्रयोदशी के दिन उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में उत्पन्न हुए। यह कुण्डलपुर नगरी वर्तमान में बिहार प्रान्त के नालंदा जिले में स्थित है।

षट्खण्डागम के चतुर्थ खण्ड एवं नवमी पुस्तक की टीका में श्रीवीरसेनाचार्य ने भी कहा है कि–

''आषाढ जोण्ण पक्ख छट्ठीए कुण्डलपुर णगराहिव णाहवंश सिद्धत्थ णरिन्दस्स तिसिला देवीए गब्भमागंतूण तत्थ अट्ठदिवसाहिय णवमासे अच्छिम चइत्त सुक्क पक्ख तेरसीए रत्तीए उत्तराफग्गुणी णक्खत्ते गब्भादो णिक्खंतो।''

वर्तमान समय से 2599 वर्ष पूर्व बिहार प्रान्त के नालन्दा जिले में स्थित **''कुण्डलपुर''** नगर में जब भगवान महावीर ने जन्म लिया तो जन्म से 15 महीने पूर्व से ही माता त्रिशला के आँगन में रत्नवृष्टि हुई थी। इस रत्नवृष्टि के विषय में **''उत्तरपुराण''** नामक आर्षग्रन्थ में श्रीगुणभद्रसूरि कहते हैं–

तस्मिन्षण्मासशेषायुष्यानाकादागमिष्यति।
भरतेऽस्मिन्विदेहाख्ये, विषये भवनाङ्गणे।।251।।
राज्ञः कुण्डपुरेशस्य, वसुधारापतत्पृथुः।
सप्तकोटीर्मणिः सार्धाः, सिद्धार्थस्य दिनम्प्रति।।252।।

आषाढे सिते पक्षे.......(उत्तरपुराण पर्व 74)

अर्थ–जब अच्युत स्वर्ग में उसकी आयु छह महीने की बाकी रह गई और वह स्वर्ग से अवतार लेने के सन्मुख हुआ उस समय इसी भरतक्षेत्र के विदेह नामक देश में **''कुण्डलपुर''** नगर के राजा सिद्धार्थ के भवन के आंगन में प्रतिदिन साढ़े सात करोड़ रत्नों की भारी वर्षा होने लगी।

हरिवंशपुराण में भी श्रीजिनसेनाचार्य ने द्वितीय सर्ग के अन्दर श्लोक नं. 5 से 24 तक महावीर स्वामी के गर्भकल्याणक का प्रकरण लिखते हुए कुण्डलपुर नगरी का विस्तृत वर्णन किया है तथा उस नगरी की महिमा महावीर के जन्म से ही सार्थक बताते हुये कहा है कि–

एतावतैव पर्याप्तं, पुरस्य गुणवर्णनम्। स्वर्गावतरणे तद्धीरस्याधारतां गतम्।।12।।

(भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित हरिवंशपुराण)

अर्थ- इस कुण्डलपुर नगर के गुणों का वर्णन तो इतने से ही पर्याप्त हो जाता है कि वह नगर स्वर्ग से अवतार लेते समय भगवान महावीर का आधार बनी–भगवान महावीर वहाँ स्वर्ग से आकर अवतीर्ण हुए।

यहाँ विदेह देश के वर्णन से पूरा बिहार प्रान्त माना गया है। उसके अन्दर एक विशाल (96 मील का) नगर था जैसे–मालवादेश में ''उज्जयिनी'' नगरी, कौशलदेश में ''अयोध्या'' नगरी, वत्सदेश में ''कौशाम्बी'' नगरी आदि के वर्णन से बड़े-बड़े जिलों एवं प्रान्तों के अन्दर राजधानी के रूप में भगवन्तों की जन्मनगरियाँ समझनी चाहिए न कि आज के समान छोटे से ग्राम को तीर्थंकर की जन्मभूमि समझना चाहिए।

महाकवि श्रीपुष्पदंत विरचित **''वीरजिणिंदचरिउ''** (भारतीय ज्ञानपीठ से सन् 1974 में प्रकाशित) के पृष्ठ 11-12-

13 पर अपभ्रंश भाषा में वर्णन आया है कि–

इह जंबूद्दीवि भरहंतरालि।रमणीय विसइ सोहा विसालि।।
कुंडउरि राउ सिद्धत्थ सहिउ। जो सिरिहरु मग्गण वेस रहिउ।।

इन पद्यों का हिन्दी अनुवाद करते हुए डॉ. हीरालाल ने लिखा है कि–

जब महावीर स्वामी का जीव स्वर्ग से च्युत होकर मध्यलोक में आने वाला था तब सौधर्म इन्द्र ने जगत कल्याण की कामना से प्रेरित होकर कुबेर से कहा–

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में विशाल शोभाधारी विदेह प्रदेश में कुण्डपुर नगर के राजा सिद्धार्थ राज्य करते हैं..... ऐसे उन राजा सिद्धार्थ की रानी प्रियकारिणी के शुभ लक्षणों से युक्त पुत्र चौबीसवाँ तीर्थंकर होगा जिसके चरणों में इन्द्र भी नमन करेंगे। अतएव हे कुबेर! इन दोनों के निवास भवन को स्वर्णमयी, कान्तिमान व देवों की लक्ष्मी के विलासयोग्य बना दो। **इन्द्र की आज्ञा से कुबेर ने कुण्डलपुर को ऐसा ही सुन्दर बना दिया।**

इसी प्रकरण में आगे देखें–

पहुपंगणि तेत्थु वंदिय चरम जिणिंदें, छम्मास विरइय रयणविट्ठि जक्खिंदें।।7।।

अर्थात् ऐसे उस राजभवन के प्रांगण में अंतिम तीर्थंकर की वन्दना करने वाले उस यक्षों के राजा कुबेर ने छह मास तक रत्नों की वृष्टि की।

माणिक्यचन्द्र जैन बी.ए. खंडवा निवासी ने सन् 1908 में लिखी गयी अपनी पुस्तक LIFE OF MAHAVIRA (महावीर चरित्र) में कुण्डलपुर के विषय में निम्न निष्कर्ष दिए हैं–

1. The Description of the magnificence of his palace; the ceremonious rejoicings with which the birth of Mahavira was celebrated and the grandeur and pomp of his court; make us belive that Siddhartha was a powerful monarch of his time and his metropolis; Kundalpura; a big populour city. [Pg. 14-15]

"महाराजा सिद्धार्थ के महल की भव्यता, महावीर के जन्म पर मनाई गई खुशियाँ एवं उनके राजदरबार के वैभव का वर्णन हमें इस तथ्य के लिए विश्वस्त कर देते हैं कि सिद्धार्थ अपने समय के शक्तिशाली राजा थे और उनका महानगर **"कुण्डलपुर"** एक बड़ा घनी जनसंख्या वाला नगर था। (पृ. 14.15)

2. As to the birthplace of Mahavira; it is probable but not certain; as Dr. Hoernle suggests; that the Jaina tradition which represents Kundalpura as a large town may be correct; in as much as Kundalpura is taken as equivalent to Vesali [Sanscrit Vaishali]. He puts his birthplace of Kollaga; another sub of Vaishali..........

उपर्युक्त कथन के द्वारा लेखक श्रीमाणिक्यचन्द्रजी ने एक विदेशी विद्वान् के द्वारा वैशाली के एक स्थान **"कोलागा"** को भगवान महावीर का जन्मस्थान कहने पर अपना तर्क प्रस्तुत किया है कि **"कोलागा"** को महावीर की जन्मभूमि मानना बिल्कुल अनावश्यक एवं निराधार है क्योंकि **"कुण्डलपुर"** उनका जन्मस्थान निर्विवादित सत्य है जैसा कि उन्हीं के शब्दों में देखें–

Both the Digambaras and Shvetambaras assert that Kundalpura was the place where He was born. [Page 17]

अर्थात् दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनों ही एकमत से कुण्डलपुर को ही महावीर स्वामी की जन्मभूमि मानते हैं।

उन्होंने अपनी इसी पुस्तक में **"महावीरपुराण"** का संदर्भ देते हुये कुण्डलपुर को एक बड़े शहर के रूप में स्वीकार किया है–

अर्थात् कुण्डलपुर शहर एक बड़ी राजधानी के रूप में सर्वतोमुखी मान्यता का केन्द्र रहा है क्योंकि राजा चेटक

अपनी पुत्री त्रिशला जैसी तीर्थंकरजन्मदात्री कन्या का विवाह किसी छोटे-मोटे जमींदार से तो कर नहीं देते बल्कि अपने समान अथवा अपने से भी उच्चस्तरीय राजघराने में ही करते। इसी बात को LIFE OF MAHAVIRA में बताया है।

All these remarks go the show that Siddhartha; if not a powerful monarch; exercised; at least; a kingly authority; if not more to that of Chetaka. [Page 16]

ये कतिपय प्रमाण यहाँ महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर से संबंधित दिए गए हैं अब महावीर के ननिहाल "वैशाली" के विषय में जानकारी प्राप्त कीजिए–

1. वीरजिणिंदचरिउ ग्रन्थ की पाँचवी सन्धि (पृष्ठ 60) में श्रीपुष्पदंत महाकवि कहते हैं कि राजा श्रेणिक ने समवसरण में गौतम गणधर से पूछा है कि हे भगवन् ! मुझे उस आर्यिका चन्दना का चरित्र सुनाइये जिसके शरीर में चन्दन की सुगन्ध है तथा जिसने मिथ्यात्वरूपी अंधकार को दूर कर दिया है। राजा के इस प्रश्न को सुनकर गौतमस्वामी ने कहा है कि श्रेणिक! मैं चन्दना का वृत्तांत कहता हूँ सो सुनो–

सिन्धु-विसई वइसाली-पुरवरि। घर-सिरि-ओहामिय-सुर-वर-घरि।।
चेडउ णाम णरेसरु णिवसइ। देवि अखुद्द सुहद्द महासई।।

अर्थात्–सिन्धुविषय (नदी प्रधान विदेह नामक प्रदेश) में **वैशाली** नामक नगर है जहाँ के घर अपनी शोभा से देवों के विमानों की शोभा को भी जीतते हैं। उस नगर में **चेटक** नामक नरेश्वर निवास करते हैं।

उनकी महारानी महासती सुभद्रा से उनके धनदत्त, धनभद्र, उपेन्द्र, शिवदत्त, हरिदत्त, कम्बोज, कम्पन, प्रयंग, प्रभंजन और प्रभास नामक दस पुत्र उत्पन्न हुए।

उनकी अत्यन्त रूपवती सात पुत्रियाँ भी हुईं, जिनके नाम हैं–प्रियकारिणी, मृगावती, सुप्रभादेवी, प्रभावती, चेलिनी, ज्येष्ठा और चन्दना। इनमें से प्रियकारिणी (त्रिशला) का विवाह श्रेष्ठ नाथवंशी कुण्डलपुर नरेश सिद्धार्थ के साथ कर दिया गया।

इसी प्रकार उत्तरपुराण के 75वें पर्व में वर्णन आया है–

सिंध्वाख्ये विषये भूभृद्वैशाली नगरेभवत्। चेटकाख्योतिविख्यातो विनीतः परमार्हतः।।3।।

इस ग्रन्थ में भी राजा चेटक के दश पुत्र एवं सात पुत्रियों का कथन करते हुए ग्रन्थकार ने कुण्डलपुर के राजा सिद्धार्थ का वर्णन किया है।

उपर्युक्त प्रमाणों से सहज समझा जा सकता है कि बिहार प्रान्त में कुण्डलपुर और वैशाली दोनों अलग-अलग राजाओं के अलग-अलग नगर थे तथा कुण्डलपुर के राजा सिद्धार्थ एवं वैशाली के राजा चेटक का अपना-अपना विशेष अस्तित्व था। अतः एक-दूसरे के अस्तित्व को किसी की प्रदेश सीमा में गर्भित नहीं किया जा सकता है।

कुछ व्यवहारिक तथ्य–

1. किसी भी कन्या का विवाह हो जाने पर उसका वास्तविक परिचय ससुराल से होता है न कि मायके (पीहर) से।

2. उसकी सन्तानों का जन्म भी ससुराल में ही होता है। हाँ! यदि ससुराल में कोई विशेष असुविधा हो या सन्तान का जन्म वहाँ शुभ न होता हो तभी उसे पीहर में जाकर सन्तान को जन्म देना पड़ता है।

3. पुत्र का वंश तो पिता के नाम एवं नगर से ही चलता है न कि नाना-मामा के वंश और नगर से उसकी पहचान उचित लगती है।

इन व्यवहारिक तथ्यों से महावीर की पहचान ननिहाल वैशाली और नाना चेटक से नहीं किन्तु पिता की नगरी कुण्डलपुर एवं पिता श्री सिद्धार्थ राजा से ही मानना शोभास्पद लगता है। अपना घर एवं नगर भले ही छोटा हो किन्तु महापुरुष दूसरे की विशाल सम्पत्ति एवं नगर से अपनी पहचान बनाने में गौरव नहीं समझते हैं।

फिर वैशाली के दश राजकुमार किनके उत्तराधिकारी बने?

जैन ग्रन्थों के पौराणिक तथ्यों से यह नितान्त सत्य है कि राजा चेटक के दस पुत्र एवं सात पुत्रियाँ थीं। इनमें से पाँच पुत्रियों के विवाह एवं दो के दीक्षाग्रहण की बात भी सर्वविदित है। किन्तु यदि तीर्थंकर महावीर को वैशाली के

राजकुमार या युवराज के रूप में माना गया तो राजा चेटक के दशों पुत्र अर्थात् महावीर के सभी मामा क्या कहलाएंगे? क्या वे कुण्डलपुर के राजकुमार कहे जाएंगे?

यह न्यायिक तथ्य भी महावीर को कुण्डलपुर का युवराज ही स्वीकार करेगा न कि वैशाली का। अतः कुण्डलपुर के राजकुमार के रूप में ही महावीर का अस्तित्व सुशोभित होता है।

अपनी शोध सामग्री छोड़कर दूसरे उधार लिए गए साक्ष्यों पर विश्वास क्यों करें?

महावीर के पश्चात् जैनशासन दो हजार वर्षों से दिगम्बर और श्वेताम्बर इन दो परम्पराओं में विभक्त हो गया यद्यपि यह एक ऐतिहासिक सत्य है तथापि आज भी दिगम्बर जैनधर्म के अतिप्राचीन प्रमाण मौजूद हैं जिनमें महावीर का जन्मस्थान कुण्डलपुर ही माना गया है और उन तथ्यों के आधार पर तीर्थंकर के जन्म से पूर्व 15 माह तक रत्नवृष्टि हो सकती है। पुनः जहाँ रत्नवृष्टि हुई है, भगवान का जन्म तो उसी घर में मानना पड़ेगा अतः **''महावीर का जन्म त्रिशला माता की कुक्षि से कुण्डलपुर में ही हुआ था''** यह दृढ़ श्रद्धान रखते हुए कुण्डलपुर को विकास और प्रचार की श्रेणी में अवश्य लाना चाहिए।

कुण्डलपुर के विषय में वर्तमान अर्वाचीन (दूसरे साहित्य के अनुसार) शोध का महत्व दर्शाते हुए यदि दिगम्बर जैन ग्रंथों की प्राचीन शोधपूर्ण वाणी को मद्देनजर करके वैशाली को महावीर जन्मभूमि के नाम से माना जा रहा है तो अन्य ग्रन्थानुसार महावीर के दूसरा भाई, महावीर का विवाह, जन्म से पूर्व उनका गर्भपरिवर्तन आदि अनेक बातें भी हमें स्वीकार करनी चाहिए किन्तु शायद इन बातों को कोई भी दिगम्बर जैनधर्म के अनुयायी स्वीकार नहीं कर सकते हैं। अतः हमारा अनुरोध है कि अपनी परमसत्य जिनवाणी को आज के थोथे शोध की बलिवेदी पर न चढ़ाकर संसार के समक्ष उन्हीं प्राचीन दि. जैन ग्रन्थों के दस्तावेज प्रस्तुत करना चाहिए। कुल मिलाकर दिगम्बर होकर दिगम्बर परम्परा के ग्रन्थों को छोड़कर अन्य प्रमाणों से झूठी प्रामाणिकता सिद्ध करें, यह बात कुछ समझ में नहीं आती है।

वैशाली का विकास हो किन्तु महावीर जन्मभूमि के नाम से नहीं–

जहाँ जिस क्षेत्र में तीर्थंकर जैसे महापुरुषों के जन्म होते हैं वहाँ की तो धरती ही रत्नमयी और स्वर्णमयी हो जाती है अतः वहाँ दूर-दूर तक यदि उत्खनन में कोई पुरातत्व सामग्री प्राप्त होती रहे तो कोई अतिशयोक्ति वाली बात नहीं है अर्थात् महावीर के ननिहाल वैशाली में यदि कोई अवशेष मिले हैं तो वे जन्मभूमि कें प्रतीक न होकर यह पौराणिक तथ्य दर्शाते हैं कि तीर्थंकर महावीर के अस्तित्व को वैशाली में भी उस समय मानकर उनके नाना-मामा सभी गौरव का अनुभव करते हुए सिक्के आदि में उनके चित्र उत्कीर्ण कराते थे तभी वे आज पुरातत्व के रूप में प्राप्त हो रहे हैं।

दिगम्बर परम्परानुसार तीर्थंकर तो अपने माता-पिता के इकलौते पुत्र ही होते हैं अर्थात् उनके कोई भाई नहीं होता अतः माता-पिता के स्वर्गवासी होने के पश्चात् कुण्डलपुर की महिमा वैशाली में महावीर के मामा आदि जातिबन्धुओं ने प्रसारित कर वहाँ कोई महावीर का स्मारक भी बनवाया हो तो कोई अतिशयोक्ति नहीं है। अतः संभव है कि उस स्मारक के अवशेष वहाँ मिल रहे हों।

वर्तमान में भी यदि वैशाली जनसामान्य के आवागमन का सुविधायुक्त नगर है तो वहाँ महावीर स्वामी का स्मारक आज भी जनमानस की श्रद्धा का केन्द्र बन सकता है किन्तु विद्वानों को उपर्युक्त विषयों पर गहन चिन्तन करके ऐसा निर्णय लेना चाहिए कि प्राचीन सिद्धान्त धूमिल न होने पावें और भगवान महावीर के 2600 वें जन्मजयन्ती महोत्सव मनाने के साथ ही जैनसमाज के द्वारा कोई ऐसा विवादित कार्य न हो जावे कि महावीर की असली जन्मभूमि ''कुण्डलपुर'' ही विवाद के घेरे में पड़कर महावीर जन्मभूमि के सौभाग्य से वंचित हो जावे।

महावीरकालीन कुण्डलपुर को शहर की एक कालोनी नहीं कह सकते–

तीर्थंकर भगवान की जन्मनगरी में साक्षात् सौधर्म इन्द्र एक लाख योजन के ऐरावत हाथी पर बैठकर आता है और वहाँ भारी प्रभावना के साथ जन्मकल्याणक महोत्सव मनाता है अतः उस नगरी का प्रमाण साधारण नगरियों के समान न मानकर अत्यन्त विशेष नगरी मानना चाहिए।

जैसा कि शास्त्रों में वर्णन भी है कि तीर्थंकर की जन्मनगरी को उनके जन्म से पूर्व स्वर्ग से इन्द्र स्वयं आकर

३–६३

व्यवस्थित करते हैं। जिस कुण्डलपुर को स्वयं इन्द्रों ने आकर बसाया हो उसके अस्तित्व को कभी नकारा नहीं जा सकता है तथा उसके अन्तर्गत अन्य नगरों का मानना तो उचित लगता है, न कि अन्य नगरियों के अन्तर्गत दिल्ली शहर की एक कालोनी की भाँति "कुण्डलपुर" को मानना चाहिए।

कालपरिवर्तन के कारण लगभग 2500 वर्षों बाद उस कुण्डलपुर नगरी की सीमा भी यदि पहले से काफी छोटी हो गई हो तो भी उसके सौभाग्यमयी अस्तित्व को नकार कर किसी बड़े नगर को महावीर जन्मभूमि का दर्जा प्रदान कर देना उसी तरह अनुचित लगता है कि जैसे हमारा पुराना घर यदि आगे चलकर गरीब या खण्डहर हो जाये तो किसी पड़ोसी बड़े जमींदार के घर से अपने अस्तित्व की पहचान बनाना।

अभिप्राय यह है कि सर्वप्रथम तो महावीर की वास्तविक जन्मभूमि कुण्डलपुर नगरी का जीर्णोद्धार, विकास आदि करके उसे खूब सुविधासम्पन्न करना चाहिए अन्यथा उसे विलुप्त करने का दुस्साहस तो कदापि नहीं होना चाहिए।

यदि 50 वर्ष पूर्व समाज के वरिष्ठ लोगों ने सूक्ष्मता से दिगम्बर जैन ग्रन्थों का आलोढन किए बिना कोई गलत निर्णय ले लिया तो क्या प्राचीन सिद्धान्त आगे के लिए सर्वथा बदल दिए जाएँगे?

मेरी तो दिगम्बर जैन धर्मानुयायियों के लिए इस अवसर पर विशेष प्रेरणा है कि यदि इसी तरह निराधार और नए इतिहासविदों के अनुसार प्राचीन तीर्थों का शोध चलता रहा तो वह दिन दूर नहीं जब अपने हाथ से कुण्डलपुरी, पावापुरी, अयोध्या, अहिच्छत्र आदि असली तीर्थ निकल जाएँगे क्योंकि आज तो बिजौलिया (राज.) के लोग अहिच्छत्र तीर्थ को अस्वीकार करके बिजौलिया में भगवान पार्श्वनाथ का उपसर्ग होना मानते हैं। उसी प्रकार सन् 1993 में एक विद्वान अयोध्या में एक संगोष्ठी के अन्दर वर्तमान की अयोध्या नगरी पर ही प्रश्नचिन्ह लगाकर उसे अन्यत्र विदेश की धरती पर बताने लगे तब पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने उन्हें यह कहकर समझाया था कि शोधार्थी विद्वानों को इतना भी शोध नहीं करना चाहिए कि अपनी माँ पर ही संदेह की सुई टिकने लगे अर्थात् तीर्थंकर द्वारा प्रतिपादित जिनवाणी एवं परम्पराचार्यों द्वारा रचित ग्रन्थों को सन्देह के घेरे में डालकर या उन्हें झूठा ठहराकर लिखे गए शोध प्रबंध हमें मंजूर नहीं हैं।

शोध का अर्थ क्या है?

मुझे समझ में नहीं आता कि अपनी प्राचीन मूल परम्परा पर कुठाराघात करके अर्वाचीन ऐतिहासिक तथ्यों को उजागर करना ही क्या शोध की परिभाषा है? वैशाली कभी भी सर्वसम्मति से महावीर की जन्मभूमि के रूप में स्वीकार नहीं की गई क्योंकि आचार्यश्री धर्मसागर महाराज आदि अनेक साधु-साध्वी इस विषय से सन् 1974 में भी असहमत थे और प्राचीन साधु-साध्वी आज भी असहमत हैं। यदि इस जन्मजयन्ती महोत्सव पर वैशाली को "महावीरस्मारक" के रूप में विकसित किया जाता है तब तो संभवतः किसी साधु-साध्वी, विद्वान् अथवा समाज का प्रबुद्धवर्ग उसे मानने से इंकार नहीं करेगा किन्तु महावीर की जन्मभूमि वैशाली के नाम पर अधिकांश विरोध के स्वर गूंजेंगे।

इस विषय में चिन्तन का विषय यह है कि यदि दिगम्बर जैन समाज के ही लोग अपने प्राचीन आगम के प्रमाण छोड़कर दूसरे ग्रन्थों एवं अर्वाचीन इतिहासज्ञों के कथन प्रामाणिक मानने लगेंगे तो उन पूर्वाचार्यों द्वारा कथित आगम के प्रमाण कौन सत्य मानेंगे? इस तरह तो "प्राचीनभारत" पुस्तक में इतिहासकार प्रो. रामशरण शर्मा द्वारा लिखित जैनधर्म के लिए मिथक कथाओं का गढ़ा जाना आदि बातें भी सत्य मानकर जैनधर्म को भगवान महावीर द्वारा संस्थापित मानने में भी हमें कोई विरोध नहीं होना चाहिए? यदि सन् 1972 में लिखे गए उस कथन का हम आज विरोध कर उसे पूर्ण असंगत ठहराते हैं तो वैशाली को महावीर की जन्मभूमि कहने पर भी हमें इतिहास को धूमिल होने से बचाने हेतु गलत कहना ही पड़ेगा अन्यथा अपने हाथों से ही अपने पैर पर कुल्हाड़ी मारने के अतिरिक्त कोई अच्छा प्रतिफल सामने नहीं आएगा।

हम तो शोध का अर्थ यह समझते हैं कि अपने मूल इतिहास एवं सिद्धान्तों को सुरक्षित रखते हुये वर्तमान को प्राचीनता से परिचित कराना चाहिए। वैशाली में न तो महावीर स्वामी का कोई प्राचीन मंदिर है और न ही उनके महल आदि की कोई प्राचीन इमारत मिलती है, केवल कुछ वर्ष पूर्व वहाँ **"कुण्डग्राम"** नाम से एक नवनिर्माण का कार्य शुरू हुआ है। जैसा कि पण्डित बलभद्र जैन ने भी **"भारत के दिगम्बर जैन तीर्थ"** (बंगाल-बिहार-उड़ीसा के तीर्थ) नामक

ग्रन्थ में (सन् 1975 में हीराबाग-बम्बई से प्रकाशित) कुण्डलपुर तीर्थ के विषय में लिखा है–

"कुण्डलपुर बिहार प्रान्त के पटना जिले में स्थित है। यहाँ का पोस्ट आफिस नालन्दा है और निकट का रेलवे स्टेशन भी नालन्दा है। यहाँ भगवान महावीर के गर्भ, जन्म और तपकल्याणक हुए थे, इस प्रकार की मान्यता कई शताब्दियों से चली आ रही है। यहाँ पर एक शिखरबन्द मंदिर है जिसमें भगवान महावीर की श्वेतवर्ण की साढ़े चार फुट अवगाहना वाली भव्य पद्मासन प्रतिमा विराजमान है। वहाँ वार्षिक मेला चैत्र सुदी 12 से 14 तक महावीर के जन्मकल्याणक को मनाने के लिए होता है।"

कुण्डलपुर या कुण्डपुर को कुण्डग्राम कहकर वैशाली साम्राज्य की एक शासित इकाई मानते हुए क्या हमारे कुछ विद्वान् राजा सिद्धार्थ को चेटक राजा का घरजमाई जैसा तुच्छ दर्जा दिलाकर उन्हें वैशाली के ही एक छोटे से मकान का गरीब श्रावक सिद्ध करना चाहते हैं? क्या तीर्थंकर के पिता का कोई विशाल अस्तित्व उन्हें अच्छा नहीं लगता है?

पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी इस विषय में बतलाती हैं कि सन् 1974 में महावीर स्वामी के 2500वें निर्वाणमहोत्सव के समय पूज्य आचार्य श्री धर्मसागर महाराज, आचार्य श्री देशभूषण महाराज, पण्डितप्रवर सुमेरचन्द जैन दिवाकर, पंडित मक्खनलाल शास्त्री, डा. लाल बहादुर शास्त्री-दिल्ली, पं. मोतीचंद कोठारी-फल्टण आदि अनेक विद्वानों से चर्चा हुई तो सब एक स्वर से कुण्डलपुर वर्तमान तीर्थक्षेत्र को ही महावीर जन्मभूमि के रूप में स्वीकृत करते थे, वैशाली किसी को भी जन्मभूमि के रूप में इष्ट नहीं थी।

जरा चिन्तन कीजिए!

उदाहरण के तौर पर गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी का जन्म उत्तरप्रदेश के टिकैतनगर (जिला–बाराबंकी) ग्राम में हुआ है और उनके द्वारा हुई व्यापक धर्मप्रभावना के कार्य दिल्ली, हस्तिनापुर आदि में हुए हैं। आगे चलकर सौ-दो सौ वर्ष पश्चात् कोई शोधकर्ता इन स्थानों पर कुछ साक्ष्य पाकर टिकैतनगर की बजाए हस्तिनापुर, दिल्ली आदि को माताजी का जन्मस्थान मान ले तो क्या उसे सच मान लिया जाएगा? अर्थात् उन स्थानों को माताजी की कर्मभूमि तो माना जा सकता है किन्तु जन्मभूमि तो जन्म लिए हुए स्थान को ही मानना पड़ेगा।

इसी प्रकार कुछ पुरातात्विक साक्ष्यों के आधार पर **"वैशाली"** को महावीर जन्मभूमि के नाम से मान्यता नहीं दिलाई जा सकती है अतः विद्वान्, आचार्य, साधु-साध्वी सभी गहराई से चिन्तन कर कुण्डलपुर की खतरे में पड़ी अस्मिता की रक्षा करें।

जन्मभूमि के बाद निर्वाणभूमि की भी बारी आने वाली है!

वर्तमान की बुद्धिजीवी पीढ़ी ने महावीर स्वामी की कल्याणक भूमियों के भ्रामक प्रचार का मानो ठेका ही ले लिया है। इसे शायद पंचमकाल या हुण्डावसर्पिणी का अभिशाप ही कहना होगा कि महावीर स्वामी की जन्म एवं निर्वाण दोनों भूमियों को विवादित कर दिया गया है।

पच्चीस सौ सत्ताइस वर्षों पूर्व बिहार प्रान्त की जिस पावापुरी नगरी से महावीर ने मोक्षपद प्राप्त किया वह आज भी जनमानस की श्रद्धा का केन्द्र है और प्रत्येक दीपावली पर वहाँ देश भर से हजारों श्रद्धालु निर्वाणलाडू चढ़ाने पहुँचते हैं। जैसा शास्त्रों में वर्णन आया है बिल्कुल उसी प्रकार की शोभा से युक्त पावापुरी का सरोवर आज उपलब्ध है और उसके मध्यभाग में महावीर स्वामी के अतिशयकारी श्रीचरण विराजमान हैं फिर भी कुछ विद्वान् एवं समाजनेता गोरखपुर (उ.प्र.) के निकट सठियावां ग्राम के पास एक **"पावा"** नामक नगर को ही महावीर की निर्वाणभूमि पावा सिद्धक्षेत्र मानकर अपने अहं की पुष्टि कर रहे हैं।

इस तरह की शोध यदि अपने तीर्थ और शास्त्रों के प्रति चलती रही तब तो सभी असली तीर्थ एवं ग्रन्थों पर प्रश्नचिन्ह लग जाएँगे तथा जैनधर्म की वास्तविकता ही विलुप्त हो जाएगी। पावापुरी के विषय में भी अनेक शास्त्रीय प्रमाण उपलब्ध हैं किन्तु यहाँ विषय को न बढ़ाते हुये केवल प्रसंगोपात्त जन्मभूमि प्रकरण को ही प्रकाशित किया गया है सो विज्ञजन स्वयं समझें एवं दूसरों को समझावें।

* * *

''महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर'' के संदर्भ में पूज्य आचार्यश्री विद्यासागर जी महाराज से हुई वरिष्ठ पत्रकारों की चर्चा

1. दिगम्बर जैन महासमिति पत्रिका, 1-15 जून, 2002 से साभारः

लेखक-माणिकचंद जैन पाटनी (राष्ट्रीय महामंत्री-दिगम्बर जैन महासमिति)

दिगम्बर जैन महासमिति के महामंत्री एवं परिणयप्रतीक पत्रिका के प्रधान संपादक श्री माणिकचंद जैन पाटनी, दिगम्बर जैन महासमिति पत्रिका एवं अर्हत्वचन के प्रधान सम्पादक डॉ. अनुपम जैन, सन्मतिवाणी के सम्पादक पं. जयसेन जैन एवं वीरनिकलंक के युवा संपादक श्री रमेश जैन कासलीवाल का एक शिष्टमंडल भगवान महावीर की जन्मस्थली कुण्डलपुर पर उत्पन्न विवाद पर आचार्यश्री विद्यासागर जी से मार्गदर्शन प्राप्त करने हेतु दिनाँक 7 मई 2002 को नेमावर पहुँचा।

मध्यान्ह 1.45 पर सामायिक के उपरांत शिष्टमंडल के सदस्यों ने आचार्यश्री एवं समीप में विराजमान मुनिश्री योगसागर जी के चरणस्पर्श कर आशीर्वाद प्राप्त किया।

श्री माणिकचंद जैन पाटनी ने आचार्यश्री से निवेदन किया कि भगवान महावीर के जीवन को आधुनिक इतिहासकारों के द्वारा जिस प्रकार से विकृत किया जा रहा है, वह अत्यन्त चिन्तनीय स्थिति बन गई है। सन् 1974 में डॉ. हीरालाल जैन एवं डॉ. ए.एन. उपाध्ये ने अपनी पुस्तक "महावीर युग और जीवनदर्शन" में अनेक तर्कों से वैशाली के उपनगर जिला मुजफ्फरनगर तथा उससे दो किमी. दूर स्थित वासुकुण्ड को जन्मभूमि बताने का प्रयास किया है। उन्होंने लिखा है कि विगत एक शताब्दी में पुरातत्वसंबंधी खोज हुई उसमें प्राचीन भग्नावशेषों, मुद्राओं व शिलालेखों के आधार पर यह प्रमाणित हो गया है कि वासुकुण्ड ही कुण्डलपुर होना चाहिए जबकि भगवान महावीर की जन्मस्थली कुण्डलपुर के संबंध में प्राचीन ग्रंथ तिलोयपण्णत्ति, धवला, जयधवला, उत्तरपुराण, हरिवंशपुराण, वीरजिणिंदचरिउ, महावीरपुराण, वर्धमानचरित आदि अनेकों ग्रंथों में नालंदा के निकट कुण्डलपुर को ही जन्मस्थली बताया गया है। वहाँ के गाइड भी इसे ही भगवान की जन्मस्थली बताते आ रहे हैं। हम नित्य प्रतिदिन प्रातः से रात्रि तक पूजन, सामायिक, आरती, भजनों के माध्यम से कुण्डलपुर को जन्मस्थली कहते नहीं थकते हैं। वस्तुतः परम्परागतरूप से सदियों से जन-जन की आस्था एवं श्रद्धा का केन्द्र कुण्डलपुर ही है। वहाँ प्राचीन मंदिर भी है। कुछ वर्ष पूर्व वहाँ खुदाई में 13 दिगम्बर मूर्तियाँ मिली थीं जो सम्प्रति नालंदा के संग्रहालय में सुरक्षित हैं। इस संदर्भ में अ.भा.दि. जैन शास्त्री परिषद के अध्यक्ष एवं जैनगजट के संपादक प्राचार्य श्री नरेन्द्र प्रकाश जी जैन एवं तीर्थंकर ऋषभदेव जैन विद्वत् महासंघ के अध्यक्ष पं. शिवचरनलाल जी जैन मैनपुरी के द्वारा कुण्डलपुर को ही जन्मस्थली बताने वाले प्रामाणिक एवं तर्कपूर्ण लेखों से संबंधित एक पुस्तिका आचार्यश्री को डॉ. अनुपम जैन ने भेंट की। जिसे आचार्यश्री ने गंभीरतापूर्वक मनन किया। लेखों में दिए गए प्रमाणों पर प्रसन्नता व्यक्त करते हुए आचार्यश्री ने कहा–"हमें अपने तीर्थंकरों के जीवन के बारे में अपने प्राचीन ग्रंथों, आगमों के आधार पर ही निर्णय करना चाहिए। आचार्यवीरसेन स्वामी द्वारा धवला एवं जयधवला में कुण्डलपुर के बारे में लिखे गए वचन अकाट्य हैं।"

आचार्यश्री द्वारा वैशाली को जन्मभूमि बताने वाले साहित्य की जानकारी मांगने पर डॉ. अनुपम जैन ने बताया कि डॉ. राजाराम जैन, निदेशक-कुंदकुंदभारती ने 2 वर्ष पूर्व कुछ प्रमाणों को संकलित कर मुझे दिया था। इन दिनों वैशाली के प्राकृत एवं अहिंसा शोध संस्थान में कार्यरत डॉ. ऋषभचंद जैन "फौजदार" ने तमाम पुराने संदर्भों को फिर से इकट्ठा कर एक नया लेख बनाया है। मैं आपकी सेवा में उसकी प्रतियाँ अवलोकनार्थ भिजवा दूँगा।

45 वर्ष पूर्व वैशाली की चर्चा शुरू होने पर भी विद्वानों द्वारा जन्मभूमि विवाद पर उपेक्षावृत्ति का ही यह परिणाम है कि जन्मभूमि अनिर्णीत रह गई। उन्होंने डॉ. अनुपम जैन को आदेश दिया कि महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर के बारे में दिगम्बर जैन आगमों एवं प्राचीन ग्रंथों में उपलब्ध समस्त संदर्भों एवं आधुनिक विद्वानों द्वारा गत एक शताब्दी में लिखित

लेखों को संकलित कर कुण्डलपुर पर एक सर्वांगपूर्ण पुस्तक का सृजन करें जिससे वैशाली के पक्ष में दिए जा रहे तर्कों का युक्तिपूर्ण ढंग से निरसन हो सके। अब इस विवाद को यथाशीघ्र निर्णीत कर देना चाहिए।

एक स्थानीय पुराविद द्वारा प्राप्त पुरातात्विक सामग्री के आधार पर महावीर जन्मभूमि के कुण्डग्राम वैशाली में होने के अनुमान को व्यक्त करने पर वैशाली क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करने वाले तत्कालीन राष्ट्रपति महामहिम डॉ. राजेन्द्र प्रसाद जी द्वारा वैशाली के जन्मभूमि होने की मान्यता का समर्थन एवं उस क्षेत्र के विकास की भावना से समाज के तत्कालीन प्रभावी नेता आदरणीय साहू शांतिप्रसाद जी जैन के समर्थन देने से समाज के विद्वत्वर्ग में तो यह कुछ स्थान पा सकी, किन्तु जनता जनार्दन की आस्था नहीं पा सकी। साहू परिवार के प्रयास से शासन द्वारा स्थापित वैशाली अहिंसा प्राकृत एवं जैन शोध संस्थान की स्थापना, डॉ. हीरालाल जैन की इस संस्थान में नियुक्ति आदि से वैशाली का महत्व बढ़ा है। यह सब जानकारी दिये जाने पर एवं यह सूचना देने पर कि शासन द्वारा वैशाली के विकास एवं 2500वें निर्वाण महोत्सव के अधूरे कामों को पूरा करने हेतु 1.5 करोड़ स्वीकृत किए जाने की सूचना पर आचार्यश्री ने कहा कि आप शासन से आर्थिक सहयोग की अपेक्षा ही क्यों करते हो? आपका समाज सक्षम है और वह कोई भी योजना पूरी कर सकता है। आपको शासन से कोई मांग नहीं करना चाहिए। साथ ही अगर शासन स्मारक बनवा रहा है तो आपको उसकी चर्चा करने की क्या आवश्यकता है? आप अपना कार्य करते रहिए। आपके आगम में जो जन्मभूमि है आप उसका विकास करें। प्राचार्य नरेन्द्रप्रकाश जी जैन के लेख में वैशालिक शब्द की व्याख्या से आचार्यश्री ने सहमति व्यक्त की एवं कहा कि "वैशालिक"का अर्थ "वैशाली में जन्मे" इस प्रकार लेना उचित नहीं है।

श्री रमेश जैन कासलीवाल ने भगवान के गर्भकल्याणक की चर्चा करते हुए कहा कि भगवान गर्भ में आए तब इन्द्रों ने 9 मास तक रत्नों की वर्षा की तो यह कैसे संभव हो सकता है कि रत्नों की वर्षा मामा के यहाँ हो?

श्री पाटनी ने कहा कि शोधकर्ता अगर वासुकुण्ड को कुण्डलपुर कहते हैं तो क्या केवल 2 किमी. की दूरी में दो राजाओं – राजा सिद्धार्थ व राजा चेटक का राज्य संभव है। यह केवल कल्पनामात्र ही कहा जा सकता है और केवल नालंदा जिले का कुण्डलपुर ही भगवान महावीर की जन्मस्थली होना चाहिए।

पं. जयसेन जैन ने कहा कि इंदौर में 24-25 फरवरी को हुई राष्ट्रीय संगोष्ठी में लगभग 14-15 विद्वानों, जिसमें डॉ. शेखरचंद जैन-अहमदाबाद, डॉ. पदमचंद जैन-पानीपत, डॉ. अभयप्रकाश जैन-ग्वालियर, पं. शिखरचंद जैन एवं पं. शीतलचंद जैन-सागर आदि ने प्रबल तर्कों एवं प्रमाणों आदि के आधार पर **कुण्डलपुर-नालंदा को ही जन्मभूमि तय किया था।** फिर भी अनावश्यक विवाद पैदाकर समाज में भ्रम पैदा किया जा रहा है। इस पर पुनः आचार्यश्री ने कुण्डलपुर के समर्थन में अनेकों विद्वानों, मनीषियों से प्राप्त लेखों को संकलित कर एक पुस्तिका प्रकाशन हेतु आशीर्वाद दिया ताकि जन-जन में वास्तविक स्थिति का प्रचार हो सके। आचार्यश्री ने अंत में कहा कि दिगम्बर जैनागम में उल्लिखित तथ्यों को ही मान्य किया जाना चाहिए।

2. सन्मतिवाणी अप्रैल-मई 2002 से साभारः

लेखक-जयसेन जैन, इंदौर (सम्पादक-सन्मतिवाणी)

श्री दिगम्बर जैन सिद्धक्षेत्र सिद्धोदय-नेमावर में विराजित परमपूज्य संतशिरोमणि आचार्यश्री 108 विद्यासागर जी महाराज ससंघ के दर्शनार्थ इंदौर से कुछ जैन पत्रकारों का दल नेमावर पहुँचा। दिगम्बर जैन महासमिति के राष्ट्रीय महामंत्री श्री माणिकचंद पाटनी प्रधान सम्पादक-परिणय प्रतीक मासिक, इंदौर के नेतृत्व में डॉ. अनुपम जैन सम्पादक-अर्हत् वचन त्रैमासिक, इंदौर, पं. जयसेन जैन सम्पादक-सन्मतिवाणी मासिक, इंदौर तथा श्री रमेश कासलीवाल सम्पादक-वीर निकलंक मासिक, इंदौर आदि दल के प्रमुख सदस्य थे।

आहारचर्या एवं सामायिक के पश्चात् पूज्य आचार्यश्री के दर्शन हुए। आचार्यश्री अपने कक्ष में पूर्णरूपेण स्वस्थ एवं प्रसन्नमुद्रा में विराजित थे। समस्त पत्रकारों ने विनयपूर्वक आचार्यश्री को नमोस्तु किया और प्रसन्नतापूर्वक उनका आशीष प्राप्तकर धन्य हुए।

प्राथमिक औपचारिक चर्चा के उपरान्त श्री माणिकचंद पाटनी ने आचार्यश्री से निवेदन किया-"पूज्य गुरुदेव! भगवान महावीर का 2600वाँ जन्मजयंती महोत्सव वर्ष संपन्न हो गया किन्तु एक प्रश्न अनुत्तरित रहा, भगवान महावीर की जन्मस्थली कुण्डलपुर या वैशाली? जबकि आमधारणा यही है कि जन्मस्थली कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) ही है।" आचार्यश्री ने अपनी चिरपरिचित मधुर मुस्कान बिखेरते हुए प्रतिप्रश्न किया यह मामला अभी तक अनिर्णीत क्यों रहा? भगवान महावीर का जन्म कहाँ हुआ? यह भी एक विवादास्पद विषय है। पूज्य गुरुदेव ने कहा कि अभी तक दिगम्बर व श्वेताम्बर दोनों वर्गों ने सर्वसम्मति से किसी एक स्थान को जन्मस्थली स्वीकार नहीं किया है। आचार्यश्री ने कहा-ऐसा प्रतीत होता है कि शासन से अनुदान अथवा सहयोग राशि प्राप्त करने हेतु ही वैशाली को जन्मस्थली प्रचारित किया जा रहा है। यह भी सत्य है कि लगभग 45 वर्ष पूर्व देश के तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद जी ने भगवान महावीर की जन्मस्थली वैशाली घोषित की थी। आचार्यश्री ने अपनी बात आगे बढ़ाते हुए कहा कि शासन से अनुदान लेकर ज़ैनसमाज कोई धार्मिक निर्माण करे, यह उचित नहीं। यह जैनसमाज के स्वाभिमान के विपरीत है। श्वेताम्बर समाज की मान्यता भिन्न हो सकती है। शासन द्वारा स्वीकृत 100 करोड़ रुपये का उपयोग गौशाला, पशुरक्षा अथवा चिकित्सालय की सहायतार्थ करना उचित हो सकता है। तत्कालीन केन्द्रीयमंत्री श्रीमती मेनकागांधी ने भी इस संबंध में जो कुछ कहा था वह अपेक्षाकृत उचित है। हमने भी उक्त सेवाकार्यों हेतु केन्द्रीय शासन से अनुदान की मांग की है।

डॉ. अनुपम जैन ने पूज्य आचार्यश्री को जानकारी दी कि विगत दिवस इंदौर में दिगम्बर जैन महिला संगठन द्वारा आयोजित "भगवान महावीर : जीवन एवं दर्शन" राष्ट्रीय संगोष्ठी 24-25 फरवरी 2002 में देश के शीर्षस्थ विद्वानों द्वारा भगवान महावीर की जन्मस्थली कुण्डलपुर को ही बताया गया था। उन्होंने आचार्यश्री को देश के जाने माने विद्वद्द्वय शास्त्री परिषद के अध्यक्ष प्राचार्य श्री नरेन्द्रप्रकाश जैन-फिरोजाबाद तथा विद्वत् महासंघ के अध्यक्ष पं. श्री शिवचरनलाल जैन, मैनपुरी द्वारा लिखित लेखों की एक पुस्तिका भी भेंट की। पुस्तिका में अनेकों शास्त्रोक्त संदर्भों सहित कुण्डलपुर (नालंदा) को ही जन्मस्थली सिद्ध किया गया है। आचार्यश्री ने पुस्तिका का गंभीरतापूर्वक आद्योपान्त अध्ययन किया है। पुस्तिका के अध्ययन के मध्य आचार्यश्री की भावभंगिमा से यह स्पष्ट संकेत मिला कि वे उन तर्कों से सहमत हैं। आचार्यश्री ने जिज्ञासा प्रकट की कि भगवान महावीर के 2500वें निर्वाण महोत्सव वर्ष में दिल्ली में 500 एकड़ की भूमि शासन द्वारा दी गई थी और संभवतः उसका नाम भी वैशाली ही रखा गया था, उसका क्या हुआ? डॉ.अनुपम जैन ने बताया कि वह स्थान महावीर वनस्थली है तथा 26 वर्ष पश्चात् भी उसका एकमात्र हिस्सा ही विकसित हो पाया है।

आचार्यश्री ने सहजभाव से कहा कि किसी स्थान पर मूर्ति आदि पुरातात्विक वस्तु प्राप्त हो जाने पर उसे किसी बात को पक्का सबूत मान लेना ठीक नहीं है। कुण्डग्राम कहाँ है? यह बात भी बिना किसी ठोस आधार के कहना मुश्किल है। भगवान महावीर की जन्मस्थली का सर्वमान्य निर्धारण प्रत्यक्षप्रमाण व आगम के आधार पर ही करना उचित होगा। पुस्तिका का अध्ययन करते हुए **आचार्यश्री ने कहा कि वीरसेन स्वामीकृत धवला एवं जयधवला का साक्ष्य बहुत अच्छा व अकाट्य है।** आचार्यश्री ने सहज जिज्ञासा प्रकट की कि वैशाली व कुण्डलपुर-नालंदा में कितना अंतर है? तथा वैशाली के पक्षधर लोग क्या ठोस प्रमाण देते हैं? 50 वर्ष पूर्व वैशाली के बारे में क्यों नहीं सोचा गया? आदि जिज्ञासाओं का समाधान डॉ. जैन ने किया। आचार्यश्री की मुखमुद्रा यह दर्शा रही थी कि वे उनसे सहमत हैं।

आचार्यश्री ने विशाल, विशाला एवं वैशालिक शब्दों का अर्थ वैशाली से न लेते हुए विशालता वृहद्-व्यापक से लेने की बात कही। पूज्य गुरुदेव ने स्पष्टतः स्वीकार किया कि वैशाली की अपेक्षा कुण्डलपुर के बारे में हमारे पास अधिक व ठोस प्रमाण हैं। तीर्थंकरों की जन्मभूमि का निर्णय दिगम्बर आगमों के आधार पर ही होना चाहिए। आचार्यश्री ने यह भी पीड़ा व्यक्त की कि देश के प्रथम राष्ट्रपति स्व. डॉ. राजेन्द्रप्रसाद जी द्वारा वैशाली में किए गए शिलान्यास के पश्चात् हम आज तक यह निर्णय नहीं कर पाए कि स्मारक कहाँ और कैसा बने?

उन्होने कहा कि स्मारक हेतु जन्मस्थली का पूर्णतः सही स्थान खोज पाना सरल कार्य नहीं है। यह योजनों विस्तार वाली होती थी! पूज्य गुरुदेव ने यह भी कहा कि शासन बौद्ध धर्म को इसलिए अधिक महत्व देता है कि वह विदेशों में फैल गया, जबकि जैनधर्म के अनुयायी भारत में ही अधिक हैं। वैशाली में शोध संस्थान बनाने के पीछे भी शायद

यही कारण हो। आपने डॉ. अनुपम जैन को यह परामर्श दिया कि भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर के बारे में आगम के प्रमाणों, अन्य संदर्भों सहित इस शताब्दी के लेखकों द्वारा लिखित आलेखों को संकलित कर एक सर्वांगपूर्ण पुस्तक का सृजन करें, जिससे वैशाली के पक्ष में दिए जाने वाले तर्कों का निरसन किया जा सके। डॉ. अनुपम जैन एवं माणिकचंद पाटनी ने उक्त आज्ञा को शिरोधार्य किया।

3. ऋषभदेशना मई 2002 से साभारः

लेखिका-श्रीमती सुमन जैन, इंदौर (महामंत्री-अ.भा.दि. जैन महिला संगठन)

गत 7 मई को इंदौर के 4 प्रख्यात पत्रकारों का एक दल परमपूज्य संतशिरोमणि आचार्यश्री विद्यासागर जी महाराज से मार्गदर्शन लेने नेमावर पहुँचा। इस दल में परिणयप्रतीक के प्रधानसम्पादक एवं दिगम्बर जैन महासमिति के राष्ट्रीय महामंत्री श्रीमाणिकचंद पाटनी, अर्हत् वचन के सम्पादक एवं दिगम्बर जैन महासमिति पत्रिका के प्रधान सम्पादक डॉ. अनुपम जैन, सन्मतिवाणी के सम्पादक पं. जयसेन जैन एवं वीर निकलंक के सम्पादक श्री रमेश कासलीवाल सम्मिलित थे। महिला संगठन, छावनी इकाई की श्रीमती कुसुम जैन तथा सुदामानगर इकाई की श्रीमती निशा जैन भी इस दल के साथ थीं। मैं स्वयं बाल संस्कार शिविर में व्यस्त होने के कारण साथ न जा सकी, किन्तु बाद में इन चारों वरिष्ठ पत्रकारों एवं दल में सम्मिलित बहनों से चर्चा कर सुखद अनुभूति हुई। अ.भा.दि. जैन महिला संगठन की 24 फरवरी को सम्पन्न कार्यकारिणी की बैठक में पारित प्रस्ताव के अनुरूप ही पूज्य आचार्यश्री की भी राय थी। बहनों ने हमें बताया कि आचार्यश्री की स्पष्ट राय थी कि "हमारे तीर्थंकरों के जीवन के बारे में निर्णय दिगम्बर जैन आगमों के आधार पर होना चाहिए। हमारे पास विशाल ग्रंथ सम्पदा है। यदि हम श्वेताम्बर या बौद्ध संदर्भों के आधार पर जन्मभूमि या निर्वाणभूमि तय करने लगे तो फिर हमारा कुछ नहीं रहेगा। अनेक ऐसी बातें हमें माननी होंगी, जो हमें न कभी स्वीकार्य रही हैं और न रहेंगी।"

डॉ. अनुपम जैन ने पूज्य आचार्यश्री को तीर्थंकर ऋषभदेव जैन विद्वत् महासंघ द्वारा प्रकाशित "भगवान महावीर : जन्मभूमि प्रकरण मनीषियों की दृष्टि में" पुस्तिका भेंट की, जिसमें विख्यात जैन विद्वान् एवं शास्त्री परिषद के अध्यक्ष प्राचार्य नरेन्द्र प्रकाश जैन एवं तीर्थंकर ऋषभदेव जैन विद्वत् महासंघ के अध्यक्ष पं. शिवचरनलाल जैन, मैनपुरी के लेख हैं।

पूज्य आचार्यश्री ने दोनों आलेखों का गंभीरतापूर्वक मनन किया एवं दो टिप्पणियाँ की-

1. वीरसेन महाराज (आचार्य वीरसेन स्वामी) द्वारा धवला एवं जयधवला में लिखे गये वचन अकाट्य हैं। इनमें कुण्डलपुर का ही उल्लेख है।

2. वैशालिक का अर्थ वैशाली से लगाना उचित नहीं, इस बावत नरेन्द्रप्रकाश जी का तर्क एवं विवेचन पुस्तक में बहुत अच्छा है।

आचार्यश्री ने 2.30 घंटे तक खुलकर चर्चा की एवं स्पष्टतः कुण्डलपुर-नालंदा को ही जन्मभूमि बताया।

आपने डॉ. अनुपम जैन को आदेशित किया कि कुण्डलपुर के संदर्भ में दिगम्बर जैन आगमों में लिखे सभी संदर्भों, परवर्ती विद्वानों द्वारा लिखित सभी आलेखों, अभिमतों एवं गत 100-150 वर्षों में कुण्डलपुर क्षेत्र में हुई खुदाई, प्राप्त मूर्तियों आदि के बारे में समस्त तथ्यों का संकलन कर पुस्तक प्रकाशित करें, जिससे वैशाली के पक्ष में दिये जा रहे तर्कों का निरसन किया जा सके। डॉ. जैन ने आपके आदेश को शिरोधार्य कर शीघ्र ही पुस्तक तैयार करने का वचन दिया।

आचार्यश्री विद्यासागर जी महाराज एवं गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी सदृश वरिष्ठतम संतों की भावनाओं को जानकर हमें मन में किंचित् भी संशय नहीं रखना चाहिए।

* * *

कुण्डलपुर या वैशाली: एक अनुचिंतन

(मई 2002 में प्रस्तुत)

–प्राचार्य नरेन्द्रप्रकाश जैन, फिरोजाबाद

यह युग नई-नई खोजों का है। प्रतिवर्ष देश में कुछ नए अतिशय क्षेत्र खोज लिए जाते हैं। वैसे भी अतिशय क्षेत्रों की किसी सीमा का उल्लेख आगम में नहीं मिलता। वे असंख्य हो सकते हैं और गाव-गांव में हो सकते हैं। खोज अतिशय क्षेत्रों तक ही सीमित रहे तो भी गनीमत है, किन्तु क्या किसी एक ही महापुरुष के कल्याणक क्षेत्र या सिद्धक्षेत्र भी एक से अधिक हो सकते हैं, यह विचारणीय है। दुख है कि आज हमारे कुछ समर्थ महानुभावों ने अपने बुद्धि कौशल से यह कमाल भी कर दिखाया है। हमारे जैन भाई यह नहीं समझ पा रहे हैं कि महावीर का जन्म कहां हुआ था- कुण्डलपुर (नालंदा) में अथवा वासुकुण्ड या कुण्डग्राम (वैशाली) में? वह मोक्ष कहां से गए थे–पावापुरी (नालंदा) या सठियाव गांव (गोरखपुर) से? क्या एक ही व्यक्ति दो स्थानों पर एक साथ जन्म ले सकता है या दो स्थानों से एक साथ प्रयाण कर सकता है? जब अपने अंतिम तीर्थंकर के बारे में यह भ्रांति है, तब उनसे पूर्ववर्ती तीर्थंकरों के बारे में तो न जाने ऐसी कितनी नई-नई बातें गढ़ी जा सकती हैं और गढ़ी भी जा चुकी हैं। हम किसी निर्दोष व्यक्तित्व का निर्माण तो नहीं कर पा रहे हैं, किन्तु नई-नई पवित्र भूमियों को खोज निकालने में जरूर माहिर हैं। इंसानियत का ढांचा तैयार करने की अपेक्षा किसी भूमि या भूमिखण्ड का नक्शा बदलना आज हमारे लिए ज्यादा आसान हो गया है।

बात सन् 1993 की है हम लोग बंगलौर जा रहे थे। हमें श्रवणबेलगोल के महामस्तकाभिषेक महोत्सव में सम्मिलित होना था। कर्नाटक एक्सप्रेस गुंटकल स्टेशन से आगे बढ़ी तो एक स्टेशन आया अनन्तपुर और उससे आगे पड़ा एक दूसरा स्टेशन धर्मपुरम्। इंदौर के एक जैन सहयात्री ने हमसे कहा कि इधर के स्टेशनों के नाम बड़े प्यारे हैं। हम बोले–क्यों नहीं होंगे? इनका संबंध हमारे चौदहवें और पन्द्रहवें तीर्थंकर भगवन्तों से जो है। जरूर यहाँ कभी न कभी उनका प्रवास या विहार हुआ होगा। लोग हमारा मुंह देखने लगे। कुछ ने तो रेल की खिड़की से अपने सिर और हाथ निकालकर इन स्टेशनों को प्रणाम भी किया। कितने भले और भोले हैं हमारे ये जैन भाई। विनोद में कही गई पंडित की बात पर कितना भरोसा करते हैं। आज जैनियों के इसी भोलेपन का लाभ थोड़े से बौद्धिक व्यायाम से कुछ समर्थ लोग उठाने में सफल हो रहे हैं। महावीर की जन्मभूमि की नई खोज में तो कोई नाम साम्य भी नहीं है। भाषा विज्ञान के किस नियम से बसाढ़ को वैशाली अथवा वासुकुण्ड या कुण्डग्राम में बदला जा सकता है? क्या इस पर विचार नहीं होना चाहिए था। इस नई खोज के बारे में राष्ट्रीय स्तर पर बहस का आयोजन किए बिना ही चंद लोगों द्वारा फतवा जारी करना कथमपि उचित नहीं था।

अंग्रेजी व्याकरण का एक नियम है कि किसी प्रसिद्ध व्यक्ति या स्थान के नाम (Proper Noun) में प्रायः बदलाव नहीं होता। जो जिस नाम से प्रसिद्ध होता है, उसे उसी नाम से पुकारा जाता है। न तो उसके लिए पर्यायवाची शब्द का प्रयोग होता है और न उसका अनुवाद ही किया जा सकता है। यदि किसी गांव का नाम मक्खनपुर है तो उसे मक्खनग्राम कहना या नवनीतपुर कहना त्रुटिपूर्ण तो है ही, भ्रमोत्पादक भी है। अंग्रेजी में उसे बटर विलेज (Butter Village) कहना भी हास्यास्पद होगा। अंग्रेजों ने लंका का नाम बदलकर 'सीलोन' रख दिया था, पर स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद वहां के शासकों ने पुनः उसके मूल नाम को पहले से भी अधिक आदरसूचक बनाकर 'श्रीलंका' कर दिया। यह तो हम ही लोग इतने लचीले हैं कि हमारे संविधान में भारत आज भी इंडिया के रूप में दर्ज है और हमें आज तक इस पर कोई आपत्ति नहीं है। बसाढ़ को वैशाली और पुर को ग्राम कहना भी व्याकरणसम्मत नहीं है। सभी जैनग्रंथों में भगवान की जन्मभूमि को कुण्डलपुर या कुण्डपुर के नाम से ही उल्लेखित किया गया है। किसी एक भी आचार्य ने पुर के स्थान पर ग्राम का प्रयोग नहीं किया।

भारत में अनेक जैन तीर्थ ऐसे हैं, जिन्हें दिगम्बर और श्वेतांबर दोनों ही मानते और पूजते हैं तथा कुछ तीर्थों के बारे में दोनों में मतभिन्नता भी है। महावीर का जन्म कुण्डपुर या कुण्डलपुर में हुआ था, इस विषय में दोनों ही सम्प्रदाय एकमत हैं, किन्तु यह नगर कहाँ पर अवस्थित है, उसको लेकर दोनों में मतभेद हैं। वैशाली को वीर-जन्मभूमि के रूप

में मान्यता प्रदान करने के लिए तो अधिकांश श्वेतांबर भाई भी तैयार नहीं हैं। यह तो हमारे चंद नेताओं का उतावलापन ही था, जो उन्होंने कुछ पाश्चात्य और कुछ जैनेतर विद्वानों की खोज पर आनन-फानन में अपनी स्वीकृति की मोहर लगा दी।

वैशाली को जन्मभूमि मानना आगमसम्मत तो है ही नहीं, युक्तिसंगत भी नहीं है। आज से 54 वर्ष पूर्व तक तो वैशाली का नाम पुराणों में पढ़ने को अवश्य मिलता था, किन्तु धरती पर उसका कहीं अस्तित्व ही नहीं था। 14वीं सदी के यति मदनकीर्ति ने अपनी कृति **'शासन चतुस्त्रिंशतिका'** में अनेक तीर्थों का वर्णन किया है, किन्तु वैशाली कुण्डग्राम का कोई उल्लेख नहीं किया। दूर की बात छोड़िए, गत बीसवीं सदी के प्रथम दशक में प्रकाशित **'प्रसिद्ध जैनतीर्थ स्थलों का वृत्तान्त'** नामक पुस्तक में भी वैशाली का नाम नहीं है।सन् 1961 में प्रकाशित दिल्ली जैन डायरेक्टरी में पृ. 225 से 256 तक भारत के प्रमुख जैन तीर्थों का विवरण संकलित किया गया है। उसमें नालंदा और कुण्डलपुर का उल्लेख तो है, परन्तु वैशाली का नहीं। उसमें लिखा है कि नालंदा का पार्श्ववर्ती यह कुण्डलपुर नगर कई बार बना और कई बार नष्ट हुआ।

यहां हुए आर्क्योलॉजीकल सर्वे (Archaeological Servey) के फलस्वरूप यहाँ अनेक बौद्ध और जैन मंदिरों के अवशेष और मूर्तियाँ भी प्राप्त हुई हैं। एक नगर बड़गांव का भी उल्लेख है, जहां कभी महावीर के समवसरण के आने की बात कही जाती है। यह गांव आज भी यहां है।

बताया जाता है कि विशाल अट्टालिकाओं से सुशोभित यह वैशाली नगर पाँचवीं या छठीं शताब्दी में पूर्णतया नष्ट हो चुका था। आजादी के पूर्व की किसी भी पुस्तक में वैशाली को भगवान की जन्मभूमि नहीं बताया गया है। सदियों से नालंदा के निकट स्थित कुण्डलपुर को ही यह गौरव प्राप्त होता रहा है। इसकी पुष्टि भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा प्रकाशित "भारत के दिगम्बर जैनतीर्थ" पुस्तकमाला के बिहार, बंगाल, उड़ीसा से संबंधित द्वितीय भाग से होती है।यहां शताधिक वर्षों से चैत्र सुदी 12 से 14 तक भगवान महावीर का जन्मकल्याणक महोत्सव मनाने के लिए भारतवर्षीय दिंगबर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी की ओर से एक मेला भी आयोजित किया जाता रहा है। बाद में सन् 1951 में स्व. श्रीमान् साहू शांतिप्रसाद जी द्वारा अचानक वैशाली को जन्मभूमि के रूप में मान्यता दिये जाने के बाद जानबूझकर कुण्डलपुर की उपेक्षा करने का एक सोचा-समझा सिलसिला शुरू हुआ, जो चिन्तनीय है। इस अविचारित खोज के बाद भी ग्रंथमाला के विद्वान् सम्पादक स्व. पं. बलभद्र जी द्वारा यह लिखा जाना बहुत महत्वपूर्ण है **'शताब्दियों से जिस कुण्डलपुर की एक जैनतीर्थ के रूप में मान्यता रही है, उसको भविष्य में भी तीर्थ माना जाता रहेगा।'**

तीर्थक्षेत्र कमेटी में अचानक यह बदलाव केन्द्र सरकार से आर्थिक अनुदान पाने के लालच में आया अथवा अपनी एक नई खोज से मिलने वाली नामवारी की लालसा ने उन्हें उसके लिए प्रेरित किया, अब इस पर भी खोज की आवश्यकता है। पुराने तीर्थों की उपेक्षा और नए तीर्थों के निर्माण के प्रति जागा मोह हमारी परम्परा बन गया है। स्व. पं. नाथूराम प्रेमी ने ठीक ही लिखा था-**'प्राचीनता की रक्षा करने में जैन समाज उतना ही असावधान रहा है, जितना नवीन निर्माण करने में कटिबद्ध।'** जहां जैनत्व का कोई चिन्ह तक कभी नहीं पाया गया, वहां भी नए-नए तीर्थ बनते हुए देखने से उनकी यह बात प्रमाणित भी हो रही है।

कुण्डलपुर के जैन मंदिर और मूर्तियों के दर्शन हमने सर्वप्रथम सन् 1944 में या 45 में अपने पूज्य पिताजी के साथ किये थे। तब हमारी उम्र लगभग 12 वर्ष की रही होगी। उसके बाद भी दो-तीन बार हमारा वहां जाना हुआ है। तभी से निरंतर भगवान महावीर की जन्मभूमि के रूप में हम उसका परिचय प्राप्त करते रहे हैं। अ.भा.दि.जैन परिषद पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित **'जैन तीर्थ दर्शन'** का सन् 1998 का नया संस्करण हमारे पास है। उसमें लिखा है-**'कुण्डलपुर नालंदा को ही भगवान महावीर की जन्मभूमि माना जाता रहा है, किन्तु अब यह श्रेय वैशाली के कुण्डग्राम को प्राप्त हो गया है।'** यह श्रेय वैशाली के कुण्डग्राम को प्राप्त हो गया है' के स्थान पर **'यह श्रेय चंद लोगों ने उसे दे दिया है'**, यह लिखना ज्यादा उचित होता।

कुण्डलपुर को जन्मभूमि मानने की अपनी पुरानी धारणा को बट्टे खाते में डालने के पीछे क्या कारण थे क्या तीर्थक्षेत्र कमेटी को पूरे समाज को यह नहीं बताना चाहिए था? खैर, अभी भी कुछ नहीं बिगड़ा है। कमेटी को अपनी इस नई खोज का यथाशीघ्र पुनर्मूल्यांकन करते हुए **'जब जागे,तभी सबेरा'** की कहावत को चरितार्थ करना चाहिए?

३-६३

इतिहास को बदलने की चेष्टा एक बड़ी भूल है। **यह निर्विवाद है कि महावीर का जन्म वैशाली में नहीं हुआ था।** उनकी माता प्रियकारिणी अवश्य विशाला नगरी वैशाली के महाराज चेटक के यहां जन्मी थीं। इस तरह वैशाली महावीर की ननिहाल थी। **उन्हें वैशाली का राजकुमार कहना या लिखना असंगत ही नहीं, अक्षम्य भी है।** महाराजा चेटक के दस पुत्र थे। योग्य पुत्रों के रहते हुए धेवते (पुत्री के पुत्र) को राजकुमार कहने की प्रथा तो कहीं भी देखने में नहीं आती। महावीर जैसा प्रतापी पुत्र **'उत्तमा आत्मनाख्याताः'** की श्रेणी में गणनीय रहा है, उन्हें **'मातुलात् ख्याताः'** की अधम श्रेणी में रखने की भूल का हमें तुरंत परिष्कार करना चाहिए।

सभी पुराणों में लिखा है कि कुण्डलपुर एक स्वतंत्र और प्रभावशाली राज्य था। उसके वैभव का प्रचुर वर्णन भी जैनशास्त्रों में पाया जाता है। उसके अधिपति महाराजा सिद्धार्थ भी एक शक्तिशाली, प्रतापी और स्वतंत्र राजा थे। कुण्डलपुर को वैशाली के एक सन्निवेश के रूप में स्वीकार करने से तो उसके स्वतंत्र राज्य होने पर ही प्रश्नचिन्ह लग जायेगा तथा लोगों को लगेगा कि महाराजा सिद्धार्थ अवश्य ही कोई साधारण राजा थे और उनका अपना कोई आभामंडल भी नहीं था। वैशाली के राजा के कारण ही उनका मान-सम्मान था। हमें तो स्वप्न में भी ऐसा सोचना इष्ट नहीं है। पौराणिक वर्णन भी हमें इसकी अनुमति नहीं देते।

श्वेतांबर ग्रंथ **'सूत्रकृतांग'** आदि में महावीर को वैशालिक कहा गया है। इसका यह अर्थ निकालना ठीक नहीं होगा कि वह वैशाली के निवासी थे। श्वेतांबर अंग-साहित्य के सुप्रसिद्ध टीकाकार आचार्य शीलांक ने महावीर को वैशालिक कहे जाने के पीछे जो तर्क दिये हैं, वे विचारणीय हैं। वह लिखते हैं-

विशाला जननी यस्य, विशालं कुलमेव वा। विशालं वचनं चास्य, तेन वैशालिको जिनः।।

अर्थात्-1. जिनकी मां विशाला नगरी की थी 2. जिनका कुल विशाल था तथा 3. जिनके वचन भी विशाल थे, वह कहलाते थे वैशालिक जिन।

वाह रे बुद्धि-प्रवण दिगम्बरों! तुमने तो उन्हें वैशाली का निवासी ही बना दिया। वैशाली का राजकुमार कहकर उनके मामाओं के अधिकार पर भी पानी फेर दिया। क्या महावीर जैसे उदात्त पुरुष से भी ऐसी अनधिकृत चेष्टा की उम्मीद या कल्पना की जा सकती है? नहीं, कभी नहीं। वह वैशाली के नहीं थे, इसे स्वीकार करना ही इस ऐतिहासिक भूल का प्रायश्चित होगा।

महावीर की जन्मभूमि के संदर्भ में यदि बौद्ध ग्रंथों या श्वेताम्बर साहित्य के आधार पर निर्णय लिया जायेगा तो फिर अनेक कई उलझनें उत्पन्न होंगी। अनेक आगमविरुद्ध प्रसंगों को मानने की विवशता भी हमारे सामने उपस्थित हो सकती है। उनके अनुसार माता त्रिशला महाराजा चेटक की बहन थी, जबकि हमारे अनुसार वह उनकी पुत्री थीं। हमारी मान्यता है कि महावीर अपने पिता सिद्धार्थ के अकेले पुत्र थे, जबकि उनके अनुसार उनका एक भाई नंदीवर्धन भी था। श्वेतांबर यशोदा से उनका विवाह होना मानते हैं और कहते हैं कि उनकी एक पुत्री भी थी,किन्तु हम इसे सिरे से नकारते हैं। श्वेताम्बर ग्रंथों में लिखा है कि बसाढ़ के निकट दो कुण्डग्राम थे-एक ब्राह्मण कुण्डग्राम और दूसरा क्षत्रिय कुण्डग्राम। उनके अनुसार महावीर का जीव स्वर्ग से प्रथम ब्राह्मण कुण्डग्राम के ऋषभदत्त ब्राह्मण की पत्नी देवानंदा की कोख में आया और बाद में बयासी रात्रियों के बाद एक देव द्वारा उन्हें क्षत्रिय कुण्ड के महाराजा सिद्धार्थ की पत्नी त्रिशला की कोख में स्थापित किया गया। क्या गर्भापहरण की इस बेतुकी बात का भी हम समर्थन करेंगे? हमारे युगपुरुष महापुरुष के वास्तविक पिता कौन थे, इस प्रश्न का क्या उत्तर हमारे पास होगा? कोई निर्णय करने से पहले इन सब बातों पर भी विचार करना चाहिए था।

महावीर की जन्मभूमि का निर्णय दिगंबर जैन शास्त्रों के अनुसार ही हो सकता है और होना भी चाहिए। सभी दिगम्बर शास्त्र और पुराण उनकी जन्मभूमि कुण्डपुर या कुण्डलपुर को ही मानते हैं। कहीं कोई विवाद नहीं है। विवाद तो नए अनुसंधानकर्ताओं ने अपनी-अपनी बौद्धिक अटकलों से उत्पन्न कर दिया है। जहां तक दो कुण्डग्रामों की बात है, भगवती सूत्र का यह उल्लेख महत्वपूर्ण है-**''तीसेणं णालिंदा वाहिरियाए अदूरसामंते एत्थणं कोल्लाए णामं सण्णिवेसे होत्था। सण्णिवेस बज्जओ। तत्थणं कोल्लाए सण्णिवेसे बहुलेणाम माहणे परिवयई।'**

इस कथन से स्पष्ट है कि वैशाली और नालंदा दोनों ही स्थानों के समीप कोल्लाग सन्निवेश और दो-दो कुण्डग्राम

थे। इस उल्लेख के आधार पर कुण्डलपुर (नालंदा) को जन्मभूमि मानने में कोई अड़चन शेष ही नहीं रहती।

वैशाली को महावीर की जन्मभूमि तो माना ही नहीं जा सकता। यह धारणा सर्वथा अस्वीकार्य एवं निर्मूल है। श्री पी.सी. राय चौधरी ने अपनी एक पुस्तक ''Jainism in Bihar'' में लिखा है–'दिगम्बर सम्प्रदाय वालों ने नालंदा से दो मील दूर कुण्डलपुर नामक स्थान को महावीर की जन्मभूमि माना है। श्री राधाकृष्ण चौधरी और श्री नरेशचंद मिश्र भी वैशाली को जन्मभूमि मानने को तैयार नहीं है। ये विद्वान् इस संदर्भ में पुनर्मूल्याकंन किये जाने पर जोर देते हैं।

हर्मन जैकोबी, हार्नले और बिसेंट स्मिथ जैसे पाश्चात्य विचारकों ने प्राचीन वैशाली के कोटिग्राम से कुण्डग्राम के विकास की बात कही है,जो भाषा विज्ञान की दृष्टि से ठीक नहीं है। प्रो.रघुवीरप्रसाद सिंह ने लिखा है–**कोटि शब्द से कुण्डग्राम का विकास किसी भी प्रकार संभव नहीं है।**

के.के. एम. कॉलेज, जमुई के प्रोफेसर डॉ. श्यामानंद प्रसाद ने अपनी शोधपरक पुस्तिका **''महावीर का जन्मस्थान''** में लिखा है कि **महात्मा बुद्ध ने कोटिग्राम में निवास करते समय दस सूत्रों का उपदेश दिया था, ऐसा उल्लेख ''संयुक्त निकाय'' में आता है। इससे स्पष्ट है कि यदि महावीर के समकालीन बुद्ध के समय में इस स्थान का नाम कोटिग्राम ही था, तो महावीर के लिए यह कुण्डग्राम नहीं हो सकता।'**

एक तथ्य यह भी है कि लगभग आधी सदी तक वैशाली को महावीर की जन्मभूमि के रूप में प्रचारित और प्रसारित किये जाने के बाद भी जैनों का उसके साथ जुड़ाव नहीं हो सका है वहाँ हर वर्ष महावीर जयंती का आयोजन भी सरकार की वैशाखी के द्वारा होता आ रहा है। जैन समाज स्वतंत्ररूप से वहां कोई आयोजन नहीं करता है। इसके विपरीत बिहार के तीर्थों की यात्रा करते समय सभी जैन बंधु कुण्डलपुर अवश्य जाते ही हैं। भगवान महावीर एवं उनके साथ जुड़ी विभूतियों से संबंधित अनेक तीर्थ राजगृही, पावापुरी, गुणावा आदि कुण्डलपुर के निकट ही हैं। वैशाली के आसपास ऐसे धार्मिक महत्त्व के स्थानों एवं वातावरण का नितान्त अभाव है, जो लोगों की श्रद्धा को अपनी ओर आकर्षित कर सके। यदि महावीर 30वर्ष तक वैशाली में रहे होते तो वहां अनेक नए पुण्यक्षेत्र विकसित होने चाहिए थे। इसीलिए वैशाली आज तक उपैक्षित रही और कुण्डलपुर की तुलना में भविष्य में भी उपेक्षित रहेगी।

पूज्य गणिनी प्रमुख आर्यिकाश्री ज्ञानमती माताजी ने देर से ही सही, कुण्डलपुर के विकास की प्रेरणा देकर एक सामयिक महत्व का कदम उठाया है। पहले तो हम भी चौंके थे कि यह एक नया विवाद क्यों खड़ा किया जा रहा है, किन्तु जब हमने उनके और प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी के विचार पढ़े तथा इस संदर्भ में उनके साथ विचार-विमर्श हुआ तो हमें लगा कि उनका यह मिशन उपेक्षणीय नहीं है। जैनागम के कुण्डलपुर के पक्ष में यदि प्रमाण देखना हो तो पाठकों को दि. जैन त्रिलोक शोध संस्थान, हस्तिनापुर द्वारा प्रकाशित **''महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर''**शीर्षक पुस्तक मंगाकर पढ़नी चाहिए। वासुकुण्ड, कुण्डग्राम, बसाढ़ जैसे शब्दों की जन्मभूमि के साथ संगति बिठाने के द्राविणी प्राणायाम का परिचय उन्हें स्वयं ही मिल जायेगा। पुनरावृत्ति से बचने के लिए हम उन्हें यहां दोहराना उचित नहीं समझते।

आगम और युक्ति दोनों से ही यह तो सिद्ध होता है कि वैशाली एक इतिहास–प्रसिद्ध महानगर रहा है, किन्तु महावीर की जन्मभूमि होने का एक भी प्रमाण हमें अपने आर्षग्रंथों में नहीं मिलता। वैशाली में कुछ बनाना ही हो तो कोई शानदार स्मारक बनाएं, किन्तु उसे महावीर-जन्मभूमि के रूप में प्रचारित न करें। **'जब जीव सोवे तब समझै सुपन सत्य, वही झूठ लागैं जब जागे नींद खोई कैं'**–पं. प्रवर बनारसीदास की इन पंक्तियों के अनुसार वैशाली के संदर्भ में कुछ लोगों द्वारा देखे गये स्वप्न की असलियत अब हमारे सामने आ चुकी है। अब पुनः कोई चूक हमसे नहीं होनी चाहिए।

प्रसिद्ध नाटक ''गैलीलियो'' की इन पंक्तियों के साथ हम अपनी बात समाप्त करते हैं–

''जो जब तक सच्चाई नहीं जानता,तब तक केवल अज्ञानी कहलाता है, किन्तु जानने के बाद भी जो सत्य को स्वीकार नहीं करता, वह अपराधी है।''

* * *

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर पर

संतों की दो टूक लेखनी

प्रस्तुति–डॉ. अनुपम जैन, इंदौर

1. "वीरसेन महाराज (आचार्य वीरसेन स्वामी) द्वारा धवला एवं जयधवला में लिखे गये वचन अकाट्य हैं। इनमें कुण्डलपुर का ही उल्लेख है। वैशालिक का अर्थ वैशाली से लगाना उचित नहीं। इस बाबत प्राचार्य नरेन्द्रप्रकाश जी का तर्क एवं विवेचन पुस्तक में बहुत अच्छा है।"

नेमावर, 7 मई 2002 **–आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज**

(उक्त विचार 7 मई 2004 को चार वरिष्ठ पत्रकारों के एक दल द्वारा पूज्य आचार्यश्री को विद्वत् महासंघ द्वारा प्रकाशित पुस्तक "भगवान महावीर जन्मभूमि प्रकरण-मनीषियों की दृष्टि में" समर्पित करने पर व्यक्त किये गये। पुस्तक में प्राचार्य श्री नरेन्द्रप्रकाश जैन, फिरोजाबाद एवं पं. श्री शिवचरनलाल जैन, मैनपुरी के लेख हैं।)

* *

2. आगम में बताई गई एवं परम्परा मान्य भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) के विकास हेतु मेरा बहुत शुभाशीर्वाद है।"

शिकोपुर (गुड़गाँव) **–आचार्य श्री बाहुबलीसागर जी महाराज**

(श्री अनिल कुमार जैन (कमल मंदिर) दिल्ली से हुई चर्चा)

* *

3. "हमारे पूर्वाचार्यों द्वारा बताई गई सदियों से पूजित भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर तो वर्तमान के नालंदा जिले में है उसके विकास हेतु आप सबको बहुत शुभाशीर्वाद। मैंने पूर्व में आपके द्वारा प्रेषित साहित्य पर भी अपना आशीर्वाद भिजवा दिया था। यह बहुत अच्छा काम है, आप सब उत्साह से करें एवं धर्म का संरक्षण करें।"

सलुम्बर, सितंबर 2002 **–आचार्य श्री अभिनंदनसागर जी महाराज**

(डॉ. अनुपम जैन, इंदौर से सलुम्बर (राजस्थान) में सितम्बर 2002 में हुई चर्चा)

* *

4. "हमें दिगम्बर जैन ग्रंथों को ही प्रमाण मानना चाहिए न कि श्वेताम्बर व जैनेतर ग्रंथों को। 2600 वर्षों से नालंदा के निकट स्थित कुण्डलपुर की ही जन्मभूमि के रूप में पूजा-अर्चना होती आ रही है। हमें अनावश्यक व अश्रद्धा उत्पन्न करने वाले नये मात्र 50 वर्षीय वैशाली को भगवान महावीर की जन्मभूमि के रूप में स्वीकार नहीं करना चाहिए। हमें अनपेक्षित भूगोल और इतिहास के पचड़ों से भ्रमित नहीं होना चाहिए और पूर्ण श्रद्धा कायम रखकर कुण्डलपुर का अपेक्षित विकास करना चाहिए।

उदयपुर

–आचार्य श्री वर्द्धमानसागर जी महाराज

(पं. शिवचरनलाल जैन, मैनपुरी से पर्यूषण पर्व में हुई चर्चा)

* *

5. "परम्परा से माने गए तीर्थों पर विवाद नहीं करना चाहिए।"

इंदौर

–आचार्य श्री सीमंधरसागर जी महाराज

(श्री रमेश कासलीवाल, इंदौर से हुई चर्चा)

* *

6. "हमने तो नालंदा के पास स्थित महावीर जन्मभूमि की ही वंदना की है एवं हम तो इसे ही मानते हैं। इसके अलावा अन्य किसी जन्मभूमि की चर्चा भी नहीं करना चाहिए, वरना श्रद्धा बँटती है।"

इंदौर **–आचार्य श्री सिद्धांतसागर जी महाराज**

(श्री रमेश कासलीवाल इंदौर से हुई चर्चा)

* * *

7. "महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर के बारे में आपके द्वारा प्रेषित सामंग्री, पुस्तकें, पत्र-पत्रिकाएं प्राप्त हुईं। भगवान की जन्मभूमि एवं निर्वाणभूमि के बारे में विवाद उचित नहीं है। मैंने गृहस्थावस्था में एवं दीक्षा के बाद भी भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) की वंदना की है। वही वास्तविक जन्मभूमि है।

बनेड़िया **–आचार्य श्री शांतिसागर जी महाराज (पोदनपुर)**

(श्री रमेश कासलीवाल, इंदौर से हुई चर्चा)

* * *

8. "दिगम्बर जैन आगम ग्रंथों एवं परम्परा से मान्य जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) का विकास होना चाहिए। यह कार्य अत्यंत प्रशंसनीय है। "

मिढ़ाकुर, आगरा 20-7-02 **–उपाध्याय श्री ज्ञानसागर जी महाराज**

(प्राचार्य नरेन्द्रप्रकाश जैन, पं. शिवचरनलाल जैन एवं डॉ. अनुपम जैन से हुई चर्चा)

* * *

9. "नालंदा जिले में स्थित महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर में भगवान महावीर का भव्य स्मारक बनना चाहिए।"

फिरोजाबाद-20-7-02 **–युवा मुनि श्री समतासागर जी महाराज**

–मुनि श्री प्रमाणसागर जी महाराज

(प्राचार्य नरेन्द्रप्रकाश जैन, पं. शिवचरनलाल जैन एवं डॉ. अनुपम जैन से हुई चर्चा)

* * *

10. "मेरे गुरु आचार्यश्री विमलसागर जी के सामने सम्मेदशिखर के स्थान पर कोल्हुवा (गया) पहाड़ को निर्वाणभूमि निरूपित किया गया तो उन्होंने स्पष्ट आदेश दिया कि परम्परा से मान्य तीर्थों के साथ छेड़छाड़ उचित नहीं। यही बात भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) के बारे में भी सत्य है। गुरु आज्ञानुसार मैं तो परम्परामान्य जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) को ही स्वीकार करता हूँ।"

–युवा मुनि श्री चैत्यसागर जी महाराज

इंदौर

(डॉ. अनुपम जैन एवं श्री रमेश कासलीवाल से हुई चर्चा)

* * *

11. "जन्मभूमि के मामले में विवाद उचित नहीं। जो जन्मभूमि परम्परा एवं श्रद्धा से मान्य है वही ठीक है। सब मिलकर उसका विकास करो। यही हमारा आशीर्वाद है।"

–पूज्य मुनि श्री सूर्यसागर जी महाराज

इंदौर **–पूज्य मुनि श्री सुभद्रसागर जी महाराज**

(श्रीमती सुमन जैन, इंदौर से हुई चर्चा)

* * *

12. "अपने तीर्थों का निर्णय हमें दिगम्बर जैन शास्त्रों के आलोक में ही करना चाहिए। कुण्डलपुर तो जगत विख्यात है इसमें विवाद क्यों?"'

–गणिनी आर्यिका श्री सुपार्श्वमती माताजी

(पं. शिवचरनलाल जैन, मैनपुरी से हुई चर्चा)

* * *

13. "हमने अपने गृहस्थावस्था में 5 बार सम्मेदशिखर की यात्रा की। एक बार श्री सुपार्श्वसागर मुनि महाराज के साथ गये। दीक्षा के पश्चात् मुनि श्री श्रेयांससागर जी महाराज के संघ के साथ गये। तब बिहार प्रान्त के सभी क्षेत्रों के दर्शन किए। पावापुरी में गृहस्थावस्था में निर्वाण लाडू चढ़ाया किन्तु तब वैशाली का नाम सुना हो, ऐसा स्मरण में नहीं है न कभी वहाँ पहुँचे। हाँ, भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा), नवादा, गुणावां जाकर दर्शन किए लेकिन श्वेताम्बर शास्त्रीय उल्लेखों ने अनेक जैनेतर विद्वानों, लेखकों को यह कल्पना करने में सहायता दी कि भगवान का जन्म वैशाली में होना चाहिए। शासन का सहयोग मिलने से यह परिस्थिति थोड़ी मजबूत हुई। बिहार शासन द्वारा प्रकाशित Homage to Vaishali तथा वैशाली में वैशाली महोत्सव मनाने से प्रचार हुआ। उक्त अंग्रेजी रचना में महावीर को वैशाली का नागरिक कहा है। इससे भले ही वैशाली में उत्सव मनाएं किन्तु दिगम्बर परम्परा से जन्मभूमि कुण्डलपुर में ही जन्मोत्सव मनेगा। हमें अपने धर्म एवं सम्प्रदाय का स्वाभिमान रखना चाहिए। आज तक 50 सालों में कुछ लोगों से जो भूल हुई है, उसे सुधारना चाहिए, यह विद्वानों एवं धनवालों का कर्त्तव्य है।"

–आर्यिकारत्न श्री श्रेयांसमती माताजी

* * *

14. "आपके द्वारा भेजी गई सामग्री (भगवान महावीर जन्मभूमि-मनीषियों की दृष्टि में पुस्तक एवं अन्य लेख आदि) एवं पत्र-पत्रिकाओं को पढ़ने के बाद माताजी ने कहा है कि भगवान महावीर की जन्मभूमि वास्तव में कुण्डलपुर ही है वैशाली नहीं। आपके द्वारा भेजी गई सामग्री का माताजी ने अच्छा अध्ययन किया है।

–आर्यिका सृष्टिभूषण एवं आर्यिका स्वस्तिभूषण माताजी

(ब्र. चेतना जी के पत्र के आधार पर)

* * *

15. "मेरा स्पष्ट मत है कि आगम सम्मत एवं परम्परा में कुण्डलपुर (नालंदा) ही जन्मस्थली मान्य की जानी चाहिए।"

ग्वालियर

–श्वे. जैन आचार्य सुयशसूरिजी महाराज

(डा. अभयप्रकाश जैन, ग्वालियर के माध्यम से प्राप्त पत्र के आधार पर)

* * *

16. "एक महत्वपूर्ण प्रश्न है कि कुण्डलपुर (नालंदा) या वैशाली। कुण्डलपुर तो सदैव आगमसम्मत रहा है। वैशाली कभी तीर्थ नहीं बन पाई। पूज्य ज्ञानमती माताजी को मेरा समर्थन एवं वंदामि।"

जयपुर 22-1-02

–श्वे. जैन साध्वी अणिमा जी

* * *

भगवान महावीर की ननिहाल वैशाली का महत्त्व

(अप्रैल 2002 में प्रस्तुत)

–पीठाधीश क्षुल्लक मोतीसागर

जैनशास्त्रों के अनुसार सिंधुदेश में "वैशाली" नगरी का वर्णन आता है। वहां राजा केक के पुत्र "चेटक" राज्य करते थे। श्रीगुणभद्राचार्य ने उत्तरपुराण ग्रंथ में लिखा है-

"सुरलोकादभूः सोमवंशे त्वं चेटको नृपः।"

अर्थात् स्वर्गलोक से आकर वैशाली के "सोमवंश" में राजा चेटक ने जन्म लिया था। उन्हीं की सात पुत्रियों में से सबसे बड़ी पुत्री "त्रिशला" प्रियकारिणी का विवाह विदेहदेश की कुण्डलपुर नगरी के राजा "सिद्धार्थ" के साथ हुआ था।

धर्मप्रेमी बंधुओं! दिगम्बर जैन आगम ग्रंथों के अनुसार यह निश्चित है कि आज से छब्बिस सौ वर्ष पूर्व वैशाली और कुण्डलपुर दोनों ही नगरियां अत्यन्त समृद्ध और राजघरानों से पहचानी जाती थी किन्तु 26 शताब्दियों के इस अंतराल के मध्य विश्व के समस्त देश और प्रदेशों में बड़े-बड़े परिवर्तन आए जिससे बड़े-बड़े देश आज छोटे-छोटे प्रदेश के रूप में परिवर्तित हो गए। इन परिवर्तनों के बावजूद भी इन्द्र के द्वारा बसाई गई कुछ नगरियां जैसे-अयोध्या, सम्मेदशिखर, बनारस हस्तिनापुर, श्रावस्ती आदि का अस्तित्व काल भी समाप्त नहीं कर पाया। यही कारण है कि हम सभी उन तीर्थभूमियों पर जाकर तीर्थंकरों के कल्याणक की वंदना करते हैं।

यहां हमें "वैशाली" के विषय पर सूक्ष्मता से अवलोकन करना है जिस विदेहदेश में कुण्डलपुर नगरी का अस्तित्व बताया गया है वह तो बिहार प्रान्त के नाम से जाना जाता है किन्तु सिंधुदेश की खोज आज तक नहीं हो सकी है। एक ही बिहारप्रान्त में विदेह और सिंधु दोनों देशों की कल्पना कदापि उचित प्रतीत नहीं होती है।

कुछ आधुनिक विद्वानों ने सिंधुदेश की जगह सिंधु नदी का संबंध जोड़कर यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि बिहार में मुजफ्फरपुर के पास वैशालीनगर होना चाहिए। कुछ शोधकर्ता विद्वानों ने -डॉ. हीरालाल एवं ए.एन.उपाध्ये स्वयं यह बात लिखी है कि "अनेक प्राचीन नगरों के साथ इस वैशाली का दीर्घकालीन इतिहासज्ञों को अता-पता ही नहीं था किन्तु विगत एक शताब्दी के मध्य शोध-खोज के आधार पर मुजफ्फरपुर के पास "बसाढ़" नामक ग्राम को "वैशाली" नाम दे दिया गया है।

इससे सिद्ध होता है कि समय-समय पर ग्राम, नगर, शहर, उद्यान एवं शिक्षणसंस्थान आदि के नामकरण एवं नामपरिवर्तन की परम्परा पुरानी रही है। उसीक्रम में जिस प्रकार दिल्ली के निकट वैशाली, कौशाम्बी नामकी बहुत बड़ी-बड़ी कालोनियां पिछले एक दशक में निर्मित हुई हैं उसी प्रकार लगभग 50 वर्ष पूर्व बिहारप्रदेश में "वैशाली" नामक उपनगर की स्थापना हुई है। इसको छब्बीस सौ वर्ष पूर्व की ऐतिहासिक वैशाली नगरी न कहकर वर्तमान की वैशाली ही मानना चाहिए। यहां पर यह भी कहना अनुचित न होगा कि यदि हमें वैशाली का उन्नतरूप वर्तमान में दर्शाना ही है तो राजधानी दिल्ली वाली वैशाली कॉलोनी में वह महावीरकालीन रूपक दर्शाना चाहिए क्योंकि वह कॉलोनी है। शोध और खोजकर्ताओं को अब अविलम्ब दिल्ली की इसी वैशाली का पुनरुत्थान करने की सलाह जैनसमाज के लिए देना चाहिए, राजधानी की निकटता इसे शीघ्र ही गगनचुम्बी ख्याति प्राप्त कराने में सहायक बनेगी और जैन समाज के इशारे पर भारत सरकार भी बिहार प्रान्त की अपेक्षा दिल्ली में अधिक आर्थिक सहयोग और मान्यता प्रदान करेगी।

कब जागेगी जैन समाज?

समाज के प्रबुद्ध नागरिकों! जैनशासन की अस्मिता को बचाने हेतु अब सभी को सचेत होना आवश्यक है वरन् आप मंदिर में पूजा-पाठ करते रहेंगे और बाहरी संसार में अनादि जैनशासन पर निरन्तर कुठाराघात होकर एक दिन मरणासन्न देखने का मजबूर होना पड़ेगा। यूं तो धर्म की व्याख्या इतनी व्यापक है कि तीनों लोकों का सम्पूर्ण सुख उसमें समा जाने की क्षमता है तथापि काल के थपेड़ों में पड़कर जब-जब धर्म का ह्रास हुआ है तब-तब किसी न किसी महापुरुष

ने जन्म लेकर उसका पुनरुद्धार किया है। तभी सतयुग से लेकर वर्तमान के कलियुग तक भारत की धरती पर जैनधर्म का और उसके सिद्धान्तों का अपना एक विशिष्ट स्थान रहा है किन्तु ईसवी सन् की बीसवीं सदी के इतिहासकारों ने इस धर्म के प्रति एवं इसे प्रवर्तित करने वाले तीर्थंकर महापुरुषों के प्रति अपनी लेखनी के द्वारा जिस प्रकार अनभिज्ञता एवं द्वेषभाव का परिचय दिया है वह अब सहन करना अपने जैनत्व पर प्रश्नचिन्ह लगाना है।

विद्वत्शिरोमणि, पं. प्रवर श्री सुमेरुचंद जैन दिवाकर ने उस समय भी चल रही अनर्गल शोधपरम्परा से दुखी होकर ही शायद "जैनशासन" जो कि सन् 1947 तथा 1950 में भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा एवं सन् 1998 में प्राच्यश्रमणभारती-मुजफ्फरनगर द्वारा प्रकाशित है, के पृ. 222-223 पर लिखा है-

"भगवान महावीर के जीवन का इतिहास और उनके त्याग की अमर कहानी बिहारप्रान्त के पावापुर ग्राम में विद्यमान सरोवरस्थ धवल जिनमंदिर में मिलती है। भगवान महावीर ने ईसा से 599 वर्ष पूर्व कुण्डलपुर में क्षत्रियशिरोमणि महाराजा सिद्धार्थ के यहां माता त्रिशला के उदर से जन्म लिया था। वे नाथवंश के भूषण थे। संसार के भोगों में उनका विवेकपूर्ण मन न लगा अतः बालब्रह्मचारी रहकर उन्होंने 30 वर्ष की अवस्था में निर्ग्रन्थ दिगम्बर मुद्रा धारणकर 12 वर्ष तपश्चर्या कर 42 वर्ष की अवस्था में कैवल्य प्राप्त किया और विश्वहितंकर धर्म का उपदेश 30 वर्ष तक देकर 72 वर्ष की अवस्था में परमनिर्वाण-मुक्ति प्राप्त की। प्रभु के चारित्र को विकृत करते हुए श्री शं.रा. राजवाड़े ने नादसीय सूक्त के भाष्य-पूर्वार्ध में पृ.186 पर भगवान के नाथवंश को नटवंश मान उन्हें नटपुत्र कहने की असत् चेष्टा की है और लिखा है-गौतम व महावीर हे दीघे क्षत्रिय व्रात्य होते, कारण महावीरा 'नातपुत्त' म्हटला आहे व गौतमाचा जन्म लिच्छवी कुलांत झाला ओ। नातपुत्त-नटपुत्त नट व लिच्छवी हीं दोन्हीं कुले मनूनें व्रात्य-क्षत्रिय म्हणून उल्लेखिलीं आहेत।

खेद है कि अपने सम्प्रदाय के मोहवश मनुष्य सत्य का अपलाप करते हुए लज्जित नहीं होता। हरिवंशपुराण में भगवान के पिता महाराजा सिद्धार्थ को प्रतापी भूप बताया है-

"सिद्धार्थो भवदर्काभो भूपः सिद्धार्थपौरुषः। सर्ग 2-13 वास्तव में ऐसे आगमनिष्ठ विद्वानों के द्वारा रचित शास्त्रों से ही हमें अपनी असली विरासत और निराधार आगमविरुद्ध शोध-खोज की पोलें ज्ञात हो सकती है इसके विपरीत जिन विद्वानों ने किसी संस्थाविशेष या श्रेष्ठी आदि की मनोभावनापूर्ति हेतु लेखन किया है उनकी रचनाओं में स्पष्ट दुराग्रह और आगमविरुद्धता के स्वर गूंजते नजर आते हैं।

आखिर वास्तविकता कभी न कभी तो सामने आते ही हैं!

बंधुवर! आपको कुछ वास्तविक तथ्यों से परिचित होनापरम आवश्यक है। हमने पिछले कई वर्ष और महीनों से जब-जब वैशाली से जुड़े विद्वानों से वार्तालाप किया तो उन लोगों से भी यही तथ्य सुना कि हम "महावीर को वैशाली के राजकुमार" के रूप में कभी स्वीकार ही नहीं कर सकते हैं। उनका कहना है कि वैशाली बिल्कुल अलग स्थान है और वहां से 3 किमी. दूर मुजफ्फरपुर जिले के एक ग्राम को महावीर की जन्मभूमि बनाया गया है जिसे वासोकुण्ड या कुण्डग्राम के नाम से जाना जा रहा है। पहली बात तो इसमें चिन्तन करने की यह है कि सदियों की परम्परानुसार जब "कुण्डलपुर" नालंदा-बिहार महावीर जन्मभूमि के रूप में जनमानस की श्रद्धा का केन्द्र था तो दूसरे स्थान को ढूंढने की आवश्यकता क्यों पड़ी? उस पवित्र स्थल के प्रति शंका के चिन्ह क्यों उभरे? क्या उससे पहले सन् 1956 के दशक से पूर्व के लोग पूर्ण अज्ञानी थे, उन्हें आगम का ज्ञान नहीं था?

दूसरी बात यह है कि जब वैशाली ढूंढी गई तो उसे महावीर की जन्मभूमि क्यों कहा गया? जबकि महावीर के साथ "कुण्डलपुर अवतारी" विशेषण जुड़ा रहा है और वैशाली माता त्रिशला की जन्मभूमि के रूप में पहचानी जाती रही है।

इस स्थिति में यदि शोधकर्ताओं के अनुसार नाम देना ही था तो खुले रूप में उसका नाम मात्र "कुण्डलपुर" रखा जाता और वैशाली किसी दूसरे प्रदेश में बसाई जाती तब तो शायद कुछ श्रद्धा भी वहाँ के लिए उमड़ती। आप स्वयं सोचे कि सिंधुदेश और विदेहदेश क्या मात्र दो-तीन किलोमीटर के अंतराल पर रह सकते हैं? वह तो वास्तविक जन्मभूमि कुण्डलपुर से लगभग 150 किमी. दूर महावीर की ननिहाल के रूप में फिर भी स्वीकार किया जा सकता है वह भी

उसी प्रकार से जैसे वर्तमान में भारत के अंदर ऋषभदेव भगवान की निर्वाणभूमि कैलाशपर्वत उपलब्ध न होने से बद्रीनाथ के पर्वत पर एक संस्थाविशेष द्वारा "अष्टापद" नाम से एक नया तीर्थ पिछले कुछ वर्षों पूर्व से बना दिया है जहां श्रद्धालु यथाशक्ति दर्शन करने पहुँचते हैं।

वैशाली में राजा चेटक के दस पुत्रों का आधिपत्य था, न कि राजा सिद्धार्थ या युवराज महावीर का। इस बात की पुष्टि प्राकृतविद्या अक्टूबर-दिसम्बर 2001 के पृष्ठ 30 पर प्रकाशित स्व. पं. बलभद्र जैन के लेख "भगवान महावीर" से भी हो रही है। प्रस्तुत लेख में लेखक ने एक ओर प्रारंभ का शीर्षक ही दिया है-"महावीर की जन्मनगरी वैशाली"। इसके अंदर सभी बौद्ध एवं श्वेताम्बर तथ्यों के आधार पर उन्होंने वैशाली में महावीर का जन्म घोषित किया है पुनः आगे चलकर उसी लेख में पृ. 34 पर महासती चंदना द्वारा कौशाम्बी में भगवान महावीर को आहार देकर अपनी बहन मृगावती से मिलन के पश्चात् माता-पिता तक पहुँचने का वर्णन करते हुए लेखक ने दिगम्बर जैन ग्रंथों का अनुसरण करते हुए लिखा है-

"वहां से उसका भाई सिंहभद्र वैशाली ले गया किन्तु चंदना कोइस अल्पवय में ही संसार का कटु अनुभव हुआ था जिसके कारण उसे संसार से निर्वेद हो गया-अपनी योग्यता के बल पर 36000 आर्यिकाओं के संघ की गणिनीपद पर प्रतिष्ठित हुईं।"

इस सत्यता को ही स्वीकार कर लेने से महावीर की जन्मभूमि वैशाली भला कैसे हो सकती है? जिस वैशाली में त्रिशला, चंदना आदि सातों बहनों के और सिंहभद्र आदि दस भाइयों के जन्म हुए उसी वैशाली में अर्थात् ननिहाल में महावीर का जन्म होना कदापि संभव नहीं है क्योंकि माता त्रिशला ने अपनी ससुराल कुण्डलपुर के नंद्यावर्त महल में ही तीर्थंकर बालक को जन्म दिया था और वहीं उनके आंगन में पन्द्रह महीने तक रत्नवृष्टि हुई थी। जन्म के पश्चात् महावीर अपने ननिहाल कईबार गए हों, उनका समवसरण वैशाली में जाता रहा हो, इसमें कोई विसंवाद की बात ही नहीं है।

भारत में आए विदेशी यात्रियों के अनुसार बौद्धग्रंथ पोषित परम्परानुसार वैशाली में हजारों-हजार सोने, चांदी, तांबे के गुम्बद वाले महलों का वर्णन आप यदि सहज में स्वीकार कर सकते हैं तो आपको अपने प्राचीन आगम ग्रन्थानुसार महावीर की असली जन्मभूमि कुण्डलपुर का देवोपुनीत वैभव भी अवश्य जानकर गौरव का अनुभव करना चाहिए। उत्तरपुराणग्रंथ में स्पष्ट वर्णन आया है कि-

नंद्यावर्तगृहे रत्नदीपिकाभिः प्रकाशिते। रत्नपर्यंकके हंसतूलिकादिविभूषिते।।254।।पृ. 460

अर्थ—सात खंड वाले राजमहल के भीतर रत्नमय दीपकों से प्रकाशित नंद्यावर्त नामक राजभवन में हंस-तूलिका आदि से सुशोभित रत्ननिर्मित पलंग पर रानी त्रिशला सो रही थीं। अर्थात् तीर्थंकर भगवान महावीर की माता का तो शयन करने वाला पलंग ही स्वर्ण और रत्ननिर्मित था। रात-दिन स्वर्ग की देवियाँ उनकी सेवा करती थीं, साक्षात् इन्द्र और देवगण भगवान के समक्ष किंकर बने खड़े रहते थे, शचि इन्द्राणी स्वयं गुप्तवेश बनाकर माता की सेवाऔर रक्षा में संलग्न रहती थी तथा जिस नगरी में लगातार 15 महीने तक प्रतिदिन साढ़े सात करोड़ रत्नों की मोटी धारा स्वयं धनकुबेर आकर बरसाता था उस कुण्डलपुर नगरी की समृद्धता तो शब्दों में वर्णित भी नहीं की जा सकती है।

आज छब्बिस सौ वर्षों के बाद न तो कुण्डलपुर में वह वैभव दिखता है और न ही आज की स्थापित वैशाली-बसाढ़ में कुछ अवशेष दिखते हैं अतः वैशाली तो अब केवल खोज का विषय है और कुण्डलपुर अपने सौभाग्य को पुनः प्राप्त करने की इंतजार कर रहा है।

क्या पावापुरी अब मध्यमापावा के रूप में स्वीकृत हो चुकी है?

पाठकों! जन्मभूमि वैशाली को मान्यता देने वाले विद्वान् महावीर की निर्वाणभूमि को अब तक तो मज्झिमा पावा-फाजिलनगर, गोरखपुर, उ.प्र. के निकट पावाग्राम को मानते आए हैं। प्राकृतविद्या के पिछले अंकों में महावीर निर्वाणभूमि के नाम को "मध्यमा पावा" के रूप में ही लिखा जाता था किन्तु आश्चर्य हुआ अक्टूबर-दिसम्बर 2001 अंक के पं. बलभद्र

जी के ही लेख में पृ. 37 पर स्पष्ट लिखा है–

''भगवान महावीर 72 वर्ष की आयु में कार्तिक कृष्णा चतुर्दशी के प्रातःकाल ''मज्झिमा पावा'' में वर्तमान पावापुरी में कर्मों का नाश करके मुक्त हो गए।''

आखिर वास्तविकता पर तो कभी न कभी सबको आनाही पड़ता है। कुछ लोग अपनी बुद्धि-वैशिष्ट्य का परिचय देने हेतु भूगोल की दलील देने लगते हैं कि मगधदेश में राजगृही नगरी थी तो उसी के इतने नजदीक 18 किमी. दूर पर ही विदेहदेश की कुण्डलपुर नगरी कैसे आ गई?

इस विषय में सबसे पहला ही प्रश्न तो आधुनिक स्थापित वैशाली के प्रति ही उठ जाता है कि सिंधु देश की वैशाली नगरी के अंदर मात्र 2 किमी. दूर विदेहदेश का कुण्डग्राम आपने कैसे बना लिया? यदि 2 किमी. के अंतराल में दो बड़े राजाओं के देश कलियुगी मानव स्थापित कर सकता है तो सतयुग में मगध और विदेह थोड़ा पास-पास रहे हों इसमें कौन सी भौगोलिक परिस्थिति बिगड़ गई?

खैर! आधुनिक बुद्धि ने तो आजकल आगमपरम्परा, तीर्थ, पूजनपद्धति आदि में परिवर्तन करते-करते अब सिद्धशिला को ही पलटकर औंधी कर दी है जबकि आगम में अर्धचन्द्र या उत्तान कटोरे के समान सिद्धशिला का आकार माना गया है अतः अपनी-अपनी श्रद्धा ही इसमें प्रधान मानकर एक-दूसरे का विरोध करने की बजाए प्राचीन आचार्य प्रणीत आगम ग्रंथों का ही सहारा लेना चाहिए।

यह मगध देश के निकट कुण्डपुर नगरी का अस्तित्व भी आप उत्तरपुराण के निम्न प्रमाण से देखें–

दरनिद्रावलोकिष्ट, विशिष्टफलदायिनः।
स्वप्नान् षोडशविच्छिन्नान् प्रियास्य प्रियकारिणी।।256।।
तदन्ते पश्यदन्यच्च, गजं वक्त्रप्रवेशिनम् ।
प्रभातपटहध्वानैः पठितैर्वन्दिमागधैः।।257।।पृ.460

अर्थात् रात्रि के चतुर्थ प्रहर में त्रिशला ने कुछ खुली सी नींद में सोलह स्वप्न देखे। सोलह स्वप्नों के बाद उसने मुंख में प्रवेश करता हुआ एक अन्य हाथी देखा तदनन्तर सबेरे के समय बजने वाले नगाड़ों की आवाज से तथा चारण-बन्दीजनों और मागधजनों के द्वारा पढ़े हुए मंगल पाठों से वह जाग उठी।

इन पंक्तियों से यह स्पष्ट हो रहा है कि कुण्डलपुर के निकट ही मगधदेश था और वहां के माग़धीजन भी कुण्डलपुर में रहा करते थे। जैसे-आज भी हमारे भारतदेश में अनेक देशों के लोग भी निवास करते हैं और तमाम देशों का पारस्परिक व्यवहार, व्यापार आदि भी सदैव से ही चलते रहे हैं। शायद उसी परम्परा का अनुसरण करते हुए आज भी कुण्डलपुर के आसपास के तमाम आदिवासी नागरिक अपने को मगैया कहते हैं। और कुण्डलपुर के महावीरप्रभु को अपना परम आराध्य मानते हैं। अंत में आप सब श्रद्धालु भक्तों को यही प्रेरणा लेना है कि बसाढ़ग्राम में बसाई गई वैशाली को 2600 वर्ष पुरानी वैशाली न मानकर उसे दिल्ली की एक कॉलोनी की भाँति ही समझें और असली वैशाली के खोज़ का साधन बनाएं एवं महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर के प्रति अपनी श्रद्धा को कदापि विचलित न होने दें।

* * *

भगवान महावीर जिन्होंने भारत के विचारों को उदारता दी, आचार को पवित्रता दी, जिसने इंसान के गौरव को बढ़ाया, उसके आदर्श को परमात्मपद की बुलंदी तक पहुँचाने की शक्ति दी। सांस्कृतिक स्रोतों को सुधारा, उन पर जितना भी गर्व करें, थोड़ा ही है।

-डॉ. हेल्फुथफान ग्लाजेनाप्प (जर्मनी)

भगवान महावीर का जन्म एवं जन्मभूमि कुण्डलपुर

(अप्रैल 2002 में प्रस्तुत)

–पं. शिवचरणलाल जैन, मैनपुरी

येनेदमप्रतिहतं सकलार्थतत्त्वं, उद्योतितं विमलकेवललोचनेन ।
भक्त्या तमद्भुतगुणं प्रणमामि वीर–मारान्नरामरगणार्चितपादपीठम् ।।

विश्ववन्द्य भगवान महावीर के जन्म को 2600 वर्ष का अन्तराल व्यतीत हो चुका है। उनका वर्तमान तीर्थंकर पदेन जीवन तो लोककल्याणकर पंच मंगलों से विशिष्ट अद्भुत लोकोत्तर गुणों से परिपूर्ण है ही, उनका पूर्व पर्यायों में हानि-वृद्धिरूप आंदोलित होता हुआ अतिशय चमत्कारी है। क्या अमृत विष हो सकता है तथा इसके विपरीत क्या विष अमृत के रूप में परिणत हो सकता है? इसका स्पष्ट प्रतिबिम्बंन भगवान महावीर के विहंगम भवभ्रमण के दर्पण में होता है। लगभग कोड़ाकोड़ी सागरोपम काल के थपेड़ों में, प्रचंड अग्नि में तप्तायमान होते हुए कभी ठोस रूप में, कभी तरल रूप में, कभी विकृत रूप में, कभी क्षुभित रूप, कभी अशुद्ध रूप में, कभी स्थिर रूप में चामीकर स्वर्ण के समान भगवान महावीर की आत्मा पीड़ित रूप मे एवं पतन और उत्थान के रूप में दृश्यमान होती है। आद्य तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव के दिव्य धर्ममय सामीप्य को प्राप्त करके भी कषायों के वशीभूत हो स्वयं तो अपने पराभव और अपरिमित दुःखों का पात्र बनती रही, साथ ही समस्त लोक को हिंसा, पाखण्ड एवं दुराग्रह का गरलपान कराने में लिप्त रही, किन्तु ख़ौलता हुआ जल अंत में शीतल स्वभाव को प्राप्त होता ही है। उसी प्रकार वह विशिष्ट आत्मा भी कर्म संयोगी भावों, दुःख संतप्त भावों से रहित हो क्षमादि शीतल शुद्ध आत्म स्वभाव को प्राप्त कर शाश्वत मोक्षसुख का भाजन बना। नर से नारायण बनने की यह दिव्यकथा जन-जन के लिए प्रेरणाप्रद है। पूर्व में ज़िसने हिंसा का, पाप का, विभीषिकाओं का दुंनिया को पाठ पढ़ाया था, उसी ने पश्चात् अपनी भूलों को स्वीकार कर आत्मशोधन रूप शस्त्र से, विश्व को अहिंसा तथा सहअस्तित्व हेतु अमोघ अस्त्र अनेकांत रूप मृत्युंजयी औषधि प्रदान कर लोककल्याण किया। उनका दिव्य शासन अद्यावधि विद्यमान होकर विश्व को सुख-शांति का पावन संदेश दे रहा है।

पूर्व पर्यायावलोकनः-यहाँ उनकी चित्र विचित्र रूप पर्यायों को उल्लेखित किया जाता है-

1. पुरुरवा भील 2. सौधर्म स्वर्ग में देव 3. मारीच या मरीचि (भगवान ऋषभदेव का पौत्र या भरत चक्रवर्ती का पुत्र) 4. ब्रह्मलोक का देव 5. ब्राह्मण पुत्र ज़टिल 6. सौधर्म स्वर्ग में देव 7. पुष्यमित्र ब्राह्मण 8. सौधर्म स्वर्ग में देव 9.अग्निसह ब्राह्मण 10. सनत्कुमार स्वर्ग में देव 11. अग्निमित्र ब्राह्मण 12. माहेन्द्र स्वर्ग में देव 13. भारद्वाज ब्राह्मण 14. माहेन्द्र स्वर्ग में देव, तत्पश्चात् तीव्र मान एवं मिथ्या उपदेशों के कारण असंख्यात बार **तिर्यंच गति में दुःख भोग** 15. स्थविर ब्राह्मण 16. माहेन्द्र स्वर्ग मे देव 17. राजकुमार विश्वनन्दि (इस भव में दिगंबरी दीक्षा ली) 18. महाशुक्र स्वर्ग में देव 19. त्रिपृष्ठ नारायण, 20. सप्तम नरक (उत्कृष्ट आयु-33 सागर) 21. सिंह 22. प्रथम नरक 23. सिंह **(अजितंजय व अमितंजय अथवा जय व अमितगुण मुनि के उपदेश लाभ)** 24. सौधर्म स्वर्ग में सिंहकेतु देव 25. कनकोज्ज्वल राजा **(मुनिदीक्षा)** 26. लान्तव स्वर्ग में देव 27. राजा हरिषेण 28. महाशुक्र स्वर्ग में प्रीतिंकर देव 29. प्रियमित्र चक्रवर्ती (विदेह) 30. सहस्रार स्वर्ग में देव सूर्यप्रभ 31.वासुपूज्य भगवान के तीर्थकाल में राजा नन्दन **(मुनि दीक्षा, तीर्थंकर प्रकृति का बंध एवं प्रायोपगमन समाधि)** 32. अच्युत स्वर्ग में देव 33. **कुण्डलपुर में राजा सिद्धार्थ व रानी प्रियकारिणी (त्रिशला) के पुत्र तीर्थंकर महावीर।**

भगवान महावीर के भूत एवं वर्तमान भवों के चित्रण का फलितार्थ–

1. पापी से पापी जीव भी पाप निवृत्ति कर निष्पाप एवं शुद्ध हो सकता है।

2. भगवांन महावीर के जीव ने ही हिंसा यज्ञ, पाखंड का प्रस्तार किया। अंत में अपनी भूल स्वीकार कर प्रकृत अपेक्षित पाप को मिटाने का भी अथक प्रयास किया। परन्तु उसे पूर्ण रूप से नहीं मिटाया जा सका। अतः सदैव पाप

कार्य एवं उसके प्रचार एवं अनुमोदन से बचना चाहिए।

3. पाप प्रवृत्ति को प्रचारित करना सरल है, परंतु पाप निवृत्ति अति कठिन है। जल का अधोगमन सहज है, उपरि प्रवाह दुष्कर होता है।

4. पापी जीव से घृणा करके उसे सुधारा नहीं जा सकता, करुणापूर्वक उपदेश से ही सुधार संभव है।

5. स्वोपार्जित पुण्य कर्म ही स्वयं जीव को दुख अथवा सुख प्रदान करता है।

6. कर्म ही भाग्य बनता है, उसका नाश कर परमात्म पद प्राप्त होता है।

7. मरीचि ने अपने पितामह भगवान ऋषभदेव के अहिंसा एवं संयम के मार्ग की अवहेलना कर दुःख प्राप्त किया तथा अहिंसा एवं त्याग के मूर्तरूप मुनियों की श्रद्धा करके ही दुःख निवृत्ति और सुख की प्राप्ति की।

8. अहिंसा, अनेकांत एवं अपरिग्रह ही आत्मशांति एवं विश्वशांति का उपाय हैं।

9. सिंह पर्याय में महावीर ने पशुता का त्याग किया एवं समाधिपूर्वक शरीर का त्याग किया और कल्याण की ओर अग्रसर हुआ। हम तो मनुष्य हैं, अवश्य ही बुराई पर नियंत्रण कर सकते हैं। शाकाहार एवं पर्यावरण सुरक्षा अवश्य ही करणीय है।

10. पुरुरवा भील की अवस्था में उसकी पत्नी कालिका ने उसे मुनि हत्या जैसे जघन्य पापकृत्य से रोका था। इससे प्रकट है कि नारी जाति मनुष्य के लिए प्रेरणास्रोत बन सकती है। सती चन्दना के प्रतीक रूप में भगवान महावीर का नारी जाति का समत्व विदित ही है।

11. मानकषाय के उद्वेग के कारण हिंसा का प्रवर्तक महावीर का जीव था और अन्ततोगत्वा यथार्थता को स्वीकार करने पर चतुर्थ काल के अंत में अंतिम तीर्थंकर के रूप में अहिंसा एवं अनेकांत का प्रवर्तक भी भगवान महावीर का जीव ही हुआ।

12. वर्धमान पूर्व मनुष्य पर्यायों में अधिकतर ब्राह्मण कुल में ही उत्पन्न हुए थे। उन्हीं अवस्थाओं में उन पर पाखंड, धर्म के नाम पर हिंसा आदि कुत्सित परिणामों का प्रत्यावर्तन होता रहा। इससे ज्ञात होता है कि शिक्षा का दुरुपयोग मनुष्य को कितना अधोपतित बना देता है। जो शिक्षा सदुपयोग के रूप में अमृत है, वही दुरुपयोग की परिणति में विष बन जाती है। कहा भी है-

साक्षरा विपरीताश्चेत् राक्षसा एव केवलम् । सरसो विपरीतोऽपि सरसत्वं न मुञ्चति।।

अपेक्षणीय विशिष्ट बिन्दु–बिहार प्रान्त में ऋजुकूला नदी के तट पर जृम्भिक ग्राम के निकट वैशाख शुक्ला दशमी को भगवान महावीर को कठोर तपश्चर्या एवं उत्कृष्ट ध्यान से कैवल्य की प्राप्ति हुई। गणधर रूप निमित्त के अभाव के कारण 66 दिन तक दिव्यध्वनि नहीं खिरी। पुनः गौतम के दीक्षित होने एवं गणधरत्व के प्राप्त होने से दिव्यध्वनि का आविर्भाव हुआ।

भगवान महावीर के उपदेश का सबसे महत्वपूर्ण पहलू सर्वोदय तीर्थ के रूप में पावन अवदान है। इसमें प्राणीमात्र के लिए सुख शांति का मार्ग निहित है,इसी में विश्वशांति,सह अस्तित्व का मूलमंत्र समाहित है। अनेकान्त एवं स्याद्वाद इसका आधार है। भारतीय साहित्य के अवलोकन करने से विदित होता है कि सर्वोदय का सर्वप्रथम उद्घोष भगवान महावीर के पावन संदेश में ही संप्राप्त है।

आचार्य समन्तभद्र की निम्न पंक्तियां दृष्टव्य हैं–

सर्वान्तवत्तद्गुणमुख्यकल्पं, सर्वान्तशून्यं च मिथोऽनपेक्षं।
सर्वापदामन्तकरं निरन्तं, सर्वोदयं तीर्थमिदं तवैव।।(युक्त्यनुशासन)

वस्तु अनंत धर्मात्मक है। अनेकांत वस्तु के सभी (परस्पर विरोधी भी) पार्श्वों पर दृष्टिपात करता है, सभी को प्रकाशित करता है, उनकी सत्ता को स्वीकार करता है।विरोधी स्वभावों को गौण और मुख्य रूप से स्याद्वाद शैली से

प्रतिपादित करता है। जो दृष्टि सर्वधर्मात्मक न होकर किसी एक ही पहलू को मान्य करती है, अन्य विरोधी पहलू की अनपेक्ष है, वह मिथ्या है। हे भगवान महावीर! यह अनेकांतरूप सर्वोदय तीर्थ केवल आपका ही है, इसी से समस्त आपत्तियों का नाश होता है, यही शाश्वत है।

अहिंसा, विश्वशांति का आधार भी अनेकांत रूप सर्वोदय तीर्थ ही है।

भ्रांति परिवेश– अज्ञान, धर्मपक्षपात आदि कारणों से जैन धर्म एवं भगवान महावीर विषयक अनेकों भ्रांतियाँ दृष्टिगोचर होती हैं। यह चिंता का विषय है। **पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से तीर्थंकर ऋषभदेव जैन विद्वत् महासंघ आदि के द्वारा अन्य साहित्य एवं पाठ्यक्रम में प्रकाशित भ्रांतियों के निवारण का सार्थक प्रयास किया गया है, किया जा रहा है।** भगवान महावीर के अस्तित्व के सबल प्रमाण साहित्य, पुरावशेष, मूर्तियाँ, आचार्य परम्परा, जनश्रुति तथा सत्यान्वेषी इतिहासकारों के स्पष्ट मत के रूप में विद्यमान है, जो दर्पणवत् सत्य को उजागर करते हैं। आवश्यकता है कि श्वेतांबर एवं बौद्ध मिथ्या मान्यताओं जैसे गर्भ का स्थानान्तरण, विवाह एवं संतान का जन्म, मांसाहार आदि का निराकरण।

पाठ्यक्रमों में अल्पज्ञ इतिहासकारों द्वारा भगवान महावीर से ही जैनधर्म का प्रवर्तन कथित करने रूप भ्रांति का स्थायी रूप से निवारण आवश्यक है। वैदिक, सनातन संस्कृति में भी भगवान ऋषभदेव,नेमिनाथ एवं पार्श्वनाथ तीर्थंकरों का उल्लेख इस हेतु पर्याप्त साक्ष्य हैं। 4 फरवरी सन् 2000 को लालकिले के मैदान में पूज्य गणिनीप्रमुख, आर्यिकाशिरोमणि श्रीं ज्ञानमती माताजी के सानिध्य में आयोजित आद्य तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महोत्सव के अवसर पर प्रधानमंत्री **श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने स्पष्ट स्वीकारोक्ति रूप घोषणा की थी कि भगवान महावीर से पूर्व 23 तीर्थंकरों की परम्परा प्रमाणसिद्ध है।**

जन्मभूमि कुण्डलपुर–वर्तमान में दिगम्बर जैन समाज में भगवान महावीर के जन्म एवं निर्वाणस्थल विषयक भ्रान्ति एवं विवाद दृष्टिगोचर हो रहा है। पर्याप्त साक्ष्यों से युक्त बिहार प्रान्त की निर्वाणभूमि पावापुर के स्थान पर उत्तरप्रदेश के गोरखपुर जिले में अन्य पावापुर की कल्पना का दुःसाहस अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारने के समान है। अपने ही इतिहासकारों व आयतनों को अनपेक्षित परिवर्तित कर समाज जीवित एवं स्वस्थ नहीं रह सकता। इसी प्रकार भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर के विषय में भी अनावश्यक विवाद खड़ा हो गया है। वैशाली, जो कि भगवान महावीर के नाना चेटक की राजधानी थी, को वर्द्धमान का जन्मस्थान घोषित करना एक अपराध ही माना जाना चाहिए।

किसी प्रकरण को प्रमाणित करने हेतु तीन प्रमाण अपेक्षित होते हैं-1. प्रत्यक्ष 2. अनुमान 3. आगम।

प्रत्यक्ष दृष्टि से–नालंदा जिलान्तर्गत कुण्डलपुर में जन्म स्मारक के रूप में महावीर जिनालय प्राचीन काल से अवस्थित है। शताब्दियों से ही श्रावकगण जन्मकल्याणक तीर्थ के रूप में इसकी वंदना करते आये हैं। अधिकांश हम सभी इसके प्रत्यक्षदर्शी हैं, वन्दना कर चुके हैं। क्योंकि यह प्रसिद्ध तीर्थ है। किन्तु एक भी व्यक्ति दृष्टिगोचर नहीं होता, जो जन्मकल्याणक स्थल के रूप में वैशाली की वंदना कर कृतार्थ हुआ हो।

अनुमान विषयक–वैशाली में भगवान महावीर विषयक प्राप्त कतिपय पुरातात्त्विक सामग्री प्रबल प्रमाण नहीं हो सकती, कारण कि ऐसे उपादान तो बिहार, उत्तरप्रदेश व देश के अन्य भागों में भी यत्र-तत्र प्राप्त हो जाते हैं। इसमें अन्यथानुपपत्ति रूप हेतुता नहीं पाई जाती। इस लक्षण में अतिव्याप्ति दोष है। अव्याप्ति, अतिव्याप्ति एवं असंभव इन तीन दोषों से रहित लक्षण होता है। वैशाली जन्मस्थल के लक्षणों में तीनों ही दोष दृष्टिगोचर होते हैं। अतः हेतुसिद्ध प्रकृत, प्रसिद्ध कुण्डलपुर ही भगवान महावीर की जन्मभूमि है।

आगम के परिप्रेक्ष्य में–न्याय की परिपाटी में यह सर्वमान्य है कि यदि प्रत्यक्ष और अनुमान से मतैक्य न हो तो आगम ही अंतिम प्रमाण है। अतः यहाँ कतिपय प्राचीन आगम के प्रमाण प्रस्तुत किये जाते हैं, कतिपय नवीन मनीषियों के विचार और मान्यताएं भी-

1. सिद्धत्थराय-प्रियकारिणीहिं णयरम्मि कुंडले वीरो। उत्तरफग्गुणिरिक्खे चेत्तसिदे तेरसीए उप्पण्णो।।

(तिलोयपण्णत्ती, द्वितीय खंड, गाथा 556)

वीर जिनेन्द्र कुण्डलपुर में राजा सिद्धार्थ और रानी प्रियकारिणी से चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में उत्पन्न हुए। **(नाथवंश का समर्थन गाथा 557 में उल्लिखित है।)**

2. अथाऽस्मिन् भारतेवर्षे विदेहेषु महर्द्धिषु। आसीत्कुण्डलपुरं नाम्ना पुरं सुरपुरोत्तमम्।।

(पुराणसार संग्रह, द्वितीय भाग, चतुर्थ सर्ग-श्लोक1, भारतीय ज्ञानपीठ, अनु. पं. फूलचंद सिद्धान्तशास्त्री)

3. आसाढ़ जोण्ह पक्खछट्ठीए कुंडलपुर णगराहिव णाहवंस-सिद्धत्थणरिंदस्स तिसलादेवीए गब्भमागंतूण तत्थ अट्ठदिवसाहिय णवमासे अच्छिय चइत्त-सुक्कपक्ख तेरसीए रत्तीए उत्तरफग्गुणीणक्खत्ते गब्भादो णिक्खंतो वड्ढमाण जिणिंदो। (जयधवला 1-58)

आषाढ़ महीना के शुक्ल पक्ष की षष्ठी के दिन कुण्डलपुर नगर के स्वामी नाथवंशी सिद्धार्थ नरेश की त्रिशला देवी के गर्भ में आकर और वहां नव माह आठ दिन रहकर चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन रात्रि में उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र के रहते हुए भगवान महावीर गर्भ से बाहर आए। साथ ही निम्न उद्धृत गाथा जयधवला के साथ धवला में भी पृष्ठ 535 पर अंकित है-

4. कुंडलपुरवरिसस्सराय सिद्धत्थक्खत्तियस्स णाहकुले। तिसलाए देवीए देवीसद सेवमाणा ए।।

(जयधवला में उद्धृत गाथा 23)

5. हरिवंशपुराण सर्ग 2-श्लोक 5 से 25 प्राचीनतम गाथाएं।

6. सिद्धार्थनृपतितनयो भारतवास्ये विदेहकुण्डपुरे। देव्यां प्रियकारिण्यां सुस्वप्नान् संप्रदर्श्य विभुः।।

(निर्वाणभक्ति)

7. आवश्यक निर्युक्ति मलयगिरि टीका गाथा-52

8. लगभग 600 ई. पूर्व बिहार प्रान्त के कुण्डलपुर नगर के राजा सिद्धार्थ के घर में उनका जन्म हुआ। उनकी माता त्रिशला वैशाली नरेश राजा चेटक की पुत्री थीं।

(जैनधर्म-पं. कैलाशचंद्र शास्त्री पृ.-50)

9. राज्ञः कुण्डपुरेशस्य वसुधाराय तत्पृथु। सप्तकोटीमणीः सार्द्धाः सिद्धार्थस्य दिनप्रतिः।।

(महापुराण-सर्ग 74, जैनेन्द्र सिद्धांतकोष-तीर्थंकर परिचय)

10. उत्तरपुराण पर्व 74-1252

11. अस्मिन भुवा माल इयद्विशाले समादधच्छ्रीतिलकत्वमाले।
समञ्चितं वक्ति मदीयभाषा समेहितं कुण्डपुरं समासात् ।।21।। (आ. ज्ञानसागर जी वीरोदय सर्ग-2)

12. इह जंबुदीवि भरहंतावलि, रमणीय विसय सोहा विसालं।
कुंडउरि राउ सिद्धत्थ सहिउ, जो सिरिहस मगण वेस रहिउ।। (वीर जिणिंद चरिउ पृ.11-12-13 (ज्ञानपीठ)

इत्यादि उपरोक्त प्रमाणों के आधार पर यह सिद्ध है कि बिहार प्रान्तस्थ नालंदा जिले के अंतर्गत अवस्थित कुण्डलपुर ही भगवान महावीर की जन्मभूमि है। उसका प्रचार और विकास साधुवृन्दों एवं विद्वानों के द्वारा भ्रांति निवारणार्थ एकात्मता हेतु अपेक्षित है।

* * *

मंगलमय श्री महावीर प्रभु, कोटि नमन स्वीकार करो।
रत्नत्रय से वसुन्धरा का, युग-युग तक शृंगार करो।।

"वैशाली स्मारिका-2002" दिगम्बर है या श्वेताम्बर?

(जुलाई 2002 में प्रस्तुत)

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

पिछले लगभग 25 वर्षों से जैन समाज जहाँ साहित्य प्रकाशन एवं धर्मप्रभावना के क्षेत्र में काफी बढ़-चढ़कर आगे आया है, वहीं तेजी से दिगम्बर जैन साहित्य में विकार भी आया है। आधुनिक लेखक और साहित्यकार अपने शोधपरक अध्ययन वाले लेखन में यह भी भूल जाते हैं कि अपने पूर्वज प्राचीन दिगम्बर जैनाचार्यों की परमविशुद्ध वाणीरूपी अमृत में बिना भेदभाव के हम अन्य परम्परा के साहित्य का भी मिश्रण कैसे कर रहे हैं।

ध्यान रखें! दूसरों की बातों को जानना एवं उसे अपने लेखन में प्रयुक्त करना बुरा नहीं है, किन्तु उन ग्रन्थों का हवाला दिए बिना आचार्यों की वाणी के साथ उनका सम्मिश्रण करना अत्यन्त घातक तब सिद्ध होता है, जब जैनत्व से अपरिचित लोग उसमें प्रयुक्त आगमविरूद्ध पंक्तियों को भी दिगम्बर जैन ग्रन्थ की ही समझ लेते हैं और तदनुसार ही पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होने लगता है। ऐसा ही एक उदाहरण देखने में आया है वैशाली स्मारिका का, जो कि भगवान महावीर स्मारक समिति, पटना से 25 अप्रैल 2002 को प्रकाशित हुई है।

प्रकाशन समिति के पदाधिकारी एवं सम्पादकों से मैं पूछना चाहती हूँ कि यह स्मारिका दिगम्बर जैन है या श्वेताम्बर अथवा बौद्ध? अथवा सबका मिला-जुला रूप प्रस्तुत करके इसे खिचड़ी बना दिया गया है?

स्मारिका के सम्पादकीय से लेकर अन्तिम (61वें) पृष्ठ तक जिस कदर इसमें दिगम्बर पक्ष की अवहेलना की गई है उसे पढ़कर हृदय व्यथित हो गया और मैं सोचने लगी कि शायद अब डॉक्टर, प्रोफेसर, इतिहासज्ञ, भूगोल शास्त्री और पुरातत्ववेत्ता ही हमारे जैनशासन के प्राचीन मनीषी आचार्यों को चुनौती देकर नये-नये मत स्थापित करेंगे, फिर तो हमें अपने षट्खण्डागम्, तिलोयपण्णत्ति, उत्तरपुराण आदि ग्रन्थों को अलमारी में बन्द करके इन्हीं आधुनिक ज्ञानियों की बातों पर श्रद्धान करके अपने सम्यग्दर्शन को दृढ़ करना पड़ेगा।

उदाहरण के तौर पर उस वैशाली स्मारिका के कतिपय विचारणीय बिन्दु प्रस्तुत किए जा रहे हैं, जिनके उत्तरों की (दिगम्बर जैन आगम के परिप्रेक्ष्य में) प्रकाशन समिति एवं सम्पादकों से अपेक्षा है–

1. सर्वप्रथम आदरणीय डॉ0 श्रीरंजनसूरिदेव द्वारा लिखित सम्पादकीय में वैशाली को वज्जिगण संघ की राजधानी के रूप में लोकविश्रुत बताया गया है और इस गणसंघ में लिच्छवि, ज्ञातृक, मल्लि, विदेह, आदि अनेक स्वाधीनताप्रेमी गण को सम्मिलित माना है पुनः इसी सम्पादकीय में दो स्थानों पर (द्वितीय और चतुर्थ पैराग्राफ में) महावीर की माता त्रिशला को लिच्छविराज चेटक की बहन लिखा है।

उपर्युक्त कथन पूर्णरूप से श्वेताम्बर शास्त्रानुसार है, किसी भी दिगम्बर जैन ग्रन्थ (प्राचीन आचार्यप्रणीत) में न तो त्रिशला को चेटक की बहन माना है और न उनके लिच्छवि वंश का उल्लेख है, बल्कि महान आर्षग्रन्थ उत्तरपुराण (9वीं शती में आचार्य श्री गुणभद्र द्वारा रचित) में वर्णन आया है-"सुरलोकादभूः सोमवंशे त्वं चेटको नृपः।" अर्थात् वैशाली के राजा चेटक "सोमवंश" में उत्पन्न हुए थे।

इसी प्रकार सम्पादक महोदय ने श्वेताम्बर ग्रन्थ भगवतीसूत्र, कल्पसूत्र आदि के अनुसार रानी त्रिशला को "विदेहदत्ता" कहा है जबकि दिगम्बर जैन ग्रन्थों में इस शब्द का भी कहीं उल्लेख नहीं है, त्रिशला का एक नाम "प्रियकारिणी" अवश्य स्वीकार किया गया है। इसके अन्दर दिगम्बर जैनग्रन्थ हरिवंशपुराण के अनुसार महावीर की जन्मस्थली "कुण्डपुर" लिखा गया है, वह परमसत्य है किन्तु उसका मतलब वैशाली के अन्दर सन् 1956 में बसाए गए कुण्डग्राम, वासोकुण्ड या कुण्डपुर से कदापि नहीं है।

मेरी श्रीरंजन सूरिदेव को यह प्रेरणा है कि आप कृपया इस विषय में निष्पक्ष और श्रद्धापरक दृष्टि से प्राचीन दिगम्बर जैन आगमग्रन्थों का स्वाध्याय अवश्य करें, उसके पश्चात् ही दिगम्बर जैनसमाज द्वारा प्रकाशित होने वाले

साहित्य के लिए आलेख लिखें और अपनी लेखनी में यथास्थान दिगम्बर, श्वेताम्बर एवं बौद्ध आदि ग्रन्थों के नामोल्लेख अवश्य करें ताकि विभिन्न मान्यताओं का स्पष्टीकरण हो और दिग्भ्रान्त जनता सत्यासत्य पक्ष को समझ सके।

2. कैलाशचन्द्र जैन (मानद्मंत्री) भगवान महावीर स्मारक समिति, पटना द्वारा लिखित "अपनी बात" नामक आलेख में भी श्वेताम्बर मान्यतानुसार लिच्छविवंश का ही उल्लेख है। इसमें सरकारी, राजकीय और शोधपरक मान्यताओं के आधार पर वैशाली के वासोकुण्ड को महावीर का जन्मस्थान बताया है, जबकि दिगम्बर जैनागम कभी भी इसका समर्थन नहीं करते हैं। बिना परिश्रम और स्वाध्याय का अभाव ही ऐसी दूसरों से उधार ली हुई वस्तु को स्वीकारने जैसी प्रक्रिया है।

3. आगे आलेखों की श्रृंखला में सर्वप्रथम "वैशाली" पुस्तक से साभार उद्धृत किया गया श्वेताम्बर आचार्य श्री विजयेन्द्र सूरि का वैशाली समर्थक लेख है। इसकी विडम्बना तो आप बनारस से प्रकाशित होने वाली "श्रमण पत्रिका" (अप्रैल-सितम्बर 2001) में देख ही चुके हैं .कि स्वयं श्वेताम्बर मतानुयायी उनकी बात काटकर लछुवाड़ के क्षत्रिय कुण्डग्राम को महावीर जन्मभूमि मान रहे हैं, किन्तु अपने समर्थन का पक्ष संग्रह करने में बेचारी दिगम्बर जैन समाज को उनके लेख की वैशाखियों का सहारा भी लेने में कोई संकोच नहीं है। लेकिन इस विषय में ध्यान रखना है कि यदि विजयेन्द्रसूरि आपके लिए वैशाली समर्थन हेतु प्रामाणिक हैं तो उनके अनुसार माता त्रिशला को राजा चेटक की बहन ही मानिए और महावीर के पिता सिद्धार्थ को वैशाली के कोल्लाग नाम के मोहल्ले में बसने वाली नाय जाति के क्षत्रियों का सरदार भी मानना पड़ेगा। फिर तो इन लेखकों को दिगम्बर जैनागमों को तिलांजलि देकर इन्हीं लोगों के समान महावीर के विकृत स्वरूप को स्वीकारने में कोई हिचक नहीं होनी चाहिए।

4. अगले आलेख में महापण्डित राहुलसांकृत्यायन ने लेख के मध्य अपने बौद्ध धर्मसमर्थन का परिचय स्वयं दे दिया है और इन्होनें महावीर की निर्वाणस्थली पावापुरी न मानकर मल्लों की पावा (पडरौना के पास किसी "पपौर") ग्राम को माना है अर्थात् बौद्धपरम्परा का यह लेख किसी दिगम्बर जैन आगमग्रन्थ से मेल नहीं खाता, किन्तु वैशाली के समर्थकों को अपने पक्ष में समर्थन जुटाने के लिए ऐसे आधुनिक शोध-खोज के लेख लेने पड़ते हैं।

कितने आश्चर्य की बात है कि हमारे दिगम्बर जैन ग्रन्थों के मर्म तक इन अजैन विद्वानों को पहुँचाने की तो रंचमात्र कोशिश नहीं की गई, बल्कि उनके ग्रन्थ और तर्क अपनी जैन समाज के गले उतारने का यह दुष्प्रयास स्मारिका प्रकाशकों के लिए अपने पैरों पर स्वयं कुल्हाड़ी मारने से अधिक क्या कहा जाए?

5. तृतीय आलेख बहुचर्चित विद्वान डॉ0 योगेन्द्र मिश्र का है, जिन्होनें हर्मन जैकोबी, हार्नले और विसेंटस्मिथ आदि विदशी विद्वानों के मत को पुष्ट करने में सन् 1962 में अपने द्वारा लिखित "ऐन अर्ली हिस्ट्री ऑफ वैशाली" को ही आधार बनाया है और कुछ दिगम्बर जैनग्रंथों के अनुसार कुण्डपुर या कुण्डलपुर नाम को तोड़-मरोड़कर वैशाली के कुण्डग्राम को ही सिद्ध करते हुए गंगानदी से उसका सम्बन्ध जोड़ा है जबकि वैशाली का गंगानदी से दूर-दूर तक कोई सम्बन्ध ही नहीं है क्योंकि वह तो जैनागमों में सिन्धुदेश के अन्दर मानी गई है जो बिहार प्रदेश में सम्भव नहीं है।

इन्होनें आगे तो पूर्णरूप से श्वेताम्बर एवं बौद्धग्रन्थों का सहारा लेकर महावीर के पिता सिद्धार्थ को राजा चेटक के बहनोई माना है तथा कल्पसूत्र, आचारांगसूत्र, सूत्रकृतांग, उत्तराध्ययन, कामसूत्र, विविधतीर्थकल्प, मनुस्मृति आदि ग्रन्थों के अनुसार महावीर का विदेह, विदेहदत्त, विदेहजात्य और विदेहसुकुमार नामों से परिचित कराया है। इनमें से कोई भी ग्रन्थ दिगम्बर जैन नहीं है, यही कारण है कि लेखक महावीर के इसी परिचय से सन्तुष्ट हो गए। यदि वे सूक्ष्मता से प्राचीन आचार्यों की वाणी को श्रद्धा और आस्था के आलोक में देखते तो महावीर के वर्षावास (चातुर्मास) होने का समर्थन कतई न करते और निष्पक्षरूप से यही कहते कि वैशाली एवं कुण्डलपुर अलग-अलग राजधानियाँ थीं। कुण्डपुर को वैशाली की एक कॉलोनी के रूप में स्वीकारने का इन विद्वानों का अभिमत महावीर के राजघराने की अस्मिता पर भी प्रश्नचिन्ह खड़ा करता है, परन्तु हम इन शोधकर्ता विद्वान का कोई दोष नहीं समझते, क्योंकि यदि हमारे अपने दिगम्बर जैन सदियों से चले आ रहे जन्मतीर्थ कुण्डलपुर के प्रति किसी को बोलने का अवसर न देते, तो भला किसी की अनर्गल लेखनी कैसे चल सकती थी? अतः अपनी गलती तो खुद को ही सुधारने का प्रयास कर दिगम्बर जैन शास्त्री

परिषद के आगमनिष्ठ विद्वानों एवं आगम के ज्ञाता श्रद्धेय गुरूओं से इसका मार्गदर्शन लेना चाहिए।

6. अगले चतुर्थ लेख में डॉ0 ऋषभचन्द्र जैन, फौजदार वैशाली वालों ने वैशाली में कार्यरत होने के नाते पूरे कर्तव्य का निर्वाह करते हुए मेरे पूर्वलिखित आगमसम्मत लेखों पर टिप्पणी की है। इसमें उन्होनें दिगम्बर जैन ग्रन्थों के वही श्लोक उल्लिखित किए हैं जिनसे मात्र कुण्डलपुर प्राचीन तीर्थ की पुष्टि होती है किन्तु उसी को विदेह और मगध जनपद कहकर वैशाली का कुण्डग्राम सिद्ध करना चाहते हैं। उन्हें कम से कम इतना तो सोचना ही चाहिए था कि सिन्धुदेश के वैशाली नगर में विदेहदेश का कुण्डलपुर नगर कैसे शोभास्पद हो सकता है?

आगम के अनुसार भगवन्तों की जन्मनगरियाँ 96 मील विस्तृत होती थीं, तो फिर वैशाली से कुण्डलपुर का भला क्या सम्बन्ध रह जाता है? उन्हें इस सम्बन्ध में पण्डितप्रवर श्री सुमेरचन्द्र जैन दिवाकर -सिवनी (म0 प्र0) द्वारा लिखित "महाश्रमण महावीर" पुस्तक का सूक्ष्मता से अवलोकन करना चाहिए, उसमें उन्होनें प्राचीन दिगम्बर जैन ग्रन्थों के साथ साथ भौगोलिक स्थिति एवं वैशाली की सरकारी मान्यता का वर्णन करते हुए परम्परागत चले आए कुण्डलपुर नगर को ही मानने की प्रेरणा श्रद्धालुओं के लिए दी है।

डॉ0 ऋषभचन्दजी से अभी 5-6 माह पूर्व दिल्ली में हुई वार्ता के अनुसार मेरी उन्हें एक वात्सल्यमयी प्रेरणा है कि आप जितनी शक्ति बसाढ़ ग्राम में बसाई गई वैशाली के अन्दर कुण्डग्राम को महावीर जन्मभूमि के रूप में स्थापित करने में लगा रहे है, उतनी शक्ति यदि पूर्वाचार्यो की वाणी के अनुसार सदियों से चले आ रहे परम्परागत कुण्डलपुर तीर्थ के संवर्धन में लगा दें तो प्राचीन विद्वानों के समान आपके आलेखों के प्रति भी हम सभी साधु समाज की श्रद्धा जाग्रत हो सकती है। आपके द्वारा लिखे आलेख के अन्त में घोषित किया गया है कि कुण्डलपुर (नालन्दा) भगवान महावीर का जन्मस्थान नहीं है। मैं आपसे पूछती हूँ कि आपको यह आगमविरूद्ध घोषणा करने का अधिकार किसने दिया? एक संस्था के प्राध्यापक पद पर बोलते हुएं आपका कर्तव्य यह कदापि नहीं है कि आप भगवन्तों की जन्मभूमि जैसे महान तीर्थ के प्रति अवर्णवादजनक शब्दों का प्रयोग करें। इससे अच्छा तो यही होगा कि आप अपनी वैशाली को लेकर बैठे रहें और समस्त श्रद्धालु जनता को कुण्डलपुर की भक्ति में लीन रहने दें। हम लोग आपके समान व्युत्पन्नमति शोधकर्ता तो हैं नहीं, न भविष्य में ऐसी शोध करने की इच्छा है जिससे अपनी जिनवाणी पर ही प्रश्नचिन्ह लग जावे, इसलिए हमारे लिए तो श्रद्धापूर्वक आगमवचन ही प्रमाण हैं।

7. इसके आगे डॉ0 अरविन्द महाजन, पटना ने तो अपने लेख में स्पष्ट लिख दिया है कि "दिगम्बर सम्प्रदाय से अभिप्रेरित विद्वान, नालन्दा के समीप स्थित कुण्डलपुर को भगवान महावीर के जन्मस्थान होने के पक्ष में तर्क देते हैं।" हमें अपने सम्प्रदाय और आगम पर गर्व है इसलिए लेखक द्वारा लिखी गई आगे श्वेताम्बर और बौद्धपरम्परापोषक वैशाली समर्थक पंक्तियों से हमें क्या लेना-देना।

इन्होनें त्रिशला को राजा चेटक की बहन एवं वैशाली के निकट कोल्लाग सन्निवेश में महावीर के प्रथम आहार और उनके वर्षायोग आदि की पुष्टि की है जिसका दिगम्बर जैनागम से पूर्ण विरोध है। इसके अतिरिक्त डॉ0 महाजन ने इस आलेख में (पृष्ठ 32 पर अंतिम पैराग्राफ में) स्वयं कहा है कि बौद्धों के कोटिग्राम का जैनों के कुण्डग्राम होने की पूरी सम्भावना है।" यह वाक्य भी दिगंबर जैन आगम ग्रंथों का अवलोकन करने की प्रेरणा देता है कि हमें बौद्धधर्मानुसार नहीं, प्रत्युत् अपने शास्त्रों के अनुसार श्रद्धाभाव से प्राचीन कुंडलपुर को ही महावीर की जन्मभूमि मानना है।

8. डॉ0 जयदेव मिश्र–पटना, डा0 श्रीरंजनसूरिदेव-पटना, डा0 राजेन्द्रराम-पटना ने भी अपने-अपने आलेखों में पूरी तरह से आधुनिक शोध-खोज के अनुसार ही श्वेताम्बर एवं बौद्धपरम्परापोषक प्रमाणों से वैशाली को महावीर जन्मभूमि और त्रिशला को चेटक की बहन कहने में ही गौरव का अनुभव किया है। यह उनकी भूल नहीं, बल्कि वैशाली के समर्थन में उनकी भावनाओं को उत्प्रेरित करने वालों का प्रयास ही जान पड़ता है क्योंकि इतनी सब झाँकी जमाए बिना जैन समाज को वैशाली से परिचित कराना भी असम्भव था।

डा0 श्री रंजनसूरिदेव ने तो अपने लेख में पृष्ठ 43 पर लिखा है -"महावीर स्वामी जब वाणिज्यग्राम के अन्तर्भाग

साहित्य के लिए आलेख लिखें और अपनी लेखनी में यथास्थान दिगम्बर, श्वेताम्बर एवं बौद्ध आदि ग्रन्थों के नामोल्लेख अवश्य करें ताकि विभिन्न मान्यताओं का स्पष्टीकरण हो और दिग्भ्रान्त जनता सत्यासत्य पक्ष को समझ सके।

2. कैलाशचन्द्र जैन (मानद्‌मंत्री) भगवान महावीर स्मारक समिति, पटना द्वारा लिखित "अपनी बात" नामक आलेख में भी श्वेताम्बर मान्यतानुसार लिच्छविवंश का ही उल्लेख है। इसमें सरकारी, राजकीय और शोधपरक मान्यताओं के आधार पर वैशाली के वासोकुण्ड को महावीर का जन्मस्थान बताया है, जबकि दिगम्बर जैनागम कभी भी इसका समर्थन नहीं करते हैं। बिना परिश्रम और स्वाध्याय का अभाव ही ऐसी दूसरों से उधार ली हुई वस्तु को स्वीकारने जैसी प्रक्रिया है।

3. आगे आलेखों की श्रृंखला में सर्वप्रथम "वैशाली" पुस्तक से साभार उद्धृत किया गया श्वेताम्बर आचार्य श्री विजयेन्द्र सूरि का वैशाली समर्थक लेख है। इसकी विडम्बना तो आप बनारस से प्रकाशित होने वाली "श्रमण पत्रिका" (अप्रैल-सितम्बर 2001) में देख ही चुके हैं .कि स्वयं श्वेताम्बर मतानुयायी उनकी बात काटकर लछुवाड़ के क्षत्रिय कुण्डग्राम को महावीर जन्मभूमि मान रहे हैं, किन्तु अपने समर्थन का पक्ष संग्रह करने में बेचारी दिगम्बर जैन समाज को उनके लेख की वैशाखियों का सहारा भी लेने में कोई संकोच नहीं है। लेकिन इस विषय में ध्यान रखना है कि यदि विजयेन्द्रसूरि आपके लिए वैशाली समर्थन हेतु प्रामाणिक हैं तो उनके अनुसार माता त्रिशला को राजा चेटक की बहन ही मानिए और महावीर के पिता सिद्धार्थ को वैशाली के कोल्लाग नाम के मोहल्ले में बसने वाली नाय जाति के क्षत्रियों का सरदार भी मानना पड़ेगा। फिर तो इन लेखकों को दिगम्बर जैनागमों को तिलांजलि देकर इन्हीं लोगों के समान महावीर के विकृत स्वरूप को स्वीकारने में कोई हिचक नहीं होनी चाहिए।

4. अगले आलेख में महापण्डित राहुलसांकृत्यायन ने लेख के मध्य अपने बौद्ध धर्मसमर्थन का परिचय स्वयं दे दिया है और इन्होनें महावीर की निर्वाणस्थली पावापुरी न मानकर मल्लों की पावा (पडरौना के पास किसी "पपौर") ग्राम को माना है अर्थात् बौद्धपरम्परा का यह लेख किसी दिगम्बर जैन आगमग्रन्थ से मेल नहीं खाता, किन्तु वैशाली के समर्थकों को अपने पक्ष में समर्थन जुटाने के लिए ऐसे आधुनिक शोध-खोज के लेख लेने पड़ते हैं।

कितने आश्चर्य की बात है कि हमारे दिगम्बर जैन ग्रन्थों के मर्म तक इन अजैन विद्वानों को पहुँचाने की तो रंचमात्र कोशिश नहीं की गई, बल्कि उनके ग्रन्थ और तर्क अपनी जैन समाज के गले उतारने का यह दुष्प्रयास स्मारिका प्रकाशकों के लिए अपने पैरों पर स्वयं कुल्हाड़ी मारने से अधिक क्या कहा जाए?

5. तृतीय आलेख बहुचर्चित विद्वान डॉ० योगेन्द्र मिश्र का है, जिन्होनें हर्मन जैकोबी, हार्नले और विसेंटस्मिथ आदि विदशी विद्वानों के मत को पुष्ट करने में सन् 1962 में अपने द्वारा लिखित "ऐन अर्ली हिस्ट्री ऑफ वैशाली" को ही आधार बनाया है और कुछ दिगम्बर जैनग्रंथों के अनुसार कुण्डपुर या कुण्डलपुर नाम को तोड़-मरोड़कर वैशाली के कुण्डग्राम को ही सिद्ध करते हुए गंगानदी से उसका सम्बन्ध जोड़ा है जबकि वैशाली का गंगानदी से दूर-दूर तक कोई सम्बन्ध ही नहीं है क्योंकि वह तो जैनागमों में सिन्धुदेश के अन्दर मानी गई है जो बिहार प्रदेश में सम्भव नहीं है।

इन्होनें आगे तो पूर्णरूप से श्वेताम्बर एवं बौद्धग्रन्थों का सहारा लेकर महावीर के पिता सिद्धार्थ को राजा चेटक के बहनोई माना है तथा कल्पसूत्र, आचारांगसूत्र, सूत्रकृतांग, उत्तराध्ययन, कामसूत्र, विविधतीर्थकल्प, मनुस्मृति आदि ग्रन्थों के अनुसार महावीर का विदेह, विदेहदत्त, विदेहजात्य और विदेहसुकुमार नामों से परिचित कराया है। इनमें से कोई भी ग्रन्थ दिगम्बर जैन नहीं है, यही कारण है कि लेखक महावीर के इसी परिचय से सन्तुष्ट हो गए। यदि वे सूक्ष्मता से प्राचीन आचार्यों की वाणी को श्रद्धा और आस्था के आलोक में देखने तो महावीर के वर्षावास (चातुर्मास) होने का समर्थन कतई न करते और निष्पक्षरूप से यही कहते कि वैशाली एवं कुण्डलपुर अलग-अलग राजधानियाँ थीं। कुण्डपुर को वैशाली की एक कॉलोनी के रूप में स्वीकारने का इन विद्वानों का अभिमत महावीर के राजघराने की अस्मिता पर भी प्रश्नचिन्ह खड़ा करता है, परन्तु हम इन शोधकर्ता विद्वान का कोई दोष नहीं समझते, क्योंकि यदि हमारे अपने दिगम्बर जैन सदियों से चले आ रहे जन्मतीर्थ कुण्डलपुर के प्रति किसी को बोलने का अवसर न देते, तो भला किसी की अनर्गल लेखनी कैसे चल सकती थी? अतः अपनी गलती तो खुद को ही सुधारने का प्रयास कर दिगम्बर जैन शास्त्री

परिषद के आगमनिष्ठ विद्वानों एवं आगम के ज्ञाता श्रद्धेय गुरूओं से इसका मार्गदर्शन लेना चाहिए।

6. अगले चतुर्थ लेख में डॉ0 ऋषभचन्द्र जैन, फौजदार वैशाली वालों ने वैशाली में कार्यरत होने के नाते पूरे कर्तव्य का निर्वाह करते हुए मेरे पूर्वलिखित आगमसम्मत लेखों पर टिप्पणी की है। इसमें उन्होनें दिगम्बर जैन ग्रन्थों के वही श्लोक उल्लिखित किए हैं जिनसे मात्र कुण्डलपुर प्राचीन तीर्थ की पुष्टि होती है किन्तु उसी को विदेह और मगध जनपद कहकर वैशाली का कुण्डग्राम सिद्ध करना चाहते हैं। उन्हें कम से कम इतना तो सोचना ही चाहिए था कि सिन्धुदेश के वैशाली नगर में विदेहदेश का कुण्डलपुर नगर कैसे शोभास्पद हो सकता है?

आगम के अनुसार भगवन्तों की जन्मनगरियाँ 96 मील विस्तृत होती थीं, तो फिर वैशाली से कुण्डलपुर का भला क्या सम्बन्ध रह जाता है? उन्हें इस सम्बन्ध में पण्डितप्रवर श्री सुमेरचन्द्र जैन दिवाकर -सिवनी (म0 प्र0) द्वारा लिखित "महाश्रमण महावीर" पुस्तक का सूक्ष्मता से अवलोकन करना चाहिए, उसमें उन्होनें प्राचीन दिगम्बर जैन ग्रन्थों के साथ साथ भौगोलिक स्थिति एवं वैशाली की सरकारी मान्यता का वर्णन करते हुए परम्परागत चले आए कुण्डलपुर नगर को ही मानने की प्रेरणा श्रद्धालुओं के लिए दी है।

डॉ0 ऋषभचन्दजी से अभी 5-6 माह पूर्व दिल्ली में हुई वार्ता के अनुसार मेरी उन्हें एक वात्सल्यमयी प्रेरणा है कि आप जितनी शक्ति बसाढ़ ग्राम में बसाई गई वैशाली के अन्दर कुण्डग्राम को महावीर जन्मभूमि के रूप में स्थापित करने में लगा रहे है, उतनी शक्ति यदि पूर्वाचार्यो की वाणी के अनुसार सदियों से चले आ रहे परम्परागत कुण्डलपुर तीर्थ के संवर्धन में लगा दें तो प्राचीन विद्वानों के समान आपके आलेखों के प्रति भी हम सभी साधु समाज की श्रद्धा जाग्रत हो सकती है। आपके द्वारा लिखे आलेख के अन्त में घोषित किया गया है कि कुण्डलपुर (नालन्दा) भगवान महावीर का जन्मस्थान नहीं है। मैं आपसे पूछती हूँ कि आपको यह आगमविरूद्ध घोषणा करने का अधिकार किसने दिया? एक संस्था के प्राध्यापक पद पर बोलते हुएं आपका कर्तव्य यह कदापि नहीं है कि आप भगवन्तों की जन्मभूमि जैसे महान तीर्थ के प्रति अवर्णवादजनक शब्दों का प्रयोग करें। इससे अच्छा तो यही होगा कि आप अपनी वैशाली को लेकर बैठे रहें और समस्त श्रद्धालु जनता को कुण्डलपुर की भक्ति में लीन रहने दें। हम लोग आपके समान व्युत्पन्नमति शोधकर्ता तो हैं नहीं, न भविष्य में ऐसी शोध करने की इच्छा है जिससे अपनी जिनवाणी पर ही प्रश्नचिन्ह लग जावे, इसलिए हमारे लिए तो श्रद्धापूर्वक आगमवचन ही प्रमाण हैं।

7. इसके आगे डॉ0 अरविन्द महाजन, पटना ने तो अपने लेख में स्पष्ट लिख दिया है कि "दिगम्बर सम्प्रदाय से अभिप्रेरित विद्वान, नालन्दा के समीप स्थित कुण्डलपुर को भगवान महावीर के जन्मस्थान होने के पक्ष में तर्क देते हैं।" हमें अपने सम्प्रदाय और आगम पर गर्व है इसलिए लेखक द्वारा लिखी गई आगे श्वेताम्बर और बौद्धपरम्परापोषक वैशाली समर्थक पंक्तियों से हमें क्या लेना-देना।

इन्होनें त्रिशला को राजा चेटक की बहन एवं वैशाली के निकट कोल्लाग सन्निवेश में महावीर के प्रथम आहार और उनके वर्षायोग आदि की पुष्टि की है जिसका दिगम्बर जैनागम से पूर्ण विरोध है। इसके अतिरिक्त डॉ0 महाजन ने इस आलेख में (पृष्ठ 32 पर अंतिम पैराग्राफ में) स्वयं कहा है कि बौद्धों के कोटिग्राम का जैनों के कुण्डग्राम होने की पूरी सम्भावना है।" यह वाक्य भी दिगंबर जैन आगम ग्रंथों का अवलोकन करने की प्रेरणा देता है कि हमें बौद्धधर्मानुसार नहीं, प्रत्युत् अपने शास्त्रों के अनुसार श्रद्धाभाव से प्राचीन कुंडलपुर को ही महावीर की जन्मभूमि मानना है।

8. डॉ0 जयदेव मिश्र–पटना, डा0 श्रीरंजनसूरिदेव-पटना, डा0 राजेन्द्रराम-पटना ने भी अपने-अपने आलेखों में पूरी तरह से आधुनिक शोध-खोज के अनुसार ही श्वेताम्बर एवं बौद्धपरम्परापोषक प्रमाणों से वैशाली को महावीर जन्मभूमि और त्रिशला को चेटक की बहन कहने में ही गौरव का अनुभव किया है। यह उनकी भूल नहीं, बल्कि वैशाली के समर्थन में उनकी भावनाओं को उत्प्रेरित करने वालों का प्रयास ही जान पड़ता है क्योंकि इतनी सब झाँकी जमाए बिना जैन समाज को वैशाली से परिचित कराना भी असम्भव था।

डा0 श्री रंजनसूरिदेव ने तो अपने लेख में पृष्ठ 43 पर लिखा है -"महावीर स्वामी जब वाणिज्यग्राम के अन्तर्भाग

में पहुँचे, तब वहाँ आनंद नाम के तपोनिरत श्रावक ने उनके दर्शन से केवलज्ञान प्राप्त किया था।'' इतना ही नहीं, पृष्ठ 44 पर लिखा है कि ''निर्ग्रंथ महावीर स्वामी भी जब नाव से पार उतरे थे, तब नाविकों ने खेवा के लिए उन्हें रोक लिया था, फलतः महावीर स्वामी को कड़ी धूप में गरम बालू पर बहुत देर तक खड़ा रहना पड़ा था। बाद में शंख राजा का भगिना ''चित्त'' ने उन्हें नाविकों से मुक्त किया था। यह कैसी विडम्बना है कि वैशाली को जन्मभूमि मानने की आड़ में कैसे-कैसे आगम विरूद्ध तथ्य दिगम्बर जैन समाज के गले उतारे जा रहे हैं एवं महावीर को अत्यंत साधारण व्यक्तित्व के रूप में प्रस्तुत करते हुए उनकी अवमानना के पाप का भय भी मन से निकल गया है।

मैं इन विद्वानों के लिए इतना अवश्य कह सकती हूँ कि यदि ये सभी प्राचीन आचार्यों की वाणी श्रद्धापूर्वक पढ़ते तो प्राचीनकाल से चली आ रही भाक्तिकों की श्रद्धा की कभी अवहेलना नहीं कर पाते। इस विषय पर जरा चिन्तन कीजिए कि जिस अयोध्या में मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम ने जन्म लिया था उसे आधुनिक शोधकर्ता-डा0 जिनेश्वरदास जैन 'थाईलैंड' में कह रहे हैं तो क्या यह आपको अथवा भारत के 85 करोड हिन्दुओं को मान्य है? यदि हाँ, तो अब राममन्दिर थाइलैंड में बनाने की प्रेरणा रामभक्तों को दीजिए और यदि नहीं मान्य है तो जैनसमाज की प्राचीन श्रद्धा के साथ छेड़छाड़ करने में सहयोग देना बन्द कर दीजिए क्योंकि हम लोग शत-प्रतिशत दिगम्बर जैन धर्मानुयायी भक्तगण सदियों से नालन्दा के निकट कुण्डलपुर को ही महावीर की जन्मभूमि मानते आए हैं, उसी को मानेंगे, इसमें कोई सन्देह नहीं है। इस मान्यतानुसार वैशाली महावीर की ननिहाल है, जन्मभूमि नहीं।

इस स्मारिका में पृ. 46 पर लिखा है–''ऐतिहासिक स्रोत से यह सूचना मिलती है कि महावीर युग की वैशाली के लिच्छवि उत्तर-पूर्व भारत के महाबलशाली, सुशिक्षित और कलाप्रेमी क्षत्रिय थे। तभी तो डा. श्रीरंजनसूरिदेव ने तो अम्बपाली नामक एक वेश्या के लिए यहाँ तक लिख दिया है कि ''महावीर ने विदेहक्षेत्र की ग्राम सुन्दरियों की कला प्रतियोगिता के माध्यम से अम्बपाली को निर्वाचित कर उसे वैशाली की नगरवधू या राजनर्तकी के पद पर प्रतिष्ठित किया था और जब मगध की सेना वैशाली पर चढ़ आई थी, तब युद्धोन्माद में आकर रणभूमि में सिंहनाद करने वाले सैनिकों में अम्बपाली ने ही सबसे आगे बढ़कर वज्जियों को शत्रु संहार के लिए ललकारा था। इत्यादि कथन दिगम्बर जैनागम से पूर्ण विरूद्ध है, दिगम्बर जैन शास्त्रों में अम्बपाली नगरवधू (वेश्या) का नामोनिशान तक नहीं है।

ऐसा लगता है कि महावीर युग के पुरूष और कुलीननारियाँ तो बिल्कुल निष्क्रिय ही थे, केवल उस समय की वेश्याएँ ही राज्य चलाने में सक्षम थीं और राज्यसभा उन पर ही आधारित थी। अरे, महावीर के भक्तों! महावीर तो इतने महान पुण्यशाली तीर्थंकर भगवान के साक्षात् अवतार थे कि उनके समक्ष साक्षात् सौधर्म इन्द्र भी किंकर बनकर खड़ा रहता था फिर भला महावीर को एक वेश्या का निम्नप्रतिष्ठित पद अपने हाथों से क्यों बनाना पड़ता? वैशाली का यह इतिहास महात्माबुद्ध से सम्बन्धित तो हो सकता है किन्तु महावीर से उसका सम्बन्ध स्वप्न में भी सोचना उनकी महानता पर प्रश्नचिन्ह लगाना है।

इसी लेख में आगे महासती चन्दनबाला के आर्यिका संघ के लिए ''भिक्षुणी संघ'' जैसी संज्ञा का प्रयोग किया है जो पूरी तरह से बौद्धधर्म का प्रचलित शब्द है, कम से कम जिस धर्म के महापुरूष या महासती के बारे में लिखा जाए तो उनके धर्मानुरूप योग्य शब्दों का चयन भी आवश्यक है।

जिस गणतन्त्र शासन का शुभारम्भ ये आधुनिक लेखक वैशाली के राजा चेटक से मानते हैं, वह भी दिगम्बर ग्रन्थों के प्रतिकूल है क्योंकि इस विषय में दिगम्बर जैनग्रन्थों में वर्णन आया है कि वैशाली में राजा 'केक' राज्य करते थे, उनके सोमवंश में चेटक का जन्म हुआ जो तीर्थंकर महावीर के नाना होने के कारण प्रसिद्धि को प्राप्त हुए थे। लौकिक इतिहास के अनुसार प्रचारित किया गया वैशाली गणतंत्र हो सकता है कि पश्चात्वर्ती समय में बना हो किन्तु महावीर के काल में वैशाली में न तो गणतंत्र शासन था, न चेटक उसके राष्ट्रपति थे, न ही राजा सिद्धार्थ चेटक के गणतंत्रशासन के एक सदस्य थे और न ही महावीर की पहचान वैशाली के राजकुमार के रूप में थी। उनके बारे में अन्य अनर्गल प्रलाप दिगम्बर जैन परम्परा के विरूद्ध है, अतः ऐसी दन्तकथाएँ तो पढ़-सुनकर भी हास्यास्पद लगती हैं।

इन आलेखों में प्रो. राजाराम जैन, निदेशक कुंदकुंद भारती - नई दिल्ली का लेख तो प्रथम पंक्ति से ही

विरोधाभास उत्पन्न कर रहा है, जिसमें उन्होनें बेधड़क रानी त्रिशला को राजा चेटक की बहन लिखकर वैशाली के उपनगर कुण्डग्राम, वासुकुण्ड, क्षत्रियकुण्ड ग्राम को महावीर की जन्मभूमि माना है।

जैनसमाज के प्रबुद्ध पाठकों! अन्य तथाकथित प्रो0 विद्वानों के लेख पढ़कर जितना आश्चर्य नहीं हुआ, उससे अधिक आश्चर्य हुआ दिगम्बर जैन माने जाने वाले प्रो0 राजाराम जैन का लेख पढ़कर, जिसमें उन्होनें वैशाली के समर्थन में अपनी पूरी शक्ति का उपयोग करते हुए उनके 12 वर्षावास (चातुर्मास) वैशाली में बताए हैं। क्या प्रोफेसर साहब दिगम्बर जैन ग्रन्थों के प्रमाणपूर्वक उपर्युक्त दोनों कथन सिद्ध कर सकते हैं? एक दिगम्बर जैन संस्था के निदेशक पद से क्या आगमविरूद्ध कथन उनकी लेखनी से शोभास्पद लगता है?

लेख के अन्त में श्री जैन ने जिस सौहार्दभाव का परिचय देते हुए लिखा है कि "राज्य एवं केन्द्र सरकार ने वैशाली के कुण्डग्राम के विकास के लिए जो भी योजनाएँ तैयार की हैं, उन्हें साकार करने में जैन समाज हर दृष्टि से अपना सार्थक सहयोग देकर महावीर के 2600वें जन्मकल्याणक को सफल बनावें। भूलकर भी ऐसा कार्य न हो जिससे कि समाज में तथा राज्य एवं केन्द्र सरकार में कोई गलत सन्देश जाए और किसी प्रकार के भ्रम उत्पन्न हों।"

उपर्युक्त कथन तो पूरी तरह से वैशाली समर्थकों पर ही लागू होता है क्योंकि भ्रम की स्थितियाँ तो वहीं से प्रारम्भ हुई हैं। अन्य सभी तो प्राचीन परम्परानुसार असली जन्मभूमि कुण्डलपुर की पूजा-अर्चना करते रहे और कुछ समर्थजनों के द्वारा अघोषित रूप में वैशाली को जन्मभूमि बना दिया गया। सरकार के समक्ष तो कमेटी के लोगों द्वारा यदि कुण्डलपुर की बात कही जाती तो वह उसके विकास की योजनाएँ बनाती किन्तु शायद यह भी ठीक ही हुआ है कि कुण्डलपुर तीर्थ जैसे पवित्र स्थल पर दिगम्बर जैन समाज के परिश्रम का पैसा ही लगे तो उसकी ख्याति और गरिमा में अवश्य चार चाँद लग जाऐंगे। हमारे दिगम्बर जैन समाज ने न तो कभी तीर्थ और मंदिरों के निर्माण हेतु सरकार से आर्थिक अनुदान लिया है और न ही लेना चाहिए किन्तु कलिकाल के अभिशाप ने कार्यकर्ताओं की बुद्धि को दिग्भ्रमित किया जान पड़ता है तो उसका कोई चारा भी नहीं है अर्थात् सरकार के पैसों से कुछ लोग वैशाली को जन्मभूमि बनाएंगे और अपनी श्रद्धा के पुष्पों से पूरा दिगम्बर जैन समाज असली जन्मभूमि कुण्डलपुर को बचाएगा–उसकी रक्षा करेगा।

इसी प्रकार स्मारिका में एक लेख डॉ0 शान्ति जैन–आरा का है, जिन्होनें वैशाली को महावीर जन्मभूमि सिद्ध करने का भरसक प्रयत्न करते हुए कुछ वक्ताओं के वक्तव्य अंश दिए हैं। मैं इन बहनजी से यह कहना चाहती हूँ कि क्या आप किसी भी दिगम्बर जैन आचार्यप्रणीत ग्रन्थों (धवला, तिलोयपण्णत्ति, उत्तरपुराण आदि) में वैशाली को जन्मभूमि के रूप में दिखा सकती हैं? वर्तमान की खोखली शोधपरक दृष्टि से दूर होकर यदि इन आगमग्रन्थों का अध्ययन करें तो कुण्डलपुर और वैशाली दोनों का अलग-अलग अस्तित्व आपको प्रत्यक्ष नजर आने लगेगा किन्तु बहनजी ने तो लगता है अब महावीर को विकृत करने का ठेका ही ले लिया है, इसीलिए उन्हें नई आरती लिखकर महावीर को "वैशाली ललना" लिखना पड़ा। अरे! नारी के कोमल हृदय को इतने पाप का भागी मत बनाओ अन्यथा केवली, श्रुत और धर्म के अवर्णवाद के दोष का फल किसी और को नहीं, स्वयं आपको ही भोगना पड़ेगा। बहनजी! पहले आप तो दिगम्बर, श्वेताम्बर एवं बौद्ध ग्रन्थों का अध्ययन कीजिए पुनः उनके अन्तर को समझकर यथार्थता को ग्रहण कीजिए।

कुल मिलाकर यह स्मारिका आमूल-चूल श्वेताम्बर एवं बौद्धधर्म ग्रन्थों के उदाहरणों से भरी हुई मात्र वैशाली को जन्मभूमि समर्थित करने के अपने लक्ष्य को झलका रही है इसमें केवल एक जगह महावीर जीवनवृत्त का संक्षिप्त तथ्यपरक प्रस्तुतीकरण के अन्दर त्रिशला को चेटक की पुत्री कहा है, शेष सभी स्थानों पर उन्हें निःसंकोच चेटक की बहन कहकर दिगम्बरत्व के साथ खिलवाड़ किया गया है। इसमें भी जन्मस्थान को वैशाली के क्षत्रियकुण्डग्राम कहकर वास्तविक तथ्य से लोगों को अपरिचित रखा गया है।

मत-अभिमतों की श्रृंखला में भी या तो दिगम्बर जैन ग्रन्थों की पंक्तियों को तोड़-मरोड़ कर कुण्डपुर या कुण्डलपुर को वैशाली में घसीटने का प्रयास है या फिर पाश्चात्य खोजों के अनुसार डायरेक्ट वैशाली को महावीर का जन्मस्थान मानने वाले लोगों के वाक्य खोज-खोजकर छापे गए हैं। इनसे लगता है कि हमारे पूर्वज जैनाचार्य तो भूगोल और शोधपरक विचारों से पूर्ण अनभिज्ञ थे और अब ये नए विचारक ही सम्पूर्ण जैन समाज की नीतियों का निर्धारण करेंगे।

समाज के तथाकथित नेताओं को शायद नहीं मालूम है कि उनकी पाश्चात्य विद्वानों की लेखनी से प्रभावित और भावुकता में की गई यह गलती भविष्य में जैन समाज के लिए कितनी घातक सिद्ध होगी? फिर आप लोग भला प्रो0 आर. एस. शर्मा, रोमीला थापर आदि इतिहास लेखकों को दोषी कैसे कह पाऐंगे? जिन्होनें महावीर को जैनधर्म के संस्थापक, जैनियों द्वारा तेईस तीर्थंकरों के नाम गढ़ना आदि बातें इतिहास में लिख दी हैं। वे तो बेचारे जैन नहीं है तो कदाचित अज्ञानता के कारण उनकी गलतियाँ क्षम्य हो सकती हैं, किन्तु दिगम्बर जैन कुल में जन्म लेकर दिगम्बर जैन ग्रन्थों की बातें भौगोलिक दलीलें देकर अमान्य करना कदापि क्षम्य नहीं हो सकता।

भौगोलिक दलीलों की कसौटी पर भगवन्तों की जन्मभूमियों अथवा किसी भी तीर्थ को परखने से तो वर्तमान में कोई भी तीर्थ खरे नहीं उतरेगें अर्थात् प्रायः सभी तीर्थ प्रश्न के घेरे में आ जाएंगे, अतः जिनेन्द्रवाणी एवं परम्परागत चली आ रही प्राचीन मान्यताओं के आधार पर ही हमें अपनी श्रद्धा को दृढ़ रखते हुए तीर्थों का संरक्षण करना चाहिए।

प्रस्तुत आलेख का उपसंहार करते हुए समाज के विज्ञवर्ग से मुझे यही कहना है कि "भगवान महावीर स्मृति-तीर्थ, जन्मस्थली - वैशाली" नामक स्मारिका श्वेताम्बर एवं बौद्धधर्म पोषक प्रमाणों का खजाना है, उससे दिगम्बर मान्यता की पुष्टि करना पड़ोसी के द्वारा अपने पिता की पहचान करने के ही समान है, जो अपनी माता के प्रति अविश्वास का परिचायक है।

दिगम्बर जैन समाज के श्रद्धालु भक्तो! यह एक अघोषित षड्यंत्र है। जिस प्रकार सरकार द्वारा जैन समाज को अल्पसंख्यक घोषित न होने देने में हमारे जैन समाज के ही कतिपय सत्ताधारी लोग अपनी अहम् भूमिका निभा रहे हैं, उसी प्रकार पूर्वाचार्यो की वाणी के प्रति कतिपय अविश्वासी अज्ञानी लोगों की सूझबूझ ने जैन साहित्य से दूर-दूर तक अनजान कुछ विदेशी विद्वानों की बातों को जिनवाणी मानकर वैशाली को तीर्थंकर महावीर की जन्मभूमि के रूप में सरकारी मान्यता दिलाकर समाज पर थोपना चाहते हैं, किन्तु उनका यह प्रयास आकाशपुष्प के समान पूर्णरूप से असत्य है इसलिए आगमनिष्ठ जैन समाज उसे कभी स्वीकार नहीं कर सकती।

लोक में एक कहावत है कि असली माल को असली कहने के लिए ढिंढोरा नहीं पीटना पड़ता, प्रत्युत् वह तो अपने गुण-धर्म से ही संसार को असलियत का परिचय दे देता है। इसी प्रकार भगवान महावीर की असली जन्मभूमि कुण्डलपुर (निकट नालन्दा-बिहार) तो उनके जन्म के बाद से सदैव से ही सम्पूर्ण समाज की श्रद्धा का केन्द्र रही है और सदैव श्रद्धा का केन्द्र रहेगी।

* * *

भारत में महावीर ने मुक्ति का संदेश दिया और बताया कि धर्म एक वास्तविकता है, वह मात्र परंपरा नहीं है और मुक्ति आत्म साधना से, धर्माचरण से प्राप्त होती है, बाह्याडम्बरों अथवा कर्मकाण्डों में लिप्त होने से नहीं। धर्म कभी भी आदमी-आदमी में भेद नहीं करता। महावीर की यह विचारधारा आश्चर्यजनक रूप से, व्यापक रूप से प्रसारित हो गई और जाति भेद की दीवारों को तोड़ उसने सारे देश को जीत लिया

-रवीन्द्र नाथ टैगोर (भारत)

कुण्डलपुर की कहानी : कुण्डलपुर की जुबानी

(एक पुराणसम्मत यथार्थ एवं रम्य चिन्तन)

–डॉ. (कु.) मालती जैन, मैनपुरी

8 से 10 अक्टूबर 2003 को सम्पन्न होने वाला कुण्डलपुर महोत्सव 'तीर्थंकर ऋषभदेव जैन विद्वत् महासंघ' का राष्ट्रीय अधिवेशन, अखिल भारतीय दिगम्बर जैन महिला संगठन के पदाधिकारियों का निर्वाचन, अहिंसा के अवतार भगवान महावीर की जन्मभूमि की तीर्थ यात्रा और सर्वाधिक महत्वपूर्ण वात्सल्यमयी परमपूज्य गणिनी आर्यिका शिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी एवं पूज्याप्रज्ञाश्रमणी चंदनामती माताजी के दर्शन कर आशीर्वाद प्राप्त करना। थोक में अतिशय आनंद की अनुभूति की कल्पना मात्र से मेरा लालची मन डोल गया। सफर लम्बा है, पथ अनज़ान है, बिहार पर आतंक की छाया है-आदि दुश्चिन्ताओं से आँख मिचौली खेलती मैं कुण्डलपुर जा पहुँची। विशाल भव्य देवालयों के ऊँचे-ऊँचे शिखर, भगवान ऋषभदेव का कीर्तिस्तंभ, नवीन साज-सज्जा से अभिमण्डित प्राचीन दिगम्बर जैन मंदिर-इन सबके मध्य उमड़ता हुआ जनसमुद्र, तुमुल कोलाहल, तीर्थंकरों और पूज्या गणिनी माता के जयकारों से गूँजता परिवेश-भजनों की मधुर स्वर-लहरियाँ–

'जहाँ जन्मे वीर वर्द्धमान जी,
जहाँ खेले कभी भगवान जी।
उस कुण्डलपुरी को पहचान लो।
जय हो सिद्धार्थ त्रिशला के लाल की।।

अभूतपूर्व दृश्य था। मेरा मन पुलकित था, तन रोमांचित। भावों और विचारों से आलोड़ित-विलोड़ित मन और मस्तिष्क को थामे मैं माता श्री के समीप पहुँची। माथे में आगम पुराण, ज्ञान-विज्ञान, हृदय में वात्सल्य का तुनुक तार, प्रेरणाओं का एक बण्डल, एकान्त की गायिका, मुखमण्डल पर अपूर्व शांति, उत्कट जिजीविषा को समेटे, श्वेत साड़ी में लिपटी पूज्या माता का दिव्य रूप मुझे कभी आदि तीर्थंकर की सुपुत्री गणिनी ब्राह्मी का स्मरण दिखाता तो कभी भगवान महावीर से दीक्षित गणिनी चंदना का। ब्राह्मी की विद्वत्ता और चंदना की भक्ति का समन्वित रूप है गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती का विलक्षण व्यक्तित्व। कहते हैं जहाँ संत आते हैं वहाँ सोना-सोना बिखर जाता है, जहाँ से संत चले जाते हैं वहाँ सूना-सूना हो जाता है। माताजी के पुण्य प्रताप से कुण्डलपुर के जंगल में भी मंगल ही मंगल दृष्टिगत हो रहा था। मैंने अपार श्रद्धा-भक्ति से पूज्या माताजी के चरण कमलों में नमोस्तु किया।

माताजी के मुख पर मुस्कान और आशीर्वाद के लिए उठा हाथ-मेरे अन्तर को स्नेह से अभिसिंचित कर गया। पटना से यहाँ पहुँचने में परेशानी तो नहीं हुई? स्वजन के माया-मोह के बंधनों को तोड़कर, वैराग्य के पथ पर आरूढ़ पूज्या माता के हृदय में उमड़ते वात्सल्य के सागर की गहराई को कौन नाप सकेगा? 'वसुधैव कुटुम्बकं'' की सूक्ति ऐसे ही विशाल हृदय संतों के संदर्भ में अक्षरशः सत्य सिद्ध होती है।

रात्रि में मंच पर सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन था। लम्बी यात्रा और रात्रि जागरण से थकान थी। सोचा-आवास स्थल पर पहुँचकर विश्राम किया जाये। विद्वत् संघ के सदस्यों की आवास व्यवस्था थाईलैण्ड के बौद्ध मंदिर के परिसर में की गई थी। वैसे नालंदा में स्थित समस्त बौद्ध मंदिरों के आवास स्थलों के द्वार कुण्डलपुर के तीर्थयात्रियों के लिए खुले हुए थे। धर्म जोड़ता है तोड़ता नहीं। आदरणीया माताजी के वात्सल्यपूर्ण व्यवहार ने बुद्ध और महावीर के अनुयायियों को एकता के सूत्र में पिरो दिया था।

रात्रि 9 बजे का समय। मैं तीव्र गति से थाई टैम्पिल की ओर पैदल चली जा रही थीं। वैसे व्यवस्थापकों ने गन्तव्य स्थल तक जाने के लिए वाहन की व्यवस्था की थी, पर मैं कुण्डलपुर के नैसर्गिक वैभव को आँखों में भर लेना चाहती थी। इसके लिए पदयात्रा ही उपयुक्त थी। कुण्डलपुर की भीड़-भाड़ को पीछे छोड़कर जैसे ही मैंने प्रकृति की एकान्त शान्त गोद में पदार्पण किया-रात के सन्नाटे में एक पुरुष-स्वर मेरे कर्णकुहरों में प्रविष्ट हुआ-'ठहरो, बहन, कहाँ जा रही हो? स्वर मधुर था-स्नेहापूरित भी लेकिन रात के अंधेरे में एक अपरिचित पुरुष-स्वर मुझे आतंकित करने के लिए पर्याप्त

था। किसी अनिष्ट की आशंका से मैंने जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाये। एक क्षण पश्चात् पुनः वहीं स्वर गूँजा-'घबड़ाओ मत, बहन, चंदना के उद्धारक भगवान महावीर की जन्मभूमि में नारी-अस्मिता को कोई खतरा नहीं है। मेरा भय किंचित् कम हुआ फिर भी झुंझलाकर मैंने पूछा-'तुम्हें मुझसे क्या प्रयोजन है? जान न पहचान, मैं तेरा मेहमान। प्रत्युत्तर गूँजा-बहन, वर्षों से अनेक भाव-विचार मन-मस्तिष्क में उमड़ते-घुमड़ते हैं किन्तु अभिव्यंक्ति का अवसर प्राप्त नहीं होता। जघन्य स्वार्थपरता के इस भौतिकवादी युग में व्यक्ति का अहं उसे दूसरे को सुनने-समझने का अवसर नहीं देता। वह चाहता है-वह कहता रहे, दूसरे उसे चुपचाप सुनते रहे।' बात छोटी थी पर नाविक के तीर की तरह दिल में चुभ गई। त्वरित गति से भागते मेरे पैर ठिठक गये। मैंने कहा-सर्वप्रथम अपना परिचय दो, फिर बोलो-क्या कहना चाहते हो? मैं कुण्डलपुर बोल रहा हूँ। क्या अनर्गल प्रलाप कर रहे हो? तुम अचेतन! मेरी बात बीच में ही काटकर पुरुष स्वर मुखरित हुआ-'कैसी बात करती हैं आप। आश्चर्य। पूज्या आर्यिका ज्ञानमती के सानिध्य में रहकर भी आप जैनदर्शन के प्रमुख सिद्धान्तों से अनभिज्ञ हैं। जैनदर्शन के अनुसार तो मेरी माटी का कण-कण, मुझे दुलराने वाली वायु, जल से लबालब भरे मेरे सरोवर-सभी चेतन हैं। पूज्या माता के आशीर्वाद से मैं इस तथ्य से अनभिज्ञ तो नहीं थी पर अपरिचित से पीछा छुड़ाने के उपक्रम में मैं अपना मानसिक संतुलन खो बैठी थी। संयत होकर मैंने कहा-'कहिए, क्या कहना चाहते हैं?'

'बहन, मुझे गर्व है बालक वर्द्धमान की जन्मभूमि होने का। मेरी भूमि पर स्थित नंद्यावर्त महल के रत्नजटित आँगन में ही बालक वर्द्धमान घुटनों के बल ठुमक-ठुमक चला है। किशोर वर्द्धमान मेरी ही छाती पर उगे वृक्ष पर लिपटे सर्प के ऊपर क्रीड़ा करने पर महावीर बना है। मैंने अपनी आँखों से महावीर को युवावस्था की ओर अग्रसर होते देखा है। माँ त्रिशला भव्य नंद्यावर्त प्रासाद में पुत्रवधू के आगमन की कल्पना से हर्ष विभोर थीं। पिता सिद्धार्थ अपने राजसिंहासन के परम योग्य उत्तराधिकारी पर गौरवान्वित थे। मैं भी कुमार के मांगलिक विवाहोत्सव को देखने के लिए बेकरार था किन्तु राजकुमार के मन में उपजे वैराग्य ने सबकी आशाओं पर तुषारापात कर दिया। वे कैसे किसी लौकिक राजकुमारी का वरण करते? उनकी प्रतीक्षा तो हाथों में वरमाला लिए मुक्तिवधू कर रही थी। समस्त माया-मोह के बंधनों को क्षण भर में तोड़कर मेरा महावीर चन्द्रप्रभा पालकी में बैठकर ज्ञातृवन में तपस्या के लिए चला गया। मैं अनाथ हो गया। मेरा सर्वस्व लुट गया। पर नहीं, मेरा महावीर जब त्रिलोक का नाथ बना, तब मेरा मस्तक गर्वोन्मत्त हो उठा। मेरे आनन्द की सीमा न थी। भले ही मेरा महावीर कुण्डलपुर से नाता तोड़ चुका था पर मुझसे दूर ही कहाँ था। मेरे समीप राजगृही के विपुलाचल पर्वत पर ही तो उसकी दिव्य ध्वनि खिरी थी। मेरे ही निकट पावापुरी नगरी में उसे मोक्ष की प्राप्ति हुई थी। मैं धन्य हो गया था।

शताब्दियों से भक्तजन मेरी माटी की रज को अपने मस्तक पर लगाते रहे हैं। मेरे गौरव-गीत गाते रहे हैं। 'जनम चैत सित तेरस' के दिन कुण्डलपुर कनवरना'।

भावावेश में कुण्डलपुर कहता जा रहा था। भावधारा को मध्य में अवरुद्ध कर मैंने प्रश्न उछाला–

'अपनी गौरव-गरिमा से संतुष्ट होकर भी तुम्हारे मन में उथल-पुथल कैसी?'

मेरे प्रश्न के सटीक उत्तर के लिए मानो कुण्डलपुर तैयार बैठा था–

"बहन, अपने स्वर्णिम अतीत की धरोहर पर मुझे गर्व है पर वर्षों से एक काँटा दिल में चुभ रहा था। तीर्थराज सम्मेदशिखर की वंदना को यात्री आते हैं, घंटे दो घंटे यहाँ रुकते हैं। एकमात्र प्राचीन मंदिर, उसमें भगवान महावीर की श्वेत संगमरमर की भव्य मूर्ति के दर्शन किए और चल दिए। न आवास की समुचित आधुनिक व्यवस्था, न एक मंदिर के अतिरिक्त कोई अन्य स्मृति चिन्ह। मेरी अमूल्य धरोहर नंद्यावर्त महल, जहाँ कभी माँ त्रिशला ने सोलह सपने देखे थे, जहाँ बालक वर्धमान को लोरियाँ गाकर पालने में झुलाया था भूगर्भ में समा चुका था। केवल अतीत पर कब तक गर्व करता, मेरा वर्तमान तो उपेक्षित था ही।

मेरा सौभाग्य 29 दिसम्बर 2002 को श्वेतबसना, हाथ में कमंडल पिच्छी लिए एक देवीस्वरूपा नारी ने मेरी धरती पर पदार्पण किया। दैवी आभा से दैदीप्यमान उसके मुखमंडल के दर्शन कर मेरे नेत्र स्फारित रह गये। न जाने क्यों? त्याग और तपस्या की जीवन्त प्रतिमा, कर्मठ, दृढ़ संकल्प की धनी पूज्या ज्ञानमती माताजी के प्रथम दर्शन में ही मेरे नैराश्य-तिमिर में आशा की किरण फूट पड़ी–'मेरे स्वर्णिम अतीत की पुनरावृत्ति होगी।'

बहन, तुम देख रही हो ना मेरी आशा आज पूर्ण हो गई है। दो वर्षों की अल्प अवधि में ही कुण्डलपुर का कायाकल्प हो गया है। भव्य जिनालयों की दीर्घ श्रृंखला–महावीर मंदिर, ऋषभदेव मंदिर, नवग्रहशांति मंदिर, त्रिकाल चौबीसी का मंदिर-मैं मंदिरों का नगर बन गया हूँ। मेरी प्रबलतम आकांक्षा नंद्यावर्त महल का निर्माण है। कार्य युद्ध स्तर पर हो रहा है। महल के स्वर्णिम मॉडल को देखकर ही मेरे नेत्र तृप्त हो गये थे। 'सत्यं शिवं सुन्दरं' का भव्य प्रतीक बनेगा यह प्रासाद।

सोया पड़ा कुण्डलपुर जाग गया है। आये दिन कोई न कोई उत्सव। विशिष्ट अतिथियों का जमघट, कभी विहार के राज्यपाल का आगमन होता है तो कभी नालंदा विश्वविद्यालय के कुलपति, वरिष्ठ प्राध्यापक पधारते हैं। कभी महामहिम राष्ट्रपति अब्दुल कलाम तथा आदरणीय मंत्री धनंजय जी पूज्या माताजी की चरण-वंदना करने आते हैं तो कभी योजना अधिकारी पर्यटन विभाग मुझ में विशिष्ट पर्यटन स्थल घोषित करने की संभावना तलाशते हैं। कभी तीर्थंकर ऋषभदेव विद्वत् संघ के सदस्य आ जुटते हैं तो कभी अखिल भारतीय दिगम्बर जैन महिला संगठन की तिरिया पलटन आ धमकती है।

'न जाने कैसा चुम्बकीय आकर्षण है–गणिनी माँ के हिमालयी व्यक्तित्व में। मैं विस्मय विमुग्ध हूँ। उम्र के इस पड़ाव पर जब वे इकहत्तर शरद पूर्णिमाएं देख चुकी हैं उनकी युवकोचित ऊर्जा, कठिन परिश्रम, सतत अध्यवसाय श्लाघनीय है। माताजी की विलक्षण सर्जना शक्ति के समक्ष भी नतमस्तक हूँ मैं। लेखनी और जिव्हा दोनों पर सरवती विराजती हैं मैं ऊहापोह की स्थिति में आ जाता हूँ कि पूज्या माँ की पिच्छी में जादू है या लेखनी में। यथार्थ तो यह है कि माताजी का समग्र व्यक्तित्व एक कल्याणकारी चमत्कार है। ममतामयी माँ के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं। मेरे स्वर्णिम अतीत का वैभव वापस आ गया है, मेरा देदीप्यमान वर्तमान मुस्करा रहा है, मेरा रूपहला भविष्य झाँक रहा है–इस त्रिकाल विस्मय की सूत्रधार परमपूज्य गणिनी आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी की जय हो, जय हो, जय हो।

कुण्डलपुर की जयकार का स्वर आज भी मेरे कानों में गूँज रहा है क्योंकि यह स्वर कंठ से नहीं हृदय से निसृत हुआ था।

* * *

भजन

(तर्ज-सज धज कर..........)

तेरी चंदन सी रज में, इक उपवन खिलाया है।
कुण्डलपुर के महावीरा, तेरा महल बनाया है।।

जन्मे जहाँ खेले जहाँ, त्रिशला माँ के नन्दन।
उस कुण्डलपुर की माटी का, सचमुच कण-कण चन्दन।।
चन्दन सी उस माटी को अब, सिर पर लगाया है।
कुण्डलपुर के महावीरा, तेरा महल बनाया है।।1।।

सोने का नंद्यावर्त महल, सिद्धारथ जी का था।
मणियों के पलंग पर त्रिशला ने, सपनों को देखा था।।
उन सपनों को सच्चे करके, फिर से दिखाया है।
कुण्डलपुर के महावीरा, तेरा महल बनाया है।।2।।

प्राचीन इक मंदिर प्रभू का, कुण्डलपुर में है।
नालंदा के नजदीक "चन्दना", दर्शन मिलते हैं।।
भावना सभी भक्तों की भी, प्रभु तक पहुँचाया है।
कुण्डलपुर के महावीरा, तेरा महल बनाया है।।3।।

मानचित्र में परिवर्तन : एक बचकाना प्रयास

कम नहीं होगा इससे कुण्डलपुर का गौरव

(जून 2002 में प्रस्तुत)

–**प्राचार्य नरेन्द्रप्रकाश जैन**, फिरोजाबाद

जैन समाज में कोई या कैसा भी विवाद, चाहे वह सैद्धान्तिक हो या भौगोलिक, एक बार उत्पन्न हो जाए तो उसका समाधान नहीं निकल पाता। आज तक मूल आम्नाय या सोनगढ़ पक्ष अथवा तेरह या बीस पंथ का कई दशकों तक चली लम्बी बहस के बाद भी कोई हल नहीं निकल सका है। आज भी लोग खेमों में बँटे हुए हैं। अब एक नया विवाद भगवान महावीर की जन्मभूमि को लेकर उत्पन्न हो गया है। इसका भी कोई सर्वसम्मत हल निकल पायेगा, कुछ लोगों की हठधर्मी को देखते हुए इसकी संभावना कम ही लगती है। गत आधी सदी पूर्व दिगम्बरेतर शास्त्रों के आधार पर कुछ पाश्चात्य और कुछ जैनेतर विद्वानों द्वारा की गई खोज से प्रभावित होकर हमारे कुछ मुट्ठी भर प्रगतिशील जैन श्रीमन्तों और विद्वानों ने समाज की श्रद्धा और भावनाओं का ख्याल किए बिना वैशाली को भगवान महावीर की जन्मभूमि घोषित कर दिया था। उनके कुछ पक्षधर आज भी सक्रिय हैं और उन्होंने इस प्रकरण को अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न बना लिया लगता है। वे नहीं चाहते कि इस बिन्दु पर पुनः कोई ठोस चर्चा शुरू हो। ध्यान रहे कि चर्चा से कतराना भी कमजोरी की ही निशानी होती है।

सदियों से नालंदा के निकटवर्ती कुण्डलपुर को महावीर की जन्मभूमि माना जाता रहा है। आजादी से पूर्व तक किसी ने इस पर उंगली नहीं उठाई,किन्तु नई जन्मभूमि वैशाली को मान्यता दिए जाने के साथ ही कुण्डलपुर के कुछ स्वनामधन्य पदाधिकारियों ने ही उसकी उपेक्षा करना शुरू कर दिया। उपेक्षा का पहला उदाहण सन् 1947 में हमारे सामने आया। भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा प्रकाशित 'भारत के जैन तीर्थ' पुस्तक-शृंखला में संलग्न जैन तीर्थों के मानचित्र में वैशाली को जन्मभूमि के रूप में दिखाया जाने लगा, किन्तु संतोष की बात यह रही कि धर्मतीर्थ के रूप में कुण्डलपुर भी नक्शे में बना रहा। यह मानचित्र भारतवर्षीय दि. जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी ने जारी किया था।

पटना संग्रहालय के डॉ. अरविन्द महाजन ने जन्मभूमि के रूप में वैशाली का पुरजोर समर्थन करते हुए भी लिखा है– 'कुण्डलपुर (नालंदा) और लछुआड़ (जमुई) भी जैन तीर्थ हो सकते हैं, इससे इनकार नहीं किया जा सकता।' पटना के ही एक पत्रकार श्री विजय कुमार ने इसका कारण बताते हुए लिखा है कि विहार प्रदेश में घूमते हुए भगवान महावीर ने इन दोनों स्थानों की भी यात्रा की होगी और यहाँ पर उनका धर्मोपदेश हुआ होगा। धन्यवाद के पात्र हैं ये दोनों विद्वान, किन्तु भा.दि. जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी के वर्तमान पदाधिकारियों के बारे में हम क्या कहें, जिन्होंने अब जो नया नक्शा प्रसारित किया है,उसमें वैशाली को तो मोटे अक्षरों में दिखाया गया है, किन्तु कुण्डलपुर को इस नए नक्शे में से जड़मूल से ही गायब कर दिया गया है। इधर कई पत्रों (दि. जैन मित्र मण्डल, दिल्ली की स्मारिका, मासिक 'जैन प्रचारक' आदि) में इसे छपवाकर यह दिखाने की कोशिश की गई है कि मानों कुण्डलपुर नामक किसी स्थान का खरगोश के सींगों की तरह कहीं कोई अस्तित्व ही नहीं है।

हमारे ये स्वयंभू नेता शायद यह साचेते हैं कि नक्शे में से कुण्उलपुर को यदि हटा देंगे तो धरती पर उसका वजूद ही समाप्त हो जायेगा। उनकी उस खामख्याली पर हमें दया आती है। वे यह भूल रहे हैं कि जिस वस्तु को मिटाने की कोशिश की जाती है, वह और अधिक मजबूत होकर तेजी से उभरने लगती है।

हमने तो पढ़ा है कि कहीं किसी सुनसान स्थान पर रखी यदि किसी प्राचीन जिन प्रतिमा की सौ वर्षों तक पूजा होती रहे तो वह प्रतिमा प्रतिष्ठित मान ली जाती है। खेद है कि जहाँ सदियों से भगवान महावीर की जन्मकल्याणक की पूजा होती रही है, उसे ये अब स्थापना निक्षेप से भी तीर्थ मानने के लिए तैयार नहीं हैं। मानचित्र में से कुण्डलपुर को निकालना एक अक्षम्य दुःसाहस ही कहा जाएगा। ऐसा करने से तीर्थक्षेत्र कमेटी के पदाधिकारियों की छवि में कोई इजाफा नहीं हुआ है। कहीं अब उनका इरादा भारत के जैन तीर्थ ग्रन्थमाला के द्वितीय खण्ड से भी कुण्डलपुर के नाम और तत्सम्बंधी विवरण को भी निकालने का तो नहीं है।

कुण्डलपुर के गौरव को कम करने का दूसरा बचकाना प्रयास जैन कॉलिज, आरा की संस्कृत विभाग की उपाचार्या डा. शांति जैन द्वारा एक नई आरती गढ़वाकर किया गया है। चूँकि दिगम्बर जैन समाज के ख्यातिलब्ध कवियों द्वारा समय-समय पर रचित पूजाओं, भजनों, पदों, आरतियों आदि में कहीं वैशाली का नाम नहीं आया है। इसलिए अब इस नई आरती

को गढ़कर उस कमी के पूरा हो जाने का सपना संजोया गया है। इस मनगढ़न्त नई आरती के कुछ बोल हैं-

'सिद्धारथ गृह जनमें वैशाली नगरी
हरषित त्रिशला माता जिनकी गोद भरी
स्वामी जय सन्मति देवा
वैशाली के ललना, त्रिशला के नंदन
गायें आरती इनकी, करें चरणवन्दन
स्वामी जय सन्मति देवा।

डा. शांति जैन ने अपने इस बुद्धि-चातुर्य से दिगम्बर जैनागम विरुद्ध इस नई आरती को गढ़कर क्या हमारे पूर्वज कविवृन्दों सर्वश्री वृन्दावन, बुध महाचन्द, हरप्रसाद आदि की समझ कर उपहास उड़ाने की ही कोशिश नहीं की है? हमें संदेह है कि महावीर स्मारक समिति या तीर्थक्षेत्र कमेटी आगे चलकर हमारे यहाँ प्रचलित जिनवाणी-संग्रहों में ऐसी नई-नई पूजा-आरतियों को गढ़वाकर सम्मिलित करने की कोशिश कर सकती है। समाज के प्रबुद्धजनों, संतों, श्रीमन्तों और विद्वानों को सावधानी बनाए रखकर इस पर दृष्टि रखनी होगी। इतिहास को विकृत करने की ऐसी कोशिशों को सहन नहीं किया जाना चाहिए।

जहाँ एक ओर ये दोनों बचकानी कोशिशें हमारी दृष्टि में अत्यन्त आपत्तिजनक हैं, वहाँ महावीर स्मारक समिति, पटना द्वारा इस वर्ष 'जन्मस्थली : वैशाली' शीर्षक से एक पत्रिका के प्रकाशन का हम स्वागत करते हैं। हमने इसे बहुत ध्यान से पढ़ा है। भले ही इस पत्रिका में व्यक्त निष्पत्तियों से हम कतई सहमत नहीं हैं, फिर भी किसी निर्णयात्मक स्थिति तक पहुँचने के लिए इस तरह के वैचारिक प्रयासों को हम एक सही तरीका मानते हैं। इस पत्रिका में वैशाली को जन्मभूमि सिद्ध करने वाले अनेक जैन-जैनेतर विद्वानों के आलेख संकलित हैं। उनके शोध, सर्वेक्षणों को हम एकांगी मानते हैं। उन्होंने दावा तो यह किया है कि उनके इस नये शोध का आधार जैनागम है, किन्तु जैनागम के नाम पर उन्होंने प्रमाण प्रायः श्वेताम्बर ग्रंथों के ही दिए हैं। जन्मभूमि के भूगोल के निर्धारण में बौद्ध ग्रंथों की भी सहायता ली गई है। इस शोध कार्य में दिगम्बर जैनागम की पूर्णतः उपेक्षा की गई है। उनके द्वारा प्रस्तुत निष्कर्षों से कुछ श्वेताम्बर एवं कुछ जैनेतर विद्वान भी सहमत नहीं हैं। इसकी चर्चा हम आगे करेंगे।

दिगम्बर जैन समाज के कुछ नेताओं द्वारा वैशाली को जन्मभूमि के रूप में मान्यता दिए जाने के पीछे दादुर-रट की प्रवृत्ति काम करती रही है। किसी एक समर्थ ने एक बार कोई फतवा दे दिया तो शेष सभी उसकी कार्बन कापी करते रहे। नियम भी है कि तेज़ हवा या रुख जिस ओर होता है, धुआँ उसी ओर मुड़ जाता है। हमारे आगमनिष्ठ संतों और विद्वानों का उस समय का मौन अखरने वाला है। अब यह भूल हमें नहीं करनी चाहिए। इस समय की तटस्थता भविष्य के लिए घातक होगी।

वैशाली की ताबड़तोड़ मान्यता के पीछे एक कारण सरकार से भारी आर्थिक अनुदान पाने की उम्मीद भी रही है। आखिर पैसा ही तो वह कील है, जिस पर सारा ग्लोब घूमता है। आज भी सही को सही मानने में नेताओं की हिचकिचाहट के पीछे भी सरकार से मिलने वाली दो-चार करोड़ की सहायता को पाने की लालसा या आशा ही तो है। अकबर ने लिखा भी है–

'श्रीमान् जी का फकत ये मतलब है,
जिसमें रुपया मिले वो काम करो'

चलिए, पचास साल बाद ही सही, पूज्य आर्यिका द्वय (गणिनी ज्ञानमती एवं प्रज्ञाश्रमणी चंदनामती माताजी) तथा कुछ भक्तजनों को इस भूल का अहसास तो हुआ। भूल की याद भी जागृति का लक्षण है। अन्य सभी आगमनिष्ठ पूज्य सन्तों एवं विद्वज्जनों को भी दिगम्बर जैनागम की प्रामाणिकता को चुनौती देने वाले इन प्रयासों को नाकाम करने की पहल करनी चाहिए।

"जो अक्ल का गुलाम हो, वो दिल न कबूल कर" की उक्ति पर हमारा पूरा विश्वास है। तर्क और बुद्धि की जगह श्रद्धा और लगाव का अधिक महत्व है। जहाँ श्रद्धा का आधार न हो और निकटता तथा अपनेपन का अहसास न हो, वहाँ जन-भावनाएं नहीं जुड़ सकतीं। किसी भी नई खोज को तभी स्थायित्व प्राप्त हो सकता है, जबकि वह श्रद्धामूलक परम्परा की गहरी नींव पर आधारित हो।

कुछ लोग भले ही रुढ़िवादी होने का आरोप हम पर जड़ें, पर हम इस चर्चा को आगे अवश्य बढ़ायेंगे। जैन समाज के भले और भोले लोगों के सामने सच्चाई तो आनी ही चाहिए।

विशेष—यह नक्शा तीर्थक्षेत्र कमेटी बम्बई द्वारा सन् 1971 में भारत के दिगम्बर जैन तीर्थ नामक ग्रंथ भाग-2 में प्रकाशित किया गया था, जिसमें नालंदा के निकट कुण्डलपुर तीर्थ छपा हुआ है।

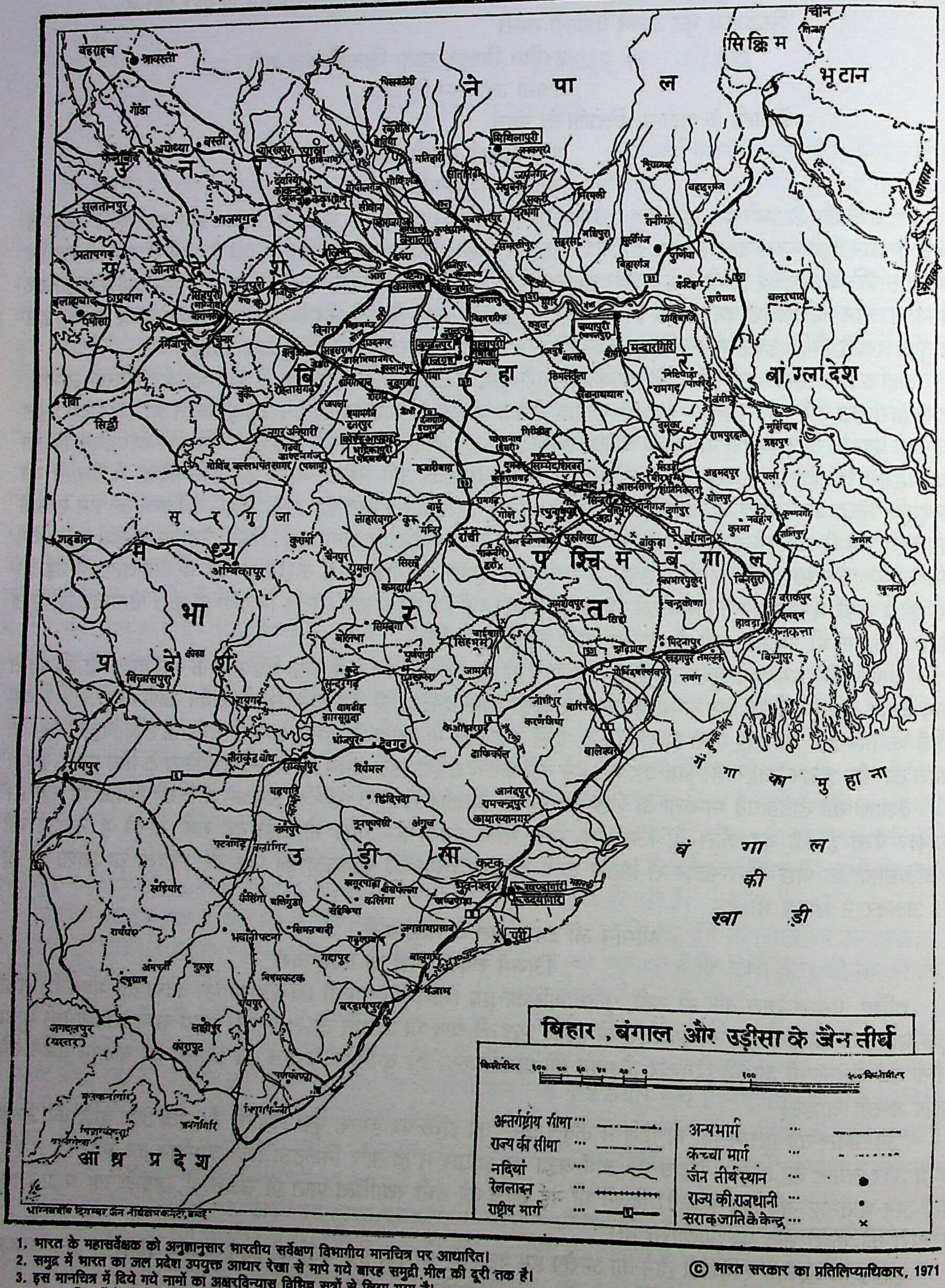
बिहार, बंगाल और उड़ीसा के जैन तीर्थ
किलोमीटर 100 80 60 40 20 0 100 200 किलोमीटर
अन्तर्राष्ट्रीय सीमा
राज्य की सीमा
नदियां
रेललाइन
राष्ट्रीय मार्ग
अन्य मार्ग
कच्चा मार्ग
जैन तीर्थ स्थान
राज्य की राजधानी
सराक जाति के केन्द्र
नेपाल
सिक्किम
भूटान
चीन
बांग्लादेश
उत्तर प्रदेश
बिहार
पश्चिम बंगाल
मध्य प्रदेश
उड़ीसा
आंध्र प्रदेश
बंगाल की खाड़ी
गंगा का मुहाना
सुरगुजा
श्रावस्ती
अयोध्या
मिथिलापुरी
वैशाली
कमलदह
सुदर्शन
कुण्डलपुर
पावापुरी
राजगृह
गया
गुणावा
चम्पापुरी
मन्दारगिरि
भद्रिकापुरी
सम्मेदशिखर
पारसनाथ
हजारीबाग
रांची
पुरुलिया
बांकुड़ा
कलकत्ता
हावड़ा
खण्डगिरि
उदयगिरि
पुरी
भुवनेश्वर
कटक
बालेश्वर
सिंहपुरी
चन्द्रपुरी
वाराणसी
इलाहाबाद
रायपुर
जगदलपुर
भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी, बम्बई

1. भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभागीय मानचित्र पर आधारित।
2. समुद्र में भारत का जल प्रदेश उपयुक्त आधार रेखा से मापे गये बारह समुद्री मील की दूरी तक है।
3. इस मानचित्र में दिये गये नामों का अक्षरविन्यास विभिन्न सूत्रों से लिया गया है।
4. इस मानचित्र में मेघालय की सीमा उत्तर-पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 के निर्वचनानुसार दर्शित है; परन्तु अभी सत्यापित होनी है।

© भारत सरकार का प्रतिलिप्याधिकार, 1971

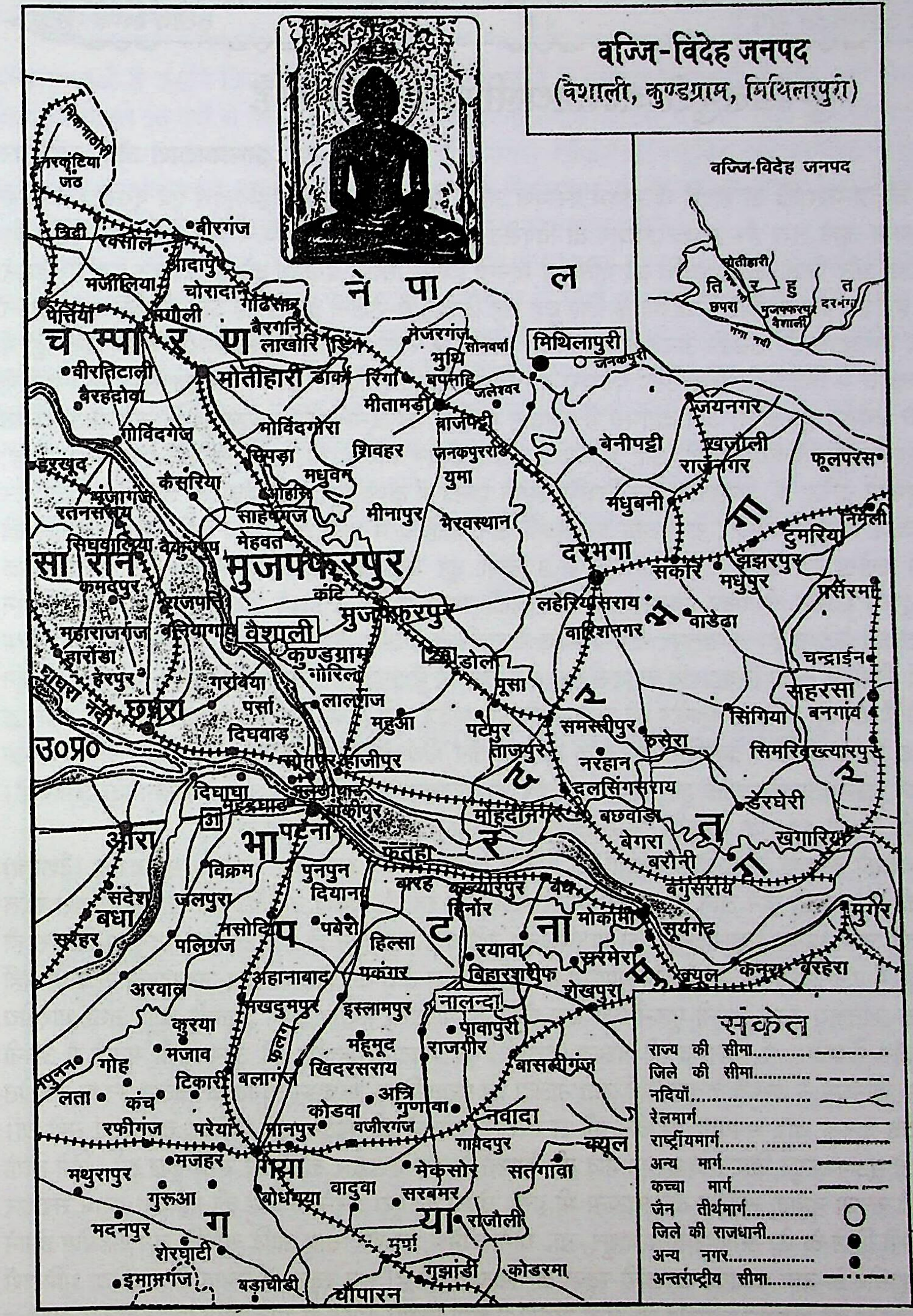
वज्जि-विदेह जनपद
(वैशाली, कुण्डग्राम, मिथिलापुरी)
वज्जि-विदेह जनपद
संकेत
राज्य की सीमा
जिले की सीमा
नदियाँ
रेलमार्ग
राष्ट्रीयमार्ग
अन्य मार्ग
कच्चा मार्ग
जैन तीर्थमार्ग
जिले की राजधानी
अन्य नगर
अन्तर्राष्ट्रीय सीमा
नेपाल
मिथिलापुरी
वैशाली
कुण्डग्राम
नालन्दा
पावापुरी
राजगीर
मुजफ्फरपुर
दरभंगा
पटना
गया
मोतीहारी
छपरा

बिहार, बंगाल और उड़ीसा के जैन तीर्थ

भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी बम्बई

विशेष—यह नक्शा तीर्थक्षेत्र कमेटी बम्बई द्वारा अप्रैल 2002 में दिल्ली से प्रकाशित जैनमित्र मण्डल की वार्षिक पत्रिका में कवर पेज 2 पर छापा गया था, जिसमें से नालंदा के निकट कुण्डलपुर तीर्थ को नक्शे से ही हटा दिया गया है।

—तीर्थक्षेत्र कमेटी द्वारा किसी जीवन्त तीर्थ को नक्शे से हटाना क्या यह उचित कार्य है?

कुण्डलपुरी जन्मस्थली परंपरा मान्य है

–डा. अभयप्रकाश जैन, ग्वालियर

भ. महावीर की जन्मस्थली के संदर्भ में आगम परम्परा और विश्वास के अलावा इतिहास एवं पुरातत्व का पक्ष प्रायः विपर्ययवाची माना जाने लगा है। उनका उपयोग दो विपरीत ध्रुवीय संप्रत्ययों के रूप में किये जाने की मुहिम है। आगम परम्परा का जड़ और विकासवादी प्रवृत्ति को गतिमान मानना हमारी विचार प्रक्रिया को कुंठित कर रहा है। हमारे आगम ने सदियों से हमें हर क्षेत्र में नीति निर्धारण के लिए यह राह दिखाई है-रोशनी दी है। वह जैन संस्कृति का अत्यन्त तेजोमय, दिव्य और मनोज्ञपक्ष है। उसकी अनदेखी का सीधा मतलब है स्वयं को अस्वस्थता और असंयम की भट्टी में झोंक देना। जैन संस्कृति में विवेक-विरासत और परम्परा का विशेष महत्व है किसी रीति-नीति एवं स्थल के निर्धारण में इनकी अनुपस्थिति अमंगल सूचक है। जैन वांग्मय में भगवान महावीर का जन्म स्थान कुण्डलपुर के नाम से उल्लेखित हुआ है। आ. यतिवृषभ कृत तिलोयपण्णत्ती, आ. पूज्यपाद कृत वर्द्धमान चरित, आ. दामनंदि कृत पुराणसार संग्रह, विबुधश्रीधर कृत वड्ढमाण चरिउ, पं. आशाधर कृत त्रिषष्टि स्मृति शास्त्र में कुण्डलपुर तथा भट्टारक सकलकीर्तिकृत वीर वर्धमान चरित, महाकवि पद्मकृत महावीर रास तथा पश्चात्वर्ती जैन साहित्य में प्रायः कुण्डलपुर का भगवान महावीर की जन्म भूमि के बारे में उल्लेख है। बिहार में नालंदा जिले से 3 किमी. दूर 'बड़ागांव' नामक गांव है इस गांव के बाहर एक प्राचीन जिनालय है दूसरा प्राचीन श्वेताम्बर जिनालय भी जो काफी समय से बंद है इसमें 300/400 वर्ष प्राचीन भगवान महावीर के कल्याणकों की पेटिंग्स है। कुण्डलपुर नाम परम्परा में सुप्रसिद्ध है और जैन समुदाय के लोग हजारों की संख्या में नालंदा आकर यहां तीर्थाटन करते हैं बड़ागांव के पास एक क्षेत्र ऐसा भी है जहां लोग खेती नहीं करते, मल-मूत्र विसर्जन नहीं करते और मानते हैं कि यह भगवान महावीर की जन्मस्थली और पवित्र भूमि है यह मान्यता शताब्दियों से है। सुप्रसिद्ध जैन विद्वान पं. बलभद्र जी ने 1975 में प्रकाशित भारत के दिगम्बर जैन तीर्थ क्षेत्र में कुण्डलपुर (नालंदा) के बारे में लिखा है 'यहां भगवान के गर्भ, जन्म-तपकल्याणक हुए। यहां साढ़े चार फुट अवगाहना वाली भव्य पद्मासन प्रतिमा विराजमान है। वार्षिक मेला चैत्र सुदी 12 से 14 तक महावीर जन्म कल्याणक मनाने के लिए किया जाता है।

विगत पाँच छः दशकों से कुछ ऐतिहासिक साक्ष्यों की कड़ियों के आधार पर कुण्ड ग्राम (वासोकुण्ड) बसाढ़ (वैशाली) को भगवान महावीर की जन्मस्थली माने जाने का स्वरूप निर्मित किया जा रहा है। यद्यपि चतुर्विध संघ एवं समाज इस स्थल को भगवान महावीर की जन्म भूमि स्वीकार करने की मानसिकता नहीं बना पाई है न ही इस क्षेत्र का तदनुरूप विकास ही हुआ है। तीर्थ की मिट्टी में पूजनीयता की तरंगें और गुणधर्म होते हैं इसलिए तीर्थ का विकास जोर जबरदस्ती से कभी नहीं होता। वहाँ तो क्षेत्र का अतिशय स्वयं अपनी पूजनीयता बना लेता है। पाश्चात्य विद्वान हर्मन जैकोबी आदि तथा भारतीय विद्वान पं. सुमेरचन्द्र जैन दिवाकर, पं. बलभद्र जी बसाढ़ (वैशाली) को भगवान महावीर की जन्मस्थली मनाने में अपनी सहमति नहीं बना पाए। कनिंघम ने बसाढ़ के इर्द-गिर्द तथा नालंदा का पुरातात्विक उत्खनन तो किया लेकिन उनका अभिप्रेत बौद्ध साक्ष्यों को एकत्रित करना था। भगवान महावीर की जन्मस्थली खोजने की भावना एवं प्रोजेक्ट का लक्ष्य नहीं था।

31 मार्च 1945 को मुजफ्फरपुर बिहार के बसाढ़ गांव की वैशाली के रूप मे उद्धार करने की सोच कुछ इने–गिने लोगो द्वारा बनाई गई। वैशाली संस्था नामक संगठन की स्थापना भी इसी उद्देश्य को पूरा करने के लिए की गई थी। इसमें सरकार के शिक्षा सचिव (जो इसी जिले के थे) जगदीशचन्द्र माथुर, डा. योगेन्द्र मिश्र, जे.सी. साहू आदि समिति जन सहयोग बनाने में कामयाब हुए और महावीर के नाम पर एक सरकारी स्कूल की स्थापना की है। इस स्कूल के प्रभाव से जथरिया भूमिहारों ने पहली बार 21 अप्रैल 1948 को भगवान महावीर की जन्म जयंती में भाग लिया। 1955 मे साहू शांति प्रसाद जैन के आर्थिक पोषण से वैशाली रिसर्च इंस्टीट्यूट की स्थापना हुई और इसके पहले डायरेक्टर डा. हीरालाल जैन बनाए गये।

भगवान महावीर की जन्मस्थली को लेकर दो खेमे खड़े हो गये हैं-उन दोनों में एकसूत्रता लाने का और दिशा बोध से सम्यक् निष्कर्ष तक पहुंचाने का काम कौन करेगा? यह एक प्रश्न है। तीर्थ श्रद्धा के केन्द्र होते हैं-विदेह मगध का चक्रव्यूह है, इतिहास भूगोल के चक्कर से स्थापित परंपराएं नही बदलतीं, इतिहास इसका साक्षी है।

हमारा चतुर्विध संघ और विद्वान वर्ग ही सक्षम है। जो इस ऊहापोह को विराम की स्थिति तक ले जा सकता है। कुण्डलपुर (नालंदा) के विकास और तीर्थोद्धार की बागडोर आर्यिका गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने ले ली है-

इतिहास साक्षी है उन्होंने जिन-जिन कामों को हाथ लगाया है वे अभी तक पूरे हुये हैं और उन्हीं क्षेत्रों को गौरव प्रदान किया है। पिछले 56 वर्षों से बसाढ़ (वैशाली) को 250 एकड़ जमीन सरकार से मिल चुकी है। लेकिन उसका उद्धार अभी तक नहीं हो पाया। यह भी एक विचारणीय बिन्दु है। वर्तमान सर्वेक्षण एवं चतुर्विध संघ मुक्तकंठ से कुण्डलपुर (नालंदा) का पक्षधर बनकर सामने आ रहा है। आचार्य प्रवर श्री विद्यासागर जी के संघ से लेकर अन्य सभी संघ इसी पक्ष में हैं। क्या हम अपने समूचे चतुर्विध संघ के प्रबल समर्थन को नकार पायेंगे?

वैशाली में भव्य स्मारक निर्माणाधीन है लेकिन उसे जैन समाज द्वारा गति प्रदान नहीं की जा रही है। इधर पूज्य गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने कुण्डलपुर (नालंदा) के तीर्थोद्धार एवं विकास के लिए आह्वान किया है जिसका चारों ओर से स्वागत हो रहा है। तीर्थों का उद्धार हो इसमे कहीं कोई विरोध नहीं होना चाहिए। आगमनिष्ठ जैन विद्वानों, पुरातत्वविदों, इतिहासज्ञों को मिल बैठकर संगीतियां बैठाकर जन्मस्थली कुण्डलपुर (नालंदा) को सर्वसम्मति से स्वीकार कर लेना चाहिए-यदि ऐसे ही विवाद की स्थिति बढ़ती रही तो हमारे सभी तीर्थ क्षेत्रों पर प्रश्न चिन्हों की कतार लग जायेगी। भगवान महावीर की जन्मस्थली का सर्वसम्मति निर्णय आज की जरूरत है-क्या हम ऐसा कर पायेंगे? 27 सितम्बर विश्व पर्यटन दिवस आता है। इस अवसर पर समस्त पर्यटकों के लिए मेरी यही प्रेरणा है कि पटना और नालंदा क्षेत्र परिभ्रमण के अंतर्गत भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर का दर्शन भी अवश्य करें।

* *

दिल्ली प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री

श्री साहिब सिंह वर्मा जी का उद्बोधन

(5 अक्टूबर 1997 को दिल्ली में आयोजित चौबीस कल्पद्रुम विधान के अवसर पर प्रस्तुत)

इस कार्यक्रम में पधारकर पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी एवं अन्य साधुजनों का आशीर्वाद प्राप्त करने का शुभ अवसर प्राप्त हुआ। वास्तव में ये साधु-संत हमारे देश के राजा-महाराजा हैं।

यहाँ जो इतना भव्य आयोजन चल रहा है, वह मैंने अपने जीवन में पहली बार देखा है, यह आयोजन पूज्य ज्ञानमती माताजी की देन है। इतनी तपस्विनी ज्ञानमती माताजी देश की बड़ी धरोहर हैं, जिनके अन्दर ऐसी अद्‌भुत क्षमता है कि लोग सहर्ष इनके आदेशों का पालन करते हैं क्योंकि इसके लिए कोई कानून नहीं बना, कोई सजा मुकर्रर नहीं हुई है जबकि सरकारी नियमों में कानून व सजा होने पर भी लोग सरकार के आदेशों का पालन करने से चूक सकते हैं या पालन नहीं भी करते हैं। इस देश से महान कोई देश नहीं है, केवल कुछ लोग इस देश को पाश्चात्य संस्कृति की ओर अग्रसर कर रहे हैं, इससे देश की प्रगति नहीं अपितु हानि है।

यह हमारा परम सौभाग्य है कि हमारे बीच में एक ऐसी साध्वी विराजमान हैं जिन्होंने करोड़ों लोगों का मार्ग प्रशस्त करके उन्हें नई दिशा प्रदान की है। अगर आप बिल्कुल मन लगाकर एकान्तभाव से विचार करें, तो आपको महसूस होगा कि पूज्य माताजी के अंतरंग से जो प्रकाश की किरणें निकल रही हैं वह पूरे वातावरण में फैलकर आप सभी को छू रही हैं, जिससे आप सभी का कल्याण होने वाला है।

जीव-जन्तुओं की रक्षा करना हमारा कर्तव्य है, उसके लिए प्रशासनिक दिक्कतें आने के बावजूद भी मैंने आदेश दिया है कि दिल्ली में कोई नया बूचड़खाना नहीं बनेगा तथा जितने बूचड़खाने इस वक्त हैं, उसमें हत्या करने वाले पशुओं की संख्या घटाकर चौथाई भाग कर दी जाए।

इस समय हम जिस पार्क (रिंगरोड मैदान) में बैठे हैं, मैं इस पार्क का नाम "कल्पद्रुम मैदान" घोषित करता हूँ। पूज्य माताजी के चरणों में पुनः प्रणाम!

"जय हिन्द"

बजी कुण्डलपुर में बधाई

(फरवरी 2002 में प्रस्तुत)

—प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

आज से 2600 वर्ष पूर्व भारत की धरती पर तीर्थंकर भगवान महावीर ने जन्म लेकर संसार को अहिंसा का ब्रह्मास्त्र देकर विश्वकल्याण के साथ-साथ अपनी आत्मा को सम्पूर्ण कर्मों से रहित करके निर्वाण धाम को प्राप्त कर लिया और अनन्त-अनन्त काल के लिए सर्वसुख सम्पन्न सिद्धपद को प्राप्त हो गये।

इतिहास के अनुसार उन्हें मोक्ष प्राप्त हुए भी 2527 वर्ष व्यतीत हो चुके हैं उनकी कृतकृत्यता तो किसी के द्वारा भी खंडित नहीं की जा सकती है किन्तु यह समाज का दुर्भाग्य ही कहना होगा कि वर्तमान में उनके जीवन से सम्बन्धित अनेक पहलुओं को आधुनिक इतिहासकारों द्वारा किस प्रकार से विकृत करके प्रस्तुत किया जा रहा है यह एक अत्यन्त चिन्तनीय स्थिति बन गई है। सर्वप्रथम हम उनके जन्मस्थान को ही लेते हैं कि यह तो निःसंदेह कहा जा सकता है कि महावीर का जन्म तो एक ही स्थान पर हुआ था और जहां उनका जन्म हुआ था वहीं पर उनकी माता के आंगन में पंद्रह महीनों तक रत्नों की वृष्टि भी हुई थी, किन्तु आज उनकी जन्मभूमि के नाम पर तीन-तीन नाम समाज के समक्ष आ रहे हैं 1. कुण्डलपुर (बिहार) 2. वैशाली-वासोकुंड (बिहार) 3. लिछवाड़ (बिहार)। अब प्रश्न यह उठता है कि कब से कौन-सी जन्मभूमि को किनके द्वारा मानने की परम्परा प्रारम्भ हुई है। सर्वप्रथम पाठकों का ध्यान प्रथम जन्मभूमि कुण्डलपुर की ओर आकर्षित किया जा रहा है।

सर्वप्राचीन ग्रन्थ (लगभग 2000 वर्ष पूर्व प्राचीन आचार्यों द्वारा लिखित तिलोयपण्णत्ति, धवला-जयधवला, उत्तरपुराण, हरिवंशपुराण, वीरजिणिंदचरिउ, महावीरपुराण, वर्धमानचरित आदि अनेकानेक ग्रन्थों में स्पष्ट रूप से विदेहदेश अर्थात् वर्तमान बिहार प्रांत की कुंडलपुर नगरी में महावीर स्वामी का जन्म राजा सिद्धार्थ की महारानी त्रिशला के पवित्र गर्भ से चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को हुआ था यही बात वर्णित है। लगभग 50 वर्ष पूर्व से महावीर की जन्मभूमि पर प्रश्न चिन्ह किसने लगाया? अगली खोज क्यों प्रारम्भ हुई? यह किसी न किसी षड्यंत्र का ही दुष्परिणाम दिख रहा है।

हमारे जिन प्राचीन ग्रन्थों की उपेक्षा करके आधुनिकता की होड़ में आगे बढ़ रहे लोग केवल "मेरा सो खरा" वाली नीति अपनाते हुए भगवान महावीर की वास्तविक जन्मभूमि "कुण्डलपुर" पर प्रश्नचिन्ह लगाकर अन्य नूतन स्थान को जन्मभूमि बनाने का प्रयास कर रहे हैं, उन्हें निम्न ठोस आगम प्रमाणों की ओर भी अवश्य ध्यान देना चाहिए

1. देखें कषायपाहुड ग्रन्थ की जयधवला टीका - (पृष्ठ 76-77)

"आसाढजोण्हपक्खछट्ठीए कुंडलपुरणगराहिव-णाहवंस सिद्धत्थणरिंदस्स तिसिलादेवीए गब्भमागंतूण तत्थअट्ठदिवसाहिय णवमासे अच्छिय चइत्त-सुक्कपक्ख- तेरसीए रत्तीए उत्तरफग्गुणीणक्खत्ते गब्भादो णिक्खंतो वड्ढमाणजिणिंदो।" अर्थात् आषाढ़ महीना के शुक्लपक्ष की षष्ठी के दिन कुण्डलपुर नगर के स्वामी नाथवंशी सिद्धार्थ नरेन्द्र की त्रिशला देवी के गर्भ में आकर और वहाँ नौ माह आठ दिन रहकर चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन रात्रि में उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र के रहते हुए भगवान महावीर गर्भ से बाहर आये।

इसी जयधवला में श्री वीरसेनाचार्य आगे कहते हैं—पृ.78

कुंडपुरपुरवरिस्सर सिद्धत्थक्खत्तियस णाहकुले। तिसिलाए देवीए देवीसदसेवमाणाए।।23।।
अच्छित्ता णवमासे अट्ठ य दिवसे चइत्त-सियपक्खे। तेरसिए रत्तीए जादुत्तरफग्गुणीए दु।।24।।

अर्थात् कुण्डपुर नगर के सिद्धार्थ क्षत्रिय के घर, नाथकुल में, सैकड़ों देवियों से सेवमान त्रिशला देवी के गर्भ में महावीर का जीव आया और वहाँ नौ माह आठ दिन रहकर चैत्र शुक्ला त्रयोदशी की रात्रि में उत्तरफाल्गुनी नक्षत्र के रहते हुए भगवान का जन्म हुआ।

2. षट्खंडागम के चतुर्थ-खंड एवं नवमी पुस्तक की धवला टीका में पृ. 121 पर भी यह कथन **कुण्डलपुर** के सम्बन्ध में आया है।

3. तिलोयपण्णत्ती (श्री यतिवृषभाचार्य रचित) चतुर्थ महाधिकार पृ. 210–

सिद्धत्थरायपियकारिणीहिं, णयरम्मि कुंडले वीरो। उत्तरफग्गुणिरिक्खे, चित्तसियातेरसीए उप्पण्णो।।549।।

4. श्रीजिनसेनाचार्य रचित हरिवंशपुराण के द्वितीय सर्ग में महावीर स्वामी के गर्भकल्याणक प्रकरण में कुण्डलपुर नगरी का विस्तृत वर्णन आया है–

तत्राखण्डलनेत्राली, पद्मनीखण्डमण्डलम्। सुखाम्भः कुण्डमाभाति, नाम्ना कुण्डपुरं पुरम्।।5।।

अर्थात् उस विदेह देश में कुण्डपुर नाम का एक ऐसा सुन्दर नगर है जो इन्द्र के नेत्रों की पंक्तिरूपी कमलिनियों के समूह से सुशोभित है तथा सुखरूपी जल का मानो कुण्ड ही है।

5. श्रीगुणभद्राचार्य रचित उत्तरपुराण ग्रन्थ में पर्व 74 पर–

राज्ञः कुण्डपुरेशस्य, वसुधाराप तत्पृथु। सप्तकोटीमणीः सार्द्धाः, सिद्धार्थस्य दिनं प्रति।।252।।

अर्थात् "कुण्डलपुर" नगर के राजा सिद्धार्थ के घर प्रतिदिन साढ़े सात करोड़ मणियों की भारी वर्षा होने लगी।

6. महाकवि श्री पुष्पदन्त विरचित "वीर जिणिन्दचरिउ" में पृष्ठ 11 एवं 15 पर कुण्डलपुर नगरी की शोभा का वर्णन है–

इह जंबुदीवि भरहंतरालि। रमणीय-विसइ सोहा- विसालि।।
कुंडउरि राउ सिद्धत्थु सहिउ। जो सिरिहरु मग्गण-वेस रहिउ।।

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में विशाल शोभाधारी विदेह प्रदेश में "कुण्डपुर" नगर के राजा सिद्धार्थ राज्य करते हैं। आगे इसी में सौधर्म इन्द्र के शब्दों में धनकुबेर को दिये गये आदेशानुसार नगरी सजाने का वर्णन भी आया है।

ता कयउ कुंडपुरु तेण चारु। सव्वत्थ रयण-पायार -भारु।।
सव्वत्थ रइय णाणा दुवारु। सव्वत्थ परिह परिरूद्ध चारु।।

इन्द्र की आज्ञानुसार कुबेर ने "कुण्डपुर" को ऐसा ही सुन्दर बना दिया। उसके चारों तरफ रत्नमयी प्रकार बन गया जिसके सब ओर नाना प्रकार के द्वार थे और उसके चारों ओर ऐसी परिखा थी जिससे वहाँ शत्रुओं का संचार अवरुद्ध हो जाये।

7. श्रीमहावीरपुराण (आचार्य श्री सकलकीर्ति विरचित) के पृष्ठ 43 पर–

भरतक्षेत्र के इसी विदेहदेश के ठीक मध्य में "कुण्डपुर" एक अत्यन्त रमणीक नगर है। यहाँ पर धर्मात्माओं का विशेष रूप से निवास है। यहाँ के कोट, द्वार एवं अलंघ्य खाइयों को देखकर अपराजिता–अयोध्या नगरी का भान होता है।........यहाँ के ऊँचे-ऊँचे एवं स्वर्ण रत्नों से निर्मित जैन मन्दिरों को देखकर लोगों को **कुण्डलपुर** के प्रति अपार श्रद्धा जागृत होती थी। वह नगर धर्म का समुद्र जैसा प्रतीत होता था।.........उस नगर के राजा का नाम "सिद्धार्थ" था।

इसी कुण्डलपुर नगरी में भगवान महावीर के जन्मवर्णन के साथ सौधर्मेन्द्र द्वारा सुमेरुपर्वत पर जन्माभिषेक करके वापस वर्धमान शिशु को लाकर माता-पिता की गोद में सौंपने का बड़ा रोमांचक वर्णन विशेष पठनीय है।

"इस प्रकार भगवान का नामकरण कर इन्द्र ने देवों के साथ उनको ऐरावत गजराज पर बिठाकर "कुण्डलपुर" की ओर प्रस्थान कर दिया। देवों की सारी मंडली बड़े उत्सव के साथ कुण्डलपुर में आ पहुँची।..........वहाँ जाकर इन्द्राणी ने मायामयी निद्रा में लीन महारानी को जगाया। उन्होंने बड़े प्रेम से आभूषणों से युक्त अपूर्व कान्तिवाले पुत्र को देखा।

8. श्री पुष्पदन्त कवि रचित महापुराण (भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित) में पृष्ठ 310-312-313 पर भी जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में कुण्डलपुर नगरी के राजा सिद्धार्थ का वर्णन, देवों द्वारा कुण्डलपुर की सजावट एवं वहीं पर सिद्धार्थराजा के महल में रत्नवृष्टि का कथन दृष्टव्य है–

घरपंगणि तासु रायहु सुहपब्भारहिं। वुट्ठउ धणणाहु अविहंडियधणधारहिं।।8।। (पृ.313)

अर्थात् उस राजा के आंगन में सुख के प्रभारों से युक्त अखण्डित धन-धाराओं के द्वारा कुबेर स्वयं बरस रहा है।

आगे इसी प्रकरण में कुण्डलपुर में ही महावीर स्वामी का जन्म होना बतलाया है।

यह तो मात्र आठ प्रमुख प्राचीन दिगम्बर जैन ग्रन्थों के अनुसार मैंने महावीर स्वामी की जन्मभूमि कुण्डलपुर नगरी का अस्तित्व पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है और इनमें सब जगह महावीर के ननिहाल राजा चेटक की राजधानी के रूप में "वैशाली" का वर्णन आता है।

इन पूर्वाचार्यों की वाणी के आधार पर ही दिगम्बर जैन परम्परा के समस्त विद्वान, लेखक और कवि अपनी रचनाओं में कुण्डलपुर का वर्णन करते नहीं थकते थे। जैसे 'महावीर पूजा' में ही पढ़ा जाता है-

9. **"जनम चैतसित तेरस के दिन, कुण्डलपुर कन वरना।।"**
सुरगिरि सुरगुरु पूज कियो नित, मैं पूजों भव हरना।।
नाथ मोहि राखो हो शरणा... श्री वर्धमान जिनरायजी, मोहिं राखो हो शरणा।।"

10. कविवर हरिप्रसाद जी द्वारा रचित 'महावीर आरती' में भी भक्तगण श्रद्धापूर्वक पढ़ते हैं-

"जय महावीर प्रभो, स्वामी जय महावीर प्रभो। कुण्डलपुर अवतारी, त्रिशलानन्द विभो।।जय..।।"

आगम एवं परम्परा का अनुकरण करते हुए सैकड़ों कवियों ने वर्धमान महावीर के चरणों में श्रद्धासुमन समर्पित करते हुए उनकी पावन जन्मभूमि "कुण्डलपुर" को अपनी कृतियों में महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है, उनमें से कतिपय अर्वाचीन कृतियाँ (20वीं शताब्दी में लिखी गईं) भी मेरे देखने में आई हैं।

11. सन् 1941 में श्री 1008 महावीर जैन कीर्तन मण्डल, धर्मपुरा-दिल्ली से प्रकाशित "महावीर जन्मोत्सव की कथा" में कवि ने लिखा है-

तर्ज-राधेश्याम.........

छः माह पेशतर रतनों की कुण्डलपुर में वर्षा होती। प्रतीत हुआ विद्वानों को अब जागेगी कोई ज्योती।।
आषाढ़ सुदी छठ जब आई और समय रात्रि का आया था। त्रिशला देवी को गर्भ रहा यह ग्रन्थों में बतलाया था।।

12. "तीर्थंकर महावीर भक्ति गंगा" नामक संकलन कृति में "धर्मविलास" के पृ. 51 की कविता भी दृष्टव्य है-

वर्धमान! जस वर्धमान अच्युत विमान गति। नगर कुण्ड पुर धार सार सिद्धारथ भूपति।।
रानी प्रियकारनी बनी कंचन छवि काया। आयु बहत्तर बरस, जोग खरगासन ध्याया।।
तुम सात हाथ मृगनाथ पति तेमनै अब लों धरम जर सिर नाय नमौ जुग जोरि कर।।

धर्म विलास पृ. 51

अर्थ-हे वर्धमान प्रभो! आपका यश निरन्तर वर्धमान है। आप अच्युत विमान को त्याग कर कुण्डलपुर नगर में पधारे। उस नगर के राजा सिद्धार्थ आपके पिता थे और रानी प्रियकारिणी (त्रिशला) आपकी माता थी। आपके शरीर की आभा स्वर्ण जैसी थी। आपकी आयु बहत्तर वर्ष की थी। आपने दीक्षा लेकर खड्गासन से ध्यान लगाया था। आपकी अवगाहना सात हाथ की थी, सिंह आपका लांछन (चिन्ह) है। आप के द्वारा प्ररूपित धर्म ही अबतक जगत में परमधर्म का मूल है। प्रभो! बद्धांजलि होकर मैं आपके चरणों में सिर झुकाता हूँ।

13. उपर्युक्त कृति की ही एक कविता और भी (कविवर श्री "बुधमहाचन्द्र" द्वारा रचित) यहाँ प्रस्तुत है-

सिद्धारथ राजा दरबारे बटत बधाई रंग भरो हो।। टेक।।
त्रिसला देवी ने सुतजायो वर्द्धमान जिनराज बरी हो, कुंडलपुर में घर घर द्वारे होय रही आनंद घरी हो।।1।।
रत्नन की वर्षा को होते पंद्रह मास भये सगरी हो, आज गगन दिश निरमल दीखत पुष्प वृष्टि गंधोद झरी हो।।2।।
जन्मन जिनके जग सुख पाया दूरि गये सब दुक्ख टरी हो, अन्तर मुहूर्त नारकी सुखिया ऐसो अतिशय जन्म धरी हो।।3।।
दान देय नृपने बहुतेरो जाचिक जन मन हर्ष करी हो, ऐसे बीर जिनेश्वर चरणों 'बुध महाचन्द्र' जु सीस धरी हो।।4।।

अर्थ-महाराज सिद्धार्थ के दरबार में आज रंगभरी बधाई बट रही हैं। देवी त्रिशला ने पुत्र प्रसव किया है। वह पुत्र (अन्तिम तीर्थंकर) जिनराज वर्धमान हैं। कुण्डलपुर में घर-घर और द्वार-द्वार आनन्द की यह शुभ घड़ी व्याप्त हो

रही है। अहो! रत्नों की वर्षा होते पन्द्रह मास हो गये। आज आकाश, दिशाएं, निर्मल प्रतीत हो रही हैं और पुष्प वृष्टि हो रही है, गन्धोदक की झड़ी 'वर्षा' लगी हुई है। भगवान के जन्म ग्रहण करते समय संसार ने सुख पाया और सब दुःख दूर हो गये, टल गये। भगवान का अतिशय युक्त जन्म वर्णन कैसे किया जाए, उस समय अन्तर्मुहूर्त के लिए नारकियों को भी सुख प्राप्ति हुई। राजा ने बहुत सा दान देकर याचकों तथा जनमानस को प्रहर्षित कर दिया। ऐसे वीर जिनेश्वर के चरणों में 'बुध महाचन्द्र' मस्तक नमाते हुए विनय भक्ति करते हैं।

14. श्री ताराचन्द जैन शास्त्री द्वारा लिखित सन् 1977 में प्रकाशित "जीवन झांकी तीर्थंकर महावीर" के प्रथम पद्य में–

आओ दिखाएं जीवन-झांकी, महावीर भगवान की। सिद्धारथ के राजदुलारे, त्रिशला मां के प्राण की।।
क्षत्रिय नाथ वंश प्राची के, दिनकर श्री महावीर थे। कुंडलपुर में जन्म लिया था, जन्मजात अति वीर थे।
चैत्र शुक्ल तेरस के दिन की शोभासीम निराली थी। राजमहल, पुरजन, परिजन के मुख पर छाई लाली थी।।
रत्नों, पुष्पों की वर्षा हुई, वृद्धि हुई धन-धान की।। आओ दिखाएं, जीवन-झांकी महावीर भगवान की।
सिद्धारथ के राजदुलारे, त्रिशला मां के प्राण की।।

15. श्रीकृष्ण जैन द्वारा लिखित "भगवान महावीर और उनका दिव्य सन्देश" (अप्रैल 1976 में प्रकाशित) में भगवान महावीर के जन्म समय का सुन्दर प्रकरण है–

अज्ञानमय इस लोक में, आलोक सा छाने लगा। होकर मुदित सुरपति नगर में रत्न बरसाने लगा।।
उदित बालक की प्रभा, ज्ञान ज्योति प्रगट होने लगी। नभ की निशा की कालिमा अभिनव उषा धोने लगी।।
द्वार-द्वार पर सज उठे, तोरण बन्दनवार। कुण्डलपुर नगरी में हुआ, वीर प्रभु अवतार।।
प्राची दिशा के अंक में नूतन दिवाकर आ गया। सत्य अहिंसा का आलोक पुनः जग में छा गया।।

प्रसंगोपात्त कुछ ग्रंथ एवं पुस्तकों के नाम मात्र यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं, जिनमें कुण्डलपुरी का वर्णन लेखकों ने किया है, पाठकगण यथासंभव स्वाध्याय के द्वारा इनका अवलोकन करें–

16. "अहिंसा के अवतार भगवान महावीर", लेखक-पूज्य आचार्यरत्न श्री देशभूषण महाराज (प्रकाशक जैनमित्र मण्डल देहली, अप्रैल सन् 1956)

17. "जैनतीर्थ और उनकी यात्रा", लेखक–श्री कामता प्रसाद जैन, प्रकाशक भारतीय दिगम्बर जैन परिषद्, मार्च 1969

18. "भगवान महावीर और उनका समय" लेखक पंडित जुगलकिशोर मुख्तार, प्रकाशक हीरालाल पन्नालाल जैन देहली, मार्च 1934

19. "महाश्रमण महावीर" लेखक पं. सुमेरुचन्द्र दिवाकर प्रकाशित सन् 1968

20. "भगवान महावीर" (जीवन दर्शन) लेखक पं. सुमेरुचन्द्र दिवाकर प्रकाशित सन् 1970

21. "भगवान महावीर और उनका सन्देश", लेखक पं. परमेष्ठी दास जैन, प्रकाशित सन् 1975

22. "तीर्थंकर महावीर" लेखक अनूप चन्द्र जैन, प्रकाशित अप्रैल सन् 1993

23. "वृहद् महावीर कीर्तन" प्रकाशित दिसम्बर सन् 1962, श्री दिगम्बर जैन वीर पुस्तकालय, महावीरजी (राजस्थान)

24. "महावीर चालीसा" जनम लिया कुण्डलपुर नगरी, हुई सुखी तब प्रजा सगरी।
सिद्धारथ जी पिता तुम्हारे, त्रिशला की आँखों के तारे।।

25. "भारत के दिगम्बर जैन तीर्थ" (सन् 1975 में हीराबाग-मुम्बई से प्रकाशित) नामक ग्रन्थ में बिहार प्रान्त के तीर्थों का वर्णन करते हुए पं.श्री बलभद्र जैन ने कुण्डलपुर तीर्थ के विषय में लिखा है–

"कुंडलपुर बिहार प्रान्त के पटना जिले में स्थित है। यहाँ का पोस्ट ऑफिस नालन्दा है और निकट का रेलवे स्टेशन भी नालन्दा है। यहाँ भगवान महावीर के गर्भ, जन्म और तपकल्याणक हुए थे, इस प्रकार की मान्यता कई शताब्दियों से चली आ रही है। यहाँ पर एक शिखरबन्द मन्दिर है जिसमें भगवान महावीर की श्वेतवर्णी साढ़े चार फुट अवगाहना वाली भव्य पद्मासन प्रतिमा विराजमान है। वहाँ वार्षिक मेला चैत्र सुदी द्वादशी से चतुर्दशी तक महावीर के जन्मकल्याणक को मनाने के लिए होता है।"

26. पण्डित श्री कैलाशचन्द्र जैन सिद्धांत शास्त्री द्वारा लिखित "जैनधर्म" नामक पुस्तक (सन् 1948 में भारतवर्षीय दिगम्बर जैन संघ, मथुरा चौरासी से प्रकाशित) में पृ. 18 पर भगवान महावीर के बारे में स्पष्ट वर्णन है–

"भगवान महावीर अन्तिम तीर्थंकर थे। लगभग 600ई. पूर्व बिहार प्रान्त के "कुण्डलपुर" नगर के राजा सिद्धार्थ के घर में उनका जन्म हुआ। उनकी माता त्रिशला वैशाली नरेश राजा चेटक की पुत्री थी। महावीर का जन्म चैत्रशुक्ला त्रयोदशी को हुआ था। इस दिन भारतवर्ष में महावीर की जयन्ती बड़े धूमधाम से मनाई जाती है।"

27. भारतगौरव पूज्य आचार्य श्री देशभूषण महाराज द्वारा रचित "भगवान महावीर और उनका तत्त्वदर्शन" (सन् 1974 में श्री जैनसाहित्य समिति, कूचा बुलाकी बेगम, ऐस्प्लेनेड रोड-देहली) में भी जगह-जगह भगवान महावीर का कुण्डलपुर नगरी में जन्म लेना, बालक्रीड़ा करना आदि जीवन को दर्शाया है।

विषय की अधिकता के कारण यहाँ अत्यधिक प्रमाणों का उल्लेख नहीं किया जा रहा है किन्तु यहाँ इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि सम्पूर्ण दिगम्बर जैन आगम ग्रन्थ इसी सत्य को स्वीकार करते हैं कि भगवान महावीर ने बिहार प्रान्त के कुण्डलपुर नगर में जन्म लेकर सम्पूर्ण विश्व को अहिंसा के अमर सिद्धांत से प्रभावित किया था। उनके इस व्यापक प्रभाव के कारण ही कुछ इतिहासकारों ने उन्हें जैनधर्म का संस्थापक कह दिया जबकि पण्डित श्री सुमेरुचन्द्र दिवाकर के शब्दों में महावीर को जैनधर्म का संस्थापक न कहकर पुनरुद्धारक कहना चाहिए।

अब प्रश्न उठता है कि वैशाली को महावीर जन्मभूमि के रूप में किसने और कब प्रस्थापित करने का प्रयास किया?

इस विषय में डॉ. हीरालाल जैन एवं ए.एन. उपाध्ये ने सन् 1974 में लिखित अपनी पुस्तक 'महावीर युग और जीवन दर्शन' में अनेक युक्तियोंपूर्वक वैशाली के उपनगर जिला मुजफ्फरपुर में (दो किमी. दूर-वासुकुण्ड) को भगवान महावीर की जन्मभूमि के रूप में बताने का प्रयास करते हुए स्वयं लिखा है। अनेक प्राचीन नगरों के साथ इस वैशाली का दीर्घकालीन इतिहासज्ञों को अता-पता नहीं था किन्तु विगत एक शताब्दी में जो पुरातत्त्व सम्बन्धी खोज–शोध हुई है, उससे प्राचीन भग्नावशेषों, मुद्राओं व शिलालेखों आदि के आधार से प्राचीन वैशाली की ठीक स्थिति अवगत हो गयी है और निःसंदेह रूप से प्रमाणित हो गया है कि बिहार राज्य में गंगा के उत्तर में मुजफ्फरपुर जिले के अन्तर्गत बसाढ़ नामक ग्राम ही प्राचीन वैशाली है। स्थानीय खोज–शोध से यह भी माना गया है कि वर्तमान बसाढ़ के समीप ही जो वासुकुण्ड नामक ग्राम है, वहीं प्राचीन कुण्डपुर होना चाहिए। वहां एक प्राचीन कुण्ड में चिन्ह पाये जाते हैं जो क्षत्रियकुण्ड कहलाता रहा होगा" अर्थात् लेखक स्वयं यह स्वीकार कर रहे हैं कि सौ वर्ष पूर्व वैशाली नाम का इस भारत देश में कोई नगर ही नहीं था और उसे बसाढ़ नामक ग्राम को वैशाली नाम देकर स्थापित कर दिया गया है अतः कटु सत्य तो यह है कि यह वैशाली नगरी भी केवल इतिहासकारों के द्वारा बनाई गयी वैशाली है न कि 2600 साल पहले से चली आयी वास्तविक वैशाली है।

मैंने तो अभी तक वैशाली या कुण्डग्राम के विषय में जो भी प्रमाण पढ़े हैं वे श्वेताम्बर ग्रन्थ जैसे भगवतीसूत्र, आचारांग, कल्पसूत्र, उपासकदशांग सूत्र, सूत्रकृतांग आदि ग्रन्थ हैं।

महानुभावों! यदि श्वेताम्बर ग्रन्थों की मान्यताओं के आधार पर हम भगवान महावीर को वैशालिक कहकर उनका जन्म वैशाली में अथवा उसके निकट वासुकुण्ड में मानने लगे तब तो श्वेताम्बर ग्रन्थों में वर्णित स्त्रीमुक्ति, सवस्त्र मुक्ति, महावीर की माता का चौदह स्वप्नों का देखना, देवानन्दा नामक ब्राह्मणी के गर्भ से त्रिशला के गर्भ में महावीर का परिवर्तन किया जाना, महावीर का विवाह तथा उनके पुत्री होना, दीक्षा से पूर्व ही उनके माता-पिता का स्वर्गस्थ हो जाना आदि अनेक बातें भी उनकीं हमें माननी पड़ेंगी किन्तु दिगम्बर सम्प्रदाय के लिए ऐसा तीन काल में भी संभव नहीं है।

आश्चर्य तो यह है कि इधर श्वेताम्बर ग्रन्थों के अनुसार दिगम्बर जैन समाज के कुछ गिने चुने लोग व्यक्तिगत मान्यताओं के आधार पर वैशाली को जन्मभूमि कहने का दुष्प्रयास कर रहे हैं और स्वयं श्वेताम्बर सम्प्रदाय वालों ने उसे जन्मभूमि न मानकर मुंगेड़ जिले के एक ग्राम लिछवाड़ को जन्मभूमि माना है.......अस्तु! इस बात पर दिगम्बर जैन समाज को अति सूक्ष्मता से विचार करने की आवश्यकता है।

दूसरी बात, महावीर जन्मभूमि के रूप में वैशाली को बौद्ध ग्रन्थों (मज्झिमनिकाय, महावस्तु) के अनुसार भी कुछ लोग स्वीकार कर लेते हैं तब तो बौद्धमत के क्षणिकवाद आदि उनके एकान्त सिद्धांतों को भी हमें मानने के लिए बाध्य होना पड़ेगा क्योंकि किसी मत की एक बात मानने पर उनकी अनेक बात मानने का भी प्रसंग आता है। बौद्ध और श्वेताम्बर दोनों सम्प्रदायों में बिहार प्रांत के अन्दर लिच्छवी वंश, गणराज्य पद्धति आदि को स्वीकार किया गया है और इन्हीं ग्रन्थों के आधार पर लगभग 50 वर्ष पूर्व कवि रामधारी सिंह दिनकर ने "वैशाली जन का प्रतिपादक गण का आदि विधाता" इत्यादि कविता लिख दी है। हमारे प्राचीन दिगम्बर जैन ग्रन्थों को विद्वानों ने सार्वजनिक रूप में प्रसिद्ध नहीं किया क़ि आधुनिक इतिहासकार, कवि और लेखक उससे भी कुछ ले सकते जबकि श्वेताम्बर और बौद्ध साहित्य प्रचुर मात्रा में लोगों के हाथों में दो हजार सालों से पहुँचता रहा है।

तीसरी बात, इतिहास की पाठ्यपुस्तकों में भी कहीं-कहीं वैशाली को ही सीधे महावीर की जन्मभूमि लिख दिया गया है और कहीं वैशाली के उपनगर कुण्डग्राम को महावीर की जन्मभूमि के रूप में लेखकों ने प्रस्तुत किया है। बन्धुओं! इन इतिहासकारों के बारे में तो क्या कहा जाए, आप लोग आजकल सुन ही रहे हैं कि इन लोगों ने इतिहास के नाम पर जैनधर्म एवं अन्य दूसरे धर्मों पर भी कितना कुठाराघात किया है और जब पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने दश वर्ष के पुरुषार्थ के पश्चात् सरकार एवं शिक्षा विभाग तक पुरजोर बात पहुँचायी तब सरकार को उन पाठ्यपुस्तकों में संशोधन करने के लिए बाध्य होना पड़ा। हमारे संशोधनों के साथ अन्य धर्मावलम्बियों के भ्रान्त विषयों का भी संशोधन हो रहा है जिससे प्रायः लोग प्रसन्नता का अनुभव कर रहे हैं किन्तु इतिहास में किया गया छोटा सा संशोधन अभी पर्याप्त नहीं है क्योंकि बहुत सारे भ्रान्त विषयों में से केवल कुछ लाइनों का संशोधन मात्र हो रहा है, उसमें अभी और अधिक संशोधन की आवश्यकता है जिसके लिए हमें बराबर पुरुषार्थ करते रहना है। अब आप स्वयं सोचिये कि जिन इतिहासकारों पर हम पचासों वर्षों से विश्वास करते आए, उन्होंने हमारे साथ कितना विश्वासघात किया कि हमारे ही धर्म और तीर्थंकर महापुरुषों को विकृत करने में कोई कसर नहीं छोड़ी तो भला उनकी निराधार खोजों के आधार पर हम वैशाली या वासुकुण्ड को महावीर की जन्मभूमि मानकर यदि उसे प्रचारित कर देंगे तो आगे इसका नतीजा अगली पीढ़ी को तो भुगतना पड़ेगा ही, साथ ही असली जन्मभूमि को अपने ही हाथों से गंवाकर हमें क्या हासिल होगा?

आर.एस. शर्मा, रोमीला थापर आदि इतिहास लेखकों के समान क्या हम स्वयं एक नई गलती और नहीं करने जा रहे हैं? यह अपने हाथ से अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारने जैसा ही दुष्प्रयास है। ऐसी शोध और खोज करके तो कुछ विद्वान् मानने लगे हैं कि शाश्वत तीर्थ अयोध्या भारत में न होकर थाइलैंड में है, वर्तमान में जिस शाश्वत निर्वाणभूमि सम्मेदशिखर को सभी श्रद्धा से पूजते हैं वह भी खोजकर्ताओं ने गलत बता दिया है। इतना ही नहीं, लगभग समस्त तीर्थंकरों की जन्मभूमि को दक्षिण-पूर्वी एशियाई देशों में बताते हुए एक लेखक ने (डा. जिनेश्वरदास जैन ने "अंगकोर के पंचमेरु मंदिर-इतिहास के नवीन परिप्रेक्ष्य में") नामक पुस्तक में अयोध्या को **थाईलैंड** में, हस्तिनापुर को **बर्मा** में, चम्पापुर को **दक्षिण वियतनाम** में, विदेह को **दक्षिण चीन** में, रतनपुरी को **कम्बोडिया** में और कुण्डलपुर को विदेह का 10वाँ नगर के रूप में लिखा है। तो क्या वर्तमान भारत में स्थित सभी तीर्थ छोड़कर आप विदेश की नगरियों का उद्धार करने जाएंगे? भ्रांति के इस परिप्रेक्ष्य में हमें तो भारत में ही स्थित अपने प्राचीन तीर्थों का संरक्षण करना चाहिए, शेष स्थानों पर मिले अवशेषों को जैन संस्कृति का गौरव मानना चाहिए। चौथी बात आती है कि सन् 1960 के दशक में तत्कालीन बिहार सरकार ने वैशाली को महावीर जन्मभूमि स्वीकार कर लिया।

भाइयों! जिसे जैन समाज के कुछ कार्यकर्ताओं तथा शोधकर्ताओं ने समाज से शास्त्रोक्त निर्णय लिए बिना ही सरकार को बता दिया, इसमें सरकार का क्या दोष है? उसी के अनुसार उन्होंने उद्घाटन कर दिया। आगम से आप

सोचिए कि अपने भगवान की जन्मभूमि का निर्णय हमें करना है या सरकार से कराना है यह एक विचारणीय विषय है। यदि सरकार की ही सारी बातें मानी जाएं तो सरकार के द्वारा तो मांस का निर्यात भी किया जा रहा है, शराब के ठेके धड़ल्ले से चलाए जा रहे हैं, अण्डे को शाकाहार प्रचारित किया जा रहा है, बूचड़खानों को नये-नये लाइसेन्स प्रदान किये जा रहे हैं......इत्यादि सभी बातें क्या सरकार की हम लोग मान्य करेंगे? यदि नहीं, तो फिर केवल उसकी मान्यता के आधार पर महावीर जन्मभूमि का ही परिवर्तन क्यों? दिगम्बर जैन समाज सोचे और विवेक का परिचय दे।

कुछ लोग इसमें भूगोल की दृष्टि लगाते हुए कहते हैं कि कुण्डलपुर तो मगधदेश के राजगृही नगरी से केवल 16 किमी. दूर है इसलिए हम कुण्डलपुर को मगधदेश में कैसे मानें? इस विषय में हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि काल परिवर्तन के साथ-साथ देश और प्रदेशों की दूरियां काफी विषम परिस्थितियों को प्राप्त हो चुकी हैं जो नगरियां तीर्थंकरों के समय में 96 मील की हुआ करती थीं वह आज की स्थिति में केवल एक-दो किमी. की ही परिधि में सिमटकर रह गई हैं और उनके आस-पास ही तमाम दूसरी नगरियों का अस्तित्व मान लिया गया है। इस प्रकार फिर जो वैशाली नगरी राजा चेटक की राजधानी बताई गई थी उसके उपनगर वासुकुण्ड या कुण्डग्राम को राजा सिद्धार्थ की राजधानी कहने में तो बहुत ही अधिक विकृति उत्पन्न हो जाएगी क्योंकि वह स्थान तो वैशाली से दो-तीन किमी. ही दूर है इस अल्प दूरी में दो राजाओं की रियासत कभी भी स्वीकार नहीं की जा सकती है अन्यथा राजा सिद्धार्थ को राजा चेटक का ही घरजमाई-जैसा स्वीकार करना पड़ेगा और फिर महावीर यदि वैशाली के युवराज कहे जाएंगे तो आगम में वर्णित राजा चेटक के दस पुत्र किसकी सत्ता के स्वामी कहलायेंगे? एक वास्तविक कुण्डलपुर को छोड़ने से इस प्रकार के अनेक विचारणीय प्रश्न सहज ही उभर जाते हैं अतः भलाई इसी में है कि हम सभी मिलकर प्राचीन कुण्डलपुर नगरी को ही अपने आराध्य महावीर की जन्मभूमि मानें, उसी का विकास करें और वैशाली को भी महावीर के स्मारक कें रूप में यदि सरकार विकसित करना चाहती है तो वहां स्मारक बनाएं, शैक्षणिक संस्थान आदि चलाएं, इसमें कोई आपत्ति नहीं है।

कुण्डलपुर नहीं मानते हो तो पावापुरी भी जाने वाली है–

वैशाली या वासुकुण्ड (कुण्डग्राम) को महावीर की जन्मभूमि मानने वाले लोग तो आधुनिक शोध और खोज के अनुसार बिहार शरीफ के निकट वाली पावापुरी नगरी को भी उनकी निर्वाणभूमि नहीं मानते हैं। डॉ. हीरालाल जी ने तो 'महावीर युग और जीवनदर्शन' के पृष्ठ 30 पर स्पष्ट लिखा है कि इन सब बातों पर विचार कर इतिहासकार इस निर्णय पर पहुँचे हैं कि "जिस पावापुरी के समीप भगवान का निर्वाण हुआ था, वह यथार्थतः उत्तर प्रदेश के देवरिया जिले में व कुशीनगर के समीप वह पावा नामक ग्राम है जो आजकल सठियाँव (फाजिलनगर) कहलाता है और जहाँ बहुत से प्राचीन खण्डहर व भग्नावशेष पाये जाते हैं। अतएव ऐतिहासिक दृष्टि से इस स्थान को स्वीकार कर उसे भगवान महावीर की निर्वाणभूमि के योग्य तीर्थक्षेत्र बनाना चाहिए।"

किन्तु इनकी बात न मानकर दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनों सम्प्रदाय के लोग सरकार के साथ मिलकर बिहार शरीफ के निकट वाली पावापुरी का ही उद्धार कर रहे हैं, यह बात कहां तक उचित है? यदि उन लेखकों के आधार पर आप कुण्डलपुरी को छोड़ना चाहते हैं तो निःसंदेह ही आप इस पावापुरी का विकास न करके फाजिलनगर के पास वाले पावाग्राम का विकास करें और वहीं प्रतिवर्ष दीपावली मनाकर महावीर निर्वाणोत्सव का कार्यक्रम करें। इन दोनों प्राचीन भूमियों का हम सभी दिगम्बर जैन समाज के लोग मिलकर सरकार की बिना मान्यता एवं सहयोग के भी विकास कर लेंगे लेकिन इन भूमियों को हम इनके सौभाग्य से वंचित नहीं होने देंगे और यदि पावापुरी को मानते हैं तो निश्चित रूप से प्राचीन कुण्डलपुर को भी जन्मभूमि मानें और शत प्रतिशत दिगम्बर जैन समाज की श्रद्धा के साथ खिलवाड़ न करें, अन्यथा पापबन्ध के साथ-साथ भावी इतिहास कभी आपको माफ नहीं कर पाएगा।

* * *

भगवान महावीर एवं जन्मभूमि कुण्डलपुर

लेखिका–ब्र. (कु.) चन्द्रिका जैन
(संघस्थ–पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी)

अनादि काल से जैनधर्म में चौबीस तीर्थंकर होते रहे हैं और आगे भी होंगे। वर्तमान युग में आदि तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव प्रथम तीर्थंकर माने गये हैं। जिनका उल्लेख न केवल समस्त जैन पुराणों में आता है, किन्तु ऋग्वेद आदि वैदिक ग्रंथों में भी कई जगह आया है। ऋषभदेव से लेकर महावीर पर्यंत चौबीसों तीर्थंकरों के चरित्र जैन पुराणों में विधिवत् वर्णित हैं। भगवान महावीर जैनधर्म के चौबीसवें तीर्थंकर थे। जैन ऐतिहासिक परम्परानुसार न तो वे जैनधर्म के आदि प्रवर्तक हैं और न ही संस्थापक।

इस संसार में प्रत्येक प्राणी जन्म लेता है और मरण को प्राप्त हो जाता है किन्तु कुछ ही दिनों में उसकी याद विस्मृत हो जाती है। बिरले ही व्यक्ति ऐसे होते हैं जो अपने जीवन में कुछ ऐसे कार्य कर जाते हैं जो मरने के बाद याद किये जाते हैं, ऐसे व्यक्ति महापुरुषों की श्रेणी में आते हैं. उनके आदर्श युगों-युगों तक इतिहास बनकर हर मानव को प्रेरणा प्रदान करते रहते हैं तथा वे मरकर भी अमर हो जाते हैं।

हमारे भारतवर्ष में अनेक महापुरुषों ने जन्म लेकर इस धरती को पावन/पवित्र किया है। उनमें से जैनधर्म में 24 तीर्थंकरों ने भी जन्म लेकर इस धरती को पूज्य बनाया है तथा प्रत्येक प्राणी के लिए अहिंसा धर्म का उपदेश दिया। अभी 3 वर्ष पूर्व अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर का 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव वर्ष मनाया गया है। आज से 2603 वर्ष पूर्व उनका जन्म हुआ था तथा 2530 वर्ष पूर्व उन्होंने निर्वाण पद को प्राप्त किया है तब से आज तक भगवान महावीर का शासनकाल चल रहा है।

भगवान महावीर का जन्म बिहार प्रान्त के कुण्डलपुर नगर में हुआ था जो वर्तमान में नालंदा जिले में है। यह नगरी बहुत ही सुन्दर एवं वैभवपूर्ण थी। हरिवंशपुराण में श्री जिनसेनाचार्य ने द्वितीय सर्ग के श्लोक 5 से 24 तक भगवान महावीर के गर्भकल्याणक का प्रकरण लिखते हुए कुण्डलपुरी का विस्तृत वर्णन किया है तथा उस नगरी की महिमा महावीर के जन्म से ही सार्थक बताते हुए कहा है कि–

एतावतैव पर्याप्तं, पुरस्य गुणवर्णनम्। स्वर्गावतरणे तद्वद्वीरस्याधारतां गतम्।।

इस कुण्डलपुर नगर के गुणों का वर्णन तो इतने से पर्याप्त हो जाता है कि वह नगर स्वर्ग से अवतार लेते समय भगवान महावीर का आधार बना अर्थात् भगवान महावीर वहाँ स्वर्ग से आकर अवतीर्ण हुए।

तीर्थंकर भगवान के जन्म से उस नगरी का कण-कण पवित्र हो गया उसने तीर्थ का रूप ले लिया जिसे नमन कर आज भी श्रद्धालु जन अपने को धन्य मानते हैं।

किसी भी महापुरुष के जीवनवृत्त को याद करते समय उनके जन्मभूमि, कुल, माता-पिता व परिवार का भी गौरव के साथ नाम लिया जाता है। उनको जन्म देने वाले माता-पिता भी वंदनीय हो जाते हैं।

लोक में सूक्ति कही जाती है–

"जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी"

अर्थात्-जननी और जन्मभूमि स्वर्ग से भी महान होती हैं।

पुनः तीर्थंकर जैसे महापुरुष के निमित्त से जन्मभूमि तीर्थस्वरूप हो जाए तथा उनके माता-पिता की स्वयं इन्द्रराज असंख्य देवों के साथ आकर पूजा-भक्ति करें तो कोई अतिशयोक्ति की बात नहीं है।

विदेह देश के मध्य में स्थित कुण्डलपुर एक विशाल (96 मील विस्तृत) नगर था जिसके राजा "सर्वार्थ" महाराज थे और उनकी महारानी का नाम श्रीमती था। इनके पुत्र का नाम "सिद्धार्थ" था जिनकी रानी वैशाली नरेश महाराजा चेटक की पुत्री "त्रिशला" थीं जिनका दूसरा नाम "प्रियकारिणी" था।

कुण्डलपुर नगरी के बीचोंबीच स्थित "नंद्यावर्त" महल था जिसमें 7 खन थे जिनकी उपमा स्याद्वाद शासन में वर्णित

सप्तभंगी से की जाती है। उस महल में चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के शुभ दिन माता त्रिशला ने तीर्थंकर पुत्र को जन्म दिया। जिनका सौधर्म इन्द्र ने सुमेरु पर्वत पर ले जाकर 1008 कलशों से न्हवन किया था पुनः कुण्डलपुर नगरी में भी महान उत्सव किया। इन्द्र ने बालक का नाम "वीर" और "वर्धमान" रखा।

वर्तमान इतिहासकारों ने भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर के स्थान पर "वैशाली" लिख दिया है। जबकि वैशाली भगवान महावीर की ननिहाल है। माता त्रिशला की जन्मभूमि है। वैशाली के विषय में उत्तरपुराण में कहा है–

सिंध्वाख्ये विषये भूभृद्वैशाली नगरेऽभवत्। चेटकाख्योऽतिविख्यातो विनीतः परमार्हतः।

सिंधुदेश के वैशाली नगर में चेटक नाम के प्रसिद्ध राजा थे। इनकी रानी का नाम सुभद्रा था। इनके दश पुत्र थे जिनके नाम धनदत्त, धनभद्र, उपेन्द्र, शिवदत्त, हरिदत्त, कम्बोज, कम्पन, प्रयंग, प्रभंजन और प्रभास थे। ये दशों पुत्र दशधर्मों के समान निर्मल गुणों से विभूषित थे। इन्हीं राजा चेटक की महारानी ने सात ऋद्धियों के समान ही सात पुत्रियों को जन्म दिया था जो क्रमशः प्रियकारिणी, मृगावती, सुप्रभा, प्रभावती, चेलिनी, ज्येष्ठा और चंदना थीं।

विदेह देश में कुण्डलपुरी नगरी में 'नाथवंश' के राजा सिद्धार्थ के साथ चेटक ने अपनी बड़ी पुत्री प्रियकारिणी "त्रिशला" का विवाह किया था।

"वीरजिणिंदचरिउ" नामक ग्रंथ में भी आया है कि–

जम्बूद्वीप के विदेहदेश में कुण्डलपुर नगर में राजा सिद्धार्थ की महारानी त्रिशला से भगवान महावीर जन्मे हैं तथा सिंधुदेश की राजधानी वैशाली के राजा चेटक थे।

ये दोनों स्वतंत्र राज्य थे न कि कुण्डलपुर वैशाली का उपनगर था। मालव देश में उज्जयिनी, कौशलदेश में 'अयोध्या', वत्सदेश में 'कौशाम्बी' नगरी आदि के वर्णन से बड़े-बड़े प्रान्तों में राजधानी के रूप में भगवन्तों की नगरी माननी चाहिए न कि आज के समान छोटे से गाँव को तीर्थंकरों की जन्मभूमि कहना चाहिए। यहाँ विदेह देश से पूरा बिहार प्रान्त समझना चाहिए।

लगभग दो हजार वर्ष पूर्व आचार्य यतिवृषभ द्वारा रचित "तिलोयपण्णत्ति" ग्रंथ में, आचार्य पुष्पदंत-भूतबली विरचित षट्खण्डागम ग्रंथ में, उत्तरपुराण, हरिवंशपुराण आदि अनेक प्राचीन ग्रंथों में भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर होने का वर्णन आता है। वैशाली उनकी माता की जन्मनगरी है। तीर्थंकर जैसे महापुरुष का ननिहाल में जन्म नहीं होता। सौधर्म इन्द्र की आज्ञा से कुबेर माता के आंगन में ही 15 महीनों तक रत्नों की वृष्टि करता है जिन्हें उनके पिता संपूर्ण प्रजा में वितरित करते हैं।

प्रत्येक पुत्र अपने पिता के पश्चात् उनकी गद्दी संभालकर राज्य करता है अतः भगवान महावीर ने कुण्डलपुर के युवराज पद को प्राप्त किया था। वैशाली का राज्य संभालने वाले तो उनके 10 मामा थे उन्होंने प्राप्त किया। यद्यपि कालपरिवर्तन के कारण 2600 वर्षों बाद उस कुण्डलपुर की सीमा पहले से काफी छोटी हो गई है तो भी हम उसके अस्तित्व को नकार नहीं सकते। सर्वप्रथम तो महावीर की उस वास्तविक जन्मभूमि कुण्डलपुर नगरी का जीर्णोद्धार विकास आदि करके उसे खूब उन्नत बनाना चाहिए, उसे विलुप्त करने का दुस्साहस तो कदापि नहीं करना चाहिए।

कुण्डलपुर बिहार प्रान्त के नालंदा जिले में स्थित है। यहाँ भगवान महावीर के गर्भ, जन्म और तप कल्याणक हुए थे। इस प्रकार की मान्यता कई शताब्दियों से चली आ रही है। यहाँ पर एक शिखरबन्द मंदिर है जिसमें भगवान महावीर की श्वेतवर्ण की साढ़े चार फुट अवगाहन वाली एक पद्मासन प्रतिमा विराजमान है।

हम भगवान महावीर के जीवन चरित्र को देखें तो बाल्यकाल से ही महावीर मति, श्रुत, अवधिज्ञान से विभूषित थे। बड़े-बड़े महर्षि उनके तेजपुंज शरीर के पास आकर अपना समाधान प्राप्त कर लेते थे। संजय और विजय मुनियों ने पलने में झूलते हुए प्रभु के दर्शन कर अपनी शंका का समाधान प्राप्त कर उनको 'सन्मति' नाम प्रदान किया।

शैशव अवस्था में बालक वर्धमान ने बाल-क्रीड़ा के समय स्वर्ग से परीक्षा के लिए आए हुए संगम देव को परास्त किया जो भयंकर सर्प बनकर वृक्ष से लिपट कर उन्हें डराने आया था किन्तु प्रभु की शक्ति के आगे परास्त होकर उन्हें "महावीर" नाम से विभूषित किया।

यौवन अवस्था में माता-पिता के द्वारा विवाह का प्रस्ताव रखने पर वर्धमान ने उन्हें वचनों से संतुष्ट कर जैनेश्वरी

दीक्षा लेने का निश्चंय किया। महाराज सिद्धार्थ ने उस समय प्रभु से कहा–

यथार्कस्य समुद्‌भूतौ निमित्तमुदयाचलः। स्वतस्तु भारवानुद्यति तथैवास्मद्‌भवानपि।।

जैसे सूर्य के उदय में उदयाचल निमित्त मात्र है। सूर्य तो स्वयं ही उदित होता है, इसी प्रकार आपकी उत्पत्ति में हम निमित्त मात्र हैं। आप स्वयं ही उत्पन्न हुए हैं।

30 वर्ष की अवस्था में जातिस्मरण होने से भगवान देवों द्वारा लाई गई "चन्द्रप्रभा" पालकी पर आरूढ़ हो 'ज्ञातृ' नामक वन में आये और मगसिर कृष्णा दशमी को "सालवृक्ष" के नीचे दीक्षा धारण की।

तपश्चर्या करते हुए एक बार उज्जयिनी नगरी के "अतिमुक्तक" नामक वन में 'रुद्र' ने उपसर्ग किया तब अचलित प्रभु को देखकर अपनी भार्या सहित पूजा स्तुति कर 'महति महावीर' नाम रखा।

एक समय प्रभु महावीर आहार के लिए विचरण करते हुए कौशाम्बी नगरी में आए। जहाँ सेठानी भद्रा ने चन्दना को (जो महावीर की मौसी थी) बंदी बनाकर रखा था। किन्तु महामुनि महावीर के आगमन से, प्रभु की भक्ति एवं शील के प्रभाव से उसके सारे बंधन टूट गये और कोदों का भात खीर बन गया। नवधाभक्ति से आहार देने पर पंचाश्चर्य की वृष्टि हुई। महासती चंदना ने प्रभु महावीर के समवसरण में दीक्षा लेकर गणिनी पद को प्राप्त किया।

तपश्चर्या करते हुए 12 वर्ष व्यतीत हो गए तब एक दिन "जृंभिकाग्राम" के निकट ऋजुकूला नदी के तट पर मनोहर नामक वन में वैशाख शुक्ला दशमी के दिन प्रभु को केवलज्ञान की प्राप्ति हुई। तत्क्षण ही इंद्र की आज्ञा से कुबेर ने समवसरण की रचना कर दी किन्तु गणधर के अभाव में 66 दिन तक प्रभु की दिव्यध्वनि नहीं खिरी। तब इन्द्र ने युक्ति से "इन्द्रभूति" नामक गौतम गोत्रीय ब्राह्मण को उपस्थित किया। जिन्होंने प्रभु के समीप में जैनेश्वरी दीक्षा को धारण कर मनःपर्यय ज्ञान के साथ अनेक ऋद्धियों को प्राप्त किया। वे भगवान के प्रथम गणधर बने।

श्रावण कृ. एकम् के दिन राजगृही में विपुलाचल पर्वत पर भगवान की दिव्यध्वनि खिरी जिसे आज वीर शासन जयंती के रूप में मनाया जाता है। राजगृही का वह पर्वत भी प्रभु की दिव्यध्वनि खिरने से तीर्थ बन गया। राजगृही के राजा श्रेणिक (जो भगवान के मौसा थे) उनके समवसरण के "मुख्य श्रोता" थे।

भगवान ने 30 वर्ष तक पूरे आर्यखंड में विहार कर अनेक जीवों को दिव्यध्वनि के द्वारा धर्मोपदेश दिया अंत में पांवापुरी में सरोवर के मध्य सर्व अघातिया कर्मों का नाश कर कार्तिक कृष्णा अमावस्या को ऊषा बेला में निर्वाण पद को प्राप्त किया। तब देवों ने आकर प्रभु का निर्वाण कल्याणक मनाकर दीपमालिकाएँ सजाई। तभी से यह (दीपावली पर्व) प्रकाश पर्व हम मनाते आ रहे हैं ऐसा हरिवंश पुराण में आया है। आज भी अनेक भक्तजन दीपावली के दिन पावापुरी जाकर भगवान महावीर के चरणों में निर्वाण लाडू चढ़ाकर पुण्यार्जन करते हैं।

हम सबको भगवान महावीर के शासनकाल में रहते हुए यह संकल्प करना चाहिए कि हम अपने प्रत्येक तीर्थंकरों की जन्मभूमियों व पंचकल्याणक भूमियों के विकास में योगदान प्रदान करेंगे। भगवान महावीर की आर्ष ग्रंथों की एवं प्राचीन परंपरा से मान्य जन्मभूमि एवं अन्य कल्याणकभूमियों का विशेष विकास कर इनकी अस्मिता को नहीं खोने देना चाहिए नहीं तो एक दिन ये भी काल के गाल में समाहित होकर केवल इतिहास के पन्नों पर रह जाएंगी, ऐसा मेरा कहना है और तभी हम अपने जैनधर्म के अस्तित्व को कायम रखकर अपने धर्म का प्रचार-प्रसार कर सकते हैं।

अंत में 4 लाइनें कहकर मैं अपनी बात समाप्त करती हूँ–

महावीर के संग सिद्धार्थ और त्रिशला का नाम जुड़ा है।
उन त्रिशला नंदन से हम सबका गौरव सदा बढ़ा है।।
हाँ गौरव सदा बढ़ा है।
उस कुण्डलपुर की पावन रज नमने का अवसर आया।
जिनधर्म का ध्वज लहराया।।

* * *

जन्मभूमि कुण्डलपुर का विकास

(एक लघु रूपक)

प्रस्तुति–युवारत्न अकलंक जैन (प्रतिष्ठाचार्य)
डालीगंज-लखनऊ

–: प्रथम दृश्य :–

एक बालिका द्वारा मंगलाचरण रूप भजन पर नृत्य करावें। (भजन–चलो कुण्डलपुर चलना है..........)

–: द्वितीय दृश्य :–

–सूत्रधार–

सुनो सुनो सुनो, मेरे प्यारे भाईयों, बहनों और नन्हें मुन्ने बच्चों सुनो।

आज मैं आपको एक बहुत सुन्दर दृश्य दिखाने जा रहा हूँ, क्या पूछा! क्या दिखाने जा रहा हूँ, मैं आपको दिखाऊँगा नंद्यावर्त महल, जहाँ हमारे 24वें तीर्थंकर भगवान महावीर ने जन्म लिया था। मैं आपको दिखाऊँगा, माता त्रिशला और महाराजा सिद्धार्थ के पुत्र, भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर की भव्यता को। मैं आपको ले जाऊँगा आज से 2600 वर्ष पूर्व की कुण्डलपुर नगरी में ओर आज के परिपेक्ष्य में परमपूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी के द्वारा किये गये विकास कार्य को भी दिखाऊँगा। क्या पूछा? बन्नी को कहाँ छोड़ आया, अरे भैय्या, मैं उसे कहाँ छोडूँगा। आयी है मेरे साथ ही आयी है। होगी यहीं कहीं आप लोग इस दृश्य को देखो मै अभी उसे ढूंढ़कर लाता हूँ, यहीं कहीं बैठी कुछ खा पी रही होगी। दिनभर कुछ न कुछ खाती रहती है, जब कुछ खाने को नहीं होता तो मेरा भेजा खाती रहती है।

–: तृतीय दृश्य :–

(कुछ श्रावक अपना सामान बांधे कहीं जाने की तैयारियाँ कर रहे हैं। कुछ श्रावक दूसरी ओर से आते हैं)।

श्रावक 1– भाई जी, जय जिनेन्द्र! कहाँ जाने की तैयारियाँ हो रही हैं।

श्रावक 2– कहीं नहीं भाई! बस, बच्चों की छुट्टियाँ थीं मैंने सोचा सबको सम्मेदशिखर की यात्रा करा लाऊँ।

श्रावक 3– ये तो आपने बहुत अच्छा सोचा, भाई जा रहे हो तो मेरी ओर से भगवान पार्श्वनाथ के चरणों में एक दीपक जला देना और कुण्डलपुर जरूर जाना।

श्रावक 2– भैय्या कुण्डलपुर तो मैं कई बार गया हूँ, वहाँ एक टूटी मेज और कुर्सी के अलावा कुछ नहीं मिलता। वहाँ की स्थिति जैसी 15 साल पहले थी वैसे ही आज भी है। वहाँ कोई विकास तो होता नहीं, फिर जाने का क्या फायदा। वहाँ तो भगवान के चरणों में दीपक जलाने वाला भी कोई नहीं है।

श्रावक 3– अरे भाई! क्या तुम लोगों ने सुना नहीं कि जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी भगवान महावीर की जन्मभूमि का विकास करने कुण्डलपुर पहुँच चुकी हैं।

श्रावक 1– लेकिन भाई पूज्य माताजी तो राजधानी दिल्ली में थीं, कुण्डलपुर कब पहुँची?

श्रावक 4– भाई पूज्य माताजी 20 फरवरी 2002 को दिल्ली से विहार करके 29 दिसम्बर 2002 को कुण्डलपुर पहुँच चुकी हैं, उनके साथ प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी, पीठाधीश क्षुल्लक श्री मोतीसागर महाराज, क्षुल्लिका श्री श्रद्धामती माताजी एवं कर्मठता के जीवन्त प्रतीक कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार 'भाई जी' हैं और आठ दिक्कन्याओं के समान आठ बालब्रह्मचारिणी बहन जी हैं। उस संघ के पावन सानिध्य में कुण्डलपुर का विकास बहुत तेजी से चल रहा है। 7 फरवरी से 12 फरवरी 2003 तक वहाँ भव्य पंचकल्याणक प्रतिष्ठा होने वाली है।

श्रावक 2– अगर पूज्य ज्ञानमती माताजी कुण्डलपुर में विराजमान हैं तब तो मैं उनके दर्शन करने अवश्य जाऊँगा। अभी पर्यूषण पर्व में हमारे यहाँ पूज्य माताजी द्वारा रचित इंद्रध्वज विधान हुआ था, तब से मेरी इच्छा थी कि ऐसे

महान विधान को लिखने वाली पूज्य माताजी के दर्शन करूँ।

श्रावक 3– भाई! जब तुमने कुण्डलपुर जाने का मन बना ही लिया है तो मेरा एक काम करा देना, वहाँ पर मेरे नाम से यह 2601 रुपये की राशि दान में दे देना।

श्रावक 2– जरूर कर दूँगा भाई! लेकिन एक बात नहीं समझ में आयी लोग 2100, 2500 का दान तो करते हैं पर यह 2601.....इसका मतलब नहीं समझ में आया।

श्रावक 4– अरे भाई! हमारे शासनपति भगवान महावीर का जन्म हुए 2601वर्ष हो गये हैं। आज से 2601 वर्ष पूर्व इस परम पावन कुण्डलपुर नगरी में माता त्रिशला ने सोलह स्वप्न देखे थे, कुबेर ने रत्न बरसाए थे और भगवान महावीर स्वामी ने जन्म लिया था।

श्रावक 1– समझ गया। इसीलिए तुमने 2601 रुपये की राशि दी है। तब तो लो भैय्या! मेरी ओर से भी 2601 रुपये दान में दे देना।

श्रावक 4– भैय्या, सच कहूँ तो यह कुण्डलपुर नगरी चतुर्थ काल की अंतिम रत्नगर्भा नगरी है क्योंकि अंतिम बार इसी नगरी में कुबेर ने रत्न बरसाए थे और प्रभू महावीर इसी कुण्डलपुर में पलने में झूले थे (विचारमग्न होता है) कितना सुन्दर रहा होगा वह दृश्य ? उसके बाद से तो अभी तक किसी तीर्थंकर का जन्म हुआ नहीं है।

(यहाँ पर भगवान के पालना झूलने का दृश्य दिखावें, बीच में पालना, अगल-बगल माता त्रिशला एवं राजा सिद्धार्थ बैठे हैं, इन्द्र एवं नगरवासी पालना झुला रहे हैं एक बालिका का नृत्य, पालने के गीत पर)

कौन प्रभु को पलना झुलावे, कौन सुमंगल गावे,
देवियाँ झुलावें, गीत सुनावें, देव सुमन हर सावें
त्रिभुवन पति जी पलना झूले, माँ त्रिशला के अंगना ओ.............
पलना, पलना, पलना
मेरे महावीर झूले पलना, सन्मति वीर झूलें पलना
पलना, पलना, पलना ओ.........पलना, पलना, पलना
मेरे महावीर झूले पलना, सन्मति वीर झूलें पलना
काहे को तेरो बनो रे पालनो, काहे के लागे फुंदना
रत्नों का पलना, मोतियन फुंदना, जगमग कर रहा अंगना
ललना का मुख निरख के भूले कर, सूरज चांद निकलना ओ........
पलना, पलना, पलना, मेरे महावीर झूलें पलना

श्रावक 1– वाह भाई वाह! तुमने तो साक्षात् कुण्डलपुर के महावीर के दर्शन करा दिये, भइया एक बात पूछूँ।

श्रावक 4– हाँ, हाँ क्यों नहीं, जरूर पूछो भैया, जरूर पूछो।

श्रावक 1– हमने बहुत सी किताबों में पढ़ा है और बहुत लोगों के मुख से सुना है कि महावीर भगवान के पांच नाम थे। वीर, वर्धमान, अतिवीर, सन्मति और महावीर। भगवान के इतने सारे नाम किसने रखे।

श्रावक 4– अरे भैय्या! तुमने तो बड़ी अच्छी बात पूछी एक बार मैं पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी के प्रवचन सुन रहा था तब उन्होंने बताया था कि भगवान का जन्म होते ही सौधर्म इन्द्र भगवान का सुमेरु पर्वत पर जन्माभिषेक करने ले गया था। तब 1008 कलशों से अभिषेक के बाद उसने दो नाम रखे थे वीर और वर्द्धमान।

श्रावक 2– लेकिन भैय्या! कुछ क्षण पूर्व जन्मे बालक का हजारों कलशों से अभिषेक कैसे हो सकता है?

श्रावक 4– भाई! तीर्थंकर भगवान जन्म से ही अनंतबल से सहित होते हैं तभी तो इतने बड़े-बड़े हजारों कलशों से अभिषेक होता है तो वह हंसते-मुस्कुराते रहते हैं। हाँ! एक बात और याद आयी।

श्रावक 3– क्या भैय्या क्या! जरा जल्दी बताओ। तुम्हारी बातों में तो बड़ा आनंद आ रहा है, ऐसा लग रहा है कि तुमने हमें 2600 साल पहले की कुण्डलपुर नगरी में ही पहुँचा दिया है।

श्रावक 4– भैय्या मैं तो तुम्हें वहीं बता रहा हूँ जो मैंने अपनी कुलगुरु गणिनी शिरोमणि ज्ञानमती माताजी के श्रीमुख

से सुना है। पूज्य माताजी ने भगवान के 2600वें जन्मकल्याणक में सभी भक्तों को सुमेरु पर्वत पर जन्माभिषेक करने की प्रेरणा दी थी।

श्रावक 3– पूज्य माताजी की तो बात ही निराली है, जैसा नाम वैसा काम। माताजी के ज्ञान का तो वर्णन ही नहीं किया जा सकता। अच्छा यह बताओ कि महावीर स्वामी का सन्मति नाम कैसे पड़ा?

श्रावक 4– भैय्या! तुमने बड़ा ही सुन्दर प्रश्न पूछा। यह घटना भी भगवान की जन्मभूमि कुण्डलपुर से जुड़ी है। संजय और विजय नामक चारण ऋद्धिधारी मुनियों के मन में एक शंका हुई। आकाशमार्ग से गमन करते हुए उनकी दृष्टि पालने में खेलते वीरप्रभू पर पड़ी बस उनके मन की शंका दूर हो गई उनने वीरप्रभू का नाम रखा था **'सन्मति'**।

श्रावक 2– तुम तो बड़ी अच्छी-अच्छी बातें बता रहे हो भाई! अच्छा एक बात और बताओ भगवान महावीर स्वामी का महावीर नाम कैसे पड़ा?

श्रावक 4– भाई! हुआ यूँ कि एक बार बचपन में महावीर स्वामी अपने देवरूपी बाल सखाओं के साथ खेल रहे थे (विचार मग्न होता है) (यहाँ पर भगवान महावीर के बालरूप को दिखावें कि वह सखाओं के प्रश्नों का उत्तर दे रहे हैं इतने में एक विकराल सर्प आता है बच्चे डर जाते हैं परन्तु महावीर उस सर्प के मस्तक पर चढ़कर क्रीड़ा करते हैं)।

देवसखा– हे वर्द्धमान! हम यह जानना चाहते हैं संसार में अच्छा मित्र कौन है?

वर्द्धमान– मित्रवर! जो पाप करने से रोके, वही इस संसार में सच्चा और अच्छा मित्र है।

देवसखा– हे वीर! इस संसार में कौन अंधा है, कौन बहरा है और कौन गूँगा?

वर्द्धमान– हे सखा! जो दिन-रात पापादि कार्य करता है वह अंधा, जो धर्म की बातों को न सुने वह बहरा और जो हित-मित-प्रिय-मधुर वचन नहीं बोले वह गूँगा होता है।

(बालक वर्धमान की देव बालकों के साथ चर्चा चल रही है पुनः वे मित्रों के साथ बगीचे में खेलने चले जाते हैं तभी एक देव भयानक विकराल सर्प का रूप रखकर फुंकारते हुए वहाँ पर पहुँचता है, जिसे देखकर सारे बच्चे बचाओ, बचाओ करते हुए भागकर इधर-उधर जाकर छिप जाते हैं लेकिन बालक वर्द्धमान वहीं तटस्थ मुस्कराते रहते हैं)।

देव बालक 1– वर्द्धमान! जल्दी आओ, भाग आओ इधर, नहीं तो यह सर्प तुम्हें डस लेगा।

देव बालक 2– वर्द्धमान! तुम आ क्यों नहीं रहे हो, यह बहुत ही विषधर सर्प है यह तो तुम्हें पूरा ही निगल जाएगा। जल्दी आओ वर्द्धमान, इधर आओ।

देवबालक 3– हे प्रभू! अब क्या होगा! वर्द्धमान तो वहीं खड़े हैं, हट ही नहीं रहे और यह विकराल सर्प तो उन्हीं की ओर बढ़ता चला जा रहा है।

देवबालक 4– समझ में नहीं आता क्या करूँ? अगर वर्द्धमान को कुछ हो गया तो हम माता त्रिशला को क्या जवाब देंगे? सखाओं, देखो देखो! सर्प तो वर्द्धमान के बिल्कुल पास आ गया अब क्या होगा?

(बालक वर्द्धमान अपने सखाओं की बातों को अनसुना करके मुस्कराते हुए निर्भीक खड़े रहते हैं और सर्प के ऊपर चढ़कर क्रीड़ा करने लगते हैं। यह देख सारे देव बालक वर्द्धमान की जय-जयकार करने लगते हैं और वह सर्प देव के रूप में आकर बालक वर्द्धमान के चरणों में गिर जाता है)।

संगमदेव– त्राहि माम् प्रभो त्राहि माम्! मुझे क्षमा कर दो, प्रभो मुझे क्षमा कर दो। मैं संगम नाम का देव हूँ। मैं आपकी शक्ति की परीक्षा करने के लिए आया था। मैं नासमझ था लेकिन अब मैं समझ गया हूँ आप अनंत बलशाली हैं आप वीर ही नहीं महावीर हैं। आज से मैं आपको **'महावीर'** के नाम से अलंकृत करता हूँ।

(सभी महावीर की जय-जयकार करते हैं) (चारों श्रावक फिर एकत्र होते हैं)

श्रावक 4– तो भैय्या! इस प्रकार संगम देव ने वीरप्रभू का महावीर नाम रखा था।

श्रावक 1– वाह भाई वाह! तुम तो पूज्य माताजी के साथ रहकर बड़े ज्ञानी हो गये अच्छा ये बताओ। एकाएक माता जी के मन में कुण्डलपुर का विकास करने की बात कैसे आ गई?

श्रावक 4– अरे भाई! बहता हुआ जल और साधु की प्रवृत्ति एक जैसी होती है। पूज्य माताजी के मन में विचार आया कि भगवान की जन्मभूमि का विकास होना चाहिए तथा वहाँ मंदिरों के साथ-साथ उनके जन्मस्थल का प्रतीक नंद्यावर्त महल बनना चाहिए बस, चल दीं पूज्य माताजी।

श्रावक 2– लेकिन कुण्डलपुर तो बिहार के नालंदा जिले में है सुना है वहाँ की स्थिति अच्छी नहीं है। क्या माताजी को बिहार जाते डर नहीं लगा।

श्रावक 4– अरे भाई! पूज्य माताजी जैन साध्वी हैं और वे साधु-साध्वी सिर्फ कर्मों से डरते हैं और किसी से नहीं। समझे। फिर जहाँ माताजी के चरण पड़ जाते हैं वहाँ सब ओर सुभिक्ष और मंगल ही होता हैं।

श्रावक 3– भाई! अभी तुमने बताया कि माताजी नंद्यावर्त महल बनवाने जा रही हैं यह भला नंद्यावर्त महल क्या है?

श्रावक 4– अरे भैय्या! कुण्डलपुर की धरती पर जिस महल में भगवान महावीर ने जन्म लिया था उस महल का नाम नंद्यावर्त महल था और उसमें भगवान शांतिनाथ का चैत्यालय भी बना है। इसके अलावा वहाँ माताजी की प्रेरणा से कई विशाल-विशाल मदिर भी बन रहे हैं।

श्रावक 1– अच्छा कौन-कौन से मंदिर बनेंगे कुण्डलपुर में।

श्रावक 4– कुण्डलपुर में माताजी की प्रेरणा से 108 फुट ऊँचा भगवान महावीर का मंदिर, प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव मंदिर, त्रिकाल चौबीसी मंदिर और भव्य कीर्तिस्तंभ का निर्माण हो रहा है।

श्रावक 2– इतने विशाल और इतने सारे मंदिर। इतने तो अपने शहर में भी नहीं है। फिर इन मंदिरों को बनाने में तो बहुत पैसा लगेगा।

श्रावक 4– भाई! माताजी की प्रेरणा है कि भगवान महावीर का जन्म हुए 2600 वर्ष हुए हैं, इसलिए हर श्रावक प्रभू के जन्म के एक-एक वर्ष में सिर्फ एक-एक रूपया दान निकाले उसी से तीर्थ का विकास होगा।

श्रावक 3– 2600-2600 रुपये में यह निर्माण कैसे पूर्ण हो पाएगा। इतनी महंगाई है कैसे हो पायेगा, यह सब।

श्रावक 4– भाई! बूँद-बूँद से सागर बनता है फिर माताजी का कहना है कि प्रत्येक दिगम्बर जैन व्यक्ति को इस तीर्थ से जोड़ना है। भक्त होंगे तो स्वयं ही मंदिरों का निर्माण करा देंगे।

श्रावक 1– पूज्य माताजी कितना अच्छा सोचती हैं। भगवान महावीर उनके मनोरथ को अवश्य पूर्ण करेंगे। एक बात और बताओ, तुमने भगवान महावीर के चार नामों के विषय में बताया लेकिन उनका एक नाम अतिवीर भी है वह कैसे पड़ा?

श्रावक 4– यह भी एक बहुत रोचक घटना है। एक बार भगवान महावीर के ऊपर उपसर्ग हुआ था उज्जयिनी नगरी में....।

श्रावक 2– महावीर स्वामी पर उपसर्ग हुआ था, ये तो मैंने कभी सुना नहीं, पार्श्वनाथ भगवान पर तो सुना था कि कमठ ने उपसर्ग किया था। पर महावीर भगवान पर किसने उपसर्ग किया?

श्रावक 4– भाई! भगवान महावीर पर स्थाणु नाम के एक रुद्र ने उपसर्ग किया था। भगवान महावीर ने दीक्षा के बाद अनेकों स्थानों पर विहार किया। एक बार विहार करते-करते वह उज्जयिनी नगरी पहुँचे। महावीर के संदेशों की गूँज पूरी वसुधा पर गुंजायमान हो रही थी, लोग भगवान महावीर के अनुयायी बनते जा रहे थे, यह बात उस स्थाणु रुद्र के कानों में भी पहुँचती है (विचार मग्न हो जाता है)

(यहाँ पर रुद्र और रुद्राणी को दिखावें उनमें वार्तालाप होता है)

रुद्र– (विचार मग्न चिन्तित अवस्था में बैठा है)

रुद्राणी– स्वामी!स्वामी! क्या बात है स्वामी आप बहुत चिंतित दिखाई दे रहे हैं?

रुद्र– हाँ देवी! मेरी चिन्ता का कारण है एक नग्न योगी, महावीर नाम है उसका।

रुद्राणी– स्वामी! एक नग्न योगी आपकी चिंता का कारण है, यह बात कुछ समझ में नहीं आयी।

रुद्र– देवी! इस नग्न योगी महावीर की ख्याति पूरे ब्रह्मांड में फैल रही है लोग जो अभी तक मेरी पूजा करते थे अब उस नग्न योगी को पूजने लगे हैं, अगर ऐसा होता रहा तो मेरा क्या होगा?

रुद्राणी– फिर तो आपने इसका कोई उपाय भी सोचा होगा स्वामी। आपने क्या सोचा है?

से सुना है। पूज्य माताजी ने भगवान के 2600वें जन्मकल्याणक में सभी भक्तों को सुमेरु पर्वत पर जन्माभिषेक करने की प्रेरणा दी थी।

श्रावक 3– पूज्य माताजी की तो बात ही निराली है, जैसा नाम वैसा काम। माताजी के ज्ञान का तो वर्णन ही नहीं किया जा सकता। अच्छा यह बताओ कि महावीर स्वामी का सन्मति नाम कैसे पड़ा?

श्रावक 4– भैय्या! तुमने बड़ा ही सुन्दर प्रश्न पूछा। यह घटना भी भगवान की जन्मभूमि कुण्डलपुर से जुड़ी है। संजय और विजय नामक चारण ऋद्धिधारी मुनियों के मन में एक शंका हुई। आकाशमार्ग से गमन करते हुए उनकी दृष्टि पालने में खेलते वीरप्रभू पर पड़ी बस उनके मन की शंका दूर हो गई उनने वीरप्रभू का नाम रखा था **'सन्मति'**।

श्रावक 2– तुम तो बड़ी अच्छी-अच्छी बातें बता रहे हो भाई! अच्छा एक बात और बताओ भगवान महावीर स्वामी का महावीर नाम कैसे पड़ा?

श्रावक 4– भाई! हुआ यूँ कि एक बार बचपन में महावीर स्वामी अपने देवरूपी बाल सखाओं के साथ खेल रहे थे (विचार मग्न होता है) (यहाँ पर भगवान महावीर के बालरूप को दिखावें कि वह सखाओं के प्रश्नों का उत्तर दे रहे हैं इतने में एक विकराल सर्प आता है बच्चे डर जाते हैं परन्तु महावीर उस सर्प के मस्तक पर चढ़कर क्रीड़ा करते हैं)।

देवसखा– हे वर्द्धमान! हम यह जानना चाहते हैं संसार में अच्छा मित्र कौन है?

वर्द्धमान– मित्रवर! जो पाप करने से रोके, वही इस संसार में सच्चा और अच्छा मित्र है।

देवसखा– हे वीर! इस संसार में कौन अंधा है, कौन बहरा है और कौन गूँगा?

वर्द्धमान– हे सखा! जो दिन-रात पापादि कार्य करता है वह अंधा, जो धर्म की बातों को न सुने वह बहरा और जो हित-मित-प्रिय-मधुर वचन नहीं बोले वह गूँगा होता है।

(बालक वर्धमान की देव बालकों के साथ चर्चा चल रही है पुनः वे मित्रों के साथ बगीचे में खेलने चले जाते हैं तभी एक देव भयानक विकराल सर्प का रूप रखकर फुंकारते हुए वहाँ पर पहुँचता है, जिसे देखकर सारे बच्चे बचाओ, बचाओ करते हुए भागकर इधर-उधर जाकर छिप जाते हैं लेकिन बालक वर्द्धमान वहीं तटस्थ मुस्कराते रहते हैं)।

देव बालक 1–वर्द्धमान! जल्दी आओ, भाग आओ इधर, नहीं तो यह सर्प तुम्हें डस लेगा।

देव बालक 2–वर्द्धमान! तुम आ क्यों नहीं रहे हो, यह बहुत ही विषधर सर्प है यह तो तुम्हें पूरा ही निगल जाएगा। जल्दी आओ वर्द्धमान, इधर आओ।

देवबालक 3–हे प्रभू! अब क्या होगा! वर्द्धमान तो वहीं खड़े हैं, हट ही नहीं रहे और यह विकराल सर्प तो उन्हीं की ओर बढ़ता चला जा रहा है।

देवबालक 4–समझ में नहीं आता क्या करूँ? अगर वर्द्धमान को कुछ हो गया तो हम माता त्रिशला को क्या जवाब देंगे? सखाओं, देखो देखो! सर्प तो वर्द्धमान के बिल्कुल पास आ गया अब क्या होगा?

(बालक वर्द्धमान अपने सखाओं की बातों को अनसुना करके मुस्कराते हुए निर्भीक खड़े रहते हैं और सर्प के ऊपर चढ़कर क्रीड़ा करने लगते हैं। यह देख सारे देव बालक वर्द्धमान की जय-जयकार करने लगते हैं और वह सर्प देव के रूप में आकर बालक वर्द्धमान के चरणों में गिर जाता है)।

संगमदेव– त्राहि माम् प्रभो त्राहि माम्! मुझे क्षमा कर दो, प्रभो मुझे क्षमा कर दो। मैं संगम नाम का देव हूँ। मैं आपकी शक्ति की परीक्षा करने के लिए आया था। मैं नासमझ था लेकिन अब मैं समझ गया हूँ आप अनंत बलशाली हैं आप वीर ही नहीं महावीर हैं। आज से मैं आपको **'महावीर'** के नाम से अलंकृत करता हूँ।

(सभी महावीर की जय-जयकार करते हैं) (चारों श्रावक फिर एकत्र होते हैं)

श्रावक 4– तो भैय्या! इस प्रकार संगम देव ने वीरप्रभू का महावीर नाम रखा था।

श्रावक 1–वाह भाई वाह! तुम तो पूज्य माताजी के साथ रहकर बड़े ज्ञानी हो गये अच्छा ये बताओ। एकाएक माता जी के मन में कुण्डलपुर का विकास करने की बात कैसे आ गई?

श्रावक 4– अरे भाई! बहता हुआ जल और साधु की प्रवृत्ति एक जैसी होती है। पूज्य माताजी के मन में विचार आया कि भगवान की जन्मभूमि का विकास होना चाहिए तथा वहाँ मंदिरों के साथ-साथ उनके जन्मस्थल का प्रतीक नंद्यावर्त महल बनना चाहिए बस, चल दीं पूज्य माताजी।

श्रावक 2– लेकिन कुण्डलपुर तो बिहार के नालंदा जिले में है सुना है वहाँ की स्थिति अच्छी नहीं है। क्या माताजी को बिहार जाते डर नहीं लगा।

श्रावक 4– अरे भाई! पूज्य माताजी जैन साध्वी हैं और वे साधु-साध्वी सिर्फ कर्मों से डरते हैं और किसी से नहीं। समझे। फिर जहाँ माताजी के चरण पड़ जाते हैं वहाँ सब ओर सुभिक्ष और मंगल ही होता हैं।

श्रावक 3– भाई! अभी तुमने बताया कि माताजी नंद्यावर्त महल बनवाने जा रही हैं यह भला नंद्यावर्त महल क्या है?

श्रावक 4– अरे भैय्या! कुण्डलपुर की धरती पर जिस महल में भगवान महावीर ने जन्म लिया था उस महल का नाम नंद्यावर्त महल था और उसमें भगवान शांतिनाथ का चैत्यालय भी बना है। इसके अलावा वहाँ माताजी की प्रेरणा से कई विशाल-विशाल मदिर भी बन रहे हैं।

श्रावक 1– अच्छा कौन-कौन से मंदिर बनेंगे कुण्डलपुर में।

श्रावक 4– कुण्डलपुर में माताजी की प्रेरणा से 108 फुट ऊँचा भगवान महावीर का मंदिर, प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव मंदिर, त्रिकाल चौबीसी मंदिर और भव्य कीर्तिस्तंभ का निर्माण हो रहा है।

श्रावक 2– इतने विशाल और इतने सारे मंदिर। इतने तो अपने शहर में भी नहीं है। फिर इन मंदिरों को बनाने में तो बहुत पैसा लगेगा।

श्रावक 4– भाई! माताजी की प्रेरणा है कि भगवान महावीर का जन्म हुए 2600 वर्ष हुए हैं, इसलिए हर श्रावक प्रभू के जन्म के एक-एक वर्ष में सिर्फ एक-एक रूपया दान निकाले उसी से तीर्थ का विकास होगा।

श्रावक 3– 2600-2600 रुपये में यह निर्माण कैसे पूर्ण हो पाएगा। इतनी महंगाई है कैसे हो पायेगा, यह सब।

श्रावक 4– भाई! बूँद-बूँद से सागर बनता है फिर माताजी का कहना है कि प्रत्येक दिगम्बर जैन व्यक्ति को इस तीर्थ से जोड़ना है। भक्त होंगे तो स्वयं ही मंदिरों का निर्माण करा देंगे।

श्रावक 1– पूज्य माताजी कितना अच्छा सोचती हैं। भगवान महावीर उनके मनोरथ को अवश्य पूर्ण करेंगे। एक बात और बताओ, तुमने भगवान महावीर के चार नामों के विषय में बताया लेकिन उनका एक नाम अतिवीर भी है वह कैसे पड़ा?

श्रावक 4– यह भी एक बहुत रोचक घटना है। एक बार भगवान महावीर के ऊपर उपसर्ग हुआ था उज्जयिनी नगरी में....।

श्रावक 2– महावीर स्वामी पर उपसर्ग हुआ था, ये तो मैंने कभी सुना नहीं, पार्श्वनाथ भगवान पर तो सुना था कि कमठ ने उपसर्ग किया था। पर महावीर भगवान पर किसने उपसर्ग किया?

श्रावक 4– भाई! भगवान महावीर पर स्थाणु नाम के एक रुद्र ने उपसर्ग किया था। भगवान महावीर ने दीक्षा के बाद अनेकों स्थानों पर विहार किया। एक बार विहार करते-करते वह उज्जयिनी नगरी पहुँचे। महावीर के संदेशों की गूँज पूरी वसुधा पर गुंजायमान हो रही थी, लोग भगवान महावीर के अनुयायी बनते जा रहे थे, यह बात उस स्थाणु रुद्र के कानों में भी पहुँचती है (विचार मग्न हो जाता है)

(यहाँ पर रुद्र और रुद्राणी को दिखावें उनमें वार्तालाप होता है)

रुद्र– (विचार मग्न चिन्तित अवस्था में बैठा है)

रुद्राणी– स्वामी!स्वामी! क्या बात है स्वामी आप बहुत चिंतित दिखाई दे रहे हैं?

रुद्र– हाँ देवी! मेरी चिन्ता का कारण है एक नग्न योगी, महावीर नाम है उसका।

रुद्राणी– स्वामी! एक नग्न योगी आपकी चिंता का कारण है, यह बात कुछ समझ में नहीं आयी।

रुद्र– देवी! इस नग्न योगी महावीर की ख्याति पूरे ब्रह्मांड में फैल रही है लोग जो अभी तक मेरी पूजा करते थे अब उस नग्न योगी को पूजने लगे हैं, अगर ऐसा होता रहा तो मेरा क्या होगा?

रुद्राणी– फिर तो आपने इसका कोई उपाय भी सोचा होगा स्वामी। आपने क्या सोचा है?

रुद्र– एक ही रास्ता है देवी! मुझे उस योगी की योग साधना को नष्ट करना होगा, मैं..........मैं उसकी तपस्या को भंग कर दूँगा।

रुद्राणी– स्वामी! अगर आपकी इच्छा हो तो हमें एक बार चलकर देखना चाहिए कि वह कौन सा योगी है, जिसने आपको चिन्तित कर दिया।

रुद्र– अवश्य प्रिये अवश्य! हम अभी चलकर उस योगी की साधना को देखते हैं। आओ चलें (रूद्र जाता है और ध्यान में बैठे महावीर को देखकर जोरदार अट्टहास करता है)

रुद्र– हा, हा, हा, हा, ये, ये है महावीर तुझे ही लोग वीर महावीर और वर्द्धमान कहते हैं। देखो कैसा ढोंग रचाये बैठा है। हा, हा, हा, हा, विद्यादेवियों, कहाँ हो, प्रकट हो, प्रकट हो विद्यादेवियों प्रकट हो।

विद्यादेवियाँ–हम उपस्थित हैं स्वामी, हमें आज्ञा करें।

रुद्र– विद्यादेवियों! तुमने अनेकों बार अपने रूप कौशल से बड़े-बड़े ऋषि मुनियों की तपस्या भंग की है। आज तुम्हें इस योगी को तपस्या को भंग करना है। अपने रूप और नृत्य कौशल से इस योगी की तपस्या को भंग करो। भंग कर दो इसकी तपस्या को भंग कर दो। (विद्यादेवियाँ नाना प्रकार के नृत्य करके महावीर की तपस्या भंग करने का प्रयास करती हैं परन्तु वह सफल नहीं हो पातीं और स्तंभित हो जाती हैं यह देखकर रुद्र क्रोधित हो जाता है)

रुद्र– यह क्या विद्यादेवियाँ इस योगी को विचलित नहीं कर सकीं कोई बात नही। मैं इसके ऊपर पाषाण की वर्षा कराऊँगा। इतने पत्थर बरसाऊँगा कि यह उसके नीचे ही दब जाएगा। विद्यादेवी कहाँ हो, प्रकट हो विद्यादेवों प्रकट हो।

विद्यादेव– हम उपस्थित है स्वामी आज्ञा करें।

रुद्र– विद्यादेवों! तुम्हें इस तपस्वी की तपस्या को भंग करना है इसके ऊपर पत्थरों की वर्षा करो और तब तक करते रहो जब तक इसकी तपस्या भंग न हो जाए, भंग कर दो इसकी तपस्या को, भंग कर दो।

विद्यादेव– जो आज्ञा स्वामी।

(विद्यादेव अट्टहास करते हुए महावीर पर पत्थरों की वर्षा करते हैं परन्तु अपने उपक्रम में सफल नहीं होते हैं और महावीर के तप के प्रभाव से स्वयं स्वंभित हो जाते हैं यह देखकर रुद्र का क्रोध सातवें आसमान पर पहुँच जाता है)

रुद्र– ये क्या हो रहा है, क्या हो रहा है यह। मेरा हर वार असफल हो जाता है। नहीं छोडूँगा मैं तुम्हें नहीं छोडूँगा, देखता हूँ! तू मेरे वारों से कब तक बचेगा। विद्यादेवों कहाँ हो, कहाँ हो विद्यादेवों प्रकट हो, प्रकट हो विद्यादेवों प्रकट हो।

विद्यादेव– हम उपस्थित हैं स्वामी। आज्ञा करें।

रुद्र– विद्यादेवों! इस तपस्वी के ऊपर जल और ओलों की वृष्टि करो। इतना जल बरसाओ कि यह उसी में डूब जाए। आलों के वार से इसे समाप्त कर दो। समाप्त कर दो इसे।

विद्यादेव– जैसी आपकी आज्ञा स्वामी।

(विद्यादेव भयंकर अट्टहास करते हुए महावीर पर जल की वृष्टि करते हैं परन्तु महायोगी, महामुनि महावीर पर कोई फर्क नहीं पड़ता जल की एक भी बूंद महावीर को स्पर्श नहीं कर पाती है अपितु विद्यादेव स्वयंमेव स्तंभित हो जाते हैं। यह देखकर रुद्र अचंभित रह जाता है)।

रुद्र – यह क्या मेरा यह वार भी खाली चला गया। नहीं, नहीं यह कोई साधारण मानव नहीं है यह महामानव हैं, इस युग के नायक हैं (महावीर के चरणों मे गिरता है) त्राहि माम् प्रभो! त्राहि माम्, मुझे क्षमा कर दें प्रभु मुझे क्षमा कर दे। आज से मैं आपको महति महावीर के नाम से अलंकृत करता हूँ। (भगवान के चरणों में नमस्कार करके तीन परिक्रमा देता है)।

नमो नमः नमो नमः महावीर स्वामी नमो नमः। नमो नमः, नमो नमः; महावीर स्वामी नमो नमः

पुनः ताण्डव नृत्य करके भगवान को नमस्कार करके अपनी भार्या के साथ वापस चला जाता है पुनः श्रावकों की

चर्चा प्रारंभ होती है।

श्रावक 4– तो समझे भैय्या! इस प्रकार से भगवान महावीर का नाम अतिवीर पड़ा।

श्रावक 3– समझ गया भैय्या समझ गया ऐसे महावीर प्रभू की जन्मभूमि का विकास होना तो बहुत ही आवश्यक था। हम आधी रोटी खाएंगे लेकिन भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर का विकास जरूर कराएंगे।

श्रावक 1– हाँ भैय्या! मेरी घरवाली कह रही थी कि मेरे पास इतने जेवर हैं एक हार काम पहनेंगे लेकिन अपने महावीर की जन्मभूमि के विकास में जरूर सहभागी बनेंगे।

श्रावक 2– भाई मैं तो कहता हूँ कि ऐसे वीर प्रभू की जन्मभूमि इस वसुधा का शृंगार है, सबसे बड़ा तीर्थ है इस वीरभूमि की माटी को अपने मस्तक पर चढ़ाये बिना हमारी तीर्थ यात्रा अपूर्ण है। हमें इस वीर भूमि के विकास के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर कर देना चाहिए।

श्रावक 4– आप सब बिल्कुल ठीक कह रहे हैं भाई! पूज्य माताजी ने अभी तक बहुत से तीर्थों का विकास कराया है उन सारे विकास कार्यों को तराजू के एक पलड़े पर रखें और कुण्डलपुर विकास को दूसरे पलड़े पर तो कुण्डलपुर विकास का पलड़ा भारी होगा। क्योंकि माता जी ने यह कोई नया तीर्थ नहीं बनाया बल्कि उपेक्षित पड़े तीर्थ का विकास कराया है।

श्रावक 2– तो बन्धुओं! मैं तो यात्रा पर जा ही रहा हूँ आप लोग भी मेरे साथ चलो। आप सबके साथ रहने से यात्रा का आनंद बहुत बढ़ जाएगा।

श्रावक 1– हाँ हाँ क्यों नहीं, फिर कुण्डलपुर के साथ महावीर स्वामी की दिव्यदेशना भूमि राजगृही और निर्वाणभूमि पावापुररूपी तीर्थ त्रिवेणी के दर्शन भी हो जाएंगे।

श्रावक 3– ठीक है भाई तो अब हम सब एक साथ तीर्थयात्रा पर चलेंगे। हम लोग अभी घर जाकर अपनी तैयारियाँ करके आते हैं। (सभी चले जाते हैं पुनः अपने-अपने हाथों में बैग, अटैची आदि लेकर आते हैं मंच का एक-दो चक्कर लगाते हैं)।

श्रावक 1– ये क्या? क्या यह वही कुण्डलपुर है। इस नगरी का तो रूपक ही बदल गया।

श्रावक 2– हाँ भाई! अब लगता है कि वास्तव में यह भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर है। देखो तो कितने भव्य मंदिरों का निर्माण हुआ है। मन करता है कि बस देखते ही रहें।

श्रावक 3– और यह नंद्यावर्त महल कितना सुंदर है लगता है जैसे साक्षात् वही महल है जैसा महाराजा सिद्धार्थ का रहा होगा।

श्रावक 4– भाई सचमुच! ऐसे पावन तीर्थ की वंदना करके तो मेरा मनमयूर नाच उठा है (माटी मस्तक पर लगाता है) जय हो प्रभू महावीर आपकी जय हो, कुण्डलपुर तीर्थक्षेत्र की जय हो।

(सभी एक साथ मिलकर नृत्य करते हैं) ।

इति शुभम् ।

* * *

अहिंसा का सिद्धान्त सबसे पहले गहन रूप से भलीभाँति तीर्थंकरों द्वारा प्रतिपादित एवं प्रचारित किया गया। इसमें २४वें तीर्थंकर भगवान महावीर (वर्द्धमान) का उल्लेखनीय योगदान है। भगवान बुद्ध और फिर महात्मा गांधी ने भी मन,वचन, काय से अहिंसा के सिद्धांत को आचरण में उतारा।

-प्रो. तानयुन शान (चीन)

महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर थी, है और रहेगी

(जुलाई 2002 में प्रस्तुत)

–**प्राचार्य नरेन्द्रप्रकाश जैन**, फिरोजाबाद
(अध्यक्ष–अ.भा.दि. जैन शास्त्री परिषद)

इतिहास अतीत के अवलोकन का एक माध्यम है। अतीत का स्वरूप परोक्ष और वर्तमान का प्रत्यक्ष है। परोक्ष की प्रत्यक्ष के रूप में प्रस्तुति एक कठिन कार्य है। वक्त के साथ लोगों के नजरिए बदल जाते हैं। देश की सीमाएं भी बदलती रहती हैं। इस बदलाव को जब कोई भी छद्मस्थ प्रत्यक्ष की तरह नहीं देख पाता है तो अनुमानों का सहारा लेता है। चूँकि अनुमान सबके अलग-अलग होते हैं, इसलिए इतिहासग्रंथों में मत-भिन्नताएं पाई जाती हैं। कबीर को कोई हिन्दू मानता है तो कोई मुसलमान। इस तरह के मतभेद ही खोज के विषय बन जाते हैं और लोग अपनी-अपनी अटकलों के आधार पर उन्हें हिन्दू या मुसलमान घोषित करते रहते हैं।

इतिहास लेखन में धर्म एवं सम्प्रदायगत धारणाएं भी भ्रम उत्पन्न करती हैं। भगवान महावीर को ही लें, श्वेताम्बरों के महावीर दिगम्बरों को कभी स्वीकार नहीं हो सकते, दोनों में कोई साम्य नहीं है। भ्रम से बचने का एक ही उपाय है कि हम सब सिद्धान्तरूप में यह स्वीकार करें कि इतिहासज्ञों को जिस धर्म या सम्प्रदाय के विषय में लिखना हो, वे उसके प्रामाणिक ग्रंथों का गहन अध्ययन अवश्य करें। **दूसरे-दूसरे धर्मग्रंथों से उद्धरण देकर या कहीं की ईंट कहीं का रोड़ा जोड़कर यदि इतिहास की इमारत खड़ी की जाएगी तो उसमें अनेक विसंगतियाँ तो रह ही जाएंगी।**

जब सम्पूर्ण दिगम्बर जैन समाज के साथ ही हमारी बिहार सरकार के सभी प्रकाशनों में भी कुण्डलपुर को ही भगवान महावीर की जन्मभूमि के रूप में उल्लिखित किया जाता रहा है, तब हमें किसी नई खोज को मान्यता प्रदान करने के पचड़े में पड़ना ही नहीं चाहिए था। लोगों की आस्थाओं के साथ इस तरह का खिलवाड़ नहीं किया जा सकता। इस तरह यदि हम नई-नई खोजों को मानते रहेंगे तो हमें कई तीर्थस्थान बदलने पड़ सकते हैं। एक ही उदाहरण काफी है, हम सभी दिगम्बर जैन यह मानते हैं कि भगवान महावीर का प्रथम धर्मोपदेश श्रावण कृष्णा एकम् को विपुलाचल पर्वत पर हुआ था। ख्यातिलब्ध साहू परिवार ने वहाँ एक भव्य देशना स्मारक भी स्थापित कर दिया है किन्तु श्वेताम्बर ग्रंथों के अनुसार उनकी प्रथम देशना वैशाख शुक्ला ग्यारस को मध्यमा पावा में हुई थी। क्या हम उनके अनुसार विपुलाचल पर स्थित देशना-स्मारक को मध्यमा पावा में स्थानान्तरित करेंगे? वीरशासन जयंती की तिथि में बदलाव भी क्या हमें इष्ट होगा? ऐसे ही विवाद कुछ अन्य स्थानों के बारे में भी हैं। यदि हम किसी एक ही तीर्थ को दो-दो स्थानों पर मानने के फेर में पड़ गए तो यह समाज भी उसी हिसाब से बंटता चला जाएगा, हमें इससे बचना चाहिए।

हमारे तीर्थंकरों की किसी कल्याणक भूमि के बारे में किसी नई खोज को मान्यता प्रदान करने की कोई बाध्यता ही यदि हमारे सामने हो तो सर्वप्रथम हमें यह देखना होगा कि वह खोज दिगम्बर जैनागम के अनुसार है या नहीं? ग्रंथराज षट्खण्डागम, तिलोयपण्णत्ति, वर्धमानचरित, उत्तरपुराण आदि सभी ग्रंथों में भगवान महावीर के पिता सिद्धार्थ को विदेहदेश की राजधानी कुण्डलपुर तथा उनके नाना चेटक को सिंधुदेश की राजधानी वैशाली का अधिपति बताया गया है। दोनों के वंश भी भिन्न कहे गए हैं। महाराजा सिद्धार्थ नाथवंशी थे तो महाराजा चेटक थे सोमवंशी। नई खोज का मूल बिन्दु यही होना चाहिए था किन्तु सभी इतिहासकारों ने वैशाली की खोज करते समय इस दिगम्बर जैन पक्ष की घोर उपेक्षा की है। उन्होंने वैशाली को विदेह में और कुण्डलपुर को मगध में मान लिया है। दिगम्बर जैनागम से समर्थित न होने के कारण ही हमें यह अस्वीकार्य है। हमारे आचार्यों के कथनानुसार मगध भी विदेहदेश का ही अंग रहा है।

भगवान महावीर की भाषा के आधार पर कुछ श्वेताम्बर विद्वानों ने भी मगधप्रान्त तथा उससे सटे हुए भूभाग को विदेह देश के अंतर्गत माना है। एक श्वेताम्बरग्रंथ ''**निशीथचूर्णि**'' में लिखा है कि-''**मगहद्ध विसय भासा, निबद्धं अद्धमागहं अहवा अट्ठारह देसी भासा णियतं अद्धमागहं**'' अर्थात् जिसका अर्धांश मागधी अर्थात् मगध के अर्धभाग में

बोली जाने वाली भाषा हो तथा शेष भाषा आधे भाग में बोली जाने वाली अन्य अट्ठारह देशी भाषाओं में नियत शब्दों से बनी हो, वह कहलाती है अर्द्धमागधी भाषा। समवायांगसूत्र में भी **''अर्द्धमागध्या''** कहकर अर्धमागधीशब्द की यही व्युत्पत्ति की गई है। इसी आधार पर कुछ श्वेताम्बर विद्वानों ने माना है कि भगवान महावीर का कार्यक्षेत्र मुख्यतः मगध ही रहा है। पुरातत्वविभाग, बिहार के निदेशक श्री अजयकुमार सिन्हा के इन शब्दों से भी यही ध्वनि निकलती है– **''भगवान महावीर यदि वैशाली से संबंधित होते तो उनकी भाषा वैगई होती।''** पं. हरगोविन्ददास और पं. बेचरदास भी मगध को ही उनकी जन्मभूमि मानते हैं।

मगध की माटी बड़ी पावन है। राजगृह के अपने यात्रा विवरण में मुनि दुलहराज द्वारा व्यक्त ये उद्गार कितने मार्मिक हैं-**''जिस प्रान्त में महावीर जन्मे, जिन धूलिकणों में वे खेले, जिन वृक्षों और लताओं के समीप से उनका विहार हुआ, जहाँ वे वर्द्धमान से महावीर बने, वहां आकर हमें अपूर्व गौरव का अनुभव हो रहा है। हम अनिकेत अवश्य हैं किन्तु भगवान महावीर का यह तपोवन हमें अपना घर सा लगता है।''** (शब्दों की वेदी अनुभव के दीप पृ. 226)

''विदेह'' शब्द को कुछ विद्वान जनपदसूचक नहीं मानते। **''कल्पसूत्र''** के बंगला अनुवादक श्री बसन्तकुमार चट्टोपाध्याय ने विदेह का अर्थ **''देह में श्रेष्ठ''** होना माना है। डॉ. शारदानन्दप्रसाद के अनुसार यह शब्द **भगवान महावीर की आत्मस्थ या देहातीत अवस्था का सूचक है।** कुछ लोगों का कहना है कि **जिस प्रदेश में तीर्थंकरों का विचरण हुआ उसका नाम पड़ गया बिहार और चूँकि इसी प्रदेश से अधिकांश तीर्थंकर और मुनिगण देहत्यागपूर्वक देहातीत अवस्था को प्राप्त करते रहे, इसलिए यह ''विदेह'' नाम से प्रसिद्ध हो गया।** जो भी हो, यदि **'विदेह'** को जनपदसूचक भी मानें तो भी इस संदर्भ में मतैक्य का अभाव है। सुप्रसिद्ध श्वेताम्बर जैनाचार्य श्री हस्तीमलजी महाराज अपने शोधग्रन्थ **''जैनधर्म का मौलिक इतिहास''** के प्रथम भाग में लिखते हैं-**''कुण्डलपुर या कुण्डग्राम के संबंध में विद्वान् एकमत नहीं हैं। कुछ इसे मगध देश में मानते हैं तो कुछ इसे अन्यत्र।''** उनका यह कथन दिगम्बर जैनागम की मान्यता के परिप्रेक्ष्य में ही है। वैशाली नगरी भगवान महावीर की जन्मभूमि नहीं हो सकती, इस बारे में दिगम्बर जैनागम स्पष्ट है। श्वेताम्बरों या बौद्धों की दृष्टि में वह **''विदेहदेश''** का अंग हो सकती है, किन्तु दिगम्बर जैन शास्त्रों के आधार पर वह **''सिंधुदेश''** में थी।

कल्पना के आकाश में विचरण करने के लिए विद्याधर होने की आवश्यकता नहीं है। कोई सामान्य मनुष्य भी बुद्धि के पंख लगाकर कल्पनालोक में उड़ सकता है। उदाहरणस्वरूप महापंडित राहुल सांकृत्यायन सरीखे मनीषी की कल्पना का आनन्द लीजिए। वह लिखते हैं कि बसाढ़–वैशाली के आसपास आज भी एक प्रभावशाली जाति रहती है जिसे **''जथारिया''** कहते हैं। उन्होंने जथारिया शब्द की व्युत्पत्ति करते समय उसे भगवान महावीर के ज्ञातृवंश से जोड़ दिया है। वह लिखते हैं-**ज्ञातृ से ज्ञातर, फिर जातर, उपरान्त जतारिया और अन्त में जथारिया।''** लिखने को तो वह लिख गए किन्तु स्वयं जथारिया जाति के लोग अपने को महावीर का वंशज नहीं मानते। महावीर क्षत्रिय-कुलभूषण थे और ये सभी भूमिहार ब्राह्मण हैं। इस तरह की कल्पनाओं में इतिहास नहीं गढ़े जाने चाहिए।

कल्पना करने में डॉ. याकोबी भी किसी से पीछे नहीं रहे। श्वेताम्बरों की गर्भापहरण की घटना का खण्डन करने के लिए उन्होंने एक नई कहानी बनाई। वह लिखते हैं–'

''मेरा अनुमान है कि सिद्धार्थ की दो पत्नियाँ थीं-एक ब्राह्मणी देवानन्दा, जो महावीर की वास्तविक माता थीं और दूसरी क्षत्रियाणी त्रिशला। महान प्रभुताशाली महाराजा चेटक के उच्च सम्पर्कों का लाभ उठाने के लिए महावीर को त्रिशला का दत्तक पुत्र न मानकर, औरस पुत्र कहना अधिक लाभदायक समझा गया, क्योंकि इससे महावीर मातृकुल के संबंधों का उत्तराधिकार प्राप्त कर सकते थे।'' धन्य हैं याकोबी साहब! जो न तो महावीर के अतुल बल से परिचित हैं और न लोकोत्तम तीर्थंकर प्रकृति की महत्ता से ही। श्रद्धाहीन लोग जब कुछ लिखेंगे तो कुछ ऐसा ही तो लिखेंगे। निर्ग्रन्थ महावीर के संबंध में कुछ भी अनुमान लगाने से पूर्व दिगम्बर जैन साहित्य की भागीरथी में अवगाहन किए बिना उनके प्रति न्याय नहीं किया जा सकता।

कुण्डलपुर ही भगवान महावीर की जन्मभूमि है, वैशाली तो हर्गिज-हर्गिज नहीं। वैशाली भगवान महावीर की

विहारभूमि रही है, इससे हम इंकार नहीं करते। कुछ श्वेताम्बर आचार्यों ने जहाँ क्षत्रिय कुण्डग्राम को महाराजा सिद्धार्थ का निवासस्थान माना है, वहाँ श्वेताम्बर अंगसाहित्य के सुप्रसिद्ध टीकाकार आचार्य शीलांक ने **''चउपन्नमहापुरिसचरियं''** का एक उद्धरण प्रस्तुत करते हुए उसे सिद्धार्थ का विहारस्थल लिखा है। पृ. 278 पर अंकित मूलपाठ इस प्रकार है- **''अण्णया य गामाणुगामं गच्छमाणो, कीलाणिमित्त मागओ णियभत्ति परिसंठियं कुण्डपुर णाम णयरं''**। आचार्य शीलांक जैसे शास्त्रज्ञ मुनि द्वारा ऐसा लिखने के पीछे कोई कारण अवश्य होना चाहिए। इतने बड़े विद्वान् बिना सोचे-समझे कुछ लिख डालें, इस पर भला कौन विश्वास करेगा। हमें पूर्ण आशा और अपेक्षा है कि **दिगम्बर जैनकुल में उत्पन्न कोई भी प्रबुद्ध व्यक्ति वैशाली को भगवान महावीर की जन्मभूमि स्वीकार नहीं कर सकता। तीर्थक्षेत्र कमेटी को भी दिगम्बर जैनागम को ही बहुमान देना चाहिए। वैशाली में महावीर का कोई स्मारक खड़ा करो तो करो, पर उसे उनकी जन्मभूमि मत कहो। जन्मभूमि तो सदियों से कुण्डलपुर थी, है और रहेगी।**

* * *

हर्मन जैकोबी का पत्र

Dear Sir,

I had much pleasure in the receiving your letter dated Feb. 27 Which contained good news from you and kind Wishes for me. I also beg to acknowledge receipt of material, which contains useful information of Nalanda and Kundalpur being birthplace of Lord Mahavira. It becomes very useful to me, in many ways. You have urged me to rewrite my article on "Jainism" in the Encyclopedia of religion & ethics. Regarding Kundalpur near Nalanada, there are some references in Tiloipanntti, I agree with them.

I hope, however to induce Prof. W. Sohribring who is without doubt our best Jain Scholar, historian, well groomed in Siddhanta to undertaka a similar work. I am sure that he will do important work for Jain world.

२९ मार्च १९११ को श्री हर्मन जैकोबी द्वारा श्वेताम्बर जैनमुनि श्री विजयधर्म जी महाराज को महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर-नालंदा विषयक लिखा यह पत्र सम्पूर्ण जैन समाज के लिए वास्तव में एक ऐतिहासिक दस्तावेज है। यह ऐतिहासिक दस्तावेज हमें डॉ. अभयप्रकाश जैन, ग्वालियर द्वारा शिवपुरी के एक म्यूजियम से प्राप्त हुआ है—

Mr. K.P. Modi sent me some photographs of Kundalpur.

Hoping your well.

I remain yours sincerely

(HERMANN JACOBI)

कुण्डलपुर (नालन्दा) ही महावीर की जन्मभूमि है

–पं. लालचंद जैन ''राकेश'', गंजबासौदा

यद्यपि **'तीर्थ'** शब्द के अनेक अर्थ होते हैं किन्तु लोक में तीर्थ शब्द का अर्थ पवित्र स्थान के रूप में रूढ़ हो गया है। तीर्थ वे स्थान हैं जिनसे संसार समुद्र तिरा जाए। ये स्थान परम पवित्र होते हैं। इन स्थानों की वंदना से पाप मल धुल जाते हैं, परिणामों में विशुद्धि आती है। इसलिए जैनशास्त्रों में तीर्थों की गणना मंगलों में की गई है।

जैनाचार्यों ने तीर्थक्षेत्रों को तीन भागों में विभक्त किया है– **तीर्थक्षेत्र, सिद्धक्षेत्र एवं अतिशयक्षेत्र।** तीर्थक्षेत्र तीर्थंकरों, सामान्य केवलियों, विशिष्ट आचार्यों के गर्भ, जन्म, तप, ज्ञानकल्याणकों या उनके मंगल विहारों से पवित्र स्थल हैं। सिद्धक्षेत्र वे हैं जहां से तीर्थंकरों या सामान्य केवलियों ने निर्वाण प्राप्त किया हो। अतिशयक्षेत्र वे हैं जिनसे कोई विशेष अतिशय या चमत्कारिक घटना जुड़ी हो। ऐसे ही तीर्थक्षेत्रों में एक तीर्थक्षेत्र है **''कुण्डलपुर''** जो कि बिहार प्रान्त में नालन्दा के पास स्थित है। यही स्थान भगवान महावीर का जन्मस्थान है।

कुछ लोग अपने हठाग्रह के द्वारा वैशाली को भगवान महावीर की जन्मभूमि सिद्ध करने का कुप्रयास कर समाज में भ्रामक स्थिति उत्पन्न कर रहे हैं। यदि आगम, तर्क एवं अनुभव से देखा जाए तो नालन्दा के निकट स्थित कुण्डलपुर ही भगवान महावीर की जन्मभूमि सिद्ध होती है। इस आलेख में हम क्रमशः इन बिन्दुओं के आलोक में सत्य का अवलोकन करेंगे।

हमारे प्राचीन आर्षमार्गी आगम ग्रन्थों यथा– तिलोयपण्णत्ति, वीरजिणिंदचरिउ, पउमचरिउ, जयधवला एवं महापुराण के उल्लेखानुसार नालन्दा कुण्डलपुर ही भगवान महावीर की जन्मभूमि है अतः आगमग्रन्थों के आलोक में ही भगवान महावीर की जन्मभूमि का निर्णय करना चाहिए।

दिगम्बर जैन पौराणिक ग्रन्थों के अनुसार वैशाली तो भगवान महावीर की ननिहाल है अतः ननिहाल में भगवान महावीर जैसे महापुरुष का जन्म मानना लोकपरम्परा के विपरीत है। उसके पक्ष में यह तर्क देना कि कुछ परिवारों में प्रथम प्रसव आज भी ननिहाल में होता है, उचित नहीं है क्योंकि यह महावीर की प्रतिष्ठा के अनुकूल नहीं है। राजा सिद्धार्थ के पास कोई कमी नहीं थी कि वे पत्नी का प्रसव ससुराल में कराते।

मेरे पास ''राजेन्द्र कुमार जैन, महावीर रेस्टोरेण्ट, जैन कलर फोटो लैब, 26-सी, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली'' द्वारा प्रकाशित भारत के दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्रों का सड़क एवं रेलमार्ग द्वारा यात्रा करने का नक्शा है इसमें **नालन्दा का नाम तो है पर वैशाली का नाम तक नहीं।** इससे स्पष्ट है कि वैशाली जैन तीर्थक्षेत्र नहीं है फिर हम वैशाली को भगवान महावीर की जन्मभूमि कैसे कह सकते हैं? कुछ व्यक्तियों द्वारा बाद में उसे महावीर की जन्मभूमि बताकर समाज को भ्रमित किया जा रहा है।

मेरे पास सन् 1991 में ''अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन पब्लिसिंग हाउस, 204, दरीबां कला, दिल्ली'' द्वारा प्रकाशित **''जैन तीर्थ दर्शन''** नाम की पुस्तक है जिसमें पृष्ठ 58 पर नालन्दा कुण्डलपुर का वर्णन करते हुए लिखा है कि **''यही स्थान भगवान महावीर की जन्मभूमि माना जाता रहा है किन्तु अब यह श्रेय वैशाली के कुण्डग्राम को प्राप्त हो गया है।''** सत्यता यह है कि वैशाली-कुण्डग्राम भगवान महावीर की जन्मभूमि नहीं है किन्तु कुछ प्रभावशाली लोग उसे हठधर्मिता द्वारा महावीर की जन्मभूमि सिद्ध करने पर तुले हुए हैं।

शताब्दियों से दिगम्बर जैन नालन्दा-कुण्डलपुर को एवं वहां के जैन मन्दिर को भगवान महावीर की जन्मभूमि मानकर अपने श्रद्धाभाव प्रकट करते रहे हैं और आगे भी प्रकट करते रहेंगे, समाज भ्रमित लोगों के बहकावे में आने वाली नहीं है।

अब हम एक सामान्य से तर्क का सहारा लेते हैं जिससे नालन्दा-कुण्डलपुर ही भगवान महावीर की जन्मभूमि सिद्ध होती है। जहां महापुरुष रहते हैं, उसके आस-पास के क्षेत्र उनके जीवन प्रसंगों से जुड़े रहते हैं। नालन्दा-कुण्डलपुर के आसपास के क्षेत्र नवादा, गुणावा, राजगृही, पावापुरी भगवान महावीर के विभिन्न प्रसंगों से सम्बद्ध हैं जबकि वैशाली

३-६९

के निकट का कोई भी क्षेत्र उनके जीवन से जुड़ा हुआ नहीं है अतः वैशाली को भगवान महावीर की जन्मभूमि मानना तर्कसंगत नहीं है।

अब हम अनुभव के बिन्दु पर आते हैं। सैकड़ों वर्षों से हमारे पूर्वजों ने नालन्दा-कुण्डलपुर को ही भगवान महावीर की जन्मभूमि मानकर वन्दना की है। मुझे अच्छी तरह स्मरण है कि मेरे माता-पिता ने सन् 1955 में इसी क्षेत्र की वन्दना की थी। उनके साथ अनेक जैनबन्धु और भी थे। उनके उपरान्त मैंने भी सन् 1970 के लगभग अनेक यात्रियों के साथ इसी स्थल की वन्दना की। सम्पूर्ण दिगम्बर जैन समाज की भावनाएं भगवान महावीर की जन्मभूमि के रूप में इसी क्षेत्र से जुड़ी हुई हैं। पीढ़ियां गुजर गईं परन्तु किसी के मन में इसके अतिरिक्त अन्य स्थान को भगवान महावीर की जन्मभूमि मानने का विकल्प ही उत्पन्न नहीं हुआ। आज भी सामान्य जैन, जिनकी संख्या 99 प्रतिशत से अधिक है नालन्दा-कुण्डलपुर को ही भगवान महावीर की जन्मभूमि मानते हैं और उसी की वन्दना करने जाते हैं।

कुछ लोग थोथी दलीलें देकर, नया साहित्य छपवाकर, अपनी पत्र-पत्रिकाओं का सहारा लेकर या नक्शे बदलवाकर वैशाली-कुण्डपुर को भगवान महावीर की जन्मभूमि सिद्ध करने का प्रयास कर रहे हैं किन्तु -

सच्चाई छिप नहीं सकती, कभी झूठे उसूलों से।
खुशबू आ नहीं सकती, कभी कागज के फूलों से।।

* * *

चौबीस कल्पद्रुम महामण्डल विधान के शुभ अवसर पर श्री दिग्विजय सिंह (तत्कालीन मुख्यमंत्री-मध्यप्रदेश) द्वारा दिए गए वक्तव्य का संक्षिप्त अंश

(11 अक्टूबर 1997, दिल्ली)

यह मेरा सौभाग्य है कि आज ऐसे धार्मिक पर्व पर, जबकि पूरे देश की जैनसमाज यहाँ उपस्थित हुई है, श्रद्धेय माताजी जैसी दिव्यमूर्ति के दर्शन का लाभ मुझे मिला है। यहाँ पर जो चौबीस कल्पद्रुम विधान का आयोजन हुआ है, मैं समझता हूँ कि आज के दूषित वातावरण की शुद्धि के लिए समय-समय पर ऐसे आयोजन आवश्यक हो जाते हैं।

मध्यप्रदेश में जैन समाज का एक प्रबुद्ध वर्ग है, जिसने आजादी की लड़ाई में भाग लेते हुए अद्वितीय योगदान दिया है। हमारे मध्यप्रदेश में हमें इस बात का गर्व है कि जैन समाज का शासन को हमेशा सहयोग मिलता रहा है। जहाँ पूज्य माताजी जैसी विदुषी उपस्थित हों, वहाँ मेरा लम्बा भाषण कोई महत्त्व नहीं रखता है। मैं इतना ही अनुरोध कर सकता हूँ कि आप सभी संतों का भारत के लिए, मध्यप्रदेश के लिए तथा समस्त मानव समाज के लिए सदैव आशीर्वाद बना रहे ताकि हम सब अपने-अपने क्षेत्रों में फल-फूल सकें और हमारे देश की दिक्कतें, परेशानियाँ दूर हों, सबकी समृद्धि हो सके, आप सभी के आशीर्वाद की अपेक्षा के साथ मैं आपके चरणों में अपना प्रणाम समर्पित करता हूँ।

मध्यप्रदेश की राजधानी भोपाल में किसी भी पार्क में भगवान ऋषभदेव की मूर्ति स्थापित करने के लिए आपने जो प्रेरणा दी है, सो मैं आमंत्रित करूँगा आपमें से कुछ व्यक्तियों को, वे वहाँ आकर उपयुक्त स्थान का चयन कर लें, उस स्थान पर मूर्ति की स्थापना करवा दी जाएगी।

इसके साथ ही मैं पुनः इन सन्तों के श्रीचरणों में प्रणाम करता हूँ।

नोट–ज्ञातव्य है कि भोपाल (म.प्र.) में भगवान ऋषभदेव पार्क के नाम से सुन्दर पार्क निर्मित हो चुका है।

हमारी आस्था में बसा कुण्डलपुर

–डॉ. (श्रीमती) कृष्णा जैन, ग्वालियर

भारतीय संस्कृति में तीर्थों का बड़ा महत्व है। प्रत्येक धर्म के अनुयायी अपने तीर्थों की वंदना यात्रा के लिए भक्तिभाव से जाते हैं। जैनधर्म में तीर्थों का विशेष महत्व रहा है। तीर्थ स्थान पवित्रता, शान्ति और कल्याण के धाम माने जाते हैं। जैन धर्मावलम्बी प्रतिवर्ष श्रद्धाभाव से तीर्थों की यात्रा करते हैं एवं पुण्य संचय तथा आत्मशान्ति का अनुभव करते हैं सम्मेदशिखर के बारे में पूजा में कहा है–

"एक बार वन्दे जो कोई, ताहि नरक पशुगति नहिं होई"

आचार्य कुन्दकुन्द की प्राकृत निर्वाणकाण्ड भक्ति में तीर्थ भूमियों की भेद कल्पना से दिगम्बर समाज में तीन प्रकार के तीर्थ प्रचलित हैं-सिद्धक्षेत्र, अतिशय क्षेत्र, कल्याणक क्षेत्र। तीर्थंकर भगवान जिस नगर में जन्म लेते हैं वह नगर उनकी चरण रज से पवित्र हो जाता है। आचार्य वसुनंदि ने कहा कि तीर्थक्षेत्र के मार्ग की धूल इतनी पवित्र हो जाती है कि इसके संसर्ग से भक्त जन कर्ममल रहित हो जाते हैं, तीर्थयात्रा करने से भवभ्रमण समाप्त हो जाता है, तीर्थक्षेत्र पर द्रव्य लगाने से अक्षय सम्पदा प्राप्त होती है और वहाँ जाकर भगवान की शरण लेने से व्यक्ति जगत पूज्य बन जाता है।

दिगम्बर जैन वाङ्मय में सर्वत्र भगवान महावीर की जन्मस्थली कुण्डलपुर, कुण्डपुर, कुण्डलपुर को ही वर्णित किया गया है। लगभग 2 हजार वर्ष पूर्व श्री यतिवृषभाचार्य द्वारा रचित 'तिलोयपण्णत्ति'[1] आचार्य पूज्यपाद स्वामी रचित निर्वाणभक्ति[2] (5वीं शती ई.) आचार्य जिनसेन कृत हरिवंशपुराण[3] (8वीं शती ई.) आचार्य वीरसेन कृत षट्खण्डागम की धवला टीका[4] (8वीं शती ई.) आचार्य गुणभद्र कृत उत्तरपुराण[5] (9वीं शती ई.) महाकवि पुष्पदंत विरचित वीरजिणंद चरिऊ[6] (9वीं शती ई.) भट्टारक सकल कीर्ति कृत वर्धमान चरित[7] (15 वीं शती ई.) आदि ने कुण्डलपुर को ही जन्मस्थली के रूप में प्रतिपादित किया है।

वर्तमान में भगवान महावीर की जन्मनगरी के रूप में विख्यात नालंदा जिलान्तर्गत श्री दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कुण्डलपुर ही विख्यात है।[8] 23 अप्रैल 1956 से पूर्व तक भगवान महावीर की जन्मस्थली कुण्डलपुर ही सर्वमान्य थी। यही स्थान लोगों की आस्था, श्रद्धा एवं भक्ति का केन्द्र था। लाखों की संख्या में भक्तों ने इसी भूमि को जन्मभूमि के रूप में नमन कर अपने को कृतकृत्य किया है। लेकिन 23 अप्रैल 1956 में कुछ विद्वानों की शोध के आधार पर वैशाली को जन्मभूमि मानने के लिए सरकारी मुहर लगा दी गई एवं सरकार से आर्थिक अनुदान प्राप्त कर वैशाली को जन्मभूमि के रूप में विकसित करने की योजना तैयार हुई। लगभग 50 वर्ष का समय बीत जाने पर भी वैशाली को जन्मभूमि का गौरव प्राप्त नहीं हो सका है। किसी भी स्थान पर स्मारक बना देने से ही वह स्थान पूज्य नहीं हो जाता है। उसके साथ जनमानस की चेतना, उसका हृदय एवं उसके प्राणों का जुड़ना भी अत्यावश्यक है।

बिहार प्रांत में कुण्डलपुर और वैशाली दोनों अलग-अलग राजाओं के अलग-अलग नगर थे। वैशाली के राजा चेटक ने कुण्डलपुर के राजा सिद्धार्थ के साथ अपनी बेटी त्रिशला का विवाह किया था। अतः महावीर की पहचान ननिहाल वैशाली एवं नाना चेटक से नहीं वरन् पिता की नगरी कुण्डलपुर एवं पिता सिद्धार्थ से मानना ही उचित है।

प्रत्येक मनुष्य का जन्म एक ही स्थान पर होता है किन्तु भगवान महावीर जैसे महापुरुष के जन्मस्थान के बारे में तीन मत हमारे सामने हैं। चिंतनीय यह है कि क्या किसी एक महापुरुष की तीन-तीन जन्मभूमियाँ हो सकती हैं। तीर्थंकर की जन्मभूमि पर तो 15 माह रत्नों की वर्षा होती है, अष्टकुमारियाँ गर्भ में माता की सेवा करती है, सौधर्म इन्द्र आकर जन्मकल्याणक मनाता है, उस स्थान का कण-कण पवित्र हो जाता है। ऐसे महापुरुष की जन्मभूमि पर हजारों वर्षों बाद उंगली उठाना उचित नहीं जान पड़ता है।

भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) के संबंध में अनेक आलेख विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में आ रहे हैं जिसमें विभिन्न ग्रंथों के उद्धरणों को हिन्दी अनुवाद सहित प्रमाण के रूप में उद्धृत किया गया है। विस्तार भय से उन्हीं का समर्थन करते हुए सिर्फ अपनी बात कहने का उपक्रम कर रही हूँ। जन्मभूमि के निर्धारण के लिए हमें निम्न बिन्दुओं पर विचार करना अत्यावश्यक है-

(अ) वैशाली के पक्ष में प्रस्तुत साक्ष्यों के आधार पर सरकार के द्वारा वैशाली को जन्मभूमि घोषित कर दिया गया एवं आर्थिक सहायता भी उपलब्ध करा दी गई। किन्तु सिर्फ पैसे से भक्तों की श्रद्धा एवं आस्था नहीं खरीदी जा सकती है। भक्तों के मन मंदिर में तो कुण्डलपुर के महावीर की ही छवि विराजमान हैं। एक नहीं कई-कई बार भक्तों ने कुण्डलपुर के महावीर को जाकर नमन किया है एवं वहाँ की रज को अपने मस्तक पर धारण किया है। स्मारक बनाना एवं उजाड़ना तो बहुत आसान है लेकिन भक्तों के हृदय की आस्था एवं श्रद्धा को किसी दूसरे से जोड़ना अत्यन्त कठिन है। यही कारण है कि विद्वानों एवं शोधकर्ताओं के बीच तो कुण्डलपुर एवं वैशाली का विवाद अनवरत रूप से चल रहा है यह तो बुद्धिजीवियों का बुद्धिविलास है सामान्य भक्त तो अपने मन मंदिर में विराजमान कुण्डलंपुर के महावीर को ही नमन एवं स्मरण करता है।

(ब) जैन समाज के प्रत्येक भक्त की जिह्वा पर प्रतिदिन कुण्डलपुर के महावीर का ही स्तवन आता है। महावीर पूजन में सुबह-सुबह वह स्मरण करता है-

जनम चैतसित तेरस के दिन, कुण्डलपुर कन वरना।
सुरगिरि सुरगुरु पूज कियो नित, मैं पूजों भव हरना।
नाथ मोहि राखो हो शरणा श्री वर्द्धमान जिनराय जी,
मोहि राखों हो सरना।।

सायंकालीन आरती के वक्त वह पुनः गाता है-

ॐ जय महावीर प्रभो, स्वामी जय महावीर प्रभो
कुण्डलपुर अवतारी-कुण्डलपुर अवतारी, त्रिशलानंद विभो।।ॐ जय.।।

सुबह, शाम कुण्डलपुर के महावीर का स्मरण करने वाला भक्त कैसे वैशाली को जन्मभूमि स्वीकार करेगा? यह शोचनीय विषय है।

(स) वैशाली में उत्खनन के दौरान प्राप्त मूर्ति एवं स्वर्णमुद्रा की प्रबल साक्ष्य नहीं हो सकती है क्योंकि भगवान महावीर की ननिहाल थी। वैशाली के नागरिकों ने भी महावीर को उतनी ही श्रद्धा एवं आस्था का केन्द्र माना होगा जितना कि कुण्डलपुर के निवासियों ने। हो सकता है स्मृति स्वरूप कोई स्मारक भी बनाया हो जो आज उपलब्ध नहीं है। अतः मूर्ति एवं स्वर्णमुद्रा प्राप्त होना स्वाभाविक है।

(द) यह तर्क भी अत्यन्त सटीक है कि वैशाली के निकट ही दो तीन किमी.की दूरी पर सिद्धार्थ की राजधानी सिद्ध करने में, बहुत अधिक विकृति उत्पन्न हो जायेगी। इस अल्प दूरी में दो राजाओं की रियासत कभी भी स्वीकार नहीं की जा सकती, नहीं तो राजा सिद्धार्थ को राजा चेटक का घर जँवाई जैसा ही स्वीकार करना पड़ेगा। यदि महावीर को वैशाली का युवराज मानेंगे तो राजा चेटक के 10 पुत्र कहाँ के युवराज होंगे? यह विचारणीय है।

(इ) यह तर्क भी दिया जा रहा है कि भगवान महावीर का एक भी चातुर्मास कुण्डलपुर में नहीं हुआ। ठीक ही है क्योंकि एक बार गृह त्याग देने पर पुनः लौटकर आना संभव नहीं हुआ, कभी मुड़कर देखा ही नहीं। यदि चातुर्मास के लिए महावीर कुण्डलपुर लौटकर नहीं आये तो इसमें आश्चर्य कैसा? आज भी ऐसे साधु संत है जिनका अपनी जन्मभूमि पर एक भी चातुर्मास नहीं हुआ है तो क्या उनकी भी जन्मभूमि पर शंका करना उचित होगा। वैसे दिगम्बर परम्परा के अनुसार तो तीर्थंकरों के चातुर्मास होते ही नहीं है।

(ई) अच्छा तो यही होगा कि हठाग्रह को छोड़ते हुए हमें आगम के दिशा संकेतों को समझने का प्रयास करना चाहिए।

(क) सभी विद्वानों एवं चतुर्विध संघ के सानिध्य में एक खुली बहस का आयोजन हो जिससे सर्वसम्मति से निर्णय हो सके और वह सभी को मान्य हो।

(ख) वैशाली का उत्खनन तीन बार हुआ, कुण्डलपुर का उत्खनन हम 6 बार करायें एवं पुनः शोध संदर्भों, पुरातात्विक उत्खननों एवं ऐतिहासिक साक्ष्यों का अध्ययन कर जन्मभूमि का निर्धारण करे।

हमारा यही परम कर्तव्य है कि काल के तीव्र झंझावात में कुण्डलपुर नगरी का अस्तित्व एवं सीमाएं काफी छोटी

हो गई हैं, उसका जीर्णोद्धार कर उसको पुनः विकसित करने का प्रयास करें। भगवान महावीर की स्मृतियों को सुरक्षित कर ऐसा केन्द्र विकसित करे कि युगों-युगों तक भगवान महावीर की देशना कुण्डलपुर से विश्वभर में अनुगुंजित होती रहे।

पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिका रत्न श्री ज्ञानमती माताजी ने कुण्डलपुर के जीर्णोद्धार का संकल्प लिया है एवं जनमानस की आस्था तथा श्रद्धा को मूर्तरूप देने की प्रेरणा लगातार प्रदान कर रही हैं। सभी आस्थावान दिगम्बर समाज से यह आग्रह है कि वह स्वविवेक का परिचय देते हुए जन्मभूमि कुण्डलपुर के विकास में पूर्ण सहयोग प्रदान करे।

संदर्भ–

1. श्री यतिवृषभाचार्य, तिलोयपण्णत्ति, चउत्थो महाधियारो, पृ. 210।
2. भारतवास्ये विदेहकुण्डपुरे, पूज्यपाद, निर्वाणभक्ति।
3. आचार्य जिनसेन, हरिवंशपुराण, द्वितीय सर्ग, भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली
4. षट्खण्डागम, नवमी पुस्तक, श्रीवीरसेनकृत धवला टीका सहित, चतुर्थखण्ड, जैन संस्कृति संरक्षक संघ, सोलापुर
5. आचार्य गुणभद्र, उत्तरपुराण, पर्व नवम्
6. महाकवि पुष्पदंत, वीरजिणिंद चरिउ, अपभ्रंश भाषा, पांचवीं संधि, भारतीय ज्ञानपीठ दिल्ली 1974
7. भट्टारक सकलकीर्ति, महावीर पुराण, पृ. 73
8. भारत के दिगम्बर जैन तीर्थ, खंड-बंगाल, बिहार, उड़ीसा के तीर्थ, पं. बलभद्र जैन, हीराबाग, मुम्बई 1975
9. अभयप्रकाश जैन 'भगवान महावीर का जन्मस्थान कुण्डलपुर, अवधान, अप्रैल 2002 पृ. 12
10. आचार्य गुणभद्र, उत्तरपुराण पर्व 75।

* * *

कुण्डलपुर जन आस्था का प्रतीक तीर्थ

–डॉ. शेखरचन्द्र जैन, अहमदाबाद
(अध्यक्ष–भारतवर्षीय ऋषभदेव जैन विद्वत् महासंघ)

भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) के प्रति समस्त जैन समाज का वर्षों से अखण्ड श्रद्धान बना हुआ है। श्रद्धालुगण भक्तिभाव के साथ सम्मेदशिखर आदि तीर्थ स्थानों की यात्रा के साथ कुण्डलपुर की यात्रा भी भगवान महावीर की जन्मभूमि के रूप में आकर करते हैं। हमारे दिगम्बर जैन शास्त्रों में, पूजाओं में और आरती आदि में प्राचीन समय से भगवान महावीर और उनकी जन्मस्थली कुण्डलपुर के गुण गाये जाते रहे हैं। इस तरह आज भी जनमानस के हृदय में कुण्डलपुर के प्रति सच्चा श्रद्धान अखण्डरूप से भरा हुआ है।

वर्षों से यह तीर्थ हमारे देश के तीर्थरक्षकों द्वारा उपेक्षित रहा। इसके विकास और गौरव के अनुसार इसकी प्रतिष्ठा के लिए कोई कार्य नहीं किया गया। पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी जो कि ऐसे उपेक्षित तीर्थों के विकास हेतु आजीवन कार्य करती रहीं-उनकी दृष्टि इस ओर गई। पूज्य माताजी ने अनेक तीर्थों का विकास कराया। उन्होंने कहीं अपने नाम से कोई "ज्ञानमती गिरि" नहीं बनवाया अपितु आदि तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की जन्मभूमि अयोध्या, आहारभूमि हस्तिनापुर, तपोभूमि प्रयाग जैसे स्थानों पर मंदिरादि का विकास कर उन्हें वास्तविक अर्थों में तीर्थ स्थान/दर्शनीय स्थान बनवाया। आज हस्तिनापुर का जम्बूद्वीप व प्रयाग की तपस्थली जैनों के लिए यात्राधाम और जैनेतर भाइयों के लिए पर्यटन के केन्द्र बन गये हैं। जहाँ जैनेतर लोग भी जैन भूगोल को समझते हैं और भगवान ऋषभदेव के विषय में जानकारी पाते हैं। इसी श्रृंखला में उन्होंने अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर को सही अर्थों में तीर्थक्षेत्र के रूप में विकसित करने का भगीरथ कार्य किया है। आज वहाँ पर नवनिर्मित सप्तखंड का नंद्यावर्त महल, भगवान महावीर का उत्तुंग शिखर से झिलमिलाता धवल मंदिर, त्रिकाल चौबीसी मंदिर, नवग्रह शांतिजिन मंदिर, ऋषभदेव मंदिर आदि उनकी इस भावना की जीवन्त कथा सुना रहे हैं।

कुण्डलपुर (नालंदा) जैसा कि हम जानते हैं महाराजा सिद्धार्थ की राजधानी रही है। भगवान महावीर की माता महाराजा चेटक-जो वैशाली के राजा थे, उनकी पुत्री थीं। इस तरह भगवान महावीर की ननिहाल वैशाली थी यह निर्विवाद सत्य है।

कुछ दिगम्बरेतर जैन लेखक, बौद्ध धर्मावलंबी एवं हिन्दु विद्वानों ने वैशाली भगवान महावीर की जन्मभूमि थी यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया। उन्होंने कुछ भौगोलिक तर्क भी दिए पर वे यह भूल गये कि प्रदेश की सीमाएं भौगोलिक परिवर्तन व राजकीय विभाजन से भी बदल जाती हैं। उदाहरण के लिए सदियों से बिहार स्थित श्री सम्मेदशिखर जी आज झारखंड में है। तो क्या हम शिखरजी के स्थान को बदल देंगे? इस संदर्भ में हमारे बुजुर्ग विद्वान प्रा. श्री नरेन्द्र प्रकाश जी, पं. शिवचरनलाल जी एवं डॉ. अभयप्रकाश जी आदि अनेक ऐतिहासिक तथ्यों को प्रस्तुत कर चुके हैं। पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी, आर्यिका श्री चंदनामती माताजी ने तथ्यों को पूर्ण पौराणिक साक्ष्यों के आधार पर भी इसे ही जन्मभूमि सिद्ध किया है।

भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) को शत-शत प्रणाम करते हुए पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के चरणों में वंदामि कहकर इतना ही कहूँगा कि हे माँ! आपने जो तीर्थोद्धार का व्रत लिया है उसमें हम सब आपके साथ हैं। हम अपना कार्य आगे बढ़ायेंगे।

* * *

शोध के नाम पर खंडित होती आस्थाएँ

(ऋषभदेशना पत्रिका से साभार)

-मोतीलाल जैन, सागर

आस्था और विश्वास पर ही सामाजिक एकता सहिष्णुता और सद्भावना का पोषण होता है और ज्ञान का शोधन एवं विकास निरंतर होता रहता है। इस धरा पर जब-जब आस्था एवं विश्वास को आघात पहुँचना शुरू हुआ तब-तब महान पुरुषों ने अवतार लेकर टूटते हुए विश्वास और खण्डित होती हुई आस्थाओं को पुनर्जीवित किया।

भगवान वृषभदेव से लेकर अंतिम तीर्थंकर महावीर पर्यंत हजारों विभूतियों ने जन्म लेकर इस धरा को सहिष्णुता और सद्भावना से सराबोर किया। समस्त जीवों का उपकार हुआ और मनुष्य ने अपनी आत्मा से साक्षात्कार कर निर्वाण प्राप्त किया। विवादों से मुक्त वातावरण में ही सद्भावना-सहिष्णुता फलती-फूलती है और समाज में सुखद शांति का वातावरण विकसित होता है।

सद्भावना के अभाव में मनुष्य के विचारों में चंचलता बढ़ती है जिससे अस्थिरता आती है और फिर धीरे-धीरे समाज में विखंडन और टूटन बढ़ती है। इसके परिणाम भयंकर रूप धारण कर आस्था और विश्वास को तोड़ते रहते हैं। समाज भ्रमित होकर कतिपय स्वार्थी तत्वों के मकड़जाल में उलझती रहती है। मूढ़ता और जड़ता इसी का कुफल है जिसे समाज को भुगतना पड़ता है।

उपरोक्त प्रस्तावना लिखने का तात्पर्य मात्र इतना ही है कि पिछले कुछ वर्षों से समाज के कुछ कतिपय नामी गिरामी नेताओं ने लालची धनिक वर्ग को पद का लालच देकर उनके धन-बल पर अपनी सत्ता कायम करने के लिए कुछ बिकाऊ प्रतिष्ठाचार्यों, प्रवचनकर्ताओं और पंडितों द्वारा अपने-अपने पक्ष में प्रचार कराना शुरू कर दिया है। सबने अपना-अपना सत्य प्रचारित करना तो शुरू किया ही दूसरों को असत्य सिद्ध करने में ही जी-जान से जुट गये हैं। अब नौबत मारपीट और कोर्ट-कचहरी तक जा पहुँची है। झूठे सबूत और गवाह भी जुटाए जा रहे हैं।

विडंबना देखिए। एक ओर तो भगवान महावीर की 2600वीं जन्मजयंती धूमधाम से उत्साहपूर्वक मनाने का आयोजन सभी सम्प्रदाय के जैनियों ने विश्वस्तर पर करने का संकल्प लिया और प्रांतीय एवं केन्द्रीय सरकारों से भी सहयोग लेने का प्रशंसनीय प्रयास किया। दिगम्बर, श्वेताम्बर समेत सभी उप-संप्रदायों ने आपसी सहयोग से कार्यक्रम बनाए और उत्तम प्रयास कर अपूर्व उत्साह समाज में जाग्रत किया। इसके लिए संयोजक, विद्वान और श्रेष्ठी वर्ग सभी

प्रशंसा के पात्र बने। यह सराहनीय कार्य किया गया।

परन्तु भगवान महावीर की जन्मस्थली को लेकर जिस प्रकार का प्रचार कतिपय नेताओं, विद्वानों और समाज के प्रतिष्ठित लोगों द्वारा किया जा रहा है, उससे आम जनमानस भ्रमित हो रहा है और उसकी आस्था, विश्वास को गहरा आघात लगा है। स्थान शोध का विषय हो सकता है और शोध कार्य करना अच्छी बात है और ये शोध कार्य आगे भी होते रहेंगे। बस्तियों का उजड़ना फिर अन्यत्र बस जाना भौगोलिक सीमाओं में परिवर्तन होते रहना यह तो समय के साथ होता ही रहता है। इतना तो ध्यान विद्वानों, नेताओं और समाज के प्रतिष्ठित लोगों को रखना ही चाहिए कि महापुरुषों के और देवी-देवताओं के पूजा स्थलों के विषय में जनता की आस्था और विश्वास को ठेस न पहुँचाए। क्षेत्रों पर अधिकार करने और धार्मिक ट्रस्टों में पद हथियाने की होड़ में जनता की धार्मिक भावनाओं के साथ खिलवाड़ करना मात्र अशोभनीय कृत्य ही नहीं, अपराध भी है। जिस कुण्डलपुर को आज तक लगातार 2600 वर्षों से भगवान महावीर की जन्मस्थली मानकर जैन श्रद्धापूर्वक वंदना, पूजा करते चले आ रहे हैं और जिस स्थान से आस्था और भक्ति-भाव प्रेरणा पाते रहे हैं, उसे नकारना कितना खतरनाक हो सकता है, इस पर भी इन प्रचारकों और शोध-कर्ताओं को सोचना चाहिए। कल कोई अन्य शोधकर्ता किसी तीसरी जगह को प्रमाणित करने लगे तो फिर क्या स्थिति बनेगी। नये-नये क्षेत्रों पर गिरियों, मंदिरों आदि का निर्माण तो हो ही रहा है।

अन्त में विनयपूर्वक हाथ जोड़कर मैं यही प्रार्थना करूँगा कि वैशाली को जन्मभूमि कहकर समाज को भ्रमित करने और जन-जन की धार्मिक आस्थाओं को खण्डित करने का यह दुष्प्रचार शीघ्र ही समाप्त किया जाये।

* * *

कुण्डलपुर : एक निर्विवादित भूमि

–इंजी सुल्तान सिंह जैन, रुड़की (उ.प्र.)

भगवान महावीर को निर्वाण हुए 2530 वर्ष व्यतीत हो चुके हैं उनके जन्म के विषय में यह प्रश्न उठाना कि उनकी जन्मस्थली कुण्डलपुर (नालंदा) न होकर वैशाली थी, यह आगम से चली आ रही मान्यताओं को नकारकर सामाजिक सद्भाव को ठेस पहुँचाना है। कोई भी महावीर की जन्मस्थली को अपने यहाँ मानकर इतिश्री ले सकता है। आज महावीर तो नहीं है जो उनसे पूछा जाता, लेकिन तर्क की कसौटी पर सही निर्णय अवश्य लिया जा सकता है। कल को कोई तीसरा खोजकर्ता समुदाय कह दे कि महावीर की जन्मस्थली कुण्डलपुर और वैशाली भी न होकर कुन्दन नगर है और इसके भी पश्चात् कभी समाप्त न होने वाला खोजकर्ताओं का सिलसिला भगवान महावीर की जन्मस्थली को बदलकर बताने में लग जाये तो महावीर को कोई फर्क पड़ने वाला नहीं है। लेकिन हमारे धर्मग्रंथों और इतिहासकारों में भ्रम और खीज अवश्य उत्पन्न होगी। भगवान महावीर तो पूरे भारत के ही नहीं वरन् विश्व की महान् विभूति हैं। इसी प्रकार महावीर की जन्मस्थली को वैशाली मानना कुछ ऐसे मनुष्यों की देन है जिनका धर्म-कर्म से कोई विशेष लगाव नहीं है अपितु एक नया सुर्रा छोड़ना और सामाजिक ताने बाने को ढीला करना मात्र उनका उद्देश्य है। महावीर की जन्मस्थली बताने के उनके पास क्या प्रमाण हैं? किस आधार पर उन्होंने ऐसा सोचा? क्या तर्क है उनके पास अपनी बात के समर्थन में? यदि मैं यह कहूँ कि कुण्डलपुर ही महावीर की जन्मस्थली है तो उसे नकारने के क्या प्रमाण हैं? खोजा वह स्थान जाता है जिसका किसी को ज्ञान न हो। कुण्डलपुर का ज्ञान तो पुराणों और इतिहासकारों ने सदियों पहले दे दिया था। फिर कौन से कारण थे खोजने के? यदि ऐसे आधारहीन कथन पर रोक न लगी तो वह दिन दूर नहीं कि जब पुराने इतिहास का भी खोजकर्ता पुनर्जन्म करके यह कहेंगे कि भारत कभी परतंत्र नहीं रहा। हजार दो हजार वर्ष पश्चात् ऐसी बात कही जा सकती है। मुट्ठी भर लोगों द्वारा वैशाली को भगवान महावीर की जन्मस्थली बताना और सरकार का स्वीकार कर लेना इस बात का सूचक है कि सरकार को जैन अल्पसंख्यक समुदाय में कोई रुचि नहीं है। अन्यथा पूरे प्रकरण को समझने के लिए समस्त जैन शास्त्रों, संदर्भों, विद्वानों और इतिहासकारों की संगोष्ठी होनी

चाहिए थी। ठोस प्रमाण प्रस्तुत किये जाते। जैन समाज में अलगाववादी पंथ होने के पथ निर्मित होने के भी यही कारण हैं कि धर्म के वास्तविक तत्व को अंगीकार न करके अपनी बात को महत्व देते हैं। आज स्थिति यह है कि महावीर की पहचान तो नहीं कर पा रहे हैं लेकिन उनकी जन्मस्थली पर जोर दे रहे हैं। पूरे तथ्यों के साथ सिद्ध किया जा सकता है कि महावीर की जन्मस्थली कुण्डलपुर (नालंदा) ही है वैशाली नही है। यह सोचने की आवश्यकता है कि वे कौन से कारण रहे होंगे कि खोजकर्ता बताने वाले लोगों या समुदाय की दृष्टि महावीर के आचरण पर नं जाकर उनकी जन्मस्थली पर रुकी? यदि महावीर के आचरण को भली प्रकार समझ लिया गया होता तो संभवतः यह विवाद न उत्पन्न होता। किसी व्यक्ति की जन्मस्थली की मान्यता उसके साक्षियों के आधार पर तय होती है। महावीर की जन्मस्थली के साक्षी शास्त्र, पुराण और इतिहास हैं और परम्परागत चली आ रही मान्यता व श्रद्धा है। जिन लोगों ने महावीर की जन्मस्थली वैशाली को माना है निश्चय ही उन्होंने भूल की है। अनजाने में भूल का सुधार हो जाता है लेकिन जानबूझकर भूल का कोई सुधार नहीं है। नए अतिशय क्षेत्रों की खोज करना, तेल के कुंओं की भाँति एक प्रयास न होकर अचानक किसी स्थान पर खुदाई के समय तीर्थंकरों की प्रतिमा या उनके अवशेषों को प्राप्त करना है। कुछ एक लोगों ने किसी प्रतिमा का पृथ्वी में होने का स्वप्न देखा और उसी के आधार पर वहाँ खुदाई करने पर प्रतिमा प्रकट हो गई। अब प्रश्न उठता है वैशाली का कि क्या वह भगवान महावीर की जन्मस्थली है। अर्थात् उनकी जन्मस्थली कुण्डलपुर नहीं है। यदि यह केवल कहा जाता कि उनकी जन्मस्थली वैशाली भी हो सकती हैं तो कुछ समझ कर परिचय मिल जाता। परन्तु दोनों में एक को स्वीकारना और दूसरे को नकारना एक सुनियोजित चाल दर्शाता है। वैशाली निःसंदेह अतिशय क्षेत्र तो हो सकता है। लेकिन 2600 वर्ष बाद उसे जन्मस्थली बताना खोज का कार्य न होकर शास्त्रों और इतिहास को तोड़ मरोड़ कर पेश करना है, जिससे खोजकर्ता का नाम उजागर हो सके। खोज उस चीज की या तथ्य की होती है जिसकी खोज न हुई हो। लेकिन यहाँ खोजकर्ताओं का दावा स्वयं में हास्यास्पद स्थिति में है। खोजकर्ता इस तथ्य को भूल रहे हैं तथा उस असत्य दोष के भी वे भागी हैं जो महावीर की जन्मस्थली वैशाली को मानकर उन्होंने प्रचारित किये हैं। एक व्यक्ति किसी नई वस्तु का आविष्कार करता है, दूसरा व्यक्ति उसके आविष्कार की किसी भी रूप में नकल नहीं कर सकता है। यह पेटेन्ट का नियम है। वैशाली किसी अन्य युगपुरुष की जन्मस्थली हो सकती है। उसका नाम भी महावीर हो सकता है परन्तु वह महावीर नही, जिनकी जन्मस्थली कुण्डलपुर है।

किसी भी नाम का कभी कोई अनुवाद नहीं होता। एक व्यक्ति के कई नाम हो सकते हैं। लेकिन वे आपस में एक-दूसरे के अनुवाद नहीं होते। कुण्डलपुर या कुण्डपुर को कुण्डग्राम इस आधार पर मान लेना कि उसमें कुण्ड लगा हुआ है, पुर का अर्थ ग्राम नहीं है। कुण्डलपुर कस्बा या नगर भी हो सकता है। परन्तु कुण्डग्राम सदैव ग्राम ही रहेगा ऐसा कभी नहीं सुना होगा कि किसी कस्बे या नगर से पूर्व ग्राम लगा हो। कानपुर अपनी पूर्व स्थिति में एक ग्राम था और आज एक समृद्धशाली नगर है। यदि कोई कानग्राम कहकर उसकी प्राचीनता का बखान करने लगे और आज कानग्राम कहे तो लोग उसे क्या समझेंगे। उसका अंदाजा आप स्वयं लगा सकते हैं। उत्तरप्रदेश में शाहपुर (कस्बा जि. मुजफ्फरनगर में है और शाहपुर (मौ.) गोरखपुर में भी है। राजस्थान और अन्य स्थानों पर भी शाहपुर मिल जायेंगे और बहुत से ऐसे और भी नाम हैं जो ज्यों के त्यों अलग-अलग स्थानों पर मिल जायेंगे। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है शाहपुर पढ़कर किसी विशेष व्यक्ति के जन्म का दावा करके उसे खोज का रूप दे दिया जाये। परन्तु महावीर जन्मस्थली के साथ ऐसा ही हुआ। अफसोस की बात तो यह है कि कुण्डलपुर और कुण्डग्राम दोनों के अर्थ अलग-अलग होने पर भी उन्हें समानार्थ देने का प्रयास किया गया है जो इतिहास के साथ उद्दण्डता का सूचक है।

महाराजा चेटक वैशाली के राजा थे और वैशाली भगवान महावीर की ननिहाल थी। ऐसा वर्णन आता है कि महाराज चेटक के दस पुत्र व प्रियकारिणी आदि सात पुत्रियाँ थीं। बताया गया है कि प्रियकारिणी भगवान महावीर की माता थीं। परन्तु आगमानुसार उनकी माता का नाम त्रिशला है जो चेटक की पुत्री थी। पुराणों के अनुसार कुण्डलपुर एक स्वतंत्र राज्य था, जिसके महाराजा सिद्धार्थ थे। यह तो निर्विवाद है कि राजा चेटक की लड़की राजा सिद्धार्थ की पत्नी थीं। राजा सिद्धार्थ के यहाँ राजा चेटक की लड़की का विवाह होना स्वयं में यह दर्शाता है कि राजा सिद्धार्थ चेटक से अधिक प्रभावशाली थे क्योंकि प्रभावशाली व्यक्ति के यहाँ ही लड़की का विवाह करने की परम्परा थी, जो आज भी

है। दिगम्बर परम्परा में स्पष्टतः त्रिशला महाराजा चेटक की पुत्री थी। इस तथ्य से भी इंकार नहीं किया जा सकता है कि महावीर की जननी की जन्मस्थली वैशाली थी जो सत्य है। परन्तु जननी हटाकर महावीर की जन्मस्थली वैशाली थी यह असत्य हो गया। महत्वशाली व्यक्ति को किसी न किसी रूप में सभी उसे अपना संबंधी कहलाने में गर्व का अनुभव करते हैं। यही कारण था कि प्रसन्नता की मुद्रा में राजा चेटक ने महावीर को यदि वैशाली के राजकुमार की संज्ञा दे दी तो उसका अर्थ यह तो नहीं कि वह वास्तव में चेटक के दस पुत्रों का अधिपति था। महावीर क्यों होने लगा वैशाली का अधिपति? यदि वह अधिपति होता, तो कुण्डलपुर का ही अधिपति होता जो वैशाली से श्रेष्ठ था। लेकिन महावीर का वैराग्य स्वभाव होने के कारण उन्होंने अपने कुण्डलपुर के राज्य से ही संयास ले लिया था।

वैशाली को भगवान महावीर की जन्मस्थली बताना अपने में लौकिक दृष्टि से भी स्वीकृत नहीं है। आज भी माताएं अपने बच्चों को अपने पति के घर ही जन्मती हैं। कुछेक अपवाद हो सकते हैं। वह भी तभी होते हैं जब पति का घर बच्चे के जन्मते समय किन्हीं भी कारणों से उपयुक्त व्यवस्था करने में असमर्थ होता है। लेकिन राजा सिद्धार्थ तो राजा चेटक से हर प्रकार से अधिक समर्थ थे। राजघराने में शिशु के जन्म को लेकर महीनों पहले राजमहलों में माहौल ही बदल जाता है। जिस काल की यह बात कही जा रही है कि वैशाली महावीर की जन्मस्थली थी, उस काल में ऐसा भी उल्लेखित नहीं मिलता है कि किसी माता ने और वह भी राजघराने की माता ने शिशु को अपने मायके में जन्म दिया हो। शिशु को मायके में जन्म देना जहाँ मायके वालों के लिए कुछ शर्म का कारण है वहाँ ससुराल वालों की अयोग्यता भी दर्शाता है। वर्द्धमान के जन्म से पूर्व त्रिशला को सोलह स्वप्न दिखे थे। उन पर भी विचार करना आवश्यक है। ये वर्द्धमान के जन्म से कुछ समय पूर्व त्रिशला को कुण्डलपुर में ही दिखे थे। गर्भावस्था में कुण्डलपुर से वैशाली जाना या सफर तय करना वो भी उस काल में जिसमें यात्रा करना बहुत कठिन होता था, कोई भी बुद्धिमान इससे सहमत नहीं होगा।

इतिहास में इस प्रकार की कोई भी घटना देखने को नहीं मिली है। महावीर ने कुण्डलपुर का ही राज-स्वीकार नहीं किया, फिर भला वे वह राजा चेटक के दस पुत्रों के रहते हुए वैशाली का राज्य क्यों लेंगे और न ही चेटक के दस पुत्र अपना राज्य देने देंगे। किसी खोज का आधार वैज्ञानिक सूत्रों पर इतिहास, संस्कृति, रीति-रिवाज और संस्कारों पर खरा उतरना चाहिए। खोज उसकी की जाती है जो न हो, और जो है, उसकी खोज कैसी? यदि कोई इससे विपरीत कहता है तो यह डुप्लिकेट दावा है जो अक्षम्य है। खोजकर्ता कहे जाने वाले को अपना मत कहने से पूर्व परम्परागत मत पर चिंतन कर लेना चाहिए था। यदि बिना सोचे समझे कोई नया सुर्रा छोड़ने से समाज में दरार आने की संभावना होती है तो वह खोजकर्ता के मानसिक अपरिपक्वता को दर्शाता है।

कुण्डलपुर मुझे सपरिवार जाने का मौका मिला, एक सामान्य गाँव, वहाँ के लोगों से मिलकर, वहाँ के लोगों की महावीर के प्रति श्रद्धा देखकर ऐसा लगा जब ये इतने धर्मप्रेमी हैं तो महावीर निश्चय ही अपने चिन्तन में अद्वितीय दिव्य विभूति रहे होंगे। विचारधारा को एक बल मिला,हम सब प्रफुल्लित हो गये। उन लोगों ने बताया कि महावीर बाबा यहीं जन्मे थे। हम धन्य हैं। यदि यह कथन असत्य होता तो कुण्डलपुर के लोग ऐसा कभी भी न कहते कि महावीर बाबा यहीं जन्मे थे। वैशाली के लोगों ने क्यों नहीं कह दिया कि महावीर बाबा यहीं जन्मे थे। ऐसा ज्ञात हुआ है कि वहाँ जन्मते तभी तो परम्परागत लोकोक्ति से कुछ तो पता चलता। स्पष्ट है कि महावीर भगवान वैशाली में नहीं जन्मे थे। यह केवल लोगों के मस्तिष्क की उपज है जो अपने को खोजकर्ता कहलाने की वाहवाही बटोरने के उत्सुक हैं। कुण्डलपुर के विषय में तो महावीर की जन्मस्थली स्वयंसिद्ध है, जैसे एक बच्चे की माँ। लेकिन 2600 वर्ष बाद वैशाली को कहना कि यह महावीर की जन्मस्थली है। इसका दूसरा अर्थ यह भी है क्या वैशाली महावीर की जन्मस्थली है? जैसे धोबी से यह कहना यह मेरा कोट है इसके दो अर्थ हैं। यह मेरा क्या कोट है? क्या यह मेरा कोट है? यह कहने वाले के हावभाव को देखकर ज्ञात हो जाता हैं। वैशाली को महावीर की जन्मस्थली कहने की उनकी मंशा भ्रमात्मक विचारधारा है। ठोस प्रमाणों की अनुपस्थिति में ऐसा ही होता है कि लोगों ने उनकी बात मानी तो ठीक और यदि नहीं मानी तो ठीक। खोजकर्ता ने महावीर को समझा ही नहीं, वे बेचारे क्या समझेंगे उनकी जन्मस्थली को। पहले वे अपने अन्तःकरण को टटोलें कि वे जैनदर्शन और धर्म के कितने पारखी और अनुयायी हैं। किसी तत्व और तथ्य की खोज में खो जाना पड़ता

है। खोज वही होती है। जिसमें अन्य को खीज न हो अथवा दुःख न हो। किसी भी आविष्कार का नियम है कि उससे समाज में संतुलन बना रहे, सुख शांति रहे। यदि कोई नकली नोट छापकर कहता है कि मेरा आविष्कार है तो वह दण्डनीय अपराधी है।

भगवान महावीर की जन्मस्थली को लेकर विभिन्न मनीषियों ने अपनी-अपनी विचारधारा को ही मूल माना है। श्वेताम्बर सम्प्रदाय लिछुआड़ को भगवान महावीर की जन्मस्थली बताता है। लछुआड़ मुंगेर जिले में है। कुछ विद्वान विदेह देश के कुण्डलपुर, कुण्डपुर और कुण्डग्राम को एक ही मानते हैं। जो इस समय वासुकुण्ड या वासोकुण्ड नाम से प्रसिद्ध है तथा मुजफ्फरपुर जिले के सरैया प्रखण्ड में है, यहाँ से प्राचीन वैशाली (बसाढ़) लगभग पाँच किमी. की दूरी पर है। मनीषियों द्वारा यह कहना कि भगवान महावीर का वर्षाकालीन चातुर्मास राजगृह और वैशाली आदि में बहुत से वर्षों में हुआ है और क्षत्रिय कुण्डपुर में एक भी वर्षाकाल चातुर्मास नहीं हुआ था इस आधार पर जन्मस्थली तय नहीं की जाती। मनीषियों ने भगवान महावीर की जन्मस्थली वैशाली सिद्ध करने में जो भी प्रयास किए हैं वे पूरी तरह भ्रमात्मक हैं।

भगवान महावीर की जन्मस्थली कुण्डलपुर बताने के प्रमाण 2000 वर्ष पूर्व के शास्त्रों में वर्णित है यदि इनमें कोई भ्रम हुआ होता तो उसी समय होता, परन्तु जो सत्य है वह सत्य ही रहता है। अब से पचास वर्ष पूर्व भगवान महावीर की जन्मस्थलियों को खोज कहकर स्थान बदले जाने का प्रयास निश्चित रूप से एक षड़यंत्र है। भगवान महावीर के उत्कृष्ट त्याग, सर्वोच्च प्रतिष्ठा और सम्मान-रिद्धि-सिद्धि के धारक उन्होंने लोगों के हृदय में अपना स्थान बना लिया था। उसी से अभिभूत होकर लोगों ने महावीर को एक विशाल रूप से स्वीकार किया था। इस विशालरूप को 20वीं सदी के कुछेक कवियों ने उन्हें विसालिया, वैशालिये अपनी गाथाओं में पुकारा, कविता में भावार्थ लेते समय यदि शब्दों को तोड़-मरोड़ कर लिया जाता है तो वह किसी सीमा तक क्षम्य है परन्तु उसका अर्थ यह कदाचित् भी नहीं है कि विसालिये लिखने पर वैशालीवासी हो गये। महावर भी भारत में एक स्थान है, कल को महावीर की जन्मस्थली को कोई महावर लिखने लगे तो क्या यह स्वीकृत है? कदापि नहीं। इसी प्रकार वैशाली भी महावीर की जन्मस्थली स्वीकार नहीं है। जो मनीषी महावीर की जन्मस्थली वैशाली मानते हैं, उन्हें कविताओं का सहारा न लेकर या किसी संत के कथन मात्र को प्रमाण रूप में स्वीकार न करके यह विचारना होगा कि वे कौन से ठोस तथ्य व प्रमाण हैं जिनसे सभी सहमत हों। वैशाली को महावीर की जन्मस्थली बताने वालों को यह सोचना चाहिए कि जो महावीर की जन्मस्थली लिछुआड़ बताते हैं क्या वे उनसे सहमत हैं? जब महावीर की जन्मस्थली के खोजकर्ता कहे जाने वाले विद एकमत नहीं है तो इनमें सत्य कोई भी नहीं है। खोज उसकी की जाती है जिसका कुछ अता पता न हो लेकिन पता होते हुए वे कौन से तथ्य उभरे हैं जिन्होंने दो भ्रमात्मक विचारधाराओं को जन्म दिया है, इसे जानना भी आवश्यक है। परन्तु उन विदों ने इस पर लेश मात्र भी ध्यान नहीं दिया है। वैशाली को महावीर की जन्मस्थली कहकर उन्होंने एक विषैली विचारधारा को जन्म दिया है। लिछुआड़ को महावीर की जन्मस्थली बताकर धर्म की आड़ में छिपकर दिगम्बरत्व की प्राचीनता जो उनके आड़े आ रही थी उस पर प्रहार किया गया है। महावीर की जन्मस्थली कुण्डलपुर या कुण्डपुर को कुण्डग्राम मानना ठीक नहीं है और न ही तर्कात्मक कथन है। शास्त्र, लोकोक्ति और मेले ही किसी स्थान विशेष के प्रमाण होते हैं। जो महावीर की जन्मस्थली कुण्डलपुर में दृष्टव्य हैं, वैशाली में नहीं है और न ही लिछुआड़ में है।

* * *

सच तो इस नारी की शक्ति, नर ने पहचान न पाई है।
मंदिर में मीरा है तो वह रण में भी लक्ष्मीबाई है।।
हैं ज्ञानक्षेत्र में ज्ञानमती, नारी की कला निराली है।।
सच पूछो नारी के कारण, यह धरती गौरवशाली है।।

जैनियों की ऐतिहासिक धरोहर भगवान महावीर की जन्मभूमि-कुण्डलपुर (नालंदा)

-कुण्डलपुर का ऐतिहासिक स्वरूप-

(फरवरी 2003 में प्रस्तुत)

-डा. ब्रजेशकुमार 'वर्मा', नालंदा (बिहार)

जैनियों का संबंध 'कुण्डलपुर' से अतिप्राचीन काल से ही रहा था और रहेगा यह 'कुण्डलपुर' नगरी ही जैनधर्म के चौबीस तीर्थंकरों में से भगवान महावीर की पावन जन्मभूमि है। वर्तमान में कई आधुनिक इतिहासकारों तथा पुरातत्वविदों ने इस स्थल को दिग्भ्रमित बनाये रखा कि भगवान महावीर की जन्मस्थली कुण्डलपुर नहीं है वैशाली है किन्तु जैन साहित्य ग्रंथों, पुराणों तथा विदेशी यात्रियों के द्वारा तैयार किये गये विवरणों के आधार पर तथा पुरातात्विक अवशेषों के प्रमाण के आधार पर जैन समाज के वरिष्ठ विद्वानों को पूर्ण विश्वास है कि हमारे जैन तीर्थंकरों में भगवान् महावीर की पावन जन्मभूमि 'कुण्डलपुर' ही है।

इस कुण्डलपुर में अति भव्य नंद्यावर्त महल बना हुआ था जहाँ भगवान महावीर का जन्म हुआ था। काल के थपेड़ों ने इस पवित्र भूमि के अस्तित्व को मिटाने का नाना प्रयास करना चाहा किन्तु जैन संतों एवं प्रत्येक जिन धर्मानुयायियों के द्वारा आस्था एवं विश्वास 'कुण्डलपुर' में हमेशा बनाये रहने के कारण आज भी वह जन्मभूमि श्रद्धा का केन्द्र बनी हुई है। वर्तमान समय में 'कुण्डलपुर' में जैनसमाज की सर्वोच्च साध्वी परम पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा द्वारा भव्य नंद्यावर्त महल एवं विशाल जिनमंदिरों का पुनः निर्माण कार्य जारी है। पुरातत्वविदों के अनुसार भी यह ज्ञात होता है कि 'कुण्डलपुर' के दिगम्बर जैन मंदिर के पश्चिम में टीलों में जैन तीर्थंकर भगवान महावीर का प्राचीन एवं पावन भव्य महल जमीन के गर्भ में जीर्ण-शीर्ण अवस्था में पड़ा हुआ है।

अनेक प्रमाणों के अनुसार यह ज्ञात होता है कि वास्तव में भगवान महावीर की जन्मभूमि 'कुण्डलपुर' ही थी। इसके और बहुत सारे प्रमाण नालंदा पुरातात्विक संग्रहालय से प्राप्त जैन तीर्थंकरों की मूर्तियों से जाने जा सकते हैं कि नालंदा पूर्व में जैनियों का ही केन्द्रबिन्दु था किन्तु अन्य धर्म के सम्प्रदायों ने आगे चलकर 'राजनीतिक संरक्षण' के कारण इस धर्म के भाव-भंगिम रूप को परिवर्तित कर दिया।

वर्तमान समय में जो नालंदा विश्वविद्यालय बना हुआ है वह कुछ खोजकर्ताओं के अनुसार जैन तीर्थंकर भगवान् महावीर के प्राचीन राजमहल के पुरातात्विक अवशेष के रूप में जाना जा रहा है। जैन धर्म अनादि निधन है और भगवान महावीर से पूर्व 23 तीर्थंकर इसमें हो चुके हैं, महात्मा बुद्ध भगवान महावीर के समकालीन थे उस समय तक जैनधर्म का एक व्यापक रूप था उस जिनधर्म के अनुयायी मगध प्रांत के राजा उदयन, अजातशत्रु, बिम्बसार और चन्द्रगुप्त मौर्य, बिन्दुसार आदि अनेक राजागण थे। जिनके द्वारा मगध प्रांत व अनेक प्रांतों में जैन गुफाओं, मठों, तथा जैन संस्कृति को प्रत्यारोपित करने का विवरण साहित्य ग्रंथों में मिलता है। दिगम्बर जैनियों की परम्पराओं के अनुसार 'कुण्डलपुर' ही जैनियों के 24 वें तीर्थंकर भगवान महावीर की पावन जन्मभूमि के रूप में आस्था का स्थल है। अतएव यहां कई दशकों पूर्व से ही जैन लोग 'भगवान महावीर की जन्मभूमि' के रूप में दर्शन के लिए आया करते हैं।

उपरोक्त तथ्यों के आधार पर स्पष्ट है कि भगवान महावीर की पावन जन्मभूमि कुण्डलपुर ही है।

जैनधर्म का ऐतिहासिक स्वरूप-जैनधर्म अनादि निधन है इसका कोई निर्माता नहीं है, यह युगों-युगों से प्राणिमात्र के लिए हितकारी है। जैनधर्म के तीर्थंकरों में ऋषभदेव प्रथम, पार्श्वनाथ 23वें तथा भगवान महावीर 24वें तीर्थंकर हैं। इन्होंने जैनधर्म को विशेष रूप से पुष्पित एवं पल्लवित किया। भगवान महावीर के समय हिंसा का अत्यधिक बोलबाला होने से जैनमत की बिखरी पड़ी प्राचीन परम्परा, उसके अहिंसक स्वरूप एवं सांस्कृतिक इतिहास को एक माला के रूप में गूँथकर उन्होंने सजाया और संवारा। इनका जन्म विदेह देश (बिहार प्रदेश) की राजधानी कुण्डलपुर में ई.पू. 599 में आज से 2600वर्ष पूर्व माता त्रिशला देवी (प्रियकारिणी) के पवित्र गर्भ से भव्य नंद्यावर्त महल में हुआ था। नाथवंशीय राजा सिद्धार्थ इनके पिता थे। वर्तमान में कुण्डलपुर (नालंदा) जिला (बिहार प्रदेश) में स्थित है। जैनधर्म के अनुयायी कुण्डलपुर नालंदा को 2600 वर्षों से जन्मकल्याणक से पवित्र भूमि के रूप में पूज़ते आ रहे हैं। लेकिन इधर कुछ दशकों

से कुछ आधुनिक इतिहासकारों ने अपने शोधों एवं खुदाई में प्राप्त मात्र कुछ अवशेषों के माध्यम से वैशाली में एक कुण्डग्राम बनाकर उसे भगवान महावीर की जन्मभूमि बतलाया है। इस क्रम में जैन सम्प्रदाय के कुछ अनुयायी भी दिग्भ्रमित होकर वैशाली स्थित कुण्डग्राम को भगवान महावीर की जन्मभूमि बतलाने लगे हैं और कतिपय शोधकर्ताओं एवं आधुनिक इतिहासकारों के शोधों के आधार पर ही बिहार सरकार शासन ने भी 1956 में वैशाली को भगवान् महावीर की जन्मभूमि स्वीकार कर पाठ्य-पुस्तकों में भी प्रकाशित कर दिया जिससे जनसाधारण भी इस दिशा में दिग्भ्रमित हो गए किन्तु यह जैनधर्म ग्रंथों के आधार पर नितान्त गलत व निराधार है।

अतः आवश्यकता इस बात की है कि भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर की वास्तविकता को स्पष्ट किया जाये जिससे मानव जाति व जैन अनुयायी महावीर की जन्मभूमि के बारे में विस्तृत रूप से सत्य का दर्शन कर सकें तथा जैनधर्म से संबंधित भविष्य में होने वाले शोधों में वास्तविक सत्यों को उद्घाटित कर सकें यदि ऐसा नहीं किया गया तो भगवान महावीर जन्मभूमि के संबंध में मानव-जाति व जैन अनुयायियों के सामने एक विकट समस्या उत्पन्न हो जायेगी। इस संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि जब तक महावीर जन्मभूमि को स्पष्ट नहीं किया जायेगा तब तक संसार का कल्याण होना बहुत ही मुश्किल है। जब हम जैनधर्म के प्राचीन ग्रंथों का अध्ययन करते हैं तो महावीर की जन्मभूमि का पर्याप्त प्रमाण उपलब्ध होता है। जैनधर्म के सार-तत्त्व को ग्रहण कर हम महावीर की जन्मभूमि को विवादग्रस्त होने से बचा सकते हैं। उपर्युक्त परिप्रेक्ष्य में जैनियों की ऐतिहासिक धरोहर भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर की प्रासंगिकता एवं महत्व परिलक्षित होता है।

जैनधर्म में भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर से संबंधित सामग्री का बाहुल्य है। इस सिलसिले में यह कहा जा सकता है कि जैनियों का सर्वप्राचीन ग्रंथ 'तिलोयपण्णत्ति' है जिसमें विभिन्न प्रसंगों में महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर का प्रसंग यत्र-तत्र बिखरा पड़ा है। आवश्यकता इस बात की है कि हम कुण्डलपुर से संबंधित उन बिखरे पड़े प्रसंग रूपी पुष्पों को चुनकर एक माला के रूप में गुम्फित करें जिससे इसके सौन्दर्यवर्धन का कार्य हो सके। मात्र तिलोयपण्णत्ति में ही नहीं बल्कि 'धवला', 'जयधवला', 'उत्तरपुराण', हरिवंशपुराण, महावीर पुराण, वर्धमान चरित्र आदि अनेक ग्रंथों के अवलोकन से भी उपर्युक्त तथ्यों की पुष्टि होती है।

इन ग्रंथों के अतिरिक्त 'षट्खण्डागम', 'वीरजिणिन्दचरिउ' आदि महाग्रंथों के अध्ययन से भी तथ्य से संबंधित तत्त्वों की उपलब्धि होती है। माणिक्यचन्द्र जैन, खण्डवा द्वारा लिखित 'Life of Mahavira' तथा पंडित बलभद्र जैन द्वारा लिखित 'भारत के दिगम्बर जैन तीर्थ' पुस्तक में इस विषय से संबंधित प्रचुर सामग्री प्राप्त हो सकती है। प्राचीन नालंदा विश्वविद्यालय की खुदाई में प्राप्त अवशेषों से भी भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर का स्पष्ट संकेत मिलता है। इसका आशय यह है कि प्राचीन नालंदा विश्वविद्यालय की खुदाई में भगवान ऋषभदेव, भगवान पार्श्वनाथ और भगवान महावीर की मूर्तियों के साथ-साथ प्राकृत भाषा में उत्कीर्ण अभिलेख का भी प्रमाण ज्ञात है और जैनधर्म से संबंधित कई अनेक प्रकार की सामग्री भी मिली है। जिससे पुरातत्वविदों ने यह प्रमाणित किया है कि नालंदा बौद्धों से पूर्व जैनों का पवित्र नगर था जहाँ भगवान महावीर का जन्म हुआ था। कुछ पुरातत्व-विदों के अनुसार यह अनुप्रमाणित है कि नालंदा विश्वविद्यालय की उत्तर दिशा में, जो आज कुण्डलपुर के नाम से जैन सम्प्रदाय में ख्यातिबद्ध है, इसके आसपास ऐतिहासिक स्थलों, टीलों आदि का पुरातत्वविदों द्वारा अन्वेषण कराया जाये तो ऐसा अनुमान है कि भगवान महावीर के भव्य राजमहल नंद्यावर्त के अवशेष को उत्खनन कराकर प्रदर्शित किया जा सकता है। लेकिन वर्तमान में कुछ जैन अनुयायी नालंदा विश्वविद्यालय की खुदाई में प्राप्त अवशेषों एवं जैनधर्म के ग्रंथों के अध्ययन के आधार पर यह बतलाते हैं कि नालंदा विश्वविद्यालय ही कभी नंद्यावर्त महल का अवशेष रहा होगा।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि प्राचीन नालंदा विश्वविद्यालय के खुदाई में प्राप्त अवशेषों, पुरातत्वविदों के प्रमाणित दस्तावेजों, जैन अनुयायियों एवं जैनधर्म से संबंध रखने वाले विद्वानों की सहायता से भी इस विषय से संबंधित सामग्री उपलब्ध हो सकती है। इतना ही नहीं, जैनधर्म के दिगम्बर सम्प्रदाय के ग्रंथों में भी महावीर जन्मस्थली कुण्डलपुर के तथ्यों का अवलोकन किया जा सकता है।

इस प्रकार भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर के परिप्रेक्ष्य में हमें विस्तृत क्षेत्र दृष्टिगोचर होता है। यहाँ पर

प्रयास किया गया है कि जैन धर्म के 24वें तीर्थंकर भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर से संबंधित विस्तृत क्षेत्र का आकलन किया जाये जिससे हम वर्तमान युग को संत्रस्त मानवता एवं जैन अनुयायियों का परित्राण कर यथार्थ को स्पष्ट कर सकें, इसके आधार पर हम केवल वर्तमान जैन सम्प्रदाय का ही कल्याण करने में सक्षम नहीं होंगे बल्कि भविष्य में भी मानवता के संरक्षक के रूप में कार्य करने में सक्षम हो सकेंगे। आज अनुसंधान एवं अन्वेषण की अनेक पद्धतियों का प्रचलन है। उन पद्धतियों में लेखा-जोखा प्रस्तुत करने वाली पद्धति, तुलनात्मक पद्धति, आलोचनात्मक पद्धति, विश्लेषणात्मक पद्धति, पुरातात्विक सर्वेक्षण पद्धति है। प्रस्तुत प्रस्तावित शोध के अनुक्रम में इन विभिन्न गवेषणात्मक पद्धतियों का अवलम्बन व सहयोग लिया जावे क्योंकि किसी एक ही पद्धति से यह काम संभव नहीं है।

चूँकि जैनधर्म के ग्रंथों में अनेक प्रकार की सामग्री प्रचुरता के साथ उपलब्ध है अतः उपर्युक्त विभिन्न गवेषणात्मक पद्धतियों के अवलम्बन के आधार पर वर्तमान शोधकर्ता लेखक भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर से संबंधित एक विशिष्ट कृति का उदाहरण प्रस्तुत करने का इच्छुक है। इस कार्य के लिए विभिन्न पाठ्य-ग्रंथों के अध्ययन की अपेक्षा के साथ ही साथ इस विषय के ज्ञान रखने वाले विभिन्न शिक्षाविदों से विचार-विमर्श की भी कम अपेक्षा नहीं है। इस प्रकार प्रस्तुत शोध-प्रबंध एक विशिष्ट रूप में उपस्थित होकर, मानव-कल्याण में एवं जैनमत के पोषकों के बीच योगदान करने का कार्य कर सकेगा। इसमें किसी प्रकार की शंका नहीं की जा सकती है।

भगवान महावीर का व्यक्तित्व विश्लेषण– 1. कंचनकाया 2. कर्मयोगी 3. अद्‌भुत साहसी 4. लोक-प्रदीप 5. करुणामूर्ति 6. दिव्य-तपस्वी 7. लोक कल्याण और लोकप्रियता 8. स्वावलम्बी 9. अहिंसा के अवतार 10. क्रान्तिदृष्टा 11. पुरुषोत्तम 12. निःस्वार्थ

वस्तुतः तीर्थंकर महावीर के व्यक्तित्व में एक महामानव के सभी गुण विद्यमान थे। वे स्वयंबुद्ध और निर्भीक साधक थे और अहिंसा ही उनका साधन सूत्र था। उनके मन में न कुन्ठाओं को स्थान प्राप्त था और न तनावों को। प्रथम दर्शन में ही व्यक्ति उनके व्यक्तित्व से प्रभावित हो जाता था। यही कारण है कि इन्द्रभूति गौतम जैसे तलस्पर्शी ज्ञानी पंडित भी भगवान महावीर के दर्शनमात्र से प्रभावित हुए और उनके शिष्य बन गए।

यह सार्वजनिक सत्य है कि यदि व्यक्ति के मुख पर तेज, छवि में सौन्दर्य, आँखों में आभा, ओठों पर मंद मुस्कान, शरीर में चारुता, अंतरंग में निश्छल प्रेम हो तो वह सहज में ही अन्य व्यक्तियों को आकृष्ट कर लेता है। महावीर के बाह्य और अंतरंग दोनों ही व्यक्तित्व अनुपम थे। उनका शारीरिक गठन, संस्थान और आकार जितना उत्तम था उतना ही वीतरागता का तेज भी दीप्ति युक्त था।

वृष के समान मांसल स्कन्ध, चक्रवर्ती के लक्षणों से युक्त पदकमल, लम्बी भुजाएं, आकर्षक सौम्य चेहरा उनके बाह्य व्यक्तित्व को भव्यता प्रदान करते थे। साथ ही तपःसाधना, स्वावलम्बन वृत्ति, श्रमणत्व का आचार, तपोपलब्धि, संयम, सहिष्णुता, अद्‌भुत साहस, आत्मविश्वास आदि अंतरंग गुण उनके आभ्यन्तर व्यक्तित्व को आलोकित करते थे। महावीर धर्मनेता, तीर्थंकर, उपदेशक एवं संसार के मार्गदर्शक थे। जो भी उनकी शरण या छत्र छाया में पहुँचा उसे ही आत्मिक शांति उपलब्ध हुई।

निस्संदेह वे विश्व के अद्वितीय क्रांतिकारी, तत्त्वोपदेशक और जननेता थे। उनकी क्रांति एक क्षेत्र तक सीमित नहीं थी। उन्होंने सर्वतोमुखी क्रांति का शंखनाद किया, आध्यात्मिक दर्शन, समाज-व्यवस्था, धर्मानुष्ठान-तपश्चरण यहाँ तक कि भाषा के क्षेत्र में भी अपूर्व क्रांति की। तत्कालीन तापसों की तपस्या के बाह्यरूप के स्थान में आभ्यन्तर रूप प्रदान किया। पारस्परिक खण्डन-मण्डन में निरत दार्शनिकों को अनेकांतवाद का महामंत्र प्रदान किया। इस प्रकार महावीर का व्यक्तित्व आद्यन्त क्रांति, त्याग, तपस्या, संयम, अहिंसा आदि से अनुप्राणित है। ऐसे महामना तीर्थंकर को पाकर निश्चितरूप से कुण्डलपुर नगरी एक ऐतिहासिक और पुरातात्विक धरोहर है। सैकड़ों वर्षों से उपेक्षित इस तीर्थ का सन् 2003 में जैन समाज द्वारा हो रहा विकास नालंदा जिले ही नहीं, पूरे बिहार प्रांत के लिए महान गौरव की बात है। पूज्य ज्ञानमती माताजी जैसी सर्वोच्च साध्वी के हम आभारी हैं और पुरातत्त्व विभाग द्वारा हम लोग कुछ भी सहयोग देने में अपना अहोभाग्य समझेंगे।

⁂

"जो भी बोलूँगा सच-सच बोलूँगा, सच के सिवाय कुछ नहीं बोलूँगा"

(तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ प्रयाग-इलाहाबाद में आयोजित कुण्डलपुर राष्ट्रीय महासम्मेलन के अवसर पर 20 अक्टूबर 2002 को प्रस्तुत)

–प्राचार्य नरेन्द्रप्रकाश जैन, फिरोजाबाद
(अध्यक्ष–अ.भा.दि. जैन शास्त्री परिषद्)

मेरी यह मान्यता है कि हर क्षेत्र का विकास होना चाहिए। वैशाली का भी विकास हो और कुण्डलपुर का भी विकास हो, इसमें हमारी कोई असहमति नहीं है। लेकिन वैशाली का विकास महावीर स्मारक के रूप में हो और कुण्डलपुर का विकास महावीर की जन्मभूमि के रूप में हो। मैं समझता हूँ पचास साल पहले जब वैशाली में भगवान महावीर की जन्मजयंती सरकार की सहायता से मनाना शुरू हुआ था उसके बाद 54-55 साल बीत गए पर इन 55 सालों में वैशाली का विकास नहीं हुआ। उसका कारण मैं यह सोचता हूँ चूंकि वैशाली के आस-पास कोई धार्मिक क्षेत्र विकसित नहीं हुए और वो बिल्कुल एक कोने में पड़ गया। भगवान महावीर से जुड़ी हुई घटनाएं और भगवान महावीर से जुड़ा हुआ कोई भी पवित्र क्षेत्र उसके आस-पास नहीं रहने से लोग वैशाली नहीं गए और चूँकि कुण्डलपुर (नालंदा) के पास पावापुरी, गुणावा, नवादा, सम्मेदशिखर ये सारे के सारे क्षेत्र बसे हुए हैं, इसलिए जो भी शिखर जी की वंदना को जाता रहा है वह इन सारे क्षेत्रों की वन्दना को भी जाता रहा है। इन्द्रभूति गौतम यहीं हुए, महावीर से संबंधित अन्य सारी घटनाएं इसी परिक्षेत्र में हुईं, इसलिए इस क्षेत्र को जनता की श्रद्धा में जन्मभूमि के रूप में मान्यता मिल गई और सैकड़ों वर्षों से जो चीज लोगों की श्रद्धा में रम जाती है उसके विरुद्ध अगर कोई नया क्षेत्र जन्मभूमि के नाम से हम विकसित करना चाहते हैं तो जनता का टोकना, विद्वानों का टोकना स्वाभाविक है।

इस बीच में अगर कोई आपत्ति का स्वर नहीं उठा तो उसका एक ही कारण है कि वहाँ पर प्राकृत इन्स्टीट्यूट खुली और वह महावीर स्मारक के रूप में खुली इसलिए सबका ध्यान यह रहा कि यह तो स्मारक बन रहा है और स्मारक तो महावीर का कहीं भी बन सकता है ननिहाल में भी बन सकता है इसलिए लोगों ने उस पर विशेष ध्यान नहीं दिया। दूसरी एक भूल मेरी दृष्टि में तो बड़ी भूल है वो यह है कि हमारे उस समय के जो तीर्थक्षेत्र कमेटी के पदाधिकारी थे उनसे जाने या अनजाने हुई है। मैं नहीं मानता कि सर्वथा अनजाने ही हुई होगी कुछ न कुछ उनका मनोभाव वैशाली को जन्मभूमि के रूप में स्थापित करने का जरूर रहा होगा, अन्यथा तीर्थक्षेत्र कमेटी की यह जिम्मेदारी थी कि वैशाली को जन्मभूमि के रूप में मान्यता देने से पहले साधु संगीति बुलाई जाती, सब साधुओं का अभिमत जाना जाता, विद्वानों का सम्मेलन बुलाकर इस पर उचित बहस कराई जाती और उसके बाद कोई निर्णय होता तो मैं समझता हूँ कि आंज जो थोड़ी सी विवाद की स्थिति उत्पन्न हो गई है वह नहीं होती। यह चूक हुई है हमारे उन पदाधिकारियों से, जिनके ऊपर वैशाली को जन्मभूमि के रूप में विकसित और स्थापित करने का अपने सपने को पूरा करने का दायित्व था। इस दायित्व को उन्होंने नहीं निभाया और चुपके-चुपके किताबें लिखीं गईं, लेख लिखे गए और अचानक वैशाली को जन्मभूमि के रूप में विकसित करने का नारा अब 56 साल के बाद दिया गया। एक बात मैं दावे के साथ कहता हूँ और ये बात अपने अनुभव की कसौटी पर कसकर जब मैं उसको सही पाता हूँ तो आज आपके सामने रखना चाहता हूँ कि वैशाली में दस करोड़ लगाकर अगर कोई स्मारक बनेगा और उसकी तुलना में कुण्डलपुर में दस लाख लगाकर अगर जन्मभूमि को विकसित किया जायेगा तो आम जनता की सहानुभूति और आम जनता की श्रद्धा कुण्डलपुर में होगी वैशाली में नहीं होगी क्योंकि वातावरण का बड़ा प्रभाव पड़ता है। वैशाली के आस-पास वैसा वातावरण नहीं है।

अब तक केवल तीन प्रयास ऐसे हुए हैं, जिन्होंने इसको विवादास्पद बनाया है। पहला प्रयास वैशाली समिति ने **"जन्मभूमि वैशाली"** के नाम से स्मारिका का प्रकाशन किया और उसमें जैनेतर विद्वानों के एवं कुछ जैन विद्वानों के लेख छपे और उन लेखों में जैन आगम की, जैन शास्त्रों की, जैनपुराणों की जितनी उपेक्षा हो सकती थी उतनी उपेक्षा की गई

और बौद्ध समाज, श्वेताम्बर समाज और भूगोल के आधार पर वैशाली को जन्मभूमि सिद्ध करने की कोशिश की गई और भूगोल के आधार पर जब हम जन्मभूमि सिद्ध करेंगे तो हम महावीर के सिद्धांतों से दस कदम पीछे हटेंगे, क्योंकि भूगोल में तो जो लिखा है वही हमें स्वीकार होगा। दिगम्बरेतर साहित्य में त्रिशला के बाप का नाम नहीं लिखा है तो मैं पूछना चाहता हूँ महाराजा सिद्धार्थ क्या इतने गए बीते राजा थे कि जिस पत्नी को वे ब्याहकर लाए उसका कोई पिता ही नहीं रहा होगा, केवल भाई रहा होगा? आज हम चेटक की बहन के रूप में त्रिशला की चर्चा करते हैं जबकि हमारे पुराणों में उसे चेटक की पुत्री बताया गया है। इस विसंगति को जन्म क्यों दिया गया? हमने अपने आगमों का ये अवर्णवाद क्यों किया? और अगर अवर्णवाद किया तो मेरे प्रश्न का उत्तर क्यों नही दे रहे हैं? मैं यह प्रश्न दो महीने से उठा रहा हूँ कि त्रिशला के पिता का नाम बताइये। ऐसा नहीं हो सकता कि भगवान महावीर की माँ और राजा सिद्धार्थ की पत्नी अनामबाप की बेटी हो ऐसा कभी तीन काल में नहीं हो सकता और यह अवर्णवाद हो रहा है, क्योंकि हम वैशाली को जन्मभूमि भूगोल के आधार पर, बौद्ध ग्रंथों के आधार पर सिद्ध करने की कोशिश कर रहे हैं। जब भी हम उस भूगोल के आधार पर वैशाली की बात को बढ़ाएंगे तो उसमें सवस्त्र मुक्ति का प्रकरण आएगा, उसे हम रोक नहीं सकते, चाहे उसे मैं उठाऊँ और चाहे दूसरे विद्वान् उठाएं। भूगोल में जब महावीर आगे बढ़ते गए और कोल्लाग सन्निवेश के निकट पहुँचे और आनन्द नामक गृहस्थ ने उन्हें देखा तो उसे केवलज्ञान हो गया और हमारी वैशाली समिति जो दिगम्बरों की समिति है उसने इस घटना को बिना टिप्पणी के छाप दिया तो क्या हम भगवान महावीर का चरित्र भानुमती के कुनबे की तरह एकदम लस्त-पस्त एवं अस्त-व्यस्त चरित्र बनाना चाहते हैं? क्या अपने पुराणों में महावीर के बारे में जो लिखा है उस पर हम विश्वास करने को तैयार नहीं है? महावीर का वंश लिच्छिवि हमारे शास्त्रों में कहीं नहीं है भूगोल में, बौद्ध ग्रंथों में है। लेकिन अब बौद्ध ग्रन्थों में उन्हें कुछ भी लिख दिया जाये और हमारे ग्रन्थों में उस नाम से उसका सम्बोधन नहीं हो तो हम उसे कभी तीन काल में स्वीकार नहीं कर सकते।

तो उसमें बहुत सी विसंगतियाँ हैं, उस पर माता चन्दनामती जी ने भी आगम की दृष्टि से लेख लिखा है उसे इस अपेक्षा से नहीं देखना चाहिए कि चन्दनामती माताजी, जो ज्ञानमती माताजी की गृहस्थावस्था की छोटी बहन है, उनके द्वारा दीक्षित हैं, इसलिए माताजी ने जो कहा उन्हें तो उसकी पुष्टि करनी ही करनी है, इस दृष्टि से उसे आप क्यों देखते हैं? सैकड़ों विसंगतियाँ हो गईं वैशाली को जन्मभूमि सिद्ध करने के चक्कर में उस स्मारिका में और उसमें उनका पक्ष कमजोर हुआ मैं यह जानता हूँ क्योंकि जैन आगम के एक भी प्रमाण नहीं दे सके वो उसमें? दूसरा प्रयास हुआ दिल्ली से प्रकाशित होने वाली 'प्राकृत विद्या' के एक विशेषांक में और इस विशेषांक में उससे भी तीन गुनी भूलें हो गईं। तो उन भूलों के बारे में आप पढ़ते रहें। हमारे पं. शिवचरण लाल जी ने लिखा है पर किसी के लिखने से आप उसे मत मानिये। आप तो दि. जैन आगम ग्रंथों को सामने रखकर उस लिखावट को उनसे मिलाइये और अगर वह लिखावट सही हो तो आगम की रक्षा के दायित्व का निर्वाह करने के लिए और जिनवाणी का बेटा होने का अधिकार प्राप्त करने के लिए आपको वह बात कहनी चाहिए और कहनी होगी जो हमारे जैनाचार्यों ने जिनवाणी में लिखी है, उससे परे की कोई भी बात हमें तीन काल में स्वीकार नहीं है।

जो पर्चे मिले हैं, कुण्डपुर का जो नक्शा छपा है नया नहीं है। साहू जी ने मुझे पत्र लिखा कि सन् 1975 में बिहार तीर्थ क्षेत्र कमेटी की तरफ से जैन तीर्थों का इतिहास छपा, तो उसके दूसरे खंड में वह नक्शा दिया गया है और उस नक्शे में पावापुरी है, गुणावा है, नवादा है, नालंदा है, नहीं है तो केवल कुण्डलपुर नहीं है। तो मैं नहीं मानता कि ये बिना प्रयोजन के हुआ होगा। मुझे जो सूचना मिली है वह यही है कि जब वैशाली को जन्मभूमि के रूप में स्थापित करने की चर्चा एक गोष्ठी में आई तो कुछ विद्वानों ने खड़े होकर उसका विरोध कर दिया और उस विरोध को देखकर उन्हें लगा कि अगर हम जनचर्चा में इस विषय को लाएंगे, सबके सामने इसको परोसेंगे, विद्वानों एवं साधुओं की संगीति इस पर बिठाएंगे तो हमारी दाल गलने वाली नहीं है क्योंकि जिनवाणी में एक भी प्रमाण नहीं है जो वैशाली को जन्मभूमि सिद्ध कर दे। इसलिए उन्होंने गोष्ठी बुलाने का विचार त्याग दिया, साधुओं से परामर्श करने का विचार त्याग दिया और चुपके-चुपके उस नक्शे के आधार पर वैशाली को जन्मभूमि कहना शुरू कर दिया। ये सबसे बड़ा घातक है। मैं किसी भय से, किसी स्नेह से, किसी लोभ-लालच से कुण्डलपुर का समर्थन नहीं कर रहा हूँ। जन्मभूमि कुण्डलपुर में बने या

वैशाली में बने मेरी दृष्टि से इस पर कोई फर्क नहीं पड़ता। ये तो जमीन का टुकड़ा है, जिस जमीन के टुकड़े को हम जन्मभूमि मान लें, जिसमें अपनी श्रद्धा जमा लें, उसको हम प्रणाम करेंगे, जहाँ भी मंदिर बनेगा वहाँ जाकर चावल चढ़ाएंगे और माथा झुकाएंगे इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। लेकिन अगर कहीं गलत जगह पर हमने जन्मभूमि बना ली और उससे महावीर के सिद्धान्तों का लोप होने लगा तो हमारे लिए सबसे ज्यादा चिंता की बात होगी। चिंता हमें जमीन के टुकड़े की नहीं है, चिंता हमें भगवान महावीर के सिद्धांतों को सुरक्षित रखने की है और इस सुरक्षा में अगर कोई बाधा पड़ती है, तो हमें कभी स्वीकार नहीं होगी। इसलिए बन्धुओं! मैं निवेदन करना चाहता हूँ जिनवाणी के मंथनों को किसी पार्टी बंदी के आधार पर हमें नहीं कहना चाहिए, किसी ग्रुप के आधार पर नहीं कहना चाहिए, किसी संघ या संगठन के कहने से हमें उसे नहीं मानना चाहिए। हमें तो अपनी आंखों के सामने आगम रखना चाहिए, जिनेन्द्र भगवान की वाणी रखनी चाहिए और मैं चुनौती पूर्वक आप सबसे ये निवेदन करना चाहता हूँ जितने भी भाई यहाँ बैठे हैं जिनवाणी की एक पंक्ति में जन्मभूमि के रूप में अगर वह वैशाली का वर्णन दिखावें तो माताजी का साथ आज छोड़ दूंगा और उनके साथ मिल जाऊँगा मेरी चुनौती स्वीकार करें। कोई चुनौती स्वीकार करने को तैयार नहीं है और जो जिनवाणी में नहीं लिखी, जो बौद्ध ग्रंथों में लिखा है, श्वेताम्बर ग्रंथों में लिखा है, भूगोल में लिखा है उसको जो आचार्य पूज्यपाद और आ. वीरसेन की वाणी कहकर प्रचारित किया जा रहा है यह तो और ज्यादा खतरनाक बात है। जो हमारे आचार्य ने कहा ही नहीं उसका उल्टा करके अपनी तरफ से उसमें वैशाली जोड़कर उसे आचार्यों की वाणी कहना मेरी दृष्टि में अपराध है, जिनवाणी का अवर्णवाद है और ये अवर्णवाद हम विद्वान कभी करना नहीं चाहेंगे।

इतनी सी भूमिका के बाद मैं सोचता हूँ कि पूरे देश में कुण्डलपुर के प्रति जो श्रद्धा है, वैशाली में दस करोड़ लगाकर भी उस श्रद्धा से भक्तों को विचलित नहीं किया जा सकेगा। सदियाँ बीत जायेंगी लेकिन कुण्डलपुर जिसको हजार साल से हम वन्दते रहे हैं, सौ साल से अगर किसी जंगल में पड़ी हुई किसी अप्रतिष्ठित प्रतिमा को लोग चावल चढ़ाते रहें भक्ती से, तो उसकी पंचकल्याणक करने की जरूरत नहीं होती और जहाँ नौ सौ साल से लोग भगवान महावीर की जन्मभूमि मानकर वहाँ उनकी कल्याणक तिथि मनाते रहे हों वह स्थान भले ही भूगोल की दृष्टि से जन्मभूमि नहीं भी हो, तो भी नौ सौ साल की पूजा-प्रतिष्ठा के बाद स्थापना निक्षेप से वह जन्मभूमि बन चुकी है। एक छोटा सा सवाल पूछना चाहता हूँ सच्चा-सच्चा बोल दें कि 50 साल के कुण्डलपुर में जो भक्तों का दान आता रहा, वह कुण्डलपुर में नहीं लगकर कहाँ लग गया? क्यों नहीं इसका विकास हुआ? बस इतनी सी जिज्ञासा के साथ कहना चाहता हूँ कि माताजी ने तो एक आगमनिष्ठ सवाल उठाया हैं उसके लिए माताजी के प्रति मैं नत हूँ क्योंकि कोई छोटा-मोटा आदमी यदि इस सवाल को उठाता तो उसे चुटकियों में हवा में उड़ा दिया जाता। अब माताजी जैसा शक्तिशाली और आगमनिष्ठ व्यक्तित्व जब इस सवाल को उठाता है तो हिन्दुस्तान उनके पीछे चल पड़ता है। माताजी ने यह सवाल उठाया इसलिए हम इनके साथ हैं और यदि हमारे श्रीमान् साहू रमेशचन्द्र जी तीर्थ क्षेत्र कमेटी के द्वारा ये घोषणा कर दें कि कुण्डलपुर का विकास महावीर जन्मभूमि के रूप में वो करायेंगे तो माताजी से सबसे पहला निवेदन करने वाला नरेन्द्रप्रकाश होगा कि आप अब हट जाइये इन्होंने दायित्व ले लिया है इनको इसका विकास करने दीजिये इसमें कोई बाधा नहीं है, लेकिन वो विकास करते नहीं ओर दूसरा करे तो वैशाली की टांग बीच में अड़ाकर उसको गिराने की कोशिश करते हैं, यह दो काम अब चलने वाले नहीं है।

कुण्डलपुर का सवाल उठ चुका है, पूरी सिद्दत से उठ चुका है, पूरी ताकत से उठ चुका है और दुनिया की बड़ी से बड़ी हस्ती कुण्डलपुर को जन्मभूमि की मान्यता और श्रद्धा से पृथक् नहीं कर सकती। मैं सच्चे दावे के साथ, अपनी पूरी अन्तर्कामना के साथ ऐलान करना चाहता हूँ कि माताजी ने और जितने तीर्थ बनाए अच्छा किया। साधुओं का ये काम ही नहीं है कि साधु इन चक्करों में पड़ें लेकिन जब श्रावक लुंज-पुंज हो जाये, श्रावक अपने कर्तव्य को भूल जायें, अपने दायित्व को भूल जायें तो फिर साधु चुप भी तो नहीं बैठ सकता क्योंकि समाज की, धर्म की, मर्यादा की रक्षा का प्रश्न उनके सामने है। **जितने भी तीर्थ विकसित किये माताजी ने, वे तराजु के एक पलड़े में और यह कुण्डलपुर तराजू के दूसरे पलड़े में।** और यह इनका सबसे भारी काम होगा, यह भी मैं कहना चाहता हूँ, धन्यवाद।

* * *

कुण्डलपुर-कुण्डलपुर-कुण्डलपुर

–रामजीत जैन (एडवोकेट)
लश्कर (ग्वालियर) म.प्र.

सन् 1963 की बात है, हमने टकसाल गली, दानाओली लश्कर ग्वालियर में एक पुराना मकान क्रय किया था। इससे पूर्व किराये के मकान में रहते थे। मकान पुराना होने से सुधार एवं मरम्मत आदि का काम चल रहा था। लकड़ी का काम बढ़ई कर रहा था। बढ़ई को कुछ मंत्र सिद्धि थी या कुछ अनायास ही था, हमारी पत्नी से बोला-"बौहरी, आप कहीं बाहर तीर्थयात्रा पर अतिशीघ्र जाने वाली हो।" हमारी पत्नी ने कहा-"भैया! हमारे ऐसे भाग्य कहाँ? हमारे पास पैसा नहीं है, तीर्थयात्रा कैसे जावेंगे?" बढ़ई दृढ़ता से बोला-'मेरी बात गाँठ बाँध लो, आप जरूर तीर्थयात्रा को जाएंगी।' उन दिनों आर्थिक स्थिति भी नहीं थी और कभी भी तीर्थयात्रा की कोई कल्पना भी नहीं थी और उस समय तक कोई तीर्थयात्रा की भी नहीं थी। बात आई गई हो गई।

कलकत्ते में काँग्रेस का अधिवेशन था। मेरे परम मित्र स्व. श्री मदनलाल मोदी-ऑल इंडिया कांग्रेस कमेटी के सदस्य थे और मैं अपने वार्ड कमेटी का मंत्री था। श्री मदनलाल मोदी बोले-'एक रेलवे की रिजर्व गाड़ी आवेगी उसमें स्थानों के कांग्रेस जन कलकत्ता जाएंगे।' पहले मैं सकुचाया-परन्तु यकायक रुपयो की व्यवस्था हो गई। एक केस कमिश्नर नियुक्त हुआ था और एक अन्य-प्रकरण में पंच निर्णय अन्य अभिभाषक पंचों के साथ पंच नियुक्त हुआ था अतः रुपयों की व्यवस्था हो गई। हमने श्री मोदी से हाँ कर दी और तय हुआ कि जाते में आते मैं हम श्री सम्मेदशिखर जी की यात्रा वन्दना हेतु पार्श्वनाथ स्टेशन जावेंगे।

सायंकाल हम घर आये और पत्नी से कहा कि हम कलकत्ता जावेंगे और रास्ते में शिखर जी की यात्रा करेंगे। पत्नी का मन कुछ फीका कि तुम अकेले जाओगे, हमें भी साथ ले चलो। हमने कहा कि रुपयों की व्यवस्था तो है परन्तु परिवार के साथ जाने में कुछ कमी पड़ेगी। विचार-विर्मश हुआ और एक किरायेदार ने रुपयों की व्यवस्था कर दी।

हम, हमारी पत्नी कपूरी देवी, हमारी दो लड़कियाँ प्रीति एवं मंजू तथा हमारे बड़े साले साहब श्री हेमराज जी यात्रा को रवाना हुए। गाड़ी का डिब्बा रिजर्व था। अतः टिकट लिया, बैठ गये। उस डिब्बे में हमारे ग्वालियर के और भी कांग्रेसी अभिभावक और मोदी जी भी थे।

हम पार्श्वनाथ स्टेशन उतर पड़े। शिखरजी की वंदना की और उस समय सीधी ग्वालियर के लिए कोई ट्रेन न होने के कारण हम गया जी आ गये। जैन धर्मशाला में रुके। जैन मंदिर के दर्शन करने के बाद बोधगया भी गये फिर ग्वालियर के लिए चलने को हुए तो धर्मशाला का मैनेजर बोला-'वकील साहब! आप इतनी दूर आये हो, नजदीक में राजगृही है जिसे पंच पहाड़ी कहते हैं, वहाँ के दर्शन नहीं करोगे?' उस समय तक हमको तीर्थों के बारे में कोई जानकारी नहीं थी अतः उत्सुकतावश बस द्वारा राजगृही गये। वहाँ दर्शन वंदना करने के बाद पुनः घर वापिस आने को थे कि धर्मशाला का मैनेजर बोला-'वकील साहब! भगवान महावीर की जन्मस्थली कुण्डलपुर और निर्वाणभूमि पावापुर के दर्शन नहीं करेंगे? जिज्ञासा हुई और पूछा–जाने की क्या व्यवस्था है?" मैनेजर बोला-"यहाँ से जीपें जाती हैं और नालंदा विश्वविद्यालय जिसके खुदाई में अंश निकले हैं, फिर कुण्डलपुर एवं पावापुरी के दर्शन कराकर शाम को यहीं आ जाएगी।' अतः जीप की रु. 45 उस समय तय हुए। जीप की और हम रवाना हुए। नालंदा विश्वविद्यालय की तीन मंजिल खुदाई में निकली थी और काम चल रहा था, उसे देखा। कुण्डलपुर पहुँचे। गाँव में भीतर घुसे और एक जगह पहुँचे वहाँ एक जिनालय छोटा सा और उसके आगे चरण बने थे। वहाँ से पावापुरी में जाकर दर्शन किये और सायंकाल तक वापस राजगृही आ गये। दूसरे दिन पटना स्टेशन से बनारस होते हुए आगरा गये और आगरा से ग्वालियर आये।

इतनी भूमिका लिखने का आशय केवल इतना ही है कि सन् 1963-64 तक नालंदा विश्वविद्यालय के निकट कुण्डलपुर ही भगवान महावीर की जन्मस्थली समस्त जैन जगत में मान्यता प्राप्त थी और आज भी है और आगे भी रहेगी। अब आगे चलते हैं।

नालंदा और गुप्त वंश–ऋषभदेव के बड़े पुत्र भरत इस अवसर्पिणी काल के प्रथम चक्रवर्ती सम्राट् थे और इन्हीं के नाम से देश का भारतवर्ष नाम पड़ा। भरत चक्रवर्ती के अर्ककीर्ति नामक पुत्र हुआ जिसने सूर्यवंश की स्थापना की। इस परम्परा में राजा सगर चक्रवर्ती हुए और सगर चक्रवर्ती की परम्परा में अयोध्या के राजा रघु व अज हुए। अज के पुत्र दशरथ तथा दशरथ के राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न चार पुत्र हुए।

इसी परम्परा में ऐतिहासिक गुप्तवंश का प्रथम राजा श्रीगुप्त था जिसने नाग-वकाटकों द्वारा मगध से शक शासन का उच्छेद कर दिए जाने के समय नालंदा से 40 योजन पूर्व की ओर एक छोटा सा राज्य स्थापित कर लिया था। उसका उत्तराधिकारी घटोत्कचगुप्त था जिसने महाराजा की उपाधि धारण की। इसका पुत्र चन्द्रगुप्त प्रथम था और उसने महाराजाधिराज की उपाधि धारण की। गुप्तवंश का वही प्रथम सम्राट था और सन् 319-20 में इसके राज्याभिषेक से ही गुप्त संवत् की प्रवृत्ति हुई मानी जाती है। इसने सन् 315-328 तक राज्य किया।

समुद्रगुप्त (328-378 ई.) एक पराक्रमी, विजेता, चन्द्रगुप्त प्रथम का उत्तराधिकारी एवं सम्राट् था। इसने अनेक छोटे-बड़े राजाओं को परास्त किया। मालव, अजुनायन, योधेय, माद्रक, आमीर आदि गणराज्यों से आधीनता स्वीकार कराई। सम्पूर्ण भारत में अपनी विजयपताका फहराई। नवीन सिक्के चलाये।

चन्द्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्य (379-414 ई.) अपने ज्येष्ठ भ्राता रामगुप्त की मृत्यु के पश्चात् गद्दी पर बैठा। उसने भारतवर्ष से शकों का उच्छेद किया और विक्रमादित्य की उपाधि धारण की तथा उज्जैनी को राजधानी बनाया। चीनी यात्री फाह्यान (399-414 ई.) ने इसी के समय में भारत यात्रा की।

वह साहित्य रसिक और गुणीजनों का आश्रयदाता था। कालिदास आदि उसकी सभा के नवरत्न थे। साम्राज्य में सुखशांति और समृद्धि थी। ज्ञान-विज्ञान और कला की अभूतपूर्व उन्नति ने इस युग को भारतीय इतिहास का स्वर्णयुग बना दिया। तत्पश्चात् चन्द्रगुप्त द्वितीय के पुत्र कुमारगुप्त प्रथम महेन्द्रादित्य (414-455 ई.) गद्दी पर बैठा। गुप्तवंश की शक्ति इस समय चरम सीमा पर थी। इसके काल में नालंदा विश्वविद्यालय का उदय हुआ।

इन महान उपलब्धियों की प्रसिद्धि के कारण ही कुण्डलपुर की पहचान नालंदा के निकट कुण्डलपुर से हुई। परिणामतः आज से 1500-1600 वर्ष पूर्व से तो कुण्डलपुर की प्रसिद्धि नालंदा के निकट रही है। इससे पूर्व न जाने कितने वर्षों से यही कुण्डलपुर की मान्यता चली आ रही है और हमारा पूर्ण विश्वास है कि भगवान महावीर का जन्म इसी कुण्डलपुर में ही हुआ है। इसके पश्चात् आज तक यही मान्यता चली आ रही है जिसे कि वैशाली के समर्थक भी मानते हैं कि सन् 1945 से पहले तक नालंदा के नजदीक वाले कुण्डलपुर को ही जैन समाज की मान्यता थी।

हम जून 1953 की अनेकांत पढ़ रहे थे। उसके पृष्ठ 23 पर डॉ. कस्तूरचंद कासलीवाल (जयपुर) का एक लेख पढ़ रहे थे। इसमें 14वीं शताब्दी की एक रचना मिली। रचना का नाम 'चउवीसी' है। इसमें जैनों के वर्तमान 24 तीर्थंकरों का अति संक्षिप्त परिचय दिया है। इसके रचयिता 'वेल्ह' कवि है। स्वयं कवि ने अपना परिचय दिया है। वे परवार जाति में पैदा हुए थे। उनके धर्मशाह, पैतूसाह और उदैसाह तीन भाई थे। वे टिहड़ा नगरी के रहने वाले थे। कवि ने रचना को संवत् 1371 वैशाख सुदी 3 गुरुवार रोहिणी नक्षत्र एवं ब्रह्मयोग में समाप्त की थी। कवि ने महावीर का परिचय निम्न प्रकार दिया है–

कुंडलपुर सुर वलउ सिद्धारथ तहि राउ।
प्रियकारिणी तसु राणी एव देल्ह पमणेय।।
वीर जिनेश्वर नन्दनणु जिहि कंपायउ मेरू।
सात हाथ काया पमाण लक्षणु सींहु सुणेहु।
बरसि बहत्तरि जासु आउ सो कहिउ णिरुत्तु।
पावापुरी उजाणमांहि णिव्वाणु पहंतु।

कविवर वृन्दावन ने चौबीसी पूजन लिखी है। कविवर वृन्दावन का शाहाबाद जिले के बनारस व आरा के मध्य बारा नाम के ग्राम में वि. 1842 में जन्म हुआ। ये अग्रवाल वंश के गोयल गोत्रीय थे। पीछे वि. सं. 1860 में बारा छोड़कर काशी रहने लगे। भाषा के प्रसिद्ध कवि थे। कविवर ने वर्धमान पूजन में लिखा है–

जनम चैतसित तेरस के दिन, कुण्डलपुर कन वरना।
सुरगिर सुरुगुरु पूज रचायो, मैं पूजों भव हरना।।
नाथ मोहि राखो हो सरना।।

हरिवंश पुराण संस्कृत ग्रंथ की हिन्दी भाषा-पं. दौलराम जी जयपुर (विक्रम की 19वीं सदी) प्रकाशक गृहविरति ब्रह्मचारी श्रीलाल जैन काव्यतीर्थ महामंत्री श्री शांतिसागर जैन सिद्धान्तप्रकाशिनी संस्था, श्री महावीर जी, प्रकाशन वर्ष मार्च 1963-प्रथम अधिकार पृष्ठ 16 से।

'जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र विषै बड़ी विभूतियों से भरा विदेहनामा देश है सो देश लक्ष्मीकर स्वर्ग के समान है............उस देश विषै कुण्डलपुर नामा नगर मानो सुख का सागर है..............यहाँ अंतिम तीर्थंकर ऊर्धलोक से चयकर माता के गर्भ में आए। उस नगर विषै राजा सिद्धार्थ होता भया। उस राजा के प्रियकारिणी नामा पटराणी जिसका दूजा नाम त्रिशला। चैत्र सुदी तेरस उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र विषे जन्मे।'

पुरानी जिनवाणी में बीसवीं शताब्दि के कवियों ने अनेकों भजन लिखे हैं जिनमें भगवान के जन्मोत्सव पर 'कुण्डलपुर में बधाई' की अनेकों रचनाएं हैं। हजारों वर्षों की आस्था भक्ति एक झटके में मीटिंग बुलाई जाकर 'माता ज्ञानमती' के प्रति भर्त्सना का पास करके मिटाई जा सकेगी? अरे! इससे तो विश्वास में दृढ़ता आएगी क्योंकि प्रस्ताव पास करने वालों का ज्ञान कोष खाली हुआ जान पड़ता है।

पौराणिक संदर्भ – जिनेन्द्र वर्णी-जैनेन्द्र सिद्धान्त कोष-भाग-1 क्षुल्लक जिनेन्द्र वर्णी-प्रकाशक-भारतीय ज्ञान पब्लिकेशन पंचम संस्करण-1997 पृ. 379

प्रमाण नाम	वर्तमान भव की जन्मस्थली	विशेष नाम
महावीर	कुण्डलपुर	कुण्डलपुर

पद्मपुराण (ई. 677) आचार्य रविसेन का भाषा रूपान्तर हिन्दी भाषाकर पं. दौलतराम जी (वि. सं. की 19वीं सदी) 'पद्मपुराण'-प्रकाशक सस्ती ग्रंथमाला कमेटी, प्रकाशन वर्ष-6 फरवरी 1974 तृतीय बार-विंशान्ति पर्व, पृ. 235-238।

"कुण्डलपुर नगर, सिद्धार्थ पिता, प्रियकारिणी माता।
उत्तरा फाल्गुन नक्षत्र, शाल वृक्ष, पावापुर, महावीर तुझे
मंगल करहु, आप समान करहु 24"

'पद्म पुराण' का संक्षिप्त रूपान्तर-सिंघई परमानन्द मास्टर सागर-नवम परिच्छेद पृ. 84-90 वर्धमान महावीर, पृ. 90।

"भगवान पार्श्वनाथ के मोक्ष जाने के अढ़ाई सौ वर्ष बीतने पर श्री वर्धमान तीर्थंकर ने कुण्डलपुर (बिहार) में पिता सिद्धार्थ के गृह माता प्रियकारिणी (त्रिशला) से जन्म लिया।"

ग्वालियर में महात्मा गांधी जी की प्रतिमा है। इस पर फूल मालाएं पहनाई जाती हैं। दो अक्टूबर को प्रार्थना करते हैं। सत्याग्रह के लिए उल्लास भी करते हैं। क्या महात्मा गांधी की जन्मभूमि ग्वालियर मान लिया जावे? हम जो कहना चाहते हैं–

यह विवाद भगवान महावीर के छब्बीस सौवें जन्मदिवस पर क्यों? छोटी कक्षाओं में महावीर को जैनधर्म का संस्थापक पढ़ाया जा रहा है, कोई विरोध नहीं?

हायर सैकेन्ड्री की पुस्तकों में 23 तीर्थंकर काल्पनिक बताये जाते हैं, कोई विरोध नहीं? तीर्थक्षेत्र गिरनार का अस्तित्व नष्ट किया जा रहा है, कोई विरोध नहीं? कोई भर्त्सना प्रस्ताव नहीं–क्यों?

अगर किसी को वैशाली के कुण्डग्राम को जन्मस्थान मानना है तो माने, कौन रोक रहा है परन्तु दूसरों की भावना को ठेस पहुँचाने का आपको कोई अधिकार नहीं। अर्थात् हम तो आगम के आलोक में कुण्डलपुर (नालंदा) को ही भगवान महावीर की जन्मभूमि मानते हैं क्योंकि वही जन्मभूमि थी है, और सदा रहेगी।

* *

भगवान महावीर की जन्मस्थली से गूंजेंगे उनके संदेश

–कैलाशचंद जैन सर्राफ, लखनऊ
(मुख्य संयोजक–उ.प्र. सर्राफा एसोसिएशन)

परम पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी (ससंघ) दिल्ली से पद यात्रा करते हुए कुण्डलपुर क्षेत्र पर जंगल में मंगल का दृश्य उपस्थित कर रही हैं। पूज्य माताजी ने एक साल के अन्दर इलाहाबाद (तपस्थली), बनारस, सारनाथ, गया एवं राजगृही आदि स्थानों पर भगवान महावीर की वाणी का प्रचार करते हुए उत्तर प्रदेश व बिहार की जनता को एक नया आयामं दिया।

जिन महावीर स्वामी के शासनकाल में हम लोग चल रहे हैं, उनके जन्म स्थान की ओर न तो किसी संस्था का ध्यान गया और न किन्हीं साधु-साध्वियों का। सदियों से तीर्थंकर की जन्मस्थली क्यों उपेक्षित रही, इसका जवाब किसी के पास भी नहीं है। हमनें बड़े-बड़े तीर्थों का जीर्णोद्धार कराया, तीर्थोद्धार की अनेक योजनाएं बनाई गई, नये-नये तीर्थों का निर्माण कराया गया, किन्तु जहाँ पर यात्रियों के ठहरने एवं खानपान के लिए व्यवस्था न थी वहां पर समाज के किसी भी व्यक्ति का ध्यान ही नहीं गया। यह तो पूज्य आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी का प्रयास एवं भगवान महावीर स्वामी का चमत्कार कहिए जो इतने विशाल मंदिर इतने कम समय में भगवान की जन्मभूमि में निर्मित हो गये, जहाँ अब कोई भी यात्री आकर भगवान महावीर स्वामी के पादमूल में बैठकर शांति का अनुभव कर सकता है। उत्तरमुखी विराजमान खड्गासन महावीर स्वामी मानो तो यहां की धरती से सम्पूर्ण विश्व को मानवता, करुणा, दया, प्रेम का संदेश प्रसारित कर रहे हैं। महावीर ने कहा कि धर्म धारण करने की दो परम्पराएँ हैं-एक तो श्रमण परम्परा और दूंसरी गृहस्थ परम्परा। दोनों का लक्ष्य एक ही है। हमें संसार में रहते हुए भी इसमें आसक्ति नहीं करनी चाहिए। सदैव सद्विचार रखने चाहिए, मन में दया और दान की भावना प्रत्येक गृहस्थ को रखनी चाहिए। संयम और नियम मानव जीवन को ऊँचाइयों तक ले जाने में समर्थ साधन हैं और अपना लक्ष्य सदैव धर्मध्यान में लगाने से परम्परा से मोक्ष सुख की प्राप्ति होती है। श्रमण परम्परा को अनेकों केवली, श्रुतकेवली एवं आचार्यों ने अक्षुण्ण रखा। उत्तर भारत में जैनाचार्यों का आगमन धीरे-धीरे कम होते-होते लुप्त ही हो गया। इस बीसवीं सदी में आचार्य शांतिसागर महाराज ने दक्षिण भारत से उत्तर भारत में अपने संघ सहित पदार्पण किया। श्रावकों को उपदेश देते हुए आचार्यश्री ने बताया कि श्रावक को रात्रि भोजन नहीं करना चाहिए, पानी छानकर पीना चाहिए, सप्त व्यसनों तथा पांचों पापों से दूर रहना चाहिए। अपनी आत्मशुद्धि के लिए स्वाध्याय, संयम, तप, दान आदि छह क्रियाएं करनी चाहिए। सरल चित्त के धारक श्रावकों ने इसे अपनाया। कुछ ने त्यागी बन कर जीवन का कल्याण कर लिया तो बहुतों ने गृहस्थ से सद्गृहस्थ बनकर अपना भविष्य संवारा। उन्हीं के विद्वान शिष्य आचार्यश्री वीरसागर महाराज ने श्रमण परम्परा का निरतिचार पालन किया और आचार्य शांतिसागर महाराज की आज्ञानुसार उनके समाधिमरण के पश्चात् क्षुल्लिका वीरमती माताजी को उनका ज्ञान देखकर आर्यिका दीक्षा प्रदान की, नाम दिया आर्यिका ज्ञानमती माताजी और कहा कि संयम अभूतपूर्व रत्न है तथा ज्ञान से बढ़कर इस संसार में कोई वस्तु नहीं है। पूज्य ज्ञानमती माताजी जी ने गुरु से तमाम शिक्षाएं ग्रहण कीं और योग्य शिष्या बनकर साधु-साध्वियों को ज्ञानार्जन कराने लगीं। इस कलिकाल में किसी भी आर्यिका माताजी ने या किसी दिगम्बर साधु ने इतने विपुल जैन साहित्य की रचना नहीं की। लगभग दो सौ पचास से ज्यादा ग्रंथों को लिखकर एक कीर्तिमान स्थापित किया। जैन-जगत एवं विद्वत् वर्ग में हर्ष की लहर दौड़ गई। यदि माताजी ने न्याय के ग्रंथों का सृजन किया तो व्याकरण भी अछूता नहीं रहा। गृहस्थों के मार्ग का वर्णन किया तो साधुचर्या पर भी अपनी लेखनी चलाई जो समाज में मान्य हुई।. बदलते परिवेश के अनुसार संस्कृत के विधानों के बाद हिन्दी के पूजन विधानों की रचना का जो क्रम पूज्य माताजी द्वारा शुरू हुआ, वह अविरत चल ही रहा है। आज जितने विधान भारत की वसुन्धरा पर हो रहे हैं, उसमें अधिकांश पूज्य आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा ही रचित हैं। इन्हीं की शिष्या एवं गृहस्थावस्था की छोटी बहन 'आर्यिका अभयमती माताजी' तमाम संकटों और उपद्रवों को झेलकर भी निर्दोषचर्या का पालन कर रही हैं और समय-समय पर लेखन कार्यों को भी आयाम दे रही हैं।

आर्यिका चंदनामती माताजी से जैन समाज और विद्वान वर्ग बहुत परिचित है, जिनकी मधुर और ओजस्वी वाणी ने एक अलग ही पहचान बना ली है। इतना ही नहीं लेखन कार्य में निरन्तर अभ्यास से आज उनकी रचनाएं अत्यंत लोकप्रिय हैं। ऐसे ही संघस्थ पूज्य क्षुल्लक श्री मोतीसागर महाराज, कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार की उपस्थिति एवं निराबाध प्रतिमाह सुचारू रूप से सम्यग्ज्ञान का सम्पादन, वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला के ग्रंथों का प्रकाशन कम महत्व नहीं रखता।

पूज्य माताजी ने अपनी दूरदर्शिता से अपने शिष्यों को प्रेरित किया और उसी प्रेरणा से ये महत्वपूर्ण कार्य आज बिहार की धरती एवं भगवान महावीर के पादमूल में सम्पन्न हो रहे हैं।

पूज्य चंदनामती माताजी ने इस महान कार्य में अपनी योग्यता का भरपूर उपयोग किया। इस कारण इस रचना में चारचांद लग गये। पूज्य क्षुल्लक मोतीसागर महाराज ने अथक परिश्रम करके इस निर्माण कार्य को गति प्रदान की तो भाई कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार ने रात-दिन एक करके ऐसा सुन्दर निर्माण कराया कि पंचकल्याणक प्रतिष्ठा में आने वाले दर्शनार्थी जहां भावविभोर होकर झूम उठे, वहीं मुख्य अतिथि के रूप में बिहार के राज्यपाल, रेलमंत्री श्री नितीश कुमार एवं भारत के रक्षामंत्री श्री जार्ज फर्नांडीज ने अपने को धन्य माना और कहा कि बिहार की ये धरती जो मानवीय मूल्यों की स्थापना में अग्रणी थी, आर्यिका माताजी की वजह से पुनः धन्य हो गयी और हम सबका यह कर्तव्य है कि सब मिल-जुलकर भगवान महावीर स्वामी के कल्याणकारी उपदेशों को जन-जन तक पहुँचाये। हम अपनी विरासत को भूल गये थे, जिसे माताजी ने पुनः याद दिलाकर बिहार के गौरव को बढ़ाया है। बिहार सदैव से जैन तीर्थंकरों एवं साधु-साध्वियों के विहार का स्थान रहा है और इसीलिए इसका नाम बिहार पड़ा।

इस पुनीत कार्य में संघ की सभी बहनों ने दिल्ली से कुण्डलपुर (नालंदा) तक बहुत बड़ा सहयोग दिया, जिसने सफलता के लिए नींव के पत्थर जैसा कार्य किया है। पूज्य ज्ञानमती माताजी ने बहुत बड़ा साहस कर कुण्डलपुर तीर्थ को बचाया और अब यहां पर चातुर्मास स्थापना वह अपने संघ सहित चार माह महावीर स्वामी की जन्मभूमि की पावन माटी पर व्यतीत करेंगी। इतिहास साक्षी है कि सदियों से किसी आचार्य या किसी आर्यिका माताजी ने इस जन्मभूमि में चातुर्मास नहीं किया, चूंकि छोटा सा गांव कुण्डलपुर है परन्तु यहां की पवित्र माटी में वह सुगंध आज भी मौजूद है। कुण्डलपुर के ग्रामीण अंचल के निवासियों द्वारा माताजी को देवी का रूप ही माना जाता है, बड़ी श्रद्धा और भावना से वे उन्हें पूजते हैं। तमाम लोगों ने मांस, मदिरा एवं जुआ आदि व्यसनों को हमेशा-हमेशा के लिए त्याग दिया है। क्षुल्लक जी महाराज एवं कर्मयोगी रवीन्द्र जी को यहां की जनता ने अपना विशेष स्नेह दिया है और उनका खूब आदर करते हैं। 'स्वामी जी' ही कहक़र संबोधित करते हैं।

निश्चय ही चार माह बहुत शांतिपूर्वक धर्मध्यान, स्वाध्याय, लेखन, चिन्तन और मनन के होंगे। प्रत्येक आने वाले श्रद्धालुओं के लिए अब यहां भोजन एवं सुन्दर आवास की व्यवस्था कमेटी द्वारा कराने का प्रावधान किया गया है । एक बार पुनः महावीर की जन्मस्थली से महावीर के संदेशों की गूंज सारे विश्व को जाएगी।

* * *

त्याग तपस्या की मूरत, तुम ज्ञान ध्यान की प्रतिमा हो।
कलियुग की सुकुमार तपस्वी, नारी की गुण गरिमा हो।।
ब्राह्मी माँ के पदचिन्हों पर, चलकर लुटा रहीं चन्दन।
गणिनी माता ज्ञानमती जी, स्वीकारो मेरा वन्दन।।

कुण्डलपुर

(भगवान महावीर की जन्मस्थली–पूजा एवं भजनों के अन्तर्गत)

–श्रीमती उषा पाटनी, इंदौर
(सहसम्पादिका–ऋषभदेशना)

नृप सिद्धार्थ सूर्य के घर जनमें चन्द्र सलोने,
त्रिशला की ममता के कर में चेतन बने खिलौने।
कुण्डलपुर का जनमानस आनंदित हो हर्षाया,
नंद्यावर्त महल में जब महावीर ने जनम है पाया।।

यह निर्विवाद सत्य है कि इतिहास के परिप्रेक्ष्य में ही वर्तमान को देखा जा सकता है। चाहे लेख हो या पूजा-पाठ, स्तुति हो या आरती, जब भी कोई रचना होती है, मनगढ़ंत नहीं होती है, अपितु प्रासंगिक होती है जिसे हम जिनवाणी के रूप में श्रद्धानवत होकर स्वीकार करते हैं। भगवान महावीर का जन्म आज से 2600 वर्ष पूर्व कुण्डलपुर में हुआ था यह सर्वविदित है। कुण्डलपुर जैन धर्मावलम्बियों की मान्यतानुसार वह स्थान है जो कि बिहार शरीफ से 13 किमी. एवं राजगृही से 16 किमी. दूर है। नालंदा से 3 किमी. दूर बड़गाँव के बाहर एक जिनमंदिर के क्षेत्र को भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर के नाम से जाना जाता है जो कि सदियों से हमारी आस्था का केन्द्र है। तीर्थराज सम्मेदशिखरजी की यात्रा करने वाले शत-प्रतिशत धर्मावलम्बी मार्ग में भगवानमहावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर के दर्शन करने अवश्य ही जाते हैं। वहाँ एक परकोटे में जिनमंदिर में भगवान महावीर की मूलनायक प्रतिमा है तथा मंदिर के बाहर चबूतरे पर एक छत्री बनी है जिसमें भगवान महावीर के चरण चिन्ह हैं। यह दुर्भाग्य है कि हमारे कई तीर्थ हमारी अवहेलना की वजह से आज जीर्ण-शीर्ण अवस्था में आ गये हैं और हमारी जागरूकता के अभाव में उन पर अन्य धर्मावलम्बियों का अधिकार होता जा रहा है।

वर्तमान में आर्यिका गणिनीप्रमुख 105 श्री ज्ञानमती माताजी के अथक प्रयासों से भगवान महावीर की जन्मस्थली कुण्डलपुर (नालंदा) का विकास कार्य तीव्र गति से चल रहा है। तीर्थ विकास के प्रथम चरण में कीर्ति स्तंभ की सुन्दरतम रचना की गई है तथा भगवान महावीर की सात हाथ अवगाहना वाली प्रतिमा को स्थापित करके नंद्यावर्त महल नाम से अति सुन्दर तीर्थ का निर्माण हुआ है। इस तीर्थस्थल पर सामाजिक सहायता व पूज्य गणिनी ज्ञानमती माताजी के ससंघ प्रयासों से नंद्यावर्त महल की प्रतिकृति निर्मित हुई है जहाँ पर भगवान महावीर का जीवनदर्शन अतिआकर्षक एवं पुरातात्त्विक दृष्टि से प्रदर्शित किया जा रहा है। प्रज्ञांश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी ने सभी को आह्वान करते हुए लिखा है–

चलो कुण्डलपुर चलना है, वीर का वन्दन करना है,
महावीर की जन्मभूमि को, विकसित करना है।

आज भारत वर्ष के समग्र जैन समाज का दायित्व है कि हमारे प्राचीनतम तीर्थक्षेत्रों के संरक्षण एवं संवर्द्धन में सक्रिय भूमिका अदा करें और हमारे परम श्रद्धेय गुरुजनों के सानिध्य में रहकर नवीन तीर्थ निर्माण के स्थान पर प्राचीन तीर्थ विकास में सहयोग करें।

जब हम हमारे प्राचीनतम ग्रंथों-जयधवला, धवला, तिलोयपण्णत्ति, उत्तरपुराण, हरिवंशपुराण आदि का पाठ करते हैं तो स्पष्ट रूप से यही स्वीकारोक्ति होती है कि जिस कुण्डलपुर पर हम आज श्रद्धावनत हैं वही वास्तविक रूप से भगवान महावीर की जन्मभूमि है। हम सभी जब भगवान महावीर की पूजाकरते हैं तो उनके जन्मकल्याणक का अर्घ चढ़ाते समय यही कहते हैं–

जनम चैत सुत तेरस के दिन कुण्डलपुर कन वरना,
सुरगिरि, सुरगुरू पूज रचायो, मैं पूजों भव हरना।
नाथ मोहे राखो हो शरणा।

यही नहीं, सांध्यकाल में जब मंदिरों में आरती के स्वर गुंजायमान होते हैं तो भी हम सुनते हैं-

ओम् जय महावीर प्रभो, स्वामी जय महावीर प्रभो।
कुण्डलपुर अवतारी, त्रिशलानंद विभो। ओम् जय.........

आज हमारा क्या कर्त्तव्य है? यह जानने के लिए हमें श्री ताराचंद्र जैन शास्त्री द्वारा रचित 'जीवन झांकी-तीर्थंकर महावीर' के प्रथम पद्य का अवलोकन कर तदनुरूप कार्य करना होगा, जिसमें कहा गया है-

आओ दिखायें जीवन झांकी महावीर भगवान की,
सिद्धारथ के राजदुलारे, त्रिशला माँ के प्राण की।
क्षत्रिय नाथवंश प्राची के, दिनकर श्री महावीर,
कुण्डलपुर में जन्म लिया था, जन्मजात महावीर थे।
चैत्र शुक्ल तेरस के दिन की शोभा असीम निराली थी,
राजमहल, पुरजन, परिजन के मुख पर छाई लाली थी।
रत्नपुष्प की वर्षा हुई थी, वृद्धि हुई धन धान की,
आओ दिखायें जीवन झांकी महावीर भगवान की,

'भारत के दिगम्बर जैन तीर्थ' में लेखक पं. बलभद्र जैन ने स्पष्ट शब्दों में लिखा है–

'कुण्डलपुर बिहार प्रान्त के नालंदा जिले में स्थित है। यहाँ का पोस्ट आफिस भी नालंदा है और निकट का रेलवे स्टेशन भी नालंदा है। यहाँ भगवान महावीर के गर्भ, जन्म और तप कल्याणक हुए थे, इस प्रकार की मान्यता शताब्दियों से चली आं रही है। यहाँ पर एक शिखरबंद मंदिर है जिसमें भगवान महावीर की श्वेत वर्ण की साढ़े चार फुट अवगाहना वाली भव्य पद्मासन प्रतिमा विराजमान है।

भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) को गलत सिद्ध करने का प्रयास कुछ लोगों की चाल है, जिन्होंने तीर्थंकर महावीर की जन्मभूमि पर प्रश्नचिन्ह लगाकर हमारी आस्था एवं विश्वास पर गहरी चोट की है। हमारा कर्तव्य है कि हम इसके दूरगामी परिणामों पर विचार करके अथाह मात्रा में यत्र-तत्र बिखरी पुरातत्व सामग्री का दिगम्बर जैन आगम के परिप्रेक्ष्य में विद्वानों के विचारों का अध्ययन करें तथा सत्य को उद्घाटित करें। हमें पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी के प्रयासों पर कदम दर कदम सहयोग देना होगा तथा प्राण-प्रण से तीर्थ रक्षा व संवर्द्धन के प्रयासों में जुट जाना होगा। तभी कुण्डलपुर ही नहीं, वरन् हमारे समस्त तीर्थ क्षेत्र अपनी मूल श्रद्धा के केन्द्र रह पाएंगे। अंत में मैं यही कहूँगी–

जागो जागो सब जैनी जन, करो प्रयास सदा भरपूर।
सत्य प्रमाणित करना होगा, वीर जन्मस्थली है कुण्डलपुर।।

* * *

"भगवान महावीर हिन्दी-अंग्रेजी जैन शब्दकोश"

आधुनिक समाज हेतु अमूल्य उपहार

राष्ट्रगौरव पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की मंगल प्रेरणा एवं निर्देशन में प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी के द्वारा संकलित दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान, जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र. द्वारा प्रकाशित जैन शब्दकोश का लोकार्पण "कुण्डलपुर महोत्सव–2004" के अवसर पर किया जा रहा है।

इस शब्दकोश में अधिकाधिक जैन पारिभाषिक शब्दों के अंग्रेजी व हिन्दी अर्थ दिये गये हैं, जो अंग्रेजी में अनुवादित जैनधर्म के ग्रंथों का स्वाध्याय करने वालों एवं जैनागम के ग्रंथों को अंग्रेजी में अनुवादित करने वाले शोधार्थियों के लिए विशेष लाभप्रद सिद्ध होंगें अतः जैन आगम से संबंधित शब्दों का परिपूर्ण एवं निष्पक्ष ज्ञान प्राप्त करने हेतु अवश्य ही इस शब्दकोश का प्रयोग करें।

भगवान महावीर की जन्मस्थली: कुण्डलपुर

–डॉ. हेमन्तकुमार, राजगीर (बिहार)

समस्त दिगम्बर जैन साहित्य में उपलब्ध प्रमाण के आधार पर यह निर्विवाद सिद्ध है कि जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड में स्थित भारत के विदेह देश में कुण्डलपुर/कुण्डपुर में भगवान महावीर का जन्म हुआ था। कुण्डलपुर/कुण्डपुर के महाराजा सिद्धार्थ एवं महारानी प्रियकारिणी उनके माता-पिता थे। कई ग्रंथों में विदेह को स्पष्टरूप से देश कहा गया है। विदेह विख्यात देश था और कुण्डलपुर विदेह में स्थित था। विदेह देश के संदर्भ में जब मैंने कई जैन एवं जैनेतर ग्रंथों का अध्ययन किया तो उपलब्ध ग्रंथों में विदेह जनपद नामक किसी स्वतंत्र देश या जनपद का वर्णन नहीं मिला। इस संदर्भ में कुछ महत्वपूर्ण उदाहरण प्रस्तुत हैं-

जैन साहित्य–आठवीं शताब्दी के प्रसिद्ध जैनाचार्य जिनसेन ने हरिवंशपुराण के ग्यारहवें सर्ग में सम्पूर्ण भरतक्षेत्र के हर खण्डों में विभक्त जनपदों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। जो अब तक उपलब्ध समस्त जैन साहित्य में सबसे प्राचीन एवं विस्तृत वर्णन है। श्लोक 64 से 75 तक का वर्णन निम्न प्रकार है-कुरुजांगल, पंचाल, सूरसेन, पटच्चर, तुलिंग, काशी, कौशल्य, मद्रकार, वृकार्थक, सोल्व, आवृष्ठ, त्रिगर्त, कुशाग्र, मत्स्य, कुणीयान, कोशल, भवन, आमीर, भद्रक, क्वाथतोय, शूर, वाटवान, कैकय, गान्धार, सिंधु, सौवीर, भारद्वाज, दशेरूक, प्रास्थाल और तीर्णकर्ण ये देश उत्तर की ओर स्थित थे। खडंग, अंगारक, पौण्ड्र, मल्ल, प्रवक, मस्तक, प्राद्योतिष, बंग, मगध, मानवर्तिक, मलद और भार्गव ये देश पूर्व दिशा में स्थित थे। वाणभुक्त, बैदर्भ, माणव, मूलक, अश्मक, दाण्डीक, कलिंग, औसिक, कुन्तल, नवराष्ट्र, माहिषक, पुरुष और भोगवर्धन ये दक्षिण दिशा के देश थे। माल्य, कल्लीवनोपान्त, दूर्ग, सूर्पार, कर्बुक, काक्षि, नासारिक, अगर्त, सारस्वत, तापस, महिम, भरुकक्ष, सुराष्ट्र और नर्मद ये सब पश्चिम दिशा में स्थित थे। दशार्णक, किष्कन्ध, त्रिपुर, आवर्त, नैषध, नैपाल, उत्तमवर्ण, वैदिश, अन्तप, कौशल, पत्तन और विनिहाल ये देश विन्ध्याचल के ऊपर स्थित थे। भद्र, वत्स, विदेह, कुश, भंग, सैतव और वज्रखण्डिक ये देश मध्यदेश के आश्रित थे। इसमें विदेह देश का कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं बताया गया है। जबकि स्वयं जिनसेनाचार्य ने इसी ग्रंथ के दूसरे सर्ग में भगवान महावीर की जन्मभूमि का वर्णन करते हुए लिखा है कि "इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में लक्ष्मी से स्वर्गखण्ड की तुलना करने वाला, विदेह नाम से प्रसिद्ध एक बड़ा विस्तृत देश है। उस विदेह देश में कुण्डपुर नाम का एक ऐसा सुन्दर नगर है, जो इन्द्र कें नेत्रों की पंक्तिरूपी जल का मानो कुण्ड ही है।

पाली साहित्य–पाली साहित्य के प्रतिष्ठित ग्रंथ अंगुत्तर निकाय में सोलह जनपदों का वर्णन मिलता है जो निम्न प्रकार है-अंग, मगध, काशी, कोशल, वज्जि, मल्ल, चेदि, वत्स, कुरु, पंचाल, मत्स्य, शूरसेन, अस्मक, अवन्ति, काम्बोज एवं गांधार। इसमें भी विदेह जनपद का कोई वर्णन नहीं है।

पाणिनी की अष्टाध्यायी–इसमें नौ जनपदों के नामों का उल्लेख मिलता है जो निम्न प्रकार है-मगध, काशी, कोसल, वृजि, कुरू, अश्मक, अवंति, गंधार और कम्बोज। इसमें भी विदेह नामक किसी देश का उल्लेख नहीं किया गया है।

अशोक के शिलालेख–इसमें जिन देशों का वर्णन मिलता है वे निम्न प्रकार हैं-चोडा (चोल), पाडा (पांड्या), सत्तियपुत्र (सत्यपुत्र), केरलीपुत्रों (केरल), योन (भवन), कंबोज, गंधार, अपरांत, मगध, कलिंग, भोज, पुलिंद, नाभपंक्ति (नाभा) आरविक, रिस्टिक और पेतनिक। इसमें भी विदेह देश का कोई वर्णन नहीं मिलता है।

उपरोक्त विवरणों से स्पष्ट प्रतीत होता है कि विदेह देश नामक कोई स्वतंत्र देश या जनपद नहीं था बल्कि एक बहुत बड़े भूभाग के लिए विदेह देश के नाम का प्रयोग किया जाता था। जैनधर्म के इतिहास में भारतवर्ष का बिहार प्रान्त अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं पवित्र स्थान है। मुनिसंघ के विहार एवं त्रिभुवन-तिलक तीर्थंकरों के समवसरण प्रसार से इस प्रान्त का समस्त भूमण्डल तपोवन और परमपूज्य स्थान रहा है। प्राचीन काल में इस पूरे प्रांत को विदेह या मिथिला कहा जाता था। उस समय विदेह या मिथिला नाम का कोई स्वतंत्र देश नहीं रहा होगा। इसलिए विदेह का स्वतंत्र देश

होने का वर्णन नहीं मिलता है। यह सर्वमान्य है कि राजनैतिक कारणों से मध्यदेश की सीमाओं में विभिन्न युगों में परिवर्तन होता रहा है। जैसे अभी ही देखा जाये कि जो तीर्थराज श्री सम्मेदशिखर कल तक बिहार प्रान्त का सबसे महत्वपूर्ण तीर्थस्थल एवं पारसनाथ पर्वत सबसे ऊँचा पर्वत था वह आज झारखंड प्रदेश का प्रमुख तीर्थस्थल एवं पर्यटन केन्द्र बन गया। भविष्य में वह झारखंड प्रान्त का तीर्थ कहलायेगा न कि बिहार प्रान्त का, किन्तु इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि पारसनाथ पर्वत कभी बिहार प्रान्त में था ही नहीं। इसी प्रकार सम्पूर्ण बिहार प्रान्त जो कभी विदेह कहलाता था वह मगध, अंग, बज्जि, सारण, चम्पारण, तिरहुत एवं मिथिला आदि भागों में बँट गया और वह विशाल विदेह या मिथिला आज केवल दरभंगा, मधुबनी एवं समस्तीपुर जिलों तक ही सिमट कर रह गया है। इसलिए यह कहना कि विदेह देश की सीमा गण्डकी, गंगा और कोशी नदियों के बीच में ही है उचित नहीं है। प्राचीन काल में सम्पूर्ण बिहार प्रान्त विदेह भूमि के नाम से विख्यात था इसलिए जैनाचार्यों ने कुण्डलपुर (नालंदा) को विदेह में स्थित बताया।

भगवान महावीर की जन्मस्थली कुण्डलपुर (नालंदा) जो सम्पूर्ण दिगम्बर जैन समाज में सर्वमान्य है, विदेह देश का ही एक महानगर था। जैन साहित्य में उपलब्ध प्रमाणानुसार यह सिद्ध है कि भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर/कुण्डपुर एक स्वतंत्र, विशाल एवं समृद्ध नगर था और वहाँ के महाराजा सिद्धार्थ नाथवंश के शिरोमणि, सिद्धियों से सम्पन्न एवं समृद्धशाली राजा थे। अब तक किसी जैन साहित्य में उनके वज्जिसंघ के गणपति या वैशाली गणतंत्र के सभासद के रूप में विख्यात होने की बात नहीं मिली है। यदि महाराज सिद्धार्थ सभासद होते तो इसका वर्णन जैन साहित्य में अवश्य मिलता। इससे स्पष्ट है कि महाराज सिद्धार्थ और उनका कुण्डलपुर नगर एक स्वतंत्र एवं वैशाली से दूरस्थ थे ना कि वैशाली के आश्रित या अधीन थे। आज कुछ विद्वान् वर्तमान में मुजफ्फरपुर जिले के वासोकुण्ड गांव को तत्कालीन कुण्डलपुर नगर मान रहे हैं और उसे सिद्ध करने के लिए तर्क प्रस्तुत कर रहे हैं, किन्तु वे यह नहीं देख रहे हैं कि वैशाली और वासोकुण्ड की वर्तमान दूरी कितनी है और उसी में वैशाली एवं कुण्डपुर दो अलग-अलग समृद्धशाली नगरों के होने की बात करते हैं। पता नहीं वे कितना बड़ा नगर बनाते हैं कि तीन किलोमीटर के अंदर ही दो बड़े-बड़े नगरों को बसा हुआ मानते हैं और तो और साथ ही वाणिज्य ग्राम, कोल्लाग्राम एवं कर्मारग्राम की भी चर्चा बड़े-बड़े नगरों के रूप में की जाती है और आज के बनिया, कोल्हुआ एवं कम्मनछपरा गाँव को तत्कालीन नगर बताते हैं। मुझे लगता है कि वे विद्वान् कभी इन गाँवों में गये नहीं होंगे। यदि जाते तो अवश्य ही यह विचार करते कि वर्तमान का वैशाली, बनिया, कोल्हुआ, वासोकुण्ड एवं कम्मनछपरा इतना नजदीक-नजदीक बसा हुआ गाँव कभी बड़े-बड़े नगर कैसे रहे होंगे। आज जो उपरोक्त पाँचों गाँवों की दूरी है यदि इन सभी को एक नगर की सीमा में रखा जाये तो सभी शास्त्रों में वर्णित कुण्डलपुर नगर छोटा ही नज़र आयेगा। फिर कैसे वे स्वतंत्र एवं अलग-अलग ग्राम/नगर थे। यह बात समझ में नहीं आती है। आज जो वासोकुण्ड एवं वैशाली हैं वे दोनों अलग-अलग नगर के रूप में बसे हों यह उचित प्रतीत नहीं होता है और फिर उसी बीच में गण्डकी नदी के होने की बात की जाती है इसलिए भौगोलिक दृष्टि से भी वासोकुण्ड तत्कालीन कुण्डलपुर नहीं हो सकता है। नालंदा के समीप का कुण्डलपुर ही भगवान महावीर की जन्मस्थली है ऐसा मानना ही उचित है। कुण्डलपुर/कुण्डपुर नगर का जो वर्णन शास्त्रों में उल्लिखित है उसमें कुछ महत्वपूर्ण वर्णन निम्न प्रकार हैं–वर्द्धमानचरित में कुण्डलपुर नगर का वर्णन करते हुए लिखा है कि उस विदेह देश में कुण्डपुर नाम का एक जगत प्रसिद्ध नगर था, जो अपनी शोभा से सम्पन्न होता हुआ आकाश के समान सुशोभित हो रहा था, आकाश जिस प्रकार समस्त पदार्थों को स्थान प्रदान करता है अर्थात् जीव, अजीव, धर्म, अधर्म और काल को अवगाह देता है उसी प्रकार कुण्डलपुर नगर में भी संसार के समस्त पदार्थ उपलब्ध थे। जिस प्रकार आकाश सूर्य, चन्द्रमा, बुधग्रहों से अधिष्ठित है उसी प्रकार कुण्डलपुर नगर भी अनेक कलाओं एवं सिद्धियों के धारक विद्वानों का निवास स्थल था। जिस प्रकार आकाश वृष राशि से सहित होता है उसी प्रकार कुण्डलपुर नगर भी सवृष–धर्म से सहित था। जिस प्रकार आकाश ताराओं से युक्त है, उसी प्रकार कुण्डलपुर नगर भी सतार–चांदी, तरुण, मोतियों आदि की शुद्धि से सहित था। आचार्य जिनसेन ने हरिवंशपुराण में कुण्डलपुर नगर को समृद्ध एवं विस्तृत नगर बताया है। विबुध श्रीधर ने वड्ढमाणचरिउ में कुण्डलपुर नगर का वर्णन करते हुए लिखा है कि विदेह देश में कुण्डपुर नामक एक नगर है, जिसने अपने ध्वजासमूह से तीव्र सूर्य को ढक दिया था। कुण्डलपुर/कुण्डपुर के संबंध में जैन साहित्य में जो वर्णन मिलता है उससे स्पष्ट है कि

महाराजा सिद्धार्थ अपने समय के शक्तिशाली राजा थे और उनका महानगर कुण्डलपुर एक समृद्ध, धनी आबादी वाला एवं विख्यात नगर था और आज जो विद्वान् वासोकुण्ड को जन्मभूमि होने और शास्त्रों में वर्णित नगर को उस स्थल से जोड़ते हैं तो यह हास्यास्पद ही लगता है। शास्त्रों में वर्णित कुण्डलपुर की सीमा की एक गली भी वासोकुण्ड में नहीं समा सकती है। इसलिए वर्तमान कुण्डलपुर (नालंदा) ही भगवान की जन्मस्थली है।

श्वेताम्बर ग्रंथ सूत्रकृतांग में भगवान महावीर को वैशालिक कहा गया है। इसका यह अर्थ निकालना उचित नहीं है कि भगवान महावीर वैशाली के निवासी थे इसलिए उन्हें वैशालिक कहा गया। महाराज दशरथ के पुत्र भरत को कैकेय भी कहा गया है, तो क्या आज सभी यह मान लेंगे कि भरत कैकेय देश के निवासी थे। उसी प्रकार महाभारत काल में पाण्डवों में अर्जुन को कौन्तेय भी कहा गया है, तो क्या आज उन्हें कुन्तल देश का राजकुमार स्वीकार कर लिया जायेगा। ऐसा कभी नहीं होगा, क्योंकि भरत की माता कैकेयी कैकेय देश की राजकुमारी थी इसलिए उनके पुत्र को कैकेय कहा गया है और अर्जुन की माता कुन्ती कुन्तल देश की राजकुमारी थी इसलिए उसके पुत्र को कौन्तेय कहा गया है। ठीक उसी प्रकार भगवान महावीर की माता प्रियकारिणी वैशाली की राजकुमारी थीं इसलिए भगवान महावीर को भी वैशालिक कहा गया है।

भगवान महावीर की जन्मभूमि के रूप में कुण्डलपुर (नालंदा) को कई विद्वानों ने माना है। ब्र. अजित प्रसाद जी जैन, अजिताश्रम, लखनऊ ने देवेन्द्र चरित नामक ग्रंथ के पृ. 12 में लिखा है कि "पावापुरी के निकट ही श्री वर्द्धमान स्वामी का शुभ जन्म-स्थान कुण्डलपुर है और उसके पास ही नालंदा के प्राचीन और जगत् विख्यात विश्वविद्यालय के खंडहर अब भी उसका माहात्म्य प्रकट कर रहे हैं।" भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा प्रकाशित भारत के दि. जैन तीर्थ भाग-2 में ग्रंथ के सम्पादक स्व. पं. बलभद्र जी ने स्पष्ट लिखा है कि "शताब्दियों से जिस कुण्डलपुर की एक जैन तीर्थ के रूप में मान्यता रही है उसको भविष्य में भी तीर्थ माना जाता रहेगा। उनका यह लिखना आज कितना समसामयिक प्रतीत हो रहा है यह हमारे सामने है। अनेक विद्वान् आज भी भगवान महावीर की जन्मस्थली वैशाली को मानने को तैयार नहीं है। वे सदियों से नालंदा के निकट स्थित कुण्डलपुर को ही प्रतिष्ठित करते हैं।

उपर्युक्त विवेचनों के आधार पर भगवान महावीर की जन्मस्थली कुण्डलपुर (नालंदा) ही आगम सम्मत एवं युक्तिसंगत है क्योंकि जैन साहित्य में कुण्डलपुर/कुंडपुर को एक स्वतंत्र एवं प्रभावशाली नगर के रूप में वर्णित किया गया है उसके वैभव का प्रचुर वर्णन मिलता है साथ ही कुण्डलपुर के राजा सिद्धार्थ भी एक शक्तिशाली, प्रतापी, नाथवंश के शिरोमणि एवं स्वतंत्र महाराजा के रूप में वर्णित हैं। कुण्डलपुर को वैशाली के सन्निवेश के रूप में स्वीकार करने से शास्त्रों में वर्णित विषय पर ही प्रश्नचिन्ह लग जाता है और महाराजा सिद्धार्थ किसी गाँव के मुखिया की तरह लगेंगे और उनका अपना कोई आभामंडल नहीं था ऐसा मानना होगा।

अतः शास्त्र, पुराण एवं वर्तमान भौगोलिक स्थिति सभी विषयों पर विचार करने के उपरांत मेरा विचार है कि सदियों से भगवान महावीर की जन्मभूमि के रूप में गौरवान्वित कुण्डलपुर (नालंदा) ही भगवान महावीर की जन्मस्थली है।

* * *

उन्नयन श्रमण संस्कृति का करने वाली माता नमूँ तुम्हें।
हे तीर्थोद्धारक! युगप्रवर्तिका! त्रिकाल वन्दन करूँ तुम्हें।।
यह श्रमण संस्कृति युग-युग तक उपकार तेरा नहिं भूलेगी।
संस्कृती हेतु सर्वस्व निछावर करने की शिक्षा देगी।।

प्रश्न भगवान महावीर की जन्मस्थली का

(जनवरी 2003 में प्रस्तुत)

–माणिकचंद जैन पाटनी, इंदौर

क्यों जैन अनुयायी जैनेतर एवं विदेशी विद्वानों के कथनों का अनुसरण बिना अपना दिमाग लगाये करने लगे? जो जैनेतर व विदेशी जैन धर्म के मर्म को नहीं जानते, जैन शास्त्रों के बारे में जो पूर्णतः अनभिज्ञ हैं वे बताते हैं कि हमारे तीर्थंकरों की जन्मभूमि यहाँ नहीं वहाँ हैं और हमारे जैन नेतागण जो विद्वान् कम लेकिन राजनीतिज्ञ व धनाढ्य अधिक हैं, तुरंत सदियों पुरानी आस्था और विश्वास को खंडित करते हुए नई खोज के नाम पर उसे मानने और प्रचारित करने का कुप्रयास करते हैं। 2550 वर्षों तक जिसे भगवान महावीर का जन्मस्थान माना जाता रहा उसे मात्र 50 वर्ष पूर्व भारत के सर्वोच्च स्थान पर बैठे नेता कुछ जैनेतर व विदेशी विद्वानों की खोज के बहाने बदलने को तैयार हो गये। अब भी उसे मान्य कराने तथा केन्द्र व राज्य सरकार की मुहर लगवा कर जन साधारण को भ्रमित करने का कुप्रयास जारी है।

आज एक तरफ सभी प्रकार के तर्क-कुतर्कों के साथ वैशाली को सिंधु देश की बजाय बिहार में बताकर उसे महिमा मंडित करने का प्रयास चल रहा है तो दूसरी तरफ महावीर का जन्मस्थान वैशाली बताकर कुण्डलपुर को नकारने की नाकाम कोशिश की जा रही है। प्रश्न कुण्डलपुर को नकारने का ही नहीं है यहाँ तो महावीर को वैशाली के ग्राम, मुहल्ले के एक भाग में जन्मा बताकर उनके पिता, दादा या पूरी वंश परम्परा को एक सामान्य क्षत्रिय परिवार बताने का प्रयास हो रहा है। महावीर को वैशाली के एक मोहल्ले में जन्मे बताने या स्वीकारने पर क्या उनके तीर्थंकरत्व, सर्वज्ञता और अर्हंतता पर प्रश्न नहीं खड़े होंगे? क्योंकि अगर महाराज सिद्धार्थ वैशाली के किसी मोहल्ले या उपनगर के निवासी थे तो वह एक स्वतंत्र और सार्वभौम शासक तो हो ही नहीं सकते। जैनागम में तीर्थंकरों के गर्भ, जन्म आदि सभी क्रियाओं को किसी सामान्य घटना में नहीं, काल की विशेष घटनाओं के रूप में दर्शाया गया है, जिसे नकारा नहीं जा सकता।

कुण्डलपुर को नकारने का ही एक प्रयास है-भगवान महावीर स्मारक समिति पटना से प्रकाशित "भगवान महावीर स्मृति तीर्थ स्मारिका-वैशाली" इस स्मारिका के लेखक हिन्दी साहित्य, पुरातत्व आदि विद्याओं के विद्वान् तो हैं किन्तु वह दिगम्बर जैनागम, उनकी मान्यताओं आदि के मर्मज्ञ विद्वान भी हैं, ऐसा आभास उनके आलेखों से नहीं मिलता। हालांकि उन्होंने दिगम्बर जैन आचार्यों के कथनों का अवलम्बन अपने आलेखों में लिया है किन्तु दिगम्बर जैन आचार्यों ने कहीं वैशाली को महावीर की जन्मस्थली नहीं बताया। ग्रंथराज षट्खंडागम, तिलोयपण्णत्ती, वर्धमानचरित, उत्तरपुराण आदि सभी ग्रंथों में भगवान महावीर के पिता सिद्धार्थ को विदेह देश की राजधानी कुण्डलपुर तथा उनके नाना चेटक को सिंधु देश की राजधानी वैशाली का अधिपति बताया गया है। नई खोज का मूल बिंदु यही होना चाहिए था।

ये जैनेतर व विदेशी विद्वान् डॉक्टर, प्रोफेसर, इतिहासज्ञ, भूगोलज्ञ और पुरातत्ववेत्ता ही हमारे जैन शासन के प्राचीन मनीषी आचार्यों को चुनौती देकर नये-नये मत स्थापित कर रहे हैं। डॉ. रंजन सूरि देव द्वारा लिखित आलेख में महावीर की माता त्रिशला को लिच्छविराज चेटक की बहन लिखा है। इसी प्रकार आचार्यश्री विजयेन्द्र सूरि ने भी माता त्रिशला को राजा चेटक की बहिन व भगवान महावीर के पिता सिद्धार्थ को वैशाली के कोल्लाग नामक मोहल्ले में बसने वाली नाथ जाति के क्षत्रियों का सरदार माना है। बहुचर्चित विद्वान् डॉ. योगेन्द्र मिश्र ने हर्मन जैकोबी, हार्नले और विसेंट स्मिथ आदि विदेशी विद्वानों के मत को पुष्ट करने में अपने द्वारा लिखित 'एन अर्ली हिस्ट्री आफ वैशाली' को ही आधार बनाते हुए कुण्डलपुर नाम को तोड़-मरोड़ कर वैशाली के कुण्डग्राम को महावीर का जन्मस्थान बताया है। जबकि स्वयं जैकोबी कुण्डलपुर (नालंदा) को 1911 के अपने पत्र में महावीर जन्मभूमि स्वीकार करते हैं। इन कथनों में उन्होंने श्वेताम्बर व बौद्ध ग्रंथों का सहारा लिया है। इस प्रकार भ्रम की स्थितियाँ निर्मित कर दिगम्बर समुदाय को दो धड़ों में विभक्त करने का कार्य किया है।

मेरी मान्यता है कि यदि ये सभी प्राचीन आचार्यों की वाणी श्रद्धापूर्वक पढ़ते तो प्राचीन काल से चली आ रही भक्तों

की श्रद्धा की कभी अवहेलना नहीं कर पाते और भगवान महावीर की असली जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) विहार को ही मानते जो कि उनके जन्म के बाद से ही सम्पूर्ण समाज की श्रद्धा का केन्द्र रही है और सदैव श्रद्धा का केन्द्र रहेगी। यह एक अकाट्य सत्य है कि कुण्डलपुर एक सार्वभौम शक्ति सम्पन्न राज्य की राजधानी थी। वह किसी नगर का मोहल्ला या उपनगर नहीं थी। **बिहार सरकार के गजेटियर में कुण्डलपुर-नालंदा को भगवान महावीर की जन्मस्थली के रूप में मान्यता प्राप्त रही है।** साथ ही जनमानस की श्रद्धा भी वहाँ सदियों से नत होती रही है, उसे कुछ लोगों द्वारा बदला जा नहीं जा सकता और न बदला जाना चाहिए। व्यक्तियों के व्यक्तिगत स्वार्थवश या मान-सम्मान का प्रश्न बनाकर श्रद्धाओं और मान्यताओं से खिलवाड़ नहीं होना चाहिए तथा सभी की श्रद्धा के केन्द्र कुण्डलपुर (नालंदा) को ही भगवान महावीर की जन्मस्थली स्वीकार करना चाहिए।

* * *

भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर

–डॉ. रामदेव सिंह (राष्ट्रपति पुरस्कृत पूर्व प्राचार्य)
कुण्डलपुर (नालंदा)

प्राचीन ग्रंथों के अनुशीलन से यह स्पष्ट हो जाता है कि जैनधर्म के 24वें तीर्थंकर भगवान महावीर का जन्म कुण्डलपुर (नालंदा) में हुआ था। 2600 वर्ष पूर्व भगवान महावीर ने विदेह देश (बिहार प्रान्त) के कुण्डलपुर नगरी में जन्म लिया था। चैत्र शुक्ल पक्ष त्रयोदशी की रात्रि में नाथवंश के महाराजा सिद्धार्थ ने माता त्रिशला के गर्भ से एक पुत्र रत्न प्राप्त किया, जो समयान्तर में धर्म और आस्था के प्रतीक, बाह्य और आभ्यंतर शुद्धि, अहिंसा, मृदुता, सत्य, अपरिग्रह, सांसारिक माया को त्यागकर आत्मा को मोक्ष का मार्ग प्रशस्त करने वाले भगवान महावीर के रूप में वैश्विक पटल पर उभरे। भगवान महावीर के जन्म से पूर्व 15 माह तक स्वर्ग से सौधर्म इन्द्र द्वारा भेजे गये धनकुबेर ने माता त्रिशला के नंद्यावर्त महल में असंख्य रत्नों की वर्षा की थी। जन्म के पश्चात् सौधर्म इन्द्र ने इन्हें अपने ऐरावत हाथी पर बैठाकर सुमेरु पर्वत ले गए और वहाँ पाण्डुकशिला पर उनका जन्माभिषेक किया। तत्पश्चात् विशद रूप से इनका जन्मोत्सव मनाया गया।

प्राचीन आगम ग्रंथों तिलोयपण्णत्ति, उत्तरपुराण, हरिवंशपुराण, धवला, जयधवला, महावीर पुराण, वर्धमान चरित्र आदि ग्रंथों में भगवान महावीर को वीर, वर्धमान, सन्मति, अतिवीर और महावीर के पंचनामों से विभूषित किया गया है।

बहरहाल, भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर वर्तमान समय के बिहार राज्य के नालंदा में अवस्थित है। इस तथ्य को दिगम्बर जैन धर्मावलंबी, पुरातात्विक स्रोत तथा प्राचीन ग्रंथों के अनुशीलन से स्वतः स्पष्ट हो जाता है। तिलोयपण्णत्ति ग्रंथ में श्री यतिवृषभाचार्य के कथन से तो भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) को निर्विवाद बना दिया है। जिसमें उद्धृत है कि–

सिद्धत्थरायपियकारिणीहिं, णयरम्मि कुंडले वीरो।
उत्तरफग्गुणिरिक्खे, चित्तसियातेरसीए उप्पण्णो।।549।।

(चउत्थो महाधियारो पृ. 210)

अर्थात् भगवान महावीर कुण्डलपुर में पिता सिद्धार्थ और माता प्रियकारिणी से चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में उत्पन्न हुए।

इसी प्रकार श्रीवीरसेनाचार्य रचित धवला टीका ग्रंथ में कहा है–

"आषाढ जोण्ण पक्ख छट्ठीए कुण्डलपुर णगराहिव णाहवंश सिद्धत्थ णरिन्दस्स तिसिला देवीए गब्भमागंतूण

तत्थ अट्ठदिवंसाहिय णवमासे अच्छिम चइत्त सुक्क पक्ख तेरसीए रत्तीए उत्तराफग्गुणी णक्खत्ते गब्भादो णिक्खंतो।''

जब भगवान महावीर पृथ्वी पर अवतीर्ण होने वाले थे तब सौधर्म इन्द्र ने मानव के कल्याण की प्रेरणा से अभिभूत होकर कुबेर से कहा ''इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में विदेह देश के कुण्डलपुर नगर के राजा सिद्धार्थ की रानी प्रियकारिणी के शुभ लक्षणों से युक्त पुत्र चौबीसवाँ तीर्थंकर होगा। जिनके चरणों में इन्द्र भी नमन करेंगे। अतएव हे कुबेर! इन दोनों के निवास स्थानों को स्वर्णमयी कान्तिमान व देवों के विलासयोग्य बना दो।

इस संदर्भ में श्री माणिक्य चन्द्र जैन द्वारा 1908 में लिखित पुस्तक ''महावीर चरित्र'' में कुण्डलपुर के विषय में भी विशद चर्चा की गई है। उस पुस्तक में उल्लेखित है कि महाराजा सिद्धार्थ के महल की भव्यता, महावीर के जन्मोत्सव की खुशियाँ एवं उनके राज दरबार के वैभव का वर्णन इस तथ्य को और स्पष्ट करता है कि सिद्धार्थ अपने समय के शक्तिशाली राजा थे और उनका महानगर कुण्डलपुर एक बड़ा घनी जनसंख्या वाला नगर था।

उन्होंने कुण्डलपुर को सांस्कृतिक एवं धार्मिक चेतना जागृत करने का स्थल मानते हुए उसे राजधानी माना है। श्री माणिक्यचंद जी का कहना है कि राजा चेटक अपनी पुत्री त्रिशला जैसी तीर्थंकर जन्मदात्री कन्या का विवाह किसी छोटे-मोटे जमींदार से तो नहीं कर देते बल्कि अपने समान अथवा अपने से भी उच्चस्तरीय राज घराने में ही करते।

उपर्युक्त सभी प्रमाण भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर से संबंधित हैं। इसके साथ ही उनके ननिहाल वैशाली के विषय में जानकारी प्राप्त करना अपेक्षित एवं आवश्यक है।

वीरजिणिंदचरिउ ग्रंथ की पांचवीं संधि में श्री पुष्पदंत महाकवि कहते हैं कि राजा श्रेणिक ने समवसरण में गौतम गणधर से पूछा, हे भगवान! मुझे इस आर्यिका चंदना का चरित्र सुनायें, जिसके शरीर में चंदन की सुगंध है तथा जिसने मिथ्यात्व अंधकार को दूर कर दिया है। राजा के इस प्रश्न को सुनकर उत्तर में गौतम स्वामी ने कहा–

''सिंधु-विसई वइसाली-पुरवरि। घर-सिरि ओहामिय-सुर-वर-धरि।।

अर्थात् सिंधु नामक देश में वैशाली नामक नगर है जहाँ के घर अपनी शोभा से देवों के विमानों की शोभा को भी जीतते हैं। उस नगर में चेटक नामक नरेश्वर निवास करते हैं।

उनकी अत्यन्त रूपवती सात पुत्रियाँ थीं, जो प्रियकारिणी, मृगावती, सुप्रभादेवी, प्रभावती, चेलिनी, ज्येष्ठा और चन्दना के नाम से जानी जाती थी। इनमें से प्रियकारिणी (त्रिशला) का विवाह श्रेष्ठ नाथवंशी कुण्डलपुर नरेश सिद्धार्थ से कर दिया गया था।

उपर्युक्त तथ्यों से यह स्पष्ट होता है कि जैनधर्म के 24वें तीर्थंकर भगवान महावीर का जन्म कुण्डलपुर (नालंदा) में हुआ। पुरातन समय में इस कुण्डलपुर को इन्द्र से लेकर कुबेर तक ने सजाने-सँवारने का काम किया। कुण्डलपुर सत्य, अहिंसा, तप आदि का पर्याय बन चुका था। भले ही कालांतर में इसकी महत्ता इतिहास के पन्नों तक ही सिमटी रही। परन्तु अब यह पुनः अपनी प्राचीन गरिमा को पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के सानिध्य से प्राप्त कर रहा है।

* * *

''बाबानो संयम धारण करा, भिऊ नका।''
भव्यात्माओं! संयम धारणकरो, डरो मत।

-चारित्रचक्रवर्ती आचार्य
श्री शांतिसागर जी महाराज

प्राचार्य श्री नरेन्द्र प्रकाश जी का भाषण

(कुण्डलपुर राष्ट्रीय महासम्मेलन में 8 फरवरी 2003 को प्रस्तुत)

कुण्डलपुर वह पवित्र भूमि है, जहाँ जैनधर्म के 24वें तीर्थंकर भगवान महावीर ने जन्म लिया था। सदियों से इस कुण्डलपुर की ख्याति भगवान महावीर की जन्मभूमि के रूप में रही है और कहना चाहिए कि मगध का यह पूरा परिक्षेत्र भगवान महावीर के उपदेशों और उनके आचरण से प्रभावित रहा है। राजगृही, गुणावां, पावापुरी, सम्मेदशिखर जैसे बड़े-बड़े क्षेत्र इसी अंचल में रहे हैं। 17वीं सदी में श्वेताम्बर आचार्यों ने भी भगवान महावीर की जन्मभूमि के रूप में कुण्डलपुर की यात्रा का वर्णन किया है। हमारे दिगम्बर जैन साहित्य में ऐसा एक भी ग्रंथ नहीं है जिसमें कुण्डलपुर के अतिरिक्त किसी अन्य स्थान को भगवान महावीर की जन्मभूमि के रूप में उल्लिखित किया गया हो, वैशाली के रूप में तो एक भी आचार्य ने पिछले 2000 वर्षों में भगवान महावीर की जन्मभूमि नहीं बताई है। हाँ! वैशाली का भी महत्व है, भगवान महावीर की माता त्रिशला वैशाली के महाराजा चेटक की पुत्री थीं और कुण्डलपुर के राजा सिद्धार्थ के साथ उनका विवाह हुआ था। त्रिशला माता वैशाली से चलकर यहाँ कुण्डलपुर में आई थीं। कुण्डलपुर में भगवान के गर्भ में आने के 6 महीने पहले से रत्नों की वृष्टि हुई थी, यह पौराणिक उल्लेख है, सब जानते हैं।

पिछले कुछ वर्षों से हमारे कुछ रिसर्च स्कॉलर विद्वानों ने वैशाली को भगवान महावीर की जन्मभूमि के रूप में निरूपित करना शुरू कर दिया। यह सही है कि आज का इतिहास और भूगोल जो उपलब्ध है अथवा बौद्ध ग्रंथों में जो वर्णन हमें मिलते हैं उसके अनुसार लोगों ने यह धारणा बनाई कि वैशाली में भगवान महावीर का जन्म हुआ था लेकिन यह बात इसलिए युक्तिसंगत नहीं लगती क्योंकि महाराज चेटक के 10 प्रतापी बेटे थे और उनमें से उनका ज्येष्ठ पुत्र तो उनका सेनापति था। भिन्न-भिन्न विभागों के अधिकार महाराजा चेटक ने अपने दसों पुत्रों को बाँटे थे। ऐसा इतिहास में हमने कभी नहीं सुना कि योग्य पुत्रों के रहते हुए कोई धेवते को राजकुमार बनाए। भगवान महावीर तो महाराजा चेटक के धेवते थे, वैशाली भगवान महावीर की ननिहाल थी, उनके दस मामा थे, मामाओं के रहते हुए भान्जे को राजगद्दी मिले ऐसा कभी हमने सुना नहीं है, लेकिन इस तरह का एक भ्रम फैलाया गया और उससे जो सदियों से मान्यताप्राप्त कुण्डलपुर को लोग जन्मभूमि के रूप में पूजते रहे हैं उनके मन में एक हलचल उत्पन्न हुई। उनके मन में यह बात कचोटती थी कि हमारे पूर्वजों ने और हमने सम्मेदशिखर की यात्रा करते समय हर बार महावीर की जन्मभूमि के रूप में जिस कुण्डलपुर की पुण्यभूमि में जाकर माथा टेका है, अब उसकी उपेक्षा हो रही है।

पूज्य माताजी, जो कि भगवान महावीर के इन ढ़ाई हजार वर्षों में पहली ऐसी मातृशक्ति हैं, जिन्होंने ढाई सौ से अधिक ग्रन्थलेखन का कार्य किया है, चारों अनुयोगों में तलस्पर्शी पांडित्य प्राप्त किया है, समस्त शास्त्रों और पुराणों को छान-छानकर इतिहास के लुप्त तथ्यों का अन्वेषण करके जनता के सामने जिन्होंने रखा है, उनका ध्यान जब इस उपेक्षा की ओर गया तो उनके मन में भी इससे वेदना हुई और उन्होंने यह संकल्प किया कि सदियों से जिसको हम जन्मभूमि मानते रहे हैं, पूजते रहे हैं, जिसका कण-कण पवित्र है उसका विकास होना चाहिए। पूरे मगध की धरती में भगवान महावीर का विहार हुआ, भगवान महावीर के जितने भी गणधर थे वो सब इसी मगध के थे। सबसे बड़ा उनका भक्त जो मगध का महाराजा श्रेणिक था, भगवान महावीर के जितने भी उपदेश हुए, उन उपदेशों के लिए प्रश्न पूछ-पूछकर उन्हें प्रेरित करने का काम महाराजा श्रेणिक ने किया। हमारे जैन आगम ग्रंथों में यह उल्लेख है कि साठ हजार प्रश्न महाराजा श्रेणिक ने भगवान महावीर से पूछे और भगवान महावीर की दिव्यध्वनि से जो उत्तर निकलकर आए, इन्द्रभूति गौतम ने उन सबको लिपिबद्ध किया और आज वही सब शास्त्रों के रूप में हमको पढ़ने को मिल रहे हैं इसलिए इस जन्मभूमि के विकास का एक सिलसिला पूज्य माताजी के मन में जगा और चूँकि माताजी का प्रभाव और व्यक्तित्व ऐसा है कि एक बार जो बात वह मन में ठान लेती हैं दुनिया की बड़ी से बड़ी ताकत और बड़े से बड़ा विरोध उनको उनके संकल्प से डिगा नहीं पाता। अभी 29 दिसम्बर को माताजी कुण्डलपुर में आईं उस समय तक यहाँ कुछ भी नहीं था और इस सवा महीने के अल्पकाल में भगवान महावीर स्वामी का 72 फुट ऊँचाई वाला एक मंदिर बनाने के संकल्प ने आकार ग्रहण करना शुरू कर दिया। 43 सीढ़ियाँ चढ़कर जब हम उस दिव्य मूर्ति के दर्शन करते हैं तो लगता है कि यह भी

इस मिट्टी का प्रताप है कि भगवान महावीर की मूर्ति के लिए जो शिला मिली उसमें सिर से लेकर पैर तक कहीं एक दाग-धब्बा तक नहीं आया। ऐसी निर्मल, मनोज्ञ, चुम्बकीय आकर्षण वाली प्रतिमा कि जिसके सामने खड़े हो जाएँ, तो हटने का मन ही नहीं होता, यह भी इस धरती के पुण्यपरमाणुओं का ही प्रताप है और केवल सवा महीने के अल्पकाल में इस पंचकल्याणक के आयोजन का जो रूप आज हम देख रहे हैं यह भी भगवान महावीर की इस मिट्टी के चमत्कार का ही प्रभाव मानना चाहिए।

जनवरी 2002 में युवा परिषद का एक अधिवेशन दिल्ली में हुआ था सबसे पहले माताजी ने वहाँ पर यह प्रश्न उठाया। वहाँ पर हमारे दिगम्बर जैन समाज और श्वेताम्बर जैन समाज के अंतर्राष्ट्रीय ख्याति के लोग भी उपस्थित थे। श्री सिंघवी जी, जो आज अंतर्राष्ट्रीय ख्याति के व्यक्तित्व हैं। राष्ट्रपति पद के लिए भी जिनका नाम बहुत दिनों तक अखबारों में चर्चा में आता रहा वह भी उस सभा में उपस्थित थे। हमारे राष्ट्रीय नेता साहू रमेशचंद ज़ी भी उस मीटिंग में उपस्थित थे। उन सबके सामने माताजी ने यह प्रश्न उठाया और उस समय मंच पर ऐसा लगा कि एक आम सहमति इस सिलसिले में है किसी ने भी विरोध नहीं किया बल्कि जब उनके बोलने का नम्बर आया तो चाहे शब्दों का थोड़ा घुमाव-फिराव भले हो लेकिन सबने यह स्वीकार किया कि सभी शास्त्रों में भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर ही बताई गई है। अगर थोड़ा बहुत संकोच में था तो मैं था। मैंने कहा कि इस दृष्टि से मैंने आगम के पन्ने पलटकर देखा नहीं है इसलिए यह तो मैं नहीं कह सकता लेकिन इतना मैं जरूर कह सकता हूँ कि भगवान महावीर की जन्मभूमि पिछले 40 साल में विकसित नहीं हो पाई। अगर भगवान महावीर की जन्मभूमि को विकसित कर दिया गया होता, जैसे अन्य क्षेत्रों का पिछले 20 वर्षों में बहुत तेजी से विकास हुआ है उस तरह का विकास अगर इस जन्मभूमि का हो गया होता तो आज यह सवाल, आज यह अन्तर्द्वन्द्व पैदा ही नहीं होता। माताजी को यह अन्तःप्रेरणा हुई कि इसका विकास करना चाहिए, इसमें देरी नहीं होनी चाहिए। मैंने भी सोचा कि अगर इस प्रश्न को हमने टाल दिया, उपेक्षित कर दिया या चंद लोगों की असहमति के कारण हम मौन रह गए तो हम समझते हैं कि यह इस युग की एक ऐसी कमी होगी कि जिसके लिए आने वाली पीढ़ियाँ यह कहेंगी कि इस काल के विद्वानों में कोई गर्मी नहीं थी वो अपनी संस्कृति, स्वाभिमान और अपने पुण्यपुरूषों की इस मिट्टी की सुरक्षा करने का भाव अपने में नहीं रखते थे। तब मैंने भी कहा कि माताजी! चाहे कुछ हो जाए कुण्डलपुर के प्रसंग में मैं आपका समर्थक हूँ और अंतिम समय तक इसके साथ मुझसे जो भी योगदान बन सकता है बराबर देता रहूँगा।

बंधुओं! इस छोटे से समय में आज हम देख रहे हैं कि हमारा पुराना वैभव लौटने की ओर अग्रसर हो रहा है। मैं सबसे पहले बधाई देना चाहता हूँ हमारे बिहार प्रान्त के सातों पुण्यक्षेत्रों के महामंत्रित्व का कुशलतापूर्वक जो निर्वहन कर रहे हैं ऐसे श्रीमान् अजयकुमार जी को, जो आरा के एक सम्पन्न, समर्थ और सुसंस्कृत परिवार से संबंध रखते हैं और साथ ही अखिल भारतवर्षीय तीर्थक्षेत्र कमेटी के साथ भी उनका उतना ही जुड़ाव है। मैं उनके साहस को, उनके संकल्प को, उनकी निष्ठा को और इस क्षेत्र के प्रति उनके दायित्व के निर्वाह की भावना को धन्यवाद देता हूँ उन्होंने इन दोहरी स्थिंतियों में भी पूरे 15 दिन तक का समय इस धरती पर दिया और महामंत्री के दायित्व का जिस कुशलता के साथ इन विषम परिस्थितियों में उन्होंने निर्वाह किया उसके लिए मैं भारत के समस्त विद्वानों की ओर से उनकी निष्ठा को धन्यवाद देना चाहता हूँ। मैं धन्यवाद देना चाहता हूँ श्री रामगोपाल जी को, जो बिहार और झारखण्ड के समस्त दिगम्बर जैन तीर्थों के न्यास के सरकारी प्रतिनिधि हैं, उसके अध्यक्ष हैं और मुझे इस बात का भी बड़ा गर्व है कि वह हमारे फिरोजाबाद के हैं।

मैं कहना चाहता हूँ कि इस धरती का भी यह पुण्य प्रताप होगा कि इसका विकास अब तेजी से होगा। जो बात मैंने प्रयाग के सम्मेलन में कही थी आज एक बार फिर दोहराना चाहता हूँ कि **वैशाली में 10 करोड़ रुपये लगाकर हम शानदार मंदिर खड़ा कर दें और कुण्डलपुर में 10 लाख रुपये लगाकर एक कुटिया बना दें तो हिन्दुस्तान का 99 प्रतिशत आदमी कुण्डलपुर में माथा टेकने आएगा, वैशाली में नहीं जाएगा क्योंकि वैशाली में भगवान महावीर के उपदेशों की प्रेरणा देने वाला वातावरण ही नहीं है। वहाँ ऐसा एक भी माहौल नहीं है, एक भी ऐसा व्यक्तित्व नहीं है जो महावीर से प्रभावित होकर पुराणों में स्थान पा सके।** इसलिए अगर महावीर वहाँ जन्मे थे, उनका पूरा बचपन

वहाँ बीता था, भगवान महावीर ने वहीं तप किया था, वहीं साधना की थी तो कम से कम उनसे प्रभावित होने वाले 25-50 लोग तो ऐसे होते जो उनके साथ ही दीक्षित हो जाते और जिनका हमारे पुराणों में उल्लेख होता और ये जो मगध का अंचल है इसमें 100-200 नहीं हजारों लोगों के नाम पुराणों में हैं जिन्होंने महावीर के दीक्षा लेते ही उनके समवसरण में बैठकर उनका उपदेश सुना और उनके साथ ही दीक्षा लेकर उनके शिष्य बन गए। उनके सभी गणधर जो ब्राह्मण कुल से संबंध रखते थे वह भी महावीर के मुख्य शिष्य बनकर यहाँ पर बैठे थे। **महावीर जैन नहीं थे महावीर को जैन तो हमने बना दिया, महावीर तो जिन थे। जिन और जैन में अन्तर है जिन कहते हैं उसे जो इन्द्रियों को जीतता है, जो कषायों को जीतता है, जो वासनाओं को जीतता है, जीतने वाले को जिन कहते हैं और जैन कहते हैं उसे जो जीतने वाले की जय बोलता है। हम लोग तो महावीर की जय बोलने वाले हैं, जैन हैं, महावीर तो जिन थे।**

मैं आपसे कहना चाहता हूँ अगर केवल जैन बनकर आप मुक्ति पाना चाहोगे तो तीन काल में मिलने वाली नहीं है। जैन को भी अगर मुक्त होना है तो जिन बनकर ही मुक्त हुआ जा सकता है। जो अपनी कषायों को नहीं जीतेगा, जो अपनी वासनाओं को नहीं जीतेगा वह कभी जिन नहीं बन सकता। यह मार्ग भगवान महावीर ने हमको दिया। उनकी सभा में, उनके समवसरण में No Admission Without Permission का कोई बोर्ड नहीं लटका था। सभी जातियों के लोग यहाँ तक कि पशु-पक्षी भी उनकी सभा में बिना रोक-टोक प्रवेश पाते थे और सब अपनी-अपनी भाषा में उनके मन्तव्य को समझ जाते थे। हजारों लोगों ने उनके उपदेशों को सुनकर अपना कल्याण किया इसलिए महावीर किसी एक जाति के नहीं थे, महावीर किसी एक वर्ग के नहीं थे, महावीर इस धरती के लाल थे ओर मानवता के मसीहा थे और उस मसीहा ने इस धरती पर जन्म लिया था इसलिए यह धरती वंदनीय है, पूजनीय है और इसका विकास होना चाहिए। मैं तो एक बात और कहता हूँ कि आज का इतिहास और भूगोल अगर यह कहता भी हो कि उनकी जन्मभूमि यहाँ नहीं वैशाली में थी तो अभी मैं उसे मानने को इसलिए तैयार नहीं हूँ कि 12 साल तक अगर एक अप्रतिष्ठित प्रतिमा को लोग चावल चढ़ाते रहें, धोक देते रहें तो उसकी पंचकल्याणक करने की जरूरत नहीं होती वह प्रतिष्ठित मान ली जाती है और जहाँ सदियों से लोग आकर महावीर के मंदिर में माथा टेकते रहे हों उसको जन्मभूमि नहीं मानना यह तो कभी तीनकाल में संभव नहीं है।

पुनः मैं एक बात और कहता हूँ कि अगर इतिहास एवं भूगोल के आधार पर हम अपनी श्रद्धा को बदलने का अभियान चलाएँगे तो सम्मेदशिखर भी यह सम्मेदशिखर नहीं है यह भूगोल कहता है, सोनागिर यह सोनागिर नहीं है, यह भूगोल कहता है। हमारे नाथूरामजी प्रेमी विशिष्ट विद्वान् थे उनकी विद्वत्ता के सामने हम तो बौने हैं, तुच्छ हैं। उन्होंने दर्जनों तीर्थों पर प्रश्नचिन्ह उठा दिए। गजपंथा यह गजपंथा नहीं है, सोनागिर यह सोनागिर नहीं है, विपुलाचल की एक श्रेणी का नाम श्रवणगिरि था वही बिगड़ते-बिगड़ते सामण्यगिरि हुआ, फिर श्रमणगिरि हुआ और उसका नाम सोनागिरि हो गया लेकिन लोग उसे भूल गए और उन्होंने दतिया के पास सोनागिर में सिद्धक्षेत्र घोषित कर दिया तो अब सोनागिर को वहाँ से हटाकर ले जाओ विपुलाचल पर्वत पर! क्या यह तीनकाल में संभव है? ज़िस भूगोल के आधार पर हम वैशाली को भगवान महावीर की जन्मभूमि बता रहे हैं वहीं भूगोल यह कह रहा है कि महावीर की प्रथम देशना, महावीर का प्रथम उपदेश विपुलाचल पर्वत पर नहीं हुआ था, गोरखपुर के पास पावा में हुआ था तो क्या विपुलाचल पर्वत पर 12 लाख रु. आज से 30 साल पहले साहू परिवार ने लगाकर जो स्मारक बनाया है उस स्मारक को अब वहाँ से Shift करके गोरखपुर में स्थापित किया जाएगा? अगर भूगोल के हिसाब से हम चलेंगे तो सब बदल जाएगा। अब तक हम भगवान महावीर की प्रथम देशना तिथि श्रावण कृ. 1 को मानते हैं लेकिन भौगोलिक वर्णनों में लिखा है कि वैशाख शु. 10 को उनकी पहली देशना खिरी थी तो क्या हम अपनी देशनातिथि में परिवर्तन करके वीरशासन जयंती का पर्व मनाने की तिथियों में परिवर्तन करना चाहेंगे? अगर भूगोल के आधार पर हमने अपनी श्रद्धा को बदलने का उपक्रम किया तो कहीं कोई तीर्थ सुरक्षित नहीं रहेगा इसलिए जहाँ जो तीर्थ स्थापित हो गया वही तीर्थ है, वही पवित्र स्थान है और उसको किसी भी कीमत पर बदला नहीं जा सकता।

अन्ततः कुण्डलपुर (नालंदा) ही भगवान महावीर का जन्मस्थल है इसी निर्णय को मानते हुए हम सभी विद्वान् आगम की रक्षा, जन्मभूमि की रक्षा में सदैव सहयोग देते रहें, यही मेरी आन्तरिक भावना है।

* * *

'कुण्डलपुर के महावीरा ! शतशः वंदन'

–सौ. समीक्षा नांदगांवकर, नागपुर (महा.)

भारत की पुण्यभूमि में यहाँ की मिट्टी को चंदन जैसा गौरव प्रदान करने के लिए महावीर भगवान का जन्म हुआ था। पहली बार प्राणीमात्र में समता, दया, ममता और अहिंसा का भाव निर्माण करने के लिए महावीर भगवान का आगमन हुआ था। **'जिओ और जीने दो'** का सिद्धान्त प्रतिपादित करने के लिए, हिंसा को अहिंसा से जीतने के लिए, 'अहिंसा परमो धर्मः' के प्रणेता भगवान महावीर 24वें तीर्थंकर के रूप में कुण्डलपुर में अवतरित हुए थे। भगवान महावीर की पुण्य जीवनगाथा दीन-हीन में नवजीवन, असंयमी और कामुक जीवों में संयम और निष्ठा उत्पन्न कर देती है। महावीर भगवान की स्मृति का यशोगान करने वाले तीथक्षेत्र अजर-अमर हो गये। जैसे चांदखेड़ी, चांदनपुर, पावापुरी। पावापुरी से महावीर भगवान को निर्वाणपद प्राप्त हो गया।

आज भी लोग कार्तिक कृष्णा अमावस्या के दिन निर्वाणलाडू चढ़ाकर वहाँ निर्वाणोत्सव मनाते हैं। राजगृही में उनकी प्रथम देशना हुई थी। कुण्डलपुर में तो उन्होंने जन्म ही लिया था। काल परिवर्तन के कारण वर्तमान में बिहार प्रान्त के नालंदा जिले में स्थित कुण्डलपुर नगरी अल्पक्षेत्र वाली होकर वैभवहीन बन गई है। परन्तु यहाँ के कण-कण में महावीर भगवान के जन्म की पवित्रता आज भी विद्यमान है। इसलिए यहाँ की रज प्राप्त करने हेतु देश के कोने-कोने से जैन समाज के हजारों-लाखों श्रद्धालु कुण्डलपुर पहुँचते हैं और 'कुण्डलपुर अवतारी, त्रिशलानंद विभो', ॐ जय महावीर प्रभो' आदि पंक्तियों द्वारा भगवान महावीर की जोर-जोर से गाकर, घंटा बजाकर, दीपक जलाकर आरती करते हैं।

महावीर स्वामी का भारत के इतिहास में एक स्वर्णिम पृष्ठ बन गया है। वर्धमान महावीर भारतीय साहित्य में एक ऐतिहासिक व्यक्ति हैं।

महावीर भगवान का गर्भावतरण–जब स्वर्ग में अच्युतेन्द्र की आयु छह महीने शेष रह गई थी और वह स्वर्ग से छह महीने बाद अवतार लेने वाला था। उस समय से कुण्डलपुर के राजा सिद्धार्थ के नंद्यावर्त महल के प्रांगण में प्रतिदिन साढ़े सात करोड़ रत्नों की वर्षा होने लगी थी।

वैशाली में राजा चेटक के यहाँ अर्थात् नाना-नानी के घर भगवान महावीर जन्म ले सकते थे। परन्तु तीर्थंकर के जन्म के छह महीने पहले से ही कुण्डलपुर में रत्नवृष्टि होना शुरू हो गई थी और वह 15 महीने तक होती रही। इसके आगम में प्रमाण मिले हैं वे रत्न क्या नाना-नानी के घर में बरस सकते थे?

हरिवंशपुराण में भी जिनसेनाचार्य ने लिखा है कि–

'हिरण्य वृष्टिरिष्टाभूद् गर्भस्थेऽपि यतस्त्वयि,
हिरण्यगर्भ इत्युच्यैर्गीवाणैर्गीयसे ततः।।206।। सर्ग 8।।

महावीर पुराण में भी यह रत्नवृष्टि राजा सिद्धार्थ के राजमहल में होती थी, ऐसा उल्लेख है।

असग कवि के वर्धमान चरित्र में भी कुण्डलपुर के चारों ओर तिर्यग्विजृंभक नाम के देवगण कुबेर की आज्ञा से रत्नवर्षा करते थे ऐसा लिखा है। कहीं भी राजा चेटक के यहाँ वैशाली में रत्नवृष्टि हुई ऐसा उल्लेख नहीं मिलता। जहाँ रत्नवृष्टि हुई वहाँ अर्थात् कुण्डलपुर में ही महावीर भगवान का जन्म हुआ ऐसा मानना पड़ेगा।

एक समय रात्रि में प्रियकारिणी जब कुण्डलपुर के राजभवन में नंद्यावर्त महल में शांतचित्त सो रही थीं तब रात्रि के पिछले प्रहर में उन्होंने सुन्दर सोलह स्वप्न देखे थे। राजा सिद्धार्थ ने निमित्तशास्त्र जानकर बताया कि हे रानी! तुम्हारे गर्भ से धर्मतीर्थप्रवर्तक, भावी तीर्थंकर का जन्म होगा। सर्वांग सुंदर, त्रिलोकपूज्य पुत्र प्राप्ति का शुभ समाचार सुनकर कौन सी माता प्रसन्न नहीं होंगी? इस प्रकार महावीर भगवान का आगमन सुनिश्चित हुआ था।

सोलहकारण भावनाएं भाकर तीर्थंकर प्रकृति का बंध बांधने वाले राजानंद का जीव सोलहवें स्वर्ग से चलकर आषाढ़ शुक्ला षष्ठी के दिन माँ त्रिशला के गर्भ में आया। माता-पिता के उत्साह, प्रसन्नता और धन-धान्यादिक वैभव के साथ-साथ बालक भी माँ के गर्भ में दिन-प्रतिदिन बढ़ने लगा।

हरिवंश पुराण में लिखा है कि–माता त्रिशला की सेवा करने 'श्री, ह्री, धृति, कीर्ति आदि दिक्कुमारियाँ बड़े आनन्द से इन्द्र की आज्ञा से तत्पर थी। यथार्थ में वह प्रियकारिणी माता का सौभाग्य नहीं था–उन देवियों का ही सौभाग्य था

कि उनको त्रिलोकीनाथ के माता की सेवा सुश्रूषा करने का श्रेष्ठ योग प्राप्त हो गया था।

चिरप्रतीक्षा के बाद चैत्र शुक्ला त्रयोदशी का शुभ दिन आया। कुण्डलपुर की जनता के लिए यह दिन चिरस्मरणीय हो गया। कुण्डलपुर को भगवान महावीर की जन्मस्थली होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, कुण्डलपुर की माटी भगवान महावीर की ऋणी हो गई। त्रिशला माता की कुक्षि धन्य हो गई।

'स्त्रीणां शतानि शतशो जनयंति पुत्रान्।
नान्या सुतं तदुपमं जननी प्रसूता।।

यह मानतुंग आचार्य ने यथार्थ ही लिखा है। महावीर भगवान की माता होने का गौरव इसी महान नारी 'त्रिशला' को मिला था।

भगवान महावीर की जन्मभूमि 'कुण्डलपुर' ही है ऐसा वर्णन श्री यतिवृषभ आचार्यदेव ने अतिप्राचीन ग्रंथ तिलोयपण्णत्ति में किया है–

'सिद्धत्थरायपियकारिणीहि, णयरम्मि कुण्डले वीरो।
उत्तरफग्गुणिरिक्खे, चित्तसियातेरसीए उप्पण्णो।।549।।

अर्थात् भगवान महावीर कुण्डलपुर में महाराजा सिद्धार्थ और मह्नरानी प्रियकारिणी (त्रिशला) से चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में उत्पन्न हुए।

'महावीर पूजा' में–

'जनम चैतसित तेरस के दिन, कुण्डलपुर कन वरना।
सुरगिरि सुरगुरु पूज रचायो, मैं पूजों भव हरना।।"

ऐसा लिखा है और भक्तगण ऐसा बोलकर ही महावीर भगावन के जन्मकल्याणक का अर्घ्य चढ़ाते हैं। इस प्रकार आगम द्वारा महावीर भगवान की जन्मभूमि बिहार प्रदेश में राजगिरि से 16 किमी. दूर 'कुण्डलपुर' ही है। यह प्रमाणित होता है।

तीर्थंकर सामान्य व्यक्ति नहीं होते, वे इंद्र द्वारा पूजनीय होते हैं। उनके जन्म की इतिहास में और जन्मभूमि की इतिहास और भूगोल दोनों में स्मृति है। महावीर भगवान को तो ऐतिहासिक महत्व प्रदान है परन्तु उनकी जन्मभूमि के बारे में विवाद चल रहा है। जैन इतिहास और जैन भूगोल को सुरक्षित रखने के लिए आगम द्वारा प्रमाणित महावीर भगवान की जन्मभूमि कुण्डलपुर का विकास होना आवश्यक था। 'नंद्यावर्त महल में भगवान महावीर का जन्म हुआ था यह जैन इतिहास में लिखा गया है। परन्तु 'नंद्यावर्त महल' का नाम वर्तमान में कुण्डलपुर में विद्यमान है। कुण्डलपुर जैनधर्म की धरोहर, जैनधर्म का उद्गम स्थान है। उसका विकास करना याने जैन संस्कृति का संरक्षण करना ही है।

जब महावीर ने विवाह योग्य आयु में पदार्पण किया तो माता-पिता ने उनको गृहस्थी के बंधन में बांधने का खूब प्रयत्न किया परन्तु उन्होंने आत्मा का आश्रय लेकर संसार के सर्व बंधनों से मुक्त होने का निश्चय कर लिया था। माता-पिता का प्यार उनको अपने मार्ग से विचलित नहीं कर सका। तीस वर्ष की भरी जवानी में वे घरबार छोड़कर साधु जीवन व्यतीत करने लगे थे। इस प्रकार महावीर भगवान वीतराग मार्ग पर–मोक्षमार्ग पर चल रहे थे। अंत में विहार करते हुए वे पावापुर पहुँचे। वहाँ उन्होंने विहार और उपदेश से विराम लिया। योग निरोधकर, शुक्लध्यान के माध्यम से शेष चार अघातिया कर्मों का नाश कर अंतिम देह का पूर्ण परित्याग करके निर्वाणपद प्राप्त किया।

यह घटना कार्तिक कृष्णा अमावस्या की थी। चारों ओर रात्रि का गहन अंधकार छाया हुआ था। प्रभात होने में कुछ ही समय बाकी था। सूर्य की प्रथम किरण गिरि शिखरों पर प्रस्फुटित नहीं हो पाई थी कि महावीर प्रभु का निर्वाण हो गया। प्रभु के निर्वाण का समाचार पाकर देवों ने पावापुरी आकर दीपों की पंक्तियाँ लगाकर उनका निर्वाणोत्सव मनाया था। लोग प्रभु के बिछड़ने से जहाँ दुःखित थे तो वहीं उनको निर्वाण पद प्राप्त हो गया इसलिए हर्षित भी थे। यह पावन प्रसंग शोकमय हर्ष का और हर्षमय शोक का था। भगवान महावीर के निर्वाण से काली अमावस्या की रात्रि भी प्रकाशमय हो गई थी।

आज तक लगातार एक वही कार्तिक अमावस्या की शाम काली होकर भी अनेकों दीपों के द्वारा जगमगाती है। अतः यह महान पर्व 'दीपावली' के नाम से विख्यात हो गया और महावीर भगवान विश्ववंद्य हो गये।

* * *

महावीर की पहचान कुण्डलपुर से करें न कि वैशाली से

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

जैनरामायण पद्मपराुण की निम्न पंक्तियां वर्तमान के संदर्भ में अक्षरशः सार्थक सिद्ध हो रही हैं–

आचाराणां विघातेन, कुदृष्टीनां च सम्पदा।
धर्मग्लानिपरिप्राप्तमुच्छ्रयन्ते जिनोत्तमाः।।

अर्थात् जब-जब धरती पर सदाचार नष्ट होने लगता है, सच्ची शास्त्रीय दृष्टि निराधार विषयों से बदलने लगती है, धर्म हानि को प्राप्त होने लगता है, तब-तब कोई न कोई जिनोत्तम अथवा जिनमार्ग के पोषक महापुरुष इस धरती पर अवतरित होते हैं अर्थात् हमेशा इस देश में बलि के साथ विष्णुकुमार, रावण के साथ राम, सूर्पणखा के साथ सीता, कंस के साथ कृष्ण जैसी महान आत्माओं ने जन्म लेकर अधर्म और अत्याचार पर धर्म और सदाचार की विजयपताका फहराई है।

वर्तमान कलियुग में भी जैनसंस्कृति के पतन और उत्थान दोनों का मिश्रित रूप चल रहा है। जब संस्कृति से अज्ञात आधुनिक इतिहासवेत्ता मनमानी शोध करने में अपनी अहं भूमिका निभा रहे हैं तब क्यों न हम अपने प्राचीन इतिहास का अवलोकन कर अपनी धरोहरों पर कुठाराघात होने से उन्हें बचाने एवं संरक्षण करने में अपना सर्वस्व न्योछावर कर दें। एक प्राचीन विद्वान ने कहा है कि–

"इतिहास के सृष्टा तो चले गए, पर सृष्ट इतिहास को एकत्र करने वाले भी उत्पन्न नहीं होते। अपनी ही मिट्टी में अपने रत्न दबे पड़े हैं, उनको हमने अपने पैरों से रौंदा और उनको चुनने के लिए समुद्र के उस पार से टॉड, फार्ब्स, ग्रोस, कनिंघम आदि आए। वे इतिहास गवेषणा के लिए नियुक्त नहीं हुए थे परन्तु वे अपने राजकीय कार्य के बाद अवकाश के समय यहां की प्रेमगाथाएं व शौर्यकथाओं से प्रभावित हुए। इनका स्वर उनके कानों में पड़ा और उसी प्रकार ने उनके हृदय में शोधक बुद्धि उत्पन्न कर दी।" श्री सत्यकेतुविद्यालंकार ने "भारत का इतिहास" नामक पुस्तक के पृ. 506 पर इतिहास का लक्षण लिखा है–

इतिहास प्रदीपेन, मोहावरण घातिना।
सर्वलोकधृतं गर्भे, यथावत्संप्रकाशयेत्।।

अर्थात् इतिहास एक ऐसे दीपक के समान है जो मोहरुपी अर्थात् भ्रमरूपी अंधकार को नष्ट करता है जिसका प्रयोजन यह है कि संसार की घटनाओं की आधारभूत बातों व तथ्यों पर सही-सही रूप से प्रकाश डाला जाए। दीपक द्वारा काली वस्तु काली दिखाई देती है और सफेद, वह किसी से पक्षपात नहीं करता। इतिहास का भी यही प्रयोजन है।

महावीर के शासन में जन्म लेने वाले महावीर के भक्तों!

इतिहास का लक्षण बताने वाली ये प्राचीन पंक्तियां आज केलव इतिहास की ही धरोहर बन गई हैं, इन पर अमल करने वाले वर्तमान में कोई इतिहासकार शायद शेष नहीं रहे हैं इसलिए आज का इतिहास भारतसरकार की बदलती राजनीतियों से जुड़कर इतिहास लेखकों की धर्मविद्रोही नीतियों का परिचयमात्र प्रदान करने वाला रह गया है। इन दूषित इतिहासों को पढ़ने से क्षुभित होकर ही एक लेखक ने यही पत्रिका के सम्पादकीय में लिखा है–

"प्रागैतिहासिक काल में हुए आदि तीर्थंकर ऋषभदेव, राम, कृष्ण आदि की जन्मभूमि के संबंध में जहां कोई मतभेद नहीं है वहीं ऐतिहासिक युग में हुए भगवानमहावीर की जन्मभूमि का सर्वमान्य निर्णय न हो पाना आश्चर्यजनक है।

किसी नीतिकार ने कहा है कि–

स्वजातिपूर्वजानां तु, यो न जानाति सम्भवम्।
स भवेत् पुश्चलीपुत्र, सदृशः पुत्रवेदकः।।

अर्थ–अपने पूर्वजों के विषय में जो जानकारी नहीं रखता वह उस कुलटा पुत्र के समान है जिसे अपने पिता के

विषय में पता नहीं अर्थात् अतीत ही वर्तमान का सांस्कृतिक आधार है और इस अतीत को न जानने वाला अपनी सनातन निधि के परिज्ञान बिना निराधार सदृश है।

जिन तीर्थंकर भगवन्तों की दिव्यदेशना से वर्तमान में जैनशासन विद्यमान है, उनके जीवन का परिज्ञान रखना हमारा परम पुनीत कर्तव्य है। आज से 2600 वर्ष पूर्व जब चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर राजा सिद्धार्थ की महारानी त्रिशला से जन्म लेने वाले थे तब इन्द्र ने कुण्डलपुर नगरी की भव्य रचना की थी। 96 मील विस्तृत उस नगरी का वैभव मानो स्वर्गपुरी के समान ही शोभता था। तीर्थंकर भगवान महावीर के जन्म से वह नगरी सदैव-सदैव के लिए पूज्यनीय बन गई थी जो सौभाग्य से आज भी बिहार प्रदेश में नालन्दा के निकट विद्यमान है। यद्यपि काल के प्रभाव और समाज की सुप्तता ने उसका वैभव अपने आंचल में समेटकर हमारी आंखों से ओझल कर दिया है परन्तु उसकी पूज्यता निरंतन बनी रही है। सम्यग्ज्ञान के पिछले अंकों में कई प्राचीन आगम प्रमाणों द्वारा मैंने कुण्डलपुर का भगवान महावीर जन्मभूमि के रूप में दिग्दर्शन कराया है जिसके मूल में विडम्बना छिपी है और वह है कुछ आधुनिक शोधों के आधार से वैशाली को भगवान महावीर की जन्मभूमि कहने का दुष्प्रयास करना।

यह कलियुग की बेबुनियादी शोध का ही प्रभाव मानना पड़ेगा कि महावीर की वास्तविक जन्मभूमि होते हुए भी उसके निराधार विकल्प हमारे समक्ष आ रहे हैं। कुछ ऐसे तथ्यों की ओर सुधी पाठकों का ध्यान आकृष्ट करना चाहती हूं जो निरन्तर शोध की प्रक्रिया में मेरे सामने उजागर हुए हैं।

पं. बलभद्र जैन द्वारा लिखित "भारत के दिगम्बर जैन तीर्थ-महाराष्ट्र" में पृष्ठ 203 पर गजपंन्था क्षेत्र की अवस्थिति के विषय में लिखा है–कुछ विद्वान वर्तमान गजपंथ क्षेत्र को वास्तविक न मानकर आधुनिक खोज मानते हैं उनका तर्क है कि इस क्षेत्र पर न तो कोई प्राचीन मंदिर है और न पुरातत्व ही, किन्तु प्राचीन साहित्य में कुछ प्रसंग या स्थल ऐसे भी प्राप्त होते हैं जिनसे इस बात का निर्णय हो जाता है कि यह क्षेत्र कहां पर अवस्थित था। असगकवि कृत "शान्तिनाथ चरित" में एक प्रसंग है– अमिततेज और श्रीविय ने अपनी विशाल वाहिनी को लेकर अशनिवेगाविद्याधर का पीछा किया तब वह अपनी रक्षा का कोई उपाय न देखकर भाग खड़ा हुआ और नासिक्य नगर के बाहर गजध्वजपर्वत पर जा पहुंचा। उल्लेख इस प्रकार है–

"उर्जयन्त-शत्रुंजय-----नासिक्यनगरसमीपवर्ति
गजध्वजगजपंथ-सिद्धकूट--- तीर्थंकरपंचकल्याणस्थानानि।"

उपर्युक्त उल्लेख में "नासिक्यसमीपवर्ती गजध्वज गजपंथ" नाम देकर सारी शंकाओं का समाधान कर दिया है इसका अर्थ यह ही है कि गजपंथ नासिक नगर के समीप था और उसका अपरनाम "गजध्वज" भी था। वर्तमान में भी गजपन्थ क्षेत्र नासिक शहर से केवल 6 किमी.. दूर है।

यहां पर इस उदाहरण को लेने का तात्पर्य यही है कि जब-जब आधुनिक इतिहासकार एवं शोधकर्ताओं ने किसी वास्तविकता पर प्रश्नचिन्ह लगाया तब-तब अपने-अपने प्राचीन दिगम्बर जैन आगमग्रन्थों के आधार से ही निर्णय हुए हैं अन्यथा प्रत्येक तीर्थ एवं धर्म की बातें विवाद की कोटि में आ जाएंगी।

पार्श्वनाथ, विद्यापीठ, वाराणसी द्वारा प्रकाशित "भ्रमण" पत्रिका अप्रैल-सितम्बर 2001 जन्मभूमि के संदर्भ में कुछ और अधिक प्रकाश डाल रही है।

इस पत्रिका में प्रकाशित लेख "वैशाली-आचार्य विजयेन्द्रसूरि" पृष्ठ 20-49 द्वारा यह स्पष्ट है कि वास्तव में श्वेताम्बर परम्परा द्वारा प्रारंभ में वैशाली को भगवान महावीर की जन्मभूमि माना गया है और दिगम्बर जैन सम्प्रदाय नालन्दा के निकट कुण्डलपुर को महावीर की जन्मभूमि मानता है।

यहां पर विशेष विचारणीय तथ्य यह है कि इसी पत्रिका में प्रकाशित दूसरे आलेख "महावीर के जन्मस्थान पर नया प्रकाश" पृष्ठ 50.54 में पुरातत्व विभाग, बिहार के निदेशक श्री अजय कुमार सिन्हा ने विभिन्न भूगर्भीय, भौगोलिक, ऐतिहासिक तथा भाषायी साक्ष्यों के आधार से वैशाली का भगवान महावीर की जन्मभूमि के रूप में पूर्णतया

विरोध किया है। वह लिखते हैं कि भगवान महावीर यदि वैशाली से संबंधित होते ही उनकी भाषा वैगई होती उन्होंने यह भी लिखा है कि कोई प्राचीन जैन भग्नावशेष वैशाली के निकट प्राप्त नहीं हुआ है जिससे उनकी जन्मभूमि का तथ्य सामने आ सके--इत्यादि।

पुरातत्व सम्बंधी **Directory of Bihar Archaeology by B.P. Sinha** का मैंने अवलोकन किया। उसमें पृष्ठ 223 पर वैशाली के संदर्भ में लिखा है–

"It is still more significant that Vaishali known as the birth place of Mahavira Kundgrama and also as the place which Mahavira visited several times has not yided nany clear Jaina antiquity. Nor the various sites of Yaksha worship; Sarandada; Capala; Vdena; Bahupujiya and the last visited by Mahavira have been indentified. Even Vasukunda believed to be the birth-place of Mahavira has not been excavate............while Vasukunda has not been touched by archaeologist's spade. Thus even Vaishali needs further excavation."

अर्थात् "यह और भी अधिक महत्वपूर्ण है कि वैशाली जिसे महावीर की जन्मभूमि-कुण्डग्राम कहा जाता है और जहां महावीर कई बार गए वहां से कोई स्पष्ट प्राचीन जैन अवशेष प्राप्त नहीं हुए हैं–यहां तक कि वासोकुण्ड, जिसे महावीर का जन्मस्थान माना जाता है, की भी खुदाई की गई है–जबकि वासोकुण्ड को पुरातत्वशास्त्रियों द्वारा स्पर्श भी नहीं किया गया है। इस प्रकार वैशाली में भी आगे खुदाई किये जाने की आवशकयता है।" सार यह है कि पुरातत्व एवं प्राचीन भग्नावशेषों के आधार पर वैशाली की स्थिति भगवान महावीर की जन्मभूमि के रूप में तो कभी सुदृढ़ हो ही नहीं सकती बल्कि यह वैशाली भी वास्तविक वैशाली नहीं है क्योंकि सन् 1950 से 1960 के मध्य उस नगर का नाम "बसाढ़" था और कुछ लोगों नें मिलकर उसका नाम "वैशाली" रख दिया। इस तरह से तो राजधानी दिल्ला में भी एक कॉलोनी का नाम है "वैशाली", वहीं पर निकट में "कौशाम्बी" नामक एक विशाल कॉलोनी है किन्तु ये सभी स्थल महावीर से कोई संबंध नहीं रखते, उसी प्रकार प्राचीन बसाढ़ आज की वैशाली भी केवल नाम बदल देने से महावीर की ननिहाल नहीं हो सकती है। शास्त्रों में वर्णित वैशाली सिन्धुदेश में मानी गई है और कुण्डलपुर नगरी विदेहदेश में कही है। विदेशदेश तो वर्तमान का बिहार प्रदेश है तो वहां सिन्धुदेश हो ही नहीं सकता है अतः अभी तो सिन्धुदेश की असली "वैशाली" नगरी की खोज होनी चाहिए एवं 50 वर्ष से स्थापित वैशाली को प्राचीन नाम "बसाढ़" के रूप में ही माननी चाहिए।

इसी **Directory of Bihar Archaeology** का अवलोकन करने पर मैंने देखा कि पृष्ठ 264 पर लिखा है–

Besides being located in Basukunda-Vaishali; Kundalpur-baragaon near Nalanda is the considered belief of Digamber Jainas as Mahavira's birthplace while many Svetamvara Jains take Lacchuar; near the Lakhisarai railway station as his birthplace-

अर्थात्–नालन्दा के निकट कुण्डलपुर-बड़गांव दिगम्बर जैनों की मान्यतानुसार महावीर की जन्मभूमि है–।।

The site earlier was known as baragaon; which is even today a village adjacent to Nalanda ruins and formed a part of Nalanda complex; who according to Buchanan belonged to he dynasty of the Andhras wo began their rule 80 years after christ and continued for 200 years. But Jains priests told Buchanan that the site represents the residence of Raja Shrenik and his oncesores; who preceded the establishment of the Andhra dynasty here and lived about six or seven centrues earlier.

–अर्थात् नालन्दा के निकट बड़गांव-कुण्डलपुर को **"बुकनैन"** के अनुसार **Andhra dynasty** के **"मग"** राजा द्वारा स्थापित माना गया है। इस **dynasty** का शासनकाल ईसा के 80 वर्ष बाद प्रारंभ होकर 200 वर्ष तक चला परन्तु जैन पुजारियों ने **"बुकनैन"** को बताया कि इस स्थान पर वास्तव में राजा श्रेणिक और उनके संबंधियों का निवास था जो **Andhra dynasty** के पूर्ववर्ती थे और उनसे छह या सात शताब्दी पूर्व हुए थे।"

पुरातत्व की इन पंक्तियों से कुण्डलपुर की जो पहचान नालन्दा और बड़गांव की निकटता से हुई है वही

प्रामाणिकता "दिगम्बर जैन पुस्तकालय" श्रीमहावीरजी-राज. से दिस. सन् 1962, वी.नि.सं. 2486 में प्रकाशित "वृहद् महावीर कीर्तिन" के पृष्ठ 904 पर निम्न पंक्तियों के द्वारा तीर्थयात्रियों को सूचना दी जाती रही है।

कुण्डलपुर

यहां का स्टेशन बड़गांव है। इस दर्शनीय स्थल पर जमीन के अंदर एक विशाल नगरी और जैनमूर्तियां निकली हैं। एक विशाल भवन बौद्धधर्म का भी निकला है। इसके संबंध में कहा जाता है कि यह नालन्दा विश्वविद्यालय और छात्रालय है। दिगम्बरी धर्मशाला में एक मंदिर है जिसमें महावीर स्वामी की प्रतिमा बड़ी सुन्दर है। यह महावीर स्वामी का जन्मस्थान है। बड़गांव स्टेशन वापस आकर राजगृही की टिकट लें।

इन पंक्तियों से एकदम स्पष्ट हो जाता है कि सभी लोग ईसा से छह-सात शताब्दी पूर्व नालन्दा के निकट कुण्डलपुर को ही महावीर का जन्म और निवासस्थल मानते हैं।

जहां तक पर्यटन विभाग का प्रश्न है- बिहार सरकार के पर्यटन विभाग द्वारा प्रकाशित फोल्डर राजगिर में **Kundalpur** को दिगम्बर जैन मान्यतानुसार भगवान महावीर की जन्मभूमि लिखा गया है।

Kundalpur–

The Digamber sect of the Jains believe that Lord Mahavir was born at Kundalpur, 18 km from Rajgir. A Jain temple and two lotus lakes-the Dirga Pushkarni and Pandava Pushkarni mark the spot.

बिहार से प्रकाशित "सप्ततीर्थ दर्शन" नामक रंगीन चित्र वाली पुस्तक में भी 'कुण्डलपुर' और 'लिछवाड़' इन दो जन्मभूमियों के चित्र प्रकाशित हैं जिसमें से कुण्डलपुर दिगम्बर जैनों के अनुसार और लिछवाड़ श्वेताम्बर जैनों के अनुसार महावीर जन्मभूमि है।

लालचन्द एण्ड संस, दरियागंज-दिल्ली द्वारा प्रकाशित "बिहार तथा झारखण्ड के प्रमुख जैन तीर्थ" में पृष्ठ 47 पर वैशाली-कुण्डग्राम के लिए लिखा है कि "उत्तराध्ययन सूत्र, भगवती सूत्र आचारांग सूत्र आदि से यह सिद्ध होता है कि विदेहक्षेत्र में स्थित कुण्डग्राम-वैशाली भगवान महावीर का जन्म स्थल है। इसी कारण भगवान महावीर को विदेह, विदेहदन्त, विदेहसुकुमार और वैशालिक भी कहा गया है।

स्पष्ट है कि ये मान्यताएं श्वेताम्ब ग्रंथों पर ही आधारित हैं एक भी दिगम्बर जैन आगमग्रन्थ वैशाली का समर्थन महावीर जन्मभूमि के रूप में नही करता। वर्तमान की वास्तविकता यह है कि वैशाली को छोड़कर अब श्वेताम्बर समाज 'लिछवाड़' का जन्मभूमि के रूप में समर्थन कर रहा है। इसलिए वैशाली और लिछवाड़ तो श्वेताम्बर मान्यतानुसार जन्मभूमियां हुई, तथा दिगम्बर मान्यतानुसार तो एकमात्र जन्मभूमि कुण्डलपुर-नालन्दा ही है। इसलिए कुण्डलपुर के विकास में ही भारत के सम्पूर्ण दिगम्बर जैन समाज को अपने तन-मन-धन को समर्पित करना चाहिए और इतिहासकारों की बातों में आकर कदापि दिग्भ्रमित नहीं होना चाहिए।

उपरोक्त पुस्तक में पृष्ठ 32 पर श्वेताम्बर परम्परानुसार ही भगवान महावीर स्वामी के गणधर इन्द्रभूति, अगिन्भूति व वायुभूति का जन्म कुण्डलपुर-नालंदा में माना है जबकि दिगम्बर जैनागम के अनुसार गौतम गणधर का कुण्डलपुर से कोई संबंध ही नहीं है वह तो ब्राह्मण नामक एक गांव में जन्मे थे। तात्पर्य यही है कि हमें वास्तविकता का निर्णय करने के लिए दिगम्बर जैन आगम ग्रन्थों के आइने में देखना होगा अन्यथा हमारी मान्यताएं बौद्ध एवं श्वेताम्बर आम्नाय को ही पुष्ट करेंगी और दिगम्बर जैन समाज की समस्त सांस्कृतिक धरोहरें एक दिन विनाश के कगार पर पहुँच जाएंगी।

एक अन्य महत्वपूर्ण तथ्य की ओर भी पाठकों का ध्यान आकर्षित करना आवश्यक समझ रही हूँ-श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थ संरक्षिणी महासभा-लखनऊ द्वारा प्रकाशित "अंगकोर के पंचमेरु मंदिर" पुस्तक के पृष्ठ 49 पर एक सारणी दी गई है। जिसके अनुसार अधिकतर तीर्थंकर भगवन्तों की जन्मभूमियों को अन्य देशों में अवस्थित माना गया है–

वर्तमान तीर्थंकरों के जन्म नगरों से मिलते-जुलते नाम जो दक्षिण-पूर्वी एशियाई देशों में पाए जाते हैं–

क्र.सं.	तीर्थंकर नाम	जन्मनगरी	देश का नाम जहाँ यह नगर अवस्थित है
1.	ऋषभनाथ	अयोध्या	थाईलैण्ड
2.	अजितनाथ	अयोध्या	थाईलैण्ड
3.	अभिनंदनननाथ	अयोध्या	थाईलैण्ड
4.	सुमतिनाथ	अयोध्या	थाईलैण्ड
5.	चन्द्रप्रभ	चन्द्रपुरी	थाईलैण्ड
6.	श्रेयांसनाथ	सिंहपुर	थाईलैण्ड
7.	वासुपूज्य	चम्पा	दक्षिण वियतनाम व वर्मा
8.	अनन्तनाथ	अयोध्या	थाईलैण्ड
9.	धर्मनाथ	रत्नपुर	कम्बोडिया
10.	शांतिनाथ	हस्तिनागपुर	बर्मा
11.	कुंथुनाथ	हस्तिनागपुर	बर्मा
12.	अरनाथ	हस्तिनागपुर	बर्मा
13.	नमिनाथ	विदेह दक्षिण	चीन
14.	वर्धमान	कुण्डलपुर	विदेह का 10वां नगर

यहाँ विचारणीय बात यह है कि क्या आधुनिक शोध के आधार पर अयोध्या को थाइलैण्ड में, रत्नपुर को कम्बोडिया में, चम्पापुर को वियतनाम में और हस्तिनापुर को वर्मा में मानना चाहिए और इन तीर्थों की यात्रा करने सभी को विदेश में जाना चाहिए तथा भारत के सभी तीर्थंकरों की जन्मभूमियों को तिलांजलि दे देना चाहिए। इसी पुस्तक में पृष्ठ 48 पर लेखक ने लिखा है कि-"मैं तो समस्त मुनियों को विनम्र यही प्रस्ताव देना चाहूँगा कि एक बार सिर्फ एक दिन के लिए नियम तोड़कर वायुयान में बैठकर इन मंदिरों के दर्शन अवश्य करें।........अगर मुनिसंघ इस भ्रमण के लिए स्वीकृति दें तो कम्बोडिया सरकार से बातचीत की जा सकती है।"

इस पुस्तक के लेखक से मेरा प्रश्न यह है कि क्या करोड़ों-अरबों रुपये देकर भी अयोध्या के कारसेवकों को भगवान राम की जन्मभूमि थाईलैण्ड में मानने के लिए राजी किया जा सकता है, जरा हिन्दू समाज को एक बार यह कहकर तो देखें? वर्तमान में किया जा रहा शोध तो अपनी माता पर ही प्रश्नचिन्ह लगाए दे रहा है अतः ऐसे शोधकर्ताओं से तो सावधान रहना ही अच्छा है अन्यथा हमें न ज़ाने क्या-क्या खोना पड़ेगा?

अंत में यही कहना है कि जि. नालंदा-बिहार स्थित कुण्डलपुर ही भगवान महावीर की वास्तविक जन्मभूमि है। समस्त दिगम्बर जैन आगम ग्रंथों, प्राचीन मान्यताओं इत्यादि के अनुसार दिगम्बर जैन समाज को यदि भगवान महावीर जन्मभूमि को सम्मान प्रदान करना है तो वह कुण्डलपुर-नालंदा को करना है। आधुनिक शोधों पर जाएंगे तो शाश्वत सिद्धक्षेत्र सम्मेदशिखर को पुरलिया-पं. बंगाल में और अहिच्छत्र को बिजौलिया-राजस्थान में मानना पड़ेगा क्योंकि श्वेताम्बर ग्रंथों, बौद्ध प्रमाणों एवं आधुनिक खोजों के आधार पर ही वैशाली को जन्मभूमि बताया जा रहा है।

अंत में समस्त दिगम्बर जैन समाज से मेरी यह प्रेरणा है कि कहीं भी आप महावीर जन्मस्थल कुण्डलपुर के साथ वैशाली का उल्लेख न करें क्योंकि वह भगवान की ननिहाल थी। कुण्डग्राम, क्षत्रियकुण्ड, वासोकुण्ड इत्यादि नामों के स्थान पर एकमात्र कुण्डलपुर ही प्रयुक्त करें। न ही भगवान महावीर को वैशालिक, विदेहदन्त, विदेहसुकुमार, नाथपुत्र, णिगण्ठपुत्त आदि लिखें वरन् उनके वीर, वर्धमान, महावीर, अतिवीर और सन्मति ये पाँच नाम ही दिगम्बर सम्प्रदाय में मान्य हैं। इनके अतिरिक्त सिद्धार्थपुत्र, त्रिशलानंदन एवं नाथवंशी विशेषण भी प्रयुक्त किए जा सकते हैं। आप अपनी प्राचीन परम्परा का अनुकरण करें और जैनधर्म की शाश्वत सत्ता के संवर्धन में सहयोगी बनें।

* *

वीर जन्मभूमि-एक चिंतन

-डॉ. अभयप्रकाश जैन, ग्वालियर

कुण्डलपुर (नालंदा) भगवान महावीर की जन्मभूमि है-पावन धरा है।

यहाँ नंद्यावर्त महल है-यहाँ एक विशाल जैन मंदिर, दिव्य विरासत और वर्तमान वास्तुकला का जीवित आदर्श है। आओ, इसे नमन करें। यहाँ आकर समस्त विकारों का शमन हो जाता है। यह स्थान संतुलन बोध का प्रत्यक्ष साक्षी है। यहाँ हमें भगवान महावीर के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन का संदेश मिलता है। वीर जन्मभूमि कोई साधारण भूमि नहीं है कि उसकी रक्षा और सुरक्षा के लिए बाहर के डंडे की आवश्यकता पड़े। वह छुईमुई का पौधा भी नहीं है कि छूने से मुरझा जाये और उसे हर समय लू लपट से बचाते रहने में हमारी समूची शक्ति लगानी पड़े। उसे तो वटवृक्ष की भांति अपने बल पर ही खड़े रहना है और समूची जीवराशि को छाया भी देना है।

भगवान महावीर ने कहा-मैंने कुण्डलपुर में जन्म लेकर अपनी जीवन यात्रा आरंभ की है, गति मेरा पंथ, अहिंसा मेरा जीवन है और लक्ष्य मेरी मुक्ति है, मैं एक यात्री हूँ। मुझे इतिहास और इतिहास के साक्षियों से मत बांधो। मैं वर्तमान हूँ और जिस पर मैं अभिमुख हूँ वह भविष्य है। यही जैनधर्म है। परंपरागत श्रद्धा, आस्था और विश्वास पर उठने वाले प्रश्न अनुत्तरित नहीं रहते, उनकी प्रतिध्वनियाँ उनके समाधानों की पालकी बनकर लौटती हैं। आस्था और विश्वास की न जाने कितनी मूर्तियाँ प्रतिक्षण तोड़ी जा रही हैं। आर्ष परम्परा की विरासत देवशास्त्र गुरु की नित्य नई परिभाषाएं गढ़ी जा रही हैं। इसे आधुनिकता एवं प्रगतिशीलता का चिन्ह मान लिया गया है। क्या यह सच है?

हमारे जनमानस में युगों से जिस वीर जन्मभूमि की आस्था की मूर्ति प्रतिष्ठित है उसे वहाँ से हटाने के पश्चात् जो विवाद उत्पन्न होगा उसे तुम भरोगे किस वस्तु से? कभी सोचा है?

परंपरागत निर्मित तीर्थ को इतिहास की अनसूझ पहेलियों से विचलित नहीं किया जा सकता। यदि ऐसा होता है तो हिटलर इस युग का सबसे बड़ा निर्माता सिद्ध हो जाता।

महावीर की दिव्य ज्योति की सबसे अधिक आवश्यकता वहीं है जहाँ अंधकार की जड़ता सबसे अधिक घनीभूत है। पुराने तीर्थों की सुरक्षा करके ही भगवान महावीर का प्रशस्त संदेश विश्वव्यापी बनाया जा सकता है।

हम भूल जाते हैं कि समन्वय का तंत्र ही इस सारे चक्र को संतुलित करता है। जिसमें विरासत को संभालने की क्षमता है, एक बड़े परिवेश में अपने को अभिव्यक्त करने का बल भी उसी के बांटे में आता है।

सतत् साधना में रत ये सरस्वती पुत्र भविष्य दृष्टा हैं, ये युग के प्रतिनिधि भी है, मार्गदर्शक भी हैं। ये नमस्करणीय और प्रणम्य हैं।

प्रकाश अंधकार को समाप्त नहीं करता, उनमें संघर्ष ही नहीं होता और नहीं होती है जय-पराजय। प्रकाश और अंधकार एक विशेष समय में एक विशेष स्थल पर एक साथ कभी होते ही नहीं। इसलिए उनके बीच संघर्ष और जय-पराजय का प्रश्न भी कहाँ उठता है। जिस समय सूर्य यहाँ मध्यान्ह में होता है, तब क्या तहखानों और बंद दीवारों के पीछे अधंकार नहीं दहाड़ता? और जब अंधकार अपने चरम पर होता है तब क्या दीपों के प्रभा क्षेत्रों में प्रकाश नहीं विराजता?

प्रश्न केवल अपना-अपना अस्तित्व बनाए रखने का है। रात्रि का अंधकार फिर आने पर क्या हम यह कहते हैं कि सूर्य का अवतरण व्यर्थ हो गया?

जब-जब प्रकाश असावधान हो जाता है, अंधकार अपना फन फैला देता है। यह अंधकार की विजय नहीं कही जा सकती।

इतिहास के कालखण्ड साक्षी हैं, प्रकाश की ऐसी असावधानियाँ बहुत मंहगी पड़ती है।

प्राचीन जैन आगम के ज्ञानरूपी प्रकाश के द्वारा अपने अज्ञान का अंधकार मिटाएं और सन्मार्ग पर चलकर अपनी श्रद्धा दृढ़ करें, यही मेरी भावना है।

❧ ❧

"मैं समय हूँ"

'समय' के नाम से कुण्डलपुर का इतिहास

एक वार्ता

(फरवरी 2003 कुण्डलपुर में पंचकल्याणक महोत्सव के अवसर पर मंचित एक रूपक)

(पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी से कतिपय भक्तों की यह वार्ता है। पूज्य माताजी के द्वारा समय के नाम से शास्त्रीय तथ्य कहलाए गए हैं। कृपया इसे पढ़ें और नाटक मंचों पर इसका मंचन करवाकर समाज को सत्य तथ्यों से परिचित करावें)–

('समय' कुछ पंक्तियाँ गुनगुनाते हुए मंच पर प्रवेश करता है। वह श्वेतवस्त्र, हार, मुकुट से सुसज्जित है। साथ ही अनेक श्रेष्ठीगण व महिलाएं आदि भी प्रवेश करते हैं।)

समय–

शेरछंद – यह धर्मचक्र सर्वदा चलता ही रहेगा।
जो इसकी शरण ले, वो सुलझता ही रहेगा।।
सुलझता ही रहेगा, सुलझता ही रहेगा।

अहा हा!! मैं समय हूँ समय, मेरा दूसरा नाम कालचक्र है। क्या आप लोग मुझे जानते हैं? यद्यपि मुझे जन्म लेकर अनंत काल व्यतीत हो गया है फिर भी मैं बूढ़ा नहीं हुआ हूँ, मैं पूर्ण जवान हूँ (खिलखिलाकर हंसने लगता है)।

मैंने इस मध्यलोक में अनंत-अनंत तीर्थंकरों के जन्माभिषेक देखे हैं। मैंने क्या नहीं देखा है? सब कुछ देखा है। मैं त्रिकालदर्शी सर्वज्ञ हूँ।

आओ, आओ! जिसे जो कुछ पूछना है मेरे से पूछो, मैं सब कुछ बताने में समर्थ हूँ। संसार में कोई भी ऐसी वस्तु नहीं है कि जिसे मैंने नहीं देखा हो।

महावीर प्रसाद (संघपति)–हे समय! तब तो आप मुझे बतलाइये कि सबसे पहले इस धरती पर क्या था? और कौन थे?

समय–सेठजी! तुमने बहुत अच्छा प्रश्न किया है। सुनो, सुनो और नंद्यावर्त मंडप में उपस्थित महानुभावों सुनो! सबसे पहले इस धरती पर जो था आज भी वही है, मात्र मनुष्यों की आयु, शरीर की ऊँचाई आदि में अन्तर आया है।

कैलाशचंद (लखनऊ)–अरे रे समय! ऐसा लगता है कि तुम्हें कुछ मालूम नहीं है। पहले तो इस भूतल पर बंदर थे, वही बंदर तो मनुष्य बन गये हैं।

कैलाशचंद (दिल्ली)–अरे नहीं! आप लोगों को कुछ मालूम नहीं है। सबसे पहले तो यहाँ ब्रह्माजी ने सृष्टि की रचना की थी।

समय–अरे सुनो! आप लोग आपस में क्यों झगड़ने लग गये। देखो! जैनधर्म के अनुसार यह सृष्टि अनादि और अनंत है, समझे! न इसका आदि था और न अंत ही होगा।

बस मात्र षट्काल परिवर्तन होते रहने से यहाँ की व्यवस्था बदलती रहती है।

दीपक–वह परिवर्तन क्या है?

समय–समय के दो भेद है–अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी, पुनः दोनों के भी छह-छह भेद माने हैं।

1. सुषमा सुषमा 2. सुषमा 3. सुषमादुःषमा 4. दुःषमासुषमा 5. दुःषमा और 6. दुःषमादुःषमा।

ये ही छहों काल उत्सर्पिणी में उल्टे हो जाते हैं अर्थात् दुःषमादुःषमा से शुरू होकर 'सुषमासुषमा' तक पहुँचते हैं।

श्रीमती सुभाषिनी–भला यह षट्काल परिवर्तन कहाँ-कहाँ होता है?

समय–सुभाषिनी! तुमने बहुत ही अच्छा प्रश्न किया है। सुनो, स्वर्गों में यह काल परिवर्तन नहीं है, नरकों में भी नहीं है, मध्यलोक में ढाईद्वीप से परे असंख्य द्वीप समुद्रों में भी नहीं है। यह कालपरिवर्तन मात्र ढाई द्वीप के पांच भरत क्षेत्र और पांच ऐरावत क्षेत्रों के आर्यखण्डों में ही होता है।

दीपक–हां, हां, मैंने गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा लिखित जैन भारती में इस षट्काल परिवर्तन को पढ़ा है।

महावीर प्रसाद–मैंने तो आदिपुराण में पढ़ा है।

अनुपम–मैंने इसे तिलोयपण्णत्ति ग्रंथ में पढ़ा है।

समय–तब तो आप सभी लोग इस परिवर्तन को जानते ही हैं, अतः अब मैं इसका विस्तार नहीं करूँगा।

राकेश जैन–हे समय महाराज! तो क्या आपने भगवान् ऋषभदेव को देखा है?

समय–क्यों नहीं, मैंने तो प्रभु ऋषभदेव के पूर्व के दशावतारों को यानी दशों भवों को भी देखा है।

दीपक–अच्छा-अच्छा समय महाराज! अब आप हमें यह बतलाइये कि भगवान महावीर कहाँ जन्मे थे?

समय–(खिलखिलाकर हंसते हुए) वाह रे वाह! तो अभी तक आपने कुछ समझा ही नहीं। तो आप यहाँ भला किसलिए आए हो?

कैलाशचंद (दिल्ली)–अरे भइया! आप नाराज मत होइए। हम तो यहाँ केवल कुतूहल से आ गये हैं कि भला यहाँ हो क्या रहा है?

श्रीमती सुभाषिनी–अरे भाई समय! मैं तो यहाँ तुम्हारी सुनने आयी हूँ और सही स्थिति समझने आयी हूँ चूँकि हमें विश्वास है कि तुम समय हो तुमने सब कुछ देखा है, तुम सर्वज्ञ हो अतः तुम झूठ कभी नहीं बोलोगे।

महावीर प्रसाद–हाँ, हाँ झूठ तो हमारी गणिनी ज्ञानमती माताजी भी कभी नहीं बोली हैं। हमें तो उनके वचनों पर भी पूर्ण विश्वास है, वे जहाँ अंगुली धर देंगी 'यह भगवान महावीर की जन्मभूमि है' तो मैं वहीं माथा टेक दूँगा।

विजय कुमार जैन–देखो, भाई! मुझे तो पं. सुमेरचंद दिवाकर जी की महाश्रमण महावीर पुस्तक के वचनों पर भी बहुत विश्वास है उन्होंने भी कहा है कि वैशाली जन्मभूमि कथमपि नहीं हो सकती कुण्डलपुर ही जन्मभूमि है।

समय–देखो भाइयों! सुनो, गणिनी ज्ञानमती माताजी भी तो जो कुछ बोलती हैं, वो जैन शास्त्रों के आधार से ही बोलती हैं। इसलिए उनके वचन सारे भारत की जैन समाज को प्रामाणिक मान्य हैं।

स्तुति जैन–देखो समय! आप तो सब कुछ जानते हो ठीक है, किन्तु गणिनी माताजी भी यही कहती हैं कि 'आगम चक्खू साहू' अर्थात् साधु के पास जैन आगम नाम का एक तीसरा नेत्र मौजूद है।

समय–हाँ, यह बात तो मैं भी मानता हूँ।

दीपक–समय महाराज! कुछ विद्वान् भूगोल से वैशाली को जन्मभूमि सिद्ध करने में लगे हैं। यह क्या है?

समय–दीपक जी! यह भूगोल कुण्डलपुर के बारे में हमारे दि. जैन ग्रंथों में है ही नहीं। यह मात्र बौद्ध ग्रंथों के आधार से ही है।

अनुपम–अरे भइया! अगर भूगोल से तुम जन्मभूमि को इधर की उधर करना चाहोगे तो अमेरिका और जर्मन को 'विदेहक्षेत्र' मानना पड़ेगा और वहाँ सीमंधर आदि भगवंतों के समवसरण भी ढूंढ़ने होंगे।

दीपक–क्यों? ऐसा क्यों? अमेरिका विदेहक्षेत्र कैसे बन जायेगा?

समय–भाई! तिलोयपण्णत्ति आदि शास्त्रों में लिखा है कि जब यहाँ दिन होता है तब विदहक्षेत्र में रात और जब वहाँ दिन होता है तब यहाँ रात, यह तो आप सभी देखकर ही आये हो।

श्रीमती सुभाषिनी–यह तो माताजी ने अपनी जैन ज्योतिर्लोक पुस्तक में भी लिखा है कि अमेरिका आदि विदेहक्षेत्र नहीं है। विदेहक्षेत्र यहाँ से बहुत दूर है।

राकेश जैन–इसलिए अमेरिका को तो विदेहक्षेत्र नहीं माना जायेगा।

समय–इसलिए तो मैं कह रहा हूँ कि आप लोग भूगोल का चक्कर छोड़ दो और मेरी बात सुनो चूँकि मैं 'समय' हूँ मैंने तो सब कुछ देखा है ना!

श्रीमती सुभाषिनी जैन–अच्छा, अच्छा समय! तो अब आप ही बताओ आपने यहाँ क्या-क्या देखा है?

समय–मैंने यहीं इसी भूमि पर 96 मील यानी सवा सौ किमी. विस्तृत कुण्डलपुर नगरी देखी है। कब? 2600 वर्ष पूर्व और यहीं पर कुबेर ने रत्नों को बरसाया था, वो भी मैंने देखा है।

दीपक–और क्या-क्या देखा है? (हंसकर) मुझे देखा था क्या? मैं यहाँ भला किसलिए आया था तुम्हें तो मालूम ही है, बतलाइये ना!

समय–अच्छा (हंसकर)! लगता है आपने अपने को साक्षात् सौधर्मइन्द्र ही मान लिया है, ठीक है, ठीक है।

इसी भावना से आप तो सौधर्मेन्द्र का पुण्य संचय कर लोगे। सुनो, आप यहाँ तीर्थंकर भगवान के गर्भ, जन्म कल्याणक मनाने तो आये ही थे, भगवान की बालक्रीड़ा देखने व प्रभु के सामने भक्ति, गीत, संगीत करने भी आते रहते थे।

महावीर प्रसाद–अरे समय! ये सौधर्मेन्द्र मेरे पास ही तो आते थे, यह भी तो आपने देखा होगा?

समय–हाँ, हाँ क्यों नहीं? मैंने देखा है कि महाराज, राजाधिराज सिद्धार्थराज की पूजा करने तो ये ही सौधर्मेन्द्र आते थे और अभी आये हैं।

महावीर प्रसाद–(खुश होकर) समय! तब तो मैं बहुत ही भाग्यशाली हूँ।

कमलचंद–अरे समय! आपने यह तो बताया ही नहीं कि जो यहाँ कीर्तिस्तंभ बनाया जा रहा है वह क्यों बनाया जा रहा है?

समय–अरे कमलचंद जी! आपने भगवान महावीर स्वामी की असली जन्मभूमि की कीर्ति को सारे विश्व में फैलाने के लिए यह कीर्तिस्तंभ निर्मित कराया है।

कमलचंद–भइया समय! मैं सोच रहा हूँ कि मेरा पुण्य भी तो पूज्य गणिनी माताजी ने ही जगाया है तभी तो मैं इन अच्छे-अच्छे कार्यों में जुड़ जाता हूँ अन्यथा पैसे वाले तो दुनियाँ में बहुत हैं।

स्तुति जैन–अच्छा समय! यहाँ तुमने और क्या-क्या देखा है?

समय–मैंने प्रभु वर्द्धमान की सारी बाल क्रीड़ाएँ यहीं देखी हैं। यहाँ प्रभु का **सन्मति** नाम संजय-विजय नाम के महामुनि ने रखा था।

सौ. सुभाषिनी–समय! जैसे उस समय उन महामुनियों की शंका का समाधान हो गया था अतः वे पुलकित हो गये थे, ऐसे ही गणिनी माताजी कह रही हैं कि मुझे भी यहाँ 29 दिसम्बर को आने के बाद अनेक समस्याओं का समाधान मिला है अतः प्रभु की असली जन्मभूमि यही है।

समय–हाँ, हाँ यह भी मैंने देखा है।

अनुपम–वर्तमान शताब्दी में आपने भला और क्या-क्या देखा है?

समय–(खेदखिन्न होकर) मैंने इस कुण्डलपुर की वीरानियत भी देखी है और सुनो (हर्षित होकर) गणिनी ज्ञानमती माताजी द्वारा इस नगरी के, इस जन्मभूमि के उत्थान की एवं रक्षा की प्रेरणा भी देखी है।

दीपक–समय महाराज! यह तो बताओ कि तीर्थंकर भगवन्तों की जन्मभूमियाँ जिनकी महिमा, जिनकी पूजा, जिनकी वंदना देवों ने भी की थी, वे आज ऐसी दुरवस्था में क्यों हैं?

समय–ओह! बड़े खेद की बात है, दीपक! आप समझो! यह पंचमकाल है पंचमकाल! यह इसी की सब महिमा है। भगवान पार्श्वनाथ की जन्मभूमि बनारस में जन्मे हुए लोग तो अपने आपको गौरवान्वित महसूस कर रहे हैं, लेकिन

बनारस के पास स्थित चन्द्रपुरी आदि तीर्थों को तो भूल ही गए हैं?

दीपक–समय! आपने तो यह भी देखा होगा कि मेरे दादाजी, मेरे पिताजी और मेरे बनारस के सभी जैन बंधु बनारस में जन्में भगवन्तों का और उनकी जन्मभूमि स्थलों का बहुत ही मूल्यांकन कर रहे हैं किन्तु अन्य जन्मभूमियाँ उपेक्षित तो हैं।

समय–तब इस विषय में आप क्या सोच रहे हैं?

दीपक–पूज्य गणिनी मांताजी की आज्ञा से आज मैं भी तो तीर्थंकर महावीर की जन्मभूमि की महिमा को आत्मसात् कर रहा हूँ।

सौ. सुभाषिनी जैन–अच्छा समय! आप हमें यहाँ की कुछ और विशेषताएँ बतलाइये?

समय–सुनो, सुनो! यहीं तो माता त्रिशला स्वर्ग से देवों द्वारा लाये गये वस्त्रों को प्रभु को पहनाकर बचपन में उन्हें सजाकर फूली नहीं समायी थीं और यहीं पर तो बगीचे में खेलते हुए वर्द्धमान की संगमदेव ने परीक्षा ली थी। जब प्रभु उस सर्परूपधारी के फण पर क्रीड़ा कर रहे थे, वह दृश्य मैंने जो भी देखा था आज मेरी दृष्टि में वह दृश्य ज्यों की त्यों आ रहा है।

विजय कुमार जैन (पिंकू)–समय महाराज! हर्मन जैकोबी ने सन् 1911 में एक श्वेताम्बर आचार्य को पत्र लिखा था कि मैं तिलोयपण्णत्ति के आधार से नालंदा वाले कुण्डलपुर को ही भगवान महावीर की जन्मभूमि स्वीकार कर रहा हूँ। उनका यह इंगलिश में लिखा पत्र सम्यग्ज्ञान के दिसंबर–2002 अंक में छप चुका है। इसे भी आपने देखा होगा?

समय–हाँ, हाँ! यह सब कुछ मैंने देखा है और अब देख रहा हूँ, यह कुण्डलपुर का ऐतिहासिक पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव।

विजय कुमार जैन (पिंकू)–अहो समय! यह प्रतिष्ठा ऐतिहासिक क्यों हैं?

समय–आप लोग सुनो! यह मात्र पंचकल्याणक प्रतिष्ठा या तीर्थ का जीर्णोद्धार अथवा तीर्थ का विकास ही नहीं है। माताजी केवल तीर्थविकास करने नहीं आई हैं। (आहिस्ते-आहिस्ते) यह संस्कृति की सुरक्षा है, भगवान महावीर की जन्मभूमि की सुरक्षा है, लुप्त किये जा रहे इतिहास को पुनर्जीवित किया जा रहा है।

समझे ना!

महावीर प्रसाद–हाँ, हाँ, समझ गये, समझ गये।

समय महाराज! बहुत-बहुत धन्यवाद आपका।

अब चलो चलें, भगवान महावीर के कल्याणक की अंतरंग क्रियाओं का समय हो रहा है।

समय–चलो चलें, प्रभु की भक्ति करके अमूल्य समय का सदुपयोग करना बहुत ही उपयोगी है।

(सब मिलकर झूमते हुए भजन में तन्मय हो जाते हैं)–

यह धर्मचक्र सर्वदा चलता ही रहेगा।
जो इसकी शरण ले, वो सुलझता ही रहेगा.......।।

* * *

"सुई का काम करो, कैंची का नहीं।"
जिन वचन की श्रद्धा में पत्थर की तरह अचल रहो
तिनके की तरह हल्के-फुल्के नहीं।

–आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज

पंचकल्याणक तीर्थ
एवं
जैन ऐतिहासिक उल्लेख

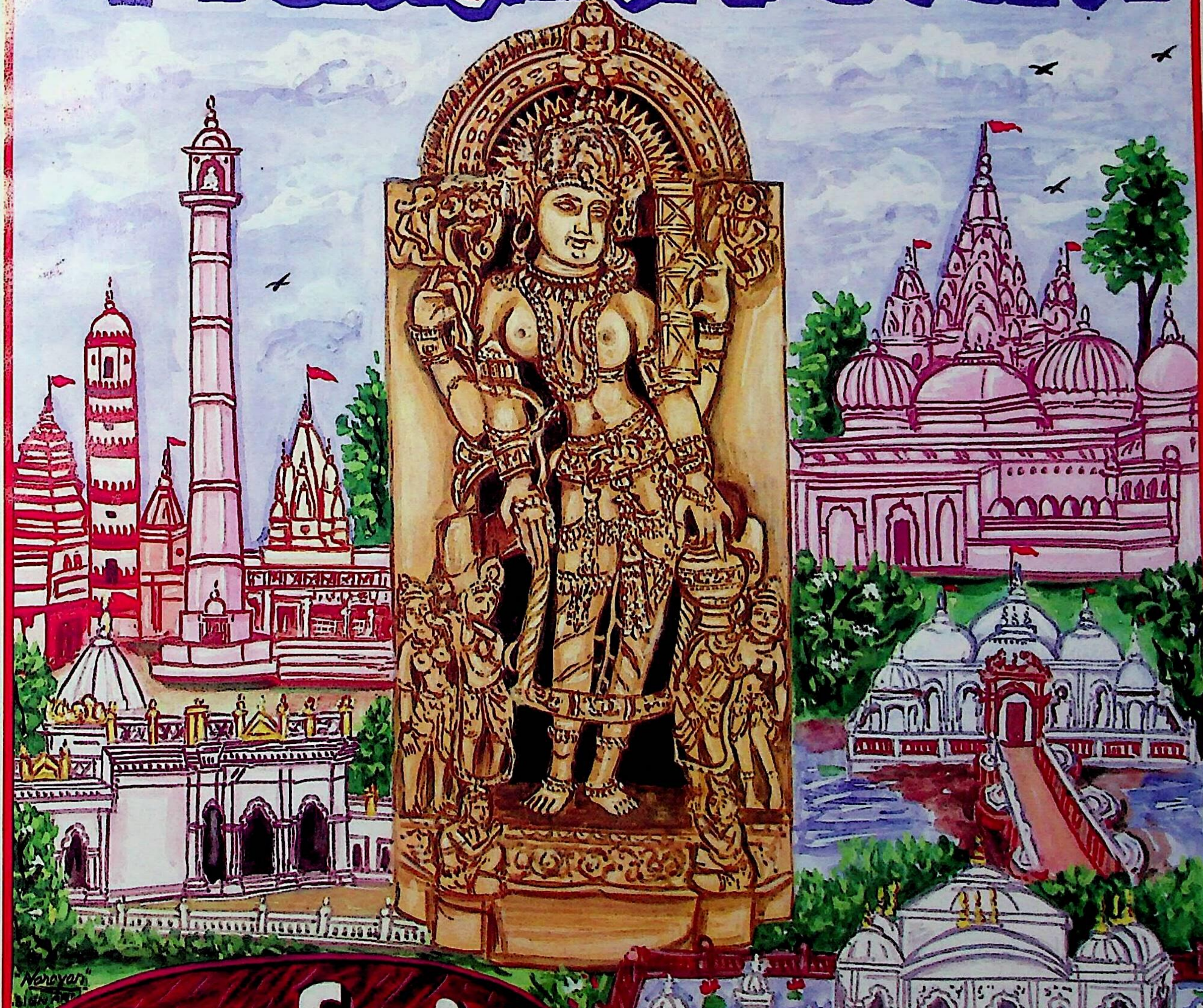

चतुर्थ खंड

श्री गणेश वर्णी दि. जैन (शोध) संस्थान
पुस्तक सं. 4847
दिनांक..............
नरिया (का. हि. वि. वि.) वाराणसी

चौबीस तीर्थंकरों की जन्मभूमियों के परिचय

प्रस्तुति–आर्यिका चंदनामती

तीनलोक के अन्दर मध्यलोक को ही ऐसा पुण्य प्राप्त है कि सिद्ध सदृश उत्कृष्ट पद प्राप्त करने वाले मनुष्य यहीं जन्म लेते हैं। यह नर भव एक चौराहे पर खड़े पथिक के द्वारा किये जाने वाले निर्णय के समान है कि "मुझे किस दिशा में जाना है?" क्योंकि मनुष्यगति से चारों गतियों के मार्ग खुले हैं तथा निगोद में भी जाने का रास्ता साफ है, अतः निर्णय स्वयं को करना है कि हमें कहाँ जाना है? कैसे धर्म करना है?

इन दो पंक्तियों में आप भी अपने मनोभावों को बदलने का प्रयत्न करें–

हम आए हैं निगोद से आशाएं संजोके।
मानुष जनम को पाके फिर निगोद न लौटें।।

अर्थात् प्रत्येक मानव चतुर्गति रूप इतरनिगोद में से कहीं न कहीं से आया है और अब उसे ऐसा कार्य करना है कि पुनः निगोद में न जाना पड़े और शीघ्र मोक्ष की प्राप्ति हो जावे।

बार-बार इन भावनाओं को भाने पर,
अपना कर्तव्य निभाने पर,
विभाव को भगाने पर,
स्वभाव को ध्याने पर,
तीर्थंकर पदवी मिलती है,
समवसरण लक्ष्मी मिलती है।
उस पदवी को नमन,
समवसरण लक्ष्मी को नमन।।

तो हाँ, बस उन्हीं तीर्थंकरों के जन्म से पवित्र नगरियों, तीर्थभूमियों की ओर मैं अपने पाठकों को ले चल रही हूँ, जहाँ की रज मस्तक पर लगाने को मन ललचाने लगेगा। लेकिन यह कलिकाल का दुर्भाग्य ही कहना होगा कि आज हमारे चौबीस तीर्थंकरों की जन्मभूमि में से कुछ तीर्थों के अतिरिक्त प्रायः सभी उपेक्षित हो गई हैं। सिद्धान्ततः सदैव भरतक्षेत्र के समस्त तीर्थंकर अयोध्या में जन्म लेते थे और भविष्य में भी लेंगे तथा सम्मेदशिखर पर्वत से मोक्ष प्राप्त करते थे, किन्तु "हुण्डावसर्पिणी" काल के दोष से इस बार चौबीस तीर्थंकरों में से केवल पाँच का जन्म अयोध्या में हुआ, शेष 19 का जन्म अन्य-अन्य स्थानों में हुआ है। जो सोलह जन्मभूमियों के नाम से प्रसिद्ध तीर्थ हैं। उन सभी का यहाँ संक्षेप में वर्णन प्रस्तुत किया जा रहा है–

तीर्थंकर ऋषभदेव जन्मभूमि
अयोध्या तीर्थ

(अनादिकाल से तीर्थंकरों की शाश्वत जन्मभूमि तीर्थ एवं वर्तमानकालीन पाँच तीर्थंकरों की जन्मभूमि के रूप में प्रसिद्ध)

यह तीर्थ पूर्वी उत्तरप्रदेश के फैजाबाद जनपद में अवस्थित है। अयोध्या में भगवान् आदिनाथ, अजितनाथ, अभिनन्दननाथ, सुमतिनाथ और अनन्तनाथ इन पांच तीर्थंकरों के जन्म हुए तथा आज से 9 लाख वर्ष पूर्व मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र जी ने जन्म लेकर अपने आदर्शों के द्वारा नगरी को राममय बना दिया।

जैनधर्म के अनुसार अनन्त तीर्थंकरों की जन्मभूमि होने से यह अयोध्या नगरी शाश्वत एवं अनादि तीर्थ तो है ही, वर्तमान में वहाँ सभी धर्मों के अनुयायी अपने-अपने ढंग से उसे पवित्र तीर्थ मानते हैं। हिन्दू धर्मानुयायियों के वहाँ लगभग 15000 छोटे-बड़े मंदिर हैं तथा चौबीस घंटे राम नाम की ध्वनि वहाँ के वातावरण को पवित्र बनाए हुए है।

वर्तमान के दिगम्बर जैन मंदिर–

1. इस शाश्वत जैन तीर्थ पर कटरा मुहल्ले में एक प्राचीन जैन मंदिर है। वहाँ सन् 1952 में परम पूज्य आचार्यरत्न श्री देशभूषण महाराज की प्रेरणा से भगवान आदिनाथ, भरत, बाहुबली की खड्गासन प्रतिमाएं विराजमान हुई थीं। इस मंदिर परिसर में 4 वेदियाँ हैं तथा प्रांगण के बीचोंबीच में तीर्थंकर सुमतिनाथ के जन्मस्थल का प्रतीक सुमतिनाथ की टोंक है जिसमें भगवान सुमतिनाथ के चरण स्थापित हैं। पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी ने फरवरी 1993 में इसका जीर्णोद्धार करवाते हुए एक शिलापट्ट पर सुमतिनाथ भगवान् का पूर्ण परिचय तथा अर्घ्य उत्कीर्ण कराकर लगवाया है।

2. तीर्थंकरत्रय टोंक–यहाँ पास में ही (कटरा में) एक स्थल पर पांडुकशिला बनी हुई है। मार्च 1995 में गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से यहाँ तीर्थंकर श्री शांतिनाथ, कुंथुनाथ और अरहनाथ के चरण विराजमान किए गए हैं। अतः भक्तजन हस्तिनापुर का स्मरण करते हुए इस टोंक की वंदना करते हैं।

3. भगवान ऋषभदेव टोंक–स्वर्गद्वार मोहल्ले में भगवान् ऋषभदेव के जन्मस्थल के प्रतीक में उनकी टोंक है जहाँ 16 सीढ़ी ऊपर चढ़कर भगवान के प्राचीन चरण हैं। यहाँ का प्राचीन इतिहास तो चमत्कारिक रहा ही है, नये साक्षात् चमत्कार ने उसे सचमुच अतिशयकारी सिद्ध कर दिया है। "19 जून 1993 को पूज्य गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी जब वहाँ अपने संघ सहित दर्शन करने गईं, तब अकस्मात् वहाँ उनकी आँखों से अश्रुधारा बह चली और कुछ क्षणों के पश्चात् वे प्रभु के चरणों में ध्यान मग्न हो गईं पुनः जाने क्या अन्तर्प्रेरणा मिली कि उन्होंने अयोध्या में ही अपना चातुर्मास करने का पक्का निर्णय ले लिया जिससे तीर्थ का उद्धार हो गया। इस ऐतिहासिक टोंक पर चरणों के पास ही दीवार में भगवान ऋषभदेव के जीवन परिचय और अर्घ्य से उत्कीर्ण एक शिलापट्ट लगवाया गया है तथा बाहर बरामदे में भगवान की स्तुति का एक शिलापट्ट एवं माताजी की स्मृति को चिरस्थाई बनाने हेतु मेरे (चन्दनामती) द्वारा रचित उनकी एक संस्कृत की स्तुति का पत्थर मार्च 1994 में लगाया गया है।

4. लघु कैलाशपर्वत–इसी प्रकार से एक दिन पूज्य माताजी माघ कृष्णा चतुर्दशी (सन् 1994) को ऋषभदेव निर्वाण दिवस पर वहाँ निर्वाणलाडू चढ़वाने के लिए गईं, तो अनायास उनके मन में विचार आया कि यहाँ कैलाशपर्वत बनाना चाहिए। उनकी प्रेरणा के फलस्वरूप वहाँ बरामदे में 4 अप्रैल 1994 को ही एक लघु कैलाशपर्वत का निर्माण करके उस पर भगवान ऋषभदेव के चरण विराजमान किये गये। उसके बाद से वहीं निर्वाणलाडू का कार्यक्रम मनाया जाता है।

5. अजितनाथ टोंक–बेगमपुरा मुहल्ले में यह टोंक है जहाँ भगवान अजितनाथ के चरण विराजमान हैं। यहाँ काफी खुला स्थान है और फरवरी सन् 1994 में इसका जीर्णोद्धार हुआ तथा अजितनाथ भगवान का पूर्ण परिचय अर्घावली का एक शिलापट्ट यहाँ गणिनी माताजी की प्रेरणा से लगाया गया है।

6. अभिनन्दननाथ टोंक–कटरा स्कूल तथा ऊँची सरकारी टंकी के पास यह टोंक है, जहाँ एक कम्पाउंड के भीतर अभिनंदननाथ भगवान के चरण विराजमान हैं। यहाँ पर फरवरी 1994 में भगवान के पूर्ण परिचय एवं अर्घ्य का एक शिलापट्ट लगाया गया है। इस टोंक पर प्रायः हमेशा बंदर अवश्य बैठे मिलते हैं।

7. भरत-बाहुबली टोंक–अभिनन्दननाथ टोंक के पास ही यह टोंक है जहाँ अयोध्या में जन्में प्रथम चक्रवर्ती भरत

तथा प्रथम कामदेव बाहुबली के चरण विराजमान हैं।

8. अनंतनाथ टोंक–सरयू नदी के तट पर राजकीय उद्यान के पीछे एक बड़े परिसर में भगवान अनन्तनाथ के चरण विराजमान हैं। यहाँ के सभी बरामदों में अराजक तत्वों का साम्राज्य फैल गया था। अतः पूज्य माताजी की प्रेरणा से फरवरी 1994 में अयोध्या में जन्में पाँच तीर्थंकरों के अतिरिक्त 19 तीर्थंकरों के चरण विराजमान कर उनके परिचय एवं अर्घ्य के शिलाफलक लगाए गये हैं। फाटक में घुसने पर बाईं ओर के बरामदे में 7 चरण हैं तथा दाहिनी ओर 12 भगवान के चरण हैं। बरामदों को जाली के दरवाजे से बंद कर सुन्दर स्वरूप प्रदान किया गया है।

यहाँ पर एक कमरे में सप्तऋषि चारणऋद्धिधारी मुनियों के चरण तथा एक कमरे में ऋषभदेव की पुत्री आर्यिका श्री ब्राह्मी-सुन्दरी माताजी के चरण विराजमान कर उनके इतिहास को शिलापट्ट पर झलकाया गया है। जीर्णोद्धार के पश्चात् इस स्थल पर अत्यन्त निखार आया है। सरयू नदी की प्राचीनता से संबंधित एक ऐतिहासिक शिलापट्ट भी यहाँ सामने बरामदे में लगाया है तथा अनंतनाथ के परिचय का शिलापट्ट टोंक के अन्दर वाले कमरे में लगा है। परिसर के अन्दर एक कुंआ तथा हैंडपम्प है।

9. बड़ी मूर्ति–अयोध्या के रायगंज मोहल्ले में सन् 1965 में आचार्यरत्न श्री देशभूषण महाराज की प्रेरणा से उनके सानिध्य में एक 31 फुट ऊँची खड्गासन प्रतिमा भगवान ऋषभदेव की स्थापित हुई। पुनः एक विशाल मंदिर का निर्माण हुआ। बड़ी मूर्ति के दाएं-बाएं अजितनाथ, अभिनन्दननाथ, धर्मनाथ तथा सुमतिनाथ-अनंतनाथ, चन्द्रप्रभ की 5-5 फुट ऊँची खड्गासन प्रतिमाएं विराजमान हैं तथा ऊपर दोनों ओर 1-1 वेदी बनी हैं।

10. तीन चौबीसी मंदिर–सन् 1993-94 में पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के अयोध्या प्रवास के मध्य 1994 माघ शु. 12 को 72 पंखुड़ी के एक गुलाबी कमल पर पंचकल्याणक प्रतिष्ठापूर्वक त्रयकालिक चौबीसी की 72 जिनप्रतिमाओं को विराजमान किया गया। ये समस्त प्रतिमाएं सवा फुट की पद्मासन हैं। इसमें भूत-भविष्यत् काल से संबंधित श्वेत पाषाण की मूर्तियाँ हैं तथा बीच में वर्तमान काल की चौबीसी हैं जिसमें पाँच वर्ण की प्रतिमाएं अपने-अपने वास्तविक रंग के आधार पर बनी हैं।

11. समवसरण मंदिर–पूज्य माताजी की पावन प्रेरणा से मूल मंदिर के बाईं ओर इस मंदिर का नवनिर्माण हुआ है। इसमें 22 × 22 फुट की गोलाकार शिला पर शास्त्रोक्त विधि से भगवान ऋषभदेव के समवसरण का चित्रण अतिसुन्दर ढंग से दर्शाया गया है। 20 फरवरी 1995 (फाल्गुन कृ. 5) को इस मंदिर में 152 जिनबिंब प्रतिष्ठित करके विराजमान किये गए हैं।

12. शासन देवताओं की वेदी–रायगंज के बड़े मंदिर में गणिनी माताजी की प्रेरणास्वरूप भगवान ऋषभदेव के शासन देव गोमुख यक्ष एवं शासनदेवी चक्रेश्वरी माता की वेदियाँ बनवाई गई हैं तथा तदाकार क्षेत्रपाल एवं पद्मावती माता की दो वेदियाँ बनाई गई हैं। इसी प्रकार से तीन चौबीसी मंदिर में क्षेत्रपाल-पद्मावती की दो वेदियाँ हैं एवं समवसरण मंदिर में गोमुख यक्ष और चक्रेश्वरी देवी की दो वेदियाँ निर्मित हुई हैं।

ये समस्त शासनदेव जिनधर्म की रक्षा करें तथा शाश्वत तीर्थ अयोध्या का अनंतकाल तक अस्तित्व बनाए रखें यही भगवान ऋषभदेव के चरणों में प्रार्थना है।

13. गुरु मंदिर–रायगंज मंदिर के परिसर में समवसरण मंदिर के ठीक सामने एक भवन में कलिकाल सर्वज्ञ आचार्य श्री कुंदकुंद स्वामी की मूर्ति तथा उसके एक ओर बीसवीं सदी के प्रथम आचार्य चारित्रचक्रवर्ती श्री शांतिसागर महाराज के चरण एवं दूसरी ओर ऋषभदेव प्रतिमा निर्माण के प्रेरणास्रोत भारत गौरव आचार्यरत्न श्री देशभूषण महाराज के चरण 23 मार्च 1995 को विराजमान किये गये हैं।

14. ऋषभदेव की उत्तुंग पद्मासन प्रतिमा–सरयू तट पर बने सरकारी राजकीय उद्यान (भगवान ऋषभदेव राजकीय उद्यान) में पूज्य माताजी की प्रेरणा से एक 21 फुट उत्तुंग भगवान ऋषभदेव की पद्मासन प्रतिमा स्थापित हैं। 20 फरवरी 1995 को उस मूर्ति का अनावरण हुआ था। हर जाति के नर-नारियों की श्रद्धा के केन्द्र वे भगवान सबके मनोरथ सिद्ध करते हैं।

अयोध्या के वन्दनीय स्थलों के रूप में इन प्राचीन एवं नवीन जिनमंदिरों का दिग्दर्शन मैंने कराया है किन्तु वास्तव

में तो यहाँ का कण-कण पवित्र है। यात्रियों के लिए भी यहाँ अब आधुनिक सुविधाओं से युक्त 20 फ्लैटों का सेट "ज्ञानमती निलय" नाम से बना हुआ है। 16 फ्लैटों का एक सेट "आचार्य देशभूषण निलय" के नाम से है एवं 16 फ्लैटों का एक सेट "आचार्य शांतिसागर निलय" के नाम से बनकर तैयार हो चुका है। एक बड़ी भोजनशाला का निर्माण भी हुआ है। वहां जाकर तीर्थ परिचय के साथ-साथ अपनी आत्मा को भी आप तीर्थ बनाने की भावना करें, यही तीर्थयात्रा की सार्थकता है।

भगवान ऋषभदेव नेत्र चिकित्सालय—पूज्य माताजी की प्रेरणा से उत्तरप्रदेश सरकार द्वारा सन् 1994 से इस चिकित्सालय का संचालन किया जा रहा है। जनकल्याणार्थ किया गया यह अस्पताल अयोध्यावासियों की आवश्यकतापूर्ति में संलग्न है।

विश्वविद्यालय में भगवान ऋषभदेव जैन पीठ—उत्तरप्रदेश सरकार के द्वारा ही पूज्य माताजी की प्रेरणानुसार फैजाबाद के डा. राममनोहर लोहिया विश्वविद्यालय में इस जैनपीठ के भवन का नवनिर्माण हुआ है। इस भवन के ऊपर जैनधर्म के प्रतीक के रूप में ऋषभदेव तीर्थंकर की एक प्रतिमा स्थापित है तथा जैनधर्म से संबंधित विषयों पर शोधकार्य यहाँ से संचालित होता है। इस प्रकार अयोध्या तीर्थ पर धार्मिक कार्यकलापों के साथ-साथ सेवा एवं शिक्षा के क्षेत्र में भी निरन्तर प्रगति चल रही है।

तीर्थंकर संभवनाथ जन्मभूमि
श्रावस्ती तीर्थ

तृतीय तीर्थंकर भगवान संभवनाथ के जन्म एवं चार कल्याणकों से पवित्र "श्रावस्ती" तीर्थ उत्तर प्रदेश के बलरामपुर-बहराइच रोड पर अवस्थित है। अयोध्या से यह 110 किमी. है तथा लखनऊ से लगभग 160 किमीं. है। प्राचीन जैन तीर्थ के साथ-साथ यह बौद्धों का भी प्रसिद्ध तीर्थ बन गया है यहाँ बौद्धों के अनेक मंदिर तथा दर्शनीय स्थल बने हुए हैं।

जैन तीर्थ स्थल—यहां एक बहुत प्राचीन खण्डहर है जो भगवान संभवनाथ की जन्मस्थली (महल) का प्रतीक माना जाता है। पुरातत्व विभाग के अधिकार में यह खण्डहर है अतः इस स्थल पर कोई चरणपादुका आदि का निर्माण भी नहीं हो सका है, मात्र श्रद्धावश जैन यात्री वहाँ जाकर टीले का दर्शन करते हैं और उसे संभवनाथ का प्राचीन महल मानकर मस्तक झुका कर चले जाते हैं।

वर्तमान में वहाँ उत्तरप्रदेश पुरातत्व विभाग द्वारा उस टीले की व्यापक स्तर पर खुदाई चल रही है, जहाँ से बड़ी संख्या में जैन तीर्थंकरों की एवं यक्ष-यक्षिणी की मूर्तियाँ उपलब्ध हो रही हैं जिन्हें संग्रहालय में स्थापित किया जा रहा है।

बलरामपुर से बहराइच जाने वाली सड़क के किनारे सन् 1966 में एक दिगम्बर जैन मंदिर का निर्माण हुआ था। यह शिखरबन्द मंदिर है। इसमें एक हाल में एक वेदी बनी हुई है जिसमें भगवान संभवनाथ की श्वेतवर्ण पद्मासन पौने चार फुट अवगाहना वाली भव्य प्रतिमा विराजमान है। इस मूलनायक प्रतिमा के अतिरिक्त वेदी में कुछ और धातु की प्रतिमाएं भी विराजमान हैं। परिसर के अन्दर धर्मशाला भी है जिसका अब जीर्णोद्धार हो चुका है तथा कुछ नये कमरे भी बने हैं।

सन् 1995में यहाँ नवीन मंदिर का निर्माण भी हुआ है जिसमें सामने बीच की वेदी में भगवान संभवनाथ के अतिरिक्त दो पद्मासन तथा दो खड्गासन प्रतिमाएं हैं तथा तीन ओर दीवार में चौबीस तीर्थंकरों की पद्मासन प्रतिमाएं अलग-अलग वेदियों में विराजमान हैं। मंदिर का शिखर सुन्दर नये ढंग का है जिसमें सबसे ऊपर चार दिशाओं में चार प्रतिमाएं विराजमान हैं।

श्रावस्ती कमेटी के कार्यकर्ताओं ने कई वर्षों के परिश्रम से इस विशाल जिनमंदिर का निर्माण कराया तथा मार्च 1995 में उसकी पंचकल्याणक प्रतिष्ठा भी सम्पन्न कराई है किन्तु वास्तुशास्त्र के अनुसार वहां एक कमी रह गई जिसके बारे में 4 अप्रैल 1995 को पूज्य गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी ने श्रावस्ती पहुँचने पर वहाँ के कुछ लोगों को

अवगत कराया था। मूल मंदिर के बाईं ओर इस चौबीसी मंदिर का निर्माण होने से दाईं ओर का हिस्सा पूरा खाली है। अतः वास्तुशास्त्र के अनुसार दूसरी ओर भी एक मंदिर का निर्माण शीघ्र होना चाहिए ताकि दोष दूर होकर क्षेत्र की उन्नति में चार चांद लगें। इस बड़े दोष के अतिरिक्त वहां एक कमी और देखने को मिली कि जैन मंदिर परिसर के प्रवेशद्वार के ऊपर राजा सुहेलदेव का तलवार लिए हुए घोड़े पर बैठा स्टेचू बनाया गया है। इस विषय में भी पूज्य माताजी ने कार्यकर्ताओं को बताया कि इस स्थान पर भगवान संभवनाथ का पद्मासन स्टेचू होना चाहिए। अहिंसा के केन्द्र जैन मंदिरों के मुख्य द्वार पर हिंसा के प्रतीक तलवार आदि शस्त्र नहीं दिखाए जाने चाहिए। सुहेलदेव यद्यपि यहां के जैन राजा थे अतः उनका यह स्टेचू किसी पार्क में लगाकर "सुहेलदेवपार्क" बना दें किन्तु प्रवेश द्वार पर यह शोभास्पद नहीं है। इसी प्रकार 1-2 छोटी-छोटी त्रुटियां भी हैं जिनसे क्षेत्र के विकास में बाधा पहुँचने की पूर्ण संभावना है। अतः पदाधिकारियों को शीघ्र इस ओर ध्यान देना चाहिए।

वास्तव में तीर्थों को अपनी व्यक्तिगत सम्पत्ति न समझकर खुले मन से वहां के कार्यकर्ताओं को प्रतिष्ठाग्रंथ एवं शिल्पशास्त्र के जानकार प्राचीन साधुओं एवं विद्वानों से सलाह लेकर ही मंदिर आदि का निर्माण करवाना चाहिए तभी तीर्थक्षेत्रों का चहुंमुखी विकास संभव होता है अन्यथा वे उपेक्षित ही बने रहते हैं।

श्रावस्ती तीर्थ के दिगम्बर जैन मंदिर परिसर के बगल में ही श्वेताम्बर जैन समाज का भी मंदिर बना हुआ है। इस प्रकार यह तीर्थ जैनियों का प्रमुख तीर्थ है। भगवान संभवनाथ का समवसरण भी सर्वप्रथम यहीं रचा गया था, यहीं से उन्होंने धर्मतीर्थ का प्रवर्तन किया था। ऐसी पावन तीर्थ भूमि को श्रद्धापूर्वक शत-शत नमन।

तीर्थंकर पद्मप्रभ जन्मभूमि
कौशाम्बी तीर्थ

उत्तरप्रदेश में इलाहाबाद से 60 किमी. दूर स्थित छठे तीर्थंकर भगवान पद्मप्रभू के जन्म से पावन इस कौशाम्बी तीर्थ को जहाँ तीर्थंकर जन्मभूमि का गौरव प्राप्त है वहीं यहाँ भगवान के चार कल्याणक भी शास्त्रों में माने गये हैं। श्री पद्मप्रभु तीर्थंकर के गर्भ-जन्म, तप और ज्ञान कल्याणकों को मनाने हेतु इन्द्र-देव सभी ने इस नगरी में आकर अगणित रत्नों की वर्षा की थी। यह नगरी उन दिनों विश्व के आकर्षण का केन्द्र बन गई थी।

प्रसिद्ध आर्षग्रन्थ उत्तरपुराण में वर्णन आया है–

तीर्थंकर पद्मप्रभु ने कौशाम्बीपुरी में पिता धरणराज और माता सुसीमा से कार्तिक कृष्णा त्रयोदशी के दिन चित्रानक्षत्र में जन्म लिया था।

वर्तमान की पूजाओं में कहीं कार्तिक शुक्ला त्रयोदशी तिथि भी आती है।

इतिहास बताते हैं कि उस समय कौशाम्बी अत्यन्त समृद्ध महानगरी थी किन्तु दुर्भाग्यवश आज तो वह खण्डहरों के रूप में पड़ी हुई है। कहते हैं कि वर्तमान पाली, सिंहबल, कोसम, पभोसा ये सब गांव पहले कौशाम्बी के अन्तर्गत थे। वास्तव में तो कौशाम्बी में भगवान के गर्भ-जन्म कल्याणक ही हुए थे और 'पभोसा' जो कौशाम्बी के उद्यान का पर्वत कहलाता था वहाँ दीक्षा और ज्ञान कल्याणक हुए थे। अतः ये दोनों स्थान एक-दूसरे से अभिन्न ही हैं, कौशाम्बी से भिन्न पभोसा का अपना कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है। वर्तमान में दोनों ही स्थानों को "तीर्थ" माना जाता है क्योंकि आज यह कौशाम्बी से 8-10 किमी. दूर यमुना तट पर अवस्थित है। यहाँ एक प्राचीन किला भी था। कहते हैं इसे पाण्डवों ने बनवाया था। यह आजकल खण्डहर पड़ा हुआ है। इस किले के कारण इस स्थान का नाम भी कौशाम्बीगढ़ हो गया है।

चन्दनबाला की बेड़ियाँ यहीं टूटी थीं–कौशाम्बी नगरी का एक महत्वपूर्ण घटनाचक्र भगवान महावीर के काल से संबंधित है जब महावीर दीक्षा के कुछ दिनों पश्चात् यहाँ पधारे थे। वे आहार चर्या के लिए भ्रमण कर रहे थे कि संयोगवश उस समय वैशाली के अधिपति राजा चेटक की पुत्री कुमारी चन्दना दुर्भाग्य के चक्र में पड़कर सेठ वृषभसेन की सेठानी द्वारा बन्धन में डाल दी गई थी।

झूठी सौत कल्पना की ईर्ष्या से सेठानी ने उसे जंजीरों से बाँध रखा था और खाने के लिए कोदों का भात देती थीं। चन्दना ने ज्यों ही प्रभु महावीर को देखा त्यों ही पड़गाहन के लिए आगे बढ़ते ही उसके सारे बंधन टूट गये और शरीर उत्तम वस्त्राभूषणों से अलंकृत हो गया। उसके शील के प्रभाव से मिट्टी का सकोरा स्वर्ण पात्र बन गया, कोदों का भात उत्तम शालि धान्यरूप खीर में परिवर्तित हो गया। नवधाभक्ति पूर्वक चन्दना ने तीर्थंकर प्रभु को आहार दिया वह अपने सब शोक संताप को भूल गई। इन्द्रों ने इस उपलक्ष्य में पंचाश्चर्य की वृष्टि कर दी।

भगवान महामुनि तो आहार के पश्चात् वन की ओर चले गये और सेठानी उससे क्षमायाचना करती हुई पश्चाताप करने लगी। कौशाम्बी के नागरिक आकर चन्दना के पुण्य की सराहना कर रहे थे। यह पुण्यचर्चा राजमहलों में भी पहुँची। कौशाम्बी नरेश शतानीक की पटरानी मृगावती ने सुना तो वह भी राजकुमार उदयन के साथ स्वयं उस महिमा को देखने आ गई किन्तु उसे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि यह कन्या तो और कोई नहीं, मेरी छोटी बहन चन्दना ही है। मृगावती ने सारी स्थिति ज्ञात की और चन्दनबाला को बड़े आदरपूर्वक राजमहल लिवा ले गयी किन्तु चन्दनबाला को तो अब संसार से असली वैराग्य हो गया था अतः उसने राजसुखों को ठोकर मारकर भगवान महावीर की शरण प्राप्त कर ली। समवसरण में उसने आर्यिका दीक्षा धारण कर 36000 आर्यिकाओं में प्रमुख गणिनीपद को सुशोभित किया।

वर्तमान में कुछ लोग कहते हैं कि कौशाम्बी के बाजारों में चन्दना को दासी के रूप में बेचा गया था क्योंकि उस समय दासी प्रथा का प्रचलन था किन्तु दिगम्बर जैन परम्परानुसार यह कथन पूर्ण असत्य है। इस विषय में वास्तविक तथ्य यही है कि वैशाली के उद्यान से एक विद्याधर द्वारा अपहरण की गई राजकन्या चन्दना अपने शील की रक्षा करती हुई एक भील के द्वारा कौशाम्बी के नगर सेठ वृषभदत्त को सौंपी गयी और वहाँ पुत्री बनाकर रखी गई किन्तु सेठानी ने अकारण ही उसके चारित्र पर संदेह करके उसका सिर मुंडवाकर तहखाने में डाल दिया और उसे खाने के लिए कोदों का भात देने लगी। अन्ततोगत्वा चन्दना की पवित्रता भगवान महावीर के निमित्त से प्रगट हुई और वह एक ऐतिहासिक साध्वी के रूप में परमपूज्य बन गई। अतः यहाँ यह प्रेरणा ग्रहण करना है कि आप लोग अपने लेखों में चंदना को कभी दासी के रूप में बिक्री का उल्लेख न करें और न ही नाटकों में उसका इस प्रकार दिग्दर्शन करावें, बल्कि उत्तरपुराण के आधार से उन सतीचंदना का वास्तविक जीवन ही प्रस्तुत करें ताकि पुण्यबंध की क्रिया में पापबंध का कार्य न होने पावे।

विधि की कैसी विडम्बना है कि जो नगरियाँ कभी जैनधर्म का प्रमुख केन्द्र रहीं, आज वहाँ एक भी जैन का घर नहीं मिलता है। यही दशा कौशाम्बी नगरी की भी है। वहाँ एक दिगम्बर जैन मंदिर है। वहाँ की वर्तमान स्थिति चिन्तनीय है और यह स्थल अपने उद्धार एवं विकास का इंतजार कर रहा है।

कौशाम्बी से 10 किमी. दूर प्रभासगिरि तीर्थ पर निर्मित जिनमंदिर का पंचकल्याणक सन् 1996 में हुआ पुनः सन् 2001 में पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी के साथ हम सभी को कौशाम्बी एवं प्रभासगिरि तीर्थ के दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त हुआ। तीर्थदर्शन के साथ-साथ पूज्य श्री की प्रेरणा से कौशाम्बी के मंदिर में भगवान पद्मप्रभु के चार कल्याणक के प्रतीक में चतुर्मुखी चार चरणचिन्हों का एक शिलाफलक विराजमान किया गया है। उसी समय मई 2001 में प्रभासगिरि में मानस्तम्भ का पंचकल्याणक हुआ, भगवान पद्मप्रभु की विशाल पद्मासन प्रतिमा, पर्वत कें मंदिर हेतु सवा दो फुट पद्मासन प्रतिमा तथा कौशाम्बी के इतिहास से संबंधित आहार मुद्रा की भगवान महावीर की एवं महासती चंदना की प्रतिमा स्थापित हुई है।

भगवान पद्मप्रभु के जन्म से पावन उस कौशाम्बी नगरी का खूब विकास हो तथा पभौसा (प्रभासगिरि) तीर्थ के द्वारा अहिंसा का संदेश विश्व में प्रसारित होता रहे यही मंगल कामना है।

तीर्थंकर सुपार्श्वनाथ एवं पार्श्वनाथ जन्मभूमि

वाराणसी तीर्थ

काशी और वाराणसी नाम से प्रख्यात बनारस नगरी कर्मभूमि के प्रारंभ से ही इन्द्र के द्वारा बसाई गई थी। यहाँ सातवें तीर्थंकर भगवान सुपार्श्वनाथ तथा तेईसवें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ के (जन्म तथा उन दोनों के क्रमशः) चार एवं तीन कल्याणक हुए हैं। जब वहाँ के महाराजा सुप्रतिष्ठ अपनी 'पृथ्वीषेणा' नामक महारानी के साथ राज्य कर रहे

थे तब सुपार्श्वनाथ के गर्भ में आने के छह माह पूर्व से लेकर जन्म होने तक कुबेर ने लगातार पन्द्रह माह तक रानी "पृथ्वीषेणा" के महल में रत्नों की वर्षा की थी। वे भादों सुदी षष्ठी तिथि को माता के गर्भ में आए तथा ज्येष्ठ शुक्ला द्वादशी के दिन विशाखा नक्षत्र में उनका जन्म हुआ। पुनः जन्मतिथि में उन्होंने दीक्षा धारण की एवं फाल्गुन कृ. षष्ठी में उन्हें केवलज्ञान उत्पन्न हुआ था। सम्मेदशिखर पर्वत से भगवान सुपार्श्वनाथ ने फाल्गुन कृ. सप्तमी को निर्वाण प्राप्त किया था। इनके शरीर की ऊँचाई 800 हाथ थी, वर्ण हरा था।

इसके पश्चात् भगवान पार्श्वनाथ के संबंध में वर्णन है कि–

भगवान पार्श्वनाथ वाराणसी नगरी में पिता अश्वसेन और माता वामा से पौष कृष्णा एकादशी के दिन उत्पन्न हुए। उत्तर पुराण में इनकी माता का नाम ब्राह्मी भी आया है। तीर्थंकर पार्श्वकुमार ने विवाह नहीं किया था, तीस वर्ष की अवस्था में एक दिन राजसभा में अयोध्यानरेश जयसेन के दूत द्वारा भगवान ऋषभदेव का चरित्र सुनते-सुनते उन्हें वैराग्य हो गया था तब उन्होंने अश्ववन में जाकर जैनेश्वरी दीक्षा धारण कर ली। उन्होंने पौष कृ. 11 अपनी जन्मतिथि को दीक्षा ली एवं संवर नामक ज्योतिषी देव (कमठ नामक पूर्व भव का वैरी) के दारुण उपसर्गों को सहनकर चैत्र कृ. चतुर्थी[1] तिथि को अहिच्छत्र में केवलज्ञान प्राप्त किया तथा श्रावण शुक्ला सप्तमी के दिन सम्मेदशिखर पर्वत से मोक्षधाम को पधारे हैं। उनके बाद सम्मेदशिखर पर्वत से किसी भी तीर्थंकर ने मोक्ष की प्राप्ति नहीं की है। अतः वह पर्वत वर्तमान में "पारसनाथ हिल" के नाम से जाना जाता है।

वर्तमान में बनारस नगरी हिन्दुओं के तीर्थधाम से अधिक प्रसिद्धि को प्राप्त है किन्तु प्राचीन इतिहास देखने पर ज्ञात होता है कि जिनधर्म की प्रभावना के अनेक कथानक यहाँ से जुड़े हुए हैं। सर्वप्रथम काशीनरेश अकम्पन ने अपनी पुत्री "सुलोचना" का स्वयंवर रचकर इस धरती पर स्वयंवर प्रथा प्रारंभ की थी। हस्तिनापुर के राजकुमार तथा सम्राट् भरत के प्रमुख सेनापति जयकुमार के गले में वरमाला डालकर सुलोचना ने कन्याओं को कुल परंपरा का ध्यान रखते हुए स्वाधीनता-पूर्वक अपना पति चुनने का इतिहास बनाकर कन्याओं की महत्ता प्रदर्शित की थी।

एक अन्य पौराणिक उल्लेख के अनुसार भगवान मल्लिनाथ के तीर्थ में नौवें चक्रवर्ती "पद्म" का जन्म बनारस में हुआ था। तब उन्होंने चक्ररत्न के द्वारा छह खंड को जीतकर बनारस को ही अपनी राजधानी बनाया था।

इसके पश्चात् यहाँ इतिहास की सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटना घटी थी, वह थी समंतभद्र की। कथानक आता है कि समंतभद्र जी को मुनि अवस्था में भस्मक व्याधि हो गई थी जिसकी उपशांति के लिए उन्होंने गुरु आज्ञा से मुनिवेष का परित्याग कर दक्षिण भारत से उत्तर की बनारस नगरी में आकर एक शिवमंदिर में आकर शिवजी की प्रतिमा को साक्षात् नैवेद्य खिलाने की बात कही थी। उस समय वाराणसी के राजा शिवकोटि थे। उन्हें एक बार मंदिर के पुजारियों से ज्ञात हुआ कि समंतभद्र महादेव जी के भोग का सारा नैवेद्य स्वयं खाते हैं। तब राजा को बड़ा क्रोध आया और उन्होंने समन्तभद्र से शिवपिण्डी के समक्ष गलती स्वीकार करके नमस्कार करने को कहा। समन्तभद्र की भस्मक व्याधि तब तक शान्त हो चुकी थी, उन्होंने भावपूर्वक चौबीसों तीर्थंकर की स्तुति रचना करके उसे पढ़ना शुरू कर दिया। जब वे भगवान चन्द्रप्रभु की स्तुति पढ़ रहे थे तभी शिवपिण्डी फट गई और चन्द्रप्रभ की प्रतिमा उसमें से प्रगट हो गई। यह चमत्कार देखकर राजा शिवकोटि भी उनके अनुयायी बन गए। समन्तभद्र ने पुनः मुनिदीक्षा लेकर स्व-पर कल्याण किया।

हिन्दी के प्रसिद्ध कवि बनारसीदास भी यात्रा के निमित्त काशी में आए थे। उनके लिखे हुए अर्द्धकथानक नामक आत्मचरित ग्रंथ से पता चलता है कि वे व्यापार आदि के सिलसिले में वाराणसी कई बार आते थे।

बनारस के स्थानीय भारत-कला भवन में पुरातत्व संबंधी बहुमूल्य सामग्री संग्रहीत है। यहाँ राजघाट तथा अन्य स्थानों पर खुदाई में जो पुरातत्व सामग्री उपलब्ध हुई थी, वह इस कला भवन में सुरक्षित है। यह सामग्री विभिन्न युगों से संबंधित है। इसमें पाषाण और धातु की अनेक जैन प्रतिमाएं भी हैं ये कुषाण काल से लेकर मध्यकाल तक की हैं।

बनारस में 'भदैनी जैन घाट' नाम से एक स्थान है जो भगवान सुपार्श्वनाथ का जन्मस्थान माना जाता है। यहाँ आजकल स्याद्वाद महाविद्यालय नामक प्रसिद्ध शिक्षा संस्था है। इस भवन के ऊपर भगवान सुपार्श्वनाथ का मंदिर है। यह गंगा तट पर अवस्थित है, दृश्य अत्यंत सुन्दर है। मंदिर छोटा ही है किन्तु शिखरबद्ध है। यहाँ पूज्य गणिनीप्रमुख

---

1. उत्तरपुराण में चैतकृष्णा चतुर्दशी तिथि मानी है।

श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से 10 फुट ऊँची सुपार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमा जनवरी 2005 में विराजमान होकर उनकी पंचकल्याणक होने वाली है जो कि भक्तों को जैनघाट पर दूर से ही दिखाई देगी।

भगवान पार्श्वनाथ का जन्मस्थल वर्तमान के भेलूपुर मोहल्ले को माना जाता है। उनके जन्मस्थान पर बहुत विशाल सुन्दर मंदिर बना हुआ है। उसी कम्पाउन्ड के भीतर धर्मशाला भी बनी हुई है। जिसमें सभी दिगम्बर जैन बंधुओं के ठहरने की समुचित व्यवस्था है। भेलूपुर में एक और दिगम्बर जैन मंदिर भी है उसमें मूलनायक पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमा है।

हिन्दुओं की मान्यतानुसार अयोध्या, मथुरा, हरिद्वार, काशी, अवन्ति और द्वारका ये सात महापुरियाँ हैं इनमें काशी मुख्य मानी गई है। "काश्यां हि मरणान्मुक्तिः" यह हिन्दू शास्त्रों का वाक्य है। काशी में मरने से मुक्ति होती है इस विश्वास के कारण ही प्राचीन काल में यहाँ देहोत्सर्ग करने के लिए हिन्दू लोग आया करते थे। काशी का संबंध महाराजा हरिश्चन्द्र, कबीर और तुलसी से भी जुड़ा रहा है।

बनारस सहस्रों वर्षों से विद्या का केन्द्र रहा है। यहाँ भारतीय वाङ्मय-दर्शन और साहित्य के अध्ययन-अध्यापन की प्राचीन परम्परा आज तक सुरक्षित है।

दिल्ली से कुण्डलपुर (नालंदा) की ओर संघ के मंगल विहार के मध्य पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी का 19 नवंबर 2002 को बनारस में पदार्पण हुआ। वहाँ लगभग 1 सप्ताह प्रवास के मध्य "बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय" में प्रथम बार जैन साधुओं के मंगल प्रवचन का कार्यक्रम भी हुआ। जिसमें बी.एच.यू. तथा डा. सम्पूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय के कुलपतियों सहित अनेक वरिष्ठ प्रवक्ताओं ने पूज्य माताजी की संस्कृत भाषाजनित प्रतिभाशक्ति का कोटिशः अभिनंदन किया तथा अपने विश्वविद्यालयों में दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान-हस्तिनापुर द्वारा प्रदत्त साहित्य को ससम्मान विराजमान किया।

6 जनवरी 2005 को पौष कृ. 11 के दिन पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा द्वारा बनारस में 'भगवान पार्श्वनाथ तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव' का उद्घाटन समारोह होने जा रहा है जो एक वर्ष पूरे देश के अन्दर व्यापक स्तर पर मनाया जाएगा।

तीर्थंकर द्वय की उस पावन जन्मभूमि बनारस को शत-शत नमन।

तीर्थंकर चन्द्रप्रभ जन्मभूमि
चन्द्रपुरी तीर्थ

गंगा के सुरम्य तट पर स्थित जैनधर्म के आठवें तीर्थंकर चन्द्रप्रभ भगवान की जन्मभूमि चन्द्रपुरी वाराणसी से लगभग 24 किमी. दूर है। यहाँ की वन्दना से असीम आनन्दानुभूति होती है। यहाँ चन्द्रप्रभ तीर्थंकर के गर्भ, जन्म, तप और ज्ञान ये चार कल्याणक हुए थे इसलिए यह अत्यन्त प्राचीन तीर्थस्थान माना जाता है।

यहाँ एक प्राचीन दिगम्बर जैन मंदिर है एवं निकट में ही एक श्वेताम्बर जैन मंदिर है। दिगम्बर जैन मंदिर दूसरी मंजिल पर निर्मित है तथा इसके चारों ओर पुरानी धर्मशाला भी हैं।

मंदिर में गर्भगृह के द्वार पर इधर-उधर आलों में "विजय यक्ष" और अष्टभुजी यक्षिणी "ज्वालामालिनी" की सुन्दर मूर्तियाँ विराजमान हैं।

गंगा के तट पर स्थित होने के कारण इस मंदिर का विहंगम दृश्य अत्यन्त मनोहारी है। किंतु इस तीर्थ की वीरानियत देखकर मन अत्यन्त दुखी हो जाता है, इसके जीर्णोद्धार एवं विकास की अत्यन्त आवश्यकता है।

चन्द्रपुरी तीर्थ बनारस और गाजीपुर मार्ग पर स्थित है। इस पावन तीर्थ को शत-शत नमन।

तीर्थंकर पुष्पदंत जन्मभूमि
काकन्दी तीर्थ

उत्तरप्रदेश में गोरखपुर शहर के निकट जैनधर्म के नवमें तीर्थंकर "श्री पुष्पदन्तनाथ" के जन्म से पवित्र काकन्दी नगरी वर्तमान में "खुखुन्दू" नाम से भी प्रसिद्ध है। पूर्वी उत्तरप्रदेश के देवरिया जिले में "खुखुन्दू" नाम का एक कस्बा

है, यह नूनखार रेलवे स्टेशन से दक्षिण-पश्चिम की ओर 3 किमी. दूर है। इस कस्बे के पास ही कई प्राचीन तालाब और तीस टीले हैं जहाँ प्राचीन मंदिरों और भवनों के भग्नावशेष लगभग एक मील में बिखरे पड़े हैं। ये ही टीले प्राचीनकालीन काकन्दी कहलाते हैं।

जैन परम्परा में अत्यन्त प्राचीन काल से "काकन्दी" का नाम बड़ी श्रद्धा से लिया जाता है। यहाँ भगवान पुष्पदंत के गर्भ-जन्म कल्याणक तो हुए ही हैं तथा इसी नगर कें पुष्पक वन में उनका दीक्षा कल्याणक भी हुआ था पुनः कभी किसी काल में यह पुष्पक वन ही "ककुभ" नाम से कहलाने लगा और एक अलग तीर्थधाम बन गया। धीरे-धीरे काल के थपेड़ों ने दोनों ही तीर्थों को खण्डहरों के रूप में परिवर्तित कर दिया जो प्राचीन संस्कृति को अपनी मूक वाणी में बतला रहे हैं।

जयरामा माता और सुग्रीव पिता के यहाँ काकन्दी नगरी में मगशिर शुक्ला प्रतिपदा को मूल नक्षत्र में भगवान पुष्पदन्त का ज़न्म हुआ। इन्द्रों ने वहाँ पन्द्रह माह तक रत्नवृष्टि की और उनका गर्भ-जन्म कल्याणक महोत्सव मनाया था।

पुष्पक वन में दीक्षा के पश्चात् भी वर्णन आता है कि चार वर्षों के भ्रमण के पश्चात् वे पुनः विहार करते हुए काकन्दी के पुष्पक वन में पधारे थे और वहीं उन्हें "नागवृक्ष" के नीचे कार्तिक शुक्ला द्वितीया को केवलज्ञान की प्राप्ति हुई थी अतः काकन्दी उनके चार कल्याणकों से परम पावन नगरी बन गई है। केवलज्ञान उत्पन्न होने पर इन्द्र की आज्ञा से कुबेर ने समवसरण की रचना की तब भगवान का प्रथम कल्याणकारी दिव्य उपदेश यहीं हुआ था। ककुभ ग्राम को भी वर्तमान में "कहाऊँ" नाम से जाना जाता है, आज काकन्दी यहाँ से 16 किमी. दूर है।

कल्याणक भूमि होने के साथ-साथ यहाँ का एक प्राचीन इतिहास भी ग्रंथों में आता है कि यह महापुरुषों की उपसर्ग एवं निर्वाणभूमि भी है। भगवती आराधना (गाथा-1559) और आराधना कथा कोष (कथा 67) के आधार पर "भारत के दिगम्बर जैन तीर्थ" भाग-1 में काकन्दी नगरी के परिचय में अनेक ऐतिहासिक तथ्यों का उल्लेख करते हुए यहाँ से संबंधित अभयघोष मुनिराज का कथानक भी प्रस्तुत किया है। जो निम्न प्रकार है–

अभयघोष काकन्दी के राजा थे। उन्होंने एक बार एक कछुए की चारों टाँगे तलवार से काट दीं जिससे वह तड़प-तड़प कर मर गया और मरकर उनका ही पुत्र हो गया। कुछ दिनों बाद अभयघोष ने चन्द्रग्रहण देखकर मुनि दीक्षा ले ली। एक बार वे काकन्दी के उद्यान में तपस्या में लीन थे।

उनका पुत्र चंडवेग भ्रमण करते हुए वहाँ से निकला। जैसे ही उसने मुनि अभयघोष को देखा उसके मन में पूर्वजन्म संबंधी संस्कारों के कारण क्रोध की अग्नि भड़क उठी। उसने अपने वैर का बदला चुकाने के लिए यह उपयुक्त अवसर समझा क्योंकि वह जानता था कि ध्यान के समय मुनिराज किसी अत्याचार का प्रतीकार तो करेंगे नहीं। उसने तीक्ष्ण धार वाले शस्त्रों से निर्दयता पूर्वक उनके हाथ-पैर आदि अंगों को काटना प्रारंभ कर दिया। ध्यानलीन मुनिराज आत्मनिष्ठ थे, इस उपसर्ग को उन्होंने तीव्र वैराग्य भाव से सहन किया और धर्मध्यान से शुक्लध्यान अवस्था में आकर चार घातिया कर्मों को नष्ट कर कैवल्य अवस्था प्राप्त कर ली। अन्तकृत्केवली बनकर अभयघोष मुनिराज ने काकन्दी के उद्यान से मोक्षधाम को प्राप्त किया इसलिए यह नगरी "सिद्धक्षेत्र" के रूप में भी जानी जाती है।

उक्त विषयक यहाँ विभिन्न ग्रंथों के उदाहरण प्रस्तुत हैं–

काइंदि अभयघोसो विचंडवेगेण छिण्णसव्वंगो।
तं वेयणमधियासिय पडिवण्णो उत्तमं अट्ठं।।1559।।

अर्थात् काकन्दी नाम नगरी विषै अभयघोष नामा मुनिहू चंडवेग नाम कोऊ वैरीकरि सर्व अंग छेद्या हुवा तिस घोर वेदना कूँ प्राप्त होय करिके उत्तम अर्थ जो रत्नत्रय ताकूं प्राप्त होत भया।

इसी प्रकार मरणकंडिका में वर्णन आया है–

काकंद्यां चंडवेगेन छिन्ननिःशेष विग्रहः।
विषह्याभयघोषोऽपि पीडामाराधनां गतः।।1628।।

अर्थ–काकंदी नगरी में चंडवेग नामके दुष्ट व्यक्ति द्वारा सारा शरीर बाणों से घायल होने पर भी अभयघोष नाम के यतिराज ने उस उग्र पीड़ा को सहनकर आराधना को प्राप्त किया।

वृहत् समाधिमरण में भी लिखा है–

अभयघोष मुनि काकन्दीपुर महावेदना पाई।
वैरीचण्ड ने सब तन छेद्यो दुःख दीना अधिकाई।।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता आराधन चितधारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है मृत्यु महोत्सव भारी।।

ये सभी प्रमाण काकन्दी नगरी को सिद्धक्षेत्र की संज्ञा प्राप्त कराने में हेतु हैं।

वर्तमान में वहाँ खेतों के बीच में दिगम्बर जैन मंदिर बना हुआ है। लोगों का विश्वास है कि भगवान पुष्पदंत का जन्म यहीं हुआ था। मैंने काकन्दी तीर्थ का प्रत्यक्ष दर्शन तो नहीं किया है किन्तु विद्वानों के द्वारा लिखित इतिहास से ज्ञात होता है कि मंदिर में एक ही वेदी है जो चार स्तम्भों पर मण्डपनुमा बनी हुई है। एक शिलाफलक में भगवान नेमिनाथ की कृष्ण पाषाण की पद्मासन प्रतिमा विराजमान है जो यहाँ की मूलनायक प्रतिमा कहलाती है। इसके अतिरिक्त एक श्वेत पाषाण की 11 इंच ऊँची पद्मासन प्रतिमा भगवान पुष्पदंत की भी है जो विक्रम संवत् 1548 की है। इसी प्रकार से कुछ तीर्थंकर प्रतिमाएं और यक्ष-यक्षिणी की मूर्तियाँ भी विराजमान हैं।

अन्य तीर्थों की अपेक्षा अभी यह तीर्थ बिल्कुल उपेक्षित है जिसके जीर्णोद्धार एवं विकास की आवश्यकता है।

पावन तीर्थ काकन्दी को शतशः नमन करते हुए उसके शीघ्र विकास की मंगल कामना है।

तीर्थंकर शीतलनाथ जन्मभूमि
भद्दिलपुर तीर्थ (भद्रिकापुरी)

दिगम्बर जैन शास्त्रों में 10वें तीर्थंकर भगवान शीतलनाथ की जन्मभूमि भद्दिलपुर, भद्रिकापुरी एवं भद्रपुरी नामों से उल्लिखित है। वर्तमान में झारखण्ड प्रांत के चतरा जिले में स्थित 'ईटखोरी' के भद्दिलपुर (भद्रकाली) ग्राम को भगवान की जन्मभूमि के रूप में स्वीकार किया जा रहा है, जिसके विकास की प्रेरणापूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने प्रदान करते हुए इस स्थल पर भगवान शीतलनाथ की 10 फुट उत्तुंग प्रतिमा विराजमान कराने की घोषणा की है।

कुछ लोग भद्दिलपुर के निकटवर्ती कोलुआ पहाड़ को भगवान की जन्मभूमि कहते हैं। परन्तु पूज्य ज्ञानमती माताजी का कहना है कि तीर्थंकरों के जन्म पहाड़ पर मानना तर्क संगत नहीं है, उनके दीक्षा एवं केवलज्ञान कल्याणक तो पहाड़ पर माने जा सकते हैं पर जन्म नहीं। उदाहरणार्थ–भगवान पद्मप्रभ की जन्मभूमि कौशाम्बी (उ.प्र.) मानी जाती है और निकटवर्ती प्रभासगिरि पहाड़ को उनकी दीक्षा एवं केवलज्ञान स्थली के रूप में पूजा जाता है, इसी प्रकार राजगृही (नालंदा) भगवान मुनिसुव्रतनाथ की जन्मभूमि है और निकटवर्ती पहाड़ी रत्नागिरि उनकी दीक्षा एवं केवलज्ञान कल्याणक भूमि है।

भद्दिलपुर में भगवान शीतलनाथ के गर्भ, जन्म, तप और ज्ञान ये चार कल्याणक हुए हैं तथा सम्मेदशिखर से उन्होंने मोक्ष प्राप्त किया है। भगवान शीतलनाथ के जन्म का उल्लेख करते हुए जैन पुराणों में वर्णन है कि-

शीतलनाथस्वामी भद्दिलपुर (भद्रिकापुरी) में पिता दृढ़रथ और माता सुनन्दा से माघ कृष्णा द्वादशी के दिन उत्पन्न हुए।

ये भगवान इक्ष्वाकुवंशी थे, जब ये यौवन अवस्था को प्राप्त हुए तो इनका विवाह हो गया और पिता ने दीक्षा धारण से पूर्व इनका राज्याभिषेक कर दिया। राज्य करते-करते एक बार कुछ निमित्त से वैराग्य हो गया तब माघकृष्णा द्वादशी के दिन ही अपराण्ह समय में मूल नक्षत्र के रहते हुए वन में दीक्षा धारण कर ली।

यह सहेतुक वन भी वर्तमान भद्दिलपुर के समीप (35 किमी.) "कोलुआ" पहाड़ पर माना जाता है। इसी वन में उनका केवलज्ञान भी हुआ था तब पौष कृष्णा अमावस्या के दिन देवों ने उनका समवसरण रचकर केवलज्ञान महोत्सव मनाया था।

इस शताब्दी में सर विलियम हण्टर, डॉ. स्टेन आदि इतिहासकारों ने कोलुआ पर्वत तथा उसके आसपास निरीक्षण करके और शोध द्वारा यह सिद्ध किया कि 'कोलुआ' पहाड़ जैन तीर्थ है तथा उसका निकटवर्ती भद्दिलग्राम ही शीतलनाथ की जन्मभूमि है।

इस जन्मकल्याणक भूमि का उद्धार और विकास निकट भविष्य में जब पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से सम्पन्न हो जायेगा, तब यात्रियों को भगवान शीतलनाथ की जन्मभूमि पवित्र तीर्थ पर जाकर दर्शन करने का सौभाग्य सुलभतया मिल सकेगा।

आजकल कुछ लोग विदिशा (म.प्र.) के निकट भी भगवान शीतलनाथ की जन्मभूमि मानते हैं। इस विषय में पूज्य माताजी का कहना है कि समाज के प्रबुद्ध साधुवर्ग, विद्वद्वर्ग एवं श्रावकवर्ग को ऊहापोह करके निर्णय करना चाहिए।

तीर्थंकर श्रेयांसनाथ जन्मभूमि
सिंहपुरी तीर्थ

सिंहपुरी वाराणसी जिले में वाराणसी से सड़कमार्ग द्वारा 6 किमी. दूर उत्तर में अवस्थित है। भगवान श्रेयांसनाथ तीर्थंकर के जन्म एवं चार कल्याणकों के कारण यह प्रागैतिहासिक काल से जैन तीर्थ रहा है। यहाँ उनके गर्भ, जन्म, दीक्षा और केवलज्ञान ये चार कल्याणक हुए थे। विद्वानों का मत है कि तीर्थंकर श्रेयाँसनाथ जी का जन्म स्थान होने के कारण ही इस स्थान का नाम "सारनाथ' पड़ गया है।

सारनाथ में भगवान श्रेयाँसनाथ का एक प्राचीन दिगम्बर जैन मंदिर है। मंदिर के गर्भगृह में तीर्थंकर श्रेयांसनाथ जी की ढाई फिट ऊँची श्याम वर्ण की मनोज्ञ प्रतिमा विराजमान है उसी वेदी में आगे एक छोटी श्वेतवर्ण की श्रेयांसनाथ की प्रतिमा है। भगवान की वेदी अत्यन्त कलापूर्ण है। मुख्यवेदी के बगल में नन्दीश्वर जिनालय का फलक है जिसमें 60 प्रतिमाएँ बनी हुई हैं यह भूगर्भ से प्राप्त हुई थी।

मंदिर के कम्पाउन्ड से बाहर भारत सरकार की ओर से पुष्पोद्यान बना है। यह सारी भूमि पहले दिगम्बर जैन मंदिर की थी किन्तु समाज की लापरवाही एवं असावधानी के कारण इस विशाल भूमि पर अब सरकारी अधिकार हो गया है।

जैन मंदिर के निकट ही 103 फिट ऊँचा एक स्तूप है, इसे सम्राट अशोक द्वारा निर्मापित कहा जाता है। भगवान श्रेयाँसनाथ की जन्मनगरी होने के कारण सम्राट् ने भगवान की स्मृति में इसे निर्मित कराया होगा यह मान्यता भी प्रचलित है। स्तूप के ठीक सामने सिंहद्वार बना हुआ है जिसके दोनों स्तम्भों पर सिंहचतुष्क बना हुआ है। सिंहों के नीचे धर्मचक्र है जिसके दाईं ओर बैल और घोड़े की मूर्तियाँ अंकित हैं द्वार का आकार भी बड़ा कलापूर्ण है। लोक में यह मान्यता है कि इसी स्तंभ की सिंहत्रयी को भारत सरकार ने राजचिन्ह के रूप में मान्यता प्रदान की है।

पौराणिक मान्यतानुसार इस स्थान पर ग्यारहवें तीर्थंकर श्रेयांसनाथ ने धर्मचक्र प्रवर्तन किया था। यहाँ पर देवों ने उनके समवसरण की रचना की थी।

सारनाथ वर्तमान में महात्मा बुद्ध की प्रथम उपदेशस्थली के रूप में जग विख्यात है एवं यहाँ बुद्ध के अनेकों मंदिर आदि हैं। यहाँ पुरातत्व की खुदाई में अनेकों बुद्ध संबंधी अवशेष एवं जैन मूतियाँ इत्यादि प्राप्त हुई जो यहाँ के संग्रहालय में सुरक्षित हैं।

सारनाथ अन्तर्राष्ट्रीय पर्यटन स्थल है अतः जैनधर्म के प्रचार-प्रसार हेतु भी यह अत्यन्त उपयोगी स्थल हो सकता है। काशी के जैन समाज की भावनाओं के आधार पर सारनाथ के प्रांगण में सवा ग्यारह फुट ऊँची पद्मासन चमत्कारिक प्रतिमा भगवान श्रेयांसनाथ की स्थापित हो चुकी है। पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने नवंबर 2002 में सारनाथ पदार्पण के अवसर पर इस परिसर का नाम "भगवान श्रेयांसनाथधर्मस्थल" प्रदान किया है।

तीर्थंकर श्रेयांसनाथ जी का मंदिर अत्यन्त रमणीक स्थान पर स्थित है मंदिर के चारों तरफ एवं बाहर की हरियाली का दृश्य नयनाभिराम है। वैसे यहाँ ठहरने के लिए जैन धर्मशाला बनी हुई है फिर भी अधिकतर सिंहपुरी की वंदना

करने आने वाले यात्री बनारस में ही रुकते हैं। बनारस से टैम्पो, बस आदि समय-समय पर आसानी से उपलब्ध रहते हैं। सिंहपुरी की यात्रा के साथ ही "चन्द्रपुरी" तीर्थ की यात्रा भी लोग करते हैं अतः एक दिन में दोनों तीर्थों की वंदना हो जाती है।

तीर्थंकर वासुपूज्य जन्मभूमि
चम्पापुर तीर्थ

चम्पापुर भारत की प्राचीन सांस्कृतिक नगरियों में से है। भगवान ऋषभदेव की आज्ञा से इन्द्र ने जिन 52 जनपदों की रचना की थी, उनमें एक अंग जनपद भी था जिसकी राजधानी चम्पानगरी मानी जाती है। बारहवें तीर्थंकर भगवान वासुपूज्य की जन्मभूमि होने का तो इसे सौभाग्य प्राप्त है ही, किन्तु यहाँ उनके पाँचों कल्याणक भी हुए हैं इसलिए यह पावन सिद्धक्षेत्र भी कहलाता है। किसी तीर्थंकर के पाँचों कल्याणक एक ही जगह होने का इतिहास मात्र चम्पापुर में ही मिलता है, अन्यत्र कहीं नहीं।

राजा वसुपूज्य एवं रानी जयावती से फाल्गुन कृष्णा चतुर्दशी के दिन तीर्थंकर वासुपूज्य का जन्म हुआ था। पाँच बाल ब्रह्मचारी तीर्थंकरों में से वासुपूज्य भगवान प्रथम बालयति हुए हैं जिन्होंने विवाह न करके संसार से वैरागी होकर दीक्षा धारण कर ली थी। इनके पूर्व के ग्यारह तीर्थंकरों में से सभी ने विवाह करके राज्य संचालन करने के पश्चात् दीक्षा धारण की थी।

भगवान वासुपूज्य ने चम्पापुर के मनोहर उद्यान में जाकर जिनदीक्षा ग्रहण की थी और वहीं उनको केवलज्ञान एवं मोक्ष हुआ जो आजकल मन्दारगिरि के रूप में माना जाता है। यह मन्दारगिरि उस काल में चम्पानगरी के ही बाह्य उद्यान का पर्वत था अतः चम्पापुर में ही सम्मिलित था। इस विषय में उत्तरपुराणग्रंथ की मान्यता यह है कि वासुपूज्य भगवान के गर्भ और जन्मकल्याणक चम्पानगरी में मनाए गए और मन्दारगिरि के मनोहर उद्यान में दीक्षा एवं ज्ञान कल्याणक हुए तथा मंदारगिरि से ही भगवान ने निर्वाण पद प्राप्त किया था।

उत्तरपुराण में वर्णन है–

स तैः सह विहृत्याखिलार्यक्षेत्राणि तर्पयन् ।
धर्मवृष्ट्या क्रमात्प्राप्य चम्पामब्दसहस्रकम् ।।50।।
स्थित्वाऽत्र निष्क्रियं मासं नद्याराजतमालिका-।
सञ्ज्ञायाश्चित्तहारिण्याः पर्यन्तावनिवर्तिनि।।51।।
अग्रमन्दरशैलस्य सानुस्थानविभूषणे।
वने मनोहरोद्याने पल्यंकासनमाश्रितः।।52।।
मासे भाद्रपदे ज्योत्स्नाचतुर्दश्यापराण्हके।
विशाखायां ययौ मुक्तिं चतुर्णवतिसंयतैः।।53।।

अर्थात् भगवान ने इन सबके (मुनि, आर्यिका आदि) साथ समस्त आर्यक्षेत्रों में विहार कर उन्हें धर्मवृष्टि से संतृप्त किया और क्रम-क्रम से चम्पानगरी में आकर एक हजार वर्ष तक रहे। जब आयु में एक मास शेष रह गया तब योग निरोध कर रजतमालिका नामक नदी के किनारे की भूमि पर वर्तमान मन्दारगिरि के शिखर को सुशोभित करने वाले मनोहर उद्यान में पर्यंकासन से स्थित हुए तथा भाद्रपद शुक्ला चतुर्दशी के दिन सायंकाल के समय विशाखा नक्षत्र में चौरानवे मुनियों के साथ मुक्ति को प्राप्त हुए।

वर्तमान में मन्दारगिरि चम्पापुर से लगभग 50 किमी. दूर अवस्थित है, सभी तीर्थयात्री दर्शन करने के लिए बड़ी श्रद्धा से वहाँ जाते हैं।

चम्पापुर तीर्थ भागलपुर रेलवे स्टेशन से तीन किलोमीटर दूर नाथनगर में पड़ता है। जयपुर के हवामहल की शैली पर बने क्षेत्र का अप्रतिम विशाल भव्य द्वार आगत श्रद्धालुओं और भक्तों का स्वागत करता है। मंदिर के पूर्व भाग में

सहस्राब्दियों पुराने दो प्राचीन कीर्तिस्तंभ विद्यमान हैं। कहते हैं कि इन स्तंभों के नीचे से सुरंग मंदारगिरि तथा सम्मेदशिखर जी की चन्द्रप्रभ टोंक तक जाती थी। ऐसे ही दो स्तम्भ मंदिर के पूर्वभाग में थे जो कालक्रम में नष्ट हो गये।

आदिकाल से ही चम्पापुर अनेकानेक महत्वपूर्ण घटनाओं एवं ऐतिहासिक कथानकों का इतिहास अपने अन्दर में संजोए हुए है, जिसके कारण चम्पापुर का कण-कण पवित्र एवं पूजनीय है।

यहाँ मंदिर की मूलवेदी में भगवान वासुपूज्य की लाल माणिक्य वर्ण की अति मनोज्ञ पद्मासन प्रतिमा विराजमान है। इसी मूलवेदी में एक अष्टधातु की मूर्ति तथा भगवान वासुपूज्य के प्राचीन चरण भी विराजमान हैं। चार कोनों पर चार वेदी बनी हुई हैं उनमें श्वेत पाषाण एवं अष्टधातु की मनोहारी प्रतिमाएं हैं। मूलमंदिर की परिक्रमा के बाहर दक्षिण की ओर के मंदिर में दो से चार हजार वर्ष पुरानी कुशाणकालीन, गुप्तकालीन एवं पालयुगीन प्रतिमाएं पुरातत्व की धरोहर के रूप में स्थापित हैं। पास में ही एक अन्य वेदी में लालवर्ण की वासुपूज्य भगवान की एक फुट उत्तुंग पद्मासन प्रतिमा विराजमान हैं।

भगवान महावीर स्वामी के 2500वें निर्वाण महोत्सव के पश्चात् चम्पापुर तीर्थ के नये कार्यकर्ताओं ने इस तीर्थ का अच्छा विकास और उद्धार किया है। नये जिनमंदिरों में एक ओर विदेह क्षेत्र में विद्यमान प्रथम तीर्थंकर सीमन्धर स्वामी का समवसरण मंदिर है तो दूसरी ओर काँच का भव्य कलात्मक मंदिर है।

मंदिर जी के पूर्व में मूलवेदी के सम्मुख 71 फुट उत्तुंग गगनचुम्बी मानस्तंभ है, मानस्तंभ के तीनों ओर 24 तीर्थंकरों की 24 टोंक है। शुरू में भगवान बाहुबली का जिनालय एवं अंतिम में भगवान वासुपूज्य के प्रथम शिष्य "मन्दर" गणधर की चरणपादुका हैं। इसी अहाते में भगवान शांतिनाथ जिनमंदिर, भगवान महावीर जिनमंदिर एवं ध्यानस्थ मुद्रा में खड़े भगवान पार्श्वनाथ की सात फणों के सर्प वाली काले पाषाण की प्रतिमा वाला रमणीय काँच मंदिर है। इसी के पार कृत्रिम नहर से घिरे भव्य जलमंदिर में भगवान वासुपूज्य की दस टन वजन वाली सवा पन्द्रह फुट खड्गासन प्रतिमा विशाल कमल पर विराजमान है।

तीर्थयात्रियों के लिए आधुनिक सुविधा सम्पन्न धर्मशाला है। जनहित में विद्यालय, चिकित्सालय एवं वाचनालय है। इस मंदिर के सामने एक बीसपंथी मंदिर मूलनायक भगवान वासुपूज्य का है।

तीर्थंकर वासुपूज्य के पाँचों कल्याणकों से पावन तीर्थ चम्पापुर एवं मन्दारगिरि सिद्धक्षेत्र को मेरा शत-शत नमन।

तीर्थंकर विमलनाथ जन्मभूमि
कम्पिल जी तीर्थ

उत्तरप्रदेश के फर्रुखाबाद जनपद में स्थित "कम्पिल" नगरी गंगा नदी के किनारे बसी हुई है। कम्पिल या काम्पिल्यपुरी भारत के अतिप्राचीन वंदनीय और दर्शनीय स्थानों में से एक है। जैन शास्त्रों में तो इसका इतिहास आता ही है, वेदों में भी "काम्पिल्यपुरी" के नाम से इसकी प्रसिद्धि है। कहीं-कहीं इसका नाम भोगवती और माकन्दी भी आया है।

वर्तमान के चौबीस तीर्थंकरों में से 13 वें तीर्थंकर 1008 भगवान "विमलनाथ" की जन्मभूमि के साथ-साथ यहाँ उनके चार कल्याणक हुए हैं। पिता श्री महाराज कृतवर्मा के राजमहल एवं माता जयश्यामा के आंगन में वहाँ 15 माह तक कुबेर ने रत्नवृष्टि की तथा सौधर्म इन्द्र ने कम्पिल नगरी में माघ शु. 4 को आकर तीर्थंकर के जन्मकल्याणक का महामहोत्सव मनाया था। पुनः युवावस्था में विमलनाथ तीर्थंकर का विवाह हुआ और दीर्घकाल तक राज्य संचालन कर उन्होंने माघ शु. चतुर्थी को ही अपराण्ह काल में सहेतुक वन में जैनेश्वरी दीक्षा लेकर मोक्षमार्ग का प्रवर्तन किया था। उसके बाद उसी कम्पिल के उद्यान में ही माघ शुक्ला षष्ठी को केवलज्ञान उत्पन्न होने पर समवसरण की रचना हुई थी। तब उन्होंने दिव्यध्वनि के द्वारा संसार को सम्बोधन प्रदान किया था। कम्पिला में एक अघातिया टीला है जिसके बारे में यह अनुश्रुति है कि यहीं पर विमलनाथ ने घातिया कर्मों का नाश कर केवलज्ञान प्राप्त किया था। यह टीला किसी प्राचीन जैन मंदिर का ध्वंसावशेष है। खुदाई होने पर यहाँ कभी-कभी जैन मूतियाँ मिल जाती हैं। कहते हैं कि भगवान आदिनाथ, पार्श्वनाथ एवं महावीर स्वामी के समवसरण से भी यह धरती परम पावन हो चुकी है।

महासती द्रौपदी का जन्म एवं स्वयंवर भी यहीं हुआ था जिसकी स्मृति में आज भी वहाँ "द्रौपदी कुण्ड" बना हुआ है।

प्राचीन दिगम्बर जैन मंदिर—यहाँ 1400 वर्ष से भी प्राचीन देवों द्वारा निर्मित एक दिगम्बर जैन मंदिर है। जिसमें गंगानदी के गर्भ से प्राप्त चतुर्थकालीन श्यामवर्णी भगवान विमलनाथ की प्रतिमा विराजमान है और दिगम्बर जैन शिल्पकला की प्राचीनता का दिग्दर्शन करा रही है। यात्रियों के ठहरने हेतु यहाँ तीन दिगम्बर जैन अतिथि गृह उपलब्ध हैं। इसके अतिरिक्त पर्यटन विभाग की ओर से पर्यटकों के लिए एक आधुनिक धर्मशाला बनी है। नूतन रूप में वहाँ एक श्वेताम्बर मंदिर और उनकी धर्मशाला भी है। हिन्दुओं तथा जैनियों के ऐतिहासिक धार्मिक स्थानों से प्रभावित होकर भारत सरकार ने कम्पिल जी को पर्यटन केन्द्र घोषित कर दिया है तथा उसके विकास हेतु सरकारी स्तर पर कई योजनाएं चल रही है। वहाँ भगवान विमलनाथ की विशाल खड्गासन प्रतिमा विराजमान है।

वर्तमान समय में कम्पिल जी तीर्थक्षेत्र पर जैन आबादी न होने से यह क्षेत्र जैनत्व स्तर पर विकास की ओर उन्मुख नहीं हो सका है किन्तु वहाँ की कार्यकारिणी ने कुछ नूतन योजनाएँ प्रारंभ की है ताकि तीर्थक्षेत्र का विकास और विस्तार होकर अनूठा एवं अनुपम ध्यान आराधना का स्थल बन सके।

कम्पिलानगरी प्रसिद्ध स्थान अथवा सांस्कृतिक केन्द्र होने के कारण यहाँ अनेक महत्वपूर्ण धार्मिक और सांस्कृतिक घटनाएं घटी हैं। तीर्थंकर के कल्याणकों के अतिरिक्त यहाँ हरीषेण चक्रवर्ती भी हुए जिनके पिता पद्मनाभ ने नगर के मनोहर उद्यान में अनन्तवीर्य जिनेन्द्र से मुनि दीक्षा ली और दीक्षा वन में ही तप करके केवलज्ञान प्राप्त किया। आचार्य रविषेण ने हरिषेण चक्रवर्ती के संबंध में पद्मपुराण में कहा है कि-"कांपिल्य नगर में इक्ष्वाकुवंशी राजा हरिकेतू की रानी के हरिषेण नाम का दसवाँ प्रसिद्ध चक्रवर्ती हुआ। उसने अपने राज्य की समस्त पृथ्वी को जिनप्रतिमाओं से अलंकृत किया था तथा भगवान मुनिसुव्रतनाथ के तीर्थ में सिद्ध पद प्राप्त किया था।"

इसी प्रकार यहीं पर बारहवें चक्रवर्ती ब्रह्मदत्त भी हुए जिन्होंने सम्पूर्ण भरतक्षेत्र पर विजय प्राप्त कर कम्पिला को राजनीतिक केन्द्र बनाया था। भगवान नेमिनाथ और पार्श्वनाथ का अन्तर्वर्ती काल ब्रह्मदत्त का माना जाता है। विषयलंम्पटी होने के कारण इस चक्रवर्ती के नरक में जाने का उल्लेख है।

भगवान विमलनाथ की जन्मभूमि ऐतिहासिक नगरी काम्पिल्यपुरी को शत-शत नमन।

तीर्थंकर धर्मनाथ जन्मभूमि
रतनपुरी तीर्थ

पन्द्रहवें तीर्थंकर श्री धर्मनाथ भगवान की जन्मभूमि "रतनपुरी" तीर्थ अयोध्या के समीप वहाँ से 24 किमी. दूर है। इसके रेलवे स्टेशन का नाम "सोहावल" है। तीर्थ का एक नाम "रौनाही" भी है, इसी नाम से वर्तमान में तीर्थ की प्रसिद्धि सार्थक है। यहाँ दिगम्बर जैन के दो मंदिर हैं तथा धर्मशाला भी है।

इस पवित्र भूमि पर धर्मनाथ भगवान के चार कल्याणक हुए हैं-गर्भ, जन्म, तप और ज्ञान। केवलज्ञान होने के पश्चात् भगवान् का प्रथम समवसरण यहीं लगा था, उनकी प्रथम दिव्यध्वनि यहीं खिरी थी और धर्मचक्र का प्रवर्तन भी यहीं से हुआ था।

पवित्र नाम की सार्थकता—तीर्थंकर भगवान के जन्म में पन्द्रह माह तक रत्नवृष्टि होने से उसका "रतनपुरी" नाम सार्थक तो हुआ ही, एक कन्या मनोवती की दर्शन प्रतिज्ञा के कारण उस तीर्थ ने अपने नाम की प्रसिद्धि और भी फैला दी है। हस्तिनापुर के सेठ महारथ की पुत्री मनोवती ने एक बार दिगम्बर मुनि से नियम लिया था कि "जब मैं जिनमंदिर में भगवांन के समक्ष गजमोती चढ़ाकर दर्शन करूँगी तब भोजन करूँगी। " पीहर में तो उसका नियम अच्छी तरह पल गया किन्तु बल्लभपुर के सेठ हेमदत्त के पुत्र बुद्धिसेन से जब उसका विवाह हो गया तब उसके नियम के पालने से समस्या उत्पन्न हो गई। एक बार वह पीहर गई हुई थी कि इधर ससुराल वालों ने उसके पति को घर से निकाल दिया पुनः बुद्धिसेन ने हस्तिनापुर आकर अपनी पत्नी मनोवती को एकान्त में सारा हाल बताया और दोनों अपने भाग्य की परीक्षा करने हेतु वन की ओर चल पड़ते हैं।

चलते-चलते चार दिन बाद ये लोग "रतनपुरी" में आ गये। मनोवती बराबर उपवास करती रही और पति को कुछ भी ज्ञात न हुआ। इसी प्रकार से उसके 7 दिन उपवास में निकल गये तब एक दिन वह प्रभु का ध्यान लगाकर प्रार्थना करने लगी- "प्रभो! जब आपकी भक्ति से सम्पूर्ण मनोरथ सफल हो जाते हैं तब क्या मेरी छोटी-सी प्रतिज्ञा पूर्ण नहीं होगी?"

कुछ देर बाद उसका पैर नीचे को धंसा और उसने शिला उठाई तो सीढ़ियों से नीचे उतरने पर उसे विशाल जिनमंदिर दिखाई दिया, वहीं पर गजमोती के पुंज देखकर मनोवती बहुत प्रसन्न हुई और उसने अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण कर आठवें दिन अन्नजल ग्रहण किया। इसके बाद उसने बुद्धिसेन से इस दैवी चमत्कार के बारे में बताया और बार-बार भगवान् की स्तुति करने लगी–

शेर छंद–

प्रभु आपकी कृपा से मैं निहाल हो गई।
ये दर्श की महिमा भी इक मिशाल हो गई।।
हे नाथ! मैं गजमोतियों के पुंज चढ़ाऊं।
करके प्रतिज्ञा पूर्ण सर्वसिद्धि को पाऊं।।

इस प्रकार "दर्शन प्रतिज्ञा" के अचिन्त्य माहात्म्य स्वरूप मनोवती की प्रेरणा से बुद्धिसेन ने इसी "रतनपुरी" नगरी में एक हजार आठ शिखरों वाला विशाल मंदिर बनवाया था किन्तु वर्तमान में वहां उस इतिहास के कोई भी अवशेष उपलब्ध नहीं हैं, न ही वहाँ कोई जैन घर है। बस्ती में एक छोटा-सा मंदिर है जहाँ भगवान धर्मनाथ की सफेद पाषाण की 3 फुट ऊंची पद्मासन प्रतिमा है। जिसकी प्रतिष्ठा विक्रम सं. 2007 में हुई थी।

परम पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने 12 जून 1993 को उस तीर्थ के दर्शन किये तो उन्हें 45 वर्ष पूर्व की बात याद आ गई कि इस प्रतिमा के पंचकल्याणक में मेरे पिता श्री छोटेलाल जी ने वेदी के वस्त्र अनावरण की बोली लेकर मुझसे अनावरण करवाया था, उस समय वस्त्र खोलते ही वेदी में से अद्‌भुत प्रकाश निकला था जो आज भी मुझे आल्हादित कर रहा है। उस क्षण आचार्य श्री देशभूषण महाराज एवं प्रतिष्ठाचार्य विद्वान् बहुत ही प्रसन्न एवं प्रभावित हुए थे। वहाँ पूज्य माताजी ने शास्त्रीय विधि से वेदी तथा मंदिर के दरवाजे का माप कराया जो गलत निकला पुनः उस बारे में दिशानिर्देश दिया और टिकैतनगर चातुर्मास के मध्य क्षेत्र के पदाधिकारियों द्वारा आग्रह करने पर संघस्थ ब्र. कर्मयोगी रवीन्द्र जी को भेजकर दरवाजे का सही माप बतलाया तब कार्यकर्ताओं ने वैसा ही बनवा दिया अब वहां क्रमशः उन्नति चल रही है। पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने यहाँ के कार्यकर्ताओं को सती मनोवती की दर्शन प्रतिज्ञा से संबंधित इतिहास की साकारता हेतु एक गुफा में मंदिर बनाने की प्रेरणा प्रदान की है।

रौनाही नाम क्यों पड़ा?

कहते हैं कि आज से 9 लाख वर्ष पूर्व मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्र जब लक्ष्मण और सीता के साथ वनवास को जाने लगे थे तब यहां आकर उन्होंने अंयोध्या की सारी जनता को वापस जाने का आदेश देकर उनसे विदा ली थी इसलिए उस समय राम के वियोग के दुःख से सब लोग यहां इतना अधिक रोए थे कि इस स्थान का नाम ही तबसे रौनाही पड़ गया।

अनेक इतिंहासों को अपने गर्भ में संजोए वह 'रतनपुरी' तीर्थ खूब धर्म की उन्नति करे और भव्यों के लिए तीर्थ का पथ प्रशस्त करता रहे, यही मंगल भावना है। भूमि की रज मस्तक पर धारण कर भगवान धर्मनाथ के श्रीचरणों में नमन।

तीर्थंकर शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ एवं अरहनाथ जन्मभूमि
हस्तिनापुर तीर्थ

ऐतिहासिक तीर्थक्षेत्र हस्तिनापुर अयोध्या के समान ही अत्यन्त प्राचीन एवं पवित्र माना जाता है। जिस प्रकार जैन पुराणों के अनुसार अयोध्या नगरी की रचना देवों ने की थी उसी प्रकार युग के प्रारंभ में हस्तिनापुर की रचना भी देवों द्वारा की गयी थी। अयोध्या में वर्तमान के पाँच तीर्थंकरों ने जन्म लिया तो हस्तिनापुर को शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ, अरहनाथ इन तीन तीर्थंकरों को जन्म देने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। इतना ही नहीं, इन तीनों जिनवरों के चार-चार

कल्याणक (गर्भ, जन्म, तप, ज्ञान) हस्तिनापुर में इन्द्रों ने मनाए हैं ऐसा वर्णन जैन ग्रंथों में है।

आज से लगभग पौन पल्य 66 लाख 86 हजार 529 वर्ष पूर्व हस्तिनापुर के राजा विश्वसेन की महारानी ऐरादेवी की पवित्र कुक्षि से ज्येष्ठ कृष्णा चतुर्दशी के दिन सोलहवें तीर्थंकर भगवान शांतिनाथ ने जन्म लिया था। पुनः राजा सूरसेन की महारानी श्रीकांता ने वैशाख शुक्ला एकम तिथि में सत्रहवें तीर्थंकर कुन्थुनाथ को जन्म दिया तथा राजा सुदर्शन की महादेवी मित्रसेना के पवित्र गर्भ से मगशिर शु. 14 को 18वें तीर्थंकर भगवान अरहनाथ का जन्म हुआ था। इस प्रकार तीन बार यहाँ पर 15-15 मास तक कुबेर ने अगणित रत्नों की वृष्टि की थी। अतः रत्नगर्भा नाम से सार्थक यह भूमि प्राणिमात्र को रत्नत्रय धारण करने की प्रेरणा प्रदान करती है। ये तीनों तीर्थंकर चक्रवर्ती और कामदेव पदवी के धारक भी थे। प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव को एक वर्ष 39 दिन के उपवास के पश्चात् हस्तिनापुर में ही युवराज श्रेयांस एवं राजा सोमप्रभ ने इक्षुरस का प्रथम आहार दिया था। उस समय भी वहाँ पर देवों द्वारा पंचाश्चर्य वृष्टि की गई थी एवं सम्राट् चक्रवर्ती भरत ने अयोध्या से हस्तिनापुर जाकर राजा श्रेयांस का सम्मान करके उन्हें "दानतीर्थ प्रवर्तक" की पदवी से अलंकृत किया था। पुराण ग्रंथों में वर्णन आता है कि भरत ने उस प्रथम आहार की स्मृति में हस्तिनापुर की धरती पर एक स्तूप का निर्माण करवाया था। आज तो उसका कोई अवशेष देखने को नहीं मिलता है किन्तु इससे यह ज्ञात होता है कि धर्मतीर्थ एवं दानतीर्थ की प्रशस्ति का उल्लेख उसमें अवश्य होगा। काल के थपेड़ों में वह इतिहास आज समाप्त प्राय हो गया किन्तु हस्तिनापुर एवं उसके आसपास में इक्षु-गन्ने की हरी-भरी खेती आज भी इस बात का परिचय कराती है कि कोड़ाकोड़ी वर्ष पूर्व भगवान के द्वारा आहार में लिया गया गन्ने का रस वास्तव में अक्षय हो गया है। इसीलिए उस क्षेत्र में अनेक शुगर फैक्ट्री तथा क्रेशर गुड, खांड और चीनी बनाकर देश के विभिन्न नगरों में भेजते हैं।

इसी प्रकार से हस्तिनापुर की पावन वसुन्धरा पर रक्षाबन्धन कथानक, महाभारत का इतिहास, मनोवती की दर्शन प्रतिज्ञा की प्रारम्भिक कहानी, राजा अशोक व रोहिणी का कथानक आदि प्राचीन इतिहास प्रसिद्ध हुए हैं। जिनका वर्णन प्राचीन ग्रंथों में प्राप्त होता है और हस्तिनापुर नगरी की ऐतिहासिकता सिद्ध होती है।

हस्तिनापुर की अर्वाचीन स्थिति—कहते हैं कि सन् 1948 में भारत के प्रधानमंत्री स्व. पंडित जवाहरलाल नेहरू ने उजड़े हुए हस्तिनापुर को पुनः बसाया था जो कि "हस्तिनापुर सेन्ट्रल टाउन" के नाम से जाना जाता है। वहाँ आज लगभग 20 हजार की जनसंख्या है एवं शिक्षा, स्वास्थ्य, सुरक्षा, डाक व्यवस्था, आवागमन सुविधा आदि के समस्त साधन वहाँ सरकार की ओर से उपलब्ध हैं। टाउनेरिया की सक्रियता से हस्तिनापुर कसबे की सारी जनता प्रसन्नतापूर्वक अपना जीवन यापन करती है। यहाँ हिन्दू-मुसलमान, पंजाबी-बंगाली सभी जाति के लोग जातीय एकता के साथ अपने-अपने धर्म एवं ईश्वर की उपासना करते हैं। कतिपय दिगम्बर जैन श्रावकों के घर भी यहाँ हैं तथा एक गृह चैत्यालय भी हैं।

तीर्थक्षेत्र की अवस्थिति—सेन्ट्रल टाउन से लगभग डेढ़ किमी. दूर जैन तीर्थ क्षेत्र का अवस्थान है। मेरठ से रामराज जाती हुई मुख्य सड़क से बाईं ओर लगभग 400 वर्ष पुराना प्राचीन दिगम्बर जैन मंदिर है। वहाँ के परिसर में समवसरणरचना, नंदीश्वर द्वीपरचना आदि अन्य कई नये मंदिरों का निर्माण हुआ है तथा इस मंदिर के सामने एक श्वेताम्बर जैन मंदिर भी है। इनकी परम्परा के स्थानकवासी तथा तेरहपंथी आम्नाय के स्थल भी वहाँ निर्मित हैं। मंदिर से जम्बूद्वीप के आगे जंगलों में चार तीर्थंकरों के जन्म की प्रतीक चार नसियाएं दि. जैन समाज की तथा एक श्वेताम्बर समाज की है जहाँ भक्तगण श्रद्धापूर्वक दर्शन करने जाते हैं।

हस्तिनापुर में दि. जैन समाज द्वारा विशाल कैलाशपर्वत का निर्माण भी किया जा रहा है जो लगभग पूर्णता की ओर है।

जम्बूद्वीप रचना तीर्थक्षेत्र की प्रगति का मुख्य कारण है—सन् 1974 में जब से हस्तिनापुर की धरा पर परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी ने जम्बूद्वीप रचना का शिलान्यास करवाया तब से तो वहाँ की ख्याति देश-विदेश में फैल गई है। 91 फुट ऊँचे सुमेरु पर्वत से समन्वित जम्बूद्वीप की रचना में विराजमान 205 जिनबिम्ब जहाँ श्रद्धालुओं के पापक्षय में निमित्त हैं, वहीं गंगा-सिंधु आदि नदियाँ, हिमवन आदि पर्वत, भरत-ऐरावत आदि क्षेत्र, लवण समुद्र जनमानस के लिए मनोरंजन के साधन भी हैं। बिजली-फौव्वारों की तथा हरियाली की प्राकृतिक शोभा

देखने हेतु दूर-दूर से लोग जाकर वहाँ स्वर्ग सुख जैसी अनुभूति करते हैं।

जम्बूद्वीप के उस परिसर में कमल मंदिर, ध्यानमंदिर, तीनमूर्ति मंदिर, शान्तिनाथ मंदिर, वासुपूज्य मंदिर, ॐ मंदिर, सहस्रकूट मंदिर, विद्यमान बीस तीर्थंकर मंदिर, भगवान ऋषभदेव मंदिर, ऋषभदेव कीर्तिस्तंभ, ऐतिहासिक कैलाशपर्वत भवन , ज्ञानमती कला मंदिर, जम्बूद्वीप पुस्तकालय, णमोकार महामंत्र बैंक आदि हैं जो भक्तों को भक्ति और ध्यान, अध्ययन की प्रेरणा प्रदान करते हैं।

मध्यलोक अकृत्रिम जिन मंदिर निर्माणाधीन—पूज्य माताजी की प्रेरणा से जहाँ जम्बूद्वीप रचना का खुले रूप में निर्माण हुआ है। वहीं उनकी पुरानी रूपरेखानुसार सन् 1990 में तेरह द्वीप के 458 अकृत्रिम जिनबिम्बों की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा हुई थी पुनः एक विशाल जिनमंदिर का निर्माण लगभग 5 फरवरी 1993 से प्रारंभ हुआ। मंदिर का निर्माण लगभग पूर्ण हो गया है। अतः उसके अन्दर शास्त्रीय विधि से मध्यलोक के तेरह द्वीपों की सुन्दर अकृत्रिम रचना बनते ही समस्त जिन प्रतिमाएं उसमें विराजमान होंगी और सन् 1965 में की गई पूज्य माताजी की ध्यान साधना साकार रूप लेकर देश के समक्ष आएगी।

आवासीय सुविधा आधुनिक परिप्रेक्ष्य में—हस्तिनापुर तीर्थक्षेत्र पर पहुँचने वाले प्रत्येक तीर्थयात्री के लिए जम्बूद्वीप स्थल पर लगभग 200 कमरे हैं जिनमें से अधिकतर डीलक्स फ्लैट और अनेक कोठियाँ आधुनिक सुविधायुक्त हर समय तैयार रहते हैं।

आवास सुविधा के साथ-साथ शुद्ध निःशुल्क विशाल भोजनालय अपने अतिथियों की सुबह से शाम तक सेवा में तत्पर हैं। जगह-जगह पानी की सुविधा हेतु जलपरी, वाटरकूलर, हैण्डपम्प, नल आदि उपलब्ध हैं।

इन सबके अतिरिक्त वहाँ नित्य ही नवनिर्माण का कार्य चालू रहता है। सुन्दर पक्की सड़कें, हरे-हरे लॉन्, फूलों के उद्यान, झूले, नाव, खेल के मैदान, बच्चों की रेल, ऐरावत हाथी आदि परिसर की शोभा में चार चाँद लगाते हैं। कभी-कभी बिजली न होने पर यात्री देर रात तक रुककर जम्बूद्वीप के लाइट-फौव्वारे की शोभा देखकर ही वापस जाने की इच्छा रखते हैं।

यहाँ की स्वच्छता सबको मोह लेती है—जम्बूद्वीप के प्रमुख द्वार तक प्रतिदिन दिल्ली और मेरठ की 10-15 रोडवेज बसें सुबह से शाम तक यात्रियों को लाती और वहाँ से ले जाती हैं। वहाँ उतर कर कल्पवृक्ष द्वार में घुसते ही हर नर-नारी के मुँह से सर्वप्रथम यही निकलता है कि-"ऐसा लगता है स्वर्ग में आ गए"। पुनः वहाँ भ्रमण करने के पश्चात् वे लोग परिसर की स्वच्छता का गुणगान करते नहीं थकते हैं। पूरे स्थल पर कहीं कागज का एक टुकड़ा भी पड़ा नहीं दिखता जो वहाँ के सौन्दर्य में बाधक हो।

इन सबसे प्रभावित होकर ही उत्तरप्रदेश सरकार के पर्यटन विभाग ने जम्बूद्वीप रचना के चित्र से हस्तिनापुर की पहचान बनाते हुए विभाग द्वारा प्रकाशित फोल्डर में लिखा है-

Jambudweep is the.......has today blossomed into a man-made heaven of unparallel superlatives and natural wonders.

क्षेत्र पर होने वाले महोत्सव-मेले—हस्तिनापुर तीर्थ पर वर्ष में दिगम्बर-श्वेताम्बर समाज के कई मेले आयोजित होते हैं। जिनमें से कार्तिक पूर्णिमा का मेला सर्वप्रमुख है जिसमें जैन समाज से अतिरिक्त अजैन समाज भी भारी संख्या में पहुँचकर गंगा स्नान करता है इसलिए इस मेले को "गंगास्नान मेला" के नाम से भी जाना जाता है।

इसी प्रकार चैत्र कृष्णा एकम (होली मेला), अक्षयतृतीया , ज्येष्ठ वदी चौदस ये हस्तिनापुर के प्रमुख मेले हैं तथा समय-समय पर अन्य आयोजन भी वहाँ होते ही रहते हैं। वर्तमान में हस्तिनापुर पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी की तपःसाधना का केन्द्र बनकर संसार की दृष्टि में बस गया है। उनके पावन सानिध्य में केन्द्रीय एवं प्रादेशिक स्तर के अनेक उच्चकोटि के राजनेता पधार चुके हैं यही कारण है कि मेरठ कमिश्नरी का प्रशासन जम्बूद्वीप के नाम से ही श्रद्धावनत है और वहाँ के लघु संकेत पर समस्त सुविधाएं देने को तैयार रहता है।

मैंने हस्तिनापुर तीर्थ का यह अति संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया है, वास्तविक परिचय तो वहाँ साक्षात् पहुँचने वाले यात्रियों को स्वयमेव अनुभव में आता है। इस पावन तीर्थ भूमि को शत-शत नमन करते हुए मैं लेखनी को आगे बढ़ाती हूँ।

तीर्थंकर मल्लिनाथ एवं नमिनाथ जन्मभूमि

मिथिलापुरी तीर्थ

उन्नीसवें तीर्थंकर भगवान मल्लिनाथ और इक्कीसवें तीर्थंकर भगवान नमिनाथ की जन्मभूमि "मिथिलापुरी" है जो वर्तमान में नेपाल के अंदर मानी जा रही है। उत्तरपुराण ग्रंथ में मिथिला नगरी बंग देश (बंगाल) में वर्णित है। राजनीतिक नक्शे के अनुसार यह दरभंगा के निकट बिहार प्रान्त में मानी जा रही है अतः यह वर्तमान में खोज का विषय है।

इस मिथिला नगरी में इन दोनों तीर्थंकरों के गर्भ, जन्म, तप और ज्ञान ये चार-चार कल्याणक हुए हैं। भगवान मल्लिनाथ ने माता प्रजावती और पिता कुम्भराज से मगशिर शुक्ला एकादशी को जन्म लिया था। इन्होंने विवाह नहीं किया और बालब्रह्मचारी रहकर दिगम्बरी दीक्षा ग्रहण कर ली थी। पुनः सम्मेदशिखर पर्वत से मोक्ष प्राप्त किया था और भगवान नमिनाथ ने पिता विजय और माता वर्मिला से आषाढ़ कृष्णा दशमी के दिन अश्विनी नक्षत्र में जन्म लेकर मिथिलापुरी को पवित्र किया था तथा उन्होंने भी सम्मेदशिखर पर्वत से मोक्ष प्राप्त किया था। कुछ लोगों ने इस मिथिलानगरी का अस्तित्व काठमाण्डू (नेपाल) में मानकर वहाँ जैनमंदिर का निर्माण भी किया है किन्तु उसका निर्विवाद अस्तित्व जनता के समक्ष अवश्य आना चाहिए। दो तीर्थंकरों की इस पावन जन्मभूमि मिथिलापुरी तीर्थ को कोटिशः नमन।

तीर्थंकर मुनिसुव्रतनाथ जन्मभूमि

राजगृही तीर्थ

बीसवें तीर्थंकर मुनिसुव्रतनाथ के जन्म से पवित्र 'राजगृही' नगरी बिहार प्रान्त के नालंदा जिले में स्थित है। जैन वाङ्मय व अन्य साहित्य में इस राजगृही नगरी के गिरिव्रज, बसुमती, ऋषभपुर व कुशाग्रपुर आदि अनेक नाम मिलते हैं।

भगवान मुनिसुव्रतनाथ राजगृह में माता सोमा और पिता सुमित्र राजा से वैशाख कृ. द्वादशी के दिन उत्पन्न हुए। भगवान मुनिसुव्रत के गर्भ, जन्म, तप, ज्ञान इन चार कल्याणकों से पावन राजगृही तीर्थ प्रसिद्ध है। जीवन्धर कुमार, श्वेतसन्दीव, विद्युच्चर, गन्धमालन आदि अनेक महामुनियों ने इसी राजगृही नगरी में पंचपहाड़ी से विख्यात विपुलाचल, ऋषिगिरि आदि पर्वतों से घातिया-अघातिया कर्मों का नाश कर मोक्ष प्राप्त किया है जिसके कारण यह तीर्थक्षेत्र के साथ-साथ सिद्धक्षेत्र भी माना जाता है। राजगृही नगरी का विपुलाचल पर्वत इस दृष्टि से अत्यधिक श्रद्धा का केन्द्र बन गया कि भगवान महावीर की दिव्यध्वनि सर्वप्रथम यहीं खिरी थी, साथ ही उनके द्वारा धर्मचक्र प्रवर्तन इसी पावन भूमि पर होने से यह धर्मचक्र प्रवर्तन क्षेत्र के रूप में प्रसिद्धि को प्राप्त हुआ और वह दिन (श्रावण कृ. एकम) वीर-शासन जयन्ती दिवस के रूप में पर्व बन गया।

सुकौशल मुनि, नागदत्त सेठ, राजा श्रेणिक, पुष्पढाल व वारिषेण मुनि आदि के जीवन से संबंधित अनेकानेक पौराणिक घटनाओं को अपने भूगर्भ में छिपाए हुए यह नगरी जहाँ एक ओर धार्मिक दृष्टि से पूज्य रही वहीं ऐतिहासिक व राजनैतिक दृष्टि से भी अत्यन्त महत्वपूर्ण रही है। वर्तमान में भी उसकी धार्मिक महत्ता अब भी अक्षुण्ण है। आधुनिक राजगृही नगरी में राजगिरि स्टेशन से पश्चिम में दो फर्लांग दूर दिगम्बर जैन धर्मशाला और दो विशाल जिनमंदिर हैं। वर्तमान में इस तीर्थ का अच्छा विकास हुआ है। पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से राजगृही तीर्थ पर "दि. जैन लाल मंदिर" के बाहर उद्यान में भगवान मुनिसुव्रत की सवा बारह फुट ऊँची खड्गासन कृष्णवर्णी प्रतिमा विराजमान हुई हैं। उसका कमलाकार नूतन जिनमंदिर भी बन चुका है। राजगृही में विपुलाचल पर्वत के नीचे तलहटी में 31 फुट ऊँचा मानस्तंभ निर्मित हो चुका है जिसमें 17 नवम्बर 2004 में भगवान महावीर की 4 प्रतिमाएं (गुलाबी रंग की) विराजमान होने वाली हैं तथा विपुलाचल पर्वत पर निर्मित हॉल में पूज्य माताजी ने 14 जुलाई 2003 को वीरशासन जयंती के दिन भक्तों की ध्यानसाधना हेतु "ह्रीँ " की प्रतिमा विराजमान की है एवं वहीं पर भगवान महावीर चित्र प्रदर्शनी

का उद्‌घाटन भी 14 जुलाई 2003 को हुआ है जिसके द्वारा भक्तों को महावीर स्वामी का जीवन परिचय प्राप्त होगा। इस धार्मिक व ऐतिहासिक पावन भूमि राजगृही के दर्शन कर हम अपने जीवन को उन महापुरुषों के समान बना सकें, ऐसी भावना करते हुए राजगृही नगरी को शत-शत नमन।

तीर्थंकर नेमिनाथ जन्मभूमि
शौरीपुर तीर्थ

जैनधर्म के बाइसवें तीर्थंकर भगवान नेमिनाथ की जन्मस्थली "शौरीपुर" उत्तर प्रदेश के आगरा जिले में है। यह तीर्थ यमुना तट पर बसा हुआ है। यह स्थल सिद्धक्षेत्र के रूप में प्रसिद्धि को प्राप्त हुआ है क्योंकि यहाँ से अनेक मुनियों ने निर्वाणधाम को प्राप्त किया था।

शौरीपुर में माता शिवादेवी और पिता समुद्रविजय से श्रावण शुक्ला षष्ठी में श्री नेमिजिनेन्द्र उत्पन्न हुए थे।

हरिवंशपुराण में भी कथन आया है–

जिनस्य नेमिस्त्रिदिवावतारतः, पुरैव षण्मासपुरस्सरा सुरैः।
प्रवर्तिता तज्जननावधिगृहे, हिरण्यवृष्टिः पुरुहूतशासनात् ।।

अर्थ-भगवान् नेमिनाथ के स्वर्गावतार से छह माह पहले से लेकर जन्म पर्यंत पन्द्रह मास तक इन्द्र की आज्ञा से शौरीपुर निवासी राजा समुद्रविजय के घर देवों ने रत्नों की वर्षा की थी।

उपर्युक्त उल्लेखों से स्पष्ट है कि बाइसवें तीर्थंकर श्री नेमिनाथ ने शौरीपुर नगर में राजा समुद्रविजय के यहाँ जन्म लिया, इसके उपलक्ष्य में इन्द्रों और देवों ने भगवान के गर्भ और जन्मकल्याणकों का महान् उत्सव शौरीपुर में मनाया था। भगवान के इन दो कल्याणकों के कारण यहाँ की भूमि अत्यन्त पावन हो गई, जिससे आज इसे तीर्थ के रूप में माना जाता है।

भगवान के इन दो कल्याणकों के अतिरिक्त यहॉं पर कई अन्य मुनियों को केवलज्ञान और निर्वाणप्राप्ति के उल्लेख भी पौराणिक साहित्य में उपलब्ध होते हैं।

शौरीपुर में गन्धमादन नामक पर्वत पर रात्रि के समय सुप्रतिष्ठ नामक मुनिराज ध्यानमुद्रा में विराजमान थे। सुदर्शन नामक एक यक्ष ने पूर्व जन्म के विरोध के कारण मुनिराज पर घोर उपसर्ग किया। मुनिराज अविचल रहे, अनन्तर उन्हें केवलज्ञान की प्राप्ति हो गई।

हरिवंशपुराण में वर्णन आया है कि कुछ समय पश्चात् शौरीपुर नरेश अन्धकवृष्णि और मथुरा नरेश भोजकवृष्णि ने इन्हीं केवली भगवान् के निकट मुनि दीक्षा ले ली।

इसी प्रकार से आराधना कथा कोष में एक कथा आई है–

अमलकण्ठपुर के राजा निष्ठसेन के पुत्र धन्य ने भगवान नेमिनाथ के उपदेश से मुनिदीक्षा धारण कर ली। एक दिन विहार करते हुए मुनि "धन्य" शौरीपुर पधारे, वहाँ यमुनातट पर वे ध्यानारूढ़ हो गये। शौरीपुर का राजा शिकार से लौटा, शिकार न मिलने के कारण वह मन में बड़ा खिन्न हो रहा था। मुनिराज को देखते ही उसे लगा कि हो न हो, इस नग्न मुनि के कारण ही मुझे सारे दिन भटकने पर भी शिकार नहीं मिल पाया। यह सोचकर अपने निराशाजनक क्रोध के कारण उस मूर्ख ने उन वीतराग मुनि को तीक्ष्ण बाणों से बींध दिया। मुनि धन्य शुक्ल ध्यान द्वारा कर्मों को नष्ट कर सिद्धपद को प्राप्त हुए। उस समय इन्द्रों ने उनका निर्वाण महोत्सव मनाया।

एक "अलसत्कुमार" नाम के मुनि ने भी शौरीपुर से मोक्षपद प्राप्त किया तथा भगवान महावीर के समय "यम" मुनिराज भी अन्तःकृत केवली होकर यहीं से मोक्ष गए हैं। यह स्थान दानी कर्ण की जन्मभूमि है। प्रसिद्ध दार्शनिक विद्वान् आचार्य प्रभाचन्द्र के गुरु आचार्य लोकचन्द्र यहीं हुए थे। आचार्य प्रभाचन्द्र ने जैन न्याय के सुप्रसिद्ध ग्रंथ प्रमेयकमल मार्तण्ड की रचना यहीं पर की थी इस प्रकार की अनुश्रुति है।

श्री शौरीपुर की प्राचीन समृद्धि निर्विवाद है। इतिहासरत्न डा. ज्योतिप्रसाद के अनुसार 19वीं सदी के पूर्वार्द्ध में कर्नल टॉड और उसी सदी के अन्तिम चरण में जनरल कनिंघम और उनके सहयोगी कार्लायल ने यहाँ के खण्डहरों का सर्वेक्षण किया था और सिद्ध किया था कि प्राचीन काल में यह नगरी अत्यन्त समृद्धशाली थी। यहाँ पर अनेक बार हीरे के नग तथा ऐतिहासिक मुद्राएं आदि मिलने की बात सुनी व लिखी गई हैं। अनेक दिगम्बर जैन मूर्तियाँ और चिन्ह यहाँ प्राप्त हुए हैं। मध्यकाल में 19वीं सदी तक यहाँ दिगम्बर जैन भट्टारकों की गद्दी रही है। उनकी धार्मिक चर्चाओं और सिद्धियों से जनता बहुत प्रभावित थी।

मूलतः यह दिगम्बर जैन तीर्थ है। जितने प्राचीन मंदिर, मूर्तियाँ और चरण हैं सभी दिगम्बर परम्परा के हैं। आसपास के जैन स्त्रीपुरुष यहाँ मुण्डन, कर्णबेधन आदि संस्कार कराने आते हैं। यह क्षेत्र मूल संघाम्नायी भट्टारकों का स्थान रहा है। भट्टारक जगतभूषण और विश्वभूषण की परम्परा में अठारहवीं शताब्दी में जिनेन्द्र भूषण भट्टारक हुए हैं, ये मंत्रवेत्ता सिद्धपुरुष थे। इनके चमत्कारों के संबंध में अनेक किंवदन्तियाँ अब तक प्रचलित हैं। उन्होंने भिण्ड, ग्वालियर, आरा,पटना, सम्मेदशिखर, सोनागिरि, मसाड़ आदि कई स्थानों पर विशाल मंदिर तथा धर्मशालाएं बनवाईं, जो अब तक विद्यमान हैं।

वर्तमान में शौरीपुर और बटेश्वर दो अलग-अलग तीर्थ हैं। यह शौरीपुर से मात्र 3 किमी. दूर है तथा यहाँ ग्राम पंचायत का मुख्यालय है।

बटेश्वर के दिगम्बर जैन मंदिर के विषय में कहा जाता है कि जब शौरीपुर यमुना नदी के तट से अधिक कटने लगा और बीहड़ हो गया, तब उक्त भट्टारक जी ने बटेश्वर में विशाल मंदिर और धर्मशाला बनवाई। यह मंदिर महाराज बदनसिंह द्वारा निर्मापित घाट के ऊपर वि. सं.1838 में तीन मंजिल का बनवाया गया था। उसकी दो मंजिलें जमीन के नीचे हैं। इस मंदिर में महोबा से लाई हुई भगवान् अजितनाथ की पांच फुटी ऊँची कृष्ण पाषाण की सातिशय पद्मासन प्रतिमा विराजमान है। उसकी प्रतिष्ठा संवत् 1224 वैशाख वदी 7 सोमवार को परिमाल राज्य में आल्हा ऊदल के पिता जल्हड़ ने करायी थी।

यह जनश्रुति यहाँ की प्रसिद्ध है कि उपर्युक्त अजितनाथ की विशाल प्रतिमा जी महोबा से पालकी में विराजमान होकर आकाशमार्ग से बटेश्वर पधारी थीं। यहाँ अनेक प्राचीन मूर्तियाँ भी विराजमान हैं। इनमें भगवान् श्री शांतिनाथ की सं. 1150 (ई. 1093) की प्रतिष्ठित एक खड्गासन मूर्ति भी हैं, जिसकी छवि बड़ी मनोहारी है।

जैन मान्यतानुसार शौरीपुर का इतिहास महाभारत काल से भी कुछ पूर्व से प्रारंभ होता है। इस जैन मान्यता का समर्थन भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग की ओर से मार्च सन् 1972 में किये गये सर्वेक्षण से भी होता है जो कि श्री जगदीशसहाय निगम ने किया था। एक बार क्षेत्र कमेटी ने आदि मंदिर के दक्षिण की ओर एक टीले की खुदाई कराई थी, फलतः उसमें अनेक सांगोपांग तथा खण्डित जैन प्रतिमाएं निकली थीं।

वर्तमान में यहाँ आगरा के सक्रिय कार्यकर्ताओं द्वारा क्षेत्र के जीर्णोद्धार एवं विकास की अच्छी योजनाएं चल रही हैं। मार्च 2002 में पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी का संघ सहित इस तीर्थ पर मंगल पदार्पण हुआ, उस समय उन्होंने कमेटी के लोगों को शौरीपुर तीर्थ विकास की सुन्दर रूपरेखा बताई थी। संभवतः तदनुसार वहाँ का निर्माण चल रहा होगा।

इस पावन तीर्थ शौरीपुर को शत शत नमन।

तीर्थंकर महावीर जन्मभूमि
कुण्डलपुर तीर्थ

बिहार प्रान्त के नालंदा जिले में स्थित कुण्डलपुर नगरी सदियों से भगवान महावीर की जन्मभूमि के रूप में प्रसिद्ध है। यहाँ एक प्राचीन दिगम्बर जैन मंदिर है जहाँ मूलवेदी में भगवान महावीर की सवा चार फुट श्वेतवर्णी पाषाण की पद्मासन प्रतिमा विराजमान है तथा मंदिर के आजू-बाजू में शासन देव-देवी की मूर्ति विराजमान करने हेतु लघु मंदिर बने हैं। तीर्थ परिसर में श्री गौतमगणधर एवं श्री अकलंक स्वामी की चरण छत्री हैं तथा मंदिर के सामने भगवान महावीर के गर्भकल्याणक के प्रतीक में चरण चिन्ह हैं। सन् 2002-2003 में यहाँ पूज्य ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से कीर्तिस्तंभ का निर्माण हुआ है।

जैन शासन की तीर्थंकर परम्परानुसार इस युग के चौबीस तीर्थंकरों में से अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर का जन्म आज

से लगभग 2600 वर्ष पूर्व बिहार प्रान्त के "कुण्डलपुर" नगर में हुआ था। जैसा कि तिलोयपण्णत्ति ग्रंथ में कहा है–

सिद्धत्थरायपियकारिणीहिं, णयरम्मि कुण्डले वीरो।
उत्तरफग्गुणिरिक्खे, चित्तसियातेरसीए उप्पण्णो।।

अर्थात् भगवान महावीर कुण्डलपुर में महाराजा सिद्धार्थ एवं महारानी प्रियकारिणी (त्रिशला) से चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में उत्पन्न हुए। षट्खण्डागम के चतुर्थ खण्ड एवं नवमी पुस्तक की धवला टीका में श्रीवीरसेनाचार्य ने भी कहा है–

"आषाढ़ जोण्ण पक्ख छट्ठीए कुण्डलपुर णगराहिव णाहवंश सिद्धत्थ णरिंदस्स तिसिला देवीए गब्भमागंतूण तत्थ अट्ठदिवसाहिय णवमासे अच्छिय चइत्त सुक्क पक्ख तेरसीए रत्तीए उत्तराफग्गुणी णक्खत्ते गब्भादो णिक्खंतो।"

अर्थात् कुण्डलपुर नगर के अधिप-राजा नाथवंशी सिद्धार्थ नरेन्द्र की रानी त्रिशला के गर्भ से चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को महावीर तीर्थंकर का जन्म हुआ।

इसी प्रकार सम्पूर्ण प्राचीन दिगम्बर जैनागम ग्रंथों (उत्तरपुराण, हरिवंशपुराण, जयधवला, महावीर पुराण, वीरजिणिन्दचरिउ, वर्धमान चरित आदि) में भगवान महावीर के जन्मोत्सव का इन्द्रों द्वारा कुण्डलपुर में आकर मनाये जाने का सुन्दर वर्णन है।

2600 वर्षों में हुए कालपरिवर्तन के कारण वर्तमान में बिहार प्रान्त के नालंदा जिले में स्थित यह कुण्डलपुर नगरी भले ही अति अल्पक्षेत्र वाली होकर वैभवहीन बन गई, किन्तु यहां के कण-कण में महावीर के जन्म की पवित्रता आज भी विद्यमान है इसीलिए इसकी रज प्राप्त करने हेतु देश के कोने-कोने से दिगम्बर जैन समाज के हजारों श्रद्धालु कुण्डलपुर पहुँचते हैं तथा "कुण्डलपुर अवतारी, त्रिशलानन्द विभो" आदि पंक्तियों के द्वारा भगवान महावीर की भावभीनी आरती करते हैं।

2600वें जन्मकल्याणक के अवसर पर शुरू हो गया जन्मभूमि का विकास–यूँ तो प्रत्येक नगर एवं ग्राम में प्रतिदिन शासनपति भगवान महावीर के नाम की अनुगूंज रहती ही है और कुण्डलपुर के महावीर के अतिशय से विख्यात "चांदनपुर महावीर जी" तीर्थ पर भक्तजन अपनी मनोकामना सिद्धि के लक्ष्य से हजारों दीपक जलाते हैं, सोने-चाँदी के छत्र लगाते हैं तथा खूब चढ़ावा चढ़ाते हैं किन्तु किसी का ध्यान महावीर की वास्तविक ज़न्मभूमि की ओर नहीं गया कि वहाँ एक दीपक भी रोज जलता है या नहीं? वहाँ तीर्थयात्रियों के ठहरने आदि की व्यवस्था भी है या नहीं? एवं कुण्डलपुर की पवित्र धूलि जगत के लिए कितनी कल्याणकारी है? इसीलिए महावीर का नाम पूजा,चालीसा, आरती आदि के द्वारा जिनमंदिरों तक सीमित होने लगा किन्तु आखिर तो कभी न कभी, कोई न कोई महापुरुष जिनशासन की रक्षा हेतु अग्रसर होता ही है। इसी क्रम में भगवान महावीर के 2600वें जन्मकल्याणक महोत्सव का प्रसंग आया और प्रेरणा मिल गई जैनसमाज की सर्वोच्च साध्वी राष्ट्रगौरव पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी की, फिर तो मानो कुण्डलपुर के विकास की स्वर्णिम घड़ियाँ ही आ गईं और जनवरी सन् 2002 से यह विकास लक्ष्य शुरू करके सर्वप्रथम 24 मार्च 2002 को प्राचीन मंदिर परिसर में 36 फुट उत्तुंग भगवान महावीर स्वामी कीर्तिस्तंभ का शिलान्यास किया गया पुनः "दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान, जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.के अंतर्गत "भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर दिगम्बर जैन समिति" के नाम से एक कमेटी का गठन हुआ जिसके माध्यम से दिनाँक 14 अगस्त 2002 श्रावण शुक्ला षष्ठी को कुण्डलपुर में लगभग 2 एकड़ जमीन (उत्तरमुखी) क्रय की गई, जहाँ 29 दिसम्बर 2002 को पूज्य गणिनी माताजी के ससंघ मंगल पर्दापण के अवसर पर "भगवान महावीर जिनमंदिर" के शिलान्यासपूर्वक तीर्थ का विकासकार्य प्रारंभ हुआ।

कुण्डलपुर के विकास हेतु किये गये मंदिरों के नवनिर्माण आदि का पूरा वर्णन इसी अभिनंदन ग्रंथ के पांचवें खण्ड में प्रस्तुत किया गया है, वहाँ से दृष्टव्य है। उनके साथ-साथ इस नूतन तीर्थ परिसर में यात्रियों के लिए आवास हेतु आधुनिक सुविधायुक्त फ्लैट्स, भोजनशाला, पानी की टंकी आदि का निर्माण हो चुका है।

शासनपति भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर को शत-शत नमन।

* * *

BRIEF INTRODUCTION OF BIRTHPLACES OF 24 TIRTHANKARS

- Jeevan Prakash Jain, Indore

In all the three worlds (Teen Loks) only Middle World (Madhya Lok) deserves virtuously for the birth of great human beings Viz. 24 Tirthankars (Jain Lords), who can achieve state of salvation for becoming free from the birth & death cycle. Specially, in accordance with supreme Jain religion, usually all 24 Tirthankars of Bharat Kshetra take birth in "Ayodhya" and attain salvation from the holy mountaineous place of pilgrimage Sammedshikhar in all the periods of time. But, unfortunately in this period of time due to the bad effect of 'Hundavasarpini Kal' (a period of time), only 5 Tirthankars took birth in Ayodhya and another 19 Tirthankars took birth at different places. Therefore, totally there are 16 birth places of Tirthankars. 16 birthplaces of 24 Tirthankars are being described here–

The birth place of Lord Rishabhdev etc. 5 Tirthankars
Ayodhya (U.P.)

An eternal city of Bharat Kshetra which will never be destroyed, and for this only, it is called 'Shashvat' (Eternal) place of pilgrimage. It is situated in the Faizabad district of eastern Uttar Pradesh In the auspicious land of this city, only five Tirthankars-Adinath, Ajitnath, Abhinandannath, Sumatinath & Anantnath took birth. Also before 9 lacs of years the great being Ramchandra ji was born here and made this city ideal in the world.

In the reverence of Tirthankars, a huge construction of auspicious points (Tonks) & temples has been constructed in this city. Specially in the Raiganj of Ayodhya, a 31 feet high grand idol of Lord Rishabhdev has been installed and on the auspicious inspiration of Ganini Aryika Shri Gyanmati Mataji, another 21 feet high idol in sitting posture of Lord Rishabhdev has been installed in a public park.

Moreover, on the inspiration of Pujya Mataji a lot of reverential places have been redeveloped here. Some of them are-Teen Chaubisi Mandir (temple), Samavasaran, Guru Mandir, Laghu Kailashparvat, Lord Rishabhdev tonk, Tirthankartray Tonk, Ajitnath Tonk, Abhinandannath Tonk, Bharat-Bahubali Tonk, Anantnath Tonk etc.

The birth place of Lord Sambhavnath
Shravasti (U.P.)

The holy land of Shravasti is the birth place of the third Jain Lord Sambhavnath and also it is purified with the four Kalyanaks of Lord. It is situated at the Balrampur-Baharaich Road, U.P. and it is 110 Kms. far from Ayodhya. There is a ruined building which is considered as the ruins of the palace of Lord Sambhavnath. It is actually under the authority of archealogical department, for this only no other construction of temples or 'Charanpaduka' (auspicious feet of Lord) could possible there. But, number of devotees reach there with deep devotion to pay reverence in regard with the birth place of Lord Sambhavnath. Presently, the process of excavation is going on there at extensive scale and as its result, the idol of the demigods of Jain Tirthankars are being found, which are being collected in the Museum. Besides the birth place of Lord Sambavnath, it is also the place of first resonant preaching (Divya-Dhvani) of Him. Beautiful Jain temples have also been constructed here, where attractive idols of Lord Sambhavnath etc. have been installed. Also in the campus area, nice facilities are available for the pilgrims.

The birth place of Lord Padmaprabh
Kaushambi (U.P.)

The city Kaushambi is not only adorned with the birth of the 6th Tirthankar Lord Padmaprabh but also four Kalyankas (Grabh, Janma, Tap & Gyan) of Lord occurred there. At the time of celebration of all four Kalyankas, Indras came to create auspicious rain of innumerable jewels at this place. Actually, Kaushambi is the place of getting Garbh (incarnation into the womb) & Janma (birth) by the Lord and Pabhosa, which was called as the mountain in the park of Kaushambi, is the place of getting Diksha (initiation) and Gyan (omniscience) by the Lord. But because of the small distance of 8-10 Kms. between both the places, they are togetherly called as a place of pilgrimage.

The birth place of Lord Suparshvanath & Parshvanath
Varanasi (U.P.)

Varanasi city, which is famous by the names Kashi & Banaras, was established by the Indra in the beginning of 'Karmabhumi'. In this city the 7th Tirthankar Lord Suparshvanath & the 23rd Tirthankar Lord Parshvanath were born. Also it is the land of 4 & 3 'Kalyanaks' of both Lords respectively. The place Bhadaini in Banaras is considered as the birth place of Lord Suparshvanath and Bhelupur as that of Lord Parshvanath. At both places beautiful Jain temples are constructed and all nice facilities are available there for the staying of pilgrims. Varanasi has also a highly respected place in accordance with Hindus.

The birth place of Lord Chandraprabh
Chandrapuri (U.P.)

Chandrapuri is the birth place of the 8th Tirthankar Lord Chandraprabh. It is only 24 Kms. far from Varanasi. Four Kalyanaks-Garbh, Janma, Tap & Gyan were also occurred at the same place, therefore it is considered as a very ancient place of pilgrimage. At the bank of Ganga river, a temple is constructed there and all kinds of facilities for pilgrims are available in its campus.

The birth place of Lord Pushpadantnath
Kakandi (U.P.)

Kakandi is the place which is sacred with the birth of the 9th Tirthankar Lord Pushpadantnath. Presently it is famous by the name Khukhundu. It is situated in the Devariya district of Uttar Pradesh. Kakandi is a very reverential place in the Jain history. The Garbh & Janma Kalyanaks of Lord Pushpadantnath occurred here but again in the Pushpak forest of Kakandi, which is presently known by the name Kahaum and 16 Kms. far from Kakandi, Diksha & Gyan Kalyanaks of Lord occurred. A Jain temple is constructed there in the reverence of Lord Pushpadantnath.

The birth place of Lord Sheetalnath
Bhaddilpur or Bhadrikapuri (U.P.)

The birth place of the 10th Tirthankar Lord Sheetalnath is Bhaddilpur and its another name is Bhadrikapuri. Presently, it is situated is at Etkhori of Chatara district of Jharkhand state and is known as Bhaddilpur or Bhadrakali. Besides the Janma (birth) of Lord, the land of Bhadrikapuri is also adorned with the Garbh, Tap & Gyan Kalyankas.

The birth place of Lord Shreyansnath
Sinhpuri (U.P.)

The city Sinhpuri is situated in the Varanasi district and it is just 6 Kms. far from Varanasi. Sinhpuri is the birth place of Lord Shreyansnath and also it is the land of all 4 Kalyanaks-Garbh, Janma, Tap &

Gyan of Lord. Scholars say that, because of the birth place of Lord, name of this city has been changed to Sarnath. There is an ancient Jain Temple and near to it, a 103 feet high Stup has been is constructed in regard of Lord's birth place, it was got built by king Ashok.

The birth place of Lord Vasupujyanath
Champapur (Bihar)

Champapur is one of the ancient cultural city of India. Fortunately along with being the birth place of Lord Vasupujyanath, Champapur city is adorned with the occurrences of all his five Kalyanakas-Garbh, Janma, Tap, Gyan & Moksh. It is only the city where all five Kalyanaks of any Tirthankar occurred at one place. Garbh & Janma Kalyanaks of Lord occurred in Champapur and Diksha, Tap & Moksh Kalyankas occurred at Mandargiri, which was a mountain in the garden of Champapur in that time. But now-a-days Mandargiri is about 50 Kms. far from Champapur. Champapur is just 3 Kms. away from the Bhagalpur Railway station. A number of beautifully constructed temples are there, in which attractive metallic & stony idols of Tirthankars have been installed. Also all facilities for the staying of pilgrims are available there.

The birth place of Lord Vimalnath
Kampila (U.P.)

It is a very ancient city situated at the bank of Ganga river in the Farrukhabad district, U.P. It is also called as Kampilyapuri. With the birth place of the 13th Tirthankar Lord Vimalnath, it is also the land of Garbh, Janma, Tap & Gyan Kalyanaks of Lord. A 1400 years old ancient Jain temple is constructed there, in which, an idol of the 4th period of time (Kal), which was obtained from the depths of Ganga river, is installed. All the modern facilities are also available here for the staying of pilgrims.

The birth place of Lord Dharmanath
Ratanpuri (U.P.)

A city which is 24 Kms. far from Ayodhya (U.P.). It is the birth place of the 15th Tirthankar Lord Dharmanath. The land of Ratanpuri is also sacred with the 4 Kalyanaks-Garbh, Janma, Tap & Gyan of Lord. Presently it is famous by the name Raunahi. There are two Digambar Jain temples and also all facilities are available there in the campus for the staying of pilgrims.

The birth place of Lord Shantinath, Kunthunath & Arahnath
Hastinapur (U.P.)

A very sacred historical & ancient place of pilgrimage. According to Jain scriptures it was established by deities in the beginning of the era. Such a reverential place is adorned with the births as well as all 4-4 Kalyanaks of such great personalities who were enlightening with the three supreme ranks 'Tirthankar, Chakravarti & Kamdev'-Lord Shantinath, Lord Kunthunath & Lord Arahnath. On the auspicious inspiration of Ganini Shri Gyanmati Mataji a very beautiful & great place of pilgrimage 'Jambudvip' has been constructed there. Specially, on looking at the beauty of 'Jambudvip' the tourism department U.P. has declared it as a man made heaven.

At the place all the modern facilities are also available for pilgrims.

The birth place of Lord Mallinath & Naminath
Mithilapuri

Mithilapuri is the birth place of the 19th Tirthankar Lord Mallinath and the 21st Tirthankar Lord Naminath. Presently the existence of it, is considered at Nepal. But in a Jain scripture 'Uttarpuran' its existence is described in the Bang country (Bengal). Therefore, it is the subject of research. In this city all 4-4 Kalyanaks-Garbh, Janma, Tap & Gyan of both Lords occurred. Some people have got constructed a Jain temple at Kathmandu (Nepal) by considering it as the birth place of Lord.

The birth place of Lord Munisuvratnath
Rajgrihi (Bihar)

The city Rajgrihi is situated at the Nalanda district of Bihar state. It is the birth place of the 20th Tirthankar Lord Munisuvratnath. Many other names like Girivajra, Basumati, Rishabhpur & Kushagrapur etc. are found in the Jain and other scriptures. It is also the land of 4 Kalyanaks-Garbh, Janma, Tap & Gyan of Lord. There are five great & reverential mountains, where devotees reach to climb up with great reverence. Although from all the five mountains many great beings Jivandhar Svami, Vidyuchchar, Gandhmadan etc. got salvation but specially, because of the place of first resonant preaching (Divyadhvani) of Lord Mahavir, the first mountain 'Vipulachal' is the main cetnre of reverential attraction of devotees. In the city area two Digambar Jain temples have also been constructed, where in the campus, all kinds of best facilities are available for the pilgrims.

The birth place of Lord Neminath
Shauripur (U.P.)

It is the birth place of the 22nd Tirthankar Lord Neminath. It is situated in the Agra district (U.P.). The Garbh & Janma Kalyanaks of Lord occurred here but the pride of getting salvation by number of great saints also goes to the land of Shauripur. There are Jain temples constructed at Shauripur as well as at Bateshvar, which is just 3kms. far from the Shauripur.

The birth place of Lord Mahavir
Kundalpur (Nalanda-Bihar)

The birth place of Lord Mahavir Kundalpur, a place which is situated in Nalanda district of Bihar state. Lord Mahavir took birth in Kundalpur 2600 years ago and at that time Indras came to celebrate the birth of Lord Mahavir. The Land of Kundalpur is also sacred with the Garbh, Janma & Diksha Kalyanaks of Lord Mahavir. On the inspiration of Ganini Aryika Shri Gyanmati Mataji, a great place of pilgrimage 'Nandyavart Mahal' has been constructed in Kundalpur, in which with the huge constructions of temples & a beautiful grand model of the royal palace of Lord Mahavir has been also constructed. At the place all kinds of modern facilities are also available for the staying of pilgrims. An ancient temple has also been constructed here in the remembrance of the birth place of Lord Mahavir.

BRIEF ABOUT THE LAND OF KALYANAKS OF LORDS BESIDES THE BIRTH PLACES

Prayag (U.P.)

An ancient city having a very great & auspicious place in the world. It is situated in U.P. It is the land of Diksha & Kevalgyan Kalyanaks of Lord Rishabhdev. On the inspiration of Ganini Aryika Shri Gyanmati Mataji, a great place of pilgrimage 'Tirthankar Rishabhdev Tapasthali' has been constructed in regard of Lord Rishabhdev. In the city area also attractive Jain temples are situated.

Ahichchhatra (U.P.)

A city where a super and auspicious event of getting omniscience by Lord Parshvanath took place. Once, a stellar deity Shambar Dev, the soul of Kamath, caused terrible afflictions over Parshvanath, who was deeply engrossed in meditation, and then deities Dharnendra & Padmavati came there to protect Parshvanath by expanding the sanke-hood. Since then only, this place is known as Ahichchhatra. Ultimately Lord Parshvanath got omniscience here and the super creation of the first Samavaṣaran was created by Indras. Presently this city is situated in the Bareli district of U.P.

Kailash Parvat

A reverential mountain, which is the salvation land of Lord Adinath. Presently it is situated in China country and famous by the name 'Kailash Man Sarovar'. It is said that, on this mountain, 72 temples of 72 Tirthankars related to past, present & future time, got constructed by Bharat Chakravarti and the 72 jewel-idols of Lords got installed.

Sammedshikhar (Jharkhand)

It is an eternal (Shashvat) place of pilgrimage, It is the land of salvation of infinite Tirthankars as well as 20 Tirthankars among all 24 of present era. All the devotees reach here with intense spiritual devotion and reverentially climb up the mountain to verify their 'Bhavyatva' (greatness). There are 24 adorable foot prints of 24 Tirthankars installed in the 24 Tonks (spiritual points) on the mountain. And also at the basement area of the mountain number of temples have been constructed by the aid of many trusts, devotees worship there to attain spiritual merits.In the development & protection of this place of pilgrimage many great saints Viz. Acharya Aryanandi, Acharya Vimalsagar, Acharya Sambhavsagar, Acharya Sumatisagar & Ganini Aryika Shri Suparshvamati have applied their full effort & got constructed there many great temples & other constructions too. Presently it is situated in the Jharkhand state and all the facilities for the comfort of pilgrims are available here.

Girnar (Gujarat)

A great place of pilgrimage, which is the land of getting initiation (Diksha), omniscience (Kevalgyan) & salvation (Nirvan) by Lord Neminath. It is situated near Junagarh (Gujarat).

Jrimbhika

It is the place of getting omniscience (Kevalgyan) by Lord Mahavir. According to Digambar Jain scriptures, Lord Mahavir got omniscience at the bank of Rijukula river near a village named Jrimbhika. Presently by considering a village 'Jammui' in Bihar state as the land of getting omniscience, a scheme of developing it as the 'Kevalgyan Tirth, is being prepared by 'Bihar Prantiya Digambar Jain Tirthkshetra Committee'.

Pavapuri (U.P.)

A great place of pilgrimage. At the age of 72, Lord Mahavir got final emancipation, Viz. Nirvan, from the holy land of Pavapuri near Patna (Bihar). The celebration during the Diwali, the festival of lights, is performed to commemorate Lord's liberation, since Tirthankar Mahavir attained salvation 2500 years ago. Then a Mahavira Nirvan era started reminding the world of the most auspicious event of Nirvan. Nearby the holy pond of Pavapuri, a Digambar Jain temple has been constructed, where all facilities are available for the staying of pilgrims .

* * *

Life is a Challenge...........Meet it.
Life is a sorrow................Overcome it.

तीर्थंकर जन्मभूमियाँ संस्कृति की उद्गमस्थल हैं!

–कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन

देशभक्ति के गीत की दो पंक्तियों से विषय को प्रारंभ करता हूँ–

भरा नहीं जो भावों से, बहती जिसमें रसधार नहीं।
वह हृदय नहीं है पत्थर है, जिसमें स्वदेश का प्यार नहीं।।

अर्थात् भारत की धरती पर जन्मे समस्त मानवजाति के हृदयों को झंकृत करने वाली कविताएं समय-समय पर इसीलिए रची गई हैं कि यदि किसी कारणवश स्वदेश के प्रति अपने कर्तव्य का निर्वाह न करके मानव दिग्भ्रमित हो रहा हो तो उसमें देशप्रेम एवं उसकी रक्षा का भाव जागृत हो सके। ठीक इसी प्रकार से प्राणीमात्र का हित करने वाले शाश्वत एवं प्राकृतिक जैनधर्म के प्रति भी समस्त जैनधर्मावलम्बियों को हमेशा सचेत रहने की प्रेरणा धर्माचार्यों ने प्रदान करते हुए सम्यग्दर्शन के प्रभावना अंग में कहा है–

अज्ञानतिमिरव्याप्तिमपाकृत्य यथायथम् ।
जिनशासन माहात्म्यप्रकाशः स्यात्प्रभावना।।

अर्थात् जैनशासन की महिमा का प्रकाश फैलाना-प्रचार-प्रसार करना प्रभावना अंग है। उस जैनशासन में वीतरागी देव-शास्त्र-गुरू की भक्ति के साथ-साथ तीर्थंकर भगवान जैसे महान् देवों के जन्म एवं पंचकल्याणकों से पावन तीर्थभूमियों का विकास एवं उनका प्रचार करना भी प्रभावना अंग का ही परिचायक है।

जन्मभूमि तीर्थ संस्कृति के उद्गम स्थल हैं–

यूँ तो भारतभूमि पर सैकड़ों तीर्थ हैं जिनके दर्शन करके लोग मानसिक शांति प्राप्त करते हैं किन्तु जिस धरती पर धर्मतीर्थ का प्रवर्तन करने वाले तीर्थंकर भगवान जन्म लेते हैं उनकी पूज्यता तो लेखनीगम्य हो ही नहीं सकती है। पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी कई बार प्रवचनों में कहा करती हैं-

"तीर्थंकर भगवन्तों की जन्मभूमियाँ वास्तव में भारतीय संस्कृति की उद्गमस्थली हैं, क्योंकि वहाँ 15 महीने तक देवता असंख्य रत्नों की वृष्टि करते हैं, इन्द्र भी उस नगरी की बड़ी भक्तिपूर्वक प्रदक्षिणा करता है, महामुनिराज भी वहाँ जिनेन्द्र बालक को देखने के लिए आते हैं और अपने मन की प्रत्येक शंका का समाधान सहज पा जाया करते हैं। जहाँ से गृहस्थ धर्म एवं राजनीति के संचालन के साथ-साथ मोक्षमार्ग भी साकार होता है उस भूमि से अधिक पवित्र भला और दूसरा स्थान कौन हो सकता है? अर्थात् प्राथमिक रूप से हम सबके लिए तीर्थंकर जन्मभूमियाँ पूज्य हैं। जन्म के पश्चात् ही तपस्या और ज्ञान के क्रमानुसार सिद्धपद की प्राप्ति होती है अतः उनके निर्वाणस्थल सिद्धक्षेत्र के रूप में पावन-पूज्य हो जाते हैं।" इन सिद्धक्षेत्रों पर जाकर वंदना करने एवं निर्वाणलाडू चढ़ाने की परम्परा आज भी चली आ रही है, उनमें सम्मेदशिखर एवं पावापुरी में विशेषरूप से यात्रियों का तारतम्य जुड़ा हुआ है।

क्या कभी जन्मभूमि पर एक दीप भी जलाने का मन बनाया है?

प्रिय बन्धुओं! वर्तमान में चौबीस तीर्थंकरों की सोलह जन्मभूमियाँ हैं, हो सकता है कि इनमें से अनेक के दर्शन भी आपने किये हों किन्तु क्या उनके बारे में कभी आपने ऐसा कुछ सोचा है कि ये तीर्थ सांस्कृतिक धरोहर के रूप में विश्व के समक्ष आएं। वास्तव में वह क्षण बड़ा रोमाँचक और दर्दनाक था जब पूज्य ज्ञानमती माताजी ने अपनी अन्तरात्मा की आवाज भक्तों तक पहुँचाने के लक्ष्य से एक सभा में कहा था–

"आज का युग चमत्कार का युग बन गया है, लोग भौतिक मनोकामनाओं की पूर्ति के लिए अतिशयक्षेत्रों की ओर भाग रहे हैं। उन अतिशयक्षेत्रों में चांदनपुर के महावीर, तिजारा के चन्द्रप्रभ, पदमपुरा के पदमप्रभु भगवान के समीप प्रतिदिन हजारों-हजार दीपक भक्तों द्वारा जलाये जाते हैं, सोने-चाँदी के छत्र चढ़ाये जाते हैं किन्तु क्या कभी भक्तों ने उनके सामने खड़े होकर चिन्तन किया है कि श्री महावीर स्वामी की जन्मभूमि कुण्डलपुर में, चन्द्रप्रभ की जन्मभूमि

चन्द्रपुरी में या पदमप्रभु की जन्मभूमि कौशाम्बी में कभी एक दीपक भी जलता है या नहीं? वहाँ प्रकाश है या अंधकार? वहाँ सुरक्षा व्यवस्था भी है या नहीं? वहाँ प्रभु की वेदी भी ठीक से बनी है या नहीं? एवं उन जन्मभूमियों के प्रति हमारा कुछ दायित्व भी है या नहीं? यदि ऐसे प्रश्नों के प्रति कुछ सोचने को मन मजबूर होता है तब तो अवश्य अभी मानवता के अंकुर शेष हैं और उनको प्रस्फुटित करते ही फूल और फल आते देर नहीं लगेगी। अतः मेरी आपसे यही प्रेरणा है कि पहले भगवन्तों की उपेक्षित जन्मभूमियों को सच्चे तीर्थ के रूप में साकार करो। अन्य स्थानों पर मंदिर या नये तीर्थ बनाने की अपेक्षा तीर्थ को ही तीर्थ बनाने में सहस्रगुणा पुण्य अधिक है।"

पूज्य श्री की उपर्युक्त प्रेरणा में यही अन्तर्वेदना निहित है कि समाज अपने कर्तव्य के प्रति जागरूक हो तथा "जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी" के अनुसार अपनी जन्मभूमि से भी अधिक महत्व तीर्थंकर जन्मभूमियों को प्रदान करें तो वह दिन दूर नहीं रहेगा जब जैनधर्म पुनः अपनी गौरव गरिमा को प्राप्त होकर दिग्दिगन्त व्यापी बनेगा।

इन जन्मभूमि तीर्थों के बारे में जानकर किसी भी नगर की श्रद्धालु दिगम्बर जैन समाज अथवा कोई दानी परिवार एक-एक तीर्थ के उद्धार एवं विकास का संकल्प यदि ले ले तो अतिशयोक्ति की बात नहीं है। जिस प्रकार से अपने पैतृक मकान, दुकान एवं व्यापार का योग्य पुत्र सदैव संरक्षण, संवर्धन करना ही कर्तव्य समझता है उसी प्रकार तीर्थंकर भगवन्तों के अभयारण्य शासन में रहकर सभी भक्तों का भी कर्तव्य है कि उनके जीर्ण-शीर्ण तीर्थस्थलों का जीर्णोद्धार कर उनका यथायोग्य विकास करें तथा विकास करने वालों के प्रति सदैव वात्सल्यभाव रखकर धर्मवृद्धि की अनुमोदना करें ताकि पुण्य का बंध हो।

जन्मभूमि तीर्थों के विकास की श्रृँखला में वर्तमान सहस्राब्दि की ऐतिहासिक उपलब्धि के रूप में भगवान महावीर की जन्मभूमि का विकास कार्य तेजी से हुआ है। जहाँ 8 से 10 अक्टूबर 2003 तक "कुण्डलपुर महोत्सव" आयोजित हुआ। जन्मभूमि समिति एवं बिहार सरकार पर्यटन विभाग के संयुक्त तत्त्वावधान में आयोजित इस महोत्सव में देशभर से भक्तों ने पधारकर विभिन्न धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भाग लिया।

* *

प्यारे बच्चो! तुम्हें देश में, महावीर युग लाना है।
कभी न अण्डा केक पेस्टी, चाकलेट नहिं खाना है।।
दीप जलाओ जन्मदिनों पर, भोजन खाओ खीर का।
हर बच्चे में छिपा हुआ है, तेज प्रभु महावीर का।।

प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की दीक्षा एवं ज्ञानकल्याणक भूमि

प्रयाग-इलाहाबाद

प्रस्तुति–अनिल कुमार जैन (कमल मंदिर),
प्रीतविहार-दिल्ली

प्रयाग तीर्थ की प्राचीनता–भारतदेश की वसुन्धरा पर शाश्वत तीर्थ अयोध्या और सम्मेदशिखर के समान ही कर्मयुग की आदि से प्रयाग तीर्थ का प्राचीन इतिहास रहा है। आज से करोड़ों वर्ष पूर्व जैनधर्म के प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव ने अयोध्या में जन्म लेकर राज्य संचालन किया पुनः संसार से वैराग्य हो जाने पर उन्होंने जिस सिद्धार्थ नामक वन में जाकर वटवृक्ष के नीचे जैनेश्वरी दीक्षा धारण की थी, वही स्थान प्रयाग के नाम से प्रसिद्धि को प्राप्त हुआ, ऐसा जैन ग्रंथों में वर्णन आता है।

जैसा कि हरिवंशपुराण में कहा है–

एवमुक्त्वा प्रजा यत्र, प्रजापतिमपूजयत्।
प्रदेशः स प्रयागाख्यो, यतः पूजार्थयोगतः।।

अर्थात् जहाँ दीक्षा के समय भगवान से सान्त्वना को प्राप्त करके प्रजा ने और सुर-असुरों ने भी भगवान की विशेष पूजा की, उसी पूजा के निमित्त से उस स्थल का "प्रयाग" यह नाम प्रसिद्ध हुआ।

जैन रामायण पद्मपुराण में भी आया है–

"प्रकृष्टो वा कृतस्त्यागः प्रयागस्तेन कीर्तितः"

अर्थात् प्र-उत्कृष्ट रूप से त्याग करने से उस स्थल का नाम "प्रयाग" पड़ गया। इस कथन के अनुसार करोड़ों वर्ष पूर्व उस प्रयाग तीर्थ पर जिस वटवृक्ष के नीचे भगवान ने दीक्षा धारण की थी, पुनः एक हजार वर्ष तक तपश्चरण करके उसी वटवृक्ष के नीचे केवलज्ञान प्राप्त किया था। आज भी वह "अक्षयवटवृक्ष" के नाम से प्रयाग में विद्यमान है।

वर्तमान में वह प्रयाग नगर "इलाहाबाद" के नाम से उत्तर प्रदेश में "महाकुंभ नगरी" के रूप में विश्वप्रसिद्ध तीर्थ है।

इतिहास पुनः साकार हुआ–प्रयाग का जो प्राचीन जैन इतिहास लुप्तप्राय हो गया था, युगादि का वही प्राचीन नगर प्रयाग जैन तीर्थ के रूप में पुनः नई सहस्राब्दि का वरदान बनकर अपने इतिहास से संसार को परिचित करा रहा है। जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी **पूज्य गणिनी प्रमुख आर्यिका शिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी** की प्रेरणा प्राप्त कर दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान, जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ-उत्तरप्रदेश) नामक संस्था के द्वारा फरवरी 2001 में इलाहाबाद-बनारस हाइवे पर **"तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली प्रयाग दिगम्बर जैन तीर्थ"** का अभूतपूर्व निर्माण हुआ है।

उक्त संस्थान के द्वारा 4 फरवरी सन् 2000 को राजधानी दिल्ली में **"भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव"** का प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी से उद्घाटन कराया गया था। उसी महोत्सव वर्ष का समापन 8 फरवरी 2001 को इस तपस्थली तीर्थ के निर्माणपूर्वक किया गया। फलस्वरूप फरवरी 2001 में तीर्थ की प्रणेत्री पूज्य गणिनी माताजी के ससंघ सानिध्य एवं अनेक राजनेताओं, समाजनेताओं की गरिमामयी उपस्थिति में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा तथा भगवान ऋषभदेव का महाकुंभ मस्तकाभिषेक महोत्सव सम्पन्न हुआ। तब से तपस्थली तीर्थ पर निरन्तर साधु संघों एवं श्रद्धालु भक्तों के आवागमन का तांता लगा रहता है।

तीर्थ पर निर्मित वन्दनीय स्थलों की जानकारी–

1. भगवान ऋषभदेव दीक्षा कल्याणक तपोवन–तीर्थ परिसर के इस प्रथम मंदिर में धातु से निर्मित 15 फुट ऊँचे वटवृक्ष के नीचे भगवान ऋषभदेव की सवा पाँच फुट उत्तुंग खड़गासन (पिच्छी-कमंडलु सहित) प्रतिमा कर्मयुग की प्रथम दीक्षा का इतिहास दर्शा रही है। सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्रस्वरूप रत्नत्रय त्रिवेणी की स्मृति में ही मानो प्रयाग में गंगा

यमुना और सरस्वती नदियों का संगम पाया जाता है।

इस तपोवन के सामने तमाम भक्तगण अपने बच्चों का मुंडन संस्कार करवाकर उनमें विद्याबुद्धि एवं सदाचार के संस्कार आरोपित करते हैं।

2. केवलज्ञान कल्याणक समवसरण रचना–जिस पुरिमतालपुर के उद्यान में भगवान ऋषभदेव को केवलज्ञान हुआ था उसे प्रयाग का ही पूर्वतालपुर माना जाता है। उसी इतिहास को दर्शाने के लिए तपोवन के समान ही दूसरे कमलाकार भवन में समवसरण की रचना निर्मित है।

इस समवसरण रचना का भी ऐतिहासिक महत्व निम्न प्रकार है–

मार्च 1998 में पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से उनके संघ सानिध्य में राजधानी दिल्ली के लालकिला मैदान से तत्कालीन केन्द्रीय वित्त राज्यमंत्री श्री वी.धनंजय कुमार जैन की अध्यक्षता में उद्घाटित तथा प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा प्रवर्तित "भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार रथ" एवं विशाल "ऐरावत हाथी" रथ का संस्थान द्वारा देश के विभिन्न अंचलों में प्रभावनापूर्ण प्रवर्तन लगभग 3 वर्ष तक हुआ।

उस प्रवर्तन से प्राप्त दिगम्बर जैन श्रद्धालुओं की धनराशि का सदुपयोग संस्थान ने इस तपस्थली तीर्थ के निर्माण में किया तथा उसी ऐतिहासिक समवसरण की स्थाई रूप से स्थापना इस तीर्थ पर की गई है। धातु से निर्मित इस लघुकाय समवसरण को पूर्णरूप से शास्त्रोक्त विधि अनुसार दर्शाया गया है। भगवान के दिव्यज्ञान का प्रतीक यह समवसरण सभी के हृदय में ज्ञान की ज्योति प्रस्फुरित करे यही शुभेच्छा है।

3. कैलाश पर्वत–तपस्थली परिसर के बीचोंबीच में विशाल कैलाशपर्वत का निर्माण हुआ है। जैनशास्त्रों के अनुसार कैलाशपर्वत के अष्टापद शिखर पर भगवान ऋषभदेव ने अंतिम तपस्या करके समस्त कर्मो से रहित मोक्ष अवस्था प्राप्त किया था। वर्तमान में वह कैलाश मानसरोवर के नाम से चीन देश की सीमा में है। अतः भारत में उसकी प्रतिकृति का दिग्दर्शन कराने हेतु प्रथम बार इस पर्वत का निर्माण प्रयाग में किया गया है, जो उत्तर प्रदेश के पर्यटन केन्द्र का एक आकर्षक स्थल बन गया है।

पर्वत पर सामने से ही त्रिकाल चौबीसी के 72 जिनमंदिरों एवं भगवन्तों के दर्शन से जहाँ जैन श्रद्धालु सम्राट् भरत चक्रवर्ती द्वारा निर्मित 72 मंदिरों के पौराणिक इतिहास को स्मरण करने लगते हैं, वहीं समस्त संप्रदाय के बन्धु पर्वत से निकलते झरने, झील एवं पशु-पक्षियों के प्राकृतिक सौंदर्य को देखकर फूले नहीं समाते हैं। 108 फुट लम्बे, 72 फुट चौड़े और 50 फुट ऊँचे कैलाश पर्वत के अष्टापद शिखर पर 14 फुट उत्तुंग लालवर्णी भगवान ऋषभदेव की पद्मासन प्रतिमा के दर्शन से भक्तगण मनवाछित फल की प्राप्ति करते हैं।

4. गुफा मंदिर–कैलाशपर्वत के नीचे 50 फुट का गोलाकार गुफा मंदिर है, जिसमें सवा तीन फुट की पद्मासन धातु निर्मित भगवान ऋषभदेव की अतिशयकारी प्रतिमा विराजमान है। भक्तों के लिए पूजा-अर्चना एवं ध्यान साधना का यह पावन स्थल सदैव भगवान के नाम स्मरण से गुंजायमान रहता है।

5. भगवान ऋषभदेव कीर्तिस्तम्भ–कैलाशपर्वत के ईशान कोण एवं समवसरण रचना के ठीक सामने 31 फुट ऊँचा ठोस गुलाबी पत्थर से निर्मित कीर्तिस्तम्भ अपने आप में एक अनूठी कृति है। उसमें सबसे ऊपर के चार चैत्यालयों में प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की सवाफुट पद्मासन प्रतिमा विराजमान हैं तथा उसके नीचे चार मंदिरों में अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर की 1 फुट पद्मासन प्रतिमा हैं। इस कलात्मक कीर्तिस्तम्भ में ऋषभदेव जी का चित्रमय चरित्र, उनके परिचय के शिलालेख एवं जैनधर्म के मूल सिद्धान्तों का उल्लेख है।

6. प्रवचन हॉल–सन् 2002 में पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के ससंघ चातुर्मासकालीन प्रवास के मध्य तपस्थली तीर्थ पर 30 × 50 फुट के प्रवचन हॉल का निर्माण हुआ जो तीर्थ की गरिमा को वृद्धिंगत कर रहा है।

इसी प्रकार से कैलाशपर्वत के दूसरी ओर तपोवन के सामने 21 फुट ऊँचा अखण्ड धर्मध्वज है, जिसमें स्वस्तिक चिन्ह से समन्वित केशरिया ध्वज सदैव अहिंसा धर्म एवं विश्वशांति की कीर्तिपताका को फहरा रहा है।

7. आवास एवं भोजन की सुविधा–तपस्थली तीर्थ निर्माण के साथ-साथ परिसर में "गणिनी ज्ञानमती निलय" के नाम से आधुनिक सुविधायुक्त 26 डीलक्स फ्लैट की दोमंजिली सुंदर धर्मशाला बन चुकी है तथा दो छोटी धर्मशालाएं भी निर्मित हैं। पानी की सुविधा हेतु क्षेत्र पर बड़ी टंकी का निर्माण हो चुका है। शुद्ध जल के लिए कुआं एवं जेटपम्प की व्यवस्था है तथा आगन्तुक यात्रियों के लिए शुद्ध भोजन की भी समुचित व्यवस्था है। सरकारी बिजली के साथ-साथ तीर्थ पर जनरेटर भी उपलब्ध है, जिससे बिजली-पानी की सुविधा के साथ फौव्वारे, झरने एवं विद्युत प्रकाश आदि के दृश्य प्रतिदिन दर्शनार्थियों के लिए सुलभ रहते हैं। तीर्थ पर एक ऐरावत हाथी का रथ है जिस पर बैठकर यात्री कैलाशपर्वत की प्रदक्षिणा लगाते हुए असीम आनन्द का अनुभव करते हैं तथा हंसी का फव्वारा देखकर एवं छोटे-बड़े झूलों में झूलकर तीर्थयात्रा के पुण्य के साथ-साथ पिकनिक जैसा मनोरंजन भी करते हैं।

इस प्रकार अतिप्राचीन प्रयाग तीर्थ में नई रौनक के साथ बनारस हाइवे पर निर्मित उत्तरमुखी तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ देशभर के यात्रियों का आकर्षण केन्द्र है। तीर्थ के एक ओर रेलवे लाइन पर चलती रेलगाड़ियां और दूसरी ओर (उत्तर में) जी.टी.रोड पर चलती कारों, बसों एवं ट्रकों में बैठे यात्री भी अनायास ही दूर से दिख रहे भगवान ऋषभदेव का दर्शन करके पुण्य प्राप्त करते हैं। अनेक ऐतिहासिक धरोहरों से समन्वित यह तपस्थली तीर्थ युगों-युगों तक जन-जन के कल्याण का माध्यम बने यही मंगलकामना है।

* * *

अतिशय क्षेत्र श्री प्रभासगिरि (पभौसा) कौशाम्बी

–पं. पन्नालाल जैन, इलाहाबाद

वर्तमान चौबीसी के छठवें तीर्थंकर भगवान पद्मप्रभु का गर्भ एवं जन्मकल्याणक तीर्थ क्षेत्र कौशाम्बी है जो कि इलाहाबाद (उ.प्र.) से 52 किमी. की दूरी पर है, इसी कौशाम्बी से 15 किमी.पक्की सड़क के रास्ते से और लगभग छह या सात किलोमीटर की दूरी पर यमुना नदी के किनारे भगवान पद्मप्रभु का तप एवं ज्ञान कल्याणक क्षेत्र श्री प्रभासगिरि (पूर्व नाम पभौसा) स्थित है। यह तीर्थक्षेत्र इलाहाबाद से 67 किमी. पड़ता है। क्षेत्र की तलहटी तक पक्का डामर रोड है। पहाड़ी की तलहटी में विशाल धर्मशाला, अतिथि भवन, सब आधुनिक सुविधाओं सहित उपलब्ध हैं। धर्मशाला परिसर में तीन जिनमंदिर, एक मानस्तंभ तथा एक पारण मंदिर निर्मित है पारणा मंदिर में सती चंदनबाला के द्वारा मुनि महावीर को आहार देते हुए दर्शाया गया है।

महाराजा पद्मनाथ का जन्म महोत्सव अब से असंख्यात वर्ष पूर्व कार्तिक कृष्णा त्रयोदशी के दिन कौशाम्बी नगरी में धूमधाम से मनाया जा रहा था। जन्मोत्सव के अवसर पर महाराजा पद्मनाथ हाथी पर विराजमान होकर प्रजाजनों की बधाईयाँ स्वीकार करने हेतु महल से नीचे आये और हाथी को एक साधारण-सी सांकल से एक स्तंभ में बँधा हुआ देखकर मन में विचार करने लगे इतना बड़ा और बलवान पशु (मेरे अंदाज से अब से असंख्यात वर्ष पूर्व मनुष्यों की ऊँचांई के अनुपात में पशुओं के शरीर भी कई गुना बड़े एवं बलशाली होते होंगे) अपने अज्ञान से एक साधारण बंधन से बँधा हुआ है। ऐसे ही मुझ स्वयं सहित संसार के समस्त जीवों की यही दशा है। अपने अज्ञान के कारण सभी संसारी जीव कर्मबंधन में जकड़े हुए भव भ्रमण कर रहे हैं, ऐसा विचार करते हुए उन्हें वैराग्य उत्पन्न हुआ। लौकान्तिक देवों ने आकर उनकी स्तुति की और महाराजा पद्म ने राजपाट एवं महलों के सभी सुख वैभव छोड़कर कौशाम्बी के निकट जंगल में गंगा और यमुना नदी के बीच दोआबा में स्थित एक मात्र पहाड़ श्री प्रभासगिरी के शिखर पर निर्ग्रंथ मुनि हो तप धारण किया। कालान्तर में चैत्र शुक्ला पूर्णिमा को उसी पहाड़ पर उन्होंने केवलज्ञान प्राप्त किया। भगवान का प्रथम समवसरण वही प्रभासगिरि में निर्मित हुआ और भगवान की दिव्य देशना वहीं हुई। यथासमय इन्द्रों एवं देवों ने उनके दोनों कल्याणकों की पूजा अत्यधिक उत्साह एवं धूमधाम से की।

भगवान पद्मप्रभु का अवतरण इस जगती पर असंख्यात वर्षों पूर्व हुआ था। उस काल में यदि तीर्थंकरों की मूर्तियाँ या मंदिर आदि बनते रहे होंगे तो पता नहीं कितने बार मंदिरों एवं मूर्तियों का निर्माण इस क्षेत्र पर हुआ होगा और नष्ट हुआ होगा। वर्तमान में पहाड़ की चोटी पर तीन मंदिरों के अधिष्ठान दृष्टिगोचर होते हैं। गुप्तकाल की बड़ी ईंटों के टुकड़े अच्छी मात्रा में वहाँ अभी भी बिखरे हैं। क्रमवार ईंटें भी मंदिर की प्राचीर एवं नींव के रूप में दिखती हैं। उन्हीं स्थानों पर अलग-अलग दो चरण पादुकाएं तीस चालीस वर्ष पूर्व भगवान के कल्याणक स्थानों के रूप में विराजमान की गई हैं। उन्हीं अधिष्ठानों के एक टीले पर एक सर्वतोभद्र प्रतिमा पद्मासन प्रतिमाओं सहित खंडित अवस्था में प्राप्त हुई थी जहाँ संभवतः मानस्तंभ रहा होगा। दूसरे टीले पर1 एक सिर विहीन अरिहंत प्रतिमा प्राप्त हुई थी जो आज भी वहीं विराजमान है यह मूर्ति लगभग चार फुट अवगाहना की पद्मासन मुद्रा में है। काल के थपेड़ों से ये मंदिर जमींदोज हुए या आततइयों द्वारा नष्ट किये गये कहा नहीं जा सकता। और भी बहुत सी प्राचीन खंडित मूर्तियाँ आसपास या पहाड़ से प्राप्त हुई हैं जो संग्रहालय में रखी हैं।

पर्वत की चोटी से लगभग सौ सीढ़ी नीचे और तलहटी से एक सौ अस्सी सीढ़ी की ऊँचाई पर दो मंदिर जी पहाड़ पर विद्यमान हैं। पुराने मंदिर के बारे में कहा जाता है कि अब से लगभग पौने दो सौ वर्ष पूर्व वाराणसी की कोई धर्मपारायण महिला श्रीमती सोना देवी ने यहाँ के दर्शन किये, तीर्थ वंदना की। चोटी के मंदिरों की ध्वस्त अवस्था देखकर उन्होंने मंदिर जी का निर्माण कराया था जो पूरा देशी पाषाण से निर्मित था। वर्ष संवत् 1881 में क्षेत्र पर भव्य पंचकल्याणक प्रतिष्ठा भी सम्पन्न हुई। उस समय की प्रतिष्ठित संगमरमर की धवल एवं श्यामवर्ण प्रतिमाएं वहीं प्रभासगिरी तीर्थ पर, पाली ग्राम के मंदिर में, इलाहाबाद के मंदिर जी में, वाराणसी के भेलुपुर (भगवान पार्श्वनाथ के जन्मकल्याणक तीर्थ) मंदिरजी में एवं सारनाथ (वाराणसी) भगवान श्रेयांसनाथ के जन्मकल्याणक तीर्थ के मंदिरों में मूलनायक के रूप में विराजमान हैं।

श्री प्रभासगिरि क्षेत्र के पर्वत स्थित प्राचीन मंदिर जी में भगवान पद्मप्रभु की गुप्तकालीन मूलनायक प्रतिमाजी, उनके पार्श्व में भगवान नेमिनाथ सहित पाँच बालयति की प्रतिमाजी – संवत् 1508 में प्रतिष्ठित एवं दूसरी ओर सफेद संगमरमर की संवत् 1881 में प्रतिष्ठित भगवान पद्मप्रभु जी की मूर्ति विराज़मान थी। गुप्तकालीन मूलनायक भगवान पद्मप्रभु की मूर्ति के संबंध में किंवदन्ती है कि वह मूर्ति अतिशयपूर्ण ढंग से कौशाम्बी के कुएँ से प्राप्त हुई और वहाँ उस समय कोई मंदिर न होने से प्रभासगिरि के पहाड़ पर विराजमान की गई थी। अब से लगभग चार वर्ष पूर्व मूलनायक प्रतिमाजी को होली की रात्रि में मूर्ति – चोर चुराकर ले गये जिसका अभी तक पता नहीं चला। भगवान नेमिनाथ की मूर्ति को भी चोरों ने स्थान से हटा दिया था किन्तु भारी होने से जा नहीं सकी अतः उस मूर्ति को नीचे धर्मशाला के मंदिरजी में विराजमान कर दिया है और प्राचीन मंदिर जी में मूलनायक रूप में श्वेत पाषाण की भगवान पदमप्रभु की प्रतिमा संवत् 1881 में प्रतिष्ठित की हुई विराजमान की गई है तथा दोनों ओर पार्श्व में भगवान चन्द्रप्रभु एवं भगवान शांतिनाथ की मूर्तियाँ ईसवीं सन् 1996 में प्रतिष्ठित विराजमान की गई हैं। उपरोक्त पौने दो सौ वर्ष पूर्व निर्मित प्राचीन मंदिरजी के ऊपर भाद्रपद वदी नवमी वीर नि. संवत् 2457 को पहाड़ का एक विशाल शिलाखण्ड तीव्र गर्जना के साथ गिरा और मंदिरजी तथा वेदियाँ खण्डित हो गईं। वेदी में विराजमान मूर्तियाँ पूर्णरूपेण सुरक्षित रहीं उन्हें उठाकर बगल में एक कमरे में अस्थायी वेदी बनाकर विराजमान कर दिया गया। शिलाखण्ड गिरने से पूर्व भी भगवान दक्षिणमुख विराजमान थे और बाद में अस्थायी वेदी पर भी दक्षिणमुख ही विराजमान रहे। 20-22 वर्ष पूर्व उन्हें पूर्वमुख विराजमान करने का प्रयास किया गया किन्तु उसमें सफलता नहीं मिली। उसके बाद दो तीन वर्ष पूर्व मंदिर जी के जीर्णोद्धार की योजना बनी। मंदिर जी से सात-आठ सीढ़ी नीचे एक चौरस मैदान में एक कमरे का निर्माण कर उसमें भी वेदी बनाकर सभी मूर्तियों को पूर्वमुख विराजमान किया गया। जिस कमरे में श्रीजी विराजमान थे उसकी छत निकालकर कमरे की ऊँचाई तक प्राचीन दीवालों को गिराकर एवं प्राचीन ध्वस्त मंदिर जी की भूमि को जोड़कर पुनः दीवारें निर्मित कर आर.सी.सी. की छत, शिखर एवं मंडप का निर्माण कर अच्छी वेदी निर्मित की गई। मंदिर जी में श्रद्धापूर्वक दो भक्तों ने मिलकर काँच का सुन्दर कार्य भी करा दिया और श्रीजी को विधि विधानपूर्वक नवीन वेदी में पूर्वमुख विराजमान कर दिया। तब से जो क्षेत्र का जीर्णोद्धार का काम प्रारंभ हुआ है सो अब तक बंद नहीं हुआ है। बीस वर्ष पूर्व जहाँ तीर्थ क्षेत्र के नाम पर एक जीर्ण-शीर्ण चहारदीवारी,

प्राचीन खण्डहर एवं जीर्ण-शीर्ण सीढ़ियाँ पर्वत पर जाने हेतु बनी थीं वहाँ समाज के सहयोग से लगभग डेढ़ करोड़ रुपयों की राशि इन बीस वर्षों में व्यय करके क्षेत्र का बहुत सुन्दर ढंग से विकास किया गया है।

साठ कमरों की आधुनिक सुविधाओं सहित धर्मशाला, एक अतिथि भवन, एक बड़ा हाल, तीन छोटे हाल, एक विशाल गगनचुम्बी तीन शिखरों से युक्त नवीन मंदिर तथा श्रीजी के सामने गोलाकार विशाल मण्डप एक सैंतीस फुट उत्तुंग मानस्तंभ निर्मित हुआ है। भोजनशाला का निर्माण एक चैत्यालय जो धर्मशाला प्रवेश द्वार पर जीर्ण हो चुका था उसका जीर्णोद्धार कार्य नवीन शिखर एवं सामने एक बड़ा हाल बनाकर किया गया है। ईसवी सन् 1996 में आचार्य पुष्पदंत सागर महाराज के ससंघ सानिध्य में लब्ध प्रतिष्ठित संहितासूरि प्रतिष्ठाचार्य पंडित गुलाबचंद जी पुष्प टीकमगढ़ (म.प्र.) द्वारा 4 भगवान पद्मप्रभु की साढ़े चार फुट उत्तुंग पद्मासन हलके गुलाबी वर्ण की अति मनोज्ञ प्रतिमाजी तथा अगल-बगल की दोनों वेदियों में भगवान चन्द्रप्रभु एवं भगवान शांतिनाथ की शुभ पाषाण से निर्मित ढाई फुट अवगाहना की अति मनोज्ञ जिन प्रतिमाएं और अन्य छोटी प्रतिमाओं सहित प्रतिष्ठित कराकर समारोहपूर्वक विराजमान की गई हैं। सभी जिनबिम्ब मनोज्ञ एवं अतिशय युक्त हैं। क्षेत्र का विकास जारी है।

ईसवी सन् 2001 में मई के महीने में गणिनीप्रमुख आर्यिका ज्ञानमती माताजी के ससंघ सानिध्य में पुनः एक पंचकल्याणक महोत्सव आयोजित हुआ, उसमें लाल पाषाण से निर्मित साढ़े चार फुट उत्तुंग भगवान पद्मप्रभु की पद्मासन प्रतिमाजी, ढाई फुट अवगाहना की एक और लाल पाषाण से निर्मित भगवान पद्मप्रभु की प्रतिमाजी चोरी हुई प्रतिमाजी के स्थान में निर्माण कराया तथा मानस्तंभ की प्रतिष्ठा सम्पन्न हुई। इसी अवसर पर मुनि महावीर जी को आहार देते हुए चन्दनबाला की मूर्ति भी विराजमान की गई है। बड़ी मूर्ति श्रीमान प्रेमचंद जी तेलवाले मेरठ एवं मुनि महावीर एवं चंदनबाला की मूर्ति लाला महावीर प्रसाद जी बंगाली स्वीट्स दिल्ली वालों द्वारा क्षेत्र को समर्पित की गई है। बड़ी मूर्ति लाला प्रेमचंद जी तेल वालों द्वारा प्रदान की गई। यह मूर्ति अभी तक खुले मैदान में एक ऊँची वेदी पर विराजमान की गई है जो गर्मी, सर्दी एवं वर्षा के कारण जल्दी ही रंग परिवर्तन, काई लग जाना जैसे कारणों से खराब होने लगी है अतः उनके लिए भी एक विशाल मंदिर जी बनाने के भाव हुए हैं।

छठवें तीर्थंकर भगवान पद्मप्रभु के दो कल्याणक सम्पन्न होने के कारण क्षेत्र असंख्यात वर्षों से पूज्यता को प्राप्त है, अतः समय-समय पर मुनिगण यहाँ तप और ध्यान हेतु बिहार एवं प्रवास करते रहे हैं। कालिन्दी का प्रशान्त कूल सुरम्य पर्वत की हरीतिमा और गुहा की एकान्त शान्ति यह सारा वातावरण मुनियों के ध्यान अध्ययन हेतु उपयुक्त है। प्राचीन साहित्य में ऐसे उल्लेख मिलते हैं जिनसे पता लगता है कि यहाँ पर मुनिजन तपस्या करते थे। ललित घट आदि बत्तीस राजकुमार यहाँ मुनि दीक्षा लेकर आये और यमुना तट पर विविध प्रकार के तप करने लगे। एक दिन भयंकर बाढ़ आई और वे सभी मुनि बाढ़ में बह गये। उनकी जल समाधि हुई। उनकी स्मृति में यहाँ बत्तीस समाधियाँ बनी थीं जिन पर अब जैनेतर समाज का अधिकार है और वे भी जीर्ण-शीर्ण हैं।

भगवान नेमिनाथ की दिव्यध्वनि में जैसा बताया गया था कि नारायण श्री कृष्ण का मरण जरत्कुमार के हाथों कौशाम्बी के वन में होगा सो हुआ। मोह के वशीभूत होकर बलराम छह माह तक मृतक देह को लिए घूमते रहे अन्त में एक देव के समझाने पर तुंगीगिर पर जाकर उन्होंने दाह संस्कार क़िया। इस कल्पकाल के अंतिम नारायण श्री कृष्ण का इतिहास भी यही प्रभासगिरि (पभौसा) की मिट्टी में लिखा गया।

पुरातत्व की दृष्टि से भी यह क्षेत्र बहुत ही महत्वपूर्ण है। ईसा पूर्व सौ–दो सौ साल के शिलालेख यहाँ की पर्वत की गुफाओं में तत्कालीन लिपि में उत्कीर्ण विद्यमान हैं जिनसे ज्ञात होता है कि मथुरा के राजा आषाढ़सेन ने इन गुफाओं के निर्माण जैन मुनियों की तपस्या हेतु कराया था। इन शिलालेखों का विस्तृत विवरण भारत के दिगम्बर जैन तीर्थ उत्तरप्रदेश के खण्ड काशी और वत्स जनपद में मिलता है। यह पूरी लेख माला पं. बलभद्र जी द्वारा समस्त भारत के जैन क्षेत्रों की अच्छी जानकारी हेतु अनेक खण्डों में लिखी गई है और इसका प्रकाशन भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी मुम्बई द्वारा सम्पन्न हुआ है।

पहाड़ पर जहाँ अब से साठ सत्तर वर्ष पूर्व जो बहुत बड़ा शिलाखण्ड तीव्र गर्जना के साथ गिरा था उसके पास खड़े होकर देखने से ऊपर पहाड़ पर एक शिला में चार खड्गासन दिगम्बर जैन मूर्तियाँ स्पष्ट दृष्टिगोचर होती हैं, जिनके

निकट तक पहुँचने का अब कोई रास्ता नहीं है किन्तु शिलाखण्ड गिरने के पूर्व रहा होगा।

इसी प्रकार शिलालेख युक्त गुफाओं में भी पहुँचने का रास्ता नहीं है। वर्तमान में लोग पेड़ की डाल और जड़ पकड़ कर गुफा के द्वार पर पहुँचते हैं जो सर्वसाधारण के लिए बहुत कठिन है।

पहाड़ भी दो भागों में बँटा है। दायें हाथ की ओर पहाड़ी पर जैन मंदिर भी स्थित है, पहाड़ी के नीचे पुरातत्त्व विभाग का बोर्ड लगा है अतः क्षेत्र के विकास हेतु जैन समुदाय कोई निर्माण नहीं कर सकता।

गुप्तकाल की ईंटों से निर्मित नींव या दीवाल के खण्ड मंदिर के नीचे झांकते हैं। इस पहाड़ी पर भी एक प्राचीन गुफा है उसके मुँह को वहाँ के प्रबंधकर्ता साधु ने झाड़ियों से ढक रखा है। जानकारी मिली है बीस-पच्चीस लोगों के सोने के योग्य स्थान उस गुफा के अंदर है। मेरा विश्वास है कि उस गुफा में भी कोई शिलालेख होना चाहिए और प्राचीन दबे हुए मंदिर के अवशेष भी जैन मंदिर के अवशेष होने चाहिए। क्षेत्र में प्रवेश के पूर्व लगभग दो फर्लांग पहिले सड़क के किनारे बायें हाथ की ओर एक गुमटी बनी हुई है जिसमें कभी भगवान पदमप्रभु की शासन देवी की प्राचीन मूर्ति विराजमान थी जिसे भी लोग चुराकर ले गये। अब उसके स्थान पर किसी और देवता की नई मूर्ति गाँव के लोगों ने स्थापित कर दी है।

गाँव में या आसपास जहाँ भी प्राचीन मंदिर या मकान आदि बने हैं उनमें प्राचीन मंदिरों के अवशेष स्पष्ट दृष्टिगोचर होते हैं जहाँ भी खुदाई होती है वहाँ से मूर्ति खण्ड समूचे मंदिर निकलते हैं। पता नहीं कितना प्राचीन वैभव एवं संस्कृति के चिह्न भूमिगत दबे पड़े हैं।

वर्तमान में जो भी सामने दिख रहा है उसके सही मूल्यांकन एवं सुरक्षा की व्यवस्था भी हम अपनी अज्ञानता या प्रमाद के कारण नहीं कर पा रहे हैं। यह चिंता का विषय है इस पर समाज का ध्यान जाना चाहिए।

* * *

दिगम्बर जैन परम्परानुसार

राजगृही तीर्थ का महत्त्व

–गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी

भव्यात्माओं!

मगध देश में अत्यन्त प्राचीन राजगृही नगरी है जो युगानुयुग से प्रसिद्ध है। वर्तमान में उस नगरी में विपुलाचल पर्वत पर भगवान महावीर के समवसरण के प्रतीक में समवसरण की रचना बनी हुई है जो कि अत्यन्त ऊँचाई पर है, वह पूरा समवसरण तो नहीं अपितु उसकी गन्धकुटी का रूप है जिसमें विशाल 4 प्रतिमाएं विराजमान हैं। भगवान महावीर का समवसरण राजगृही में विपुलाचल पर्वत पर अनेकों बार आया, इस बात की प्रसिद्धि सम्पूर्ण जैन समाज में है।

मैंने जब से सभी तीर्थंकर भगवन्तों की जन्मभूमियों के विकास पर प्रकाश डाला तो कितने ही लोगों से मैंने यह प्रश्न किया कि राजगृही कौन से भगवान की जन्मभूमि है? लेकिन कोई भी उसका उत्तर नहीं दे सका कि यह भगवान मुनिसुव्रतनाथ की जन्मभूमि भी है। लोग पुराण भी पढ़ते हैं और चौबीसों तीर्थंकरों की पूजा भी करते हैं फिर ऐसा क्यों हुआ? तीर्थंकरों की जन्मभूमि की जो इतनी उपेक्षा हुई है वर्तमान में वह शोचनीय विषय है। केवल साधुओं, विद्वानों के लिए ही नहीं अपितु श्रेष्ठीवर्ग के लिए भी बहुत ही विचारणीय विषय है।

आज से लगभग 12 लाख वर्ष पूर्व भगवान मुनिसुव्रतनाथ हुए हैं, शास्त्रीय दृष्टि से देखा जाए तो वर्तमान में वीर निर्वाण संवत् 2530 चल रहा है उस हिसाब से 11 लाख 86 हजार 529 वर्ष पूर्व भगवान मुनिसुव्रतनाथ उसी राजगृही नगरी में वहां के क्षत्रियवर्णी महाराज सुमित्र की महारानी सोमा की पवित्र कुक्षि से जन्मे थे, उनके वंश को पर्यायवाची शब्दों में यदुवंश और हरिवंश भी कहते थे।

महानुभावों! जब तीर्थंकर भगवान स्वर्ग से चयकर माता के गर्भ में अवतीर्ण होने को होते हैं तो इन्द्र की आज्ञा से कुबेर छः महीने पूर्व ही माता के आंगन में रत्नों की वर्षा करता है। राजगृही में आज भी पंच पहाड़ियों में दूसरा पहाड़ रत्नागिरि के नाम से प्रसिद्ध है उसे लोग भगवान की जन्मभूमि कहते हैं परन्तु यह निश्चित है कि जन्मभूमि कभी भी

पहाड़ पर नहीं होती है, पर्वत पर दीक्षा लेना, केवलज्ञान होना तो माना गया है परन्तु जन्मभूमि तो नगर में राजधानी में होती है। चूँकि जन्मभूमि राजगृही है अतः मैंने यहां 12 फुट उत्तुंग भगवान मुनिसुव्रतनाथ की प्रतिमा विराजमान करने की प्रेरणा दी, मुझे प्रसन्नता है कि वहाँ मंदिर का निर्माण हो चुका है और उसमें भगवान मुनिसुव्रतनाथ विराजमान हो चुके हैं।

भगवान मुनिसुव्रतनाथ का चिन्ह कछुआ है, इनकी आयु 30 हजार वर्ष की थी, वैडूर्यमणि (नीलममणि) के सदृश उनका वर्ण था। उस वर्ण के बारे में सुनकर आज लोग कह देते हैं कि वह कैसे लगते होंगे? पर हम और आप तो कल्पना भी नहीं कर सकते हैं। कहते हैं कि इन्द्र दो नेत्रों से देखकर भी जब तृप्त नहीं हुआ तो हजार नेत्र बना लिये तब भी प्रभु की मनोहारी छवि देखकर तृप्त नहीं हो पाया तो उनकी सुन्दरता का वर्णन तो हम और आप कर ही नहीं सकते ऐसा भगवान का सुन्दर वैडूर्यमणि सदृश नीलवर्ण था। भगवान की ऊँचाई 80 हाथ थी और वह श्रावण कृष्णा दूज को माता के गर्भ में अवतीर्ण हुए। तीर्थंकर भगवान के गर्भ में आने से पूर्व माता सोलह स्वप्न देखती हैं, माता सोमा ने भी सोलह स्वप्न देखे थे। उनका जन्म वैशाख कृष्णा द्वादशी को हुआ, सो वैशाख कृष्णा द्वादशी (28 अप्रैल, 03 तथा 16 अप्रैल 04 को) को मैंने कुण्डलपुर से राजगृही नगरी में स्वयं जाकर भगवान का जन्ममहोत्सव मनाने की प्रेरणा सभी को दी और वहाँ धूमधाम से जन्मोत्सव मनाया गया। मैंने उन्हें यह भी प्रेरणा दी है कि आप प्रतिवर्ष भगवान मुनिसुव्रतनाथ का जन्मोत्सव इस तिथि में धूमधाम से मनाएं।

भगवान मुनिसुव्रतनाथ ने विवाह किया और राज्य भी किया। अनन्तर उनके वैराग्य का निमित्त कुछ इस प्रकार मिला कि उनका जो हाथी था उसे जातिस्मरण हो जाने से उसने खाना-पीना छोड़ दिया, जब भगवान के सामने यह बात आई तो उन्होंने उसके पूर्व भवों के बारे में अवधिज्ञान से जान लिया और उस हाथी को सम्बोधित किया, हाथी को भगवान का उपदेश सुनकर बोध हो गया और उसने सम्यग्दर्शन ग्रहण कर लिया। यही निमित्त था कि भगवान को वैराग्य हो गया और उन्होंने वैशाख कृष्णा दशमी को चम्पक वृक्ष के नीचे अपनी राजधानी के उद्यान में दीक्षा ले ली। यह नियम है कि तीर्थंकर भगवान अपनी राजधानी के उद्यान में ही जाकर दीक्षा लेते हैं। दीक्षा के पश्चात् राजगृही नगरी के राजा ऋषभसेन के द्वारा उन्हें खीर का प्रथम आहार कराया गया। कालान्तर में भगवान समस्त आर्यखण्ड में विहार करते हुए राजगृही नगरी में आए और वहीं नील वन में चम्पक वृक्ष के नीचे उन्हें केवलज्ञान प्रकट हो गया और वे सम्मेदशिखर से मोक्ष गए हैं।

इन भगवान के श्रीमल्लि नाम के प्रथम गणधर थे तथा अन्य 118 गणधर थे, 30 हजार मुनि थे, गणिनी आर्यिका श्री पुष्पदत्ता थीं जोकि 50 हजार आर्यिकाओं में गणिनी थीं, 1 लाख श्रावक, 3 लाख श्राविका आदि समवसरण में चतुर्विध संघ था। भगवान के शासन यक्ष वरुण देव और यक्षी बहुरूपिणी देवी थीं। यह तो मैंने आपको भगवान मुनिसुव्रतनाथ के बारे में संक्षेप में बताया और विस्तार से जानकारी आप उत्तरपुराण से प्राप्त कर सकते हैं।

राजगृही का इतिहास बहुत ही सुन्दर है। 2600 वर्ष पूर्व की घटना है, राजा चेटक की एक पुत्री और महारानी त्रिशला की छोटी बहन चेलना, सम्राट् महाराज श्रेणिक की पट्टरानी थीं, राजा श्रेणिक उस समय राजगृही के महाराज थे। भगवान महावीर को जब वैशाख सुदी दशमी को केवलज्ञान प्रकट हुआ तब अर्धनिमिष में इन्द्र की आज्ञा से कुबेर ने समवसरण की रचना कर दी, यहीं कहीं ऋजुकूला नदी रही होगी। उसी के तट पर भगवान को केवलज्ञान हुआ था, भगवान समवसरण में विराजमान थे, बारह सभा, सारी रचना, सारा वैभव था, जब भगवान श्रीविहार करते तब समवसरण विघटित हो जाता और-

'चरण कमल तल कमल हैं नभ तें जय जयवान'

भगवान आकाश में अधर ही चलते थे और देवगण उनके चरणों के नीचे दिव्य कमलों की रचना करते जाते थे उसमें दिव्य सुगन्धि निकलती थी, जहाँ भगवान रुक जाते वहीं अर्धनिमिष में समवसरण की रचना तैयार हो जाती थी ऐसे श्रीविहार करते-करते लगभग 66 दिन पश्चात् भगवान राजगृही नगरी पहुंचे ऐसा हरिवंशपुराण में विस्तृत वर्णन है- "षट्षष्टि दिवसान् प्रभू विहरन् "। उसके बारे अकस्मात् इन्द्र को चिन्तन चला कि भगवान की दिव्यध्वनि नहीं खिरी सो क्या कारण है? 66 दिन निकल गए, दिव्य अवधिज्ञान से उन्होंने चिन्तन क्रिया और समझ लिया कि गणधर का

अभाव है। उसकी पात्रता किसमें है? यह चिन्तन करते हुए वहीं ब्राह्मण नगर नामक एक ग्राम था वहाँ ब्राह्मण के वेश में पहुँचे। वहाँ शांडिल्य नाम के ब्राह्मण की दो पत्नियाँ थीं स्थण्डिला और केशी, उनके तीन पुत्र थे। पहली के दो पुत्र इन्द्रभूति और वायुभूति तथा दूसरी के अग्निभूति, इनमें इन्द्रभूति बहुत विद्वान् थे। 14 प्रकार की विद्याओं के पारंगत, वेद-वेदांगों के ज्ञाता, व्याकरण छन्दादि, वेदशास्त्रों (लौकिक शास्त्रों) के पारगामी, पूर्णरूपेण निष्णात थे। इनकी उपाध्यायशाला में 500-500 विद्यार्थी अध्ययन करते थे, ये तीनों ब्राह्मण गौतम गोत्रीय थे, समस्त आर्यखण्ड में विख्यात थे, अभिमानी थे। जैनधर्म के नाम से विद्वेष नहीं करते थे अपितु पराङ्मुख थे। ब्राह्मण वेशधारी उस इन्द्र ने वहाँ पहुँचकर एक बहुत ही सुन्दर श्लोक पढ़ा और कहा हे विद्वान् पण्डित! हम आपसे कुछ सीखने आए हैं, चूँकि मेरे गुरु अभी मौन हैं उन्होंने मुझे यह श्लोक पढ़ाया था मगर मैं उसका अर्थ भूल गया हूँ अतः कृपया आप उसका अर्थ बताएं। तब इन्द्रभूति ने कहा कि आप हमें वह श्लोक बताएं। यह सुनकर इन्द्र ने कहा–

धर्मद्वयम् त्रिविधकाल समग्रकर्म, षट्द्रव्य काय सहिताः समयैश्च लेश्याः।
तत्त्वानि संयमगती सहितं पदार्थै, रंगप्रवेदमनिशं वदचाशितकायम् ।।

अर्थात् दो प्रकार का धर्म क्या है? तीन प्रकार का काल क्या है? छह द्रव्य क्या हैं? षट्काय क्या हैं? समय क्या है? अस्तिकाय क्या है? पदार्थ क्या हैं? लेश्याएं क्या हैं? तत्त्व क्या.हैं? संयम क्या है? गति कितनी हैं? इत्यादि को पूछते हुए वह अंग-पूर्व के बारे में पूछने लगे।

इन्द्रभूति गौतम यह श्लोक सुनकर चिन्तन करने लगे कि कहीं इसे यह न पता लग जाए कि मुझे इसका अर्थ नहीं मालूम है अतः बोले कि ठीक है मैं आपके गुरु के पास चलकर उनसे ही शास्त्रार्थ करूंगा। शास्त्रों में आया है कि इन्द्र ने एक शर्त कराई थी कि अगर आपको हमारे गुरु ने पराजित कर दिया तो आप हमारे गुरु के शिष्य बन जाना और अगर आपने उन्हें जीत लिया तो मैं आपका शिष्य बन जाऊंगा। इन्द्र ने इसलिए ऐसा कहा क्योंकि वह जानते थे कि सर्वज्ञ भगवान विश्व में किसी के द्वारा नहीं जीते जा सकते हैं। जब उनका शासन और उनका स्याद्वादमयी धर्म ही किसी के द्वारा नहीं जीता जा सकता है तो उन्हें कौन जीत सकता है। इन्द्रभूति गौतम उन ब्राह्मणरूपी इन्द्र के साथ अपने भाइयों और 1500 शिष्यों के साथ पहुँचते हैं। आगे-आगे इन्द्रभूति थे पीछे उनकी शिष्य मंडली, राजगृही के निकट पहुँचते ही एकदम दूर से मानस्तम्भ देखते हैं और दर्शन से ही उनका मान गलित हो जाता है, परिणामों में शांति आ जाती है और यह महिमा तीर्थंकर के विद्यमान रहने की है। अगर समवसरण में तीर्थंकर भगवान विद्यमान न हों तो यह महिमा नहीं आ पाती है फिर भी आप देखते हैं कि हस्तिनापुर में कैसा भी धर्म का विद्वेषी, कैसा भी निन्दक व्यक्ति पहुँच जाए, जम्बूद्वीप में सुमेरु पर्वत को देखते ही उसका मान गलित हो जाता है, एकदम प्रसन्नमना हो भगवान के दर्शन करने लग जाता है फिर वह तो साक्षात् तीर्थंकर भगवान थे, उनके समवसरण में मानस्तंभ को देखकर मान गलित होना कोई बड़ी बात नहीं है। गौतम तत्क्षण बोल उठे–

जयति भगवान् हेमाम्भोज प्रचार विजृम्भिता..........

गौतमस्वामी द्वारा रचित यह चैत्यभक्ति हम लोग त्रिकाल सामायिक में पढ़ते हैं। कहते हैं कि ज्यों ही इन्द्रभूति ने चैत्यभक्ति का उच्चारण करते हुए भगवान की प्रसन्नमना होकर स्तुति की उन्हें सम्यग्दर्शन प्रकट हो गया और वस्त्राभरण त्यागकर भगवान के चरणों में दीक्षा ले ली, दिगम्बर महामुनि बन गए। उसी समय अन्तर्मुहूर्त में उन्हें केवलज्ञान प्रकट हो गया, अनेक ऋद्धियाँ प्रकट हो गयीं, गणधरपद प्राप्त हो गया। उन्होंने समवसरण में भगवान से हाथ जोड़कर प्रश्न किया, भगवान की दिव्यध्वनि खिर पड़ी, यह आज से 2560 वर्ष पूर्व की बात है। **वह महान दिन श्रावण शुक्ला एकम का था** जब भगवान की दिव्यध्वनि खिरी। उस समय 12 सभाओं में असंख्यात प्राणी बैठे थे उन्हें उस धर्ममयी अमृत की वर्षा का पान कर कितनी खुशी हुई थी यह वर्णनातीत है। भगवान की दिव्यध्वनि एक योजन तब सबको सुनाई देती है, यह 718 भाषाओं में परिणत हो जाती है।

षट्खण्डागम नामक ग्रंथ में बताया है कि वह दिव्यध्वनि सर्वभाषामयी है, जितने जीव वहाँ बैठे हैं वह सब अपनी-अपनी भाषा में समझ जाते हैं ऐसी भगवान की दिव्यध्वनि निरक्षरी होकर भी सब भाषा में खिरती है इसलिए साक्षर है। उसी दिन श्रावण कृष्णा एकम की रात्रि में गणधर देव ने अन्तर्मुहूर्त में द्वादशांग की रचना कर दी। **षट्खण्डागम ग्रंथ**

में वर्णन है कि–बारह अंगाणं, चोद्दसपुव्वाणं च दंसणम् एक्केण चेव मुहुत्तेण रयणा कदा।

भावश्रुत पर्याय से परिणत होकर वह इन्द्रभूति गौतम गोत्र से प्रसिद्ध हो गए। इस प्रकार उस राजगृही नगरी में प्रथम बार भगवान की देशना खिरी, उसका वहाँ स्मारक बनाया गया और मैं समझती हूँ कि भगवान महावीर ने समस्त आर्यखण्ड में 30 वर्ष तक विहरण किया तो अधिकतर समवसरण राजगृही में विपुलाचल पर्वत पर ही आया होगा। यह मुख्य श्रोता राजा श्रेणिक का पुण्य था, बिहार प्रदेश का पुण्य विशेष था।

राजगृही से और भी अनेकों घटनाएं जुड़ी हैं जैसे एक बार राजा श्रेणिक भगवान के समवसरण में जा रहे थे, अकस्मात् एक मेढ़क जो कि कमल पांखुडी लेकर भगवान के समवसरण में दर्शन के लिए जा रहा था राजा के हाथी के पैर के नीचे दबकर मर गया और शुभ भावों से मरकर देव हो गया। वह राजा श्रेणिक से पहले ही समवसरण में पहुँच गया और वहाँ भक्ति में सुन्दर नृत्य करने लगा। राजा श्रेणिक ने समवसरण में पहुँचकर भगवान को नमस्कार कर उस देव के मुकुट में मेढ़क का चिन्ह देखकर प्रश्न किया तब भगवान की दिव्यध्वनि खिरी-भव्यात्मन्! यह मेढ़क अभी-अभी तुम्हारे हाथी के पैर के नीचे दबकर मरा और दर्शनों के भाववश स्वर्ग में देव हुआ और इससे पूर्व का वर्णन यह है कि यह राजगृही नगरी में एक सेठ था, पत्नी के मोह में मरकर मेढ़क हो गया। तो यह संसार की स्थिति है कि गृहस्थाश्रम में रहकर पत्नी आदि परिवार के मोह में मरकर तिर्यंचगति मिल जाती है और भगवान की भक्ति से तिर्यंच को भी देवगति मिल जाती है, ऐसे अनेकों उदाहरण शास्त्रों में भरे पड़े हैं। वर्तमान में जितना उपलब्ध ज्ञान है, श्रुत है, गुरु ग्रंथ हैं, वह सब राजा श्रेणिक के प्रश्न के अनुसार हैं और बड़े-बड़े महान आचार्यों के द्वारा रचे गए हैं इसलिए भी राजगृही का अपना विशेष महत्त्व है।

वर्तमान में वहाँ का वातावरण इतना पवित्र और सुन्दर है जब हम लोग दर्शन करने पहुँचते हैं तो मन इतना प्रसन्न होता है और ऐसा लगता है कि भगवान की दिव्यध्वनि के परमाणु वहाँ घूम रहे होंगे। ऐसे तीर्थ तो जैन समाज के लिए धरोहर हैं, महान हैं उनकी वन्दना करने से, उनके दर्शन से, उनके नाम मात्र से असंख्य पापों का नाश हो जाता है। राजा श्रेणिक का चरित्र, रानी चेलना का इतिहास उस भूमि से जुड़ा है। भगवान महावीर इस अवसर्पिणी काल के अंतिम तीर्थंकर हैं लेकिन आगे की तीर्थंकर परम्परा को उन्होंने चालू कर दिया है। उनके ही पादमूल में तीर्थंकर प्रकृति का बंध करने वाले एवं समवसरण के मुख्य श्रोता राजा श्रेणिक अगली आने वाली उत्सर्पिणी में अयोध्या नगरी में प्रथम तीर्थंकर होंगे। अयोध्या चौबीसों तीर्थंकरों की शाश्वत जन्मभूमि है। हुण्डावसर्पिणी कालदोषवश इस युग के केवल 5 तीर्थंकर अयोध्या नगरी में जन्में हैं और शेष सभी तीर्थंकर अलग-अलग जन्में हैं। लेकिन आगे आने वाली उत्सर्पिणी में सभी चौबीस तीर्थंकर अयोध्या में जन्म लेंगे और सम्मेदशिखर से मोक्ष प्राप्त करेंगे। शाश्वत तीर्थ इस धरती पर दो ही हैं-अयोध्या व सम्मेदशिखर। जिसमें अयोध्या शाश्वत जन्मभूमि तथा सम्मेदशिखर शाश्वत निर्वाण भूमि है। लेकिन वर्तमान में राजगृही, कुण्डलपुर आदि जन्मभूमियां और पावापुरी, चम्पापुरी आदि निर्वाणभूमियां हैं उनकी महिमा कम नहीं है। उनका चिन्तन करें तो हम पाएंगे कि यह जो महान तीर्थ हैं आज इनकी उपेक्षा हो रही है और नये-नये तीर्थ लोग बना रहे हैं। जहाँ कुछ भी नहीं है वहाँ करोड़ों की राशि वाले तीर्थ बनाए जा रंहे हैं। मैं कई बार श्रावकों से प्रेरणा व साधुओं से निवेदन करती हूँ कि वह इस बात को सोचें कि हमें तीर्थ को तीर्थ बनाना चाहिए। जगह-जगह तीर्थ बनाना इतना महत्त्व का नहीं है जितना तीर्थ को तीर्थ बनाने का, तीर्थ के जीर्णोद्धार का पुण्य अधिक है। अगर आप अविकसित तीर्थ को, जीर्ण-शीर्ण तीर्थ को तीर्थ का रूप देंगे, जैसे राजगृही, पावापुरी, कुण्डलपुरी आदि जो तीर्थ हैं इनका जितना विकास करेंगे आपका पुण्य सौ गुणा नहीं, हजार गुणा वृद्धिंगत होगा। इस बात को भी आपको ध्यान में रखना है कि वर्तमान में राजगृही को सिद्धक्षेत्र भी कहते हैं। उत्तरपुराण में बड़ा ही सुन्दर प्रकरण आया है कि **जीवन्धर कुमार भी वहाँ से तपश्चर्या करके मोक्ष गए हैं।** जीवन्धर स्वामी का इतिहास बड़ा प्रसिद्ध है छत्रचूड़ामणि, गद्यचिन्तामणि, जीवन्धर चम्पू आदि में इसका विस्तृत वर्णन है। सुधर्माचार्यादि अनेक मुनि यहाँ से मोक्ष गए हैं इसलिए उसे सिद्धक्षेत्र भी कहते हैं लेकिन पहले यह जन्मभूमि है पुनः सिद्धक्षेत्र है फिर भगवान की प्रथम देशनाभूमि है। वर्तमान में यहां जैन, हिन्दू, बौद्ध आदि पर्यटक लोग बहुतायत संख्या में आते हैं।

यह तीर्थ भगवान मुनिसुव्रत जन्मभूमि के नाम से बिहार प्रदेश में ही नहीं, पूरे भारत एवं विश्व में प्रसिद्धि को प्राप्त हो। ऐसे ये पावन तीर्थ हमारे और आपके सभी के मन को पवित्र करें, जीवन को पवित्र करें। यही मंगल कामना है।

* * *

भगवान पार्श्वनाथ की केवलज्ञान भूमि

अहिच्छत्र तीर्थ का परिचय

–ब्र. (कु.) इन्दु जैन
(संघस्थ–गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी)

उत्तरप्रदेश के बरेली जिले की आंवला तहसील में स्थित अहिच्छत्र आजकल रामनगर का एक भाग है जिसे प्राचीन काल में संख्यावती नगरी कहा जाता था। तेईसवें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ की केवलज्ञानकल्याणक भूमि अहिच्छत्र के बारे में आचार्य जिनप्रभसूरि विरचित 'विविध तीर्थकल्प' के अहिच्छत्र कल्प में लिखा है कि "संख्यावती नगरी में भगवान पार्श्वनाथ कायोत्सर्ग मुद्रा में ध्यानारूढ़ थे। पूर्व निबद्ध वैर के कारण असुर कमठ ने उन पर नाना प्रकार के उपसर्ग किये तब नागकुमार देवों के इन्द्र, धरणेन्द्र और पद्मावती भगवान द्वारा विगत जन्म में किये गये उपकार का स्मरण कर वहाँ आये और भगवान के ऊपर सहस्र फण फैलाकर उपसर्ग निवारण किया।" यह वही धरणेन्द्र और पद्मावती थे जिन्हें तापसी नाना महीपाल के द्वारा पंचाग्नि तप हेतु लकड़ी चीरते देखकर भगवान पार्श्वनाथ ने उसमें स्थित नाग-नागिन को जानकर उन्हें न मारने की बात कही किन्तु तापसी द्वारा क्रोधावेश में लकड़ी काटते ही भीतर रहने वाले सर्प-सर्पिणी के दो टुकड़े हो गये। तब परम करुणाशील पार्श्वप्रभु ने असह्य वेदना में तड़पते हुए उन सर्प-सर्पिणी को णमोकार मंत्र सुनाया और मंत्र के फलस्वरूप शान्त भाव से मरकर वे ही धरणेन्द्र-पद्मावती हुए।

जैनेश्वरी दीक्षा लेने के पश्चात् जब पार्श्वनाथ घोर तपस्या में लीन थे तब इन धरणेन्द्र-पद्मावती के द्वारा उपसर्ग दूर करते ही उनको केवलज्ञान उत्पन्न हो गया, वह तिथि चैत्र कृष्णा चतुर्थी थी (उत्तर पुराण के अनुसार यह तिथि चैत्र कृष्णा चतुर्दशी है), तब इन्द्रों और देवों ने आकर भगवान के केवलज्ञान कल्याणक की पूजा की। तब वह संवर देव भी प्रभु के चरणों में गिर पड़ा और भगवान से बार-बार क्षमायाचना करने लगा। पश्चात् इन्द्र की आज्ञा से धनकुबेर ने समवसरण की रचना कर दी और प्रभु का प्रथम जगत कल्याणकारी उपदेश वहाँ पर हुआ। नागेन्द्र द्वारा भगवान् के ऊपर छत्र लगाया गया था, इस कारण इस स्थान का नाम संख्यावती के स्थान पर **अहिच्छत्र** प्रसिद्ध हुआ।

प्राचीन शिखरबन्द मंदिर–क्षेत्र पर एक प्राचीन शिखरबंद मंदिर है उसमें एक हरित पन्ना की पार्श्वनाथ भगवान अर्थात् तिखाल वाले बाबा की मूर्ति है। वह प्रतिमा किसी अदृश्य शक्ति द्वारा बनाई गई तथा मनोकामना पूरक बताई जाती है। यहाँ के कुएं के जल को पीने से अनेक रोग शांत हो जाते हैं ऐसा कहा जाता है।

सांस्कृतिक महत्व–पार्श्वनाथ संबंधी घटना का एक सांस्कृतिक महत्व भी है जिसने जैन मूर्तिकला को प्रभावित किया। वह है पार्श्वनाथ भगवान की मूर्ति पर सर्पफण का होना तथा धरणेन्द्र पद्मावती का उनके भक्त यक्ष-यक्षिणी के रूप में विशेष उल्लिखित होना।

किला–क्षेत्र से दो किमी. दूर एक प्राचीन किला है जो महाभारतकालीन कहा जाता है। इस किले के निकट ही कटारीखेड़ा नामक टीले से प्राचीन स्तंभ मिला है जो कि भग्नावस्था में है और मानस्तंभ माना जाता है। जनसाधारण में किंवदन्ती है कि यहीं प्राचीनकाल में सहस्रकूट चैत्यालय था। कुछ लोग अज्ञानतावश इस पाषाण स्तंभ को 'भीम की गदा' कहते हैं। कहा जाता है कि अपने वैभवकाल में अहिच्छत्र नगर 48 मील की परिधि में था। यहाँ के भग्नावशेषों में 18 इंच तक की ईंटें मिलती हैं।

क्षेत्र दर्शन–सड़क से कुछ फुट ऊँचाई पर तीर्थ क्षेत्र का मुख्य द्वार है। भीतर एक विशाल धर्मशाला तथा बीच में पक्का कुआं है। बायीं ओर मंदिर का द्वार है। द्वार में प्रवेश करते ही क्षेत्र का कार्यालय है, जो काफी लम्बा चौड़ा है। सामने बायीं ओर एक छोटे गर्भगृह में वेदी में तिखाल वाले भगवान पार्श्वनाथ की सातिशय हरितपन्ना की पद्मासन मुद्रा में 9 इंच अवगाहना की सौम्य, सर्पलांछन युक्त प्रतिमा विराजमान हैं। वेदी के दायीं ओर दूसरे कमरे की वेदी में मूलनायक पार्श्वनाथ की श्यामवर्णी 1 फुट 10 इंच अवगाहना की अत्यन्त मनोहर पद्मासन प्रतिमा है। मूर्ति के नीचे सिंहासन पीठ के सामने वाले भाग में 24 तीर्थंकर प्रतिमाएं उत्कीर्ण हैं। प्रतिमा के बायीं ओर श्वेत पाषाण युक्त पार्श्वनाथ प्रतिमा तथा

दायीं ओर गर्भगृह की दो वेदी में आधुनिक प्रतिमाएं विराजमान हैं। अंतिम पांचवीं वेदी में बूंदी (राज.) में भूगर्भ से प्राप्त चौथी से नौवीं शताब्दी के मध्य की प्रतिमाएँ हैं। यहाँ एक समवसरण भी बना हुआ है। मंदिर के निकट ही रामनगर गांव में एक शिखरबंद मंदिर है जिसमें फणामण्डित श्यामवर्ण पद्मासन पार्श्वनाथ (4 फुट अवगाहना) की मनोज्ञ प्रतिमा है जिस पर पात्रकेशरी की शंका को दूर करने वाला श्लोक भी अंकित है तथा दो पाषाण एवं दो धातु प्रतिमाएं भी हैं। मंदिर के बाहर उत्तर की ओर पात्रकेशरी के चरण बने हैं।

वार्षिक मेला—क्षेत्र का वार्षिक मेला चैत्र कृष्णा अष्टमी से चैत्र कृष्णा त्रयोदशी तक होता है।

अहिच्छत्र तीर्थ की नूतन कृति—सन् 1993 में अहिच्छत्र तीर्थक्षेत्र को एक नूतन कृति की प्राप्ति तब हुई जब हस्तिनापुर तीर्थक्षेत्र से अवधप्रान्त की ओर मंगल विहार कर रही परम पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी संघ सहित अहिच्छत्र तीर्थक्षेत्र पर पधारीं। संयोगवश इन दिनों यहां का वार्षिक मेला भी प्रारंभ हो चुका था। अतः तीर्थक्षेत्र की प्राचीन एवं नूतन दोनों संस्थाओं ने पूज्य माताजी के पावन सानिध्य का पूरा-पूरा लाभ उठाया। 13 मार्च से 16 मार्च तक के इस प्रवास में ज्ञानतीर्थ परिसर के पाण्डाल में पूज्य माताजी के प्रवचन के साथ 15 मार्च को प्राचीन मंदिर के प्रांगण में पूज्य माताजी के सानिध्य में मेले का शुभारंभ हुआ। 16 मार्च को भगवान आदिनाथ की जन्मजयंती के पावन दिवस प्रातःकाल पूज्य माताजी के चरण सानिध्य में अहिच्छत्र कमेटी के महामंत्री श्री सुमेरचंद जैन एवं (अध्यक्ष) श्री प्रेमचंद जैन तेल वाले (मेरठ) बैठे हुए तीर्थक्षेत्र के उत्थान हेतु आशीर्वाद मांग रहे थे तभी माताजी के मुख से निकला कि यहां एक विशाल तीस चौबीसी तीर्थंकर मंदिर की रचना बनवाओ और उसमें सात सौ बीस जिनबिम्ब विराजमान करो। प्रेमचंद जी ने योजना को तुरंत स्वीकार किया पुनः मध्यान्हकालीन प्रवचन सभा में इस भावी निर्माण की घोषणा होते ही तुरंत 24 दातारों ने प्रतिमा विराजमान करने की स्वीकृति लिखवाई। इस प्रकार अपूर्व उत्साह के साथ पूज्य माताजी ने इस नूतन योजना को भगवान पार्श्वनाथ के चरणों में प्रथम भेंट के रूप में समर्पित किया और उनके कर्मठ भक्त कार्यकर्ताओं ने उसे शीघ्र ही मूर्तरूप देने का संकल्प लिया।

आज से कोड़ाकोड़ी वर्ष पूर्व सम्राट् भरत चक्रवर्ती ने कैलाशपर्वत पर तीन चौबीसी के रत्नों के 72 मंदिर बनवाए थे। तीन चौबीसी की प्रतिमाएं तो आज भी कई जगह पर स्थापित हैं किन्तु तीस चौबीसी रचना की प्रथम प्रेरणा माताजी ने यहां दी थी। यह वह प्रथम तीस चौबीसी मंदिर है जिसकी योजना काफी समय से पूज्य माताजी के मस्तिष्क में थी और जिसे क्रियान्वयन करने का सौभाग्य श्री अहिच्छत्र तीर्थक्षेत्र कमेटी को प्राप्त हुआ। उसका प्रमुख श्रेय श्री प्रेमचंद जैन (तेल वाले) मेरठ को जाता है।

विभिन्न अतिशयों से युक्त यह प्राचीनतम तीर्थ तथा उसमें निर्मित प्राचीन एवं नूतन रचनाएँ दर्शनार्थ पधारने वाल प्रत्येंक यात्रीबन्धु को भगवान पार्श्वनाथ के जीवन से क्षमा, सहनशीलता एवं तपस्या की प्रेरणा प्रदान करें एवं अन्तर में ज्ञानज्योति को प्रस्फुटित करे यही मंगल कामना है।

* * *

है किस चिड़िया का प्रेम नाम, यह कैसी बात निकाली है?
उसकी तो अंत्येष्ठि क्रिया, जानें कब की कर डाली है।
स्थिति आज इस दुनियां की भौतिकता में परिवर्तित है;
प्रभु वीर की वाणी के संग अब तर्कों की पड़ी जरूरत है।।

प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की निर्वाणभूमि कैलाशपर्वत

–प्रो. टीकमचंद जैन, नवीनशाहदरा, दिल्ली

अनादिनिधन जैनधर्म में दो शाश्वत तीर्थक्षेत्र माने गये हैं-1. अयोध्या 2. सम्मेदशिखर। अयोध्या तीर्थ को जहाँ अनन्तानन्त तीर्थंकरों की जन्मभूमि होने का गौरव प्राप्त है वहीं सम्मेदशिखर अनन्तानन्त तीर्थंकरों एवं मुनियों की निर्वाणभूमि के नाम से जाना जाता है।

वर्तमान में हुण्डावसर्पिणी कालदोषवश केवल 5 तीर्थंकरों ने अयोध्या नगरी में जन्म लिया और शेष तीर्थंकर अलग-अलग स्थानों पर जन्में, इसी प्रकार बीस तीर्थंकर सम्मेदशिखर से मोक्ष गए और शेषं चार तीर्थंकर अलग-अलग स्थानों से मोक्ष गए जिनमें से प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव ने कैलाशपर्वत से मोक्ष प्राप्त किया। इस पवित्र पर्वतराज को अष्टापद के नाम से भी जाना जाता है।

भगवान ऋषभदेव के मोक्षगमन के पश्चात् उनके पुत्र सम्राट् भरत चक्रवर्ती ने भगवान ऋषभदेव की निर्वाणभूमि कैलाशपर्वत पर त्रिकाल चौबीसी (भूत, वर्तमान एवं भविष्यत्कालसंबंधी चौबीसों तीर्थंकर) की बहत्तर रत्नप्रतिमाएँ बनवाकर बहत्तर जिनमंदिरों में विराजमान की थीं ऐसा वर्णन ग्रंथों में आता है।

उत्तरपुराण में पृष्ठ 10 पर आचार्य श्री गुणभद्र ने सगर चक्रवर्ती द्वारा अपने पुत्रों से कैलाशपर्वत के चारों ओर खाई खोदने का वर्णन करते हुए कहा है–

राज्ञाप्याज्ञापिता यूयं कैलासे भरतेशिना। गृहाः कृता महारत्नैश्चतुर्विंशतिरर्हताम् ।।107।।
तेषां गङ्गां प्रकुर्वीध्वं परिखां परितो गिरिम्। इति तेऽपि तथा कुर्वन् दण्डरत्नेन सत्वरम् ।।108।।

अर्थात् राजा सगर ने अपने पुत्रों द्वारा कोई कार्य मांगने पर सोचा कि अभी धर्म का एक कार्य बाकी है। उन्होंने हर्षित होकर आज्ञा दी कि "भरत चक्रवर्ती ने कैलाशपर्वत पर महारत्नों से अरहन्त देव के चौबीस मंदिर बनवाएँ हैं, तुम लोग उस पर्वत के चारों ओर गङ्गा नदी को उन मंदिरों की परिखा बना दो।" उन राजपुत्रों ने भी पिता की आज्ञानुसार दण्डरत्न से वह काम शीघ्र ही कर दिया।

करोड़ों-करोड़ों वर्ष पूर्व निर्मित उन जिनमंदिरों का जीर्णोद्धार आज से नौ लाख वर्ष पूर्व अयोध्या के महाराजा दशरथ ने करवाया था ऐसा कथन जैन रामायण (पद्मपुराण) में आता है। पद्मपुराण के बाईसवें सर्ग में आचार्य रविषेण ने लिखा है–

ये भरताद्यैर्नृपतिभिरुद्धाः कारितपूर्वा जिनवरवासाः।
भङ्गमुपेतान् क्वचिदपि रम्यान् सोऽनयदेतानभिनवभावान्।।179।।

इन्द्रनुतानां स्वयमपि रम्यान् तीर्थंकराणां परम्निवासन्।
रत्नसमूहैः स्फुरदुरुभासः संततपूजामघटयदेषः।।180।।

अर्थात् भरतादि राजाओं ने जो पहले जिनेन्द्र भगवान के उत्तम मंदिर बनवाए थे वे यदि कहीं भग्नावस्था को प्राप्त हुए थे तो उन रमणीय मंदिरों को राजा दशरथ ने मरम्मत कराकर पुनः नवीनता प्राप्त कराई थी। यही नहीं, उसने स्वयं भी ऐसे जिनमंदिर बनवाए थे जिनकी कि इन्द्र स्वयं स्तुति करता था तथा रत्नों के समूह से जिनकी विशाल कान्ति स्फुरायमान हो रही थी।

भगवान ऋषभदेव के मोक्षगमन के पश्चात् उस पर्वत से अनेक मुनि मोक्ष गए हैं ऐसा वर्णन पुराण ग्रंथों में आता है। निर्वाणकाण्ड में भी लिखा है–

बाल महाबाल मुनि दोय, नागकुमार मिले त्रय होय।
श्री अष्टापद मुक्ति मंझार, ते वंदौं नित सुरत संभार।।16।।

पद्मपुराण ग्रंथ में आचार्य श्री रविषेणं ने बालि मुनि की कथा का बड़ा ही रोमांचकारी वर्णन किया है कि–महामुनि

बालि दुर्द्धर तप करते हुए कैलाशपर्वत पर ध्यानस्थ थे। एक समय दशानन अर्थात् रावण नित्यलोक नगर के राजा नित्यालोक की पुत्री रत्नावली से विवाह कर लंका की ओर जा रहा था। मार्ग में कैलाशपर्वत के ऊपर से उड़ते हुए उसका पुष्पक विमान वायुमार्ग में एकाएक अकारण ही स्तम्भित हो गया। विमान को कीलित देख रावण ने अपने मंत्री मारीच से इसका कारण पूछा तब मारीच ने कहा-हे स्वामी! यह अत्यन्त पवित्र कैलाशगिरि है। यहाँ पर ही प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव का निर्वाण कल्याणक हुआ था। इस पर जिनेन्द्र भगवान के अनेक अतिशययुक्त मंदिर हैं तथा देखिए, पर्वत पर कोई महाऋद्धि के धारक मुनिराज ध्यानारूढ़ कायोत्सर्ग खड़े हैं। अतएव चलिए, नीचे उतरकर चैत्यालयों की वंदना करें तथा मुनिराज को नमस्कार कर आगे बढ़ें अथवा विमान को पीछे लौटाकर किसी अन्य मार्ग से होकर चलें। यदि हठपूर्वक यहाँ से जाने का उद्यम किया जायेगा तो विमान खण्ड-खण्ड होकर पृथ्वी पर गिर पड़ेगा।"

यह सुनकर गर्वोन्मत्त रावण नीचे उतरकर कैलाशगिरि की सुरम्यता का अवलोकन करने लगा। कुछ दूर आगे जाने पर महामुनि बालि को देख वह वैरभाव के कारण उनको यद्वा-तद्वा कहते हुए पर्वत को उखाड़कर समुद्र में फेकने के अभिप्राय से अपना विराट रूप कर क्रोधावेश में पर्वत की तली में घुसा और हुंकार कर दोनों बाहुओं से गिरिराज कैलाश को उठाने लगा। गिरि के किंचित् चलायमान होने से उस पर रहने वाले पशु-पक्षी आकुलित हो उठे, वनक्रीड़ा कर रहे देवगण आश्चर्यचकित हो आकाश में उड़ गए और बड़े-बड़े पेड़ गिरने लगे तब धीर-वीर, क्रोधरहित, पूर्ववत् निश्चल खड़े महामुनि सोचने लगे कि इस पर्वतराज पर भरत चक्रवर्ती के द्वारा निर्मित अनेक उत्तम चैत्यालय हैं, जहाँ निरन्तर सुर-असुर एवं विद्याधर वन्दना को आते हैं। कदाचित् पर्वत के चलायमान होने से वे जिनालय नष्ट न हो जाएं तथा पर्वत पर रहने वाले असंख्य जीवों की प्राण हानि न हो जाये, इस हेतु महामुनि बालि ने अपने चरण का अंगुष्ठ किंचित् दबाया तब तो दशानन मानो भार से दबने लगा और करुण रुदन करने लगा तब उसकी रानी ने महामुनि को करबद्ध नमस्कार कर पति के प्राणों की भिक्षा माँगी और उन परम दयालु महामुनि ने अपना अंगुष्ठ किंचित् ढीला कर दिया। तब रावण का गर्व चूर-चूर हो गया और उसने मुनि से बार-बार क्षमायाचना कर उनकी तीन प्रदक्षिणा लगाकर स्तुति की। महामुनि बालि ने जो दशानन पर किंचित् क्षोभ किया था अतएव गुरु के निकट जाकर उसका प्रायश्चित किया फिर उग्र तपश्चर्या कर कर्म शत्रुओं को परास्त कर उस पर्वत से निर्वाण पद प्राप्त किया।

तात्पर्य यह है कि नौ लाख वर्ष पूर्व तक कैलाशपर्वत पर नर-नारी उन मंदिरों के दर्शन हेतु सम्मेदशिखर की भाँति जाते रहते थे और रत्न प्रतिमाओं का सम्पूर्ण इतिहास तब तक मौजूद था। वर्तमान में यद्यपि कैलाशपर्वत पर कहीं भी वे प्राचीन अवशेष नहीं पाए जा रहे हैं फिर भी रामायण के नायक राम, सीता, लक्ष्मण आदि इतिहास पुरुषों की भाँति उन मंदिरों और मूर्तियों का इतिहास भी हमें स्वीकार करना पड़ेगा। वह कैलाशपर्वत आज भी यद्यपि हमारे लिए सम्मेदशिखर पर्वत के समान ही पूज्य है किन्तु आज उसके साक्षात् दर्शन न होने से श्रद्धालु उस प्रथम निर्वाणस्थल की वंदना के पुण्य से वंचित इसलिए रहते हैं क्योंकि कई वर्षों से देश का वह भूभाग दूसरे देश चीन की सीमा में माना जा रहा है जहाँ पहुँच पाना अत्यन्त कठिनाई भरा है। शायद यही कारण रहा है कि जैन समाज तो पूर्णरूपेण उस ओर से उपेक्षित हो गई और तीर्थंकर की कल्याणक भूमियों में से इस प्रथम निर्वाणभूमि को सब लोग भूल ही गए किन्तु इतिहासकारों से ज्ञात होता है कि "कैलाश मानसरोवर" के नाम से जाना जाने वाला स्थान (पर्वत) ही वह असली कैलाशपर्वत है जहाँ से भगवान ऋषभदेव ने निर्वाण प्राप्त किया था।

कुछ जैन बंधु 2-3 वर्ष पूर्व कैलाशयात्रा के लिए गए और वहाँ से आकर उन्होंने पत्रकारों को बताया कि-"जब हम कैलाश के Base Camp पर पहुँचे तो हमारा तिब्बती-चीनी मार्गदर्शक (Guide) हमारे नामों के पीछे "जैन" देखकर हमारे पास आया और बोला कि उसके पिता-दादा-पड़दादा कहते आए हैं कि वहाँ से 3 घण्टे पैदल चढ़ाई के बाद जो पहाड़ है वह "अष्टापद" है और वहाँ से जैनों के एक भगवान को निर्वाण प्राप्त हुआ है। वहाँ पर एक गुफा है, जिसमें उन्होंने अंतिम तपस्या की और आठ सीढ़ियाँ चढ़कर अलोप हो गए। डेढ़-दो सौ वर्ष पूर्व तो वहाँ ऊपर मंदिर में जैन-मूर्तियाँ थीं और तीर्थयात्री आते थे, पर बाद में वह बौद्ध मंदिर बन गया और मूर्तियाँ कहीं भारत में ले जायी गयीं।"

४-९६

उन जैन यात्रियों का मानना है कि वहाँ से प्राप्त तथ्यों के अनुसार वही कैलाशपर्वत प्राचीन अष्टापद है। "गोलालारे जैन जाति का इतिहास" नामक पुस्तक के पृष्ठ 126-134 पर ब्रह्मचारी लामचीदास जी द्वारा भी कैलाशतीर्थ की यात्रा का प्रकरण दृष्टव्य है। जो भी हो, अप्राप्त प्रथम निर्वाणक्षेत्र असली कैलाशपर्वत खोज का विषय तो है ही, हम सभी की श्रद्धा का केन्द्र भी है। पुणे (महाराष्ट्र) के इंजीनियर श्री सी.आर. जैन पाटिल इस कैलाश मानसरोवर की यात्रा दो बार कर चुके हैं जो अपने साक्षात् अनुभव भी हमें बताते रहते हैं कि कितनी कठिनाई से वहाँ पहुँचा जाता है।

परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की पावन प्रेरणा से मनाए गये "भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव" के अवसर पर राजधानी दिल्ली के लालकिला मैदान में 4 फरवरी 2000, माघ कृष्णा चतुर्दशी के शुभ दिन एक ऐसा ही अस्थायी कैलाशपर्वत निर्मित हुआ जो वास्तविक कैलाशपर्वत का दिग्दर्शन करा रहा था। उसी प्रकार के उपवन और बगीचे, झरने और गुफाएँ जहाँ पर्वत के प्राकृतिक सौंदर्य को दर्शा रहे थे वहीं पर्वत के विभिन्न स्थलों पर चक्रवर्ती भरत द्वारा बनाए गए बहत्तर मंदिरों में त्रिकाल चौबीसी की बहत्तर (72) रत्नप्रतिमाओं की प्रतिकृति के रूप में निर्मित यहाँ भी बहुमूल्य रत्नप्रतिमाएँ चतुर्थकाल का दृश्य उपस्थित कर रही थीं जिसके समक्ष 1008 निर्वाणलाडू चढ़ाए गए और प्रथम निर्वाणलाडू चढ़ाने का सौभाग्य भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने प्राप्त किया था, साथ ही स्वयं को गौरवान्वित महसूस करते हुए उस धर्मसभा में कहा था-कि अभी पूज्य माताजी कह रही थीं कि कई लोग तो यह समझते हैं कि जैनधर्म की स्थापना भगवान महावीर ने की है, जबकि सच्चाई यह है कि वे 24वें तीर्थंकर थे उनके पहले 23 तीर्थंकर और हुए हैं। मेरे सरकारी दफ्तर के कमरे में तेईसवें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ जी की मूर्ति रखी हुई है।" यह ऐतिहासिक कैलाशपर्वत वर्तमान में हस्तिनापुर-जम्बूद्वीप स्थल पर एक विशाल भवन के अन्दर विराजमान है।

उसके पश्चात् भी पूज्य गणिनी माताजी की पावन प्रेरणा से प्रीतविहार-दिल्ली में मंगल चातुर्मास के अंतर्गत "कैलाशपर्वत मानसरोवर यात्रा" का सफल आयोजन हुआ जिसमें दिल्ली के विकासमार्ग पर कैलाश पर्वत की प्रतिकृति बनाकर लोगों को भगवान ऋषभदेव की निर्वाणभूमि एवं वहाँ विराजमान 72 जिनप्रतिमाओं की प्रतिकृति रूप तीन चौबीसी प्रतिमाओं के दर्शन कराए गए, उस समय भी उस यात्रा को करने के लिए अपार जनसमूह उमड़ पड़ा था और जो लोग वास्तविक कैलाशपर्वत की यात्रा के अनिर्वचनीय सुख से वंचित रहे हैं उन्होंने उसकी कई-कई (108-108) वन्दना कर उस पर्वतराज को परोक्ष में ही नमस्कार किया था।

निर्वाण महोत्सव के समापन अवसर पर सन् 2001 में भगवान ऋषभदेव की दीक्षा एवं केवलज्ञान भूमि प्रयाग में बनारस हाइवे पर पूज्य गणिनी माताजी की प्रेरणा से "तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ" का निर्माण हुआ है। वहाँ भी 'दीक्षाकल्याणक तपोवन' एव 'समवसरणरचना' के साथ ही विशाल कैलाशपर्वत निर्मित किया गया है जो पर्यटकों के आकर्षण का केन्द्र है।

इसी प्रकार अन्य अनेक स्थानों (हस्तिनापुर, खेरवाड़ा-राज., अडिंदा पार्श्वनाथ) में भी जैनसमाज द्वारा कृत्रिम कैलाशपर्वत के वृहत् निर्माण हुए हैं तथा बद्रीनाथ के अंदर भी अष्टापद कैलाशपर्वत की मान्यता को दर्शाने वाला निर्माण भी दृष्टव्य है।

वस्तुतः आज भी उस प्रथम निर्वाणभूमि कैलाशपर्वत के प्रति जन-जन की आस्था, श्रद्धा व अटूट भक्ति है और यह भक्ति ही एक दिन परम पद निर्वाण की प्राप्ति कराने में सक्षम है। हम भी उस पवित्र पर्वतराज कैलाशपर्वत की परोक्ष वन्दना कर प्रत्यक्ष वन्दना की सदैव मन में भावना रखें और यह तीर्थ सभी श्रद्धालुओं की श्रद्धा का केन्द्र बना रहकर आत्मा में केवलज्ञान की ज्योति जलावे, यही प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव के पावन चरण कमलों में मंगलकामना है।

* * *

LIFE IS A MYSTERY.......UNFOLD IT.

श्री गिरनार जी तीर्थक्षेत्र का परिचय

लेखक–पीठाधीश क्षुल्लक मोतीसागर

गुजरात प्रान्त में स्थित गिरनार पर्वत एक निर्वाणक्षेत्र के रूप में सुप्रसिद्ध तीर्थ है। षट्खण्डागम सिद्धान्तशास्त्र की आचार्य वीरसेन कृत धवला टीका में इसे क्षेत्र मंगल माना है। इसे ऊर्जयन्त गिरि भी कहते हैं। आचार्य यतिवृषभ ने भी तिलोयपण्णत्ति नामक ग्रंथ में इसी आशय की पुष्टि करते हुए इसे क्षेत्र मंगल माना है।

ऊर्जयन्त क्षेत्र पर बाईसवें तीर्थंकर नेमिनाथ के तीन कल्याणक हुए थे-दीक्षा, केवलज्ञान और निर्वाण। जिस क्षेत्र पर किसी तीर्थंकर का एक ही कल्याणक हो वह कल्याणक क्षेत्र या तीर्थक्षेत्र कहलाता है और जहाँ किसी तीर्थंकर के तीन कल्याणक हुए हों वह क्षेत्र तो वस्तुतः अत्यन्त पवित्र बन जाता है अतः गिरनार क्षेत्र अत्यन्त पावन तीर्थभूमि है। भगवान नेमिनाथ का निर्वाणस्थल होने से इसे सिद्धक्षेत्र कहा जाता है।

गिरनार पर्वत का नाम लेते ही महासती राजुल का नाम भी स्मृति में आ जाता है जब भगवान नेमिनाथ जूनागढ़ से गिरनार की ओर राजुलमती से ब्याह करने के लिए चले तो वहाँ पहुँचते हुए मार्ग में बाड़े में बंद पशुओं की करुण चीत्कार ने उन्हें द्रवित कर दिया तब वे वैराग्य उत्पन्न हो जाने से विवाह बंधन में न फंसकर गिरनार पर्वत पर जाकर दीक्षा ले घोर तपश्चरण में लीन हो गए तब महासती राजुल ने भी भगवान नेमिनाथ के पथ का अनुसरण करते हुए आर्यिका दीक्षा ग्रहण कर इसी पर्वत पर घोर तपश्चरण किया था। इसी पर्वत पर भगवान नेमिनाथ के तीन कल्याणकों का वर्णन तिलोयपण्णत्ति नामक ग्रंथ में विस्तारपूर्वक दिया गया है। भगवान के निर्वाण की तिथि आदि का उल्लेख करते हुए उन्होंने लिखा है–

बहुलट्टमी पदोसे आसाढ़े जम्मभम्मि उज्जंते।
छत्तीसाधिय पणसयसहिदो णेमीसरो सिद्धो।।

अर्थात् भगवान नेमीश्वर आषाढ़ कृष्णा अष्टमी के दिन प्रदोषकाल में अपने जन्म नक्षत्र के रहते 536 मुनियों के साथ ऊर्जयन्त गिरि से सिद्ध हुए।

भगवान का निर्वाण होने पर असंख्य देवों, इन्द्रों और मनुष्यों ने निर्वाणकल्याणक महोत्सव मनाया। तब से इस पर्वत की ख्याति एक प्रसिद्ध सिद्धक्षेत्र के रूप में हो गई है।

इस क्षेत्र पर भगवान नेमिनाथ के अतिरिक्त प्रद्युम्न, शम्बुकुमार, अनिरुद्ध कुमार आदि 72 करोड़ 700 मुनियों ने ऊर्जयन्त गिरि से सिद्धिपद प्राप्त किया। ऊर्जयन्त गिरि से अनेक मुनि मोक्ष गए हैं इसका समर्थन हरिवंशपुराण से भी होता है। इस संबंध में आचार्य जिनसेन ने मुनियों के कुछ नाम देकर यह भी सूचित किया है कि इन मुनियों आदि के निर्वाण के कारण ही ऊर्जयन्त को निर्वाण क्षेत्र माना जाने लगा और अनेक भव्यजन तीर्थयात्रा के लिए आने लगे। आचार्य गुणभद्रकृत उत्तरपुराण में प्रद्युम्न आदि मुनियों के संबंध में ऊर्जयन्त गिरि से निर्वाणप्राप्ति के साथ जिन कूटों से उन्होंने निर्वाण प्राप्त किया था उसकी भी सूचना दी गई हैं।

इसी पर्वत से गजकुमार मुनि ने निर्वाण की प्राप्ति की। हरिवंशपुराण में वर्णित कथा में गजकुमार मुनि के मुक्तिस्थान का उल्लेख नहीं किया गया किन्तु हरिषेणकृत वृहत्कथाकोष में स्थान का स्पष्ट उल्लेख मिलता है। इस प्रकार गिरनार पर्वत से करोड़ों मुनियों को निर्वाण प्राप्त हुआ अतः वह निर्वाणक्षेत्र या सिद्धक्षेत्र है।

भगवान नेमिनाथ जिस स्थान से मुक्त हुए थे वह स्थान अत्यन्त पवित्र और लोकपूज्य था। उस स्थान के गौरव को सदाकाल के लिए अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए इन्द्र ने वज्र से सिद्धशिला का निर्माण किया और उस पर भगवान के चरण चिन्ह उत्कीर्ण किए। इस आशय की सूचना आचार्य जिनसेन ने 'हरिवंशपुराण' (सर्ग 65, श्लोक 14) में दी है। उन्होंने लिखा है–

'ऊर्जयन्तगिरौ वज्री वज्रेणालिख्या पाविनीम्।
लोके सिद्धिशिलां चक्रे जिनलक्षणपङ्क्तिभिः।।"

इसके अतिरिक्त आचार्य दामनन्दी कृत पुराणसारसंग्रह एवं आचार्य समन्तभद्र स्वामी रचित स्वयम्भूस्तोत्र में इस बात का उल्लेख किया गया है।

इन्द्र ने जिस प्रकार भक्तिवश वज्र से भगवान के चिन्ह अंकित किए थे उसी प्रकार उसने भक्तिवश गिरनार पर्वत पर भगवान नेमिनाथ की भव्य मूर्ति भी स्थापित की थी जिसका वर्णन आचार्य मदनकीर्ति यतिपति ने 'शासन चतुस्त्रिंशतिका" में किया है। इन्द्र द्वारा स्थापित उस मूर्ति का क्या हुआ, इसका कुछ पता नहीं चलता किन्तु श्वेताम्बर आचार्य राजशेखरसूरिकृत 'प्रबन्धकोष' (वि.सं. 1405) में रत्नश्रावक संबंधी एक प्रबंध में काश्मीर देश के नवहुल्ल पत्तन निवासी रत्न नामक जैन श्रीमंत द्वारा संघ सहित यात्रा करने का वर्णन आता है जिन्होंने नेमिनाथ भगवान की अति प्राचीन मूर्ति के दर्शन के साथ उनका जलाभिषेक किया। प्रतिमा लेप की होने से वह गल गई जिससे उन्हें बड़ा पश्चाताप हुआ, उन्होंने उपवास किया। तब रात्रि में अम्बिका देवी ने प्रकट होकर उन्हें अन्य प्रतिमा स्थापित करने का आदेश दिया तदनुरूप रत्न ने 18 सोने की, 18 चांदी की और 18 पाषाण की प्रतिमाएं बनवाईं। यदि इस प्रकरण को प्रामाणिक स्वीकार किया जाए तो मदनकीर्ति (वि.स.1285) ने नेमिनाथ की जिस भव्य दिगम्बर मूर्ति का उल्लेख किया है वह वि.सं. 1405 में लिखित 'प्रबंधकोष' के अनुसार रत्न नामक यात्री के हाथों नष्ट हुई। इससे लगता है कि मदनकीर्ति के द्वारा उल्लिखित मूर्ति वि.सं. की 14-15 वीं शताब्दी तक अवश्य विद्यमान थी। संभव है, मदनकीर्ति ने उसके दर्शन भी किए हों किन्तु इतना तो निश्चित है ही कि वह मूर्ति दिगम्बर थी और अत्यन्त आकर्षक थी।

गिरनार के दूसरे शिखर पर अम्बा या अम्बिका देवी का मंदिर है। इस मंदिर की मान्यता जैनों और हिन्दुओं दोनों में ही है। मंदिर पर आजकल हिन्दुओं का अधिकार है। The Report on the Antiquities of Kathiawad and Kachha, P. 129 में Mr. Burgess ने मूलतः इस मंदिर को जैनों का बताया है। अम्बिका देवी के कई नाम जैन शास्त्रों में मिलते हैं-कूष्माण्डी, कूष्माण्डिनी, आम्रा देवी, अम्बा देवी, अम्बिका देवी। यह देवी तीर्थंकर नेमिनाथ की शासन देवी कहलाती हैं। आचार्य जिनसेन ने 'हरिवंशपुराण' (सर्ग 66, श्लोक 44) में गिरनार की अम्बिका देवी के संबंधमें विशेष उल्लेख किया है। अम्बिका देवी की मूर्तियाँ बहुसख्या में प्राप्त होती हैं। इस देवी का मुख्य चिन्ह यह है-सिंहारूढ़ देवी की गोद में एक बालक होता है तथा एक बालक बगल में खड़ा होता है। देवी आम्रवृक्ष के नीचे बैठी होती है अथवा वृक्ष नहीं होता तो हाथ में आम्रस्तवक रहता है। देवी के शिरोभाग पर भगवान नेमिनाथ की पद्मासन प्रतिमा बनी होती है।

गिरनार पर अनेक पौराणिक और ऐतिहासिक घटनाएं घटित हुई हैं, जिनका विशेष महत्व है। चतुर्थ श्रुतकेवली गोवर्धनाचार्य गिरनार की यात्रा के लिए गए थे। अंतिम श्रुतकेवली भद्रबाहु ने भी यहाँ की यात्रा की थी। इनके पश्चात् एक महत्वपूर्ण घटना का गिरनार के साथ संबंध है, जिसके द्वारा जैन वाङ्मय का इतिहास जुड़ा हुआ है। वह घटना इस प्रकार है-

गिरनार की चन्द्रगुफा में स्थित धरसेनाचार्य नन्दिसंघ की प्राकृत 'पट्टावली' के अनुसार आचारांग के पूर्ण ज्ञाता थे। उन्हें इस बात की चिंता हुई कि उनके पश्चात् श्रुतज्ञान का लोप हो जाएगा, उस समय महिमानगरी में मुनि सम्मेलन हो रहा था। उन्होंने मुनि सम्मेलन को अपनी चिन्ता व्यक्त करते हुए एक पत्र लिखा फलस्वरूप व्युत्पन्न और विनयी दो मुनि पुष्पदंत और भूतबलि विद्या ग्रहण हेतु उनके पास पहुँचे, तब आचार्यश्री ने उनकी परीक्षा लेकर उन्हें सिद्धान्त सीखने योग्य समझकर ग्रंथ पढ़ा दिया जिसके फलस्वरूप षट्खण्डागम नामक महान ग्रंथ की रचना हुई, इस प्रकार सिद्धान्त ग्रंथों की विद्याभूमि गिरनार ही है। पुष्पदंत और भूतबलि ने गिरनार की सिद्धशिला पर बैठकर, जहाँ भगवान नेमिनाथ को मुक्ति प्राप्त हुई थी, मंत्र सिद्धि की थी। आचार्य कुन्दकुन्द भी गिरनार की वंदना करने आए थे ऐसा वर्णन ज्ञान प्रबोध एवं पाण्डवपुराण ग्रंथ में आता है।

इसके अतिरिक्त सुगंधदशमी व्रत का कथानक भी यहीं से जुड़ा है।

ऊर्जयन्त पर्वत दिगम्बर परम्परा में तीर्थराज माना गया है। अनन्तानंत तीर्थंकरों एवं मुनियों की निर्वाणभूमि होने से जहाँ सम्मेदशिखर को तीर्थाधिराज की संज्ञा दी गई है वहीं ऊर्जयन्तगिरि से 72 करोड़ 700 मुनियों की मुक्ति और

तीर्थंकर नेमिनाथ के तीन कल्याणक होने से सम्मेदशिखर के बाद इस तीर्थ का नाम आता है।

श्री दिगम्बर जैन सिद्धक्षेत्र गिरनार पर्वत के ऊपर पाँच टोंके हैं। लगभग दो मील की चढ़ाई चढ़ने पर दिगम्बर मंदिर और धर्मशाला से कुछ पहले राजुल गुफा है। इस गुफा से आगे बढ़ने पर दिगम्बर जैन धर्मशाला है इसके आगे अहाते में 3 मंदिर और एक छतरी है। एक मन्दरिया में 4 फुट ऊँची खड्गासन भगवान बाहुबली की प्रतिमा है। पार्श्व में एक छतरी में कुन्दकुन्दाचार्य के चरण हैं, सामने दीवार में पंचपरमेष्ठी की 5 मूर्तियाँ बनी हैं। छतरी के पार्श्व में एक जिनमंदिर है। अहाते के प्रांगण में बड़ा मंदिर बना हुआ है। दिगम्बर मंदिर से थोड़ा आगे बढ़ने पर गोमुखी गंगा है, एक गोमुख से जलधारा निकलते रहने से जल से कई कुण्ड बन गए हैं। गोमुख के पृष्ठ भाग में एक वेदी पर तीर्थंकरों के 24 चरणचिन्ह बने हुए हैं। यह प्रथम टोंक कहलाती है। इस पवित्र कल्याणक स्थान पर हिन्दुओं ने अधिकार कर रखा है। इस गोमुख गंगा के निकट ही सहस्राम्रवन (भगवान नेमिनाथ की दीक्षा भूमि) को मार्ग जाता है। यहाँ से कुछ आगे चलने पर राखंगार के दुर्ग का द्वार मिलता है। द्वार के बायीं ओर नेमिनाथ का विशाल और दर्शनीय मंदिर है जो कि मूलतः दिगम्बर आम्नाय का था किन्तु अब उस पर श्वेताम्बरों का अधिकार है। 900 सीढ़ी चढ़कर द्वितीय टोंक है जहाँ अनिरुद्ध कुमार के चरण हैं, इसके निकट ही अम्बा देवी का विशाल मंदिर है। तीसरी टोंक शम्बुकुमार की है। तीसरी टोंक से 1500 सीढ़ियाँ चढ़ने और उतरने पर चौथा टोंक है। इस पर्वत पर चढ़ने के लिए सीढ़ियाँ नहीं हैं, खड़ा पहाड़ है। चढ़ाई कठिन है किन्तु यात्री साहस व परिश्रम से थोड़ा कष्ट सहकर चढ़ सकते हैं। पर्वत की चोटी पर शिला में प्रद्युम्न कुमार के चरण बने हैं, चरणों के निकट ही एक फुट ऊँची मूर्ति बनी हुई है। पाँचवी टोंक पर भगवान नेमिनाथ के चरण हैं जिन्हें हिन्दू लोग दत्तात्रेय कहते हैं, चरणों के पीछे भगवान नेमिनाथ की भव्य दिगम्बर प्रतिमा विराजमान हैं, यह पाँचों टोंक व नेमिनाथ मंदिर सरकार के पुरातत्त्व विभाग के अधिकार में है।

यहाँ से गये हुए मार्ग से ही वापस लौटकर सहस्राम्रवन (प्रथम टोंक) के लिए सीढ़ियाँ जाती हैं। इस दीक्षावन में एक छतरी के नीचे चरण बने हैं, यहाँ से कच्चा मार्ग धर्मशाला के लिए जाता है जो कि कष्टकर है अतः सीढ़ियों द्वारा ही मुख्य मार्ग से नीचे आना चाहिए।

नीचे तलहटी में दिगम्बर जैन धर्मशाला में एक जिनालय है, धर्मशाला में अनेक कमरे हैं और यात्रियों की सुविधा हेतु समुचित व्यवस्था है। परमपूज्य आचार्यश्री निर्मलसागर महाराज की प्रेरणा से गिरनार तीर्थ का विकास हुआ है। वर्तमान में भी वहाँ "निर्मलध्यान केन्द्र" नामक संस्था के द्वारा नवनिर्माण आदि कार्य चल रहे हैं। पहाड़ के ऊपर प्रथम टोंक पर बनी धर्मशाला में 6 कमरे हैं। इसी प्रकार जूनागढ़ में भी ऊपर कोट के निकट क्षेत्र की एक धर्मशाला है इसमें भी यात्री हेतु सभी सुविधाएं हैं। क्षेत्र कार्यालय जूनागढ़ के जगमाल चौक में है। इस प्रकार भगवान नेमिनाथ की त्रयकल्याणक भूमि व अनेक मुनियों की सिद्धभूमि सभी के लिए कल्याणकारी होवे यही भावना है।

* * *

धन्या च माता जनकश्च धन्यः,
धन्या च भूर्यत्र बभूव जन्म।
धन्या च मैना सदृशा सुपुत्री,
या चार्यिका ज्ञानमती बभूव।।

भगवान महावीर निर्वाणभूमि-पावापुरी जल मंदिर

प्रस्तुति–गणिनी ज्ञानमती

पावापुरी में सरोवर के मध्य स्थित जल मंदिर ही भगवान महावीर की निर्वाणभूमि है।

श्री पूज्यपाद आचार्य ने निर्वाणभक्ति में कहा है–

पद्मवनदीर्घिकाकुल-विविधद्रुमखण्डमण्डिते रम्ये। पावानगरोद्याने व्युत्सर्गेण स्थितः स मुनिः।।16।।
कार्तिककृष्णस्यान्ते स्वातावृक्षे निहत्य कर्मरजः। अवशेषं संप्रापद्-व्यजरामरमक्षयं सौख्यम् ।।17।।
परिनिर्वृतं जिनेन्द्रं, ज्ञात्वा विबुधा ह्यथाशु चागम्य। देवतरुरक्तचंदन - कालागुरुसुरभिगोशीर्षैः ।।18।।
अग्नीन्द्राज्जिनदेहं मुकुटानलसुरभिधूपवरमाल्यैः। अभ्यर्च्य गणधरानपि, गता दिवं खं च वनभवने।।19।।

पुनश्च–

पावापुरस्य बहिरुन्नतभूमिदेशे, पद्मोत्पलाकुलवतां सरसां हि मध्ये।
श्रीवर्द्धमानजिनदेव इति प्रतीतो, निर्वाणमाप भगवान् प्रविधूतपाप्मा।।24।।

श्रीगुणभद्र आचार्य ने उत्तरपुराण में कहा है–

क्रमात्पावापुरं प्राप्य मनोहरवनान्तरे। बहूनां सरसां मध्ये महामणिशिलातले।।509।।
स्थित्वा दिनद्वयं वीतविहारो वृद्धनिर्जरः। कृष्णकार्तिकपक्षस्य चतुर्दश्यां निशात्यये।।510।।
स्वातियोगे तृतीयेद्ध-शुक्लध्यानपरायणः। कृतत्रियोगसंरोधः समुच्छिन्नक्रियं श्रितः।।511।।
हताघातिचतुष्कः सन्नशरीरो गुणात्मकः। गन्ता मुनिसहस्रेण निर्वाणं सर्ववाञ्छितम् ।।512।।
तदेव पुरुषार्थस्य पर्यन्तोऽनन्तसौख्यकृत् । अथ सर्वेऽपि देवेन्द्रा वह्नीन्द्रमुकुटस्फुरत् ।।513।।
हुताशनशिखान्यस्त-तद्देहा मोहविद्विषम् । अभ्यर्च्य गन्धमाल्यादि-द्रव्यैर्दिव्यैर्यथाविधि।।514।।
वन्दिष्यन्ते भवातीतमर्थ्यैर्वन्दारवः स्तवैः। वीरनिर्वृतिसम्प्राप्तदिन एवास्तघातिकः।।515।।
भविष्याम्यहमप्युद्यत्केवलज्ञानलोचनः। भव्यानां धर्मदेशेन विहृत्य विषयांस्ततः।।516।।

(उत्तरपुराण, पर्व 76)

यहां अभिप्राय यह है कि पावापुरी के मनोहर नाम के उद्यान में कमलों से व्याप्त सरोवर के मध्य महामणिमयी शिला पर भगवान विराजमान हुए उस समय समवसरण विघटित हो चुका था। श्रीविहार बंद कर दो दिन तक ध्यान में लीन हुए महावीर स्वामी ने कार्तिक कृष्णा चतुर्दशी की रात्रि के अंत में अघातिया कर्मों को नष्ट कर निर्वाणपद प्राप्त कर लिया। तभी सौधर्मेन्द्र आदि इन्द्रों ने अग्निकुमार इन्द्र के मुकुट के अग्रभाग से निर्गत अग्नि पर प्रभु का शरीर स्थापित कर दिव्य चन्दन आदि के द्वारा पूजा करके संस्कार कर दिया। उसी दिन गौतमस्वामी को वहीं पर केवलज्ञान प्रगट हुआ है।

हरिवंशपुराण में भी यही लिखा है एवं दीपावली पर्व तभी प्रारंभ हुआ, ऐसा कहा है–

जिनेंद्रवीरोऽपि विबोध्य संततं, समन्ततो भव्यसमूहसन्ततिम् ।
प्रपद्य पावानगरीं गरीयसीं, मनोहरोद्यानवने तदीयके।।15।।

चतुर्थकालेऽर्धचतुर्थमासकै - र्विहीनताविश्चतुरब्दशेषके ।
स कार्तिके स्वातिषु कृष्णभूतसु-प्रभातसन्ध्यासमये स्वभावतः।।16।।

अघातिकर्माणि निरुद्धयोगको, विधूय घातीन्धनवद् विबंधनः।
विबन्धनस्थानमवाप शंकरो, निरन्तरायोरुसुखानुबन्धनम् ।।17।।
स पञ्चकल्याणमहामहेश्वरः, प्रसिद्धनिर्वाणमहे चतुर्विधैः।
शरीरपूजाविधिना विधानतः, सुरैः समभ्यर्च्यत सिद्धशासनः।।18।।

ज्वलत्प्रदीपालिकया प्रवृद्धया, सुरासुरैर्दीपितया प्रदीप्तया।
तदा स्म पावानगरी समन्ततः, प्रदीपिताकाशतला प्रकाशते।।19।।

तथैव च श्रेणिकपूर्वभूभुजः, प्रकृत्य कल्याणमहं सहप्रजाः।
प्रजग्मुरिन्द्राश्च सुरैर्यथायथं, प्रयाचमाना जिनबोधिमर्थिनः।।20।।
ततस्तु लोकः प्रतिवर्षमादरात्, प्रसिद्धदीपालिकयात्र भारते।
समुद्यतः पूजयितुं जिनेश्वरं, जिनेंद्रनिर्वाणविभूतिभक्तिभाक्।।21।।

(हरिवंशपुराण सर्ग 66)

सार यही है कि भगवान महावीर पावापुरी के मनोहर उद्यान में विराजमान हुए। जब चतुर्थकाल में तीन वर्ष साढ़े आठ मास बाकी रहे तब स्वाति नक्षत्र में कार्तिक अमावस्या के दिन प्रातः-उषाकाल के समय स्वभाव से योग निरोधकर शुक्लध्यान के द्वारा सर्वकर्म नष्ट कर निर्वाण को प्राप्त हो गये। उस समय चार निकाय के देवों ने विधिपूर्वक भगवान के शरीर की पूजा की। अनन्तर सुर-असुरों द्वारा जलायी हुई बहुत भारी देदीप्यमान दीपकों की पंक्ति से पावानगरी का आकाश सब ओर से जगमगा उठा। श्रेणिक आदि राजाओं ने भी प्रजा के साथ मिलकर भगवान के निर्वाणकल्याणक की पूजा की पुनः रत्नत्रय की याचना करते हुए सभी इन्द्र, मनुष्य आदि अपने-अपने स्थान चले गये।

उस समय से लेकर भगवान के निर्वाण कल्याणक की भक्ति से युक्त संसार के प्राणी इस भरतक्षेत्र में प्रतिवर्ष आदरपूर्वक प्रसिद्ध दीपमालिका के द्वारा भगवान महावीर की पूजा करने के लिए उद्यत रहने लगे अर्थात् भगवान के निर्वाणकल्याणक की स्मृति में दीपावली पर्व मनाने लगे।

इन्द्र ने प्रभु के चरण उत्कीर्ण किए–

एक प्रकरण हरिवंशपुराण में आया है कि–

जब भगवान नेमिनाथ गिरनार पर्वत से निर्वाण प्राप्त कर चुके तब इन्द्रों ने भगवान की निर्वाणकल्याणक पूजा के बाद गिरनार पर्वत पर वज्र से चरण उत्कीर्ण कर इस लोक में पवित्र सिद्धशिला का निर्माण किया तथा उसे जिनेन्द्र भगवान के लक्षणों के समूह से युक्त किया। यथा–

ऊर्जयन्तगिरौ वज्री वज्रेणालिख्य पावनीम् । लोके सिद्धशिलां चक्रे जिनलक्षण पङ्क्तिभिः।।14।।

(हरिवंश पुराण सर्ग 65)

श्री समन्तभद्रस्वामी ने भी स्वयंभूस्तोत्र में लिखा है–

ककुदं भुवः खचरयोषिदुषितशिखरैरलंकृतः। मेघपटलपरिवीत तटस्तव लक्षणानि लिखितानि वज्रिणा।।127।।
वहतीति तीर्थमृषिभिश्च, सततमभिगम्यतेऽद्य च। प्रीतिविततहृदयैः परितो, भृशमूर्जयन्त इति विश्रुतोऽचलः।।128।।

बीसवीं सदी के प्रथम आचार्य चारित्रचक्रवर्ती श्रीशांतिसागर जी महाराज के प्रथम पट्टाधीश आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज कहते थे कि-इसी प्रकार से पावापुरी सरोवर के मध्य मणिमयी शिला से भगवान के मोक्ष जाने के बाद इन्द्रों ने वज्र से यहाँ पर भी चरणचिन्ह उत्कीर्ण करके इस शिला को सिद्धशिला के समान पूज्य पवित्र बनाया था।

एक बात यह भी ध्यान देने योग्य है कि भगवान केवलज्ञान होने के बाद पाँच हजार धनुष-बीस हजार हाथ प्रमाण ऊपर आकाश में अधर पहुंच जाते हैं। अधर में ही कुबेर द्वारा समवसरण की रचना की जाती है। जब भगवान श्रीविहार करते हैं तब समवसरण विघटित हो जाता है और भगवान आकाश में अधर चलते हैं तथा देवगण प्रभु के चरणों के नीचे स्वर्णमयी दिव्य कमलों की रचना करते रहते हैं। निर्वाणप्राप्ति के पूर्व भी जब भगवान योग निरोध करते हैं तब वे आकाश में अधर ही रहते हैं फिर भी उनके ठीक नीचे की भूमि भगवान की निर्वाणभूमि मानी जाती है चूँकि सिद्ध भगवान सिद्धशिला पर भी ठीक उसी भूमि के ऊपर विराजमान हैं।

इससे यह स्पष्ट है कि भगवान महावीर स्वामी जहाँ से मोक्ष गये हैं ठीक वहीं पर उनके शरीर का संस्कार किया गया है और वहीं पर सरोवर के मध्य मणिमयी शिला पर इन्द्रों ने चरण उत्कीर्ण किये थे। ऐसे ही सम्मेदशिखर पर्वत के सभी टोकों पर इन्द्रों द्वारा चरण उत्कीर्ण किये गये हैं ऐसा मानना चाहिए।

ऐसी सिद्धभूमि पावापुरी को मेरा अनन्त-अनन्त बार नमस्कार होवे।

पावापुरी सिद्धक्षेत्र पर जलमंदिर से एक फर्लांग आगे जाकर भगवान महावीर स्वामी का एक विशाल दिगम्बर जैन मंदिर है, उसी मंदिर परिसर में नीचे चार जिनालय हैं तथा ऊपर भी चार जिनालय निर्मित हैं जिनमें विराजमान विभिन्न तीर्थंकरों की प्रतिमाएं प्राचीन जैन संस्कृति का दिग्दर्शन कराती हैं। बीसवीं सदी के प्रथम दिगम्बर जैनाचार्य चारित्रचक्रवर्ती श्री शांतिसागर महाराज की श्वेत पाषाण की मनोहारी प्रतिमा भी क्षेत्र पर विराजमान है।

इनके अतिरिक्त पावापुरी तीर्थ पर प्रवेश करते ही जलमंदिर से पहले पाण्डुकशिला उद्यान परिसर पर मेरी प्रेरणा से भगवान महावीर की अवगाहना प्रमाण 7 हाथ खड्गासन लालवर्णी प्रतिमा विराजमान करके नूतन जिनमंदिर का निर्माण सन् 2003 में हुआ है।

क्षेत्र के दिगम्बर जैन मंदिर परिसर में बड़ी-बड़ी धर्मशालाएं भी हैं, जहाँ सम्मेदशिखर से आने वाले यात्री ठहरते हैं और भगवान महावीर की वन्दना-अर्चना करके आगे कुण्डलपुर, राजगृही तीर्थयात्रा के लिए प्रस्थान कर जाते हैं।

* * *

PAWAPURI JALMANDIR- THE SALVATION LAND OF LORD MAHAVIRA

By - Ganini Gyanmati
Translated by - Komalchand Jain, Damoh

The Jal Mandir, situated in the centre of pond abounding in lotuses in Pawapuri, is the Salvation Land of Lord Mahavira.

Shri Pujyapad Acharya has described in Nirvan Bhakti—

पद्मवनदीर्घिकाकुल-विविधद्रुमखण्डमण्डिते रम्ये।
पावानगरोद्याने व्युत्सर्गेण स्थितः स मुनिः ।।16।।

कार्तिककृष्णस्यान्ते स्वातावृक्षे निहत्य कर्मरजः।
अवशेषं संप्रापद्-व्यजरामरमक्षयं सौख्यम् ।।17।।

परिनिर्वृतं जिनेन्द्रं, ज्ञात्वा विबुधा ह्यथाशु चागम्य।
देवतरुरक्तचंदन - कालागुरुसुरभिगोशीर्षैः ।।18।।

अग्नीन्द्राज्जिनदेहं मुकुटानलसुरभिधूपवरमाल्यैः।
अभ्यर्च्य गणधरानपि, गता दिवं खं च वनभवने।।19।।

And furthur—

पावापुरस्य बहिरुन्नतभूमिदेशे, पद्मोत्पला कुलवतां सरसां हि मध्ये।
श्री वर्द्धमानजिनदेव इति प्रतीतो, निर्वाणमाप भगवान् प्रविधूतपाप्मा।।24।।

Shri Gunbhadra Acharya has described in Uttar Puran—

क्रमात्पावापुरं प्राप्य मनोहरवनान्तरे।
बहूनां सरसां मध्ये महामणिशिलातले।।509।।

स्थित्वा दिनद्वयं वीतविहारो वृद्धनिर्जरः।
कृष्णकार्तिकपक्षस्य चतुर्दश्यां निशात्यये।।510।।

स्वातियोगे तृतीयेद्ध-शुक्लध्यानपरायणः।
कृतत्रियोगसंरोधः समुच्छिन्नक्रियं श्रितः।।511।।

हताघातिचतुष्कः सन्नशरीरो गुणात्मकः।
गन्ता मुनिसहस्रेण निर्वाणं सर्ववाञ्छितम् ।।512।।

तदेव पुरुषार्थस्य पर्यन्तोऽनन्तसौख्यकृत् ।
अथ सर्वेऽपि देवेन्द्रा वह्नीन्द्रमुकुटस्फुरत् ।।513।।

हुताशनशिखान्यस्त-तद्देहा मोहविद्विषम् ।
अभ्यर्च्य गन्धमाल्यादि-द्रव्यैर्दिव्यैर्यथाविधि।।514।।

वन्दिष्यन्ते भवातीतमर्थ्यैर्वन्दारवः स्तवैः।
वीरनिर्वृतिसम्प्राप्तदिन एवास्तघातिकः।।515।।

भविष्याम्यहमप्युद्यत्केवलज्ञानलोचनः।
भव्यानां धर्मदेशेन विहृत्य विषयांस्ततः।।516।।

(Uttar Puran, Parva 76)

Here, it means that when Lord Mahavira gets seated on the great Gem-Rock in the middle of pond, abounding in lotuses in Manohar garden of Pawapuri, at that time, the holy assembly of Lord was dissolved. Then, by ceasing the walking activity, He engrossed into the deep meditaiton for two days and destroying all non-destructive Karmas, Lord Mahavira got salvation at the last period of the night of Kartik Krishna Chaturdashi (the 14th day of dark half of the 8th lunar Hindu month). Then, Saudharma Indra with other Indra consecrated the holy body of Lord, after worshipping with divine sandalwood etc. by the lustrous fire, coming out from the crown of the Agnikumar Indra. On the same day Gautam Swami got omniscience.

This has also been described in Harivansh Puran & It is said that Deepawali festival was started then.

जिनेंद्रवीरोऽपि विबोध्य संततं, समन्ततो भव्यसमूहसन्ततिम्।
प्रपद्य पावानगरीं गरीयसीं, मनोहरोद्यानवने तदीयके।।15।।

चतुर्थकालेऽर्धचतुर्थमासकै - र्विहीनताविश्चतुरब्दशेषके ।
स कार्तिके स्वातिषु कृष्णभूतसु-प्रभातसन्ध्यासमये स्वभावतः।।16।।

अघातिकर्माणि निरुद्धयोगको, विधूय घातीन्धनवद् विबंधनः।
विबन्धनस्थानमवाप शंकरो, निरन्तरायोरुसुखानुबन्धनम् ।।17।।

स पञ्चकल्याणमहामहेश्वरः, प्रसिद्धनिर्वाणमहे चतुर्विधैः।
शरीरपूजाविधिना विधानतः, सुरैः समभ्यर्च्यत सिद्धशासनः।।18।।

ज्वलत्प्रदीपालिकया प्रवृद्धया, सुरासुरैर्दीपितया प्रदीप्तया।
तदा स्म पावानगरी समन्ततः, प्रदीपिताकाशतला प्रकाशते।।19।।

तथैव च श्रेणिकपूर्वभूभुजः, प्रकृत्य कल्याणमहं सहप्रजाः।
प्रजग्मुरिन्द्राश्च सुरैर्यथायथं, प्रयाचमाना जिनबोधिमर्थिनः।।20।।

ततस्तु लोकः प्रतिवर्षमादरात्, प्रसिद्धदीपालिकयात्र भारते।
समुद्यतः पूजयितुं जिनेश्वर, जिनेंद्रनिर्वाणविभूतिभक्तिभाक्।।21।।

(Harivansh Puran, Sarg 66)

The conclusion is that Lord Mahavira got seated in the Manohar garden of Pawapuri. When 3 years and 8 & half months were remaining in the completion of Long 4th Kal, then, in the morning, at the day of Kartik Amavasya of Swati lunar at the dawn period, Lord Mahavira got salvated by destroying all the Karmas by absolute deep meditation. At that time the body of Lord was worshipped by deities of 4 different classes. After that with the rows of illuminating lamps lighted by infinite Sur & Asur (deities), the sky of Pawapuri was lit with the dazzling light in all the direction. Many great kings with Shrenik and with their subjects worshipped the holy event of salvation of Lord Mahavira and then all Indras, kings returned to their respective places with repeating wishes for Ratnatraya.

From that time, worldly beings started to celebrated the auspicious event of the salvation of Lord Mahavira with heartly devotion and great reverence, by illuminating the rows of lamps and worshipping the Lord Mahavira every year in Bharat kshetra. It means, people started to celebrated great festival Deepawali in the remembrance of great & auspicious event of Lord Mahavira.

Indra engraved the sacred foot-print of Lord–

There is a reference in Harivansh Puran–

When Lord Neminath got salvated from Girnar mountain, then, Indras worshipped the great salvation event of Lord & then created a holy Siddhashila (Super Salvation Rock) by engraving the sacred foot-print of Lord Neminath. And they enriched the Siddhashila with the auspicious virtues of Lord Jinendra.

ऊर्जयन्तगिरौ वज्री वज्रेणालिख्य पावनीम्।
लोके सिद्धशिलां चक्रे जिनलक्षण पङ्क्तिभिः।।14।।

(Harivansh Puran, Sarg 65)

Also Shri Samantabhadra Swami has written in Svayambhu Stotra.

ककुदं भुवः खचरयोषिदुषितशिखरैरलंकृतः।
मेघपटलपरिवीत तटस्तव लक्षणानि लिखितानि वज्रिणा।।127।।
वहतीति तीर्थमृषिभिश्च, सततमभिगम्यतेऽद्य च।
प्रीतिविततहृदयैः परितो, भृशमूर्जयन्त इति विश्रुतोऽचलः।।128।।

Shri Virsagarji Maharaj, the first chief disciple of the first Acharya of 20th century Charitra Chakravarti Shri Shantisagarji Maharaj told that-In the same way, the Indras engraved the sacred foot-print of Lord Mahavira with the Vajra (thunderbolt) in the middle of the Pawapuri pond after getting the salvation by Lord from the great Gem-Rock and they consecrated the same Gem-Rock like Siddhashila (Super Salvation Rock).

An another important thing, to be noted here, is that after getting omniscience the Lord reaches in the sky at the height of 5000 Dhanush (bow)-measure of 20000 hands. The holy assembly is also created by Kuber (Indra) in the sky. When Lord moves from the destination, then the holy assembly is dissolved, and as soon as the Lord moves in the sky, the deities start to create the golden divine lotuses under the feet of Lord. Also when Lord, before getting salvation, stops His meditation, He remains above in the sky, at that time also the land under Him is considered to be the Salvation Land of Lord, as because of Lord Siddha is also seated on the Siddhashila exactly above the same land.

So it is clear by this reference that the land from where Lord Mahavira got salvation, at the same place, the consecration of his body was got done. And also, at the same place the Indra engraved the sacred foot-print on the great Gem-Rock in the middle of the pond abounding in lotuses. In the same way, it must be considered that the holy foot-prints of Lord are engraved on all the summits of Sammed Shikhar mountain by the Indras.

To such a great & sacred land of salvation, Pawapuri, I pay my infinite reverential bowing.

* * *

भगवान पार्श्वनाथ की निर्वाणभूमि
श्री सम्मेदशिखर जी सिद्धक्षेत्र का परिचय

–आर्यिका अभयमती

जैन वाङ्मय में अयोध्या एवं सम्मेदशिखर ये दो तीर्थ अनादिनिधन एवं शाश्वत माने गये हैं। अयोध्या में सभी तीर्थंकरों का जन्म होता है और सम्मेदशिखर से सभी तीर्थंकर निर्वाण प्राप्त करते हैं किन्तु हुण्डावसर्पिणी के कालदोष से इस शाश्वत नियम में व्यतिक्रम हो गया अतः अयोध्या में केवल पाँच तीर्थंकरों का ही जन्म हुआ और सम्मेदशिखर से केवल बीस तीर्थंकरों ने ही निर्वाण प्राप्त किया किन्तु इनके अतिरिक्त भी असंख्य मुनियों ने यहीं पर तपश्चरण करके मुक्ति प्राप्त की।

शाश्वत सिद्धक्षेत्र होने से सम्पूर्ण तीर्थक्षेत्रों में यह सर्वप्रमुख तीर्थक्षेत्र है इसीलिए इसे तीर्थराज कहा जाता है। प्राकृत निर्वाणकाण्ड में सम्मेदशिखर से बीस तीर्थंकरों के निर्वाण प्राप्ति का उल्लेख करते हुए उन्हें नमस्कार किया गया है, जो इस प्रकार है–

"बीसं तु जिणवरिंदा अमरासुर-वंदिदा धुद-किलेसा।
सम्मेदे गिरि-सिहरे णिव्वाण गया णमो तेसिं।।2।।

चूँकि तेईसवें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ के बाद से यहाँ से कोई तीर्थंकर मोक्ष नहीं गए इसलिए यह पारसनाथ हिल के नाम से जाना जाता है। तिलोयपण्णत्ति नामक ग्रंथ में आचार्य यतिवृषभ ने बीस तीर्थंकरों द्वारा सम्मेदशिखर पर्वत से मुक्ति प्राप्त करने का वर्णन करते हुए भगवान पार्श्वनाथ के बारे में बताया है कि–

सिद सत्तमीपदीसे सावणमासम्मि जम्मणक्खत्ते।
सम्मेदे पासजिणो छत्तीसजुदो गदो मोक्खं।।

अर्थात् पार्श्वनाथ जिनेन्द्र श्रावण मास में शुक्ल पक्ष की सप्तमी को प्रदोषकाल में अपने जन्म नक्षत्र के रहते छत्तीस मुनियों के साथ सम्मेदशिखर से मुक्त हुए।

उत्तरपुराण नामक ग्रंथ में सगर चक्रवर्ती का रोचक कथानक बताते हुए सगर चक्रवर्ती एवं उनके साठ हजार पुत्रों के सम्मेदशिखर से मुक्ति प्राप्त करने का सुन्दर वर्णन आया है। भट्टारक श्री ज्ञानकीर्ति जी द्वारा रचित "यशोधर चरित" में लिखित प्रशस्ति में राजा मानसिंह के मंत्री नानू द्वारा सम्मेदशिखर पर बीस मंदिरों (टोकों) के निर्माण का उल्लेख है।

दिगम्बर मान्यतानुसार तीर्थंकर भगवान जिस स्थान से मुक्त हुए, उस स्थान पर सौधर्मेन्द्र ने चिन्ह स्वरूप स्वस्तिक बना दिया पुनः भक्त श्रावकों ने उन स्थानों पर तीर्थंकरों के चरण स्थापित किए। महामात्य नानू ने जिन मंदिरों अर्थात् टोकों का निर्माण किया था, वे पुराने जीर्ण मंदिरों के स्थान पर ही बनाए गए थे वे ही टोकें अब तक वहाँ विराजमान हैं जिनका वर्तमान में पुनः जीर्णोद्धार कार्य चल रहा है। मन्त्रिवर नानू के पहले यहाँ मंदिर और मूर्तियाँ थीं इस प्रकार के उल्लेख हमें कई ग्रन्थों में मिलते हैं। तेरहवीं शताब्दी के विद्वान यति मदनकीर्ति ने "शासन चतुस्त्रिंशिका" में लिखा है कि–

सोपानेषु.....................दिग्वाससां शासनम्।।11।।

अर्थात् सौधर्म इन्द्र ने बीस तीर्थंकरों की प्रतिमाएं जहाँ प्रतिष्ठित की हैं तथा जो प्रतिमाएँ अपने आकार की प्रभा से तुलनारहित हैं, उस सम्मेदरूपी वृक्ष पर भव्यजन कष्ट उठाकर भी सीढ़ियों द्वारा चढ़कर पुण्योदय से उन प्रतिमाओं की वंदना करते हैं। भव्य के अतिरिक्त उनके दर्शन कोई नहीं कर सकता। यह दिगम्बर धर्म शाश्वत है अर्थात् यहाँ सदा से रहा है। इस वर्णन से यह फलितार्थ निकलता है कि पहले सम्मेदशिखर के ऊपर बीस मंदिर बने हुए थे और उनमें सौधर्मेन्द्र द्वारा प्रतिष्ठित बीस तीर्थंकरों की मूर्तियाँ विराजमान थीं। ये मंदिर कितने बड़े थे और इनका क्या हुआ, यह तो पता नहीं चलता। लेकिन ऐसा लगता है कि ये मंदिर नहीं, बल्कि टोकों के रूप में थे और पहले इन्हीं में मूर्ति

विराजमान होंगी पश्चात् असुरक्षा आदि कारणों से इन मूर्तियों के स्थान पर चरण विराजमान कर दिये गये होंगे और जीर्ण होने पर महामात्य नानू ने इनके स्थान पर ही बीस टोकें या मन्दरियाँ बनवा दी होंगी।

यतिवर्य मदनकीर्ति के काल में सम्मेदशिखर पर एक अमृतवापिका भी थी, जिसमें भक्त लोग अष्टद्रव्यों से बीस तीर्थंकरों के लिए अर्घ्य चढ़ाते थे, यह अमृतवापिका ही वर्तमान में जलमंदिर कहलाता है। भक्तगण अत्यन्त प्राचीन काल से ही सिद्धक्षेत्र सम्मेदगिरि की पुण्यप्रदायिनी यात्रा के लिए जाते रहे हैं। इन यात्राओं के विवरण पुराण ग्रंथों, कथांकोषों और विविध भाषाओं में निबद्ध यात्रा-विवरण-काव्यों तथा ग्रन्थ-प्रशस्तियों में मिलते हैं। उत्तरपुराण ग्रंथ में ही सम्मेदशिखर यात्रा के संदर्भ में भगवान पार्श्वनाथ के दस भव पूर्व के राजा पोदनपुर नरेश अरविन्द (मरुभूति इनके मंत्री थे) का वर्णन आता है जिन्होंने दीक्षा लेने के बाद सम्मेदशिखर यात्रा के लिए जाते समय मरुभूति के जीव मदोन्मत्त हाथी को सम्बोधन प्रदान कर अणुव्रत देकर सात्त्विक बना दिया था। यही हाथी का जीव आगे जाकर कठोर साधना से तेईसवाँ तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ बना जिन्होंने इसी सम्मेदशिखर से मुक्ति प्राप्त की। मुनिराज अरविन्द ने भी इस पर्वत से मोह का क्षयकर घातिया कर्मों का नाश कर केवलज्ञान प्राप्त किया और वहीं से मोक्ष प्राप्त किया।

तीर्थराज सम्मेदशिखर (पारसनाथ हिल) वर्तमान में झारखंड प्रदेश के गिरिडीह जिले में स्थित है। यहाँ पहुँचने के लिए रेलवे के कई मार्ग हैं, भारत सरकार द्वारा भगवान पार्श्वनाथ के नाम से एक ट्रेन भी "पारसनाथ एक्सप्रेस" चलायी गयी है। पारसनाथ स्टेशन के सामने ही एक फर्लांग की दूरी पर ईसरी में दो दिगम्बर जैन धर्मशालाएं बनी हुई हैं, एक तेरापंथी और दूसरी बीसपंथी, दोनो निकट-निकट हैं। तेरापंथी धर्मशाला में सुविधाजनक कमरे, कुंआ आदि के साथ एक विशाल चौक है, मुख्य द्वार से फाटक की दायीं ओर शिखरबंद मंदिर है, मंदिर के बराबर में एक छतरी के नीचे चरण विराजमान हैं। दोनों कोठियों के बीच की गली में उदासीनाश्रम का प्रवेशद्वार है। इस संस्था का नाम श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन शान्ति निकेतन उदासीनाश्रम है जिसकी स्थापना पूज्य क्षुल्लक श्री गणेशप्रसाद जी वर्णी ने की थी। इसमें विरक्त त्यागी, ब्रह्मचारी आदि धर्मसाधना की भावना से रहते हैं। संस्था में त्यागीभवन, स्वाध्यायशाला, सरस्वती भवन, धर्मध्यानाश्रम आदि हैं। प्रवेश द्वार के बाईं ओर त्यागी भोजनशाला है। प्रांगण में 25 फुट ऊँचा वर्णी जी का समाधिस्तूप है, स्तूप से आगे पार्श्वनाथ जिनालय का भव्य भवन है। मंदिर के बगल में मुमुक्षु महिलाश्रम को मार्ग जाता है। महिलाश्रम के जिनालय में एक विशाल हॉल है जिसमें साढ़े 4 फुट अवगाहना वाली भगवान पार्श्वनाथ की प्रतिमा विराजमान है।

ईसरी से लगभग 22 किमी. पर मधुबन है। मधुबन पर्वत के उत्तरी भाग की ओर है। मधुबन में तेरापंथी और बीसपंथी दो कोठियाँ अर्थात् धर्मशालाएं हैं।

पहाड़ पर ऊपर चढ़ने पर सर्वप्रथम गौतम स्वामी की टोंक है, टोंक के बायें हाथ की ओर मुड़कर पूर्व दिशा की तरफ पन्द्रह टोंक हैं जो कूट कहलाते हैं वे क्रमशः इस प्रकार हैं-

1. कुंथुनाथ का ज्ञानधर कूट 2. नमिनाथ का मित्रधर कूट 3. अरहनाथ का नाटक कूट 4. मल्लिनाथ का संबल कूट 5. श्रेयांसनाथ का संकुल कूट 6. पुष्पदंत का सुप्रभ कूट 7. पद्मप्रभु का मोहन कूट 8. मुनिसुव्रतनाथ का निर्जर कूट 9. चन्द्रप्रभु का ललित कूट 10. आदिनाथ भगवान का कूट 11. शीतलनाथ का विद्युत कूट 12. अनन्तनाथ का स्वयंभू कूट 13. संभवनाथ का धवल कूट 14. वासुपूज्य कूट (यहाँ 5 चरण बने हैं) 15. अभिनन्दननाथ का आनन्द कूट।

इन टोकों में चन्द्रप्रभु टोंक बहुत ऊँची हैं, अभिनंदननाथ की टोंक से उतरकर जलमंदिर आते हैं, यहाँ एक विशाल मंदिर बना हुआ है, जिसके चारों ओर जल भरा है, पहले इस मंदिर में दिगम्बर वीतराग प्रतिमाएं विराजमान थीं, दोनों सम्प्रदाय के लोग यहाँ दर्शन-पूजन करते थे किन्तु धीरे-धीरे श्वेताम्बरों ने मंदिर पर अपना अधिकार कर लिया है।

यहाँ से गौतम स्वामी की टोंक पर पहुँचते हैं। इस स्थान से चारों ओर रास्ते जाते हैं, किन्तु यात्रा पूरी करने हेतु यहां से पश्चिम दिशा की ओर जाकर नौ टोकों की वन्दना सभी लोग करते हैं। इनमें–1. धर्मनाथ का सुदत्तवरकूट 2. सुमतिनाथ का अविचल कूट 3. शांतिनाथ का शांतिप्रभ कूट 4. महावीर का कूट 5. सुपार्श्वनाथ का प्रभास कूट 6. विमलनाथ का सुवीर कूट 7. अजितनाथ का सिद्धवर कूट 8. नमिनाथ का मित्रधर कूट एवं 9. पार्श्वनाथ का

सुवर्णभद्र कूट है।

इन टोकों में भगवान पार्श्वनाथ की यह टोंक सबसे ऊँची है। इस टोंक पर खड़े होकर चारों ओर की आल्हादपूर्ण दृश्यावली में मन ध्यान, सामायिक और पूजा-स्तोत्र में स्वतः निमग्न हो जाता है।

टोंक के जीर्णोद्धार के बारे में यह भी कहा जाता है कि सम्राट् श्रेणिक ने जीर्ण टोकों के स्थान पर भव्य टोकों का निर्माण कराया था। वर्तमान में सम्मेदशिखर जी सिद्धक्षेत्र पर दिगम्बर एवं श्वेताम्बर दोनों सम्प्रदाय के लोगों का समान अधिकार है। अर्थात् दोनों संप्रदाय के लोग उनकी पूजा-अर्चना अपनी-अपनी आम्नाय अनुसार करते हैं।

शाश्वततीर्थ सम्मेदशिखर में मुख्यरूप से बीसपंथी-तेरहपंथी कोठी के साथ-साथ पिछले 25-30 वर्षों से अनेक नवनिर्माणों के द्वारा भारी विकास कार्य हुआ है। पूज्य आचार्यश्री विमलसागर जी महाराज की प्रेरणा से समवसरण मंदिर, तीस चौबीसी मंदिर आदि के विशाल निर्माण, अर्यिका श्री इन्दुमती माताजी की प्रेरणा से मध्यलोक रचना, आचार्यश्री संभवसागर महाराज की प्रेरणा से त्रियोग आश्रम, आचार्यश्री सुमतिसागर महाराज की प्रेरणा से त्यागी-व्रती आश्रम आदि निर्माणों के साथ वहाँ अनेक संस्थाएँ अपने-अपने नवनिर्माण आदि कार्यकलापों के द्वारा सिद्धक्षेत्र की गरिमा वृद्धि में अपना सक्रिय योगदान प्रदान कर रही हैं। इसी शृँखला में पर्वतराज के चौपड़ा कुण्ड पर स्थित दिगम्बर जैन मंदिर एवं धर्मशाला यात्रियों के लिए विशेष सुविधा प्रदान करते हुए यात्रा के आनंद को द्विगुणित कर देते हैं।

पिछले वर्ष मार्च 2003 में जैन समाज की वरिष्ठतम साध्वी परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ससंघ सम्मेदशिखर पहुँची और वहाँ अनेक संस्थाओं द्वारा की जा रही प्रगति देखकर अत्यंत प्रसन्न हुईं। पूज्य माताजी ने तीर्थराज की सात वन्दना करने के साथ-साथ वहाँ भगवान ऋषभदेव की विशाल प्रतिमा एवं मंदिर के रूप में अपनी एक लघु भेंट समर्पित की। जो कि चौबीसी मंदिर-बाहुबली वाले प्रांगण में कमलाकृति जिनमंदिर के रूप में निर्मित् होकर जैनधर्म की अतिप्राचीन संस्कृति का दिग्दर्शन करा रहे हैं।

इस प्रकार संक्षिप्त रूप में हमें यह जानना है कि इस सिद्धक्षेत्र से बीस तीर्थंकरों के अतिरिक्त असंख्य मुनिराज समय-समय पर मुक्त हुए हैं इसलिए यह क्षेत्र अत्यन्त पवित्र है। इसका कण-कण पवित्र है यही कारण है कि इस तीर्थ पर सिंह, व्याघ्र, हिरण आदि अनेकों जाति विरोधी और हिंसक प्राणी विचरते देखे गए हैं किन्तु कभी किसी का अहित नहीं हुआ यह सब तीर्थराज का प्रभाव है। यहाँ के वातावरण में पवित्रता और शुचिता की भावना सदैव बनी हुई है। यात्री के मन में व्यक्त अथवा अव्यक्त रूप में की यह पंक्ति सदा अंकित रहती है–

"एक बार वन्दे जो कोई,
ताहिं नरक-पशु गति नहीं होई।"

शास्त्रों में तो शिखरजी की वंदना करने का फल बताया है कि वह व्यक्ति फिर संसार में अधिक से अधिक 49 भव धारण करने के बाद मोक्ष प्राप्त कर लेता है। ऐसे पावन तीर्थराज को शत-शत नमन।

* * *

जहाँ अनन्तों तीर्थंकर ने सिद्धधाम पाया है।
सिद्धक्षेत्र सम्मेदशिखर सिरमौर तीर्थ गाया है।।
उस बिहार प्रान्त ने पावनता का ध्वज लहराया।
ज्ञानमती माता ने जिसका अन्तस अलख जगाया।।

दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीर जी

प्रस्तुति–कर्मयोगी ब्र.रवीन्द्र कुमार जैन

दिगम्बर जैन संस्कृति की अमूल्य विरासत अतिशय क्षेत्र श्री महावीर जी तीर्थ वर्तमान में जैनसमाज के लिए सम्पूर्ण भारत का गौरव स्थल है। यह राजस्थान प्रान्त के करौली जिले के हिण्डौन उपखण्ड में गंभीर नदी के पश्चिमी तट पर चांदन गाँव में स्थित है। भगवान महावीर की अतिशययुक्त प्रतिमा के कारण यह स्थान "श्री महावीर जी" के नाम से सुविख्यात है।

चांदनपुर के महावीर की शान्त, मनोज्ञ, तेजोमूर्ति, अतिशयकारी दिगम्बर प्रतिमा के दर्शन ही भक्त के मन को बांध लेती है और वह टकटकी लगाए उस आनन्द में खो जाता है, बरबस आँखों से आनन्दाश्रु बहने लगते हैं। अंग-अंग रोमांचित हो उठता है, समर्पण, श्रद्धा और विश्वास के फूल खिल उठते हैं। वात्सल्यमयी मूर्ति से अनबोला संवाद होता है। भक्त को ऐसा आभास होता है कि समवसरण में विद्यमान तीर्थंकर के सारे अतिशय उसे अनुभूत हो रहे हैं और उसके मन में दिव्यध्वनि का प्रसार हो रहा है। आध्यात्मिक जन यहाँ से अध्यात्म को परिपुष्ट करते हैं तथा लौकिक जन अपनी लौकिक इच्छाओं की पूर्ति करते हैं।

सर्वधर्म समभाव का प्रतीक यह सर्वोदय तीर्थ, तीर्थंकरों की परम्परा में 24वें तीर्थंकर श्री महावीर स्वामी की प्रतिमा का उद्भव स्थल है। बिहार प्रान्त के नालंदा जिले में स्थित कुण्डलपुर में आज से 2602 वर्ष पूर्व चैत्र शुक्ला त्रयोदशी तिथि में माता त्रिशला की पवित्र कुक्षि से जन्मे महावीर ने जनमानस में अहिंसा, अपरिग्रह और अनेकांत के मूल्यों की प्रतिष्ठा कर प्राणीमात्र के कल्याण का मार्ग प्रशस्त किया है।

इस तीर्थक्षेत्र के प्रादुर्भाव के बारे में ऐसा बताया जाता है कि लगभग 400 वर्ष पूर्व चांदन गांव में विचरण करने वाली एक गाय का दूध गंभीर नदी के पास एक टीले पर स्वतः ही झर जाता था। गाय जब कई दिनों तक बिना दूध के घर पहुँचती रही तो ग्वाले ने कारण जानने के लिए गाय का पीछा किया। जब ग्वाले ने यह चमत्कार देखा तो उत्सुकतावश उसने टीले की खुदाई की। वहीं भगवान महावीर की यह दिगम्बर प्रतिमा प्रगट हुई। मूर्ति के चमत्कार और अतिशय की महिमा तेजी से सम्पूर्ण क्षेत्र में फैल गई। सभी धर्म, जाति और सम्प्रदाय के लोग भारी संख्या में दूर-दूर से दर्शनार्थ आने लगे, उनकी मनोकामनाएं पूर्ण होने लगीं, क्षेत्र मंगलमय हो उठा। समय के प्रवाह में विकसित होता यह तीर्थ आज सम्पूर्ण भारत का गौरवस्थल बन गया है।

अतिशयकारी भगवान महावीर की प्रतिमा से प्रभावित होकर बसवा निवासी श्री अमरचंद बिलाला ने यहाँ एक मंदिर का निर्माण करवाया। इस मंदिर के चारों ओर दर्शनार्थियों के ठहरने के लिए कमरों का निर्माण भक्तजनों के सहयोग से कराया गया जिसे "कटला" कहा जाता है। कटले के मध्य में स्थित है मुख्य मंदिर। इस विशाल जिनालय के गगनचुम्बी धवल शिखर एवं स्वर्ण कलशों पर फहराती जैनधर्म की ध्वजाएँ रत्नत्रय (सम्यग्दर्शन, ज्ञान व चारित्र) का संदेश देती प्रतीत होती हैं। मंदिर की पार्श्ववेदी में मूलनायक के रूप में भूगर्भ से प्राप्त भगवान महावीर की प्रतिमा विराजित है तथा दायीं ओर तीर्थंकर पुष्पदंत एवं बायीं ओर तीर्थंकर आदिनाथ की प्रतिमाएं विराजमान की गई हैं। मंदिर के भीतरी एवं बाहरी प्रकोष्ठों में संगमरमरी दीवारों पर बारीक खुदाई से तथा स्वर्णिम चित्रांकन कराकर मंदिर की छटा को आकर्षक व प्रभावशाली बनाया गया है। मंदिर की बाह्य परिक्रमा में कलात्मक भाव उत्कीर्ण किये गए हैं। मंदिर के मुख्य प्रवेश द्वार की सीढ़ियों को सुविधाजनक एवं आकर्षक स्वरूप दिया गया है। श्री महावीर जी में मुख्य मंदिर के अलावा गत वर्षों में 4 और मंदिरों का निर्माण हुआ। 1. शांतिवीर नगर में विशाल खड्गासन प्रतिमा एवं अन्य तीर्थंकर प्रतिमा 2. कीर्ति आश्रम चैत्यालय 3. सन्मति धर्मशाला के सामने ब्र. कमलाबाई द्वारा भगवान पार्श्वनाथ जिनालय (काँच का मंदिर) 4. ब्र. कृष्णाबाई द्वारा संचालित मुमुक्षु महिलाश्रम का जिनमंदिर।

वर्तमान में मुख्य मंदिर में जहाँ भगवान महावीर की मूलनायक प्रतिमा विराजमान है, उसके नीचे की मंजिल में ही प्राचीन लाल पाषाण से निर्मित कलात्मक मंदिर विद्यमान है जिसे 'ध्यान केन्द्र' के रूप में विकसित किया गया है। यहाँ भगवान महावीर का एक विशाल चित्र शोभायमान है। भक्तजन निर्विकार, एकाग्रता से मूलनायक भगवान महावीर के चित्र के समक्ष बैठकर ध्यानमग्न हो सकें इस भावना के साथ ध्यान केन्द्र को तैयार किया गया है।

भगवान महावीर की प्रतिमा के उद्भव स्थल पर एक कलात्मक छत्री में भगवान के चरण चिन्ह प्रतिष्ठित हैं। आज भी यहाँ दुग्धाभिषेक करने की होड़ सी लगी रहती है। यहाँ चढ़ने वाली सामग्री और राशि आज भी उसी ग्वाले के वंशज को प्राप्त होती है, जिसने प्रतिमाजी को भूमि से निकालने का सौभाग्य प्राप्त किया था। इस छत्री के चारों ओर आकर्षक उद्यान विकसित किया गया है। इस उद्यान में चरणचिन्ह छत्री के सामने वाले भाग में 29 फीट ऊँचा 'महावीर स्तूप' है जिसके फलकों पर भगवान महावीर के उपदेश अंकित हैं। यह स्तूप भगवान महावीर के 2500वें निर्वाणोत्सव के पावन उपलक्ष्य में निर्मित किया गया था। चरणचिन्ह छत्री के पीछे वाले भाग को आधुनिक "बालवाटिका" का स्वरूप दिया गया है, इसमें एक आकर्षक 'बारहदरी' भी बनाई गई है। दूर-दूर से आए भक्तजन चरणचिन्ह छत्री के बाहर ही बालकों का पारम्परिक मुण्डन संस्कार आदि करवाकर अपनी आस्था और विश्वास प्रगट करते हैं।

मंदिर के मुख्य द्वार के सम्मुख 52 फुट ऊँचा संगमरमर से निर्मित कलात्मक मानस्तंभ है जिसके शीर्ष पर चार तीर्थंकरों की प्रतिमाएँ हैं। यह भव्य मानस्तंभ यात्रियों को दूर से ही आकर्षित करता है।

क्षेत्र पर विभिन्न नामों की 7 धर्मशालाएँ अवस्थित हैं।

क्षेत्र पर अन्य कई सेवाभावी संस्थाएँ हैं–

1. मंदिर के पश्चिम की ओर लगभग एक फ़र्लांग की दूरी पर कृष्णाबाई जी द्वारा संचालित महिला विद्यालय है जिसमें एक विशाल मंदिर है।

2. मंदिर से पूर्व की ओर नदी की तरफ आदर्श महिला विद्यालय है। इसमें हाईस्कूल तक की शिक्षा दी जाती है, वर्तमान में क्षेत्र और समाज के सहयोग से आश्रम का विशाल भवन निर्मित हो चुका है। इसकी संचालिका ब्र. कमलाबाई जी हैं।

3. शान्तिवीरनगर – यह नदी के दूसरी ओर पूर्वी किनारे पर स्थित है। इसकी स्थापना चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागर महाराज के द्वितीय पट्टाचार्य स्व. आचार्यश्री शिवसागर जी महाराज की प्रेरणा से आचार्यश्री शांतिसागर जी महाराज और आचार्यश्री वीरसागर जी महाराज के नाम पर की गई है। यहाँ 28 फीट ऊँची शांतिनाथ भगवान की विशाल मूर्ति के अतिरिक्त 24 तीर्थंकरों और उनके शासन देवी-देवताओं की मूर्तियाँ विराजमान हैं। मंदिर के समक्ष मानस्तंभ बना हुआ है। मंदिरके एक ओर शान्तिवीर जैन गुरुकुल है। इसके सामने ही क्षेत्र से संबंधित कीर्ति आश्रम है जहाँ एक चैत्यालय है जिसकी स्थापना ब्र. कीर्तिलाल जी ने कराई थी।

यहाँ के वार्षिक मेला की विशेष प्रसिद्धि है। महावीर जयंती के अवसर पर यहाँ प्रतिवर्ष चैत्र शुक्ला तेरस से वैशाख कृष्णा द्वितीया तक 5 दिवसीय लक्खी मेला लगता है। इस मेले में साम्प्रदायिक, राष्ट्रीय एवं भावनात्मक एकता के प्रत्यक्ष दर्शन होते हैं। भारत में यह दिगम्बर जैन तीर्थ ऐसा धार्मिक स्थल है जहाँ जैन ही नहीं अपितु सभी वर्ग के लोग सम्मिलित होकर भगवान का दर्शन-वन्दन-जयकार कर मनौतियाँ मनाते हैं। वार्षिक मेले का मुख्य आकर्षण वैशाख कृष्णा प्रतिपदा को निकलने वाली आकर्षक एवं भव्य रथयात्रा होती है। रथ का संचालन परम्परानुसार हिण्डौन के उपजिला कलेक्टर राज्यसरकार के प्रतिनिधि के रूप में सारथी बनकर करते हैं। इस प्रकार धार्मिक भावनाओं से ओत-प्रोत इस मेले को राजकीय प्रतिष्ठा एवं मान्यता प्राप्त होती है। जिला कलेक्टर द्वारा मेले के दिन सम्पूर्ण जिले में राजकीय अवकाश घोषित किया जाता है।

यहाँ चलती ट्रेन से भगवान के दर्शन होते हैं अर्थात् दिल्ली, मुम्बई ब्रॉडगेज लाइन पर स्थित श्री महावीर जी रेलवे स्टेशन पर चलती ट्रेन से भगवान के दर्शन की व्यवस्था है। स्टेशन के प्लेटफार्म पर 15 फीट ऊँचे विशाल चित्र स्तंभ का निर्माण किया गया है। इस स्तंभ में स्थाई रूप से भगवान महावीर के 4 × 6 फीट साइज के बड़े चित्र, तीर्थ क्षेत्र के विहंगम चित्रों के साथ लगाए गए हैं। स्तंभ के दोनों ओर चित्र हैं और यात्री बिना प्लेटफार्म पर उतरे बैठे-बैठे ही ट्रेन से भगवान महावीर के दर्शन कर अपने आपको सौभाग्यशाली समझते हैं। राजस्थान के कत्थई रंग के ग्रेनाइट पत्थर से बने इस स्तंभ के बींच किंक्रल ग्लास में जड़ित बड़े चित्र लगाए गए हैं। रात्रि में इसे स्पष्ट देखने हेतु रोशनी का आवश्यक प्रबंध भी है।

श्री महावीर जी मंदिर और क्षेत्र का प्रबंध प्रारंभ से ही जयपुर के दिगम्बर जैनियों की पंचायत की ओर से मूलसंघ आम्नाय के आमेर गद्दी के दिगम्बर जैन भट्टारकों द्वारा होता था। इन भट्टारकों की नियुक्ति दिगम्बर जैन पंचायत करती थी और जयपुर राज्य की सरकार मान्यता देती थी। सन् 1998 में भट्टारक श्री महेन्द्रकीर्ति जी के निधन के बाद जयपुर की दिगम्बर जैन पंचायत ने परम्परानुसार भट्टारक श्री चन्द्रकीर्ति जी को पदस्थापित किया। सन् 1923 में जब गांव के

जमींदार हासिल देने में आनाकानी करने लगे तो जयपुर की दि. जैन पंचायतों के आग्रह पर जयपुर राज्य के कोर्ट ऑफ वार्ड्स द्वारा प्रबंध किया गया तथा दिगम्बर जैन पंचायतों की ओर से क्षेत्र पर एक मोतमिद निरन्तर मनोनीत रहा। सन् 1923 से 1930 तक क्षेत्र का प्रबंध कोर्ट ऑफ वार्ड्स ने किया। सन् 1930 में दिगम्बर जैन पंचायतों को उनके आवेदन पर प्रबंध वापिस संभला दिया गया। तभी से निरन्तर राज्य की मान्यता प्राप्त दिगम्बर जैन पंचों की कमेटी क्षेत्र का सम्पूर्ण प्रबंध कर रही है। दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीर जी, राजस्थान सार्वजनिक प्रन्यास अधिनियम के अंतर्गत रजिस्टर्ड प्रन्यास है और इसकी प्रबंधकर्ता "प्रबंधकारिणी कमेटी, दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीर जी" सोसाइटीज रजिस्ट्रेशन एक्ट के अंतर्गत रजिस्टर्ड संस्था है। सम्पूर्ण दिगम्बर जैन समाज एवं भक्तजनों के सहयोग से यह क्षेत्र निरन्तर प्रगति पथ की ओर अग्रसर है।

* *

भगवान महावीर की उपसर्ग विजयभूमि ऐतिहासिक तीर्थ उज्जैन

–उमेश जैन, फिरोजाबाद

भारतीय भूभाग के वर्तमान में मध्य प्रदेश में क्षिप्रा नदी के तट पर बसी उज्जैन नगरी भरत क्षेत्र के इस आर्यावर्त्त की अतिप्राचीन नगरियों में से एक है। इसके अतीत की प्रमाणिकता पौराणिक ग्रंथों और इतिहास में वर्णित कथानकों, घटनाओं से प्रमाणित है। जैन, शैव, वैष्णव पुराणों में इसका और इससे जुड़े घटनाक्रमों का प्रचुरता से वर्णन है। आचार्य जिनसेन कृत आदिपुराण, आचार्य गुणभद्र कृत उत्तरपुराण, हरिषेण कथाकोष आदि जैन ग्रंथों में इसका वर्णन अनेक बार आया है।

आदिब्रह्मा भगवान ऋषभदेव ने जब पूरे आर्यावर्त्त की प्रशासनिक व्यवस्था की तब उन्होंने 52 जनपदों में इस देश की सीमाओं का विभाजन किया। ऐसा कथन आचार्य जिनसेन कृत आदिपुराण में पर्व 16-काव्य गाथा 152 से 156 में वर्णित है। इन्हीं जनपदों में अवन्ती नाम से जिस जनपद का गठन हुआ, उसमें मालवा से लेकर सिंध तक का भूभाग सम्मलित था। अवन्ती की राजधानी अवन्तिका थी जो बाद में उज्जयिनी या उज्जैन कहलाई। उज्जैन का भारतीय इतिहास में अतिमहत्वपूर्ण स्थान रहा है।

उज्जैन की राजनीतिक पृष्ठभूमि–

भगवान महावीर के समय में उज्जैन एक विशाल और वैभवशाली साम्राज्य की राजधानी था। इस विषय पर दिगम्बर-श्वेताम्बर ग्रंथों से लेकर अनेक ग्रंथों में इस विषय में प्रचुर मात्रा में लिखा गया है। इनमें प्रमुख है आदिपुराण, उत्तरपुराण, सुकुमाल चरित्र, महाकवि पुष्पदन्त कृत जसहरचरिउ, करकण्डचरिउ तमिलरचना सिल्प्यादिकारम्, कल्पसूत्र भाष्य, समयसुन्दर कृत कलिकाचार्य कथा, मौर्यकाल का भारतीय इतिहास आदि अनेकानेक ग्रंथों में उज्जैन का कथन बार-बार आया है।

ईसा से लगभग साढ़े तीन सदी पूर्व मौर्य सम्राट् चन्द्रगुप्त के द्वारा एक विशाल साम्राज्य की रचना भारतीय भूभाग में हुई जिसमें वर्तमान सम्पूर्ण भारत से लेकर काबुल कंधार तक का भूभाग सम्मिलित था। मौर्य साम्राज्य की राजधानी पाटिलीपुत्र वर्तमान में पटना थी। मौर्य शासकों को इस विशाल साम्राज्य को संचालित करने के लिए उज्जैन और तक्षशिला दो उपराजधानियों की स्थापना की। उज्जैन में उपशासक के रूप में युवराज (साम्राज्य का भावी शासक) प्रमुख शासक के रूप से स्थाई रूप से रहते थे। यह व्यवस्था चन्द्रगुप्त से लेकर विन्दुसार, अशोक, कुनाल व सम्प्रति तक नियमित चलती रही। समय-समय पर सम्राट् उज्जैन आकर भी कुछ समय तक निवास करते थे। सम्राट् चन्द्रगुप्त के समय अनेक ऐतिहासिक घटनाएं घटी यह समय अन्तिम श्रुत केवली आचार्य भद्रबाहु स्वामी का था। सम्राट् चन्द्रगुप्त ऐसे अंतिम मुकुटधारी शासक थे जिन्होंने दिगम्बर दीक्षा धारण की।

इसके बाद गर्दमिल्ल वंश का शासन उज्जैन में रहा। उस समय श्वेताम्बर आचार्य कालकाचार्य से कुछ इस प्रकार का घटनाक्रम घटा कि उन्होंने गर्दमिल्ल के विरुद्ध शकों को उज्जैन पर आक्रमण करने के लिए कहा और उज्जैन पर शकों का अधिकार हो गया। गर्दमिल्ल के पुत्र विक्रमादित्य ने शकों को परास्त करके पुनः उज्जैन पर अधिकार किया तथा इस विजय के रूप में विक्रम सम्वत् का प्रचलन किया यह समय ईसा से पूर्व पहली सदी के मध्यकाल का था।

इसके करीब 135 वर्ष बाद शकों ने पुनः उज्जैन पर अधिकार करके शक सम्वत् प्रारंभ किया। इस प्रकार विक्रम सम्वत् तथा शक सम्वत् की जन्मभूमि उज्जैन नगरी ही है।

सातवीं सदी में उज्जैन के शासकों पर शंकराचार्य का भरपूर प्रभाव रहा। उज्जैन नरेश सुघन्व ने तक बौद्धों को अपने राज्य से पूर्णरूपेण भगा दिया था। परमार वंश के शासकों में मुंज एवं भोज का शासनकाल इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में अंकित है। मुंज के समय राजधानी धारा नगरी में स्थापित की गई थी। सम्राट् भोज ने उसे पुनः उज्जैन में स्थापित किया। भोज के समय में भी जैनधर्म का यहाँ पूर्ण प्रभाव था अनेक ऐतिहासिक घटनाओं और अनेक जैन विद्वानों, श्रमणजनों की चर्चा इस इस काल में इतिहास प्रसिद्ध है तथा वह अनेक ग्रंथों में वर्णित है। स्थानाभाव से इन सबकी चर्चा यहाँ करना संभव नहीं है। यहाँ हम भगवान महावीर से संबंधित व एक दो प्रमुख घटनाओं की ही चर्चा करेंगे।

भगवान महावीर और उज्जैन–

आचार्य भगवन्त गुणभद्र कृत उत्तरपुराण के पर्व 74 में काव्यगाथा 331 से 337 में वर्णित घटना क्रम इस प्रकार है। कैवल्य प्राप्ति से पूर्व एक बार भगवान वर्द्धमान बिहार करते हुए उज्जैन आए और वह उज्जैन के अतिमुक्तक श्मशान में प्रतिमायोग में ध्यानस्थ होकर तप करने लगे। उसी समय वहाँ एक रूद्र ने उन्हें देखकर उनका ध्यान भंग करने के लिए अनेक प्रकार से उपद्रव करना प्रारंभ किया। भयंकर मुखाकृति करके एवं भयभीत करने वाली आवाजों व चीत्कार द्वारा उसने घोर उपद्रव किया। अग्नि की भयंकर ज्वालाओं के साथ तेज हवाओं आदि भयभीत करने वाली क्रियाओं से जब भगवान का ध्यान भंग नहीं हुआ तब वह अपने मात्सर्य भाव से हटकर उनके चरणों में नतमस्तक हो गया। भगवान की दृढ़ता, गंभीरता देख उसने उन्हें महतिमहावीर कहकर उनकी अर्चना की और अपने स्थान को वापस चला गया।

वर्तमान में उज्जैन का वह स्थान "जयसिंहपुरा" तीर्थ के नाम से जाना जाता है। मार्च सन् 1996 में पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी का उज्जैन में पदार्पण हुआ तब उन्होंने भगवान महावीर की इस उपसर्ग विजयभूमि पर प्राचीन इतिहास को साकार करने की अनेकानेक प्रेरणाएं प्रदान की थीं, जो वहाँ यथाक्रम साकार हो रही हैं। उनमें से भगवान महावीर तपस्यारत खड्गासन प्रतिमा शीघ्र ही विराजमान होने वाली हैं।

संघ विच्छेद की पृष्ठभूमि और अंतिम सम्राट् की दीक्षा की साक्षी उज्जैन–

ईसा से लगभग 350 वर्ष पूर्व जब मौर्य साम्राज्य की उपराजधानी उज्जैन थी। सम्राट् चन्द्रगुप्त उन दिनों उज्जयिनी प्रवास पर थे। सम्राट् के गुरु तथा अंतिम श्रुत केवली आचार्य भगवन्त भी अपने विशाल संघ के साथ उज्जैन क्षेत्र में ही थे। उस काल में दो प्रमुख घटनाएं एक साथ में घटी, एक घटना में एक दिन रात्रि के अंतिम प्रहर में सम्राट् चन्द्रगुप्त ने 16 स्वप्न देखे जिनमें उन्हें अनेक घटनाएँ संकेत रूप घटित दिखाई दीं। दूसरी घटना स्वयं आचार्य भगवन्त के साथ घटित हुई। वह आचार्यचर्या के लिए नगर में आये और पड़गाहन के समय दाता के घर में प्रवेश कर रहे थे तब वहाँ पालने में लेटे एक नवजात शिशु के मुँह से जाओ जाओ के शब्द सुनाई पड़े। आचार्यश्री बिना आहार किये वापस अपने स्थान लौट गए। वहाँ उन्होंने इस घटना पर विचार किया और अपने निमित्त ज्ञान से जाना कि उत्तर भारत में आगे आने वाले समय में घोर दुर्भिक्ष पड़ेगा और यह 12 वर्ष तक प्रभावी रहेगा। उधर सम्राट् भी अपने स्वप्न का प्रतिफल ज्ञात करने उनके चरणों में पहुँचे। सम्राट् के स्वप्न सुनकर आगे भविष्य में घटित होने वाली घटनाओं के संकेत में स्वप्नों का भवितव्य उन्होंने सम्राट् को बताया। सम्राट् को उन्होंने आने वाले दुर्भिक्ष के बारे में बताकर समस्त संघ को दक्षिण की तरफ विहार करने की बात कही।

आचार्य की बात सुनकर सम्राट् ने अपना राजभार अपने पुत्र को सौंप कर स्वयं भवतारणी जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहण करने की घोषणा की और अंतिम श्रुत केवली आचार्य भद्रबाहु स्वामी से दीक्षा धारण कर ली। आचार्यश्री ने समस्त दिगम्बर श्रमणों से दक्षिण की तरफ विहार करने की सूचना भेजी और स्वयं नवदीक्षित अपने शिष्य सम्राट् चन्द्रगुप्त (मुनि प्रभाचन्द्र) व बारह हजार श्रमणों को साथ लेकर दक्षिण की ओर विहार किया। इस पर भी अनेक दिगम्बर श्रमण उत्तर में रह गए। दुर्भिक्ष की भयंकरता के चलते वह अपनी चर्या परिशुद्ध नहीं रख सके। श्वेत वस्त्र, दंड आदि धारण करके वह अपना कार्य चलाने लगे। दुर्भिक्ष समाप्त होने के बाद भी वह शिथलाचार से मुक्त होने का मानस नहीं बना सके और इस प्रकार भगवान महावीर के संघ में यह संघभेद हुआ। इस घटना का अनेक ग्रंथों में विस्तार से कथन है। इस प्रकार उज्जयिनी अंतिम मुकुटधारी सम्राट् की दीक्षा व संघ भेद का साक्षी बना। विशाखाचार्य के मध्यदेश में आने और उनके द्वारा उन्हें पुनः निर्दोष दिगम्बरचर्या में स्थापित करने के प्रयास भी सुविधामार्ग अपनाये इन साधुओं को सन्मार्ग

में लाने के लिए समर्थ नहीं हो सका।

अकम्पनाचार्य के संघ पर उपसर्ग की पृष्ठभूमि उज्जैन–

हस्तिनापुर में मुनि विष्णुकुमार द्वारा निवारित अकम्पनाचार्य के संघ के उस घोर उपसर्ग की जन्मभूमि उज्जैननगरी ही है। उनका संघ जब उज्जैन में विराजमान था तब उज्जैन नरेश श्री धर्मा के वह चार मंत्री बलि, बृहस्पति, प्रहलाद और नमुचि ने प्रयास कर राजा को मुनि दर्शन से रोकने पर भी न रुकने पर उनके साथ जाना पड़ा। उधर आचार्य श्री ने आगत घटना को जानकर सम्पूर्ण संघ को मौंन रहने का आदेश किया, श्रुतसागर नामक मुनिराज आहार के लिए नगर में थे अतः उन्हें इस आज्ञा की जानकारी नहीं थी। राजा और मंत्रियों के वापस आते समय उनसे उनका साक्षात्कार हो गया। मुनिराज ने मंत्रियों की व्यंग बातों का युक्तिपूर्वक उत्तर देकर उसे निरुत्तर कर दिया। आचार्य श्री को जब यह घटना ज्ञात हुई तब उन्होंने मुनि श्रुतसागर जी को उसी स्थान पर कायोत्सर्ग ध्यान का आदेश दिया। गुरु आज्ञा स्वीकार कर वह उसी स्थान पर कायोत्सर्ग ध्यानस्थ हुए। चारों अपमानित मंत्रियों ने रात में वहाँ आकर उन पर तलवार से वार करने की चेष्टा की। दैवयोग से वन देवी ने उन्हें उसी मुद्रा में कीलित कर दिया। प्रातः यह घटना सभी को ज्ञात हुई। तब उज्जैन नरेश ने आकर वनदेवी से प्रार्थना करने पर वह मंत्री मुक्त हुए। राजा ने उन्हें उसी समय अपमानित कर देश से निकल जाने की आज्ञा दी। चारों अपमानित मंत्री हस्तिनापुर नरेश की शरण में आकर वहाँ मंत्री बन गए। उन्होंने किस प्रकार हस्तिनापुर नरेश पर अपना प्रभाव बनाकर अकम्पनाचार्य के संघ को वहाँ आने पर अपने अपमान का बदला लेने के लिए उपसर्ग किया, यह सर्वविदित है। उज्जयिनी से प्रारंभ इस घटना ने हस्तिनापुर में विष्णु कुमार मुनि द्वारा उपसर्ग निवारण के कारण ही रक्षाबंधन पर्व का जन्म हुआ।

महाकाल वन और सुकुमाल–

पुराण प्रसिद्ध सुकुमाल मुनि का तीन दिन तक श्रगालिनी का अपने बच्चों सहित शरीर भक्षण के महाघोर उपसर्ग की घटना का संबंध इसी उज्जयिनी नगरी से है। सुकुमाल चरित्र में इसका विस्तार से वर्णन है। सुकुमाल उज्जैन नगर के श्रेष्ठी सुरेन्द्रदत्त व यशोभद्रा के पुत्र थे। पुत्र जन्म के बाद पिता जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहण कर चले गये। मोह ग्रस्त माँ को जब यह ज्ञात हुआ कि पुत्र दिगम्बर श्रमण के दर्शन होते ही गृहत्याग देगा तब उसने अपने महल के द्वार दिगम्बर श्रमणों के लिए सदैव के लिए बंद करा दिए। सुकुमाल का लालन पालन राजसी वैभव से भी अधिक उत्तम विधि से किया गया। बत्तीस सुन्दर कन्याओं से उनका विवाह कराके उन्हें संसार जाल में फंसाये रखने का उपक्रम माँ ने किया, किन्तु भवितव्यता के आगे सब व्यर्थ रहा। घटित घटनाक्रम में वह अपने महल के पीछे वर्षायोग कर रहे मुनि संघ के द्वारा प्रज्ञप्तिका पाठ के स्वर सुनकर अपने कक्ष की खिड़की से उतर कर मुनिचरणों में जा पहुँचे। अपनी आयु के तीन दिन शेष जानकर मुनिराज से दीक्षा ग्रहण कर सभी प्रकार के आहार का त्याग कर वन में ध्यानस्थ हुए। पुत्रमोह के आर्तध्यान से मरकर हुई श्रगालिनी द्वारा शरीर भक्षण का घोर उपसर्ग सहन कर सुकुमाल मुनि ने शरीर त्याग किया और अच्युत स्वर्ग में महर्द्धिक देव हुए।

उज्जैन व अन्य पौराणिक कथानक–

चण्डप्रज्ञ, कालसन्दीव, दृढसूर्य चोर, गुणपाल श्रेष्ठी व सोमदत्त मणिपति नामक राजा की मुनि अवस्था व जिनदत्त सेठ आदि अनेक कथानक उज्जैन के विषय में प्राप्त होते हैं। यहाँ के महाकाल वन में अनेक मुनिराजों ने तप करके केवलज्ञान प्राप्त किया है। इस स्थान को सर्वाधिक प्रसिद्धि भगवान महावीर पर हुए उपसर्ग से प्राप्त हुई।

उज्जैन का इतिहास आज भी अपने अन्दर अनेकानेक घटनाओं को सजोएं हुए हैं। यह स्थान जैनधर्म की अनेक घटनाओं का साक्षी है और इनके कारण इस स्थान का महत्व एक तीर्थ की तरह है। भगवान महावीर से संबंधित उन सभी स्थानों पर जहाँ उनका बिहार हुआ या उनके मोक्ष जाने के बाद जहाँ-जहाँ उनके अतिशय प्रगट हुए उन सभी स्थानों में उज्जैन के अतिमुक्तक श्मशान के उपसर्ग की घटना अतिमहत्वपूर्ण है। इस उपसर्ग के बाद यह स्थान दिगम्बर साधकों को अपनी आत्म साधना के लिए सबसे पंसदीदा स्थान बन गया था।

संदर्भ ग्रंथ–

(1) आदिपुराण-आचार्य जिनसेन (2) उत्तरपुराण-आचार्य गुणभद्र (3) सुकुमाल चरित्र-मुनि पूर्णचन्द (4) अवन्तिका-डॉ. सविता जैन

* * *

भारत के प्रमुख दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र

प्रस्तुति – रमेशचन्द्र जैन मनयाँ, भोपाल (म.प्र.)

भूमिका –

वर्तमान में दिगम्बर जैन समाज की सर्वाधिक वरिष्ठ, सर्वाधिक मान्य साध्वी, ज्ञान, लेखन, गुणग्राहकता, धर्मवात्सल्य, रचनात्मक सोच और अप्रोच तथा अद्भुत प्रशासनिक क्षमता की धनी गणिनीप्रमुख पीयूषवर्षिणी आर्यिकारत्न 105 श्री ज्ञानमती माताजी अपनी तपोपूत और ज्ञान वृद्धकाया के बावजूद युवकोचित क्रियाशीलता से दिगम्बर जैन संस्कृति के नये-नये अध्याय लिख रही हैं। आप अध्यात्म-आगम साहित्य की दुरूह और विस्मृतप्रायः कृतियों की टीका, अनुवाद और जनसामान्य को सुपाच्य और सुपाठ्य शैली में प्रस्तुत करने में तथा ज्ञान के प्रकाश के प्रसार में दीपशिखा की भाँति स्वयं जल कर जिनवाणी को जनवाणी में प्रस्तुत कर रही हैं। आप विविध विषयों पर लगभग 200 से अधिक मौलिक, अनुवाद, टीका आदि ग्रन्थों का प्रणयन कर चुकी हैं और सम्प्रति वे जैन आगम के आधार ग्रन्थ "षट्खण्डागम" के कुल 16 में से 13 ग्रन्थों पर संस्कृत टीका लिखने का कार्य पूर्ण करके शेष 4 खण्डों पर टीका लिख कर समय के शिलाखण्ड पर अपनी कीर्ति अमिट अक्षरों में लिखने जा रहीं हैं।

पूज्य आर्यिकारत्न के रत्नों से जाज्वल्यमान रत्नरूप व्यक्तित्व का एक और तेजोमय और प्रदीप्त पहलू है जैन तीर्थंकरों और तीर्थ स्थानों के प्रति उनकी अगाध श्रद्धा और समर्पण भाव, आगमनिष्ठ दृष्टि तथा अपने उपेक्षित, विलुप्त अथवा विस्मृत वैभवशाली सांस्कृतिक विरासत/धरोहर की रक्षा करके उन्हें उनके सम्पूर्ण वैभव के साथ उजागर करने की ललक या बेचैनी और कुछ Unheard, Unseen कर गुजरने की अदम्य आकांक्षा। पूज्य माताजी की इसी सद्वृत्ति का सुपरिणाम है हस्तिनापुर की जम्बूद्वीप संरचना एवं त्रिलोक शोध संस्थान, जो जैन करणानुयोग ग्रंथों में वर्णित शोधपूर्ण खगोल विज्ञान Cosmology को पुनः प्रतिष्ठित करने का एक एकल अपूर्व प्रयास है।

उनके इस आध्यात्मिक अवदान को भी कभी विस्मृत नहीं किया जा सकता। उन्होंने केवल श्रेय लेने के लिए जीर्णोद्धार/सुधार/संशोधन नहीं किए/कराए वरन् परिपक्व मस्तिष्क से, पूर्वा-पर संतुलित विचार के पश्चात् कार्य की व्यवहार्यता तथा औचित्य का पूर्ण ध्यान रखते हुए एक समय में एक परियोजना को हाथ में लेकर तीर्थंकर जन्मभूमियों/कल्याणकभूमियों/सिद्धक्षेत्रों की खोई हुई प्रतिष्ठा में नवनिर्माण की प्रेरणा देकर, उनकी पुनर्प्रतिष्ठा कर महिमामण्डित किया है। उदाहरणार्थ –

अयोध्या नगरी को जैन वाङ्मय में सर्वोच्च स्थान प्राप्त है यही नहीं वैदिक मान्यता के अनुसार पाँच शाश्वत नगरियों में भी अयोध्या का प्रथम स्थान है। जैन जगत ने अपने गौरव तीर्थराज अयोध्या को भुला दिया। हम भूल गये कि अयोध्या ऋषभदेव, अजितनाथ, अभिनन्दननाथ, सुमतिनाथ और अनन्तनाथ भगवान इन पाँच तीर्थंकरों की जन्मभूमि और उनके 18 कल्याणकों की पवित्र भूमि है। अविजित अयोध्या भगवान ऋषभदेव के पुत्र प्रथम चक्रवर्ती भरत की कर्मभूमि रही है जिनके नाम पर इस देश का नाम "भारत" प्रसिद्ध हुआ।

वहीं अयोध्या केवल राम की अयोध्या अथवा रामजन्मभूमि मंदिर के विवादास्पद निर्माण कथा में उलझी नगरी रह गई थी। भला हो पूज्य ज्ञानमती माताजी का जिन्होंने अपनी प्रबल संकल्पशक्ति से राष्ट्रीय उद्यान अयोध्या में 17 फीट अवगाहना वाली भगवान ऋषभदेव की शुभ्रश्वेत मनोज्ञ मूर्ति स्थापित करके तथा डा. राममनोहर लोहिया विश्वविद्यालय फैजाबाद में भगवान ऋषभदेव जैन पीठ की स्थापना कराके अयोध्या की सर्वोच्च वैभवशाली किन्तु विस्मरणोन्मुख परम्परा को पुनर्जीवित कर दिया।

इसी प्रकार एक अन्य युगादितीर्थ तीर्थ नगरी प्रयागराज आज तक केवल अपनी गंगा-यमुना-सरस्वती के प्रसिद्ध संगम के कारण जाना जाता था। कुछ एक विद्वानों, साधुओं को छोड़कर अधिकाँश जैन समाज और नई पीढ़ी तो बिल्कुल नही, इन पाँच तथ्यों से परिचित है कि आदिब्रह्मा ऋषभदेव भगवान ने प्रथमबार केशलोंच परम्परा का सूत्रपात,

दीक्षाकल्याणक, केवलज्ञान कल्याणक, प्रथम समवसरण और प्रथम देशना भूमि के गौरव से मण्डित किया है। यही नहीं भगवान की दोनों पुत्रियों ब्राह्मी और सुन्दरी ने यहाँ पूज्य आर्यिका दीक्षा लेकर आर्यिका परम्परा का सूत्रपात किया और नारीजाति के लिए मोक्ष का मार्ग प्रशस्त किया।

पूज्य माताजी ने प्रयाग में "तपस्थली" के रूप में वहाँ कृत्रिम कैलाशपर्वत की संरचना करवाई तथा वहाँ वटवृक्ष के नीचे ध्यानस्थ भगवान ऋषभदेव की प्रतिमा भी स्थापित की गयी है जो समस्त जैन समाज को युगों-युगों तक भगवान ऋषभदेव की दीक्षा तथा निर्वाणभूमि कैलाशपर्वत का स्मरण कराती रहेगी।

माँगीतुंगी में भी भगवान ऋषभदेव की 108 फुट की विश्व की सबसे बड़ी खड्गासन प्रतिमा शीघ्र ही निर्मित होकर प्रतिष्ठापित होने जा रही है, जो ज्ञानमती माताजी की कीर्तिपताका को युगों-युगों तक फहराती रहेगी।

एक रोचक तथ्य यह है कि भगवान मुनिसुव्रतनाथ की जन्मकल्याणक भूमि होने पर भी राजगृही के शायद ही किसी तीर्थयात्री को इस तथ्य का ध्यान हो, अतः इसकी ओर सभी का ध्यान आकृष्ट कराने के लिए वहाँ भी भगवान मुनिसुव्रतनाथ की श्यामवर्णी साढ़े बारह फुट उत्तुंग प्रतिमा विराजमान करवाई गई जिसकी प्रेरणास्रोत यही स्वनाम धन्य ज्ञानमती माताजी हैं।

जिनके शासनकाल में हम सभी विराजते हैं ऐसे भगवान महावीर की जन्मस्थली कुण्डलपुर (नालंदा) अपनी उपेक्षा और वैशाली विवाद के कारण लुप्त वैभव हो चली थी तथा विश्व प्रसिद्ध बौद्धतीर्थ नालंदा की चमक की तुलना में अपनी चमक खोने लगी थी किन्तु आर्यिकारत्न ज्ञानमती माताजी के सजग, सतर्क ज्ञानचक्षुओं से यह तथ्य छुपा नहीं रह सका, फलस्वरूप "भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर" में भगवान महावीर मंदिर, भगवान ऋषभदेव मंदिर, नंद्यावर्त महल, त्रिकाल चौबीसी मंदिर, नवग्रहशांति जिनमंदिर के निर्माण की योजना बनाई। इस नवनिर्माण से कुण्डलपुर जन्मभूमि के गौरव को नवजीवन मिलेगा। यह निर्माण योजना 29-12-2002 से आज तक के अविश्वसनीय अल्प समय में द्रुतगति से साकाररूप ले रही है।

यहाँ इस बात का उल्लेख करना आवश्यक लगता है कि योजनाएँ तो सभी साधु, संस्थाएँ तथा सज्जन व्यक्ति रोज-रोज बनाते हैं किन्तु उनमें से बहुत थोड़ी ही पूरी हो पाती हैं शेष या तो अपनी अव्यवहार्यता के कारण या अपने सर्जनहार की भावोद्रेक या श्रेय लेने की होड़ में, वास्तुशास्त्रीय दोष, जनसामान्य की श्रद्धा के आहत होने के दोष/विरोध के कारण अपनी पूर्णता की बाट जोहती रहती हैं। कभी-कभी धन/जन/ प्रेरणास्पद शक्तिपुंज के अभाव में भी यह योजनाएँ धरी की धरी रह जाती हैं और आतिशबाजी के अनार की तरह भारी प्रकाश/प्रचार/प्रकाशन के साथ प्रारंभ होती है और शीघ्र ही फुस्स हो जाती हैं।

पूज्य ज्ञानमती माताजी की कार्यशैली की विशेषता है कि वे एक समय में एक ही परियोजना को हाथ में लेती हैं उस पर अपने स्वयं के दीर्घ अनुभव, उस क्षेत्र के विशेषज्ञों से पूर्ण परामर्श करके और अपने दृढ़ आत्मबल तथा पुष्कल प्रभावकारिता का समयोचित प्रयोग करके पूर्णता प्रदान करती है। उनकी यह कार्यशैली न केवल अनुकरणीय है अनुमोदनीय भी है।

यद्यपि श्री राम स्वयं में सम्पूर्ण है किन्तु जैसे उनका आख्यान-स्मरण श्रीलक्ष्मण जी का उल्लेख किए बिना परिपूर्ण नहीं होता, आलाप के बिना रागिनी परिपूर्णता को प्राप्त नहीं होती और अलंकार के बिना भाषा में बोध गम्यता-प्रसाद गुण नहीं आता ठीक उसी तरह मेरे विचार से पूज्य प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी के उल्लेख के बिना आर्यिका रत्नश्री ज्ञानमती माताजी का वर्णन-विवरण परिपूर्ण नही होता।

यह सच है कि जैन साधु एकाकी एकत्व लिए स्वयं में लीन स्वतंत्र होता है फिर भी सांसारिक स्वरूप में उसे श्रावक और सुशील सहायक की भी आवश्यकता पड़ती है। आर्यिका चन्दनामति जी का जन्म ही मानो इसी स्थान की पूर्ति के लिए हुआ है। वे श्री ज्ञानमती माताजी की शिष्या, सहायिका, सहोदरा, सुहृद और सुमन्त हैं और भाई रवीन्द्र जी रत्न मंजूषा है जो इस रत्नजटित मुद्रिका को अपने सम्पुट में सुरक्षित रखते हैं। ज्ञानमती माताजी आर्यिकारूप रत्न है तो चन्दनामती माताजी ऐसी स्वर्ण मुद्रिका हैं जो रत्न की सुरक्षा, प्रभविष्णुता के साथ-साथ श्रीवृद्धि में भी सहायक होती है।

मेरी स्मृति पटल पर एक दोहा दस्तक दे रहा है–

पारस में और गुरु में यही अन्तरो जान।
पारस तो सोना करे गुरु करे आप समान।।

पारस तो लोहे को केवल स्वर्ण बनाता है पारस नही किन्तु गुरु तो अपने शिष्य को अपने समान ही बना लेता है। ठीक इसी कथ्य के अनुरूप विगत 33 वर्षों के सानिध्य शिष्यत्व और कठिन चारित्रक साधना से चन्दनामती माताजी भी अपनी गुरु के पदचिन्हों पर चलकर स्वयं गुरुता को प्राप्त हो रही हैं। विलक्षण बुद्धि तेजस्वी वक्तृत्व-शक्ति, आशु कवित्व, ओजपूर्ण लेखन और भक्तों को आह्लादकारी भुवनमोहिनी मुस्कान की धनी चन्दनामती माताजी ने आगे-आगे रहकर कुण्डलपुर ज़न्मभूमि के समस्त निर्माणों, साहित्य सृजन तथा अपनी गुरु के सभी धार्मिक-रचनात्मक संयोजनों में सक्रिय भूमिका का निर्वाह किया है और कर रही हैं।

ज्ञान रथ के ध्वज वाहक या ज्ञान साम्राज्य की अक्षौहिणी सेना के प्रधान सेनापाति कर्मयोगी, गृहत्यागी और नैष्ठिक श्रावक श्रेष्ठ भाई रवीन्द्र जी जैसे सतर्क, सन्नद्ध और सुदृढ़ दोनों किनारों के बीच ज्ञान की पावन धर्म सरिता निर्बाध, अपने अभीष्ट लक्ष्य की ओर निरंतर प्रवहमान है।

जहाँ एक शिष्या ज्ञान-कोष की अध्यात्म संपदा की निगरानी कर रही हैं, तो दूसरे शिष्य पीठाधीश क्षुल्लक श्री मोतीसागर महाराज उनके मानस से उद्भूत वरदानों की भौतिक संपदा की देख-भाल में अपना जीवन धन्य किये जा रहे हैं। भाई रवीन्द्र जी हस्तिनापुर का विशाल त्रिलोक शोध संस्थान हो, अयोध्या का भगवान ऋषभदेव संस्थान हो, प्रयाग की नव निर्मित तपस्थली हो या कुण्डलपुर (नालंदा) की भगवान महावीर की जन्मभूमि नंद्यावर्त स्थल की रचना हो, पूज्या गुणवर्धनी के मानस यंत्र से अधिनिर्मित धर्मरथ के चक्रनेमि हैं या रथ की धुरी ही हैं, कहना कठिन है।

भाई जी की अद्भुत कार्य-क्षमता, उदारता, दूरदृष्टि, लगन और समर्पण भाव को हमारे शत-शत प्रणाम।

तीर्थ

कनत्स्वर्णाभासोऽव्यपगत-तनुर्ज्ञान निवहो
विचित्रात्माप्ये को नृपतिवर सिद्धार्थ तनयः।।
अजन्मापि श्रीमान् विगत-भव-रागोद्भुत-गतिर्
महावीर स्वामी नयनपथ गामी भवतु मे।।

आचार्य जिनसेन स्वामी अपने आदिपुराण ग्रंथराज में तीर्थ की परिभाषा देते हुए कहते हैं–

संसाराब्धे पारस्य तरणे तीर्थमिष्यते। चेष्टितं जिननाथानां तस्योक्तिस्तीर्थ संकथा।।

(आदिपुराण 4/8)

संसार समुद्र/भवसागर से जो पार लगा दे वही तीर्थ है, अतः जिनेन्द्र भगवान का चरित्र, उनका ध्यान, स्तुति पूजा और संस्मरण भी तीर्थ हैं। उनका गुणानुवाद ही तीर्थ की वंदना है। चूँकि ये तीर्थ परमागम भी है अतः यही धर्म है।

(आचार्य समन्तभद्र स्वामी कृत स्वयंभू-स्तोत्र में से भगवान महावीर स्वामी की स्तुति खण्ड)

षट्खण्डागम (प्रथम खण्ड पृष्ठ 28) में तीर्थंकर भगवन्तों के पाँचों कल्याणकों को भूमि को तीर्थ कहा है–

"तत्र क्षेत्र मंगलं गुण परिणतासन-परिनिष्क्रिमण केवलज्ञानोत्पत्ति, परिनिर्वाण क्षेत्रादिः"

यद्यपि पृथ्वी का कण-कण पवित्र/पूज्य है क्योंकि यह धरती हमारी जन्मदात्री धात्री धरित्री-पालनहार है अतः माता के समान ही पूज्य है, फिर भी तीर्थंकरों के गर्भ, जन्म, तप, केवलज्ञान और निर्वाण-पाँचों कल्याणकों, उनके आहार-विहार, देशना (उपदेश) और समवसरण आदि के कारण क्षेत्र विशेष और अधिक पूज्य हो जाते हैं।

तीर्थंकर भगवान के जीवन की पाँचों प्रमुख घटनाओं को "कल्याणक" इसलिए कहते हैं कि उन घटनाओं से लोककल्याण होता है। उनके गर्भ में आते ही आसपास की 12 योजन की भूमि में सुभिक्ष के लक्षण प्रकट हो जाते हैं,

देवताओं के धनपति कुबेर तीर्थंकर के गर्भ में आने के छह मास पहले से ही जन्मपर्यन्त अर्थात् 15 मास तक रत्नों की वर्षा करते हैं। इस प्रकार तीर्थंकरों के जन्म सहित प्रत्येक घटना लोक कल्याणकारी मोक्षमार्ग को प्रशस्त करती है अतः आचार्यों ने उन्हें कल्याणक कहा है। जिस पुण्य भूमि वह कल्याणक होते हैं वह भूमि भी तीर्थ है।

वैज्ञानिक तथ्यों के अनुसार पृथ्वी अपनी गुरुत्वाकर्षण शक्ति के कारण अवस्थित है। मनुष्य, जीवराशि वनस्पतियाँ और भौगोलिक पर्यावरण भी इसी गुरूत्वाकर्षण शक्ति/सिद्धान्त के कारण अपनी-अपनी जगह रहते हैं। पृथ्वी में से विद्युत चुम्बकीय तरंगों Electro Magnetic Waves का न्यूनाधिक निरन्तर विकिरण होता रहता है ठीक वैसा ही विकिरण मनुष्य के शरीर में से भी होता रहता है। इस विकिरण को हम "ऊर्जा" भी कहते हैं।

क्षेत्र विशेष और मानव मन की शुद्धता-अशुद्धता के अनुरूप कम या ज्यादा शुभ-अशुभ परिणामों वाला विकिरण (वर्गणाएं) एक वैज्ञानिक तथ्य है। महापुरुषों और सिद्धि प्राप्त क्षेत्रों से शुद्धभावों का स्फुरण होता है वे तरंगें वातावरण में व्याप्त होकर शुचिता, सौम्यता, निर्वैर, निर्भयता और निर्वेगता का वातावरण निर्मित करती है। तीर्थंकरों की सन्निधि में परस्पररूप से नैसर्गिक विरोधी प्राणी सिंह-गाय, नेवला-सर्प आदि भी उस वातावरण के कारण अपना वैर छोड़कर निर्भयता का अनुभव करते हैं। इसी प्रकार तीर्थ स्थानों की सिद्धि, प्रसिद्धि, प्रभावकारिता और देह तथा मन को स्वयमेव शान्ति मिलने के मूल में यही ऊर्जा का विकिरण है। जब दो मनुष्यों यां पदार्थों से निसृत होने वाली ऊर्जा की तरंग दैर्घ्य Wave lenght मिल जाती है तो उनमें परस्पर आकर्षण और प्रीति पनप जाती है। ऊर्जा किरणों का वेग (Speed), बल (Strength), सान्द्रता (Solidity), सौभ्यता (Serenity), स्थायित्व (Existence) और दीर्घ जीविता (Stability) उस आकर्षण-विकर्षण का निर्धारक तत्त्व माना जा सकता है।

लोक में भी प्रायः देखा जाता है कि कोई-कोई स्थान अचानक प्रकाश में आ जाता है और इसी विशेषता के कारण लोकप्रिय भी हो जाता है। जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर जैसे तीर्थ इसका उदाहरण है। द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव के परिणमन से क्षेत्रकृत प्रभाव, कालगत परिवर्तन और चारों ओर के वातावरण से प्रभावित होने के कारण भावों में परिवर्तन से भी इन क्षेत्रों के प्रभाव में परिवर्तन होता रहता है।

मेरे विचार से सभी तीर्थभूमियाँ/क्षेत्र और साधु/महापुरुष इसी शाश्वत ऊर्जा के स्थायी स्रोत होते हैं और उनकी वही ऊर्जा मनुष्यों को शक्ति शान्ति और समाधान प्रदान करती हैं। तीर्थंकर भगवान और महापुरुषों का सीधा संबंध, सन्निधि या ससंर्ग जब इन स्थानों को प्राप्त हो जाता है तो उन क्षेत्रों की शक्ति और प्रभावकारिता में उल्लेखनीय वृद्धि हो जाती है। तीर्थंकर भगवानों की जन्मकल्याणक भूमियां उनकी विहार तथा देशना भूमियाँ इसी सांसर्गिक विशेषता, नैसर्गिक ऊर्जा की स्रोत होने के कारण पवित्र और कल्याणकारी हो जाती है।

जैन सिद्धान्त के अनुसार अरिहन्त अवस्था के पश्चात् जब आत्मा सिद्ध गति को प्राप्त होती है तो ऊपर की ओर बिल्कुल सीधी जाकर सिद्ध लोक में जाकर अवस्थित हो जाती है। सिद्ध क्षेत्रों की जब हम वन्दना करते हैं और उस स्थान पर जब अपना सिर झुकाते हैं तो हम सिद्ध भगवान के ठीक नीचे होते हैं और हमारा सम्पर्क सीधा उन पुण्य परमाणुओं से हो जाता है जो उन सिद्ध आत्माओं से निरन्तर प्रवहमान बने रहते हैं। तीर्थ क्षेत्रों की वंदना उसके प्रत्यक्ष कल्याणकारी प्रभाव का यह एक महत्वपूर्ण कारण है-

ओ मेरे निस्सीम, निराकार
आपकी उपस्थिति, निकटता का एहसास
भर देती है मुझमें एक नई चेतना, नये प्राण
देती है मुझे नई दृष्टि नया प्रकाश
मेरी छोटी सी धरती छोटा सा आकाश
होने लगता है अनन्त, छंटने लगता है अंधेरा
दिखने लगता है मार्ग

दिगम्बर जैन समाज में तीन प्रकार के तीर्थक्षेत्रों की पूज्यता है 1. सिद्धक्षेत्र (निर्वाणक्षेत्र), 2. कल्याणकक्षेत्र 3. अतिशयक्षेत्र। अभिनन्दनग्रंथ के इस पंचम खण्ड में चौबीस तीर्थंकरों की जन्मभूमियों का परिचय, तीर्थंकरों की दीक्षाभूमि, निर्वाणभूमि, तीर्थक्षेत्रों का परिचय, भारत के प्रमुख दिगम्बर जैन तीर्थ और भगवान महावीर से संबंधित तीर्थ क्षेत्र, अतिशय क्षेत्र और अन्यथा सम्बद्ध क्षेत्रों का परिचय दिया जा रहा है जैसे कौशाम्बी, उज्जयिनी राजगृही, चांदनपुर-महावीर जी, दिल्ली की अहिंसास्थली जो भगवान महावीर की विशाल पद्मासन मूर्ति के कारण दिनोंदिन प्रसिद्ध होती जा रही है।

वास्तव में हम अपने तीर्थंकरों, सिद्धआत्माओं, आचार्यों, महापुरुषों के प्रति, जिन्होंने हमें मुक्ति का मार्ग दिखाया, हमें सांसारिक दुखों, बाधाओं से मुक्ति दिलाकर सुख, शान्ति और सम्पन्नता प्रदान की, उनके इन उपकारों के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापन के लिए, उनके पावन संसर्ग से पूज्य बनी उस पुण्य भूमि पर घटित कल्याणकों, घटनाओं की स्मृति को जीवन्त बनाए रखने के और उनके आदर्शों से अनुप्राणित होकर आत्मकल्याण और आत्मिक शांति प्राप्त करने के इस माध्यम से उनके जैसे बनने की प्रेरणा सदियों तक प्राप्त होती रहे, इसलिए भी, हम स्मारक बना देते हैं। हम संसारी जीवों को अपनीचंचला लक्ष्मी को अचला बना देने का यह सर्वोत्तम, सुलभ और सुगम उपाय रहा है।

ये मंदिर
इसलिए कि हम आ सकें
बाहर से अपने भीतर
और श्रद्धा से झुक कर गलाते जायें
अपना मान, अपना मद, पर्त दर पर्त
जिससे कम होता जाए
हमारे और प्रभु के बीच का अन्तर

भारतवर्ष के विभिन्न तीर्थ स्थान

उत्तरप्रदेश

चतुर्थकाल में जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र का आर्यखण्ड भारतीय संस्कृति विशेषकर जैन संस्कृति का उद्गम स्थल और आर्य संस्कृति की मुख्य क्रीड़ा भूमि रहा है। भगवान ऋषभ देव के पुत्र चक्रवर्ती भरत ने सम्पूर्ण भारत को 52 जनपदों में विभाजित किया था, जिनमें से वर्तमान उत्तरप्रदेश में कुरूजांगल (मेरठ) पांचाल (बरेली, फरूक्खाबाद) कौशल (अयोध्या) वत्स (इलाहाबाद-काशी) और शूरसेन (मथुरा) नाम के पाँच जनपद समाहित हैं। इस पुण्य भूमि को यह गौरव प्राप्त है कि भारत में जितने तीर्थंकर अवतार अथवा सिद्ध पुरुष अवतरित हुए उनमें से अधिकांश ने इसी पुण्य भूमि पर जन्म लिया। चाहे वे भगवान ऋषभदेव हों, भगवान राम, कृष्ण या बुद्ध सभी इसी "स्वर्गादपि गरीयसी" भूमि पर अवतरित हुए। इसी प्रदेश को वर्तमानकाल के चौबीस तीर्थंकरों में से 18 की जन्मभूमि होने का गौरव प्राप्त है। यहीं भारत के पुत्र अर्ककीर्ति ने सूर्यवंश और बाहुबली के पुत्र सोमयश ने चंद्रवंश की स्थापना की।

इसी पुण्य के प्रताप से इस क्षेत्र में सर्वाधिक कल्याण भूमियाँ, सिद्धक्षेत्र और अतिशय क्षेत्र हैं। शाश्वत तीर्थराज सम्मेदशिखर जी और अयोध्या तथा अन्य महत्वपूर्ण तीर्थ वाराणसी, प्रयाग, हस्तिनापुर, मथुरा आदि सभी इसी क्षेत्र की शोभा हैं। अयोध्या में 5, काशी में 2 हस्तिनापुर में 3, तीर्थंकरों का जन्म हुआ, अन्य तीर्थंकरों के विहार और समवसरण भी इस क्षेत्र में हुए।

आइये, हम इन तीर्थ क्षेत्रों की भाव वंदना करते हुए भावना भायें कि हमें शीघ्र ही इन तीर्थों की प्रत्यक्ष वन्दना करने का पुण्य अवसर प्राप्त हो।

मथुरा (चौरासी)—

अंतिम केवली जम्बू स्वामी का निर्वाण क्षेत्र होने के कारण सिद्धक्षेत्र मथुरा शूरसेन जनपद की राजधानी है। मथुरा का स्थान जैन तीर्थों में विशिष्ट है। यहाँ पर जम्बू स्वामी की 18 फीट ऊँची, 65 टन वजनी पद्मासन मूर्ति स्थापित होने जा रही है। छठी शताब्दी में हूण सरदार मिहिरकुल ने मथुरा को लूटकर सम्पूर्ण विध्वंस कर दिया। मथुरा के कंकाली टीले की खुदाई में प्राप्त दुर्लभ पुरातात्विक जैन मूर्तियाँ और अवशेष संग्रहीत है। मथुरा भगवान कृष्ण की जन्म तथा लीला भूमि होने से जैन-जैनेतर सम्पूर्ण भारतीय हिन्दू समाज की पुण्य नगरी के रूप में विख्यात है।

चौरासी क्षेत्र पर भगवान अजितनाथ की सन् 1438 और भगवान पार्श्वनाथ की सन् 1112 पद्मासन प्रतिमा विद्यमान है। वहाँ के संग्रहालयों में ईसा पूर्व शक एवं कुषाण काल की जैन मूर्तियाँ मुनिसुव्रतनाथ, आदिनाथ, नेमिनाथ, शांतिनाथ, अरनाथ आदि तीर्थंकरों की मूर्तियाँ हैं। यहाँ भगवान पार्श्वनाथ तथा भगवान महावीरं का समवसरण आया था। भगवान महावीर के गणधर गौतम स्वामी के निर्वाण के बाद सुधर्माचार्य और उनके निर्वाण के बाद उनके प्रमुख शिष्य जम्बू स्वामी को विपुलाचल (राजगृही) में केवलज्ञान प्राप्त हुआ और मथुरा के जम्बूवन में निर्वाण प्राप्त किया।

मथुरा में चौरासी वन थे। 12 बड़े और 72 छोटे वन उनके नाम पर बसे ग्राम वृन्दावन, मधुवन, जम्बूवन, कुमुदवन, कामवन आदि अभी भी पाये जाते हैं। भगवान रामचन्द्र के छोटे भाई शत्रुघ्न मथुरा के राजा थे। सम्यक् दर्शन के आठ अंगों में से अमूढ़ दृष्टि के लिए विख्यात प्रसिद्ध रानी रेवती भी मथुरा की ही महारानी थी। ब्रजभूमि के "वसु झूठ सेती नरक पहुँचा सुरग में नारद गया" के राजा वसु भी मथुरा से संबंधित थे। जैन पुरातत्व की दृष्टि से मथुरा का संग्रहालय सबसे समृद्ध है। यहाँ ईसा पूर्व से बारहवीं शताब्दी तक की जैन, हिन्दू, बौद्ध, शक और कुषाण काल की, वज्रासन और कायोत्सर्ग मुद्रा में मूर्तियाँ, शिलालेख, तोरण, स्तूप, धर्मचक्र, सिंह स्तम्भ, आयागपट्ट, स्वस्तिक वेदिका, स्तम्भ, स्तूप, जैन, हिन्दू तथा बौद्ध मूर्तियाँ चैत्य स्तम्भ, चैत्य वृक्ष संग्रहीत हैं। 14वीं शताब्दी के आचार्य जिनप्रभसूरिकृति "विविध तीर्थकल्प" में मथुरा का वर्णन मिलता है। कंकाली टीले के अतिरिक्त सप्तऋषि टीला जैनों से संबंधित है। यहाँ की मूर्तियों का कला तथा श्रृंगार पक्ष अत्यन्त समुन्नत है। यहाँ उपलब्ध जैन शिलालेखों की संख्या 110 है। यहाँ उपलब्ध सामग्री से पता चलता है कि गुप्तकाल से तीर्थंकरों की प्रतिमाओं पर लांछन (चिन्ह) बनाये जाना प्रारंभ हुआ। कंकाली टीले जैन सरस्वती की प्राचीनतम मूर्ति प्राप्त हुई है। मथुरा नगरी की विशेषता है कि वहाँ मानव निर्मित कृत्रिम मंदिरों के अतिरिक्त देवकृत अकृत्रिम मंदिरों की संरचनाओं के अवशेष भी प्राप्त होते हैं। जम्बूस्वामी मुख्य मंदिर, दिल्ली मथुरा रोड पर मथुरा-गोवर्धन सड़क के किनारे लगभग 20 फीट ऊँची चौकी पर स्थित है। इस मंदिर में पत्थर के विशाल स्तम्भों पर बड़े-बड़े बरामदे, गर्भगृह, प्रदक्षिणा पथ आदि से सज्जित मूल वेदी पर 14वीं शताब्दी के प्रतिष्ठित अजितनाथ की मूर्ति विराजमान है। सामने जम्बूस्वामी के चरण प्रतिष्ठापित हैं। गर्भगृह में भगवान पार्श्वनाथ, चंद्रप्रभु सहित धातु और पाषाण की 88 प्रतिमाओं और मन्वादि सप्त ऋषियों की सात मूर्तियाँ खड्गासन हैं। क्षेत्र पर घीया मण्डी की विशाल धर्मशाला है। दैवी अतिशय केशर वर्षा के कारण यह अतिशय क्षेत्र भी हैं।

पहुँच मार्ग तथा पता—मथुरा जंक्शन बम्बई दिल्ली मार्ग पर आगरा से 54, दिल्ली से 145, बस से रोड निजी वाहन से सभी साधन उपलब्ध हैं।

पता—श्री दिगम्बर जैन सिद्ध क्षेत्र,
चौरासी कृष्णानगर
मथुरा (उ.प्र.)-281004
फोन (0565) 2420983

बुन्देलखंड—

यदि उ.प्र. अवध और वर्तमान बिहार की भूमि को तीर्थंकरों और महापुरुषों राम, कृष्ण की जन्मभूमि होने का गौरव प्राप्त है, तो बुंदेलखण्ड (उ.प्र.-म.प्र.) की धर्मप्राण रत्नगर्भा, वीरप्रभू भूमि को भारत के सर्वाधिक तीर्थ स्थानों को अपने आंचल में समेटे रखने का गौरव प्राप्त है। बुन्देलखण्ड को तीर्थंकरों द्वारा दर्शाये गये मोक्षमार्ग पर चलने वाले शताधिक

दिगम्बर जैन आचार्य, मुनिराज, आर्यिकाओं, जैसे आचार्य श्री विरागसागर पुष्पदंत सागर, मुनि श्री सुधा सागर, क्षमा सागर, समता सागर, प्रखर वक्ता श्री तरुण सागर, प्रज्ञा सागर, पुलक सागर इसी पुण्य भूमि के सपूत हैं। इस क्षेत्र ने आधुनिक पंडितों की एक पूरी पीढ़ी के निर्माता, पाण्डित्य के अक्षय भंडार विशेषणों को भी वैशिष्ट्य प्रदान करने वाले पूज्य क्षुल्लक गणेश प्रसाद जी वर्णी (बाद में मुनि श्री गणेश कीर्ति जी महाराज), पं. दरबारी लाल कोठिया, न्याय दिवाकर पं. सुमेरु चंद्र दिवाकर, पं. खुशालचंद्र गोरावाला, पं. जगनमोहन लाल शास्त्री न्याय तीर्थ, पं. पन्नालाल जी साहित्याचार्य जैसे जाज्वल्यमान नक्षत्र उत्पन्न किये, जिनके दिव्य प्रकाश से जैन जगत में उजियारा है। इस क्षेत्र को कुण्डलपुर, देवगढ़, पपौरा, चंदेरी, सोनागिर (जहाँ चंद्रप्रभु भगवान का समवसरण आया था) खजुराहो, आहार जी, द्रोणागिरी, नैनागिरी तथा रेशन्दीगिरी जैसे परमपावन सिद्ध क्षेत्रों, अतिशय क्षेत्रों की पुण्य भूमि होने का भी गौरव प्राप्त है।

बुंदेलखण्ड में प्राचीन जैन मंदिरों और तीर्थ स्थानों तथा जैन पुरातत्व संपदा की प्रचुरता से एक बात तो सिद्ध है कि कभी यहाँ जैनों की पर्याप्त संख्या, उनका वर्चस्व तथा उदार दानशीलता रही होगी। बुंदेलखण्ड के उस स्वर्णिम काल में कला के विविध रूपों का खुल कर विकास हुआ। बुंदेलखण्ड की एक अन्य विशेषता यह है कि यहाँ तीर्थंकर, चक्रवर्ती तथा कामदेव भगवान शांतिनाथ, कुंथुनाथ तथा अरनाथ स्वामी की मूर्तियाँ प्रायः अधिकांश तीर्थ स्थानों पर पायी जाती है।

उत्तरप्रदेश और मध्यप्रदेश के लगभग 30 जिलों को अपने आंचल में समेटे बुंदेलखण्ड का जैन समाज समूचे भारत में जैन धर्म और आगमनिष्ठ शुद्ध क्रियाओं से सम्पन्न माना जाता है। जैन धर्म का प्रभाव क्षेत्र यद्यपि संपूर्ण भारत वर्ष में है, किंतु बुंदेलखण्ड में जैनधर्म, जैन आचार-विचार संस्कार अपने विशुद्ध रूप में आज भी विद्यमान है। पूज्य गणेश प्रसाद जी वर्णी की जन्मभूमि तथा कर्मभूमि होने के साथ ही बुंदेलखण्ड को परमपूज्य चारित्र चक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागर जी महाराज से आरंभ दिगम्बर जैन साधु परम्परा के लगभग सभी आचार्यों, मुनि महाराजों और आर्यिका माताओं की चरण रज से धन्य होकर आज भी सर्वाधिक साधुओं की विहार भूमि होने का गौरव प्राप्त है। बुंदेलखण्ड की रत्न गर्भा धरती ने पग-पग पर तीर्थ संजोये हैं। भारतवर्ष का ऐसा एक भी जैन तीर्थयात्री नहीं होगा जिसने अपने जीवनकाल में दो-तीन बार यहाँ की तीर्थ वंदना करने का पुण्य अर्जित न किया हो। आइये देवों की लीलाभूमि देवगढ़ से बुंदेलखण्ड की पुण्य यात्रा आरंभ करें।

देवगढ़–

उ.प्र. के जिला मुख्यालय ललितपुर से केवल 33 किमी. दूर पर स्थित देवगढ़ गुप्तकाल और उसके परवर्ती गुर्जर प्रतिहार तथा चंदेल कालीन स्थापत्य की प्रस्तर कला और शिल्प का अद्भुत संगम है। देवगढ़ की छोटी सी पहाड़ी पर निर्मित 40-50 जैन मंदिर अपनी बारीक और मनमोहक शिल्पकला के लिए विख्यात हैं। देवगढ़ में मूल नायक शांतिनाथ की मनोज्ञ मूर्ति है, इसी मंदिर की दालान में एक ज्ञानशिला स्थित है, जिस पर भगवान ऋषभदेव की पुत्री ब्राह्मी द्वारा आविष्कृत 18 लिपियाँ उत्कीर्ण हैं। साथ ही यहाँ की यक्षिणियों की मूर्तियों के विविध रूपों में केश विन्यास दुर्लभ और विश्वप्रसिद्ध हैं। कवियों की भाषा में पत्थर को मोम बना कर छैनी हथोड़ी से स्वयं विश्वकर्मा ने दिव्य देवगढ़ के मंदिरों का निर्माण किया है। विश्वप्रसिद्ध और भारत की एकमात्र प्राचीन उपाध्याय की मूर्ति देवगढ़ में ही है। पुरातत्व और जैन मूर्ति कला का इतना बड़ा विविधता पूर्ण संग्रह संभवतः भारत में अन्य कहीं नहीं है। देवगढ़ की जैन मूर्तिकला पर अनेकों लोग पी.एच.डी. कर चुके हैं।

पहुँच मार्ग तथा पता–ललितपुर रेलवे स्टेशन से 32 किमी. जाखलौन रेलवे स्टेशन से 12 किमी. पक्के सड़क मार्ग से होकर प्रतिदिन नियमित बसे हैं, टैक्सी और प्राइवेट कार द्वारा आसानी से पहुँचा जा सकता है। क्षेत्र पर सभी व्यवस्थाएँ हैं।

1. श्री देवगढ़ मैनेजिंग दि. जैन कमेटी, पो.-ललितपुर (उ.प्र.)
2. श्रीं दि. जैन अतिशय क्षेत्र, पो.-देवगढ़ (ललितपुर) उ.प्र.-284403

फोन-05176-272146

ललितपुर-क्षेत्रपाल जी–

बुंदेलखण्ड का प्रमुख नगर और जैन समाज की सर्वाधिक धर्मप्राण नगरी ललितपुर लगभग 20 तीर्थ क्षेत्रों का केन्द्रबिंदु है। सेंट्रल रेलवे के बीना-झांसी जंक्शन का मध्यवर्ती रेलवे स्टेशन ललितपुर जैन तीर्थ क्षेत्रों का भी जंक्शन कहा जाता है। यह देवगढ़, पपौरा, आहार, थूवोन, चंदेरी, सेरोन, पवा, दुघई, बांनपुर, करगुंवा, नैनागिरी, द्रोणगिरी आदि के लिए एकमात्र रेलवे स्टेशन है। ललितपुर जिले की धर्मरत्न गर्भा भूमि ने जहाँ बनारस के स्यादवाद महाविद्यालय के जनक पूज्य गणेश प्रसाद जी वर्णी जैसे अनुपम और महान जैन शिक्षाशास्त्री दिये, वहीं आधुनिक युग के चलते-फिरते तीर्थ मुनिराज एवं आर्यिका माताएं और साधु समस्त बुंदेलखण्ड की कीर्ति में से लगभग 50 प्रसिद्ध जैन साधु, 10 राष्ट्रीय ख्याति के जैन विद्वान, कवि और 10 तीर्थ अकेले ललितपुर जिले के हिस्से में आते हैं।

पांच शिखर युक्त भव्य जिनालयों से मंडित ललितपुर का क्षेत्रपाल जी मंदिर लगभग 5 एकड़ के परकोटे में स्थित अद्‌भुत शांति प्रदायक स्थान है। यहाँ पर मूल नायक भगवान अभिनंदन नाथ की श्यामवर्णी 4 फिट ऊँची सं. 1234 की मूर्ति प्रतिष्ठित है। प्राचीन वेदियाँ और प्रसिद्ध भौंयरा है, जहाँ अतिशयकारी मूर्तियाँ स्थापित हैं। मंदिर प्रांगण में सचमुच के हाथी के बराबर की पत्थर की हाथी की मूर्ति बच्चों के आकर्षण का केन्द्र है। किवदंती है कि यह क्षेत्रपाल जी की सवारी है और वे रात्रि में इसी पर सवार होकर मंदिर जी की परिक्रमा और सुरक्षा करते हैं।

क्षेत्रपाल जी मंदिर के प्रांगण में विशाल प्रवचन हाल, श्री वर्णी दिगम्बर जैन महाविद्यालय, तालाब, उद्यान और धर्मशालाएं हैं। ललितपुर नगर में पहला गजरथ 1706 में चला था। उसके बाद 1894, 1955, 1987 और 1989 में एक साथ 9 गजरथ चलवाने का गौरव इस नगर को प्राप्त है। यहाँ श्री दिगम्बर जैन बड़ा मंदिर, नया मंदिर और अटा मंदिर अपनी विशाल और मनोज्ञ मूर्तियों, बहुसंख्यक वेदियों, चौबीसी और कलात्मक काँच पर स्वर्ण खचित चित्रकारी से युक्त मंदिर जीवन में एक बार अवश्य दर्शनीय हैं।

पहुँच मार्ग तथा पता–अखिल भारतीय तीर्थ दर्शन यात्राओं के आवश्यक और अपरिहार्य केन्द्र ललितपुर में प्रायः सभी रेलगाड़ियाँ रुकती हैं। जी.टी. राष्ट्रीय राज्य मार्ग पर स्थित होने से ग्वालियर, झांसी, सागर, टीकमगढ़, चंदेरी आदि से सीधा पक्की सड़क मार्ग से जुड़ा है। यहीं से गिरारगिरी, बालाबेहट, चांदपुर जहाजपुर, दुधई, बानपुर, देवगढ़ आदि के दर्शनों को जाना चाहिए, जो 12वीं शताब्दी के भी पहले के वैभव की गौरवशाली कथा आज भी अपने मूक स्वरों में सुना रहे हैं।

पता–श्री दिगम्बर जैन मंदिर क्षेत्रपाल जी
स्टेशन रोड, पो.-ललितपुर (उ.प्र.)

मध्यप्रदेश

ग्वालियर–मध्यप्रदेश के प्रसिद्ध सिंधिया राजघराने की राजधानी ग्वालियर ब्रजमण्डल की सीमा पर स्थित है। ग्वालियर नगर में चार बड़े प्राचीन तथा दो अन्य जैन मंदिर हैं। भारत के प्राचीन दुर्गों में से एक ग्वालियर किले के पास गोपाचल पर्वत पर भगवान पार्श्वनाथ की 42 फुट ऊँची 30 फुट चौड़ी विशाल पद्मासन मूर्ति संसार की सबसे बड़ी पद्मासन जैन मूर्ति है। 1398 से 1536 के मध्य पर्वतकाट कर यह मूर्तियाँ बनाई गई थीं। ग्वालियर में भट्टारक जी की गद्दी भी थी।

किले पर ही प्रसिद्ध मान मंदिर, गूजरी, महल, सूर्य मंदिर, सास-बहू का मंदिर, तैलंग (तेलियों का) मंदिर तथा लार्ड कनिंघम द्वारा खोजा गया एक अन्य जैन मंदिर स्थित है, यहाँ के संग्रहालय में जैन पुरातत्व का समृद्धशाली संग्रह है।

पहुँच मार्ग तथा पता–बम्बई दिल्ली सेण्ट्रल रेल मार्ग पर ग्वालियर प्रसिद्ध जक्शन है जो सड़क और वायुमार्ग से जुड़ा है।

पता–श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र
गोपाचल पर्वत संरक्षक न्यास
फूलबाग के पास ग्वालियर, (म.प्र.)
फोन नं.-0751-242777

सिद्धक्षेत्र सोनागिरि जी–

भगवान चन्द्रप्रभ के समवसरण की पावन भूमि और नंग-अनंग कुमार मुनिराजों के साथ साढ़े पाँच करोड़ मुनिराजों की निर्वाणभूमि सोनागिर का महत्व भारत के मध्य क्षेत्र में लघु सम्मेद शिखरजी के बराबर माना जाता है। प्राचीनकाल में स्वर्णगिरि या श्रमण गिरि के नाम से प्रसिद्ध सोनागिर में 105 मंदिर तथा छतरियाँ हैं तथा लगभग 15 धर्मशालाएँ हैं। छोटे से पर्वत पर 77 मंदिर हैं जिनमें भगवान चन्द्रप्रभ का सबसे विशाल मंदिर है जिसमें मूल नायक भगवान चन्द्रप्रभु की अतिशय पूर्ण खड्गासन मूर्ति विराजमान है। पर्वत के ऊपर जल मंदिर, बजने वाली शिला, नारियलकुण्ड आदि दर्शनीय हैं। पर्वत के मंदिरों तक पक्की सीढ़ियाँ और घुमावदार रास्तों के कारण यह क्षेत्र बड़ा ही दर्शनीय बन गया है। यहाँ का क्षेत्र फिल्मों की शूटिंग के लिए भी लोकप्रिय है। यहाँ प्रतिवर्ष होली पर बड़ा भारी मेला लगता है। पूरे पर्वत की परिक्रमा का धार्मिक महत्व माना जाता है जो 5 किमी. है।

पहुँच मार्ग तथा पता–झांसी तथा ग्वालियर के बीच सोनागिर रेलवे स्टेशन है। दतिया ग्वालियर झांसी से बसें भी प्रतिदिन उपलब्ध रहती हैं। प्राइवेट कार से यात्रा भी सुविधाजनक रहती है।

पता– श्री दिगम्बर जैन सिद्धक्षेत्र सोनागिरि जी,
ग्राम सोनागिरि जिला-दतिया म.प्र.
फोन-07522-2622222

थूबौन जी–

मध्यप्रदेश के गुना जिले के अंतर्गत अतिशय क्षेत्र थूबौन जी अवस्थित हैं। मूलनायक शांतिनाथ भगवान की 18 फीट समचतुरस्र खड्गासन अतिशय कारी मनोज्ञ मूर्ति है। संबंधित मंदिर समूह में 25 मंदिर हैं। भगवान आदिनाथ की 30 फुट ऊँची मूर्ति भी आकर्षण का केन्द्र है, जो बड़ा मंदिर कहलाता है। यहाँ पर एक अन्य मंदिर में स्थापित भगवान ऋषभदेव की केशराशि युक्त मूर्ति है, जिसकी पादचुंबी जटायें इसे विशिष्ट और दुर्लभ बनाती हैं। भारत में अपने प्रकार की यह एक ही मूर्ति है।

पहुँच मार्ग तथा पता–बीना-कोटा लाइन पर अशोक नगर रेलवे स्टेशन से 32 किमी. सड़क मार्ग से चंदेरी से 22 किमी.

पता– श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र थूबौन जी
ग्राम-थूबौन, तहसील-चंदेरी, जिला-गुना (म.प्र.)-473446
फोन नं.-07547-256212

चंदेरी (चौबीसी)–

जैन पुराणों और भारतीय प्राचीन इतिहास का चेदिजनपद आदि पुराणकालीन 52 जनपदों में से एक चंदेरी नगर वर्तमान में म.प्र.के गुना जिले का सर्वाधिक प्राचीन जैन तीर्थ क्षेत्र है, जो अपनी चौबीसी के लिए देश-विदेश में प्रसिद्ध रहा है। यहाँ की चौबीसी भारतवर्ष की सबसे पहली चौबीसी है। ग्यारहवीं से 13वीं शताब्दी के शिखरयुक्त 24 वेदियों पर पद्मासन में स्थित चौबीसी की विशेषता यह है कि पुराणों में वर्णित तीर्थंकरों के शरीर के वर्ण के ही पत्थरों से यह मूर्तियाँ निर्मित हैं। इसी प्रकार भगवान बाहुबली जी तीन फुट ऊँची एवं दुर्लभ अद्भुत मूर्ति है, जिसके शरीर पर लता जाल, बिच्छू, छिपकली गले में कमर में सर्प लिपटे हैं और अन्य कीट-पतंग उकेरे गये हैं, जो परंपरागत् मूर्तियों से भिन्न हैं। नगर में 3 किमी. बूढ़ी चंदेरी और चंद्रभागा पहाड़ी पर खंदार जी (शब्द कन्दरा से बना) पर प्राचीन मूर्तियों के भण्डार पाए जाते हैं। महाभारत के प्रसिद्ध पात्र तथा नारायण कृष्ण के मौसेरे भाई शिशुपाल इसी चंदेरी के राजा थे। चंदेरी का प्राचीन महत्त्व इस बात से समझा जा सकता है कि यहाँ श्री सकल कीर्ति नाम के भट्टारक की गद्दी थी। चंदेरी की महीन साड़ियाँ देश-विदेश में प्रसिद्ध हैं, जो 500 से 5000 मूल्य तक की होती हैं।

यहाँ 1000 यात्री ठहरने लायक धर्मशालाएँ हैं। यहाँ वार्षिक मेला भी भरता है। शासकीय अनुदान से यहाँ

म्यूजियम बनाने की स्वीकृति मिल चुकी है।

पहुँच मार्ग तथा पता–ललितपुर रेलवे स्टेशन से36 किमी. बीना-कोटा लाइन पर मुंगावली, अशोक नगर, रेलवे स्टेशन से 58 किमी. सड़क मार्ग से 38 किमी. उपरोक्त स्थानों से आने-जाने की सुविधा है।

पता– श्री दिगम्बर जैन चौबीसी बड़ा मंदिर
चंदेरी जिला-गुना (म.प्र.)-473446
फोन नं.-07547-243058

पपौरा–

विंध्य क्षेत्र की जैन संस्कृति के उत्कर्ष की अक्षय कीर्ति का वर्णन करने के लिए देवगढ़ के उपरांत पपौरा तीर्थ बुंदेलखण्ड का दूसरा महत्वपूर्ण तीर्थ माना जाता है जो टीकमगढ़ से 5 किमी. दूर स्थित है। एक परकोटे में निर्मित 108 मंदिरों की माला और सुमेरु के रूप में भगवान बाहुबली, भव्य समवसरण तथा सुमेरु पर्वत जिनालयों के दर्शन मात्र से भौतिक आधि-व्याधि और उपाधियों से त्रस्त मनुष्य सत्यम् शिवम् सुन्दरम् की अलौकिक भूमि में आकर अलौकिक सुख और शांति का अनुभव करता है। यदि किंवदंतियों पर विश्वास किया जाये तो यहाँ भी श्रावक श्रेष्ठ पाणाशाह ने 108 मंदिरों की श्रृंखला का निर्माण कराया। मंदिर संख्या 35, 58 और 75 की मूर्तिकला सौंदर्य और शिल्प के क्षेत्र में बेजोड़ हैं। 11वीं शताब्दी से प्रारंभ हुआ निर्माण एवं उसमें प्रयुक्त छैनी, हथौड़ी की मधुर ध्वनि ने आज तक विश्राम नहीं किया है। देश का ऐसा कोई भी धार्मिक रुचि वाला जैन और देशी-विदेशी पर्यटक नहीं होगा, जिसने एक बार पपौरा आकर यहाँ मन और आँखों को तृप्त न किया हो। अनेक जैन विद्वानों ने किसी न किसी रूप में अपनी सेवाएं देकर अपना समय यहाँ रहकर सार्थक किया है।

देश के प्रथम राष्ट्रपति साधुमना डॉ. राजेन्द्र प्रसाद जी ने 29-5-53 को इस सुरम्य स्थान और मंदिरों के दर्शन कर स्वयं को धन्य माना। प्राचीन अर्वाचीन काल में मंदिरों की जितनी शैलियाँ प्रचलित थीं, प्रायः सभी शैलियों के मंदिर यहाँ विद्यमान हैं। अष्ट पंखुडियों से युक्त मुकुलित कमल रथाकार, वराण्डायुक्त अट्टालिका सदृश्य दो मंजिले मठ मेरु, मानस्तंभ, गुफा, भौंयरे आदि विविध शैलियों के दर्शन यहाँ होते हैं। सभी मंदिर शिखर युक्त हैं। वृहत प्रवेश द्वार के ऊपर विशाल रथ के आकार का मंदिर और उसकी 70 फुट ऊँची छत की सैर आपका मन मोह लेगी। पूज्य श्री गणेश प्रसाद जी वर्णी द्वारा संस्थापित विद्यालय और उदासीन आश्रम आज भी यहाँ अध्यात्म का मार्ग सुगम करते आ रहे हैं। प्रतिवर्ष कार्तिक शुक्ला 13 से पूर्णिमा तक समारोह के साथ वार्षिक मेला भरता है।

पपौरा, पंपापुर और रमन्ना (रामअरण्य) तथा कमल पोखरी कुंड के कारण वैष्णव धार्मिक जन इसे भगवान राम और हनुमान जी का प्रथम मिलन स्थल भी मानते हैं।

पहुँच मार्ग तथा पता–ललितपुर रेलवे स्टेशन से 55 किमी. टीकमगढ़ और वहाँ से 5 किमी. दूर स्थित पपौरा पहुँचा जा सकता है। पपौरा, आहार, द्रोणगिरी, नैनागिरी एक साथ एक पंक्ति में दर्शनीय क्षेत्र हैं।

पता– श्री दिगंबर जैन अतिशय क्षेत्र पपौरा जी
ग्राम पपौरा, जिला-टीकमगढ़ (म.प्र.)
फोन नं.-07683-244378

आहार जी–

यह प्राचीन तीर्थ क्षेत्र संवत् 1884 से पुनः प्रकाश में आया। ग्यारहवीं शताब्दी से 15वीं शताबदी तक इस क्षेत्र का उत्कर्ष काल माना जा सकता है। म.प्र. के टीकमगढ़ जिले में अवस्थित आहार जी अतिशय क्षेत्र जिला-मुख्यालय से 20 किमी. है। यह क्षेत्र भी पाड़ाशाह द्वारा निर्मित माना जाता है। मूलनायक शांतिनाथ भगवान का विशाल मंदिर भगवान मल्लिनाथ के शासनयुग के मदनकुमार केवली तथा भगवान महावीर के शासन युग के विश्वकमल नाम के केवली यहाँ से सिद्ध हुए अतः यह सिद्धक्षेत्र के रूप में भी माना जाता है, किन्तु अन्य किसी आलेख से इस तथ्य की पुष्टि नहीं

होती। मदनवर्मा द्वारा बसाये गये मदन सागरपुर में 11वीं शताब्दीं की मूर्तियाँ उपलब्ध हैं। प्रकृति सुषमा शांत वातावरण मनोहर दृश्यावली से युक्त आहांर तीर्थ क्षेत्र प्राचीन काल में भट्टारकों की गद्दी भी रही है। यहाँ के शिलालेखों में भट्टारकों की परंपरा संबंधी लेख तथा शोध योग्य सामग्री प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। 15वीं शती तक के भट्टारकों के नाम के साथ ही किसी भी संघ, गण, गच्छ, आम्नाय, अन्वय शाखा आदि का उल्लेख नहीं है किन्तु 15वीं शती के पश्चात् सभी भट्टारकों के साथ मूलसंघ, बलात्कारगण, सरस्वती गच्छ, कुंदकुद आम्नाय आदि का उल्लेख मिलना प्रारंभ हो जाता है, जिससे यह भी सिद्ध होता है कि 15वीं शताब्दी के पश्चात् ही यह परंपरा प्रारंभ हुई। **यहाँ भट्टारकों के साथ और स्वतंत्र रूप से भी आर्यिकाओं के नामों का उल्लेख पहली बार देखा गया और इस क्षेत्र की यह विशेषता थी कि आर्यिकाओं ने भी स्वतंत्र रूप से मूर्तियों की प्रतिष्ठा करवाई थी।** 12वीं सदी की मूर्तियों में विशेष रूप से आर्यिकाओं का उल्लेख है, उसके बाद नहीं। आहार जी और पपौरा में प्राप्त शिलालेखों की भाषा परिमार्जित संस्कृत और कवित्वपूर्ण शैली इन्हें विशिष्टता प्रदान करती है। जैन उपजातियों के विभिन्न नाम, वंश, भट्टारकों के नाम, उनकी परंपरा के पट्ट, आर्यिकाओं का वैदुष्य, विधिविधान में उनका नैपुण्य और सिद्धान्त शास्त्रों की मर्मज्ञता संबंधी आलेख प्रचुर मात्रा में शोधार्थियों की प्रतीक्षा कर रहे हैं। यहाँ का संग्रहालय भी समृद्ध तथा सुरक्षित है, जिसमें खंडित तीर्थंकर, यक्ष, यक्षी, तोरण स्तंभ, वेदिका कड़े गोपुर गोमुख मकराकृतियाँ सभी कुछ हैं। विगत 115 वर्षों में यहाँ 25 पंचकल्याणक हुए, जिससे इस तीर्थ के महत्व का पता चलता है। यह सत्य लगता है कि इस क्षेत्र ने उत्कर्ष का एक लंबा स्वर्णयुग देखा है।

पहुँच मार्ग व पता—रेल सें ललितपुर से 83 किमी. मऊरानीपुर से 162, झांसी से 120 किमी. सड़क से-टीकमगढ़ से बल्देवगढ़ रोड पर 35 किमी. बलदेवगढ़ से 10 किमी.।

पता— श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र आहार जी
ग्राम आहार जी, तहसील बलदेवगढ़, जिला-टीकमगढ़ (म.प्र.)
फोन नं.-07683-224474, 242634

खजुराहो—

म.प्र.के छतरपुर जिले में मूर्तिकला का अद्वितीय केन्द्र, प्रदेश और देश का गौरव खजुराहो क्षेत्र स्थित है। **भारत में ताजमहल के बाद सबसे अधिक विदेशी पर्यटकों को आकर्षित करने वाला विश्व धरोहर क्षेत्र खजुराहो अपनी ऐन्द्रिक मूर्ति कला के लिए विश्व प्रसिद्ध है।** यह जैनधर्म का भी समृद्ध क्षेत्र है। खजुराहो के मंदिर समूह में मंदिर नं. 3 तथा मंदिर नं. 4 पूर्वी समूह को जैन मंदिर समूह के रूप में जाना जाता है। एक हजार वर्ष पुरानी चंदेल कालीन शिल्पकला एवं वास्तुकला महादेव मंदिर, लक्ष्मण मंदिर अपने में उत्कृष्ट तथा सर्वश्रेष्ठ रूप में पायी जाती है। आबू में संगमरमर पर शिल्पियों ने जो कला बिखेरी है, खजुराहों के शिल्पियों ने उससे भी बढ़कर मूर्ति कला का प्रदर्शन देशी लाल पत्थर पर (सेण्ड स्टोन) पर कर दिखाया है। ऐसा मूर्तिकला, संग्रह विश्व में अन्यत्र कहीं नहीं है। ऐतिहासिकता और कलात्मकता की दृष्टि से आदिनाथ, पार्श्वनाथ, शांतिनाथ एवं घंटाई मंदिर अपूर्व हैं। संग्रहालय में अनेक मूर्तियाँ संग्रहीत हैं। यहाँ की प्रसिद्ध के आकर्षण से विदेशी इतिहासकार भी नहीं बच सके। ईरानी इतिहासकार अबू रेहान और इब्नबतूता ने भी इसकी महिमा गायी है।

यहाँ के लगभग 30 मंदिरों को तीन भागों में बांटा गया है। पश्चिमी समूह, पूर्वी समूह और दक्षिणी समूह ।

पश्चिम में-चौसठ योगिनी, कन्दरियामहादेव मंदिर, लक्ष्मण मंदिर।

पूर्वी समूह में आदिनाथ मंदिर, पार्श्वनाथ मंदिर, शांतिनाथ मंदिर तथा घण्टई मंदिर प्रसिद्ध हैं, जिसके स्तंभों पर विभिन्न प्रकार की घंटियाँ और जंजीरें उत्कृष्टता से उकेरी गई हैं। पार्श्वनाथ मंदिर सबसे बड़ा मंदिर है। इस समूह में कुल 25 मंदिर हैं।

संपूर्ण खजुराहों में पार्श्वनाथ मंदिर अपने कलागत् वैशिष्ट्य और शिखर संयोजना की दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ है। वहाँ के कंदरिया महादेव और लक्ष्मण मंदिर के जगत प्रसिद्ध मिथुन युगल मूर्ति संपदा की तुलना में भी यह मंदिर विशेषज्ञों की राय में उन सबसे श्रेष्ठ है।

वार्षिक मेला–चैत्र शुक्ला पक्ष में वार्षिक मेला भरता है।

पहुँच मार्ग तथा पता–दिल्ली से खजुराहो प्रतिदिन नियमित हवाई उड़ान झांसी, सतना (बंबई हावड़ा लाइन) हरपालपुर से नियमित बसें तथा पक्की सड़क ठीक मंदिर समूह तक होने से निजी वाहनों से भी जाया जा सकता है।

पता– श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र खजुराहो
पोस्ट-खजुराहो, तहसील-राजनगर, जिला-छतरपुर (म.प्र.)-471606
फोन नं.-0786-274148

द्रोणगिरी–

"फलहोड़ी बड़गाम अनूप पश्चिम दिशा, द्रोणगिरी रूप
गुरूदत्तादि मुनीश्वर जहाँ, मुक्ति गये वंदो नित तहाँ"

बुंदेलखण्ड के लघु सम्मेदशिखर के नाम से प्रसिद्ध द्रोणगिरी (सेंधपा) सिद्धक्षेत्र छतरपुर जिले की धरोहर हैं। यह गुरुदत्त मुनिराज सहित साढ़े आठ करोड़ मुनिराजों की निर्वाणस्थली है। पक्की सीढ़ियों सहित छोटे से पर्वत पर कुछ जैन मंदिर व्यवस्थित नया रूप देकर संवारे गये हैं। पर्वत पर तीन गुफायें हैं तथा दो कुण्ड भी हैं, जिनका जल गर्मियों में ठंडा और सर्दियों में गर्म मिलता है। चंद्रभागा और श्यामला नदियाँ द्रोणगिरि पर्वत के चरण पखारती रहती हैं। द्रोणगिरि पर्वत सुरम्य हरियाली और प्रकृति का वरदान प्रतीत होता है, जहाँ मन में शांति और वीतरागता स्वयं उत्पन्न होने लगती है। पर्वत पर भगवान आदिनाथ का बड़ा मंदिर है। अंतिम मंदिर पार्श्वनाथ स्वामी का है।

द्रोणगिरि की दूसरी विशेषता है पूज्य गणेश प्रसाद जी वर्णी का इस स्थान से विशेष अनुराग। ईसरी पार्श्वनाथ (शिखरजी) के बाद वर्णी जी द्रोणगिरि में ही अक्सर अध्ययन लेखन कार्य करते थे। यहाँ तीर्थ क्षेत्र प्रबंधक प्रशिक्षण संस्थान हैं। गाँव में भी धर्मशाला और तीन जैन मंदिर हैं।

वार्षिक मेला–फाल्गुन कृष्ण 1 से 5 तक वार्षिक मेला भरता है।

पहुँच मार्ग तथा पता–सागर-टीकमगढ़ मार्ग पर बड़ा मलहरा गाँव से सेंधपा सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है।

पता– श्री दिगम्बर जैन सिद्धक्षेत्र द्रोणगिरि
ग्राम सेंधपा, तहसील-बड़ा मलहरा, जिला-छतरपुर (म.प्र.)

नैनागिरी सिद्धक्षेत्र (रेशन्दीगिरी)–

पपौरा, अहार, द्रोणगिरि और नैनागिरि इन चार तीर्थों की श्रृंखला के अंतिम पड़ाव नैनागिरि (रेशन्दीगिरि) पर भगवान पार्श्वनाथ का समवसरण आया था। वरदत्तादि पांच ऋषिराज की निर्वाण भूमि रेशन्दीगिरि को जैन-अजैन सभी समाजों में एक जैसी मान्यता प्राप्त है। छोटे से पर्वत पर स्वप्न फल के रूप में खुदाई करने पर मूलनायक भगवान पार्श्वनाथ का मंदिर प्रकट हुआ। 11वीं शती के इस मंदिर में 13 प्राचीन मूर्तियाँ स्थापित हैं और कुल 37 शिखर युक्त मंदिर हैं। एक मंदिर प्राकृतिक सुषमा और पर्वत मूल में बने सरोवर के मध्य में बना होने से लघु पावापुरी जलमंदिर की अनुभूति कराता है। प्राकृतिक सुषमा और अध्यात्मिक साधना का केन्द्र नैनागिरी वर्षों से धार्मिक यात्रियों को अपनी ओर आकर्षित करता आ रहा है।

वार्षिक मेला–अगहन सुदी 11 से पूर्णिमा तक वार्षिक मेला भरता है।

पहुँच मार्ग तथा पता–सागर रेलवे स्टेशन से 55 किमी.सड़क द्वारा सागर से दलपतपुर होकर 15 किमी. दमोह से तथा बड़ा मलहरा से सड़क मार्ग से जुड़ा है।

पता– श्री दिगम्बर जैन सिद्धक्षेत्र नैनागिरी
ग्राम नैनागिरी, तह.-बक्सवाहा, जिला-छतरपुर (म.प्र.)-471318
फोन नं.-07583-252020

कुण्डलपुर सिद्धक्षेत्र (दमोह)–

म.प्र. के दमोह जिले में अवस्थित कुण्डलपुर तीर्थ के हृदय में बड़े बाबा भगवान आदिनाथ का वास है। कुण्डलाकार मनोरम पहाड़ियों से शोभित कुण्डलपुर में अंतिम अनुबद्ध केवली श्रीधर की निर्वाणभूमि है। पर्वत श्रृंखला के पादमूल में स्थित सरोवर और उसके मध्य निर्मित जिन मंदिर, नवनिर्मित 4 भव्य जिन मंदिर और पर्वत पर 65 मंदिर हैं। दिन के शांत वातावरण में अथवा रात में मंदिरों की झिलमिलाती रोशनी की परछाइयाँ जब सरोवर में पड़ती हैं तो एक दिव्य वातावरण निर्मित हो जाता है। ऊपर भगवान आदिनाथ की 15 फुट ऊँची 7 फिट चौड़ी मूंगावर्णी पद्मासन विशाल मूर्ति है, जिसे लोग श्रद्धा से 'बड़े बाबा' के नाम से जपते-पूजते निहारते मुग्ध होते और जन्म को धन्य समझते हैं।

मूर्ति के अतिशय की हजारों किंवदंतियाँ क्षेत्र के आदिवासियों, नगर जनों, दर्शनार्थियों और बुजुर्गों के साथ-साथ इतिहास के पन्नों पर अंकित है। यहाँ पन्ना के महाराजा बुंदेलखण्ड केशरी छत्रसाल ने अपने राज्यच्युत हो जाने पर घोर विपत्ति में बड़े बाबा के चरण-शरण में आये और नई ऊर्जा, स्फूर्ति लेकर शत्रु सेना को परास्त करके अपनी पूर्व प्रतिष्ठा पाकर कुण्डलपुर क्षेत्र का पुनर्निमाण कराया। इस आशय का शासकीय मुद्रायुक्त संवत् 1757 सन् 1700 ई. का एक शिलालेख मुख्य मंदिर के द्वार पर लगा है।

पहले यह मूर्ति भगवान महावीर की मानी जाती थी, किन्तु मूर्ति पर अंकित चिन्हों, केश राशि, शासन यक्षी चक्रेश्वरी तथा गोमुख यक्ष की उपस्थिति में सिद्ध कर दिया कि मूर्ति भगवान आदिनाथ की है। क्षेत्र के 15 सौ वर्ष पूर्ण होने पर प्रथम बार 21 से 27 फरवरी 2001 में विशाल समारोहपूर्वक महामस्तकाभिषेक का आयोजन संत शिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज की प्रेरणा और सान्निध्य में किया गया।

सन् 1142 में नंदि संघ के आचार्य पद्मनंदि महाराज का यहाँ ससंघ आगमन हुआ। यहीं उन्होंने **''चूलिका सिद्धांत वृत्ति''** की 1200 श्लोक प्रमाण ग्रंथ की रचना की थी।

पहुँच मार्ग तथा पता–बीना-मानिकपुर लाइन के दमोह रेलवे स्टेशन से 38 किमी. सड़क मार्ग से जबलपुर, सागर, छतरपुर, टीकमगढ़, कटनी आदि से सीधा मार्ग। निजी वाहन से भी जाना उपयुक्त है।

पता– श्री दिगम्बर जैन सिद्धक्षेत्र कुण्डलपुर
ग्राम कुण्डलपुर, तह.-पटेरा, जिला-दमोह (म.प्र.)-470773
फोन नं.-07602-272227, 272230

मढ़िया जी (जबलपुर)–

म.प्र. की संस्कारधानी जबलपुर में जहाँ एक ओर संगमरमरी चट्टानों से सुशोभित भेड़ाघाट नैसर्गिक सौंदर्य युक्त नर्मदा का धुंआधार जलप्रपात है, वहीं व्यक्तिगत श्रद्धा और श्रम की अप्रतिम मिसाल मढ़िया जी का जैन मंदिर है। आज से लगभग 600 वर्ष पूर्व एक निर्धन असहाय महिला ने दूसरों के घर चक्की पीस-पीस कर जो धन अर्जित किया उससे जबलपुर के एक कोने में एक विशाल शिलाखंड पर एक मंदिर बनवाया। यही स्थान आज विकसित होकर एक तीर्थ, एक श्रम तीर्थ के रूप में श्रम की अजेय कीर्ति गाथा सुना रहा है। यहाँ पंर नवनिर्मित श्री नंदीश्वर द्वीप मंदिर, बाहुबली मंदिर, श्री वर्णी गुरुकुल है जहाँ स्व. पं. पन्नालाल जी साहित्याचार्य जैसे जैन विद्वान् आजीवन अपनी सेवाएं देकर जैन विद्वानों की पीढ़ी तैयार कर गये। ब्राह्मी विद्याश्रम में प्रवेश पाकर बहनें शिक्षा-दीक्षा प्राप्त कर आत्मकल्याण के मार्ग पर आगे बढ़ जाती हैं। ऊपर शिला पर चौबीस तथा अन्य दस मंदिर हैं। बड़ी धर्मशाला है, जिसमें 1000 यात्री ठहर सकते हैं।

जैनों के प्रमुख केन्द्र जबलपुर नगर में लार्डगंज का अतिप्राचीन भव्य जैन मंदिर है, जिसमें मनोज्ञ मूर्तियाँ और अत्यन्त समृद्ध सरस्वती भंडार जिनवाणी की सेवा कर रहा है। नगर में लगभग 20 बड़े और 26 छोटे मंदिर हैं। म.प्र. उच्च न्यायालय और आयुध कारखाना (आर्डिनेंस फैक्ट्री) रानी दुर्गावती का महल विशेष आकर्षण के केन्द्र हैं।

पहुँच मार्ग व पता–बंबई-कलकत्ता मार्ग का बड़ा जंक्शन जबलपुर रेल मार्ग से तथा सागर, कटनी, छिंदवाड़ा, नागपुर आदि से सड़क मार्ग से जुड़ा हुआ है। हवाई मार्ग भी सुलभ है। निजी वाहन से भी जाया जा सकता है।

पता– श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मंदिर पिसनहारी की मढ़िया
त्रिपुरी वार्ड, पुरवा, जबलपुर (म.प्र.)
फोन नं.-0761-2370827

मक्सी पार्श्वनाथ–

भगवान पार्श्वनाथ की अतिशयकारी और मनोज्ञ मूर्ति ने मक्सी ग्राम को प्रसिद्ध कर दिया। उनके चमत्कार से प्रभावित दिगम्बर और श्वेताम्बर आम्नाय के जैन बंधु क्षेत्र पर अपना-अपना वर्चस्व जमाने के लिए बेचैन हैं। फिलहाल प्रातः 6.00 बजे से 9:00 बजे तक दिगम्बर और फिर दिन भर श्वेताम्बर जैन भजन-पूजन करते हैं। यूँ तो दिगम्बर और श्वेताम्बर समुदाय के झगड़े प्रायः सभी तीर्थों पर है, पर संभवतः मक्सी की एक ही मूर्ति पर दर्शन पूजन के लिए समय विभाजन का उदाहरण अन्यत्र नहीं है।

अब दिगम्बर समुदाय ने एक नया भव्य मंदिर बना लिया है, जिसमें भगवान पार्श्वनाथ की श्यामवर्णी मनोज्ञ मूर्ति प्रतिष्ठित है। एक मंदिर सुपार्श्वनाथ भगवान का भी है जो दिगम्बर समुदाय के पास पहले से ही है। यहाँ व्यवस्था बहुत अच्छी है।

पहुँच मार्ग तथा पता–भोपाल-उज्जैन (पश्चिम रेलवे) मार्ग पर मक्सी रेलवे स्टेशन है, मंदिर वहाँ से 3 किमी. दूर है। यहाँ क्षेत्र की बस प्रत्येक ट्रेन पर उपलब्ध रहती है। भोपाल से 150 किमी., उज्जैन से 38 और इंदौर से 72 किमी. दूर है। इंदौर, उज्जैन, भोपाल, देवास आदि से यहाँ सड़क मार्ग से भी पहुँचा जा सकता है।

पता– श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र मक्सी पार्श्वनाथ
ग्राम मक्सी, जिला-शाजापुर (म.प्र.)-465106
फोन-07363-233028, 233829

उज्जैन सिद्धक्षेत्र–

म.प्र. का धर्मक्षेत्र, प्राचीन शाश्वत नगरियों में से एक उज्जयिनी में भगवान महावीर का समवसरण आया था, इस कारण उज्जयिनी का विशेष महत्व है।

क्षिप्रा नदी के तट पर बसा उज्जैन परमार कालीन जैन पुरा सम्पदा को अपने आंचल में समेटे हुए हैं। यहाँ से अन्तकृत केवली अभय घोष ने निर्वाण पाया था, अतः यह सिद्धक्षेत्र है। नगर में जयसिंहपुरा और नमकमण्डी में पुराने विशाल जिनमंदिर हैं। नये पुराने लगभग 20 मंदिरों वाले उज्जैन में ही श्रुत केवली भद्रबाहु निमित्त ज्ञान से भावी दुष्काल की बात जानकर सम्राट् चंद्रगुप्त के साथ अपने विशाल संघ को लेकर दक्षिण की ओर प्रस्थान कर गये। उज्जैन में शेष रहे मुनियों में शिथिलाचार फैल गया और यहीं से श्वेताम्बर संप्रदाय का प्रारंभ हुआ।

वैदिक परम्परानुसार उज्जैन में 12 ज्योतिर्लिगों में से एक महाकाल का मंदिर है, जहाँ 12 वर्ष में एक बार प्रसिद्ध सिंहस्थ मेला भरता है। सम्राट् विक्रमादित्य की राजधानी और जयपुर के महाराजा संवाई जयसिंह द्वारा निर्मित वेधशाला भी यहाँ दर्शनीय है। विक्रमविश्व-विद्यालय और अन्य महल भी दर्शनीय है। नारायण श्री कृष्ण ने यहाँ संदीपनी आश्रम में शिक्षा प्राप्त की थी।

पहुँच मार्ग तथा पता–म.प्र. का संभागीय मुख्यालय उज्जैन पश्चिम रेलवे के भोपाल-उज्जैन मार्ग का उज्जैन जंक्शन प्रसिद्ध है। इंदौर से 82 किमी. भोपाल से 180 किमी. कोटा-रतलाम से भी रेलमार्ग से जुड़ा है।

सड़क मार्ग से इंदौर, भोपाल, रतलाम, देवास, कोटा आदि से जुड़ा है। निजी वाहन से आना उचित है।

सिद्धवरकूट-सिद्धक्षेत्र–

"रेवा नदी सिद्धवरकूट पश्चिम दिशा देह जहाँ छूट।
द्वै चक्री दश कामकुमार ऊंठ कोडि वन्दों भवतार"

रेवा (नर्मदा) और कावेरी के संगम स्थल पर पर्वत श्रेणियों की उपत्यका में बसा सिद्धवरकूट प्रकृति की सुरम्य गोद और मनोरम दृश्यावली से युक्त है। यहाँ की पवित्र भूमि से वीतरागता का विकिरण होता है। यहाँ इंदौर में भट्टारकों की गद्दी के स्वामी महेन्द्र कीर्ति और सोमसेन स्वामी ने 1545 वि.सं. में इस स्थान की खोज की उसके बाद यहाँ 10 जिन मंदिर मानस्तंभ आदि का नवनिर्माण तेजी से हुआ।

मंदिर क्रमांक 5 बड़ा मंदिर है, यहाँ 10 नं. मंदिर में कामकुमारों की 10 मूर्तियाँ, दो चक्रवर्तियों की तथा मूलनायक भगवान संभवनाथ भगवान की मनोरम मूर्तियाँ प्रतिष्ठित हैं। यात्रियों के ठहरने के लिए अच्छी धर्मशालाएँ हैं।

यात्रियों को नौका विहार का आनंद मिलता है। यहीं ओंकारेश्वर पर ज्योतिर्लिंग स्थापित है। यहाँ से 15 किमी. दूर पर सीता वाटिका है, कहते हैं यहाँ बाल्मीकि ऋषि का आश्रम था, जहाँ सीताजी ने लव-कुश नाम के दो पुत्रों को जन्म दिया।

वार्षिक मेला—फाल्गुन शुक्ल 15 से चैत्र कृष्ण 1 तक मेला लगता है।

पहुँच मार्ग तथा पता—इंदौर-खण्डवा रेलमार्ग पर इंदौर से 77 किमी., मोर टक्का (ओंकारेश्वर रोड) स्टेशन से 12 किमी., बड़वाह बस स्टैण्ड के पास दि. जैन धर्मशाला है। बड़वाह से बस द्वारा पहुँचा जा सकता है।

पता— श्री दिगम्बर जैन सिद्धक्षेत्र सिद्धवरकूट
पोस्ट-मान्धाता (ओंकारेश्वर) जिला-खंडवा (म.प्र.)-450554
फोन नं.-07280-271229

बड़वानी सिद्धक्षेत्र चूलगिरी—

बड़वानी बड़नयर सुचंग, दक्षिण दिशगिरी चूल उत्तंग।
इन्द्रजीत अरू कुंभ जु कर्ण, ते वंदों भवसागर तर्ण।।

बड़वानी बावनगजा चूलगिरी के नाम से प्रसिद्ध है, जहाँ से रावण के भाई कुंभकरण और पुत्र इंद्रजीत निर्वाण को प्राप्त हुए।

नर्मदा तट के सतपुड़ा पर्वत श्रेणी की 4000 फुट ऊँची चोटी पर भगवान ऋषभदेव की खड्गासन मूर्ति उकेरी गई है, जो 84 फुट के एक ही पत्थर पर बनायी गयी है। वीतराग सौम्यता, कलापूर्ण और भावप्रवण मूर्ति हजारों वर्षों से तीर्थयात्रियों और पर्यटकों को मनवांछित संतुष्टि प्रदान करती आ रही है।

यहाँ 19 मंदिर हैं। भगवान मल्लिनाथ 'चन्द्रप्रभ की मूर्तियाँ' इन्द्रजीत तथा कुंभकरण के चरणचिन्ह अंकित हैं। यहाँ अनेक हस्तलिखित शास्त्रों का भंडार है। पास में ऊन सिद्धक्षेत्र 40 किमी. है।

पहुँच मार्ग तथा पता—इंदौर से रेल द्वारा 160 किमी., महू से 138 किमी. बड़वानी बस स्टैण्ड से 8 किमी., इंदौर-खंडवा बड़ौदा (गुज.) सड़क मार्ग द्वारा।

पता— श्री दिगम्बर जैन सिद्धक्षेत्र चूलगिरी बावनगजा
पोस्ट-बावनगजा, जि.-बड़वानी (म.प्र.)-451551
फोन नं.-07290-222084, 282084

मुक्तागिरी सिद्धक्षेत्र—

"अचलापुर की दिश ईशान जहाँ मेंढ्रगिरी नाम प्रधान" से प्रसिद्ध म.प्र. और महाराष्ट्र की सीमा और सतपुड़ा की सुरम्य पर्वत श्रेणी पर स्थित 100 फुट ऊँचे कई नयनाभिराम जल प्रपातों ने मुक्तागिरी क्षेत्र को मनोहारी तीर्थक्षेत्र बना दिया है। चारों तरफ फैली सघन वन राशि ने पुष्पों का जैसे वितान तान दिया है और मधुमक्खियों की कर्णप्रिय गुनगुन मुक्तागिरी में पर्यटकों को बरबस मोह लेती हैं।

पर्वत की तलहटी में दो जिनालय हैं। एक में भगवान आदिनाथ और दूसरे में भगवान महावीर की मूलनायक

प्रतिमाएँ विराजमान हैं। प्रपात के दोनों ओर पर्वत पर 52 जिनालय हैं। यहाँ का मंदिर क्रमांक 10 सबसे प्राचीन है,जिसे भगवान महावीर के समकालीन महाराज श्रेणिक बिंबसार ने बनवाया कहते हैं। भौंयरे में एक ही प्रस्तर फलक पर 24 तीर्थंकरों की प्रतिमाएं उकेरी गई हैं। भगवान पार्श्वनाथ का पहला मंदिर शिल्पकला का उत्तम उदाहरण है। छतों तथा खंभों पर सुंदर नक्काशी का कार्य है।

वार्षिक मेला–कार्तिक पूर्णिमा को प्रतिवर्ष मेला लगता है।

पहुँच मार्ग तथा पता–म.प्र. के बैतूल से 100 किमी. आकोट से 60 किमी. रेल से सड़क मार्ग से परतवाड़ा से 14 किमी. अमरावती (महा.) तथा परतवाड़ा से आटो रिक्शा उपलब्ध रहते हैं।

पता– श्री दिगम्बर जैन सिद्धक्षेत्र मुक्तागिरी
पो.-थपोड़ा, तह.-भैंसदेही (बैतूल) म.प्र.
फोन नं.-07223-221402

राजस्थान

बुंदेलखण्ड के पश्चात् सर्वाधिक जैन तीर्थों की पवित्र भूमि राजस्थान शौर्य, सौन्दर्य और संस्कृति की त्रिवेणी है। देशभक्ति, बलिदान और आन-बान राजस्थान की शान है।

जयपुर–

समृद्धि, शास्त्र और संस्कृति की त्रिवेणी है, देश का गुलाबी शहर जयपुर/राजस्थान की राजधानी जयपुर अपने 365 जैन मंदिरों के लिए दुनियाभर में उतनी ही प्रसिद्ध है जितनी अपने मोतियों और पन्ना जैसे रत्नों के व्यवसाय के लिए। देशभर में जैन मूर्तियाँ बनाने के लिए एकमात्र स्थान भी जयपुर है। जयपुर अकेले में 27000 जैनों की जनसंख्या है, पाटोदी का मंदिर ठोलियान मंदिर में बिल्लौर की मूर्तियाँ, दीवान बघीचन्द्र का मन्दिर जिसके गुम्बज में सोने की कारीगरी है, बैराठियो का और काष्ठा संघ का मंदिर और मुल्तान वालों का कांच का मंदिर जहाँ पाकिस्तान के मुल्तान शहर से मूर्तियाँ लाई गई हैं।

यह नगर प्रसिद्ध जैन विद्वान् पं. टोडरमल, पं. दौलतराम जी, पं. जयचन्द्रलाल जी, पं. सदासुखलाल जी, पं. चैनसुखदास जी, पं. इन्द्रलाल जी, पं. जयचन्द जी छाबड़ा, डॉ. कस्तूरंचद कासलीवाल की कार्यस्थली रही है, जिन्होंने जिनवाणी का भण्डार भरने में अपने जीवन को होम कर दिया। यहाँ भट्टारकों की गद्दी थी और हजारों दुर्लभ हस्तलिखित पाण्डुलिपियाँ प्रकाशित और अप्रकाशित भरी पड़ी है। ताड़पत्र पर लिखे जैन ग्रंथ, दुर्लभ प्राचीन चित्र और ताम्रपत्र, कागज आदि पर लिखे ज्योतिष एवं चमत्कारी यंत्र जयपुर की समृद्धि का एक हिस्सा है।

चूलगिरि–

आचार्य देशभूषण जी महाराज की साधनास्थली चूलगिरी खांनियां जी जयपुर शहर से 10 किमी. दूर है। यहाँ 4× 4 फुट के 50 किलो. वजनी ताम्रपत्र पर अंकित महायंत्र एक अद्वितीय शास्त्रीय धरोहर है जिस पर अनेक संकटमोचन और ऋद्धि-सिद्धि यंत्र अंकित हैं। छोटे से पर्वत पर निजी वाहन तथा क्षेत्र की बस ऊपर तक जाती है।

सांगानेर–

जयपुर से 13 किमी. दूर सांगानेर में प्रतिष्ठित भगवान आदिनाथ की डेढ़ फुट ऊँची प्रतिमा अपनी सुंदरता और अंग सौष्ठव में अप्रतिमेय है। संधीजी के मंदिर के नाम से विशाल शिखरयुक्त मंदिर की भित्तियों पर चारों ओर पत्थर पर खुदाई करके श्री भक्तामर जी के 48 काव्यों की चित्रात्मक अभिव्यक्ति की गई है।

चमत्कार जी (सवाई माधोपुर)–

सवाई माधोपुर नगर से लगभग 5 किमी. दूर भूगर्भ से प्राप्त भगवान ऋषभदेव की स्फटिक की प्रतिमा के चमत्कार

और मनोकामना पूरे होने के अनेकों ज्ञात-अज्ञात उदाहरणों के कारण क्षेत्र का नाम ही चमत्कार जी पड़ गया है। जैन-अजैन, हिंदू-मुसलमान सभी इस मूर्ति से वांछित वरदान प्राप्त कर चुके हैं। दो मुस्लिम सज्जनों द्वारों निर्मित छतरियाँ प्रतिमाएँ दर्शनीय हैं।

पहुँच मार्ग तथा पता—सवाई माधोपुर (राज.) स्टेशन से 3 किमी. टोंक सड़क मार्ग से जयपुर, कोटा, दिल्ली, अजमेर सभी ओर से

पता— श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र चमत्कार जी
ग्राम-आलनपुर जिला-सवाईमाधोपुर (राज.)-322021
फोन-07462-233816

चांदखेड़ी अतिशय क्षेत्र—

राजस्थान के ही झालरापाटन-बारां सड़क पर 34 किमी. खानपुर कस्बे में चांदखेड़ी अतिशय क्षेत्र विद्यमान है। भगवान आदिनाथ की 6' 6" फुट ऊँची 5 फुट चौड़ी लाल पाषाण की इतनी मनोज्ञ मूर्ति अन्यत्र देखने में नहीं आई। किवदन्तियाँ तो हजारों हैं, पर मूर्ति का समचतुरस्र संस्थान, वीतरागभाव नासा दृष्टि और तीखे नाक-नक्शे स्वयं में एक अतिशय है, जिसे सदैव और प्रत्यक्ष अनुभव किया जा सकता है संवत् 512 की यह मूर्ति भारत की श्रेष्ठ मूर्तिकला का उदाहरण है। मंदिर की रचना में किसी तिलिस्मी उपन्यास की तरह घेर-घुमाव की भूल-भुलैया का प्रयोग किया गया है।

विशाल धर्मशाला तथा सभी साधन उपलब्ध।

पहूँच मार्ग व पता—रेल-रामगंज मंडी से 50 किमी., कोटा से 110 किमी.। सड़क-खानपुर बस स्टैण्ड से 1 किमी. रामगंज मण्डी, कोटा, झालावाड़, गुना, इंदौर से नियमित बसें।

पता— श्री आदिनाथ दिगम्बर जैन महातिशय क्षेत्र चांदखेड़ी
पोस्ट-खानपुर जिला-झालावाड़ (राज.)-326038
फोन नं.-07430-261358

पद्मपुरा—

भगवान पद्मपुरा की चमत्कारी डेढ़ फीट अवगाहना युक्त चेहरे पर असीम तृप्ति और आश्वस्ति के भावोंवाली बाड़ा के पदमप्रभु की प्रतिमा आज से 60 वर्ष पूर्व ही मूला जाट द्वारा भूगर्भ से प्रकट की गई। देशभर से देहिक, दैविक और भौतिक तापों से संत्रस्त हजारों दुखी प्राणी विशेषकर प्रेतबाधा के रोगी आज भी पदमप्रभु के सामने देखे जा सकते हैं जिनके अंदर की व्यन्तर बाधा भगवान के सामने सिर झुका कर पलायन कर जाती है और रोगी भक्त भला-चंगा होकर घर लौट जाता है।

श्वेत संगमरमर से निर्मित नवीन गोलाकार विशाल मंदिर अपनी अद्भुत शिल्पकला के लिए देशभर में प्रसिद्ध हैं अन्दर के विस्तृत गर्भगृह में 11 वेदियाँ हैं, जिनमें भगवान आदिनाथ, भरत और बाहुबली सहित अन्य तीर्थंकर मूर्तियाँ विराजमान हैं। एक अलग मंदिर में 28 फुट ऊँची भगवान पद्मप्रभु की मनोज्ञ कायोत्सर्ग मुद्रा में मूर्ति स्थापित है। नवनिर्मित मंदिर के चारों ओर विशाल धर्मशालाएँ हैं। सबेरे-सबेरे धर्मशाला के आंगन में मयूरों के नृत्य और ध्वनि-सुनकर यात्री का मन-मयूर भी नाच उठता है।

पहुँचमार्ग तथा पता—जयपुर से शिवदासपुर होकर रेलमार्ग (ब्रॉडगेज) 7 किमी. सड़क मार्ग जयपुर से नियमित बस सेवा।

पता— श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र, पदमपुरा वाड़ा,.
तह. चाकसू, जिला-जयपुर (राज.)-309909
फोन नं.-01429-277225, 277210

अजमेर (अजयमेरू)–

राजस्थान का प्रमुख नगर अजमेर अपने शौर्य और संस्कृति के लिए प्रसिद्ध रहा है। दिल्ली के अधिपति पृथ्वीराज चौहान की राजधानी अजमेर में 25 जिन मंदिर हैं।

जैन जगत के सर्वमान्य श्रेष्ठी सर सेठ भागचंद्र जी सोनी की कार्यस्थली अजमेर में सोनी जी की नशिया विश्वविख्यात जैन मंदिर है, जिसके मूलनायक भगवान आदिनाथ की प्रतिमा की प्रतिष्ठा 1865 में की गई। मंदिर दो भागों में शिखरजी क्षेत्र की भाँति भगवान आदिनाथ के जीवन की 28 झाकियाँ यात्रियों का मन और थकान दोनों हर लेती हैं। यहाँ के शास्त्र भंडार में स्वर्ण, नीलम, पन्ना, हाथी दांत एवं ताम्रपत्रों की पट्टिकाएं लगी हैं। बड़ा धड़ा मंदिर, छोटा धड़ा मंदिर, ढाई दिन का झोपड़ा आदि सभी मंदिर धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष पुरुषार्थों की सजीव झांकी प्रस्तुत करते हैं।

मुसलमानों की प्रसिद्ध ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती की दरगाह तथा पास ही हिन्दुओं का "पुष्कर तीर्थ" पवित्र सरोवर है, जिसके निकट भी एक जैन मंदिर है।

अजमेर चारों ओर से रेल तथा सड़क मार्ग से जुड़ा है।

पता–श्री दिगम्बर जैन मंदिर, सोनी जी की नशिया, अजमेर (राज.)

केशोरायपाटन–

कोटा से 14 किमी. दूर पर भगवान मुनिसुव्रतनाथ की श्यामवर्णी प्रतिमा अनेक चमत्कारों एवं किवदंतियों के कारण प्रसिद्ध है। यहाँ भक्त नवग्रहों और विशेष से शनिग्रह की शांति के लिए वर्ष भर आते हैं।

दूसरी विशेषता है कि प्राचीन दिगम्बर जैन आचार्य सिद्धांत चक्रवर्ती नेमिचंद्र ने यहीं बैठकर **वृहद् द्रव्य संग्रह** ग्रंथ की रचना की थी।

पहुँच मार्ग तथा पता–कोटा रेलवे स्टेशन से 14 किमी., केशोरायपाटन स्टेशन से 3 किमी.

पता– श्री मुनिसुव्रतनाथ दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र केशोराय पाटन
पोस्ट-केशोराय पाटन, जिला-बूंदी (राज.)
फोन नं.-07438-264323

चित्तौड़गढ़–

"गढ़ तो चित्तौड़गढ़ और सब गढ़ैया है, रानी तो पद्मिनी और सब गधैयां है।"

शौर्य और बलिदान का जीवन्त प्रतीक चित्तौड़गढ़ अनेक देशभक्त और बलिदानी वीरों की जन्मभूमि है। महाराणा प्रताप, राणा कुम्भा, राणा सांगा और रूप सौन्दर्य की प्रतीक महारानी पद्मिनी, जिन्होंने जौहर किया, पन्नाधाय जिन्होंने राज्य के लिए अपने पुत्र का बलिदान किया और मीरा जो आज तक प्रेम का प्रतीक है, इसी चित्तौड़ की रत्नगर्भा धरती के ऐसे उदाहरण हैं, जिनकी चमक सूर्य और चंद्रमा से होड़ करती है। यह भारत का प्रसिद्ध पर्यटन स्थल है।

जैन कला और संस्कृति की दृष्टि से राणा कुंभा द्वारा निर्मित 75 फीट ऊँचा, सात मंजिला ऊँचा जैन कीर्तिस्तंभ अपनी तथा अपने निर्माता की कीर्ति को अक्षुण्ण बनाये हुए है। एक मंदिर 10वीं शताब्दी का है, जिसमें भगवान आदिनाथ और शांतिनाथ की भव्य प्रतिमाएँ हैं।

पहुँच मार्ग व पता–अजमेर से 189 किमी. उदयपुर से 175 किमी. है। सड़क मार्ग से चारों ओर से जुड़ा है।

ऋषभदेव (केशरिया जी)–

उदयपुर से 65 किमी. दूर राजस्थान का सबसे प्राचीन तीर्थ भगवान ऋषभदेव मंदिर एक किले के परकोटे में स्थित है। श्यामवर्ण की 3'.6" फुट अवगाहना वाली चमत्कारी मूर्ति का केशर चढ़ाने की परंपरा होने से इसे केशरिया जी के नाम से अधिक जाना जाता है। मक्सी जी की तरह यहाँ भी दिगम्बर-श्वेताम्बर संप्रदाय का विवाद है।

स्थानीय भीलों द्वारा पूजित "करिया बाबा" का इतना प्रभाव है कि लोग इनके दर्शन के बाद बिल्कुल सच बोलते

हैं, चाहे कितना भी नुकसान क्यों न हो जाये। मंदिर की शिल्पकारी अनूठी है।

पहुँच मार्ग व पता–उदयपुर से रेलमार्ग 65 किमी. ऋषभदेव रेलवे स्टेशन से 12 किमी. पर है। चारों ओर से यह क्षेत्र सड़क मार्ग से भी जुड़ा है। एक बस स्टैण्ड भी है।

पता– श्री ऋषभदेव दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र (केशरिया जी)
ऋषभदेव तहसील-खेरवाड़ा, जिला-उदयपुर (राज.)-313802
फोन नं.-02907-230744

माउण्ट आबू (दिलवाड़ा)–

दिलवाड़ा आबू के जैन मंदिर संगमरमर पर लिखी कविता है अथवा संगमरमर को मोम बनाकर स्वयं विधाता ने श्रमपूर्वक रचना की है, कहना कठिन है।

संगमरमर की रचनाओं में ताजमहल का नाम विश्व प्रसिद्ध हैं, किन्तु जिसने दिलवाड़ा के जैन मंदिर की छतों पर बारीक शिल्पकला का जादू देख लिया है, वह ताजमहल को भूल जाएगा। मुख्य सड़क पर अचलगढ़ में ही थोड़ी ऊँचाई पर 500 वर्ष प्राचीन पीतल की 1500-1500 मन की दो दिगम्बर जैन तीर्थंकरों-भगवान आदिनाथ तथा भगवान कुंथुनाथ की मूर्तियाँ तत्कालीन धातु शिल्प और मूर्तिकला के श्रेष्ठ उदाहरण हैं जो भक्तों को मुग्ध कर देती हैं।

दिलवाड़ा में श्वेताम्बर मंदिर समूह में विमलवसदि शिल्पकला में अप्रतिम और सर्वश्रेष्ठ है। गुजरात नरेश भीमदेव प्रथम के मंत्री और सेनापति विमल और लूणकरण दो भाइयों द्वारा संवत् 1031 में 1500 शिल्पियों तथा 1200 श्रमिकों के 14 वर्षों के अथक परिश्रम और उस समय 18 करोड़ 53 लाख रुपयों की लागत से निर्मित मंदिरों की छत गुंबद, खम्भे, प्रवेश द्वार, तोरण सभी एक से बढ़कर एक और अद्भुत हैं। दिलवाड़ा के मंदिरों को देखकर सहसा विश्वास नहीं होता कि यह मंदिर मनुष्यों ने बनाए होंगे। यह देवकृत माया ही लगती है।

मंदिर पर बनी विविध फूलों की संरचना को कोई कुशल चित्रकार भी कागज पर नहीं बना सकता। यह नक्काशी अनुपम, अद्भुत और अविश्वसनीय है, पर सच है।

मंदिर के 12 स्तंभों पर टिका विशाल गुंबज उस पर अप्सरा, नर्तकियों की मोहक भाव-भंगिमाएं छत से लटकते हुए अर्द्धविकसित कमल पंखुड़ियाँ दर्शक को एक स्वप्न लोक और कल्पना लोक में ले जाती हैं।

आबू का जादू भाव प्रवण और संवेदनशील दर्शक को सम्मोहित कर देता है और वह वर्षों-वर्षों उस सौंदर्य शिल्प को भुलाने में समर्थ नहीं होता। आबू का सूर्यास्त, नक्की झील, टोडराक, ब्रह्मा-कुमारियों का विश्वकेन्द्र मुख्यालय दर्शनीय स्थल हैं।

पहुँच मार्ग–पश्चिम रेलवे की छोटी लाइन के आबू रोड स्टेशन से 29 किमी. दूर आबू पर्वत पूरे राजस्थान से सड़क मार्ग से जुड़ा है।

तिजारा (देहरा तिजारा) अतिशय क्षेत्र–

अलवर से 55 किमी. दूर अतिशय क्षेत्र तिजारा देहरा राजस्थान का एक नया-नया उजाले में आया क्षेत्र है। यद्यपि यह एक अत्यंत प्राचीन पार्श्वनाथ भगवान के अतिशय क्षेत्र के रूप में गुमनामी के अंधेरे में खोया क्षेत्र था, किन्तु पिछले 50 वर्ष से भगवान चन्द्रप्रभु की भूगर्भ से निकली अतिशयकारी मूर्ति ने इस क्षेत्र पर जादू करके उसकी काया ही पलट दी।

पहुँच मार्ग तथा पता–अलवर स्टेशन से 55 किमी. तथा दिल्ली अलवर भिवाड़ी से प्रतिदिन सुविधाजनक नियमित बसों द्वारा तिजारा पहुँचा जा सकता है।

चांदनपुर महावीर जी–

भगवान महावीर से संबंधित तीर्थों की बात चलते ही चांदनपुर वाले महावीर भगवान की याद पहले आती है। श्री महावीर जी अतिशय क्षेत्र राजस्थान की शान है।

दिगम्बर जैन धर्मावलंबियों के चार धामों में से एक धाम श्री महावीर जी अतिशय क्षेत्र है। देश में एक भी ऐसा जैनी नहीं होगा, जिसने जीवन में एक बार भगवान महावीर की मूंगावर्णी मनोज्ञ मूर्ति के दर्शन न किए हों, किवदन्तियों की बात जाने दें तो भगवान महावीर की मूर्ति ने प्रत्येक भारतवासी के हृदय पर ऐसी अमिट छाप छोड़ी है कि उसे विश्वास

हो गया कि यही भगवान महावीर की वास्तविक छवि है। अतिशय और अटूट श्रद्धा की केन्द्र भगवान महावीर की मूर्ति अद्भुत है जिसे देश का जैन-अजैन एक बार दर्शन पाकर धन्य हो जाना चाहता है। यहाँ के मीणा गूजर, जाट लोगों के मन में चांदनपुर के महावीर विभिन्न रूपों से हृदय में स्थायी रूप से विराजमान हैं।

यद्यपि कुण्डलपुर भगवान महावीर की जन्मस्थली और पावापुर निर्वाण क्षेत्र हैं, किन्तु श्री महावीर जी गंभीर नदी के तट पर केवल 250 वर्ष से प्रकाश में आया क्षेत्र अपनी सहज पहुँच और अवस्थिति के कारण भगवान महावीर के सर्वाधिक लोकप्रिय तीर्थक्षेत्रों में गिना और माना जाता है। ऐसा लगता हैं कि श्री महावीर जी क्षेत्र का वर्णन किये बिना भगवान महावीर का वर्णन पूरा नहीं होता। क्षेत्र पर विशाल धर्मशालाएँ हैं जो एक साथ दस हजार यात्रियों को स्थान दे सकती हैं। नगर में दस मंदिर है। नदी के उस पार शांतिवीर नगर है। **जनवरी सन् 1996 में पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी जब मांगीतुंगी यात्रा के मध्य महावीर जी अतिशय क्षेत्र पर पहुँची तो अपनी क्षुल्लिका दीक्षा की उस भूमि को कुछ भेंट समर्पित करने की भावना से वहाँ एक मन्दार कल्पवृक्ष निर्मित करने की प्रेरणा दी। महावीर जी के शांतिवीरनगर नामक नूतन तीर्थ पर लाला प्रेमचंद जैन, खारीबावली-दिल्ली के सौजन्य से चार जिनप्रतिमाओं से समन्वित वह मन्दार कल्पवृक्ष निर्मित होकर जन-जन को कल्पवृक्ष के समान इच्छित फल प्रदान कर रहा है।** पद्मश्री ब्रह्मचारिणी कमलाबाई की निस्वार्थ सेवा ने देश की अनेकों बालिकाओं, विधवाओं और जीवन से ऊब चुकी महिलाओं को शिक्षा, दीक्षा और संस्कार प्रदान किये। उनके आश्रम में निर्मित कांच का मंदिर कलात्मक सौंदर्य का प्रतीक है। वार्षिक मेला चैत्र शुक्ल 13 से वैशाख कृष्ण 2 तक प्रतिवर्ष दीपावली पर निर्वाण लाडू चढ़ाने देशभर से श्रद्धालु आते हैं।

पहुंच मार्ग तथा पता–दिल्ली, कोटा, मुंबई मार्ग की प्रायः सभी छोटी-बड़ी रेलगाड़ियाँ श्री महावीर जी स्टेशन पर रुकती हैं, जहाँ से 7 किमी. क्षेत्र है। दिल्ली, जयपुर से सड़क मार्ग द्वारा जुड़ा है। क्षेत्र की बसें नियमित रूप से प्रत्येक गाड़ी के समय आती जाती है।

निजी वाहनों से भी सुविधायुक्त पक्की सड़क है।

पता– श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीर जी
पोस्ट-श्री महावीर जी, तह.-हिण्डोन, जिला-करौली (राजस्थान)-322201
फोन नं.-(07469) 224323

गुजरात

तारंगा सिद्धक्षेत्र–

वरदत्तादि साढ़े तीन कोटि मुनिराजों का निर्वाण क्षेत्र तारंगा गुजरात का प्रमुख जैन तीर्थ क्षेत्र है। तारंगा पर्वत की तलहटी में जैन धर्मशाला तथा कमेटी का कार्यालय है। वहीं से छोटी सी पहाड़ी पर चढ़कर एक गुफा के दर्शन होते हैं, जिसमें भगवान नेमिनाथ की 5 फीट ऊँची प्रतिमा है। गुफा से लौटकर पार्श्वनाथ टोंक पर आते हैं जहाँ भगवान पार्श्वनाथ की 1 फुट ऊँची प्रतिमा है। इसे कोटिशिला कहते हैं। कोटशिला से नीचे उतर कर सिद्धशिला पर चढ़ते हैं, जहाँ नेमिनाथ भगवान और बाहुबली भगवान की मूर्तियाँ हैं। तलहटी में 13 दिगम्बर जैन मंदिर हैं, जहाँ मूलनायक संभवनाथ जी का मंदिर और आदिनाथ मंदिर मुख्य हैं। नगर में हीरा की कटाई का गृह उद्योग है, जो दुनियाभर में प्रसिद्ध है।

जनवरी सन् 1997 में पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी का ससंघ पदार्पण तारंगा जी सिद्धक्षेत्र पर हुआ। तब उन्होंने दिल्ली निवासी अहमदाबाद प्रवासी मिल्टनग्रुप के मालिक श्री महिपाल सिंह जैन को तारंगा में एक भगवान ऋषभदेव की विशाल प्रतिमा विराजमान करने की प्रेरणा दी। फलस्वरूप वहाँ ग्रेनाइट की प्रतिमा विराजमान हो चुकी है। शीघ्र ही पंचकल्याणक प्रतिष्ठापूर्वक वह भगवान ऋषभदेव की प्रतिमा प्रतिष्ठित होकर भव्यों को जैनधर्म की प्राचीनता का दिग्दर्शन कराएंगी।

वार्षिक मेला–कार्तिक शुक्ला 15 भगवान संभवनाथ के जन्मकल्याणक दिवस को वार्षिक मेला भरता है।

पहुँच मार्ग तथा पता-तारंगा रेलवे स्टेशन से मेहसाणा तथा पाटनपुर रेलवे स्टेशन 80 किमी. सड़क मार्ग से भी

पहुँचा जा सकता है।

पता– श्री दिगम्बर जैन सिद्धक्षेत्र तारंगा जी
कोठी तारंगा जी, पोस्ट-तारंगा टेम्पल
तह.-सतलासणा, जिला-मेहसाणा (गुज.)-384350
फोन नं.-02761-253439

शत्रुंजय गिरि (पालीताणा) सिद्धक्षेत्र–

युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन तथा आठ कोटि द्रविड़ राजाओं ने यहाँ से मोक्ष पाया।

शत्रुंजय गिरि पर केवल दो दिगम्बर जैन मंदिर हैं, पर्वत पर लगभग 3500 छोटे-बड़े श्वेताम्बरों के मंदिर हैं। जो महत्व दिगम्बर जैन सम्प्रदाय में श्री शिखर जी पर्वत का है, ठीक वही स्थिति और पूज्यता श्वेताम्बर समाज में शत्रुंजय-गिरि की है। नगर में भी दो दिगम्बर जैन मंदिर हैं। एक विशाल दिगम्बर जैन धर्मशाला है। मंदिरों में उत्तम कारीगरी तथा शिल्प सौंदर्य है।

पहुँच मार्ग तथा पता–भाव नगर से रेलवे से 40 और सड़क मार्ग से 45 किमी. पालीताणा नगर है। निजी वाहन से भी जाया जा सकता है।

पता– श्री दिगम्बर जैन जी धर्मशाला, भैरवपुरा शत्रुंजय, पोस्ट-पालीताणा, जिला-भावनगर (गुजरात)-364270
फोन नं.-02848-252547

पावागढ़–

यह क्षेत्र रामचंद्र जी के दोनों पुत्र अनंग लवण (लव) तथा मदनांकुश (कुश) और अन्य पाँच कोटि मुनियों की सिद्धभूमि पावागढ़ गुजरात के पंचमहाल जिले में स्थित है। पहाड़ पर पुराना किला और खंडहर है। यहाँ 7 जैन मंदिर हैं। भगवान पार्श्वनाथ तथा महावीर भगवान के प्रसिद्ध जैन मंदिर शहर में है। शहर को चांपानेर के नाम से जाना जाता है, जो सैनिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

पावागढ़ के दिगम्बर जैन मंदिर में पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से नवनिर्मित ध्यानकक्ष के अन्दर चौबीस तीर्थंकरों से समन्वित "ह्रीँ" बीजाक्षर की प्रतिमा विराजमान हुई हैं जो आगन्तुक भक्तों को आत्मशांति का अमर संदेश प्रदान करती हैं।

पहुँच मार्ग तथा पता–बड़ौदा रेलवे स्टेशन से 50 किमी. छोटी लाइट पर चांपानेर स्टेशन गोधरा तथा बड़ौदा से सड़क मार्ग द्वारा।

पता– श्री दिगम्बर जैन सिद्धक्षेत्र पावागढ़
तह.हालोल, जिला-पंचमहाल (गुज.)-389360
फोन नं.-02676-245624

अंकलेश्वर अतिशय क्षेत्र–

भरुच जिले का अंकलेश्वर अपनी चिन्तामणि पार्श्वनाथ की मनोज्ञ एवं कलयाणकारी प्रतिमा के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ 4 जिनालय हैं। अंकलेश्वर की प्रसिद्धि का प्रमुख कारण यह है कि अष्टांग के निमित्तज्ञानी आचार्य धरसेन के शिष्य पुष्पदंत तथा भूतबली मुनिराजों ने धवला ग्रंथ के लेखन की भूमिका यही अपने पहले चातुर्मास में सम्पन्न की थी।

आज अंकलेश्वर अपने तेल शोधक कारखाने के लिए जाना जाता है, साथ ही अनेक उद्योग यहाँ लगे हैं।

उपाध्याय धर्मकीर्ति ने "यशोधर चरित्र" की रचना यहीं की थी। यहाँ मूलसंघ तथा काष्ठा संघ के भट्टारकों की गद्दियाँ थीं, जिनके चरण चिन्ह आज भी अंकलेश्वर में प्रतिष्ठित हैं।

पहुँच मार्ग–पश्चिम रेलवे के सूरत तथा बड़ौदा स्टेशन के बीच अंकलेश्वर सड़क मार्ग से भी चारों ओर से जुड़ा है।

महाराष्ट्र

गजपंथा सिद्धक्षेत्र (नासिक) महा.–

नासिक जिले में स्थित इस क्षेत्र से सात बलभद्र और आठ कोटि यदुवंशी राजा दीक्षा लेकर मोक्ष पधारे। नासिक शहर से 6 किमी. दूर पर्वत पर 3 गुफा मंदिर तथा 2 नव निर्मित जिनालय हैं। 400 फुट ऊँचे पर्वत पर पार्श्वनाथ गुफा दर्शनीय है। म्हसरूल ग्राम में स्थित पर्वत के नीचे धर्मशाला में मूलनायक भगवान महावीर का जिनालय है। पर्वत पर जाने के लिए पक्की सीढ़ियाँ हैं। नासिक शहर गोदावरी नदी के किनारे स्थित है, यहाँ पंचवटी स्थित है, जहाँ श्रीराम वनवास की अवधि में ठहरे थे।

वार्षिक मेला–माघ शुल्क 14 को वार्षिक मेला भरता है।

पहुँच मार्ग तथा पता–नासिक रोड रेलवे स्टेशन से 16 किमी. नासिक शहर से 6 किमी. सड़क द्वारा चारों ओर से सुविधा।

पता– श्री दिगम्बर जैन सिद्धक्षेत्र गजपंथा जी
ग्राम म्हसरूल जिला-नासिक (महा.)-422004
फोन नं.-0253-2530215, 2533986

मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्र–

परमपावन क्षेत्र मांगीतुंगी से राम, हनू, सुग्रीव, गव-गवाक्ष, नील, महानील" आदि शलाका पुरुष मोक्ष को प्राप्त हुए हैं। इसे दक्षिण भारत का शिखर जी जैसा महत्व और मान्यता प्राप्त है। सीताजी यहीं से तपस्या करके 16वें स्वर्ग में प्रतीन्द्र हुई। कहते हैं कि बलभद्र ने नारायण कृष्ण का दाह संस्कार भी इसी स्थान पर किया था। पर्वत की तलहटी में धर्मशाला और विशाल प्रांगण है वहीं मानस्तंभ तथा दो जिनालय भी हैं। मई सन् 1996 में यहाँ स्व. आचार्यश्री श्रेयाँससागर महाराज की प्रेरणा से निर्मित भगवान मुनिसुव्रतनाथ की विशाल मूलनायक प्रतिमा से समन्वित चौबीस तीर्थंकर मंदिर का पंचकल्याणक महोत्सव सम्पन्न हुआ। सिद्धक्षेत्र मांगीतुंगी का यह सबसे बड़ा मंदिर है।

पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से पर्वत पर 108 फीट ऊँची भगवान ऋषभदेव की मूर्ति बनाई जा रही है। इन्हीं की प्रेरणा से सुंदर उद्यान के मध्य सहस्रकूट कमल मंदिर में 1000 मूर्तियाँ प्रतिष्ठित हैं। मांगी पहाड़ी पर 7 और तुंगी पहाड़ी पर 4 मंदिर हैं।

पहुँच मार्ग तथा पता–मनमाड़ रेलवे स्टेशन से 100 किमी.। मालेगांव, नासिक और मनमाड़ से सड़क मार्ग द्वारा बस स्टैण्ड। तहाराबाद से 11 किमी. सड़क से।

पता– श्री मांगीतुंगी जी जैन सिद्धक्षेत्र
तालुका-सठाणा, जिला-नासिक, महाराष्ट्र-423302
फोन नं.-02555-242519

पोदनपुर (बोरीवली मुम्बई)–

देश की आर्थिक राजधानी मुम्बई यूँ तो दुनिया के प्रथम छः नगरों में से एक है और अनेकों भव्य जैन मंदिर तथा दर्शनीय स्थल अरब सागर के किनारे बसी मुम्बई में देखने को मिलते हैं, किन्तु हाल ही में चारित्रचक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागर महाराज की पावन स्मृति में उनके शिष्य परमतपस्वी आचार्यश्री नेमिसागर जी की प्रेरणा से उपनगर बोरीवली में निर्मित पोदनपुर में भगवान ऋषभदेव देव, भरत और बाहुबली की क्रमशः 31 फिट और 29-29 फीट की मूर्तियाँ विराजमान हैं। यह जैनों का नवीन तीर्थ बन गया है।

चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर जी महाराज के चरण चिन्ह और चौबीसी दर्शनीय है। अन्य आँचार्यों के भी चरण चिन्ह स्थापित हैं। एक विशाल धर्मशाला है, जिसमें बारह महीने साधु-संत निवास करते हैं। उत्तम व्यवस्था

युक्त धर्मशाला में मुनियों के चातुर्मास आदि होते ही रहते हैं।

मुम्बई के भौतिक और विलासितामय जीवन से ऊब कर यहाँ आने पर मानसिक और आध्यात्मिक शांति का अनुभव होता है।

पता– श्री आचार्य शांतिसागर स्मारक ट्रस्ट
तीन मूर्ति पोदनपुर, टाटा पॉवर हाउस के पास
बोरीवली (पूर्व) मुम्बई-400066

कुम्भोज बाहुबली (कोल्हापुर) महा.–

इसी काल के आचार्यश्री समंतभद्र द्वारा विकसित अपेक्षाकृत नवीन तीर्थ कुम्भोज-बाहुबली एक मनोरम और विविधताओं से भरा तीर्थ है। भगवान बाहुबली की 28 फीट ऊँची मनोज्ञ प्रतिमा के कारण इस क्षेत्र का नाम कुम्भोज बाहुबली प्रसिद्ध हो गया। इसके अतिरिक्त समवसरण मंदिर, स्वयंभू मंदिर, सहस्रकूट जिनालय, सुंदर उपवन, विशाल विद्यापीठ और अनेक प्रसिद्ध तीर्थ शिखर जी, गिरनार जी, सोनागिरी, कैलाशपर्वत, तारंगा, गजपंथा आदि की लघु अनुकृतियाँ सजीव सी लगती हैं और एक स्थान पर ही भारत के सभी तीर्थों के भावपूर्ण परोक्ष दर्शन हो जाते हैं।

मुख्यरूप से यह तीर्थ गुरुकुल प्रणाली से शिक्षा के अनुपम केन्द्र के रूप में प्रसिद्धि को प्राप्त है।

पहुँच मार्ग तथा पता–रेलवे स्टेशन हाथकणंगले से 8 कि.मी. बस स्टैण्ड हाथकणंगल

पता– श्री बाहुबली ब्रह्मचर्यपुरा तथा विद्यापीठ अतिशय क्षेत्र बाहुबली (कुम्भोज)
तालुका-हाथकणंगले जिला कोल्हापुर (महाराष्ट्र)-416110
फोन नं.-0230-2584422

कुंथलगिरि–

यद्यपि इस क्षेत्र से कुलभूषण और देशभूषण नामक दो मुनिराजों को मोक्ष प्राप्त हुआ है किन्तु दक्षिणी महाराष्ट्र में कुंथलगिरी चारित्रचक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागर जी महाराज की समाधिस्थली के कारण अधिक चर्चा में है। किन्तु छोटा सा पर्वत जिस पर जाने के लिए सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। वहाँ सात जिनालय हैं।

मुख्य मंदिर में कुलभूषण देशभूषण मुनिराजों के प्राचीन चरण चिन्ह स्थापित हैं। दूसरा मंदिर शांतिनाथ भगवान का है, जहाँ वह कक्ष भी है, जहाँ पर आचार्य शांतिसागर जी महाराज ने सल्लेखनापूर्वक समाधि लेकर मुनिचर्या का आदर्श स्थापित किया। 18 सितम्बर 1955 को उनका समाधिमरण हुआ। यह कक्ष अब एक तीर्थरूप बन गया है। इनके अतिरिक्त बाहुबली मंदिर, आदिनाथ मंदिर, विदेह क्षेत्र के बीस तीर्थंकरों का चैत्यालय, नंदीश्वर जिनालय हैं। तलहटी में चार बड़े भव्य मंदिर हैं। यहाँ गुरुकुल ब्रह्मचर्याश्रम और अच्छी सुविधायुक्त बड़ी धर्मशाला है।

पहुँच मार्ग तथा पता–रेलवे स्टेशन कुर्डूवाडी से 60 किमी.। बस स्टैण्ड भूम से उस्मानाबाद होकर

पता– श्री दिगम्बर जैन सिद्धक्षेत्र कुंथलगिरी
पोस्ट-कुंथलगिरी तालुका भूम, जिला-उस्मानाबाद
फोन नं.-02478-276860

कचनेर–

चिंतामणि पार्श्वनाथ की अतिशयकारी प्रतिमा ने कचनेर तीर्थ को भक्तों की शरणस्थली बना दिया है। श्री महावीर जी जैसी यहाँ के चिंतामणि पार्श्वनाथ की ख्याति है। खण्डितमूर्ति चमत्कारी ढंग से जुड़ जाने से लोग चमत्कृत हुए। वर्तमान में यह नवविकसित अतिशयक्षेत्र के रूप में प्रसिद्ध है।

पहुँच मार्ग तथा पता–रेलवे स्टेशन औरंगाबाद से 33 किमी. क्षेत्र का वाहन प्रतिदिन 7.00 बजे प्रातः, शाम 5.00 बजे उपलब्ध रहता है।

पता– श्री चिंतामणि पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र कचनेर
पोस्ट-कचनेर, जिला-औरंगाबाद (महाराष्ट्र)-431002
फोन नं.-0240-2644108

एलोरा अजंता–

विश्व प्रसिद्ध एलोरा की गुफाएं अजन्ता के भित्तिचित्र भारत की सांस्कृतिक एवं शिल्पकला-चित्रकला के गौरव हैं। यहाँ सत्यम् शिवम् सुन्दरम् के वास्तविक दर्शन होते हैं। औरंगाबाद जिले से 29 किमी. दूर एलोरा की 34 प्रसिद्ध गुफाएं हैं, जिनमें बौद्ध, हिन्दू तथा जैन गुफाएँ हैं। शिवजी अथवा भगवान आदिनाथ से संबंधित 1-12, 13-29, 30-34 गुफाएँ हैं। 16 नं. कैलाश गुफा तीन मंजिल एक ही पर्वत को काटकर रथनुमा बनाई गई है। गुफा नं. 32 को इंद्र सभा कहते हैं, जो एक ही पर्वत को काटकर दो मंजिला गुफा है। दीवारों पर नृत्य मुद्रा में इंद्र तथा अप्सराएं दर्शक का मन मोह लेती हैं। छतों पर अजंता जैसी चित्रकला भी है। छोटा कैलाश और जगन्नाथ गुफाएं सर्वश्रेष्ठ गुफाएं हैं। संपूर्ण मूर्तियों में मकर वाहिनी गंगा की मूर्ति विश्व की सुंदरतम् मूर्तियों में से एक है। इसी प्रकार गुफा नं. 30 छोटा कैलाश गुफा से बारह भुजी सौंदर्य इन्द्र की मूर्ति है, जिसकी सभी भुजाओं पर अप्सराएं नृत्य मुद्रा में उकेरी गई है।

गुफा नं. 32 में भगवान पार्श्वनाथ की मूर्ति है, जिस पर सात फण वाले फरणेन्द्र की छाया है। दायीं ओर की दीवार परं भगवान बाहुबली की प्रतिमा है, जिस पर से देवियाँ लता पत्र हटाती हुई दर्शाई गई है, इसमें अंकित यक्ष-यक्षियों के विभिन्न आभूषण मुद्राएं और केश-सज्जा तथा वस्त्रों की चुन्नटे तक गिनी जा सकती हैं।

गुफा नं. 33 जगन्नाथ गुफा कहलाती हैं, यह दो मंजिल है। ऊपर की मंजिल में जाने के लिए सीढ़ियाँ पहाड़ काटकर बनाई गई हैं।

गुफा नं. 34 के बाहर एक जलकुण्ड है, जिसके ऊपर पर्वत से झरने का जल एकत्रित होता है।

गुफा नं. 30 से उत्तर की ओर लगभग 3 फर्लांग पर पार्श्वनाथ मंदिर बना है। नवनिर्मित इस मंदिर में 16 फुट ऊँची अर्द्ध पद्मासन भगवान पार्श्वनाथ की श्यामवर्ण प्रतिमा है। नौ फण वाले सर्प की आकृति ने मूर्ति को दर्शनीय बना दिया है।

क्षेत्र पर से ही अजन्ता जाने का मार्ग है, जहाँ भगवान बुद्ध से संबंधित भित्तिचित्र विश्व कला जगत के सिरमौर हैं। मेघदूतम, पद्मपाणि और मरणासन्न राजपुत्री के चित्र दुनिया में बेजोड़ हैं। औरंगाबाद में बीबी का मकबरा काले पत्थर पर ताजमहल की आकृति में इसमें गुरुकुल का विवरण भी जोड़ना है।

पहुँच मार्ग तथा पता–औरंगाबाद रेलवे स्टेशन से 30 किमी., चालीस गाँव से 200 किमी. औरंगाबाद बस स्टैण्ड से भी नियमित बसें और गाड़ियाँ तथा निजी वाहन मिलते हैं।

पता– श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन पहाड़ ऐलोरा (बेरूल)
तह.-खुलताबाद, जिला-औरंगाबाद (महाराष्ट्र)-431102
फोन नं.-02437-244590, 244432

पैठण अतिशय क्षेत्र–

भगवान मुनिसुव्रतनाथ की प्राचीन मूर्ति के कारण प्रतिष्ठानपुर नामक क्षेत्र पैठण के नाम से प्रसिद्ध है। श्यामवर्ण की इस मूर्ति के चमत्कारों ने इसे लोकप्रिय क्षेत्र बना दिया है और शनि अमावस्या को यहाँ यात्रा और महामस्तकाभिषेक होता है, शनिग्रह के दोष निवारण हेतु बहुत सारे भक्तगण यहाँ से शांति प्राप्त करते हैं। गोदावरी नदी के तट पर काफी ऊँचाई पर मंदिर बने होने के कारण नदी में बाढ़ आने पर भी सुरक्षित रहता है। क्षेत्र पर अच्छी धर्मशाला है।

पहुँच मार्ग तथा पता–रेल से औरंगाबाद से 50 किमी.। सड़क-औरंगाबाद तथा अहमदनगर से।

पता– श्री 1008 मुनिसुव्रतनाथ दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र पैठण
जैनपुरा पोस्ट-पैठण, जिला-औरंगाबाद (महा.)-431107

अन्तरिक्ष पार्श्वनाथ शिरपुर–

अकोला जिले के शिरपुर गाँव में स्थित भगवान पार्श्वनाथ की अधर में स्थापित मूर्ति ने इसे श्वेताम्बर और दिगम्बर समुदाय के झगड़े में प्रसिद्ध कर दिया है। भगवान पार्श्वनाथ की दिगंबर प्रतिमा भारत भर में दर्शनार्थियों की श्रद्धा और आश्चर्य का विषय है। यहाँ कारंजा के भट्टारक की गद्दी थी।

शिरपुर गाँव की गली में स्थित मंदिर के आँगन में से भौंयरे में जाने के लिए सीढ़ियाँ हं। तलघर में श्यामवर्णी 3 फिट 8 इंच ऊँची भगवान् पार्श्वनाथ की मनोज्ञ प्रतिमा स्थापित है जिस पर सप्त फणावाली शोभित है। मूर्ति भूमि से 4

अंगुल ऊँचाई पर अधर में स्थित है। केवल बाईं ओर जरा सा हिस्सा भूमि को स्पर्श करता है, मंदिर में अन्य 16 वेदियाँ हैं। दायीं ओर भगवान महावीर की श्वेत खड्गासन प्रतिमा है। मंदिर अहाते में कुँए का जल भी रोगनाशक गुणों वाला बताया जाता है। यह शिरपुर का प्राचीन पंचायती मंदिर है।

पंचायत मंदिर–उस मंदिर को कहते हैं जहाँ मूलनायक आराध्य देव, शासनदेव-देवी, गुरु की गद्दी, क्षेत्रपाल और सिद्धांत शास्त्र विराजमान हों।

इस मंदिर के पास ही एक नवीन मंदिर है, उसमें भी भगवान पार्श्वनाथ मूलनायक हैं।

वार्षिक मेला–कार्तिक शुक्ला 13 से 15 तक रथ यात्रा और मेला भरता है।

पहुँच मार्ग तथा पता–रेल वाशिम से 30 किमी. अकोला से 60 किमी.। सड़क मार्ग-शिरपुर बस स्टैण्ड से 600 मीटर दूर मंदिर है।

पता– श्री अंतरिक्ष पार्श्वनाथ स्वामी दिगम्बर जैन संस्थान
पोस्ट-शिरपुर तालुका मालेगांव, जिला–वाशिम (महा.)-444504
फोन नं.-07254-234006

कारंजा–

महाराष्ट्र प्रदेश के विदर्भ अंचल का प्रसिद्ध समृद्ध नगर तथा व्यापारिक केन्द्र कारंजा प्राचीन काल में सेनगण, काष्ठासंघ और मूलसंघ बलात्कारगण तीन-तीन भट्टारकों की गद्दी होने से इस क्षेत्र का महत्व दर्शाते हैं।

तीनों संघों के अलग-अलग क्रमशः पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन सेनगण मंदिर श्री मूलसंघ चन्द्रनाथ मंदिर तथा बलात्कारगण दिगम्बर जैन मंदिर महत्वपूर्ण है। पार्श्वनाथ मंदिर अपनी 101 मूर्तियों के कारण प्रसिद्ध है। काष्ठासंघ का लकड़ी से बना 42 खम्भों वाला दारु मण्डप दर्शनीय है। सेनगण के मंदिर की विशेषता 400 वर्ष पुरानी पंचकल्याणक चित्रावली है जो 41 फ़ीट लंबी और 3.1/4 फीट चौड़ी कपड़े पर बनी है।

रामटेक–

कहा जाता है कि श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र रामटेक में 20वें तीर्थंकर भगवान मुनिसुव्रतनाथ के समय में श्री रांम-लक्ष्मण एवं सीताजी इस क्षेत्र में आये और ठहरे थे। अब से लगभग 400 वर्ष पहले यहाँ के वन प्रान्तर में 15 फुट ऊँची भगवान शांतिनाथ जी की भव्य प्रतिमा एक वृक्ष के नीचे प्राप्त हुई थी, तत्कालीन शासक भौंसले वंश के मंत्री जो जैन धर्म के अनुयायी थे, उन्होंने राजकोष से शांतिनाथ मंदिर तथा निकट की पहाड़ी पर राम मंदिर का निर्माण कराया। रामटेक का वर्णन कालिदास के "मेघदूत" में मिलता है।

इस क्षेत्र में अनेकों अतिशय सुने जाते हैं और दिगम्बर जैन मुनियों के विहार के समय सिंह की उपस्थिति अनेक श्रावकों ने देखी हैं

अनेक अतिशय समेटे भगवान शांतिनाथ की मनोज्ञ प्रतिमा परकोटे से घिरे 10 भव्य मंदिरों में विराजमान हैं। यात्रियों के ठहरने की उत्तम व्यवस्था धर्मशाला आचार्यश्री विद्यासागर जी महाराज की प्रेरणा से चौबीसी तथा पंच बालयति मंदिर बन रहे हैं।

पहुँच मार्ग तथा पता–नागपुर से 40 किमी. दूर सड़क मार्ग से चारों ओर से जुड़ा हुआ है।

पता– श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र रामटेक
पोस्ट-रामटेक, जिला-नागपुर (महा.)-441106
फोन नं.-07114-255117

श्रवणबेलगोला गोम्मटेश बाहुबली–

कर्नाटक के हासन जिले में चन्द्रगिरि पर्वत पर भगवान बाहुबली की 57 फीट ऊँची ग्रेनाइट पत्थर की सर्वांग सुन्दर सानुपातिक सौम्य मनोज्ञ और चमत्कृत कर देने वाली मूर्ति स्थापित है। यह मूर्ति विश्व की सबसे सुन्दर एक ही पत्थर से बनी मूर्ति है। इसे भारत की विश्व धरोहर मूर्ति की मान्यता प्राप्त है। कर्नाटक राज्य में भी इसे राज्य की पहचान माना जाता है।

भारत के दि. जैन तीर्थ यात्री की चारों धाम की यात्रा दक्षिण में गोम्मटेश बाहुबली के मनोहारी दर्शन के बाद ही पूरी होती है। पूर्व दिशा में श्री सम्मेदशिखर जी पश्चिम में श्री गिरनार जी उत्तर में श्री महावीर जी और दक्षिण में श्रवणबेलगोल यह चार तीर्थ मनुष्य जन्म को सार्थक करने के लिए पर्याप्त है।

प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव के पुत्र अतुलनीय शारीरिक और आत्म बल के धारी, परम स्वाभिमानी आत्मस्वातंत्र्य के प्रबल पक्षधर स्वतंत्रता और अधिकारों की रक्षा के लिए राजपाट विभूतियाँ वैभव को तृणवत त्याग तपस्या में लीन, प्रथम कामदेव, मोक्षगामी भगवान बाहुबली की कायोत्सर्ग मुद्रा में अप्रतिम प्रतिमा किसी कवि के शब्दों में "यह लाखों में एक नहीं है दुनिया भर में एक" है।

इस महान अतिशयकारी मूर्ति के निर्माण की कथा भारत के बच्चे-बच्चे की ज़ुबान पर होगी। होयसल नरेश विष्णुवर्धन के सामन्त गंगराज राचमल्ल के मंत्री तथा प्रधान सेनापति चामुण्डराय जी ने अपनी माता कालला देवी का व्रत पूर्ण करने के उद्देश्य से इस भव्य मूर्ति का निर्माण कराया। मूर्ति के दर्शन करके इस बात पर सहज ही विश्वास हों जाता है कि चामुण्डराय ने शिल्पकार को वचन दिया कि मूर्ति को सुन्दर सांगोपांग बनाने के लिए जितना अतिरिक्त पत्थर निकालोगे उतना ही स्वर्ण प्राप्त होगा। मूर्तिकार ने भले ही पार्थिव स्वर्ण पाया होगा। किन्तु वह भी अपनी अपार्थिव कला कथा और कीर्ति की चिरस्थायी स्वर्ण स्मृति विश्व को इस प्राणाधिक प्रिय भेंट के रूप में दे गया।

अंतिम श्रुतकेवली आचार्य भद्रबाहु ने अपने निमित्त ज्ञान से यह जानकर कि उत्तरी भारत में 12 वर्षों का भीषण अकाल पड़ने वाला है। अपने शिष्य सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य तथा 12 हजार साधुओं के संघ के साथ दक्षिण की ओर विहार कर गये। वही सम्राट् चन्द्रगुप्त ने मुनिदीक्षा ग्रहण की और आचार्य प्रभाचन्द्र नाम सार्थक किया। चामुण्डराय इन्हीं आचार्य प्रभाचन्द्र जी के प्रिय शिष्य थे, जिन्होंने इस मूर्ति का निर्माण कराया।

भगवान नेमिनाथ की शासन यक्षी कुष्माण्डा देवी ने गुल्लिकायज्जी के रूप में आकर प्रथम मस्तकाभिषेक पूर्ण कराया। यहाँ प्राप्त 573 शिलालेखों के अनुसार 13 मार्च 981 को मूर्ति की स्थापना हुई और प्रति 12 वर्षों के अन्तराल से महामस्तकाभिषेक की परम्परा आज तक अक्षुण्ण चली आ रही है। 12 मार्च 1981 को एक हजार वर्ष पूर्ण होने पर एक ऐतिहासिक महामस्तकाभिषेक का आयोजन आचार्य श्रेष्ठ विद्यानंद जी की देखरेख में मनाया गया जिससे देश के 1000 से अधिक शीर्ष पंक्ति के आचार्यमुनि साधु साध्वियाँ और 10 लाख से अधिक श्रद्धालु यात्रियों ने समारोह में भाग लिया तत्कालीन प्रधानमंत्री स्व. श्रीमती इन्दिरागांधी जी ने भी समारोह में पहुँचकर स्वयं को धन्य माना।

वर्तमान में जैनमठ के भट्टारक जी स्वस्ति श्री चारूकीर्ति जी पण्डिताचार्य के सुयोग्य मार्गदर्शन एवं संरक्षकत्व में श्रवणबेलगोल दिनोंदिन प्रगति के मार्ग पर अग्रसर है।

पहुँच मार्ग व पता–कर्नाटक प्रदेश की राजधानी बैंगलोर से 142 किमी मैसूर से 80 किमी., हासन से 48 और आरसीकेरे रेलवे स्टेशन से 70 किमी. दूरी पर स्थित है। सड़क मार्ग से चन्नरायपट्टन से नियमित बसें उपलब्ध हैं। क्षेत्र यहाँ से केवल 13 किमी. दूरी पर स्थित है।

पता– श्री दिगम्बर जैन मठ
श्री श्रवणबेलगोल, जिला-हासन (कर्नाटक)

कर्नाटक प्रदेश में प्रचुर जैन शास्त्रों की ताड़पत्रों पर पाण्डुलिपियाँ, तीर्थ स्थान एवं जैन साहित्य उपलब्ध हैं। वस्तुतः उत्तरभारत में दुर्भिक्ष के समय सारे जैन साधुओं ने दक्षिण की तरफ विहार किया था और अधिकाधिक साहित्य भी दक्षिण ले जाया गया था, जिसकी वहाँ अच्छे से सुरक्षा और अभिवृद्धि हुई।

कर्नाटक, तमिलनाडु, आंध्र तथा केरल से अनेक तीर्थ स्थान और जैनधर्म संबंधी दर्शनीय स्थान है, जिनके नामों का उल्लेख भर किया जा रहा है।

बीदर, गुजबर्गा, बीजापुर, सहस्रफणि पार्श्वनाथ, बेलगांव, कारकज, धर्मस्थली, हुम्मच पद्मावती, मंजेश्वर (केरल), हैलेविड, कुन्दकुन्दाद्रि इत्यादि।

* * *

सिद्धक्षेत्र गुणावां जी

–अजय कुमार जैन, आरा

भगवान महावीर के प्रथम गणधर गौतम स्वामी की निर्वाणभूमि एवं भगवान महावीर के अनेक विहारों से पवित्र, प्रसिद्ध 'गुणशील चैत्य' (बिहार प्रान्त स्थित वर्तमान गुणावां जी) के दर्शन का आपको अवश्य सुयोग मिला होगा। तब वहाँ पर स्थित अनूठे जिन मानस्तंभ के भी आपने अवश्य दर्शन किए होंगे। कई दशक पूर्व निर्मित इस भव्य उत्तुंग मानस्तंभ का निर्माण गया निवासी श्रीमती केसरीमल लल्लूमल जी द्वारा करवाया गया था।

सबसे विचित्र एवं अनूठी बात जो इस मानस्तंभ के संबंध में आपको लगेगी, वह है, इसके शीर्ष के चारों कोनों पर बैठे चार तोते (सुग्गे)। प्रतिष्ठाचार्यों ने उन्हें यहाँ क्यों प्रतिष्ठित किया? उनका क्या महत्व है? यह सब अनजान रहस्य ही है, पर इतना जरूर है कि उन पर नजर पड़ते ही एक गजब सम्मोहक प्रभाव आपके व्यक्तित्व पर पड़ता है और पूरा जिनालय परिसर हरित, सुहावना, आकर्षक एवं जीवन्त हो जाता है।

इस पवित्र सिद्धक्षेत्र पर एक बात और आपका ध्यान अपनी ओर आकर्षित करेगी। आपको मंदिर के इर्द-गिर्द सैकड़ों की संख्या में सुग्गे (तोते) उड़ते हुए नजर आयेंगे। इतना ही नहीं, आपको उनकी अनवरत चहचहाहट सुनकर ऐसा लगेगा, मानों वे भी भगवान की स्तुति में णमोकार मंत्र का पाठ कर आन्दोलित हो रहे हैं।

आखिर वे इतने खुश एवं सुखी क्यों है? उनकी ऊर्जा का, उनके निर्मल आचरण का क्या आद्यात्स्रोत है? आपकी नजर मंदिर के धवल शिखर की ओर भी जायेगी, जहाँ पर मंदिर के निर्माणकर्त्ता ने आश्चर्यजनक ढंग से, मंदिर के शिखर-गुम्बज में जानबूझ कर सैकड़ों ऐसे स्थान बना रखे हैं, जहाँ ये जीव सुख एवं शांति से निवास कर सकें। "जीओ और जीने दो" का इससे बढ़िया कोई दूसरा उदाहरण आपको नहीं मिलेगा। शायद ही कहीं किसी जिनालय मैं, किसी ने इतनी बढ़िया सटीक बात सोची हो, जो जिन शासन के एकदम अनुरूप है।

पिरामिड आकार के बने गुम्बज, लोकाकाश में प्रवाहित ऊर्जा को आकर्षित कर, अपने क्षेत्र के अंदर समाहित जीव पर आश्चर्यजनक सकारात्मक प्रभाव डालते हैं। यह वैज्ञानिक दृष्टि से प्रमाणित है और शायद उस क्षेत्र में निवास कर रहे तोते भी इस प्रभाव से अछूते नहीं है।

पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी, जिनका मंगल प्रवास कुण्डलपुर जी में हो रहा हे, ने एक चर्चा के दौरान तोते के महत्व को हमें बताते हुए कहा कि तिलोयपण्णत्ति में प्रकरण आया है-

"तोता चढ़ महाशुक्र सुरपति, फूलों की माला को लाते" अर्थात् महाशुक्र नाम के इन्द्र, नन्दीश्वर द्वीप में तोते के विमान पर चढ़कर जाते हैं, फूलों की माला लाते हैं और अकृत्रिम चैत्यालयों में जिनेन्द्र प्रभु की पूजा-अर्चना अत्यंत भक्ति से करते हैं।

उस गुणावां जी सिद्धक्षेत्र पर पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणानुसार एक लघुकाय मंदिर बनाकर उसमें गौतमगणधर की सवा पांच फुट खड्गासन श्वेत वर्णी प्रतिमा विराजमान की गई हैं। यहाँ का प्राचीन जल मंदिर भी प्रसिद्ध है जहाँ भगवान महावीर की एक पाषाण प्रतिमा विराजमान हैं। दिगम्बर-श्वेताम्बर दोनों आम्नाय के जैन श्रद्धालु उस जलमंदिर में जाकर पूजा-अर्चना करते हैं।

* * *

LIFE IS AN OPPORTUNITY..........TAKE IT.

LIFE IS A BEAUTY.........PRAISE IT.

JAIN DHARMA AND LORD RISHABHDEVA

- Ganini Gyanmati

Translated by - Aryika Chandnamati

नमः श्रीपुरुदेवाय, धर्मतीर्थप्रवर्तिने।
सर्वा विद्या-कला, यस्मा-दाविर्भूता महीतले।।1।।

Where this "Jeev" (soul) wanders, goes round and round in four Gatis, that is called as "Samsar" (Universe). This Samsar is also called by the name of "Lok"-

"लोक्यन्ते" अवलोकयन्ते जीवादिषड्द्रव्याणि अस्मिन्निति लोकः"

Where, Jeev (soul), Pudgal (substance), Dharma (medium of motion), Adharma (principle or rest), Aakash (space) and Kal (time), these six Dravyas are seen, that is called as Lok. That Lok is original, eternal and is made by its nature only i.e. it has not been made by any body.

Shri Nemichandra Siddhant Chakravarti says:

लोगो अकिट्टिमो खलु, अणाइणिहणो सहावणिव्वत्तो।
जीवजीवेहिं फुडो, सव्वागासवयवो णिच्चो[1]।।4।।

This 'Lok' is divided into 3 parts-Adho Lok, (lowest), Madhya Lok (Middle) and Urdhva Lok (Upper). The height of 3 Lokas is 14 Raju and a universal thickness is 7 Raju. At the base of the 'Lok' the breadth is 7 Raju and upto Madhya Lok its height is 7 Raju and abvoe Madhya Lok upto Siddha Shila, the height of Urdhva Lok is also 7 Raju. Decreasing from the base of the Adho Lok, the breadth has been reduced to 1 Raju near Madhya Lok, further increasing from Madhya Lok the breadth had become 5 Raju upto Brahma swarga 3½ Raju; again decreasing upwards upto 3½ Raju Siddha Shila, it has been reduced to 1 Raju, so this Lok appears in the form of a humanbeing (Purushakar), who is standing with his hands on the sides of his back and legs apart. Here, one probable doubt may crop up that in 14 Raju high Lok, there is Adho Lok in 7 Raju and Urdhva Lok in next 7 Raju then what part the Madhya Lok will have?

The answer to this query is that 1 Raju comprises innumerable Yojans and in 14 Raju high Lok, lower 7 Raju contain hells (Narkas) and upper 7 Raju have heavens (Swargas). Between these two, there is Sumeru Parvat (mountain) which is 1 lac 40 Yojans high. Madhya Lok is actually in corresponding height with this Sumeru Parvat and it is some part of Urdhva Lok and is almost negligible in comparison with a Raju, that's why it has not been described in 14 Raju height.

Madhya Lok–

This Madhya Lok is 1 Raju wide. In the middle of it, there is a "Trasanali', measuring 14 Raju in height, 1 Raju in breadth and 1 Raju in thickness. Tras Jeevas having two to five Indriyas or senses reside in this "Trasanali'. Madhya Lok contains innumerable Dweeps and Samudras (islands and oceans).

Among these the first Dweep is Jamboodweep. It is rounded like a Thali (plate), having a diameter of 1 Lac Yojans (400000000 miles). Surrounding it, there is "Lavansamudra' (salt ocean), with a diameter of 2 lacs Yojans. Further surrounding it, there is Dhatkikhand with a diameter of 4 lacs

---

[1] Triloksar Gatha 4.

Yojans; surrounding which there is Kalodadhi ocean. The next surrounding is of Pushkardweep. In the exact middle of it, there is the Manushottar Parvat, which is of the size of a bangle. Upto here, Jambodweep, Dhatkikhand Dweep and half Pushkardweep are known as Adhaei (two and a half-2½) Dweep. Similarly due to being one Dweep surrounded by one Samudra (ocean), there are as many Dweeps as many Samudras (oceans). The succeeding Dweeps-Samudras are of double measurement than the preceding ones.

Jamboodweep—

In the just middle of the Jamboodweep, there is Sumeru Parvat, which is of one lac Yojans height. Its foundation is one thousand (1000) Yojans below the Chitra Prathvi and it is 99 thousand Yojans above it, its vertex (peak) is 40 Yojans high.

In this rounded Dweep, from the South to the North, lengthened in the East-West direction, there are six Kul Parvatas (mountains) named as Himvan, Maha Himvan, Nishadh, Neel, Rukmi and Shikheri. There are 7 regions divided by these 6 Parvats—Bharat, Hemvat, Hari, Videh, Ramyak, Hairanyavat and Airavat. In each region there are two rivers as Ganga-Sindhu, Rohit-Rohitasya etc. thus 14 Mahanadis (large rivers) are there.

Videh Kshetra—

Due to the presence of Sumeru Parvat in the middle of Videh, there are Devkuru and Uttarkuru Bhogbhumis in its South and North respectively. And there are Purva Videh (East Videh) and Pashchim Videh (West Videh) in the East and the West respectively. Sita Nadi (river) has divided East Videh into South and North regions, again in the South, 8 regions have originated by 4 Vakshar mountains and 3 Vibhanga rivers, in the same way, the North is also divided into 8 rigions. In West Videh also, 4 Vakshar and 3 Vibhanga rivers have formed 8 regions in both South & North sides thus a total of 32 Videh Kshetras (regions) have been originated.

"In a single Videh Desh, there are 96 crore Grams (villages), 26 thousand Nagars (cities), 16 thousand Khets, 24 thousand Kharvats, 4 thousand Matambs, 48 thousand Pattans, 99 thousand Drones, 14 thousand Samvah and 28 thousand Durgatavis. Each Videh contains one sub-ocean (Upsamudra) each of it contains one Island. There are 56 Antardweeps, 26 thousand Ratnakars and 700 Kukshivases there and these are the places for the business (purchase & sale) of jewels."[1]

170 Karmabhumis—

In Jamboodweep, there are one Bharat, one Airavat and 32 Videh Kshetras. And Dhatkikhand dweep has been divided into East Dhatkikhand and West Dhatkikhand, while Pushkarardhdweep has East-Puskharardhdweep and West-Pushkarardhdweep such two parts. These contain Vijay, Achal, Mandar and Vidyunmali such four Merus (parvats) and due to being one Bharat, one Airavat and thirty two Videh regions, there becomes 5 Bharats, 5 Airavats and 32 x 5 = 160 Videh regions. As each contains six parts, the middle Aryakhand has Karmabhumi arrangement. Thus, these 170 Karmabhumis have been accepted to exist.

The Maximum Tirthankars are 170 while the Minimum are 20—

In Aryakhands of these 170 Karmabhumis, if there happens maximum Tirthankars or Chakravartis or Narayans, Pratinarayans and Balbhadras together, they can be maximally 170 and minimally in each Videh related with one Meru, there remains 4 Tirthankars i.e. at least 4 x 5 = 20 Tirthankars.

It has been said also-

तित्थद्धसयलचक्की सट्ठिसयं पुह वरेण अवरेण।
वीसं वीसं सयले खेत्ते सत्तरिसयं वरदो[2]।।681।।

---

(1) Triloksar Gatha 674-675-677. (2) Triloksar Gatha 681.

"Tirthankars, Ardhchakris and Sakalchakris are maximally 160 and minimally 20 in reference with Videh Kshetras. By adding from Bharat-Airavat also, maximum becomes 170.

It is evident from this Gatha that Tirthankars like Shri Rishabhdev and Shri Mahavir Swami have been existed in infinite numbers in these Karmabhumis and will be existing in future also.

"चतुर्थकालो विदेहे चावस्थित एव[1]।"

According to this rule, there remains the Chaturth (fourth) Kal always in Videh Kshetras. No Shat Kal Parivartan (Six-Kal Changes) take place.

Where occurs Shat Kal Parivartan (Six-Kal Changes)—

भरतैरावतयोर्वृद्धिहासौ षट्समयाभ्यामुत्सर्पिण्यवसर्पिणीभ्याम् ।।27।।
ताभ्यामपरा भूमयोऽवस्थिता[2]।।28।।

In Bharat and Airavat Kshetras, there happens increase and decrease in the age, height, happiness etc. respectively by Utsarpini and Avsarpini, each having six Kals. Here, Bharat indicates all the five Bharat Kshetras and Airavat signifies all the five Airavaṭ Kshetras.

Again, in Kshetras except these-Videh Kshetras, Hemvat, Hari, Ramyak and Hairanyavat, the arrangement remains as such. In Videhas, 160 Videh regions have been accepted. Hemvat and Hairanyavat have Jaghanya (lowest quality) Bhogbhumi, Hari and Ramyak have Madhyam (middle quality) while Devkuru-Uttarkuru, which are in South-North of Sumeru, have the arrangement of Uttam (highest quality) Bhogbhumis consistently.

First Karmabhumi—

In the middle of the Bharat Kshetra of Jamboodweep, there happens six Khandas or parts by the rivers Ganga-Sindhu originating from Vijayardh Parvat, lengthened in the middle Aryakhand. In Avsarpini, there remains six Kals in series as Sushma-Sushma, Sushma, Sushma-Dushma, Dushma-Sushma, Dushma and extreme Dushma (Ati-Dushma) and in Utsarpini, the reverse series of 6 Kals continues from extreme Dushma to Sushma-Sushma. Among these, Sushma-Sushma etc. 3 Kals have Bhogbhumi arrangement while Dushma-Sushma etc. 3 Kals have Karmabhumi arrangement.

According to this arrangement, the Karmabhumi which comes in the Aryakhand of the first Bharat Kshetra of the first Jamboodweep, is considered to be the first Karmabhumi.

Bhogbhumi—

In Bhogbhumi, there remains 10 types of Kalpavrikshas, named as Madyang, Vaditrang, Bhusanang, Malang, Deepang, Jyotirang, Grihang, Bhojanang, Bhajnang and Vastrang to provide the respective desired product.

Origin of Kulkars—

In this present Avsarpini, in the Aryakhand of this Bharat Kshetra, when the 8th part of the Palya remained in the third Kal, than Kulkars started to exist bearing the names as—Pratishruti, Sanmati, Kshemankar, Kshemandhar, Seemankar, Seemandhar, Vimalvahan, Chakshushman, Yashaswi, Abhichandra, Chandrabh, Marudev, Prasenjit and Nabhiraj.

It has been written in 'Harivanshapuran' that the 12th Kulkar named as Marudev gave birth to the only son "Prasenjit", so from here the tradition of the double birth (son's and daughter's birth together) had come to an end. The marriage of Prasenjit was performed with the girl of some main Kul.

---

(1) Triloksar Gatha 882's Teekansh. (2) Tatvartha Sutra, Chapter 3.

It has also been said-

प्रसेनजितमायोज्य प्रस्वेदलवभूषितम् ।
विवाहविधिना वीरः प्रधानकुलकन्यया।।[1]

From Prasenjit also, Nabhiraj was also born alone. Indra wedded him with Kumari Marudevi.

It has also been said-

तस्यासीन्मरुदेवीति, देवी देवीव सा शची।।
तस्याः किल समुद्वाहे, सुरराजेन चोदिता।
सुरोत्तमाः महाभूत्या, चक्रुः कल्याणकौतुकम्[2]।।56।।

It has been said in Harivanshapuran also-

अथ नाभेरभूद्देवी मरुदेवीति वल्लभा।
देवी शचीव शक्रस्य शुद्धसंतानसंभवा[3]।।6।।

Marudevi, who was born in a pure Kul (Lineage), became the wife of Raja Nabhiraj.

Formation of Ayodhya Nagari—

When Kalpavrikshas became extinct at the place, made sacred by the presence of Marudevi and Nabhiraj then by their great Punya, Indra formed a Nagari and named it as 'Ayodhya'.

"When annihilation (final destruction of the universe) happens at the end of the sixth Kal, then here in Aryakhand, the land below upto 1000 Yojans is destroyed. In that Kal, Devas form 24 lotuses below the place indicating the position of Ayodhya Nagari.[4]"

On the basis of these symbols Devtas again form Ayodhya Nagari on the same place. That's why "Ayodhya Nagari" has been consisdered to be eternal.

In Vedik literature also, Ayodhya has been given a lot of importance as-

'अष्टचक्रा नवद्वारा देवानां पूरयोध्या[5]।'

This Ayodhya Nagari of Devtas is beautifiėd with 8 Chakras and 9 Dwars (doors). In Rudrayamal Grantha, Ayodhyapuri has been called as the forehead of Bhagwan Vishnu as—एतद् ब्रह्मविदो वदन्ति मनुयोऽयोध्यापुरी-मस्तकम्।

In Valmiki Ramayan, it has been considered 12 Yojans in length, formed by Manu.

In Harivanshanpuran, the palace of Raja Nabhiraj has been described as 81 floors in height, made of jewels and called as "Sarvatobhadra".

Descent of Shri Rishabh Deva from heaven—

Knowing that Bhagwan Rishabh Deva is about to come here in the womb of Mata Marudevi after being detached from "Sarvartha Siddhi" Viman after six month, Saudharama Indra ordered Kuber-Oh Dhanpate! Start showering jewels in the courtyard of Mata Marudevi in Ayodhya. From the same day, Kuber started the showering of 3½ crores precious Panchvarni (five coloured) jewels each day.

One day Maharani Marudevi saw Airavat Hathi (White elephant) etc. sixteen best dreams in the last phase of night, in the morning, listening from Her Husband that "Tirthankar son will descend in your womb", she was filled with great joy.

When 84 lacs Purva, 3 years and 8½ months remained in the third Kal of Avsarpini, then on

---

(1) Harivansha Puran Sarg 7. (2) Mahapuran Parva 12. (3) Harivansha Puran Sarg 1. (4) Bhaktyadikriyasangreh (Tippan) Pg. 162. (5) Atharva Veda Dashamscandh.

Asharh Krishna Dwitiya, Bhagwan came in the womb. At the same day, knowing this by his Divyagyan, Indra along with his innumerable Devas, celebrated the Garbhakalyanak Mahotsava (festival of coming in womb) by doing the Abhishek (showering of water) and welcoming with garments, jewellery etc. of Maharaja Nabhiraj and Maharani Marudevi. By the permission of Indra, Shree, Hree etc. Devies started serving Mata.

If Bhagwan incarnates–

According to Jain Dharma, no Bhagwan incarnates again and again but any worldly person like you and me, by gradually upgrading self, attain Nirvana or Moksha by receiving Tirthankar Prakriti and attaining Panchkalyanaks (five major phases of life). They never incarnate in this world again as by reading the description of ten Bhavs (birth) i.e. "Dashavatar", the "Garbhavatar" (coming in womb) episode of Bhagwan Rishabhdeva becomes clear.

In the Videh Kshetra of this Jamboodweep in the Vijayardha series of Gandhila Desh, there was a Vidyadhar king named "Mahabal". Once he accepted the Jain religion through his minister 'Swayambuddha' and dying with Sallekhna (method for accepting death according to Jain Agam or Shastra) attained the Dev form named 'Lalitang' in heaven. Detached from there, he became king 'Vajrajangh' in Videh Kshetra, where once he, along with his wife 'Shrimati', gave Ahardan (giving meals according to the method of Jain Shastra) in a forest to a pair of Munis (Jain Digambar Sadhus). As a consequence of it, he became "Arya" in Uttam Bhogbhumi. There he accepted Samyakdarshan by the address of Charanriddhidhari Munis and became "Shridhar Dev" in Second Swarga (heaven) dying at the end of his life. Being detached from there, he became 'Raja Suvidhi' in Suseema Nagari of Videh Kshetra.

Here also, after adopting Shravak Dharam (Religious practices mentioned in Jain Shastras for a family person) and Kshullak Deeksha and then becoming a 'Muni' and leaving the body by Samadhi (according to Jain Shastras), he again became 'Indra' in sixteenth Swarga. Coming from there, he became 'Vajranabhi' Chakravarti in Pundarikini Nagari of Videh of Jamboodweep. In this Bhav (birth) also, becoming Mahamuni, in the holy feet of father Tirthankar Bhagwan Vajrasen, by adopting the feelings of Solahkaran (sixteen specific bhavnas) in heart, he received Tirthankar Prakriti. Consequently, at last dying by Samadhidhyan, he became "Ahmindra" in Sarvarthasiddhi.

Thus, by elevating step by step in nine births i.e. 1. Mahabal 2. Lalitangdev 3. Raja Vajrajangh 4. Bhogbhumij Arya 5. Shridhar Dev 6. Raja Suvidhi 7. Achyutendra 8. Vajranabhi Chakravarti 9. Ahmindra, by the patronage of Jain Dharma, this Jeev (soul) of Ahmindra being detached from Sarvarthasiddhi came in the womb of Mata Marudevi. When Bhagwan Rishabhdeva will attain Nirvan or Moksha, He will never incarnate in this world again.

Janmakalyanak (Birth) Mahotsav–

After jewel showering for fifteen months by Kuber, on Chaitra Krishna Navmi, at the time of Sun-rise, Mata Marudevi gave birth to a son. At that moment only, the Asan (throne) of Indras in heaven started shaking, their crowns bowed down, flowers started being showered from Kalpavrikshas and musical instruments were being sounded themselves in the living places of all the four types of Devas. As-

कल्पेषु घण्टा भवनेषु शंखो, ज्योतिर्विमानेषु च सिंहनादः।
दध्वान भेरी वनजालयेषु, यज्जन्मनि ख्यात जिनः स एषः[1]।।।

Bells started ringing at the places of Kalpavasi Devas, bugle sound started at the places of

---

(1) Pratishtha Tilak Chap. 9.

Bhawanvasi Devas, Simhnad (roar of lion) started on Jyotishka Devas places and Bheri (kettledrum) started ringing on the places of Vyantar Devas. All this happened at the birth of whom, He was actually Jin Bhagwan.

As today, the switch of a Television or a Radio is made on, sight and music from thousand of kilometers come in view but there was no need to push any button of such type because instead of it, the switch of the Punya of Tirthankar Prakriti was pushed on itself and Atishaya (Amazements) became prevalent in heaven, placed at a height of more than 40 crore milles. At the same moment only, Saudharma Indra came in Madhya Lok along with innumerable Dev families and performed the Janmabhishek (bathing at the time of birth) by 1008 Kalshas (vessels) by taking the new born baby on Sumeru Parvat.

Some scholars usually say that those Tirthankars were common persons like us but the truth is not this, they can be considered common till they received Tirthankar Prakriti but after receiving such Prakriti, special amazements (Atishayas) appeared in them, that's why Shri Samantra Bhadra Swami has said-

मानुषीं प्रकृतिमभ्यतीतवान्, देवतास्वपि च देवता यतः।
तेन नाथ! परमासि देवता, श्रेयसे जिनवृष! प्रसीद नः[1]।।

"Oh Nath! you have, however, taken birth as a humanbeing but you have superseded the human nature, so you are the Devta above Devtas or you are the Paramdevta. Oh Jindharma Tirthankar! Please by happy on us for our upliftment".

Karmabhumi Arrangement by Shri Rishabh Deva–

Shri Nabhiraja married Bhagwan with Yashaswati and Sunanda with the permission of Indra. Yashawati gave birth to Bharat etc. 100 sons and Brahmi daughter, while Sunanda had the son Bahubali and the daughter Sundari.

Bhagwan made his daughters and sons perfect in all Vidyas and arts.

At the prayer of the public, he taught them the way to live life by giving the knowledge of six basic activities as Asi (Warfare), Masi (Writing), Krishi (Agriculture), Vidya (Education), Shilp (Craftwork) and Vanijya (Business). He initiated Varna arrangement and marriage practice and it was also after knowing the eternal arrangment of Videh Kshetra by Avadhigyan. So He was also called as Prabhu Shrashta, Vidhata, Brahma etc.

Shri Nemichandracharya has said–

पुरंगामपट्टणादी, लोहियसत्थो य लोयववहारो।
धम्मो वि दयामूलो, विणिम्मिओ आदिबह्मेण[2]।।

As Indra made the arrangement of Desh (country), Nagar (city), Gram (Village) etc. by the order of Bhagwan, so it is only Adi Brahma Bhagwan Rishabh Deva, who is the founder of Pur, Gram, Nagar etc., wordly Shastras-Vyakaran (grammer) etc., worldly norms and traditions and compassionate Dharma.

Once Indra performed the coronation ceremony of Bhagwan Rishabh Deva after taking the permission from Maharaja Nabhiraj. Later, Bhagwan appointed and guided a number of Raja, Maharaja etc. about justified politics.

---

1. Swayambhustotra. (2) Triloksar Gatha 802.

Deeksha Kalyanak–

One day Bhagwan developed the feeling of non-attachment with the world (asceticism) seeing the completion of the age of Neelanjana while dancing. He reached Siddhartha Van (forest) sitting in the Palki (palanquin) brought by Indras and there, after performing his Keshlonch (hair plucking), took up the Digamberi Deeksha (Jain Muni Deeksha) and that place became famous by the name of Prayag. After one year and 39 days, in Hastinapur, Yuvraj Shreyans became Daantirthpravartak (who initiated the tradition of aan according to Jain norms) by giving the juice of sugarcane (Ikshuras) in Ahar on Vaishakh Shukla 3.

Kevalgyan Kalyanak–

After the penance of one thousand years, Prabhu Rishabhdeva got Kevalgyan. At the same moment only, Bhagwan reached in the mid sky, 5000 Dhanush-20000 Hands above the earth and with in Ardhnimish only, Kuber formed the "Samavasaran" (a uniqe preaching assembly place of jain Tirthankars). It was a circle of 12 Yojans-96 miles. Its brief description is as follows:

There remain 8 Bhumis and 3 Katnis in Samavasaran and 4 roads surrounding from 4 sides. In the midst of these roads, in the beginning only, there are 4 Manasthambhs, one in each of the four directions. There are 12 times higher than the height of Bhagwan. As the height of Bhagwan Rishabhdeva was 500 Dhanush or 2000 hands so 2000 x 12 = 24000 hands was the height of Manasthambs. By the Darshan of these Manasthambs, the proud of a proudy individual used to be washed out and by being converted into a pious soul-Samyakdrishti, he used to minimise his world wandernig to the least.

In this Samavsaran, from one hand above the earth, there remain 20 thousand steps of stair, each one hand high. By ascending these, humanbeings, Tiryanchas (animals) etc. all pious creatures-younger ones, old aged, patients, blinds, etc. handicaps used to reach upstairs only in 48 minutes, this Atishaya was of Bhagwan only.

There remain 8 Bhumis in the space interval of 4 Perkotas (surroundings) and 5 Vedis (where Bhagwan is consecrated) as a serial arrangement of Dhulisal Perkota, Chaityaprasadbhumi, Vedi, Khatikabhumi, Vedi, Latabhumi, Parkota, Upvanbhumi, Vedi, Dhwajabhumi, Parkota, Kalpavrikshabhumi, Vedi, Bhawanbhumi, Parkota, Shrimandapbhumi and Vedi. Further, going 16 steps after 8 steps, Bhagwan remains seated in Gandhkuti on third Katni.

In each Parkota and Vedi, in all the four directions, one Gopur war (gate) was present. In these, there were placed theatre halls, Mangalghat, Dhupghat and Navnidhi Bhandar on both the sides; the defenders of these gates were devas.

In first Bhumi, there were 5 Prasads (palaces) one each in between two Jinmandirs.

In second Bhumi, there were swans, ducks and lotuses etc. in pure water.

In third Bhumi, flowers of all the six seasons were blooming. In fourth Bhumi, in four directions, there were the forests of Ashoka, Saptachhad, Champak and Mango respectively; in these, in all the four directions, idols of Jinendra Bhagwan remain placed on one Chaityavriksha in each. In fifth Bhumi, there were flags (Dhwajas) having ten types of symbols each. In sixth Bhumi, there were ten types of Kalpavrikshas and the idols of Siddha Bhagwans were placed on Siddhartha Vrikshas namely Nameru, Mandar, Santanak and Parijaat respectively in four directions. In seventh Bhumi, Bhawans were made and 9 Stupas (pillars) with the idols of Arhant and Siddha Bhagwans on both the sides each. In eighth

Bhumi, tweleve Sabhas (Assemblies) were made.

Serially, in these 12 Sabhas 1. Munis 2. Kalpavasini Devis 3. Aryikas and Shravikas 4. Jyotishi Devis 5. Vyantar Devis 6. Bhawanwasini Devis 7. Bhawanwasi Devas 8. Vyantar Devas 9. Jyotishi Devas 10. Kalpavasi Devas 11. Human beings and 12. Tiryanchas (animals) used to sit down.

The effect of Samavasaran in such that animals like lion, deer, cow, tiger, snake, mongoose etc., which have natural behavioural enemity, leave the same and by becoming friendly for each other, listen to the preachings of Bhagwan together.

In the world, the samavasaran of Tirthankar Bhagwan is the only place where al Kotha (sitting place) is also settled for Tiryanchas similary as for Devas and humanbeings. By sitting in that Kotha, numerous animals-birds are benefitted in real sense by listening to the sermon of Bhagwan. Lacs of animals reach heaven after death by adopting Ahimsanuvrata, Satyanuvrata, Achoryanuvrata, Brahamcharya-anuvrata and Parigrahparimananuvrata and Dikkumaris place mangal Dravya in their hands.

By the movement of Bhagwan, there appears a phase of plently and prosperity in about an area of 800 miles around. All become friendly with each other. All diseases, distress accidents etc. disturbances are washed out. Earthquakes, floods, five wrath, untimely deaths etc. are also vanished.

In reality, only those great souls, who practice full Ahimsa Dharma in their lives by having compassion for all the creatures, develop such speciality that even cruel animals leave their cruelity and enemity in their presence.

By preaching Ahimsa, Truth, Non-stealing, celibacy and minimising possessions (Parigrah Praman), Bhagwan poured the nectar of Dharma in innumerable creatures, When Bhagwan becomes Kevalgyani, then due to the full lack of Moh (delusion), Raag (passion) Dwesh (malice) and desires, His sermon also happens without any wish, only due to the Punyodaya (great fortune) of the present holy creatures, as the clouds shower without any wish.

Moksha Kalyanak–

Bhagwan Rishabh Deva moved around for lacs of years and saturated innumerable creatures with dharma. Later, by performing Yog-nirodh (stopping of all his yogas) after going on Kailash Parvat, attained Nirvan at the end of his lifetime. When 3 years and eight & a half months were remaining in the third Kal, Bhagwan attained Moksha. Due to the defect of Hundavasarpini, the first Tirthankar was born at the end of third Kal and attained Nirvan in the third Kal only. There He will remain immersed in absolute pleasure for infinte time to come and will never incarnate on this earth again.

It has also been said-

काले कल्पशतेऽपि च, गते शिवानां न विक्रिया लक्ष्या।
उत्पातोऽपि यदि स्यात्, त्रिलोकसंभ्रातिकरणपटुः[1]।।

Even on passing of hundreds of Kalpakals, it is not possible that the souls, who have attained Nirvan, migrate into the world again, no matter such a tumult occurs as to produce disturbance in all the three Lokas.

Existence of infinite Gods–

At the peak of three lokas, such infinite Siddha Parmatma are present and all of them have been liberated from the wandering of the four Gatis (Dev, Human being, Narki, Tiryanch). Any great soul amoun us can become a Tirthankar by undertaking the feelings of Darshanvishuddhi, Vinyasampanta etc. Solahkaram Bhavnas in heart or by Ratnatraya, destroying the Karmas and becoming a general Kevali, becomes Siddha Parmatma as Bharat-Bahubali etc.

---

[1] Bhartiya Darshan.

Is Jain Dharma an atheist religion?

It is written in Indian Philosophy-"In non aceptance of Vedik authority and in having no faith in God, Jain Darshan comes after Charvak Darshan in Indian Darshans or philosophies".

But, this fact is completely incorrect. In Jain dharma, God has not been accepted as the creator of the Universe because by doing so, a number of defects appear, as, God is kind for the creatures of the world and is the Supreme father, then, why He makes some creatures to undergo the distreses of Hell, Nigod, Tiryancha etc. And if you say that the result of doing Paap (sins) will be bitter only then why the Supreme Father originated Himsa (Violence), falsehood, unchastity etc.

It has been said also :

विचित्रभुवनत्रयं यदि कदाचिदीशः सृजेत्।
जगद्धि सकलं शुभं निखिलदोषशून्यं न किं।।
निगोदनरकादि-दुर्गतिकृतिश्च दुष्टाय चेत्।
कथं पुनरधर्मिणां विहितसृष्टिरन्यायिनी[1]।।1।।

If God has produced the three Lokas then why He did not make the world full of goodness & pleasure only without any defects. And if it is argued that Hell, Nigod etc. distressful places have been designed for wicked persons only, then why such persons have been produced?

न युज्यत इयं कृतिः सकलजंतु-कारूण्यतः।
कुतूहलधियापि चेन्न महतां हि संभाव्यते।।
अदृष्टपरिकल्पनापि जिन! नो भवेत्त्वद्द्विषां।
अतश्च भवतो विना क्वचिदपीश्वरत्वं कथं[2]।।20।।

God is to have compassion for the whole creature world so such type of pleasure mixed distressful world formation is not suitable for Him. If it is said that He does all this just out of His curiousity then such type of a curiosity is also unacceptable on the part of a great soul. And, if said that all this happens according to the fate of those creatures then this imagination of unseen fate is also not possible for others, so Oh Bhagwan! Veetrag Jinendra Prabhu, Godship appears in you only.

According to Jain principle, each creature is the creator of own world and when it ends the same, then it becomes Siddha Bhagwan itself. As said also :

Shikharini Chhand–

शरीरी प्रत्येकं भवति भुवि वेधाः स्वकृतितः।
विधत्ते नानाभूपवनजलवन्हिद्रुमतनुम्।।
त्रसो भूत्वा भूत्वा कथमपि विधायात्र कुशलम्।
स्वयं स्वस्मिन्नास्ते भवति कृतकृत्यः शिवमयः[3]।।18।।

Each creature, according to the Paap-Punya (sins-holy acts) done by self, is born in different types of forms as Prithvi (land), water, fire, wind and plant world-trees etc. Sometimes, this creature only, after becoming Tras-two Indriya (senses), three Indriya, four Indriya, five indriya etc. by doing some Punya, becomes stable in own soul to become Bhagwan.

By all these examples, it is proved that Jains consider the sermons of Arhant Kevali as "Vedas"

---

(1)-(2)-(3) Chandraprabh Stuti.

and do not take it to be 'Apaurusheya'. By not considering the God as the creator of the world, they take Him as Anant (infinite) Ishwar (God). They accept the existence of soul, the next Lok, Paap-Punya and their result also. So, "Jain dharma" is not an atheist religion like Charvak.

Jain Dharma is Eternal–According to the explanation, "कर्मारातीन् जयतीति जिनः" those who have won the Karmaenemies are Jin or Jinendra Bhagwan and "जिनो देवता अस्येति जैनः" Jin Bhagwan is the God of whom, they are the Jains. So this Jain Dharma is eternal, beneficial for each creature and "universal" giving the right to each creature to become God. At present, 24 Tirthankars from Bhagwan Rishabh Deva to Mahavir Swami has been considered in Jain dharma.

Shri Rishabh Deva in Vedas also–

The name of Rishabh Deva has apperard in Rigvdea,Atharvaveda etc.

"ॐ त्रैलोक्यप्रतिष्ठितान् चतुर्विंशतितीर्थकरान् ऋषभाद्यान् वर्द्धमानान्तान् सिद्धान् शरणं प्रपद्ये[1]।"

"ॐ नमो अर्हतो ऋषभाय[2]।"

It has been said in Manusmriti also-

दर्शयन् वर्त्म वीराणां सुरासुरनमस्कृतः,
नीतित्रितयकर्ता यो युगादौ प्रथमो जिनः[3]।।

It has been said in Bhagwat also :

"भगवान् परमर्षिभिः प्रसादितो नाभेः प्रियचिकीर्षया तदवरोधायने मेरुदेव्यां धर्मान्दर्शयितुकामो वातरशनानां श्रमणानामृषीणामूर्ध्वमंथिनां शुक्लया तनुवावतार[4]।"

By being pleased in such a way by Maharshis in Yajnas, Shri Bhagwan Maharaj was born from the womb of Marudevi to the pleasure of Nabhiraj to guide for the Dharma of Digamber Sadhus.

नित्यानुभूतिनिजलाभनिवृत्ततृष्णः, श्रेयस्य तद्रचनया चिरसुप्तबुद्धेः।
लोकस्य यः करुणयाभयमात्मलोक-माख्यान् नमो भगवते ऋषभाय तस्मै[5]।।

According to Jain Shastras, such Bhagwan Rishabh Deva has become the first Tirthankar in the beginning of the Yug in this Avsarpini and according to Vedik texts, He has been considered as the 8th incarnation.

As-

कुलादिबीजं सर्वेषां प्रथमोविमलवाहनः।
चक्षुष्मान्यशस्वी वा-भिचंद्रोऽथप्रसेनजित्।
मरुदेवी च नाभिश्च भरते कुलसत्तमाः।
अष्टमो मरुदेव्यां तु नाभेर्जातः उरक्रमः[6]।।

Bharat Varsha at the name of Bharat–

On the name of Bharat Chakravarti, the first son of Rishabh Deva, our country got the name Bharat Varsha. This has been said in "Adipuran". It has been said in Vedic Shastras also as :

"येषां खलु महायोगी भरतो ज्येष्ठः श्रेष्ठगुण आसीद् येनेदं वर्षं भारतमिति व्यपदिशन्ति[7]।।"

ऋषभाद् भरतो जज्ञे वीरः पुत्रशताग्रजः।
सोऽभिषिच्याथ भरतं पुत्रं प्राब्राज्यमास्थितः[8]।।
हिमाह्वं दक्षिणं वर्षं भरताय न्यवेदयत्।
तत्माद् भारतं वर्षं तस्य नाम्ना विदुर्बुधाः।।

---

(1) Rigvdea. (2) Yjurveda. (3) Manusmriti. (4) Bhagwat Scandh 5, Chap. 6. (5) Bhagwat Scandha 5, Chap. 6 (6) Manusmriti. (7) Bhagwat Scandh, Chap. 4 (8) Vayu Puran.

Bharat was born from Bhagwan Rishabh Deva and he was the leading brave in 100 sons. Rishabh Deva took Deeksha after coronating the son Bharat. The land or the state, which Bharat acquired from Himvan upto South, is being called as Bharat Varsha by scholars.

The dignified effect of the time of all the 24 Tirthankars–

In this Bharat Desh, this Jain Shashan from Bhagwan Rishabh Deva to Bhagwan Mahavir, is establishing peace among the whole creature world by Ahimsa Dharma. Today also, there is a stern need of Ahimsa Dharma of these Tirthankars. Because in this sacred Shashan "Three" live in full harmony with each other i.e. without any difference among themselves.

This has been narrated by Shri Samant Bhadra Swami as follows :

नयसत्त्वर्तवः सर्वे गव्यन्ये चाप्यसंगता[1]।

Naya (which knows one aspect of a thing), Satva (which exists) and Seasons, the "three" although are against each other, but leaving this difference, they become harmonius in Jain Shashan. According to Jain Dharma, Dravyarthik Naya says that Soul or Atma is Nitya (ever existing), free from birth & death, while the Paryayarthik Naya says that soul is not ever existing but by the means of birth & death it acquires the Paryayas (bodily forms) of Dev, Human being, Tiryancha and Narki (inhabitants of hell). By some aspect, both of these facts are correct, as soul is Nitya also because it exists from times unknown to the infinite time to come. It is Anitya (non ever existing) also in reference with Paryayas because it takes birth in Dev leaving the body of a humanbeing and so on. Similarly, creatures having natural mutual enemity also become friendly with each other by taking the patronage of Mahamunis and Tirthankar Bhagwans.

सारंगी सिंहशावं स्पृशति सुतधिया नन्दिनी व्याघ्रपोतम्।
मार्जारी हंसबालं प्रणयपरवशा केकिकांता भुजंगीम्।।
वैराण्याजन्मजातान्यपि गलितमदा जन्तवोऽन्ये त्यजन्ति।
श्रित्वा साम्यैकरुढं प्रशमितकलुषं योगिनं क्षीणमोहम्[2]।।

The female deer touches the lionet with the loving heart as for own kid, the cow does the same with the young one of a tiger, the cat with the young one of a swan and the peahen starts loving a young snake. Such animals, having enemity since their birth, leave their cruel feelings against each other. When ? As soon as they come in the patronage of Mahayogis, who are completely void of universal drawbacks as Anger, Pride, Delusion, Avarice etc.

In the same way, fruits and flowers of all the six seasons bloom together upto a large distance in the presence of such great souls.

Present Relevance–

In Present time also, to disseminate the principles of such a great soul as Tirthankar Bhagwan Rishabh Deva, to establish mutual love and understanding and for the refinement of the environment, the 'Shrivihar (travelling) of the "Samvasaran" of Shri Rishabh Deva' is being done in whole of India.

To guide about the actual from of 'Krishi' (Agriculture) activity, and to evaluate Ahimsa, Truth, Non-stealing etc. Dharmas "Bhagwan Rishabh Deva National Vice Chancellors' Conference" was organized from 4th to 6th October, 1998 in Hastinapur. In this conference, all participating Vice-Chancellors propounded that the founder of Jain Dharma is not Bhagwan Mahavir but among 24 Tirthankars, the first Tirthankar is Bhagwan Rishabh Deva and the last one is Bhagwan Mahavir Swami. So, the ancientness of Jain dharma is proved itself.

❦ ❦

---

(1) Stuti Vidya (2) Gyananrav.

गौतम स्वामी का परिचय

–गणिनी ज्ञानमती

आर्यखंड में एक ब्राह्मण नाम का नगर था। वहाँ एक शांडिल्य नाम का ब्राह्मण रहता था। उसकी भार्या का नाम स्थंडिला था, वह ब्राह्मणी बहुत ही सुन्दर और सर्व गुणों की खान थी। इस दम्पत्ति के बड़े पुत्र के जन्म के समय ही ज्योतिषी ने कहा था कि यह गौतम समस्त विद्याओं का स्वामी होगा। उसी स्थंडिला ब्राह्मणी ने द्वितीय गार्ग्य पुत्र को जन्म दिया था, वह भी सर्वकला में पारंगत था, इन्हीं ब्राह्मण की दूसरी पत्नी केशरी के पुत्र का नाम भार्गव था। इस प्रकार ये तीनों भाई सर्व वेद-वेदांग के ज्ञाता थे। इन तीनों भाइयों के इन्द्रभूति, अग्निभूति और वायुभूति नाम भी प्रसिद्ध हैं। वह गौतम ब्राह्मण किसी ब्रह्मशाला में पाँच सौ शिष्यों का उपाध्याय था। "मैं चौदह महाविद्याओं का पारगामी हूँ, मेरे सिवाय कोई और विद्वान नहीं है।" ऐसा अभिमानी था।

भगवान् महावीर को केवलज्ञान प्रगट होकर समवसरण की रचना हो चुकी थी, किन्तु दिव्यध्वनि नहीं खिर रही थी। 66 दिन व्यतीत हो गये। तभी सौधर्म इन्द्र ने समवसरण में गणधर का अभाव समझकर अपने अवधिज्ञान से "गौतम" को इस योग्य जानकर वृद्ध का रूप बनाया और वहाँ गौतमशाला में पहुँचकर कहते हैं–

"मेरे गुरु इस समय ध्यान में होने से मौन हैं अतः मैं आपके पास इस श्लोक का अर्थ समझने आया हूँ।" गौतम ने विद्या के गर्व से गर्विष्ठ हो पूछा-"यदि मैं इसका अर्थ बता दूंगा तो तुम क्या दोगे?" तब वृद्ध ने कहा-"यदि आप इसका अर्थ कर देंगे, तो मैं सब लोगों के सामने आपका शिष्य हो जाऊंगा और यदि आप अर्थ न बता सके तो इन सब विद्यार्थियों और अपने दोनों भाइयों के साथ आप मेरे गुरु के शिष्य बन जाना।" महा अभिमानी गौतम ने यह शर्त मंजूर कर ली क्योंकि वह समझता था कि मेरे से अधिक विद्वान इस भूतल पर कोई है ही नहीं। तब वृद्ध ने यह काव्य पढ़ा–

"धर्मद्वयं त्रिविधकालसमग्रकर्म, षड्द्रव्यकायसहिताः समयैश्च लेश्याः।
तत्त्वानि संयमगती सहितं पदार्थै-रंगप्रवेदमनिशं वद चास्तिकायं।।"

तब गौतम ने कुछ देर सोचकर कहा–"अरे ब्राह्मण! तू अपने गुरु के पास ही चल। वहीं मैं इसका अर्थ बताकर तेरे गुरु के साथ वाद-विवाद करूँगा।" इन्द्र तो चाहता ही यह था, वह वृद्ध वेधषारी इन्द्र गौतम को समवसरण में ले आया।

वहाँ मानस्तम्भ को देखते ही गौतम का मान गलित हो गया और उसे सम्यक्त्व प्रगट हो गया। गौतम ने अनेक स्तुति करते हुए भगवान् के चरणों को नमस्कार किया तथा अपने पाँच सौ शिष्यों और दोनों भाइयों के साथ भगवान् के पादमूल में जैनेश्वरी दीक्षा धारण कर ली। अन्तर्मुहूर्त में ही प्रथम गणधर हो गये। उत्तर पुराण में लिखा है–

"तदनन्तर सौधर्मेन्द्र ने मेरी पूजा की और मैंने पाँच सौ ब्राह्मण पुत्रों के साथ श्री वर्धमान भगवान् को नमस्कार कर संयम धारण कर लिया। परिणामों की विशेष शुद्धि होने से मुझे उसी समय सात ऋद्धियाँ प्राप्त हो गईं। तदनन्तर भट्टारक वर्धमान स्वामी के उपदेश से मुझे श्रावण वदी प्रतिपदा के दिन पूर्वाण्ह काल में समस्त अंगों के अर्थ तथा पदों का भी स्पष्ट बोध हो गया पुनः चार ज्ञान से सहित मैंने रात्रि के पूर्व भाग में अंगों की तथा रात्रि के पिछले भाग में पूर्वो की रचना की, उसी समय से मैं ग्रन्थकर्ता हूँ।"

श्री गौतमस्वामी के द्वारा रचित पांच महामूल्यवान रचनायें दिगम्बर जैन सम्प्रदाय में आज भी उपलब्ध हैं और प्रसिद्ध हैं।

1. चैत्यभक्ति 2. वीरभक्ति 3. दैवसिक प्रतिक्रमण 4. पाक्षिकप्रतिक्रमण 5.श्रावकप्रतिक्रमण

चैत्यभक्ति–चैत्यभक्ति के बारे में ऐसी प्रसिद्धि है कि गौतम ब्राह्मण जब भगवान् महावीर स्वामी के समवसरण में पहुँचते हैं और मानस्तम्भ देखकर उनका मान गलित हो जाता है, तब भक्ति में गद्गद् होकर भगवान् की स्तुति करते हुये उच्चारण करते हैं "जयति भगवान्" इत्यादि।

इस बात का स्पष्टीकरण स्वयं टीकाकार श्री प्रभाचन्द्राचार्य के शब्दों में देखिये–

"श्रीवर्धमानस्वामिनं प्रत्यक्षीकृत्य गौतमस्वामी जयतीत्यादि स्तुतिमाह"–

---

1. क्रियाकलाप।

४-१०३

श्री वर्धमान स्वामी का प्रत्यक्ष दर्शन करके श्री गौतम स्वामी "जयति" इत्यादि स्तुति करते हैं। उसके दो श्लोक यहाँ प्रस्तुत है-

जयति भगवान् हेमाम्भोजप्रचारविजृंभिता-वमरमुकुटच्छायोद्गीर्णप्रभापरिचुम्बितौ।
कलुषहृदयामानोद्भ्रान्ताः परस्परवैरिणो, विगतकलुषाः पादौ यस्य प्रपद्य विशश्वसुः।।1।।

वे भगवान् जयवन्त होंवे कि जिनके चरणों का आश्रय लेकर कलुष मनवाले, मान से ग्रसित ऐसे परस्पर में एक दूसरे के बैरी भी जन्तु क्रूर भाव को छोड़कर परस्पर विश्वास को प्राप्त हो गये हैं। भगवान् के चरण युगल कैसे हैं? देवों द्वारा रचित सुवर्णमयी कमलों पर विहार करने से शोभा को प्राप्त हैं तथा इन्द्रों के मुकुटों की मणियों की निकलती हुई कांति की प्रभा से स्पर्शित हैं।

यह चैत्यभक्ति अनेक छन्दमय है, 35 श्लोकों में बहुत ही मधुर, सरस और उत्तम है। अन्त में पाँच श्लोक जो पृथ्वी छन्द में हैं उनका छन्द और वर्ण लालित्य अवर्णनीय है। उनमें भगवान् की वीतराग छवि और अनेक शुभ लक्षणों का वर्णन है। यथा-

अताम्रनयनोत्पलं सकलकोपवन्हेर्जयात्, कटाक्षशरमोक्षहीनमविकारतोद्रेकतः।
विषादमदहानिता प्रहसितायमानं सदा, मुखं कथयतीव ते हृदयशुद्धिमात्यन्तिकीम्।।31।।

हे भगवन्! आपके नेत्रकमल लालिमा रहित हैं क्योंकि आपने सकलक्रोधरूपी अग्नि को जीत लिया है। आपके नेत्र कटाक्ष बाणों से भी रहित हैं क्योंकि आप में विकार का उद्रेक है ही नहीं। आपका मुख सदा मन्द-मन्द मुस्कान को लिये हुये है अर्थात् प्रसन्न मुद्रा युक्त है, क्योंकि आप में विषाद और मद का अभाव हो चुका है। इसलिये हे नाथ! आपका मुख ही मानों आपके हृदय की आत्यन्तिक शुद्धि-निर्मलता को कह रहा है।

इस प्रकार से बहुत ही गूढ़ और महान् अर्थ को लिये हुए यह चैत्यभक्ति अपने आप में अनुपम निधि है।

उसी प्रकार से मुनि-आर्यिका आदि जिस प्रतिक्रमण को प्रतिदिन प्रातः और सायंकाल में करते हैं वह दैवसिक-रात्रिक प्रतिक्रमण तथा पन्द्रह दिन में होने वाला या चार महीना या वर्ष में होने वाला बड़ा प्रतिक्रमण तथा अष्टमी आदि में होने वाली आलोचना ये तीनों प्रतिक्रमण श्री गौतम स्वामी द्वारा रचित हैं। यह रचनायें साक्षात् उनके मुखकमल से विनिर्गत हैं।

दैवसिक प्रतिक्रमण की टीका करते हुए श्री प्रभाचन्द्राचार्य कहते हैं-

"श्रीगौतमस्वामी मुनीनां दुष्षमकाले दुष्परिणामादिभिः प्रतिदिनमुपार्जितस्य कर्मणो विशुद्ध्यर्थं प्रतिक्रमणलक्षणमुपायं विदधानस्तदादौ मंगलार्थमिष्टदेवताविशेषं नमस्करोति-

'श्रीमते वर्धमानाय नमो' इत्यादि।

निषीधिका दण्डक-इस दैवसिक प्रतिक्रमण के अन्तर्गत प्रतिक्रमण भक्ति में "निषीधिका दण्डक" आता है जो कि हमें बहुत ही प्रिय है, इसमें प्रथम पद जो "णमो णिसीहियाए" है, उसका अर्थ टीकाकार ने 17 प्रकार से किया है।

इस निषीधिका दण्डक में श्रीगौतमस्वामी ने अष्टापदपर्वत, सम्मेदशिखर, चम्पापुरी, पावापुरी आदि की भी वंदना की है।

जब चारज्ञानधारी सर्वऋद्धि समन्वित गौतम गणधर इन तीर्थ क्षेत्रों की वंदना करते हैं, तब आज जो अध्यात्म की नकल करने वाला कोई यह कहे कि "यदि साधु के तीर्थ वंदना का भाव हो जाये तो उसे प्रायश्चित लेना चाहिए। ऐसा कथन सर्वथा अनुचित है। श्री गौतमस्वामी रचित गणधरवलय मंत्र-

गणधरवलयमंत्राः

(1) णमो जिणाणं, **(2) णमो ओहिजिणाणं,** **(3) णमो परमोहिजिणाणं,**
(4) णमो सव्वोहिजिणाणं, **(5) णमो अणंतोहिजिणाणं,** **(6) णमो कोट्ठबुद्धीणं,**

(7) णमो बीजबुद्धीणं,
(8) णमो पादाणुसारीणं,
(9) णमो संभिण्णसोदाराणं,
(10) णमो सयंबुद्धाणं,
(11) णमो पत्तेयबुद्धाणं,
(12) णमो बोहियबुद्धाणं,
(13) णमो उजुमदीणं,
(14) णमो विउलमदीणं,
(15) णमो दसपुव्वीणं,
(16) णमो चउदसपुव्वीणं,
(17) णमो अट्ठग-महा-णिमित्त-कुसलाणं,
(18) णमो विउव्व[1]-इड्ढि-पत्ताणं,
(19) णमो विज्जाहराणं,
(20) णमो चारणाणं,
(21) णमो पण्णसमणाणं[2],
(22) णमो आगास-गामीणं,
(23) णमो आसीविसाणं,
(24) णमो दिट्ठिविसाणं,
(25) णमो उग्गतवाणं,
(26) णमो दित्ततवाणं,
(27) णमो तत्ततवाणं,
(28) णमो महातवाणं,
(29) णमो घोरतवाणं,
(30) णमो घोरगुणाणं,
(31) णमो घोर-परक्कमाणं,
(32) णमो घोरगुण-बंभयारीणं,[3]
(33) णमो आमोसहि-पत्ताणं,
(34) णमो खेल्लोसहि-पत्ताणं,
(35) णमो जल्लोसहिपत्ताणं,
(36) णमो विप्पोसहिपत्ताणं,
(37) णमो सव्वोसहिपत्ताणं,
(38) णमो मणबलीणं,
(39) णमो वचिबलीणं,
(40) णमो कायबलीणं,
(41) णमो खीरसवीणं,
(42) णमो सप्पिसवीणं,
(43) णमो महुरसवीणं,
(44) णमो अमियसवीणं[4],
(45) णमो अक्खीण-महाणसाणं,
(46) णमो बड्ढमाणाणं,
(47) णमो सिद्धायदणाणं
(48) णमो भयवदो महदि-महावीर-वड्ढमाण-बुद्धरिसीणो[5] चेदि।

जस्संतियं धम्मपहं णियच्छे[6] तस्संतियं वेणइयं पउंजे।
काएण वाचा मणसावि णिच्चं, सक्कारए तं सिर-पंचमेण।।1।।

–गणधरवलय मंत्र–

(हिन्दी पद्यानुवाद–शंभु छंद)

मैं नमूँ जिनों[7] को जो अर्हन् अवधीजिन[8] मुनि को नमूँ नमूँ।
परमावधिजिन को नमूँ तथा, सर्वावधि जिन को नमूँ नमूँ।।
मैं नमूं अनंतावधिजिन[9] को, अरु कोष्ठबुद्धियुत साधु नमूँ।
मैं नमूँ बीजबुद्धीयुतमुनि, पादानुसारियुत साधु नमूँ।।1।।

संभिन्न श्रोतृयुत साधु नमूँ, मैं स्वयंबुद्ध मुनिराज नमूँ।
प्रत्येक बुद्ध ऋषिराज नमूँ, पुनि बोधित बुद्ध मुनीश नमूँ।।
ऋजुमतिमनपर्यय साधु नमूँ, मैं विपुलमतीयुत साधु नमूं।
मैं नमूं अभिन्न[10] सुदशपूर्वी, चौदशपूर्वी मुनिराज नमूं।।2।।

अष्टांगमहानिमित्तकुशली, नमूं नमूं विक्रियाऋद्धि प्राप्त।
विद्याधरऋषि को नमूं नमूं मैं, संयत चारणऋद्धि[11] प्राप्त।।
मैं प्रज्ञाश्रमणमुनीश नमूं, आकाशगामि मुनिराज नमूं।
आशीविषयुत ऋषिराज नमूं, दृष्टीविषयुतमुनिराज नमूं।।3।।

मैं उग्रतपस्वी नमूं दीप्ततपि नमूँ तप्ततपसाधु नमूं।
मैं नमूँ महातपधारी को, अरु घोरतपोयुत साधु नमूं।।

---

1. विउव्वणइड्ढिपत्ताणं इति पाठः। 2. पण्णासमणाणं इति पाठः। 3. घोरगुणबंभचारीणं इति पाठः। 4. अमयसवीणं इति पाठः। 5. रिसिणो इति पाठः। 6. णिगच्छे इति पाठः ग्रन्थत्रयीषु। 7. जिन-अर्हंत भगवान् अथवा अरहंत, सिद्ध सकलजिन हैं और आचार्य, उपाध्याय, साधु देशजिन हैं (धवला पुस्तक 9, पृ. 10)। 8. रत्नत्रयसहित अवधिज्ञानी मुनि अवधिजिन हैं (धवला पु. 9, पृ. 40) । 9. अंत और अवधि से रहित केवली भगवान अनंतावधि जिन हैं (धवला पु. 9, पृ. 52) । 10. टीका के आधार से अभिन्नपद है। 11. चारणऋद्धि के आठ भेद हैं-जलचारण, जंघाचारण, तंतुचारण, फलचारण, पुष्पचारण, बीजचारण, आकाशचारण और श्रेणीचारण (टीका से)।

मैं नमूं घोरगुणयुत साधु, मैं घोरपराक्रम साधु नमूं।
मैं नमूं घोरगुणब्रह्मचारि, आमौषधिप्राप्त मुनीश नमूं।।4।।
क्ष्वेलौषधिप्राप्त मुनीश नमूं, जल्लौषधि प्राप्त मुनीश नमूं।
विप्रुष औषधियुत साधु नमूं, सर्वौषधिप्राप्त मुनीश नमूं।।
मैं नमूँ मनोबलि मुनिवर को, मैं वचनबली ऋद्धीश नमूं।
मैं कायबली मुनिनाथ नमूं, मैं क्षीरस्रावी साधु नमूं।।5।।

मैं घृतस्रावी मुनिराज नमूं, मैं मधुरस्रावी साधु नमूं।
मैं अमृतस्रावी साधु नमूं, अक्षीणमहानस साधु नमूं।।
मैं वर्धमान ऋद्धीश नमूं, मैं सिद्धायतन समस्त नमूं।
मैं भगवत् महति महावीर, श्री वर्द्धमान बुद्धर्षि नमूं।।6।।

शेर छंद– जिनके निकट मैं धर्मपथ को प्राप्त किया हूँ।
उनके निकट ही विनयवृत्ति धार रहा हूँ।।
नित काय से वचन से और मन से उन्हीं को।
पंचांग नमस्कार करूँ भक्तिभाव सों।।7।।

इन गणधरवलय मंत्र के विषय में बड़े प्रतिक्रमण में जो कि पाक्षिक, चातुर्मासिक और वार्षिक रूप में किया जाता है। उसकी टीका के प्रारम्भ में टीकाकार (प्रतिक्रमण ग्रंथत्रयी में श्री प्रभाचन्द्राचार्य) कहते हैं–

''वृहत्प्रतिक्रमणलक्षमुपायं विदधानस्तदादौ मंगलार्थमिष्टदेवताविशेषं नमस्कुर्वन्नाह णमो जिणाणमित्यादि।।''

'श्रीगौतमस्वामी दैवसिकादिप्रतिक्रमणादिभिर्निराकर्तुमशक्यानां दोषानां निराकरणार्थं वृहत्प्रतिक्रमणलक्षमुपायं विदधानस्तदादौ मंगलाद्यर्थमिष्टदेवताविशेषं नमस्कुर्वन्नाह णमोजिणाणमित्यादि'।

ये "णमो जिणाणं, णमो ओहिजिणाणं" आदि 48 मंत्र गणधरवलय मन्त्र कहे जाते हैं।। बृहत्प्रतिक्रमण पाठ में प्रतिक्रमणभक्ति में इनका प्रयोग है।

इन मंत्रों का मंगलाचरण धवला की नवमी पुस्तक में है। वहाँ का प्रकरण देखिये–

णमो जिणाणं–जिनों को नमस्कार हो।

शंका–यह सूत्र किसलिये कहा जाता है?

समाधान –यह मंगल के लिये कहा जाता है।

शंका –मंगल किसे कहते हैं?

समाधान –पूर्व संचित कर्मों के विनाश को मंगल कहते हैं।

शंका –यदि ऐसा है तो "जिनसूत्रों का अर्थ भगवान् के मुख से निकला हुआ है, जो विसंवाद रहित होने के कारण केवलज्ञान के समान हैं तथा वृषभसेन आदि गणधर देवों द्वारा जिनकी शब्द रचना की गई है, ऐसे द्रव्य सूत्रों से उनके पढ़ने और मनन करने रूप क्रिया में प्रवृत्त हुए सब जीवों के प्रतिसमय असंख्यात गुणित श्रेणी रूप से पूर्वसंचित कर्मों की निर्जरा होती है। इसी प्रकार विधान होने के यह जिन नमस्कारात्मक सूत्र व्यर्थ पड़ता है।[1] अथवा यदि यह सूत्र सफल है तो सूत्रों का अध्ययन व्यर्थ होगा, क्योंकि उससे होने वाला निर्जरारूपफल इस जिन नमस्कारात्मक सूत्र में ही पाया जाता है।

समाधान–यह कोई दोष नहीं है क्योंकि सूत्राध्ययन से तो सामान्य कर्मों की निर्जरा की जाती है और मंगल से

---

[1] "...........जिणवयणविणिग्गयत्थादो अविसंवादेण केवलणाणसमाणादो उसहसेणादिगणहरदेवेहि विरइयसददरयणादो दव्वसुत्तादो तप्पढणगुणणकिरियावावदाणं पडि समसमसंखेज्जगुणसेढीए पुव्वसंचिदकम्मणिज्जरा होदित्तिणिप्फलमिदं सुत्तमिदि।।" (धवला पुस्तक 9)।

सूत्राध्ययन में विघ्न करने वाले कर्मों का विनाश किया जाता है, इस प्रकार दोनों का विषय भिन्न है।

आगे दूसरे सूत्र की उत्थानिका में विशेष स्पष्टीकरण हो रहा है। इस प्रकार द्रव्यार्थिक नय से जनों के अनुग्रहार्थ गौतम भट्टारक महाकर्म प्रकृति प्राभृत के आदि में नमस्कार करके पर्यायार्थिक नय युक्त शिष्यों के अनुग्रहार्थ उत्तर सूत्रों को कहते हैं[1]–

णमो ओहिजिणाणं।।2।। अवधिजिनों को नमस्कार हो।।2।।

यहाँ अभिप्राय यह है कि "महाकर्मप्रकृति प्राभृत" ग्रन्थ को रचते हुए भट्टारक श्री गौतमस्वामी मंगलाचरण में सर्वप्रथम "णमो जिणाणं" सूत्र का उच्चारण करते हैं। यद्यपि उतने एक सूत्र से मंगल हो गया है, फिर भी पर्यायार्थिकजन के अनुग्रह के लिये आगे के अन्य सूत्रों की रचना करके मंगल करते हैं।

यहाँ यह बात विशेष समझने की है कि धवला के सूत्र साक्षात् जिनेन्द्र भगवान् के मुख से विनिर्गत होने से बहुत ही प्रामाणिक हैं।

इस धवला ग्रन्थ में ये गणधर वलय मंत्र 44 हैं और बृहत्प्रतिक्रमण में 48 हैं। इसमें "णमो सयंबुद्धाणं" "णमो पत्तेयबुद्धाणं" "णमो बोहियबुद्धाणं" तथा "णमो बड्ढमाणाणं"। ये चार मंत्र अधिक हैं।

यहाँ 'णमो जिणाणं' में छठे गुणस्थान से लेकर अर्हन्त भगवान् तक के सभी जिनों को लिया है अव्रतियों को नहीं लिया है, ऐसा समझना चाहिए। एक-एक मन्त्र के अर्थों की कितनी विशेषता है, सो हिन्दी पद्यानुवाद में किंचित् व्यक्त की गई है। विशेष इच्छुकों को इनके टीका ग्रन्थों को पढ़ना चाहिए। यहाँ एक मन्त्र के अर्थ को दिखाते हैं–

"णमो दित्ततवाणं।।23।।"

दीप्ति का कारण होने से तप दीप्ति कहा जाता है। दीप्त है तप जिनका, वे दीप्ति तप हैं। चतुर्थ व षष्ठ आदि उपवासों के करने पर जिनका शरीर तेज तप जनित लब्धि के महात्म्य से प्रतिदिन शुक्ल पक्ष के चन्द्र के समान बढ़ता जाता है, वे ऋषि दीप्ततप कहलाते हैं। उनकी केवल दीप्ति ही नहीं बढ़ती है अपितु बल भी बढ़ता है, क्योंकि शरीर बल, माँस और रुधिर की वृद्धि के बिना शरीर दीप्ति की वृद्धि नहीं हो सकती है, इसलिये उनके आहार भी नहीं होता, क्योंकि उसके कारणों का अभाव है। यदि कहा जाये कि भूख के दुःख को शांत करने के लिये वे भोजन करते हैं, सो भी ठीक नहीं, क्योंकि उनके भूख के दुःख का अभाव है।

धवला टीका से यह निश्चित है कि गौतम स्वामी चार ज्ञान के धारक सर्व ऋद्धियों से समन्वित महान् तपस्वी भगवान् महावीर स्वामी के प्रथम गणधर थे। भगवान् को केवलज्ञान होने के बाद भी 66 दिन तक उनकी दिव्यध्वनि नहीं खिरी थी, फिर जब इन्द्र ने इस इन्द्रभूमि गौतम को भगवान् के समवसरण में प्रवेश कराया था, तब उनके जैनेश्वरी दीक्षा लेने के बाद ही 66 दिन के अनंतर भगवान् की दिव्यध्वनि खिरी थी। पुनः श्री गौतमस्वामी ने दीक्षा लेते ही अन्तर्मुहूर्त्त बाद मनःपर्यय ज्ञान को प्राप्त कर लिया था उसी दिन सायंकाल में अंग-पूर्व की रचना कर ली थी।

इन्हें धवला में भूतबलि आचार्य ने कैसे लिया है, सो इसी धवला में स्पष्ट है। यथा–

"यह निबद्ध मंगल तो हो नहीं सकता, क्योंकि कृति आदिक चौबीस अनुयोगद्वाररूप अवयवों वाले महाकर्म प्रकृति प्राभृत के आदि में गौतम स्वामी ने इसकी प्ररूपणा की है और भूतिबलि भट्टारक के वेदना खंड के आदि में मंगल के निमित्त इसे वहाँ से लाकर स्थापित किया है, अतः इसे निबद्ध मंगल मानने में विरोध है।[2]"

–वीरभक्ति–

(श्री गौतम स्वामी विरचित)

यः सर्वाणि चराचराणि विधिवद् द्रव्याणि तेषां गुणान्।
पर्यायानपि भूतभाविभवतः सर्वान् सदा सर्वथा।।

---

[1] एवं दव्वट्ठिय जणाणुग्गहट्ठं णमोक्कारं गोदमभडारओ महाकम्मपयडिपाहुडस्स आदिम्हि काऊण पज्जवट्ठियाणुग्गहट्ठमुत्तर सुत्ताणि भणादि। (धवला पृ. 9, पृ. 12)।

[2] धवला पुस्तक 9, पृ. 13।

जानीते युगपत् प्रतिक्षणमतः सर्वज्ञ इत्युच्यते।
सर्वज्ञाय जिनेश्वराय महते वीराय तस्मै नमः।।1।।

जो महावीर भगवान चर–जीव, पुद्गल और अचर–धर्म, अधर्म, आकाश और काल इन सभी द्रव्यों को तथा इन द्रव्यों के सभी गुणों को और भूत, भविष्यत्, वर्तमान सर्व पर्यायों को भी यथावत्- जैसे का तैसा सर्वकाल अशेष विशेषरूप से युगपत् और प्रतिक्षण जानते हैं–देश, काल, स्वभाव के क्रम से या इन्द्रियों के व्यवधान से नहीं, प्रत्युत् एक साथ सब कुछ जानते हैं। कहा भी है–

''सर्वं हि वस्तु युगपद् यथावज्जानातीति सर्वज्ञः।''

संपूर्ण वस्तु को–तीनों लोकों को एक साथ ज्यों की त्यों जानते हैं, अतः वे सर्वज्ञ कहलाते हैं। उन सर्वगुणों से उत्कृष्ट, सर्वज्ञ, जिनेश्वर अन्तिम तीर्थंकर वीर भगवान को मेरा नमस्कार हो।

वीरः सर्वसुरासुरेन्द्रमहितो वीरं बुधाः संश्रिताः।
वीरेणाभिहतः स्वकर्मनिचयो वीराय भक्त्या नमः।।
वीरात्तीर्थमिदं प्रवृत्तमतुलं वीरस्य वीरं तपो,
वीरे श्रीद्युति-कांति-कीर्ति-धृतयो हे वीर ! भद्रं त्वयि।।2।।

अर्थ-इस पद्य में सप्त विभक्तियों द्वारा वीर भगवान की स्तुति की गई है। वीर भगवान सर्व सुरेन्द्र–कल्पवासी देवेन्द्र और असुरेन्द्र–भवनवासी आदि देवों के इंद्रों से पूज्य हैं। गणधर देवादि बुद्धिमान पुरुषों ने ऐसे वीर भगवान् का संसार समुद्र से पार होने के लिये आश्रय लिया है। वीर भगवान ने अपने एवं भव्यों के भी कर्मसमूह का नाश कर दिया है। ऐसे वीर भगवान के लिये मेरा नमस्कार हो। वीर भगवान से इस तीर्थ की प्रवृत्ति हुई है। 'तीर्यते संसार समुद्रो येन तत्तीर्थं' जिसके द्वारा संसार समुद्र तिरा जाता है वह तीर्थ कहलाता है यह अंग और अंगबाह्य श्रुतज्ञानरूप है यह तीर्थ निर्बाध होने से और विशिष्ट अर्थ का प्रतिपादक होने से अतुल है–अनुपम है। वीर भगवान का तप घोर है–दुष्कर है तथा बाह्य और अभ्यंतर के भेद से दो भेदरूप है। इन वीर भगवान में अनंत चतुष्टयादि अंतरंग लक्ष्मी और समवसरण विभूति आदि बहिरंग लक्ष्मीरूप श्री द्युति–देहकी ज्योति, कांति–सुंदरता या लावण्यविशेष, कीर्ति–सर्वत्र व्याप्त होने वाली ख्याति या वाणी–जिसके द्वारा जीवादिपदार्थ कहे ज़ाते हैं ऐसी दिव्यवाणी एवं धृति–धैर्य–निराकांक्षा विशेष गुण विद्यमान हैं। ऐसे हे वीर! आप में परमकल्याण है।

ये वीरपादौ प्रणमन्ति नित्यं, ध्यानस्थिताः संयमयोगयुक्ताः।
ते वीतशोका हि भवन्ति लोके, संसारदुर्गं विषमं तरन्ति।।3।।

अर्थ–जो ध्यान में स्थित तथा जीवदयालक्षण और इंद्रियमन के निग्रहरूप संयम से मन, वचन, काय के व्यापार को रोककर एकाग्रचित्त हुये नित्य ही वीर भगवान के चरणों में नमस्कार करते हैं वे भव्यात्मा शोकरहित होते हुये संसाररूपी विषम दुर्ग से पार हो जाते हैं। भगवान को प्रणाम करने से विशेष धर्म की उत्पत्ति होती है और अधर्म का क्षय हो जाने से शोक का अभाव हो जाता है। यहां संसार को दुर्ग–महान् वन की संज्ञा दी है, विषम–रौद्र अनेक प्रकार के दुःखों को देने वाला होने से यह संसार भयानक है। ऐसे विषम संसार को वीर भगवान के नमस्कार से पार कर लेते हैं।

व्रतसमुदयमूलः संयमस्कंधबंधो, यमनियमपयोभिर्वर्धितः शीलशाखः।
समितिकलिकभारो गुप्तिगुप्तप्रवालो, गुणकुसुमसुगंधिः सत्तपश्चित्रपत्रः।।4।।
शिवसुखफलदायी यो दयाछाययोद्घः, शुभजनपथिकानां खेदनोदे समर्थः।
दुरितरविज-तापं प्रापयन्नन्तभावं, स भवविभवहान्यै नोऽस्तु चारित्रवृक्षः।।5।।

अर्थ–भगवान के द्वारा उपदिष्ट चारित्रवृक्ष हम सभी के भव को नष्ट करने वाला होवे।

व्रतों का समुदाय इस चारित्रवृक्ष की जड़ है, संयम ही इस वृक्ष का स्कन्ध–तना है, नियमरूप जल के द्वारा यह वृक्ष वृद्धिंगत होता रहता है–जीवनपर्यंत के लिये ग्रहण किये गये व्रत यम कहलाते हैं और कुछ सीमित काल के लिये

ग्रहण किये व्रत नियम कहलाते हैं। व्रत के परिरक्षणरूप शील अथवा अठारह हजार शील के भेद ही इस वृक्ष की शाखायें हैं। समितियां ही इस वृक्ष की कलियां हैं। गुप्तिरूपी प्रवाल कोंपल इस वृक्ष में निकले हुये हैं। गुण–चौरासी लाख उत्तरगुण वे ही पुष्प अपनी सुरभि बिखेर रहे हैं। सम्यक्तपश्चरणरूपी अनेक प्रकार के पत्ते इस वृक्ष में लगे हुये हैं। ऐसा यह चारित्ररूपी वृक्ष मोक्षसुखरूपी अनंत फल को देने वाला है।

सूर्य के ताप से संतप्त पथिकों के खेद–श्रम को दूर करने में समर्थ ऐसा यह वृक्ष दयारूपी छाया को प्रदान करने वाला है। पापरूपी सूर्य से उत्पन्न हुआ जो ताप–चतुर्गति का दुःख उसको यह नष्ट करने वाला है। ऐसा यह चारित्ररूपी वृक्ष हम सभी के संसार में उत्पन्न होने वाले नाना प्रकार के भवों को नष्ट करने वाला होवे।

चारित्रं सर्वजिनैश्चरितं प्रोक्तं च सर्वशिष्येभ्यः। प्रणमामि पंचभेदं पंचम चारित्रलाभाय।।6।।

अर्थ–सभी तीर्थंकरों ने कर्मों का क्षय करने के लिये स्वयं इस चारित्र को पाला है और सभी शिष्यों के लिये–सभी भव्यों के लिये इसी चारित्र का प्रतिपादन किया है। ऐसे सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहार विशुद्धि, सूक्ष्मसांपराय और यथाख्यात इन पांचभेदरूप चारित्र को मैं संपूर्ण कर्मों का क्षय करने वाले ऐसे पांचवें यथाख्यात चारित्र की प्राप्ति के लिये नमस्कार करता हूँ।

धर्मः सर्वसुखाकरो हितकरो धर्मं बुधाश्चिन्वते। धर्मेणैव समाप्यते शिवसुखं धर्माय तस्मै नमः।।
धर्मान्नास्त्यपरः सुहृद् भवभृतां धर्मस्य मूलं दया। धर्मे चित्तमहं दधे प्रतिदिनं हे धर्म ! मां पालय।।7।।

अर्थ–यहां चारित्र को ही धर्म यह नाम देकर उसमें सातों विभक्तियां घटित करके उस धर्म की प्रशंसा करते हुये उस धर्म से अपनी रक्षा की प्रार्थना करते हैं–

यह धर्म–चारित्र और उत्तम क्षमादिरूप धर्म स्वर्ग–मोक्ष आदि संपूर्ण सुखों की खान है–उत्पत्तिस्थान है। परिणाम में पथ्यस्वरूप है, पुण्य का जनक है अतः सभी का हित करने वाला है। परमविवेकसंपन्न तीर्थंकर आदि महापुरुष इसी धर्म का संचय करते हैं–मोक्ष की प्राप्ति के लिये इसी धर्म का अनुष्ठान करते हैं क्योंकि धर्म से ही सम्यक्प्रकार से मोक्ष सुख की प्राप्ति होती है। ऐसे धर्म के लिये मेरा नमस्कार हो।

संसारी प्राणियों के लिये इस धर्म से बढ़कर और कोई मित्र–उपकारक नहीं है। इस धर्म का मूल दया है क्योंकि निर्दयी के धर्म का अंश भी असंभव है। ऐसे धर्म में मैं प्रतिदिन अपने चित्त को स्थिर करता हूँ–सावधान होकर धर्म में चित्त को लगाता हूँ।

ऐसे धर्म से मैं प्रार्थना करता हूँ कि हे धर्म ! आप संसार समुद्र में गिरते हुये ऐसे मेरी रक्षा करो–मेरा पालन करो।

धम्मो मंगलमुक्किट्ठं अहिंसा संजमो तवो। देवा वि तस्स पणमंति जस्स धम्मे सया मणो।।8।।

अर्थ–यह धर्म मंगल स्वरूप है–जो मल को, पाप को गलावे, नष्ट करे अथवा 'मंग' परमसुख को लावे–प्रदान करे वह मंगल कहलाता है। ऐसा यह मंगल उत्कृष्ट है–अनुपचरित है, परम–श्रेष्ठ है। यह धर्म ही मंगलस्वरूप है ऐसा नहीं प्रत्युत् अहिंसा, संयम और तप भी मंगलस्वरूप हैं, पूजादि के लिये हेतु हैं। जिसका मन सदा धर्म में स्थित है उसे देवगण भी नमस्कार करते हैं।

यहां प्रतिक्रमण ग्रन्थत्रयी में 'देवा वि तस्स पणमंति' पाठ है इससे यह प्रतीत होता है कि टीकाकार प्रभाचंद्राचार्य तक यही पाठ मान्य रहा है। आजकल कुछ विद्वान 'देवा वि तं णमस्संति' पाठ लिखने लगे हैं। मेरी समझ में पूर्वाचार्यों की रचना में ऐसा संशोधन उचित नहीं है।

–प्रतिक्रमण भक्ति–

(दैवसिक प्रतिक्रमण के अंतर्गत)

णमो जिणाणं 3, णमो णिस्सिहीए 3, णमोत्थु दे 3,

अरहंत! सिद्ध! बुद्ध! णीरय! णिम्मल! सममण! सुममण! (सुमण) सुसमत्थ! समजोग! समभाव! सल्लघट्टाण

सल्लघत्ताण! णिब्भय! णीराय! णिद्दोस! णिम्मोह! णिम्मम! णिस्संग! णिस्सल्ल! माणमायामोसमूरण! तवप्पहावण! गुणरयणसीलसायर! अणंत! अप्पमेय! महदिमहावीर-वड्ढमाण-बुद्धरिसिणो चेदि णमोत्थु दे णमोत्थु दे णमोत्थु दे।

अर्थ–जिनेन्द्रों को नमस्कार हो, जिनेन्द्रों को नमस्कार हो, जिनेन्द्रों को नमस्कार हो। निषीधिकाओं को नमस्कार हो, निषीधिकाओं को नमस्कार हो, निषीधिकाओं को नमस्कार हो। आपको नमस्कार हो, आपको नमस्कार हो, आपको नमस्कार हो, हे अर्हंत! हे सिद्ध! हे बुद्ध! हे नीरज! हे निर्मल! हे सममन! हे शुभमन! हे सुसर्थ! हे समयोग! हे समभाव! हे शल्यपीड़ित के शल्यघातक! हे निर्भय! हे नीरांग! हे निर्दोष! हे निर्मोह! हे निर्मम! हे निःसंग! हे निःशल्य! हे मान-माया-मृषा के मर्दक! हे तपःप्रभावक! हे गुणरत्न और शील के सागर! हे अनंत! हे अप्रमेय! हे महतिमहावीर वर्द्धमान बुद्धर्षि भगवन्! आपको नमस्कार हो, नमस्कार हो, नमस्कार हो।

विशेषार्थ–यहाँ जिनेन्द्र देव को तीन बार नमस्कार करने से अति भक्ति सूचित होती है। निषीधिका को भी तीन बार नमस्कार किया है। निषीधिका शब्द से सामान्यतया तीर्थंकरों की पंचकल्याणक भूमियां ली जाती हैं अथवा सामान्य केवली आदि के भी निर्वाण स्थान निषीधिका कहलाते हैं। टीकाकार श्री प्रभाचंद्राचार्य ने यहां 'निषीधिका' के सत्रह-17 प्रकार बतलाये हैं–

"णिसीहियाए-निषीधिका शब्दोऽनेकार्थाभिधायी। तथाहि (1) जिनसिद्ध प्रतिबिम्बानि मुनयः (2) तथा तदालयाः। (3) बुद्ध्यादि-लब्धिसंपन्ना मुनयः। (4) तैराश्रितानि क्षेत्राणि। (5) अवधिमनः पर्यय-केवलज्ञानिनः। (6) ज्ञानोत्पत्तिप्रदेशाः। (7) तैराश्रितक्षेत्राणि। (8) सिद्धजीवाः। (9) तन्निर्वाणक्षेत्राणि। (10) तैराश्रिताकाशप्रदेशाः। (11) सम्यक्त्वादिचतुर्गुण-युक्तास्तपस्विनः। (12) तैराश्रितक्षेत्रम्। (13) तत्त्यक्तशरीराश्रितप्रदेशाः। (14) योगस्थितास्तपस्विनः (15) तैराश्रितक्षेत्रम् (16) तन्मुक्तशरीराश्रितप्रदेशाः। (17) त्रिविधपण्डितमरणस्थिता मुनयः। इत्यादि।[1]

अर्थ–(1) जिन और सिद्ध की कृत्रिम - अकृत्रिम प्रतिमायें। (2) उनके मंदिर, (3) बुद्धि आदि ऋद्धि से सहित मुनिगण, (4) उनसे आश्रित क्षेत्र, (5) अवधि, मनःपर्यय और केवलज्ञानी, (6) उनके ज्ञानोत्पत्ति के प्रदेश, (7) उनसे आश्रित क्षेत्र, (8) सिद्धजीव (9) उनके निर्वाण क्षेत्र, (10) उनसे आश्रित आकाशप्रदेश, (11) सम्यक्त्व, ज्ञान, चारित्र और तप इन चार से युक्त तपस्वी, (12) उनसे आश्रित क्षेत्र, (13) उनके द्वारा छोड़े गये शरीर के आश्रित प्रदेश, (14) योग में स्थित तपस्वी, (15) उनसे आश्रित क्षेत्र, (16) उनके द्वारा छोड़े गये शरीर के आश्रित प्रदेश, (17) और तीन प्रकार के पंडितमरण में स्थित मुनिगण। ये सभी 'निषीधिका' शब्द से कहे गये हैं अतः इन सबको यहाँ नमस्कार हो जाता है।

घातिकर्म विरहित अर्हंत देव हैं। आठों कर्मों से रहित सिद्ध भगवान हैं। केवलज्ञान सहित बुद्ध कहलाते हैं। ज्ञानावरण दर्शनावरणरूपी रज से रहित 'नीरज' हैं। द्रव्य और भावरूप कर्म कलंक से रहित निर्मल हैं। तृण और स्वर्ण तथा शत्रु–मित्र में समभाव–रागद्वेष रहित चित्तवाले 'सममन' हैं। शोभन–आर्त, रौद्रध्यान से रहित मन वाले 'सुमन' या शुभमन वाले हैं। कायक्लेश तप के अनुष्ठान में और परीषहों के सहन करने में अच्छी तरह समर्थ होने से 'सुसमर्थ' कहलाते हैं। परम उपशम भाव से सहित होने से 'समयोग' होते हैं। संसार का उपशम करने के लिये अथवा राग द्वेष का परिहार करने के लिये द्वादश अनुप्रेक्षा की भावनारूप से परिणत 'समभाव' कहलाते हैं।

इस प्रकार जो सामान्य रूप से अर्हंत आदि हैं उन्हें नमस्कार करके यहाँ विशेषरूप से अंतिम तीर्थंकर की स्तुति करते हुये कहते हैं–'सल्लघत्ताणं'–चतुर्गति संसार में जो जीवों को 'श्रृणन्ति' कष्ट देते हैं–शारीरिक, मानस और आगंतुक दुःखों द्वारा पीड़ा पहुँचाते हैं वे शल्य कहलाते हैं वे माया, मिथ्या, निदान ये तीन शल्य हैं तथा क्रोधादि भी कदाचित् शल्य कहलाते हैं जैसे कि वाणादि शल्य के समान। उन शल्यों से पीड़ित प्राणी 'शल्यघट्ट' कहलाते हैं। उन शल्यपीड़ित जीवों के शल्य घातक हैं अर्थात् उन चतुर्गति के दुःख के लिए कारणभूत जो शल्य हैं उनके विनाशक हैं। सात भयों से रहित होने से 'निर्भय' हैं। राग से रहित होने से 'नीराग' हैं। अठारह दोषों से रहित होने से 'निर्दोष' कहलाते हैं। मोह और अज्ञान से रहित होने से अथवा दर्शनमोह और चारित्रमोह को नष्ट कर देने से भगवान 'निर्मोह' कहलाते हैं। सभी सांसारिक विषयों में ममत्व रहित होने से 'निर्भय' हैं। बाह्य-अभ्यंतर परिग्रहों से रहित होने से 'निःसंग' हैं।

---

1. प्रतिक्रमण ग्रन्थत्रयी पृ. 20।

माया आदि शल्यों से विरहित होने से 'निःशल्य' हैं। गुण चौरासी लाख हैं, रत्न सम्यग्दर्शन, ज्ञान और चारित्ररूप तीन हैं और शील के भेद अठारह हजार होते हैं, इन गुण, रत्न और शील के आप सागर हैं–निवास स्थान हैं अतः आप 'गुणरत्नशीलसागर' कहलाते हैं। अनंत केवलज्ञान दर्शन आदि से युक्त होने से 'अनंत' कहलाते हैं। इन्द्रिय ज्ञान से–हम सभी छद्मस्थ जनों के इन्द्रियज्ञान द्वारा नहीं जाने जा सकते अतः 'अप्रमेय' कहलाते हैं। इन विशेषणों से विशिष्ट 'महतिमहावीर' और 'वर्द्धमान' इन दो नामों से विभूषित आप 'महतिमहावीर वर्द्धमान' कहलाते हैं।

भगवान महावीर के गर्भावतार आदि में माता-पिता की इन्द्रों द्वारा महती पूजा की गई थी और रत्नवृष्टि आदि की गई थी, इसीलिये बंधुजनों ने भगवान का 'वर्धमान' यह नाम रखा था। अव–समंतात् सब तरफ से ऋद्ध–मान अर्थात् पूजा होने से वर्द्धमान–वर्धमान कहलाते हैं। भगवान वर्धमान जब दीक्षा लेकर ध्यान में खड़े थे तब रुद्र ने महान् उपसर्ग किया था किंतु जब वह उन्हें ध्यान से चलायमान नहीं कर सका तब उसने प्रसन्न होकर 'महति महावीर' नामकरण किया था। 'बुद्धरिसिणो'–जिन्होंने संपूर्ण पदार्थों को जैसे का तैसा जान लिया है ऐसे 'ऋषि' अर्थात् केवलज्ञान आदि क्षायिक नवकेवल लब्धियों से संपन्न होने से भगवान महावीर 'बुद्धर्षि' कहलाते हैं। इन सभी विशेषणों से समन्वित ऐसे अर्हंत, सिद्ध आदि विशेषणों से विशिष्ट हे महावीर स्वामिन्! आपके लिये नमस्कार हो, नमस्कार हो, नमस्कार हो।

मम मंगलं अरहंता य सिद्धा य बुद्धा य जिणा य केवलिणो ओहिणाणिणो मणपज्जवणाणिणो चोद्दसपुव्वंगमिणो सुदसमिदिसमिद्धा य तवो य बारसविहो तवस्सी, गुणा य गुणवंतो य महरिसी तित्थं तित्थंकरा य, पवयणं पवयणी य, णाणं णाणी य, दंसणं दंसणी य, संजमो संजदा य, विणओ विणीदा य, बंभचेरवासो वंभचारी य, गुत्तीओ चेव गुत्तिमंतो य, मुत्तीओ चेव मुत्तिमंतो य, समिदीओ चेव समिदिमंतो य, ससमय परसमयविदू खंतिक्खगा[1] य खंतिवंतो य खीणमोहा य खीणवंतो य, बोहियबुद्धा य बुद्धिमंतो य, चेदियरुक्खा य चेदियाणि।

अर्थ–अरहंत, सिद्ध, बुद्ध, जिन, केवली, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, चौदश पूर्वगामी, श्रुतसमिति से समृद्ध, बारह प्रकार के तप और तपस्वी, गुण और गुणधारी, महर्षि, तीर्थ और तीर्थंकर, प्रवचन और प्रवचन वाले, ज्ञान और ज्ञानी, दर्शन और दर्शनी, संयम और संयत मुनि, विनय और विनीत मुनि ब्रह्मचर्यवास और ब्रह्मचारी, गुप्तियां और गुप्तिमान, मुक्ति और मुक्तिमान, समितियां और समितिवान्, स्वसमय-परसमय के ज्ञाता, क्षांति–क्षपक और क्षांतिमान, क्षीणमोह और क्षीणमोहवान्, बोधितबुद्ध और बुद्धिमान, चैत्यवृक्ष और चैत्य–जिनप्रतिमायें ये सब मेरे मंगल के लिये होवें।

विशेषार्थ–ये अरिहंत सिद्ध आदि सब मेरे मंगल के लिये–मलगालन करने वाले होवें। छ्यालीस गुण सहित भगवान अर्हंत कहलाते हैं। संसाररूपी विषम कष्ट को देने में कारणभूत कर्म हैं इन कर्मों को जड़मूल से नष्ट करने वाले 'जिन' कहलाते हैं। केवली भगवान अवधिज्ञानी महामुनि, मनःपर्यय ज्ञानी महामुनि, चतुर्दश पूर्व और द्वादशंग के ज्ञानी, श्रुत–अंगबाह्य अर्थात् कालिक, उत्कालिक आदि भेदों का जो समिति–समूह उनसे समृद्ध–अंगबाह्य श्रुत के ज्ञानी बारह प्रकार के तप–अनशन आदि भेदों सहित और तपस्वी महासाधु, गण–मूलगुण एवं उत्तरगुण अथवा चौरासी लाख उत्तर गुण और उनके गुणों से युक्त महामुनि। महर्षि–कोष्ठबुद्धि, बीजबुद्धि, आदि परमऋद्धि युक्त मुनिगण ये सब मेरे मंगल के लिये होवें।

तीर्थ–आगम और उस आगम के आधारभूत संघ ये तीर्थ कहलाते हैं। तीर्थंकर भगवान मेरे लिए मंगलकारी होवें। पूर्वापर विरोध आदि दोषों से रहित वचन प्रवचन कहलाते हैं ऐसे प्रवचन और प्रवचन वाले महामुनि, मति आदि पंचविध ज्ञान और ज्ञानधारी महासाधु, त्रिविध सम्यक्त्व और सम्यग्दर्शन महामुनि, बारह प्रकार का संयम और संयमधारी संयत, ज्ञान, दर्शन, चारित्र और उपचार इन चार भेदरूप विनय और विनयगुण युक्त मुनिगण ये मंगलकारी होवें।

ब्रह्मचर्यवास–ब्रह्म–गुरुकुल–मुनिसंघ अथवा व्रतों में जो चर्या की जाती है–उनका अनुष्ठान किया जाता है उसका नाम ब्रह्मचर्य है उसके साथ जिनका वास है अर्थात् जो ब्रह्मचर्य युक्त हैं और जो ब्रह्मचर्य से सहित आत्मा–मुनि हैं। त्रिविध गुप्तियाँ और गुप्तिमान महामुनि हैं। बाह्य और अंतरंग परिग्रह का त्याग मुक्ति है और मुक्ति के परिग्रह के त्यागी अथवा मोक्ष प्राप्त आत्मा मुक्तिमान कहलाते हैं। पांच समितियाँ और समितिधारी महासाधु होते हैं। स्वसमय–

---

[1] 'खंतिक्खवगा य खीणमोहा य' प्रतिक्रमणग्रन्थत्रयी में ऐसा पाठ है।

जैनमत, परसमय–जैन से अतिरिक्त वैदिक, बौद्ध आदि मत इन सबके ज्ञाता जो महामुनि हैं। क्षांति-क्षमाशील, क्षपकश्रेणी पर आरूढ़ महामुनि और क्षमावान मुनि, क्षीणमोह–मोहरहित परिणाम–बारहवां गुणस्थान और उस गुणस्थान वाले क्षीणमोहवान् निर्ग्रंथ महासाधु होते हैं। संसार, शरीर, विषय आदि में उपदेश से वैराग्य को प्राप्त 'बोधितबुद्ध' कहलाते हैं। कोष्ठबुद्धि आदि बुद्धि ऋद्धि से सहित महामुनि बुद्धिमंत कहलाते हैं।

चैत्य–जिनप्रतिमायें और चैत्यवृक्ष–जिनवृक्षों में जिनप्रतिमायें विराजमान रहती हैं ऐसे अकृत्रिम जिनमंदिरों में तथा समवसरण में अशोक, सप्तच्छद, चंपा और आम्र के वनों में ये चैत्यवृक्ष माने गये हैं। इस प्रकार कृत्रिम–देव, मनुष्यों द्वारा बनवायी गयी जिनप्रतिमाओं और अनादिनिधन–शाश्वत जिनप्रतिमायें, 'चैत्य' शब्द से कही जाती हैं।

ये अर्हंत, सिद्ध आदि चैत्यवृक्षपर्यंत सभी पूज्य–वंद्य गुण और गुणधारी महापुरुष हम सभी के लिये मंगलकारी होवें।

उड्ढमहतिरियलोए सिद्धायदणाणि णमंसामि सिद्धणिसीहियाओ अट्ठावयपव्वए सम्मेदे उज्जंते चंपाए पावाए मज्झिमाए हत्थिबालियसहाए जाओ अण्णाओ काओ वि णिसीहियाओ जीवलोयम्मि, इसिपब्भारतलग्गयाणं सिद्धाणं बुद्धाणं कम्मचक्कमुक्काणं णीरयाणं णिम्मलाणं, गुरु-आयरिय-उवज्झायाणं पव्वत्तित्थेरकुलयराणं चाउवण्णो य समणसंघो य भरहेरावएसु दससु, पंचसु महाविदेहेसु। जे लोए संति साहवो संजदा तवस्सी एदे मम मंगलं पवित्तं। एदेहं मंगलं करेमि भावदो विसुद्धो सिरसा अहिवंदिऊण सिद्धे काऊण अंजलिं मत्थयम्हि तिविहं तियरणसुद्धो।

अर्थ–मैं ऊर्ध्वलोक के, अधोलोक के और तिर्यग्लोक–मध्यलोक के सिद्धायतन को नमस्कार करता हूँ। अष्टापद पर्वत, सम्मेद शिखर, ऊर्जयंत, चंपापुर, पावापुर, मध्यमानगरी, हस्तिबालिका मंडप की सिद्धनिषीधिकाओं को नमस्कार करता हूँ।

अन्य जो भी निषीधिकायें इन ढाई द्वीप में हैं। ईषत्प्राग्भार-सिद्धशिला पर स्थित सिद्ध बुद्ध, कर्मचक्र से मुक्त नीरज, निर्मल हैं। जो गुरु, आचार्य, उपाध्याय, प्रवर्तक, स्थविर और कुलकर हैं। चातुर्वर्ण और श्रमणसंघ हैं।

पाँच भरत और पाँच ऐरावत ऐसे ढाई द्वीपों की ये दश कर्मभूमियाँ हैं। पाँच महाविदेहों में जो कर्मभूमियों में ये गुरु आदि संघ पर्वत हैं। ये सब मेरे लिये मंगलकारी होवें। लोक में जो भी साधु संयत और तपस्वी हों वे सब मुझे पवित्र करें और मंगलप्रद हों। मैं भाव से विशुद्ध होकर मस्तक झुकाकर हस्तांजलि को मस्तक पर धरकर मन वचन काय की शुद्धिपूर्वक नमस्कार करता हूँ।

विशेषार्थ–मेरु के ऊपर के भाग को ऊर्ध्वलोक, मेरु के नीचे को अधोलोक और मेरु की ऊँचाई प्रमाण तिर्यग्लोक में जो भी सिद्धों के–मुक्तात्माओं के निषीधिका–निर्वाणक्षेत्र हैं उन सबको मैं नमस्कार करता हूँ।

ये सिद्धनिषीधिकायें कहाँ-कहाँ हैं?

अष्टापदपर्वत–कैलाशपर्वत, सम्मेदशिखरपर्वत, ऊर्जयंतपर्वत–गिरनार, चंपापुरी, पावापुरी, मध्यमानगरी और हस्तिवालिका मंडप ये सिद्धनिषीधिकायें हैं। इन निर्वाणक्षेत्रों से अतिरिक्त जिनके नाम निर्दिष्ट नहीं किये गये हैं ऐसी जो कोई भी निषीधिकायें इस ढाई द्वीप और दो समुद्र के अन्तर्गत हैं उन सबको मैं नमस्कार करता हूँ।

ये निषीधिकायें किन किनकी हैं?

ये सिद्धों की निषीधिकायें हैं।

ईषत्प्राग्भार–मोक्षशिला–सिद्धशिला कहलाती है। उसके ऊपर के तल–भाग पर स्थित जो सिद्ध क्षेत्र भगवान हैं उन्हीं के विशेषण बतलाते हैं। बुद्धाणं–संपूर्ण पदार्थों के स्वरूप को जाननेवाले हैं वे सिद्ध जड़रूप नहीं हैं। कम्मचक्कमुक्काणं–ज्ञानावरणादिमूल और उत्तर प्रकृतियों के भेद से अनेक भेदरूप कर्मों से रहित हैं। णीरयाणं–रज–ज्ञानावरण, दर्शनावरण अथवा पाप, इनसे जो रहित हैं। णिम्मलाणं–सम्यग्दर्शनादि के अतिचार–दोष और भावकर्मरूपी मलों से रहित हो चुके हैं। इन सिद्धशिला के उपरिम भाग में विराजमान सिद्धों को नमस्कार हो।

गुरुआयरियउवज्झायाणं–गुरु–दीक्षागुरु, शिक्षागुरु आदि गुरु कहलाते हैं। पाँच प्रकार के आचारों के पालन करने वाले और कराने वाले आचार्य कहलाते हैं इनकी जो निषीधिकायें हैं तथा–पव्वत्तित्थेरकुलयराणं–सन्मार्ग के प्रवर्तक प्रवर्तित हैं। वयोवृद्ध साधु स्थविर हैं अथवा गुणों में ज्येष्ठ भी स्थविर कहलाते हैं। नंदिसंघ, देवसंघ, सेनसंघ और

सिंहसंघ ये संघ कहलाते हैं। देशिगण, बलात्कारगण, काणूरगण और सूरस्थगण ये गण शब्द से कहे जाते हैं। इन संघ और गणों के भेद वाले महामुनियों की जो कोई भी निषीधिकायें हैं। इन सब निषीधिकाओं को मैं नमस्कार करता हूँ।

व्रतिक–संयमियों के चार भेद माने हैं–ऋषि, यति, मुनि और अनगार, इन्हें चातुर्वर्ण श्रमणसंघ कहते हैं अथवा ऋषि, आर्यिका, श्रावक और श्राविका के भेदरूप चातुर्वर्ण संघ या चतुर्विधसंघ कहलाता है।

यह संघ कहाँ–कहाँ पाया जाता है?

ढाई द्वीपों में पाँच भरत और पाँच ऐरावत ऐसे दश क्षेत्र माने हैं तथा पाँच महाविदेह माने हैं। इन पंद्रह कर्मभूमियों में यह चतुर्विध संघ रहता है यह संघ मेरे लिये मंगलकारी होवे।

लोक में–मानुषोत्तर पर्वत वलयाकार है जो कि ढ़ाई द्वीप की सीमा पर है उन ढ़ाई द्वीप क्षेत्र के अंदर में जो भी सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्र के द्वारा मोक्ष की साधना कर रहे हैं और कर चुके हैं वे सभी दिगम्बर जैन साधु, संयत, तपस्वी मेरा मंगल करें और मुझे पवित्र करें–मलगालन के लिये जो निमित्त है उसे मंगल कहते हैं अथवा सुख को प्राप्त कराने में जो निमित्त है उसे भी मंगल कहते हैं।

इन सबका मैं भाव से विशुद्ध होता हुआ शिर झुकाकर मंगल करता हूँ अर्थात् स्तुति करता हूँ। कहा भी है–

आदौ मध्येऽवसाने च मंगलं भाषितं बुधैः। तज्जिनेंद्रगुणस्तोत्र-मित्याहुर्मुनिपुंगवाः।।

ग्रन्थ रचना के आदि, मध्य और अन्त में बुद्धिमानों को मंगल करना चाहिये। वह जिनेन्द्र भगवान के गुणों का स्तोत्र ही है ऐसा महामुनियों ने कहा है–

किस विधि से मैं मंगल–स्तुति करता हूँ?

मैं देववंदना, प्रतिक्रमण और स्वाध्याय इन तीन प्रकार की क्रियाओं के अनुष्ठान में मन, वचन, काय की शुद्धिपूर्वक अंजलि को मस्तक पर रखकर शिर झुकाकर सिद्धों की वंदना करके उपर्युक्त सभी सिद्धनिषीधिकाओं, सिद्धों को, सिद्धक्षेत्रों को, गुरु–आचार्य–उपाध्याय आदि महामुनियों को नमस्कार करता हूँ।

सुदं मे आउस्संतो

(श्री गौतमस्वामी रचित पाक्षिक प्रतिक्रमण से उद्धृत)

पढमं ताव सुदं मे आउस्संतो।

हे आयुष्मन्तों भव्यों! मैंने प्रथम ही सुना है।

क्या सुना है?

गिहत्थधम्मं–गृहस्थ धर्म सुना है। किनसे सुना है?

भयवदा महदिमहावीरेण–भगवान महति महावीर के श्रीमुख से सुना है। वे भगवान महावीर कैसे हैं?

समणेण महाकस्सवेण सवण्हणाणेण सव्वलोयदरसिणा–जो श्रमण हैं, महाकाश्यप गोत्र में जन्मे हैं, सर्वज्ञानी हैं और सर्वदर्शी हैं ऐसे भगवान महावीर ने उपदेश दिया है और हमने सुना है।

किसके लिये उपदेश दिया है? **सावयाणं सावियाणं खुड्डयाणं खुड्डीयाणं कारणेण**–

श्रावक और श्राविकाओं के लिये तथा क्षुल्लक और क्षुल्लिकाओं के लिए उपदेश दिया है।

क्या उपदेश दिया है? **पंचाणुव्वदाणि तिण्णि गुणव्वदाणि चत्तारि सिक्खावदाणि बारसविहं गिहत्थधम्मं सम्मं उवदेसिदाणि**–पांच अणुव्रत, तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रत ऐसे बारह प्रकार के गृहस्थधर्म का सम्यक् उपदेश दिया है।

श्री गौतमस्वामी जो भगवान महावीर स्वामी के प्रथम गणधर हुये हैं। उन श्री गौतम स्वामी के द्वारा बनाये गये सूत्ररूप प्रतिक्रमण पाठ आज उपलब्ध हैं जिन्हें मुनि, आर्यिकायें और क्षुल्लक-क्षुल्लिकायें तथा व्रती श्रावकवर्ग प्रतिदिन पढ़ते हैं। ऐसे यतियों का और श्रावकों का दैवसिक–रात्रिक प्रतिक्रमण पाठ तथा पाक्षिक प्रतिक्रमण नाम से प्रसिद्ध पाक्षिक प्रतिक्रमण मौजूद है। जिसमें प्राकृत के जितने भी दण्डक पाठ व सूत्रपाठ हैं वे सब श्री गौतमस्वामी द्वारा रचित हैं। यह बात टीकाकार श्री प्रभाचन्द्राचार्य ने कही है तथा अन्य भी आचार्यों ने इन प्रतिक्रमण दण्डक को श्री गौतमस्वामी रचित ही माना है। वे गौतमस्वामी उस पाक्षिक यतिप्रतिक्रमण में उपर्युक्त पंक्तियों को कह रहे हैं कि–

हे आयुष्मन्तों! मैंने सुना है महाकाश्यप गोत्रीय, सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, श्रमण भगवान् महावीर ने श्रावक, श्राविका, क्षुल्लक और क्षुल्लिका इनके लिये पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रत ऐसे बारह प्रकार के गृहस्थ धर्म का सम्यक् उपदेश दिया है।

यहाँ पर ये पंक्तियाँ बहुत ही महत्व की हैं क्योंकि श्री गौतमस्वामी मति, श्रुत, अवधि और मनःपर्यय इन चारों ज्ञान से सहित थे। बुद्धि, ऋद्धि आदि सात प्रकार की ऋद्धियों से समन्वित थे। जिन्होंने कुछ दिन कम तीस वर्ष तक बराबर श्री महावीर स्वामी की दिव्यध्वनि को सुना था तथा जिन्होंने स्वयं ही ग्यारह अंग और चौदह पूर्वरूप से ग्रन्थ रचना की थी ऐसे महान् गणधर पूर्ण प्रामाणिक श्री गौतमस्वामी गौरवपूर्ण शब्दों में स्वयं कह रहे हैं कि मैंने सुना है तथा अतीव कोमल और प्रिय शब्दों में भक्तों को संबोधित करते हुए कह रहे हैं कि हे आयुष्मन्तों! मैंने सुना है। इन शब्दों से श्री गणधर देव गृहस्थ धर्म को भगवान् महावीर द्वारा कथित सिद्ध कर रहे हैं, जो कि बारहव्रतरूप है।

ऐसे ही मुनियों के धर्म के बारे में भी श्री गौतम स्वामी ने कहा है–

सुदं[1] मे आउस्संतो! इह खलु समणेण भयवदो[2] महदि-महावीरेण[3] महा-कस्सवेण सव्वण्हुणा सव्वलोगदरिसिणा सदेवासुर-माणुसस्स लोयस्स आगदि-गदिचवणो-ववादं बंधं मोक्खं इड्ढिं ठिदिं जुदिं अणुभागं तक्कं कलं मणो-माणसियं भूतं[4] कयं पडिसेवियं आदिकम्मं अरुह-कम्मं[5] सव्वलोए सव्वजीवे सव्वभावे सव्वं समं जाणंता पस्संता विहरमाणेण समणाणं पंचमहव्वदाणि राइभोयणवेरमण-छट्ठाणि सभावणाणि समाउग-पदाणि सउत्तर-पदाणि सम्मं धम्मं उवदेसिदाणि। तं जहा–

पढमे महव्वदे पाणादिवादादो वेरमणं, विदिए महव्वदे मुसावादादो वेरमणं, तिदिए महव्वदे अदिण्णदाणादो वेरमणं, चउत्थे महव्वदे मेहुणादो वेरमणं, पंचमे महव्वदे परिग्गहादो वेरमणं, छट्ठे अणुव्वदे राइभोयणादो वेरमणं चेदि।

धर्मतीर्थ की उत्पत्ति–

"वर्धमान भगवान ने तीर्थ की उत्पत्ति की है।[6]" अठारह भाषा और सात सौ लघु भाषा स्वरूप द्वादशांगात्मक उन अनेक बीज पदों के प्ररूपक अर्थकर्ता हैं" तथा बीज पदों में लीन अर्थ के प्ररूपक बारह अंगों के कर्ता गणधर भट्टारक ग्रन्थकर्ता हैं।[7]"

संपहि वड्ढमाणतित्थगंथकत्तारो वुच्चदे–

अब वर्धमान जिनके तीर्थ में ग्रन्थकर्ता को कहते हैं–

"उक्त पाँच अस्तिकायादिक क्या हैं?" ऐसे सौधर्मेन्द्र के प्रश्न से सन्देह को प्राप्त हुए, पाँच सौ–पाँच सौ शिष्यों से सहित तीन भ्राताओं से वेष्टित, मानस्तम्भ के देखने से गर्व रहित हुए, बुद्धि को प्राप्त होने वाली विशुद्धि से संयुक्त वर्धमान भगवान् के दर्शन करने पर असंख्यात भवों में अर्जित महान् कर्मों को नष्ट करने वाले, जिनेन्द्रदेव की तीन प्रदक्षिणा करके पाँच अंगों द्वारा भूमिस्पर्शपूर्वक वंदना करके एवं हृदय से जिनभगवान् का ध्यान कर संयम को प्राप्त हुए, विशुद्धि के बल से मुहूर्त के भीतर उत्पन्न हुए समस्त गणधर के लक्षणों से संयुक्त तथा जिनमुख से निकले हुए बीजपदों के ज्ञान से सहित ऐसे गौतम गोत्र वाले इन्द्रभूति ब्राह्मण द्वारा चूंकि आचारांग आदि बारह अंगों तथा सामायिक, चतुर्विंशतिस्तव, वंदना, प्रतिक्रमण, वैनयिक, कृतिकर्म, दशवैकालिक, उत्तराध्ययन, कल्पव्यवहार, कल्पाकल्प, महाकल्प, पुण्डरीक, महापुण्डरीक व निषिद्धिका, इन अंगबाह्य चौदह प्रकीर्णकों की श्रावण मास के कृष्ण पक्ष में युग की आदि में प्रतिपदा के पूर्व दिन में रचना की थी, अतएव इन्द्रभूति भट्टारक वर्धमान जिन के तीर्थ में ग्रन्थकर्ता हुए।

कहा भी है–"वर्ष के प्रथम मास व प्रथम पक्ष में श्रावण कृष्णा प्रतिपदा के पूर्व दिन में अभिजित् नक्षत्र में तीर्थ की उत्पत्ति हुई[8]"।

इस प्रकार संक्षेप में श्री गौतमस्वामी का परिचय दिया गया है।

* * *

---

[1] 'सुधम्मे' इति पाठः। [2] भयवदा इति पाठः। [3] महाइमहावीरेण इति पाठः। [4] भुत्तं इति पाठः। [5] अरहकम्मं इति पाठः। [6] वड्ढमाण भडारएण तित्थमुप्पइदं। (धवला पु. 9 पृ. 113)। [7] वही पुस्तक, पृ. 127। [8] वासस्स पढममासे पढमे पक्खम्मि सावणे बहुले। पडिवदपुव्वदिवसे तित्थुप्पत्ती दु अभिजिम्मि।।40।।

भगवान महावीर शासन की आचार्य परम्परा

–उमेश जैन, फिरोजाबाद

भगवान महावीर का निर्वाण 526 ईसा पूर्व में हुआ। उनको मोक्ष गए अब 2530 वर्ष हो रहे हैं। जैन दर्शन में यह काल भगवान महावीर का शासन काल माना जाता है। महावीर का यह शासन काल आगत चौबीसी के प्रथम तीर्थंकर के केवलज्ञान प्राप्त होने तक चलता रहेगा।

संसार के इस भेद-विज्ञान को जिन्होंने जाना और समझा तथा समझकर उसे अपने जीवन में उतार कर परिभाषित किया, जन-जन को उसे जानने समझने की प्रेरणा दी वह तीर्थंकर कहलाए। वह स्वयं इस भवसागर को पार कर गए तथा उनके बताए मार्ग पर चलकर अनन्त जीव सिद्धपद को प्राप्त हुए और होते रहेंगे।

यहाँ विचारणीय है कि कोई दर्शन, चिंतन सभी अक्षुण्ण रह पाता है जब उसको निष्ठापूर्वक और समर्पण भाव से पालन करने वाले जन होते हैं। भगवान महावीर वर्तमान चौबीसी के अंतिम तीर्थंकर थे। उनके निर्वाण के बाद उनके दर्शन, सिद्धान्तों को अब तक जिन्होंने अक्षुण्ण रखा वह उनके श्रमण शिष्य उनकी आचार्य परम्परा कहलाई।

इन 2530 वर्षों में भगवान महावीर की आचार्य परम्परा में अनेकानेक प्रभावशाली और इतिहास प्रसिद्ध आचार्य व श्रमण जन हुए हैं, उन सबका वृत्तांन्त यहाँ लिखना संभव नहीं है। इस आलेख में ईसा पूर्व से बीसवीं सदी से प्रारंभ तक हुए उन प्रमुख आचार्यों का संक्षिप्त वर्णन करने का प्रयास किया गया है जिन्होंने अपने अपूर्व ज्ञान से महावीर के परिशोधित चिन्तन को सहेज कर जिनवाणी का शाश्वत रूप प्रदान किया तथा अनेक विपरीतताओं के बाद भी महावीर के दर्शन को जीवंत बनाए रखा।

भगवान महावीर के बाद ईसा पूर्व की आचार्य परम्परा–

श्री यति वृषभाचार्य ने भगवान महावीर के निर्वाण के बाद केवली, श्रुत, केवली, 11 अंगधारक, दश अंग के एक देशधारक तथा आचारांग धारक आचार्यों का कथन तिलोयपण्णत्ति खण्ड दो में गाथा 1488 से 1504 तक विस्तार से किया है।

भगवान महावीर के निर्वाण प्राप्त करते ही गणधर गौतम स्वामी को केवलज्ञान की प्राप्ति हुई गौतम स्वामी के मोक्ष जाते ही सुधर्मा स्वामी को केवलज्ञान प्राप्त हुआ। सुधर्मा स्वामी के निर्वाण प्राप्त होने पर जम्बू स्वामी को केवलज्ञान प्राप्त हुआ। जम्बू स्वामी इस भरत क्षेत्र के अंतिम केवली थे। उनके बाद कोई प्रत्यक्ष ज्ञानधारक केवली भरत क्षेत्र में नहीं हुआ। भगवान महावीर के बाद इन तीनों केवलियों का समय 62 साल रहा। जम्बू स्वामी के मोक्षगमन के बाद इस भरत क्षेत्र से केवलियों का अभाव हो गया। इसके बाद भी श्रुतकेवलियों के रहते जिनवाणी का ग्यारहअंग और चौदहपूर्व का ज्ञान यहाँ अक्षुण बना रहा।

श्रुतकेवली–पांच श्रुतकेवली में क्रमशः विष्णुनन्दि, नन्दि मित्र, अपराजित, गोवर्धनाचार्य, व अन्तिम भद्रबाहुस्वामी हुए। इन सभी का काल तिलोयपण्णत्ति में 100 वर्ष का बताया गया है। अंतिम श्रुतकेवली भद्रबाहुस्वामी के समय में कई ऐतिहासिक घटनाएं घटीं। उत्तर भारत की दुर्भिक्ष की आगत घटना को अपने निमित्त ज्ञान से जानकर उन्होंने समस्त श्रमण संघ को दक्षिण की ओर बिहार करने की सूचना भेजी। उनका आदेश प्राप्त कर अधिकांश श्रमण जन इनके ही साथ विहार कर दक्षिण भारत चले गये। फिर भी कितने ही श्रमण उत्तर में ही रह गए। वह दुर्भिक्ष के चलते अपनी चर्या निर्दोषरूप से पालन नहीं कर सके। उत्तर में रहे श्रमणजन न तो अपनी दीक्षा छेदन कर श्रावक (गृहस्थ) ही बने और न भगवान महावीर के परिपालित मार्ग पर दृढ़ रह सके। यहीं से भगवान महावीर की परम्परा दो भागों में विभाजित हो गई जिन्हें आगे दिगम्बर (मूल परम्परा) व श्वेताम्बर पंथी कहा जाने लगा। दूसरी घटना सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्य का दिगम्बरी दीक्षा ग्रहण कर अपने दीक्षा गुरु के साथ ही दक्षिण जाने की है। चन्द्रगुप्त मौर्य ऐसे अंतिम सम्राट् थे जिन्होंने जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहण की, उनके बाद फिर किसी शासक, नरेश या राजा ने दीक्षा नहीं ली। अंतिम श्रुतकेवली भद्रबाहु

स्वामी ने श्रवणबेलगोल में अपने शिष्य विशाखाचार्य को संघभार सौंप कर उन्हें संघ सहित बिहार की आज्ञा दी और स्वयं नवदीक्षित शिष्य चन्द्रगुप्त (मुनि प्रभासचन्द्र) को अपने पास रोककर वहीं समाधिपूर्वक मरण संकल्प किया। भद्रबाहु स्वामी के स्वर्गस्थ होने के साथ ही श्रुतकेवलियों का भी यहाँ अभाव हो गया।

ग्यारह अंग व दशपूर्वधारक—श्रुतकेवलियों के अभाव के बाद परोक्ष श्रुत का भी अभाव हो गया। सम्पूर्ण द्वादशांग के ज्ञाताओं के अभाव में तब ग्यारह अंग दश पूर्व के ज्ञाता आचार्य ही रह गए। इन आचार्यों में प्रमुख हैं विशाखाचार्य, प्रोष्ठिल, क्षत्रिय, जयसेन, सिद्धार्थ, घृतिसेन, विजय, बुद्धिल, गंगदेव व सुधर्म। समय चक्र आगे बढ़ रहा था और श्रुतधारा धीरे-धीरे क्षीण हो रही थी। इसी क्रम में भद्रबाहु स्वामी के समकालीन आचार्य दोलामस व कल्याण मुनि के बारे में इतिहास में प्रचुरता से वर्णन हैं। सिकन्दर के भारत पर आक्रमण के समय पंचनंद क्षेत्र (पंजाब) में तब अनेक दिगम्बर मुनिराज थे। सिकन्दर ने जब उनके विषय में सुना तो उसकी इच्छा उनसे मिलने के लिए हुई, उसने अपने अमात्य (मंत्री) ओनेसीक्रेट्स को उन्हें सम्मान सहित लाने भेजा। उसने आचार्य दोलमस के पास आकर सम्राट् का संदेश उन्हें बताया और कहा कि उसका सम्राट् प्रसन्न होने पर उन्हें प्रचुर सेना और रत्न भेंट करेगा अतः वह सम्राट् से चलकर भेंट करें। आचार्य ने कहा कि इस सबकी उन्हें कोई आवश्यकता नहीं है और वह किसी प्रकार की इच्छा नहीं रखते, उन्हें किसी सम्राट् या रंक से क्या लेना। अपने अमात्य से यह सब जानने पर सम्राट् सिकन्दर स्वयं उनके पास पहुँचा। सम्राट् उन श्रमणजनों से अत्यन्त प्रभावित हुआ और उनसे यूनान चलने के लिए कहा। इतिहासकार मानते हैं कि कल्याण नामक मुनि सिकन्दर के साथ यूनान गये वहाँ सिकन्दर की मृत्यु यूनान पहुँचने से पूर्व वैवीलोन में हो गई। सम्राट् की इच्छानुसार यूनानी कल्याणभूमि को आदर सहित यूनान ले गये। वहाँ उन्होंने कुछ वर्षों तक धर्म प्रचार किया तथा अन्त में समाधिमरण किया। उनको राजकीय सम्मान के साथ चितापर रख कर जलाया गया। कहते हैं कि उनके पाषाण चरण एथेंस में किसी प्रसिद्ध स्थान पर बने हैं।

ग्यारह अंग एवं चौदह पूर्व के एकदेश धारी—श्रुतज्ञान के एक देश धारक आचार्यों में क्रमशः नक्षत्र, जयपाल, पाण्डु, ध्रुवसेन, कंश का उल्लेख भी यतिवृषभाचार्य ने अपने ग्रंथ तिलोयपण्णत्ति में किया है। इनके बाद आचारांग अंगधारक, समुद्र, यशोधर, यशोबाहु, लोहार्य का उल्लेख है। इन सबकी कालसीमा गणधर गौतम स्वामी से आचार्य लोहार्य तक उन्होंने 683 वर्ष बताई है किन्तु कितने ही विद्वान् इस समय सीमा से एकमत नहीं हैं। उनका मानना है कि यह सभी आचार्य ईसा पूर्व के ही होने चाहिए। कारण अगर 683 वर्ष का समय स्वीकार किया जाये तो वह ईसा की दूसरी सादी तक होता है। इसके बाद के आचार्य धरसेन कुन्दकुन्द आदि का समय प्राप्त शिलालेखों आदि से पहली सदी का ठहरता है। इसी से यह समय सीमा पूर्व की मानी गई है इसका अनुमानित समय ईसा पूर्व की पहली सदी का उत्तरार्ध बताया जाता है। इस प्रकार भगवान महावीर की यह ईसा पूर्व की आचार्य परम्परा ग्रंथों में प्राप्त होती है।

ईसावाद पहली सदी से चौथी सदी तक

आचार्य अर्हद्बली—इनका दूसरा नाम गुप्तिगुप्त भी था यह पुण्ड्रवर्धनपुर के निवासी थे और अष्टाँग महानिमित्त के ज्ञाता संघ के निग्रह-अनुग्रह करने में समर्थ आचार्य थे। इनके संघ में उस समय बड़े विद्वान् और तपस्वी श्रमण थे। आचार्य अर्हद्बली पाँच वर्षों के अंत में सौ योजन में प्रवास करने वाले श्रमणजनों को युग प्रतिक्रमण के लिए बुलाते थे। एक बार इन श्रमणों के आने पर उन्होंने पूछा कि क्या श्रमणजन आ गए तो आने वाले श्रमणों ने कहा कि हम अपने-अपने संघ के साथ आ गए। इस उत्तर से आचार्य महाराज ने अनुमान लगाया कि यह सब अपनी-अपनी पहचान पृथक् रूप से स्थापित करना चाहते हैं। तब उन्होंने जो श्रमण जिस प्रदेश से आये थे उन्हें उसी अनुरूप किसी को नन्दी, वीर, अपराजित, देव, सेन, भद्र, गुणधर, गुप्त, सिंह, चन्द्र आदि नामों से संघ स्थापित किए। आचार्य अर्हद्बली को मुनिसंघ प्रवर्तक कहा जाता है।

आचार्य धरसेन जो उस समय गिरनार की कन्दराओं में निवास करते थे, उनके द्वारा आचार्य अर्हद्बली के दो योग्य कुलीन और विद्वान् युवा श्रमण अपने पास बुलाने का संदेश भेजा गया था। इस संदेश के मिलने पर उन्होंने पुष्पदन्त

और भूतबली नामक अपने दो योग्यतम शिष्यों को गिरनार भेजा।

आचार्य धरसेन–मुनि पुंगव आचार्य धरसेन सौराष्ट्र के गिरनार पर्वत की चन्द्रगुहा नामक गुफा में निवास करते थे। यह अष्टांग महानिमित्त के पारगामी विद्वान् थे। जब इन्होंने जाना कि उनका काल समय भी अधिक नहीं है और जो ज्ञान उन्हें परम्परा से प्राप्त है वह आगे चलकर विलुप्त होता जाएगा। यह विचार कर उन्होंने अपना ज्ञान योग्य शिष्य को देकर उनके द्वारा लिपिबद्ध कराने का सुविचार किया। उन्होंने एक ब्रह्मचारी के द्वारा दक्षिण में प्रवास कर रहे आचार्य अर्हद्‌बली के दो योग्य श्रमणों को अपने पास बुलाने के लिए संदेश भेजा। उनकी इच्छा को समझकर आचार्यश्री ने दो योग्य श्रमण पुष्पदंत और भूतबली उनके पास भेज दिए। दोनों ने आकर उनके चरणों में विनयपूर्वक नमन कर अपने आने की सूचना दी। आचार्य धरसेन ने उन दोनों को भलीभाँति परख कर यह समझ लिया कि यह दोनों युवा श्रमण उनकी कसौटी पर पूर्णरूपेण खरे उतरे हैं। तब उन्होंने उन्हें अपने समस्त ज्ञान की शिक्षा दी और उस प्राप्तज्ञान को लिपिबद्ध करने की आज्ञा दी, जिससे यह जिनवाणी आगे सदा-सदा के लिए जीवन्त रहे। जिनवाणी का यह लेखन आचार्य धरसेन के ज्ञान और उनकी इच्छा निर्देशन से हुआ, इसलिए उन्हें श्रुत-शास्त्र का प्रणेता कहा जाता है।

आचार्य पुष्पदंत और भूतबली–देश, कुल, जाति से विशुद्ध, शब्द-अर्थ के ग्रहण, धारण करने में समर्थ यह दोनों ही श्रमण श्रेष्ठ आचार्य अर्हद्‌बली के शिष्य थे। दक्षिण भारत के आंध्रप्रदेश के बेणातट नगर में युग प्रतिक्रमण के समय गिरनार से आचार्य धरसेन का संदेश प्राप्त होने पर यह अपनें गुरु की आज्ञा से गिरनार आचार्य धरसेन के पास आए। आचार्यश्री ने इनकी योग्यता से पूर्ण संतुष्ट होकर इन्हें शुभ तिथि, शुभ नक्षत्र, शुभ वार में कर्म प्रकृति प्राभृत पढ़ाना आरंभ किया। इसके बाद दोनों श्रमणजनों ने गुरु आज्ञा से अंकलेश्वर (गुजरात) में वर्षायोग किया। वर्षायोग में इनं दोनों ही आचार्यों ने रागद्वेष-मोह से रहित हो जिनवाणी का प्रचार-प्रसार किया और षट्‌खण्डागम की रचना की।

षट्‌खण्डागम–छः भागों में विभाजित यह ग्रंथ (1) जीवस्थान (2) खुद्दाबन्ध (3) बंध स्वामित्व (4) वेदना (5) कर्मणा के अतिरिक्त आचार्य भूतबलि ने महाबंध नाम के छठवें खण्ड में प्रकृतिबंध, स्थितिबंध, अनुभागबंध, प्रदेश बंधरूप चार प्रकार के बंध का विस्तार से वर्णन किया है। इस ग्रंथ के पूर्ण होने पर ज्येष्ठ शुक्ला पंचमी को इसकी भक्तिपूर्वक पूजा अर्चना की गई। उसी समय से श्रुत पंचमी पर्व प्रचलित हुआ। इस ग्रंथ की महत्ता इसलिए भी है कि इसका सीधा संबंध द्वादशांग वाणी से है।

आचार्य कुन्दकुन्द–भारतीय जैन श्रमण परम्परा में मुनि कुन्दकुन्दाचार्य का नाम भगवान महावीर तथा गौतम गणधर के बाद श्रद्धापूर्वक लिया जाता है। उन्होंने आध्यात्मिक योगशक्ति का विकास कर अध्यात्म विद्या की अविछिन्न धारा को जन्म दिया, जिसकी निष्ठा एवं अनुभूति आत्मानन्द की जनक थी। आत्म विकास की इस खोज ने जो अध्यात्म की आधारशिला है और इसी के कारण भारतीय श्रमण परम्परा का यश लोक में विश्रुत हुआ। आचार्य कुन्दकुन्द को भगवान महावीर की आचार्य परम्परा एक विशिष्ट स्थान उनकी चिन्तन धारा से प्राप्त है।

विशुद्ध रत्नत्रय के पालक, क्षमागुण से युक्त, कठोर साधक सभी प्रकार की कल्मष भावनाओं से रहित, श्रमणकुलकमलदिवाकर आचार्य कुन्दकुन्द को मंगलाचरण में भगवान महावीर तथा गौतम गणधर के बाद मंगलं कुन्दकुन्दाद्यों के साथ उनके नाम को मंगलकर्त्ता माना जाता है। आचार्यश्री के लिए आगम ग्रंथों, शिलालेखों आदि में इतना अधिक लिखा गया है जिसमें उनकी महानता का सहज अनुमान हो जाता है। चारण ऋद्धि के धारक आचार्य कुन्दकुन्द के विदेह गमन के बारे में कितने ही आचार्यों ने लिखा है यहाँ हम संक्षेप में उनकी रचनाओं की चर्चा कर रहे हैं।

पंचास्तिकाय–इस ग्रंथ में जीव, अजीव (पुद्‌गल) धर्म, अधर्म और आकाशरूप पांच अस्तिकाय द्रव्यों के कथन का यह प्रामाणिक ग्रंथ है। इस ग्रंथ की संस्कृत टीका आचार्यश्री अमृतचन्द्र तथा आचार्यश्री जयसेन स्वामी द्वारा की गई है।

प्रवचनसार–275 गाथा प्रमाण यह ग्रंथ तीन स्कंध में विभाजित है। प्रथम स्कंध की 62 गाथाओं में ज्ञान की चर्चा है। द्वितीय श्रेयतत्व स्कंध 108 गाथा प्रमाण है तथा तीसरा श्रुत स्कंध 75 गाथा प्रमाण है। यह अति महत्वपूर्ण

कृति है।

समयसार–प्राकृतभाषा की 415 गाथा प्रमाण दश अध्यायों में विभाजित यह जैनागम का सर्वाधिक महत्वपूर्ण ग्रंथ है। इस ग्रंथ में शुद्ध आत्मतत्व का प्रतिपादन किया गया है इस विषय का प्रतिपादक ग्रंथ अखिल वाङ्मय में दूसरा नहीं है। (1) पूर्वरंग (2) जीवाजीव अधिकार (3) कर्तृकर्माधिकार (4) पुण्यपापाधिकार (5) आस्रवाधिकार (6) संवराधिकार (7) निर्जराधिकार (8) बन्धाधिकार (9) मोक्षाधिकार (10) सर्वविशुद्धज्ञानाधिका।

दस अध्यायों में विभाजित इस ग्रंथ की कई टीकाएं उपलब्ध हैं।

इस समयसार ग्रंथ के गाथा सूत्रों पर आचार्य श्री अमृत चन्द्र सूरि एवं आचार्य श्री जयसेन स्वामी की संस्कृत टीका (क्रमशः आत्मख्याति एवं तात्पर्यवृत्ति) बहुत प्रसिद्ध हैं। अनेक साधु एवं विद्वानों (पं. जयचंद छाबड़ा, आचार्य ज्ञानसागर महाराज, क्षुल्लक गणेश प्रसाद वर्णी, क्षुल्लक मनोहर लालवर्णी आदि) ने इनकी 1-1 टीकाओं पर हिन्दी टीकाएं लिखी हैं। पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने समयसार की दोनों संस्कृत टीकाओं की "ज्ञानज्योति" हिन्दी टीका लिखी है जो नवविवक्षाओं को स्पष्ट करने में अतिविशिष्ट है।

नियमसार–प्राकृत भाषा के 187 गाथा प्रमाण इस ग्रंथ में सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र के साथ तत्वों, छह द्रव्य, पंचास्तिकाय के कथन के साथ पाँच महाव्रत, पंच समिति, तीनगुप्ति, प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान, आलोचना, कायोत्सर्ग, सामायिक, परमभक्ति (छह आवश्यक) की विस्तार से चर्चा है। यह अति महत्वपूर्ण और उपयोगी रचना है। आचार्यश्री पद्मप्रभमलधारी देवकृत इसकी संस्कृत टीका है तथा पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने भी इस नियमसार ग्रंथ की "स्याद्वाद चंद्रिका" संस्कृत टीका-हिन्दी टीका लिखकर बीसवीं सदी में पुनः जयसेन स्वामी का स्मरण कराया है, यह विशेष पठनीय ग्रंथ है।

अष्टपाहुड़–दर्शनपाहुड़, 37 गाथा, सूत्रपाहुड़ 27 गाथा, चारित्रपाहुड़ 45 गाथा, बोधपाहुड़ 61 गाथा, भावपाहुड़ 161, मोक्षपाहुड़, 106 गाथा, लिंगपाहुड़ 22 गाथा, शीलपाहुड़ 40 गाथा। इन सभी पाहुड़ों में उनके विषय को विस्तार से दर्शाया गया है। इनके अतिरिक्त आचार्य कुन्दकुन्द की वारसाणुपेक्खा, दशभक्ति संग्रह में क्रमशः चौबीस तीर्थंकर, सिद्ध, श्रुत, चारित्र, योगि, आचार्य, निर्वाण, नन्दीश्वर, शान्ति, समाधि तथा पंचगुरु भक्ति आदि रचनाएं भी इनकी प्रसिद्ध हैं।

आचार्य कुन्दकुन्द का कृतित्व और व्यक्तित्व इतना विशाल और श्रेष्ठ है कि उसे शब्दों में समेटना सहज कार्य नहीं है।

आचार्य उमास्वामी (गृद्धपिच्छाचार्य)–मूलसंघ की पट्टावली में आचार्य उमास्वामी नन्दिसंघ के पट्ट पर करीब 40 वर्ष आसीन रहे। उस समय गृद्धपिच्छाचार्य के समान समस्त पदार्थों को जानने वाला दूसरा कोई विद्वान् नहीं था।

श्रवणबेलगोल, नगरताल्लुक आदि के अनेक शिलालेखों में गृद्धापिच्छाचार्य उमास्वामी का उल्लेख मिलता है। बाद के अनेक आचार्यों ने उनका अपनी रचनाओं में श्रद्धापूर्वक उल्लेख किया है।

उमास्वामी की रचनाओं में उनकी एक ही रचना तत्वार्थसूत्र अपरनाम मोक्षशास्त्र एक कालजयी रचना है। जैनागम के चार अनुयोगों में से करणानुयोग, चरणानुयोग, द्रव्यानुयोग का सम्पूर्ण सार उसमें निहित है। गूढ़ अर्थों को संस्कृत के सूत्रों में लिखे गए इस ग्रंथ के महत्व का अनुमान इस पर लिखी गई टीकाओं और टीका पर पुनः की गई टीकाओं से सहज में हो जाता है। दस अध्यायों में विभाजित इस ग्रंथ में क्रमशः 33, 53, 39, 42, 42, 27, 39, 26, 47, 9 कुल 357 सूत्र हैं। इन सूत्रों के माध्यम से मोक्ष प्राप्ति का उपाय से प्रारंभ कर ज्ञान, ज्ञान के भेद, जीव के भाव, भाव के भेद, जीव की उत्पत्ति के भेद, उनके उत्पन्न होने के स्थान, अजीव तत्व का कथन, उसके भेद, अशुभ आश्रव, शुभ आश्रव, बंध, निर्जरा और अंतिम अध्याय में मोक्ष तत्व का कथन विस्तार से समाहित है।

तत्त्वार्थ सूत्र पर उपलब्ध-अनुपलब्ध टीकाएँ–गन्ध हस्ती महाभाष्य (आचार्य समन्तभद्र अनुपलब्ध) सर्वार्थसिद्धि (आचार्य पूज्यपाद) तत्त्वार्थ राजवर्तिक (आचार्य अकलंकदेव) तत्त्वार्थश्लोकवार्तिकालंकार (आचार्य विद्यानंदि) तत्वार्थवृत्तिभास्करी टीका (आचार्य भास्करनंदि) तत्त्वार्थवृत्ति (आचार्य श्रुतसागर प्रथम), तत्वार्थसुखबोधनी टीका (आचार्य अमृतचन्द्र) अर्थ

प्रकाशिका (पं. सदासुखदास) पं. माणिकचंद्र जी कौन्देय की हिन्दी टीका। इन टीकाओं से ग्रंथ का महत्व सहज समझ में आ जाता है।

आचार्य समन्तभद्र—क्षत्रिय कुल उत्पन्न राजपुत्र आचार्य समन्तभद्र का जन्म दक्षिण भारत के उरगपुर के राजपरिवार में हुआ था। उनके जन्म का नाम शान्तिवर्मा था। यह अपने समय के प्रसिद्ध तार्किक विद्वान्, कवि, वाग्मित्वादि शक्तियों के स्वामी थे। जैनधर्म में अटूट आस्था के कारण जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहण कर इन्होंने श्रमण मार्ग चुना। तेरह प्रकार के चारित्र, अट्ठाईस मूलगुणों और उत्तरगुणों का परिपालन करने वाले यह महान तपस्वी साधक थे।

कर्मोदय वश उन्हें भस्मकव्याधि का रोग हो गया, रोग की तीव्रता से बढ़ने पर उन्होंने अपने गुरु से समाधिमरण की आज्ञा चाही। निमित्तज्ञानी गुरु उनकी चर्या से परिचित थे, उन्होंने उन्हें दीक्षा छेदन कर रोग उपचार की आज्ञा दी। यह सम्पूर्ण कथन सभी जैन धर्मानुयाई भलीभांति जानते हैं। हम यहाँ उनकी रचनाओं का संक्षेप में वर्णन कर रहे हैं। उनकी तत्वार्थ सूत्र की टीका ग्रंथहस्तीमहाभाष्य अनुपलब्ध रचना है, इसके बारे में ज्ञात हुआ है कि यह आस्ट्रिया के वियाना के किसी संग्रहालय में सुरक्षित हैं। इसके अतिरिक्त देवागम (आत्ममीमांसा) स्वयंभूस्तोत्र युक्त्यनुशासन, जिनशतक तथा रत्नकरण्ड श्रावकाचार उनकी महानतम रचनाएं हैं।

आचार्य सिद्धसेन—इनकी गणना दर्शन प्रभावक आचार्यों में की जाती है। यह अपने समय के विशिष्ट विद्वान् वादी और कवि थे, तर्कशास्त्र में निपुण और उसके ज्ञाता थे। पूर्ववर्ती आचार्य विद्यानन्द ने इन्हें श्रेसठवादियों का विजेता और जल्पनिर्णय ग्रंथ का कर्ता बताया है। इनका उल्लेख आचार्य पूज्यपाद (देवनन्दी) ने अपने जैनेन्द्र व्याकरण में किया है। इन प्रमुख आचार्यों का काल ईसा की पहली सदी से चौथी सदी तक का है।

पांचवी शताब्दी से आठवीं शताब्दी के प्रमुख आचार्य—तम्बुलूराचार्य-आचार्य गुणनन्दि के बाद में यह संभवतः चौथीं शताब्दी के आचार्य थे। इन्होंने षट्खण्डागम के प्रथम पांच खण्डों में 'चूड़ामणि' नामक चौरासी हजार श्लोक प्रमाण टीका लिखी थी।

आचार्य देवनंदि (पूज्यपाद)-भारतीय जैन परम्परा में जो लब्ध प्रतिष्ठ ग्रंथकार हुए हैं। उनमें आचार्य पूज्यपाद देवनंदि का नाम विशेष तौर पर उल्लेखनीय है। आचार्य समन्तभद्र तथा आचार्य सिद्धसेन के बाद आचार्य पूज्यपाद स्वामी को ही यह महत्व प्राप्त है।

साहित्यजगत के प्रकाशमान सूर्य आचार्य देवनन्दि अपने समय के महातपस्वी श्रमण रत्न थे। इनका दीक्षानाम देवनंदि था। अपनी बुद्धि प्रखरता से यह जिनेन्द्र बुद्धि कहलाए और देवों द्वारा इनकी चरण पूजा से यह पूज्यपाद नाम से जगत प्रसिद्ध हुए। ऐसा कथन श्रवणबेलगोल के शिलालेख में अंकित है।

आचार्य पूज्यपाद की रचनाएं—इनकी प्रमुख रचनाओं में सर्वार्थसिद्धि, समाधितंत्र, इष्टोपदेश, दशभक्ति, जैनेन्द्रव्याकरण, वैद्यकशास्त्र, छन्दग्रंथ, शान्त्यष्टक, सारसंग्रह और जैनाभिषेक आदि हैं। जीवन घटनाओं में प्रमुख हैं-विदेह गमन, घोरतप के कारण नयन ज्योति का चला जाना तथा शान्त्यष्टक के निर्माण और पाठ से पुनः नयन ज्योति का आना, देवताओं के द्वारा चरणों का पूजा जाना, औषधिऋद्धि की उपलब्धि, पादस्पृष्ट जल से लोहे का स्वर्ण में बदल जाना, ऐसी अनेक घटनाओं का कथन इनके विषय में ग्रंथों से प्राप्त होता है।

आचार्य यतिवृषभ—आचार्य आर्यमंक्षु व आचार्य नागहस्ति दोनों ही समकालीन और आचार्य परम्परा से प्राप्त कसायपाहुड़ के ज्ञाता थे। आचार्य यतिवृषभ ने दोनों गुरुओं के समीप गुणधराचार्य के कसायपाहुड़ का अध्ययन किया और उनके रहस्यों को जाना। उन सूत्र गाथाओं के आधार पर आचार्य यतिवृषभ ने छः हजार चूर्णिसूत्रों की रचना की। आचार्य वीरसेन ने उन्हें वृत्तिसूत्र का कर्ता बताया है। इनकी दूसरी रचना तिलोयपण्णत्ति है।

पात्रकेसरी—अहिच्छत्र निवासी यह एक ब्राह्मण विद्वान् थे। वेदांत में निपुण वहाँ के राजा के राजकाल में सहयोगी थे। कभी-कभी कौतूहलवश पार्श्वनाथ मंदिर में भगवान की प्रशान्तमुद्रा का दर्शन करने जाते रहते थे। एक बार चारित्रभूषण नामक मुनिराज को मंदिर में देवागम स्तोत्र का पाठ करते सुना। स्तोत्र से प्रभावित हो मुनिराज से पुनः पाठ

करने को कहा और उसे सुनकर कठस्थ याद कर लिया। घर आकर उनके अर्थों को समझकर जीवादिक पदार्थों का जो स्वरूप उसमें वर्णित था वह उन्हें सत्य लगा। वस्तुस्वरूप समझने पर संसार से उदासीनता बढ़ गई और दिगम्बर मुद्रा धारण कर वीतराग श्रमण बन गए। इनकी रचनाओं में 'त्रिलक्षण कदर्शन' तथा 'जिनेन्द्र गुण संस्तुति' अपर नाम मात्र केसरी स्तोत्र है।

मानतुंगाचार्य—सातवीं सदी के यह महाप्रभावी आचार्य थे। भक्तामर स्तोत्र संस्कृत के बसंततिलका छंद में 48 काव्यों की इनकी कालजयी रचना है। प्राकृत भाषा में भयहर स्तोत्र 29 पद्यों में लिखी गई रचना है। इनको दिगम्बर व श्वेताम्बर दोनों ही सम्प्रदाओं में समान मान्यता प्राप्त है।

आचार्य अकलंक देव—मान्यखेट के राजा शुभतंग के मंत्री पुरुषोत्तम के पुत्र अंकलंक व निकलंक जैन जगत में ऐसे नाम हैं जिन्हें कभी भुलाया नहीं जा सकता। भारत भू पर उस कल में बौद्ध धर्म राजधर्म के रूप में स्थापित हो चुका था। बौद्ध संघ में रहकर इन दोनों भाईयों ने बौद्ध धर्म के अध्ययन का विचार किया और अपना धर्म छिपाकर बौद्ध मठ में जाकर विद्याध्ययन करने लगे। वहाँ घटित घटना और निकलंक का बलिदान आज भी श्रद्धा से स्मरण किया जाता है तथा सदा स्मरण किया जाता रहेगा।

अकलंक देव ने दिगम्बर दीक्षा ग्रहण कर जिनशासन की प्रभावना की। बौद्ध विद्वानों से अनेक बार उनके शास्त्रार्थ हुए। कलिंग देश के रत्नसंचयपुर के शास्त्रार्थ की चर्चा अनेक ग्रंथों में वर्णित है।

अनेक शिलालेखों तथा ग्रन्थोल्लेखों में अकलंक देव का वर्णन मिलता है। किसी विद्वान में उनसे शास्त्रार्थ की क्षमता उस काल में नहीं थी। उस काल में उनके समान वादीश्वर और वाग्मी विद्वान दूसरा नहीं था। पूर्वाचार्यों की कितनी ही रचनाओं की टीका उनके द्वारा दी गई है। उनके ग्रंथों में प्रमुख हैं। (1) तत्वार्थावार्तिक सभाष्य-यह तत्वार्थसूत्र पर वार्तिक शैली पर लिखा गया प्रथम ग्रंथ (2) अष्टशती-आचार्य समन्तभद्र कृत आप्तामीमांसा (देवागम स्तोत्र) की टीका (3) लघीयंस्त्रयसविवृत्ति-प्रमाण प्रवेश, नय प्रवेश, प्रवचन प्रवेश, तीन प्रकरणों पर लिखा गया ग्रंथ है (4) न्याय विनिश्चय सवृत्ति (5) सिद्धि विनिश्चय (6) प्रमाण संग्रह स्वोपज्ञ।

न्याय, दर्शन, सिद्धान्त, प्रमाण, नय आदि विषयों पर लिखी गई इनकी विद्वत्ता प्रमाणित होती है। इनका काल सातवीं सदी का अन्त व आठवीं सदी का प्रारंभ माना गया है।

नवमी व दशमी सदी के आचार्य

रविषेणाचार्य—पदमपुराण (रामचन्द्र-सीता कथानक) के रचनाकार आचार्य रविषेण सेनसंघ के विद्वान श्रमण थे। मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम का चरित्र इस रचना में बहुत सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किया गया है। इस ग्रंथ में 123 पर्व व श्लोक संख्या बीस हजार है।

बादीभ सिंह—इन्होंने अपनी रचना गद्य चित्तामणि में अपने गुरु पुष्पसेन की चर्चा वन्दना करते हुए लिखा है कि उन्होंने मुझ जैसे मूढ़ बुद्धि को एक श्रेष्ठ मुनि बना दिया। इनकी रचना क्षत्र चूड़ामणि उच्चकोटि का नीतिकाव्य है। स्याद्वाद सिद्धि और गद्य चिन्तामणि इनकी अन्य दो कृतियाँ और हैं।

आचार्य वीरसेन—आर्यनदी के शिष्य आचार्य वीरसेन सिद्धान्त के तलस्पर्शी विद्वान पाण्डित्य के धनी, गणित, ज्योतिष, न्याय, व्याकरण और प्रमाण शास्त्रों में निपुण सिद्धान्त एवं छन्द के अभूतपूर्व ज्ञाता थे। अनेक आचार्यों ने उनकी प्रतिमा की प्रशस्ति लिखी थी। षट्खण्डागम पर लिखी उनकी टीकाओं धवला, जयधवला उनके कृतित्व और ज्ञान का प्रमाण हैं। इनका काल नवमीं सदी का माना जाता है।

आचार्य जयसेन—सेन संघ के शास्त्रज्ञ आचार्य जयसेन, हरिवंशपुराण के कर्ता आचार्य जिनसेन के गुरु थे। इनका काल भी नवमीं सदी है। इनके शिष्य अमितसेन, कीर्तिषेण दोनों ही प्रभावी श्रमण आचार्य थे। उनका उल्लेख आचार्य जिनसेन ने हरिवंश पुराण में किया है।

आचार्य जिनसेन—हरिवंशपुराण के कर्ता आचार्य जिनसेन सेन संघ (अपर नाम पुन्नाट संघ) के महाप्रभावी आचार्य

थे। अपनी रचना हरिवंश पुराण में हरिवंश की एक शाखा यादव कुल और उसमें जन्मे दो शलाका पुरुषों का चरित्र वर्णित है। 22वें तीर्थंकर भगवान नेमिनाथ तथा नारायण श्री कृष्ण का उन्होंने सुन्दर कथन किया है। इन्होंने अपनी रचना में पूर्ववर्ती अनेक आचार्यों और विद्वानों को स्मरण किया है। इनमें प्रमुख हैं-आचार्य समन्तभद्र, सिद्धसेन, देवनन्दि, वज्रसूरि, महासेन, रविषेण, जयसिंह नन्दि, शान्तिषेण, कुमारसेन, जयसेन आदि प्रमुख हैं। इसी ग्रंथ के अंतिम 66वें सर्ग में, तिलोयपण्णत्ति, धवला जयधवला की श्रुतावतार परम्परा भी वर्णित है।

जिनसेनाचार्य (द्वितीय)—धवला जयधवला के कृतिकार आचार्य वीरसेन के शिष्य आचार्य जिनसेन विशाल बुद्धि के धारक कवि, विद्वान और वाग्मी थे। आचार्य गुणभद्र नें इनके प्रति लिखा है कि **जिस प्रकार हिमालय से गंगा, सर्वज्ञ के श्रीमुख से दिव्यध्वनि और पूर्व दिशा से भास्कर उदयं होता है, उसी प्रकार वीरसेन से जिनसेन उदय को प्राप्त हुए।**

इनकी रचनाएँ 'पार्श्वभ्युदयकाव्य' अद्वितीय समस्यापूर्तिक काव्य है। 63 शलाका पुरुषों पर लिखित 'आदिपुराण' जिसे महापुराण के आधार पर लिखना प्रारंभ किया था वह इनके स्वर्गवास के कारण अधूरा रह गया, जिसे इनके शिष्य गुणभद्र स्वामी ने पूर्ण किया। आदिपुराण उच्चकोटि का संस्कृत महाकाव्य है। इनके गुरु द्वारा कषाय प्राभृत के प्रथम स्कंध की जयधवला टीका जो बीस हजार श्लोक प्रमाण थी उसके शेष भाग पर चालीस हजार श्लोक प्रमाण टीका लिखकर उसे पूर्ण किया। आचार्य जिनसेन का काल नवमी सदी का माना जाता है।

आचार्य गुणभद्र स्वामी—आचार्य जिनसेन के गुरुभाई दशरथ गुरु के शिष्य तथा सिद्धान्त शास्त्र के पारगामी विद्वान थे। आचार्य जिनसेन के स्वर्गवास के बाद उनके अपूर्ण आदिपुराण को 1620 श्लोकों की रचना कर उसे पूर्ण किया। उत्तरपुराण नामक इस ग्रंथ में भगवान अजितनाथ से लेकर भगवान महावीर तक 23 तीर्थंकरों, 11 चक्रवती, नव नारायण, नव प्रतिनारायण, नव बलभद्र सहित जीवधंर स्वामी आदि विशिष्ट महापुरुषों के कथानक दिए हैं।

द्वितीय रचना आत्मानुशासन में 266 श्लोकों में आत्मा के अनुशासन का सुन्दर विवेचन है। जिनदत्त चारित्र भी इनकी ही रचना बताई जाती है।

उग्रादित्याचार्य—श्री नन्दीमुनि के शिष्य उग्रादित्याचार्य महानतम् विद्वान् मुनिराज थे। इनकी 25 अधिकार में पूर्ण पाँच हजार श्लोक प्रमाण वैद्यक कृति 'कल्याणकारक' वैद्यक की महानतम कृति है।

महावीराचार्य—गणितसार के रचियता महावीराचार्य विद्वानों में प्रथम गणितज्ञ थे। गणित के लिए उनका कथन है कि लोक में जितने भी लौकिक, वैदिक और सामयिक कार्य हैं उन सबमें गणित संख्यान का उपयोग है, कामशास्त्र, अर्थशास्त्र, गन्धर्वशास्त्र, नाट्यशास्त्र, पाकशास्त्र, आयुर्वेदिकशास्त्र, वास्तुविद्या छंद, तर्क व्याकरण, आदि सभी में गणित उपयोगी है। इस ग्रंथ में एक, दश, शत सहस्र से लेकर क्षोभ, महाक्षोभ तक की संख्या का उल्लेख है। अंकों के लिए शब्दों का प्रयोग किया है जैसे तीन के लिए रतन, 6 के लिए द्रव्य, सात के लिए तत्व।

लघुत्तम समापवर्तक के विषय में महावीराचार्य विद्वानों में प्रथम विद्वान थे। रेखा गणित, बीज गणित और पाटी गणित की दृष्टि से यह ग्रंथ महत्वपूर्ण है। डॉ. अवधेश नारायण सिंह ने इसे ब्रह्मगुप्त, श्रीधराचार्य, भास्कर व अन्य हिन्दू गणितज्ञों के ग्रंथों से बहुत सी बातों में उनसे पूर्णतः आगे बताया गया है।

आचार्य अभयनन्दि—व्याकरण शास्त्र के निष्णात विद्वान जिनेन्द्र व्याकरण की टीका 'महावृत्ति' के रचनाकार हैं। यह जिनेन्द्र व्याकरण में ही नहीं पाणिनीय व्याकरण और पंतजलि महाभाष्य में भी अप्रत्याहत गति रखते थे।

आचार्य अनन्तवीर्य—सिद्धि विनिश्चय टीका के कर्ता आचार्य अनन्तवीर्य अकलंक वाङ्मय के महानतम विद्वान थे।

आचार्य विद्यानन्द—अनेकों ग्रंथों के टीकाकार व स्वग्रन्थों के रचनाकार आचार्य विद्यानंद नवमी सदी के महानतम आचार्य थे। आचार्य उमास्वामी कृत 'तत्वार्थसूत्र' आचार्य समंतभद्र कृत 'देवागम' तथा युक्त्यानुशासन पर इनकी टीकाएं तत्वार्थ श्लोकवार्तिक 'अष्टसहस्री' व युक्त्यानुशासनलंकार के बाद इनकी मौलिक रचनाएँ 'विद्यानन्दमहोदय' (अनुपलब्ध) 'आप्तपरीक्षा' प्रमाण परीक्षा' 'पत्र परीक्षा' सत्य शासन परीक्षा, श्री पार्श्वनाथ स्तोत्र हैं।

अमितगति (प्रथम)—दशवीं सदी के अंतिम चरण के आचार्यों में योगसार के रचनाकार आचार्य अमितगति अद्वितीय

विद्वान श्रमणराज थे। जीव, अजीव, आस्रव, बंध, संवर, मोक्ष के साथ-साथ चारित्र और चूलिकाधार के विवेचन के साथ इनकी रचना योगसार एक बोधगम्य ग्रंथ है।

आचार्य अमृतचन्द्र—भगवान महावीर की आचार्य परम्परा में दशवीं सदी के उत्तरार्ध के आचार्यों में आचार्य अमृतचन्द्र का नाम सूर्य किरणों के समान सदैव प्रकाशवान रहेगा। आचार्य कुन्दकुन्द की तीन महानतम कृतियों 'समयसार' 'प्रवचनसार' व पंचास्तिकाय के टीकाकार आचार्य अमृतचन्द्र 'पुरुषार्थ सिद्धयुपाय' (जिनवचन रहस्यकोष) व तत्त्वार्थसार के रचनाकार हैं।

आचार्य रामदेव—नागसेन के शिष्य तथा तत्वानुशासन के रचयिता आचार्य रामदेव अध्यात्म के ज्ञाता विद्वान थे। 258 संस्कृत पद्यों में लिखित ग्रंथ भाषा और विषय में अति महत्वपूर्ण ग्रंथ है।

इन्द्रनन्दी—दीक्षा गुरु बप्पनन्दी, मंचशास्त्र गुरु गुणनन्दी और सिद्धान्त शास्त्र के गुरु अभयनन्दी के शिष्य इन्द्रनन्दी 'ज्वालिनीकल्प' मंत्र शास्त्र के रचनाकार हैं। इनका समय दसवीं सदी का अंतिम चरण या ग्यारहवीं सदी के पूर्वार्ध का अनुमानित है।

आचार्य महासेन—प्रद्युम्न चरित्र के रचयिता तथा सिंधुराज के महामात्य पर्पट द्वारा पूजित आचार्य महासेन आचार्य सेनसूरि के शिष्य थे। सिद्धान्तज्ञ, वादी, वाग्मी और कवि महासेन की यह रचना एक सुन्दर काव्य ग्रंथ है।

आचार्य सोमदेव—लोक प्रसिद्ध देवसंघ की परम्परा में नेमिदेवाचार्य के शिष्य आचार्य सोमदेव एक महान नीतिज्ञ आचार्य थे। राजा यशोधर के चरित्र पर लिखा महाकाव्य 'यशस्तिकाचम्पू' श्रावकधर्म परिपालन की एक महान रचना है। 'नीतिवाक्यामृत' राजनीति पर लिखा एक महत्वपूर्ण ग्रंथ है। यह संस्कृत साहित्य का एक अनुपम रत्न है। इनकी तीसरी रचना 'अध्यात्मतरंगिणी' या ध्यानविधि है।

अनन्तकीर्ति—लघु सर्वज्ञसिद्धि तथा वृहत्सर्वज्ञ सिद्धि ग्रन्थों के रचनाकार आचार्य अनन्तकीर्ति की गुरु परम्परा का उल्लेख प्राप्त नहीं है किन्तु बाद में आचार्यों ने उनका श्रद्धा से उल्लेख किया है।

11वीं व 12वीं शताब्दी के आचार्य

आचार्य वादिराज—पार्श्वनाथ चरित, यशोधर चरित, एकीभाव स्तोत्र, न्याय विनिश्चय विवरण, प्रमाण निर्णय, अध्यात्माष्टक, त्रैलोक्यदीपिका के रचनाकार महानवादी, विजेता और कवि थे। चौलुक्य नरेश जयसिंह देव पूजित महानतम आचार्य थे।

आचार्य वीरनन्दि सिद्धान्त चक्रवर्ती—चन्द्रप्रभचरित के रचनाकार आचार्य वीरनन्दि आचार्य अभयनन्दि के प्रथम शिष्य थे। 18 सर्गों में विभक्त यह रचना 1691 श्लोक में पूर्ण हुई है।

आचार्य नेमीचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती—गंगवंशीय राजा राचमल्ल के प्रधानमंत्री और सेनापति चामुण्डराय के गुरु विश्व प्रसिद्ध गोम्मटेश्वर (भगवान बाहुबली) की मूर्ति निर्माण के प्रेरणाश्रोत आचार्य नेमीचन्द महान सिद्धान्तिक विषय के ज्ञाता आचार्य थे। इनकी विद्वता उनकी कृतियों गोम्मटसार (जीवकाण्ड और कर्मकाण्ड) लब्धिसार, क्षपणासार व त्रिलोकसार से परिलक्षित होती है। उनके गोम्मटसार ग्रंथ पर 6 टीकाएं बाद में आचार्यों और विद्वानों ने की हैं।

आचार्य पद्मनन्दि—2427 गाथा प्रमाण जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति के रचनाकार आचार्य पद्मनन्दि बलनंदि के शिष्य थे। यह ग्रंथ लौकिक, अलौकिक, गणित, क्षेत्रादि, पैमाइश और प्रमाणादि कथनों के साथ जम्बूद्वीप के सभी क्षेत्र, पर्वत, नदियों और समुद्रों का वर्णन करता है। धर्म, अधर्म के विवेक को निर्देशन करने वाली इनकी दूसरी रचना धम्म रसायण है।

मुनि श्रीचन्द्र—आचार्य शिवकोटि की भगवती आराधना, महाकवि पुष्पदन्त के उत्तरपुराण पर टिप्पण, आचार्य रविषेण के पदम चारित को टीका एवं पुराणसार के रचनाकार मुनि श्रीचन्द्र 11वीं सदी के प्रारंभ काल के श्रमण थे। इनका अधिकांश समय धारा नगरी में व्यतीत हुआ, वही इनकी यह जिनवाणी आराधनापूर्ण हुई।

माणिक्यनन्दी—जैन न्याय के आद्यसूत्र ग्रंथ 'परीक्षा-मुख' के रचनाकार आचार्य माणिक्यनन्दी महाराज भोज के

समकालीन एवं जैन न्याय के प्रकाण्ड विद्वान आचार्य थे। इस रचना से पूर्व सांख्य आदिक अन्य दार्शनिकों की रचनाएं तो थीं किन्तु जैनदर्शन में न्याय विषयक कोई रचना नहीं थी। इस ग्रंथ के महत्व का अनुमान बाद में हुई इसकी टीका 'प्रमेय कमल मार्तण्ड' तथा 'प्रमेय रत्नमाला' से सहज हो जाता है। आचार्य माणिक्यनन्दी के शिष्य 'नयनन्दी' सुंदसण चरिउ के कर्ता थे।

आचार्य प्रभाचन्द्र—आचार्य माणिक्यनन्दी के शिष्य आचार्य प्रभाचन्द्र दर्शन एवं सिद्धान्त के पारगंत विद्वान् थे। धारा नगरी के अधिपति सम्राट् भोज के द्वारा बहुमान प्राप्त आचार्य प्रभाचन्द्र ने अनेक ग्रंथों की टीकाएँ की और कई दार्शनिक ग्रंथों की रचना की। इनकी रचनाओं में प्रमुख हैं, तत्वार्थ वृत्ति (सर्वार्थसिद्धि के विषय पदों का टिप्पण), प्रवचनसरोजभास्कर (प्रवचनसार टीका), प्रमेय कमल मार्तण्ड (परीक्षा मुख व्याख्या), न्याय कुमुदचन्द (लघीयस्त्रय व्याख्या), पंचास्तिकाय प्रदीप (पंचास्तिकाय टीका), शब्दाम्भोज भास्कर, महापुराण टिप्पण, गद्यकथा कोश (आराधना कथा प्रबंध), क्रिया कलाप टीका, रत्नकरण्ड श्रावकाचार टीका तथा समाधितंत्र टीका, दर्शन तथा सिद्धान्त ग्रंथों की यह श्रृंखला उनके जैन दर्शन के तलस्पर्शी ज्ञान का प्रतीक है। इनका समय काल 11वीं सदी माना जाता है।

आचार्य अमितगति (द्वितीय)—माथुर संघ आचार्य नेमिषेण के प्रशिष्य और माधवसेन के शिष्य अमितगति द्वितीय 11वीं सदी के विद्वान् एवं महानतम आचार्य थे। इनकी रचनाओं से इनके ज्ञान का अनुमान सहज हो जाता है। सुभाषितरत्न सन्दोह, धर्म परीक्षा, उपासकाचार (अमितगति श्रावकाचार) पंच संग्रह, आराधना, तत्व भावना तथा भावना द्वात्रिंशतिका इनकी रचनाएँ हैं।

आचार्य मल्लिषेण—यह मंत्र-तंत्र के महान विद्वान् थे, धारवाड़ जिले की गदक तहसील के मूलगुन्द नगर के अनेक जिनालयों में इन्होंने अनेक ग्रंथों की रचना की, ऐसा उल्लेख वहाँ के शिलालेखों से प्राप्त होता है। इनकी प्रमुख रचनाएँ हैं-महापुराण (इसकी कनड़ी प्रति कोल्हापुर भट्टारक मठ में है) नागकुमार काव्य, भैरव पद्मावती कल्प, सरस्वती कल्प (दोनों ही संस्कृत टीकाओं के साथ प्रकाशित) ज्वालामालिनीकल्प, स्व. सेठ माणिकचन्द्र जी के ग्रंथ भण्डार में उपलब्ध, कामचण्डाली कल्प, जैन सरस्वती भवन व्यावर में उपलब्ध, सज्जन चित्त वल्लभ हिन्दी पद्यानुवाद व हिन्दी टीका सहित प्रकाशित है।

आचार्य शुभचन्द्र—ज्ञानार्णव के रचनाकार आचार्य शुभचन्द्र ने उक्त ग्रंथ में अपनी गुरु परम्परा तो नहीं दी है किन्तु आचार्य समन्तभद्र, पूज्यपाद, अकलंक देव, जिनसेनाचार्य का स्मरण श्रद्धा से किया है। ज्ञानार्णव ग्रंथ में बारह भावना, पंच महाव्रत ध्यान आदि का विस्तृत कथन है।

आचार्य पदमनन्दी—अपनी रचनाओं में अपने को वीरनन्दी का शिष्य बताते हुए आचार्य पदमनन्दी ने अपने गुरु का गुणगान कई स्थानों पर किया है। आचार्य वीरनन्दी व आचार्य मेघचन्द्र के शिष्य और आचार्य प्रभाचन्द्र के गुरुभाई बताये गये हैं। आचार्य वीरनन्दी सैद्धान्तिक विद्वान् थे उन्होंने आचारसार व उसकी टीकाएं बनाई थीं। वीरनन्दी के शिष्य आचार्य पद्मनन्दी की 26 रचनाओं की विशाल श्रृंखला मिलती है।

धर्मोपदेशामृत, दानोपदेश, अनित्यपंचाशत, एकत्त्व सप्तति, यतिभावनाष्टक उपासक संस्कार, देशव्रतोद्योतन, सिद्धस्तुति, आलोचना, सद्बोधचन्द्रोदय, निश्चय-पंचाशत, ब्रह्मचर्य रक्षावर्ति, ऋषभस्तोत्र, जिनदर्शन स्तवन, श्रुतदेवता स्तुति, स्वयंभू स्तुति, सुप्रभाताष्टक शान्तिदेव स्तोत्र, जिन पूजाष्टक, करुणाष्टक, क्रियाकाण्ड चूलिका, एकत्व भावना दशक, परमार्थ विंशति, शरीराष्टक, रनानाष्टक, ब्रम्हचर्याष्टक के रचनाकार आचार्य पद्मनन्दी का समय काल 12वीं सदी का है।

आचार्य पद्मप्रभमलधारी देवी—कुन्दकुन्द के नियमसार के टीकाकार तात्पर्यवृत्ति के रचयिता आचार्य पद्मप्रभ मलधारी आचार्य वीरनन्दी के शिष्य थे। इन्होंने अपनी तात्पर्यवृत्ति टीका में अनेक आचार्यों को श्रद्धापूर्वक स्मरण किया है।

माइल्लधवल—द्रव्य स्वभाव नयचक्र के रचयिता माइल्लधवल आचार्य देवसेन के शिष्य थे। इनका काल बारहवीं सदी का अंतिम समय बताया गया है।

आचार्य कुमुदचन्द्र—कल्याणमंदिर स्तोत्र के रचयिता आचार्य कुमुदचन्द्र का श्वेताम्बर मुनि वादिसूरिदेव से गुजरात के शासक जयसिंह सिद्धराज की सभा में वि.सं. 1181 में वाद हुआ था। यह बारहवीं सदी के आचार्य थे।

आचार्य श्रीचन्द्र—कथा कोष तथा रत्नकरण्ड श्रावकाचार के रचनाकार आचार्य श्रीचन्द आचार्य वीरचन्द्र के शिष्य थे। इनका काल भी बारहवीं सदी बताया है।

आचार्य वसुनन्दी सैद्धान्तिक—श्रीनन्दी के शिष्य नयननन्दी के शिष्य नेमिचन्द तथा नेमिचन्द के शिष्य वसुनन्दी अपने समय के विख्यात मुनिराज थे। वसुनन्दी श्रावकाचार, उपासकाध्ययन, आप्तमीमांसावृत्ति, जिनशतक टीका, मूलाचार वृत्ति और प्रतिष्ठाचार संग्रह इनकी रचनाएं हैं। सागार धर्मामृत में पं. आशाधर जी ने इनका आदरपूर्वक स्मरण किया हैं।

आचार्य अनन्तवीर्य—परीक्षामुख की टीका 'परिक्षामुख पंजिका' न्यायशास्त्र की सहज, सरल और ग्राह्य रचना है, उन्होंने आचार्य प्रभाचन्द्र की रचना को अपनी रचना में उदार चन्द्रिका की उपमा दी है और अपनी रचना को खद्योत (जुगनू) के समान बताया है।

आचार्य नरेन्द्रसेन—आचार्य उमास्वामी के तत्त्वार्थसूत्र की प्रगटीकरण टीका सिद्धान्त सार संग्रह व प्रतिष्ठा प्रदीप के रचनाकार आचार्य नरेन्द्रसेन आचार्य गुणसेन के शिष्य थे।

आचार्य गिरिकीर्ति—गोम्मटसार पंजिका के रचनाकार आचार्य गिरिकीर्ति आचार्य चन्द्रकीर्ति के शिष्य थे। प्रस्तुत ग्रंथ में गोम्मटसार के सैद्धान्तिक विषय पर सुन्दर व्याख्या की गई है।

तेरहवीं और चौदहवीं शताब्दी के आचार्य—सुलोचना चरित्र के रचनाकार आचार्य देवसेनगणी आचार्य विमलसेन के शिष्य, समयसार, पंचास्तिकाय और प्रवचनसार पर तात्पर्यवृत्ति के रचनाकार आचार्य जयसेन, आचार्य सोमसेन के शिष्य थे।

'क्षपणसार' के रचनाकार मुनि माधवचन्द्र त्रैविद्य 'शब्दचन्द्रिका' के कर्ता मुनिसोमदेव, सुन्दर काव्य शैली में लिखित 'चंदप्पह चरित' के रचनाकार मुनि यशकीर्ति तेरहवीं सदी के श्रमण रत्न थे।

विश्वतत्वप्रकाश, प्रमाप्रमेय, कातन्त्ररूपमाला सहित सात अनुपलब्ध कृतियों के रचनाकार भावसेन त्रैविद्यतर्क दर्शन, न्याय, व्याकरण के अपने समय के मान्य विद्वान आचार्य थे। इनका समय काल चौदहवीं सदी का बताया गया है।

'सुकुमाल चरित्र' के रचनाकार मुनि पूर्णभद्र मुनि गुणभद्र के शिष्य थे। गोम्मटसार जीवकांड की मन्द प्रबोधनी टीका के रचयिता अभयचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती 13वीं व 14वीं सदी के मुनिराज थे।

'श्रृंगार मंजरी' के कर्ता सेनगण के आचार्य अजितसेन, 'भाव त्रिभंगी', आस्रव त्रिभंगी तथा परमागमसार के रचनाकार श्रुतमुनि चौदहवीं सदी के आचार्य हैं। इस काल में अनेक प्रभावी भट्टारक भी हुए हैं।

पंद्रहवी सदी से अठारहवीं सदी तक जैन इतिहास में अनेकानेक विद्वान् भट्टारकों की चर्चा तो प्राप्त होती है किन्तु जैनाचार्यों का कथन प्राप्त नहीं होता, यह भगवान महावीर की आचार्य परम्परा का ऐसा काल खण्ड है जिसमें दिगम्बर श्रमण परम्परा मात्र दिगम्बर रूप रह गई थी। श्रमणों में अनेक प्रकार का शिथिलाचार व्याप्त हो चुका था। इस मृतपाय श्रमण धर्म को तब बीसवीं सदी के प्रारंभ में आकर नव जीवन प्राप्त हुआ जब उसे इस सदी के महान तपस्वी, निर्दोष चर्या के पालक के रूप में आचार्य शान्तिसागर जैसा श्रमण रत्न मिला।

चारित्र चक्रवर्ती आचर्य शान्तिसागर जी महाराज—बीसवीं सदी के पूर्वार्ध तक लोगों में यह धारण अपना स्थान बना चुकी थी कि अब इस विषम काल में दिगम्बर मुनि हो ही नहीं सकते। दिगम्बर श्रमण तो चौथे काल में ही होते हैं। वह समय कुछ इसी प्रकार था। दिगम्बर श्रमण बनने के भाव तो मन में आते थे भव्यजन दीक्षा भी स्वयं या उस समय के वर्तमान मुनिराज से लेकर उस मार्ग पर चल पड़ते थे। समाज में व्याप्त अज्ञानता, स्वयं दीक्षार्थी की सोच उसे निर्दोष चर्या के परिपालन में बाधक बन जाती थी उस विपरीत काल में दिगम्बर श्रमणाकाश में एक नक्षत्र का उदय हुआ।

कर्नाटक प्रान्त के बेलगांव जिले के चिकोडी तहसील के भोजग्राम के पाटिल श्री भीमगोड़ा की धर्मनिष्ठ भार्या

सत्यवती ने अपने मातृगृह येलगुल में अषाढ़ कृष्णा 6 वि.स.1929 सन् 1862 को बुधवार की रात्रि में एक बालक को जन्म दिया। इस महाभाग बालक का नाम सातगौंडा रखा गया। परिवार में सातगौंडा से बड़े आदिगौंडा, देवगौंडा व उनसे छोटे कुमगौंडा व एक कन्या कृष्णा बाई को लेकर पाँच भाई-बहिन थे। उस समय शायद किसी को यह अनुमान भी नहीं रहा होगा कि भीमगौंडा के घर में किसी बालक का नहीं अपितु इस युग के श्रमण इतिहास का जन्म हुआ है।

भीमगौंडा और उनकी पत्नी धर्मनिष्ठ सद्‌गृहस्थ थे। उनकी जीवन चर्या एक परिशुद्ध श्रावक की चर्या थी। जीवन के अंतिम 16 वर्ष उन्होंने एक समय भोजन करके व पूर्ण ब्रह्मचर्य के साथ व्यतीत कर घर में ही समाधिपूर्वक मरण किया था।

सातगौंडा का विवाह उस समय की प्रथा के अनुसार 9 वर्ष की अल्पायु में कर दिया गया था। उन्होंने पत्नी का मुंह भी नहीं देखा था कि शादी के 6 माह ही इनकी पत्नी का निधन हो गया। इसके बाद उन्होंने अपने दुबारा विवाह के लिए दृढ़तापूर्वक इंकार कर दिया। माता-पिता की मृत्यु तक सातगौंडा ने घर में रहकर व्रतीजीवन यापन किया। शास्त्र स्वाध्याय मुनिजनों की परिचर्या ही उनके जीवन का ध्येय रहा। पिता के स्वर्गवास के बाद उन्हें घर अब नहीं सुहाता था। जेठ सुदी तेरस वि.स. 1972 सन् 1915 में श्री देवेन्द्रकीर्ति मुनिराज (देवप्पा स्वामी) से क्षुल्लक दीक्षाग्रहण कर उन्होंने गृहत्याग दिया। क्षुल्लक दीक्षा के समय उन्होंने अपने मन में संकल्प ले लिया कि वह अपनी हर चर्या आगमानुकूल ही पूर्ण करेंगे काल दोष और अज्ञानता वश आए श्रमण परम्परा में दोषों को वह अपने अन्दर नहीं आने देंगे। पंडित प्रवर श्री सुमेरचंद जी दिवाकर ने आचार्य श्री शान्तिसागर जी का जीवन चरित्र 'चारित्र चक्रवर्ती' में बहुत विस्तार और प्रामाणिकता से लिखा है।

क्षुल्लक अवस्था का प्रथम चातुर्मास कोगनोली में किया। उस समय उन्हें आहार आदि के लिए निर्दोष चर्या परिपालन के चलते बहुत व्यवधान झेलने पड़े। गिरनार यात्रा से वापस आकर गिरनार क्षेत्र में भगवान नेमिनाथ की साक्षी बनाकर ऐलक पद ग्रहण करने के बाद का प्रथम चातुर्मास नसलापुर में किया और वहीं वाहन त्याग का नियम लेकर पदभ्रमण का नियम लिया। फाल्गुन शुक्ला 14 वि.सं.1976 सन् 1920 यरनाल पंचकल्याणक के समय क्षुल्लक दीक्षा प्रदाता मुनि श्री देवेन्द्रकीर्ति से भव तारणी जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहण कर वह दिगम्बर श्रमण बने।

मुनिदीक्षा के बाद उनकी तपश्चर्या का यश पूरे देश में फैलने लगा समडोली में क्षुल्लक वीरसागर जी व नेमिसागर जी को दीक्षा प्रदान करने के अवसर पर वि.सं. 1981 सन् 1972 आश्विन शुक्ला 11 को चतुर्विध संघ ने उन्हें आचार्यपद से विभूषित किया। आचार्य पदारोहण के बाद पूज्य आचार्यश्री के द्वारा श्रमण परम्परा, आगम रक्षा और समाज के सुसंस्कारों के लिए जो कार्य किए गए वह आज इतिहास की धरोहर बन चुके हैं। कई सदियों तक उत्तर भारत में दिगम्बर मुनि मार्ग बंद रहा। पूज्य आचार्य शांतिसागर जी के संघ को संघपति सेठ पूनमनचंद घासीलाल जवेरी दक्षिण से तीर्थराज सम्मेदशिखरजी की यात्रा को लेकर गए तब सदियों बाद किसी दिगम्बर श्रमण संघ ने दक्षिण से बाहर निकलकर देश के दूसरे भागों में प्रवेश किया। श्री सम्मेदशिखर में पूज्य आचार्यश्री के सानिध्य में हुए पंचकल्याणक महोत्सव व उसमें एकत्रित देश के सभी भागों में पहुँचा जन समूह एक ऐतिहासिक घटना है। पं. नन्दनलाल जी शास्त्री (पं. मक्खनलाल जी मुरेना के भ्राता) जो बाद में आचार्य महाराज से दीक्षा लेकर आचार्य सुधर्म सागर बने। ये संघ में रहकर सब मुनिजनों को पढ़ाते थे, उनके प्रयासों के चलते सम्मेदशिखर से लौटकर संघ ने मध्यप्रदेश में कटनी वर्षायोग के बाद उत्तरभारत की ओर विहार किया, उत्तरप्रदेश के अनेक नगर-ग्रामों में भ्रमण के बाद संघ ने सिद्धक्षेत्र मथुरा में चातुर्मास किया। यहाँ से देश की राजधानी देहली व राजस्थान के वर्षायोग पूज्य आचार्यश्री और उनके संघ के द्वारा उत्तर भारत में विहार और भ्रमण लुप्त श्रमण परम्परा को पुनः जीवित कराने का निमित्त बने। यहाँ से बिहार कर जब संघ सन् 1937 में गजपंथा पंचकल्याणक महोत्सव में पहुँचा तब तक पूज्य आचार्यश्री का भारतवर्ष के अधिकांश भाग में भ्रमणपूर्ण हो चुका था। आचार्यश्री की सम्पूर्ण चर्या आगमानुकूल थी। उनके उन्नत चारित्र का यश दिग्‌दिगन्त में व्याप्त हो चुका था अतः गजपंथा में उन्हें चतुर्विध संघ ने 'चारित्र चक्रवर्ती' पद प्रदान कर स्वयं इस पद को सम्मानित किया।

आचार्य शांतिसागर जी का कृतित्व एवं लोकोपकार–

आचार्य शांतिसागर जी ने जिस समय दीक्षा ग्रहण की वह ऐसा काल था जब भारत में सदियों से श्रमण परम्परा विलुप्त हो चुकी थी। दक्षिण में वह आंशिक रूप से श्रमणाभास रूप में ही देखने को मिलती थी। उन दिनों दिगम्बर श्रमण नगर-ग्राम में अपनी यथाजात मुद्रा में प्रवेश नहीं कर पाते थे। उन्हें आहार के लिए ग्राम में जाने पर एक अधोवस्त्र कमर में लपेट कर जाना पड़ता था। आहार भी दिगम्बर श्रमणचर्या के अनुरूप नहीं मिलता था। ग्राम का उपाध्याय (दि. जैन मंदिर का पुजारी) किसी श्रावक को आहार व्यवस्था करने की कहकर उसके यहाँ साधु की आहार चर्या के समय उनके आगे चल कर निश्चित श्रावक के दरवाजे पर जाकर रुक जाता था। साधु के लिए यह संकेत था कि उसका आहार इसी घर में होना है। यह सब शास्त्र विपरीत चलन पूज्य शांतिसागर जी को स्वीकार नहीं था। उन्होंने अपनी क्षुल्लक दीक्षा के समय ही शास्त्रानुकूल चर्या का संकल्प व्यक्त कर आगमानुकूल चर्या की घोषणा की। उन्हें आहार आदि में बाधा आयेगी। आचार्य शांतिसागर जी को चेतना एवं चर्या के विलुप्त पथ को पुनः संचालित करना था अतः वह अपने संकल्प पर दृढ़ रहे, बाधाएँ आती रहीं मगर वह उन्हें नहीं झुका सकीं। दिगम्बर श्रमण भयवश अपनी राह परिवर्तित करते हैं, उन्होंने दक्षिण से निकलकर निर्भीकता से संपूर्ण देश में पद विहार कर इस सत्य को प्रमाणित किया।

जिनवाणी के प्रति वह कितने समर्पित थे यह जिनवाणी के संरक्षण और उसके संवर्धन के उनके कार्य से लोक विदित है। मूडबद्री के शास्त्र भण्डार में धवला, जयधवला के ताडपत्र पर लिखे ग्रंथों को ताम्रपत्र पर खुदवाकर उन्हें चिरता प्रदान कराई। देश के अनेक शास्त्र भण्डारों के प्राचीन ग्रंथों को सुरक्षित करने की चेतना जन-जन तक प्रदान की।

अकलूज (महाराष्ट्र) में राज्य सरकार के शासनादेश के अन्तर्गत वहाँ के जिलाधीश ने जब यहाँ के जैन मंदिर में ताला तुड़वाकर हरिजनों को प्रवेश करा दिया तब पूरे देश का जैन समाज उद्वेलित हो उठा। यह वाद लम्बे समय तक बम्बई हाईकोर्ट में चला, उस पूरी समयावधि में आचार्यश्री ने अन्न का त्याग कर जन-जन को धर्मरक्षा की प्रेरणा प्रदान की।

आचार्य शांतिसागर जी की निर्दोष आगमानुकूल चर्या का प्रभाव इस प्रकार का था कि लोग उनके दर्शन करते ही उनके पदानुगामी बन जाते थे। इस चर्या का प्रभाव उनके दीक्षा प्रदाता मुनि, देवेन्द्रकीर्ति जी (देवप्पा स्वामी) पर भी पड़े बिना नहीं रहा था। बाद में उन्होंने भी अपनी चर्या निर्दोष बनाई। इसीलिए श्री शांतिसागर महाराज "गुरूणांगुरु" के रूप में प्रसिद्ध हुए हैं।

इस युग के कठोर साधक के रूप में शांतिसागर जी महाराज को जाना जाता है। 36 वर्ष के अपने मुनि जीवन में उनके 25 वर्ष 9 माह के उपवास इस मान्यता के प्रमाण हैं। वर्तमान में हमारे पूज्य श्रमणजन एवं श्रावक उन पूज्य श्री के उपकारों से उपकृत हैं कि उन्होंने अपनी साधना से उन्हें एक राजमार्ग प्रदान किया।

36 दिन की नियम सल्लेखना ग्रहणकर यह युग पुरुष जब दिनाँक 18 सितम्बर सन् 1955 को अपने नश्वर शरीर का त्याग कर महाप्रमाण कर गए तब पूरे देश के जैन समाज में एक रिक्तता व्याप्त हो गई थी।

शान्तिसागर महाराज ने दिगम्बरत्व का खोया सत्व पुनः स्थापित किया श्रमण चर्या को पुनः स्थापित कर उसे प्रमाणिकता प्रदान की। उनके इन उपकारों को सदियाँ स्मरण करती रहेंगी।

संदर्भ ग्रंथ–

1. तिलोयपण्णत्ति
2. आदिपुराण
3. जैनधर्म का प्राचीन इतिहास
4. उत्तरपुराण
5. चारित्र चक्रवर्ती

* * *

भगवान महावीर के समवसरण की आर्यिकाओं में प्रमुख

गणिनी आर्यिका चन्दना महासती

–गणिनी ज्ञानमती

वैशाली नगर के राजा चेटक की रानी सुभद्रा के दश पुत्र और सात पुत्रियाँ थीं। धनदत्त, धनभद्र, उपेन्द्र, सुदत्त, सिंहभद्र, सुकुंभोज, अकंपन, पतंगक, प्रभंजन और प्रभास ये पुत्रों के नाम थे और प्रियकारिणी (त्रिशला), मृगावती, सुप्रभा, प्रभावती, चेलनी, ज्येष्ठा और चन्दना ये कन्याओं के नाम थे। बड़ी पुत्री प्रियकारिणी विदेह देश के कुण्डलपुर नगर के राजा सिद्धार्थ की रानी हुई। इन्होंने ही भगवान् महावीर को जन्म दिया था। अन्य कन्याएं भी राजपुत्रों से ब्याही गयी थीं।

चेलनी का विवाह राजगृही के राजा श्रेणिक के साथ हुआ था। ज्येष्ठा ने यशस्वती आर्यिका के पास दीक्षा ले ली थी। चन्दना ने बाल्यावस्था में उन्हीं यशस्वती आर्यिका से सम्यग्दर्शन और श्रावक के व्रत ले लिए थे। यह चन्दना युवावस्था को प्राप्त हुई। तभी एक दिन अपने बगीचे में क्रीड़ा कर रही थी। अकस्मात् विजयार्ध पर्वत का एक मनोवेग नाम का विद्याधर राजा अपनी रानी के साथ आकाशमार्ग से जाता हुआ उधर से निकला। उसने चन्दना को देखा तब उसने अपनी रानी को घर भेजकर चंदना का अपहरण कर लिया। उसी समय मनोवेगा रानी राजा के मनोभाव को जानकर उसका पीछा किया और तर्जना की। उस मनोवेग विद्याधर ने रानी से डरकर उस कन्या को पर्णलघ्वी विद्या के बल से विमान से नीचे गिरा दिया। कन्या चंदना भूतरमण वन में ऐरावती नदी के किनारे गिर गई।

पंच नमस्कार मंत्र का जाप करते हुए चंदना ने वन में रात्रि बड़े कष्ट से बिताई। प्रातःकाल वहाँ एक कालक नाम का भील आया। चंदना ने उसे अपने बहुमूल्य आभूषण दे दिए और धर्मोपदेश भी दिया जिससे वह बहुत संतुष्ट हुआ। तब उस भील ने चंदना को ले जाकर अपने भीलों के राजा सिंह को दे दिया। सिंह भील कन्या से काम संबंधी वार्तालाप करने लगा। चंदना की दृढ़ता को देख उस भील की माता ने उसे समझाकर चंदना की रक्षा की।

अनन्तर भील ने चंदना को कौशाम्बी नगरी के एक मित्रवर को सौंप दिया। इसने अपने स्वामी सेठ वृषभसेन के पास चंदना को ले जाकर दे दिया। सेठ ने चन्दना को उत्तम कुलीन कन्या समझकर उसे अपनी पुत्री के समान रखा था। एक दिन चंदना सेठ को जल पिला रही थी। उस समय उसके केशों का कलाप छूट गया था और जल से भीगा हुआ पृथिवी पर लटक रहा था। उसे वह यत्न से एक हाथ से संभाल रही थी। सेठ की स्त्री भद्रा ने जब चंदना का वह रूप देखा तो शंका से भर गई। उसने मन में समझा कि मेरे पति का इसके साथ संपर्क है। ऐसा मानकर वह बहुत ही कुपित हुई।

उस दुष्टा ने चंदना को सांकल से बांध दिया तथा उसे खाने के लिए मिट्टी के सकोरे में कांजी से मिला हुआ कोदों का भात दिया करती थी। ताड़न-मारण आदि के द्वारा वह उसे निरंतर कष्ट पहुँचाने लगी थी। परन्तु चन्दना निरन्तर आत्मनिंदा करती हुई कर्मसिद्धान्त का विचार करती रहती थी। उसने यह सब समाचार वहीं कौशाम्बी की महारानी अपनी बड़ी बहन मृगावती को भी नहीं कहलाया।

किसी एक दिन तीर्थंकर महावीर स्वामी मुनि अवस्था में वहाँ आहार के लिए आ गए। उसी समय चन्दना भगवान के सामने जाने के लिए खड़ी हुई। तत्क्षण ही उसके सांकल के बंधन टूट गये। उसके मुँड़े हुए सिर पर बड़े-बड़े केश दिखने लगे और उसमें मालती पुष्प की मालाएं लग गईं। उसके वस्त्र आभूषण सुन्दर हो गये। उसके शील के माहात्म्य से मिट्टी का सकोरा सुवर्ण पात्र बन गया और कोदों का भात शाली चावलों की खीर बन गई।[1] उस समय बुद्धिमती चंदना ने बहुत ही भक्तिभाव से भगवान् का पड़गाहन किया और नवधाभक्ति करके विधिवत् भगवान को खीर का आहार दिया। उसी समय देवगण आ गए, आकाश से पंचाश्चर्य वृष्टि होने लगी। जय-जयकार की ध्वनि से सारा नगर गूँज उठा। वहाँ

---

[1] शीलमाहात्म्यसंभूतपृथुहेमशराविका। शाल्यन्नभाववत्कोद्रवोदनं विधिवत्सुधीः।।-उत्तरपुराण, पर्व 74, पृ. 466।

बेशुमार भीड़ इकट्ठी हो गई। रानी मृगावती अपने पुत्र उदयन के साथ वहाँ आ गई। अपनी बहन चंदना को पहचान कर उसे अपनी छाती से चिपका लिया पुनः स्नेह से उसके सिर पर हाथ फेर कर सारा समाचार पूछा। चंदना ने भी अपहरण से लेकर आज तक का सब हाल सुना दिया। सुनकर मृगावती बहुत दुःखी हुई पुनः चंदना को अपने घर ले आई।

यह देख भद्रा सेठानी और वृषभसेन दोनों ही भय से घबराए और मृगावती की शरण में आ गए। दयालु रानी ने उन दोनों को क्षमा कर दिया। तब वे बहुत ही प्रसन्न हुए और अनेक प्रकार से चंदना की प्रशंसा करते हुए चले गए। वैशाली में यह समाचार पहुँचते ही उसके वियोग से दुःखी माता-पिता, भाई-भावज आदि सभी लोग वहाँ आ गये और चंदना से मिलकर बहुत ही संतुष्ट हुए।[1]

भगवान् महावीर को वैशाख सुदी 10के दिन केवलज्ञान प्रगट हो गया। इन्द्र ने समवसरण की रचना कर दी। किन्तु गणधर के अभाव में भगवान् की दिव्यध्वनि नहीं खिरी। श्रावण वदी एकम को 66 दिन बाद इन्द्र गौतमगोत्रीय इन्द्रभूति ब्राह्मण को वहाँ लाए। उन्होंने भगवान के दर्शन से प्रभावित हो जैनेश्वरी दीक्षा ले ली और भगवान के प्रथम गणधर हो गए। चंदना ने भी तभी आकर भगवान् के पास आर्यिका दीक्षा ले ली और सर्व आर्यिकाओं में गणिनी हो गईं।

भगवान के समवसरण में 11 गणधर, चौदह हजार मुनि, छत्तीस हजार आर्यिकाएं, एक लाख श्रावक और तीन लाख श्राविकाएं थीं। उस समय सभी आर्यिकाओं ने चंदना से ही दीक्षा ली थी। यहाँ तक कि उनकी बड़ी बहन चेलना ने भी उन्हीं चंदना से ही दीक्षा ली थी। आजकल जो चन्दनबाला के नाटक में सेनापति द्वारा पिता को मारना, माता को मारना और चंदना को कष्ट देना आदि लिखा है सो गलत है और चंदना के बारे लिखा है कि वह सेठ के पैर धो रही थी। सेठ जी उसके केशों को हाथ से उठा रहे थे। यह भी गलत है। चंदना का विद्याधर द्वारा अपहरण हुआ तब उसके माता-पिता आदि दुखी हुए हैं वहां एक सेठ के यहाँ रहती हुई सेठ को जल पिला रही थी। इसी प्राचीन कथानक को साकार रूप प्रदान करने हेतु अभी कौशाम्बी-प्रभासगिरि तीर्थ पर भगवान महावीर की सवा सात फुट उत्तुंग खड्गासन प्रतिमा एवं महासती चंदनबाला की प्रतिकृति विराजमान कर वहाँ उनका स्थाई स्मारक बनाया गया है। ताकि लोग भगवान महावीर के 2600वें जन्मोत्सव वर्ष में भगवान महावीर के साथ ही महासती चंदनबाला के आदर्शमयी इतिहास से परिचित हो सकें।

* * *

यस्याः प्राप्य कृपाकटाक्षलहरीं दूरीभवन्त्यापदो,
दीनानामपि हस्तयोः प्रमुदिता धावन्ति संसिद्धयः।
रोगा यान्ति भयंकरा अपि मृगा भीत्या मृगेन्द्रादिव।
प्रभ्क्त्या ज्ञानमतीं नमामि विदुषामिष्टप्रदामार्यिकाम्।।

---

[1] उत्तरपुराण, पृ. 486।

दिगम्बर-परम्परा में गौतम स्वामी

—डॉ. अनिल कुमार जैन

जैनों की दिगम्बर एवं श्वेताम्बर दोनों परम्पराओं में गौतम स्वामी का महत्वपूर्ण स्थान है। ये भगवान महावीर के प्रथम गणधर थे। गौतम स्वामी वर्तमान जैन वाङ्मय के आद्य-प्रणेता थे। दिगम्बर आर्ष ग्रंथों में भगवान् महावीर को भाव की अपेक्षा समस्त वाङ्मय का अर्थकर्ता अथवा मूलतंत्र कर्ता अथवा द्रव्य श्रुत का कर्ता बतलाया है और गौतम गणधर को उपतन्त्र कर्ता अथवा द्रव्य श्रुत का कर्ता कहा गया है। भगवान महावीर की दिव्य ध्वनि को सुनकर आपने द्वादशांग की रचना की। जिनवाणी की पूजन में निम्न प्रकार कहा गया है[1]-

'तीर्थंकर की धुनि, गणधर ने सुनि, अंग रचे चुनि ज्ञानमयी।
सो जिनवर वाणी, शिवसुखदानी, त्रिभुवन मानी पूज्य भयी।।"

इसीलिए गौतम गणधर को मंगलाचरण में भी भगवान् महावीर के तुरंत बाद ही स्मरण किया जाता है—

"मंगलम् भगवान् वीरो मंगलम् गौतमो गणी।
मंगलम् कुन्दकुन्दाद्यो, जैन धर्मोस्तु मंगलम् ।।"

लेकिन यह बहुत ही आश्चर्य की बात है कि इतना सब होने पर भी गौतम स्वामी के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त नहीं होती है। दिगम्बर आम्नाओं के आगम ग्रंथों-तिलोय पण्णत्ति (4/1475-1496), हरिवंश पुराण (60/476-481), धवला (9/4,1 44/230), कषाय पाहुड़ (1/64/84) तथा महापुराण (2/134-150) में उनके केवलज्ञान प्राप्त करने तथा मोक्ष जाने संबंधी तो जानकारी है, लेकिन विस्तृत जीवन वृतान्त का यहाँ भी अभाव है।[2] सोलहवीं शताब्दी के मण्डलाचार्य धर्मचन्द्र द्वारा विरचित 'गौतम चरित्र' नामक एक ग्रंथ में उनके जीवन के संबंध में थोड़ा सा प्रकाश डाला गया है।[3]

पूर्वभव

गौतम स्वामी के पूर्वभवों की कुछ जानकारी 'लब्धि विधान व्रत कथा' से प्राप्त होती है। इसके रचयिता सिंघई किशनसिंह पाटनी हैं जो कि बरवाडा (सवाई माधोपुर) के पास रामपुरा ग्राम के सिंघई सुखदेव जी पाटनी के पुत्र थे। रचना संवत् 1782 में फाल्गुन शुक्ला अष्टमी सोमवार को आगरा के मोती कटले के मंदिर में बनकर तैयार हुई है। कवि ने इस हिन्दी पद्यमय कथा की रचना पंडित अभ्र द्वारा संस्कृत में रचित कथा के आधार पर की। इस कथा में बताया गया है कि गौतम स्वामी ने पूर्व भव में 'लब्धि विधान व्रत किया था। इसी व्रत के प्रभाव से वे ऋद्धिधारी देव होकर गणधर पद के धारक हुए। उनके पूर्व भवों का विवरण निम्न प्रकार है—

इस भरत क्षेत्र में काशी नाम का एक देश था। उसके नगर बनारस में विश्वलोचन नाम का एक राजा राज्य करता था। इस राजा की एक बहुत ही सुन्दर रानी थी जिसका नाम नेत्र-विशाला था। (यही रानी गौतम स्वामी का पूर्व भव है) रानी बहुत ही रूपवती एवं गुणवती थी। राजा भी उसे बहुत चाहता था। एक दिन की बात है कि राजा अपने कक्ष में बैठा एक नर्तकी का नृत्य देख रहा था। राजा नृत्य देखने में बहुत ही मगन हो गया। रात बहुत व्यतीत हो चुकी थी। संगीत की मधुर आवास आ रही थी। रानी से रहा न गया। उसने अपने झरोखे से झांककर नर्तकी हो देखा। नर्तकी अपने हाव-भाव दिखाकर राजा को प्रसन्न कर रही थी। इसे देखकर रानी के मन में विकार उत्पन्न हुआ और आकुल-व्याकुल होने लगी। वह मन में चिन्तन करने लगी कि "मैं तो इतनी सुन्दर हूँ, लेकिन मात्र इस महल की होकर रह गई हूँ। मेरी दशा तो एक कैदी के समान है।' उसने मन ही मन विचार किया कि वह इस बंदीगृह से मुकत होकर ही रहेगी तथा अपनी सुन्दरता से सबको मोहित करेगी।

रानी ने अपनी यह दुर्भावना अपनी दासी से व्यक्त की। इस दासी का नाम चामरी था। दासी के एक बेटी थी वह दुराचारिणी थी। इसका नाम मदनवती था। इन तीनों ने मिलकर महल से बाहर निकल जाने की एक योजना बनाई।

रानी के आकार का एक पुतला बनाया और उसे सुन्दर तरीके से सजाकर रानी के पलंग पर बैठ दिया। फिर ये तीनों नकली वेष धारण कर महल से निकल गई।

इधर राजा नृत्य और संगीत समाप्त होने पर कामातुर हो रानी के महल जा पहुँचा। वह इतना कामान्ध हो गया था कि वह रानी तथा उसके पुतले में भी अंतर न समझ पाया। वह सीधा ही पुतले के निकट पहुँचकर काम चेष्टा करने लगा। लेकिन जैसे ही उसने स्पर्श किया तो वह समझ गया कि कुछ गड़बड़ है। उसने दासी चामरी को आवाज लगाई। लेकिन वह वहाँ थी ही कहाँ। उसने यहाँ-यहाँ रानी की खोज की, लेकिन वह उसे नहीं मिली। राजा चिन्तामुक्त रहने लगा। समय बीतने लगा लेकिन वह रानी को भुला न पाया। रानी के वियोग से दुःखी राजा आर्त ध्यान करता हुआ कुछ दिनों में मर गया।

इधर वे तीनों स्वेच्छाचार करती हुई इधर-उधर भ्रमण करती रहीं। रानी के एक दस वर्ष का पुत्र भी था, लेकिन रानी को उसकी भी कभी याद नहीं आई। रानी और दासी जोगनी का वेष धारण कर इधर-उधर भटकती रहीं। ये रात-दिन मदिरा पीने लगीं तथा मांस भी खाने लगीं। मदनवती तो अपनी पूरी जवानी पर थी। वह भी ब्राह्मण और चाण्डाल सबके साथ व्यभिचार करने लगी। एक बार ये तीनों अवंती देश पहुँची। वहाँ उन्होंने एक मुनि को आहार के लिए जाते देखा। रानी की इच्छा उसके साथ विषय सेवन की हुई। वे तीनों उस मुनि के साथ छेड़छाड़ करने लगीं। मुनि महाराज अन्तराय समझ कर वापस चले गये और जंगल में ध्यान लगाकर बैठ गये। इन तीनों से रहा न गया। ये तीनों शाम को जंगल पहुँच गईं तथा रातभर कुचेष्टा करती रहीं कि मुनि इनके साथ विषय सेवन करें। ये निर्वस्त्र होकर मुनि से लिपटने लगीं। लेकिन मुनि महाराज बिल्कुल भी विचलित न हुए। ये तीनों रातभर मुनि महाराज को यातना देती रहीं। रानी के कहने, उकसाने पर दासी तो और भी अधिक कुचेष्ट करने लगी। मुनि महाराज इसे उपसर्ग मानकर निश्चल रहे। रात समाप्त होने लगी। अपने मन्तव्य में सफल न होने के बाद ये तीनों वहाँ से भाग गईं।

इन तीनों के अंतिम समय बहुत कष्ट में व्यतीत हुए। दासी को पूरे शरीर में कोढ़ हो गया और मरकर वह नरक में गई। नरक में नाना प्रकार की यातनाएं सहने के बाद वह समय पूरा करके तिर्यंच पर्याय में उत्पन्न हुई। पहले वह मार्जारी हुई, फिर शूकर, फिर कूकर और फिर कुर्कुट। उधर वे दोनों भी तिर्यंच गति में भ्रमण करती हुई कुर्कुट हो गईं। कर्मयोग से ये तीनों फिर एक साथ मिल गईं। इनकी यह दशा अपनी कुचेष्टाओं तथा मुनि महाराज को कष्ट यातनाएँ देने के कारण ही हुई।

अवन्ती देश में उज्जैनी नगरी के निकट एक ग्राम में एक किसान परिवार रहता था। कर्मयोग से वे तीनों कुर्कुट मरकर इस किसान के घर पुत्रियों के रूप में पैदा हुईं। लेकिन ये तीनों बहुत ही अपशगुनी थीं। जब ये माँ के गर्भ में आईं तो सारा धन नष्ट हो गया और जब इनका जन्म हुआ तो माता चल बसी। बचपन में पड़ौसिन भी मर गई और जब ये थोड़ा-थोड़ा चलने लगीं तो सारा गांव ही उजड़ गया। बड़ी होने पर तीनों कन्याओं ने बहुत दुःख भोगे। भूख-प्यास की वेदना सहती हुई ये नगर और ग्राम में भटकती रहीं। ये भ्रमण करती हुई पुहपपुर (पुष्पपुर) जा पहुँचीं।

उन दिनों वहाँ एक मुनिराज विराजमान थे। ये महाराज बहुत विद्वान थे और अवधिज्ञानी भी थे। नगर के सभी लोग इनके दर्शन के लिए आ रहे थे। पुष्पपुर के राजा महीचन्द भी मुनि महाराज के दर्शन के लिए पधारे। जिस समय राजा महीचन्द महाराज के चरणों में बैठे थे उसी समय वे तीनों कन्याएं भी वहाँ आ पहुँचीं। उनकी दयनीय अवस्था देख राजा के मन में करुणा भाव जागृत हुए। मुनि महाराज सबको कुव्यसन छोड़ने का उपदेश रहे रहे थे। जब वे अपना उपदेश पूराकर चुके तब राजा ने विनम्र होकर महाराज से निवेदन किया कि 'महाराज! इन तीनों कन्याओं को देखकर मेरे मन में बार-बार दया का भाव जाग्रत हो रहा है। मेरे हित में कृपया बतायें कि ऐसा क्यों हो रहा है?' तब महाराज ने पूर्व भव का सारा वृतान्त वर्णन किया। महाराज ने कहा-'हे राजन्! तुम पूर्व भव में बनारस नगर के राजा विश्वलोचन थे। यह तुम्हारी रानी नेत्र-विशाला थी तथा दूसरी चामरी दासी थी। यह तीसरी कन्या मदनवती है। ये तीनों श्वेच्छाचार और मुनि को यातनाएं देने के कारण नरक और तिर्यंच गति में भ्रमण करती हुई इस पर्याय में आई हैं और राजा तुम भी कई भव धारण करते रहे। एक भव में सुयोग से तुम्हें सद्बुद्धि आई। मुनि महाराज के दर्शन हुए और

उनके उपदेश से श्रावक वेष धारण किया। फिर सन्यास धारण कर अपने प्राण तज दिये और प्रथम विमान में देव बनकर पैदा हुए। वहाँ से चय कर इस भव में तुम पैदा हुए हो। कुछ समय बाद तुम निश्चय ही मोक्ष जाओगे।'

मुनि महाराज के ये वचन सुनकर वे तीनों कन्याएँ उनके चरणों के निकट आईं और विनम्र होकर पूछने लगीं कि इस कष्ट से मुक्त होने का कुछ उपाय है? तब महाराज ने करुणा धारण कर कहा कि 'तुम तीनों लब्धि विधान व्रत' धारण करो। इससे तुम्हारा कल्याण होगा।' महाराज के ये वचन सुनकर वे हर्षित हुईं तथा पूरी श्रद्धा के साथ जैसी मुनि महाराज ने विधि बतलाई उसके अनुसार व्रत धारण किये। मन-वचन-काय से व्रत विधान पूर्ण किया और फिर उद्यापन किया। आजीवन शील व्रत धारण किया। कुछ समय बाद इन तीनों ने आर्यिका दीक्षा धारण कर ली। अन्त में समाधिपूर्वक मरण किया और पाँचवें स्वर्ग में देंव हुईं। यह सब मुनिभक्ति और 'लब्धि विधान व्रत' का ही महात्म्य है। महापुराण (74/357) में भी वर्णन आता है कि गौतम स्वामी अपने पूर्वभव में आदित्य विमान में देव थे। वहाँ से आयु पूर्ण करने के बाद वे तीनों क्रमशः इन्द्रभूति, अग्निभूति और वायुभूति नाम से प्रसिद्ध हुए।

गौतम स्वामी

भरत क्षेत्र के मगध देश में द्विजपुर नाम का एक नगर था। इस नगर में अनेक विद्वान् ब्राह्मण रहते थे। यहाँ सदा वेदों की ध्वनि गूंजा करती थी। इसी नगर में सदाचार परायण, बहुश्रुत और सम्पन्न गौतम गोत्रीय शांडिल्य नामक एक ब्राह्मण निवास करता था। उसके रूप और शील से सम्पन्न स्थण्डिला और केसरी नामक दो पत्नियाँ थीं। एक दिन रात्रि को सोते हुए अंतिम प्रहर में स्थण्डिला ब्राह्मणी ने शुभ स्वप्न देखे। तभी पाँचवें स्वर्ग से एक देव का जीव आयु पूर्ण होने पर माता स्थण्डिला के गर्भ में आया। गर्भावस्था में माता की रुचि धर्म की ओर विशेष बढ़ गई।

नौ माह व्यतीत होने पर माता ने एक सुन्दर पुत्र को जन्म दिया। उस पुण्यशाली पुत्र के उत्पन्न होते ही घर में और बाहर भी खुशी का वातावरण छा गया। एक निमित्तज्ञानी से पुत्र के ग्रहलग्न देखकर भविष्यवाणी की "यह बालक बड़ा होने पर समस्त विद्याओं का स्वामी होगा और सारे संसार में इसका यश फैलेगा।"

बालक अत्यन्त रूपवान् था। उसके मुख पर अलौकिक तेज था। उसे जो भी देखता था, वह देखता ही रह जाता था। माता-पिता ने उसका नाम गौतम रखा। यही बालक आगे चलकर इन्द्रभूति के नाम से विख्यात हुआ।

बालक गौतम जब तीन वर्ष का था, तब माता स्थण्डिला ने द्वितीय पुत्र को जन्म दिया। यह जीव भी पाँचवें स्वर्ग से आया था। वैसा ही पुण्यात्मा और प्रभावशाली। इसका नाम गार्ग्य रखा और बाद में यह पुत्र अग्निभूति नाम से विख्यात हुआ।

इसके कुछ समय बाद ब्राह्मण की दूसरी पत्नी केसरी के भी एक सुन्दर पुत्र हुआ और यह जीव भी पाँचवें स्वर्ग से आया था। इसका नाम रखा भार्गव। बाद में यह वायुभूति नाम से प्रसिद्ध हुआ।

तीनों भाइयों ने सम्पूर्ण वेद और वेदांगों का अध्ययन किया और वे पारंगत हो गये। उन तीनों ने अपने-अपने गुरुकुल खोले और छात्रों को विद्याध्ययन करने लगे। इन्द्रभूति के पास पाँच सौ शिष्य पढ़ते थे। इतने विद्वान् होकर भी इन्द्रभूति को अपनी विद्या का बड़ा अभिमान था। वे समझते थे कि उनकें समान विद्वान इस संसार में अन्य कोई नहीं है।

एक दिन भगवान महावीर छद्मस्थ अवस्था में विहार करते हुए ऋजुकूला नदी के तट पर आये और वहाँ शालवृक्ष के नीचे एक शिला पर ध्यान लगाकर बैठ गये। उन्होंने वैशाख शुक्ला दसमी को चारों घातिया कर्मों को नाश कर दिया और उन्हें केवलज्ञान प्राप्त हो गया। चारों प्रकार के देवों और इन्द्रों ने आकर भगवान् को नमस्कार किया। सौधर्म इन्द्र ने कुबेर को तत्काल समवसरण निर्माण करने की आज्ञा दी। देवताओं ने शीघ्र ही समवसरण की रचना कर दी। उसमें बारह कक्ष थे। देव, मनुष्य और तिर्यंच यथानिश्चित कक्षों में आकर बैठ गये। भगवान गंधकुटी में सिंहासन पर विराजमान हो गये किन्तु उनकी दिव्यध्वनि नहीं खिरी।

यह देखकर सौधर्म इन्द्र ने अपने अवधिज्ञान से जाना कि यदि इन्द्रभूति गौतम आ जायें तो भगवान् की दिव्यध्वनि खिरने लगेगी। यह विचार कर इन्द्र ने एक वृद्ध ब्राह्मण को गौतम के पास पहुँचा दिया। वहाँ पर भी उसने वही बात

दोहरायी। गौतम अभिमान की मुद्रा में बोले-तुम्हें जो पूछना हो पूछ सकते हो। वृद्ध बोला-प्रियवर्य! यदि आप मेरे काव्य का अर्थ बता देंगे तो मैं आपका शिष्य बन जाऊँगा और यदि न बता सके तो आपको मेरे गुरु का शिष्यत्व स्वीकार करना होगा। इस बात पर गौतम सहमत हो गये।

तब वृद्ध ने श्लोक बोला-"त्रैकाल्यं द्रव्यषट्कं" इत्यादि। श्लोक सुनकर इन्द्रभूति उसका अर्थ विचारने लगे लेकिन अर्थ नहीं कर पाये। छह द्रव्य, नौ पदार्थ, छह लेश्या, पाँच अस्तिकाय कौन से हैं? किन्तु अभिमान वश वृद्ध के समक्ष यह बात कुछ भी न सके। उन्होंने बात छिपाते हुए कहा-"मैं तुम्हें क्या बताऊँ, चलो तुम्हारे गुरु के समक्ष ही अर्थ बताऊँगा।" इन्द्र भी यही तो चाहता था। वह इन्द्रभूति को उनके शिष्य परिवार सहित लेकर चल दिया।

जब समवसरण के द्वार के भीतर घुसते ही मानस्तंभ देखा तो इन्द्रभूति के मन का अभिमान गलित हो गया और मन में कोमलता जागी। समवसरण की विभूति देखकर वे चकित रह गये और विचारने लगे-जिसकी ऐसी लोकोत्तर विभूति है, वे क्या किसी के द्वारा जीते जा सकते हैं? जब वे भगवान् के समक्ष पहुँचे तो अन्तर से भक्ति की हिलौरें-सी उठी और वे हाथ जोड़कर भगवान की स्तुति करने लगे। फिर उन्होंने भगवान् को नमस्कार किया और अपने दोनों भाईयों और पाँच सौ शिष्यों सहित भगवान् के चरणों में जैनेश्वरी दीक्षा धारण कर ली। उस समय उनके परिणाम इतने निर्मल थे कि उन्हें तत्काल बुद्धि, विक्रिया, क्रिया, तप, बल, औषधि, रस, और क्षेत्र ये आठ ऋद्धियाँ प्राप्त हो गईं। बुद्धि ऋद्धि प्राप्त होने पर अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान, कोष्ठ मति, बीजबुद्धि, संभिन्न, संश्रोतृ और पदानुसारी ज्ञान भी प्राप्त हो गये और फिर श्रावण मास में कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा के दिन अभिजित् नक्षत्र के उदित रहने पर भगवान् महावीर की दिव्यध्वनि खिरी। इस समय अवसर्पिणी के चतुर्थ काल के अंतिम भाग में तीन वर्ष आठ माह और पन्द्रह दिन शेष रह गये थे।

इस प्रकार इन्द्रभूति गौतम भगवान् महावीर के प्रथम गणधर बने। भगवान् महावीर ने गौतम गणधर को उपदेश दिया और उन्होंने अन्तर्मुहूर्त में द्वादशांग के अर्थ का अवधारण करके उसी समय बारह अंगरूप ग्रंथों की रचना की और गुणों से अपने समान श्री सुधर्माचार्य को उसका व्याख्यान किया। कार्तिक कृष्णा 15 की सुबह भगवान् महावीर को मोक्ष प्राप्त हुआ और उसी दिन शाम को गौतम गणधर को केवलज्ञान प्राप्त हुआ। बारह वर्ष पश्चात् श्री गौतम स्वामी को गुणावां तीर्थ से मोक्ष प्राप्त हुआ। इन्द्रनन्दि कृत श्रुतावतार की गुर्वावली के अनुसार गौतम स्वामी भगवान् महावीर के पश्चात् प्रथम केवली हुए हैं।

संदर्भ–

1. 'सरस्वती पूजन', रचयिता-पं. द्यानतराय, अठारहवीं शताब्दी।
2. 'जैनेन्द्र सिद्धांत कोश', भाग-1, पृ. 316।
3. 'श्री गौतम गणधर चरित्र', रचयिता-सिंघई किशनसिंह पाटनी (सं. 1782), संपादक-क्षु. शीतल सागर जी महाराज (वीर निर्वाण सं. 2492)।

* * *

त्रिशलानन्दन वीर का शासन आज बना जिनशासन है।
जिओ और जीने दो का "चन्दना" जहाँ प्रतिपादन है।।
इस शासन का दर्शन अब सच्चे गुरुओं में पाएं हम।
चौबीसों तीर्थंकर की, वाणी जग में पहुँचाएँ हम।।

बड़ी कमेटी, बड़े लोग और बड़े विचार

भगवान् महावीर जन्मभूमि के परिप्रेक्ष्य में

-अजय कुमार जैन, आरा
(मानद् मंत्री-बिहार राज्य दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी)

"भारतवर्षीय तीर्थक्षेत्र कमेटी के उपाध्यक्ष पद के लिए आपका नाम आया था। पर कुछ लोगों का कहना है कि आप पूज्य ज्ञानमती माताजी की कुण्डलपुर समिति के महामंत्री हैं जिसका तीर्थ क्षेत्र कमेटी विरोध करती है। अतः आपको नहीं..........।" यह सुनकर हमें बड़ा अटपटा सा लगा। इसलिए नहीं कि हम भारतवर्षीय कमेटी के पदाधिकारी बनना चाहते थे। दर्जनों स्थानीय, राष्ट्रीय एवं प्रांतीय कमेटियों में अत्यंत व्यस्तता के कारण, न तो हमारे पास समय है और न हवाई सफरों में बर्बाद करने के लिए पैसा, बल्कि इसलिए कि इस तरह की संकुचित सोच भारतवर्षीय कमेटी के साथ पूरे जैन समाज के लिए आत्मघाती एवं दुर्भाग्यपूर्ण होगी एवं हमारे दिगम्बर भाईयों को और छोटे-छोटे टुकड़ों में बाँट देगी।

क्या भारतवर्षीय कमेटी को यह अधिकार है कि वह पूज्य आचार्यों/मुनियों द्वारा निर्धारित मान्यताओं, पूजा-पद्धतियों या क्षेत्र निर्णय को सही/गलत करार कर सके और यदि है भी तो क्या बौद्धिक दृष्टि से इसके सदस्य आगम ज्ञान में पूर्ण परिपक्व एवं सर्वमान्य हैं, कि लोग आँख बंद कर उनके निर्णय को स्वीकार कर लें।

हमें याद है कि कई वर्ष पूर्व, जिस समय भगवान महावीर की निर्वाणभूमि पावापुरी (नालंदा) के स्थान पर, उत्तरप्रदेश स्थित पावानगर को निर्वाणभूमि के रूप में मान्यता देने के लिए विवाद हुआ था। उस समय भारतवर्षीय कमेटी के कर्णधारों ने, जिसमें साहू शांति प्रसाद जी प्रमुख थे, ने विवेकपूर्ण निर्णय लेते हुए पावापुरी के साथ-साथ पावानगर को भी तीर्थक्षेत्र के रूप में संबद्धता एवं मान्यता प्रदान की थी। ताकि दोनों पक्ष के लोग अपनी-अपनी मान्यता के अनुसार निर्वाणक्षेत्र जाकर पूजा-पाठ कर सकें एवं तीर्थक्षेत्र कमेटी से जुड़े रहें। फिर यह अब क्यों नहीं हो सकता, यह सोचने की बात है।

भगवान महावीर की जन्मभूमि के रूपमें कुण्डलपुर सही है, कि वैशाली सही है, या लिछवाड़ सही है। इस पर घंटो तर्क किये जा सकते हैं, अनेकों प्रमाण दिये जा सकते हैं। लेकिन पूज्य पंच परमेष्ठी के प्रति, पूज्य आचार्यों/आर्यिकाओं के प्रति, बचपन से जो पूर्ण समर्पण एवं आदर के संस्कार हमारे/आपके अंदर भरे हैं, उस पर ज़रा-सा भी प्रश्नचिन्ह, पूरे धर्म की नींव को हिला कर रख देगा और धार्मिक व्यवस्था छिन्न-भिन्न कर देगा, यह हमें समझना चाहिए।

अब हम वर्तमान स्थिति पर नजर डालें। यह सही है कि लगभग 50 वर्ष पूर्व, भारतवर्षीय कमेटी ने एवं कई विद्वानों ने वैशाली को भगवान महावीर की जन्मभूमि घोषित किया था। पर उसके बाद हमने क्या किया? न तो वहाँ क्षेत्र स्थापित कर सके और न तीर्थ यात्रियों को ही वहाँ पहुँचा पाये। बड़े लोगों से बनी स्मारक समिति भी सोती रही। लज्जा से उबरने के लिए बिहार तीर्थ कमेटी को, भगवान महावीर के 2600वें जन्मजयंती के अवसर पर बाध्य होकर वैशाली स्थित एक पुराने मंदिर के जीर्णोद्धार का जिम्मा लेकर क्षेत्र स्थापित करना पड़ा। आज वहाँ यात्रियों को सभी सुविधाएं उपलब्ध हैं। पर बार-बार अनुरोध करने पर भी भारतवर्षीय कमेटी ने अभी तक विकास/प्रबंध के लिए किसी प्रकार का सहयोग नहीं दिया है। इसी से वैशाली के प्रति उनकी उदासीनता का पता चलता है। स्मारक समिति की बैठकें अब पटना/वैशाली में करने की लोगों को फुर्सत नहीं है। वे दिल्ली में होती हैं।

इसके विपरीत कुण्डलपुर में भगवान महावीर के जन्मस्थान के रूप में सैकड़ों वर्ष पूर्व स्थापित मंदिर- धर्मशाला, हमारे बिहार कमेटी के सुपुर्द है। अगर समाज का एक वर्ग भी उसे जन्मभूमि मानता है तो उसकी सुचारू व्यवस्था, उन्नति करना हमारा कर्तव्य है। इस क्षेत्र के विकास की गति, वैशाली की घोषणा के पश्चात् बहुत धीमी हो गई थी, पर इस बीच भी हजारों यात्री प्रतिवर्ष यहाँ आकर पूजा-पाठ करते थे, जन्मभूमि को अर्घ्य चढ़ाते थे एवं चले जाते थे। सब चुप थे, हम सब भी चुप थे। इस चुप्पी को अक्टूबर 2001 में पूज्य ज्ञानमती माताजी ने तोड़ा और दिल्ली से घोषणा की कि

वे कुण्डलपुर (नालंदा) को पूर्व धार्मिक मान्यतानुसार भगवान महावीर की जन्मभूमि मानती हैं और दिल्ली से उनके संघ के साथ उनके विशाल अनुयायियों का जत्था कुण्डलपुर के विकास के लिए चल पड़ा। मात्र एक वर्ष के अंदर समाज द्वारा प्रदत्त करोड़ों रुपये की लागत से 3 विशाल जैन मंदिर, नंद्यावर्त महल एवं धर्मशाला बनकर तैयार है। पिछले वर्ष पूज्य माताजी के ससंघ प्रवास के समय अनेकों महोत्सव, समारोह एवं रथयात्रा आदि कार्यक्रम हुए, जिसमें लाखों की संख्या में आकर जैन समाज ने उन्हें समर्थन प्रदान किया।

आज जैन समाज का बहुत बड़ा वर्ग दोनों पक्षों के साथ है। क्या हम आप उन्हें समझाने की भूल कर सकते हैं। निश्चयपूर्वक हम कह सकते हैं कि अब यह दोनों मान्यताएँ वर्तमान परिप्रेक्ष्य में अपरिवर्तनीय है। अतः सब जानकर आँखें बंद रखना, होशियारी नहीं मानी जा सकती है।

भारतवर्षीय कमेटी की स्थापना तीर्थक्षेत्रों की सुरक्षा, संवर्द्धन एवं विकास के उद्देश्यों के लिए हुई थी। क्या हम मूलभूत उद्देश्यों के विपरीत नहीं चल रहे हैं। क्या हमें बिना विवाद में पड़े, सभी मान्य स्थापित तीर्थ क्षेत्रों के प्रति, जिससे समाज के किसी वर्ग की मान्यता जुड़ी है, के विकास के लिए, यात्रियों की मूलभूत सुविधाओं की बढ़ोतरी के लिए, बिना भेदभाव के, ध्यान नहीं देना चाहिए। आज अगर तर्क की कसौटी पर भारतवर्षीय कमेटी का नेतृत्व वैशाली को मानता है, तो इस बात की क्या गारंटी है कि आगे आने वाला नेतृत्व इसी कसौटी पर कुण्डलपुर को सही नहीं मानेगा।

आखिर कब तक हम कुण्डलपुर/वैशाली के समर्थकों के ऊपर दोषारोपण करते रहेंगे। एक-दूसरे को भारतवर्षीय कमेटी से हटाते रहेंगे, या हटाने की परंपरा की शुरूआत करेंगे। हमें यह भी समझना चाहिए कि विरोधी पक्ष को नई भारतवर्षीय कमेटी की स्थापना करने में कितना समय लगेगा? हम उन्हें क्यों उकसा रहे हैं? तीर्थ संरक्षणी सभा, कुंद-कुंद कहान तीर्थ ट्रस्ट के रूप में समाज का विभाजन क्या काफी नहीं है?

हमें समाज से, विशेषकर समाज के कर्णधारों, बड़ी कमेटी, बड़े लोगों से, अपील है कि देवशास्त्र गुरु पर पूरी श्रद्धा रखते हुए उपरोक्त बातों पर उन्हें गंभीरता से विचार मंथन करना चाहिए और दूरगामी परिणामों को अभी से पहचान कर समाज को एक सूत्र में बांधने का उपाय करना चाहिए, तभी सही अर्थों में जिन शासन की सफलता मानी जा सकती है।

* * *

महावीर के जन्मोत्सव पर, रतन लुटाओ गली गली।
आया है यह स्वर्णिम अवसर, धूम मचाओ गली गली।।
रतन लुटाने वाला मानव, धनकुबेर कहलाएगा।
इस भव में धनहीन भले हो, धनपति वह बन जाएगा।
मन खुश कर लो रतन बांटकर, नाचो गाओ गली-गली।
आया है यह स्वर्णिम अवसर..............................।।

आकाश की ऊँचाईयों को छूता हुआ

कुण्डलपुर

भगवान महावीर जन्मभूमि-कुण्डलपुर
नंद्यावर्त महल
Narayan AYODHYA

पंचम खंड

4847

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर के जिनमंदिर

(भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर में 'नंद्यावर्त महल' परिसर में विद्यमान जिनमंदिरों के परिचय)

प्रस्तुति—गणिनी ज्ञानमती

विश्वशांति तीर्थंकर महावीर जैन मंदिर

भगवान महावीर जन्मभूमि-कुण्डलपुर तीर्थ के विकास की चर्चा चल रही थी। वहाँ प्राचीन मंदिर परिसर में कीर्तिस्तंभ के शिलान्यास के लिए फाल्गुन शु. 10 (24 मार्च सन् 2002) निश्चित हो चुकी थी। इसी मध्य दिल्ली में रहते हुए माघ शु. 1 (13 फरवरी) को मैंने स्वयं ससंघ कुण्डलपुर के लिए विहार करने का निर्णय ले लिया। तदनुसार माघ शु. 8 (20 फरवरी 2002) को राजाबाजार (कनॉट प्लेस-नई दिल्ली) दिगम्बर जैन मंदिर से विहार करके इंडिया गेट होते हुए दिल्ली से कुण्डलपुर के लिए बढ़ चली। इस मंगल विहार में ब्र.रवीन्द्र कुमार, संघपति महावीर प्रसाद, निर्मल कुमार सेठी आदि प्रतिष्ठित महानुभाव पंचरंगी ध्वज एवं केशरिया ध्वज लेकर भगवान महावीर एवं उनकी जन्मभूमि कुण्डलपुर की जय-जयकारा के साथ प्रथम दिवस पैदल चल रहे थे।

मध्य में मथुरा तीर्थ, आगरा आदि होते हुए ज्येष्ठ शु. 2 (12 जून) को मेरा श्री ऋषभदेव तपस्थली, प्रयाग (इलाहाबाद) के नूतन तीर्थ पर मंगल पदार्पण हुआ। अनेक धर्मप्रभावना के साथ-साथ यहीं पर यह 2002 का वर्षायोग सम्पन्न हुआ।

इसी मध्य कुण्डलपुर में भूमि क्रय की चर्चा एवं प्रयास चल रहे थे।

जब मैंने कुण्डलपुर तीर्थ विकास के लिए विहार का निर्णय लिया था तभी भगवान महावीर की प्रतिमा भगवान की अवगाहना प्रमाण सात हाथ की (सवा दश फुट) उत्तुंग खड्गासन श्वेतवर्णी के लिए आर्डर जयपुर दे दिया गया था। 10 दिसम्बर को मैं आरा (बिहार) आ चुकी थी, तब तक श्वेत बढ़िया पत्थर नहीं निकल पाया था। मन में चिंता हो रही थी कि प्रतिष्ठा की तिथि मैंने घोषित कर दी, पोस्टर छप चुके हैं। विशाल उत्तुंग प्रतिमा का महामस्तकाभिषेक भी घोषित कर दिया है किंतु अभी तक प्रतिमा हेतु पत्थर ही उपलब्ध नहीं हुआ है।

इसी मध्य 15 दिसंबर को ब्र. रवीन्द्र कुमार ने कहा कि जयपुर से सूरज नारायण नाठा ने कहा है कि एक पत्थर बहुत ही सुन्दर मिल रहा है वह अत्यन्त महंगा है, उसकी मूर्ति सुन्दर बनायी जा सकती है। मैंने उसी क्षण कहा—

कितना ही महंगा पत्थर क्यों न हो, भगवान-तीन लोक के नाथ महावीर स्वामी के लिए इसी क्षण स्वीकृति कर दो। क्योंकि जिनप्रतिमाएं अमूल्य होती हैं उनका मूल्य नहीं हो सकता है। श्री सूरज नारायण नाठा ने एक महीने में प्रतिमा बना देने का आश्वासन दे दिया। मैं पौष शु. 10 (29 दिसम्बर 2002) को कुण्डलपुर आ गई उसी दिन नवक्रीत स्थल पर भगवान महावीर मंदिर की वेदी का शिलान्यास सम्पन्न हुआ। अनंतर बाहर आते ही हाथी सामने खड़ा देखकर तथा अनेक शुभ-शकुनों से मन में दृढ़ निश्चय हो गया कि पूर्व निर्धारित समय के अनुसार ही सारे कार्य सिद्ध हो जावेंगे। मैंने प्रतिष्ठा एवं निर्माण कार्यों की निर्विघ्नता हेतु नूतन स्थल पर ही प्रतिदिन शांति विधान आदि विधान करने का ब्रह्मचारिणी बहनों को आदेश दे दिया।

इधर माघ शु. 4 (5 फरवरी 2003) को रात्रि में भगवान महावीर की मूर्ति इस 'नंद्यावर्त महल' परिसर में आ गई। भगवान के प्रथम मुखावलोकन में रत्नवृष्टि, पुष्पवृष्टि आदि की गई। माघ शु. 6 (7 फरवरी 2003) को प्रातः प्रतिष्ठा

हेतु झण्डारोहण हुआ। मध्यान्ह 1 बजे से 21 फुट उत्तुंग छत पर कमल रखकर उस पर भगवान महावीर की प्रतिमा को 'चेनपुली' से खड़ी कर रहे थे। मैं मंत्र जाप्य कर रही थी। सायं 7.50 पर भगवान महावीर स्वामी अपने स्थान पर कमलासन पर विराजमान हो गये। उस समय मैंने अपनी यात्रा को सफल माना, उस क्षण की प्रसन्नता का तो कोई पार ही नहीं था। सभी भक्तगण भी हर्षातिरेक से गद्गद हो रहे थे। भगवान पर रत्नवृष्टि, पुष्पवृष्टि आदि की जा रही थीं।

इधर पांडाल में गर्भ कल्याणक की क्रियाएं प्रारंभ हो गईं और पूरी पंचकल्याणक प्रतिष्ठा हर्षोल्लासमय वातावरण में निर्विघ्न सम्पन्न हुई एवं माघ शु. 10 (12 फरवरी) को मध्यान्ह में भगवान महावीर का महामस्तकाभिषेक सम्पन्न हुआ। यह दृश्य भी अपने आप में एक अभूतपूर्व ही था।

भगवान महावीर स्वामी की यह मूर्ति श्वेत वर्ण संगमरमर की इतनी सुंदर है कि श्री गौतम स्वामी का यह पद्य स्मृतिपथ में अवश्य आ जाता है–

अताम्रनयनोत्पलं सकलकोपवह्लेर्जयात् ।
कटाक्षशरमोक्षहीन-मविकारतोद्रेकतः।।
विषादमदहानितः प्रहसितायमानं सदा।
मुखं कथयतीव ते हृदयशुद्धिमात्यंतिकीम्[1] ।।31।।

क्रोधाग्नि को जीत लिया नहिं, नेत्र कमल लालिमा प्रभो!
नहिं विकार उद्रेक ततः प्रभु, दृष्टि कटाक्ष रहित तुम हो।।
मद विषाद से रहित अतः, स्मित मुख सदा रहे भगवन्।
कहता है यह मंदहास्य तव, अन्तःकरण शुद्धि पूरण।।31।।

जितने भी भक्तगण यहाँ आते हैं भगवान महावीर स्वामी का दर्शन करते ही भाव विभोर हो जाते हैं। मूर्ति की प्रशंसा करते-करते अत्यंत स्वच्छ श्वेत पाषाण की भी प्रशंसा करने लगते हैं एवं शिल्पी की कला की भी सराहना करने लगते हैं। सूरजमल नाठा ने भी कहा था-कि मैंने इतनी विशाल एवं सुन्दर प्रतिमा मात्र एक माह में अभी तक नहीं बनायी थी। यह कोई चमत्कार ही हुआ है। उन्होंने स्वयं भी इस मूर्ति का मुखावलोकन नहीं किया था, वे बोले-मैंने नियम किया था कि मैं पूज्य माताजी के समक्ष ही इन भगवान का मुखावलोकन करूँगा। वे भी स्वयं प्रतिमा के समक्ष नाचने लगे थे। यह 'विश्वशांति भगवान महावीर मंदिर' बनकर पूर्ण हो चुका है। फाल्गुन शु. 3 (23 फरवरी 2004) को भगवान महावीर की सवा फुट की चार प्रतिमाएं पंचकल्याणक से प्रतिष्ठित करके इस मंदिर के शिखर में चारों दिशाओं में विराजमान करायी गईं एवं इस मंदिर के कलात्मक शिखर पर कलशारोहण और ध्वजारोहण सम्पन्न हो चुका है। नीचे से 43 सीढ़ी चढ़कर इन भगवान महावीर के दर्शन करके लाखों भक्तगण अपने मनोरथों की सिद्धि कर रहे हैं।

मैंने (1 जनवरी 2001) को प्रयाग नूतन तीर्थ पर प्रवेश कर 'विश्वशांति महावीर विधान' पूर्ण करके भगवान के श्रीचरणों में समर्पित किया था। इसमें 2600 अर्घ्य हैं। इनमें प्रत्येक अर्घ्य में रत्न चढ़ाते हुए विधान पूर्ण होता है पुनः 1008 मंत्रों का एक 'वीरगुणसंपद्' विधान बनाया है तथा 108 मंत्रों का "लघु मनोकामना सिद्धि महावीर विधान" बनाया। इसमें पद्यरचना आर्यिका चंदनामती ने बनायी है।

भगवान महावीर मंत्र–

1. **ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय विश्वशांतिकराय सर्वसौख्यं कुरु कुरु ह्रीं नमः।**
2. **ॐ ह्रीं विश्वशांतिकराय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय नमः।**
3. **ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय नमः।**

मनोकामनासिद्धि महावीर व्रत–

इस व्रत में तिथि का कोई बंधन नहीं है। अष्टमी-चतुर्दशी या किसी भी तिथि में कर सकते हैं। इसमें 108 व्रत हैं। उत्कृष्टविधि तो उपवास, मध्यमविधि एक बार अल्पाहार एवं जघन्यविधि में एक बार शुद्ध भोजन/एकाशन करना है। इस व्रत को हजारों नर-नारियों ने तीन वर्ष के अंतर्गत में लिया है एवं अपने-अपने अनेक मनोवांछित सफल किये हैं।

---

[1] चैत्यभक्ति।

कुण्डलपुर में नाथवन में दीक्षामुद्रा की प्रतिमा

श्री महावीर मंदिर के नीचे के 'महावीर ज्योति भवन' में भगवान महावीर की दीक्षा मुद्रा की मूर्ति विराजमान है। इनके दाहिनी तरफ मयूर पंखों की पिच्छिका एवं बायीं तरफ कमंडलु हैं। ये पिच्छी संयम का उपकरण एवं कमंडलु शौच का उपकरण है। यद्यपि तीर्थंकर प्रभु के दीक्षा लेते ही मनःपर्ययज्ञान प्रगट हो जाता है तथा जन्म से ही उनके मलमूत्र नहीं होता है फिर भी ये अर्हंत मुद्रा/जिनमुद्रा के चिन्ह हैं अतः इनकी स्थापना की जाती है।

भगवान महावीर ने तीस वर्ष तक कुण्डलपुर में नंद्यावर्त महल में निवास किया था। विवाह के लिए किये गये माता-पिता के अत्यधिक आग्रह को स्वीकार न करके राज्यभार को भी नहीं स्वीकारा था।

एक दिन उन्हें मतिज्ञानावरण के क्षयोपशम विशेष से 'आत्मज्ञान'[1] प्रगट हो गया और पूर्वभव का स्मरण हो आया, उसी क्षण भगवान बारह भावनाओं का चिंतवन करने लगे। लौकांतिक देवों ने आकर स्तुति की। देवों ने 'चन्द्रप्रभा' पालकी में प्रभु को बिठाया। उस पालकी को पहले भूमिगोचरी राजाओं ने, फिर विद्याधर राजाओं ने पुनः इंद्रों ने उठाया था। दोनों ओर चंवर ढुर रहे थे। इंद्रगण भगवान को 'षण्डवन' में ले गये। तिलोयपण्णत्ति में लिखा है–

मग्गसिरबहुलदसमी अवरण्हे उत्तरासु णाधवणे। तदियखवणम्मि गहिदं महव्वदं वड्ढमाणेण[2]।।

अर्थात् वर्धमान भगवान ने मगसिर कृष्णा दशमी के दिन अपराह्न काल में 'नाथवन' में दीक्षा ली।

वहाँ पहुँचकर भगवान रत्नमयी शिला पर बैठ गये। केशलोंच करके वस्त्र, आभूषण त्याग दिये एवं "नमः सिद्धेभ्यः" मंत्रोच्चारण करके सिद्धों की साक्षीपूर्वक जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहण कर ली। भगवान का प्रथम आहार कूलग्राम के राजा कूल/वकुल के यहाँ हुआ था।

उस मुद्रा की यह मूर्ति गर्भ, जन्म और दीक्षा इन तीन कल्याणकों से (23 फरवरी 04 को) प्रतिष्ठित करके यहाँ विराजमान की गई है।

आहार मुद्रा में विराजमान भगवान महावीर

उत्तरपुराण में लिखा है–

किसी एक दिन राजा चेटक की पुत्री बगीचे में खेल रही थी, उसे देख कोई विद्याधर कामबाण से ग्रसित हो किसी उपाय से उसे लेकर विमान में बिठा कर चला किन्तु अपनी स्त्री के डर से उसे महावन में छोड़ दिया। वहाँ किसी भील ने उसे घर लाकर रखा पुनः कौशाम्बी के सेठ वृषभदत्त को दे दिया।

कभी वृषभदत्त सेठ को चंदना पानी पिला रही थी, उसके केशकलाप गिर पड़े, उन्हें वह चंदना स्वयं अपने हाथ से ऊपर उठा रही थी। सेठानी भद्रा ने उसे शंका की दृष्टि से देखकर उसका शिर मुंडवाकर उसे सांकल से बांध दिया एवं खाने को मिट्टी के सकोरे में कांजी से मिला कोदों का भात दिया करती थी।

किसी समय भगवान महावीर आहारचर्या हेतु इसी वत्स देश की राजधानी कौशाम्बी में आ गये। उन्हें नगरी में प्रवेश करते देखकर सती चंदना उनके सामने जाने लगी। उसी समय उसके सांकल के सब बंधन टूट गये, शिर पर सुंदर केश आ गये, उनमें मालती पुष्प की मालाएं लटकने लगीं, उसके वस्त्र-आभूषण सुंदर हो गये। उसने प्रभु का पड़गाहन किया। उसी क्षण उसका मिट्टी का सकोरा सुवर्णपात्र बन गया और कोदों का भात शाली चावलों की खीर बन गया। उस बुद्धिमती महासती ने विधिवत् नवधाभक्तिपूर्वक भगवान को आहार दिया। तभी देवों ने उसके यहाँ रत्नवृष्टि, पुष्पवृष्टि आदि पंचाश्चर्यों की वृष्टि की।[3] अनन्तर उसके भाई-बहन आदि सभी उससे मिलने आ गये।

श्री महावीर मंदिर के नीचे हॉल में कौशाम्बी में भगवान के आहार का दृश्य दिखलाते हुए यह आहार मुद्रा की मूर्ति यहाँ विराजमान की गई है एवं पास में आहार देने की मुद्रा में महासती चंदना की प्रतिमूर्ति दिखलाई गई है।

ये भगवान गर्भ, जन्म और दीक्षा ऐसे तीन कल्याणकों से (10 फरवरी 2003 को) प्रतिष्ठित हुई हैं। समय-समय

---

1. उत्तरपुराण पृ. 463। 2. तिलोयपण्णत्ति पृ. 226। 3.उत्तरपुराण पृ. 466। पुनः 482 से 493।

पर नवधाभक्तिपूर्वक इन्हें खीर का आहार देकर सभी भव्यजन तीर्थंकर भगवान को आहार देने का पुण्य संचित करते रहें, यही भावना है।

सर्वसिद्धि तीर्थंकर ऋषभदेव जैन मंदिर

भगवान ऋषभदेव की पद्मासन विशाल मूंगे वर्ण वाली अतिशय मनोज्ञ प्रतिमा हस्तिनापुर पहुँच चुकी थीं। जब यहाँ भगवान ऋषभदेव मंदिर का निर्णय हुआ। तब मैंने कहा–अतिशीघ्र ही हस्तिनापुर से भगवान ऋषभदेव को यहाँ ले आवो।

पौष शु. 11 (14 जनवरी 2003) को मध्यान्ह में विशिष्ट ट्राला से प्रतिमा यहाँ आ गईं। इन 14 फुट उत्तुंग प्रतिमा का बड़े हर्षोल्लास के साथ रत्नवृष्टि करते हुए मुखावलोकन किया गया। पुनः निश्चित किये गये स्थान पर वेदीका शिलान्यास कराकर एक चबूतरा बनवाया गया। इस कुण्डलपुर में नंद्यावर्त महल परिसर में सर्वप्रथम भगवान ऋषभदेव ही आये हैं। अतः जो भी यहाँ चमत्कार दृष्टिगोचर हो रहे हैं मैं इन्हीं आदिब्रह्मा श्री ऋषभदेव का ही मानती हूँ।

माघ शु. 6 को सर्वप्रथम क्रेन से निर्धारित वेदी/चबूतरे पर भगवान ऋषभदेव विराजमान हुए हैं। इस प्रतिमा के नीचे अचलयंत्र रखकर इन भगवान को यहाँ महावीर जन्मभूमि में विराजमान किया गया। माघ शु. 6 से 10 (7 से 12 फरवरी तक) हुए पंचकल्याणक महोत्सव में इन भगवान का पंचकल्याणक सम्पन्न हुआ पुनः माघ शु. 10 को भगवान का पंचामृत अभिषेक हुआ। इन प्रतिमा पर दूध की धारा की छवि अद्‌भुत ही दिख रही थी।

भारत में ही क्या सर्वत्र भी जैनधर्म के संस्थापक भगवान महावीर माने जाने लगे थे, पाठ्य पुस्तकों में भी यही पढ़ाया जा रहा था। तभी मैंने सन् 1993 में अयोध्या पहुँचकर भगवान ऋषभदेव की 31 फुट उत्तुंग खड्गासन प्रतिमा का महामस्तकाभिषेक माघ शु. 13 (24 फरवरी 1994) को कराया था। तब से लेकर आज तक शिक्षामंत्री आदि को प्रेरणा देते हुए पाठ्य पुस्तकों में भी संशोधन कराया गया।

9 अप्रैल 1998 को दिल्ली में "भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार" रथ का भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी के करकमलों से भारत भ्रमण हेतु प्रवर्तन कराया गया पुनः 4 फरवरी 2000 को 'भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव" का उद्‌घाटन भी प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी से ही कराया गया। उस विशाल सभा में प्रधानमंत्री ने कहा–"कौन कहता है भगवान महावीर जैनधर्म के संस्थापक हैं। इनसे पूर्व श्री ऋषभदेव आदि तेईस तीर्थंकर हो चुके हैं। हमारे कार्यालय में आज भी तेईसवें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ की प्रतिमा विराजमान है, जिनका परिचय श्री धनंजय जी जैन (वित्तमंत्री) कराते रहते हैं।"

इन्हीं उद्देश्यों को लेकर यहाँ भगवान ऋषभदेव का एक मंदिर बनवाया गया है। इस मंदिर का शिलान्यास अक्षय तृतीया 4 मई 2003 को हुआ। इन विशालकाय भगवान ऋषभदेव का दर्शन करके भक्तगण इस कुण्डलपुर से जैनधर्म की प्राचीनता का परिचय प्राप्त करते रहेंगे।

इस विशाल मंदिर के शिखर पर फाल्गुन शु. 3 (23 फरवरी 2004) को कलशारोहण एवं ध्वजारोहण सम्पन्न हो चुका है। अयोध्या में मैंने 'भगवान ऋषभदेव विधान' की रचना की थी, जो कि एक दिन में किया जाता है। बहुत ही सुन्दर रचना है।

इस मंदिर में प्रवेश करते ही भाक्तिकगण भावविभोर हो एकदम बोल पड़ते हैं। अहो! कितनी सुन्दर प्रतिमा है। तभी यह पंक्तियाँ निकल पड़ती हैं–

"तेरी प्रतिमा इतनी सुंदर तू कितना सुंदर होगा।"

ऋषभदेव मंत्र–

1. ॐ ऋषभाय नमः।

2. ॐ ऋषभाय अमृतविंदवे ठः ठः ठः स्वाहा।

3. ॐ ह्रीं अर्हं श्रीऋषभदेवाय सर्वसिद्धिकराय सर्वसौख्यं कुरु कुरु ह्रीं नमः।

भगवान ऋषभदेव व्रत–

आचार्यश्री जिनसेन द्वारा रचित जिनसहस्रनाम के 1008 नाम के मंत्रों के 1008 व्रत किये जाते हैं तथा भक्तामर स्तोत्र के 48 काव्यों के 48 व्रत किये जाते हैं। जिनमें जाप्य ऋद्धिमंत्रों की जपी जाती है।

THE NAVA-GRAHA TIRTHANKARAS

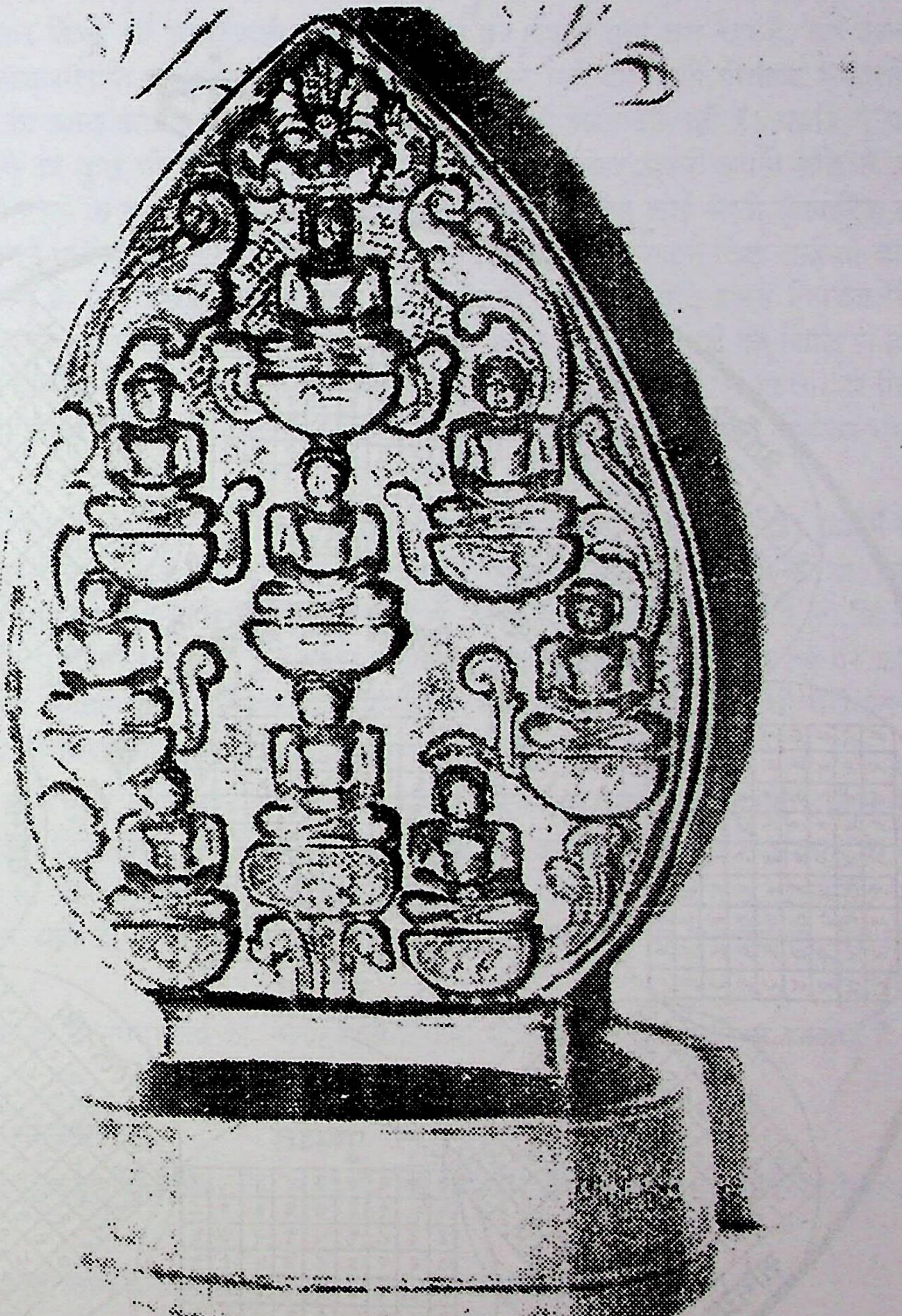

बेलगाँव – कमल बसदि : नवग्रह-प्रतिमा का पाषाणपट्ट, अठारहवीं शती।

Enshrined in the Jain Temple called Kamala Basadi at Belgaum in Karnataka, the betel-leaf shaped plaque in metal is a very type of representation. It is ten inches high and belongs to circa eleventh century A.D. The Tirthankara figures have their cognizances shown on the seat. Each of them presides over one of the NAVA-GRAHAS or NINE PLANETS.

PUSHPADANTA alias SUVIDHINATHA, the ninth Tirthankara (alligator cognizance) for SHUKRA, the sixth Planet (centre, thenclock wise); MALLINATHA, the nineteenth Tirthankara (Pitcher cognizance) for BUDHA, the fourth planet; NEMINATHA, the twenty-second (conch-shell) for Rahu, the seventh; PARSHVANATHA, the twenty-third (snake) for KETU, the ninth.

PADMAPRABHA, the sixth (lotus flower) for SURYA, the first; CHANDRAPRABHA, the eighth (half-moon) for CHANDRA, the second; VASUPUJYA, the twelfth (buffalo) for MANGALA, the third; MUNISUVRATANATHA, the twentieth (tortoise) for SAN, the seventh and MAHAVIRA, the twenty-fourth (lion) for GURU, the fifth.

नवग्रह यंत्र

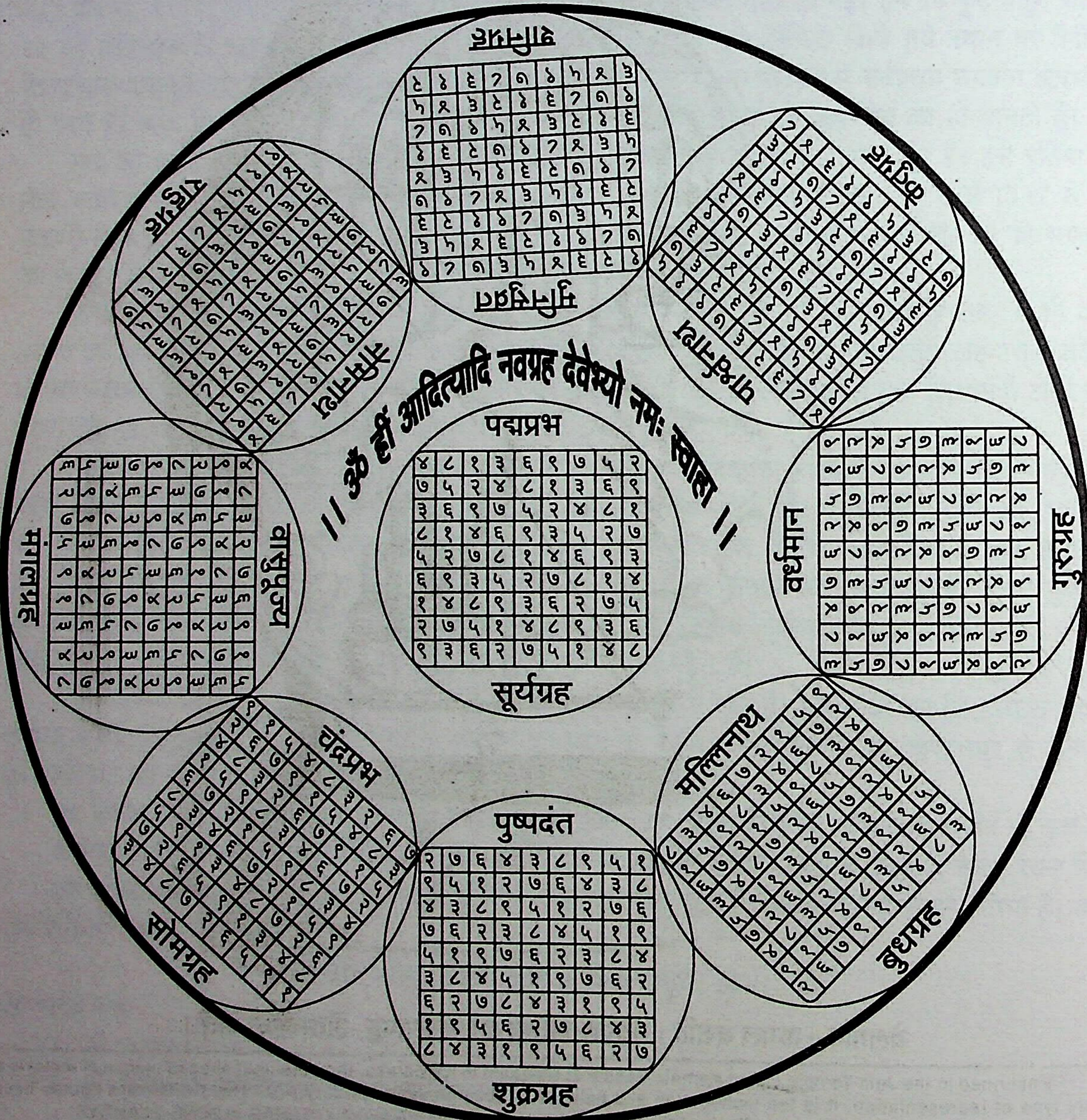
॥ ॐ ह्रीं आदित्यादि नवग्रह देवेभ्यो नमः स्वाहा ॥
पद्मप्रभ
सूर्यग्रह
शनिग्रह
मुनिसुव्रत
केतुग्रह
पार्श्वनाथ
गुरुग्रह
वर्धमान
मल्लिनाथ
बुधग्रह
पुष्पदंत
शुक्रग्रह
चंद्रप्रभ
सोमग्रह
वासुपूज्य
मंगलग्रह
राहुग्रह
नेमिनाथ

नवग्रहशांति जिन मंदिर

नवग्रहस्तोत्र को पढ़ने की एवं नवग्रह विधान को करने की परंपरा जैन समाज में हमेशा से चली आ रही है। ज्योतिषी पंडितों के कहे अनुसार किसी की जन्मकुंडली में कौन से ग्रहों का अशुभ योग चल रहा है, यह जानकर जैन बंधु भी गुरुओं के पास आकर शांति का उपाय पूछते हैं तब उन्हें उन-उन ग्रहों के स्वामी तीर्थंकर भगवंतों की पूजा करने का एवं मंत्र जपने का उपाय बताया जाता है। यह व्यवस्था प्राचीन है आज की नहीं है। यद्यपि ये ग्रह– सूर्य, चंद्रमा, शनि आदि किसी का कुछ भी बिगाड़ या सुधार नहीं करते हैं। ये सब अपनी-अपनी गति से गमन कर रहे हैं। फिर भी ये संसारी लोगों के सुख-दुःख में निमित्त अवश्य बन जाते हैं। जैसे कोई श्रेष्ठी व्यापारिक कार्य के लिए प्रस्थान कर रहे हैं, सामने यदि मोर नाचते हुए दिख जाए या मंगल कलश आदि शकुन दिख जावे तो व्यापार में लाभ हो जाता है, जिस कार्य के लिए प्रस्थान है उस कार्य की सिद्धि हो जाती है। यदि इससे विपरीत किसी के प्रस्थान के समय सामने बिल्ली आ जावे, रोने लगे आदि, तो प्रस्थान करने वालों के कार्यों की सिद्धि न होकर हानि देखी जाती है। इसमें न तो मोर ने कुछ सोचा, न कुछ किया। न बिल्ली ने कुछ सोचा, न किया। ये निमित्त मात्र हैं। वैसे ही इन ग्रहों की गति का योग समझना चाहिए। फिर भी अशुभ योग की शांति के लिए तीर्थंकर भगवंतों की पूजा ही सक्षम है।

लगभग दश वर्ष पूर्व मेरे मन में नवग्रहशांति जिनमंदिर को बनवाने की भावना जाग्रत हुई थी। तब मैंने इस विषय में ग्रंथों का अवलोकन शुरू किया। एक ग्रंथ में नवग्रह यंत्र उपलब्ध हुआ जो कि नव भगवंतों का था, देखकर प्रसन्नता हुई। तभी मैंने उस आधार से ताम्रपट्ट पर 'नवग्रहशांतियंत्र' में नव भगवंतों के चरण बनवाये जो कि अनेक मंदिरों में विराजमान किये गये। पुनः हस्तिनापुर त्रिमूर्ति मंदिर में एक अष्ट दल का कमल बनवाकर उस पर कर्णिका समेत धातु के 5-5 इंची के नव भगवान विराजमान कराये। मांगीतुंगी में सुधबुध गुफा के पास भी मेरी प्रेरणा से नवग्रह के भगवंतों के नव चरण विराजमान हुए हैं।

पुनः भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर में नंद्यावर्त महल परिसर में एक 'नवग्रहशांति जिन मंदिर' बनाया गया। इसमें नव भगवान विराजमान किये गये हैं। साथ ही प्रयत्न करने पर दक्षिण से नवग्रह के स्वामी नव प्रतिमाओं का एक चित्र भी प्राप्त हुआ। यह चित्र 'भारत के दिगम्बर जैन तीर्थ' भाग-5, कर्नाटक पुस्तक में भी उपलब्ध हुआ है। जिसे यहाँ दे रहे हैं। इन्हीं नव भगवन्तों के नव-नव मंत्र भी उपलब्ध हुए हैं। उन्हें भी यहाँ दे रहे हैं।

मैंने सन् 1999 में इन नवग्रहों के नवभगवंतों का 'नवग्रहशांति विधान' भी आर्यिका चंदनामती से बनवाया है जो कि प्रकाशित हो चुका है।

नवग्रह शांतिकर नवतीर्थंकर भगवान–

श्री जिनसागरसूरि रचित नवग्रहशांति विधान है। उसमें भी एक-एक ग्रहों की शांति हेतु एक-एक तीर्थंकर के नाम हैं। यथा–

अर्के पद्मप्रभश्चैव, सोमे चन्द्रप्रभस्तथा। मंगले वासुपूज्यश्च बुधे मल्लिजिनेश्वरः।।1।।
गुरौ तु वर्धमानश्च शुक्रे पुष्पजिनेश्वरः। राहौ नेमिजिनेंद्रः स्याच्छनौ च मुनिसुव्रतः।।2।।
केतौ तु पार्श्वनाथश्चेत्येते नवग्रहाधिपाः। कल्याणं संततं कुर्युः भव्यं भव्यैकसंहतेः।।3।।

सूर्य ग्रह के लिए पद्मप्रभ, सोमग्रह के लिए चंद्रप्रभ, मंगलग्रह हेतु वासुपूज्य, बुधग्रह के लिए मल्लिनाथ, गुरुग्रह हेतु वर्धमान, शुक्रग्रह हेतु पुष्पदंतनाथ, शनिग्रह हेतु मुनिसुव्रतनाथ, राहुग्रह हेतु नेमिनाथ एवं केतुग्रह के लिए पार्श्वनाथ भगवान हैं। ये इन नवग्रहों के स्वामी माने हैं।

इनके बृहद् नवमंत्र अन्यत्र उपलब्ध हैं–

1. ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पद्मप्रभतीर्थंकराय कुसुमयक्षमनोवेगायक्षीसहिताय ॐ आं क्रौं ह्रीं हः आदित्यमहाग्रह!

मम (..........[1]) सर्वदुष्टग्रहरोगकष्टनिवारणं कुरु कुरु सर्वशांतिं कुरु कुरु सर्वसमृद्धिं कुरु कुरु इष्टसंपदां कुरु कुरु अनिष्टनिवारणं कुरु कुरु धनधान्यसमृद्धिं कुरु कुरु काममांगल्योत्सवं कुरु कुरु हूँ फट् स्वाहा। (7000 जाप्य)

अथवा–

1. ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पद्मप्रभतीर्थंकराय कुसुमयक्षमनोवेगायक्षीसहिताय ॐ आं क्रौं ह्रीं ह्रः आदित्यमहाग्रह मम (.........) दुष्टग्रहरोगकष्टनिवारणं सर्वशांतिं च कुरु कुरु हूँ फट् स्वाहा। (7000 जाप्य)

2. ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते चन्द्रप्रभतीर्थंकराय विजययक्षज्वालामालिनीयक्षीसहिताय ॐ आं क्रौं ह्रीं ह्रः सोममहाग्रह! मम (......) दुष्टग्रहरोगकष्टनिवारणं सर्वशांतिं च कुरु कुरु हूँ फट् स्वाहा। (11000 जाप्य)

3. ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते वासुपूज्यतीर्थंकराय षण्मुखयक्षगांधारीयक्षीसहिताय ॐ आं क्रौं ह्रीं ह्रः कुजमहाग्रह! मम (......) दुष्टग्रहरोगकष्टनिवारणं सर्वशांतिं च कुरु कुरु हूँ फट् स्वाहा। (10000 जाप्य)

4. ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते मल्लिनाथतीर्थंकराय कुबेरयक्षअपराजितायक्षीसहिताय ॐ आं क्रौं ह्रीं ह्रः बुधमहाग्रह! मम (......) दुष्टग्रहरोगकष्टनिवारणं सर्वशांतिं च कुरु कुरु हूँ फट् स्वाहा। (14000 जाप्य)

5. ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते वर्धमानतीर्थंकराय मातंगयक्षसिद्धायिनीयक्षीसहिताय ॐ आं क्रौं ह्रीं ह्रः गुरुमहाग्रह! मम (......) दुष्टग्रहरोगकष्टनिवारणं सर्वशांतिं च कुरु कुरु हूँ फट् स्वाहा। (19000 जाप्य)

6. ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पुष्पदंतनाथतीर्थंकराय अजितयक्षमहाकालीयक्षीसहिताय ॐ आं क्रौं ह्रीं ह्रः शुक्रमहाग्रह! मम (......) दुष्टग्रहरोगकष्टनिवारणं सर्वशांतिं च कुरु कुरु हूँ फट् स्वाहा। (16000 जाप्य)

7. ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते मुनिसुव्रतनाथतीर्थंकराय वरुणयक्षबहुरूपिणीयक्षीसहिताय ॐ आं क्रौं ह्रीं ह्रः शनिमहाग्रह! मम (......) दुष्टग्रहरोगकष्टनिवारणं सर्वशांतिं च कुरु कुरु हूँ फट् स्वाहा। (23000 जाप्य)

8. ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते नेमिनाथतीर्थंकराय सर्वाण्हयक्षकूष्माण्डीयक्षीसहिताय ॐ आं क्रौं ह्रीं ह्रः राहुमहाग्रह! मम (......) दुष्टग्रहरोगकष्टनिवारणं सर्वशांतिं च कुरु कुरु हूँ फट् स्वाहा। (18000 जाप्य)

9. ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते पार्श्वनाथतीर्थंकराय धरणेन्द्रयक्षपद्मावतीयक्षीसहिताय ॐ आं क्रौं ह्रीं ह्रः केतुमहाग्रह! मम (......) दुष्टग्रहरोगकष्टनिवारणं सर्वशांतिं च कुरु कुरु हूँ फट् स्वाहा। (7000 जाप्य)

इनके लघु मंत्र भी इस प्रकार हैं–

1. ॐ ह्रीं सूर्यग्रहारिष्टशान्तिकराय श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय नमः।
2. ॐ ह्रीं सोमग्रहारिष्टशान्तिकराय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय नमः।
3. ॐ ह्रीं मंगलग्रहारिष्टशान्तिकराय श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय नमः।
4. ॐ ह्रीं बुधग्रहारिष्टशान्तिकराय श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय नमः।
5. ॐ ह्रीं गुरुग्रहारिष्टशान्तिकराय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय नमः।
6. ॐ ह्रीं शुक्रग्रहारिष्टशान्तिकराय श्रीपुष्पदन्तनाथजिनेन्द्राय नमः।
7. ॐ ह्रीं शनिग्रहारिष्टशान्तिकराय श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय नमः।
8. ॐ ह्रीं राहुग्रहारिष्टशान्तिकराय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय नमः।
9. ॐ ह्रीं केतुग्रहारिष्टशान्तिकराय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमः।

णमोकार महामंत्र के एक-एक पद भी एक-एक ग्रह की शांति के लिए माने गये हैं, जो कि सूर्य, चन्द्र आदि के नंबर से दिये गये हैं–

1. ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं। (7000 जाप्य)

---

[1] यहाँ जिनके लिए मंत्र जपना है, षष्ठी विभक्ति लगाकर उनका नाम लेना चाहिए। जैसे 'प्रकाशचन्द्रस्य' आदि।

2. ॐ ह्रीं णमो अरिहंताणं। (11000 जाप्य)
3. ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं। (10000 जाप्य)
4. ॐ ह्रीं णमो उवज्झायाणं। (14000 जाप्य)
5. ॐ ह्रीं णमो उवज्झायाणं। (19000 जाप्य)
6. ॐ ह्रीं णमो उवज्झायाणं। (10000 जाप्य)
7. ॐ ह्रीं णमो लोए सव्वसाहूणं। (23000 जाप्य)
8. ॐ ह्रीं णमो लोए सव्वसाहूणं। (18000 जाप्य)
9. ॐ ह्रीं णमो लोए सव्वसाहूणं। (10000 जाप्य)

सर्वत्र 'जिनवाणी' एवं 'पूजा पाठ प्रदीप' आदि में नवग्रहों के स्वामी चौबीसों तीर्थंकर माने हैं। इन्हें भिन्न-भिन्न ग्रहों में विभक्त किया है–

अथ नवग्रहशांति स्तोत्रम्

जगद्गुरुं नमस्कृत्य श्रुत्वा सद्गुरुभाषितम्।
ग्रहशांतिं प्रवक्ष्यामि लोकानां सुखहेतवे।।1।।
जिनेन्द्राः खेचरा ज्ञेयाः, पूजनीया विधिक्रमात्।
पुष्पैर्विलेपनैर्धूपैर्नैवेद्यैस्तुष्टिहेतवे।।2।।
पद्मप्रभस्य मार्तण्डश्चन्द्रः चन्द्रप्रभस्य च।
वासुपूज्यस्य भूपुत्रो बुधश्चाष्टजिनेशिनाम् ।।3।।
विमलानन्तधर्माराः-शांतिःकुंथुर्नमिस्तथा।
वर्धमानजिनेन्द्रस्य पादपद्मं बुधो नमेत् ।।4।।
ऋषभाजितसुपार्श्वाः साभिनंदनशीतलौ।
सुमतिः संभवस्वामी, श्रेयसश्च वृहस्पतिः।।5।।
सुविधिः कथितः शुक्रे, सुव्रतश्च शनिश्चरे।
नेमिनाथो भवेद् राहोः केतुश्चमल्लिपार्श्वयोः।।6।।
जन्मलग्नं च राशिश्च, यदि पीडयंति खेचराः।
तदा संपूजयेत् धीमान्, खेचरान् सह तान् जिनान् ।।7।।
आदित्यसोममंगल-बुधगुरुशुक्राः शनिः।
राहुकेतुमेरवाग्रे[1] यो जिनपूजाविधायकः।।8।।
जिनागारे गतः कृत्वा, ग्रहाणां तुष्टिहेतवे।
नमस्कारशतं भक्त्या जपेदष्टोत्तरं शतम् ।।9।।
भद्रबाहुगुरुर्वाग्मी पंचमः श्रुतकेवली।
विद्याप्रसादतः[2] पूर्वं ग्रहशांतिः विधिः कृता।।10।।
यः पठेत् प्रातरुत्थाय शुचिर्भूत्वा समाहितः।
विपत्तितो भवेच्छांतिः क्षेमं तस्य पदे पदे।।11।।

भावार्थ–सूर्यग्रह की शांतिहेतु पद्मप्रभ, सोमग्रह के लिए चन्द्रप्रभ, मंगलग्रह शांति हेतु वासुपूज्य, बुधग्रह के लिए श्री विमल, अनंत, धर्म, शांति, कुंथु, अर, नमि एवं वर्धमान ये आठ तीर्थंकर हैं। गुरुग्रह हेतु श्री ऋषभदेव, अजित, संभव, अभिनंदन, सुमति, सुपार्श्व, शीतल और श्रेयांस ये आठ तीर्थंकर हैं। शुक्रग्रह हेतु पुष्पदंतनाथ, शनिग्रह शांति हेतु

---

[1] यह पाठ समझ में नहीं आया है। [2] विद्यानुवादतः इत्यपि पाठः लभ्यते।

मुनिसुव्रतनाथ, राहुग्रह हेतु नेमिनाथ तथा केतुग्रह हेतु मल्लिनाथ एवं पार्श्वनाथ ये दो तीर्थंकर कहे गये हैं। यदि सूर्य, सोम आदि ये ग्रह अनिष्टकारक हों तो उपर्युक्त तीर्थंकरों की पूजा करना चाहिए।

श्रीभद्रबाहु महामुनि पांचवें श्रुतकेवली हुए हैं। उनके प्रसाद से यह ग्रहशांति विधि प्राप्त हुई है। जो भव्य प्रातः इस ग्रहशांति स्तोत्र को पढ़ते हैं, वे विपत्ति से छुटकारा पाकर पद-पद पर क्षेम-कल्याण प्राप्त करते हैं।

नवग्रहशांति के हेतु नवमंत्र–

1. ॐ ह्रीं क्लीं श्रीं सूर्यग्रहारिष्टनिवारक श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय नमः शांतिं कुरु कुरु स्वाहा। (7000 जाप्य)

2. ॐ ह्रीं क्रौं श्रीं क्लीं चन्द्रग्रहारिष्टनिवारक श्री चन्द्रप्रभजिनेंद्राय नमः शांतिं कुरु कुरु स्वाहा। (11000 जाप्य)

3. ॐ आं क्रौं ह्रीं श्रीं क्लीं भौमग्रहारिष्टनिवारक श्री वासुपूज्यजिनेंद्राय नमः शांतिं कुरु कुरु स्वाहा। (10000 जाप्य)

4. ॐ ह्रीं क्रौं आं श्रीं बुधग्रहारिष्टनिवारक-श्रीविमलानंतधर्मशांति-कुंथु-अरनमिवर्धमानाष्टजिनेंद्रेभ्यो नमः शांतिं कुरु कुरु स्वाहा। (8000 जाप्य)

5. ॐ आं क्रौं ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं गुरुग्रहारिष्टनिवारक-ऋषभाजितसंभवाभिनंदनसुमति सुपार्श्वशीतलश्रेयांसाष्टजिनेंद्रेभ्यो नमः शांतिं कुरु कुरु स्वाहा। (19000 जाप्य)

6. ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ह्रीं शुक्रग्रहारिष्टनिवारक श्रीपुष्पदंतजिनेन्द्राय नमः शांतिं कुरु कुरु स्वाहा। (11000 जाप्य)

7. ॐ ह्रीं क्रौं ह्रः श्रीं शनिग्रहारिष्टनिवारक-श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय नमः। (23000 जाप्य)

8. ॐ ह्रीं क्लीं श्रीं ह्रः राहुग्रहारिष्टनिवारक श्रीनेमिनाथजिनेंद्राय नमः। (18000 जाप्य)

9. ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं केतुग्रहारिष्टनिवारक श्रीमल्लिनाथपार्श्वनाथजिनेन्द्राभ्यां नमः। (7000 जाप्य)

इस प्रकार इन दोनों-नवग्रह स्तोत्र, मंत्र व विधान को प्रमाणीक मानकर पूजा, मंत्र आदि करते रहना चाहिए।

नवग्रह व्रत विधि–

वर्ष में तीन बार आष्टान्हिक पर्व आता है। उन्हीं पर्वों में एक दिन पहले से यह व्रत किया जाता है। जैसे कि आषाढ़ शुक्ला सप्तमी से आषाढ़ शु. पूर्णिमा तक। कार्तिक शु. सप्तमी से पूर्णिमा तक एवं फाल्गुन शु. 7 से पूर्णिमा तक ऐसे वर्ष में तीन बार यह व्रत करना चाहिए। अधिकतम यह व्रत नव वर्ष तक 27 बार अथवा कम से कम तीन वर्ष 3×3=9 बार यह व्रत किया जाता है। इस व्रत में पूर्व में कहे गये मंत्रों की क्रम से जाप्य करना चाहिए एवं 'नवग्रह पूजा विधान' से एक-एक पूजाएं करना चाहिए। व्रत पूर्ण होने पर यथाशक्ति उद्यापन करना चाहिए।

इस प्रकार जो इन नवग्रहों की शांति के लिए जाप्य, पूजा एवं व्रत आदि करते हैं वे निश्चित ही अपने सर्व ग्रहों को अनुकूल, सिद्धिकारक बनाकर संसार के सर्वसुखों को प्राप्त कर परंपरा से मोक्ष को भी प्राप्त करेंगे।

इस मंदिर का शिलान्यास 9 फरवरी 2003 को एवं भगवन्तों की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा आषाढ़ शु. 10 (9 जुलाई 2003) को हुई है पुनः नवग्रहशांति मंदिर में भगवान विराजमान होकर मंदिर के शिखर पर कलशारोहण 23 फरवरी 2004 को हुआ है।

कुण्डलपुर में स्थित यह नवग्रहशांति जिनमंदिर सभी भव्यजनों की सुख, शांति करने वाला होवे, यही मंगलकामना है।

त्रिकाल चौबीसी तीर्थंकर मंदिर

जैनधर्म शाश्वत है, अनादिनिधन है, सार्वभौम है एवं विश्वधर्म है। क्योंकि-'कर्मारातीन् जयतीति जिनः' जो कर्म शत्रुओं को जीतते हैं वे 'जिन' कहलाते हैं तथा 'जिनो देवता अस्येति जैनः' इस व्युत्पत्ति के अनुसार जो जिनभगवान के उपासक हैं वे 'जैन' कहलाते हैं।

इसी प्रकार से 'धर्मतीर्थं करोतीति तीर्थंकरः' धर्मतीर्थ के करने वाले तीर्थंकर कहलाते हैं। सम्यग्दर्शन, ज्ञान और चारित्र ही धर्म है-"सद्दृष्टिज्ञानवृत्तानि धर्मं धर्मेश्वराः विदुः।" अथवा–

'अहिंसा परमो धर्मः।' 'अहिंसा भूतानां जगति विदितं ब्रह्म परमम्।'

इस व्याख्या के अनुसार तीर्थंकर परंपरा भी शाश्वत है। अनादिकाल से चली आ रही है और अनंतकाल तक चलती रहेगी।

इस विषय को सिद्ध करने के लिए यहाँ यह "त्रिकाल चौबीसी मंदिर" बनवाया गया है।

यद्यपि ढाई द्वीप के एक सौ साठ (160) विदेहों में हमेशा तीर्थंकर होते रहते हैं क्योंकि वहाँ सदैव चतुर्थकाल ही रहता है। फिर भी भरतक्षेत्र एवं ऐरावत क्षेत्रों में षट्काल परिवर्तन होते रहने से प्रत्येक चतुर्थकाल में चौबीस-चौबीस तीर्थंकर होते हैं।

काल के दो भेद हैं–अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी। इनमें से प्रत्येक के छह-छह भेद होते हैं–सुषमासुषमा, सुषमा, सुषमादुःषमा, दुषमासुषमा, दुषमा और अतिदुःषमा। इससे उल्टे प्रथम अतिदुःषमा से लेकर सुषमासुषमा तक छह कालों का परिवर्तन उत्सर्पिणी काल में होता है। पूर्व में उत्सर्पिणी के चतुर्थ काल में चौबीस तीर्थंकर हुए हैं।

भूतकालीन चौबीस तीर्थंकरों के नाम–

1. श्री निर्वाणनाथ 2.श्री सागरनाथ 3. श्री महासाधुनाथ 4. श्री विमलप्रभनाथ 5. श्री श्रीधरनाथ 6. श्री सुदत्तनाथ 7. श्री अमलप्रभनाथ 8. श्री उद्धरनाथ 9. श्री अंगिरनाथ 10. श्री सन्मतिनाथ 11. श्री सिंधुनाथ 12. श्री कुसुमांजलिनाथ 13. श्री शिवगणनाथ 14. श्री उत्साहनाथ 15. श्री ज्ञानेश्वरनाथ 16. श्री परमेश्वरनाथ 17. श्री विमलेश्वरनाथ 18. श्री यशोधरनाथ 19. श्री कृष्णमतिनाथ 20. श्री ज्ञानमतिनाथ 21. श्री शुद्धमतिनाथ 22. श्री श्रीभद्रनाथ 23. श्री अतिक्रांतनाथ 24. श्री शांतिनाथ।

पुनः अवसर्पिणीकाल आया, इसे 'हुंडावसर्पिणी' संज्ञा है। इसमें कुछ अघटित घटनाएं भी हुई हैं। यथा–तृतीय काल के अंत में ही प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव हो गये हैं।

वर्तमानकालीन चौबीस तीर्थंकरों के नाम–

1. श्री ऋषभदेव 2. श्री अजितनाथ 3. श्री संभवनाथ 4. श्री अभिनंदननाथ 5. श्री सुमतिनाथ 6. श्री पद्मप्रभनाथ 7. श्री सुपार्श्वनाथ 8. श्री चन्द्रप्रभनाथ 9. श्री पुष्पदंतनाथ 10. श्री शीतलनाथ 11. श्री श्रेयांसनाथ 12. श्री वासुपुज्यनाथ 13. श्री विमलनाथ 14. श्री अनंतनाथ 15. श्री धर्मनाथ 16. श्री शांतिनाथ 17. श्री कुंथुनाथ 18. श्री अरनाथ 19. श्री मल्लिनाथ 20. श्री मुनिसुव्रतनाथ 21. श्री नमिनाथ 22. श्री नेमिनाथ 23. श्री पार्श्वनाथ 24. श्री महावीर स्वामी।

इनमें से प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव ने कर्मभूमि के आदि में प्रजा को असि, मषि, कृषि, विद्या, वाणिज्य और शिल्प इन षट्क्रियाओं का उपदेश देकर प्रजा को जीने की कला सिखाई पुनः अहिंसा धर्म का उपदेश देकर मोक्षमार्ग दिखलाया अतः ये आदिब्रह्मा, युगस्रष्टा आदि कहलाये हैं। इन प्रथम तीर्थंकर के आदिनाथ, ऋषभदेव, वृषभदेव, पुरुदेव आदि अनेक नाम प्रसिद्ध हैं।

इस वर्तमान अवसर्पिणी के चतुर्थकाल के अंत में अर्थात् 2602 वर्ष पूर्व अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी हुए हैं। ये भी इस काल की अपेक्षा अंतिम हैं किन्तु इन्होंने आगे की तीर्थंकर परंपरा चालू कर दी है अर्थात् इनके समवसरण के मुख्य श्रोता राजगृही के सम्राट् महाराजा श्रेणिक ने प्रभु के समवसरण में ही सोलह कारण भावनाओं को भाकर तदनुरूप परिणति करके 'तीर्थंकर प्रकृति' का बंध कर लिया है। आगे वे उत्सर्पिणी के चतुर्थ काल में प्रथम तीर्थंकर 'महापद्म' नाम के होवेंगे। इसी प्रकार श्रीकृष्ण नारायण सोलहवें निर्मलनाथ एवं महादेव चौबीसवें तीर्थंकर अनंतवीर्यनाथ होंगे।

भविष्यत्कालीन चौबीस तीर्थंकरों के नाम–

1. श्री महापद्मनाथ 2. श्री सुरदेवनाथ 3. श्रीसुपार्श्वनाथ 4. श्री स्वयंप्रभनाथ 5. श्रीसंर्वात्मभूतनाथ 6. श्रीदेवपुत्रनाथ 7. श्री कुलपुत्रनाथ 8. श्री उदंकनाथ 9. श्री प्रोष्ठिलनाथ 10. श्री जयकीर्तिनाथ 11. श्री मुनिसुव्रतनाथ 12. श्री अरनाथ 13. श्री निष्पापनाथ 14. श्री निष्कषायनाथ 15. श्री विपुलनाथ 16. श्री निर्मलनाथ 17. श्री चित्रगुप्तनाथ 18. श्री समाधिगुप्तनाथ 19. श्री स्वयंभूनाथ 20. श्री अनिवर्तकनाथ 21. श्री जयनाथ 22. श्री विमलनाथ 23. श्री देवपालनाथ 24. श्री अनंतवीर्यनाथ।

इस मंदिर का शिलान्यास वैशाख शु. 10, 11 मई 2003 को हुआ तथा आषाढ़ शु. पूर्णिमा, 2 जुलाई 2004 को भगवान विराजमान किये गये।

कुण्डलपुर के 'नंद्यावर्त महल' परिसर में यह 'त्रिकाल चौबीसी मंदिर' अपने आप में एक विशाल तीन खण्ड का बना है। इसमें प्रवेश करते ही एक साथ पूरे चौबीसों भगवान के दर्शन हो जाते हैं। नीचे भूतकालीन चौबीसी भगवान विराजमान हैं। द्वितीय खंड में वर्तमानकालीन चौबीसी के दर्शन हो रहे हैं एवं तृतीयखंड में भविष्यत्कालीन भगवंतों के दर्शन हो रहे हैं।

जिनेन्द्रदेव के दर्शन की महिमा का वर्णन षट्खण्डागम ग्रंथ में इस प्रकार है–

"कथं जिणबिंबदंसणं पढमसम्मत्तुप्पत्तीए कारणं?
जिणबिंबदंसणेण णिधत्तणिकाचिदस्स वि मिच्छत्तादिकम्मकलांवस्स खयदंसणादो[1]।"

जिनबिंब का प्रथमसम्यक्त्व की उत्पत्ति में कारण किस प्रकार से है? जिनबिंब के दर्शन से निधत्त और निकाचित रूप भी मिथ्यात्व आदि कर्मसमूह का क्षय देखा जाता है, जिससे जिनबिंब का दर्शन प्रथम सम्यक्त्व की उत्पत्ति का कारण होता है। कहा भी है–

दर्शनेन जिनेंद्राणां पापसंघातकुंजरम् । शतधा भेदमायाति गिरिर्वज्रहतो यथा।।

जिनेन्द्रदेव के दर्शन से पाप समूहरूपी कुंजर के सौ टुकड़े हो जाते हैं, जैसे कि वज्र के गिरने से पर्वत के सौ-सौ टुकड़े हो जाते हैं।

जिनप्रतिमा विराजमान करने का माहात्म्य–

व्रतज्ञानतपोदानैर्यान्युपात्तानि देहिनः। सर्वैस्त्रिष्वपिकालेषु पुण्यानि भुवनत्रये।।
एकस्मादपि जैनेंद्रबिंबाद् भावेन कारितात्। यत्पुण्यं जायते तस्य न संमान्त्यतिमात्रतः।।[2]

तीनों लोकों और तीनों कालों में व्रत, ज्ञान, तप और दान के द्वारा मनुष्य के जो पुण्य कर्म संचित होते हैं वे भावपूर्वक एक प्रतिमा के बनवाने से उत्पन्न हुए पुण्य की बराबरी नहीं कर सकते।

जिनदर्शन का फल–

फलं ध्यानाच्चतुर्थस्य षष्ठस्योद्यममात्रतः। अष्टमस्य तदारंभे गमने दशमस्य तु।।
द्वादशस्य ततः किंचिन्मध्ये पक्षोपवासजं। फलं मासोपवासस्य लभते चैत्यदर्शनात् ।।
चैत्यांगणं समासाद्य याति षण्मासिकं फलं। फलं वर्षोपवासस्य प्रविश्य द्वारमश्नुते।।
फलं प्रदक्षिणीकृत्य भुंक्ते वर्षशतस्य तु। दृष्ट्वा जिनास्यमाप्नोति फलं वर्षसहस्रजं।।
अनंतफलमाप्नोति स्तुतिं कुर्वन् स्वभावतः। नहि भक्तेर्जिनेंद्राणां विद्यते परमुत्तमम् ।।[3]

जो मनुष्य जिनप्रतिमा के दर्शन का चिंतवन करता है वह बेला का, जो चलने का उद्यम करता है वह तेला का, जो जाने का आरंभ करता है वह चौला का, जो जाने लगता है वह पांच उपवास का, जो कुछ दूर पहुँच जाता है वह बारह उपवास का, बीच में पहुँचने पर पंद्रह उपवास का, मंदिर के दर्शन से मासोपवास का, मंदिर के आंगन में प्रवेश करने से छहमास के उपवास का, द्वार में प्रवेश करने से वर्षोपवास का, प्रदक्षिणा देने से सौ वर्ष के उपवास का, जिनेन्द्रदेव के मुख का दर्शन करने से हजार वर्ष के उपवास का और भक्ति से स्तुति करने से अनंत उपवास के फल को प्राप्त करता है। यथार्थ में जिनभक्ति से बढ़कर उत्तम पुण्य नहीं है। ऐसा श्री द्युति आचार्य ने अयोध्या में श्रीरामचंद्र के भाई भरत महाराज को कहा था।

सामान्यतया जिनमंदिरों में विराजमान जिनप्रतिमाओं के दर्शन की जब इतनी महिमा है तब तीर्थंकरों के कल्याणक तीर्थों पर बने हुए जिनमंदिरों की महिमा तो इससे हजारों गुणा अधिक है। ऐसा विश्वास करके भव्यों को दर्शन, पूजन, वंदन आदि करके सातिशय पुण्य संचित करना चाहिए।

---

1. षट्खण्डागम, धवला टीका समन्वित पु. 6, पृ. 427। 2-3. पद्मपुराण भाग 2, श्लोक 174-175। 178 से 182 पृ. 98।

इन त्रिकाल चौबीसी के मंत्र निम्न प्रकार हैं–

1. ॐ ह्रीं त्रैकालिकचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः।

2. ॐ ह्रीं श्रीनिर्वाणनाथजिनेन्द्राय नमः।

ऐसे ही प्रत्येक तीर्थंकर के नाम के साथ प्रारंभ में 'ॐ ह्रीं' एवं अंत में 'जिनेन्द्राय नमः' जोड़ देने से 72 मंत्र बन जाते हैं।

त्रिकाल चौबीसी व्रत विधि–

तीनों काल के चौबीसों तीर्थंकरों के व्रत 72 हो जाते हैं। इनमें तिथि का कोई नियम नहीं है। व्रत के दिन उन-उन तीर्थंकर की जाप्य करनी चाहिए एवं त्रिकाल चौबीसी पूजा करनी चाहिए। व्रत पूर्ण करके यथाशक्ति उद्यापन करना चाहिए।

व्रतविधि में उत्तम तो उपवास है, मध्यम विधि में दूध आदि अल्पाहार एक बार लेना चाहिए एवं जघन्य विधि में शुद्ध एकाशन करना चाहिए।

नंद्यावर्त महल

जैन आगम में भगवान ऋषभदेव के महल का नाम 'सर्वतोभद्र' आया है यह इक्यासी खंड का था। यथा–

सर्वतोभद्रसंज्ञोऽसौ प्रासादः सर्वतो मतः। सैकाशीतिपदः शालवाप्युद्यानाद्यलंकृतः[1]।।4।।

राजा नाभिराज का प्रासाद/महल 'सर्वतोभद्र' था। वह स्वर्णमय खंभे, मणिमयी दीवाल, पुखराज, मूंगा, मोती आदि मालाओं से अलंकृत, इक्यासी खण्ड का था एवं परकोटा, वापी, बाग-बगीचों से शोभायमान था।

ऐसे ही उत्तरपुराण में भगवान महावीर के महल का नाम 'नंद्यावर्त महल' आया है। यथा–

आषाढस्य सिते पक्षे षष्ठ्यां शशिनि चोत्तरा–षाढे सप्ततलप्रासादस्याभ्यंतरवर्तिनि।।253।।

नंद्यावर्तगृहे रत्नदीपिकाभिः प्रकाशिते। रत्नपर्यंकके हंसतूलिकादिविभूषिते[2]।।254।।

आषाढ़ शुक्ला षष्ठी के दिन जब कि चंद्रमा उत्तराषाढ़ा नक्षत्र में था तब राजा सिद्धार्थ की महारानी त्रिशला ने सात खण्ड वाले राजमहल के भीतर रत्नमय दीपकों से प्रकाशित नंद्यावर्त नामक राजभवन में हंसतूलिका आदि से सुशोभित रत्नों के पलंग पर सो रही थीं तभी उन्होंने पिछली रात्रि में सोलह स्वप्न देखे।

इसी कल्पना को लेकर यहाँ जन्मभूमि क्षेत्र का नाम 'नंद्यावर्त महल' रख दिया गया है। यहाँ पर चार मंदिरों के साथ एक 'नंद्यावर्त महल' भी बनाया गया है। बाहर से यह सात खण्ड का दिखता है।

राजा-महाराजाओं के महलों में 'जिनमंदिर' माने गये हैं। उसी के अनुसार यहां पर भी इस नंद्यावर्त महल के ऊपरी खण्ड में 'श्री शांतिनाथ' चैत्यालय बनाया गया है। इसमें शांतिनाथ भगवान की धातु की विशाल 24 इंच की पद्मासन प्रतिमा विराजमान हैं। आजू-बाजू में भगवान चन्द्रप्रभ एवं भगवान पार्श्वनाथ की 18" की प्रतिमाएं विराजमान हैं।

सर्वप्रथम इस महल में कलात्मक सुन्दर धातु के द्वार में प्रवेश करते ही

प्रथम रत्नवृष्टि कक्ष में माता के आंगन में–कुबेर द्वारा रत्नवृष्टि को दिखाने हेतु कुबेर का विमान दिखाया गया है।

पुनः द्वितीय शयनकक्ष में–रत्नमयी पलंग पर सोते हुए माता ने 16 स्वप्न देखे थे। इस विषय को बताने के लिए सुंदर कलात्मक रत्नजटित पलंग रखा गया है।

तृतीय राजदरबार कक्ष में–पिता और माता के सिंहासन रखे हैं। जैसा कि महारानी ने राजदरबार में पहुँच कर पतिदेव द्वारा इंगित पास के सिंहासन पर बैठकर 16 स्वप्नों के फल पूछे थे।

चतुर्थ प्रसूतिगृह कक्ष में–माता का प्रसूतिगृह में पलंग दिखाया गया है। जहाँ पहुँचकर इंद्राणी ने माता को

---

1. हरिवंशपुराण पृ. 146। 2. उत्तरपुराण पृ. 460।

मायामयी नींद में सुलाकर 'जिनबालक' को लेकर बाहर आकर सौधर्म इन्द्र को दिया था। और इंद्र ने ऐरावत हाथी पर बैठकर सुमेरुपर्वत पर ले जाकर पांडुक शिला पर बालक को बिठाकर 1008 कलशों से भगवान का जन्माभिषेक किया था। पुनः 'वीर' और 'वर्धमान' ये दो नाम रखे थे।

पंचम पालना कक्ष में—माता त्रिशला बालक वर्धमान को पालना झुला रही थीं अकस्मात् आकाश मार्ग से ऋद्धिधारी संजय महामुनि और विजय महामुनि वहाँ नंद्यावर्त महल में आ गये उनके मन में कुछ सूक्ष्म शंका थी। जिनबालक का अवलोकन करते ही उनकी शंका का समाधान हो गया। तीर्थंकर बालक का यह प्रभाव देखकर महामुनियों ने उन प्रभु का 'सन्मति' नामकरण किया था। उसी दृश्य का स्मरण कराने के लिए 'पालना' रखा हुआ है और दो महामुनियों की मूर्ति खड्गासन मुद्रा में विराजमान हैं।

ऊपर की मंजिल में छठे परिधान कक्ष में—वर्धमान के पहनने के लिए देवगण स्वर्ग से जो वस्त्र-आभूषण लाते थे। सौधर्म स्वर्ग में मानस्तंभ बने हुए हैं। उन पर रत्नों के पिटारे लटक रहे हैं। वहीं पर तीर्थंकरों के पहनने के लिए वस्त्र एवं आभूषण उत्पन्न होते रहते हैं। इंद्र की आज्ञा से देवगण वहीं से तीर्थंकरों के पहनने हेतु वस्त्रादि सामग्री लाते हैं। इसका स्मरण दिलाने हेतु इस कक्ष में वस्त्र-आभूषण रत्नों के थाल में रखे दिखाये गये हैं।

सप्तम भोजनकक्ष में—रत्न थालों में भोजन सामग्री दिखाई गई है। स्वर्ग में उत्पन्न हुए उन्हीं रत्न पिटारों से तीर्थंकर प्रभु के लिए भोजन सामग्री देवगण लाते थे। भगवान गृहस्थाश्रम में घर का भोजन नहीं करते थे। इसी का स्मरण दिलाने के लिए पाषाणपट्ट पर माता त्रिशला, पिता सिद्धार्थ के साथ वर्धमान बालक को भोजन करते हुए दिखाया गया है।

अष्टम क्रीड़ा कक्ष में—जब बालक 'वीर' अपने कुण्डलपुर के उद्यान में देव बालकों के साथ खेल रहे थे तभी संगम देव उनके धैर्य की परीक्षा हेतु बहुत बड़े नाग का रूप लेकर वृक्ष के तने से लिपट गया और फण उठाकर फुंकारने लगा। कुछ नागरिक बालक डर कर भागने लगे। किंतु बालक वर्धमान बड़े उत्साह व आनंद से पेड़ से उतरते हुए सर्पराज के फण पर पैर रखकर खड़े हो गये और उछल-उछल कर फण पर ही खेलने लगे। मानों वे माता के पलंग पर ही उछल रहे हों। यह देखकर देव ने बहुत भक्ति-स्तुति करके वीर का नाम 'महावीर' रख दिया।

नवम संगीत कक्ष में—बालकों की सभा में संगीत-गीत आदि का दृश्य दिखाया गया है। पुनश्च बाल सभा में देव बालक एवं नागरिक बालकों के अनेक प्रश्नों का उत्तर देते हुए किशोरावस्था में भगवान महावीर को दिखाया गया है।

दशम चर्चा कक्ष में—माता त्रिशला एवं पिता सिद्धार्थ युवा महावीर से बार-बार विवाह करने के लिए आग्रह करते हैं। किन्तु महावीर स्वीकार न करके उन्हें सान्त्वना दे देते हैं। पुनश्च देव युवा साथियों एवं नागरिक युवकों के साथ तत्त्व चर्चा दिखाई गई है।

तृतीय खण्ड में ग्यारहवें उद्‌बोधन कक्ष में—देव बालक एवं नागरिक बालकों को सर्व विद्याओं का ज्ञान कराते हुए तीन लोक के विषय में विस्तार से समझा रहे हैं। इसके प्रतीक में तीन लोक रचना दिखाई गई है। इसमें ऊपर में सिद्धशिला पर सिद्धभगवान विराजमान हैं उनके दर्शन करके अपने मानव जन्म को सफल करना चाहिए।

भव्यों को, भक्तों को समझना चाहिए कि हम सिद्धशिला पर जाकर सिद्ध भगवान के दर्शन करके आ चुके हैं। हमें इस कुण्डलपुर आदि तीर्थ त्रिवेणी के दर्शन करके ऐसी ही सिद्धशिला पर पहुँचकर सिद्ध परमात्मा के रूप में अनंत सिद्धों के मध्य विराजमान होना है। इस मनुष्य पर्याय में ऐसा ही पुरुषार्थ करना है। यह उद्‌बोधन कक्ष है।

बारहवें वैराग्य कक्ष में—भगवान महावीर के वस्त्र-आभूषण उतारे हुए रखे हैं तथा पालकी रखी है। इनसे यह दिखलाना है कि जब महावीर प्रभु को वैराग्य हो गया तब माता-पिता के समझाने पर भी वे नहीं माने। उसी समय लौकांतिक देवों का आगमन हो गया। पुनश्च देवों द्वारा लाई गई 'चन्द्रप्रभा' पालकी में बैठकर 'नाथवन' में पहुँचकर सालवृक्ष के नीचे केशलोंच करके जैनेश्वरी दीक्षा ले ली और ध्यान में खड़े हो गये। तिलोयपण्णत्ति में भगवान महावीर के दीक्षा वन को 'नाथवन' कहा है।

भगवान महावीर ने दीक्षा ग्रहण कर बेला करके सर्वप्रथम 'कूलग्राम' के राजा 'वकुल' के यहाँ आहार लिया था। अनंतर बारह वर्ष के मध्य कौशाम्बी नगरी में महासती चंदना द्वारा आहारग्रहण एवं उज्जयिनी के अतिमुक्तक वन में रुद्र द्वारा किये गये उपसर्ग के विजय में रुद्र द्वारा भक्ति से प्रदत्त 'महति महावीर' या 'अतिवीर' नाम से प्रसिद्ध हुए थे।

बारह वर्ष के बाद जृंभिका ग्राम के निकट ऋजुकूला नदी के किनारे 'सालवृक्ष' के नीचे ध्यानस्थ हुए। तभी केवलज्ञान प्राप्त कर लिया। छ्यासठ दिनों तक समवसरण रचना होती रही किंतु भगवान की दिव्यध्वनि नहीं खिरी। पुनः सौधर्मेन्द्र द्वारा युक्ति से लाये गये गौतम गोत्रीय इन्द्रभूति के आने पर तथा उनके द्वारा दीक्षाग्रहण कर गणधर पद प्राप्त होने पर भगवान की प्रथम देशना/दिव्यध्वनि राजगृही में विपुलाचल पर्वत पर खिरी थी। यह दृश्य भी दिखाया गया है।

अंत में केवली अवस्था में तीस वर्ष तक श्री विहार के अनंतर पावापुरी के सरोवर के मध्य से भगवान ने कार्तिककृष्णा अमावस्या को मोक्ष प्राप्त कर लिया, यह दृश्य दिखाया गया है।

भगवान शांतिनाथआदि के मंत्र–

1. ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथ जिनेन्द्राय नमः। 2. ॐ ह्रीं श्री चंद्रप्रभ जिनेन्द्राय नमः।

3. ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथाय जगत्शांतिकराय सर्वोपद्रवशांतिं कुरु कुरु ह्रीं नमः।

4. ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेंद्राय नमः।

5. ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं धरणेन्द्रपद्मावतीसहिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेंद्राय नमः।

शांतिनाथ व्रत–(निर्दोषसप्तमी व्रत)

भाद्रपद शुक्ला सप्तमी को निर्दोष सप्तमी व्रत क़िया जाता है। इसमें विधिवत् अभिषेक पूजा करके भगवान शांतिनाथ की पूजा करके शांतिनाथ का मंत्र ज़पना चाहिए।

जाप्य–ॐ ह्राँ ह्रीँ सर्वविघ्ननिवारकाय श्रीशांतिनाथस्वामिने नमः स्वाहा।

यह व्रत सात वर्ष तक किया जाता है।

व्रत की विधि–

चन्द्रप्रभव्रत–भाद्रपद शुक्ला षष्ठी को चंदनषष्ठी व्रत किया जाता है इसमें भगवान चन्द्रप्रभ की आराधना कही गई है।

पार्श्वनाथ व्रत–

रविवार व्रत बहुत ही प्रसिद्ध है। आषाढ़ शुक्ला में अंतिम रविवार को व्रत करके श्रावण के चार व भाद्रपद के चार ऐसे नव रविवार को व्रत किया जाता है। यह नव वर्ष तक होता है पुनः शक्ति के अनुसार उद्यापन विधि की जाती है।

व्रत का मंत्र–ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपार्श्वनाथाय नमः।

मोक्षसप्तमी–श्रावण शुक्ला सप्तमी को यह व्रत किया जाता है।

नंद्यावर्त महल का शिलान्यास–आषाढ़ वदी अष्टमी (22 जून सन् 2003) को नंद्यावर्त महल का शिलान्यास सम्पन्न हुआ।

इस महल में शांतिनाथ की वेदी का शिलान्यास ज्येष्ठ शु. 9 (28 मई सन् 2004) को कराया गया।

पुनः आषाढ़ शुक्ला 10 को भगवान शांतिनाथ आदि तीन प्रतिमाओं का प्रथम मुखावलोकन करके वेदी में भगवान को स्थापित करके इसी दिन आषाढ़ शु. 10 को गर्भ कल्याणक विधि करके (28 जून से 2 जुलाई सन् 2004 तक) लघु पंचकल्याणक प्रतिष्ठा प्रारंभ होकर आषाढ़ शु. 15 को सम्पन्न हुई है। इस नंद्यावर्त महल में विराजमान सभी भगवान सारे विश्व की शांति के लिए होवें, यही मंगलकामना है।

जब तक इस विश्व में धर्म का अस्तित्व रहे तब तक यह भगवान महावीर की जन्मभूमि, यहाँ पर स्थित सर्व जिनमंदिर एवं सर्व जिनप्रतिमाएं स्थिर रहें, सर्व जगत् के लिए मंगलकारी होवें। इन सर्वजिन प्रतिमाओं को कोटि-कोटि नमन।

भगवान महावीर स्वामी कीर्तिस्तंभ

(प्राचीन मंदिर परिसर में निर्मित)

कुण्डलपुर में निर्मित इन मंदिरों से अतिरिक्त सर्वप्रथम प्राचीन मंदिर परिसर में मेरी प्रेरणा से 24 मार्च 2002 को 36 फुट उत्तुंग कीर्तिस्तंभ का शिलान्यास हुआ। उसका निर्माण पूर्ण होकर दिनाँक 12 फरवरी 2003 को विशाल पंचकल्याणक प्रतिष्ठा के साथ कीर्तिस्तंभ में भगवान महावीर स्वामी की सवा फुट पद्मासन 8 प्रतिमाएं विराजमान की गई हैं।

मेरी प्रेरणा से कुण्डलपुर विकास के प्रथम चरणरूप में प्रारंभ हुए निर्माणकार्य का प्रतीक इस कीर्तिस्तंभ के द्वारा भगवान महावीर की कीर्ति दशों दिशाओं में सदा प्रसारित हो, यही मंगल कामना है।

कीर्तिस्तंभ में नीचे से ऊपर तक गुलाबी पत्थर में उत्कीर्ण जो मैटर है, वह यहाँ ज्यों का त्यों प्रस्तुत किया जा रहा है–

प्रथम (पश्चिम दिशा)

भगवान महावीर स्वामी कीर्तिस्तंभ

चैत्र शु. त्रयोदशी, वीर नि. सं. 2527, ईसवी सन् 6 अप्रैल 2001 को भारत की राजधानी दिल्ली से प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने "भगवान महावीर 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव" वर्ष का उद्घाटन किया। पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी ने इस वर्ष में भगवान महावीर की वास्तविक जन्मभूमि-कुण्डलपुर (नालंदा) का विकास करने की प्रेरणा प्रदान की। राजधानी दिल्ली से मंगल विहार करके पूज्य माताजी (ससंघ) 29 दिसम्बर 2002 को कुण्डलपुर पहुँचीं।

पूज्य गणिनी माताजी की प्रेरणा, प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी के मार्गदर्शन तथा पीठाधीश क्षुल्लकरत्न श्री मोतीसागर जी महाराज एवं कर्मयोगी ब्र.रवीन्द्र कुमार जैन के निर्देशन में जन्मभूमि विकास की प्रथम श्रृंखला के रूप में 24 मार्च 2002 को इस "भगवान महावीर स्वामी कीर्तिस्तंभ" का शिलान्यास किया गया पुनः संघ के सानिध्य में 7 से 12 फरवरी 2003 तक आयोजित इक्कीसवीं सदी में इस जन्मभूमि पर प्रथम ऐतिहासिक 'पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं महाकुंभ मस्तकाभिषेक महोत्सव' में इस कीर्तिस्तंभ में विराजमान भगवन्तों की प्रतिष्ठा सम्पन्न की गई। अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर के दिव्य सिद्धान्तों एवं इस जन्मभूमि की यशोगाथा को यह कीर्तिस्तंभ युगों-युगों तक दिग्दिगन्तव्यापी बनाता रहे, यही मंगलभावना है।

प्रथम तल (दक्षिण दिशा)

जैनं जयतु शासनम्

विदेह देश की राजधानी कुण्डलपुर (निकट नालंदा) के राजा सर्वार्थ की रानी श्रीमती के पुत्र राजकुमार सिद्धार्थ के साथ सिंधु देश की राजधानी वैशाली के राजा चेटक एवं रानी सुभद्रा की पुत्री त्रिशला का विवाह हुआ था। राजा चेटक के दश पुत्र एवं सात पुत्रियां थीं, जिनमें से त्रिशला बड़ी पुत्री थीं। 2600 वर्ष पूर्व कुण्डलपुर में भगवान महावीर ने जन्म लिया था। वर्तमान अवसर्पिणी के चौबीस तीर्थंकरों में ये अंतिम तीर्थंकर हुए हैं।

इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड में प्रत्येक अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी में चौबीस-चौबीस तीर्थंकर होते रहे हैं और आगे होवेंगे अतः अनंतानंत तीर्थंकर हो चुके हैं और होवेंगे। इसलिए यह जैनधर्म एवं तीर्थंकर परंपरा अनादि अनंत–शाश्वत है।

द्वितीय तल (पूर्व दिशा)

BHAGWAN MAHAVIR : A BRIEF INTRODUCTION

1. QUEEN TRISHLA, THE WIFE OF THE KING OF KUNDALPUR-MAHARAJA SIDDHARTHA GAVE BIRTH TO TIRTHANKAR MAHAVIR ON CHAITRA SHUKLA 13. AFTER PERFORMING HIS JANMABHISHEK (ANNOINTMENT AT BIRTH) AT SUMERU MOUNTAIN, INDRAS GAVE HIM TWO NAMES-'VEER' & 'VARDHAMAN'.

द्वितीय तल (दक्षिण दिशा)

2. SHRI SANJAY & SHRI VIJAY MUNI GAVE THE NAME 'SANMATI' AND SANGAMDEV GAVE THE NAME 'MAHAVIR' DUE TO HIS COURAGEOUS PLAY WITH THE MOST POISONOUS SNAKE. AFTER DEEKSHA, RUDRA GAVE THE NAME 'MAHATIMAHAVIR' ON TESTING HIS PATIENCE AT THE CREMATION GROUND OF UJJAYINI.

द्वितीय तल (पश्चिम दिशा)

3. AFTER 66 DAYS OF ATTAINING KEVALGYAN, INDRABHUTI BRAHMIN OF GAUTAM GOTRAATTAINED THE RANK OF FIRST GANDHAR AFTER TAKING DEEKSHA FROM BHAGWAN, THEN DIVVADHVANI OF BHAGWAN ORIGINATED ON SHRAVAN KRISHNA EKAM AT VIPULACHAL PARVAT.

द्वितीय तल (उत्तर दिशा)

4. AFTER COMPLETION OF THE AGE OF SOME LESS THAN 72 YEARS, BHAGWAN BECAME SIDDHA AT THE DAWN OF KARTIK KRISHNA AMAVASAY FROM THE POND OF PAVAPUR 2529 YEARS BEFORE, SINCE THEN DEEPAWALI FESTIVAL IS BEING CELEBRATED.

तृतीय तल (पूर्व दिशा)

भगवान महावीर : एक संक्षिप्त परिचय

1. कुण्डलपुर के महाराजा सिद्धार्थ की महारानी त्रिशला ने चैत्र शु. 13 को तीर्थंकर महावीर को जन्म दिया। इंद्रों ने सुमेरु पर्वत पर उनका जन्माभिषेक करके 'वीर' और 'वर्द्धमान' ये नाम रखे।

तृतीय तल (दक्षिण दिशा)

2. श्री संजय एवं श्री विजयमुनि ने 'सन्मति' एवं सर्प के ऊपर निर्भय क्रीड़ा करने से संगमदेव ने 'महावीर' नाम रखा। दीक्षा के अनंतर उज्जयिनी के श्मशान में प्रभु पर उपसर्ग करके उनके धैर्य की परीक्षा के बाद रुद्र ने 'महतिमहावीर' नाम रखा।

तृतीय तल (पश्चिम दिशा)

3. केवलज्ञान के छ्यासठ दिन बाद गौतम गोत्रीय इन्द्रभूति ब्राह्मण ने प्रभु से दीक्षा लेकर प्रथम गंणधर का पद प्राप्त किया, तब विपुलाचल पर्वत पर श्रावण कृ. एकम को भगवान की दिव्यध्वनि खिरी थी।

तृतीय तल (उत्तर दिशा)

4. कुछ दिन कम 72 वर्ष की आयु पूर्ण होने पर भगवान ने पावापुर के सरोवर से 2529 वर्ष पूर्व कार्तिक कृ. अमावस्या के प्रभात में सिद्धपद प्राप्त कर लिया, तभी से दीपावली पर्व चला है।

चतुर्थ तल (पूर्व दिशा)

जैनधर्म का मूलमंत्र

णमो
अरिहंताणं
णमो
सिद्धाणं
णमो
आयरियाणं
णमो
उवज्झायाणं
णमो
लोए सव्व साहूणं

चतुर्थ तल (दक्षिण दिशा)

BASIC MANTRA OF JAIN DHARMA

ṆAMO
ARIHANTAṆAM
ṆAMO
SIDDHAṆAM
ṆAMO
AAIRIYAṆAM
ṆAMO
UVAJJHAYAṆAM
ṆAMO
LOE SAVVA SAHUṆAM

चतुर्थ तल (पश्चिम दिशा)

जैनधर्म के चौबीस तीर्थंकर

1. श्री ऋषभदेव जी
2. श्री अजितनाथ जी
3. श्री संभवनाथ जी
4. श्री अभिनन्दननाथ जी
5. श्री सुमतिनाथ जी
6. श्री पद्मप्रभनाथ जी
7. श्री सुपार्श्वनाथ जी
8. श्री चन्द्रप्रभनाथ जी
9. श्री पुष्पदंतनाथ जी
10. श्री शीतलनाथ जी
11. श्री श्रेयांसनाथ जी
12. श्री वासुपूज्यनाथ जी

चतुर्थ तल (उत्तर दिशा)

13. श्री विमलनाथ जी
14. श्री अनंतनाथ जी
15. श्री धर्मनाथ जी
16. श्री शांतिनाथ जी
17. श्री कुंथुनाथ जी
18. श्री अरनाथ जी
19. श्री मल्लिनाथ जी
20. श्री मुनिसुव्रतनाथ जी
21. श्री नमिनाथ जी
22. श्री नेमिनाथ जी
23. श्री पार्श्वनाथ जी
24. श्री महावीर स्वामी जी

महावीर तीर्थ त्रिवेणी संगम

भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर में रहते हुए मुझे 'तीर्थ त्रिवेणी संगम' में अवगाहन करने का एक अपूर्व सुयोग प्राप्त हुआ है।

कुण्डलपुर—महाराजा सिद्धार्थ की इस राजधानी कुण्डलपुर में 2603 वर्ष के पंद्रह महिने पूर्व इन्द्र की आज्ञा से कुबेर ने रत्नों की वर्षा की थी। भगवान महावीर का जन्मोत्सव, उनके 'सन्मति' 'महावीर' आदि नाम इसी भूतल पर प्रसिद्ध हुए हैं अतः तीर्थंकरों की जन्मभूमियाँ इन्द्रों द्वारा तो पूज्य हुई ही हैं, महामुनियों द्वारा भी स्तुत्य रही हैं।

राजगृही—आज से कुछ अधिक बारह लाख वर्ष पूर्व यहाँ पर जैन धर्म के बीसवें तीर्थंकर भगवान मुनिसुव्रत ने जन्म लिया था। यहीं पर प्रभु ने दीक्षा ली थी एवं यहीं पर केवलज्ञान प्राप्त किया था अतः यहाँ पर राजगृही में सर्वप्रथम मुनिसुव्रतनाथ भगवान का समवसरण रचा गया था, पुनः भगवान महावीर के समवसरण को रचा गया एवं भगवान की प्रथम दिव्य ध्वनि खिरी जिसके उपलक्ष्य में 2561 वर्ष पूर्व से श्रावण कृष्णा एकम का मंगल दिवस 'वीरशासन जयंती' पर्व के रूप में माना जा रहा है। 30 वर्ष के केवलीकाल में भगवान महावीर का समवसरण यहाँ हजारों बार आया होगा।

यहीं से गणधरदेव श्री सुधर्माचार्य ने, श्री जीवंधर स्वामी ने निर्वाण प्राप्त किया है और भी अनेक महापुरुषों की निर्वाणस्थली मानी गई है। यहीं पर श्री महावीर स्वामी के प्रथम गणधर गौतम स्वामी ने दीक्षा लेते ही मनःपर्ययज्ञान प्राप्त किया था। यहीं पर समवसरण में राजा श्रेणिक ने तीर्थंकर प्रकृति का बंध किया है जो कि आगे भविष्यत्काल के प्रथम तीर्थंकर 'महापद्म' होंगे।

यहीं पर गौतम स्वामी ने गणधरवलय मंत्र, चैत्यभक्ति, वीरभक्ति, श्रावक, मुनि प्रतिक्रमण के सूत्रों की रचना की थी जो कि आज भी उपलब्ध हैं।

पावापुरी—यहाँ पर महावीर स्वामी का अंतिम समवसरण लगा था, पुनः भगवान ने 2530 वर्ष पूर्व कार्तिक कृष्णा तेरस को योगनिरोध किया तब समवसरण विघटित हो गया था, पुनः भगवान ने कार्तिक कृष्णा अमावस्या को उषाकाल की बेला में निर्वाणधाम को प्राप्त किया। उसी दिन सायंकाल में श्री गौतम स्वामी को केवलज्ञान प्राप्त हुआ था, तब उनकी गंधकुटी की रचना हुई थी।

ऐसी ये भगवान महावीर की तीनों तीर्थभूमि 'तीर्थ त्रिवेणी संगम' के रूप में प्रसिद्ध हैं। इन तीनों तीर्थों पर बैठकर मुझे षट्खण्डागम की 12वीं-13वीं पुस्तक की संस्कृत टीका लिखते हुए बड़ा आल्हाद होता था।

इन तीर्थों की वंदना करने वाले इस 'त्रिवेणी संगम' में भक्ति रस में निमग्न हो स्नान करके असंख्य भवों के संचित पापमलों को धोकर पवित्र, शुद्ध हो जाते हैं। यह 'तीर्थ त्रिवेणी संगम' सभी भव्यों के कर्ममैल को दूर कर उन्हें पवित्र करता रहे, यही मंगलकामना है।

* * *

BRIEF INTRODUCTION OF NEWLY DEVELOPED KUNDLPUR

- Jeevan Prakash Jain, Indore

Infinite great souls like Tirthankars have been born on the pious land of India in the Tirthankar tradition of Jain Shasan. The names of several of these Tirthankars have been mentioned in the ancient Jain Scriptures. Greatmen, who propagate the *Dharmatirth* (Religious path) are known as "TIRTHANKARS" . In that Tirthankar tradition, the last of the 24 Tirthankars of the present age-Lord Mahavir was born at the city Kundalpur of Bihar state about 2600 years ago from today. As stated in *Tiloypannatti* Grantha—

Siddhattha rai piykarinihim, Nayarammi Kundaley Veero.
Uttarphaggunirikhey, Chittsiaterseyai Uppanno.
सिद्धत्थरायपियकारिणीहिं, णयरम्मि कुण्डले वीरो।
उत्तरफग्गुणिरिक्खे, चित्तसियातेरसीए उप्पण्णो।।

i.e. Bhagwan Mahavir was born to mother Priyakarini (Trishla), the queen of Maharaja Siddhartha,

at Kundalpur on Chaitra Shukla Trayodashi in Uttaraphalguni Star. Shri Veersenacharya has also said in the Dhavla Teeka of the fourth division & the 9th book of Shatkhandagam—

"Aasarh Jonna Pakkha Chhatthiyae Kundalpur Nagrahiv Nahvansha Siddhattha Narindassa Tisila Deviyae Gabbhamagantanesu Tattha Atthadivsahiya Navmasae Achhim Chaita Sukka Pakkha Terseyai Uttaraphagguni Gabbhado Nikkhanto."

''आषाढ़ जोण्ण पक्ख छट्ठीए कुण्डलपुर णगराहिव णाहवंश सिद्धत्थ णरिंदस्स तिसिला देवीए गब्भमागंतणेसु तत्थ अट्ठदिवसाहिय णवमासे अच्छिम चइत्त सुक्क पक्ख तेरसीए उत्तराफग्गुणी गब्भादो णिक्खंतो।''

i.e. Mahavir Tirthankar was born from the womb of queen Trishla of Nathvanshi King Siddhartha, the ruler of Kundalpur Nagar, on Chaitra Shukla Trayodashi.

Similarly, all the ancient Digamber Jainagam Scriptures (Uttarpuran, Harivanshapuran, Jaidhavla, Mahavir Puran, Veerjinindchariu, Vardhman Charit etc.) describe beautifully the celebration of the birth festival of Bhagwan Mahavir by Indras after coming to Kundalpur.

Although due to the passage of the time of 2600 years, this Kundalpur Nagri situated at the district Nalanda of Bihar state has shrinked to a minimal area after losing all its past glamour, yet the sacredness of the birth of Mahavir is engrossed in each & every particle of this place and this is the reason due to which thousands of devotees of Digambar Jain Samaj reach Kundalpur from the nook & corner of the country to rub this poius dust on their foreheads and do Arati of Bhagwan Mahavir with the emotion-filled lines of "Kundalpur Avtari, Trishlanand Vibho".

THE BEGINNING OF THE DEVELOPMENT OF JANMABHUMI ON THE OCCASION OF 2600TH BIRTH-ANNIVERSARY—

Although each city & village echo with the name of Shasanpati Bhagwan Mahavir always and to fulfil own wishes, devotees illuminate thousands of Deepaks, offer the chhatras of gold & silver and a lot of money at "Chandanpur Mahavir Ji" Tirth (Rajasthan), famous for the Atishaya (Miracle) of Mahavir, yet nobody paid any attention to the real birthplace of Mahavir that if a single Deepak is lighted there or not daily? If there is any arrangement for the stay of pilgrims there or not? & how much beneficial is the pious dust of Kundalpur for the world? That's why gradually, the name of Mahavir's birthplace started to be restricted within the boundaries of Jinmandirs (Jain Temples) through Pooja, Chaleesa, Arati etc. but ultimately some great personality always emergs out to defend Jinshasan. In the same series, the occasion of "Bhagwan Mahavir 2600th Birth Anniversary year" appeared and the inspiration was obtained from the supreme Sadhvi of Jain Samaj-**Pujya Ganini Pramukh Aryika Shiromani Shri Gyanmati Mataji** and thus the golden moments of the development of Kundalpur became realistic. The aim of the development was initiated from the year 2001 and at first the foundation stone of 36 feet high KIRTISTAMBH was laid down in the premises of the old temple of Kundalpur on 24th Mar. 2002. Again a committee named "Bhagwan Mahavir Janmabhumi Kundalpur Digamber Jain Samiti " was formed under "Digamber Jain Trilok Shodh Sansthan, Jamboodweep-Hastinapur" (Meerut) U.P. The committee bought 2 acres of land (facing the North) at Kundalpur on Shravan Shukla Saptami, 15th Aug. 2002. At the occasion of the arrival of Pujya Ganini Mataji (with sangh) at Kundalpur on 29th Dec. 2002, the foundation stone of "Bhagwan Mahavir Temple" was laid down at the bougth land to begin the development of the Tirth.

As per the earlier announcement, "Panchkalyanak & Mahakumbh Mastakabhishek Mahotsava" was successfully performed from 7th Feb. to 12th Feb. 2003 at this newly developing "NANDYAVARTA MAHAL" campus at Kundalpur. 7 hands high (10 ¼ feet) standing postured, white stone, miraculous Bhagwan Mahavir idol (exaclty same in size with the real Mahavir), placed at the Jinmandir being constructed at a height of 25 feet from the land, was consecrated & anointed in this Panchkalyanak. Since then, devotees & tourists are coming to this tirth in large numbers continuously.

INFORMATION OF TEMPLES & VISITING SITES UNDER CONSTRUCTED AT THE TIRTH–

1- BHAGWAN MAHAVIR JINMANDIR– The major attraction of the tirth is Moolnayak (Main) Temple of Lord Mahavir. It is of the height of 72 feet from the land upto the summit (top). The miraculous standing postured idol of Bhagwan Mahavir is consecrated inside this temple, built at the height of 25 feet from the land.

One has to go up 43 stairs to enter this north facing temple. People of all castes fulfil their wishes by the darshan of Bhagwan Mahavir even from the front road.

2- BHAGWAN RISHABHDEV JINMANDIR–At this Janmbhumi Tirth of Mahavir Swami, 11¼ feet high lotus postured (sitting) idol of the first Tirthankar-Lord Rishabhdev is consecrated in this temple on the right hand side of the Mahavir Mandir. This temple will surely prove to be a testimony of the ancientness of the Jain Dharma and the history of the previous Tirthankars before Mahavir for all the devotee spectators for ages to come.

3- SHRI NAVGRAHSHANTI JINMANDIR–On the left hand side of Mahavir Mandir, the idols of 9 Tirthankars who pacify 9 Grahas (Planets), have been consecrated on 9 different Lotuses in this temple, first of its kind in India and being built according to the concept of Digamber Jain tradition . Devotees will worship these Tirthankars to avoid the harmful effects of Shani (Saturn), Mangal (Mars), Guru (Jupiter) etc. grahas.

4- TRIKAL CHAUBEESI JINMANDIR–3 storeyed *Trikal Chaubeesi Jinmandir* with 24 Tirthankars of the past age, 24 Tirthankars of the present age and 24 Tirthankars of the future age thus 72 Tirthankars of *Trikal Chaubeesi* out of the infinite Tirthankars born on the land of India, has been built here.

The Panchkalyanak Pratishtha of all these idols have been performed.

May this Jinmandir, signifying the eternal existence of Jainsim, spread the illumination of the eternal religion from the birthplace of Mahavir always.

5. Nandyavarta Mahal & Shantinath Jinalaya– The 7 storeyed Nandyavarta palace, which was beautified by the Indra and where Bhagwan Mahavir was born, has also been built in the campus of the tirth. This palace, showing 7 floors, will demonstrate the Palna (Cradle) of Bhagwan Mahavir and the ancient artistic models related with His life.

There is a Jinalaya (Jin Temple) in the uppermost floor of this palace. The auspicious idols of Bhagwan Shantinath, Chandraprabh and Parshvanath have been consecrated in this temple. On the name of this palace only, this newly developed entire tirth has been named as-NANDYAVARTA MAHAL.

Undoubtedly this palace will prove to be a great centre to glorify the Shasan of Mahavir Swami and to fulfil the wishes of the devotees.

6. Bhagwan Mahavir Swami Kirtistambh–36 feet high this Kirtistambh has been constructed in the campus of the old temple. In the *Chaityalayas* of the 2 upper floors of the Kirtistambh, 8 idols of Bhagwan Mahavir are consecrated and in the lower floors the life history etc. of Mahavir has been engraved. This Kirtistambh will always work as a "Glorious Flag" to disseminate the dignity of Kundalpur.

Along with the upper stated religious & historic constructions, the Deeksha-postured idol of Bhagwan Mahavir (6 feet standing idol with Pichhi-Kamandalu) and the idol related with his historic Ahar at Kaushambi (Mahavir Swami accepting Ahar & Sati Chandna giving Ahar) have also been consecrated at this newly developled tirth of Kundalpur. Atithi Bhawan (3 storeyed Dharmashala), water tank & main gate etc. have been constructed.

An enlarged dining hall has also been constructed, where pilgrims may have meals, prepared purely on the Kshetra. 'Kundalpur Dwar (gate) has been built 4 kms. away from the Tirth on the road joining the national highway with the Tirth.

* * *

नंद्यावर्त महल की पावनता

–ब्र. (कु.) इन्दु जैन

(संघस्थ–गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी)

जैनधर्म के चौबीसवें एवं अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर ने आज से 2600 वर्ष पूर्व बिहार प्रान्तस्थ कुण्डलपुर नगरी में महाराजा सिद्धार्थ की महारानी त्रिशला देवी की पवित्र कुक्षि से जिस सात खण्ड वाले नंद्यावर्त महल में जन्म लिया था उसके बारे में उत्तरपुराण ग्रंथ में आया है कि–

नंद्यावर्तगृहे रत्नदीपिकाभिः प्रकाशिते। रत्नपर्यंकके हंसतूलकादिविभूषते।।254।। पृ. 460।।

अर्थात् सात खण्ड वाले राजमहल के भीतर रत्नमय दीपकों से प्रकाशित नंद्यावर्त महल नामक राजभवन में हंसतूलिका आदि से सुशोभित रत्ननिर्मित पलंग पर रानी त्रिशला सो रही थीं अर्थात् तीर्थंकर भगवान महावीर की माता का तो शयन करने वाला पलंग ही स्वर्ण और रत्ननिर्मित था। रातदिन स्वर्ग की देवियाँ उनकी सेवा करती थीं,साक्षात् इन्द्र और देवगण भगवान के समक्ष किंकर बनकर खड़े रहते थे, जिस नगरी में लगातार 15 महिने तक प्रतिदिन साढ़े सात करोड़ रत्नों की वृष्टि स्वयं कुबेर करता था, वह कुण्डलपुर नगरी अत्यन्त समृद्ध थी जहाँ वीर प्रभु का जन्म हुआ था।

वास्तव में तीर्थंकर महापुरुष श्रेष्ठों में भी श्रेष्ठ महापुरुष होते हैं उनका जन्मस्थान ही पूज्य नहीं होता, वह तिथि, वह समय, वह महल, वह काल भी मंगल एवं पावन हो जाता है जब और जहाँ उनके पंचकल्याणक हुए हों क्योंकि मानसरोवर के कारण हंस को गौरव नहीं मिलता है, हंस के कारण मानसरोवर सन्मान का पात्र बनता है, हंस जहाँ रहता है वही स्थल महत्वपूर्ण होता है।

उसी पवित्र कुण्डलपुर में भगवान महावीर के पिता महाराजा सिद्धार्थ राज्य करते थे और भगवान महावीर राजपुत्र थे। भगवान का मातृपक्ष भी राजवंश था। इस प्रकार जाति तथा कुल की दृष्टि से वे महान थे। भगवान के पितामह (बाबा) का नाम था सर्वार्थ तथा सर्वार्थ महाराज की महारानी का नाम श्रीमती था। हरिवंशपुराण में लिखा है–

सर्वार्थ-श्रीमती-जन्मा तस्मिन्-सर्वार्थदर्शनः। सिद्धार्थोऽभवदर्काभो भूपः सिद्धार्थ-पौरुषः।।13-2।।

अर्थात् कुण्डलपुर के स्वामी राजा सर्वार्थ एवं रानी श्रीमती से उत्पन्न समस्त पदार्थों का दर्शन करने वाला, सूर्य के समान तेजस्वी तथा समस्त पुरुषार्थों को सिद्ध करने वाला राजा सिद्धार्थ था। सिद्धार्थ राजा आदर्श शासक थे। जिनसेन आचार्य कहते हैं–

यत्र पाति धरित्रीय-मभूदेकत्र-दोषिणी। धर्मार्थिन्योपि संयुक्त-परलोकभयाः प्रजा।।14-2।।

अर्थात् जिस समय सिद्धार्थ नरेश ने पृथ्वी की रक्षा की थी, उस समय प्रजा में कोई दोष नहीं था, हाँ! एक दोष अवश्य था कि प्रजा परलोक से डरती थी अर्थात् वह आगामी जीवन सुधार के विषय में पूर्ण सावधान थी। महाकवि के ये शब्द यथार्थ और महत्वपूर्ण हैं–

कस्तस्य तान् गुणानुद्यान्नरस्तुलयितुं क्षमः। वर्धमान-गुरुत्वं यः प्रापितः स नराधिपः।।15-2।।

अर्थ–ऐसी सामर्थ्य किस पुरुष में है जो राजा सिद्धार्थ के उन्नत गुणों की तुलना कर सके, क्योंकि अपने गुणों की महिमा से राजा सिद्धार्थ त्रिलोकीनाथ वर्धमान महावीर के पिता बन गए थे।

महानुभावों! बिहारप्रांत में जिस कुण्डलपुर नगरी को आज से 2600 वर्ष पूर्व इन्द्र एवं देवताओं ने सजाया था, जहाँ सात मंजिल का सुन्दर स्वर्णमयी नंद्यावर्त महल देव कारीगरों ने बनाया था। जहाँ नाथवंशी राजा सर्वार्थ और रानीश्रीमती के पुत्र राजा सिद्धार्थ अपनी रानी त्रिशला के साथ रहा करते थे। जिस नंद्यावर्त महल में रानी त्रिशला मणियों के पलंग पर शयन करती थीं। जहाँ उन्होंने सोलह सपने देखे और अपने पति राजा सिद्धार्थ से उनके फल में तीर्थंकरपुत्र की माता बनने की जानकारी प्राप्त की थी। जहाँ 2600वर्षों पूर्व लगातार 15 महीने तक धनकुबेर ने प्रतिदिन साढ़े सात करोड़ रत्न बरसाए थे। जहां चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को महावीर का जन्म होते ही राजा सिद्धार्थ ने किमिच्छक दान बाँटा था

और इन्द्रों ने बड़े वैंभव के साथ पहले सुमेरु पर्वत पर पश्चात् कुण्डलपुर में आकर जन्मोत्सव मनाया था। जहां बालक वीरप्रभू को पालने में झूलते देखने मात्र से दो महामुनियों की सूक्ष्म शंका दूर हुई जिससे उन्होंने बालक वीर प्रभू को "सन्मति" नाम से अलंकृत किया था। जहां बाल्यावस्था में वर्धमान को बगीचे में खेलते देखकर संगम देव ने उनके बल की परीक्षा हेतु सर्प का रूप बनाया किन्तु पराजित हो प्रभु की स्तुति कर "महावीर" यह सार्थक नाम रखा था। जहां महावीर ने देवताओं द्वारा लाए दिव्य भोजनादि सामग्री को ग्रहण कर तेजस्वी सूर्य की भांति युवावस्था को प्राप्त किया था। जहाँ माता त्रिशला के सांसारिक अरमानों को ठुकराकर महावीर ने भरे यौवन में तलवार की धार के समान जैनेश्वरी दीक्षा ग्रहण करने का संकल्प लिया था। जहां एक भवावतारी लौकान्तिक देवों ने भी पधारकर महावीर के वैराग्यभाव की भूरि-भूरि प्रशंसा एवं अनुमोदना की थी तथा जिस कुण्डलपुर नगरी की पवित्र भूमि के कण-कण भगवान महावीर के त्याग-वैराग्य का संदेश दे रहे हैं वह नंद्यावर्त महल और वह नगरी आज काल के थपेड़ों से 2600 वर्षों के बाद वैभवहीन भले ही हो गयी किन्तु यहाँ की ऐतिहासिकता एवं पवित्रता की प्रसिद्धि के कारण पूरे देश की दिगम्बर जैन जनता अपने प्रभु की जन्मभूमि की वंदना हेतु आज भी श्रद्धापूर्वक आती है और वर्तमान में जैन समाज के सौभाग्य से उस तीर्थ का विकास कार्य पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से चल रहा है। शीघ्र ही शासनपति प्रभु महावीर की यह जन्मभूमि अपने 2600 वर्ष पूर्व के इतिहास का साकार रूप लेकर उन महामना के सिद्धान्तों की अनुगूंज से अहिंसा एवं सदाचार का संदेश विश्व को प्रदान करेगी।

मनोकामना सिद्धि भगवान महावीर व्रतविधि

–गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी

जैनशासन में पर्वो की भांति ही अनादिकाल से व्रतों की परम्परा भी चली आ रही है जिनमें दो प्रकार के व्रत प्रचलित हैं 1. सोलहकारण, दशलक्षण, पंचमेरु, आष्टान्हिका, रत्नत्रय आदि पर्वों में किए जाने वाले व्रत अनादि कहलाते हैं तथा रोहिणी, रविव्रत, पंचकल्याणक आदि व्रत सादि कहलाते हैं। इनमें ही अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर के नाम से मनोकामना सिद्धि महावीर व्रत भी विशेष महिमाशाली व्रत है। पुत्रप्राप्ति तथा अन्य इच्छित फल की प्राप्ति हेतु इस व्रत को किया जाता है। इस व्रत में 108 उपवास किए जाते हैं तथा व्रत वाले दिन 1-1 मंत्र की जाप की जाती है। व्रत की उत्तम विधि उपवासपूर्वक है, मध्यम में जल आदि पेय वस्तु दिन में एक बार ली जाती है तथा दिन में एक बार शुद्ध भोजन करना एकाशन कहलाता है यह जघन्यविधि है।

इस व्रत को करने में तिथि का कोई बन्धन नहीं है, अपनी सुविधा के अनुसार महीने में कम से कम एक व्रत अवश्य करें तथा अधिक से अधिक जितने व्रत चाहें, कर सकते हैं।

व्रत को स्त्री-पुरुष, बालक-बालिकाएँ सभी को अपनी शक्ति के अनुसार करना चाहिए। व्रत वाले दिन भगवान महावीर का अभिषेक -पूजन करें तथा भगवान महावीर का संक्षिप्त जीवनदर्शन आदि पढ़कर धर्मध्यान में दिन को व्यतीत करना चाहिए।

व्रत के उद्यापन में भगवान महावीर की प्रतिमा बनवाकर मंदिर में विराजमान करें, विश्वशांति महावीर विधान का आयोजन करें, मंदिर में यथोचित उपकरण आदि दान दें, भगवान महावीर से सम्बन्धित साहित्य छपाकर वितरित करें तथा 108 लोगों को या कम से कम 24 लोगों को 3-3 फल वितरित करें।

व्रत वाले दिन भगवान महावीर की पूजन करें।

श्री तीर्थंकर महावीर पूजा

स्थापना –गीताछंद

प्रभुवीर का छब्बीस सौवां, जन्म उत्सव जग प्रथित।
सब विश्व में लहरा रहा, महावीर प्रभु का धर्म ध्वज।।
इन महावीर जिनेन्द्र की, स्थापना विधि हम करें।
निज सौख्य हेतू भक्ति से, अर्चें जनम दुख परिहरें।।1।।

ॐ ह्रीं अन्तिमतीर्थंकर श्रीमहावीरजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं अन्तिमतीर्थंकर श्रीमहावीरजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं अन्तिमतीर्थंकर श्रीमहावीरजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणम्।

अथ अष्टक –चौबोलछंद

गंगा यमुना सरस्वती के, संगम का जल लाया हूँ।
महावीर प्रभु के पद में त्रय, धारा देने आया हूँ।।
वीर प्रभू का जन्मकल्याणक, जग में मंगलकारी है।
सर्वअमंगल दूर भगाकर, सब जन को सुखकारी है।।1।।

ॐ ह्रीं अन्तिमतीर्थंकरश्रीमहावीरजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन केशर सुरभित घिसकर, प्रभु चरणों में चर्चूं मैं।
जग संताप दूर करने को, प्रभु चरणों में प्रणमूं मैं।।
वीर प्रभू का जन्मकल्याणक, जग में मंगलकारी है।
सर्व अमंगल दूर भगाकर, सब जन को सुखकारी है।।2।।

ॐ ह्रीं अन्तिमतीर्थंकरश्रीमहावीरजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

उज्जवल शालि सुगंधित लेकर, पुंज चढ़ाऊँ प्रभु आगे।
अक्षयपद की प्राप्ति सुखद हो, पुनर्जन्म के दुख भागें।।
वीर प्रभू का जन्मकल्याणक, जग में मंगलकारी है।
सर्व अमंगल दूर भगाकर, सब जन को सुखकारी है।।3।।

ॐ ह्रीं अन्तिमतीर्थंकरश्रीमहावीरजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

बेला जुही चमेली सुरभित, पुष्प चढ़ाऊँ चरणों में।
कामदेवमदविजयी प्रभु की, पूजा कर लूँ सुखकर मैं।।
वीर प्रभू का जन्मकल्याणक, जग में मंगलकारी है।
सर्व अमंगल दूर भगाकर, सब जन को सुखकारी है।।4।।

ॐ ह्रीं अन्तिमतीर्थंकरश्रीमहावीरजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

फेनी गुझिया खाजे ताजे, भरकर थाल चढ़ाऊँ मैं।
क्षुधा वेदनी दूर करो प्रभु, भक्ती से गुण गाऊँ मैं।।
वीर प्रभू का जन्मकल्याणक, जग में मंगलकारी है।
सर्व अमंगल दूर भगाकर, सब जन को सुखकारी है।।5।।

ॐ ह्रीं अन्तिमतीर्थंकरश्रीमहावीरजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृतदीपक में ज्योति जलाकर, करूँ आरती भक्ती से।
निज घट का अज्ञान दूर हो, सम्यग्ज्ञान ज्योति प्रगटे।।
वीर प्रभू का जन्मकल्याणक, जग में मंगलकारी है।
सर्व अमंगल दूर भगाकर, सब जन को सुखकारी है।।6।।

ॐ ह्रीं अन्तिमतीर्थंकरश्रीमहावीरजिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपमीति स्वाहा।

अगर तगर चंदन से मिश्रित, धूप सुगंधित खेवूं मैं।
अशुभ कर्म को भस्मसात् कर, आतम अनुभव लेवूं मैं।।
वीर प्रभू का जन्मकल्याणक, जग में मंगलकारी है।
सर्व अमंगल दूर भगाकर, सब जन को सुखकारी है।।7।।

ॐ ह्रीं अन्तिमतीर्थंकरश्रीमहावीरजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सेव आम अंगूर सरसफल, भर कर थाल चढ़ाऊँ मैं।
जिनवर सन्निध अर्पण करके, स्वात्मसुधारस पाऊँ मैं।।
वीर प्रभू का जन्मकल्याणक, जग में मंगलकारी है।
सर्व अमंगल दूर भगाकर, सब जन को सुखकारी है।।8।।

ॐ ह्रीं अन्तिमतीर्थंकरश्रीमहावीरजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन अक्षत कुसुमावलि, आदिक अर्घ्य बनाऊँ मैं।
उसमें रत्न मिलाकर अर्पूं, निजगुण मणि को पाऊँ मैं।।
वीर प्रभू का जन्मकल्याणक, जग में मंगलकारी है।
सर्व अमंगल दूर भगाकर, सब जन को सुखकारी हो।।9।।

ॐ ह्रीं अन्तिमतीर्थंकरश्रीमहावीरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा – महावीर अतिवीर, तुम पद पंकज में सदा।
मिले भवोदधि तीर, शांतीधारा मैं करूँ।।10।।

शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार गुलाब, सुरभित करते दश दिशा।
महावीर पादाब्ज, पुष्पांजलि अर्पण करूँ।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य – ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय विश्वशांतिकराय सर्वसौख्यं कुरू कुरू ह्रीं नमः।
(सुगन्धितपुष्प, लवंग या पीले चावल से 108 मंत्रों का जाप्य करें)

जयमाला

शेरछंद –

जय वीर महावीर आप जन्म जब लिया। संपूर्ण लोक में महा आश्चर्य भर दिया।।
स्वर्गों में कल्पवृक्ष पुष्पवृष्टि कर झुकें। इन्द्रों के सिंहासन भी आप-आप हिल उठें।।1।।
शीतल सुगंध वायु मंद मंद बही थी। पृथ्वी भी तो आनंदभरी नाच रही थी।।
संपूर्ण दिशायें गगन भी स्वच्छ हुये थे। सागर भी तो लहरा रहा हर्षातिरेक से।।2।।
व्यंतर गृहों में भेरियों के शब्द हो उठे। भवनालयों में शंखनाद गूंजने लगे।।
ज्योतिष गृहों में सिंहनाद स्वयं हो उठा। सुर कल्पवासि भवन में घंटा भी बज उठा।।3।।

५-१२४

इंद्रों के मुकुट अग्र भी स्वयमेव झुक गये। जिन जन्म जान आसनों से सब उतर गये।।
तब इन्द्र के आदेश से सुरपंक्ति चल पड़ी। सबके हृदय में हर्ष की नदियां उमड़ पड़ीं।।4।।

सुरपति प्रभु को गोद में ले गज पे चढ़े हैं। ईशान इंद्र प्रभु पे छत्र तान खड़े हैं।।
सानत्कुमार औ माहेन्द्र चंवर ढोरते। सब देव देवियाँ बहुत भक्ती विभोर थे।।5।।

क्षण में सुमेरुगिरि पे जाके प्रभु को बिठाया। पांडुक शिला पे नाथ का अभिषेक रचाया।।
सौधर्म इन्द्र ने हजार हाथ बनाये। संपूर्ण स्वर्ण कलश एक साथ उठाये।।6।।

उनसे प्रभू का न्हवन एक साथ कर दिया। जय जय ध्वनी से देवों ने आकाश भर दिया।।
सब इन्द्र और इंद्राणियों ने न्हवन किया था। सब देव औ देवांगनाओं ने भी किया था।।7।।

अभिषेक जल से क्षण में पयोसिंधु बना था। देवों की सेना डूब रही हर्ष घना था।।
जन्माभिषेक जिन का स्वयं इंद्र कर रहे। उत्सव विशेष और की फिर बात क्या कहें।।8।।

सुरपति ने पुनः प्रभु को लाके जनक को दिया। बहु देव और देवियां सेवा में रख दिया।।
सुर धन्य वे जो नाथ संग खेल खेलते। संसार के दुःख संकटों को वे न झेलते।।9।।

मैं भी करूँ सेवा प्रभू की भक्ति भाव से। मिथ्यात्व का निर्मूल हो समकित प्रभाव से।।
बस एक प्रार्थना पे नाथ ! ध्यान दीजिये। "सज्ज्ञानमती" पूर्ण हो ये दान दीजिये।।10।।

दोहा – वर्धमान गुणरत्न को, गिनत न पावहिं पार।
तीन रत्न के हेतु मैं, नमूं अनंतों बार।।11।।

ॐ ह्रीं अंतिमतीर्थंकरश्रीमहावीरजिनेंद्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा – वर्द्धमान जिन वीरप्रभु, श्रीसन्मति महावीर।
महति महावीर आपको, जजत मिले भवतीर।।1।।

।। इत्याशीर्वादः ।।

इस व्रत की जाप्य निम्न प्रकार है–
ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय विश्वशांतिकराय सर्वसौख्यं कुरु कुरु ह्रीं नमः।

महावीरव्रत मंत्र

(प्रत्येक व्रत में निम्न मंत्रों की क्रम-क्रम से 1-1 जाप्य करें)

1. ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धिभावनाबलेन तीर्थंकरपदप्राप्त श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
2. ॐ ह्रीं विनयसंपन्नताभावनाबलेन तीर्थंकरपदप्राप्त श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
3. ॐ ह्रीं शीलव्रतेषु अनतिचारभावनाबलेन तीर्थंकरपदप्राप्त श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
4. ॐ ह्रीं अभीक्ष्णज्ञानोपयोगभावनाबलेन तीर्थंकरपदप्राप्त श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
5. ॐ ह्रीं संवेगभावनाबलेन तीर्थंकरपदप्राप्त श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
6. ॐ ह्रीं शक्तितस्त्यागभावनाबलेन तीर्थंकरपदप्राप्त श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
7. ॐ ह्रीं शक्तितस्तपोभावनाबलेन तीर्थंकरपदप्राप्त श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
8. ॐ ह्रीं साधुसमाधिभावनाबलेन तीर्थंकरपदप्राप्त श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
9. ॐ ह्रीं वैयावृत्यकरणभावनाबलेन तीर्थंकरपदप्राप्त श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
10. ॐ ह्रीं अर्हद्भक्तिभावनाबलेन तीर्थंकरपदप्राप्त श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
11. ॐ ह्रीं आचार्यभक्तिभावनाबलेन तीर्थंकरपदप्राप्त श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।

12. ॐ ह्रीं बहुश्रुतभक्तिभावनाबलेन तीर्थंकरपदप्राप्त श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
13. ॐ ह्रीं प्रवचनभक्तिभावनाबलेन तीर्थंकरपदप्राप्त श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
14. ॐ ह्रीं आवश्यक-अपरिहाणिभावनाबलेन तीर्थंकरपदप्राप्त श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
15. ॐ ह्रीं मार्गप्रभावनाभावनाबलेन तीर्थंकरपदप्राप्त श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
16. ॐ ह्रीं प्रवचनवत्सलत्वभावनाबलेन तीर्थंकरपदप्राप्त श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
17. ॐ ह्रीं मातुः ऐरावतहस्तिस्वप्नप्रदर्शकाय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
18. ॐ ह्रीं मातुः महावृषभस्वप्नप्रदर्शकाय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
19. ॐ ह्रीं मातुः सिंहस्वप्नप्रदर्शकाय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
20. ॐ ह्रीं मातुः मालायुगलस्वप्नप्रदर्शकाय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
21. ॐ ह्रीं मातुः लक्ष्मीस्वप्नप्रदर्शकाय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
22. ॐ ह्रीं मातुः चन्द्रस्वप्नप्रदर्शकाय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
23. ॐ ह्रीं मातुः सूर्यस्वप्नप्रदर्शकाय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
24. ॐ ह्रीं मातुः कलशयुगलस्वप्नप्रदर्शकाय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
25. ॐ ह्रीं मातुः मीनयुगलस्वप्नप्रदर्शकाय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
26. ॐ ह्रीं मातुः सरोवरस्वप्नप्रदर्शकाय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
27. ॐ ह्रीं मातुः समुद्रस्वप्नप्रदर्शकाय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
28. ॐ ह्रीं मातुः सिंहासनस्वप्नप्रदर्शकाय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
29. ॐ ह्रीं मातुः देवविमानस्वप्नप्रदर्शकाय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
30. ॐ ह्रीं मातुः धरणेंद्रभवनस्वप्नप्रदर्शकाय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
31. ॐ ह्रीं मातुः रत्नराशिस्वप्नप्रदर्शकाय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
32. ॐ ह्रीं मातुः निर्धूम-अगिन्स्वप्नप्रदर्शकाय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
33. ॐ ह्रीं स्वेदरहितजन्मातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
34. ॐ ह्रीं मलरहितजन्मातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
35. ॐ ह्रीं क्षीरसमरुधिरजन्मातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
36. ॐ ह्रीं वज्रऋषभनाराचसंहननजन्मातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
37. ॐ ह्रीं समचतुरस्रसंस्थानजन्मातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
38. ॐ ह्रीं अनुपमरूपजन्मातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
39. ॐ ह्रीं सुगंधशरीरजन्मातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
40. ॐ ह्रीं अष्टोत्तरसहस्रलक्षणजन्मातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
41. ॐ ह्रीं अनंतबलजन्मातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
42. ॐ ह्रीं प्रियहितमधुरवचनजन्मातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
43. ॐ ह्रीं गव्यूतिशतचतुष्टयसुभिक्षताकेवलज्ञानातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
44. ॐ ह्रीं आकाशगमनकेवलज्ञानातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
45. ॐ ह्रीं प्राणिवधाभावकेवलज्ञानातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
46. ॐ ह्रीं कवलाहाराभावकेवलज्ञानातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
47. ॐ ह्रीं उपसर्गाभावकेवलज्ञानातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
48. ॐ ह्रीं चतुर्मुखकेवलज्ञानातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
49. ॐ ह्रीं छायारहितकेवलज्ञानातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
50. ॐ ह्रीं नेत्रनिमीलनरहितकेवलज्ञानातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
51. ॐ ह्रीं सर्वविद्यास्वामिकेवलज्ञानातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।

52. ॐ ह्रीं नखकेशवृद्धिरहितकेवलज्ञानातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
53. ॐ ह्रीं दिव्यध्वनिकेवलज्ञानातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
54. ॐ ह्रीं सर्व-ऋतुफलपुष्पादिदेवकृतातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
55. ॐ ह्रीं धूलिकंटकादिनिवारणदेवकृतातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
56. ॐ ह्रीं सर्वजनमैत्रीभावदेवकृतातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
57. ॐ ह्रीं रत्नमयीभूमिदेवकृतातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
58. ॐ ह्रीं गंधोदकवृष्टिदेवकृतातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
59. ॐ ह्रीं फलभारनम्रशालिदेवकृतातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
60. ॐ ह्रीं सर्वजनपरमानंददेवकृतातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
61. ॐ ह्रीं अनुकूलवायुदेवकृतातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
62. ॐ ह्रीं जलभरितकूपादिदेवकृतातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
63. ॐ ह्रीं निर्मलाकाशदेवकृतातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
64. ॐ ह्रीं सर्वजनरोगशोकबाधारहितदेवकृतातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
65. ॐ ह्रीं धर्मचक्रचतुष्टयदेवकृतातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
66. ॐ ह्रीं चरणकमलतलस्वर्णकमलरचनादेवकृतातिशयसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
67. ॐ ह्रीं अशोकवृक्षप्रातिहार्यसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
68. ॐ ह्रीं छत्रत्रयप्रातिहार्यसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
69. ॐ ह्रीं सिंहासनप्रातिहार्यसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
70. ॐ ह्रीं द्वादशगणवेष्टितप्रातिहार्यसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
71. ॐ ह्रीं देवदुंदुभिप्रातिहार्यसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
72. ॐ ह्रीं सुरपुष्पवृष्टिप्रातिहार्यसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
73. ॐ ह्रीं भामंडलप्रातिहार्यसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
74. ॐ ह्रीं चतुःषष्टिचामरप्रातिहार्यसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
75. ॐ ह्रीं अनंतज्ञानगुणसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
76. ॐ ह्रीं अनंतदर्शनगुणसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
77. ॐ ह्रीं अनंतसौख्यगुणसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
78. ॐ ह्रीं अनंतवीर्यगुणसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
79. ॐ ह्रीं क्षुधामहादोषरहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
80. ॐ ह्रीं तृषामहादोषरहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
81. ॐ ह्रीं भयमहादोषरहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
82. ॐ ह्रीं क्रोधमहादोषरहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
83. ॐ ह्रीं चिंतामहादोषरहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
84. ॐ ह्रीं जरामहादोषरहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
85. ॐ ह्रीं रागमहादोषरहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
86. ॐ ह्रीं मोहमहादोषरहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
87. ॐ ह्रीं रोगमहादोषरहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
88. ॐ ह्रीं मृत्युमहादोषरहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
89. ॐ ह्रीं स्वेदमहादोषरहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
90. ॐ ह्रीं विषादमहादोषरहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
91. ॐ ह्रीं मदमहादोषरहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।

92. ॐ ह्रीं रतिमहादोषरहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
93. ॐ ह्रीं विस्मयमहादोषरहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
94. ॐ ह्रीं निद्रामहादोषरहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
95. ॐ ह्रीं जन्ममहादोषरहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
96. ॐ ह्रीं अरतिमहादोषरहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
97. ॐ ह्रीं इन्द्रकृतवीर-वर्द्धमाननामप्राप्ताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
98. ॐ ह्रीं मुनिद्वयकृतसन्मतिनामप्राप्ताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
99. ॐ ह्रीं संगमदेवकृतमहावीरनामप्राप्ताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
100. ॐ ह्रीं रूद्रकृतमहतिमहावीरनामप्राप्ताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
101. ॐ ह्रीं महायोगीश्वरगुणसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
102. ॐ ह्रीं द्रव्यसिद्धगुणसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
103. ॐ ह्रीं अदेहगुणसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
104. ॐ ह्रीं अपुनर्भवगुणसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
105. ॐ ह्रीं ज्ञानैकचिद्गुणसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
106. ॐ ह्रीं जीवघनगुणसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
107. ॐ ह्रीं स्वात्मोपलब्धिरूपसिद्धनामसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।
108. ॐ ह्रीं लोकाग्रगामुकगुणसहिताय श्रीमहावीरजिनेंद्राय नमः।

भगवान महावीर 2600वें जन्मकल्याणक महोत्सव के अंतर्गत

गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के विविध कार्यकलाप

प्रस्तुति—कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन

6 अप्रैल 2001 को भगवान महावीर स्वामी के 2600वें जन्मकल्याणक महोत्सव का उद्घाटन राजधानी दिल्ली से प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा हुआ। पुनः वर्ष भर सरकार एवं समाज द्वारा अनेकानेक प्रभावनात्मक कार्यक्रम सम्पन्न हुए हैं। इसी मध्य जैनसमाज की वरिष्ठतम साध्वी पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी की पावन प्रेरणा से जो निर्माण, साहित्यसृजन आदि कार्य हुए हैं, उनका संक्षिप्त परिचय यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है—

(क) स्थाई निर्माण कार्य—

आने वाले युगों-युगों तक तीर्थंकर महावीर एवं 2600वें जन्म महोत्सव वर्ष की कीर्ति को अमर बनाने वाले पूज्य माताजी द्वारा प्रेरित विभिन्न स्थायी निर्माण कार्य इस प्रकार हैं—

1. 2568 वर्ष पूर्व के इतिहास को साकार करते हुए विश्व में प्रथम बार आहार ग्रहण की मुद्रा में महामुनि महावीर की प्रतिमा एवं उनको आहार प्रदान करते हुए महासती चंदना की प्रतिकृति की स्थापना कौशाम्बी (उ.प्र.) स्थित श्री प्रभासगिरि दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र पर मई 2001 में की गई एवं 6 मई को अपार जनसमूह के मध्य पूज्य माताजी के ससंघ सानिध्य में महामुनि महावीर के आहारदान का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

साथ ही इस क्षेत्र पर छठे तीर्थंकर भगवान पद्मप्रभ की सवा सात फुट उत्तुंग लालवर्णी मनोहारी पद्मासन प्रतिमा, पहाड़ पर ढ़ाई फुट उत्तुंग लालवर्णी पद्मासन प्रतिमा तथा नवनिर्मित मानस्तंभ में चतुर्मुखी प्रतिमाएं विराजमान कर इस वर्ष में भगवान महावीर की परम्परा के समस्त पूर्व तीर्थंकरों की जन्मभूमियों एवं पंचकल्याणक भूमियों के विकास का

कार्य भी किया गया।

"भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव वर्ष" का "तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली प्रयाग" के निर्माण के रूप में भव्य समापन कर पूज्य माताजी के कौशाम्बी-प्रभासगिरि विहार के मध्य यह आयोजन सम्पन्न हुआ।

2. भगवान पद्मप्रभ की जन्मभूमि 'कौशाम्बी' में 'नूतन दिगम्बर जैन तीर्थ का शिलान्यास' किया गया, जिसमें पद्मप्रभ भगवान के चरणों की स्थापना की गई। कौशाम्बी के प्राचीन दिगम्बर जैन मंदिर में भी चतुर्मुखी चरणों की स्थापना की गई। निकटवर्ती 'चंपहा' नामक ग्राम में भगवान महावीर के विहार की पवित्र भूमि होने से वहाँ भगवान के चरण विराजमान किये गये।

3. तेरहवें तीर्थंकर भगवान विमलनाथ जी के गर्भ, जन्म, तप एवं ज्ञानकल्याणक से पवित्र भूमि श्री कंपिला जी दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र (जिला-फर्रुखाबाद) पर 8 जून 2001 को पूज्य माताजी ने इस तीर्थ का दर्शन करके इसके विकास हेतु तीर्थंकर परम्परा की प्राचीनता को दर्शाने हेतु अनेक प्रकार की विकास योज़नाओं को साकार करने की प्रेरणा दी।

4. भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर का 'नंद्यावर्त महल तीर्थ' के रूप में नवविकास जन्मकल्याणक महोत्सव की अमिट उपलब्धि के रूप में समाज को प्राप्त हुआ है।

5. भगवान महावीर की प्रथम देशनाभूमि राजगृही के विपुलाचल पर्वत पर जुलाई सन् 2003 में स्थाई चित्र प्रदर्शनी, चौबीस तीर्थंकर से समन्वित 'ह्रीँ' बीजाक्षर की प्रतिमा विराजमान की गई एवं गौतम स्वामी तथा जम्बूस्वामी के चरणचिन्ह स्थापित हुए।

6. राजगृही में 12 लाख वर्ष पूर्व जन्मे बीसवें तीर्थंकर भगवान मुनिसुव्रतनाथ की सवा 12 फुट उत्तुंग खड्गासन प्रतिमा विराजमान करके नूतन मंदिर का निर्माण। (फरवरी 2002 में घोषित एवं दिसम्बर 2003 में पंचकल्याणक हुआ)

7. राजगृही तीर्थ पर विपुलाचल की तलहटी में 31 फुट उत्तुंग मानस्तंभ का निर्माण एवं उसमें भगवान महावीर की पद्मासन चार प्रतिमाएँ विराजमान। (जुलाई 2003 में घोषित एवं नवंबर 2004 में स्थापित)

8. राजगृही में जवाहर नवोदय विद्यालय के प्रांगण में भगवान महावीर की सवा पाँच फुट पद्मासन प्रतिमा की स्थापना। (जुलाई 2003 में)

9. पावापुर सिद्धक्षेत्र पर सवा 11 फुट उत्तुंग भगवान महावीर की खड्गासन प्रतिमा विराजमान एवं नूतन मंदिर का निर्माण। (फरवरी 2002 में घोषित एवं दिसम्बर 2003 में पंचकल्याणक हुआ)

10. भगवान महावीर के प्रथम गणधर श्री गौतम स्वामी की निर्वाणभूमि गुणावां जी सिद्धक्षेत्र पर सवा पांच फुट खड्गासन गौतम गणधर की प्रतिमा स्थापित कर नूतन मंदिर का निर्माण। (जुलाई 2004 में)

11. शाश्वत तीर्थ सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र पर प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की सवा नौ फुट पद्मासन प्रतिमा विराजमान करके नूतन मंदिर निर्माण हुआ।

12. भगवान शीतलनाथ की जन्मभूमि भद्दिलपुर-इटखोरी (झारखंड) में भगवान शीतलनाथ की 10 फुट उत्तुंग प्रतिमा स्थापना की घोषणा। यह प्रतिमा शीघ्र ही विराजमान होने जा रही हैं।

13. 7वें तीर्थंकर श्री सुपार्श्वनाथ की जन्मभूमि वाराणसी (भदैनी स्थित नदी के किनारे जैन घाट पर) में विशाल प्रतिमा विराजमान होने जा रही हैं। (जनवरी 2005 में)

14. जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में सहस्रकूट मंदिर, भगवान ऋषभदेव मंदिर, बीस तीर्थंकर मंदिर, ऐतिहासिक कैलाशपर्वत भवन एवं ऋषभदेव कीर्तिस्तंभ का निर्माण तथा भगवन्तों की पंचकल्याणक प्रतिष्ठाएँ सम्पन्न। (सन् 2002 एवं 2003 में)।

15. कनॉटप्लेस-दिल्ली के अग्रवाल दिगंबर जैन मंदिर प्रांगण में भगवान ऋषभदेव कीर्तिस्तंभ एवं पावापुर-जल मंदिर का निर्माण। (सन् 2001 में)।

16. छपरौली (जि.-मेरठ, उ.प्र.) में भगवान महावीर स्वामी कीर्तिस्तंभ का निर्माण। (सन् 2002 में)।

17. सनावद (म.प्र.) में णमोकार धाम तीर्थ पर भगवान ऋषभदेव की सवा सात फुट पद्मासन प्रतिमा विराजमान।

(सन् 2003 में)

18. सोलापुर (महा.) में भगवान ऋषभदेव की सवा सात फुट पद्मासन प्रतिमा विराजमान। (सन् 2003 में)

19. भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर के प्राचीन मंदिर में 36 फुट उत्तुंग कीर्तिस्तंभ का निर्माण एवं उसमें महावीर स्वामी की 8 प्रतिमाएँ विराजमान। (फरवरी 2003 में)।

20. लंदन म्यूजियम में स्थापित भगवान ऋषभदेव एवं भगवान महावीर स्वामी की युगल मूर्ति की प्रतिकृति स्वरूप 6 इंच आकार वाले 500 प्रतिष्ठित जोड़े देशभर के विभिन्न मंदिरों में विराजमान किये गये हैं।

(ख) साहित्य निर्माण–

1. भगवान महावीर के 2600वें जन्मजयंती वर्ष में पूज्य माताजी ने जिस अप्रतिम भेंट को भगवान के श्रीचरणों में समर्पित किया है–वह है भगवान के 2600 गुणों को 2600 मंत्रों में आबद्ध कर रचा गया एक अनूठा पूजन विधान "विश्वशांति महावीर विधान" जिसकी 9 पूजाओं में सुमेरु पर्वत के आकार वाले मंडल पर 2600 रत्न भगवान के श्रीचरणों में समर्पित करने का विधान है।

2. 'भगवान महावीर देशना', 'भगवान महावीर कैसे बने?' 'तीर्थंकर महावीर और धर्मतीर्थ', 'भगवान महावीर प्रश्नोत्तरमालिका", 'तीर्थंकर जीवन दर्शन' इत्यादि पुस्तकों के माध्यम से जन-जन में महावीर एवं उनकी वाणी को प्रतिष्ठित करने का पुरुषार्थ पूज्य माताजी ने किया है। अन्य कई पुस्तकें भी प्रकाशित होकर जन-जन के हाथों में पहुँची हैं। विविध फोल्डर (महावीर और उनकी अमूल्य शिक्षाएं इत्यादि) भी प्रकाशित किये गये हैं। ये सभी पुस्तकें एवं फोल्डर विद्यालयों, महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में भी वितरित की गईं।

3. संघस्थ शिष्या **'प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी'** ने पूज्य माताजी की प्रेरणा से भगवान महावीर के जीवन के विविध पक्षों से संबंधित कई सुरुचिपूर्ण नाटक लिखे हैं, जिनका सांस्कृतिक मंचन दर्शकों पर अमिट छाप छोड़ जाता है। यथा-महासती चंदना, माता त्रिशला के अनोखे सपने, धन्य हुआ विपुलाचल पर्वत, महावीर की बाल क्रीड़ा, कुण्डलपुर के महावीर आदि।

4. पूज्य माताजी द्वारा लिखित जैनधर्म के चारों अनुयोगों को स्वयं में समाहित किये हुए जैनधर्म की सम्पूर्ण जानकारी देने वाले एकमात्र ग्रंथ 'जैन-भारती' के अंग्रेजी एवं मराठी संस्करण तैयार हो चुके हैं एवं प्रकाशनाधीन हैं।

5. इनके अतिरिक्त पं. सुमेरचंद जैन दिवाकर द्वारा सन् 1968 में लिखित "महाश्रमण महावीर" का पुनर्प्रकाशन कर उन्हें "जिनशासन रत्न" उपाधि से (मरणोपरांत) सम्मानित किया गया तथा भगवान महावीर की जन्मभूमि से संबंधित कुछ पुस्तकों के प्रकाशन भी हुए हैं।

(ग) अन्य प्रभावना कार्य–

पूज्य माताजी की प्रेरणा एवं सानिध्य में नित्यप्रति कई विशेष प्रभावना कार्य सम्पन्न हुए हैं। यथा–

1. 2600वें जन्मकल्याणक उद्घाटन के अवसर पर 'विश्वशांति महावीर विधान' का प्रथम बार आयोजन 1 अप्रैल से 9 अप्रैल 2001 तक जीरोरोड, इलाहाबाद स्थित जैन धर्मशाला (महावीर जयंती भवन) में किया गया। इस अवसर पर अन्य धर्मप्रभावना के कार्यों के साथ-साथ 'भगवान महावीर प्रश्नावली प्रतियोगिता' का आयोजन भी किया गया।

2. 6 अप्रैल 2001 को 'महावीर जयंती' का पावन दिन प्रातःकाल मंगल वाद्य ध्वनि, रत्नवृष्टि एवं प्रभातफेरी से प्रारंभ किया गया। तत्पश्चात् सम्पन्न हुई विशाल रथयात्रा में भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार रथ, भगवान महावीर के जन्माभिषेक के महोत्सव के प्रतीक सौधर्म इन्द्र के ऐरावत हाथी रथ एवं महावीर अहिंसा रैली रूप 2600 स्कूली बच्चों का ध्वजा जुलूस विशेष आकर्षण का केन्द्र रहा।

3. भगवान महावीर के जन्माभिषेक से पावन सुमेरु की 91 फुट ऊँची एकमात्र प्रतिकृति (जंबूद्वीप-हस्तिनापुर) की पाण्डुकशिला पर 6 अप्रैल को महावीर स्वामी का जन्माभिषेक भी सम्पन्न किया गया।

4. 6 अप्रैल को ही लखनऊ में आयोजित धर्मसभा में पूज्य माताजी द्वारा प्रेषित प्रेरणा के अनुसार मुख्यमंत्री

श्री राजनाथ सिंह ने वहाँ के 'हाथी पार्क' का नाम 'महावीर पार्क' घोषित कर दिया तथा उसमें भगवान महावीर की मूर्ति की स्थापना की स्वीकृति भी उसी समय प्राप्त हो गई। तदनुसार वहाँ मूर्ति स्थापित हो चुकी है।

5. 22 अप्रैल 2001 को इलाहाबाद के सी.एम.पी. डिग्री कालेज में "महावीर संगोष्ठी" आयोजित की गई, जिसमें संघस्थ ब्रह्मचारिणी बहन द्वारा पूज्य माताजी का मंगल संदेश एवं दिशा-निर्देश प्रदान किया गया। 22 अप्रैल को ही "तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली" पर महावीर जयंती का विशेष कार्यक्रम आयोजित किया गया, जिसमें कर्मठ कार्यकर्ताओं का सम्मान, त्रिशला एवं महावीर के संवाद रूप सांस्कृतिक मंचन इत्यादि कार्यक्रम विशेष उल्लेखनीय रहे।

6. पूज्य माताजी की प्रेरणा पर आई.आई.टी. कानपुर के युवा अध्यापकों एवं छात्रों के संगठन 'जैन-मंच' ने "भगवान महावीर का 2600वाँ जन्मजयंती वर्ष आप सबके लिए मंगलकारी हो" के 26 बोर्ड पूरे कानपुर शहर में स्थान-स्थान पर लगवाये।

7. 2 मई (वैशाख शुक्ला दशमी) को भगवान महावीर का 'केवलज्ञानकल्याणक दिवस', 27 मई (ज्येष्ठ शुक्ला पंचमी) को 'श्रुतपंचमी पर्व' (प्रथम जैन सूत्र ग्रंथ "षट्खण्डागम" का अवतार दिवस), 26 जून (आषाढ़ शुक्ला षष्ठी) को भगवान महावीर का 'गर्भकल्याणक दिवस' विशेष आयोजनों एवं धर्मप्रभावना सहित मनाये गये। 6 से 8 जुलाई तक 'वीरशासन जयंती पर्व' (श्रावण कृष्णा एकम) के त्रिदिवसीय आयोजन के अंतिम दिन विपुलाचल पर्वत की भव्य झांकी एवं 2600 ग्रंथों का जुलूस निकाला गया।

9 से 13 जुलाई तक गौतम गणधर के मुख से उद्भूत 'चैत्यभक्ति' से समन्वित "सामायिक पाठ" का पूज्य गणिनी माताजी द्वारा एवं पदस्थ ध्यान (ॐ एवं ह्रीं) का प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती माताजी द्वारा "तीर्थंकर महावीर देशना शिविर" में अभ्यास कराया गया। इस सम्पूर्ण कार्यक्रम का प्रसारण 'आस्था-चैनल' पर किया गया।

23 अगस्त से 1 सितम्बर 2001 तक मनाये गये "दशलक्षण महापर्व" में पूज्य माताजी ने प्रतिदिन भगवान महावीर के पूर्व भवों का एक-एक दिन क्रम से वाचन करके जनसाधारण को उनके जीवनवृत्त से परिचित कराते हुए संयम, त्याग, सम्यक्त्व, दशधर्मों, सोलहकारण भावनाओं इत्यादि रूप धर्मामृत का पान कराया। आर्यिका श्री चंदनामती माताजी द्वारा लिखित भगवान महावीर संबंधी नाटकों का सुन्दर सांस्कृतिक मंचन दिल्ली की विविध महिला संगठन इकाइयों द्वारा रात्रि में करके विशेष धर्मप्रभावना की गई।

8. दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान, जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर द्वारा प्रकाशित मासिक पत्रिका 'सम्यग्ज्ञान' द्वारा भी प्रत्येक अंक में भगवान महावीर संबंधी विशेष सामग्री प्रकाशित कर जनचेतना का सार्थक प्रयास किया गया।

संस्थान के द्वारा ही 6 अप्रैल को राजधानी दिल्ली में महावीर जयंती के अवसर पर प्रधानमंत्री जी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुए महावीर जयंती के विराट कार्यक्रम में सम्मिलित होने हेतु पूज्य माताजी की प्रेरणा से युक्त पोस्टर सम्पूर्ण देश में भेजे गये। इसके अतिरिक्त भगवान महावीर के गर्भकल्याणक दिवस एवं वीरशासन जयंती पर्व को अखिल भारतीय स्तर पर मनाने हेतु पोस्टर तथा हैण्डबिल भी पूरे देश में पहुँचाये गये।

9. पूज्य माताजी की प्रेरणा से अखिल भारतीय दिगम्बर जैन महिला संगठन द्वारा विशेष कार्यकर्ता महिलाओं को 'माता त्रिशला पुरस्कार' देकर प्रोत्साहित किया गया। साथ ही "तीर्थंकर ऋषभदेव जैन विद्वत् महासंघ' को भी 'तीर्थंकर महावीर बालप्रतिभा पुरस्कार' प्रदान करने हेतु प्रेरित किया गया।

10. धर्मप्रभावना के प्रभावपूर्ण साधन टी.वी. के 'आस्था चैनल' के माध्यम से जहाँ 'दशलक्षण पर्व' में प्रतिदिन दशधर्मों एवं भगवान महावीर के पूर्वभवों पर पूज्य माताजी के मंगल प्रवचनों तथा सामायिक एवं ध्यान के अभ्यास का प्रसारण कर धर्मप्रभावना की गई, वहीं इसी चैनल पर 17 सितम्बर 2001 से लेकर लगभग 1 वर्ष तक प्रतिदिन मध्यान्ह 3.30 बजे से तीर्थंकर परम्परा का सचित्र ज्ञान जनसाधारण को घर बैठे सुलभ कराने का अत्युत्तम प्रयास पूज्य माताजी के मंगल प्रवचनों के माध्यम से किया गया।

11. "विश्वशांति महावीर विधान' का विराट राष्ट्रीय आयोजन (एक ही पाण्डाल में 26 मंडल बनाकर अलग-अलग विधान हुए) 21 से 28 अक्टूबर 2001 तक भगवान महावीर मण्डप, निकट दिल्ली गेट (फिरोजशाह कोटला मैदान),

दिल्ली में सम्पन्न हुआ, जिसमें राजधानी दिल्ली सहित विविध प्रांतों के हजारों भक्तों ने भाग लिया।

12. राजधानी दिल्ली-कनॉट प्लेस में ही प्रथम बार 'दीपावली' (15 नवम्बर 2001) के शुभ दिन भगवान महावीर की निर्वाणस्थली 'पावापुरी' की प्रतिकृति बनाकर सामूहिक रूप से 2600 निर्वाणलाडू चढ़ाने का भव्य कार्यक्रम आयोजित किया गया।

13. भगवान के जन्मकल्याणक से पवित्र सुमेरु पर्वत की 91 फुट ऊँची एकमात्र प्रतिकृति (जंबूद्वीप-हस्तिनापुर) पर भगवान महावीर का 2600 कलशों से महामस्तकाभिषेक कार्यक्रम आयोजित किया गया।

14. 10 दिसम्बर 2001 को तालकटोरा इन्डोर स्टेडियम, दिल्ली में जैनधर्म के चारों सम्प्रदायों द्वारा सामूहिक रूप से भगवान महावीर दीक्षाकल्याणक समारोह के आयोजन (मगशिर कृ. 10) में संघ सानिध्य प्रदान कर सामाजिक संगठन को मजबूत किया।

15. 6 जनवरी 2002 को फिक्की ऑडिटोरियम-दिल्ली में अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन युवा परिषद के स्थापना रजत जयंती समारोह में भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर के विकास हेतु युवाओं का आह्वान किया।

16. 20 फरवरी 2002 को संघ सहित दिल्ली से कुण्डलपुर (नालंदा) के लिए मंगल विहार कर दिया। इस यात्रा के मध्य मथुरा, आगरा, फिरोजाबाद, इटावा आदि स्थानों पर भारी धर्मप्रभावना के कार्यक्रम सम्पन्न हुए तथा सन् 2002 का चातुर्मास तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली-प्रयाग इलाहाबाद (उ.प्र.) में हुआ। पुनः 29 दिसम्बर 2002 को संघ का पदार्पण कुण्डलपुर की धरती पर हुआ तबसे कुण्डलपुर के विकासचरण प्रारंभ हो गये और 22 महीनों के अन्तराल में "नंद्यावर्त महल" के नाम से तीर्थ का जो अप्रतिम रूप निखर कर आया है वह इतिहास निर्माण के साथ-साथ संस्कृति संरक्षण का अभूतपूर्व कार्य है जो युगों-युगों तक महावीर जन्मभूमि को जीवन्त रखेगा।

17. कुण्डलपुर एवं आसपास के तीर्थक्षेत्रों में दी गई निर्माण प्रेरणा के अतिरिक्त पूज्य माताजी एवं संघ ने वहाँ की हजारों ग्रामीण जनता को मांसाहार का त्याग करवाकर उनसे शाकाहार संकल्प पत्र भरवाए तथा उन्हें सम्मानित किया गया।

18. जन्मभूमि में भगवान महावीर की जन्मजयंती मनाने की जो परम्परा लगभग 30 वर्ष से समाप्त हो गई थी उसे पुनः सन् 2003-2004 में व्यापक स्तर पर महावीर जयंती महोत्सव के रूप में प्रारंभ करवाई तथा जन्मभूमि समिति को आगे भी सदैव चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को महावीर जयंती मनाने की प्रेरणा दी है।

19. इसी प्रकार जन्मभूमि समिति के द्वारा सन् 2003-2004 के अक्टूबर मास में शरदपूर्णिमा के शुभ अवसर पर "कुण्डलपुर महोत्सव" मनाया गया।

20. भगवान महावीर 2600वें जन्मकल्याणक वर्ष के अंतर्गत पूज्य माताजी की प्रेरणा से सन् 2001 में "भगवान महावीर हिन्दी-अंग्रेजी जैन शब्दकोश" का निर्माण प्रारंभ हुआ जो आर्यिका श्री चंदनामती माताजी के अथक परिश्रम से सन् 2004 में पूर्ण होकर जनता के समक्ष प्रस्तुत हो रहा है। महोत्सव वर्ष की एक अमर उपलब्धि के रूप में यह जैन शब्दकोश वर्तमान पीढ़ी के लिए वास्तव में एक अमूल्य उपहार है।

21. कुण्डलपुर तीर्थ की पावनता, ऐतिहासिकता एवं प्राचीनता से जन-जन को परिचित कराने हेतु "कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ" की रूपरेखा बनी और अल्पकालिक प्रयासों के फलस्वरूप यह ग्रंथ प्रकाशित हुआ है। यह ग्रंथ आगमदर्पण के समान सभी जिज्ञासुओं की जिज्ञासा पूर्ण करेगा, ऐसा विश्वास है।

पूज्य माताजी के पर्वत समान ऊँचाई एवं सागर के समान अथाह विस्तृत व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व में से मैंने मात्र सरसों सदृश कतिपय बिन्दुओं को यहाँ प्रस्तुत किया है। इसी प्रकार से उनके द्वारा चिरकाल तक धर्मप्रभावना के कार्य होते रहें, यही मंगलभावना है।

* * *

नंद्यावर्त महल परिसर में दीवारों पर लगे शिलापट्ट

वर्तमान चौबीसी के शिलापट्ट

प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव का जीवन दर्शन

जन्मभूमि – **अयोध्या (उत्तर प्रदेश)**
पिता – महाराज नाभिराय
माता – महारानी मरुदेवी
वर्ण – क्षत्रिय
गोत्र – काश्यप
वंश – इक्ष्वाकु
देहवर्ण – तप्त स्वर्ण सदृश
चिन्ह – बैल
आयु – चौरासी लाख पूर्व वर्ष
अवगाहना – दो हजार हाथ
गर्भ – आषाढ़ कृ.2
जन्म – चैत्र कृ.9
तप – चैत्र कृ.9
दीक्षावन – प्रयाग का सिद्धार्थवन
दीक्षा वृक्ष – वट वृक्ष (अक्षयवट)
प्रथम आहार – हस्तिनापुर के राजा श्रेयांस द्वारा (इक्षुरस)
केवलज्ञान वन एवं वृक्ष–पुरिमतालपुर उद्यान (प्रयाग) एवं वटवृक्ष
केवलज्ञान – फाल्गुन कृ.11
मोक्ष – माघ कृ.14
मोक्षस्थल – कैलाश पर्वत

समवसरण में चतुर्विध संघ

गणधर – श्री वृषभसेन आदि 84
मुनि – चौरासी हजार
गणिनी – आर्यिका ब्राह्मी
आर्यिका – तीन लाख पचास हजार
श्रावक – तीन लाख
श्राविका – पांच लाख
जिनशासन यक्ष– गोमुख देव
यक्षी – चक्रेश्वरी देवी

भगवान ऋषभदेव वर्तमान वीर नि.सं.2530 से 39490 वर्ष कम, सौ लाख करोड़ सागर अर्थात् एक कोड़ाकोड़ी सागर वर्ष पहले मोक्ष गए हैं। इससे चौरासी लाख पूर्व वर्ष पहले जन्में हैं।

अर्घ्य–चाल–नंदीश्वर पूजा

जल चंदन अक्षत पुष्प, नेवज आदि लिया।
वर ज्ञानमती निधि हेतु, अर्घ्य समर्प्य किया।।
श्री आदिनाथ जिनराज, आदी तीर्थंकर।
मैं पूजूँ भक्ति समेत, तुमके क्षेमंकर।।

ॐ ह्रीं ऋषभदेवतीर्थंकराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दूसरे तीर्थंकर भगवान अजितनाथ का जीवन दर्शन

जन्मभूमि – **अयोध्या (उत्तर प्रदेश)**
पिता – महाराज जितशत्रु
माता – महारानी विजया
वर्ण – क्षत्रिय
गोत्र – काश्यप
वंश – इक्ष्वाकु
देहवर्ण – तप्त स्वर्ण सदृश
चिन्ह – हाथी
आयु – बहत्तर लाख पूर्व वर्ष
अवगाहना – अट्ठारह सौ हाथ
गर्भ – ज्येष्ठ कृ. अमावस्या
जन्म – माघ शु. 10
तप – माघ शु. 9
दीक्षावन – सहेतुक वन
दीक्षा वृक्ष – सप्तपर्ण वृक्ष
प्रथम आहार – साकेतनगरी के राजा ब्रह्म द्वारा (खीर)
केवलज्ञान वन एवं वृक्ष –सहेतुक वन एवं सप्तपर्ण वृक्ष
केवलज्ञान – पौष शु.11
मोक्ष – चैत्र शु.5
मोक्षस्थल – सम्मेद शिखर पर्वत

समवसरण में चतुर्विध संघ

गणधर – श्री सिंहसेन आदि 90
मुनि – एक लाख
गणिनी – आर्यिका प्रकुब्जा
आर्यिका – तीन लाख बीस हजार
श्रावक – तीन लाख
श्राविका – पांच लाख
जिनशासन यक्ष– महायक्ष देव
यक्षी – रोहिणी देवी

भगवान अजितनाथ वर्तमान वीर नि.सं. 2530 से 39490 वर्ष कम पचास लाख करोड़ सागर पहले मोक्ष गए हैं।

अर्घ्य – तोटक छंद

जल गंध प्रभृति वसु द्रव्य लिया।
निज ज्ञानमती हित अर्घ्य लिया।।
अजितेश जिनेश्वर नित्य नमूँ।
सब कर्म कषाय कलंक वमूँ।।

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथतीर्थंकराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीसरे तीर्थंकर भगवान संभवनाथ का जीवन दर्शन

जन्मभूमि – **श्रावस्ती (जिला-बहराइच) उत्तर प्रदेश**
पिता – महाराज दृढ़राज
माता – महारानी सुषेणा
वर्ण – क्षत्रिय
गोत्र – काश्यपं
वंश – इक्ष्वाकु
देहवर्ण – तप्त स्वर्ण सदृश
चिन्ह – घोड़ा
आयु – साठ लाख पूर्व वर्ष
अवगाहना – सोलह सौ हाथ
गर्भ – फाल्गुन शु.8
जन्म – कार्तिक शु. 15
तप – मगसिर शु.15
दीक्षावन – सहेतुक वन
दीक्षा वृक्ष – शाल्मलि वृक्ष
प्रथम आहार – श्रावस्ती के राजा सुरेन्द्रदत्त द्वारा (खीर)
केवलज्ञान वन एवं वृक्ष–सहेतुक वन एवं शाल्मलि वृक्ष
केवलज्ञान – कार्तिक कृ.4
मोक्ष – चैत्र शु.6
मोक्षस्थल – सम्मेद शिखर पर्वत

समवसरण में चतुर्विध संघ

गणधर – श्री चारूषेण आदि 105
मुनि – दो लाख
गणिनी – आर्यिका धर्मार्या
आर्यिका – तीन लाख बीस हजार
श्रावक – तीन लाख
श्राविका – पांच लाख
जिनशासन यक्ष– त्रिमुखदेव
यक्षी – प्रज्ञप्तिदेवी

भगवान संभवनाथ वर्तमान वीर नि.सं. 2530 से 39490 वर्ष कम, बीस लाख करोड़ सागर पहले मोक्ष गए हैं।

अर्घ्य–स्रग्विणी छंद

सर्वसंपत्तिधर नाथ ! अनमोल हो ।
अर्घ्य से पूजते 'ज्ञानमति' धवल हो।।
तीर्थ करतार संभव प्रभू को जजूँ।
कर्म निर्मूल कर स्वात्म अमृत चखूँ।।

ॐ ह्रीं श्री संभवनाथतीर्थंकराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौथे तीर्थंकर भगवान अभिनंदननाथ का जीवन दर्शन

जन्मभूमि – **अयोध्या (उत्तर प्रदेश)**
पिता – महाराज स्वयंवरराज
माता – महारानी सिद्धार्था
वर्ण – क्षत्रिय
गोत्र – काश्यप
वंश – इक्ष्वाकु
देहवर्ण – तप्त स्वर्ण सदृश
चिन्ह – बंदर
आयु – पचास लाख पूर्व वर्ष
अवगाहना – चौदह सौ हाथ
गर्भ – वैशाख शु. 6
जन्म – माघ शु. 12
तप – माघ शु. 12
दीक्षावन – सहेतुक वन
दीक्षा वृक्ष – असन वृक्ष
प्रथम आहार – साकेत नगरी के राजा इन्द्रदत्त द्वारा (खीर)
केवलज्ञान वन एवं वृक्ष–सहेतुक वन एवं असन वृक्ष
केवलज्ञान – पौष शु. 14
मोक्ष – वैशाख शु.6
मोक्षस्थल – सम्मेद शिखर पर्वत

समवसरण में चतुर्विध संघ

गणधर – श्री वज्रनाभि आदि 103
मुनि – तीन लाख
गणिनी – आर्यिका मेरुषेणा
आर्यिका – तीन लाख तीस हजार छह सौ
श्रावक – तीन लाख
श्राविका – पांच लाख
जिनशासन यक्ष– यक्षेश्वर देव
यक्षी – वज्रश्रृंखला देवी

भगवान अभिनंदननाथ वर्तमान वीर नि.सं. 2530 से 39490 वर्ष कम, दस लाख करोड़ सागर पहले मोक्ष गए हैं।

अर्घ्य–नरेन्द्र छंद

जल फल अर्घ्य सजाकर उसमें, चाँदी पुष्प मिलाऊँ।
ज्ञानमती कैवल्य हेतु मैं, प्रभु को अर्घ्य चढ़ाऊँ ।।
अभिनन्दन जिन चरणकमल को, पूजूँ मन वच तन से ।
परमानन्द सुखानन्द पाऊँ, छूटूँ भव भव दुःख से।।

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथतीर्थंकराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पाँचवें तीर्थंकर भगवान सुमतिनाथ का जीवन दर्शन

जन्मभूमि – अयोध्या (उत्तर प्रदेश)
पिता – महाराज मेघरथ
माता – महारानी सुमंगला देवी
वर्ण – क्षत्रिय
गोत्र – काश्यप
वंश – इक्ष्वाकु
देहवर्ण – तप्त स्वर्ण सदृश
चिन्ह – चकवा
आयु – चालीस लाख पूर्व वर्ष
अवगाहना – बारह सौ हाथ
गर्भ – श्रावण शु.2
जन्म – चैत्र शु. 11
तप – वैशाख शु.9
दीक्षावन – सहेतुक वन
दीक्षा वृक्ष – प्रियंगुवृक्ष
प्रथम आहार – सौमनस नगर के राजा पद्म द्वारा (खीर)
केवलज्ञान वन एवं वृक्ष–सहेतुक वन एवं प्रियंगुवृक्ष वृक्ष
केवलज्ञान – चैत्र शु.11
मोक्ष – चैत्र शु.11
मोक्षस्थल – सम्मेद शिखर पर्वत

समवसरण में चतुर्विध संघ

गणधर – श्री अमर आदि 116
मुनि – तीन लाख बीस हजार
गणिनी – आर्यिका अनंतमती
आर्यिका – तीन लाख तीस हजार
श्रावक – तीन लाख
श्राविका – पांच लाख
जिनशासन यक्ष– तुंबुरू देव
यक्षी – पुरुषदत्ता देवी

भगवान सुमतिनाथ वर्तमान वीर नि.सं. 2530 से 39490 वर्ष कम, एक लाख करोड़ सागर पहले मोक्ष गए हैं।

अर्घ्य–गीता छंद

जल गंध अक्षत पुष्प में, बहुरत्न आदि मिलाय के।
मैं अर्घ्य अर्पण करूँ प्रभु को, 'ज्ञानमति' हर्षाय के।।
हे सुमति जिन! तुम पाद पंकज, की करूँ मैं अर्चना।
सद्बुद्धि पाऊँ नाथ! अब मैं, करूँ यम की तर्जना ।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथतीर्थंकराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छठे तीर्थंकर भगवान पद्मप्रभ का जीवन दर्शन

जन्मभूमि – कौशाम्बी (जिला-कौशाम्बी) उत्तर प्रदेश
पिता – महाराज धरणराज
माता – महारानी सुसीमा
वर्ण – क्षत्रिय
गोत्र – काश्यप
वंश – इक्ष्वाकु
देहवर्ण – पद्मरागमणि सदृश
चिन्ह – लाल कमल
आयु – तीस लाख पूर्व वर्ष
अवगाहना – एक हजार हाथ
गर्भ – माघ कृ.6
जन्म – कार्तिक कृ. 13
तप – कार्तिक कृ.13
दीक्षावन – मनोहर वन (प्रभाषगिरि)
दीक्षा वृक्ष – प्रियंगुवृक्ष
प्रथम आहार – वर्द्धमान नगर के राजा सोमदत्त द्वारा (खीर)
केवलज्ञान वन एवं वृक्ष–मनोहर वन (प्रभाषगिरि) एवं प्रियंगुवृक्ष
केवलज्ञान – चैत्र शु.15
मोक्ष – फाल्गुन कृ.4
मोक्षस्थल – सम्मेद शिखर पर्वत

समवसरण में चतुर्विध संघ

गणधर – श्री वज्रचामर आदि 110
मुनि – तीन लाख तीस हजार
गणिनी – आर्यिका रतिषेणा
आर्यिका – चार लाख तीस हजार
श्रावक – तीन लाख
श्राविका – पांच लाख
जिनशासन यक्ष– कुसुमदेव
यक्षी – मनोवेगा देवी

भगवान पद्मप्रभ वर्तमान वीर नि.सं. 2530 से 39490 वर्ष कम बीस लाख करोड़ सागर पहले मोक्ष गए हैं।

अर्घ्य–चौपाई छंद

अर्घ्य चढ़ाय जजूँ जिनराज, प्रभु तुम तारण तरण जिहाज।
पद्मप्रभू जिनवर पदपद्म, पूजत 'ज्ञानमती' सुख सद्म ।।

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभतीर्थंकराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सातवें तीर्थंकर भगवान सुपार्श्वनाथ का जीवन दर्शन

जन्मभूमि – बनारस (उत्तर प्रदेश)
पिता – महाराज सुप्रतिष्ठित
माता – महारानी पृथ्वीषेणा
वर्ण – क्षत्रिय
गोत्र – काश्यप
वंश – इक्ष्वाकु
देहवर्ण – मरकतमणि सम (हरा)
चिन्ह – स्वस्तिक
आयु – बीस लाख पूर्व वर्ष
अवगाहना – आठ सौ हाथ
गर्भ – भाद्रपद श. 6
जन्म – ज्येष्ठ शु. 12
तप – ज्येष्ठ शु. 12
दीक्षावन – सहेतुक वन
दीक्षा वृक्ष – शिरीष वृक्ष
प्रथम आहार – सोमखेट नगर के राजा महेन्द्रदत्त द्वारा (खीर)
केवलज्ञान वन एवं वृक्ष– सहेतुक वन एवं शिरीष वृक्ष
केवलज्ञान – फाल्गुन कृ.6
मोक्ष – फाल्गुन कृ.7
मोक्षस्थल – सम्मेद शिखर पर्वत

समवसरण में चतुर्विध संघ

गणधर – श्रीबल आदि 95
मुनि – तीन लाख
गणिनी – आर्यिका मीनार्या
आर्यिका – तीन लाख तीस हजार
श्रावक – तीन लाख
श्राविका – पांच लाख
जिनशासन यक्ष– वरनंदिदेव
यक्षी – काली देवी

भगवान सुपार्श्वनाथ वर्तमान वीर नि.सं. 2530 से 39490 वर्ष कम दस हजार करोड़ सागर पहले मोक्ष गए हैं।

अर्घ्य–चाल–नंदीश्वर पूजा

वसु अर्घ्य रजत के पुष्प, थाल भराय लिया।
परिपूर्ण ज्ञानमति हेतु, अर्घ्य चढ़ाय दिया।
भगवान् सुपार्श्व जिनराज, मेरी अर्ज सुनो ।
दे दीजे निज सम्राज्य, मैं तुम चरण नमों।।

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथतीर्थंकराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आठवें तीर्थंकर भगवान चन्द्रप्रभु का जीवन दर्शन

जन्मभूमि – चन्द्रपुरी (जिला-बनारस) उत्तर प्रदेश
पिता – महाराज महासेन
माता – महारानी लक्ष्मणा
वर्ण – क्षत्रिय
गोत्र – काश्यप
वंश – इक्ष्वाकु
देहवर्ण – कुंदपुष्प सम श्वेत
चिन्ह – चन्द्रमा
आयु – दस लाख पूर्व वर्ष
अवगाहना – छह सौ हाथ
गर्भ – चैत्र कृ. 5
जन्म – पौष कृ. 11
तप – पौष कृ. 11
दीक्षावन – सर्वर्तुकवन
दीक्षा वृक्ष – नागवृक्ष
प्रथम आहार – नलिन नगर के राजा सोमदत्त द्वारा (खीर)
केवलज्ञान वन एवं वृक्ष–सर्वर्तुकवन एवं नागवृक्ष
केवलज्ञान – फाल्गुन कृ.7
मोक्ष – फाल्गुन कृ.7
मोक्षस्थल – सम्मेद शिखर पर्वत

समवसरण में चतुर्विध संघ

गणधर – श्री श्रीदत्त आदि 93
मुनि – ढाई लाख
गणिनी – आर्यिका वरुणा
आर्यिका – तीन लाख अस्सी हजार
श्रावक – तीन लाख
श्राविका – पांच लाख
जिनशासन यक्ष– विजयदेव
यक्षी – ज्वालामालिनी देवी

भगवान चन्द्रप्रभु वर्तमान वीर नि.सं. 2530 से 39490 वर्ष कम सौ करोड़ सागर पहले मोक्ष गए हैं।

अर्घ्य–नरेन्द्रछंद

जल चंदन अक्षत कुसुमावलि, आदिक अर्घ बनाऊँ।
उसमें रत्न मिलाकर अर्पूं, 'ज्ञानमती' निधि पाऊँ ।।
मुनि मनकुमुद विकासी चंदा, चंद्रप्रभु को पूजूँ।
निज समरस सुख सुधा पानकर, भव भव दुःख से छूटूँ।।

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभुतीर्थंकराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नवमें तीर्थंकर भगवान पुष्पदंतनाथ का जीवन दर्शन

जन्मभूमि – काकन्दी (उत्तर प्रदेश)
पिता – महाराज सुग्रीव
माता – महारानी जयरामा
वर्ण – क्षत्रिय
गोत्र – काश्यप
वंश – इक्ष्वाकु
देहवर्ण – कुंदपुष्प सम श्वेत
चिन्ह – मगर
आयु – दो लाख पूर्व वर्ष
अवगाहना – चार सौ हाथ
गर्भ – फाल्गुन कृ.9
जन्म – मगसिर शु.1
तप – मगसिर शु. 1
दीक्षावन – पुष्पकवन
दीक्षा वृक्ष – नागवृक्ष
प्रथम आहार – शैलपुर के राजा पुष्पमित्र द्वारा (खीर)
केवलज्ञान वन एवं वृक्ष – पुष्पकवन एवं नागवृक्ष
केवलज्ञान – कार्तिक शु.2
मोक्ष – भाद्रपद शु.8
मोक्षस्थल – सम्मेद शिखर पर्वत

समवसरण में चतुर्विध संघ

गणधर – श्री विदर्भ आदि 88
मुनि – दो लाख
गणिनी – आर्यिका घोषार्या
आर्यिका – तीन लाख अस्सी हजार
श्रावक – दो लाख
श्राविका – पांच लाख
जिनशासन यक्ष – अजित देव
यक्षी – महाकाली देवी

भगवान पुष्पद्रन्तनाथ वर्तमान वीर नि.सं. 2530 से 39490 वर्ष कम दस करोड़ सागर पहले मोक्ष गए हैं।

अर्घ्य–नरेन्द्रछंद

जल गंधादिक अर्घ्य बनाकर, सुवरण पुष्प मिलाऊँ।
केवल ज्ञानमती हेतू मैं, प्रभु को अर्घ्य चढ़ाऊँ।।
पुष्पदंत जिन पद पंकज को, पूजत निज सुख पाऊँ।
इष्ट वियोग अनिष्ट योग के, सब दुःख शीघ्र नशाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंतनाथतीर्थंकराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दसवें तीर्थंकर भगवान शीतलनाथ का जीवन दर्शन

जन्मभूमि – भद्रपुरी
पिता – महाराज दृढ़रथ
माता – महारानी सुनन्दा
वर्ण – क्षत्रिय
गोत्र – काश्यप
वंश – इक्ष्वाकु
देहवर्ण – तप्त स्वर्ण सदृश
चिन्ह – श्रीवृक्ष (कल्पवृक्ष)
आयु – एक लाख पूर्व वर्ष
अवगाहना – तीन सौ साठ हाथ
गर्भ – चैत्र कृ. 8
जन्म – माघ कृ. 12
तप – माघ कृ. 12
दीक्षावन – सहेतुक वन
दीक्षा वृक्ष – बेलवृक्ष
प्रथम आहार – अरिष्ट नगर के राजा पुनर्वसु द्वारा (खीर)
केवलज्ञान वन एवं वृक्ष–सहेतुक वन एवं बेलवृक्ष
केवलज्ञान – पौष कृ. 14
मोक्ष – आश्विन शु. 8
मोक्षस्थल – सम्मेद शिखर पर्वत

समवसरण में चतुर्विध संघ

गणधर – श्री अनगार आदि 81
मुनि – एक लाख
गणिनी – आर्यिका धरणा
आर्यिका – तीन लाख अस्सी हजार
श्रावक – दो लाख
श्राविका – तीन लाख
जिनशासन यक्ष – ब्रह्मेश्वर देव
यक्षी – मानवी देवी

भगवान शीतलनाथ वर्तमान वीर नि.सं. 2530 से 39490 वर्ष कम एक करोड़ सागर पहले मोक्ष गए हैं।

अर्घ्य–शंभु छंद

निज आतमनिधि को भूल गया, बस मूल्य विषय सुख का आंका।
वर ज्ञानमती हित अर्घ्य चढ़ाकर, पाऊँ रत्नत्रय साँचा ।।
हे शीतल तीर्थंकर! तुमको, पूजत मन शीतल हो जावे।
वच शीतल हों सब व्याधि नशें, तनु में शीतलता आ जावे।।

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथतीर्थंकराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ग्यारहवें तीर्थंकर भगवान श्रेयांसनाथ का जीवन दर्शन

जन्मभूमि – सिंहपुरी-सारनाथ (जिला-बनारस) उत्तर प्रदेश
पिता – महाराज विष्णुमित्र
माता – महारानी नन्दा
वर्ण – क्षत्रिय
गोत्र – काश्यप
वंश – इक्ष्वाकु
देहवर्ण – तप्त स्वर्ण सदृश
चिन्ह – गैंडा
आयु – चौरासी लाख वर्ष
अवगाहना – तीन सौ बीस हाथ
गर्भ – ज्येष्ठ कृ. 6
जन्म – फाल्गुन कृ. 11
तप – फाल्गुन कृ. 11
दीक्षावन – मनोहर वन
दीक्षा वृक्ष – तुंबुरू वृक्ष
प्रथम आहार – सिद्धार्थ नगर के राजा नंद द्वारा (खीर)
केवलज्ञान वन एवं वृक्ष–मनोहरवन एवं तुंबुरू वृक्ष
केवलज्ञान – माघ कृ. अमावस
मोक्ष – श्रावण शु. 15
मोक्षस्थल – सम्मेद शिखर पर्वत

समवसरण में चतुर्विध संघ

गणधर – श्री कुन्थु आदि 77
मुनि – चौरासी हजार
गणिनी – आर्यिका धारणा
आर्यिका – एक लाख बीस हजार
श्रावक – दो लाख
श्राविका – चार लाख
जिनशासन यक्ष– कुमार देव
यक्षी – गौरी देवी

भगवान श्रेयांसनाथ वर्तमान वीर नि.सं. 2530 से 100 सागर 65,86,530 वर्ष पहले मोक्ष गए हैं।

अर्घ्य–भुजंगप्रयातछंद

मिले नीर गंधादि चांदी कुसुम भी।
चढ़ाऊँ तुम्हें अर्घ्य हो 'ज्ञानमती' भी।।
मिले पूर्णशांति महा ज्ञानधारा ।
सभी दुःख नाशे मिले सौख्य सारा ।।

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथतीर्थंकराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बारहवें तीर्थंकर भगवान वासुपूज्य का जीवन दर्शन

जन्मभूमि – चंपापुर (जि.-भागलपुर) बिहार
पिता – महाराज वसुपूज्य
माता – महारानी जयावती
वर्ण – क्षत्रिय
गोत्र – काश्यप
वंश – इक्ष्वाकु
देहवर्ण – पद्रागमणि सदृश
चिन्ह – भैंसा
आयु – बहत्तर लाख वर्ष
अवगाहना – दो सौ अस्सी हाथ
गर्भ – आषाढ़ कृ.6
जन्म – फाल्गुन कृ. 14
तप – फाल्गुन कृ.14
दीक्षावन – मनोहर उद्यान
दीक्षा वृक्ष – कदंब वृक्ष
प्रथम आहार – महानगर के राजा सुंदर द्वारा (खीर)
केवलज्ञान वन एवं वृक्ष–मनोहर उद्यान एवं कदंब वृक्ष
केवलज्ञान – माघ शु.2
मोक्ष – भाद्रपद शु.14
मोक्षस्थल – चंपापुर (मंदारगिरि)

समवसरण में चतुर्विध संघ

गणधर – श्री धर्म आदि 66
मुनि – बहत्तर लाख
गणिनी – आर्यिका सेनार्या
आर्यिका – एक लाख छह हजार
श्रावक – दो लाख
श्राविका – चार लाख
जिनशासन यक्ष– षण्मुख देव
यक्षी – गांधारी देवी

भगवान वासुपूज्य वर्तमान वीर नि.सं. 2530 से छियालिस सागर 65,86,530 वर्ष पहले मोक्ष गए हैं।

अर्घ्य–गीताछंद

हे नाथ! निज के रत्नत्रय अनमोल श्रेष्ठ अनर्घ हैं।
मुझको दिलावो 'ज्ञानमती' इस हेतु अर्घ्य समर्प्य है।।
श्री वासुपूज्य जिनेन्द्र द्वादश तीर्थकर्ता सिद्ध हैं।
सौ इन्द्र वंदित पद कमल, सम्पूर्ण सिद्धि निमित्त हैं।।

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यनाथतीर्थंकराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तेरहवें तीर्थंकर भगवान विमलनाथ का जीवन दर्शन

जन्मभूमि – कांपिल्यपुरी (कंपिलाजी) जि. फरूक्खाबाद (उ.प्र.)
पिता – महाराज कृतवर्मा
माता – महारानी जयश्यामा
वर्ण – क्षत्रिय
गोत्र – काश्यप
वंश – इक्ष्वाकु
देहवर्ण – तप्त स्वर्ण सदृश
चिन्ह – सूकर
आयु – साठ लाख वर्ष
अवगाहना – दो सौ चालीस हाथ
गर्भ – ज्येष्ठ कृ.10
जन्म – माघ शु. 4
तप – माघ शु. 4
दीक्षावन – सहेतुक वन
दीक्षा वृक्ष – जामुन वृक्ष
प्रथम आहार – नंदनपुर के राजा कनकप्रभ द्वारा (खीर)
केवलज्ञान वन एवं वृक्ष–सहेतुक वन एवं जामुन वृक्ष
केवलज्ञान – माघ शु.6
मोक्ष – आषाढ़ कृ. 8
मोक्षस्थल – सम्मेद शिखर पर्वत

समवसरण में चतुर्विध संघ

गणधर – श्री श्रीमंदर आदि 55
मुनि – अड़सठ हजार
गणिनी – आर्यिका पद्मा
आर्यिका – एक लाख तीन हजार
श्रावक – दो लाख
श्राविका – चार लाख
जिनशासन यक्ष – पाताल देव
यक्षी – वैराटी देवी

भगवान विमलनाथ वर्तमान वीर नि.सं. 2530 से सोलह सागर 65,86,530 वर्ष पहले मोक्ष गए हैं।

अर्घ्य–दोहा

जल गंधादिक अर्घ्य ले, रजत पुष्प विलसंत।
अर्घ्य चढ़ाने से मिले, 'ज्ञानमती' सुख कंद ।।

ॐ ह्रीं श्रीविमलनाथतीर्थंकराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौदहवें तीर्थंकर भगवान अनन्तनाथ का जीवन दर्शन

जन्मभूमि – अयोध्या (उ.प्र.)
पिता – महाराज सिंहसेन
माता – महारानी ज़यश्यामा
वर्ण – क्षत्रिय
गोत्र – काश्यप
वंश – इक्ष्वाकु
देहवर्ण – तप्त स्वर्ण सदृश
चिन्ह – सेही
आयु – तीस लाख वर्ष
अवगाहना – दो सौ हाथ
गर्भ – कार्तिक कृ.1
जन्म – ज्येष्ठ कृ.12
तप – ज्येष्ठ कृ. 12
दीक्षावन – सहेतुक वन
दीक्षा वृक्ष – पीपल वृक्ष
प्रथम आहार – साकेत पुर के राजा विशाख द्वारा (खीर)
केवलज्ञान वन एवं वृक्ष–सहेतुक वन एवं पीपल वृक्ष
केवलज्ञान – चैत्र कृ. अमावस
मोक्ष – चैत्र कृ. अमावस
मोक्षस्थल – सम्मेद शिखर पर्वत

समवसरण में चतुर्विध संघ

गणधर – श्री जय आदि 50
मुनि – छ्यासठ हजार
गणिनी – आर्यिका सर्वश्री
आर्यिका – एक लाख आठ हजार
श्रावक – दो लाख
श्राविका – चार लाख
जिनशासन यक्ष – किन्नर देव
यक्षी – अनंतमती देवी

भगवान अनन्तनाथ वर्तमान वीर नि.सं. 2530 से सात सागर 65,86,530 वर्ष पहले मोक्ष गए हैं।

अर्घ्य–अडिल्ल छंद

जल गंधादिक अर्घ्य, लिया भर थाल में।
ज्ञानमती निधि हेतु, जजूँ त्रयकाल में ।।
भव अन्तक श्री जिन, अनन्त पद को जजूँ।
रोगशोक भय नाश, सहज निज सुख भजूँ।।

ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथतीर्थंकराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पन्द्रहवें तीर्थंकर भगवान धर्मनाथ का जीवन दर्शन

जन्मभूमि – रत्नपुरी (जिला फैजाबाद) उत्तर प्रदेश
पिता – महाराज भानुराज
माता – महारानी सुप्रभा
वर्ण – क्षत्रिय
गोत्र – काश्यप
वंश – इक्ष्वाकु
देहवर्ण – तप्त स्वर्ण सदृश
चिन्ह – वज्रदंड
आयु – दस लाख वर्ष
अवगाहना – एक सौ अस्सी हाथ
गर्भ – वैशाख शु. 13
जन्म – माघ शु. 13
तप – माघ शु. 13
दीक्षावन – शालवन
दीक्षा वृक्ष – सप्तवर्ण वृक्ष
प्रथम आहार – पाटलिपुत्र नगर के राजा धन्यषेण द्वारा (खीर)
केवलज्ञान वन एवं वृक्ष–शालवन एवं सप्तवर्ण
केवलज्ञान – पौष शु. 15
मोक्ष – ज्येष्ठ शु. 4
मोक्षस्थल – सम्मेद शिखर पर्वत

समवसरण में चतुर्विध संघ

गणधर – श्री अरिष्टसेन आदि 43
मुनि – चौंसठ हजार
गणिनी – आर्यिका सुव्रता
आर्यिका – बासठ हजार चार सौ
श्रावक – दो लाख
श्राविका – चार लाख
जिनशासन यक्ष– किंपुरुषदेव
यक्षी – मानसी देवी

भगवान धर्मनाथ वर्तमान वीर नि.सं. 2530 से तीन सागर 65,86,530 वर्ष पहले मोक्ष गए हैं।

अर्घ्य–नाराच छंद

जलादि अष्टद्रव्य लेय अर्घ्य को बनाइए।
सुज्ञानमती पूर्ण हेतु नाथ को चढ़ाइए।।
जिनेन्द्र धर्मनाथ के पदारविंद में नमूँ।
समस्त रोग शोक मोह राग द्वेष को वमूँ।।

ॐ ह्रीं श्रीधर्मनाथतीर्थंकराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोलहवें तीर्थंकर भगवान शान्तिनाथ का जीवन दर्शन

जन्मभूमि – हस्तिनापुर (जि. मेरठ) उत्तर प्रदेश
पिता – महाराज विश्वसेन
माता – महारानी ऐरावती
वर्ण – क्षत्रिय
गोत्र – काश्यप
वंश – कुरु
देहवर्ण – तप्त स्वर्ण सदृश
चिन्ह – हरिण
आयु – एक लाख वर्ष
अवगाहना – एक सौ साठ हाथ
गर्भ – भाद्रपद कृ. 7
जन्म – ज्येष्ठ कृ. 14
तप – ज्येष्ठ कृ. 14
दीक्षावन – सहस्राम्रवन
दीक्षा वृक्ष – नंद्यावर्त वृक्ष
प्रथम आहार – मंदिरपुर के राजा सुमित्र द्वारा (खीर)
केवलज्ञान वन एवं वृक्ष–सहस्राम्रवन एवं नंद्यावर्त वृक्ष
केवलज्ञान – पौष शु. 10
मोक्ष – ज्येष्ठ कृ. 14
मोक्षस्थल – सम्मेद शिखर पर्वत

समवसरण में चतुर्विध संघ

गणधर – श्री चक्रायुध आदि 36
मुनि – बासठ हजार
गणिनी – आर्यिका हरिषेणा
आर्यिका – साठ हजार तीन सौ
श्रावक – दो लाख
श्राविका – चार लाख
जिनशासन यक्ष– गरुड़देव
यक्षी – महामानसी देवी

भगवान शांतिनाथ वर्तमान वीर नि.सं. 2530 से पौन पल्य 65,86,530 वर्ष पहले मोक्ष गए हैं।

अर्घ्य–दोहा

अनमोल रत्नत्रय निधी की, मैं करूँ अब याचना।
वर अर्घ अर्पत 'ज्ञानमति' से, पूर्ण होगी कामना।।
श्री शांतिनाथ जिनेश शाश्वत, शांति के दाता तुम्हीं।
प्रभु शांति ऐसी दीजिए, हो फिर कभी यांचा नहीं।।

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथतीर्थंकराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सत्रहवें तीर्थंकर भगवान कुंथुनाथ का जीवन दर्शन

जन्मभूमि – हस्तिनापुर (जि. मेरठ) उत्तर प्रदेश
पिता – महाराज सूरसेन
माता – महारानी श्रीकांता
वर्ण – क्षत्रिय
गोत्र – काश्यप
वंश – कुरुवंश
देहवर्ण – तप्त स्वर्ण सदृश
चिन्ह – बकरा
आयु – पंचानवे हजार वर्ष
अवगाहना – एक सौ चालीस हाथ
गर्भ – श्रावण कृ.10
जन्म – वैशाख शु. 1
तप – वैशाख शु. 1
दीक्षावन – सहेतुक वन
दीक्षा वृक्ष – तिलक वृक्ष
प्रथम आहार – हस्तिनापुर के राजा धर्ममित्र द्वारा (खीर)
केवलज्ञान वन एवं वृक्ष – सहेतुक वन एवं तिलक वृक्ष
केवलज्ञान – चैत्र शु. 3
मोक्ष – वैशाख शु. 1
मोक्षस्थल – सम्मेद शिखर पर्वत

समवसरण में चतुर्विध संघ

गणधर – श्री स्वयंभू आदि 35
मुनि – साठ हजार
गणिनी – आर्यिका भाविता
आर्यिका – साठ हजार तीन सौ पचास
श्रावक – दो लाख
श्राविका – तीन लाख
जिनशासन यक्ष – गंधर्व देव
यक्षी – जया देवी

भगवान कुंथुनाथ वर्तमान वीर नि.सं. 2530 से पाव पल्य और 65,86,530 वर्ष पहले मोक्ष गए हैं।

अर्घ्य–बसंततिलका छंद

नीरादि अष्ट शुभद्रव्य सुथाल भर के।
पूजूँ तुम्हें सकल 'ज्ञानमती' सदा हो।।
श्री कुंथुनाथ पद पंकज को जजूँ मैं।
छूटूँ अनन्त भव संकट से सदा जो।।

ॐ ह्रीं श्रीकुंथुनाथतीर्थंकराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अठारहवें तीर्थंकर भगवान अरनाथ का जीवन दर्शन

जन्मभूमि – हस्तिनापुर (जिला मेरठ) उत्तर प्रदेश
पिता – महाराज सुदर्शन
माता – महारानी मित्रसेना
वर्ण – क्षत्रिय
गोत्र – काश्यप
वंश – कुरुवंश
देहवर्ण – तप्त स्वर्ण सदृश
चिन्ह – मछली
आयु – चौरासी हजार वर्ष
अवगाहना – एक सौ बीस हाथ
गर्भ – फाल्गुन कृ.3
जन्म – मगसिर शु.14
तप – मगसिर शु. 10
दीक्षावन – सहेतुक वन
दीक्षा वृक्ष – आम्र वृक्ष
प्रथम आहार – चक्रपुर के राजा अपराजित द्वारा (खीर)
केवलज्ञान वन एवं वृक्ष – सहेतुक वन एवं आम्र वृक्ष
केवलज्ञान – कार्तिक शु. 12
मोक्ष – चैत्र कृ. अमावस्या
मोक्षस्थल – सम्मेद शिखर पर्वत

समवसरण में चतुर्विध संघ

गणधर – श्री कुंभार्य आदि 30
मुनि – पचास हजार
गणिनी – आर्यिका यक्षिला
आर्यिका – साठ हजार
श्रावक – एक लाख साठ हजार
श्राविका – तीन लाख
जिनशासन यक्ष – महेन्द्र देव
यक्षी – विजया देवी

भगवान अरनाथ वर्तमान वीर नि.सं. 2530 से 10 अरब 65,86,530 वर्ष पहले मोक्ष गए हैं।

अर्घ्य–अडिल्ल छंद

जल चंदन अक्षत आदिक वसु द्रव्य ले।
अर्घ चढ़ाऊँ 'ज्ञानमती' निधियाँ मिलें।।
श्री अरनाथ जिनेन्द्र, जजूँ मन लाय के।
समतारस पीयूष, चखूँ तुम पाय के।।

ॐ ह्रीं श्रीअरनाथतीर्थंकराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उन्नीसवें तीर्थंकर भगवान मल्लिनाथ का जीवन दर्शन

जन्मभूमि – मिथिलानगरी
पिता – महाराज कुंभराज
माता – महारानी प्रजावती
वर्ण – क्षत्रिय
गोत्र – काश्यप
वंश – इक्ष्वाकु
देहवर्ण – तप्त स्वर्ण सदृश
चिन्ह – कलश
आयु – पचपन हजार वर्ष
अवगाहना – सौ हाथ
गर्भ – चैत्र शु. 1
जन्म – मगसिर शु.11
तप – ममसिर शु. 11
दीक्षावन – श्वेतवन
दीक्षा वृक्ष – अशोक वृक्ष
प्रथम आहार – मिथिला नगरी के राजा नंदिषेण द्वारा (खीर)
केवलज्ञान वन एवं वृक्ष–श्वेतवन एवं अशोक वृक्ष
केवलज्ञान – पौष कृ. 2
मोक्ष – फ़ाल्गुन शु. 5
मोक्षस्थल – सम्मेद शिखर पर्वत

समवसरण में चतुर्विध संघ

गणधर – श्री विशाख आदि 28
मुनि – चालीस हजार
गणिनी – आर्यिका बंधुषेणा
आर्यिका – पचपन हजार
श्रावक – एक लाख
श्राविका – तीन लाख
जिनशासन यक्ष– कुबेर देव
यक्षी – अपराजिता देवी

भगवान मल्लिनाथ वर्तमान वीर नि.सं. 2530 से 65,86,530 वर्ष पहले मोक्ष गए हैं।

अर्घ्य–गीता छंद

जलगंध अक्षत् पुष्प नेवज, दीप धूप फलादि ले।
जिन कल्पतरु पूजत मुझे, कैवल्य सुज्ञानमती मिले।।
श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्र के, चरणाब्ज का अर्चन करूँ।
यमराज मल्ल पछाड़ने को, कोटिशः वन्दन करूँ।।

ॐ ह्रीं श्रीमल्लिनाथतीर्थंकराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बीसवें तीर्थंकर भगवान मुनिसुव्रतनाथ का जीवन दर्शन

जन्मभूमि – राजगृही (जिला नालंदा) झारखण्ड
पिता – महाराज सुमित्र
माता – महारानी सोमा
वर्ण – क्षत्रिय
गोत्र – काश्यप
वंश – हरिवंश
देहवर्ण – वैडूर्यमणि सदृश
चिन्ह – कछुआ
आयु – तीस हजार वर्ष
अवगाहना – अस्सी हाथ
गर्भ – श्रावण कृ. 2
जन्म – वैशाख कृ. 12
तप – वैशाख कृ. 10
दीक्षावन – नीलवन
दीक्षा वृक्ष – चंपक वृक्ष
प्रथम आहार – राजगृह के राजा वृषभसेन द्वारा (खीर)
केवलज्ञान वन एवं वृक्ष– नील वन एवं चंपक वृक्ष
केवलज्ञान – वैशाख कृ. 9
मोक्ष – फाल्गुन कृ. 12
मोक्षस्थल – सम्मेद शिखर पर्वत

समवसरण में चतुर्विध संघ

गणधर – श्री मल्लि आदि 18
मुनि – तीस हजार
गणिनी – आर्यिका पुष्पदंता
आर्यिका – पचास हजार
श्रावक – एक लाख
श्राविका – तीन लाख
जिनशासन यक्ष– वरूण देव
यक्षी – बहरूपिणी देवी

भगवान मुनिसुव्रतनाथ वर्तमान वीर नि.सं. 2530 से 11,86,530 वर्ष पहले मोक्ष गए हैं।

अर्घ्य–बसंततिकाछंद

नीरादि अर्घ्य भर थाल चढ़ाये देऊँ।
कैवल्य ज्ञानमती नाथ! मुझे दिला दो।।
वंदू सदैव मुनिसुव्रत को रुचि से।
सम्पूर्ण चारित मिले भव दुःख नाशें।।

ॐ ह्रीं श्रीमुनिसुव्रतनाथतीर्थंकराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इक्कीसवें तीर्थंकर भगवान नमिनाथ का जीवन दर्शन

जन्मभूमि – **मिथिलानगरी**
पिता – महाराज विजय
माता – महारानी वप्पिला (वर्मिला)
वर्ण – क्षत्रिय
गोत्र – काश्यप
वंश: – इक्ष्वाकु
देहवर्ण – तप्त स्वर्ण सदृश
चिन्ह – नीलकमल
आयु – दस हजार वर्ष
अवगाहना – साठ हाथ
गर्भ – आश्विन कृ.2
जन्म – आषाढ़ कृ.10
तप – आषाढ़ कृ.10
दीक्षावन – चैत्रवन
दीक्षा वृक्ष – वकुलवृक्ष
प्रथम आहार – वीरपुर नगर के राजा दत्त द्वारा (खीर)
केवलज्ञान वन एवं वृक्ष–चैत्रवन एवं वकुलवृक्ष
केवलज्ञान – मगसिर शु. 11
मोक्ष – वैशाख कृ. 14
मोक्षस्थल – सम्मेद शिखर पर्वत

समवसरण में चतुर्विध संघ

गणधर – श्री सुप्रभार्य आदि 17
मुनि – बीस हजार
गणिनी – आर्यिका मंगिनी
आर्यिका – पैंतालीस हजार
श्रावक – एक लाख
श्राविका – तीन लाख
जिनशासन यक्ष– श्री विद्युत्प्रभ देव
यक्षी – चामुण्डी देवी

भगवान नमिनाथ वर्तमान वीर नि.सं. 2530 से 5,86,530 वर्ष पहले मोक्ष गए हैं।

अर्घ्य–स्रग्विणी छंद

अर्घ अर्पण करूँ स्वात्म पद के लिए ।
'ज्ञानमती' पूर्ण हो बस यही कामना।।
मैं नमीनाथ के पाद को पूजहूँ।
स्वात्म सिद्धि मिले एक ही याचना।।

ॐ ह्रीं श्रीनमिनाथतीर्थंकराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बाइसवें तीर्थंकर भगवान नेमिनाथ का जीवन दर्शन

जन्मभूमि – **शौरीपुरबटेश्वर (उत्तर प्रदेश)**
पिता – महाराज समुद्रविजय
माता – महारानी शिवादेवी
वर्ण – क्षत्रिय
गोत्र – काश्यप
वंश – हरिवंश
देहवर्ण – वैडूर्यमणि सदृश
चिन्ह – शंख
आयु – एक हजार वर्ष
अवगाहना – चालीस हाथ
गर्भ – कार्तिक शु. 6
जन्म – श्रावण शु. 6
तप – श्रावण शु. 6
दीक्षावन – सहस्राम्रवन
दीक्षा वृक्ष – बांस. वृक्ष
प्रथम आहार – द्वारावती के राजा वरदत्त द्वारा (खीर)
केवलज्ञान वन एवं वृक्ष–सहस्राम्रवन एवं बांस वृक्ष
केवलज्ञान – आश्विन शु. 1
मोक्ष – आषाढ़ शु. 7
मोक्षस्थल – ऊर्जयंतपर्वत (गिरनार)

समवसरण में चतुर्विध संघ

गणधर – श्री वरदत्त आदि 11
मुनि – अठारह हजार
गणिनी – आर्यिका राजीमती (राजुलमती)
आर्यिका – चालीस हजार
श्रावक – एक लाख
श्राविका – तीन लाख
जिनशासन यक्ष– सर्वाण्हदेव
यक्षी – कूष्माण्डी देवी

भगवान नेमिनाथ वर्तमान वीर नि.सं. 2530 से 86,530 वर्ष पहले मोक्ष गए हैं।

अर्घ्य–तर्ज–ऐ मां तेरी सूरत

हे नेमीनाथ! तुम भक्ति से, निज शक्ति बढ़ाने आए हैं।
भगवान-भगवान तुम्हारे चरणों की, हम पूजा करने आए हैं।।
प्रभु तुम गुण की अर्चा, भवतारन हारी है,
भवदधि में डूबे को, अवलम्बनकारी है।
निज 'ज्ञानमती' पूर्ती के लिए, हम अर्घ्य चढ़ाने आए हैं।
भगवान-भगवान तुम्हारे चरणों की, हम पूजा करने आए हैं।।

ॐ ह्रीं श्रीनेमिनाथतीर्थंकराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तेइसवें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ का जीवन दर्शन

जन्मभूमि – बनारस (उत्तर प्रदेश)
पिता – महाराजा अश्वसेन
माता – महारानी ब्राह्मी (वामादेवी)
वर्ण – क्षत्रिय
गोत्र – काश्यप
वंश – उग्रवंश
देहवर्ण – मरकतमणि सदृश (हरा)
चिन्ह – सर्प
आयु – सौ वर्ष
अवगाहना – नौ हाथ
गर्भ – वैशाख कृ. 2
जन्म – पौष कृ. 11
तप – पौष कृ. 11
दीक्षावन – अश्ववन
दीक्षा वृक्ष – देवदारूवृक्ष
प्रथम आहार – गुल्मखेट नगर के राजा धन्य द्वारा (खीर)
केवलज्ञान वन एवं वृक्ष–अश्ववन एवं देवरारूवृक्ष (अहिच्छत्र तीर्थ)
केवलज्ञान – चैत्र कृ. 14 (4)
मोक्ष – श्रावण शु. 7
मोक्षस्थल – सम्मेद शिखर पर्वत

समवसरण में चतुर्विध संघ

गणधर – श्री स्वयंभू आदि 10
मुनि – सोलह हजार
गणिनी – आर्यिका सुलोचना
आर्यिका – छत्तीस हजार
श्रावक – एक लाख
श्राविका – तीन लाख
जिनशासन यक्ष– धरणेन्द्र देव
यक्षी – पद्मावती देवी

भगवान पार्श्वनाथ वर्तमान वीर नि.सं. 2530 से 2780 वर्ष पहले मोक्ष गए हैं।

अर्घ्य–आओ बच्चों तुम्हें दिखाएं ......

आओ हम सब करें अर्चना, पार्श्वनाथ भगवान की ।
जिनकी भक्ति से प्रगटित हो, ज्योती आतमज्ञान की।। वंदे जिनवरम् - 4
जलगंधादिक अर्घ्य सजाकर, जिनवर चरण चढ़ा करके।
रत्नत्रय युत 'ज्ञानमती' कर, बसूँ मोक्ष में जा करके ।।
इसी हेतु त्रिभुवन जनता भी, भक्ति करे भगवान की।
जिनकी भक्ति से प्रगटित हो, ज्योति आतमज्ञान की।। वंदे जिनवरम्-4
ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथतीर्थंकराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी का जीवन दर्शन

जन्मभूमि – कुंडलपुर जिला नालन्दा (बिहार)
पिता – महाराजा सिद्धार्थ
माता – महारानी प्रियकारिणी (त्रिशला)
वर्ण – क्षत्रिय
गोत्र – काश्यप
वंश – नाथवंश
देहवर्ण – तप्त स्वर्ण सदृश
चिन्ह – सिंह
आयु – बहत्तर वर्ष
अवगाहना – सात हाथ (अरत्नि)
गर्भ – आषाढ़ शु. 6
जन्म – चैत्र शु. 13
तप – मगसिर कृ. 10
दीक्षावन – षण्डवन (मनोहरवन)
दीक्षा वृक्ष – साल वृक्ष
प्रथम आहार – कूल ग्राम के राजा वकुल द्वारा (खीर)
विशेष आहार – कौशाम्बी में महासती चंदना द्वारा (खीर)
केवलज्ञान वन एवं वृक्ष–षण्डवन (मनोहरवन) एवं साल वृक्ष
केवलज्ञान – वैखाख शु. 10 (ऋजुकूला नदी के तट पर)
वीरशासन जयंती– (दिव्यध्वनि दिवस) श्रावण कृ.1 राजगृही
मोक्षकल्याणक – कार्तिक कृ. अमावस्या
मोक्ष स्थल – पावापुरी

समवसरण में चतुर्विध संघ

गणधर – श्री इन्द्रभूति आदि 11
मुनि – चौदह हजार
गणिनी – आर्यिका चन्दना
आर्यिका – छत्तीस हजार
श्रावक – एक लाख
श्राविका – तीन लाख
जिनशासन यक्ष– मातंग देव (गुह्यकदेव)
यक्षी – सिद्धायिनी देवी

2603 वर्ष पूर्व भगवान महावीर स्वामी का जन्म हुआ। भगवान महावीर स्वामी वर्तमान वीर नि:सं. से 2530 वर्ष पहले मोक्ष गए हैं।

अर्घ्य

त्रिशला नन्दन, शत शत वन्दन, शत शत वन्दन तव चरणों में।
हम भक्तिभाव से अंजलि कर, प्रभु शीश झुकाते चरणों में।।
जल चंदन अक्षत पुष्प चरू वर, दीप धूप फल लाए हैं।
निज 'ज्ञानमती' कैवल्य हेतु, प्रभु अर्घ्य चढ़ाने आए हैं।।
हे वीर प्रभो! हम अर्घ्य चढ़ाकर, नमन करें तव चरणों में। त्रिशला ...
ॐ ह्रीं श्रीमहावीरतीर्थंकराय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान

तीर्थंकर ऋषभदेव से लेकर अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर की दिव्यध्वनि स्वरूप जैनग्रन्थों से प्राप्त तीन लोक का ज्ञान कराने के लिए एवं मध्यलोक के अकृत्रिम जिनमंदिर स्वरूप तेरह द्वीप रचना के निर्माण हेतु वीर नि.स. 2497 (ईसवी सन् 1972) दीपावली के दिन गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से भारत क़ी राजधानी दिल्ली में "दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान" की स्थापना की गई। इसी दिन "वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला" की भी स्थापना हुई।

संस्थान द्वारा सर्वतोमुखी कार्य–

इस संस्थान द्वारा हस्तिनापुर तीर्थ पर भूमि क्रय करके वीर नि.सं. 2499 (ईसवी सन् 1974), आषाढ़ शु. 3 को सुमेरु पर्वत का शिलान्यास किया गया। श्री महावीर स्वामी, सुमेरुपर्वत-जंबूद्वीप जिनबिंब आदि की पंचकल्याणक प्रतिष्ठायें, जंबूद्वीप ज्ञान ज्योति, श्री ऋषभदेव समवसरण एवं भगवान महावीर ज्योति के भारतभ्रमण, धर्मग्रन्थों एवं सम्यग्ज्ञान पत्रिका के प्रकाशन, कमल मंदिर आदि के निर्माण, णमोकार बैंक स्थापना, राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी, भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव, कल्पद्रुम महापूजा-विश्वशांति महावीर विधानादि अनेक धर्मप्रभावना के कार्य एवं प्रयाग में 'ऋषभदेव तपस्थली' तीर्थ एवं भगवान महावीर जन्मभूमि, 'नंद्यावर्त महल' कुण्डलपुर तीर्थ के निर्माण आदि बहुविध सर्वतोमुखी कार्य संस्थान द्वारा संपन्न हुए हैं और वर्तमान में हो रहे हैं।

DIGAMBER JAIN TRILOK SHODH SANSTHAN

"DIGAMBER JAIN TRILOK SHODH SANSTHAN" WAS ESTABLISHED AT DELHI ON THE DAY OF DEEPAWALI IN 1972 BY THE INSPIRATION OF GANINI PRAMUKH SHRI GYANMATI MATAJI FOR GIVING THE KNOWLEDGE OF THREE LOKAS AS TOLD BY THE DIVYADHVANI OF TIRTHANKARS FROM BHAGWAN RISHABHDEV UPTO THE LAST TIRTHANKAR-BHAGWAN MAHAVIR & FOR BUILDING THE STRUCTURE OF TERAH (13) DWEEP-ETERNAL JAIN TEMPLES OF MADHYALOK. "VEER GYANODAYA GRANTHMALA" WAS ALSO FOUNDED ON THIS DAY.

GLORIOUS ACHIEVEMENTS OF SANSTHAN– AFTER BUYING THE LAND AT HASTINAPUR TIRTH, THIS SANSTHAN LAID DOWN THE FOUNDATION STONE OF SUMERU MOUNTAIN THERE IN 1974. PANCHKALYANAK PRATISHTHAS OF SHRI MAHAVIR SWAMI & IDOLS OF JINENDRA BHAGWANS OF SUMERU MOUNTAIN & JAMBOODWEEP, ALL INDIA TOUR OF JAMBOODWEEP GYAN JYOTI & SHRI RISHABHDEV SAMAVSARAN & BHAGWAN MAHAVIR JYOTI CHARIOT, PUBLICATION OF RELIGIOUS TEXTS & SAMYAKGYAN MAGAZINE, BUILDING OF LOTUS TEMPLE ETC., NAMOKAR BANK, NATIONAL-INTERNATIONAL SEMINARS, BHAGWAN RISHABHDEV INTERNATIONAL NIRVAN MAHAMAHOTSAVA, KALPADRUM MAHAPOOJA-VISHWASHANTI MAHAVIR VIDHAN ETC. AND ESTABLISHMENT OF 'RISHABHDEV TAPASTHALI' TIRTH AT PRAYAG & BHAGWAN MAHAVIR BIRTHPLACE, 'NANDYAVARTA MAHAL' KUNDALPUR TIRTH ARE THE VARIOUS GLORIOUS ACHIEVEMENTS OF THE SANSTHAN AND MANY MORE ARE STILL CONTINUING.

हस्तिनापुर में जंबूद्वीप रचना

मध्य लोक में असंख्य द्वीप-समुद्रों में सर्वप्रथम द्वीप का नाम जंबूद्वीप है। इसका निर्माण हस्तिनापुर जि. मेरठ (उ.प्र.) में किया गया है। यह जैन भूगोल रचना है। वीर. नि. सं. 2505 वैशाख शु. 7 को सुमेरु पर्वत के जिनबिंबों की एवं वीर नि. स. 2511 वै. शु. 12 को जंबूद्वीप के जिनबिंबों की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महामहोत्सव पूर्वक संपन्न हुई हैं। इस जंबूद्वीप रचना में सुमेरुपर्वत समेत 78 जिनमंदिर की, 123 देवभवनों की जिनप्रतिमाएं एवं भरत-ऐरावत तथा विदेहों के ऐसे छह समवसरण के प्रतीक में 6 चतुर्मुखी प्रतिमायें विराजमान है।

जंबूद्वीप स्थल पर सन् 1975 में भगवान महावीर विराजमान हुए है। पुनः कमलमंदिर, ध्यानमंदिर, तीनमूर्ति मंदिर, तेरहद्वीप रचना मंदिर आदि अनेक मंदिरों के निर्माण हो चुके हैं एवं वर्तमान में हो रहे हैं। इस जंबूद्वीप के दक्षिण में भरत के छह खंडों में मध्य का आर्यखंड है, आज का उपलब्ध सारा विश्व इसी आर्यखंड में है। यह जंबूद्वीप रचना विश्व में प्रथम बार बनाई गयी है। दर्शकगण इसे धरती का स्वर्ग कहते हैं। इस जंबूद्वीप का दर्शन कर अपने जीवन को सफल करके असीम आनंद का अनुभव करें।

JAMBOODWEEP STRUCTURE AT HASTINAPUR

THE FIRST DWEEP AMONGST THE INNUMERABLE DWEEPS-OCEANS OF THE MADHYALOK IS JAMBOODWEEP. ITS MODEL HAS BEEN BUILT AT HASTINAPUR DISTT. MEERUT (U.P.). IT IS A STRUCTURE OF JAIN GEOGRAPHY. PANCHKALYANAK PRATISHTHAS OF THE IDOLS OF JINENDRA BHAGWAN OF SUMERU MOUNTAIN & JAMBOODWEEP WERE ORGANIZED ON 3RD MAY 1979 & 2ND MAY 1985 RESPECTIVELY. IN THIS JAMBOODWEEP STRUCTURE, JINENDRA IDOLS OF 78 JAIN TEMPLES INCLUDING THOSE OF SUMERU, 123 IDOLS OF DEV-BHAWANS AND 6 FOUR- FACED IDOLS REPRESENTING 6 SAMAVSARANS OF BHARAT-AERAVAT & VIDEHAS ARE CONSECRATED.

LORD MAHAVIR WAS CONSECRATED AT JAMBOODWEEP IN 1975. LATER LOTUS TEMPLE, MEDITATION TEMPLE, TEEN-MOORTI TEMPLE, TERAHDWEEP TEMPLE ETC. MANY TEMPLES HAVE BEEN BUILT AND ARE BEING BUILT PRESENTLY. IN THE SOUTH OF JAMBOODWEEP, THERE IS MIDDLE ARYAKHAND BETWEEN THE SIX DIVISIONS OF BHARAT KSHETRA. THIS ARYAKHANDA CONSISTS OF THE PRESENT WORLD. THIS JAMBOODWEEP STRUCTURE HAS BEEN BUILT FOR THE FIRST TIME IN THE WORLD. SPECTATORS CALL IT AS 'THE HEAVEN OF THE EARTH'. ASSIMILATE GREAT PUNYA BY THE DARSHAN OF THIS JAMBOODWEEP.

जंबूद्वीप ज्ञान ज्योति का भारत भ्रमण

गणिनी ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से उन्हीं के ससंघ सानिध्य में 4 जून 1982 को दिल्ली के लाल किला मैदान में जंबूद्वीप का अत्याकर्षक भव्य माडल रूप **'जंबूद्वीप ज्ञान ज्योति'** रथ का प्रवर्तन तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी के कर कमलों से हुआ। सारे भारत में नगर-नगर के भ्रमण में अनेक जैनाचार्य आदि साधुसंघ, गणिनीसंघ, आर्यिका, क्षुल्लक, क्षुल्लिका, भट्टारक आदि के सानिध्य प्राप्त हुए तथा राज्यपाल, मुख्यमंत्री, सांसद, कमिश्नर, डी.एम., एस.डी.एम. आदि अनेक राजकीय अधिकारियों ने स्थान-स्थान पर स्वागत कर अपने को सराहा! लाखों-लाखों जैन-जैनेतर नर-नारियों ने जैनभूगोल को देखकर एवं अहिंसामयी धर्म का लाभ लेकर अपने जीवन को धन्य किया। तीन वर्ष के 1045 दिनों तक भारत भ्रमण के अनंतर 28 अप्रैल 1985 को जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में विशाल पंचकल्याणक प्रतिष्ठा के अवसर पर तत्कालीन रक्षामंत्री श्री नरसिंहराव के कर कमलों से इस ज्ञान ज्योति की अखंड स्थापना की गई है।

ALL INDIA TOUR OF JAMBOODWEEP GYAN JYOTI

AN ATTRACTIVE MODEL OF JAMBOODWEEP IN THE FORM OF 'JAMBOODWEEP GYAN JYOTI' WAS INAUGURATED BY THE THEN PRIME MINISTER SMT. INDIRA GANDHI FOR ALL INDIA TOUR AT THE RED FORT GROUND OF DELHI ON 4TH JUNE, 1982 BY THE INSPIRATION & AUSPICIOUS PRESENCE OF GANINI GYANMATI MATAJI (WITH SANGH). IT TRAVELLED THROUGHOUT THE COUNTRY IN THE AUSPICIOUS PRESENCE OF VARIOUS JAIN SADHU SANGHS, GANINI SANGH, ARYIKA, KSHULLAK, KSHULLIKA, BHATTARAKS ETC. IN DIFFERENT CITIES ALONG WITH THE WELCOME BY A NUMBER OF STATE OFFICIALS LIKE GOVERNOR, CHIEF MINISTER, M.P., COMMISSIONER, D.M., S.D.M. ETC. LACS OF JAINS & NON-JAINS WERE ACQUAINTED WITH THE JAIN-GEOGRAPHY AND AHIMSA (NON VIOLENCE) DHARMA THROUGH IT. AFTER ALL INDIA TOUR OF 1045 DAYS OF THREE YEARS, THIS GYAN JYOTI WAS PERMANENTLY PLACED AT JAMBOODWEEP-HASTINAPUR BY THE THEN DEFENCE MINISTER-SHRI NARSIMHRAV ON 28TH APRIL 1985 ON THE OCCASION OF GRAND PANCHKALYANAK PRATISHTHA.

संस्थान द्वारा शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर एवं संगोष्ठियां

शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर –

इस संस्थान द्वारा अक्टूबर 1978 में हस्तिनापुर में भारत के मूर्धन्य जैन विद्वानों का 'प्रशिक्षण शिविर' किया गया। उसके पश्चात् अनेक शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर, ध्यान साधना शिविर आदि संपन्न किये जा चुके हैं।

राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठियां –

जंबूद्वीप, जैनगणित, त्रिलोक विज्ञान आदि नाम से अनेक राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठियां की गई हैं। 'भगवान महावीर जैन धर्म के संस्थापक हैं' इस भ्रान्ति को दूर करने के लिए 4 से 6 अक्टूबर 1998 में जंबूद्वीप स्थल पर **"भगवान ऋषभदेव राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन"** किया गया, इसके माध्यम से विश्वविद्यालयों में जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव से लेकर भगवान महावीर पर्यंत चौबीस तीर्थंकरों के अहिंसामयी सिद्धांतों को प्रसारित किया गया।

जैन धर्म शाश्वत एवं सार्वभौम धर्म है। प्राणीमात्र में मैत्रीभाव की स्थापना करने वाला है। यह सिद्धांत जन-जन तक फैलाया गया।

TEACHING-TRAINING CAMPS AND SEMINARS BY SANSTHAN

TEACHING-TRAINING CAMPS- SANSTHAN ORGANIZED A 'TRAINING CAMP' OF HIGH LEVELLED JAIN SCHOLARS OF INDIA AT HASTINAPUR IN OCTOBER 1978. AFTER THAT VARIOUS TEACHING-TRAINING CAMPS, MEDITATION CAMPS ETC. HAVE BEEN ORGANIZED FROM TIME TO TIME.

NATIONAL-INTERNATIONAL SEMINARS – A NUMBER OF NATIONAL-INTERNATIONAL SEMINARS ON THE SUBJECTS LIKE JAMBOODWEEP, JAIN MATHEMATICS, COSMOLOGY ETC. HAVE BEEN ORGANIZED. TO ERADICATE THE WRONG NOTION THAT 'BHAGWAN MAHAVIR IS THE FOUNDER OF JAINISM', "BHAGWAN RISHABHDEV NATIONAL VICE CHANCELLORS' CONFERENCE" WAS ORGANIZED AT JAMBOODWEEP FROM 4TH TO 6TH OCT. 1998. THE NON-VIOLENCE PRINCIPLES OF 24 TIRTHANKARS FROM LORD RISHABHDEV TO LORD MAHAVIR WERE DISSEMINATED IN UNIVERSITIES THROUGH THIS CONFERENCE.

"JAIN DHARMA IS ETERNAL AND UNIVERSAL & IT ESTABLISHES FRIENDLINESS BETWEEN ALL THE CREATURES", THIS PRINCIPLE WAS PREACHED TO MASSES.

प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की जन्मजयंती आदि कार्यक्रम

भारत की राजधानी दिल्ली में गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से चैत्र कृ. 9, सन् 1997 की ऋषभजयंती के दिन "श्री ऋषभदेव जयंती" वर्ष घोषित किया गया एवं इस वर्ष अनेक कार्यक्रम संपन्न किये गये। इसी वर्ष अक्टूबर में जैनधर्म की अनादिनिधनता सिद्ध करने हेतु दिल्ली रिंगरोड पर विशालतम कल्पद्रुम मंडप में "चौबीस कल्पद्रुम महामंडल विधान" में 3000 से अधिक नर-नारियों ने चक्रवर्ती आदि बनकर केशरिया परिधान में पूजा विधान किया तथा लाखों श्रद्धालुओं ने दर्शनादि का लाभ लिया।

अनंतर ऋषभजयंती वर्ष समापन के समय "भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार" का शुभारंभ, इसी वर्ष 4 से 6 अक्टूबर तक हस्तिनापुर में "भगवान ऋषभदेव राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन", 4 फरवरी सन् 2000 को "भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महोत्सव" का उद्घाटन आदि कार्य संपन्न हुए।

पुनः सन् 2000 में प्रीतविहार-दिल्ली के वर्षायोग में अक्टूबर में "कैलाश पर्वत मानसरोवर यात्रा" का अभूतपूर्व आयोजन प्रीतविहार जैन समाज द्वारा किया गया। इन सभी आयोजनों में "भगवान महावीर जैनधर्म के संस्थापक नहीं हैं" प्रत्युत् जैनधर्म शाश्वत, सार्वभौम एवं प्राकृतिक है, प्राणीमात्र का हित करने वाला है तथा भगवान ऋषभदेव से लेकर भगवान महावीर तक तीर्थंकर भगवंतों के सिद्धांत सारे विश्व के लिए हितकारी हैं, यही उद्देश्य रहा है।

BIRTH ANNIVERSARY ETC. PROGRAMMES OF THE FIRST TIRTHANKAR-LORD RISHABHDEV

BY THE INSPIRATION OF GANINI PRAMUKH SHRI GYANMATI MATAJI "SHRI RISHABHDEV JAYANTI" YEAR WAS ANNOUNCED ON THE DAY OF RISHABH JAYANTI-CHAITRA KRISHNA 9, 1997 AT DELHI AND A NUMBER OF PROGRAMMES WERE ORGANIZED DURING THIS YEAR. IN OCTOBER, "CHAUBEES KALPADRUM MAHAMANDAL VIDHAN" WAS PERFORMED IN GRAND KALPADRUM MANDAP AT RING ROAD-DELHI TO ESTABLISH THE ETERNITY OF JAIN DHARMA. 3000 DEVOTEES PARTICIPATED IN THIS VIDHAN AND LACS OF PEOPLE CAME TO VISIT THE EVENT.

LATER AT THE END OF THIS RISHABH JAYANTI YEAR, PROGRAMMES LIKE INAUGURATION OF "BHAGWAN RISHABHDEV SAMAVSARAN SHRIVIHAR" (9TH APR. 1998), "BHAGWAN RISHABHDEV NATIONAL VICE-CHANCELLORS' CONFERENCE" (4TH TO 6TH OCT. 1998) AT HASTINAPUR, INAUGURATION OF "BHAGWAN RISHABHDEV INTERNATIONAL NIRVAN MAHOTSAVA" ON 4TH FEB. 2000 ETC. WERE PERFORMED.

AFTERWARDS, PREET VIHAR JAIN SAMAJ-DELHI ORGANIZED GRAND"KAILASH PARVAT MANSAROVAR YATRA" AT PREET VIHAR, DELHI IN OCT. 2000 DURING THE VARSHAYOG. ALL THESE ACTIVITIES WERE AIMED AT PREACHING TO THE MASSES THAT "BHAGWAN MAHAVIR IS NOT THE FOUNDER OF JAIN DHARMA" BUT THIS DHARMA IS ETERNAL , UNIVERSAL, NATURAL & BENEFICIAL FOR ALL THE CREATURES AND THE PRINCIPLES OF TIRTHANKAR BHAGWANTS FROM LORD RISHABHDEV TO LORD MAHAVIR ARE ADVANTAGEOUS FOR THE WHOLE WORLD.

ग्रन्थ तथा पत्रिका के प्रकाशन एवं णमोकार महामंत्र बैंक

ग्रन्थमाला प्रकाशन–

संस्थान के अंतर्गत **"वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला"** से **पूज्य गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी** द्वारा अनुवादित, लिखित एवं अनुमोदित ऐसे 200 से अधिक अष्टसहस्री, षट्खंडागम आदि से लेकर बाल विकास तक लाखों-लाखों ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं।

सम्यग्ज्ञान पत्रिका–

चारों अनुयोगों से समन्वित स्वाध्यायोपयोगी ऐसी "सम्यग्ज्ञान मासिक पत्रिका" सन् 1974 से जैनधर्म की प्रभावना कर रही है।

णमोकार महामंत्र बैंक–

8 अक्टूबर 1995 को शरद् पूर्णिमा के दिन णमोकार महामंत्र बैंक की स्थापना की गई। जैन-जैनेतर, आबाल वृद्ध ने लाखों लाख मंत्र लिखकर इस बैंक में जमा किये हैं, जो कि करोड़ों की संख्या में जंबूद्वीप स्थल पर अलमारियों में सुरक्षित रखे हैं। इनकी किरणें सारे भारत में शांति की स्थापना कर रही हैं। ये सभी सर्वतोमुखी प्रकाशन और लेखन पूज्य माताजी की प्रेरणा से ही हो रहे हैं।

PUBLICATION OF SCRIPTURES-MAGAZINE AND NAMOKAR MAHAMANTRA BANK

PUBLICATION OF GRANTHMALA- "VEER GYANODAYA GRANTHMALA" OF SANSTHAN HAS PUBLISHED LACS OF COPIES OF ABOVE 200 SCRIPTURES LIKE ASHTSAHASTRI, SHATKHANDAGAM, BAL-VIKAS ETC., WRITTEN & TRANSLATED BY PUJYA GANINI PRAMUKH SHRI GYANMATI MATAJI.

SAMYAKGYAN MAGAZINE– 'SAMYAKGYAN MONTHLY MAGAZINE' CONSISTING OF ALL THE FOUR ANUYOGS IS BEING PUBLISHED BY SANSTHAN FROM 1974. IT IS QUITE USEFUL FOR SWADHYAYA (RELIGIOUS STUDIES).

NAMOKAR MAHAMANTRA BANK–THIS BANK WAS ESTABLISHED ON THE DAY OF SHARAD POORNIMA-8TH OCTOBER IN 1995. JAINS-NONJAINS, CHILDREN-OLD AGED ALL HAVE WRITTEN & SUBMITTED LACS OF MANTRAS IN THIS BANK AND THUS CRORES OF MANTRAS HAVE BEEN ASSIMILATED AT JAMBOODWEEP. BY THE RAYS OF THESE MANTRAS PEACE IS ESTABLISHED ALL AROUND. ALL THESE ACTIVITIES ARE THE RESULT OF THE INSPIRATION OF PUJYA MATAJI.

गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा अनेक तीर्थों के विकास

पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने अनेक तीर्थों पर विकास हेतु जो नवनिर्माण की प्रेरणायें दी हैं, उनमें से कुछ विशेष नाम यहां प्रस्तुत हैं–

हस्तिनापुर में जंबूद्वीप रचना, अहिच्छत्र में तीस चौबीसी जिनप्रतिमा स्थापना, अयोध्या में तीन चौबीसी एवं ऋषभदेव समवसरण मंदिर, टिकैतनगर में चौबीसी मंदिर, त्रिलोकपुर में पारिजात सिद्धार्थवृक्ष स्थापना, दिल्ली-प्रीतविहार में ऋषभदेव कमलमंदिर, दिल्ली राजाबाजार में ऋषभदेव कीर्तिस्तम्भ एवं पावापुरी रचना, मेरठ (उ.प्र.)-कमलानगर में कमल-कमल पर बीस तीर्थंकर एवं चौबीस तीर्थंकर जिन प्रतिमा स्थापना, महावीर जी (अतिशय क्षेत्र) शांतिवीरनगर में मंदार सिद्धार्थवृक्ष स्थापना, सनावद (म.प्र.) में णमोकार धाम रचना, मांगीतुंगी में अष्टोत्तरशत कमलपत्रों पर 1008 जिनप्रतिमा स्थापना एवं पर्वत पर 108 फुट उत्तुंग श्रीऋषभदेव मूर्ति निर्माण प्रेरणा, कवलाना (महाराष्ट्र) में विशाल जिनमंदिर प्रेरणा, अकलूज (महाराष्ट्र) में नवदेवता मंदिर प्रेरणा, बद्रीनाथ-अष्टापद में चौबीस तीर्थंकर चरणस्थापना प्रेरणा, प्रयागक्षेत्र पर तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ स्थापना, भगवान महावीर जन्मभूमि कुंडलपुर (नालंदा-बिहार) में भगवान महावीर जिनमंदिर, भगवान ऋषभदेव जिनमंदिर, नवग्रह शांति जिनमंदिर, त्रिकाल चौबीसी जिनमंदिर एवं नंद्यावर्त महल आदि के निर्माण की विशेष प्रेरणायें दी हैं। ये तीर्थ सदैव जिनशासन की प्रभावना करते रहें, यही मंगल भावना है।

DEVELOPMENT OF VARIOUS TIRTHS BY GANINIPRAMUKH SHRI GYANMATI MATAJI

PUJYA GANINI PRAMUKH SHRI GYANMATI MATAJI HAS INSPIRED FOR THE NEW DEVELOPMENT AT VARIOUS TIRTHS, SOME SPECIFIC ARE AS FOLLOWS-

JAMBOODWEEP CREATION AT HASTINAPUR, RISHABHDEV LOTUS TEMPLE AT PREET VIHAR-DELHI, RISHABHDEV KIRTISTAMBH & PAWAPURI MODEL AT CONNAUGHT PLACE-DELHI, INSPIRATION FOR BUILDING 108 FT. HIGH IDOL OF SHRI RISHABHDEV AT MANGITUNGI (MAHARASHTRA) MOUNTAIN, INSPIRATION FOR THE CONSECRATION OF THE FEET OF 24 TIRTHANKARS AT BADRINATH-ASHTAPAD, ESTABLISHMENT OF TIRTHANKAR RISHABHDEV TAPASTHALI TIRTH AT PRAYAG, SPECIAL INSPIRATION FOR THE CONSTRUCTION OF BHAGWAN MAHAVIR JINMANDIR , BHAGWAN RISHABHDEV JINMANDIR, NAVGRAHSHANTI JINMANDIR, TRIKAL CHAUBEESI JINMANDIR & NANDYAVART PALACE ETC. AT LORD MAHAVIR BIRTHPLACE-KUNDALPUR (NALANDA, BIHAR)ETC. MAY THESE TIRTHS SPREAD THE ILLUMINATION OF JAIN DHARMA FOR ALL TIMES TO COME, THIS ONLY, IS THE HEARTY WISH:

भगवान महावीर के प्रति प्रचलित भ्रान्तधारणाओं को दूर करें!

लेखिका–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

जैनधर्म की शाश्वत सत्यता के अनुसार वर्तमान कर्मयुग में चौबीस तीर्थंकर महापुरुषों ने भारत की धरती पर जन्म लेकर धर्मतीर्थ का प्रवर्तन किया है। उनमें से प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव हुए और अंतिम भगवान महावीर हैं, उनके सर्वोदयी सिद्धान्तों में अहिंसा और अनेकांत प्रमुख सिद्धांत हैं। वर्तमान में भगवान महावीर का शासन चल रहा है किन्तु महावीर के प्रति कुछ आधुनिक शोधकर्ताओं ने भ्रांति पैदा कर दी कि महावीर जैनधर्म के संस्थापक हैं एवं उनका जन्म वैशाली में हुआ था।

हमारे स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री स्व. पं. जवाहर लाल नेहरू ने भी अजानकारीवश अपनी पुस्तक ''डिस्कवरी ऑफ इंडिया'' में लिख दिया कि "MAHAVIR WAS THE FOUNDER OF JAINISM." अर्थात् महावीर जैनधर्म के संस्थापक थे। इसी वाक्य का अनुसरण करके लिखी गई इतिहासकारों की पुस्तकों में संशोधन करने का तेज अभियान पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने चलाया। तब भारत के वर्तमान प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी एवं मानव संसाधन विकास मंत्री डा. मुरली मनोहर जोशी ने सरकारी स्तर पर पाठ्यपुस्तकों में उस त्रुटि का संशोधन करवाया। 4 फरवरी 2000 को गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से किये गये ''भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महोत्सव'' के उद्घाटन अवसर पर दिल्ली में प्रधानमंत्री श्री वाजपेयी जी ने विशाल सभा को सम्बोधित करते हुए कहा था कि कौन कहता है कि भगवान महावीर जैनधर्म के संस्थापक थे। उनसे पूर्व 23 तीर्थंकर और हो चुके हैं उनमें से 23वें तीर्थंकर पार्श्वनाथजी की प्रतिमा हमारे प्रधानमंत्री कार्यालय में आज भी विद्यमान है।

इसी प्रकार आज से 2600 वर्ष पूर्व कुण्डलपुर (निकट नालंदा-बिहार) के महाराजा सिद्धार्थ की महारानी त्रिशला से जन्मे भगवान महावीर की जन्मभूमि को वर्तमान में विवादित करने का क्रम शुरू हुआ है किन्तु उस संबंध में दिगम्बर जैन आगम के प्राचीनतम ग्रंथों (तिलोयपण्णत्ति, उत्तरपुराण, धवला, जयधवला, वीरजिणिन्द चरिउ, महावीरपुराण आदि) के आधार से वास्तविकता जानना आवश्यक है।

सिद्धत्थरायपियकारिणीहिं णयरम्मि कुण्डले वीरो।
उत्तरफग्गुणिरिक्खे, चित्तसियातेरसीए उप्पण्णो।।549।।

(तिलोयपण्णत्ति, चउत्थो महाधियारो, पृ. 210)

अर्थात् भगवान महावीर कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार में पिता सिद्धार्थ और माता प्रियकारिणी से चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के दिन उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में पैदा हुए।

इस प्रकार के तलस्पर्शी आगमज्ञान से अनभिज्ञ स्वतंत्र भारत के प्रथम राष्ट्रपति स्व. श्री राजेन्द्र प्रसाद जी ने सन् 1956 में शोधकर्ताओं द्वारा बिहार प्रांत के ''बसाढ़'' ग्राम में बसाई गई वैशाली में एक स्मारक का शिलान्यास कर उसे बौद्ध एवं श्वेताम्बर मान्यतानुसार महावीर की जन्मभूमि घोषित कर दिया। दिगम्बर जैन समाज के वरिष्ठतम साधु-साध्वियों एवं आगमनिष्ठ विद्वानों को इस विवादित विषय से परिचित कराये बिना लिए गये उक्त निर्णय को समाज की श्रद्धालु जनता ने कभी स्वीकार नहीं किया और वास्तविक प्राचीन कुण्डलपुर की ही जन्मभूमि के रूप में वंदना करती रही, पुनः भगवान महावीर 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव (सन् 2001 से 2002 तक प्रचलित) के संदर्भ में सरकार द्वारा वैशाली में महावीर जन्मभूमि के विकास में करोड़ों रुपये की राशि का अनुदान घोषित होने पर जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी

पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी ने भारत की सम्पूर्ण दिगम्बर जैन समाज को भगवान महावीर की सच्ची जन्मभूमि कुण्डलपुर के जीर्णोद्धार एवं विकास की प्रेरणा प्रदान की। उसी प्रेरणा के फलस्वरूप जन्मभूमि में 11 दिसम्बर 2002 से विकास कार्य प्रारंभ हुआ। कुण्डलपुर के नंद्यावर्त महल में भगवान महावीर का जन्म हुआ था इसलिए इस स्थल का नाम "नंद्यावर्त स्थल" है।

इस विषय में वास्तविकता यह है कि आधुनिक इतिहासकारों द्वारा मान्य भगवान महावीर के समय गणतंत्र शासन, महावीर के वैशालिक, विदेहदत्त आदि नाम, उनका लिच्छविवंश एवं वज्जिविदेह जनपद आदि शब्द किसी भी दिगम्बर जैन आगम ग्रंथों में नहीं हैं।

प्राचीन जैन ग्रंथों की प्रमाणता एवं श्रद्धालु जनता की भावनाओं के आधार पर भारत सरकार के पुरातत्व विभाग ने भी पुरातत्व साक्ष्यों के अनुसार कुण्डलपुर (नालंदा) को ही भगवान महावीर की जन्मभूमि बताया है–

"KUNDALPUR-BARAGAON NEAR NALANDA IS THE CONSIDERED BELIEF OF DIGAMBER JAINAS AS MAHAVIR'S BIRTH PLACE..........(Directory of Bihar Archaeology Pg. 264). पर्यटन विभाग के "राजगीर" फोल्डर में भी स्पष्ट लिखा है-

KUNDALPUR-THE DIGAMBER SECT OF THE JAINS BELIEVES THAT LORD MAHAVIR WAS BORN AT KUNDALPUR, 18 KM FROM RAJGIR.

भगवान महावीर के जीवन से संबंधित अनेक प्रकार की भ्रांतियों के अंतर्गत कुछ विदेशी एवं भारतीय इतिहासकारों ने बौद्ध एवं श्वेताम्बर ग्रंथानुसार वैशाली को जन्मभूमि कहा किन्तु जब वे भी दिगम्बर जैन प्राचीन ग्रंथों से परिचित हुए तो उन्होंने अपनी मान्यता को परिवर्तित किया। इसका एक ज्वलंत उदाहरण डा. हर्मन जैकोबी द्वारा एक श्वेताम्बर जैनाचार्य के पास 29 मार्च सन् 1911 को लिखित उस पत्र का नमूना यहाँ प्रस्तुत है–

Dear Sir,

I had much pleasure in the receiving your letter dated Feb. 27 Which contained good news from you and kind Wishes for me. I also beg to acknowledge receipt of material, which contains useful information of Nalanda and Kundalpur being birthplace of Lord Mahavira. It becomes very useful to me, in many ways. You have urged me to rewrite my article on "Jainism" in the Encyclopedia of religion & ethics. Regarding Kundalpur near Nalanada, there are some references in Tiloipanntti, I agree with them.

I hope, however to induce Prof. W. Sohribring who is without doubt our best Jain Scholar, historian, well groomed in Siddhanta to undertaka a similar work. I am sure that he will do important work for Jain world.

Mr. K.P. Modi sent me some photographs of Kundalpur.

Hoping your well.

I remain yours sincerely

29 March 1911

(HERMANN JACOBI)

इस प्रकार प्राचीन दिगम्बर जैन आगमग्रंथ, शताब्दियों से चली आ रही पारम्परिक श्रद्धा, पुरातत्व एवं पर्यटन आदि सरकारी मान्यताओं को देखते हुए सन् 1968 में जैन समाज के उच्चकोटि के विद्वान् जिनशासनरत्न पंडित प्रवर श्री सुमेरचंद जैन दिवाकर, सिवनी, मध्यप्रदेश ने अपनी पुस्तक "महाश्रमण महावीर" में लिखा है–

कुछ लोग कुण्डलपुर जिले को वैशाली नगरी का एक अंश कहते हैं। वे मुजफ्फरपुर के हाजीपुर सब-डिवीजन में स्थित बसाढ़ को वैशाली मानते हैं और उसके अंतर्गत वर्तमान वासुकुण्ड को कुण्डग्राम कहते हैं। दिगम्बर जैन आगम में महावीर का नहीं, उनकी जननी प्रियकारिणी (त्रिशला) का वैशाली से संबंध पाया जाता है।

भगवान महावीर की माता अवश्य विशालापुरी की पुत्री थीं, किन्तु दिगम्बर आगमानुसार भगवान का जन्मस्थान कुण्डलपुर (कुण्डपुर) नगर था।

यह सुभाषित गंभीर तथा अर्थपूर्ण है–

उत्तमा आत्मना ख्याताः पितुः ख्याताश्च मध्यमाः।
अधमा मातुलख्याताः श्वसुराच्चाधमाधमाः।।

उत्तमपुरुष अपने गुणों के कारण प्रसिद्ध होते हैं। मध्यम पुरुष वे हैं जो अपने पिता के कारण प्रसिद्धि पाते हैं, अधम श्रेणी के व्यक्ति अपने मामा के कारण विख्यात होते हैं, अपने श्वसुर के कारण जो प्रतिष्ठा पाते हैं वे महाअधम श्रेणी के व्यक्ति हैं किन्तु तीर्थंकर तो श्रेष्ठों में भी श्रेष्ठ पुरुष होते हैं।

सारांश यह है कि भगवान महावीर का जन्म कुण्डलपुर के नंद्यावर्त महल में हुआ था। तिलोयपण्णत्ति, धवला, जयधवला, ग्रंथ में उस नगर का नाम "कुण्डलपुर" आया है तथा उत्तरपुराण में उसी को कुण्डपुर नाम से सम्बोधित किया है किन्तु वासुकुण्ड, क्षत्रियकुण्ड, कुंडग्राम या ब्राह्मणकुंड आदि नाम दिगम्बर जैन आगम में नहीं आते हैं अतः जन्मस्थल कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) को महान पवित्र तीर्थ के रूप में मानकर सभी तीर्थयात्री इसकी श्रद्धापूर्वक वंदना करें और वैशाली को मात्र महावीर की ननिहाल मानना चाहिए।

भगवान महावीर का 2600 वाँ जन्मकल्याणक वर्ष

गणिनी ज्ञानमती माताजी ने ससंघ दिल्ली से विहार कर 1 जनवरी 2001 को **''तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली''**, प्रयाग दिगंबर जैन तीर्थ पर प्रवेश करके 2600 मंत्रों से समन्वित **''विश्वशांति महावीर विधान''** पूर्ण किया। 6 अप्रैल 2001 को भगवान महावीर जयंती के राष्ट्रीय उद्घाटन के अवसर पर इलाहाबाद शहर में यह विधान कराया गया।

पुनः भगवान पद्मप्रभ के चार कल्याणक से पवित्र कौशांबी-प्रभासगिरि में भगवान पद्मप्रभ की 2 फुट एवं 7 फुट की ऐसी प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा तथा भगवान महावीर की आहार लेते मुद्रा में प्रतिमा एवं सती चंदना की आहार देते हुए मूर्ति को स्थापित कर उन्हें खीर का आहार देकर श्रावक-श्राविकाओं ने लगभग 2565 वर्ष पूर्व की स्मृति को दुहराया।

अनंतर प्रभासगिरि से विहार कर दिल्ली में वर्षायोग के अंतर्गत अक्टूबर 2001 में भगवान महावीर के 2600वें जन्मकल्याणक महोत्सव के उपलक्ष्य में विशाल महावीर मंडप में 26 मंडल बनाकर 2600-2600 रत्नों को चढ़ाते हुए हजारों भक्तों ने विश्वशांति महावीर विधान संपन्न किया।

दीपावली, 15 नवंबर 2001 को कनॉट प्लेस में अग्रवाल दिगंबर जैन मंदिर के परिसर में पावापुरी रचना बनवाकर 2600 भक्तों ने 2600 निर्वाण लाडू चढ़ाकर महती धर्मप्रभावना की। इसी प्रकार अनेक विद्यालय-महाविद्यालयों में भगवान महावीर संबंधी साहित्य पहुंचा कर प्रवचन, प्रश्नमंच, संगोष्ठी आदि अनेक धर्मप्रभावना के कार्य पूज्य माताजी की प्रेरणा से संपन्न हुए हैं।

2600TH BIRTH-ANNIVERSARY YEAR OF LORD MAHAVIR

GANINI GYANMATI MATAJI COMPLETED "VISHWASHANTI (WORLD PEACE) MAHAVIR VIDHAN" OF 2600 MANTRAS AFTER ENTERING "TIRTHANKAR RISHABHDEV TAPASTHALI", PRAYAG DIGAMBER JAIN TIRTH ON 1ST JANUARY 2001 AFTER VIHAR (ON FOOT JOURNEY) FROM DELHI WITH HER SANGH. THIS VIDHAN WAS PERFORMED AT ALLAHABAD CITY ON THE OCCASION OF NATIONAL INAUGURATION OF BHAGWAN MAHAVIR JAYANTI ON 6TH APRIL 2001.

THEN PANCHKALYANAK PRATISHTHA OF 2½ & 7 FT. HIGH IDOLS OF LORD PADMAPRABH WAS PERFORMED AT KAUSHAMBI-PRABHASGIRI, THE PIOUS LAND OF 4 KALYANAKS OF LORD PADMAPRABH. AT THE SAME TIME, THE IDOLS OF BHAGWAN MAHAVIR AND SATI CHANDNA IN THE POSTURES OF TAKING AHAR (MEALS) & GIVING AHAR RESPECTIVELY WERE ESTABLISHED THERE AND DEVOTEES REVIVED THE HISTORY OF 2565 YEARS BACK BY GIVING THE AHAR OF KHEER TO BHAGWAN.

LATER PUJYA MATA JI REACHED DELHI WHERE DURING THE VARSHAYOG, 'VISHWASHANTI MAHAVIR VIDHAN' WAS PERFORMED BY THOUSANDS OF DEVOTEES WITH OFFERING 2600-2600 JEWELS AT 26 MANDALS IN GRAND MAHAVIR MANDAP IN OCT. 2001.

ON DEEPAWALI, 15TH NOV. 2001, 2600 DEVOTEES OFFERED 2600 NIRVAN LADOOS AT PAWAPURI STRUCTURE BUILT IN THE CAMPUS OF AGRAWAL DIGAMBER JAIN TEMPLE AT CONNAUGHT PLACE, DELHI. VARIOUS QUIZ-SEMINARS ETC. WERE ORGANIZED IN A NUMBER OF SCHOOLS & COLLEGES AFTER DISTRIBUTING THE JAIN LITERATURE THERE. SIMILARLY A LOT OF RELIGIOUS ACTIVITIES WERE PERFORMED BY THE INSPIRATION OF PUJYA MATAJI IN 2600TH BIRTH ANNIVERSARY YEAR.

पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं महाकुम्भमस्तकाभिषेक महोत्सव प्रशस्ति

भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) में पौष कृष्णा 10, वीर निर्वाण संवत् 2529, दिनाँक 29.12.2002 को गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी का ससंघ मंगल पदार्पण हुआ। इसी दिन मध्यान्ह में बनारस के श्रेष्ठी श्री ऋषभदास जैन के सुपुत्र श्री दीपक कुमार जैन ने "महावीर मन्दिर" का शिलांन्यास किया। पौष शुक्ला 3 को "ऋषभदेव मन्दिर" का शिलान्यास हुआ। माघ शुक्ला 5 को भगवान ऋषभदेव कीं सवा ग्यारह फुट ऊंची पद्मासन प्रतिमा वेदी पर विराजमान की गईं एवं माघ शुक्ला 6 को भगवान महावीर की सवा दस फुट उत्तुंग खड्गासन प्रतिमा वेदी पर विराजमान की गईं।

माघ शुक्ला 6 से 11, दिनाँक 7 से 12 फरवरी 2003 तक पंचकल्याणक प्रतिष्ठा सम्पन्न हुई। झण्डारोहण श्री बाबूलाल जैन पहाड़े हैदराबाद ने किया। माघ शुक्ला 8 को भगवान की राज्यसभा में भारत के रक्षामंत्री 'श्री जार्ज फर्नांडीज' आए। माघ शुक्ला 9 को तीर्थंकर जन्मभूमि विकास महा अधिवेशन की सभा में रेलमंत्री 'श्री नितीश कुमार' आए।

आहारमुद्रा वाली भगवान महावीर प्रतिमा को महासती चन्दना द्वारा दिनाँक 11.2.2003 को खीर का आहार देकर विशेष आहारविधि दिखलाई गई। इसी दिन मध्यान्ह समवसरण सभा में बिहार प्रदेश के राज्यपाल 'श्री विनोद चंद्र पांडे' आए।

माघ शुक्ला 11 को मोक्षकल्याणक विधि के अनन्तर अस्थायी कक्ष में त्रिकाल चौबीसी के 72 भगवान की प्रतिमाएं एवं पुराने मंदिर में श्री कमलचंद जैन खारी बावली- दिल्ली सपरिवार के सौजन्य से नवनिर्मित कीर्तिस्तम्भ में भगवान महावीर की 8 प्रतिमाएं विराजमान की गईं। मध्यान्ह में भगवान महावीर प्रतिमा का दूध, दही आदि से पंचामृत अभिषेकपूर्वक 1008 महाकुम्भों से महाकुम्भमस्तकाभिषेक सम्पन्न हुआ।

गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के ससंघ सानिध्य में, आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी के मार्गदर्शन में एवं पीठाधीश क्षुल्लक मोतीसागर महाराज के निर्देशन में तथा कर्मयोगी ब्र. श्री रवीन्द्र कुमार जैन के सत्प्रयासों से सम्पन्न इस पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव में जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर निवासी संहितासूरि प्रतिष्ठाचार्य श्री नरेश कुमार जैन एवं टिकैतनगर निवासी युवारत्न पं. अकलंक जैन प्रतिष्ठाचार्य ने शास्त्रोक्त विधिपूर्वक समस्त प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा की।

इस प्रतिष्ठा में माता-पिता बनने का सौभाग्य साउथ एक्स-दिल्ली के श्रेष्ठी (संघपति) श्री महावीर प्रसाद जैन व सौ. कुसुमलता जैन, सौधर्म इन्द्र-इन्द्राणी बनने का सौभाग्य बनारस के दीपक कुमार जैन व सौ. सुभाषिनी जैन, कुबेर बनने का पुण्य आरा निवासी श्री कमल कुमार जैन व सौ.अनुपमा जैन ने प्राप्त किया।

महाराष्ट्र के 'गणिनी ज्ञानमती भक्तमण्डल' ने 7 दिन प्रीतिभोज कराकर 13.2.2003 को आस-पास की जनता का भण्डारा (भोजन) कराया।

इस नंद्यावर्त महल परिसर के मंदिरों में विराजमान प्रतिमाएं संपूर्ण विश्व के लिए मंगलकारी होवें।

प्रस्तुति-पीठाधीश क्षुल्लक मोतीसागर महाराज

PANCHKALYANAK PRATISHTHA WAS PERFORMED FROM 7TH FEB. TO 12TH FEB. 2003 AT NANDYAVARTA PALACE OF BHAGWAN MAHAVIR BIRTHPLACE-KUNDALPUR (NALANDA) AND MAHAKUMBHMASTAKABHISHEK OF LORD MAHAVIR IDOL WAS PERFORMED ON 12TH FEB. 2003 IN THE AUSPICIOUS PRESENCE & BY THE INSPIRATION OF PUJYA GANINI SHRI GYANMATI MATAJI (WITH SANGH).

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर दि. जैन समिति, नंद्यावर्त महल

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर में

कुण्डलपुर महोत्सव (प्रथम)

जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से उनके ससंघ सानिध्य में भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर दिगम्बर जैन समिति एवं पर्यटन विभाग-बिहार सरकार के संयुक्त तत्वावधान में वीर नि. सं. 2529 में आश्विन शु. त्रयोदशी से पूर्णिमा तक (दि. 8 से 10 अक्टूबर 2003) "कुण्डलपुर महोत्सव" आयोजित किया गया।

इस त्रिदिवसीय महोत्सव में तीर्थंकर ऋषभदेव जैन विद्वत् महासंघ एवं अ.भा.दि. जैन महिला संगठन के नैमित्तिक अधिवेशन हुए। दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान, जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर के अधिवेशन में संस्थान द्वारा प्रतिवर्ष दिये जाने वाले पुरस्कार (जम्बूद्वीप पुरस्कार एवं आर्यिका रत्नमती पुरस्कार) प्रदान किये गये।

10 अक्टूबर शरदपूर्णिमा के दिन पूज्य गणिनी माताजी की 70वीं जन्मजयंती के अवसर पर संस्थान द्वारा सांसद श्री धनंजय कुमार जैन (पूर्व वित्तराज्यमंत्री) को "भगवान ऋषभदेव नेशनल एवार्ड" (भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महोत्सव वर्ष 2000 में घोषित) से सम्मानित किया गया।

महोत्सव में केन्द्रीय लघु उद्योगमंत्री श्री सी.पी. ठाकुर तथा बिहार प्रान्त के महामहिम राज्यपाल न्यायमूर्ति श्री एम.रामा जोयिस मुख्य अतिथि के रूप में पधारे तथा देशभर से हजारों श्रद्धालु भक्तों ने पधारकर महोत्सव में भाग लिया।

पूज्य माताजी ने इस अवसर पर "अखिल भारतीय तीर्थंकर जन्मभूमि विकास समिति" की घोषणा करते हुए सम्पूर्ण दिगम्बर जैन समाज को चौबीसों भगवान की जन्मभूमियों के जीर्णोद्धार एवं विकास हेतु प्रेरणा प्रदान की। महोत्सव में सम्पन्न हुए अधिवेशनों में जैन समाज के मूर्धन्य विद्वानों ने पधारकर भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर के प्रति अनन्य श्रद्धा व्यक्त करते हुए पूज्य माताजी के चरणों में अपनी विनयांजलि अर्पित की।

'KUNDALPUR MAHOTSAVA'(FIRST)

On the valuable inspiration and presence of the most venerable Jain Sadhvi Pujya Ganini Pramukh Aryika Shiromani Shri Gyanmati Mataji, Bhagwan Mahavir Janmabhumi Kundalpur Digambar Jain Samiti & Tourism Department, Bihar togetherly conducted a three days Kundalpur ceremonial programme "Kundalpur Mahotsava" from 8th to 10th Oct. 2003.

During this programme executive meetings of Tirthankar Rishabhdev Jain Vidvat Mahasangh and Akhil Bhartiya Digambar Jain Mahila Sangathan were organized. And in one of the sessions, Digambar Jain Trilok Shodh Sansthan, Jambudvip-Hastinapur distributed its annual awards (Jambudvip award & Aryika Ratnamati award).

On the occasion of the 70th birth-day ceremony of Pujya Mataji on 10th Oct., the Member of Parliament-Shri Dhananjay Kumar Jain (Former Finance Minister) was awarded by the institute (Jambudvip-Hastinapur) with 'Bhagwan Rishabhdev National Award'.

In the crowd of thousands of devotees Shri C.P. Thakur, the central minister of small scale industries and the governor of Bihar State-Justice Shri M. Rama Jois took part as the chief guests.

On this occasion, with declaring about "Akhil Bhartiya Tirthankar Janmabhumi Vikas Samiti", Pujya Mataji gave an inspiration for the development & restoration of the birth-places of all 24 Tirthankars. Many learned personalities of Jaina community also participated in this programme and expressed their humble feelings for Pujya Mataji with expressing their deep devotion for Kundalpur, the birth-place of Lord Mahavir.

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर दि. जैन समिति, नंद्यावर्त महल

गणिनी ज्ञानमती माताजी की ससंघ सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र यात्रा

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) से फाल्गुन कृष्णा 3, वीर निर्वाण संवत् 2529, दिनाँक 19.2.2003 को गणिनी ज्ञानमती माताजी ने ससंघ सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र यात्रा के लिए मंगल विहार किया। सर्वप्रथम भगवान मुनिसुव्रतनाथ की जन्मभूमि राजगृही पहुंचकर भगवान मुनिसुव्रतनाथ की 12 फुट उत्तुंग प्रतिमा विराजमान करने की घोषणा करके विपुलाचल पर्वत की वंदना की। अनन्तर पावापुरी सिद्धक्षेत्र पहुंचकर भगवान महावीर की निर्वाणभूमि जलमंदिर में विराजमान चरणों की वंदना करके दि. जैन पांडुकशिला परिसर में सवा ग्यारह फुट उत्तुंग भगवान महावीर की प्रतिमा विराजमान करने की प्रेरणा दी एवं गुणावां सिद्धक्षेत्र पर वहाँ से मुक्त हुए श्री गौतमगणधरस्वामी की प्रतिमा विराजमान करने की प्रेरणा प्रदान की।

क्रमशः कोडरमा, सरिया में धर्मप्रभावना करते हुए फाल्गुन शुक्ला 9 दिनाँक, 12.3.2003 को सम्मेदशिखर पहुंच गईं। अगले दिन केशलोच करके पर्वत पर जाकर चोपड़ा कुण्ड में विश्राम किया। फाल्गुन शुक्ला 11, दिनाँक 14.3.2003 को तीर्थराज की प्रथम वंदना की। 16 मार्च को तृतीय वंदना में ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन (अध्यक्ष-जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर), दीपक कुमार जैन (बनारस) ने माताजी के साथ वंदना की। अनन्तर नीचे आकर मंदिरों के दर्शन किए एवं तीर्थ के सर्वतोमुखी विकास को देखकर अत्यधिक प्रसन्नता व्यक्त की।

फाल्गुन शुक्ला 15 को सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र पर माताजी की प्रेरणा से 'श्रावक महासम्मेलन' किया गया जिसमें माताजी ने तीर्थंकरों की जन्मभूमि-निर्वाणभूमि आदि तीर्थों के विकास एवं तीर्थों के संरक्षण पर विशेष प्रकाश डाला।

चैत्र कृष्णा 1 को भगवान बाहुबली प्रतिमा के महा अभिषेक के अनन्तर गणिनी माताजी ने यहीं चौबीस टोंक बाहुबली मंदिर परिसर में भगवान ऋषभदेव की सवा नौ फुट उत्तुंग पद्मासन प्रतिमा विराजमान कराने की घोषणा की।

पूज्य माताजी ने पुनः पर्वतराज पर जाकर चोपड़ा कुण्ड पर रहकर 4 वंदनाएं और कीं। माताजी की प्रेरणा से चैत्र कृष्णा 9, दिनाँक 26.3.2003 को भगवान ऋषभदेव जयंती के उपलक्ष्य में प्रथम रथयात्रा निकाली गई। अनन्तर उसी दिन ऋषभदेव मंदिर का शिलान्यास डॉ. पन्नालाल जैन पापड़ीवाल पैठण (महाराष्ट्र) परिवार के द्वारा सम्पन्न हुआ। वहाँ वर्तमान में प्रतिमा विराजमान हो चुकी हैं।

चैत्र कृष्णा 12, दिनाँक 29 मार्च 2003 को सम्मेदशिखर से कुण्डलपुर की ओर माताजी ने ससंघ विहार कर दिया।

सम्मेदशिखर से सिद्धपद प्राप्त सभी तीर्थंकर आदि भगवान एवं ऋषभदेव भगवान हम सबके लिए मंगलकारी होवें।

इस सम्मेदशिखर यात्रा के मध्य संकल्पित योजनाओं में से पावापुरी में नवनिर्मित भगवान महावीर मंदिर का 28-11-2003 से 3-12-2003 तक विजय कुमार जैन-दरियागंज, दिल्ली एवं सुभाषचंद जैन-ऋषभ विहार, दिल्ली ने पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव सम्पन्न करके पुण्य प्राप्त किया। राजगृही में भी नवनिर्मित भगवान मुनिसुव्रत मंदिर का पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव अनिल कुमार जैन, कमलमंदिर-प्रीतविहार, दिल्ली सपरिवार ने 3-12-2003 से 8-12-2003 तक सम्पन्न किया। इन सभी प्रभावनात्मक कार्यों में पूज्य गणिनी माताजी के आशीर्वाद एवं ससंघ सानिध्य के साथ ही आर्यिका श्री चंदनामती माताजी का मार्गदर्शन एवं कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन का अथक परिश्रम सराहनीय रहा है।

प्रस्तुति-पीठाधीश क्षुल्लक मोतीसागर महाराज

PUJYA GANINI SHRI GYANMATI MATAJI (WITH SANGH) STARTRD HER ON-FOOT JOURNEY FOR SAMMED SHIKHERJI ON 19TH FEBRUARY 2003 FROM BHAGWAN MAHAVIR JANMABHUMI-KUNDALPUR (NALANDA).

IN BETWEEN, PUJYA MATAJI GAVE THE INSPIRATION FOR THE CONSTRUCTIONS OF BHAGWAN MUNISUVRATNATH TEMPLE AT RAJGRAHI, BHAGWAN MAHAVIR TEMPLE AT PAWAPURI, BHAGWAN RISHABHDEVA TEMPLE AT SAMMED SHIKHERJI AND FOR THE CONSECRATION OF THE IDOL OF BHAGWAN GAUTAM SWAMI AT GUNAVAJI.

CONSEQUENTLY, THE CONSECRATION CEREMONY (PRATISHTHA) OF THE IDOLS OF LORD MUNISUVRATNATH & LORD MAHAVIR HAS BEEN PERFORMED ALONG WITH THE CONSTRUCTION OF BEAUTIFUL TEMPLES AT BOTH THE PLACES.

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर दि. जैन समिति, नंद्यावर्त महल

कुण्डलपुर- राजगृही- पावापुरी में भगवान महावीर की पंचकल्याणक तिथियों में महोत्सव एवं महावीर जयन्ती समारोह

भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर, नंद्यावर्त महल (नालन्दा) बिहार में पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से उन्हीं के ससंघ सानिध्य में अनेक वर्षों बाद चैत्र शुक्ला 13, दिनाँक 15 अप्रैल 2003 को 'महावीर जयन्ती' मनाई गई। प्रभु की रथयात्रा में नालन्दा तक आम जनता को मिष्ठान्न एवं रत्न बांटे गए। पुनः भगवान का महा अभिषेक कराया गया। इसी शुभ दिवस 'भगवान महावीर ज्योति' का उद्घाटन किया गया। धातु का एक सुन्दर 'नंद्यावर्त महल' सात खण्ड का निर्मित है इसमें बालक महावीर पालना झूलते हुए हैं एवं राजा सिद्धार्थ के महल के ऊपरी भाग में भगवान शांतिनाथ का चैत्यालय है।इस 'महावीर ज्योति' का प्रवर्तन सारे भारत में हो रहा है।

इस कुण्डलपुर में भगवान महावीर की चारों कल्याणक तिथियों में उत्सव मनाए गए हैं। आषाढ़ शुक्ला 6, दिनाँक 5.7.03 को गर्भकल्याणक तिथि के दिन "नवग्रह जिनप्रतिमा पंचकल्याणक प्रतिष्ठा' के अवसर पर विधिनायक महावीर स्वामी का गर्भकल्याणक उत्सव मनाया गया।

वैशाख शुक्ला 10, दिनाँक 11.5.03 को भगवान के केवलज्ञान दिवस पर 'समवसरण विधान' करवा कर 'त्रिकाल चौबीसी मंदिर का शिलान्यास' कराया गया।

श्रावण कृष्णा 1, दिनाँक 14.7.03 को राजगृही में विपुलाचल पर्वत पर वीर प्रभु की प्रथम दिव्यध्वनि खिरने के उपलक्ष्य में भगवान का मस्तकाभिषेक, रथयात्रा आदि आयोजन पूर्वक वीरशासन जयंती समारोह मनाया गया।

मार्गशीर्ष कृष्णा 10, दिनाँक 19.11.03 को वीरप्रभु की दीक्षाकल्याणक के उपलक्ष्य में पालकी में भगवान विराजमान कर शोभायात्रा निकालकर भगवान महावीर का 1008 कलशों से महा अभिषेक कराया गया। इससे पूर्व नालंदा जिला के कतिपय विद्यालयों के बालकों को मिष्ठान्न वितरण, जैनसमाज द्वारा विधान, धर्मसभा आदि कार्यक्रम सम्पन्न हुए।

कार्तिक कृष्णा अमावस्या वीर निर्वाण संवत् 2529, दिनाँक 25.10.03 को पावापुरी में गणिनी माताजी के ससंघ सानिध्य में 2529 निर्वाणलाडू चढ़ाए गए। इस अवसर पर 24 किलो का प्रथम लाडू (सिद्धि निर्वाणलाडू) चढ़ाने का सौभाग्य श्री कैलाशचंद जैन सर्राफ टिकैतनगर-लखनऊ वालों (मुख्य संयोजक उ.प्र. सर्राफा एसोसिएशन) ने प्राप्त किया।

भगवान महावीर की ये पंचकल्याणक तिथियां तथा कुण्डलपुर, राजगृही और पावापुरी सिद्धक्षेत्र सम्पूर्ण विश्व के लिए मंगलकारी होवें।

प्रस्तुति-पीठाधीश क्षुल्लक मोतीसागर महाराज

BY THE INSPIRATION AND IN AUSPICIOUS PRESENCE OF PUJYA GANINI SHRI GYANMATI MATAJI (WITH SANGH), MAHAVIR JAYANTI WAS CELEBRATED GRACIOUSLY AFTER A GAP OF SEVERAL YEARS AT BHAGWAN MAHAVIR BIRTHPLACE-KUNDALPUR (NALANDA) ON 15TH APR. 2003 ALONG WITH THE INAUGURATION OF BHAGWAN MAHAVIR JYOTI RATH FOR ALL INDIA TOUR, VEER SHASAN JAYANTI WAS CELEBRATED ON 14TH JULY 2003 AT RAJGRAHI AND NIRVAN KALYANAK OF LORD MAHAVIR WAS CELEBRATED ON 25TH OCT. 2003 WITH OFFERING NIRVAN LADOO AT JAL MANDIR, PAWAPURI.

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर दि. जैन समिति, नंद्यावर्त महल

तीर्थंकर जन्मभूमियों के विकास की आवश्यकता

वर्तमानकालीन 24 तीर्थंकरों की जन्मभूमियाँ जैन संस्कृति की धरोहर हैं एवं धर्म की उदगमस्थली हैं। उनका विकास व जीर्णोद्धार करना संस्कृति एवं इतिहास का संरक्षण है।

पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी का समस्त दिगम्बर जैन समाज को आह्वान है कि आप सभी लोग मिलकर 24 तीर्थंकरों के महान सर्वोदयी आदर्श एवं उनकी जन्मभूमियों के सुसज्जित स्वरूप को विश्व के समक्ष लावें जिससे भगवान महावीर जैनधर्म के संस्थापक या प्रवर्तक हैं, इस भ्रान्तधारणा का निरसन होकर जैनधर्म की प्राचीनता विश्व के समक्ष प्रस्तुत हो सके।

वर्तमानकालीन चौबीस तीर्थंकरों की 16 जन्मभूमियों के नाम इस प्रकार हैं-

1. **अयोध्या (फैजाबाद-उ.प्र.)** –5 तीर्थंकर
   श्री ऋषभदेव
   श्री अजितनाथ
   श्री अभिनंदननाथ
   श्री सुमतिनाथ
   श्री अनंतनाथ
2. **श्रावस्ती (बहराइच-उ.प्र.)** –श्री संभवनाथ
3. **कौशाम्बी (उ.प्र.)** –श्री पद्मप्रभु
4. **वाराणसी (उ.प्र.)** –श्री सुपार्श्वनाथ
   श्री पार्श्वनाथ
5. **चन्द्रपुरी (वाराणसी)** –श्री चन्द्रप्रभु
6. **काकन्दी (उ.प्र.)** –श्री पुष्पदंतनाथ
7. **भद्रिकापुरी (भद्दिलपुर)** –श्री शीतलनाथ
8. **सिंहपुरी (वाराणसी)** –श्री श्रेयांसनाथ
9. **चम्पापुरी (भागलपुर-बिहार)** –श्री वासुपूज्यनाथ
10. **कम्पिलपुरी (फर्रुक्खाबाद-उ.प्र.)**–श्री विमलनाथ
11. **रत्नपुरी (फैजाबाद-उ.प्र.)** –श्री धर्मनाथ
12. **हस्तिनापुर (मेरठ-उ.प्र.)** –3 तीर्थंकर–
    श्री शांतिनाथ
    श्री कुन्थुनाथ
    श्री अरनाथ
13. **मिथिलापुरी** –श्री मल्लिनाथ
    श्री नमिनाथ
14. **राजगृही (नालंदा-बिहार)** –श्री मुनिसुव्रतनाथ
15. **शौरीपुर (बटेश्वर-उ.प्र.)** –श्री नेमिनाथ
16. **कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार)** –श्री महावीर भगवान

AYODHYA – 5 TIRTHANKARAS
LORD RISHABHDEV,
LORD AJITNATH,
LORD ABHINANDANNATH,
LORD SUMATINATH,
LORD ANANTNATH
SHRAVASTI –LORD SAMBHAVNATH
KAUSHAMBI –LORD PADMAPRABHU
VARANASI –LORD SUPARSHVANATH
LORD PARSHVANATH
CHANDRAPURI –LORD CHANDRAPRABHU
KAKANDI –LORD PUSHPADANTNATH
BHADRIKAPURI (BHADDILPUR) –
LORD SHEETALNATH
SINHPURI (VARANASI)–LORD SHREYANSNATH
CHAMPAPURI –LORD VASUPUJYANATH
KAMPILPURI –LORD VIMALNATH
RATNAPURI –LORD DHARMANATH
HASTINAPURI –3 TIRTHANKARAS
LORD SHANTINATH,
LORD KUNTHUNATH,
LORD ARANATH
MITHILAPURI –LORD MALLINATH,
LORD NAMINATH
RAJGRIHI –LORD MUNISUVRATNATH
SHAURIPUR –LORD NEMINATH
KUNDALPUR (NALANDA)–LORD MAHAVIRA

प्रस्तुति-आर्यिका चन्दनामती

तीर्थ निर्माण सम्प्रेरिका पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी एवं संघ का परिचय

अयोध्या के निकट टिकैतनगर ग्राम (जि.-बाराबंकी) में अग्रवाल जातीय गोयल गोत्रीय श्री छोटेलाल जैन की धर्मपत्नी मोहिनी देवी ने वीर निर्वाण संवत् 2460, आश्विन शुक्ला 15, शरदपूर्णिमा 22 अक्टूबर 1934 की रात्रि में एक कन्यारत्न को जन्म दिया, जिसका नाम 'मैना' रखा गया। 'पंद्मनन्दिपंचविंशतिका' आदि जैन ग्रंथों के स्वाध्याय से वैराग्य प्राप्त कर कु. मैना ने शरदपूर्णिमा 1952 के दिन आचार्य श्री देशभूषण जी महाराज से आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत लेकर गृहत्याग कर दिया पुनः चैत्र कृष्णा 1, सन् 1953 में महावीर जी सिद्धक्षेत्र पर आचार्य श्री देशभूषण जी महाराज से क्षुल्लिका दीक्षा लेकर 'वीरमती' नाम प्राप्त किया। चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर जी महाराज की आज्ञा से उन्हीं के पट्टाधीश आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज के करकमलों से वैशाख कृष्णा 2, सन् 1956 में माधोराजपुरा (राजस्थान) में आर्यिका दीक्षा लेकर 'ज्ञानमती' नाम प्राप्त किया। आप के द्वारा 250 ग्रंथों का विपुल साहित्य देखकर अयोध्या (फैजाबाद) वि.वि. के कुलपति के.पी. नौटियाल ने सन् 1995 में आपको वि.वि. की 'डी.लिट्' की मानद् उपाधि से अलंकृत कर अपने वि.वि. को गौरवान्वित अनुभव किया। आपके द्वारा अनेक तीर्थों के निर्माण हुए हैं। अनेक शिष्यों को ग्रंथों को पढ़ाकर एवं धर्म संस्कारों से संस्कारित कर मुनि दीक्षा दिलायी है।जो कि दिगम्बर जैन परम्परा में आचार्यपद पर भी प्रतिष्ठित हो चुके हैं। अनेक शिष्याएं आर्यिका पद्मावती, आ. जिनमती, आ. आदिमती, आ. अभयमती आदि ने अनेक उपवास, व्रत, ग्रंथ के लेखन आदि से धर्मप्रभावना करते हुए प्रसिद्धि प्राप्त की है।

वर्तमान में आर्यिका श्री चन्दनामती–माता मोहिनी ने ज्येष्ठ कृष्णा अमावस्या सन् 1958 को इस कन्या को जन्म देकर 'माधुरी' नाम रखा। कु. माधुरी ने भाद्रपद शु. 10, सन् 1971 में गणिनी ज्ञानमती माताजी से अजमेर में ब्रह्मचर्य व्रत लेकर संघ में धर्माराधना करते हुए क्रमशः श्रावण कृष्णा 11 सन् 1989 को हस्तिनापुर में आर्यिका दीक्षा ग्रहण कर 'चंदनामती' नाम प्राप्त किया।

पीठाधीश क्षुल्लक श्री मोतीसागर जी महाराज–सनावद (म.प्र.) में पोरवाड़ जातीय सेठ अमोलकचंद की ध.प. रूपाबाई ने आश्विन कृ. 14, सन् 1940 में मोतीचंद को जन्म दिया। सन् 1967 में सनावद के वर्षायोग से गणिनी ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से संघ में रहते हुए फाल्गुन शु. 9, सन् 1987 में हस्तिनापुर (जम्बूद्वीप) में आचार्य श्री विमलसागर जी से क्षुल्लक दीक्षा लेकर 'मोतीसागर' नाम प्राप्त किया पुनः श्रावण शु. 7, सन् 1987 में गणिनी ज्ञानमती माताजी ने इन्हें जम्बूद्वीप के 'पीठाधीश' पद पर प्रतिष्ठित किया है।

क्षुल्लिका श्री श्रद्धामती माताजी–ब्र. श्यामाबाई जैन-टिकैतनगर ने अपने पुत्र-पौत्रादि परिवार को छोड़कर 65 वर्ष की उम्र में पूज्य माताजी से सन् 1989 में कार्तिक कृ. 1 को क्षुल्लिका दीक्षा लेकर श्रद्धामती नाम प्राप्त किया। (23 सितम्बर 2004 भाद्रपद शु. नवमी को कुण्डलपुर में इनका समाधिमरण हो चुका है।)

कर्मयोगी ब्र. श्री रवीन्द्र कुमार जैन–ब्र. श्री रवीन्द्र कुमार जैन ने ज्येष्ठ शु. 5, सन् 1950 में जन्म लिया था। जन्मदात्री माँ मोहिनी (आर्यिका रत्नमती) तथा गणिनी ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से सन् 1972 में ब्रह्मचर्य व्रत लेकर क्रमशः सप्तम प्रतिमा लेकर गृहत्याग कर दिया। वर्तमान में कर्मयोगी उपाधि से सहित 'दि. जैन त्रिलोक शोध संस्थान' आदि अनेक तीर्थों के अध्यक्ष हैं। सन् 2000 में अमेरिका में विश्वशांति शिखर सम्मेलन में जैन धर्माचार्य के रूप में जाकर भगवान ऋषभदेव के सिद्धान्तों का विश्व के धर्माचार्यों के बीच में प्रचार-प्रसार किया है। इन आर्यिका श्री चंदनामती माताजी, पीठाधीश क्षुल्लक श्री मोतीसागर जी महाराज एवं कर्मयोगी ब्र. श्री रवीन्द्र कुमार जैन ने पूज्य गणिनी माताजी की प्रेरणा से प्रत्येक कार्यों को मूर्तरूप देकर जैनधर्म की अतिशय प्रभावना के कार्य संपन्न किये हैं तथा वर्तमान में कर रहे हैं।

संघस्थ ब्रह्मचारिणी बहनें–कु. बीना, आस्था, सारिका, चन्द्रिका, इन्दू, अलका, प्रीति और कु. स्वाति भी गणिनी संघ की मंगल विहार यात्रा आदि संघ संचालन में कुशलतापूर्वक अपने कर्तव्य का पालन करते हुए धर्मलाभ ले रही हैं। सभी संघ कुशलतापूर्वक धर्मप्रभावना करता रहे, यही मंगल कामना है।

जैनधर्म एवं तीर्थंकर परम्परा शाश्वत है

जैनधर्म के ग्रन्थों में लोक को-संसार को अनादिनिधन-शाश्वत माना है। जैसे कि-

"लोगो अकिट्टिमो खलु अणाइणिहणो सहावणिव्वत्तो।"

लोक अकृत्रिम है, अनादिनिधन है और स्वभाव से बना हुआ है।

इस लोक के अधोलोक, मध्यलोक और ऊर्ध्वलोक ऐसे तीन भेद हैं। अधोलोक में नारकी, मध्यलोक में मनुष्य, तिर्यंच आदि और ऊर्ध्व लोक में देव रहते हैं। उसके ऊपर सिद्धशिला पर अनंतानंत सिद्ध भगवान विराजमान हैं।

मध्यलोक में असंख्यात द्वीप-समुद्र हैं। सर्वप्रथम द्वीप का नाम जंबूद्वीप है। यह गोलाकार है। इसे चारों ओर से घेर कर आगे-आगे के द्वीप-समुद्र हैं। इस जंबूद्वीप के भरतक्षेत्र और ऐरावतक्षेत्र में षट्काल परिवर्तन होता रहता है। प्रथमतः काल के अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी नाम से दो भेद हैं। उनमें प्रत्येक के अर्थात् अवसर्पिणी के सुषमा सुषमा, सुषमा, सुषमादुःषमा, दुःषमासुषमा, दुःषमा और अतिदुःषमा ये छह भेद हैं तथा उत्सर्पिणी काल के भी अतिदुःषमा, दुषमा, दुःषमासुषमा, सुषमादुःषमा, सुषमा और सुषमासुषमा ये छह भेद हैं।

वर्तमान के अवसर्पिणी काल में तृतीय काल के अंत में पल्य का आठवां भाग शेष रहने पर चौदह कुलकर उत्पन्न हुये हैं। उनके नाम क्रमशः 1. प्रतिश्रुति, 2. सन्मति, 3. क्षेमंकर, 4. क्षेमंधर, 5. सीमंकर, 6. सीमंधर, 7. विमलवाहन, 8. चक्षुष्मान, 9. यशस्वी, 10. अभिचंद्र, 11. चंद्राभ, 12. मरुदेव, 13. प्रसेनजित् और 14. नाभिराजं हैं।

इनमें से अन्तिम कुलकर नाभिराज की महारानी मरुदेवी से प्रथम तीर्थंकर भगवन ऋषभदेव उत्पन्न हुए। अनंतर अजितनाथ आदि महावीर पर्यंत चौबीस तीर्थंकर हुये हैं।

असंख्यातों अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी के बीत जाने पर एक 'हुंडावसर्पिणी' आता है। उसमें कुछ अघटित घटनायें हो जाती हैं। वर्तमान में हुंडावसर्पिणी के निमित्त से भगवान ऋषभदेव का जन्म तृतीय काल के अंत में होकर उसी काल के अंत में तीन वर्ष साढ़े आठ माह शेष रहने पर निर्वाण भी हो गया है।

वर्तमान में इस अवसर्पिणी का पांचवां काल चल रहा है। इस अवसर्पिणी से पूर्व उत्सर्पिणी के चतुर्थकाल में भी चौबीस तीर्थंकर हो चुके हैं। आगे आने वाली उत्सर्पिणी में भी चौबीस तीर्थंकर होवेंगे।

ऐसे अनंतानंत अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी कालों में अनंतानंत तीर्थंकर हो चुके हैं और आगे होते रहेंगे उन त्रैकालिक सभी भगवन्तों को मेरा नमस्कार होवे।

जैनधर्म के मूल सिद्धान्त

जैनधर्म के मूलसिद्धान्तों में 1. आत्मा का अस्तित्व, 2. कर्मवाद, 3. स्याद्वाद, 4. अहिंसा और 5. अपरिग्रह ये प्रमुख रूप से हैं–

आत्मा का अस्तित्व–तीन लोक में अनन्तानन्त जीव हैं। प्रत्येक जीव का अस्तित्व पृथक-पृथक है। "मैं सुखी हूँ, मैं दुःखी हूँ" इत्यादि अनुभव में जो 'मैं' शब्द से 'अहंप्रत्यय'-स्वयं का ज्ञान होता है, वही आत्मा कां अस्तित्व है। आत्मा ज्ञान-दर्शनस्वभाव वाला है और अनादि अनंत-शाश्वत है।

कर्मवाद–इस जीव के साथ कर्मों का संबंध अनादिकाल से चला आ रहा है। यह जीव स्वयं राग-द्वेष आदि भावों से कर्मों को ग्रहण करता है और उन कर्मों का उदय आने पर सुख-दुःख आदि फल को भोगता है। जैनधर्म के अनुसार कोई भी 'ईश्वर' किसी को सुख-दुःख नहीं देता है। प्रत्युत शुभ-अशुभ परिणामों से जीव स्वयं पुण्य-पाप का बंध करके संसार में भ्रमण करता रहता है, जब पुरुषार्थ से कर्मों को नष्ट कर देता है तब स्वयं सिद्ध भगवान बन जाता है।

स्याद्वाद–प्रत्येक वस्तु अनंत धर्मस्वरूप है। उन धर्मों का नय-प्रमाणों से कथन करना ही 'स्याद्वाद' है। जैसे जीव स्यात्-किसी अपेक्षा से 'नित्य' है, मनुष्य ही मरकर देव बन जाता है। वही जीव स्यात्-किसी दृष्टि से 'अनित्य' है-जन्म-मरण के दुःख उठा रहा है। इसी का नाम स्यात्-वाद-'स्याद्वाद' है।

अहिंसा और अपरिग्रहवाद–सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र इन तीनों की एकता ही मुक्ति का उपाय है। इनकी प्राप्ति और पूर्ति ही अहिंसा-अपरिग्रहवाद की चरमसीमा है।

सच्चे देव, शास्त्र, गुरु का श्रद्धान करना और अर्हंतदेव द्वारा कथित जीव-अजीव आदि तत्त्वों का श्रद्धान करना सम्यग्दर्शन है।

अर्हंत द्वारा कथित जैन ग्रन्थों का पठन-पाठन करके समीचीन ज्ञान प्राप्त करना सम्यग्ज्ञान है।

पाप क्रियाओं से हटकर शुभ क्रियाओं में प्रवृत्ति करना सम्यक्चारित्र है। इसके सकल-विकल दो भेद हैं।

हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह इन पांच पापों का पूर्णत्याग कर देना पांच महाव्रत रूप मुनियों का चारित्र सकल चारित्र है और इन्हीं पापों का एकदेश त्याग करना पांच अणुव्रत रूप गृहस्थों का विकल चारित्र है। यह चारित्र ही अहिंसा और अपरिग्रहरूप है।

इसी विकलचारित्र में अष्टमूलगुण आदि भेद हैं–

1. मद्यत्याग, 2. मांसत्याग, 3. मधुत्याग, 4. रात्रिभोजन त्याग, 5. बड़, पीपर, पाकर, ऊमर और कठूमर इन पांच उदुंबर फलों का त्याग करना, 6. जीवदया पालन करना, 7. जल छान कर पीना और 8. अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु इन पांच परमेष्ठियों को नमस्कार करना ये श्रावक के आठ मूलगुण हैं।

1. जुआ खेलना, 2. मांस खाना, 3. मदिरा पीना, 4. वेश्या सेवन करना, 5. शिकार खेलना, 6. चोरी करना और 7. परस्त्रीसेवन करना ये सात व्यसन महादुःखदायी हैं। इनका त्याग करना गृहस्थ का कर्तव्य है।

गृहस्थ की षट्क्रियाएं–1. देवपूजा, 2. गुरु की उपासना, 3. स्वाध्याय, 4. संयम, 5. तप और 6. दान इन क्रियाओं को नित्य ही करना चाहिए।

कोई भी नर-नारी गृहस्थ धर्म का पालन कर पुनः मुनिधर्म को धारण कर परंपरा से मोक्ष प्राप्त कर लेते हैं, यही जैनधर्म की महिमा है।

दिगम्बर जैनाचार्य श्री शांतिसागर जी महाराज एवं उनकी आचार्य परंपरा

श्रीमूलसंघ में कुंदकुंदाम्नाय, सरस्वती गच्छ, बलात्कारगण में बीसवीं शताब्दी में प्रथम दिगंबर जैनाचार्य-चारित्रचक्रवर्ती श्री शांतिसागर जी महाराज हुये हैं।

उनका परिचय-महाराष्ट्र के जिला कोल्हापुर में भोज निकट 'येळगुळ' ग्राम के भीमगौंडा पाटील की धर्मपत्नी सत्यवती ने आषाढ़ कृ. 6, सन् 1872 में सातगौंडा पुत्र को जन्म दिया। धर्म संस्कार से सातगौंडा ने ज्ये. शु. 13, सन् 1914 में उत्तूरग्राम (जि. को.) में श्री 108 मुनि देवेन्द्रकीर्ति जी से क्षुल्लक दीक्षा ली, पुनः 'यरनाल' (जि. बेलगांव-कर्नाटक) में फाल्गुन शु. 14, सन् 1920 में श्रीदेवेंद्रकीर्ति मुनिराज से ही मुनिदीक्षा लेकर **"शांतिसागर"** नाम से प्रसिद्ध हुए, अनंतर समडोली (जि. सांगली) में पंचकल्याणक के समय सन् 1924 में चतुर्विध संघ द्वारा **"आचार्य पद"** प्राप्त कर सन् 1937 में गजपंथा सिद्धक्षेत्र पर **"चारित्र चक्रवर्ती"** पद से विभूषित हुये हैं।

आचार्यदेव ने अनेक मुनि, आर्यिका आदि दीक्षायें दीं। अनेक तीर्थों पर जिनप्रतिमाओं की स्थापना, षट्खंडागम ग्रन्थ को ताम्रपट्ट पर उत्कीर्ण कराना, अनेक जैन ग्रन्थ प्रकाशित कराना आदि बहुविध धर्मप्रभावना के कार्य किये गये हैं।

आचार्यश्री के प्रथम शिष्य आचार्यश्री वीरसागर जी महाराज–

औरंगाबाद(महाराष्ट्र) के निकट **"ईर"** ग्राम के श्रेष्ठी रामसुख जैन गंगवाल की धर्मपत्नी 'भागूबाई' ने आषाढ़ शु. पूर्णिमा, सन् 1876 के दिन हीरालाल पुत्र को जन्म दिया। फाल्गुन शु. 7, सन् 1923 में ब्र. हीरालाल ने मुनि श्रीशांतिसागर जी से क्षुल्लक दीक्षा लेकर वीरसागर नाम प्राप्त किया, पुनः समडोली में सन् 1924 में मुनि दीक्षा ग्रहण कर गुरुदेव के प्रथम शिष्य कहलाये। क्रमशः ये विशाल चतुर्विध संघ का संचालन करने लगे।

कुंथलगिरि (महाराष्ट्र) सिद्धक्षेत्र पर आचार्य श्री शांतिसागर जी ने यम सल्लेखना ग्रहण कर अपना आचार्यपद 24-8-1955 को आचार्यकल्प मुनि वीरसागर के लिए विशालतम सभा में घोषित करके प्रमुख श्रावकों से पत्र लिखा दिया। जयपुर (खानिया) में विराजमान आ.कल्प वीरसागर को द्वि. भाद्रपद कृ. 7 को चतुर्विध संघ ने विधिवत् आचार्यपद प्रदान कर दिया।

इधर द्वि. भाद्रपद शु. 2, सन् 1955 को चा. च. आ. श्री शांतिसागर जी ने समाधिमरणपूर्वक शरीर को छोड़कर स्वर्गधाम प्राप्त कर लिया।

दो वर्ष तक आचार्य पद में धर्मप्रभावना करते हुये आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज ने आश्विन कृ. अमावस्या, सन् 1957 को समाधिमरण करके देवपद प्राप्त किया।

इस आचार्य परंपरा के प्रथमपट्टाचार्य श्री वीरसागर जी के बाद आ. श्री शिवसागर जी, आ. श्री धर्मसागर जी, आ. श्री अजितसागर जी, आ. श्री श्रेयांससागर जी हुये हैं।

वर्तमान में इस पट्टाचार्य परंपरा के आचार्य श्री अभिनंदन सागर जी विद्यमान हैं।

प्रथम पट्टाचार्य श्री वीरसागर जी महाराज ही गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी के आर्यिका दीक्षा गुरु हैं।

THE FIRST DIGAMBER JAIN ACHARYA OF THE TWENTIETH CENTURY WAS ACHARYA SHRI SHANTISAGAR JI, HIS DISCIPLE WAS THE FIRST PATTACHARYA-SHRI VEERSAGAR JI, THEN FOLLOWED ACHARYA SHRI SHIVSAGAR JI, ACHARYA SHRI DHARMASAGAR JI, ACHARYA SHRI AJITSAGAR JI, ACHARYA SHRI SHREYANSSAGAR JI AND PRESENTLY ACHARYA SHRI ABHINANDAN SAGAR JI IS THE ACHARYA OF THIS TRADITION.

भगवान महावीर निर्वाणभूमि-पावापुरी जल मंदिर

प्रस्तुति-गणिनी ज्ञानमती

पावापुरी में सरोवर के मध्य स्थित जल मंदिर ही भगवान महावीर की निर्वाणभूमि है।

श्री पूज्यपाद आचार्य ने निर्वाणभक्ति में कहा है–

पद्मवनदीर्घिकाकुल-विविधद्रुमखण्डमण्डिते रम्ये। पावानगरोद्याने व्युत्सर्गेण स्थितः स मुनिः।।16।।
कार्तिककृष्णस्यान्ते स्वातावृक्षे निहत्य कर्मरजः। अवशेषं संप्रापद्-व्यजरामरमक्षयं सौख्यम् ।।17।।
परिनिर्वृतं जिनेन्द्रं, ज्ञात्वा विबुधा ह्यथाशु चागम्य। देवतरुरक्तचंदन - कालागुरुसुरभिगोशीर्षैः ।।18।।
अग्नीन्द्राज्जिनदेहं मुकुटानलसुरभिधूपवरमाल्यैः। अभ्यर्च्य गणधरानपि, गता दिवं खं च वनभवने।।19।।

पुनश्च–

पावापुरस्य बहिरुन्नतभूमिदेशे, पद्मोत्पलाकुलवतां सरसां हि मध्ये।
श्रीवर्द्धमानजिनदेव इति प्रतीतो, निर्वाणमाप भगवान् प्रविधूतपाप्मा।।24।।

श्रीगुणभद्र आचार्य ने उत्तरपुराण में कहा है–

क्रमात्पावापुरं प्राप्य मनोहरवनान्तरे। बहूनां सरसां मध्ये महामणिशिलातले।।509।।
स्थित्वा दिनद्वयं वीतविहारो वृद्धनिर्जरः। कृष्णकार्तिकपक्षस्य चतुर्दश्यां निशात्यये।।510।।
स्वातियोगे तृतीयेद्ध-शुक्लध्यानपरायणः। कृतत्रियोगसंरोधः समुच्छिन्नक्रियं श्रितः।।511।।
हताघातिचतुष्कः सन्नशरीरो गुणात्मकः। गन्ता मुनिसहस्रेण निर्वाणं सर्ववाञ्छितम् ।।512।।
तदेव पुरुषार्थस्य पर्यन्तोऽनन्तसौख्यकृत् । अथ सर्वेऽपि देवेन्द्रा वह्नीन्द्रमुकुटस्फुरत् ।।513।।
हुताशनशिखान्यस्त-तद्देहा मोहविद्विषम् । अभ्यर्च्य गन्धमाल्यादि-द्रव्यैर्दिव्यैर्यथाविधि।।514।।
वन्दिष्यन्ते भवातीतमर्थ्यैर्वन्दारवः स्तवैः। वीरनिर्वृतिसम्प्राप्तदिन एवास्तघातिकः।।515।।
भविष्याम्यहमप्युद्यत्केवलज्ञानलोचनः। भव्यानां धर्मदेशेन विहृत्य विषयांस्ततः।।516।।

(उत्तरपुराण, पर्व 76)

यहां अभिप्राय यह है कि पावापुरी के मनोहर नाम के उद्यान में कमलों से व्याप्त सरोवर के मध्य महामणिमयी शिला पर भगवान विराजमान हुए उस समय समवसरण विघटित हो चुका था। श्रीविहार बंद कर दो दिन तक ध्यान में लीन हुए महावीर स्वामी ने कार्तिक कृष्णा चतुर्दशी की रात्रि के अंत में अघातिया कर्मों को नष्ट कर निर्वाणपद प्राप्त कर लिया। तभी सौधर्मेन्द्र आदि इन्द्रों ने अग्निकुमार इन्द्र के मुकुट के अग्रभाग से निर्गत अग्नि पर प्रभु का शरीर स्थापित कर दिव्य चन्दन आदि के द्वारा पूजा करके संस्कार कर दिया। उसी दिन गौतमस्वामी को वहीं पर केवलज्ञान प्रगट हुआ है।

हरिवंशपुराण में भी यही लिखा है एवं दीपावली पर्व तभी प्रारंभ हुआ, ऐसा कहा है–

जिनेंद्रवीरोऽपि विबोध्य संततं, समन्ततो भव्यसमूहसन्ततिम् ।
प्रपद्य पावानगरीं गरीयसीं, मनोहरोद्यानवने तदीयके।।15।।
चतुर्थकालेऽर्धचतुर्थमासकै - र्विहीनताविश्चतुरब्दशेषके ।
स कार्तिके स्वातिषु कृष्णभूतसु-प्रभातसन्ध्यासमये स्वभावतः।।16।।
अघातिकर्माणि निरुद्धयोगको, विधूय घातीन्धनवद् विबंधनः।
विबन्धनस्थानमवाप शंकरो, निरन्तरायोरुसुखानुबन्धनम् ।।17।।
स पञ्चकल्याणमहामहेश्वरः, प्रसिद्धनिर्वाणमहे चतुर्विधैः।
शरीरपूजाविधिना विधानतः, सुरैः समभ्यर्च्यत सिद्धशासनः।।18।।
ज्वलत्प्रदीपालिकया प्रवृद्धया, सुरासुरैर्दीपितया प्रदीप्तया।
तदा स्म पावानगरी समन्ततः, प्रदीपिताकाशतला प्रकाशते।।19।।
तथैव च श्रेणिकपूर्वभूभुजः, प्रकृत्य कल्याणमहं सहप्रजाः।
प्रजग्मुरिन्द्राश्च सुरैर्यथायथं, प्रयाचमाना जिनबोधिमर्थिनः।।20।।

ततस्तु लोकः प्रतिवर्षमादरात्, प्रसिद्धदीपालिकयात्र भारते।
समुद्यतः पूजयितुं जिनेश्वरं, जिनेंद्रनिर्वाणविभूतिभक्तिभाक्।।21।।

(हरिवंशपुराण सर्ग 66)

सार यही है कि भगवान महावीर पावापुरी के मनोहर उद्यान में विराजमान हुए। जब चतुर्थकाल में तीन वर्ष साढ़े आठ मास बाकी रहे तब स्वाति नक्षत्र में कार्तिक अमावस्या के दिन प्रातः-उषाकाल के समय स्वभाव से योग निरोधकर शुक्लध्यान के द्वारा सर्वकर्म नष्ट कर निर्वाण को प्राप्त हो गये। उस समय चार निकाय के देवों ने विधिपूर्वक भगवान के शरीर की पूजा की। अनन्तर सुर-असुरों द्वारा जलायी हुई बहुत भारी देदीप्यमान दीपकों की पंक्ति से पावानगरी का आकाश सब ओर से जगमगा उठा। श्रेणिक आदि राजाओं ने भी प्रजा के साथ मिलकर भगवान के निर्वाणकल्याणक की पूजा की पुनः रत्नत्रय की याचना करते हुए सभी इन्द्र, मनुष्य आदि अपने-अपने स्थान चले गये।

उस समय से लेकर भगवान के निर्वाण कल्याणक की भक्ति से युक्त संसार के प्राणी इस भरतक्षेत्र में प्रतिवर्ष आदरपूर्वक प्रसिद्ध दीपमालिका के द्वारा भगवान महावीर की पूजा करने के लिए उद्यत रहने लगे अर्थात् भगवान के निर्वाणकल्याणक की स्मृति में दीपावली पर्व मनाने लगे।

इन्द्र ने प्रभु के चरण उत्कीर्ण किए—

एक प्रकरण हरिवंशपुराण में आया है कि—

जब भगवान नेमिनाथ गिरनार पर्वत से निर्वाण प्राप्त कर चुके तब इन्द्रों ने भगवान की निर्वाणकल्याणक पूजा के बाद गिरनार पर्वत पर वज्र से चरण उत्कीर्ण कर इस लोक में पवित्र सिद्धशिला का निर्माण किया तथा उसे जिनेन्द्र भगवान के लक्षणों के समूह से युक्त किया। यथा—

ऊर्जयन्तगिरौ वज्री वज्रेणालिख्य पावनीम् । लोके सिद्धशिलां चक्रे जिनलक्षण पङ्क्तिभिः।।14।।

(हरिवंश पुराण सर्ग 65)

श्री समन्तभद्रस्वामी ने भी स्वयंभूस्तोत्र में लिखा है—

ककुदं भुवः खचरयोषिदुषितशिखरैरलंकृतः। मेघपटलपरिवीत तटस्तव लक्षणानि लिखितानि वज्रिणा।।127।।
वहतीति तीर्थमृषिभिश्च, सततमभिगम्यतेऽद्य च। प्रीतिविततहृदयैः परितो, भृशमूर्जयन्त इति विश्रुतोऽचलः।।128।।

बीसवीं सदी के प्रथम आचार्य चारित्रचक्रवर्ती श्रीशांतिसागर जी महाराज के प्रथम पट्टाधीश आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज कहते थे कि-इसी प्रकार से पावापुरी सरोवर के मध्य मणिमयी शिला से भगवान के मोक्ष जाने के बाद इन्द्रों ने वज्र से यहाँ पर भी चरणचिन्ह उत्कीर्ण करके इस शिला को सिद्धशिला के समान पूज्य पवित्र बनाया था।

एक बात यह भी ध्यान देने योग्य है कि भगवान केवलज्ञान होने के बाद पाँच हजार धनुष-बीस हजार हाथ प्रमाण ऊपर आकाश में अधर पहुंच जाते हैं। अधर में ही कुबेर द्वारा समवसरण की रचना की जाती है। जब भगवान श्रीविहार करते हैं तब समवसरण विघटित हो जाता है और भगवान आकाश में अधर चलते हैं तथा देवगण प्रभु के चरणों के नीचे स्वर्णमयी दिव्य कमलों की रचना करते रहते हैं। निर्वाणप्राप्ति के पूर्व भी जब भगवान योग निरोध करते हैं तब वे आकाश में अधर ही रहते हैं फिर भी उनके ठीक नीचे की भूमि भगवान की निर्वाणभूमि मानी जाती है चूँकि सिद्ध भगवान सिद्धशिला पर भी ठीक उसी भूमि के ऊपर विराजमान हैं।

इससे यह स्पष्ट है कि भगवान महावीर स्वामी जहाँ से मोक्ष गये हैं ठीक वहीं पर उनके शरीर का संस्कार किया गया है और वहीं पर सरोवर के मध्य मणिमयी शिला पर इन्द्रों ने चरण उत्कीर्ण किये थे। ऐसे ही सम्मेदशिखर पर्वत के सभी टोकों पर इन्द्रों द्वारा चरण उत्कीर्ण किये गये हैं ऐसा मानना चाहिए।

ऐसी सिद्धभूमि पावापुरी को मेरा अनन्त-अनन्त बार नमस्कार होवे।

(शरदपूर्णिमा, 10 अक्टूबर 2003)

***सौजन्य*—भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर दिगम्बर जैन समिति**

नंद्यावर्त महल, पो.-कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार

नोट—यह शिलालेख पावापुरी के पाण्डुकशिला परिसर में नवनिर्मित भगवान महावीर मंदिर में लगाया गया है।

PAWAPURI JALMANDIR-THE SALVATION PLACE OF LORD MAHAVIR

{PRESENTED BY GANINI GYANMATI MATAJI ON THE BASIS OF ANCIENT DIGAMBER JAIN SCRIPTURES}

THE JAL MANDIR, SITUATED IN THE CENTRE OF POND ABOUNDING IN LOTUSES AT PAWAPURI, IS THE SALVATION PLACE OF LORD MAHAVIR. IT HAS BEEN DESCRIBED BY PUJYAPAD ACHARYA IN NIRVAN BHAKTI AND BY SHRI GUNBHADRA ACHARYA IN UTTAR PURAN. WHEN LORD MAHAVIR GOT SEATED ON THE GREAT GEM-ROCK IN THE MIDDLE OF POND AT MANOHAR GARDEN OF PAWAPURI,HE ENGROSSED INTO DEEP MEDITATION FOR TWO DAYS AND DESTROYING ALL NON-DESTRUCTIVE (AGHATIYA) KARMAS, HE GOT SALVATED IN THE LAST PHASE OF THE NIGHT OF KARTIK KRISHNA CHATURDASHI. AFTER WORSHIPPING WITH DIVINE SANDALWOOD ETC.SAUDHARMA INDRA WITH OTHER INDRAS PERFORMED THE HOLY CREMATION OF THE HOLY BODY OF LORD BY THE LUSTROUS FIRE, COMING OUT FROM THE CROWN OF THE AGNIKUMAR INDRA.IN THE EVENING OF THE SAME DAY GAUTAM SWAMI GOT OMNISCIENCE.

THE HOLY CREMATION OF THE BODY OF LORD MAHAVIR WAS GOT DONE AT THE SAME PLACE FROM WHERE HE GOT SALVATION. AND ALSO, AT THE SAME PLACE INDRA ENGRAVED THE SACRED FOOT-PRINT ON THE GREAT GEM-ROCK IN THE MIDDLE OF THE POND.

ACCORDING TO THE DESCRIPTION IN HARIVANSH PURAN, AFTER THE NIRVAN OF LORD,THE SKY OF PAWAPURI WAS BRIGHTENED WITH THE DAZZLING LIGHT IN ALL THE DIRECTIONS WITH THE ROWS OF ILLUMINATING LAMPS LIGHTED BY INFINITE CELESTIAL DEITIES.

THUS THE FESTIVAL OF DEEPAWALI STARTED.

TO SUCH A GREAT & SACRED PLACE OF SALVATION- PAWAPURI, I PAY MY INFINITE REVERENTIAL BOWINGS.

(SHARAD POORNIMA, 10TH OCTOBER 2003)

BHAGWAN MAHAVIR JANMABHUMI KUNDALPUR
DIGAMBER JAIN SAMITI, NANDYAVARTA MAHAL,
P.O.-KUNDALPUR (NALANDA) BIHAR

NOTE - THE ABOVE *SHILALEKH* HAS BEEN PLACED AT BHAGWAN MAHAVIR TEMPLE BUILT AT THE PANDUKSHILA CAMPUS OF PAWAPURI.

तीस चौबीसी तीर्थंकर

जंबूद्वीप में एक भरत क्षेत्र, एक ऐरावत क्षेत्र है। धातकी खंड द्वीप में दो भरत, दो ऐरावत हैं। पुष्करार्ध द्वीप में दो भरत, दो ऐरावत हैं, इस प्रकार ढाई द्वीप में पांच भरत क्षेत्र एवं पांच ऐरावत क्षेत्र ऐसे दश क्षेत्र हैं। इन भरत-ऐरावत क्षेत्रों में आर्यखंडों में षट्काल परिवर्तन होता रहता है। इन षट् कालों में प्रत्येक चतुर्थकाल में चौबीस-चौबीस तीर्थंकर होते हैं। इन दश आर्यखंडों के भूतकालीन, वर्तमानकालीन और भविष्यत्कालीन ऐसी त्रैकालिक तीस चौबीसी हो जाती हैं, इन तीस चौबीसी के सात सौ बीस (720) तीर्थंकर भगवंतों को मेरा नमस्कार होवे।

गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से भगवान पार्श्वनाथ की केवलज्ञान कल्याणक भूमि अहिच्छत्र तीर्थ पर दश मंदिरों में इन तीस चौबीसी की 720 जिन प्रतिमाएं विराजमान की गई हैं।

वर्तमान चौबीस तीर्थंकरों की जन्मभूमि

जंबूद्वीप के भरत क्षेत्र के आर्यखंड की अयोध्या नगरी ही चौबीस तीर्थंकरों की जन्मभूमि रही है और आगे भी रहेगी। इस बार हुंडावँसर्पिणी के दोष से अयोध्या में भी ऋषभदेव, अजितनाथ, अभिनंदननाथ, सुमतिंनाथ और अनंतनाथ ये पांच तीर्थंकर ही जन्में हैं। श्री संभवनाथ श्रावस्ती में, श्री पद्मप्रभनाथ कौशाम्बी में, श्री सुपार्श्वनाथ एवं पार्श्वनाथ वाराणसी में, श्री चंद्रप्रभनाथ चंद्रपुरी में, श्री श्रेयांसनाथ सिंहपुरी (सारनाथ) में, श्री पुष्पदंतनाथ काकंदी में, श्री शीतलनाथ भद्रिलपुर में, श्री वासुपूज्यनाथ चंपापुर में, श्री विमलनाथ कंपिलापुरी में, श्री धर्मनाथ रत्नपुरी (रौनाही) में, श्री शांतिनाथ, कुंथुनाथ और अरनाथ हस्तिनापुर में, श्री मल्लिनाथ एवं नमिनाथ मिथिलापुरी में, श्री मुनिसुव्रतनाथ राजगृही में, श्री नेमिनाथ शौरीपुर में एवं श्री महावीर स्वामी कुंडलपुर (जि.नालंदा) में जन्में हैं।

वर्तमान चौबीस तीर्थंकरों की निर्वाणभूमिं

शाश्वत जन्मभूमि अयोध्या में जन्मे सभी तीर्थंकर शाश्वत तीर्थ सम्मेदशिखर से ही मोक्षपद प्राप्त करते हैं। किंतु वर्तमान में कालदोष से चार तीर्थंकर अन्यत्र से मोक्ष गये हैं।

श्री ऋषभदेव अष्टापद-कैलाशपर्वत से, श्रीवासुपूज्य भगवान चंपापुर (मन्दारगिरि) से, श्रीनेमिनाथ गिरनार पर्वत से, श्री महावीर स्वामी पावापुरी के सरोवर से मोक्ष गये हैं। शेष बीस तीर्थंकर सम्मेद शिखर पर्वत से मोक्ष गये हैं।

इन सभी तीर्थंकरों को एवं इनकी जन्मभूमि, निर्वाणभूमि तथा पंचकल्याणक भूमियों को मेरा कोटि-कोटि नमस्कार होवे।

तीन चौबीसी तीर्थंकर के नाम

	भूतकाल के चौबीस तीर्थंकर	वर्तमानकाल के चौबीस तीर्थंकर	भविष्यत्काल के चौबिस तीर्थंकर
1.	श्री निर्वाणनाथ जी	श्री ऋषभदेव जी	श्री महापद्मनाथ जी
2.	श्री सागरनाथ जी	श्री अजितनाथ जी	श्री सुरदेवनाथ जी
3.	श्रीमहासाधुनाथ जी	श्री संभवनाथ जी	श्री सुपार्श्वनाथ जी
4.	श्री विमलप्रभनाथ जी	श्री अभिनंदननाथ जी	श्री स्वयंप्रभनाथ जी
5.	श्री श्रीधरनाथ जी	श्री सुमतिनाथ जी	श्री सर्वात्मभूतनाथ जी
6.	श्री सुदत्तनाथ जी	श्री पद्मप्रभनाथ जी	श्री देवपुत्रनाथ जी
7.	श्री अमलप्रभनाथ जी	श्री सुपार्श्वनाथ जी	श्री कुलपुत्रनाथ जी
8.	श्री उद्धरनाथ जी	श्री चन्द्रप्रभनाथ जी	श्री उदंकनाथ जी
9.	श्री अंगिरनाथ जी	श्री पुष्पदंतनाथ जी	श्री प्रोष्ठिलनाथ जी
10.	श्री सन्मतिनाथ जी	श्री शीतलनाथ जी	श्री जयकीर्तिनाथ जी
11.	श्री सिन्धुनाथ जी	श्री श्रेयांसनाथ जी	श्री मुनिसुव्रतनाथ जी
12.	श्री कुसुमांजलिनाथ जी	श्री वासुपूज्यनाथ जी	श्री अरनाथ जी
13.	श्री शिवगणनाथ जी	श्री विमलनाथ जी	श्री निष्पापनाथ जी
14.	श्री उत्साहनाथ जी	श्री अनन्तनाथ जी	श्री निष्कषायनाथ जी
15.	श्री ज्ञानेश्वरनाथ जी	श्री धर्मनाथ जी	श्री विपुलनाथ जी
16.	श्री परमेश्वरनाथ जी	श्री शांतिनाथ जी	श्री निर्मलनाथ जी
17.	श्री विमलेश्वरनाथ जी	श्री कुंथुनाथ जी	श्री चित्रगुप्तनाथ जी
18.	श्री यशोधरनाथ जी	श्री अरहनाथ जी	श्री समाधिगुप्तनाथ जी
19.	श्री कृष्णमतिनाथ जी	श्री मल्लिनाथ जी	श्री स्वयंभूनाथ जी
20.	श्री ज्ञानमतिनाथ जी	श्री मुनिसुव्रतनाथ जी	श्री अनिवर्तकनाथ जी
21.	श्री शुद्धमतिनाथ जी	श्री नमिनाथ जी	श्री जयनाथ जी
22.	श्री श्रीभद्रनाथ जी	श्री नेमिनाथ जी	श्री विमलनाथ जी
23.	श्री अतिक्रान्तनाथ जी	श्री पार्श्वनाथ जी	श्री देवपालनाथ जी
24.	श्री शांतिनाथ जी	श्री महावीरस्वामी जी	श्री अनंतवीर्यनाथ जी

विश्वशांति तीर्थंकर महावीरमंदिर प्रशस्तिः

श्रीमते वर्धमानाय नमो नमितविद्विषे।
यज्ज्ञानान्तर्गतं भूत्वा त्रैलोक्यं गोष्पदायते।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आद्यानामाद्ये जंबूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखंडे भारतदेशे बिहारप्रदेशे कुण्डलपुरतीर्थक्षेत्रे भगवन्महावीरजन्मभूमिनंद्यावर्तमहलपरिसरे गणिनीप्रमुख ज्ञानमती मातुः प्रेरणया प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती-पीठाधीश क्षुल्लक मोतीसागर-क्षुल्लिका श्रद्धामती आदि ससंघ सान्निध्ये च कर्मयोगी ब्रह्मचारी रवीन्द्र कुमार सत्प्रयासेन वीरनिर्वाणसंवत् 2529 तमे माघशुक्लाषष्ठ्या आरभ्य दशमीपर्यंतं अस्मिन् अवसर्पिणीकाले जैनधर्मस्य अंतिमतीर्थंकरस्य भगवतः श्री महावीरस्वामिनः सप्तहस्त-अवगाहनाप्रमाणा इयं सपाददशफुट-उत्तुंगखड्गासनप्रतिमा पंचकल्याणकैः प्रतिष्ठापिताः। पुनश्च वीर नि.सं. 2530 तमे फाल्गुनशुक्लातृतीयायां महावीरस्वामिनः चतुःप्रतिमाः प्रतिष्ठाप्य अस्य विश्वशांतितीर्थंकर-महावीरस्वामिमंदिरस्य कलात्मक शिखरे चतुर्दिक्षु विराजमानं कृत्वा शिखरस्योपरि कलशारोहणं ध्वजारोहणं च कारितमिदं जिनमंदिरं जिनप्रतिमा च सर्वलोकस्य कल्याणाय भूयादिति प्रार्थ्यते।

जंबूद्वीप के भरतक्षेत्र के आर्यखंड में भारतदेश के बिहार प्रदेश में भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर तीर्थ पर 'नंद्यावर्त महल परिसर' में गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से उन्हीं के ससंघ सानिध्य में वी.नि.सं. 2529, माघ शु. 10 को जैनधर्म के अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी की सात हाथ अवगाहनाप्रमाण (सवा दश फुट की) खड्गासन प्रतिमा की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा हुई। पुनः वी.नि.सं. 2530 में फाल्गुनशुक्ला 3 को भगवान महावीर स्वामी की सवा फुट की चार प्रतिमाएँ प्रतिष्ठित करके मंदिर के शिखर में चारों दिशाओं में विराजमान कराकर शिखर पर कलशारोहण एवं ध्वजारोहण कराया गया है। यह 'विश्वशांतिमहावीर मंदिर' एवं भगवान महावीर स्वामी की प्रतिमा सर्वजगत् के लिए मंगलकारी होवें।

THE PANCHKALYANAK PRATISHTHA OF THE 10¼ FT. HIGH STANDING POSTURED IDOL OF LORD MAHAVIR WAS PERFORMED ON 12TH FEB. 2003 AT 'NANDYAVARTA MAHAL' CAMPUS OF LORD MAHAVIR BIRTHPLACE-KUNDALPUR (BIHAR) BY THE INSPIRATION & IN THE AUSPICIOUS PRESENCE OF GANINI PRAMUKH SHRI GYANMATI MATAJI. KALSHAROHAN AT THE SUMMIT OF THIS 'VISHWASHANTI TIRTHANKAR MAHAVIR TEMPLE' WAS DONE ON 23RD FEB. 2004.

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर दिगम्बर जैन समिति
नंद्यावर्त महल, पो.-कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार

श्री सर्वसिद्धि ऋषभदेवमंदिर प्रशस्तिः

श्रीनाभिसूनुर्भुवनैकसूर्यः, श्रीधर्मतीर्थस्य प्रवर्तको यः।
भव्यैकबंधुजगदेकनाथः, तमादिदेवं प्रणमामि नित्यम् ।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आद्यानामाद्ये जंबूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखंडे भारतदेशे बिहारप्रदेशे कुण्डलपुरतीर्थक्षेत्रे भगवन्महावीरजन्मभूमिनंद्यावर्तमहलपरिसरे गणिनीप्रमुख ज्ञानमती मातुः प्रेरणया प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती-पीठाधीश क्षुल्लक मोतीसागर-क्षुल्लिका श्रद्धामती आदि ससंघ सान्निध्ये च कर्मयोगी ब्रह्मचारी रवीन्द्र कुमार सत्प्रयासेन वीरनिर्वाणसंवत् 2529 तमे माघशुक्लाषष्ठ्या आरभ्य दशमीपर्यंतं अस्मिन् अवसर्पिणीकाले जैनधर्मस्य प्रथमतीर्थंकरस्य भगवतः श्री ऋषभदेवस्य इयं चतुर्दशफुट-उत्तुंगपद्मासनप्रतिमा पंचकल्याणकैः प्रतिष्ठापिताः। पुनश्च वीर नि.सं. 2530 तमे फाल्गुनशुक्लातृतीयायां अस्य 'सर्वसिद्धिऋषभदेवमंदिरस्य' कलात्मकशिखरस्योपरि कलशारोहणं ध्वजारोहणं च कारितमिदं जिनमंदिरं जिनप्रतिमा च सर्वलोकस्य कल्याणाय भूयादिति प्रार्थ्यते।

जंबूद्वीप के भरतक्षेत्र के आर्यखंड में भारतदेश के बिहार प्रदेश में भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर तीर्थ पर 'नंद्यावर्त महल परिसर' में गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से उन्हीं के ससंघ सानिध्य में वी.नि.सं. 2529, माघ शु. 10 को जैनधर्म के प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की 14 फुट की पद्मासन प्रतिमा की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा हुई। पुनः वी.नि.सं. 2530 में फाल्गुनशुक्ला 3 को मंदिर के शिखर पर कलशारोहण एवं ध्वजारोहण कराया गया है। यह ऋषभदेव मंदिर एवं भगवान ऋषभदेव की प्रतिमा सर्वजगत् के लिए मंगलकारी होवें।

THE PANCHKALYANAK PRATISHTHA OF THE 14 FT. HIGH LOTUS POSTURED IDOL OF LORD RISHABHDEV WAS PERFORMED ON 12TH FEB. 2003 AT 'NANDYAVARTA MAHAL' CAMPUS OF LORD MAHAVIR BIRTHPLACE-KUNDALPUR (BIHAR) BY THE INSPIRATION & IN THE AUSPICIOUS PRESENCE OF GANINI PRAMUKH SHRI GYANMATI MATAJI. KALSHAROHAN AT THE SUMMIT OF THE TEMPLE WAS DONE ON 23RD FEB. 2004. MAY THIS IDOL AND THIS 'SARVASIDDHI RISHABHDEV TEMPLE' BE BLISSFUL FOR THE WHOLE WORLD.

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर दिगम्बर जैन समिति
नंद्यावर्त महल, पो.-कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार

श्रीनवग्रहशांतिजिनमंदिरप्रशस्तिः

पद्मप्रभादिपार्श्वान्ताः, नव तीर्थंकरा भुवि।
नवग्रहाणां शान्त्यर्थं, भक्तानां स्युश्च सिद्धये।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं आद्यानामाद्ये जंबूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखंडे भारतदेशे बिहारप्रदेशे कुण्डलपुरतीर्थक्षेत्रे भगवन्महावीरजन्मभूमिनंद्यावर्तमहलपरिसरे गणिनीप्रमुख ज्ञानमती मातुः प्रेरणया प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती-पीठाधीश क्षुल्लक मोतीसागर-क्षुल्लिका श्रद्धामती आदि ससंघ सान्निध्ये च कर्मयोगी ब्रह्मचारी रवीन्द्र कुमार सत्प्रयासेन वीरनिर्वाणसंवत् 2529 तमे आषाढशुक्लाषष्ठ्या आरभ्य दशमीपर्यंतं अस्मिन् अवसर्पिणीकाले जैनधर्मस्य तीर्थंकरपरंपरायां नवग्रहारिष्टनिवारक-श्रीपद्मप्रभ-चन्द्रप्रभ-वासुपूज्य-मल्लिनाथ-महावीरस्वामि-पुष्पदंतनाथ-मुनिसुव्रतनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथतीर्थंकरप्रतिमाः पंचकल्याणकैः प्रतिष्ठापिताः। पुनश्च वीर नि.सं. 2530 तमे फाल्गुनशुक्लातृतीयायां अस्य 'नवग्रहशांतिजिनमंदिरस्य' कलात्मकशिखरस्योपरि कलशारोहणं ध्वजारोहणं च कारितमिदं जिनमंदिरं जिनप्रतिमाश्च सर्वलोकस्य कल्याणाय भूयासुः इति प्रार्थ्यते।

जंबूद्वीप के भरतक्षेत्र के आर्यखंड में भारतदेश के बिहार प्रदेश में भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर तीर्थ पर 'नंद्यावर्त महल परिसर' में गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से उन्हीं के ससंघ सानिध्य में वी.नि.सं. 2529, आषाढ़ शु. 10 को नवग्रहारिष्टनिवारक श्रीपद्मप्रभ आदि नव प्रतिमाओं की पंचकल्याणक प्रतिष्ठा हुई। पुनः वी.नि.सं. 2530 में फाल्गुनशुक्ला 3 को मंदिर के शिखर पर कलशारोहण एवं ध्वजारोहण कराया गया है। यह 'नवग्रहशांति जिनमंदिर' एवं नव जिनप्रतिमायें सर्वजगत् के लिए मंगलकारी होवें।

THE PANCHKALYANAK PRATISHTHA OF THE 9 IDOLS OF 'NAVAGRAHSHANTI JIN TEMPLE'- LORD PADMAPRABH, CHANDRAPRABH, VASUPUJYA, MALLINATH, MAHAVIR SWAMI, PUSHPADANTNATH, MUNISUVRATNATH, NEMINATH & PARSHVANATH FOR THE PACIFICATION OF 9 GRAHAS (PLANETS) WAS PERFORMED ON 9TH JULY 2003 AT 'NANDYAVARTA MAHAL' CAMPUS OF LORD MAHAVIR BIRTHPLACE-KUNDALPUR (BIHAR) BY THE INSPIRATION & IN THE AUSPICIOUS PRESENCE OF GANINI PRAMUKH SHRI GYANMATI MATAJI. KALSHAROHAN AT THE SUMMIT OF THE TEMPLE WAS DONE ON 23RD FEB. 2004.

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर दिगम्बर जैन समिति
नंद्यावर्त महल, पो.-कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार

५-१३०

श्री त्रिकालचतुर्विंशतिजिनमंदिर प्रशस्तिः

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखंडे भारतदेशे बिहारप्रदेशे कुण्डलपुरतीर्थक्षेत्रे भगवन्महावीर-जन्मभूमिनंद्यावर्तमहल-परिसरे मूलसंघे कुंदकुंदाम्नाये सरस्वतीगच्छे बलात्कारगणे विंशतितमे शताब्दौ चारित्रचक्रवर्ती प्रथमाचार्यः श्रीशांतिसागरस्तस्य प्रथमपट्टाचार्यः श्रीवीरसागरस्तस्य शिष्यागणिनी-प्रमुखज्ञानमतीमातुःप्रेरणया ससंघ-आर्यिकाचंदनामती-पीठाधीशक्षुल्लक-मोतीसागर-क्षुल्लिकाश्रद्धामती आदि सानिध्ये च कर्मयोगीब्रह्मचारीरवीन्द्रकुमारसत्प्रयासेन वीर नि. संवत् 2529 तमे माघशुक्लादशम्यां पंचकल्याणकप्रतिष्ठायां त्रिकालचतुर्विंशतितीर्थंकराणां जिनप्रतिमाः प्रतिष्ठापिताः। ततश्च वीर नि. सं. 2530 तमे आषाढशुक्लापूर्णिमायां अस्मिन् जिनमंदिरे जिनप्रतिमाः स्थापिताः। इदं त्रिखण्डजिनमंदिरं एताः द्वासप्ततिजिनप्रतिमाश्च सर्वस्य हिताय सर्वत्र सुखशान्तये च भूयासुः इति प्रार्थ्यते।

जंबूद्वीप के भरतक्षेत्र के आर्यखंड में भारतदेश के बिहारप्रदेश में भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर (जि.-नालंदा) में नंद्यावर्त महल परिसर में बीसवीं सदी के प्रथमाचार्य चारित्रचक्रवर्ती श्री शांतिसागराचार्य के प्रथम पट्टाधीश श्रीवीरसागराचार्य की शिष्या गणिनीप्रमुख आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से उन्हीं के ससंघ सानिध्य में वीर नि. सं. 2529 माघ शुक्ला दशमी के वृहत्पंचकल्याणकप्रतिष्ठा में त्रिकाल चौबीसी भगवन्तों की प्रतिष्ठा सम्पन्न हुई। अनंतर वीर नि. सं. 2530 आषाढ़ शुक्ला पूर्णिमा के दिन इस तीनखण्ड के मंदिर में जिनप्रतिमाएँ विराजमान की गईं। यह जिनमंदिर एवं ये जिनप्रतिमाएं सदा काल स्थिर रहें एवं संपूर्ण विश्व में सुख शांति के लिए होवें।

THE PANCHKALYANAK PRATISHTHA OF THE 72 IDOLS OF TRIKAL CHAUBEESI (24 TIRTHANKARS OF EACH OF THE PAST, PRESENT & FUTURE AGES) WAS PERFORMED ON 12TH FEB. 2003 AT 'NANDYAVARTA MAHAL' CAMPUS OF LORD MAHAVIR BIRTH-PLACE-KUNDALPUR (BIHAR) BY THE INSPIRATION & IN THE AUSPICIOUS PRESENCE OF GANINI PRAMUKH SHRI GYANMATI MATAJI. LATER THESE IDOLS WERE CONSECRATED IN 'SHRI TRIKAL CHAUBEESI CHATURVINSHATI JIN TEMPLE' ON 2ND JULY 2004. MAY THIS TEMPLE AND 72 IDOLS BE BLISSFUL FOR THE WHOLE WORLD.

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर दिगम्बर जैन समिति
नंद्यावर्त महल, पो.-कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार

नंद्यावर्त महल चैत्यालय प्रशस्ति

ॐ अस्मिन् आर्यखंडे भारतदेशे बिहारप्रदेशे भगवन्महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुरतीर्थे मूलसंघे कुन्दकुन्दाम्नाये तीर्थंकर जन्मभूमि विकासप्रेरिका गणिनीप्रमुख आर्यिकाज्ञानमतीमातुः प्रेरणया ससंघ सानिध्ये च कर्मयोगी ब्रह्मचारी रवीन्द्रकुमार सत्प्रयासेन वीर नि. सं. 2530 तमे आषाढ शुक्ला पूर्णिमायां पंचकल्याणकप्रतिष्ठायां श्रीशांतिनाथ-चन्द्रप्रभ-पार्श्वनाथजिनप्रतिमाः प्रतिष्ठाप्य अस्मिन् 'नंद्यावर्तप्रासादे' श्री शांतिनाथ चैत्यालये स्थापिताः। इदं दृश्यमानसप्तखण्डप्रासादं अत्र स्थित-चारणर्द्धिसमन्वितसंजयविजयमहामुन्योर्मूर्त्ती त्रैलोक्याग्रे सिद्धशिलाया उपरि सिद्धप्रतिमा एताः सर्वजिनप्रतिमाश्च चतुर्विधसंघस्य विश्वस्य च सुखं शांतिं क्षेमं कल्याणं चापि प्रयच्छन्तु इति काम्यते।

इस आर्यखण्ड में भारतदेश के बिहार प्रदेश में भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर तीर्थ पर जि. नालंदा में 'तीर्थंकर जन्मभूमि विकास प्रेरिका'-गणिनीप्रमुख आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से उन्हीं के ससंघ सानिध्य में वीर नि. सं. 2530 आषाढ़ शु. 15 को पंचकल्याणक प्रतिष्ठा में श्री शांतिनाथ-चंद्रप्रभ-पार्श्वनाथ जिनप्रतिमाओं की प्रतिष्ठा कराकर इस "नंद्यावर्त महल" में श्री शांतिनाथ चैत्यालय में स्थापित की गईं। यह दृश्यमान सप्तखण्ड का नंद्यावर्त महल, यहाँ पर स्थित चारणऋद्धिसमन्वित संजय-विजय महामुनि, तीन लोक के अग्रभाग में सिद्धशिला पर विराजमान सिद्ध भगवान एवं श्री शांतिनाथ भगवान संपूर्ण विश्व को सुख-शांति प्रदान करें, यही मंगलकामना है।

THE PANCHKALYANAK PRATISHTHA OF THE 3 IDOLS OF SHRI SHANTINATH, CHANDRAPRABH & PARSHVANATH OF 'SHRI SHANTINATH CHAITYALAYA' OF NANDYAVARTA MAHAL WAS PERFORMED ON 2ND JULY 2004 AT LORD MAHAVIR BIRTHPLACE-KUNDALPUR (BIHAR) BY THE INSPIRATION & IN THE AUSPICIOUS PRESENCE OF GANINI PRAMUKH SHRI GYANMATI MATAJI. MAY THIS TEMPLE AND THE 3 IDOLS BE BLISSFUL FOR THE WHOLE WORLD.

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर दिगम्बर जैन समिति
नंद्यावर्त महल, पो.-कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार

भगवान महावीर ज्योतिं का भारत भ्रमण

भगवान महावीर जन्मभूमि-कुण्डलपुर (नालंदा) से पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की पावन प्रेरणा, प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी के मार्गदर्शन एवं क्षुल्लकरत्न श्री मोतीसागर जी महाराज के निर्देशन में भारत भ्रमण हेतु 'भगवान महावीर ज्योति'' का महावीर जयंती, 15 अप्रैल 2003 को उद्‌घाटन किया गया। इस ज्योति रथ में भगवान महावीर के 7 मंजिल ऊँचे जन्म महल-नंद्यावर्त का धातु का मॉडल स्थापित किया गया था, जिसके उपरिम भाग में भगवान शांतिनाथ की प्रतिमा एवं प्रथम तल पर पालना में शिशु वर्धमान विराजमान थे।

क्रमशः मध्यप्रदेश, राजस्थान, उत्तरप्रदेश, हरियाणा, दिल्ली, पूर्वांचल अर्थात् बंगाल-बिहार-झारखंड-राजगृही-पावापुरी इत्यादि के लगभग 800 गाँवों में 28 अक्टूबर 2004 तक लगभग 50,000 किलोमीटर की दूरी तय करके इस ज्योति रथ के माध्यम से जन-जन को भगवान महावीर की पावन जन्मभूमि एवं उनके सर्वोदयी सिद्धान्तों से परिचित कराया गया। वर्तमान में विद्यमान आचार्य श्री अभिनंदनसागर जी, आचार्य श्री वर्धमानसागर जी, आचार्य श्री बाहुबलीसागर जी, आचार्यश्री रयणसागर जी, आचार्य श्री योगीन्द्रसागर जी, उपाध्याय श्री अमितसागर जी, उपाध्याय श्री निजानंदसागर जी महाराज आदि ने ज्योति में विराजमान भगवान शांतिनाथ के दर्शन करते हुए कुण्डलपुर विकास एवं रथ प्रवर्तन के कार्यकर्ताओं को शुभ आशीर्वाद प्रदान किया।

भारत वर्ष की दिगम्बर जैन समाज का व्यापक समर्थन इस रथ को प्राप्त हुआ एवं रथयात्रा के माध्यम से प्राप्त अर्थांजलि का प्रयोग जन्मभूमि कुण्डलपुर के नवीन स्वरूप-नंद्यावर्त महल तीर्थ के निर्माण में किया गया। ज्योति रथ प्रवर्तन के केन्द्रीय अध्यक्ष-कर्मयोगी ब्र.रवीन्द्र कुमार जैन (हस्तिनापुर) एवं केन्द्रीय महामंत्री-प्राचार्य नरेन्द्र प्रकाश जैन (फिरोजाबाद) के नेतृत्व में हुए सफल भारत प्रवर्तन में युवा संयोजक श्री विजय कुमार जैन 'पिंकू' (कानपुर) एवं संचालक पं. सुधर्मचंद्र शास्त्री (तिवरी-म.प्र.) का सहयोग विशेष प्रशंसनीय रहा।

'BHAGWAN MAHAVIR JYOTI' CHARIOT WAS INAUGURATED FROM BHAGWAN MAHAVIR BIRTHPLACE-KUNDALPUR (NALANDA) ON 15TH APRIL 2003 BY THE INSPIRATION & IN THE AUSPICIOUS PRESENCE OF PUJYA GANINI SHRI GYANMATI MATAJI (WITH SANGH). THE METTALIC MODEL OF LORD'S BIRTH-PALACE 'NANDYAVARTA' WAS PLACED IN IT. UPTO 28TH OCT. 2004, THE JYOTI RATH PREACHED THE MASSES ABOUT BIRTHPLACE-KUNDALPUR & THE UNIVERSAL PRINCIPLES OF BHAGWAN MAHAVIR.

शरदपूर्णिमा, वी.नि.सं. 2530 **28 अक्टूबर 2004**

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर दिगम्बर जैन समिति
नंद्यावर्त महल, पो.-कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार

नवग्रह अरिष्ट निवारक नव तीर्थंकर भगवान

-गणिनी ज्ञानमती

जैन शास्त्रों में नवग्रहअरिष्ट निवारण हेतु चौबीस तीर्थंकरों की नव पूजाएं एवं नव मंत्र जाप्य अति प्राचीन काल से प्रसिद्ध हैं। उसी प्रकार से नवग्रहों में से एक-एक ग्रहों की शांति हेतु एक-एक तीर्थंकर भगवंतों के यंत्र, मंत्र एवं पूजाएं भी उपलब्ध हुई हैं। जैसे कि-

अर्के पद्मप्रभश्चैव सोमे चन्द्रप्रभस्तथा। मंगले वासुपूज्यश्च बुधे मल्लिजिनेश्वरः।।1।।
गुरौ तु वर्द्धमानश्च, शुक्रे पुष्पजिनेश्वरः। राहौ नेमिजिनेन्द्रः स्याच्छशौ च मुनिसुव्रतः।।2।।
केतौ तु पार्श्वनाथश्चेत्येते नवग्रहाधिपाः। कल्याणं सन्ततं कुर्यु-र्भव्यं भव्यैकसंहतेः।।3।।

(श्री जिनसागरसूरि)

अर्थात् सूर्यादि ग्रहों के प्रकोप को दूर करने के लिए श्री पद्मप्रभ आदि तीर्थंकर प्रसिद्ध हैं, जिनके मंत्र क्रमशः दिये जा रहे हैं।

1. **ॐ ह्रीं अर्हं सूर्यग्रहारिष्टनिवारक श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय नमः सर्वशांतिं कुरु कुरु स्वाहा।**
2. **ॐ ह्रीं अर्हं सोमग्रहारिष्टनिवारक श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय नमः सर्वशांतिं कुरु कुरु स्वाहा।**
3. **ॐ ह्रीं अर्हं भौमग्रहारिष्टनिवारक श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय नमः सर्वशांतिं कुरु कुरु स्वाहा।**
4. **ॐ ह्रीं अर्हं बुधग्रहारिष्टनिवारक श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय नमः सर्वशांतिं कुरु कुरु स्वाहा।**
5. **ॐ ह्रीं अर्हं गुरुग्रहारिष्टनिवारक श्रीमहावीरजिनेन्द्राय नमः सर्वशांतिं कुरु कुरु स्वाहा।**
6. **ॐ ह्रीं अर्हं शुक्रग्रहारिष्टनिवारक श्रीपुष्पदंतनाथजिनेन्द्राय नमः सर्वशांतिं कुरु कुरु स्वाहा।**
7. **ॐ ह्रीं अर्हं शनिग्रहारिष्टनिवारक श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय नमः सर्वशांतिं कुरु कुरु स्वाहा।**
8. **ॐ ह्रीं अर्हं राहुग्रहारिष्टनिवारक श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय नमः सर्वशांतिं कुरु कुरु स्वाहा।**
9. **ॐ ह्रीं अर्हं केतुग्रहारिष्टनिवारक श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमः सर्वशांतिं कुरु कुरु स्वाहा।**

इन्हीं प्रमाणों के आधार से यहाँ यह 'नवग्रह शांतिजिनमंदिर' बनाया गया है। यह मंदिर भारतवर्ष में प्रथम बार निर्मित हुआ है।

यह मंदिर चिरकाल तक यहाँ विद्यमान रहे एवं सभी तीर्थंकर भगवान् सभी भक्तों को मनवांछित फल प्रदान करें, यही मेरी प्रार्थना है।

IN JAIN SCRIPTURES, 9 TIRTHANKARS HAVE BEEN MENTIONED FOR THE PACIFICATION OF UNFAVOURABLE CONDITIONS OF 9 GRAHAS (PLANETS) SUCH AS-LORD PADMAPRABH FOR SURYA (SUN) GRAH, LORD CHANDRAPRABH FOR SOM (MOON) GRAH, LORD VASUPUJYANATH FOR MANGAL (MARS) GRAH, LORD MALLINATH FOR BUDH (MERCURY) GRAH, LORD MAHAVIR FOR GURU (JUPITER) GRAH; LORD PUSHPADANTNATH FOR SHUKRA (VENUS) GRAH, LORD MUNISUVRATNATH FOR SHANI (SATURN) GRAH, LORD NEMINATH FOR RAHU GRAH & LORD PARSHVANATH FOR KETU GRAH. THE IDOLS OF THESE 9 TIRTHANKARS HAVE BEEN CONSECRATED IN THE 'NAVAGRAHSHANTI JIN TEMPLE' AT NANDYAVART MAHAL TIRTH, KUNDALPUR. MAY THIS TEMPLE BE BLISSFUL FOR THE WHOLE WORLD.

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर दिगम्बर जैन समिति
नंद्यावर्त महल, पो.-कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार

महावीर तीर्थ त्रिवेणी संगम

—गणिनी ज्ञानमती

भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर में रहते हुए मुझे 'तीर्थ त्रिवेणी संगम' में अवगाहन करने का एक अपूर्व सुयोग प्राप्त हुआ है।

कुण्डलपुर—महाराजा सिद्धार्थ की इस राजधानी कुण्डलपुर में 2603 वर्ष के पंद्रह महिने पूर्व इन्द्र की आज्ञा से कुबेर ने रत्नों की वर्षा की थी। भगवान महावीर का जन्मोत्सव, उनके 'सन्मति' 'महावीर' आदि नाम इसी भूतल पर प्रसिद्ध हुए हैं अतः तीर्थंकरों की जन्मभूमियाँ इन्द्रों द्वारा तो पूज्य हुई ही हैं, महामुनियों द्वारा भी स्तुत्य रही हैं।

राजगृही—आज से कुछ अधिक बारह लाख वर्ष पूर्व यहाँ पर जैन धर्म के बीसवें तीर्थंकर भगवान मुनिसुव्रत ने जन्म लिया था। यहीं पर प्रभु ने दीक्षा ली थी एवं यहीं पर केवलज्ञान प्राप्त किया था अतः यहाँ पर राजगृही में सर्वप्रथम मुनिसुव्रतनाथ भगवान का समवसरण रचा गया था, पुनः भगवान महावीर के समवसरण को रचा गया एवं भगवान की प्रथम दिव्य ध्वनि खिरी जिसके उपलक्ष्य में 2561 वर्ष पूर्व से श्रावण कृष्णा एकम का मंगल दिवस 'वीरशासन जयंती' पर्व के रूप में माना जा रहा है। 30 वर्ष के केवलीकाल में भगवान महावीर का समवसरण यहाँ हजारों बार आया होगा।

यहीं से गणधरदेव श्री सुधर्माचार्य ने, श्री जीवंधर स्वामी ने निर्वाण प्राप्त किया है, और भी अनेक महापुरुषों की यह निर्वाणस्थली मानी गई है।

पावापुरी—यहाँ पर महावीर स्वामी का अंतिम समवसरण लगा था, पुनः भगवान ने 2530 वर्ष पूर्व कार्तिक कृष्णा तेरस को योगनिरोध किया तब समवसरण विघटित हो गया था। पुनः भगवान ने कार्तिक कृष्णा अमावस्या को उषाकाल की बेला में निर्वाणधाम को प्राप्त किया। उसी दिन सायंकाल में श्री गौतम स्वामी को केवलज्ञान प्राप्त हुआ था, तब उनकी गंधकुटी की रचना हुई थी।

ऐसी ये भगवान महावीर की तीनों तीर्थभूमि 'तीर्थ त्रिवेणी संगम' के रूप में प्रसिद्ध हैं। इन तीनों तीर्थों पर बैठकर मुझे षट्खण्डागम की 12वीं-13वीं पुस्तक की संस्कृत टीका लिखते हुए बड़ा आल्हाद होता था।

इन तीर्थों की वंदना करने वाले इस 'त्रिवेणी संगम' में भक्ति रस में निमग्न हो स्नान करके असंख्य भवों के संचित पापमलों को धोकर पवित्र, शुद्ध हो जाते हैं। यह 'तीर्थ त्रिवेणी संगम' सभी भव्यों के कर्ममैल को दूर कर उन्हें पवित्र करता रहे, यही मंगलकामना है।

AT KUNDALPUR, LORD MAHAVIR WAS BORN 2603 YEARS AGO.

AT RAJGRAHI, THE 20TH TIRTHANKAR LORD MUNISUVRATNATH WAS BORN ABOUT 12 LAC YEARS AGO. LATER THE FIRST DIVYADHVANI OF 24TH TIRTHANKAR LORD MAHAVIR WAS PRONOUNCED AT RAJGRAHI 2561 YEARS AGO ON SHRAVAN KRISHNA EKAM I.E. VEER SHASAN JAYANTI.

AT PAVAPURI, LORD MAHAVIR GOT SALVATED 2530 YEARS AGO ON KARTIK KRISHNA CHATURDASHI.

WITH GREAT REVERENCE, I HAVE GIVEN THE NAME 'MAHAVIR TIRTH TRIVENI SANGAM' TO THE ABOVE THREE TIRTHS.

शरदपूर्णिमा, वी.नि.सं. 2530

28 अक्टूबर 2004

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर दिगम्बर जैन समिति
नंद्यावर्त महल, पो.-कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार

वीरशासन जयंती महोत्सव

बीसवें तीर्थंकर भगवान मुनिसुव्रतनाथ की जन्मभूमि एवं चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर की प्रथम देशनास्थली राजगृही नगरी में जैनसमाज कीं सर्वोच्च साध्वी परमपूज्य 105 गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से विपुलाचल पर्वत पर 2560 वाँ वीरशासन जयंती पर्व का महोत्सव श्रावण कृ. 1, 14 जुलाई 2003 को मनाया गया।

पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी, प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी, पीठाधीश क्षुल्लक श्री मोतीसागर जी महाराज, क्षुल्लिका श्री श्रद्धामती माताजी, कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन (अध्यक्ष-दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान, जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर) एवं ब्रह्मचारिणी बहनों सहित समस्त संघ के सानिध्य में आयोजित वीरशासन जयंती के त्रिदिवसीय कार्यक्रम के अंतर्गत **''भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर दिगम्बर जैन समिति''** के सौजन्य से विपुलाचल पर्वत पर ''ह्रीँ '' मंत्र की प्रतिमा विराजमान की गई तथा महावीर स्वामी के जीवन से संबंधित प्राप्त चित्रों की प्रदर्शनी का उद्घाटन सम्पन्न हुआ।

यहाँ समवसरण के प्रतीक में विराजमान चार जिनप्रतिमाओं का महामस्तकाभिषेक हुआ तथा राजगृही शहर में 2560 ग्रंथों का जुलूस निकाला गया।

भगवान की दिव्यध्वनि से पवित्र यह देशनास्थल युग-युग तक महावीर जिनशासन की प्रभावना का केन्द्र बना रहे यही मंगलभावना है।

VEERSHASAN JAYANTI CELEBRATION

2560TH VEERSHASAN JAYANTI CELEBRATION WAS PERFORMED ON SHRAVAN KRISHNA EKAM, 14TH JULY 2003 ON VIPULACHAL MOUNTAIN AT RAJGRIHI, THE BIRTHPLACE OF 20TH TIRTHANKAR LORD MUNISUVRATNATH AND THE 1ST SERMON (DESHNA) PLACE OF THE 24TH TIRTHANKAR LORD MAHAVIR SWAMI, BY THE INSPIRATION OF PUJYA GANINI PRAMUKH ARYIKA SHIROMANI SHRI GYANMATI MATAJI.

IN THE SERIES OF THE 3 DAYS PROGRAMME, " ह्रीँ " (HREEM) IDOL WAS CONSECRATED AT THE VIPULACHAL MOUNTAIN BY THE SP0NSORSHIP OF "BHAGWAN MAHAVIR JANMBHUMI KUNDALPUR DIGAMBER JAIN SAMITI" AND AN EXHIBITION OF PAINTINGS RELATED WITH THE LIFE OF LORD MAHAVIR WAS INAUGURATED.

MAHAMASTAKABHISHEK (ANNOINTMENT) OF THE 4 IDOLS CONSECRATED AT THE MOUNTAIN AS THE REPRESENTAION OF THE SAMAVSARAN, WAS PERFORMED AND A PROCESSION OF 2560 SCRIPTURES WAS ORGANIZED AT RAJGRIHI.

बिहार स्टेट दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी

श्री राजगृही जी सिद्धक्षेत्र दिगम्बर जैन कार्यालय, राजगीर (नालंदा)

नोट–उपरोक्त शिलालेख विपुलाचल पर्वत (राजगृही) पर निर्मित समवसरण रचना के प्रवेश द्वार पर लगाया गया है।

वीरशासन जयंती पर्व

भगवान महावीर महामुनि के वेष में छद्मस्थ अवस्था के बारह वर्ष व्यतीत कर जृंभिक ग्राम के समीप ऋजुकूला नदी के किनारे पहुँचे। वहाँ मनोहर नामक वन के मध्य सालवृक्ष के नीचे रत्नमयी एक शिला पर बेला का नियम लेकर ध्यान में लीन हो गये। वैशाख शुक्ला दशमी के दिन घातिया कर्मों का नाश कर प्रभु ने केवलज्ञान प्राप्त कर लिया। उसी समय वे पृथ्वीतल से पाँच हजार धनुष-बीस हजार हाथ ऊपर आकाश में अधर पहुँच गये। तत्क्षण ही इंद्रों के आसन कंपित होने से इन्द्रों का आगमन हो गया। अर्धनिमिष मात्र में ही कुबेर ने आकाश में अधर समवसरण की रचना कर दी किन्तु भगवान की दिव्यध्वनि नहीं खिरी। जब प्रभु का श्रीविहार होता था तब समवसरण विघटित हो जाता था। प्रभु का विहार आकाश में अधर ही होता था। उस समय देवगण प्रभु के श्रीचरणों के नीचे स्वर्णमयी कमलों की रचना करते रहते थे। पुनः जहाँ भगवान रुकते वहीं समवसरण की रचना बन जाती थी।

षट्षष्टिदिवसान् भूयो मौनेन विहरन् विभुः। आजगाम जगत्ख्यातं जिनो राजगृहं पुरम्।।61।।
आरुरोह गिरिं तत्र विपुलं विपुलश्रियम् । प्रबोधार्थं स भव्यानां भानुमानुदयं यथा।।62।।

(हरिवंशपुराण सर्ग 2)

तदनंतर छयासठ दिवस तक मौन से विहार करते हुए महावीर स्वामी राजगृही नगरी के विपुलाचल पर्वत पर आरुढ़ हुए।

यहां इन्द्र की प्रेरणा से गौतम गोत्रीय इन्द्रभूति ब्राह्मण अपने भाइयों और शिष्यों के साथ आये। मानस्तंभ के दर्शन से मानरहित होकर सम्यग्दृष्टी हो गये। भगवान का दर्शन कर वस्त्रादि का त्याग कर दिगंबर महामुनि बन गये। उसी क्षण उन्हें मति, श्रुत, अवधि एवं मनःपर्यय ऐसे चार ज्ञान प्रगट हो गये। अनेक ऋद्धियों से समन्वित वे भगवान के प्रथम गणधर पद को प्राप्त हो गये। उस समय उन गौतम स्वामी के प्रश्न के अनुसार भगवान की दिव्य ध्वनि खिरने लगी।

अट्ठरसमहाभासा खुल्लयभासा वि सत्तसयसंखा।
अक्खरअणक्खरप्पय सण्णीजीवाण सयलभासाओ।।61।। (तिलोयपण्णत्ति)

भगवान की दिव्यध्वनि अठारह महाभाषा एवं सात सौ लघु भाषारूप होती हुई। संज्ञी जीवों की अक्षर-अनक्षरात्मक सकल भाषारूप भी मानी गई है।

"पुणो तेणिंदभूदिणा भावसुदपज्जयपरिणदेण वारहंगाणं चोद्दसपुव्वाणं च गंथणमेक्केण चेव मुहुत्तेण रयणा कदा।।" (षट्खण्डागम, धवला टीका)

पुनः उन इन्द्रभूति गौतमस्वामी ने भगवान की दिव्यध्वनि सुनकर भावश्रुतपर्याय से परिणत होकर उसी दिन बारह अंग और चौदह पूर्वों की रचना एक अन्तर्मुहूर्त (48 मिनट) में कर दी।

चतुर्थकाल में तैंतीस वर्ष छह माह, नव दिन शेष रहने पर श्रावण कृष्णा एकम् को भगवान की दिव्यध्वनि खिरी थी।

इस श्रावण कृष्णा एकम् को युगादिदिवस-युग का प्रथम दिन एवं धर्मतीर्थ की उत्पत्ति का दिन माना गया है। वर्तमान में यह "वीरशासन जयंती" पर्व के रूप में प्रसिद्ध है। आज से 2560 वर्ष पूर्व इसी विपुलाचल पर्वत पर भगवान महावीर की प्रथम देशना हुई थी। अतः इस पर्वतराज को एवं वीरशासन जयंती दिवस को मेरा कोटि-कोटि नमस्कार होवे।

श्रावण कृ. 1, (14-7-2003)

प्रस्तुति-गणिनी ज्ञानमती

नोट—उपरोक्त शिलालेख विपुलाचल पर्वत (राजगृही) पर निर्मित समवसरण रचना के प्रवेश द्वार पर लगाया गया है।

श्री ऋषभदेव स्तुति

रचयित्री–गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी

हे आदिनाथ! हे आदीश्वर! हे ऋषभ जिनेश्वर! नाभिललन!
पुरुदेव! युगादि पुरुष ! ब्रह्मा, विधि और विधाता मुक्तिकरण।।
मैं अगणित बार नमूँ तुमको, वन्दूँ ध्याऊँ गुणगान करूँ।
स्वात्मैक परम आनन्दमयी, सुज्ञान सुधा का पान करूँ।।1।।

आषाढ़ बदी दुतिया तिथि थी, मरुदेवी गर्भ पधारे थे।
श्री ह्री धृति आदि देवियों ने, माता के चरण पखारे थे।।
शुभ चैतबदी नवमी तिथि थी, भगवान यहाँ जब थे जन्में।
तब मेरु सुदर्शन के ऊपर, अभिषेक किया था इन्द्रों ने।।2।।

वो घड़ी धन्य थी धन्य दिवस, धन धन्य अयोध्या नगरी थी।
श्री नाभिराज भी धन्य तथा, तब धन्य प्रजा भी सगरी थी।।
प्रभु ने असि मसि आदिक किरिया, उपदेशी आदि विधाता थे।
थे युग के आदिपुरुष ब्रह्मा, श्रावक मुनि मार्ग विधाता थे।।3।।

थे कनक वर्ण धनु पंच शतक, तनु वे युग के अवतारी थे।
आयू चौरासी लाख पूर्व, धारक वृष लक्षण धारी थे।।
सब परिग्रह ग्रंथी को तजकर, निर्ग्रंथ दिगम्बर रूप धरा।
वह चैत्र वदी नवमी शुभ थी, जिस दिन प्रभु ने कचलोंच करा।।4।।

षट् मास योग में लीन रहे, लंबित भुज नासादृष्टी थी।
निज आत्म सुधारस पीते थे, तन से बिल्कुल निर्ममता थी।।
फिर ध्यान समाप्त किया प्रभु ने, आहार विधी बतलाने को।
भवसिंधू में डूबे जन को, मुनिमार्ग सरल समझाने को।।5।।

षट् मास भ्रमण करते-करते, प्रभु हस्तिनागपुर में आये।
सोमप्रभ नृप श्रेयांस तभी, आहार दान दे हर्षाये।।
रत्नों की वर्षा हुई गगन से, सुरगण मिल जयकार किया।
धन-धन्य हुई वैसाख सुदी, अक्षय तृतिया आहार हुआ।।6।।

जब आप क्षपक श्रेणी चढ़कर, घाती पर ध्यान चक्र छोड़ा।
एकादशि फाल्गुन कृष्णा थी, केवलश्री से नाता जोड़ा।।
त्रिभुवन में ज्ञान लता फैली, भविजन को छाया सुखद मिली।
फिर माघ कृष्ण चौदश के दिन, मुक्तिश्री प्रभु के गले मिली।।7।।

क्रोधादिक रिपु को जीत प्रभो, स्वात्मा से जनित सुखामृत को।
पीकर अत्यर्थतया निशदिन, भव से सु निकाला आत्मा को।।
त्रिभुवन के मस्तक पर जाकर, अब तक व अनंते कालों तक।
ठहरेंगे वे पुरुदेव! मुझे, शुभ "ज्ञानमती" श्री देवें झट।।8।।

श्री महावीर स्तुति

रचयित्री—गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी

महावीर वीर सन्मति भगवन् ! अतिवीर सदा मंगल करिये।
हे वर्धमान! भव वारिधि से, अब मुझको पार तुरत करिये।।
वह कुंडपुरी जग पूज्य हुई, सिद्धार्थ दुलारे जन्मे थे।
प्रियकारिणी माँ की गोदी में, त्रिभुवन के गुरुवर खेले थे।।1।।
आषाढ़ सुदी छठ पूज्य हुई, जब गर्भ में प्रभु अवतार लिया।
माता त्रिशला की सेवा का, सुर ललनाओं ने भार लिया।।
शुभ चैत्र सुदी तेरस का दिन, है धन्य धन्य वह सुखद घड़ी।
जब वर्द्धमान ने जन्म लिया, नभ से सुर पंक्ति उमड़ पड़ी।।2।।
प्रभु शैशव में अहिपति फण पर, चढ़कर संगम सुर जीता था।
नहिं ब्याह किया नहिं राज्य किया, जनता का मन भी फीका था।।
मगसिर वदि दशमी धन्य हुई, जब केशलोंच कीना तुमने।
नृपकूल ने प्रथम आहार दिया, पंचाश्चर्य किया देवों ने।।3।।
कौशाम्बी में चन्दनबाला, सिरमुंडित जकड़ी बेड़ी में।
प्रभु दर्शन से बेड़ियाँ झड़ीं, तनु सुंदर हुआ एक क्षण में।।
कोदों भोजन हो गया खीर! प्रभु को आहार दे धन्य हुईं।
यह महिमा तीर्थंकर प्रभु की, पंचाश्चर्यों की वृष्टि हुई।।4।।
अतिमुक्तक वन में ध्यान लीन, थे भव ने आ उपसर्ग किया।
तब अचलित प्रभु को देख स्वयं, भार्या सह पूजा भक्ति किया।।
बैशाख सुदी दशमी तिथि में, केवल रवि किरणें प्रकट हुईं।
शुभ समवसरण था रचा हुआ, दिव्यध्वनि फिर भी खिरी नहीं।।5।।
श्रावण श्यामा एकम उत्तम, गौतम गणधर जब आए हैं।
विपुलाचल पर ध्वनि प्रगट हुई, मुनिगण सुर नर हर्षाए हैं।।
हे वीर प्रभो! तव शासन में, मुझको रत्नत्रय निधी मिली।
मैं भक्ति सहित प्रणमूँ तुमको, मेरी मन कलियाँ आज खिलीं।।6।।
तनु सात हाथ कांचन कांति, आयू बाहत्तर वर्ष कही।
है चिन्ह मृगेन्द्र प्रभो! तेरा, जो ध्यावे पावे मोक्ष मही।।
कार्तिक वदि चौदस रात्रि अंत, आमावस का प्रत्यूष कहा।
सब कर्म नाश प्रभु मोक्ष गए, स्वात्मोत्थ सहज आनंद लहा।।7।।
पावापुरि के उपवन में जो, सरवर है कमल खिले उसमें।
प्रभु के निर्वाण कल्याणक से, अब तक भी कमल खिले सच में।।
देवों ने आकर पूजा की, महावीर प्रभू त्रिभुवन पति की।
अंधियारी में दीपक ज्वाले, तब से ही दीपावली हुई।।8।।
हे वीर प्रभो! मंगलमय तुम, लोकोत्तम शरणभूत तुम ही।
भव भव के संचित पाप पुँज, इक क्षण में नष्ट करो सब ही।।
मैं बारम्बार नमूँ तुमको, भगवन्। मेरे भव त्रास हरो।
"सज्ज्ञानमती" सिद्धी देकर, स्वामिन् ! अब मुझे कृतार्थ करो।।9।।

नवग्रहशांति स्तोत्र

रचयित्री – आर्यिका चन्दनामती

शंभु छन्द –

सिद्धों का वंदन इस जग में, आतम सिद्धि का कारण है।
इनकी भक्ति से भक्त करें, दुर्गति का सहज निवारण है।।
सब तीर्थंकर भगवंत एक दिन, सिद्धि प्रिया को पाते हैं।
इसलिए सभी ग्रह की शांति में, वे निमित्त बन जाते हैं।।1।।

नभ में जो सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरू व शुक्र, शनि ग्रह माने।
राहू केतू मिलकर नवग्रह, ज्योतिषी देव के ग्रह माने।।
मानव के जन्म समय से ये, सब जन्मकुण्डली में रहते।
शुभ-अशुभ आदि फल देने में, राशी अनुसार निमित बनते।।2।।

जब ग्रह अनिष्टकारी होवे, तब प्रभु भक्ती रक्षा करती।
जिनसागर सूरि ने बतलाया, नवग्रह में नव प्रभु की भक्ती।।
श्रीपद्मप्रभ भगवान सूर्य ग्रह, के अरिष्ट को शांत करें।
ग्रह सोम का जब होवे प्रकोप, तब भक्त चन्द्रप्रभु याद करें।।3।।

निज मंगल ग्रह की शांति हेतु, प्रभु वासुपूज्य को नमन करो।
बुधग्रह जब देवे कष्ट तुरत, प्रभु मल्लिनाथ अर्चन कर लो।।
महावीर प्रभू गुरु ग्रह से होने, वाले कष्ट मिटाते हैं।
निज गुरुबल तेजस्वी करने हित, वर्धमान को ध्याते हैं।।4।।

श्री पुष्पदंत भगवान शुक्र ग्रह, के शांतिकारक माने।
शनिग्रह अति उग्र हुआ तो भी, मुनिसुव्रत प्रभु उसको हानें।।
ग्रह राहु अगर होवे अरिष्ट, तो नेमिनाथ का मंत्र जपो।
प्रभु पार्श्वनाथ के चरणों में, ग्रह केतु शांति हेतु प्रणमो।।5।।

ये नव तीर्थंकर नवग्रह की, शांति में हेतू माने हैं।
है दुख का मूल असाता ही, पर बाह्य निमित ग्रह माने हैं।।
जिन भक्ति असाता कर्मों को, साता में परिवर्तित करती।
ग्रह से उत्पन्न सभी बाधा, तब ही तो शांत हुआ करती।।6।।

पूजन-अर्चन के साथ-साथ, ग्रहशांति मंत्र का जाप करो।
जितनी संख्या जिस मंत्र की है, उसको कर मन संताप हरो।।
अपने प्रभु के अतिरिक्त कहीं, मिथ्यामत में मत भरमाना।
दुख संकट आने पर भी कभी, जिनधर्म को भूल नहीं जाना।।7।।

नवग्रहशांति की पूजन कर, नवग्रह का कभी विधान करो।
तीर्थंकर प्रभु के गुण गाकर, निज आतम गुण भंडार भरो।।
निज जन्मकुण्डली में स्थित, ग्रह को भी उच्चस्थान करो।
फिर सूर्य-चन्द्र सम शुभ प्रकाश से, जीवन का उत्थान करो।।8।।

बीसवीं सदी की प्रथम बालसति, गणिनी माता ज्ञानमती।
उनकी शिष्या "आर्यिका चन्दनामति" ने यह स्तुती रची।।
पच्चिस सौ तीस वीर संवत्, तिथि फाल्गुन कृष्णा चतुर्दशी।
निजशांति हेतु ग्रहशांति हेतु, प्रभु पद में अर्पित काव्यकृती।।9।।

भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) की सर्वमान्य परम्परा के समर्थन में देश की विभिन्न जैन संस्थाओं द्वारा पारित प्रस्ताव

अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन शास्त्री परिषद के अध्यक्ष प्राचार्य नरेन्द्रप्रकाश जैन, फिरोजाबाद की अध्यक्षता में महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर के संदर्भ में कंपिल जी में पारित प्रस्ताव

दिनाँक–9 दिसम्बर 2002

अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन शास्त्री परिषद की कार्यकारिणी की यह बैठक वैशाली को भगवान महावीर की जन्मभूमि स्वीकार नहीं करती क्योंकि हमारे किसी भी आगम ग्रंथ में जन्मभूमि के रूप में वैशाली का उल्लेख नहीं है। आगम ग्रंथों में जन्मभूमि के रूप में कुण्डलपुर, कुण्डपुर (विदेह) का उल्लेख है, किन्तु विदेह की सीमाओं का वर्णन दिगम्बर जैन आगम ग्रंथों में नहीं मिलता। सदियों से कुण्डलपुर (नालंदा) को जन्मभूमि के रूप में मानने की श्रद्धा जन-जन में है। इसलिए भूगोल या जैनेतर ग्रंथों की मान्यता के अनुसार जन्मभूमि के संदर्भ में कोई निर्णय लेना उचित नहीं है।

परम्परागत रूप से मान्य कल्याणक क्षेत्रों को विवादास्पद नहीं बनाना चाहिए। समाज में जन्मभूमि प्रकरण को लेकर चल रहे विसंवाद को विराम देने के लिए यही उचित है कि सदियों से जन्मभूमि के बारे में लोग जिसे मानते रहे हैं, उसे हम आदर देते रहें।

अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन युवा परिषद के रजतजयंती समारोह में पारित प्रस्ताव

भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर-बिहार वर्तमान में नालंदा जिले में स्थित है, जहाँ पर पिछले 2600 वर्ष से समस्त दिगम्बर जैन अनुयायी श्रद्धा से यात्रा करके पुण्य अर्जित करते आ रहे हैं तथा सम्पूर्ण दिगम्बर जैन आगम ग्रंथों एवं पूजन आदि में कुण्डलपुर ही भगवान महावीर की जन्मभूमि बताई है, कहीं पर भी वैशाली को जन्मभूमि के रूप में नहीं माना गया है। वैशाली तो राजा चेटक की राजधानी एवं माता त्रिशला की जन्मभूमि है। कोई भी तीर्थंकर ननिहाल में जन्म नहीं लेते हैं, माता के आंगन में ही पन्द्रह महीनों तक रत्नों की वर्षा होती है।

अभी पिछले लगभग 45 वर्ष पूर्व से कुछ अधिक आधुनिक इतिहासकारों की सोच के आधार पर कुछ लोग वैशाली को भगवान महावीर की जन्मभूमि बनाना चाहते हैं इस संदर्भ में "अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन युवा परिषद" यह प्रस्ताव करती है कि इस वर्ष सरकार एवं समाज द्वारा भगवान महावीर का 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव राष्ट्रीय स्तर पर मनाया जा रहा है अतः कुण्डलपुर, जो पिछले 2600 साल से अब तक भगवान महावीर की जन्मभूमि के रूप में आस्था का केन्द्र बना हुआ है उसे केवल आधुनिक सोच के आधार पर विवाद में नहीं डाला जावे। समस्त दिगम्बर जैन समाज की मान्यता के अनुसार कुण्डलपुर को ही जन्मभूमि के रूप में सरकार एवं समाज के द्वारा विकसित किया जावे। वैशाली आदि अन्य स्थानों पर भगवान महावीर की स्मृति में स्मारक बनाए जावें लेकिन 2600 साल की जन्मभूमि की धरोहर को न खो दिया जावे।

दिल्ली, 6 जनवरी 2002

प्रस्तावक–अनिल कुमार जैन, प्रीतविहार-दिल्ली (अध्यक्ष-दिल्ली प्रदेश)
अनुमोदक–उदयभान जैन, भरतपुर-राज. (अध्यक्ष-राजस्थान)

तीर्थंकर प्राचीन जैन विद्वत् महासंघ की कार्यकारिणी की इंदौर में दिनाँक 24-2-2004 को सम्पन्न बैठक में पारित प्रस्ताव

समस्त दिगम्बर जैन प्राचीन ग्रंथों में वर्णित भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर ही है। बिहार प्रांत के अंतर्गत नालंदा जिले में स्थित कुण्डलपुर ही सदियों से जन-जन की आस्था का केन्द्र रहा है एवं सभी दि. जैन धर्मावलम्बी परम्परागत रूप से इसी जन्मभूमि कुण्डलपुर की वंदना करते रहे हैं।

महासंघ की राष्ट्रीय कार्यकारिणी सरकार से अनुरोध करती है कि भगवान महावीर की जन्मभूमि के रूप में जैन परम्परामान्य कुण्डलपुर जिला नालंदा-बिहार को ही मान्यता प्रदान करते हुए इसके विकास में सहयोग प्रदान करे।

प्रस्तावक–डॉ. अभयप्रकाश जैन, ग्वालियर 'प्रचार मंत्री'
समर्थक-सर्वानुमति

अखिल भारतीय दिगम्बर जैन महिला संगठन की केन्द्रीय कार्यकारिणी की दिनाँक 24 फरवरी 2002 को इंदौर में सम्पन्न बैठक में पारित प्रस्ताव

"प्राचीन जैन पुराणों, तिलोयपण्णत्ति, धवला आदि प्राचीन ग्रंथों में भगवान महावीर की जन्मभूमि, कुण्डलपुर की वंदना कर हम स्वयं को धन्य करते रहे हैं। कोई भी तीर्थयात्री जन्मभूमि की वंदना हेतु वैशाली नहीं जाता रहा। किन्तु विगत 3-4 दशकों में कतिपय शोधकर्ताओं ने भ्रांतिवश महावीर की ननिहाल वैशाली को जन्मभूमि बताना शुरू कर दिया। यह समाज के लिए अत्यन्त घातक एवं षडयंत्रकारी विचार है।

अखिल भारतीय दिगम्बर जैन महिला संगठन की यह सभा समाज एवं सरकार से अनुरोध करती है कि भगवान महावीर की जन्मभूमि के रूप में नालंदा जिले में स्थित कुण्डलपुर को ही मान्यता प्रदान करने का कष्ट करे।"

प्रस्तावक–श्रीमती उषा पाटनी
मंत्री–दिगम्बर जैन महिला संगठन, इंदौर

–समर्थक–

1. श्रीमती निर्मला जैन, दिल्ली अध्यक्ष
2. श्रीमत सुमन जैन, इंदौर महामंत्री
3. श्रीमती आशा जैन, दिल्ली
4. श्रीमती दर्शन जैन, दिल्ली
5. श्रीमती कांति जैन, ग्वालियर
6. श्रीमती रमा जैन, छतरपुर
7. श्रीमती वंदना जैन, शाहजहाँपुर
8. श्रीमती मीना विनायका, इंदौर
9. श्रीमती उषा पाटनी, इंदौर
10. श्रीमती प्रेमलता वेद, इंदौर
11. श्रीमती लीला जैन, इंदौर
12. श्रीमती तारा जैन, इंदौर
13. श्रीमती माला बुखारिया, इंदौर

नंद्यावर्त महल में भगवान महावीर के जीवनदर्शन को दर्शाते शिलापट्ट पर उत्कीर्ण चित्र

नंद्यावर्त महल में माता त्रिशला के सोलह स्वप्न - माता के आँगन में कुबेर द्वारा रत्नों की वर्षा

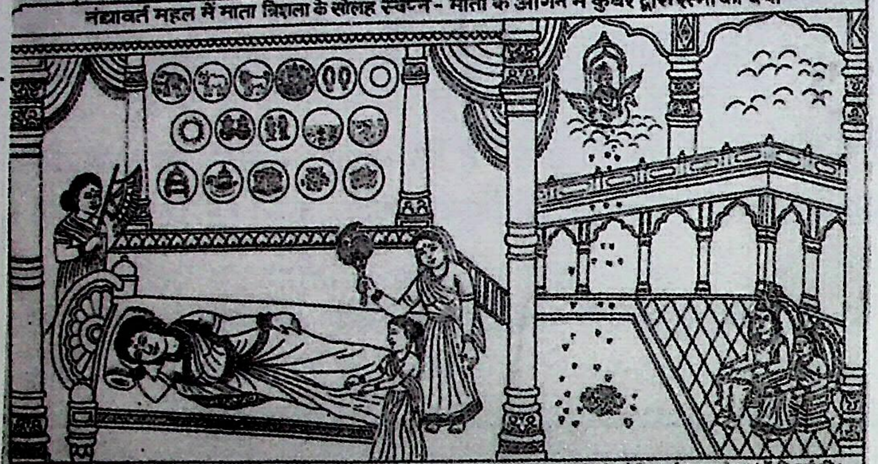

चित्र परिचय - तीर्थंकर के गर्भ में आने के छह महिने पूर्व कुण्डलपुर राजधानी में महाराजा सिद्धार्थ के महल के आँगन में कुबेर ने प्रतिदिन साढ़े तीन करोड़ रत्नों की वर्षा की। नंद्यावर्त महल में सर्वतोभद्र पलंग पर सोती हुई महारानी त्रिशला ने आषाढ़ शुक्ल षष्ठी की पिछली रात्रि में सोलह स्वप्न देखे।

जन्मकल्याणक - नंद्यावर्त महल - प्रसूतिगृह में माता त्रिशला ने तीर्थंकर शिशु को जन्म दिया।

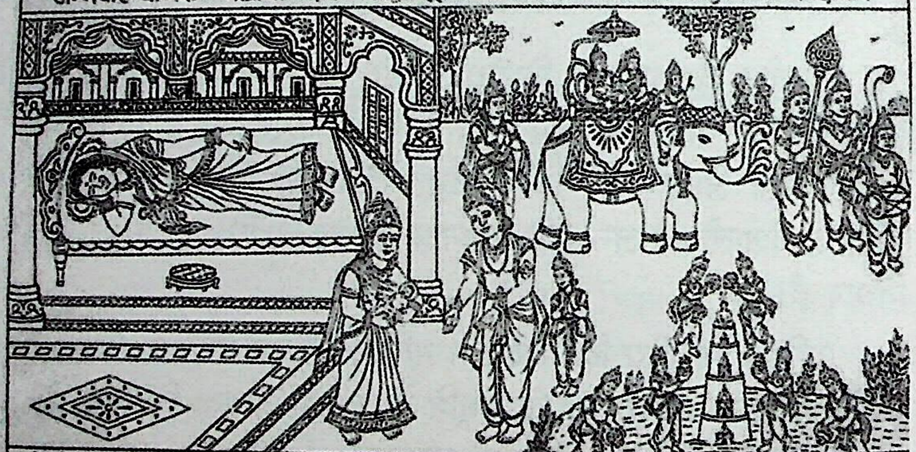

चित्र परिचय - तत्क्षण ही इन्द्रों के आसन कांप उठे, देवों के यहाँ बिना बजाए बाजे बजने लगने लगे। सौधर्मेंद्र, शची इन्द्राणी एवं असंख्य देवों के साथ कुण्डलपु आ गये। इन्द्राणी द्वारा जिनबालक को प्राप्त कर इन्द्र ने ऐरावत हाथी पर बिठाकर सुमेरुपर्वत की पांडुकशिला पर पहुँचकर १००८ कलशों से तीर्थंकर शिशु का जन्माभिषेक किया एवं वीर तथा वर्धमान नाम रखे। पुनः कुण्डलपुर में वैसा ही जन्ममहोत्सव मनाया।

शिशु वर्धमान को देखते ही दो मुनियों की शंका दूर हुई तब उन्होंने 'सन्मति' नाम रखा।

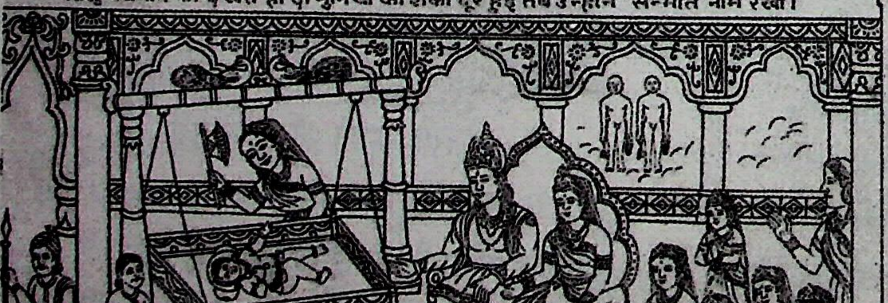

चित्र परिचय - चारणऋद्धिधारी संजय और विजय नाम के दो महामुनि नंद्यावर्त महल में आये, पालना में स्थित शिशु वर्धमान तीर्थंकर का अवलोकन करते ही उनकी शंका का समाधान हो गया तब उन्होंने बालक की तीन प्रदक्षिणा देकर 'सन्मति' यह नाम रखा।

स्वर्ग से देवों द्वारा लाये गये वस्त्र एवं अलंकारों को वर्धमान पहनते थे।

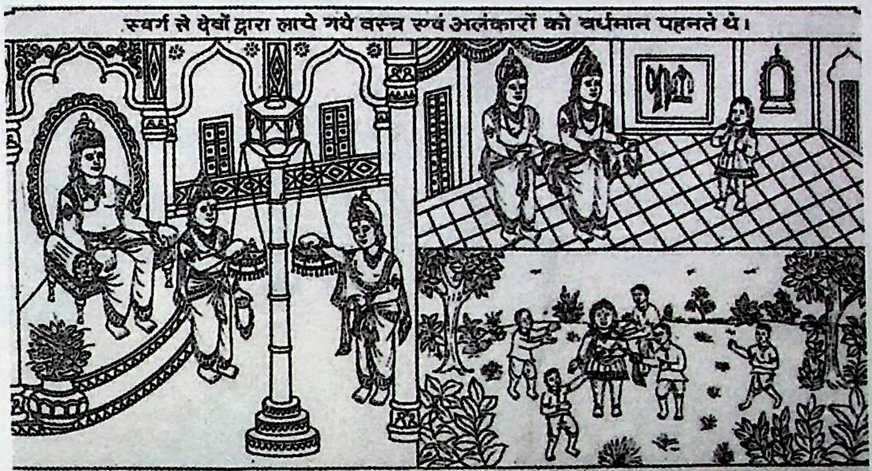

चित्र परिचय-स्वर्ग में मानस्तंभ के पिटारों में उत्पन्न हुए वस्त्र एवं आभूषण को इंद्राज्ञा से देवगण लाकर देते थे। तीर्थंकर महावीर उन्हें पहनते थे। सभी नागरिक बालक उनके वस्त्र-आभूषणों को देखने आया करते थे और उनके पुण्य की प्रशंसा करते थे।

स्वर्ग में मानस्तंभ के पिटारे से देवगण तीर्थंकर के लिए भोजनसामग्री लाते हैं।

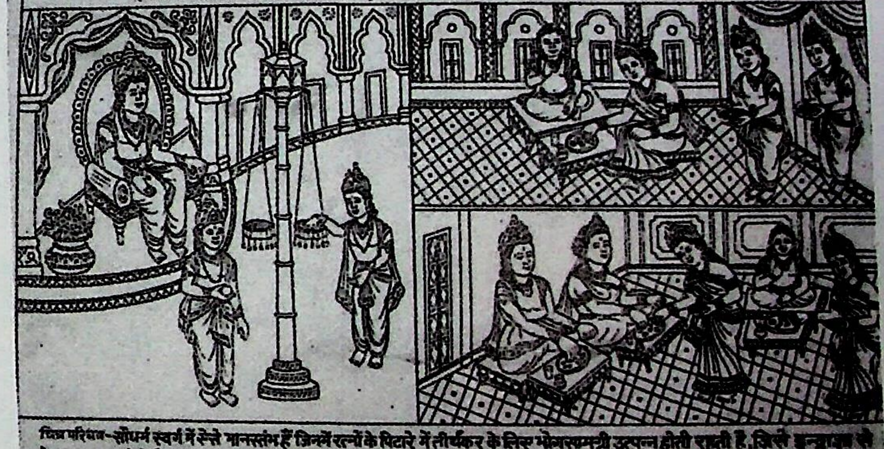

चित्र परिचय-सौधर्म स्वर्ग में ऐसे मानस्तंभ हैं जिनमें रत्नों के पिटारे में तीर्थंकर के लिए भोजनसामग्री उत्पन्न होती रहती हैं, जिसे इन्द्राज्ञा से देवगण लाकर देते हैं। एक ओर माता त्रिशला वर्धमान को भोजन करा रही हैं। एक ओर देवियाँ माता-पिता एवं तीर्थंकर वीर को भोजन करा रही हैं।

उद्यान में वृक्ष से उतरते हुए वर्धमान सर्प के फण पर खेलने लगे।

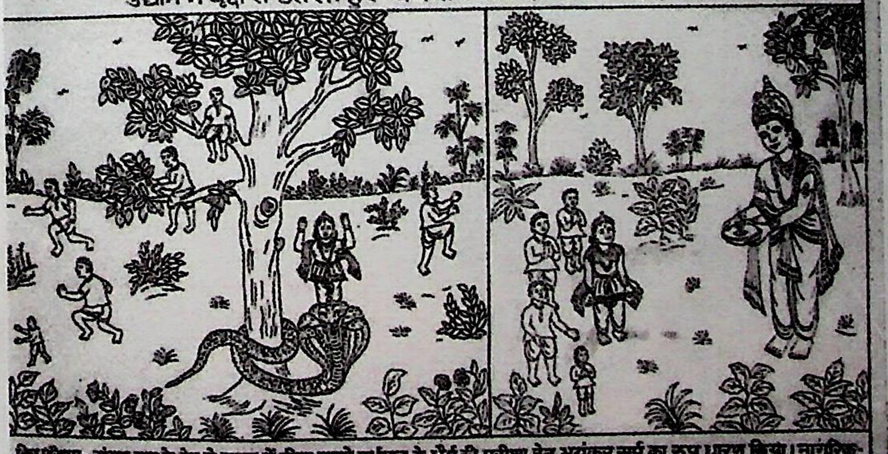

चित्र परिचय- संगम नाम के देव ने उद्यान में क्रीड़ा करते वर्धमान के धैर्य की परीक्षा हेतु भयंकर सर्प का रूप धारण किया। नागरिक-बालक डर गये। किंतु वर्धमान सर्प के फण पर पैर रखकर खेलने लगे, तभी संगमदेव ने रूप प्रगट कर स्तुति कर 'महावीर' नाम रखा।

संगीत सभा एवं बाल सभा में प्रश्नों का उत्तर देते हुए महावीर

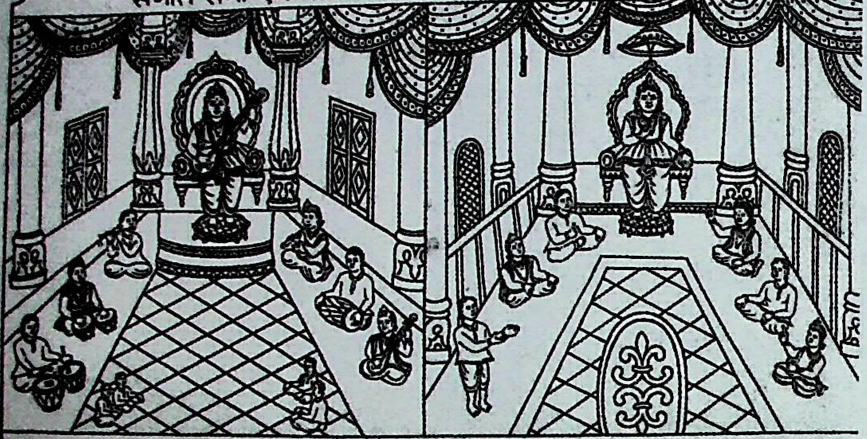

चित्र परिचय - एक तरफ महावीर बालक वीणा बजा रहे हैं, कुछ बालक बांसुरी, मृदंग बजा कर भगवंतों का गुणानुवाद कर रहे हैं। दूसरी तरफ बालक महावीर से कुछ बालक प्रश्न कर रहे हैं, भगवान महावीर उनका समाधान कर रहे हैं।

युवराज महावीर से विवाह करने का आग्रह एवं समवयस्क में तत्वचर्चा

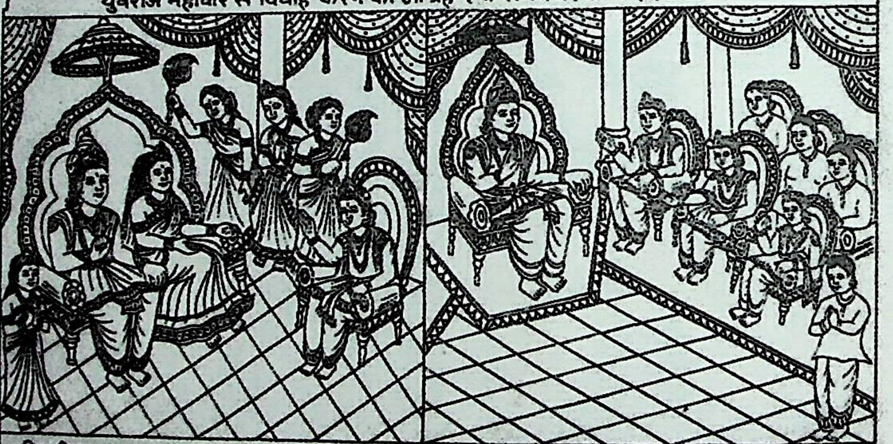

चित्र परिचय- एक तरफ माता-पिता युवराज महावीर से विवाह का आग्रह कर रहे हैं किन्तु उन्होंने स्वीकार नहीं किया। दूसरी तरफ युवराज महावीर युवकों के साथ तत्वचर्चा कर रहे हैं एवं अनेक गूढ़ प्रश्नों का उत्तर दे रहे हैं।

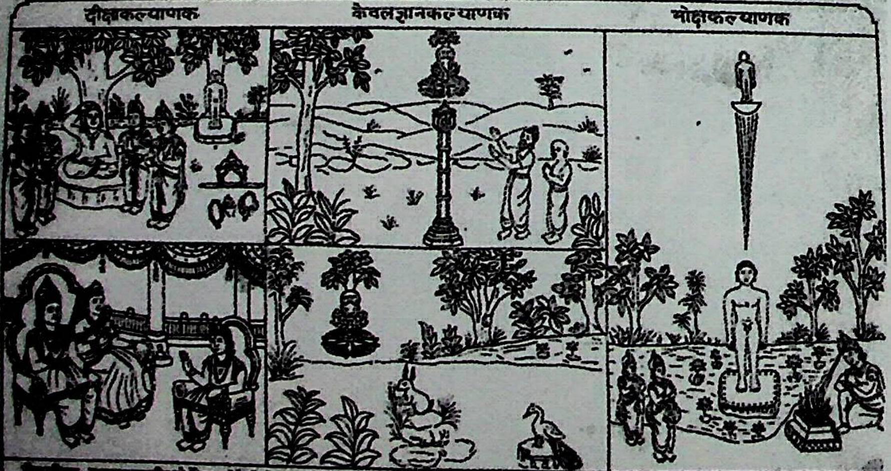

चित्र परिचय - युवराज महावीर को वैराग्य होते ही देवगण भगवान को लेकर '[illegible]' में पहुँचे। प्रभु ने साल वृक्ष के नीचे जैनेश्वरी दीक्षा ले ली। [illegible] केवलज्ञान हो गया पुनः राजगृही विपुलाचल पर समवसरण में 'गौतम' के आने से प्रथम दिव्य-ध्वनि खिरी। [illegible] पावापुरी [illegible] से निर्वाण को प्राप्त कर लिया।

भगवान महावीर ज्योति रथ प्रवर्तन

षष्ठ खंड

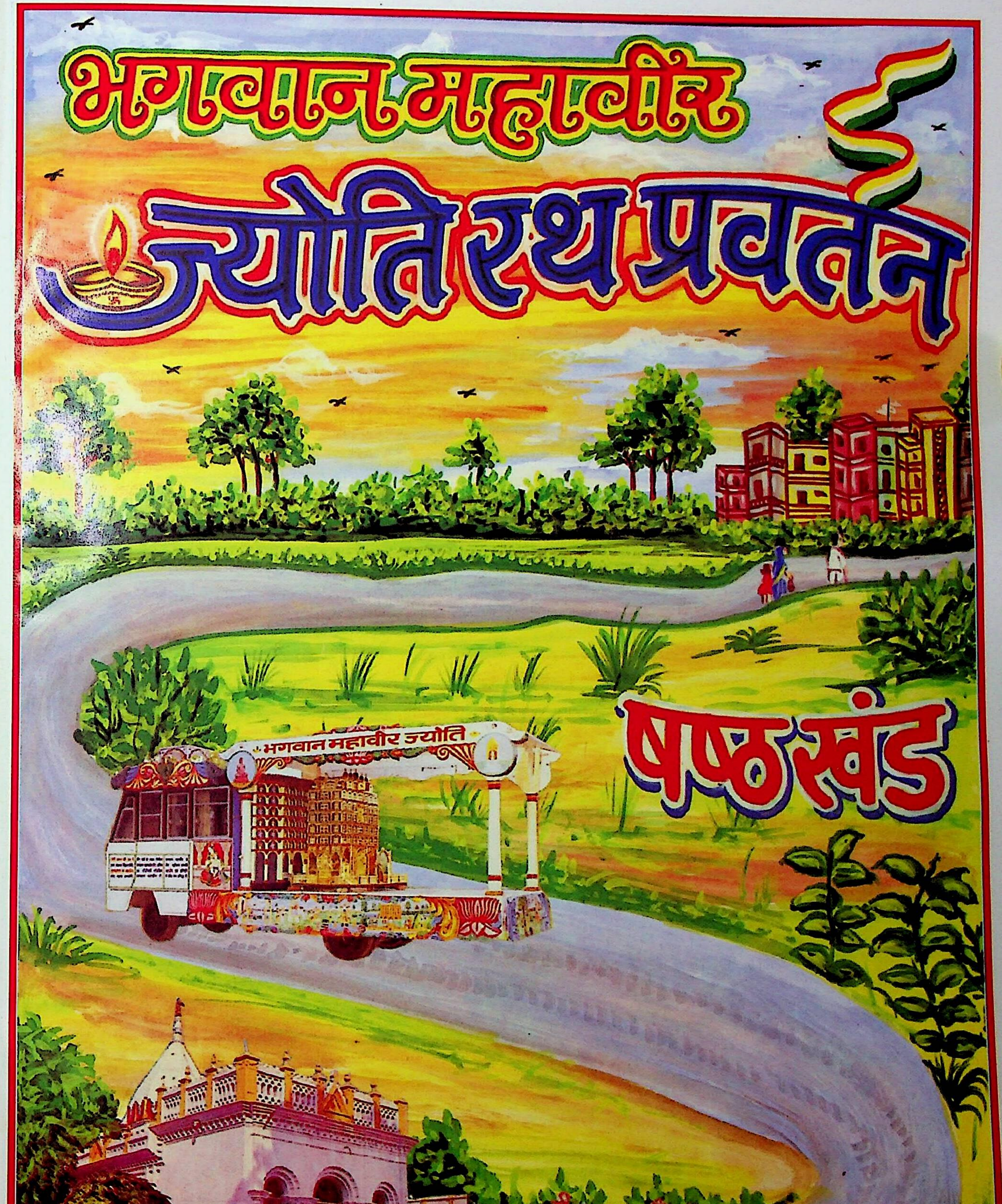
भगवान महावीर ज्योति

श्री गणेश वर्णी दि. जैन (शोध) संस्थान
पुस्तक सं. 4847
दि.
नरिया (का. हि. वि. वि.) वाराणसी

भगवान महावीर ज्योति रथ का भारत भ्रमण

प्रस्तुति– विजय कुमार जैन (पिंकू), कानपुर
(संयोजक– ज्योति रथ प्रवर्तन)

पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा लिखित इस मंगलाचरण से मैं अपनी बात प्रारंभ करता हूँ–

या कुण्डलपुरी नित्यं, मंगलं कुरूताद् भुवि।
जन्मभूमिः प्रसिद्धास्ति, महावीरस्य संप्रति।।1।।
राजधानीह सिद्धार्थ-भूपतेर्योगिभिर्नुता।
नंद्यावर्तं च प्रासादं, रत्नवृष्ट्या सुमंगलम् ।।2।।

इस विस्तृत भूमण्डल के गर्भ में कब, कहाँ, क्या छिपा है इसे सर्वज्ञ देव के अलावा कौन जान सकता है? हाँ! पूर्वाचार्यों द्वारा कहे गये वचन रूप आगम ही आज के युग में उसका प्रमाण हैं जिनके द्वारा हम अपनी प्राचीन संस्कृति एवं सभ्यता से परिचित हो सकते हैं और यह भी निश्चित है कि किसी भी तरह के कार्य या विकास का एक समय निश्चित होता है उसी क्रम में भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) के विकास का समय भले ही हजारों वर्ष बाद आया लेकिन ऐसा ऐतिहासिक कार्य एवं क्षण शायद कभी किसी ने अपनी आँखों से देखा हो। समय स्वयं में आश्चर्यचकित होगा कि क्या मैं वास्तविकता देख रहा हूँ या स्वप्न है। मैं ऐसी बात इसलिए कह रहा हूँ कि मात्र 18 महीने में पूरे तीर्थ का स्वरूप बदल गया एवं कई योजनाएँ साकार हो गयीं। कहाँ तो कुछ समय पूर्व कुछ भी नहीं था और कहाँ आज पाँच-पाँच गगनचुम्बी जिनमंदिर उस पवित्र स्थल की गौरवगाथा गाते नहीं थकते हैं। आज इतने अल्प समय में जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी गणिनीप्रमुख आर्यिका शिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी की पावन प्रेरणा एवं मंगल आशीर्वाद से इतना कार्य हो चुका है कि आसपास के लोग ही नहीं अपितु सारे देश की जैन समाज हतप्रभ है कि माताजी ने क्या जादू कर दिया है? यह इस पुण्यभूमि के परमाणुओं का ही कुछ चमत्कार था कि एक के बाद एक कड़ी ऐसी जुड़ती चली गयी कि स्वयं कार्य प्रगति के पथ पर अग्रसर हो गया।

29 दिसम्बर 2002 का वह दिन जब पूज्य माताजी के चरण जन्मभूमि पर पड़े, विकास के प्रथम चरण के रूप में इक्कीसवीं सदी का प्रथम ऐतिहासिक पंचकल्याणक एवं महाकुंभ मस्तकाभिषेक महोत्सव 7 फरवरी से 12 फरवरी 2003 तक अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सम्पन्न किया गया। तत्पश्चात् सारे देश की जैन समाज को किस प्रकार से क्षेत्र से जोड़ा जाए एवं जन-जन का योगदान इस जन्मभूमि विकास में हो सके इस भावना को ध्यान रखते हुए पूज्य माताजी ने भगवान महावीर ज्योति रथ का प्रारूप तैयार करवाया, धीरे-धीरे वह शुभ दिन भी आ गया जिस दिन रथ का प्रवर्तन होना था। यह एक अनहोना एवं सुखद संयोग ही था जब चैत्र शुक्ला त्रयोदशी 15 अप्रैल 2003 महावीर जयंती के शुभ दिवस भगवान महावीर ज्योति रथ का प्रवर्तन भारत भ्रमण हेतु भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर से ही हुआ।

सर्वप्रथम प्रवर्तन का सौभाग्य मध्यप्रदेश को प्राप्त हुआ। 4 मई अक्षय तृतीया पर्व के पावन दिन इंदौर-सुदामानगर से

इसका शुभारंभ हुआ। चारित्रचक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर जी की परंपरा के वर्तमान पट्टाचार्य आचार्यरत्न श्री अभिनंदनसागर जी महाराज के ससंघ सानिध्य में सुदामानगर में रथ की स्वागत सभा का आयोजन किया जिसमें रथ प्रवर्तन समिति के केन्द्रीय अध्यक्ष ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन, महामंत्री प्राचार्य श्री नरेन्द्र प्रकाश जैन-फिरोजाबाद, विद्वत महासंघ के अध्यक्ष डॉ. शेखरचंद जैन-अहमदाबाद, सेठ देवकुमार सिंह कासलीवाल, डॉ. अनुपम जैन-इंदौर आदि विद्वत्वर्ग तथा अनेकों श्रेष्ठियों की उपस्थिति में आचार्यश्री ने स्वस्तिक बनाकर इसका प्रवर्तन किया। सुदामानगर पंचकल्याणक के पात्रों ने ही रथ पर बैठने का सौभाग्य प्राप्त किया। प्रतिष्ठा के माता-पिता ही माता-पिता बन गये व सौधर्म इन्द्र-सौधर्म इन्द्र बन गये, कुबेर-कुबेर बन गये। प्रतिष्ठा के यज्ञनायक ने मंगल आरती उतारी इसी के साथ प्रवर्तन का शुभारंभ हो गया।

बेड़िया, पीपलगौन, खामखेड़ा होते हुए हम सनावद नगर पहुँचे। यहाँ पर उत्साह ठीक था। सभा धर्मशाला प्रांगण में हुई। सभा की अध्यक्षता श्री माणिकचंद पाटनी, इंदौर ने की। मुख्य अतिथि ब्र. श्री रवीन्द्र कुमार जैन (अध्यक्ष-केन्द्रीय प्रवर्तन समिति) थे। सभा में ब्र. सारिका जैन, ब्र. स्वाति जैन, मनोज जैन-मेरठ, उदयभान जैन (जयपुर), श्रीमती आशा जैन (अध्यक्ष-महिला संगठन) उपस्थित थीं सभा के पश्चात् शोभायात्रा का प्रवर्तन सारे नगर में हुआ। पूरे कार्यक्रम में श्री प्रकाशचंद जैन सर्राफ का अच्छा योगदान रहा। बडवाह, कसरावद, महेश्वर, बालसमुन्द, धामनोद, धर्मपुरी, बाकानेर, मनावर, गंधवानी, सिंघाना, लुहारी, बुडी, बड़वानी, अंजद, ऊनपावागिरि, खरगौन, भीकनगांव, अतर होते हुए कालमुखी पहुँचे। कालमुखी का कार्यक्रम हमारी लिस्ट में नहीं था। लेकिन हर वस्तु का योग अपने आप उसे खींच ले जाता है। ग्राम में पहुँचते ही ऐसी भीड़ जमा हो गई जैसे कोई निधि मिल गई हो। लोगों ने खूब भक्ति से रथ की शोभायात्रा सम्पन्न की।

खंडवानगर में सभा घासपुरा मंदिर के बाहर हुई, उपस्थिति अच्छी थी। सभाध्यक्ष श्री धनपाल जैन व मुख्य अतिथि श्री सुरेशचंद लुहाड़िया थे। रथ का परिचय पं. प्रवीण चंद शास्त्री ने प्रदान किया। शोभायात्रा के माध्यम से सारे नगर में खूब प्रचार-प्रसार किया गया। कार्यक्रम को सफल बनाने में शांतिलाल जी का सहयोग प्राप्त हुआ।

हरसूद होते हुए खिरकिया नगर में मंगल प्रवेश हुआ। छोटा सा नगर होते हुए भी बहुत अच्छा उत्साह था। शोभायात्रा में सभी नागरिक श्वेत वस्त्र में एवं महिलाएं केसरिया साड़ी में चल रही थी। हर तरफ पंचरंगी ध्वजाएं लहरा रही थी। जगह-जगह शीतल जल एवं शरबत की व्यवस्था थी। यहाँ से रथ हरदा, खातेगांव, अजनास, लोहारदा, सतवादस, कन्नौद, आष्टा होते हुए जावर पहुँचा। यहाँ पर सभी जैन घरों के ऊपर पंचरंगी ध्वजाएं लहरा रही थीं। सभा जीनिंग फैक्ट्री के सामने मार्केट में हुई। सभाध्यक्ष श्री सुमतलाल जैन व मुख्य अतिथि श्री राजेन्द्र सिंह परेखा (नगरपालिका उपाध्यक्ष) थे। मेहतवाड़ा, सोनकच्छ होते हुए देवास नगर पहुँचे। यहाँ पर अलकापुरी में कार्यक्रम हुआ।

इसी क्रम में उज्जैन, मक्सी, सारंगपुर, ब्यावर, बीनागंज, आवन, कुंभराज, राघोगढ़, आरोन, तरना, साढौरा से अशोकनगर पहुँचे यहाँ पर माननीय अध्यक्ष महोदय ने स्वयं सभा चलाकर जन-जन की भावनाओं को एकत्र करके कुण्डलपुर विकास में योगदान दिया। बदनावर, ईसागढ़, खतौरा, बदरवास, कोलारस होते हुए शिवपुरी नगर में मंगल प्रवेश हुआ। सभी नगरवासी रथ को लेने के लिए नगर के बाहर आये एवं बैंड-बाजे से स्वागत करके ले गये। सभा छत्री मंदिर के प्रांगण में हुई। सभाध्यक्ष श्री ओंकारलाल जैन आयकर अधिकारी व मुख्य अतिथि श्री आर.के. जैन न्यायाधीश थे। उपस्थित बहुत अच्छी थी। पूर्व रात्रि में ही रथ पर बैठने वालों का चयन हो गया। प्रातः 8 बजे विशाल शोभायात्रा का नगर प्रवर्तन हुआ। खूब भक्ति से लोग ध्वजाएं लेकर नारे लगाते हुए चल रहे थे। शोभायात्रा माधव चौक, महावीर मार्ग, कोतवाली रोड, चंद्रप्रभू जिनालय से सदर बाजार होती हुई आदिनाथ जिनालय पर समाप्त हुई। पूरे कार्यक्रम को सफल बनाने में श्री सुरेश जैन मारौरा का सहयोग सराहनीय रहा।

शिवपुरी के पश्चात् हम रथ लेकर तालबेहट, खनियाधाना, बमौरकलां, मुंगावली, पिपरई, जखौरा, ललितपुर, महरौनीं से सैदपुर पहुँचे। यहाँ पर आर्यिका मृदुमती माताजी के संघ सानिध्य में सभा हुई। साढूमल में स्वागतसभा वर्णी दिगम्बर जैन संस्कृत महाविद्यालय प्रांगण में हुई। सभा बहुत सुन्दर हुई। मंडावरा में आर्यिका श्री विज्ञानमती माताजी के ससंघ सानिध्य में सभा हुई। टीकमगढ़, दिगौड़ा, पृथ्वीपुर, निवाड़ी, सकरार, रानीपुर, मऊरानीपुर, गुरसराय, जतारा, मंजना, मवई, भेलसी, बलदेवगढ़, खरगापुर, नौगाँवां होते हुए छतरपुर नगरी में रथ का मंगल प्रवेश हुआ। रात्रि विश्राम डेरा पहाड़ी पर हुआ। प्रातः सभा नगर में हुई। यहाँ पर आर्यिका श्री पूर्णमती माताजी ससंघ विराजमान थीं। गुलगंज,

बड़ा मलहरा, द्रोणगिरि, भगवां घुवारा, बड़ागाँव घसान, रामटोरिया, शाहगढ़, मड़देवरा, हीरापुर, बक्सवाहा, सुनवाहा, बम्हौरी, नैनागिर, दलपतपुर कर्रापुर, बड़ाबवाड़ होते हुए सानोधा पहुँचे। बहुत छोटा सा नगर होते हुए भी बहुत भक्ति थी। छोटे-छोटे बच्चे भी खूब भक्ति से बैठे एक के बाद एक क्रम से आरती कर रहे थे। प्रातः पूजन में सभी लोग आये अच्छी रथयात्रा निकली। पारसोरिया होते हुए पथरिया पहुँचे। यहाँ पर उस दिन चार्तुमास स्थापना दिवस था। मुनि श्री अजितसागर जी व ऐलक श्री निर्भयसागर जी महाराज विराजमान थे। दोनों कार्यक्रम साथ-साथ हुए। बहुत अच्छा कार्यक्रम था। मुनि श्री शोभायात्रा में रथ के आगे-आगे चल रहे थे, उनके साथ अपार जनसमूह चल रहा था, जिधर भी नजर जाती थी सिर्फ आदमी ही आदमी दिखता था। यहाँ से गढ़ाकोटा, रहली होते हुए देवरी पहुँचे। यहाँ पर मुनि श्री मार्दवसागर जी महाराज का सानिध्य प्राप्त हुआ। हर घर की छत पर पंचरंगी ध्वजाएं लहरा रही थीं।

महाराजपुर जैसा नाम वैसा ही काम था। सभी नगरवासी मेनरोड पर खड़े इंतजार कर रहे थे। बहुत भक्ति एवं उत्साह था लोगों में। पानी बरस रहा था लेकिन फिर भी कार्यक्रम अच्छा हुआ। गौरझामर नगर में आर्यिका श्री विज्ञाश्री माताजी, आर्यिका श्री विविक्षामती माताजी व आर्यिका श्री विधिश्री माताजी का सानिध्य प्राप्त हुआ। आर्यिका श्री विज्ञाश्री माताजी ने अपने प्रवचन में कहा कि जिस प्रकार पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी अपने मोक्षमहल के लिए मजबूत सीढ़ी बना रही हैं, वैसे ही हम सबको भी वह ऐसा आशीर्वाद दें कि हम भी संयम की साधना करते हुए उनके मार्ग का अनुसरण कर सकें। टड़ा ग्राम में पहुँचने से पहले ही कुछ दूरी पर रथ मिट्टी में धंस गया। हम सब लोग बहुत परेशान थे कि क्या करें। खूब प्रयास किया लेकिन सब बेकार रहा। पता नहीं किस प्रकार ग्रामवासियों को सूचना मिल गयी। वे सभी लोग 3 किमी. तक आये। सारे गांव के ट्रैक्टर आ पहुँचे देखते ही देखते होड़ लग गई कि कैसे रथ निकले खूब भक्ति का परिचय देते हुए रथ को निकाला और जुलूस बनाकर नगर में ले गये। यहाँ से केसली, सुरखी, होते हुए मकरोनिया पहुँचे। अंकुर कालोनी के समीप विद्याभवन में सर्वधर्मसभा हुई। सभी संप्रदाय वालों ने सभा में भाग लिया। शोभायात्रा भी अपने आप में अनूठी मिशाल थी। पूरे कार्यक्रम में भाई संजीव सर्राफ-सागर का सहयोग सराहनीय रहा।

ढाना नगर में बहुत सुंदर कार्यक्रम हुआ। सभा में आर्यिका श्री आलोकमती माताजी व आर्यिका श्री सुनयमती माताजी का सानिध्य प्राप्त हुआ। खुरई श्रीमंतों एवं सेठों की नगरी है यहाँ सभा में उपस्थिति बहुत अच्छी थी। मुनिश्री प्रशांतसागर जी महाराज व मुनि श्री निर्वेग सागर जी महाराज के सानिध्य में सभा हुई। शोभायात्रा पूरे नगर में घुमाई गई। शाम को रथ गुरुकुल में दर्शनार्थ खड़ा रहा। जरूआखेड़ा, नरयावली होते हुए सागर नगर में रथ का मंगल प्रवेश हुआ।

ये वह स्थान है जहाँ पूरे प्रदेश की निगाहें लगी हुई थीं कि सागर वाले कुण्डलपुर के लिए क्या करेंगे। प्रारंभिक सभा मोरा जी स्थित वर्णी भवन में हुई। सभाध्यक्ष श्री प्रेमचंद जैन कर्रापुर वाले थे। मुख्य अतिथि थे-ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन (अध्यक्ष-भगवान महावीर ज्योति)। मध्यान्ह में शोभायात्रा चमेली चौक से प्रारंभ होकर कटरा मंदिर तक गयी। यहाँ पर एक विशाल सभा का आयोजन किया गया। सभा का संचालन श्री अशोक पांड्या जी कर रहे थे। विद्वानों की नगरी में सभी ने खूब बढ़-चढ़कर अपने-अपने वक्तव्य रखे। मोराजी के ट्रस्टी के.के. जैन ने सभी अतिथियों का स्वागत अंग वस्त्र एवं श्रीफल देकर किया। विधायिका सुधा जैन ने भी अपने उद्गार व्यक्त किये। सिंघई कैलाशचंद ने कहा कि सागर की जैन समाज तो अकेले ही कुण्डलपुर का निर्माण करने में समर्थ है, हम सभी अपनी ओर से अधिकतम सहयोग प्रदान करने का पूरा प्रयास करेंगे। सिंघई जीवनलाल जी ने अपने वक्तव्य में कहा कि मैं रवीन्द्र भाई जी अर्थात् गौतम गणधर के द्वारा पूज्य माताजी अर्थात् महावीर तक ये संदेश पहुँचाना चाहता हूँ कि समस्त जनता की यही मांग है कि एक बार वे बुन्देलखंड की धरा पर अवश्य पधारें। रात विदाई तक खूब भीड़ रही।

राहतगढ़ में श्वेताम्बर साध्वियों के सानिध्य में सभा हुई। जैसीनगर, शाहपुर, बांसा तारखेड़ा होते हुए दमोह पहुँचे। बरसात खूब थी लेकिन ऐसे में भी सभा हुई एवं जुलूस निकला। वनगांव, हटा, पटेरा होते हुए कुण्डलपुर पहुँचे। यहाँ पर बरसात होने के बावजूद भी बड़े बाबा के दर्शन कर सभी का मन आल्हादित हो उठा। पुनः अभाना होते हुए नौहटा ग्राम पहुँचे। आदीश्वरगिरि में सभा हुई। आर्यिका श्री सत्यमती माताजी व आर्यिका श्री सकलमती माताजी के सानिध्य में सभा हुई। जबेरा ग्राम में सभा मंदिर जी में हुई। सभा में रामकृष्ण कुसमारिया सांसद दमोह क्षेत्र पधारे। कटंगी, सिंग्रामपुर, पाटन, तेन्दूखेड़ा, शहपुरा, सहजपुर होते हुए जबलपुर पहुँचे। रात्रि विश्राम मढ़िया जी में हुआ। प्रातः सभा लाड़गंज मंदिर में हुई। उपस्थिति बहुत

अच्छी थी। देखते ही देखते सेकेण्डों में पाँचो बोलियाँ हो गयी। खूब ठाठ से शोभायात्रा नगर भ्रमण के लिए निकली, चारों तरफ लोग थालियाँ लिये खड़े थे। खूब स्वागत हुआ। पनागर ग्राम में सभा पूज्य आर्यिका श्री प्रशान्तमती माताजी के ससंघ सानिध्य में हुई। पूज्य माताजी अपने वक्तय में कहने लगीं कि आर्यिका-आर्यिका में अंतर है, हमारी तुलना में ज्ञांनमती माताजी के ज्ञान क्षयोपशम बहुत अधिक है, पूज्य माताजी एक हीरे के समान हैं। कहाँ ज्ञानमती माताजी जिनके ज्ञान का क्षयोपशम बहुत है और कहाँ हम लोग। गोसलपुर, खितौलाबाजार, सीहोरा होते हुए पहाड़ी पहुँचे। छोटे से ग्राम में भक्ती देखते ही बनती थी। यहाँ से रथ तिवरी पहुँचा। यह नगर संचालक पं. श्री सुधर्मचंद जी का जन्मनगर था। तिवरी ग्रामवासी पहले से तैयारी किये हुए थे। खूब भक्तिपूर्वक कार्यक्रम हुआ। छोटी सी समाज होते हुए भी बहुत उत्साह से कार्यक्रम हुआ। कटनी वालों ने भी महावीर ज्योति के स्वागत में कोई कसर नहीं छोड़ी थी।

रीठी; बड़गाँव, रैपुरा, कुंवरपुर, सिमरिया, पवई, अमानगंज, महेवा, गुन्नौर, सलेहा, देवेन्द्रनगर, पन्ना, वज्रपुर, सिंहपुर, नागौर, सतना, अमरपाटन, रीवां, देवलोंद, ब्योहारी, शहडोल, बुढार, चचाई, कोतमा, मनेन्द्रगढ़, पेन्ड्रा, गोरेला होते हुए विलासपुर, अकलतरा, भाटापारा, अर्जुनी, बलोदा बाजार, रायपुर, नवापारा होते हुए धमतरी पहुँचे। यहाँ पर श्री चंदूलाल जी की अध्यक्षता में नवीन मंदिर में सभा हुई। समाज छोटा है लेकिन कार्यक्रम उत्साहपूर्वक किया।

भिलाई नगर में त्रिवेणी तीर्थ पर आचार्यश्री विरागसागर जी महाराज के ससंघ सानिध्य में सभा हुई। यहाँ पर आसपास में चार स्थानों पर सभाएँ हुई पुनः वैशाली नगर, दुर्ग, पद्मनाभपुर, राजनाँदगाँव, डोंगरगाँव, डोंगरगढ़, देवरी, आमगांव, गोंदिया (महा.) व बालाघाट होते हुए बारासिवनी पहुँचे। बारा सिवनी नगर में रथ की स्वागत सभा का आयोजन ब्र. प्रदीप जी पियूष जबलपुर के सानिध्य में हुआ।

लालबर्रा, बरघाट होतें हुए सिवनी पहुँचे, सिवनी नगर का मंदिर बहुत विशाल एवं सुन्दर है, ऐसा मंदिर शायद पूरे देश में 10-15 स्थानों पर ही हो। यहाँ पर सभा आर्यिका श्री विशिष्टमती माताजी के ससंघ सानिध्य में हुई। सभा का शुभारंभ पं. श्री श्रेयांस कुमार दिवाकर के मंगलाचरण से हुई। तत्पश्चात् पूज्य आर्यिका श्री विशिष्टमती माताजी ने अपना मंगल आशीर्वाद प्रदान किया और रथ यात्रा में साथ-साथ चली। सभा की अध्यक्षता श्री नरेश जी विधायक, सिवनी कर रहे थे। वहाँ से केवलारी मंडला होकर घंसौर पहुँचे। घंसौर नगर वालों ने पूर्व से ही रथ के स्वागत की तैयारी कर रखी थी। लेकिन बरसात ने कारण वह जितना चाहते थे उतना कर नहीं पाये। फिर भी युवाओं ने हार नहीं मानी और बरसते पानी में भी शोभायात्रा निकाली। घंसौर से लखनादौन होकर छपारा पहुँचे। छपारा में मुनि श्री कुलंकरनंदि जी महाराज के सानिध्य में सभा हुई। नरसिंहपुर में मुनि श्री सम्मेदसागर जी महाराज का सानिध्य प्राप्त हुआ। इसी प्रकार से सभी लोगों को अपने से जोड़ता हुआ रथ निरन्तर आगे बढ़ता जा रहा था। एक स्थान पर एक सज्जन कहने लगे ये रथ सिर्फ पैसा एकत्र करने का साधन है लोगों ने इसे व्यवसाय बना लिया है। प्रत्युत्तर में मैंने कहा कि– भाई साहब आप ठीक कह रहे हैं यदि हम एकत्र नहीं करेंगे तो खर्च कहाँ से करेंगे और यदि हम तन-मन से इसे व्यवसाय नहीं बनायेंगे तो हमारा प्रोजेक्ट सफल नहीं होगा। तत्पश्चात् मैने पूछा आपने आज तक हमारे प्रोजेक्ट में कितना पैसा दिया, उत्तर में वे महाशय सर झुकाकर आगे बढ़ गये। वास्तव में आज समाज में करने वाले कम हैं कमी निकालने वाले ज्यादा है।

नरसिंहपुर से गाडरवारा, पिपरिया, चाँदामेटा, परासिया, छिंदवाड़ा, बैतूल, इटारसी, सिवनी मालवा, बानापुरा, होशंगाबाद, बाबई, ओबेदुल्लागंज, बाडी, बरेली, बम्हौरी, सिलवानी, गैरतगंज, गढ़ी, बेगमगंज, रायसेन, सलामतपुर होते हुए विदिशा पहुँचे।

विदिशानगर वालों ने रथ का बहुत सुन्दर स्वागत कर बहुत अच्छी शोभायात्रा निकाली। माननीय हृदयमोहन जी ने खूब श्रम व शक्ति लगाकर तीर्थ के लिए जन-जन का योगदान करवाया। गंजबासौदा नगर वालों ने पूरे मध्यप्रदेश प्रवर्तन में सबसे सुन्दर कार्यक्रम किया। सभा विधिवत झंडारोहण से प्रारंभ हुई। सभाध्यक्ष श्री कन्छेदीलाल जैन अध्यक्ष-नगरपालिका थे व मुख्य अतिथि श्री अजय सिंह रघुवंशी (पूर्व संसदीय मंत्री म.प्र. शासन), विशिष्ट अतिथि श्री वीरसिंह जी रघुवंशी (विधि विधायी मंत्री) थे। श्री कन्छेदीलाल जी ने अपने भाषण में कहा कि वास्तविकता यही है कि भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर है जो नहीं मानते है उन्हें भी एक न एक दिन इस सत्य को स्वीकार करना होगा। श्री कन्छेदीलाल अध्यक्ष नगरपालिका ने धनकुबेर बनने का सौभाग्य प्राप्त किया।

कुरवाई में माननीय कुलदीप जी न्यायाधीश महोदय ने रथ का स्वागत किया। मंडीबामौरा, सिरोंज, बैरासिया, पंचशीलनगर पिपलानीनगर होते हुए बड़नगर पहुँचे, यहाँ पर आचार्य श्री पद्मनंदी जी महाराज के ससंघ सानिध्य में सभा हुई। रतलाम, जाबरा, दालोदा होते हुए मंदसौर में पहुँचे। यहाँ पर मुनि श्री हेमन्तसागर महाराज व मुनि श्री विरागसागर जी महाराज का सानिध्य प्राप्त हुआ। पुनः मल्हारगढ़ व नारायणगढ़ होते हुए मनासा, जावद व नीमच पहुँचे। उस दिन वहाँ पर म.प्र. प्रवर्तन का समापन था। लगभग 250 नगरों में भ्रमण के पश्चात् समापन का कार्यक्रम मुनिश्री प्रमुखसागर जी महाराज व मुनि श्री प्रार्थनासागर जी महाराज के सानिध्य में हुआ। मुनिद्वय का बहुत-बहुत आशीर्वाद हम सभी को प्राप्त हुआ। इसी के साथ मध्यप्रदेश प्रवर्तन का कार्यक्रम धर्मप्रभावनापूर्वक आशातीत सफलता के साथ सम्पन्न हुआ और हमने राजस्थान प्रवर्तन हेतु प्रस्थान किया।

भजन

रचयित्री-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

वीर ज्योति, महावीर ज्योति, जगभर को प्रकाशे।
हम यही कामना करते हैं.........

कामना करते हैं, संसार में ऐसा यश फैले।
महावीर प्रभू की जन्मभूमि, कुण्डलपुर तीरथ अमर रहे।।
हम यही कामना करते हैं।। टेक.।।

जिस सात मंजिला नंद्यावर्त, महल में प्रभु ने जन्म लिया। महल में....
महावीर को देकर जन्म जहाँ, त्रिशला ने निज को धन्य किया।।त्रिशला...
उस कुण्डलपुर की पुण्यभूमि का, नाम युगों तक अमर रहे
हम यही कामना करते हैं..........।।1।।

महावीर जन्मभूमि पर जब, महावीर जयन्ती पर्व मना।महावीर....
महावीर ज्योति का किया प्रवर्तन, ज्ञानमती माता ने वहाँ।
महावीर की जय-जयकार के संग, धरती-अम्बर सब विनत रहें।
हम यही कामना करते हैं........।।2।।

इस ज्योति के नंद्यावर्त महल में, महावीर का पलना है। महावीर..
सबसे ऊपर प्रभु शांतिनाथ का, दर्शन-वंदन करना है।।
ऐसा ही महल कुण्डलपुर में, "चंदनामती" साक्षात् बने।
हम यही कामना करते हैं..........।।3।।

राजस्थान प्रवर्तन कार्यक्रम

राजस्थान की औद्योगिक नगरी कोटा से ज्योति प्रवर्तन का भव्यतापूर्वक शुभारंभ हुआ। गीता भवन में स्वागत सभा का आयोजन किया गया। ऐसा लगता था मानो पूरा कोटा नगर ही भगवान महावीर ज्योति के स्वागत के लिए उमड़ पड़ा हो। नगर के प्रमुख महानुभाव रथ के दर्शनार्थ पधारे। कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री रघुवीर सिंह जी कौशल ने की, मुख्य अतिथि श्री शांतिलाल जी धारीवाल (पर्यटन एवं सांस्कृतिक मंत्री) व महापौर श्री ईश्वरलाल साहू थे तथा विशिष्ट अतिथि श्रीमती पूनम गोयल विधायिका-सरदारपुरा थीं।

इस अवसर पर ज्योति प्रवर्तन के केन्द्रीय अध्यक्ष-कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन, महामंत्री-श्री अनिल कुमार जैन (कमल मंदिर) दिल्ली, कोषाध्यक्ष-श्री कैलाशचंद जैन, दिल्ली, मध्यप्रदेश प्रवर्तन महामंत्री-डॉ.अनुपम जैन (इंदौर), श्री बिजेन्द्र जैन-शाहदरा (दिल्ली), राजस्थान युवा परिषद के प्रदेश अध्यक्ष एवं महामंत्री-श्री उदयभान जैन (भरतपुर) तथा श्री दिलीप जैन-जयपुर आदि महानुभावों की उपस्थिति में अत्यन्त प्रभावपूर्ण उद्घाटन कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

सभा का शुभारंभ संयोजक विजय जैन (मेरे) के मंगलाचरण से हुआ। इस अवसर पर कर्मयोगी ब्र.श्री रवीन्द्र कुमार जैन ने अपने सारगर्भित प्रवचन के द्वारा कुण्डलपुर विकास की बात कही। डॉ. अनुपम जैन (इंदौर) का हृदयस्पर्शी वक्तव्य हुआ। समारोह के अध्यक्ष ने कहा कि यदि जन्मभूमियों का विकास संस्कृति की सुरक्षा है तो सबसे पहले आप उस विकास कार्य में मेरा नाम लिखें। महापौर ईश्वरलाल साहू ने कहा कि भगवान महावीर सिर्फ जैनियों के नहीं जन-जन के हैं। इन्हें धर्म की सीमाओं से न बांधे। अहिंसा सभी के लिए है इसलिए मैं भी जन्मभूमि के योगदान में पीछे नही रहूँगा, मेरा नाम भी लिखिये। इसी प्रकार से मंचासीन सभी लोगों ने अपना योगदान किया। माननीय मंत्री जी कहने लगे कि मैं पूर्णरूप से प्रयास करूँगा कि राजस्थान के प्रत्येक जिले में रथ को राजकीय सम्मान प्राप्त हो। इस कार्यक्रम का संचालन श्री रमेश तिजारिया ने किया व कार्यक्रम को सफल बनाने में राजमल पाटोदी (अध्यक्ष-दि. जैन समाज) व उत्तमचंद जी निर्खी का सराहनीय सहयोग रहा। कोटा की पाँच कालोनी में रथ प्रवर्तन हुआ। विज्ञाननगर, महावीर नगर प्रथम, तलवंडी, दादावाड़ी आदि स्थानों से होते हुए राजस्थान प्रवर्तन प्रारंभ हो गया। कैथून, राजस्थान, देवलीमांझी, सांगोद होते हुए चांदखेड़ी पहुँचे। यहाँ पर महावीर पार्क में अच्छा पंडाल बना हुआ था। उसी में स्वागत कार्यक्रम हुआ। शोभायात्रा शहर से क्षेत्र तक गयी। झालावाड़ होते हुए झालरापाटन नगर में रथ आगमन हुआ। यह स्थान अतिशय क्षेत्र है मंदिर का परिसर काफी बड़ा है अति उत्साहपूर्वक कार्यक्रम हुआ।

पिड़ावा, सुसनेर, भवानीमंडी होते हुए रथ रामगंजमंडी पहुँचा। मुनि श्री क्षमासागर जी महाराज व मुनि श्री भव्यसागर जी महाराज के सानिध्य में कार्यक्रम हुआ। रावतभाटा होते हुए बोराव नगर में आगमन हुआ। ऐलक श्री विनीतसागर महाराज व क्षुल्लक श्री विश्वजीत सागर जी महाराज का सानिध्य प्राप्त हुआ। डाबी होते हुए बिजौलिया क्षेत्र पर आगमन हुआ, यहाँ पर लोग बहुत नाराज थे। पदाधिकारी लोगों का कहना था कि माताजी क्षेत्र को श्वेताम्बर क्षेत्र कहती हैं तब मैंने समझाया कि ऐसी कोई बात ही नहीं है और अगर हम ऐसा समझते तो आप के यहाँ क्यों आते। कभी भी जो भ्रांति हो आप सब पूज्य माताजी के पास जाकर दूर कर लो तत्पश्चात् सभी लोग मान गये और क्षेत्र कमेटी की ओर से स्वागत किया। तलेडा होते हुए केशवरायपाटन पहुँचे। यहाँ पर उस समय बूँदी उत्सव चल रहा था शाम को क्षेत्र में खूब भीड़ होती है। क्षेत्र पर सभा हुई एवं शोभायात्रा पूरे नगर में घुमायी गयी।

कापरेन, लाखेरी, इन्द्रगढ़, देई होते हुए नैनवा पहुँचे। सभा गढ़चौक मैदान में हुई। विशाल पांडाल बना था। रथ पहुँचते ही खूब जय-जयकार के साथ स्वागत हुआ। जिधर नजर जाती थी उधर आदमी ही आदमी दिखता था। बहुत सुन्दर कार्यक्रम हुआ। बूँदी, बारां होते हुए अटरू नगर में पहुँचे यहाँ पर रथ का स्वागत श्री फूलचंद सैनी उप जिला कलेक्टर एवं श्री वी.डी. गोयल विकासखण्ड अधिकारी ने किया।

छीपाबडौद, अकलेरा, हिन्डौली, पेंच की बावड़ी, देवली, जहाजपुर, खजूरी, धामनिया, महुआ, मानपुरा, मांडलगढ़, बेगू, चेची, काकरियातलाई होते हुए चित्तौड़गढ़ पहुँचे। सभा केशव माधव सभागार में हुई। सभी वरिष्ठ लोगों ने मिलकर

रथ का स्वागत किया। शंभूनगर, निम्बाहेड़ा, भीलवाड़ा, कोटड़ी, पारोली, रोपा, पण्डेर, शाहपुरा होते हुए कोठिया पहुँचे। यहाँ पर मुनि श्री गौतम ऋषि जी महाराज का सानिध्य सभा में प्राप्त हुआ। गुलाबपुरा, विजयनगर होते हुए नसीराबाद पहुँचे। यहाँ पर मुनिश्री ज्ञानसागर जी महाराज का समाधिस्थल है। सरवाड़, जूनिया, केकड़ी होते हुए सावर, मेहरूकलां, बघेरा, टोरड़ासागर पहुँचे। यहाँ पर पहली बार कोई रथ आया है इसलिए देखने वालों की खूब भीड़ थी।

टोडारायसिंह, मालपुरा, पचेवर, डिग्गी, लावा, झराना, पीपलू, बगड़ी, निवाई होते हुए टोंक आगमन हुआ, यहाँ पर उत्साह ठीक था। रथ के स्वागत के लिए महावीर प्रसाद जैन विधायक पधारे। आवां ग्राम में श्री प्रभूलाल सैनी कृषि राज्य मंत्री राजस्थान ने रथ के संदर्भ में बहुत सुन्दर विचार रखे। दूनी होते हुए बनेठा ग्राम में आगमन हुआ। बनेठा वालों ने कुण्डलपुर के लिए खूब योगदान दिया और बहुत अच्छा स्वागत किया। उनियारा, चौथ का बरवाड़ा, सवाई माधोराजपुर होते हुए चमत्कारजी क्षेत्र पहुँचे। यहाँ पर भी रथ का स्वागत हुआ।

इन स्थानों में नैनवा में लोग रथ को लेने के लिए 1 किमी. पहले से आ गए थे, लगभग 500 लोगों की भारी भीड़ के मध्य जय-जयकारों से रथ का अभिवादन सभास्थल पर किया गया। शानदार शोभायात्रा निकाली गई। निम्बाहेड़ा में मुख्य अतिथि श्री शांतिलाल बड़जात्या (उपाध्याय-महासभा) ने पूज्य माताजी की प्रशंसा करते हुए कहा कि आज माताजी कुण्डलपुर विकास का जो कार्य कर रही हैं, वह अत्यन्त सराहनीय है, उनके समान कोई दूसरी साध्वी नहीं हैं जिन्होंने इतना साहित्य लिखा हो। शाहपुरा में समाज अध्यक्ष ने कहा कि पूज्य माताजी एक नहीं 11 हैं, जो कार्य 11 व्यक्ति नहीं कर पाए वह माताजी ने कर दिखाया है। टोडारायसिंह में उपाध्याय श्री संयमसागर जी महाराज के सानिध्य में भारी भीड़ के मध्य सभा सम्पन्न हुई। पूज्य महाराज जी ने कहा कि महिलाएँ एक साड़ी कम पहनें लेकिन कुण्डलपुर के विकास में अवश्य योगदान दें। महाराज जी पूरी शोभायात्रा में साथ-साथ चले।

राजस्थान की राजधानी जयपुर में भव्य स्वागत–

अब बारी थी जयपुर वालों की। गुलाबी नगरी कहलाने वाला यह स्थान जैनियों का गढ़ है। राजधानी वालों का मन एक दिन में कहाँ भरता, पाँच दिन तक पाँच कालोनियों में कार्यक्रम हुआ। मानों सारी नगरी कुण्डलपुरमय बन गयी हो। पहले दिन एम.आई.रोड स्थित चैम्बर्स आफ कामर्स के विशाल पांडाल में सभा हुई। उपस्थिति अच्छी थी। सभाध्यक्ष श्री के.एल. जैन व मुख्य अतिथि श्री महावीर प्रसाद जैन विधायक, टोंक थे। विशिष्ट अतिथि श्री मोहनलाल गुप्ता पूर्व महापौर वर्तमान विधायक थे।

इस अवसर पर पधारे थे ब्र.श्री रवीन्द्र कुमार जैन (अध्यक्ष केन्द्रीय समिति), श्री अनिल जैन (महामंत्री-कुण्डलपुर समिति) जयपुर से श्री ज्ञानचंद झांझरी (अध्यक्ष-राजस्थान प्रवर्तन समिति), उदयभान जैन (महामंत्री-प्रांतीय समिति) दिलीप जैन (मंत्री-प्रवर्तन समिति राजस्थान) श्री राजेन्द्र जैन-गोधा (अध्यक्ष-जयपुर आयोजन)।

सभा का शुभारंभ समता बोधिका के मंगलाचरण से हुआ। तत्पश्चात् मुख्य अतिथि द्वारा दीप प्रज्वलन हुआ। सभी का स्वागत अंग वस्त्र पहनाकर हुआ। इस अवसर पर पधारे सभी अतिथियों का स्वागत श्री ज्ञानचंद झांझरी ने किया तथा सभी के प्रति कृतज्ञता भी ज्ञापित की। इसी क्रम में समिति के अध्यक्ष ब्र.रवीन्द्र कुमार जैन ने कुण्डलपुर तीर्थ से सभी को परिचित करवाया। सभी मंचासीन वक्ताओं ने खूब बढ़-चढ़कर अपने विचार रखे। अंत में श्री मोहनलाल गुप्ता विधायक जी ने कहा कि हमारे जयपुर में कम से कम 25000 घर जैन समाज के हैं यदि माताजी कहें तो हम यहीं से कुण्डलपुर का निर्माण कर दें। तत्पश्चात् शोभायात्रा निकाली गई। यहाँ की शोभायात्रा में हाथी, घोड़े, ऊँट आदि भी चल रहे थे।

इसी क्रम में मालवीय नगर, जवाहर नगर, महावीर नगर, मानसरोवर व राजावत फार्म इन कालोनियों में प्रभावना पूर्वक कार्यक्रम सम्पन्न हुए। राजावत फार्म का कार्यक्रम हमारी लिस्ट में नहीं था। लेकिन यहाँ के मंत्री महोदय श्री कमल काला जी के विशेष प्रयास से हम रथ लेकर पहुँचे यहाँ पर मंदिर निर्माणाधीन है फिर भी कार्यक्रम उत्साहपूर्वक हुआ। सभी लोग रथ को इतनी ठंड में भी सांगानेर तक पहुँचाने गये। सांगानेर, प्रतापनगर, पदमपुरा होते हुए कोटखावदा

पहुँचे। यहाँ पर बहुत अच्छा उत्साह था। आज यहाँ कुन्दकुन्द हाल का उद्घाटन भी होना था। वैसे तो दो दिन बाद उद्घाटन होना था लेकिन वहाँ के कार्यकर्त्ताओं ने सोचा कि इससे सुन्दर अवसर कब आयेगा? और मुझसे तथा पं. जी से फीता कटवा कर उद्घाटन किया तथा बहुत प्रसन्न हुए। छोटा सा गाँव है लेकिन भक्ति खूब है। एक व्यक्ति ने सभा में खड़े होकर कहा कि सबसे पहले 9 नाम मेरे घर के लिखो कुण्डलपुर के लिए। लालसोंठ होते हुए गंगापुर सिटी पहुँचे। यहाँ पर रथ का स्वागत करने आये एस.डी.एम.श्री ललित अग्रवाल। महावीर जी अतिशयक्षेत्र होते हुए हिण्डोन सिटी पहुँचे। कम समाज होते हुए भी रथ के स्वागत के लिए बैण्ड बाजे के साथ पूरी समाज इंतजार कर रही थी। पहुँचते ही खूब स्वागत हुआ। बयाना में रथ के स्वागत के लिए उप जिला कलेक्टर श्री अनिल जैन पधारे एवं आर्यिका श्री कनकश्री माताजी ने अपना सानिध्य प्रदान किया। धौलपुर में क्षुल्लक श्री प्रौढ़सागर जी महाराज रथ के साथ-साथ पूरी यात्रा में चले। मनियां, राजाखेड़ा, डींग, कुम्हेर, भरतपुर, कामा, जुरहरा, पहाड़ी, सीकरी, गोविन्दगढ़ होते हुए रामगढ़ पहुँचे। रामगढ़ में रथ के स्वागत के लिए एस.डी.एम. श्री राजेश वर्मा व तहसीलदार श्री मदेरणा नायब आये। नौगांव होते हुए फिरोजपुर झिरका पहुँचे। यहाँ पर रथ के स्वागत के लिए सभी ने प्रतिष्ठान बंद रखे। रथ के शोभायात्रा मार्ग में 50 स्थानों पर गेट लगे थे। मुख्य अतिथि श्री ताराचंद जी प्रेमी थे।

तिजारा जी क्षेत्र वालों ने भी शोभायात्रा निकाली। अलवर नगर वालों ने खूब प्रचार-प्रसार किया हुआ था, बहुत प्रभावशाली कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। शोभायात्रा में कई झाँकिया थी एवं बैण्ड बहुत अच्छा था। पूरे कार्यक्रम में पदमचंद नृपत्या जी का बहुत सहयोग रहा। बड़ौदामेव, लक्ष्मणगढ़, कठूमर, खेडली होते हुए महवा पहुँचे। महवा सभा में मुख्य अतिथि श्री देवेष देवल उपखण्ड अधिकारी व राजेन्द्र सिंह राठौर उपाधीक्षक पुलिस थे। राजगढ़, बांदीकुई, सिकन्दरा, दौसा, छारेड़ा, रैनवालचित्तौड़ा, माधोराजपुरा, फागी होते हुए चौरू पहुँचे। यहाँ पर मुनि श्री गुणसागर जी महाराज, आर्यिका श्री आदिमती माताजी, आर्यिका श्री श्रुतमती माताजी व आर्यिका श्री सुबोधमती माताजी विराजमान थीं। फागी में आर्यिका श्री सुपार्श्वमती माताजी के सानिध्य में सभा हुई।

मौजमाबाद, दूदू, नरेना, सांभरलेक, किशनगढ़ रैनवाल, जोबनेर होते हुए फुलेरा पहुँचे। इन सभी स्थानों पर प्रत्येक व्यक्ति में खूब उत्साह था। सभा में खूब उपस्थिति थी। शोभायात्राएं बहुत अच्छी निकलीं। फुलेरा में श्री सौभाग्यमल जी रांवका का बहुत योगदान रहा। सभी महिलाएँ केशरिया वस्त्र एवं पुरुष सफेद वस्त्रों में थे ठीक सांभरलेक जैसा दृश्य था। शोभायात्रा में बच्चे आगे-आगे पंचरंगी ध्वजा लेकर चल रहे थे, महिलाएँ 'गर्बा' नृत्य करती हुई चल रही थीं। चौमू, विराटनगर होते हुए सीकर नगर में रथ का आगमन हुआ। सभा दीवान जी की नशिया में हुई। श्री ज्ञानचंद जी झांझरी (अध्यक्ष-राज. प्रवर्तन समिति) पधारे व श्री प्रभू दयाल पहाड़िया, श्री शशि दीवान, श्री महावीर प्रसाद (लालास वाले) विशिष्ट अतिथि थे। इन सभी ने मिलकर खूब प्रभावनापूर्वक कार्यक्रम करवाया। श्री ज्ञानचंद जी झांझरी ने कुण्डलपुर विकास को पूज्य माताजी की सुन्दर योजना बताते हुए हम सभी के प्रति धन्यवाद ज्ञापित किया। श्री महावीर प्रसाद जी ने कहा कि मैं तो माताजी के अनन्य भक्तों में से हूँ, उनके जैसी दूरदर्शिता किसी अन्य में नहीं है। इस प्रकार की रथयात्रा के माध्यम से जन्मभूमि विकास का जो सुन्दर कार्य माताजी सम्पन्न करा रही हैं वह अत्यन्त प्रशंसनीय है। धौंत, दांता, सुरेरा, खाचरियावास, बाय, कोछोर, रानोली, चूरू, फतेहपुर शेखावटी, सुजानगढ़, लाडनू, डेह होते हुए नागौर नगर में आगमन हुआ। कई बार मना करने के बावजूद भी मैं रथ को नगर में लेकर पहुँचा। रात्रि में मीटिंग हुई, खूब बहस हुई, लेकिन मैंने सभी को संतुष्ट कर दिया। अनन्तर शानदार कार्यक्रम हुआ। मेड़तारोड में आर्यिका श्री सम्मेदशिखरमती माताजी व आर्यिका श्री कैलाशमती माताजी विराजमान थीं। मेड़तासिटी होते हुए कुचामन सिटी आये। यहाँ पर उस दिन एक सत्र का समापन था इसलिए स्टाफ के सभी लोग बहुत खुश थे। सभा में श्री सुरेश अग्रवाल (अध्यक्ष-नगर पालिका), श्री हरिश कुमावत (विधायक) व श्री श्यामसुन्दर जी काबरा (जिलाध्यक्ष-भाजपा) थे। सभी ने रथ के संदर्भ में बहुत अच्छे विचार रखे। माननीय श्री विधायक जी ने कहा कि यदि महावीर जन्मभूमि में मेरा कुछ भी योगदान हो सके, तो मैं अपने आपको सौभाग्यशाली समझूँगा।

मीटड़ी, नावाँ सिटी, मकराना, अजमेर, जोधपुर, मदनगंज, किशनगढ़, पीसांगन, ब्यावर होते हुए आनंदपुर कालू

पहुँचे। यहाँ वालों ने खूब उत्साहपूर्वक कार्यक्रम किया एवं सर्वाधिक राशि कुण्डलपुर के लिए प्रदान की। नीमाज, पाली, आबूरोड से उदयपुर जिले का प्रवर्तन प्रारंभ हो गया। ओगणा, खाखड़, झाड़ोल (फ.) कोल्यारी, क्छिीवाड़ा, फलासिया, बावलवाड़ा, नयागांव, छाणी, खैरवाड़ा होते हुए ऋषभदेव केशरिया जी पहुँचे। यहाँ पर कार्यक्रम अच्छा हुआ। गुरुकुल में सभा हुई। श्री नानालाल जी आहरी विधायक ने रथ का स्वागत कर अपनी शुभकामनाएं व्यक्त की। यहाँ की प्रतिमा बहुत प्राचीन है हम सबने उस दिन अभिषेक किया। परसाद, चावण्ड, सराडा, बड़गाँव होते हुए देवपुरा पहुँचे। यहाँ पर उस दिन महावीर जयंती थी, काफी बड़ा पंडाल लगा हुआ था। दिन में सभा हुई। खूब उपस्थिति थी। पूरी समाज का सामूहिक भोज था। रात्रि में कवि सम्मेलन था। कार्यक्रम बहुत उत्साहपूर्वक मनाया गया। शोभायात्रा बहुत अच्छी निकली। पिलादर, झाड़ोल (स.), सल्लाड़ा होते हुए बस्सी पहुँचे। मुनि श्री निर्वाणसागर जी महाराज ने रथ का अवलोकन किया। जावद, अदवास, नई झर, जगत, उथरदा, खरका, ओखाड़िया, गींगला, गुडेल, करावली होते हुए सलुम्बर नगर में पहुँचे।

सलुम्बर में आचार्य श्री सन्मतिसागर जी महाराज के ससंघ सानिध्य में रथ की स्वागत सभा हुई। सेरिया, डाल, टोडा, बडावली, इन्टालीखेड़ा, डगार, राठौड़ा, कुंडा, सेमारी, कल्याणपुर, टोकर, गुडा, हथाई, रामगढ़ होते हुए आसपुर पहुँचे। इधर लगभग 50 गांवों में रथ का भ्रमण हुआ। झल्लारा, मुंगेड, साबला होते हुए पालोदा पहुँचे। पालोदा ग्राम में पूज्य आर्यिका श्री सुप्रकाशमती माताजी के सानिध्य में सभा हुई। उस दिन अक्षयतृतीया का जुलूस भी रथ के साथ ही निकाला पुनः लोहारिया से गनोड़ा पहुँचे। गनोड़ा में आचार्य श्री विपुलसागर जी व मुनि श्री रविसागर महाराज के सानिध्य में सभा हुई। भीमपुर, चंदूजी का गढ़ा, बांसवाड़ा होकर खांदूकालोनी पहुँचे। खांदूकालोनी में बालाचार्य श्री योगीन्द्र सागरजी महाराज के ससंघ सानिध्य में पूर्व में सभा हुई। प्रातः पूज्य महाराज जी ने रथ के दर्शन किये। खांदूकालोनी से तलवाड़ा, गढ़ी, परतापुर, आंजना, बोरी, अरथूना, डडूका, नौगामा होते हुए हम रथ लेकर बागीदौरा पहुँचे। बागीदौरा नगर में पूर्व रात्रि में गौशाला में सभा हुई। रात्रि विश्राम भी यहीं पर हुआ। प्रातः विशाल शोभायात्रा ने नगर भ्रमण किया। जिसमें मुनि श्री आज्ञासागर जी महाराज दर्शन के लिए पधारे और रथ की सारी टीम को खूब आशीर्वाद प्रदान किया।

मुख्यमंत्री श्रीमती वसुन्धरा राजे ने किया रथ का दर्शन–

आज यहाँ पर मुख्यमंत्री जी को एक सभा को सम्बोधित करने आना था, मैंने भी सोचा कि जब माननीय मुख्यमंत्री यहाँ आ रही हैं तो रथ पर भी आयें, मात्र इस भावना को लेकर जहाँ पर सभा थी वहाँ पर मैं पहुँच गया, मैंने जब कमिश्नर साहब से कहा तो कमिश्नर साहब कहने लगे कि मिस्टर जैन! आप क्या कह रहे हैं आपको पता है? मैंने कहा सर! 99 प्रतिशत ना है ही परन्तु 1 प्रतिशत उम्मीद तो है और उसी एक प्रतिशत उम्मीद के बल पर मैं मुख्यमंत्री जी से मिलना चाहता हूँ। कमिश्नर साहब बोले मुझे तो कोई एतराज नहीं है आप डी.एम. से मिल लें। मैं डी.एम. से मिला। वहाँ पर भी स्वीकृति मिल गई। मैं मुख्यमंत्री के पी.ए. से मिला, कार्य हो गया। मैं सभी चैनलों से होता हुआ आंधे घंटे के अंदर मुख्यमंत्री महोदया से मिल लिया और रथ पर आने की स्वीकृति भी मिल गयी। देखते ही देखते फोर्स ने रथ को घेर लिया। झेड प्लस सिक्योरिटी के द्वारा रथ अपने कब्जे में ले लिया गया। सभी फारमेल्टी होने लगी। मुझे तो अभी तक विश्वास नहीं हो रहा था कि मुझे स्वीकृति मिल गई है, ऐसा लग रहा था जैसे स्वप्न देख रहा हूँ। मुझे मंच पर आमंत्रित किया गया और मेरे द्वारा मुख्यमंत्री जी का स्वागत करवाया गया। तत्पश्चात् मुख्यमंत्री जी के भाषण हुए, उसके पश्चात् माननीय मंत्री जी रथ पर पधारीं। मैंने हाथ पकड़कर रथ पर चढ़ाया एवं माननीय मंत्री जी ने स्वस्तिक बनाया, आरती की एवं पालना झुलाया। तत्पश्चात् रत्नों की वृष्टि की और प्रदेश की जनता की खुशहाली हेतु मंगलकामना की और कहने लगीं कि आज के इस हिंसावादी युग के लिए यह ज्योति रथ वरदानस्वरूप है। इसी शुभकामना के साथ वे प्रस्थान कर गयीं। आज ऐसा योग था कि जहाँ पर मैं गया तुरंत कार्य हो गया, शायद यह पूज्य माताजी का आशीर्वाद ही था।

कलिंजरा में मुनि श्री अमितसागर जी महाराज के ससंघ सानिध्य में सभा हुई। अंदेश्वर पार्श्वनाथ, कुशलगढ़,

बड़ौदिया, खमेरा, घाटोल होते हुए नरवाली पहुँचे। यहाँ पर आचार्य श्री कनकनंदी जी महाराज रथ के दर्शन को पधारे। पारसोला नगर में आचार्य श्री वर्द्धमानसागर जी महाराज ससंघ, आचार्य श्री रयणसागर महाराज व गणिनी आर्यिका श्री सुपार्श्वमती माताजी ससंघ दर्शनों के लिए रथ के समक्ष आये। शाम को स्वागत सभा हुई। **आचार्यश्री रयणसागर जी महाराज ने कहा कि माताजी ने अनेक ऐतिहासिक कार्य किये हैं, कुण्डलपुर तीर्थ का विकास उन्हीं कार्यों में से एक है। महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर के सिवा और कहीं हो ही नहीं सकती है। इसी क्रम में आचार्यश्री वर्द्धमानसागर जी महाराज ने अपने प्रवचन में कहा कि माताजी के रूप में समाज को ऐसा मष्तिष्क प्राप्त हुआ है जो आगम का खजाना है, मैंने आज तक कुण्डलपुर नहीं देखा है लेकिन मुझे खुशी है कि अब विकसित कुण्डलपुर देखूँगा।** सभी साधुओं ने रथ का दर्शन किया। रथ मुंगाणा, खूंता होते हुए धरियावदं पहुँचा। पूर्व रात्रि में रोड पर सभा हुई, उपस्थिति अच्छी थी। पं. हसमुख जी की अध्यक्षता में सभा सम्पन्न हुई।

प्रतापगढ़, पादरडी बड़ी, सरौदा, सागवाड़ा, भीलूड़ा, जेठाणा, पाड़वा, भासोर, कोकापुर, बनकोड़ा, कतिसोर, पुनर्वास कालोनी, डूंगरपुर होते हुए चितरी ग्राम में पहुँचे। यहाँ पर मुनि श्री रविनंदी जी महाराज व आर्यिका श्री संयम श्री माताजी का पावन सानिध्य प्राप्त हुआ। कुंआ, पीठ, ओबरी, घाटा का गाँव, ठाकरड़ा, आंतरी, बरदा, सालाथाना, कनबा, छापी, बिछीवाड़ा, देवल होते हुए 280 नगरों के भ्रमण के पश्चात् 23 मई 2004 को झीलों की नगरी उदयपुर पहुँचे। यहाँ पर राजस्थान प्रवर्तन का समापन का कार्यक्रम था। समाज में बहुत उत्साह था। सभा सुखाड़िया रंगमंच के ऑडिटोरियम हॉल में हुई। सभाध्यक्ष श्री झम्मकलाल टाया थे। मुख्य अतिथि श्री गुलाबचंद्र जी कटारिया (सार्वजनिक निर्माणमंत्री राजस्थान सरकार) थे। विशिष्ट अतिथि श्रीमती किरण माहेश्वरी (नवनिर्वाचित सांसद-उदयपुर) व श्री वीरेन्द्र कुमार बोदिका (आई.पी.एस.पुलिस महानिरीक्षक उदयपुर रेंज), श्री ताराचंद जैन (अध्यक्ष भाजपा-उदयपुर शहर) थे। उपस्थिति ठीक थी। श्री महावीर जी मिण्डा ने अपने भाषण द्वारा सभी का स्वागत किया एवं कहा कि आज हम जिस प्रकार से द्यानतराय जी का नाम पूजाओं में लेते हैं कुछ समय बाद उसी प्रकार से गणिनी ज्ञानमती माताजी का नाम लिया जायेगा। सांसद श्रीमती माहेश्वरी ने सारे नगर की जनता की तरफ से रथ का स्वागत किया। माननीय कटारिया जी ने रथ पर स्वास्तिक अंकित कर अपनी शुभ कामनाएं व्यक्त की। अंत में संयोजक विजय जैन ने (मैंने) सारे प्रदेश की जनता को धन्यवाद दिया। सम्पूर्ण राजस्थान प्रवर्तन का रूट बनवाने का कार्य भाई दिलीप जी एवं उदयभान जी ने किया जो धन्यवाद के पात्र हैं उन्होंने अपना कीमती समय दिया उसके लिए समिति की तरफ से धन्यवाद। उदयपुर कार्यक्रम को सफल बनाने में श्री शांतिलाल नागदा (अध्यक्ष), श्री देवेन्द्र छाप्या (मंत्री), पंकज कोठारी (अध्यक्ष-उदयपुर युवा परिषद) का भी काफी सहयोग प्राप्त हुआ। इस प्रकार से लगभग 280 नगरों में महावीर ज्योति प्रवर्तन हुआ और राजस्थान प्रवर्तन का अत्यन्त उत्साहपूर्वक समापन हो गया।

धरती के स्वर्ग-जम्बूद्वीप रचना का दर्शन करें

पूज्य गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से हस्तिनापुर (मेरठ-उ.प्र.) में निर्मित जैन भूगोल की अद्वितीय रचना 'जम्बूद्वीप' का दर्शन अवश्य करें। उ.प्र. पर्यटन् ने इस रचना को हस्तिनापुर की विशिष्ट पहचान बताते हुए इसे 'अतुलनीय मानव निर्मित स्वर्ग' की संज्ञा प्रदान की है।

त्रिमूर्ति मंदिर, कमल मंदिर, ध्यान मंदिर, ॐ मंदिर, सहस्रकूट मंदिर, कैलाशपर्वत मंदिर इत्यादि रचनाओं से समन्वित जम्बूद्वीप परिसर में पधारने वाले यात्रियों के आवास एवं भोजन इत्यादि की समुचित व्यवस्था उपलब्ध है। हरे-भरे पार्कों के बीच प्राकृतिक सौन्दर्य का रसास्वादन करते हुए आत्म सौन्दर्य का पान करने हेतु अवश्य पधारें।

–पता–

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान

जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर(मेरठ)उ.प्र.250404

फोन-(01233) 280184, 280236

उत्तरप्रदेश प्रवर्तन कार्यक्रम

उत्तरप्रदेश को गौरव प्राप्त है अनन्तानंत तीर्थंकरों की जन्मभूमि होने का क्योंकि उसी के आंचल में बसा है शाश्वत तीर्थ अयोध्या और साथ ही एक विशेष बात यह भी है कि जिन पूज्यनीय माताजी की पावन प्रेरणा से इस ज्योति रथ का प्रवर्तन हो रहा है उन माताजी की जन्मभूमि भी इसी उत्तरप्रदेश की टिकैतनगर (जि. बाराबंकी में) नामक धर्मपरायण नगरी है जहाँ से आज भी त्यागमार्ग की परम्परा चालू है और जिसका प्रारंभीकरण बीसवीं शताब्दी की प्रथम बाल ब्रह्मचारिणी परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने किया है। उस गौरवशाली प्रदेश में जब हमें रथ लेकर जाने का अवसर प्राप्त हुआ तो हम और हमारा स्टॉफ सभी आनन्दित हो उठे कि अभी जब भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार रथ का प्रवर्तन हुआ तो हमें उन पवित्र भूमियों की चरणरज माथे पर लगाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था और एक बार फिर से हमें यही सौभाग्य प्राप्त हुआ है। भगवान महावीर ज्योति का उत्तरप्रदेश प्रवर्तन मथुरा चौरासी सिद्धक्षेत्र जम्बूस्वामी का दर्शन करके प्रारंभ किया गया। कोसीनगर को प्रथम प्रवर्तन का सौभाग्य प्राप्त हुआ। अलीगढ़ होते हुए हम सब आगरा पहुँचे। आगरा दिगम्बर जैन का प्रथम कार्यक्रम शालीमार एन्क्लेव में हुआ। यहाँ से भव्य शोभायात्रा निकाली गई। आगरा दिगम्बर जैन परिषद के तत्त्वावधान में दो दिन का कार्यक्रम रखा गया। आगरा में हम लोग राजा मंडी कार्यक्रम के लिए वहाँ के अध्यक्ष से मिलने गये। बहुत देर ढूढ़ने के बाद वे मिले। हम लोग बैठे तो उन्होंने परिचय पूछा, हमने बताया कि कुण्डलपुर से रथ लेकर आये हैं। कल प्रातः उसकी शोभायात्रा आपके यहाँ है। अध्यक्ष महोदय कहने लगे–पंडित जी! रथयात्रा के चक्कर में अडवानी मर गया और आप लोगों का भूत अभी भी नहीं उतरा। पंडित जी बोले–अरे! भगवान उसकी आत्मा को शांति दे। भैय्या हमारे रथ पर तो चार स्थान हैं जिनकी बोलियाँ कल सभा में लगेंगी। अध्यक्ष जी बोले–पंडित जी! हमें तो सिर्फ यह बताया है कि आपके पास एक बड़ा रथ है और 40 आदमी का बैण्ड है जो महाराज के विहार में आगे-आगे चलेंगे। पंडित जी थोड़ा सा मुस्कराकर बोले–हमारे पास 11 आदमी का स्टाफ है एक संचालक, एक संयोजक इस प्रकार से 13 आदमी हैं। 40 तो हैं नहीं, लेकिन आपको जो-जो बजवाना है ये बजा देंगे। जैसे कहोगे वैसे बजा देंगे और बजाकर चले जायेंगे। आज भी वह घटना याद आती है तो हम खूब हँसते हैं। सारा स्टाफ हँसते-हँसते लोटपोट हो जाता है। प्रातः बिना बोलियों के ही शोभायात्रा निकली। मुनि श्री विकर्षसागर जी महाराज व मुनि श्री विशोकसागर जी महाराज रथ के आगे-आगे चल रहे थे। खूब उपस्थिति थी। रथयात्रा का समापन पत्तलगली में हुआ। यहाँ से रथ फिरोजाबाद पहुँचा। पूर्व संध्या में सभा चंदाप्रभू दि. जैन मंदिर में हुई। उपस्थिति ठीक थी। सभाध्यक्ष श्री सुरेन्द्र कुमार जैन व मुख्य अतिथि प्रो. श्री पी.के. जैन, एडवोकेट श्री अनूपचंद जैन एवं विशिष्ट अतिथि प्राचार्य श्री नरेन्द्रप्रकाश जैन थे। रात्रि में ही रथ पर बैठने वालों का चयन हो गया। प्रातः चंदाप्रभू मंदिर से शोभायात्रा प्रारंभ हुई। मनीष आसीजा नगरपालिका अध्यक्ष ने रथ को हरी झंडी दिखाकर प्रवर्तन किंया। शोभायात्रा छदामीलाल जैन मंदिर तक गयी। विजय जैन (देवता ग्लास) का अच्छा सहयोग प्राप्त हुआ। एत्मादपुर, जलेसर, कासगंज होते हुए एटा पहुँचे। यहाँ पर मुनि श्री समताभूषण जी व क्षुल्लक निशंकसागर जी महाराज के सानिध्य में कार्यक्रम हुआ तथा जलेसर में मुनि श्री गुलाबभूषण जी महाराज के सानिध्य में कार्यक्रम हुआ। कुरावली, भोगांव होते हुए मैनपुरी पहुँचे।

मैनपुरी में प्रातः 8 बजे सभा बड़े मंदिर जी में बने विशाल पंडाल में हुई। सभा का शुभारंभ झंडारोहण से हुआ। झंडारोहण श्री प्रेममोहन जी ने किया। पं. श्री शिवचरणलाल जी जैन ने सभी का स्वागत अपने वक्तव्य द्वारा किया। डा. सुशील जैन ने मंच संचालन किया। सभा का माहौल बहुत अच्छा था। श्री महेशचंद्र वर्मा (नगरपालिका अध्यक्ष) ने हरी झंडी दिखाकर शोभायात्रा का शुभारंभ किया। शोभायात्रा में सभी समाज ने रथ का स्वागत किया। जगह-जगह रथ का खूब स्वागत हुआ। घिरोर, अराव, शिकोहाबाद, सिरसागंज, जसवंतनगर, इटावा, करहल इन सभी स्थानों पर रथ का भावभीना स्वागत हुआ पुनः कन्नौज होते हुए रथ कानपुर महानगर पहुँचा।

कानपुर महानगर में प्रवेश काकादेव मंदिर से हुआ। यहाँ पर रथ की आरती होनी थी लेकिन सभी ने बोलियाँ लेकर पूरा कार्यक्रम किया। अगले दिन जनरलगंज बड़ा मंदिर में सभा हुई। सभा की अध्यक्षता श्री पदमचंद जैन ने की व मुख्य अतिथि श्री त्रिभुवन जैन व अनिल जैन थे। शोभायात्रा जनरलगंज से करांची खाने तक गयी। यहाँ पर रविबाबू ने आरती

कर तीर्थ विकास में योगदान दिया। दूसरे दिन आनंदपुरी मंदिर में रथ की सभा हुई। श्री महेन्द्र कटारिया ने सभा की अध्यक्षता की। शोभायात्रा में कई लोगों ने अपने द्वार पर आरती कर 2601रु. की राशि प्रदान की। मध्यान्ह में सीसामऊ मंदिर व मेरे निवास पी.रोड पर रथ का स्वागत कर आरती की गई व तीर्थ विकास में योगदान प्राप्त हुआ। शाम को लालबंगला में रथयात्रा सम्पन्न हुई। पूरे कार्यक्रम में श्री श्रीपाल जैन का काफी योगदान प्राप्त हुआ। बाराबंकी में माननीय श्री एस.पी. साहब ने हरी झंडी दिखाकर शोभायात्रा का शुभारंभ किया। सुमेरगंज होते हुए रथ पूज्य माताजी की जन्मभूमि टिकैतनगर पहुँचा। यहाँ पर रथ का भव्य स्वागत हुआ। उस दिन सर्वत्र टिकैतनगर में खुशी का माहौल था। सभी के चेहरे प्रसन्नता से भरे हुए थे, ऐसा लग रहा था मानो साक्षात् माताजी ही अपने संघ सहित इस नगर में आ गई हैं। समस्त जैन समाज ने उस दिन अपने प्रतिष्ठान बंद कर रखे। भरतसेना टिकैतनगर के युवा कार्यकर्ता भाई श्री निकलंक कुमार जैन ने बताया कि जिस दिन से हमको रथप्रवर्तन की सूचना मिली थी। हमने बहुत सुन्दर रूपरेखा बनाई थी। परन्तु 5-6 दिन से लगातार हो रही बारिश ने हमारे सारे मनसूबों पर पानी फेर दिया था।

बस! मन में एक ही इच्छा थी कि जिस प्रकार हमने भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार का भव्य स्वागत किया था वैसा ही स्वागत इस बार भी करें लेकिन बारिश थी कि रुकने का नाम ही नहीं ले रही थी। फिर हम सबने एक स्वर से भगवान महावीर एवं पूज्य माताजी से प्रार्थना करनी शुरू कर दी कि हम सब की साख बनी रहे और हम भी इस प्रवर्तन में अपना कुछ सहयोग प्रदान कर पुण्य के भागी बन सकें, बस! जिस रात्रि में रथ आगमन होना था उसकी संध्या पर 5 दिन तक भाई गई भावना फलीभूत हुई और सूर्य देवता ने प्रकट होकर मानो हमें आश्वासन दे दिया कि अब कोई चिन्ता मत करो, सब ठीक होगा और वास्तव में अगले दिन सब ठीक-ठाक था, दिन खुल गया था।

भरत सेना वालों ने अथक परिश्रम कर रात की रात में चारों फाटक पर अनेकों गेट बनवा दिये किन्तु वर्षा के कारण हुई असुविधाओं के चलते सभा मंदिर जी के प्रांगण में हुई। अतीव उत्साह के साथ लोगों ने ज्योतिरथ की अगवानी करके नगर प्रवेश कराया।

प्रातःकालीन सभा के सभाध्यक्ष थे-कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन (राष्ट्रीय अध्यक्ष महावीर ज्योति) एवं विशिष्ट अतिथि थे–वास्तुशास्त्री श्री पवन पापड़ीवाल-औरंगाबाद (महाराष्ट्र)।

यह भी एक संयोग ही था कि इस रथ प्रवर्तन में पूज्य माताजी की संघस्थ बहनों में से अभी तक किसी भी सभा को किसी भी बहनजी का सानिध्य नहीं प्राप्त हुआ था किन्तु संयोगवश यहाँ ब्र. कु. इन्दु बहन जी उपस्थित थीं अतः हम सभी के आग्रह से वह भी सभा में पधारीं और सभा का शुभारंभ कु. इन्दु बहन जी के मंगलाचरण से हुआ। इससे पूर्व जब समवसरण रथ घूमा था तब संघस्थ बहनें 15-20 दिन साथ में रहकर अनेक नगरों में अपने धर्मप्रवचनों से भक्तिगंगा प्रवाहित कर सभी को समवसरण की महिमा बताती थीं और अनेक लोग उनसे लाभान्वित होते थे किन्तु माताजी के निरन्तर विहार एवं अनेक आयोजनों के कारण इस प्रवर्तन में हमें संघस्थ बहनों का सानिध्य नहीं प्राप्त हो सका जिसका कभी-कभी हम लोगों को खेद भी रहा है।

शोभायात्रा लगभग 4 घंटे तक नगर के चारों फाटकों में घुमाई गई। पूरे रास्ते जैन-जैनेतर सभी में प्रसाद रूप में 4 कुंतल हलुवा वितरित किया गया और जगह-जगह फल आदि भी बांटे गये।

समस्त कार्यक्रम में भरतसेना-टिकैतनगर का विशेष सहयोग प्राप्त हुआ और अति प्रभावना के साथ सुन्दर कार्यक्रम सम्पन्न हुआ पुनः दरियाबाद होते हुए रथ तहसील फतेहपुर पहुँचा।

फतेहपुर में सभा अशोक जैन की राइस मिल पर हुई। उपस्थिति अच्छी थी। सभाध्यक्ष ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन (अध्यक्ष महावीर ज्योति रथ) थे, मुख्य अतिथि श्री उमेश मिश्रा (जिलाधिकारी), विशिष्ट अतिथि श्री गिरीशचंद (मुख्य पुलिस अधीक्षक) एवं श्री पवन जैन पापड़ीवाल (औरंगाबाद) थे। श्री सरोज जैन (प्रधान मंत्री-अयोध्या तीर्थक्षेत्र कमेटी) ने पूरे अवध का सबसे अच्छा कार्यक्रम किया व रथ का खूब स्वागत कर विशाल शोभायात्रा निकाली। त्रिलोकपुर, सीतापुर, सिधौली, बिसवां, महमूदाबाद, पैतेपुर, बेलहरा, गणेशपुर, जरवलरोड होते हुए बहराइच पहुँचे। यहाँ पर डॉ. बाकर अहमद शाह (अध्यक्ष-उत्तरप्रदेश विधानसभा) ने रथ प्रवर्तन किया । श्रावस्ती भगवान संभवनाथ की जन्मभूमि

है वहाँ पहुँचने पर कमेटी के लोगों ने रथ की आरती की एवं क्षेत्र कमेटी की तरफ से रथ का स्वागत किया। इटियाथोक, गौंडा होते हुए फैजाबाद पहुँचे। यहाँ पर ऋषभदेव पार्क में सभा हुई। सभा में मुख्य अतिथि श्री आर.डी. मिश्रा (भूतपूर्व कुलपति संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय, बनारस) एवं विशिष्ट अतिथि श्री विजय कुमार गुप्ता (नगर पालिका अध्यक्ष) थे। कार्यक्रम का कुशल संचालन प्रो. विजय कुमार जैन ने कियां। अयोध्या भगवान ऋषभदेव सहित पाँच तीर्थंकरों की जन्मभूमि है यहाँ भी कार्यरत कमेटी द्वारा रथ का भावभीना स्वागत हुआ। रायबरेली, जायस, कटरा मेदनीगंज, प्रतापगढ़ होते हुए मेरठ में रथ का आगमन हुआ। सदर बाज़ार स्थित दिगम्बर जैन मंदिर में सभा हुई। शोभायात्रा पूरे नगर में घुमायी गयी। इसके पश्चात् रथ जम्बूद्वीप हस्तिनापुर पहुँचा। यहाँ पर पूज्य आर्यिका श्री अभयमती माताजी व क्षुल्लिका शांतिमती माताजी ने रथ के दर्शन कर अपनी शुभकामनाएं व्यक्त की। क्षेत्र वालों ने रथ का स्वागत किया। उत्तरप्रदेश की राजधानी लखनऊ में शोभायात्रा चौक सर्राफा बाजार से चलकर जैन मंदिर डालीगंज आयी। यहाँ पर विशाल सभा का आयोजन हुआ। जिसमें सभा की अध्यक्षता ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन (अध्यक्ष-कुण्डलपुर तीर्थक्षेत्र) ने क्री। मुख्य अतिथि थे-श्री आशु जैन (कमिश्नर कस्टम एवं नारकोटिक्स) एवं इंजी. श्री धर्मवीर जैन। सभा में उपस्थिति ठीक थी। पूरे कार्यक्रम में सिद्धार्थ जैन का काफी योगदान रहा। पूरी समाज का सामूहिक भोज था। समस्त कार्यक्रम जयजिनेन्द्र सेवा समिति के तत्त्वावधान में सानद सम्पन्न हुआ। इलाहाबाद में जीरोरोड पर स्थित दि. जैन मंदिर में सभा हुई। उपस्थिति ठीक थी। सभाध्यक्ष श्री आर.के. जैन इंजी., मुख्य अतिथि डॉ. श्री प्रेमचंद जैन थे। सभा का कुशल संचालन श्री सुनीलचंद जैन (भाजपा नगर अध्यक्ष) ने किया। सभा का शुभारंभ श्रीमती निधि जैन के मंगल गीत से हुआ। तत्पश्चात् मेरे व पं. जी के भाषण हुए। तदुपरांत विशाल शोभायात्रा ने नगर भ्रमण किया। तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली पर कार्यरत कमेटी द्वारा रथ का स्वागत हुआ एवं आरती की गई। बनारस में भेलूपुर मंदिर में मुनि श्री समन्वय सागर जी महाराज के ससंघ सानिध्य में सभा हुई। सभाध्यक्ष श्री अनिल प्रसाद जैन व मुख्य अतिथि श्री ऋषभदास जी जैन थे। उपस्थिति ठीक थी। शोभायात्रा अच्छी निकली। श्री दीपक जैन का अच्छा सहयोग प्राप्त हुआ। लगभग उ.प्र. के 55 नगरों में भ्रमण हुआ।

भजन

तर्ज–जहाँ डाल-डाल पर.........

तीर्थंकर श्री महावीर ज्योति का नवप्रकाश है आया,
कुण्डलपुर का यश छाया।।टेक.।।

छब्बिस सौ वर्षों पूर्व जहाँ, महावीर ने जन्म लिया था।
अपने सिद्धान्तों से प्रभु ने, जिस भू को धन्य किया था।। जिस......
अब उसी धरा पर ज्ञानमती जी ने, फिर से दीप जलाया,
कुण्डलपुर का यश छाया।।1।।

जिस नंद्यावर्त महल का वर्णन, ग्रंथों में आया है।
इस ज्योति प्रवर्तन के माध्यम से, उसको दर्शाया है।। उसको...
उस महल में सबने जिनबालक का, पलना खूब झुलाया,
कुण्डलपुर का यश छाया ।।2।।

महावीर ज्योति का भव्य पदार्पण, होवे मंगलकारी।
हर नगर गली में कुण्डलपुर का, हो प्रचार अतिभारी। हो....
"चंदनामती" इन भावों को ले, ज्योतीरथ है आया,
कुण्डलपुर का यश छाया।।3।।

हरियाणा प्रांत विवरण

3 जुलाई 2004 से भगवान महावीर ज्योति रथ ने हरियाणा प्रांत में भ्रमण किया, प्रस्तुत है उसका संक्षिप्त विवरण–

गुड़गावाँ (हरि.) 3.7.04–हरियाणा प्रांत में ज्योति रथ का शुभारंभ गुड़गाँवा से हुआ, उस समय अष्टान्हिक पर्व के मध्य श्री सिद्धचक्र विधान समारोह चल रहा था। सभा भगवान महावीर पार्क में हुई। सभाध्यक्ष कंवरसेन जैन थे। पं. सुधर्मचंद शास्त्री ने प्रवर्तन की जानकारी देते हुए बोलियाँ सम्पन्न कराईं। शोभायात्रा बहुत अच्छी निकली। फौव्वारा चौक से बारादरी पर शोभायात्रा सम्पन्न हुई। इसी के साथ हरियाणा प्रवर्तन प्रारंभ हो गया। यहाँ पर समाज के 800 घर व चार मंदिर व एक क्षेत्र है। रथ सिद्धान्त क्षेत्र पर गया, कमेटी ने कुण्डलपुर विकास में योगदान देकर क्षेत्र की तरफ से रथ का स्वागत कर आरती की।

धारूहेड़ा (रेवाड़ी)-5.7.04–यहाँ पर समाज के 20 घर व एक मंदिर तथा नसिया जी है। सभा मंदिर जी में हुई। सभाध्यक्ष श्री देशबन्धु जैन व मुख्य अतिथि श्री कैलाशचंद जैन थे। शोभायात्रा पूरे नगर में घुमायी गयी। सभी ने अति उत्साह से स्वागत कर रथ की यात्रा सम्पन्न की।

रेवाड़ी (हरि.) 6.7.04–यहाँ पर समाज के 200 घर व 6 मंदिर हैं। सभा मंदिर जी में हुई। सभा में उपस्थिति अच्छी थी। सभाध्यक्ष श्री अजित प्रसाद सर्राफ व मुख्य अतिथि ओमप्रकाश सर्राफ, विशिष्ट अतिथि श्री अजय कुमार जी एवं श्री राजकुमार जी थे। उत्साह बहुत अच्छा था। शोभायात्रा बहुत विशाल थी, आगे-आगे चार स्कूलों के बच्चे पंचरंगी ध्वजाएं लेकर चल रहे थे, कई बैण्ड बाजे व संपूर्ण जैन समाज था।

भिवानी (हरि.)-7.7.04–समाज के 33 घर व दो मंदिर हैं। सभा रामकुंज में हुई। सभाध्यक्ष श्री राकेश कुमार जी व मुख्य अतिथि श्री राजीव कुमार जैन थे। सभा में उपस्थिति ठीक थी। शोभायात्रा मध्यम स्तर की रही। कार्यक्रम ठीक रहा।

हांसी (हिसार) हरि.8-7-04–समाज के 60 घर व 4 मंदिर हैं। सभा जैन मंदिर नागोरी गेट में हुई। सभाध्यक्ष श्री जिनेन्द्र कुमार जैन, मुख्य अतिथि श्री सत्यभूषण जी जैन व विशिष्ट अतिथि श्री सुरेन्द्र कुमार जैन एडवोकेट थे। सभा में उपस्थिति मध्यम स्तर की रही। सभा का शुभारंभ संयोजक श्री विजय कुमार जैन के (मेरे) मंगलाचरण से हुआ। तत्पश्चात् सुरेन्द्र कुमार जैन एडवोकेट ने अपने विचार कुण्डलपुर के संदर्भ में रखे और रथ नगर भ्रमण के लिए निकला। शोभायात्रा अच्छी रही।

हिसार (हरियाणा) 8.7.04–मध्यान्ह में नगर प्रवेश हुआ। यहाँ पर 500 घर की समाज व 3 मंदिर हैं। उत्साह अच्छा था। रथ पार्श्वनाथ विद्यालय में खड़ा हुआ। शाम 7 बजे सभा मंदिर जी में हुई। स्कूल के बच्चे बहुत सारे थे। समाज की उपस्थिति भी अच्छी थी। सभाध्यक्ष श्री जयप्रसाद जैन व मुख्य अतिथि श्री निर्मल जैन थे। सभी ने मिलकर सामूहिक राशि प्रदान कर आरती की व पालने का कार्यक्रम हुआ। रथ रोहतक के लिए प्रस्थान कर गया।

रोहतक (हरि.) 9.7.04–यहाँ पर समाज के 300 घर व 8 मंदिर हैं। प्रातः 8 बजे कमेटी के सदस्य मेरे पास आकर कहने लगे। संयोजक जी हमारी भेंट (5100) कुण्डलपुर तक पहुँचा दीजिएगा। मैंने कहा इतनी दूर से हम आये हैं तो कम से कम जानकारी तो दे दें। तत्पश्चात् मंदिर जी में सभा हुई। सभाध्यक्ष श्री कामरेड विनोद कुमार जैन व मुख्य अतिथि श्री दीपचंद जैन (उपाध्यक्ष-जैन सोसाइटी) थे। विशिष्ट अतिथि श्री नरेश जैन (महामंत्री-जैन सभा (रजि.) थे। देखते ही देखते 5 नाम आ गये लगभग 3 घंटे तक शोभायात्रा चली। खूब उत्साहपूर्वक सभी कार्यकर्ताओं द्वारा बिना बैंण्ड बाजे के शोभायात्रा निकाली गई। सभी कार्यकर्ता खूब खुश रहे। सभी कहने लगे कि यह भगवान महावीर का ही चमत्कार है।

बहादुरगढ़ (झज्जर) हरि.10.1.04–समाज के 125 घर व 2 मंदिर हैं। सभा प्राचीन मंदिर जी में हुई। सभा में उपस्थिति कम थी। सभाध्यक्ष श्रीमान जयनारायण जैन, मुख्य अतिथि श्री मोहनलाल जैन व विशिष्ट अतिथि श्री सुरेन्द्र कुमार जैन प्रापर्टी डीलर थे। शोभायात्रा प्राचीन मंदिर से मंडी जैन मंदिर तक गयी। यहाँ पर सभा हुई। सभा श्वेताम्बर साध्वी सुरुचि म.सा. एवं राजेश म.सा. के सानिध्य में हुई। सुरुचि जी ने अपने प्रवचन में कहा कि पूज्य माताजी से 1982 में हस्तिनापुर में परिचय हुआ था। माताजी का स्नेह व कर्मठता हमने बहुत पास से रहकर देखी है। आज हस्तिनापुर को भारत के नक्शे पर लाने वाली पूज्य ज्ञानमती माताजी हैं। तत्पश्चात् राजेश जी म.सा. ने एक सुन्दर भजन

प्रस्तुत किया। सभी लोगों ने आरती व पालने का कार्यक्रम सम्पन्न किया। यहाँ पर जलपान की व्यवस्था थी।

सोनीपत (हरि.) 11.7.04—समाज के 1600 घर व 7 मंदिर हैं। हम सभी लोग मिशन रोड़ स्थित जैन मंदिर में रुके। काफी बड़ा परिसर है, उत्साही समाज थी। यहाँ पर ह्रीं की प्रतिमा विराजमान है। प्रातः मंदिर जी में भक्तामर मंडल विधान् चल रहा था। 9 बजे सभा हुई। सभाध्यक्ष श्री एस.के. जैन एडवोकेट व मुख्य अतिथि श्री विमल प्रसाद जैन थे। देखते ही देखते 5 बोलियाँ हो गईं। शोभायात्रा मंदिर के आसपास ही घुमाई गई। यहाँ पर दैनिक पत्रों की कवरेज बहुत अच्छी थी। काफी बड़ी प्रेस कांफ्रेंस हुई। पूरी कांफ्रेंस को सम्बोधित करने वाला मैं अकेला ही वक्ता था। सभी ने खूब सवाल पूछे। प्रचार खूब अच्छा हुआ।

गन्नौर (सोनीपत) हरि.12.7.04—पूर्व संध्या पर गन्नौर पहुँचे। 3 किमी. पहले मेन रोड पर गुप्तिधाम पर उपाध्याय श्री गुप्तिसागर जी महाराज का चातुर्मास चल रहा था। हम लोग दर्शन करने गये। महाराज जी के दर्शन किये, लगभग 15 मिनट रहे तत्पश्चात् अंदर मंदिर में पहुँचे। रात्रि विश्राम यहीं पर किया। प्रातः सभा मंदिर में हुई। उपस्थिति कम थी। कार्यक्रम कुल मिलाकर ठीक था। जैन स्कूल के बच्चे आगे-आगे चल रहे थे। शोभायात्रा स्कूल पर जाकर सम्पन्न हो गयी। पुनः **अम्बाला कैंट** पहुँचे। सभा पूज्य आचार्यश्री निशान्तसागर जी महाराज के सानिध्य में सम्पन्न हुई। शोभायात्रा लगभग 3 घंटे चली। पूज्य आचार्य महाराज ने रथ के लिए अपना मंगल आशीर्वाद प्रदान किया। **करनाल** में भी प्रभावना पूर्ण कार्यक्रम रहा।

पानीपत (हरि.) 13.7.04—समाज के 160 घर हैं व मंदिर 7 हैं। हम लोग जैनगली धर्मशाला में रूके। धर्मशाला अच्छी है। सभा प्रातः पार्श्वनाथ दि. जैन मंदिर में हुई। सभाध्यक्ष श्री राकेश जैन, मुख्य अतिथि श्री सुरेश जैन व विशिष्ट अतिथि पं. श्री पदमचंद जी शास्त्री थे। सभा का शुभारंभ पं. पदमचंद शास्त्री के मंगलाचरण से हुआ। तत्पश्चात् संयोजक विजय जैन ने रथ के संदर्भ में संक्षिप्त परिचय दिया। इसी क्रम में पं. सुधर्मचंद शास्त्री ने अपने प्रवचन में कुण्डलपुर विकास के संदर्भ में प्रकाश डाला। सभी लोगों ने रथ की आरती की एवं पालने का कार्यक्रम सम्पन्न किया। शोभायात्रा नहीं निकली। यहाँ गलियाँ छोटी-छोटी हैं इसलिए जुलूस नहीं निकल पाया। इस प्रकार हरियाणा के लगभग 13 नगरों में ज्योति रथ का सफल प्रवर्तन हुआ।

गीत

—आर्यिका अभयमती

आये महावीर भगवान, त्रिशला माता के आंगन में,
जब गर्भ कल्याणक आए, तब सब नर मुनि हर्षाये।
बरसी रत्न राशि तत्काल-त्रिशला..............।।1।।
जब जन्म कल्याणक आए, तब ऐरावत सजवाए।
तब कलश दिये ढुरवाय, मेरू शिखर पर ले जा करके।।
आए महावीर भगवान-त्रिशला.................।।2।।
जब तप कल्याणक आए, तब रत्नपालकी लाए।
किया केशलोंच जिनवर ने, शुभ ज्ञातृवनी में जाके।।
आए महावीर भगवान-त्रिशला.................।।3।।
जब ज्ञान कल्याणक आए, तब दिव्य ध्वनि खिर जाए
फिर वाणी कई मिलवाय, महावीर जी के समवसरण में
आए महावीर भगवान-त्रिशला.................।।4।।
जब मोक्ष कल्याणक आए, तब पावापुरी सुहाये
कार्तिकी अमावस जान, दीपक ज्योति जले घर-घर में
आए महावीर भगवान-त्रिशला.................।।5।।

दिल्ली प्रदेश

भारत की राजधानी दिल्ली के बारे में कहा जाता है कि यह दिल वालों की नगरी है। आज भी अत्यन्त आधुनिकता होते हुए भी धर्म की गंगा यहाँ सतत प्रवाहित रहती है जो कि हमें समय-समय पर अनेक कार्यक्रमों के माध्यम से देखने को मिलती है।

म.प्र., राजस्थान, उ.प्र. और हरियाणा प्रान्त में भ्रमण के पश्चात् ज्योतिरथ भारत के दिल राजधानी दिल्ली में पहुँचा। यहाँ रथ के स्वागत की तैयारी लगभग 20 दिन से चल रही थी परन्तु हम 4 ही जगह कार्यक्रम कर पाए क्योंकि उसके आगे हमारा पूर्वांचल की ओर कार्यक्रम का रूट बन चुका था। रथ का सर्वप्रथम स्वागत समारोह ऋषभविहार में हुआ।

ऋषभविहार (दिल्ली) 18.7.04—सर्वप्रथम ऋषभविहार वालों ने रथ का स्वागत समारोह आयोजित किया। ऋषभविहार दि. जैन मंदिर में स्थित विशाल सभागार में आचार्यरत्न श्री बाहुबली जी महाराज के ससंघ सानिध्य में सभा हुई। सभा का शुभारंभ संयोजक विजय जैन (मेरे) के मंगलाचरण से हुआ। इसी क्रम में समिति के अध्यक्ष ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन ने कुण्डलपुर विकास की गतिविधियों से सभी को परिचित करवाया। तत्पश्चात् आर्यिका श्री सुज्ञानी माताजी ने सभी को तीर्थ कुण्डलपुर का महत्व बताया। अब बारी थी आचार्यश्री की, अतः सबकी निगाहें उनकी ओर लगी थीं। **आचार्य बाहुबली महाराज ने अपने सारगर्भित प्रवचन में कहा कि पूज्य माताजी नारी होते हुए भी पुरुष के पुरुषत्व का पुरुषार्थ कर रही हैं। आचार्यश्री ने पूज्य माताजी द्वारा किये जा रहे अनुवाद एवं लेखनकार्य की प्रशंसा करते हुए कहा कि माताजी ने पूजा के क्षेत्र में एवं अनुवाद आदि के क्षेत्र में इस युग में जो कार्य किया है, वह बहुत ही प्रशंसनीय है। कुण्डलपुर के विकास के संदर्भ में आचार्यश्री ने अपना मंगल आशीर्वाद देते हुए कहा कि जिस प्रकार से सम्मेदशिखर पर्वत तीर्थंकरों एवं करोड़ों मुनिराजों की निर्वाणभूमि है, उसी प्रकार यही कुण्डलपुर भगवान महावीर की जन्मभूमि है। इसी कुण्डलपुर के हमने भी दो-तीन बार दर्शन किए हैं तथा मेरे मन में भी वहाँ के छोटे से मंदिर को देखकर ये भावना हुई थी कि इस क्षेत्र का विकास होना चाहिए, जो आज पूज्य माताजी ने केवल भावना ही नहीं की वरन् इस भावना को साकार करके भगवान महावीर की जन्मभूमि को अच्छे रूप में विकसित कर दिया है।** इस कार्य के लिए इस समिति के सभी कार्यकर्ताओं को आचार्यश्री ने अपना बहुत-बहुत मंगल आशीर्वाद प्रदान किया। आचार्यश्री ने रथ पर स्वस्तिक अंकित कर अपनी शुभ कामनाएं प्रेषित की। सभागार पूरा भरा हुआ था। कार्यक्रम का सफल संचालन श्री हेमचंद जैन ने किया। सभा में श्री महावीर प्रसाद जैन (बंगाली स्वीट), लाला श्री प्रेमचंद जैन-खारीबावली, श्री आनंद प्रकाश जैन (सोरम वाले), श्री कैलाशचंद जैन (करोलबाग), श्रीमती आशा जैन (अध्यक्ष-केन्द्रीय महिला संगठन), श्रीमती प्रभा जैन—चाँदनी चौक (मंत्री—महिला संगठन), श्री अनिल जैन—कमल मंदिर, प्रीतविहार (महामंत्री—कुण्डलपुर समिति) आदि गणमान्य महानुभाव उपस्थित थे। तदुपरान्त विशाल शोभायात्रा का प्रवर्तन ऋषभविहार व बाहुबली एन्क्लेव में हुआ।

शान्ति मोहल्ला 19.7.04—सभा 9 बजे प्रारंभ हुई। सभा कल्याण शान्ति मंडप में हुई। यहाँ पर णमोकार मंत्र अनुष्ठान के प्रेरक परमपूज्य आचार्यश्री 108 शांतिसागर जी महाराज के संघ सानिध्य में सभा हुई। सभास्थल पूरा भरा हुआ था। लगभग 1000 लोगों की उपस्थिति थी। आये हुए सभी अतिथियों का स्वागत शांति मोहल्ला जैन समाज की तरफ से अंग वस्त्र पहनाकर किया गया। इसी क्रम में ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन (अध्यक्ष कुण्डलपुर) ने सभी को कुण्डलपुर में चल रहे विकास कार्यों से अवगत कराया। तदुपरान्त आचार्य श्री ने अपने सारगर्भित प्रवचन में कुण्डलपुर तीर्थ का खुला समर्थन करते हुए सभी को दान देने के लिए कहा एवं माताजी के लिए अनेकशः साधुवाद प्रेषित किया। उन्होंने अपने उद्बोधन में कहा कि ज्ञानमती माताजी एक महान आर्यिका हैं, उनके द्वारा किया जा रहा भगवान महावीर जन्मभूमि का विकास युग-युगों तक चिरस्थायी रहेगा। इस शुभकार्य के लिए समस्त समाज को तन-मन-धन से जुटकर सहयोग देना चाहिए। आचार्यश्री ने सभी भक्तों को सहयोग देने की प्रेरणा भी प्रदान की तथा कुण्डलपुर से पधारे हुए समिति के अध्यक्ष कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन को एवं समिति के समस्त पदाधिकारी एवं सदस्यों को तथा रथ में चल रहे समस्त कार्यकर्ताओं को अपना मंगल आशीर्वाद प्रदान करते हुए कहा कि आप सबके साथ चलाया हुआ यह अभियान सफलता के साथ निर्विघ्न सम्पन्न हो, यही भगवान महावीर के चरणों में हमारी मंगलकामना है। सभा का कुशल संचालन श्री विजेन्द्र जैन (महामंत्री—युवा

परिषद दिल्ली प्रदेश) ने किया। आचार्यश्री ने रथ पर स्वस्तिक बनाकर प्रवर्तन किया। शोभायात्रा में रथ के साथ हजारों स्त्री-पुरुषों ने चलकर जय-जयकार के नारों से वातावरण को सुरभित एवं गुंजायमान कर दिया। शोभायात्रा रघुवरपुरा तक गयी। जगह-जगह खूब स्वागत हुआ।

प्रीतविहार 20.7.2004—प्रीतविहार में धर्मसभा उपाध्याय श्री कामकुमारनंदी महाराज के सानिध्य में हुई। सभा एफ ब्लाक में स्थित जैन मंदिर में हुई। ब्र. रवीन्द्र जी के ओजस्वी भाषण से तीर्थ विवरण पर प्रकाश डाला गया। उपाध्याय श्री कामकुमारनंदी जी महाराज ने अपने उद्‍बोधन में कहा कि पूज्य ज्ञानमती माताजी से सन् 1988 में हस्तिनापुर प्रवास के समय हमारा मिलन हुआ था, उस समय आचार्यश्री कुंथुसागर जी महाराज के संघ का सर्वप्रथम इस इलाके में जम्बूद्वीप स्थल पर आगमन हुआ था। उपाध्याय महाराज ने तीर्थ निर्माण के साथ-साथ कुण्डलपुर से पधारे ब्र. रवीन्द्र जी एवं समस्त कार्यकर्ताओं को जन्मभूमि के विकासकार्य में सफल होने हेतु मंगलभावना प्रगट की।

इस शुभ अवसर पर प्रो. टीकमचंद जैन (दिल्ली) ने भी अपने विचार व्यक्त करते हुए समाज को दिशानिर्देश प्रदान करते हुए पूज्य माताजी की समयसूचकता को सर्वोपयोगी एवं कुण्डलपुर निर्माण का महत्व बतलााय। पूज्य उपाध्याय जी ने रथ पर स्वस्तिक बनाया एवं सभी कार्यकर्ताओं को खूब-खूब आशीर्वाद दिया। रथ प्रवर्तन होकर पूरी कालोनी में घूमा। तीनों दिन रथ राजाबाजार अग्रवाल दि. जैन मंदिर में रहा। सभी कार्यकर्ताओं का बहुत सहयोग रहा। यहाँ पर भी मंगल आरती हुई।

रोहिणी—राजधानी दिल्ली में समिति द्वारा उपरोक्त 3 कार्यक्रम निर्धारित किए गए थे, फिर भी श्रीमती आशा जैन (अध्यक्ष-महिला संगठन) के आग्रह पर दिल्ली की रोहिणी कालोनी में भी लगभग 5 सेक्टरों में सायंकाल रथ की आरती एवं पालने का कार्यक्रम रख गया, जिसमें लोगों ने सम्मिलित होकर धर्मलाभ लेते हुए तीर्थविकास में सहयोग प्रदान किया।

राजधानी दिल्ली में तीन दिनों तक कुण्डलपुर की गूंज रही। इस कार्य में समस्त समाज का सहयोग प्राप्त हुआ। विशेष रूप से सभी आचार्यों और संतों का आशीर्वाद प्राप्त हुआ। सारे कार्यक्रम की रूपरेखा बनाने में श्री कैलाशचंद जैन, करोलबाग वालों का विशेष सहयोग रहा।

जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति प्रवर्तन के शुभ अवसर पर प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी के भाषण अंश

(लालकिला मैदान, दिल्ली—4-6-1982)

पूज्य ज्ञानमती माताजी और उपस्थित सज्जनों, भाईयों और बहनों!

मुझे प्रसन्नता है कि इस शुभ अवसर पर आपने मुझे बुलाया है। जब ऐसा अवसर होता है विशेष करके धार्मिक अवसर, जब देश के कोने-कोने से भाई-बहन आते हैं, तब भारत की एकता का दृश्य देखने को मिलता है। हमारा भारत एक ऐसा देश है, जहाँ प्रायः विश्व के सभी धर्म हैं। हमारी नीति रही है कि सभी धर्मों का आदर हो, किसी का भी किसी प्रकार से अपमान न हो।

जम्बूद्वीप का वर्णन हमारे सभी शास्त्रों में है जैसे बौद्ध, जैन एवं वैदिक धर्म के। यह प्रसन्नता का विषय है कि पूज्य ज्ञानमती माताजी ने यह जम्बूद्वीप का मॉडल बनवाकर तथा जो हस्तिनापुर में बनाया जा रहा है, इससे लोग इसके बारे में अधिकाधिक जानकारी प्राप्त कर सकेंगे। यह ज्ञानज्योति जहाँ-जहाँ भी जाएगी, वहाँ एक नई धार्मिक भावना जागृत होगी।

जैनधर्म की प्रमुख विशेषता उसके अहिंसा धर्म से है। भगवान महावीर स्वामी ने अहिंसा, सहनशीलता, सादगी आदि उच्च बातें बताईं, ये बातें देश को मजबूत बनाती हैं, ऊपर उठाती हैं। चूँकि मैं भी एक धार्मिक परिवार से आई हूँ, एक ऐसी परम्परा में मेरा पालन-पोषण हुआ जिसमें धर्म, संस्कृति, सभ्यता का आदर करना सिखलाया गया अतः मुझे धार्मिक आयोजनों में आने पर बड़ी प्रसन्नता महसूस होती है। आपके सामने मैं आभार प्रकट करती हूँ कि इस ज्योतिरथ का प्रवर्तन करने हेतु आपने मुझे बुलाया अतः मैं धन्यवाद देती हूँ एवं पूज्य माताजी को नमन करती हूँ।

पूर्वांचल प्रवर्तन

बंगाल, बिहार, झारखंड (पूर्वांचल) के लिए रथ का शुभारंभ धर्मनगरी आरा से किया गया। आरा वालों ने पूर्व से ही तैयारी कर रखी थी। एक हफ्ते से निरन्तर दैनिक पत्रों में इसकी सूचना सभी लोगों तक पहुँचायी जा रही थी। सभी लोग भगवान महावीर का नंद्यावर्त महल देखने के लिए लालायित थे, इस तरह से रथ के आने का इंतजार कर रहे थे जैसे अमूल्य निधि मिलने वाली है। धीरे-धीरे इंतजार की घड़िया समाप्त हो गईं। णमोकार मंत्र की ध्वनि गुंजायमान करता हुआ रथ कार्यक्रम की पूर्व संध्या पर आरा नगरी पहुँच गया। रथ पहुँचते ही सभी लोगों ने अभिवादन किया। यहाँ पर विश्वशांति महावीर विधान चल रहा था। सानिध्य भट्टारक श्री भुवनकीर्ति जी महाराज, कनकगिरि (कर्नाटक) वालों का था। विधानाचार्य युवारत्न पं. श्री अकलंक जैन (लखनऊ) थे।

सभा प्रातः 10 बजे विधान के मध्य हुई। आज के मुख्य अतिथि ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन (अध्यक्ष-कुण्डलपुर) थे। सर्वप्रथम आरा में लोकप्रिय भाई जी 'रवीन्द्र जी' का सारगर्भित भाषण हुआ। तत्पश्चात् भट्टारक जी ने अपने वक्तव्य में रथ को कर्नाटक आमंत्रित करते हुए पूज्य माताजी की सूझबूझ की प्रशंसा करते हुए कुण्डलपुर विकास को एक सराहनीय कार्य बताया। इसी के साथ पं. श्री सुधर्मचंद शास्त्री व पं. श्री अकलंक जैन ने बोलियाँ सम्पन्न करायी। बोलियाँ अच्छी रहीं। शोभायात्रा मध्यान्ह में निकाली गयी। अपार जनसमूह के साथ रथ प्रवर्तन हुआ। कई स्थानों पर रथ का भव्य स्वागत कर आरती की गयी। इसी के साथ पूर्वांचल प्रवर्तन प्रारंभ हो गया। पटना नगर वालों ने भी खूब भक्ति के साथ रथ का प्रवर्तन किया। रथ कदमकुंआ से कांग्रेस भवन तक गया। शोभायात्रा में महिलाओं की संख्या अधिक थी। नवादा नगरी वाले भी माताजी की इस योजना के स्वागत के लिए रात से ही पलक पांवड़े बिछाकर इंतजार कर रहे थे। रथ का स्वागत करने के लिए ए.डी.एम. श्री राजकुमार जैन पधारे। खूब भक्ति से रथ निकाला। हिसुवा वालों ने नंद्यावर्त महल में विराजमान शांतिनाथ भगवान की बहुत भक्ति से आरती की। गया समाज ने भव्य शोभायात्रा निकालकर रथ का स्वागत किया। रफीगंज में बहुत उत्साह था। पूर्व संध्या पर सभा विद्यालय में हुई। छोटे-छोटे बच्चों ने भजन के माध्यम से अपनी भक्ति प्रदर्शित की। एक आठ वर्ष के बच्चे ने बहुत अच्छा भाषण दिया। प्रातः 8 बजे भव्य शोभायात्रा निकली। औरंगाबाद में छोटा समाज होते हुए भी रथ का अच्छा स्वागत हुआ। झुमरीतलैया में मुनि श्री कर्मविजयनंदी महाराज व मुनि भव्यसागर जी महाराज के सानिध्य में सभा हुई। मुनि श्री ने अपने प्रवचन में कहा कि आगम तो जन्मभूमि कुण्डलपुर को मानता है। मैं आगम को मानता हूँ लेकिन जिसको जहाँ मानना है वह माने पर विवाद न करें। शोभायात्रा में मुनिद्वय संग-संग चले। अपार जनसमूह के साथ नगर भ्रमण हुआ। हजारीबाग में आर्यिका श्री सरस्वतीभूषण माताजी व क्षुल्लिका श्री शांतिभूषण माताजी के सानिध्य में सभा हुई। यहाँ से कुण्डलपुर के लिए अच्छा योगदान प्राप्त हुआ। खूब उत्साह से बोलियाँ हुईं। 2601 वालों के दस नाम प्राप्त हुए। शोभायात्रा में सैकड़ों स्थानों पर आरती हुई। सरिया वालों ने सामूहिक राशि प्रदान की। गोमिया, साडम, पेटरवार यहाँ पर समाज छोटी है लेकिन उत्साह बहुत था, कम समाज होते हुए भी भक्तिपूर्वक कार्यक्रम हुए। रामगढ़ कैन्ट वालों ने एक हफ्ता पूर्व से तैयारी कर रखी थी। समाज का सामूहिक भोज था। रांची में श्री सी.पी. सिंह विधायक ने रथ पर स्वस्तिक बनाकर स्वांगत किया। बरसात में भी शोभायात्रा अच्छी निकली। पुरलिया समाज ने भी भक्तिपूर्वक रथ का स्वागत किया। चास बोकारो स्टीलसिटी में समाज के घर कम है लेकिन रथयात्रा अच्छी निकली। पुनः कतरासगढ़ होते हुए खरखरी पहुँचे। यहाँ का प्रोग्राम हमारी लिस्ट में नहीं था, लेकिन लोगों के विशेष आग्रहवश हम रथ लेकर वहाँ गये, पुनः धनबाद होते हुए मिहिजाम पहुँचे। यहाँ पूर्वांचल का सबसे अच्छा कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। 8 किमी. पहले से ही लोग रथ की अगवानी के लिए पहुँच गये थे। सभाध्यक्ष-श्री फूलचंद टोंग्या व मुख्य अतिथि-श्री माणिकचंद काला थे, उपस्थिति बहुत अच्छी थी, शोभायात्रा के पश्चात् समाज का सामूहिक भोज था। दुमानी में उत्साही समाज है, कम समाज होते हुए भी भावना बहुत अच्छी थी। रानीगंज होते हुए कलकत्ता पहुँचे। यहाँ बेलगछिया मंदिर के विशाल प्रांगण में धर्मसभा हुई। ऐलक श्री गोसलसागर महाराज का सानिध्य प्राप्त हुआ, उन्होंने कहा कि यदि हम किसी भी पुण्यकार्य में साधक नहीं बन सकते तो बाधक भी नहीं बनना चाहिए, आज कुण्डलपुर विकास में सभी को साधक बनना है, सभा में श्री भागचंद पहाड़िया,

श्री राजकुमार जी सेठी, श्री अभय जैन, श्री महावीर गंगवाल, श्रीमती प्रमिला जैन एवं श्री अजीत पाटनी भी उपस्थित थे। शोभायात्रा निकाली गई, जिसमें ऐलक श्री रथ के साथ-साथ चले। काकुडकाछी में अच्छी प्रभावना हुई। यहाँ से 120 नाम तीर्थ विकास हेतु प्राप्त हुए, यहाँ उल्लेखनीय बात यह रही कि हम लोग यहाँ से कार्यक्रम करके जब हावड़ा के लिए निकल रहे थे कि एक पुल के नीचे 4 फुट पानी में जाकर रथ बंद हो गया और केबिन में भी पानी भर गया। हम लोग हर तरह से प्रयास करके निराश हो गये तो रक्षामंत्र की एक जाप्य करके मैंने माताजी द्वारा दी गई मंत्रित सरसों चारों तरफ व केबिन में डाल दी और लगातार मंत्र पढ़ता रहा। बस चमत्कार हो गया और हमारी गाड़ी बैक होती चली गई, पुनः हावड़ा पहुँचे। यहाँ पर प्रभावनापूर्वक कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

बड़ा बाजार (कलकत्ता) में जगह-जगह रथ का स्वागत हुआ और 30 नाम तीर्थ विकास के लिए प्राप्त हुए। अजीत पाटनी का विशेष सहयोग प्राप्त हुआ। यहाँ से चौरंगी टेरेस पहुँचे, कलकत्ता प्रवर्तन का यह आखिरी प्रोग्राम था। श्री राजकुमार जी सेठी ने अपने भाषण में पूज्य माताजी द्वारा किये गए कार्यों की सराहना करते हुए सभी को तीर्थ विकास से जुड़ने की प्रेरणा प्रदान की।

अब रथ प्रवर्तन पं. बंगाल में प्रारंभ हुआ, सर्वप्रथम कोलाघाट पहुँचे, बरसात के कारण नगर में पानी भरा होने से नगर के बाहर पेट्रोल पम्प पर सभा हुई, बरसात होने के बाद भी माहौल अच्छा था, पुनः बेल्दा, खड्गपुर होते हुए रिषड़ा पहुँचे, यहाँ रथ का स्वागत वार्ड कमिश्नर श्री इन्द्रजीत नारायण ने किया। यहाँ से बंडेल बाजार, खगड़ा, बहरामपुर, जियागंज, लालगोला, सन्मतिनगर, जंगीपुर, मिर्जापुर, अडंगाबाद होते हुए धुलियान पहुँचे। समाज में अति उत्साह है, उपस्थिति अच्छी रही। यहाँ से तीर्थ विकास हेतु दो महानुभावों ने संरक्षक बनना स्वीकार किया, पुनः रायगंज होते हुए कानकी पहुँचे। सभा ब्र. राजेन्द्र भइया एवं ब्र. वीरेन्द्र भइया के सानिध्य में हुई, यहाँ भी उत्साह अच्छा था। किशनगंज होकर ठाकुरगंज पहुँचे। यहाँ रथ के पहुँचते ही लोगों ने बैण्ड बाजे के साथ अगवानी की और उत्साहपूर्वक कार्यक्रम किया, साथ ही शोभायात्रा भी अच्छी निकली। माथाभागा, दीनहाटा, सिलीगुड़ी, भागलपुर होते हुए देवघर व गिरीडीह पहुँचे। यहाँ से रथ अनन्तानन्त तीर्थंकरों की निर्वाणभूमि शाश्वत तीर्थराज सम्मेदशिखर पहुँचे। सिद्धक्षेत्र पर भी संतों के सानिध्य में स्वागत सभा हुई। तत्पश्चात् चौपारण, इटखोरी होते हुए डाल्टनगंज पहुँचे। यहाँ अति उत्साह के साथ बरसात में भी शोभायात्रा निकाली गई। इसी के साथ एक सत्र का समापन हो गया।

इस प्रकार भगवान महावीर ज्योति का राष्ट्रीय समापन पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के पावन सानिध्य में द्वितीय कुण्डलपुर महोत्सव के अंतर्गत किया गया।

निरन्तर 542 दिनों तक सारे देश में इस ज्योतिरथ का सफलतापूर्वक भ्रमण हुआ और लगभग 51000 किमी. की यात्रा सम्पन्न हुई। भारत के 750 नगरों में ज्योति प्रज्वलित हुई और जन-जन में भगवान महावीर एवं उनकी जन्मभूमि का वास्तविक स्वरूप प्रगटाती हुई उनके अहिंसामयी-सार्वभौम सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार करती हुई यह ज्योति कुण्डलपुर में 13 सितंबर 2004 को पहुँची और वहीं पर भगवान महावीर ज्योतिरथ प्रवर्तन का समापन हुआ।

इस प्रवर्तन के मध्य मेरे कुछ व्यक्तिगत अनुभव भी रहे हैं, जिन्हें मैं प्रसंगोपात्त पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करता हूँ–

सर्वप्रथम पूज्य माताजी के चरणों में नमोस्तु करते हुए अपनी बात प्रारंभ करता हूँ मैं यह नहीं जानता हूँ कि जिस जिम्मेदारी को मुझे सौंपा गया था मैं उसे निभाने में सफल रहा हूँ या असफल। परन्तु जहाँ तक मैं समझता हूँ कि मैंने पूरी ईमानदारी व निष्ठा के साथ महावीर ज्योति रथ का प्रवर्तन कराया है। **कंधे छोटे थे जिम्मेदारी बड़ी थी लेकिन आज तक कहीं भी हार नहीं मानी चूँकि पूज्य माताजी जैसी परम तपस्विनी साध्वी का वरदहस्त मेरे सिर पर था।** जहाँ तक समाज के जवाबों का उत्तर दे सकता था दिया और गरिमापूर्ण कार्यक्रम किया।

मुझे स्वयं नहीं पता कि मेरा मन न होते हुए भी कौन सी ऐसी चुम्बकीय शक्ति थी जो मुझे अपनी ओर खींचती थी। मुझ जैसे युवक के लिए यह सब करना कितना कठिन कार्य था क्योंकि न तो मैं पं. बाबूलाल जमादार जी जैसा विद्वान था न ब्र. मोतीचंद जैन जैसा मेरा त्यागी व्यक्तित्व था। एक साधारण से युवक के लिए समाज का सामना कर

पाना कितना कठिन कार्य है मैंने अब जाना। प्रारंभ में प्रवर्तन की लिस्ट बनकर आयी उसमें 39 नगरों का कार्यक्रम था। जिसमें से 32 नगरों का कार्यक्रम रद्द हो गया। प्रारंभ में दो-तीन महीने सफलता नहीं मिली लेकिन धीरे-धीरे कार्य कुछ बनता नजर आया। आज समाज में 90 प्रतिशत निर्माण कार्य हर स्थान पर चल रहे हैं। हर व्यक्ति की नजरें सवाल ही पूछती रहती थी। प्रारंभ में मन में डर लगा रहता था, जैसे भी हो लोगों की नजरे बचा कर निकल लो। लेकिन कब तक, बाद में मैंने सिर्फ एक ही बात लक्ष्य में रखी कि हम चोरी तो कर नहीं रहे हैं जिसको हमारा प्रोजेक्ट समझ में आयेगा वो हमसे जुड़ेगा नहीं समझ में आयेगा नहीं योगदान देगा। क्योंकि पहले स्वयं में आत्मबल जरूरी है। उसी के द्वारा यह प्रवर्तन संभव हो सकता है और फिर यह प्रवर्तन धन एकत्र का साधन तो है नहीं अपितु जन-जन को भगवान की जन्मभूमि कुण्डलपुर का वास्तविक स्वरूप समझाकर शासनपति भगवान महावीर की जन्मभूमि को बचाने के एक सद्प्रयास मात्र है और माताजी अन्य साधुओं की तरह कोई नूतन तीर्थ का निर्माण नहीं कर रही हैं अपितु तीर्थ को बचा रही हैं, संस्कृति का संरक्षण एवं संवर्धन ही कर रही है।

प्रारंभ में निमाड़ से प्रवर्तन प्रारंभ हुआ। उस समय मई महीने में गर्मी चरम सीमा पर थी शायद ही कहीं लाइट या पंखा प्राप्त होता था। लेकिन उस समय भी अर्जुन के समान केवल एक लक्ष्य दिखता था। सकरार की वह रात जब हम बरसात में पूरी रात बैठे रहे। अंधेरे में बस केवल पानी ही पानी सब ओर दिखता था और पूरी रात बचने का स्थान नहीं मिला था। सर्दियों में कई स्थानों पर इतनी ठंड रही कि बर्दाश्त करना मुश्किल होता था। इस प्रकार सर्दी, बरसात, गर्मी आदि के खट्टे-मीठे अनुभवों को झेलते हुए भी हम अपने लक्ष्य पर अडिग थे।

पूर्व में समवसरण का प्रवर्तन हुआ तो इतनी परेशानी सामने नहीं आयी। लेकिन अबकी बार कभी-कभी तो आँखों में आँसू आ जाते थे। सोचता था कि क्या इतनी कठिन परीक्षा भी देनी पड़ती है। लेकिन शायद कोई शक्ति थी जो हर मुश्किलों से निपटने की शक्ति देती थी। यह मेरा सौभाग्य ही है कि कुण्डलपुर में रहने वालों ने दिन भर में शायद इतनी बार कुण्डलपुर और भगवान महावीर का नाम नहीं लिया होगा जितनी बार हम लोगों ने कुण्डलपुर का नाम कुण्डलपुर से दूर रहकर लिया है । पं. जी की उम्र 78 वर्ष है वह जितना कर सकते थे उससे ज्यादा किया लेकिन कभी-कभी शरीर के आगे विवश हो जाते थे। अब पहले जैसी ताकत नहीं थी लेकिन फिर भी हर समय खड़े रहते थे।

पूज्य आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी व क्षुल्लक श्री मोतीसागर महाराज की बताई घटना याद आती है कि पहले कभी जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति के समय इम्फाल में मुख्यमंत्री जी ने अपने उद्बोधन में कहा था कि यह दिग्विजय के लिए निकला घोड़ा है। लेकिन मुझे लगता है कि वास्तविक दिग्विजय तो ये है जब हर स्थान से कुण्डलपुर समर्थन का ध्वज आगे बढ़ रहा है, हर स्थान से जनमत प्राप्त हो रहा है। पैसा तो कुण्डलपुर में भी आ सकता था और कोई 1-2 व्यक्ति मिलकर ही पूरा तीर्थ बनवा सकते थे लेकिन रथ के माध्यम से हमें बल एवं जनमत प्राप्त हुआ है और यही हमारी विजय है।

यहाँ मैं सबका ध्यान कर्मयोगी ब्र. श्री रवीन्द्र जी की ओर भी आकृष्ट करना चाहता हूँ क्योंकि भाई जी जैसा व्यक्तित्व शायद ही कहीं देखने को मिले। इतना व्यस्त रहते हुए भी प्रतिदिन हर व्यक्ति की कुशलता पूछना नहीं भूलते थे। आज तक मैंने जो भी कार्य कर दिया उसके लिए मुझे कभी भी कुछ नहीं कहा। हमेशा मेरे उत्साह का वर्द्धन ही किया है। आज मुझे स्वयं एहसास होता है कि प्रत्येक व्यक्ति भाई जी की प्रशंसा क्यों करता है। मैं तो हमेशा यही कामना करता हूँ कि मैं जहाँ भी कार्य करूँ-हमेशा भाई जी का हाथ मेरे सर पर हो, उनके नीचे रहकर कार्य करूँ। शायद मेरे घर वाले मेरी इतनी चिंता नहीं करते होंगे जितनी चिंता संघ के सभी लोगों को रहती थी। जरा सी तबियत खराब हो जाने पर सभी लोग परेशान हो जाते थे। हर बार फोन पर कुशलता ही पूछते रहते थे। **पूज्य छोटी माताजी मेरे लिए मेरी माँ से भी बढ़कर हैं जिनकी प्रेरणा से मैंने रथ प्रवर्तन के लिए हाँ करी थी। उनका स्नेह, और वात्सल्य मुझे हमेशा प्राप्त होता रहा जो मेरे लिए इस कार्य में ईंधन का कार्य करता था। आज जितनी भी योग्यता मेरे अंदर आयी, भाषण करने की, लोगों के प्रश्नों का उत्तर देने की, सभी का सामना करने की, सब उनकी ही देन है। भगवान से यही प्रार्थना है कि हमेशा माताजी का वही स्नेह बना रहे और बड़ी माताजी तो मेरे लिए भगवान का रूप हैं। इतना**

सरल स्वभाव इतनी बड़ी साध्वी होते हुए भी हर किसी में संभव नहीं है। व्यक्ति का व्यवहार ही उसका परिचय होता है। यह पंक्ति यहाँ पर चरितार्थ होती हैं, माताजी के आशीर्वाद से इतना कठिन कार्य सरल हो गया। मुझे ढंग से दर्शनं करना भी नहीं आता था और माताजी ने सारे देश की जैन समाज के सामने भेज दिया लेकिन माताजी के आशीर्वाद से मुझे हमेशा सफलता ही मिली है। उनका स्नेहयुक्त वरदहस्त सदैव हम सब बना रहे, यही वीरप्रभू से मंगल प्रार्थना है।

अंत में मैं पूरे स्टाफ का धन्यवाद भी करना चाहूँगा जिनके माध्यम से मैंने यह विजय प्राप्त की है। स्टाफ के सभी सदस्यों ने कभी किसी कार्य के लिए मना नहीं किया। हम लोग पूरी-पूरी रात चलते रहे, लेकिन सभी ने सदैव हँसते हुए मेरा साथ दिया और प्रत्येक कार्य में पूरा-पूरा श्रम किया। किसी ने भी रात को रात व दिन को दिन नहीं समझा, हर वक्त तैयार रहते थे। आज इतना कठिन दिखने वाला कार्य इसीलिए सम्पन्न हुआ है।

अन्त में इतना ही कहते हुए मैं अपनी लेखनी को विराम देता हूँ कि.........

''मुश्किलें आसान से आसान्तर होती गईं
शायद दूर से कोई मुझको दुआ देता रहा''।।

* * *

मैंने महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) को बनाया नहीं बचाया है

''26 सदियों पूर्व विदेहप्रान्त के जिस कुण्डलपुर नगर को भगवान महावीर के जन्म देने हेतु स्वयं इन्द्रों ने सजाया था, जहां 7 मंजिला अत्यन्त भव्य स्वर्णिम ''नंद्यावर्त महल''* था, जिसमें मणियों के पलंग पर शयन करते हुए महावीर के गर्भावतरण के समय माता त्रिशला ने सोलह स्वप्न देखे थे, ऐसे महान पुण्य तीर्थ ''कुण्डलपुर'' (नालन्दा) की वर्तमान स्थिति को देखकर ''भगवान महावीर 2600वें जन्मकल्याणक महोत्सव वर्ष'' (सन् 2001-2002) में मैंने उसके जीर्णोद्धार एवं विकास की प्रेरणा दी।

मैंने कुण्डलपुर नाम के किसी नए तीर्थ को बनाने का संकल्प नहीं लिया है वरन् सदियों से बसी हुई जो भगवान महावीर जन्मभूमि थी, उसे भुलाने का जब प्रयास किया गया तब इसके पुनर्विकास के पुरुषार्थ की प्रेरणा मैंने प्रदान की है। हमने नए तीर्थ को बनाया नहीं वरन् प्राचीन तीर्थ को नया रूप देकर उसे बचाया है।

आज तीर्थंकर भगवन्तों की जन्मभूमियां तो उपेक्षित पड़ी हैं और उनके नाम के अतिशयक्षेत्र हजारों-लाखों दीपकों से शोभायमान हो रहे हैं, यह किस प्रकार का न्याय है? आज पद्मपुरी जगमगा रही है तो भगवान पद्मप्रभु की जन्मभूमि कौशाम्बी वीरान है, तिजारा (अलवर) सर्वपूज्य हो रहा है तो भगवान चन्द्रप्रभु की जन्मभूमि चन्द्रपुरी वीरान है, महावीरजी (राज.) भीड़ से भरा हुआ है तो भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर अविकसित है। मेरा मतलब है कि अतिशय क्षेत्र भी पूजे जाएं परंतु जन्मभूमियों के विकास के प्रति जैनसमाज को सर्वप्रथम सजग होना चाहिए। प्राथमिकता के साथ सभी श्रावकों को तीर्थंकर जन्मभूमियों के विकास का उद्यम करना चाहिए क्योंकि जन्म लिए बिना न अतिशय क्षेत्र बन सकते हैं और न निर्वाणभूमियाँ बस सकती हैं। तीर्थंकर जन्मभूमियां हमारी संस्कृति की उद्गम स्थली हैं, उनकी सुरक्षा भारतीय संस्कृति की सुरक्षा है।

जन्मभूमि सुरक्षा के इस पुनीत कार्य में जिन पुण्यात्माओं ने तन-मन-धन से सहयोग प्रदान किया है वे सभी बहुत-बहुत मंगल आशीर्वाद के पात्र हैं।''

गणिनी ज्ञानमती माताजी

भगवान महावीर जन-जन के हैं

पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी जिनका नाम ही स्वयं में उनका परिचय है, अलग से उन पूज्य माताजी का परिचय देने की शायद आवश्यकता ही नहीं है। वर्तमान युग की माता सरस्वती, जिन्होंने 275 ग्रंथों की रचना करके समाज को अमूल्य निधि प्रदान की है उनकी लेखनी आज भी बंद नही है, षट्खण्डागम नामक महान सिद्धान्तग्रंथ की सिद्धान्तचिन्तामणि टीका का लेखन वर्तमान में उनकी लेखनी से चल रहा है। 16 पुस्तकों में से 13 पुस्तकों की टीका माताजी पूर्ण कर चुकी हैं। कुण्डलपुर विकास की श्रृंखला में जिस समय रथ प्रवर्तन की बात चली तो सभी लोग कहने लगे माताजी! लोग क्या कहेंगे कि पहले एक रथ, फिर दूसरा रथ और अब तीसरा रथ। सभी लोग संकोचवश कुछ कह नहीं पा रहे थे। माताजी कहने लगी कि भगवान महावीर अकेले मेरे या कमेटी के नहीं है भगवान महावीर जन-जन के हैं और जन-जन को मिलकर ही उनकी जन्मभूमि को विकसित करना है तथा जन्मभूमि से जुड़ना है।

आज हमारे देश में एक हजार पिच्छीधारी साधु विद्यमान हैं। उन सबमें सबसे प्राचीन दीक्षित वर्तमान में पूज्य माताजी एवं आचार्यों में संत शिरोमणि श्री विद्यासागरजीं महाराज हैं। दोनों शीर्षस्थ संतों ने एक-एक कुण्डलपुर संभाल लिया। अब कुण्डलपुर तो विकसित होगा ही होगा जिसका पुण्य हो वह इसके साथ जुड़कर यश और पुण्य कमा ले। **माताजी जैसे संत के लिए किसी तीर्थ को विकसित कर देना बहुत बड़ी बात नहीं है लेकिन पूज्य माताजी की सदैव से इच्छा रही है कि कार्य कोई ऐसा हो, जिसमें जन-जन की भावना जुड़े, जन-जन का हाथ उस पुण्य कार्य में लगे। मात्र इसी भावना के साथ इसका प्रवर्तन सारे देश में किया गया। हम रथ को लेकर सागर पहुँचे। सागर वाले बोले यदि माताजी आज्ञा दे तो हम सागर की तरफ से ही पूरे कुण्डलपुर का विकास करवा दें। जयपुर नगर में वहाँ के विधायक जी कहने लगे कि हमारे यहाँ 25000 घर जैनियों के हैं, यदि जयपुर वाले चाहें तो कुण्डलपुर अकेले ही बना दें। इसी क्रम में कोटा, जबलपुर एवं अनेक नगर वालों ने अपनी भावनाएँ व्यक्त करीं। लेकिन माताजी की सदैव यही भावना रही है कि सारे देश की जैन समाज कुण्डलपुर से जुड़े और इसके लिए रथ प्रवर्तन से ज्यादा अच्छा एवं सशक्त माध्यम और कोई नहीं हो सकता था।**

अब तक माताजी की प्रेरणा से तीन रथों का भ्रमण सारे देश में हुआ जिसके प्रतिफल में हमने जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर, भगवान ऋषभदेव तपस्थली प्रयाग-इलाहाबाद एवं बहुत हीं अल्प समय में (मात्र 18 महीने में) भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर-नंद्यावर्त महल तीर्थ को पाया है **आज यदि पैसे का सदुपयोग देखना हो तो इन क्षेत्रों का भ्रमण करें। आपको गर्व होगा कि हमारा एक रुपया सौ रुपये में चल गया है। भगवान महावीर ज्योति रथ के माध्यम से हमें जो भी द्रव्य प्राप्त हुआ है उसका एक-एक पैसा क्षेत्र पर लगा हुआ है। जो भी देखना चाहे वो क्षेत्र का अवलोकन स्वयं कुण्डलपुर आकर कर सकते हैं।**

मैंने इस रथ के साथ लगभग 750 गाँवों व नगरों में भ्रमण किया है। सभी स्थानों पर हमें लगभग ठीक ही रिस्पाँस प्राप्त हुआ है। कहीं कम व ज्यादा तो रहा है लेकिन विरोध वाली बात आज तक कहीं भी नहीं हुई। बहुत ज्यादा राशि नहीं प्राप्त हुई लेकिन लोगों का स्नेह एवं प्यार खूब प्राप्त हुआ साथ ही धर्म का प्रचार-प्रसार एवं संस्कृति के संरक्षण में जो चेतना जागृत हुई वह हमारे लिए किसी भी राशि से ज्यादा महत्वपूर्ण है। क्षेत्र को बनाने के लिए सभी चीजों की आवश्यकता होती है सबसे महत्वपूर्ण बात इस यात्रा के माध्यम से जनमत की प्राप्ति हुई है। इस यात्रा ने दिग्विजय प्राप्त की है। इस धर्मचक्र को रोकने का साहस किसी ने नहीं किया है। इस रिपोर्ट में मैंने सभी गाँवों व नगरों का विवरण देने का प्रयास किया है यदि भूल से किसी ग्राम का विवरण छूट गया हो तो आप सभी से क्षमा चाहूँगा। सारे देश की जैन समाज ने इस यात्रा के माध्यम से तन-मन-धन से जो सहयोग कुण्डलपुर को प्रदान किया है समिति सभी की आभारी है एवं सभी को हार्दिक धन्यवाद देती है।

यात्रा के कुछ खास संस्मरण

पूज्य माताजी की सदैव से ये इच्छा रही कि इस यात्रा के मध्य हुए कुछ विशेष संस्मरणों को मैं इस लेख के माध्यम से आप् सभी तक पहुँचाऊँ। चूँकि यह भारतयात्रा है अतः इस यात्रा में कुछ खट्टे, कुछ मीठे अनुभव रहे हालाँकि हर बात अपने आप में मुझे कुछ सीख दे गई। हर रात के बाद दिन आता है हर दिन के बाद दोपहर और हर दोपहर के साथ शाम आती है उसी प्रकार से कुछ लोग बहुत अच्छे होते हैं। जिनकी स्मृति मानसपटल पर सदैव के लिए अंकित हो जाती है और अमिट रहती है। शुरू में बहुत ज्यादा खराब अनुभव रहा। गर्मी बहुत थी और रात्रि में 10 से 16 घण्टे तक लाइट की कटौती रहती थी। पानी बहुत कम मिलता था। 2-3 दिन में एक बार नलों में पानी आने की वजह से पानी मिलने में कठिनाई होती थी। यदि किसी घर में पानी के लिए जाना हो तो सोचना पड़ता था। फिर भी यात्रा की कुछ विशेष स्मृतियाँ हैं जिन्हें आप सभी के सम्मुख रखकर मैं उन्हें ताजा करना चाहता हूँ।

* राजस्थान में मैं एक स्थान पर पहुँचा। सभा हुई, हमारे भाषण हुए, एक व्यक्ति मेरी तरफ बहुत देर से देख रहा था। भाषण समाप्त होते ही मेरे पास आया और बोला जैसा आपके जम्बूद्वीप वालों ने किया यदि मैं आपके साथ करूँ तो कैसा लगेगा। मैंने पूछा भइया क्या किया हमारे लोगों ने आपके साथ? वह सज्जन बोले मुझे खाना बांधकर नहीं दिया, मैं बाजार का नहीं खाता था लेकिन मेरे बहुत बार कहने पर भी मुझे खाना बांध कर नहीं दिया यदि मै भी आप लोगों को नहीं खिलाऊं तो! वह व्यक्ति बहुत गुस्से में था। मैंने सहजभाव से कह दिया कि हमें तो कोई फर्क नहीं पड़ेगा लेकिन हमारे एक कर्मचारी की गलती को आप अभी तक याद रखे हैं तो हमारे 12 व्यक्ति आपको कब तक याद रखेंगे और यदि फिर भी आप उस कर्मचारी जैसा बनना चाहें तो आप की मर्जी फिर नौकर तो नौकर ही होता है अगर आपने यह बात उस कर्मचारी की बजाय वहाँ के मैनेजर या भाई जी को बताई होती तो शायद आपकी समस्या का समाधान तुरंत हो गया होता तब वह व्यक्ति बहुत शर्मिन्दा हुए बोले कोई भी बिना खाना खाये नहीं जायेगा और स्वयं खड़े होकर खाना खिलाया।

* एक ग्राम में हम सब लोग सभा के पश्चात् रथ पर पहुँचे, पालना झुलाने का कार्यक्रम हुआ। शोभायात्रा चली गयी। एक बंधु मेरे पास आकर बोले महावीर बालक तो एक थे लेकिन आप तो रोज महावीर बनाते हैं मैंने कहा भाई साहब! हमारी माताजी का वश चले तो वह सारे विश्व को महावीर बना दें और आप इन 100/200 बच्चों की बात कर रहे हो और फिर महावीर ही तो बना रहे हैं कोई चोर-डाकू तो नहीं बना रहे हैं। यह सुनकर वह सज्जन बड़े प्रभावित हुए और निरूत्तर हो चुपचाप चले गए।

* हम लोग उत्तरप्रदेश के एक नगर कासगंज में पहुँचे। धर्मशाला में पहुँचते ही मैनेजर कहने लगा आप लोगों को मना किया था, क्यों आ गये, एक समाज के व्यक्ति भी गर्म होकर कहने लगे मना करने पर क्यों आये, मैंने कहा भाईसाहब हम आपकी धर्मशाला का किराया दे देंगे खोल तो दो, खैर उसने खोल दिया हम सबने अपना खाना बनाया और खाया। मंदिर के सामने दुकान वाले एक सज्जन आये बोले करोड़ों रुपया जम्बूद्वीप में है उसके बावबजूद आप लोग मांगते हैं। माताजी से कहिये अस्पताल बनायें, औषधालय बनायें और बहुत सी बातें इधर-उधर की करने लगे बोले मंदिर में पूजा करने वाले नहीं मिलते हैं। मैंने कहा-लाला जी! जम्बूद्वीप तो करोड़ो का नहीं अरबों का हो गया है। आपको मूल्याकंन करना नहीं आता है। 65/70 वर्ष की उम्र में दुकान का मोह नहीं छूटता है। माताजी ने कुण्डलपुर का प्रोजेक्ट लिया तो किसी ने एक रुपया दिया, किसी ने एक लाख दिये, किसी ने गाली दी पर उन्हें कोई फर्क नहीं पड़ता क्योंकि वह तो वीतरागी साधु हैं एक काम करो–आप घर से निकलो, अस्पताल बनाओ मैं 5000 रुपये आपको देता हूँ आखिर सारी अपेक्षाएं माताजी से क्यों? एक पुरुष होकर नारी से अपेक्षा, लालाजी बोले मैं तो सजेशन दे रहा था। मैंने कहा लाला, कोरी बातें न करो चलो हमारे साथ तब वे सज्जन हंसने लगे। मैंने कहा-अगर इतने ही अस्पताल प्रेमी हैं तो अपने मंदिर में ही खुलवा लीजिए। आज तक अपनी दुकान से कभी किसी गरीब को 100 रुपये की भी दवाई दी, उनका सर शर्मिंदगी से झुक गया। मैंने पुनः पूछा आज तक आपने हमारे जम्बूद्वीप में कितना पैसा दिया तब तो लालाजी मानो जमीन में ही गड़े जा रहे थे और उनके तो मुँह से बोल ही नहीं निकले। मैंने कहा-लाला जी! सजेशन कोरा-कोरा मत दो। इतनी

मोटी-मोटी किताबें पढ़ते हो, स्वाध्याय करते हो, वात्सल्य और प्रेम के शब्द नहीं पढ़े। आदमी आपकी दुकान पर चाबी पूछने आया आपने बिठा कर पानी नहीं पूछा, कैसा सफर रहा ये नहीं पूछा, बाकी सारी बातें पूछ लीं। बेचारे लाला का सर झुका का झुका रह गया, उठकर चले गये। तब एक बात मन में आई कि हर स्थान पर करने वाले कम कहने वाले ज्यादा मिलते हैं और सच तो यह है कि आजकल लोग सुनी-सुनाई बातों पर ज्यादा विश्वास करते हैं अगर वह पूज्य माताजी की चर्या व उनका जीवन कुछ समय उनके नजदीक रहकर देख लें तो वर्तमान में उनके जैसा आगमनिष्ठ और निर्दोष चर्यारत साधु शायद ही कोई मिल पाएगा, ऐसा मेरा प्रबल विश्वास है।

* राजस्थान के बागीदौरा नगर में माननीय मुख्यमंत्री जी का कार्यक्रम सिर्फ आधे घंटे में मिलना वो भी सिर्फ मेरे थोड़े से प्रयास मात्र से, इसे मैं एक बहुत बड़ी उपलब्धि मानता हूँ और माताजी का आशीर्वाद ही मानता हूँ क्योंकि बिना कार्यक्रम के मुख्यमंत्री का आना एक दिवास्वप्न जैसा है। उस समय जब लोगों से बात भी करो तो मजाक में उड़ा देते थे कि भला मुख्यमंत्री जी कहाँ आ पाएंगी लेकिन वास्तव में संतों का आशीर्वाद और लगन व मेहनत से किया गया कठिन कार्य भी एक न एक दिन सफल हो ही जाता है।

यूँ तो संस्मरण बहुत से है परन्तु एक आखिरी बात के साथ समाप्त करता हूँ एक दिन हम लोग रथ लेकर चले आ रहे थे रास्ते में बहुत तेज आंधी आयी देखते ही देखते अंधेरा हो गया। ड्राइवर बोला-भइया! कुछ दिखाई नहीं दे रहा है। मैंने पूज्य माताजी द्वारा मंत्रित सरसों णमोकार मंत्र पढ़कर ऊपर फेंक दी जितने में रथ खड़ा था उस स्थान पर कुछ नहीं हुआ आगे-पीछे सब ओर आंधी ही आंधी थी यह तो एकदम चमत्कार सा हो गया।

मैंने यात्रा के प्रत्येक क्षण में यह अनुभव किया है कि यात्रा के मध्य जब भी कोई संकट आता था आँखे बंद करके भगवान का व माताजी का नाम लेते ही संकट दूर हो जाता था। इतनी बड़ी यात्रा में कोई घटना न होना यह संतों का ही आशीर्वाद है। मन में हमेशा एक विश्वास रहा कि भगवान के साथ चल रहे हैं क्या होगा और जो भी होगा अच्छा ही होगा और वही हुआ। आखिर होता भी क्यों नहीं जिन माताजी का आशीर्वाद लेकर हम निकले थे उनके 52 वर्षों के दीक्षित जीवन की तपस्या का पुण्य प्रताप का कुछ अंश तो उनके वरदहस्त के रूप में सदैव हम सब पर बना ही रहा है।

* * *

जो शास्त्र लिखे तुमने माता, उसको पढ़ कई विद्वान बने।
जिनको तुमसे शिक्षाएं मिलीं, विद्वानों में शिरमौर्य बने।।
विद्वानों की तुम जननी हो, सब कहें ''वाग्देवी'' हो तुम।
हे विद्वत्जननी ज्ञानमती माँ, तुम चरणों में शत वन्दन।।

भगवान महावीर ज्योति रथ का प्रवर्तन जिन प्रदेशों एवं नगरों में हुआ उनके नामों की सूची यहाँ प्रस्तुत है —

मध्यप्रदेश प्रवर्तन की सूची

(4-5-03 से 17-10-03)

क्र.सं.	स्थान	जिला	दिनांक	क्र.सं.	स्थान	जिला	दिनांक
1.	इंदौर	इंदौर	4-5-2003	35.	जावर	सिहोर	28-5-2003
2.	वेड़िया	खरगोन	6-5-2003	36.	मेतवाडा	सिहोर	28-5-2003
3.	पीपलगोन	खरगोन	6-5-2003-	37.	सोनकच्छ	देवास	29-5-2003
4.	खामखेड़ा	खरगोन	6-5-2003	38.	देवास	देवास	30-5-2003
5.	सनावद	खरगोन	7-5-2003	39.	उज्जैन	उज्जैन	31-5-2003
6.	बड़वाह	खरगोन	8-5-2003	40.	मक्सी	उज्जैन	1-6-2003
7.	कसरावद	खरगोन	9-5-2003	41.	सारंगपुर	राजगढ़	2-6-2003
8.	बालसमुद	खरगोन	9-5-2003	42.	व्यावरा	राजगढ़	2-6-2003
9.	महेश्वर	खरगोन	10-5-2003	43.	बीनागंज	गुना	3-6-2003
10.	धामनोंद	धार	11-5-2003	44.	आवन	गुना	3-6-2003
11.	धर्मपुरी	धार	11-5-2003	45.	कुंभराज	गुना	4-6-2003
12.	बाकानेर	धार	12-5-2003	46.	राधौगढ़	गुना	5-6-2003
13.	मनावर	धार	12-5-2003	47.	आरौन	गुना	6-6-2003
14.	गन्धवानी	धार	13-5-2003	48.	गुना	गुना	7-6-2003
15.	सिंघाना	धार	13-5-2003	49.	शाढ़ौरा	गुना	7-6-2003
16.	लुहारी	धार	14-5-2003	50.	अशोकनगर	गुना	8-6-2003
17.	कुक्षी	धार	14-5-2003	51.	बमनावर	गुना	8-6-2003
18.	बडवानी	बडवानी	15-5-2003	52.	ईशागढ़	गुना	8-6-2003
19.	अंजड़	बडवानी	16-5-2003	53.	खतौरा	शिवपुरी	9-6-2003
20.	ऊन पावागिरि	खरगोन	16-5-2003	54.	बदरबास	शिवपुरी	9-6-2003
21.	खरगोन	खरगोन	17-5-2003	55.	कोलारस	शिवपुरी	10-6-2003
22.	भीकनगांव	खरगोन	18-5-2003	56.	शिवपुरी	शिवपुरी	11-6-2003
23.	अतर	खरगोन	18-5-2003	57.	पोहरी	शिवपुरी	12-6-2003
24.	कालमुखी	खरगोन	18-5-2003	58.	बैराड	शिवपुरी	12-6-2003
25.	खंडवा	खंडवा	19-5-2003	59.	मोहना	ग्वालियर	12-6-2003
26.	हरसूद	खंडवा	20-5-2003	60.	ग्वालियर	ग्वालियर	13-6-2003
27.	खिरकिया	हरदा	21-5-2003	61.	डबरा	ग्वालियर	14-6-2003
28.	हरदा	हरदा	22-5-2003	62.	भितरवार	ग्वालियर	14-6-2003
29.	खातेगांव	देवास	23-5-2003	63.	मगरौनी	शिवपुरी	14-6-2003
30.	अजनास	देवास	24-5-2003	64.	करैरा	शिवपुरी	15-6-2003
31.	लोहारदा	देवास	25-5-2003	65.	झांसी	झांसी	16-6-2003
32.	सतवास	देवास	25-5-2003	66.	B.H.E.L.	झांसी	16-6-2003
33.	कन्नौद	देवास	26-5-2003	67.	बबीना कैंट	ग्वालियर	17-6-2003
34.	आष्टा	सिहोर	27-5-2003	68.	तालबेहट	ललितपुर	17-6-2003

क्र.सं.	स्थान	जिला	दिनांक
69.	खनियाधाना	शिवपुरी	18-6-2003
70.	बामौरकला	शिवपुरी	18-6-2003
71.	चंदेरी	गुना	19-6-2003
72.	सेहराई	गुना	19-6-2003
73.	मुंगावली	गुना	20-6-2003
74.	पिपरई	गुना	21-6-2003
75.	जखौरा	ललितपुर	22-6-2003
76.	ललितपुर	ललितपुर	22-6-2003
77.	महरौनी	ललितपुर	23-6-2003
78.	सैदपुर	ललितपुर	23-6-2003
79.	साढूमल	ललितपुर	23-6-2003
80.	मड़ावरा	ललितपुर	24-6-2003
81.	टीकमगढ़	टीकमगढ़	25-6-2003
82.	दिगौड़ा	टीकमगढ़	26-6-2003
83.	पृथ्वीपुर	टीकमगढ़	26-6-2003
84.	निवाड़ी	टीकमगढ़	26-6-2003
85.	सकरार	झांसी	27-6-2003
86.	रानीपुर	झांसी	27-6-2003
87.	मऊरानीपुर	झांसी	28-6-2003
88.	गुरसराय	झांसी	29-6-2003
89.	जतारा	टीकमगढ़	30-6-2003
90.	मंजना	टीकमगढ़	30-6-2003
91.	मवई	टीकमगढ़	1-7-2003
92.	भेलसी	टीकमगढ़	1-7-2003
93.	बलदेवगढ़	टीकमगढ़	1-7-2003
94.	खरगापुर	टीकमगढ़	2-7-2003
95.	नौगांव	छतरपुर	2-7-2003
96.	छतरपुर	छतरपुर	3-7-2003
97.	गुलगंज	छतरपुर	3-7-2003
98.	बड़ामलहरा	छतरपुर	4-7-2003
99.	द्रोणगिरि	छतरपुर	4-7-2003
100.	भगवां	छतरपुर	5-7-2003
101.	घुवारा	छतरपुर	5-7-2003
102.	बड़ागांव धसान	छतरपुर	6-7-2003
103.	रामटौरिया	छतरपुर	6-7-2003
104.	शाहगढ़	सागर	7-7-2003
105.	मड़देवरा	छतरपुर	7-7-2003
106.	हीरापुर	सागर	7-7-2003
107.	बक्सवाहा	छतरपुर	8-7-2003
108.	सुनवाहा	छतरपुर	8-7-2003
109.	बम्हौरी	छतरपुर	8-7-2003
110.	नैनागिर	छतरपुर	9-7-2003
111.	दलपतपुर	सागर	9-7-2003
112.	कर्रापुर	सागर	10-7-2003
113.	बंडाबेलाई	सागर	10-7-2003
114.	सानोधा	सागर	11-7-2003
115.	परसोरिया	सागर	11-7-2003
116.	पथरिया	दमोह	12-7-2003
117.	गढ़ाकोटा	सागर	13-7-2003
118.	रहेली	सागर	13-7-2003
119.	देवरी	सागर	14-7-2003
120.	महाराजपुर	सागर	14-7-2003
121.	गौरझामर	सागर	15-7-2003
122.	टड़ा	सागर	15-7-2003
123.	केसली	सागर	16-7-2003
124.	सुरखी	सागर	16-7-2003
125.	मकरोनियां	सागर	17-7-2003
126.	ढाना	सागर	17-7-2003
127.	खुरई	सागर	18-7-2003
128.	जरूआखेड़ा	सागर	19-7-2003
129.	नरयावली	सागर	19-7-2003
130.	सागर	सागर	20-7-2003
131.	राहतगढ़	सागर	21-7-2003
132.	जेसीनगर	सागर	21-7-2003
133.	शाहपुर	सागर	22-7-2003
134.	बांसा तारखेड़ा	सागर	22-7-2003
135.	दमोह	दमोह	23-7-2003
136.	वनगांव	दमोह	23-7-2003
137.	हटा	दमोह	24-7-2003
138.	पटेरा	दमोह	24-7-2003
139.	कुंडलपुर	दमोह	24-7-2003
140.	आभाना	दमोह	25-7-2003
141.	नौहटा	दमोह	26-7-2003
142.	जवेरा	दमोह	26-7-2003

क्र.सं.	स्थान	जिला	दिनांक
143.	कटंगी	जबलपुर	27-7-2003
144.	सिंग्रामपुर	दमोह	27-7-2003
145.	पाटन	जबलपुर	28-7-2003
146.	तेदूंखेड़ा	दमोह	28-7-2003
147.	जबलपुर	जबलपुर	30-7-2003
148.	पनागर	जबलपुर	31-7-2003
149.	गोसलपुर	जबलपुर	31-7-2003
150.	खितौला बाजार	जबलपुर	31-7-2003
151.	सीहोरा	जबलपुर	31-7-2003
152.	पहाड़ी	कटनी	1-8-2003
153.	तिवरी	कटनी	1-8-2003
154.	कटनी	कटनी	3-8-2003
155.	रीठी	कटनी	4-8-2003
156.	बड़गांव	कटनी	4-8-2003
157.	रैपुरा	पन्ना	5-8-2003
158.	कुंवरपुर	पन्ना	5-8-2003
159.	सिमरिया	पन्ना	5-8-2003
160.	पवई	पन्ना	6-8-2003
161.	अमानगंज	पन्ना	6-8-2003
162.	महेवा	पन्ना	7-8-2003
163.	गुन्नौर	पन्ना	7-8-2003
164.	सलेहा	पन्ना	8-8-2003
165.	देवेन्द्रनगर	पन्ना	8-8-2003
166.	पन्ना	पन्ना	9-8-2003
167.	व्रजपुर	पन्ना	9-8-2003
168.	सिंहपुर	सतना	10-8-2003
169.	नागौद	सतना	10-8-2003
170.	सतना	सतना	11-8-2003
171.	अमरपाटन	सतना	12-8-2003
172.	रीवा	रीवा	12-8-2003
173.	देवलोंद	शहडोल	13-8-2003
174.	ब्योहारी	शहडोल	13-8-2003
175.	शहडोल	शहडोल	14-8-2003
176.	बुढ़ार	शहडोल	15-8-20031
177.	चचाई	शहडोल	15-8-2003
178.	कोतमा	शहडोल	16-8-2003
179.	मनेन्द्रगढ़	(कोरिया) छत्ति.	16-8-2003
180.	पेन्ड्रा	विलासपुर	17-8-2003
181.	गोरेला	विलासपुर	17-8-2003
182.	विलासपुर	विलासपुर	18-8-2003
183.	अकलतरा	जांजगीर	19-8-2003
184.	भाटापारा	रायपुर	20-8-2003
185.	अर्जुनी (आरती)	रायपुर	20-8-2003
186.	बलोदा बाजार	रायपुर	20-8-2003
187.	रायपुर	रायपुर	21-8-2003
188.	नवापारा	रायपुर	21-8-2003
189.	धमतरी	धमतरी	22-8-2003
190.	भिलाई	दुर्ग	16-9-2003
191.	वैशालीनगर	दुर्ग	16-9-2003
192.	दुर्ग	दुर्ग	17-9-2003
192.	पद्मनाभपुर	दुर्ग	17-9-2003
194.	राजनांदगांव	राजनांदगांव	18-9-2003
195.	डोंगरगांव	राजनांदगांव	19-9-2003
196.	डोंगरगढ़	राजनांदगांव	19-9-2003
197.	देवरी	गोंदिया	19-9-2003
198.	आमगांव	गोंदिया	19-9-2003
199.	गोदिया महा.	गोंदिया	20-9-2003
200.	बालाघाट	बालाघाट	21-9-2003
201.	वारासिवनी	बालाघाट	21-9-2003
202.	लालावर्रा	बालाघाट	22-9-2003
203.	वरघाट	सिवनी	22-9-2003
204.	सिवनी	सिवनी	23-9-2003
205.	केवलारी	सिवनी	23-9-2003
206.	मंडला	मंडला	24-9-2003
207.	घन्सौर	सिवनी	24-9-2003
208.	लखनादौन	लखनादौन	25-9-2003
209.	छपारा	सिवनी	25-9-2003
210.	नरसिंहपुर	नरसिंहपुर	26-9-2003
211.	गाडरवाड़ा	नरसिंहपुर	26-9-2003
212.	पिपरिया	होशंगाबाद	27-9-2003
213.	चांद्रामेटा	छिन्दवाड़ा	27-9-2003
214.	परासिया	छिन्दवाड़ा	27-9-2003
215.	छिन्दवाड़ा	छिन्दवाड़ा	28-9-2003
216.	वैतूल	वैतूल	29-9-2003

क्र.सं.	स्थान	जिला	दिनांक
217.	इटारसी	होशंगाबाद	30-9-2003
218.	सिवनी मालवा	होशंगाबाद	30-9-2003
219.	बानापुरा	होशंगाबाद	30-9-2003
220.	होशंगाबाद	होशंगाबाद	1-10-2003
221.	बावई	होशंगाबाद	1-10-2003
222.	ओवेदुल्लागंज	रायसेन	2-10-2003
223.	बाडी	रायसेन	2-10-2003
224.	बरेली	रायसेन	3-10-2003
225.	बम्हौरी	रायसेन	3-10-2003
226.	सिलवानी	रायसेन	4-10-2003
227.	बेगमगंज	रायसेन	4-10-2003
228.	गैरतगंज	रायसेन	5-10-2003
229.	गढ़ी	रायसेन	5-10-2003
230.	रायसेन	रायसेन	6-10-2003
231.	सलामतपुर	रायसेन	6-10-2003
232.	विदिशा	विदिशा	7-10-2003
233.	गंजबासौदा	विदिशा	8-10-2003
234.	कुरवाई	विदिशा	8-10-2003
235.	मंडी बामौरा	सागर	9-10-2003
236.	सिंरोज	विदिशा	9-10-2003
237.	बेरासिया	भोपाल	10-10-2003
238.	पंचशीलनगर	भोपाल	10-10-2003
239.	पिपलानी	भोपाल	11-10-2003
240.	बड़नगर	उज्जैन	12-10-2003
241.	रतलाम	रतलाम	13-10-2003
242.	जावरा	रतलाम	14-10-2003
243.	दालोदा	मंदसौर	14-10-2003
244.	मंदसौर	मंदसौर	15-10-2003
245.	मल्हारगढ़	मंदसौर	15-10-2003
246.	मनासा	नीमच	16-10-2003
247.	जावद	नीमच	16-10-2003
248.	नीमच	नीमच	17-10-2003

राजस्थान प्रवर्तन की सूची

(19-10-03 से 23-5-04)

क्र.सं.	स्थान	जिला	दिनांक
1.	कोटा (गीता भवन)	कोटा	19-10-03
2.	कोटा	कोटा	20-10-03
3.	कोटा	कोटा	21-10-03
4.	कोटा	कोटा	22-10-03
5.	कैथून	कोटा	30-10-03
6.	देवलीमांझी	कोटा	30-10-03
7.	सांगोद	कोटा	31-10-03
8.	चांदखेड़ी	झालावाड़	31-10-03
9.	झालावाड़	झालावाड़	1-11-03
10.	झालरापाटन	झालावाड़	2-11-03
11.	पिडावा	झालावाड़	3-11-03
12.	सुसनेर (म.प्र.)	शाजापुर (म.प्र.)	4-11-03
13.	भवानीमंडी	झालावाड़	5-11-03
14.	रामगंज मंडी	कोटा	6-11-03
15.	रावतभाटा	चित्तौड़गढ़	7-11-03
16.	बोराव	चित्तौड़गढ़	8-11-03
17.	डाबी	बूंदी	9-11-03
18.	बिजौलिया	भीलवाड़ा	10-11-03
19.	तालेड़ा	बूंदी	11-11-03
20.	केशवरायपाटन	बूंदी	12-11-03
21.	कापरेन	बूंदी	13-11-03
22.	लाखेरी	बूंदी	14-11-03
23.	इन्द्रगढ़	बूंदी	14-11-03
24.	देई	बूंदी	15-11-03
25.	नैनवां	बूंदी	15-11-03
26.	बूंदी	बूंदी	16-11-03
27.	बारां	बारां	17-11-03
28.	आटरू	बारां	17-11-03
29.	छीपाबड़ौत	बारां	18-11-03
30.	अकलेरा	झालावाड़	18-11-03

क्र.सं.	स्थान	जिला	दिनांक
31.	हिण्डोली	बूंदी	19-11-03
32.	पेंच की बावड़ी	बूंदी	20-11-03
33.	देवली	टोंक	20-11-03
34.	जहाजपुर	भीलवाड़ा	21-11-03
35.	खजूरी	भीलवाड़ा	21-11-03
36.	धामनिया	भीलवाड़ा	21-11-03
37.	महुआ	भीलवाड़ा	22-11-03
38.	मानपुरा	भीलवाड़ा	22-11-03
39.	मांडलगढ़	भीलवाड़ा	23-11-03
40.	बेगू	चित्तौड़गढ़	23-11-03
41.	चैची	चित्तौड़गढ़	24-11-03
42.	काकरिया तलाई	नीमच (म.प्र.)	24-11-03
43.	चित्तौड़गढ़	चित्तौड़गढ़	25-11-03
44.	शम्भूनगर	चित्तौड़गढ़	25-11-03
45.	निम्बाहेड़ा	चित्तौड़गढ़	26-11-03
46.	भीलवाड़ा	भीलवाड़ा	27-11-03
47.	कोटड़ी	भीलवाड़ा	28-11-03
48.	पारोली	भीलवाड़ा	28-11-03
49.	रोपाँ	भीलवाड़ा	29-11-03
50.	पन्डेर	भीलवाड़ा	29-11-03
51.	शाहपुरा	भीलवाड़ा	30-11-03
52.	कोठिया	भीलवाड़ा	30-11-03
	अवकाश चुनाव के कारण		
53.	गुलाबपुरा	भीलवाड़ा	2-12-03
54.	विजयनगर	अजमेर	2-12-03
55.	नसीराबाद	अजमेर	3-12-03
56.	सरवाड़	अजमेर	4-12-03
57.	जूनिया	अजमेर	4-12-03
58.	केंकड़ी	अजमेर	5-12-03
59.	सावर	अजमेर	6-12-03
60.	मेहरुकलां	अजमेर	6-12-03
61.	बघेरा	टोंक	7-12-03
62.	टोरड़ी	टोंक	7-12-03
63.	टोडारायसिंह	टोंक	8-12-03
64.	मालपुरा	टोंक	9-12-03
65.	पचेवर	टोंक	10-12-03
66.	डिग्गी	टोंक	10-12-03
67.	लावा	टोंक	11-12-0
68.	झिराना	टोंक	11-12-03

क्र.सं.	स्थान	जिला	दिनांक
69.	पीपलू	टोंक	12-12-03
70.	बगडी	टोंक	12-12-03
71.	निवाई	टोंक	13-12-03
72.	टोंक	टोक	14-12-03
73.	आंवा	टोंक	15-12-03
74.	दूनी	टोंक	15-12-03
75.	बनेठा	टोंक	16-12-03
76.	काकोड़	टोंक	16-12-03
77.	नगरफोर्ट	टोंक	17-12-03
78.	अलीगढ़	टोंक	17-12-03
79.	उनियारा	टोंक	18-12-03
80.	चौथ का बरवाड़ा	टोंक	19-12-03
81.	सवाई माधोपुर	सवाई माधोपुर	20-12-03
82.	सवाई माधोपुर	सवाई माधोपुर	21-12-03
	अवकाश 22-12-03 से 17-1-04 तक		
83.	जयपुर	जयपुर	18-1-03
84.	मालवीय नगर	जयपुर	19-1-03
85.	जवाहर नगर	जयपुर	20-1-03
86.	महावीर नगर	जयपुर	21-1-03
87.	मानसरोवर	जयपुर	22-1-03
88.	राजावत फार्म	जयपुर	22-1-03
89.	सांगानेर	जयपुर	23-1-03
90.	प्रतापनगर	जयपुर	23-1-04
91.	पदमपुरा	जयपुर	24-1-04
92.	कोटखावदा	जयपुर	24-1-04
93.	लालसोठ	जयपुर	25-1-04
94.	गंगापुर सिटी	सवाईमाधोपुर	26-1-04
95.	श्री महावीर जी	करौली	27-1-04
96.	हिण्डोन सिटी	करौली	27-1-04
97.	बयाना	भरतपुर	28-1-04
98.	धौलपुर	धौलपुर	29-1-04
99.	मनियां	धौलपुर	29-1-04
100.	राजाखेड़ा	धौलपुर	30-1-04
101.	डीग	धौलपुर	31-1-04
102.	कुम्हेर	भरतपुर	31-1-04
103.	भरतपुर	भरतपुर	1-2-04
104.	कॉमा	भरतपुर	2-2-04
105.	जुरहरा	भरतपुर	3-2-04
106.	पहाड़ी	भरतपुर	3-2-04

क्र.सं.	स्थान	जिला	दिनांक
107.	सीकरी	भरतपुर	4-2-04
108.	गोविन्दगढ़	अलवर	4-2-04
109.	रामगढ़	अलवर	5-2-04
110.	नौगांवा	अलवर	5-2-04
111.	फिरोजपुर झिरका	गुड़गाँवा	6-2-04
112.	तिजारा	अलवर	7-2-04
113.	अलवर	अलवर	8-2-04
114.	बड़ौदामेव	अलवर	9-2-04
115.	लक्ष्मणगढ़	अलवर	9-2-04
116.	कठूमर	अलवर	10-2-04
117.	खेरली	अलवर	10-2-04
118.	महबा	दौसा	11-2-04
119.	राजगढ़	अलवर	11-2-04
120.	बाँदीकुई	दौसा	12-2-04
121.	सिकन्दरा	दौसा	12-2-04
122.	दौसा	दौसा	13-2-04
123.	छारेड़ा	दौसा	13-2-04
124.	चित्तौड़ा रैनवाल	जयपुर	14-2-04
125.	माधोराजपुरा	जयपुर	15-2-04
126.	फागी	जयपुर	16-2-04
127.	चौरू	जयपुर	16-2-04
128.	मौजमाबाद	जयपुर	17-2-04
129.	दूदू	जयपुर	17-2-04
130.	नरायना	जयपुर	18-2-04
131.	सांभर लेक	जयपुर	18-2-04
132.	किशनगढ़ रैनवाल	जयपुर	19-2-04
133.	जोबनेर	जयपुर	19-2-04
134.	फुलेरा	जयपुर	20-2-04
135.	चौमू	जयपुर	21-2-04
136.	विराटनगर	जयपुर	21-2-04
137.	सीकर	सीकर	22-2-04
138.	धौंत	सीकर	23-2-04
139.	दांता	सीकर	23-2-04
140.	सुरेरा	सीकर	24-2-04
141.	खाचरियावास	सीकर	24-2-04
142.	बॉय	सीकर	25-2-04
143.	कोछोर	सीकर	25-2-04
144.	रानोली	सीकर	26-2-04
145.	फतहेपुर शेखावटी	सीकर	27-2-04
146.	चूरू	चूरू	27-2-04
147.	सुजानगढ़	चुरू	28-2-04
148.	लाडनूँ	नागौर	29-2-04
149.	डेह	नागौर	1-3-04
150.	नागौर	नागौर	2-3-04
151.	मेड़ता रोड	नागौर	3-3-04
152.	मेड़ता सिटी	नागौर	3-3-04
153.	कुचामन सिटी	नागौर	4-3-04
154.	मीठड़ी	नागौर	12-3-04
155.	नावां सिटी	नागौर	12-3-04
156.	मारोठ	नागौर	13-3-04
157.	मकराना	नागौर	13-3-04
158.	अजमेर	नागौर	14-3-04
159.	चांपानेरी	अजमेर	15-3-04
160.	गुढा खुर्द	अजमेर	15-3-04
161.	रूपनगढ़	अजमेर	16-3-04
162.	जोधपुर	जोधपुर	17-3-04
163.	मदनगंज-किशनगढ़	अजमेर	18-3-04
164.	जेठाना	अजमेर	19-3-04
165.	पीसांगन	अजमेर	19-3-04
166.	ब्यावर	अजमेर	20-3-04
167.	आनन्दपुर कालू	पाली	21-3-04
168.	निमाज	पाली	21-3-04
169.	पाली	पाली	22-3-04
170.	आबू रोड	सिरोही	23-3-04
171.	ओगणा	उदयपुर	24-3-04
172.	झाडोल (फ.)	उदयपुर	25-3-04
173.	खाखड़	उदयपुर	25-3-04
174.	कोल्यारी	उदयपुर	26-3-04
175.	बिछीवाड़ा	उदयपुर	26-3-04
176.	फलासिया	उदयपुर	27-3-04
177.	बावलवाडा	उदयपुर	28-3-04
178.	नयागाँव	उदयपुर	28-3-04
179.	छाणी	उदयपुर	29-3-04
180.	खैरवाड़ा	उदयपुर	30-3-04

क्र.सं.	स्थान	जिला	दिनांक
181.	केसरिया जी	उदयपुर	31-3-04
182.	परसाद	उदयपुर	1-4-04
183.	चावण्ड	उदयपुर	1-4-04
184.	सराडा	उदयपुर	2-4-04
185.	बड़गाँव	उदयपुर	2-4-04
186.	देवपुरा	उदयपुर	3-4-04
187.	झाडोल	उदयपुर	4-4-04
188.	सल्लाडा	उदयपुर	4-4-04
189.	बस्सी	उदयपुर	5-4-04
190.	जावद	उदयपुर	6-4-04
191.	अदवास	उदयपुर	6-4-04
192.	जगत	उदयपुर	7-4-04
193.	उथरदा	उदयपुर	7-4-04
194.	गींगला	उदयपुर	8-4-04
195.	गुंडेल	उदयपुर	8-4-04
196.	खरका	उदयपुर	9-4-04
197.	ओरबाडिया	उदयपुर	9-4-04
198.	करावली	उदयपुर	10-4-04
199.	सलूम्बर	उदयपुर	11-4-04
200.	सेरिया	उदयपुर	12-4-04
201.	डाल	उदयपुर	12-4-04
202.	टोडा	उदयपुर	13-4-04
202.	बडावली	उदयपुर	13-4-04
203.	इन्टाली खेड़ा	उदयपुर	14-4-04
204.	डगार	उदयपुर	14-4-04
205.	रठौड़ा	उदयपुर	15-4-04
206.	कुण्ड़ा	उदयपुर	15-4-04
207.	सैमारी	उदयपुर	16-4-04
208.	कल्याणपुर	उदयपुर	17-4-04
209.	टोकर	उदयपुर	17-4-04
210.	गुड़ा	उदयपुर	18-4-04
211.	हथाई	डूंगरपुर	18-4-04
212.	रामगढ़	डूंगरपुर	19-4-04
213.	आसपुर	डूंगरपुर	20-4-04
214.	झल्लारा	उदयपुर	21-4-04
215.	शेषपुर	उदयपुर	21-4-04
216.	धोलगिरिखेड़ा	उदयपुर	21-4-04
217.	मुंगेड	डूंगरपुर	21-4-04
218.	साबला	डूंगरपुर	22-4-04
219.	पालोदा	बांसवाड़ा	22-4-04
220.	लोहारिया	बांसवाड़ा	23-4-04
221.	गनोड़ा	बांसवाड़ा	23-4-04
222.	भीमपुर	बांसवाड़ा	24-4-04
223.	चन्दु जी का गढ़ा	बांसवाड़ा	24-4-04
224.	बांसवाड़ा	बांसवाड़ा	25-4-04
225.	खान्दूकॉलोनी	बांसवाड़ा	26-4-04
226.	तलवाड़ा	बांसवाड़ा	27-4-04
227.	गढ़ी	बांसवाड़ा	27-4-04
228.	परतापुर	बांसवाड़ा	28-4-04
229.	आंजना	बांसवाड़ा	29-4-04
230.	बोरी	बांसवाड़ा	29-4-04
231.	अरथूना	बांसवाड़ा	30-4-04
232.	डडूका	बांसवाड़ा	30-4-04
233.	नौगामा	बांसवाड़ा	1-5-04
234.	बागीदौरा	बांसवाड़ा	2-5-04
235.	कलिंजरा	बांसवाड़ा	3-5-04
236.	कुशलगढ़	बांसवाड़ा	3-5-04
237.	बड़ौदिया	बांसवाड़ा	4-5-04
238.	खमेरा	बांसवाड़ा	4-5-04
239	चुनाव के कारण विश्राम		5-5-04
240.	घाटोल	बांसवाड़ा	6-5-04
241.	नरवाली	बांसवाड़ा	7-5-04
242.	पारसोला	उदयपुर	7-5-04
243.	मुंगाणा	उदयपुर	8-5-04
244.	खुंता	उदयपुर	8-5-04
245.	धरियावद	उदयपुर	9-5-04
246.	प्रतापगढ़	चित्तौढ़गढ़	10-5-04
247.	पादरड़ी बड़ी	डूंगरपुर	11-5-04
248.	सरौदा	डूंगरपुर	11-5-04
249.	सागवाड़ा	डूंगरपुर	12-5-04
250.	भीलूड़ा	डूंगरपुर	12-5-04
251.	जेठाणा	डूंगरपुर	12-5-04
252.	पाड़वा	डूंगरपुर	13-5-04
253.	भासोर	डूंगरपुर	13-5-04

क्र.सं.	स्थान	जिला	दिनांक
254.	कोकापुर	डूंगरपुर	13-5-04
255.	बनकोडा	डूंगरपुर	14-5-04
256.	कतिसोर	डूंगरपुर	14-5-04
257.	सागवाड़ा क.	डूंगरपुर	15-5-04
258.	डूंगरपुर	डूंगरपुर	16-5-04
259.	चितरी	डूंगरपुर	17-5-04
260.	कुआं	डूंगरपुर	17-5-04
261.	पीठ	डूंगरपुर	18-5-04
262.	ओबरी	डूंगरपुर	18-5-04
263.	घाटा का गांव	डूंगरपुर	18-5-04
264.	ठाकरड़ा	डूंगरपुर	19-5-04
265.	आंतरी	डूंगरपुर	19-5-04
266.	बरदा	डूंगरपुर	19-5-04
267.	सालाथाणा	डूंगरपुर	20-5-04
268.	कनबा	डूंगरपुर	20-5-04
269.	छापी	डूंगरपुर	21-5-04
270.	बिछीवाड़ा	डूंगरपुर	21-5-04
271.	देवल	डूंगरपुर	22-5-04
272.	उदयपुर	उदयपुर	23-5-04

उत्तरप्रदेश प्रवर्तन की सूची

(26-5-04 से 1-7-04)

क्र.सं.	स्थान	जिला	दिनांक
1.	कोसीकला	मथुरा	26-5-04
2.	होडल	फरीदाबाद (हरि.	27-5-04
3.	पलवल	फरीदाबाद	28-5-04
4.	अलीगढ़	अलीगढ़	29-5-04
5.	आगरा (शालीमार इन.)	आगरा	30-5-04
6.	आगरा (राजामंडी)	आगरा	31-5-04
7.	फिरोजाबाद	फिरोजाबाद	1-6-04
8.	टूण्डला	फिरोजाबाद	2-6-04
9.	एत्मादपुर	आगरा	2-6-04
10.	जलेसर	एटा	3-6-04
11 .	अवागढ़	एटा	4-6-04
12.	कासगंज	एटा	5-6-04
13.	एटा	एटा	6-6-04
14.	कुरावली	मैनपुरी	7-6-04
15.	भौंगाव	मैनपुरी	7-6-04
16.	मैनपुरी	मैनपुरी	8-6-04
17.	घिरोर	मैनपुरी	9-6-04
18.	अरावँ	फिरोजाबाद	9-6-04
19.	शिकोहाबाद	फिरोजाबाद	10-6-04
20.	सिरसागंज	फ़िरोजाबाद	11-6-04
21.	जसवंतनगर	इटावा	12-6-04
22.	इटावा	इटावा	13-6-04
23.	करहल	मैनपुरी	14-6-04
24.	कन्नौज	कन्नौज	16-6-04
25.	कानपुर (काकादेव)	कानपुर	16-6-04
26.	जनरल गंज	कानपुर	17-6-04
27.	आनंदपुरी	कानपुर	18-6-04
28.	सीसामऊ	कानपुर	18-6-04
29.	लालबंगला	कानपुर	18-6-04
30.	बाराबंकी	बाराबंकी	19-6-04
31.	सुमेरगंज	बाराबंकी	19-6-04
32.	टिकैतनगर	बाराबंकी	20-6-04
33.	दरियाबाद	बाराबंकी	20-6-04
34.	फतेहपुर	बाराबंकी	21-6-04
35.	त्रिलोकपुर	बाराबंकी	21-6-04
36.	सीतापुर	सीतापुर	22-6-04
37.	सिधौली	सीतापुर	23-6-04
38.	बिसवा	सीतापुर	24-6-04
39.	महमूदाबाद	सीतापुर	25-6-04
40.	पैतेपुर	सीतापुर	25-6-04
41.	बिलहरा	सीतापुर	25-6-04
42.	गनेशपुर	बाराबंकी	26-6-04
43.	जरवल रोड	बहराइच	26-6-04
44.	बहराइच	बहराइच	27-6-04

क्र.सं.	स्थान	जिला	दिनांक	क्र.सं.	स्थान	जिला	दिनांक
45.	श्रावस्ती	बहराइच	27-6-04	52.	प्रतापगढ़	रायबरेली	1-7-04
46.	इटियाथोक	बहराइच	28-6-04	52.	कटरा मेदनीगंज	रायबरेली	1-7-04
47.	गोंडा	बहराइच	28-6-04	54.	मेरठ	मेरठ	17-7-04
48.	फैजाबाद	फैजाबाद	28-6-04	55.	लखनऊ	लखनऊ	22-7-04
49.	अयोध्या	फैजाबाद	28-6-04	56.	इलाहाबाद	इलाहाबाद	23-7-04
50.	रायबरेली	रायबरेली	29-6-04	57.	बनारस	बनारस	24-7-04
51.	जायस	रायबरेली	30-6-04				

हरियाणा व दिल्ली प्रवर्तन की सूची

(4-7-04 से 20-7-04)

क्र.सं.	स्थान	जिला	दिनांक	क्र.सं.	स्थान	जिला	दिनांक
1.	गुड़गांवा	गुड़गांवा	4-7-04	9.	सोनीपत	सोनीपत	11-7-04
2.	धाँरूहेड़ा	रेवाड़ी	5-7-04	10.	गन्नौर	सोनीपत	12-7-04
3.	रेवाड़ी	रेवाड़ी	6-7-04	11.	पानीपत	पानीपत	13-7-04
4.	भिवानी	रेवाड़ी	7-7-04	12.	करनाल	करनाल	14-7-04
5.	हांसी	हिसार	8-7-04	13.	अम्बाला शहर	अम्बाला	15-7-04
6.	हिसार	हिसार	8-7-04	14.	ऋषभ विहार	दिल्ली	18-7-04
7.	रोहतक	रोहतक	9-7-04	15.	शांति मोहल्ला	दिल्ली	19-7-04
8.	बहादुरगढ़	झज्जड़	10-7-04	16.	प्रीतविहार	दिल्ली	20-7-04

पूर्वांचल प्रवर्तन की सूची

(28-7-04 से 16-9-04)

क्र.सं.	स्थान	जिला	दिनांक	क्र.सं.	स्थान	जिला	दिनांक
1.	आरा	भोजपुर	25-7-04	12.	साड़म	बोकारो	3-8-04
2.	पटना	पटना	26-7-04	13.	पेटरवार	बोकारो	4-8-04
3.	नवादा	नवादा	27-7-04	14.	रामगढ़ कैंट	हजारीबाग	5-8-04
4.	हिसुआ	नवादा	27-7-04	15.	राँची	राँची	6-8-04
5.	गया	गया	28-7-04	16.	पुरुलिया	पुरुलिया	7-8-04
6.	रफीगंज	औरंगाबाद	29-7-04	17.	चास बोकारो	बोकारो	8-8-04
7.	औरंगाबाद	औरंगाबाद	30-7-04	18.	कतरासगढ़	धनबाद	9-8-04
8.	झुमरीतलैया	कोडरमा	31-7-04	19.	खरखरी	धनबाद	9-8-04
9.	हजारीबाग	हजारीबाग	1-8-04	20.	धनबाद	धनबाद	10-8-04
10.	सरिया	गिरीडीह	2-8-04	21.	मिहिजाम	जामतारा	11-8-04
11.	गोमिया	बोकारो	3-8-04	22.	दुमानी	वर्धमान	12-8-04

क्र.सं.	स्थान	जिला	दिनांक
23.	रानीगंज	वर्धमान	13-8-04
24.	बेलगछिया	कोलकाता	15-8-04
25.	काकुरकाझी	कोलकाता	16-8-04
26.	हाबड़ा	कोलकाता	16-8-04
27.	बड़ा बाजार	कोलकाता	17-8-04
28.	चौरंगी टेरेस	कोलकाता	18-8-04
29.	कोलाघाट	कोलकाता	18-8-04
30.	बेलदा	मिदनापुर	19-8-04
31.	खड़गपुर	मिदनापुर	19-8-04
32.	रिषड़ा	हुबली	20-8-04
33.	बंडेल बाजार	हुबली	21-8-04
34.	खगड़ा बहरामपुर	मुर्शिदाबाद	22-8-04
35.	जियागंज	मुर्शिदाबाद	23-8-04
36.	लालगोला	मुर्शिदाबाद	24-8-04
37.	सन्मतिनगर	मुर्शिदाबाद	24-8-04
38.	जंगीपुर	मुर्शिदाबाद	25-8-04
39.	मिर्जापुर गनकर	मुर्शिदाबाद	25-8-04
40.	अड़ंगाबाद	मुर्शिदाबाद	26-8-04
41.	पाकुड़	मुर्शिदाबाद	26-8-04
42.	धुलियान	मुर्शिदाबाद	27-8-04
43.	रायगंज	उ. दीनाजपुर	27-8-04
44.	कानकी	उ. दीनाजपुर	28-8-04
45.	किशनगंज	उ. दीनाजपुर	29-8-04
46.	ठाकुरगंज	उ. दीनाजपुर	30-8-04
47.	दिनहाटा	कुच बिहार	31-8-04
48.	कूच बिहार	कूच बिहार	2-9-04
49.	सिलीगुड़ी	दार्जिलिंग	3-9-04
50.	भागलपुर	भागलपुर	5-9-04
51.	चंपापुर	भागलपुर	5-9-04
52.	देवघर	देवघर	6-9-04
53.	गिरीडीह	गिरीडीह	7-9-04
54.	सम्मेदशिखर	गिरीडीह	8-9-04
55.	चोपारन	हजारीबाग	10-9-04
56.	इटखोरी	चतरा	11-9-04
57.	डाल्टनगंज	डाल्टनगंज	12-9-04

इसके पश्चात् ज्योति रथ कुण्डलपुर पहुँचा, वहाँ 28 अक्टूबर 2004 को इस प्रवर्तन का समापन होना घोषित किया गया।

जिनके उर में कल-कल बहती,
गंगा की निर्मल धारा।
त्याग और शुभ ज्ञानमणि से,
जिनने निज को श्रृंगारा।
वचनों के मोती बिखराती,
युग की पहली बालसती।
मेरा शत वंदन स्वीकारो,
गणिनी माता ज्ञानमती।

कुण्डलपुर विकास, भगवान महावीर ज्योति रथ प्रवर्तन एवं कुण्डलपुर अभिनंदन ग्रंथ प्रकाशन की पावन प्रेरिका परम पूज्य राष्ट्रगौरव, गणिनीप्रमुख

श्री ज्ञानमती माताजी का परिचय

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

जैनशासन के वर्तमान व्योम पर छिटके नक्षत्रों में दैदीप्यमान सूर्य की भाँति अपनी प्रकाश-रश्मियों को प्रकीर्णित कर रहीं पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर उठी लेखनी की अपूर्णता यद्यपि अवश्यंभावी है, तथापि आत्मकल्याण की भावना से पूज्य माताजी के श्रीचरणों में उनके त्यागमयी जीवन के 52 वर्षों की पूर्णता पर विनम्र विनयांजलि रूप मेरा यह विनीत प्रयास है।

1. जन्म, वैराग्य और दीक्षा –

22 अक्टूबर सन् 1934, शरदपूर्णिमा के दिन टिकैतनगर ग्राम (जि. बाराबंकी, उ.प्र.) के श्रेष्ठी श्री छोटेलाल जैन की धर्मपत्नी श्रीमती मोहिनी देवी के दांपत्य जीवन के प्रथम पुष्प के रूप में "मैना" का जन्म परिवार में नवीन खुशियाँ लेकर आया था। माँ को दहेज में प्राप्त 'पद्मनंदिपंचविंशतिका' ग्रन्थ के नियमित स्वाध्याय एवं पूर्वजन्म से प्राप्त दृढ़ वैराग्य संस्कारों के बल पर मात्र 18 वर्ष की अल्प आयु में ही शरद पूर्णिमा के दिन मैना ने आचार्यरत्न श्री देशभूषण जी महाराज से सन् 1952 में आजन्म ब्रह्मचर्यव्रतरूप सप्तम प्रतिमा एवं गृह त्याग के नियमों को धारण कर लिया।

जैनेश्वरी दीक्षा की कामना को अपनी हर साँस में संजोये ब्र. मैना सन् 1953 में आचार्य श्री देशभूषण जी से ही चैत्र कृष्णा एकम् को श्री महावीरजी अतिशय क्षेत्र में 'क्षुल्लिका वीरमती' के रूप में दीक्षित हो गईं। सन् 1955 में चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर जी महाराज की समाधि के समय कुंथलगिरी पर एक माह तक प्राप्त उनके सान्निध्य एवं आज्ञा द्वारा 'क्षुल्लिका वीरमती' ने आचार्य श्री के प्रथम पट्टाचार्य शिष्य-वीरसागर जी महाराज से सन् 1956 में 'वैशाख कृष्णा दूज' को माधोराजपुरा (जयपुर-रांज.) में आर्यिका दीक्षा धारण करके "आर्यिका ज्ञानमती" नाम प्राप्त किया।

2. अध्ययन और अध्यापन–

ज्ञानप्राप्ति की पिपासा माता ज्ञानमती जी के रोम-रोम में प्रारंभ से ही कूट-कूट कर भरी थी। दीक्षा लेते ही स्वाध्याय-मनन-चिंतन की धारा में ही उन्होंने स्वयं को निबद्ध कर लिया। ज्ञान प्राप्ति का सर्वश्रेष्ठ स्रोत बना-संघस्थ मुनियों, आर्यिकाओं एवं संघस्थ शिष्य-शिष्याओं को जैनागम का तलस्पर्शी अध्यापन। 'कातंत्र रूपमाला' रूपी बीज से पूज्य माताजी की ज्ञानसाधना रूप वृक्ष प्रस्फुटित हुआ, जिस पर जो पत्ते, फूल-फल इत्यादि लगे, उन्होंने समस्त संसार को सुवासित कर दिया। गोम्मटसार, परीक्षामुख, न्यायदीपिका, प्रमेयकमलमार्तण्ड, अष्टसहस्री, तत्त्वार्थराजवार्तिक, सर्वार्थसिद्धि, अनगारधर्मामृत, मूलाचार, त्रिलोकसार आदि अनेक ग्रंथों को अपनी शिष्याओं और संघस्थ साधुओं को पढ़ा-पढ़ाकर आपने अल्प समय में ही विस्तृत ज्ञानार्जन कर लिया। हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, मराठी इत्यादि भाषाओं पर आपका पूर्ण अधिकार हो गया।

3. लेखनी का प्रारंभीकरण संस्कृत भाषा से –

भगवान महावीर के पश्चात् 2500 वर्ष के जिस इतिहास में जैन साध्वियों के द्वारा शास्त्र लेखन की कोई मिसाल दृष्टिगोचर नहीं होती थी, वह इतिहास जागृत हो उठा जब क्षुल्लिका वीरमती जी ने सन् 1954 में सहस्रनाम के 1008 मंत्रों से अपनी लेखनी का प्रारंभ किया। यही मंत्र सरस्वती मांता का वरदहस्त बनकर पूज्य माताजी की लेखनी को ऊँचाइयों की सीमा तक ले गये। सन् 1969-70 में न्याय के सर्वोच्च ग्रंथ 'अष्टसहस्री' के हिन्दी अनुवाद ने उनकी अद्वितीय विद्वत्ता को संसार के सामने उजागर कर दिया। कितने ही ग्रंथों की संस्कृत टीका, कितनी ही टीकाओं के हिंदी

अनुवाद, संस्कृत एवं हिन्दी में अनेक मौलिक ग्रंथों की रचना मिलकर आज 250की संख्या को पार कर चुके हैं। पूज्य माताजी द्वारा लिखित समयसार, नियमसार इत्यादि की हिन्दी-संस्कृत टीकाएँ, जैनभारती, ज्ञानामृत, कातंत्र व्याकरण, त्रिलोक भास्कर, प्रवचन निर्देशिका इत्यादि स्वाध्याय ग्रंथ, प्रतिज्ञा, संस्कार, भक्ति, आदिब्रह्मा, आटे का मुर्गा, जीवनदान इत्यादि जैन उपन्यास, द्रव्यसंग्रह-रत्नकरण्डश्रावकाचार इत्यादि के हिन्दी पद्यानुवाद व अर्थ, बाल विकास, बालभारती, नारी आलोक आदि का अध्ययन किसी को भी वर्तमान में उपलब्ध जैन वाङ्मय की विविध विधाओं का विस्तृत ज्ञान कराने में सक्षम है।

अध्यात्म, व्याकरण, न्याय, सिद्धांत, बाल साहित्य, उपन्यास चारों अनुयोगों रूप विविध विधाओं के अतिरिक्त पूज्य माताजी की लेखनी से विपुल भक्ति साहित्य उद्भूत हुआ है। इन्द्रध्वज, कल्पद्रुम, सर्वतोभद्र, तीन लोक, सिद्धचक्र, विश्वशांति महावीर विधान इत्यादि भक्ति विधानों ने देश के कोने-कोने में जिनेन्द्र भक्ति की जो धारा प्रवाहित की है, वह अतुलनीय है।

धन्य है ऐसी महान प्रतिभावान् सरस्वती माता!

4. सिद्धांत चक्रेश्वरी–

वर्तमान में पू. माताजी जैनशासन के सर्वप्रथम सिद्धांत ग्रंथ 'षट्खण्डागम' के सूत्रों की संस्कृत टीका 'सिद्धांत चिंतामणि' के लेखन में संलग्न हैं। 13 पुस्तकों की टीका लिख चुकी हैं, जिसमें से प्रथम पुस्तक हिन्दी टीका सहित प्रकाशित हो चुकी है एवं द्वितीय पुस्तक शीघ्र ही प्रकाशित होने वाली है। आज से लगभग 1000 वर्ष पूर्व आचार्य श्री नेमिचंद्र सिद्धांतचक्रवर्ती ने जिस प्रकार छह खण्ड रूप द्वादशांग रूप जिनवाणी को परिपूर्ण आत्मसात करके सार रूप में द्रव्य संग्रह, गोम्मटसार, लब्धिसार इत्यादि ग्रंथ अपनी लेखनी से प्रसवित किये थे, उसी प्रकार इस बीसवी सदी की माता ज्ञानमती जी ने समस्त उपलब्ध जैनागम का गहन अध्ययन-मनन-चिंतन करके इस सिद्धांतचिंतामणि रूप संस्कृत टीका लेखन के महत्तम कार्य से 'सिद्धांत चक्रेश्वरी' के पद को साकार कर दिया है। 1000 वर्ष पूर्व आचार्य श्री वीरसेन स्वामी द्वारा लिखित 'धवलाटीका' के पश्चात् इस महान ग्रंथ की सरल टीका लेखन का कार्य प्रथम बार हो रहा है।

5. शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर–

जैन सिद्धांतों का मर्म विद्वत् वर्ग समझ सके, इस भावना से कितने ही शिक्षण-प्रशिक्षण शिविरों का आयोजन पूज्य माताजी की प्रेरणास्वरूप किया गया। सन् 1969 में जयपुर चातुर्मास के मध्य 'जैन ज्योतिर्लोक' पर प्रशिक्षण शिविर आयोजित किया गया, जिसमें पूज्य माताजी द्वारा 'जैन भूगोल एवं खगोल' का विशेष ज्ञान विद्वत्वर्ग को कराया गया। अक्टूबर सन् 1978 में हस्तिनापुर में पं. मक्खनलाल जी शास्त्री, पं. मोतीचंद जी कोठारी, डा. लाल बहादुर शास्त्री सहित जैन समाज के उच्चकोटि के लगभग 100 विद्वानों का विद्वत् प्रशिक्षण शिविर आयोजित किया गया, जिसमें पूज्य माताजी ने विद्वत्समुदाय को यथेष्ट मार्गदर्शन प्रदान किया। समय-समय पर आज तक यह श्रृंखला चल रही है।

6. राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय सेमिनार–

सन् 1985 में 'जैन गणित एवं त्रिलोक विज्ञान' पर अंतर्राष्ट्रीय सेमिनार जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में सम्पन्न हुआ पुनः अनेक संगोष्ठियां सम्पन्न होती रहीं और सन् 1998 में 'भगवान ऋषभदेव राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन' के भव्य आयोजन द्वारा देशभर के विश्वविद्यालयों से पधारे कुलपतियों को भगवान ऋषभदेव को भारतीय संस्कृति एवं जैनधर्म के वर्तमानयुगीन प्रणेता पुरुष के रूप में जानने का अवसर प्राप्त हुआ। 11 जून 2000 को 'जैनधर्म की प्राचीनता' विषय पर आयोजित इतिहासकारों के सम्मेलन द्वारा पाठ्य पुस्तकों में जैनधर्म संबंधी भ्रांतियों के सुधार के लिए विशेष दिशा-निर्देश 'राष्ट्रीय शैक्षणिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद' (NCERT) तक पहुंचाये गये। इनके अतिरिक्त अनेक अन्य सेमिनार भी समय-समय पर सम्पन्न हुए हैं, जिनके प्रतिफल में देश के समक्ष समय-समय पर साहित्यिक कृतियाँ प्रस्तुत हो चुकी हैं।

7. विश्वविद्यालय भी गौरवान्वित हुआ–

मात्र कक्षा तीन तक के लौकिक अध्ययन को प्राप्त विदुषी माताजी ने अध्ययन, अध्यापन, साहित्य निर्माण की जिन ऊँचाइयों को स्पर्श किया, उस अगाध विद्वत्ता के सम्मान हेतु अवध विश्वविद्यालय, फैजाबाद द्वारा 5 फरवरी 1995 को डी.लिट्. की मानद् उपाधि से पूज्य माताजी को सम्मानित करके स्वयं को गौरवान्वित अनुभव किया गया।

8. इतिहास भी परिवर्तन के लिए बाध्य हुआ–

सन् 1992 से पूज्य माताजी की दृष्टि आधुनिक शिक्षाजगत में पढ़ायी जाने वाली पाठ्य पुस्तकों में जैनधर्म संबंधी भ्रान्त विषय वस्तु पर गयी तो 'भगवान महावीर जैनधर्म के संस्थापक हैं' इत्यादि भ्रांतियों को वहाँ देखकर उनका हृदय अत्यंत उद्वेलित हो उठा। फलस्वरूप प्रधानमंत्री, मानव संसाधन विकास मंत्री, निदेशक-NCERT इत्यादि से उनकी प्रत्यक्ष वार्ता द्वारा शिक्षाजगत तक यह संदेश पहुँचा और दस वर्षों के अथक प्रयास द्वारा पाठ्य पुस्तकों में संशोधन का क्रम प्रारंभ हो सका है।

9. तीर्थ विकास की भावना–

तीर्थंकर भगवन्तों की कल्याणक भूमियों एवं विशेष रूप से जन्मभूमियों के विकास की ओर पूज्य माताजी की विशेष आंतरिक रुचि सदा से रही है। पूज्य माताजी का कहना है कि हमारी संस्कृति का परिचय प्रदान करने वाली ये कल्याणक भूमियाँ हमारी महान संस्कृति की धरोहर हैं अतः इनका संरक्षण-संवर्धन-विकास अत्यंत आवश्यक है।

सर्वप्रथम भगवान शांतिनाथ, कुन्थुनाथ, अरहनाथ की जन्मभूमि 'हस्तिनापुर' में पूज्य माताजी की प्रेरणा से निर्मित जैन भूगोल की अद्वितीय रचना 'जम्बूद्वीप' आज विश्व के मानस पटल पर अंकित हो गयी है, उ.प्र. सरकार के पर्यटन विभाग ने जम्बूद्वीप से हस्तिनापुर की पहचान बताते हुए उसे एक अतुलनीय 'मानव निर्मित स्वर्ग' (A Man-Made Heaven of Unparallel Superlatives And Natural Wonders) की संज्ञा प्रदान की है। सन् 1993 से 1995 तक शाश्वत जन्मभूमि 'अयोध्या' में 'समवसरण मंदिर' और 'त्रिकाल चौबीसी मंदिर' का निर्माण करवाकर उसका विश्वव्यापी प्रचार, अकलूज (महाराष्ट्र) में नवदेवता मंदिर निर्माण की प्रेरणा, सनावद (म.प्र.) में णमोकार धाम, प्रीत विहार-दिल्ली में कमलमंदिर, मांगीतुंगी (महाराष्ट्र) में सहस्रकूट कमल मंदिर, अहिच्छत्र में ग्यारह शिखर वाला तीस चौबीसी मंदिर और भगवान ऋषभदेव की दीक्षा एवं केवलज्ञान कल्याणक भूमि-प्रयाग में 'तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली' का भव्य निर्माण पूज्य माताजी की ही प्रेरणा के सुफल हैं। कितने ही अन्य स्थानों पर भी अनेकानेक निर्माण पूज्य माताजी के निर्देशन द्वारा सम्पन्न हुए और हो रहे हैं।

वर्तमान में भगवान महावीर स्वामी की जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) के विकास हेतु भगवान महावीर स्वामी कीर्तिस्तंभ, भगवान महावीर मंदिर, भगवान ऋषभदेव मंदिर, नवग्रह शांतिजिनमंदिर, त्रिकाल चौबीसी मंदिर एवं भगवान महावीर के जन्ममहल-नंद्यावर्त महल सहित नंद्यावर्त महल तीर्थ का निर्माण आपकी प्रेरणा से इस क्षेत्र पर हुआ है। मात्र डेढ़ वर्ष के अल्प समय में हुए इस भव्य एवं अद्भुत निर्माण से सभी आश्चर्यचकित हैं एवं संस्कृति-संरक्षण की दिशा में समाज इस निर्माण को पूज्य माताजी के अप्रतिम उपकार के रूप में स्वीकार कर रहा है। भगवान मुनिसुव्रतनाथ की जन्मभूमि राजगृही में भगवान की विशाल खड्गासन प्रतिमा की स्थापना, भगवान महावीर स्वामी की निर्वाणभूमि पावापुरी (नालंदा) स्थित पाण्डुकशिला परिसर में भगवान महावीर स्वामी की विशाल खड्गासन प्रतिमा की स्थापना, श्री गुणावां जी सिद्धक्षेत्र पर गौतम गणधर स्वामी की खड्गासन प्रतिमा की स्थापना भी कुण्डलपुर विकास के साथ-साथ पूज्य माताजी के प्रेरणा द्वारा सम्पन्न की गयी हैं।

इसी श्रृंखला में भगवान शीतलनाथ की जन्मभूमि-भद्दिलपुर (झारखंड) में भगवान शीतलनाथ की 10 फुट उत्तुंग खड्गासन प्रतिमा विराजमान कराने की घोषणा भी पूज्य माताजी द्वारा की जा चुकी है।

10. विश्व में अनोखी 108 फुट मूर्ति निर्माण की प्रेरणा–

विश्व के अप्रतिम आश्चर्य के रूप में 108 फुट उत्तुंग भगवान ऋषभदेव की खड्गासन प्रतिमा के निर्माण का कार्य

मांगीतुंगी (महा.) के पर्वत पर पूज्य माताजी की प्रेरणा से प्रारंभ हो चुका है। युगों-युगों तक जिनशासन की महिमा को विकसित करने वाली यह प्रतिमा जैन संस्कृति के विशाल व्यक्तित्व का परिचय भी जनमानस को प्रदान करेगी।

11. शिरडी (महाराष्ट्र) में ज्ञानतीर्थ–

शिरडी (महाराष्ट्र) को जैन संस्कृति केन्द्र के रूप में स्थापित करने हेतु महाराष्ट्र के कार्यकर्ताओं द्वारा वहाँ पर 'ज्ञानतीर्थ' के निर्माण की योजना मूर्त रूप ले रही है, जिसमें 'शिरडी के पारसनाथ' की विशेष प्रतिष्ठापना पूज्य माताजी के निर्देशानुसार सम्पन्न की जायेगी।

12. धर्मप्रभावना के विविध आयाम–

जम्बूद्वीप रचना के निर्माण का प्रमुख लक्ष्य लेकर 'दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान' नामक संस्था का राजधानी दिल्ली में पूज्य माताजी की प्रेरणा से सन् 1972 में गठन किया गया। इसी संस्थान ने विविध धर्मप्रभावना के कार्यों का निष्पादन किया है। संस्थान स्थित 'वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला' द्वारा लाखों की संख्या में ग्रंथ प्रकाशन, चारों अनुयोगों के ज्ञान से समन्वित 'सम्यग्ज्ञान' मासिक पत्रिका का प्रकाशन, णमोकार महामंत्र बैंक इत्यादि कितनी ही कार्ययोजनाएँ जिनशासन की कीर्ति को निरंतर प्रसारित कर रही हैं।

पूज्य माताजी की प्रेरणा से सन् 1982 में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी द्वारा राजधानी दिल्ली में उद्घाटित 'जम्बूद्वीप ज्ञान ज्योति' ने तीन वर्ष तक सम्पूर्ण भारतवर्ष में जैनधर्म के सिद्धांतों का प्रचार-प्रसार किया और अंत में यह ज्योति अखण्ड रूप से तत्कालीन केन्द्रीय रक्षामंत्री-श्री पी.वी. नरसिंहाराव द्वारा जम्बूद्वीप स्थल पर स्थापित कर दी गयी। इसी प्रकार अप्रैल सन् 1998 में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने 'भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार' का राजधानी दिल्ली से प्रवर्तन किया, जो समस्त प्रांतों में प्रवर्तन के पश्चात् शरद पूर्णिमा, 21 अक्टूबर 2002 को तपस्थली-प्रयाग तीर्थ पर निर्मित 'केवलज्ञान कल्याणक मंदिर' में स्थापित होकर युगों-युगों तक भगवान ऋषभदेव के वास्तविक समवसरण की याद दिलाता रहेगा। भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) के प्रति जनमानस की भावनाओं को दृढ़ता से जोड़ने हेतु पूज्य माताजी की प्रेरणा द्वारा कुण्डलपुर से 15 अप्रैल 2003 को 'भगवान महावीर ज्योति रथ' का प्रवर्तन किया गया। सितम्बर 2004 तक देश के विविध प्रान्तों में इस रथ ने सफलतापूर्वक महावीर जन्मभूमि एवं उनके सर्वोदयी सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार किया।

जैनधर्म की प्राचीनता तथा भगवान ऋषभदेव के नाम एवं सिद्धांतों को जन-जन तक पहुँचाने के लिए पूज्य माताजी ने राजधानी दिल्ली में विशाल 'चौबीस कल्पद्रुम महामण्डल विधान' आयोजित कराया, साथ ही 'भगवान ऋषभदेव जन्मजयंती वर्ष' तथा 'भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव वर्ष' (तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल जी द्वारा उद्घाटित) भी उनकी प्रेरणा द्वारा विविध धर्मप्रभावना के कार्यक्रमों सहित सम्पन्न हुए। आस्था चैनल एवं जैन टी.वी. चैनल द्वारा पूज्य माताजी के 'तीर्थंकर जीवन दर्शन (सचित्र)' एवं अन्य विषयों पर प्रभावक प्रवचन लम्बे समय तक प्रसारित किये गये। पूज्य माताजी की प्रेरणा से स्थापित 'अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महिला संगठन' अपनी सैकड़ों ईकाइयों द्वारा दिगम्बर जैन समाज की नारी शक्ति को सृजनात्मक कार्यों हेतु संगठित किये हुए है।

इसके अतिरिक्त कितने ही अन्य धर्मप्रभावना के कार्य इन 52 वर्षों में पूज्य माताजी ने सम्पन्न किये हैं जिनका यहाँ लेखन तो संभव नहीं है, किन्तु आज पूरा समाज उनके कार्यकलापों से परिचित होकर उन्हें कर्मठता की मूर्ति के रूप में पहचानता है।

13. संघर्ष विजेत्री–

पूज्य माताजी ने प्रारंभ से अपना प्रमुख लक्ष्य बनाया- प्रत्येक कार्य आगमानुकूल ही करना। पुनः उन कार्यों के निष्पादन में जो भी विघ्न आते हैं, उन्हें बहुत ही शांतिपूर्वक झेलकर पूरी तन्मयता के साथ उस कार्य को परिपूर्ण करना उनकी विशेषता रही है। उनका पूरा जीवन आर्ष परम्परा का संरक्षण करते हुए अपने मूलगुणों में बाधा न आने देकर जिनधर्म की अधिकाधिक प्रभावना के साथ व्यतीत हुआ है। **किसी भी संस्था, तीर्थ, चंदे आदि की दानराशि को अपनी**

संघ व्यवस्था में समाहित न करने का उनका नियम है। 52 वर्षों से इस नियम का पालन करते हुए अपने कर्तव्य पथ पर वे अडिग हैं। यही कारण है कि उन्हें लम्बी-लम्बी यात्राएं कराने में अपना कर्तव्यपालन करने वाले संघपति श्रावक भी अपना सौभाग्य समझते हैं।

14. अमृतमय हों वर्ष तुम्हारे–

जिनकी दीर्घकालिक तपस्या के वर्षों की गिनती जानकर अनेक आचार्य, मुनि, आर्यिकाएँ इत्यादि भी इस बात को कहते हुए गौरव का अनुभव करते हैं कि आज जितनी मेरी उम्र भी नहीं है उससे अधिक तो पूज्य माताजी की दीक्षा आयु है, अर्थात् 18 वर्ष की उम्र से त्याग मार्ग पर जिन्होंने कदम रखा, उन्होंने अपनी जन्मतिथि-शरदपूर्णिमा को भी त्याग से सार्थक कर लिया। यही कारण है कि 21 अक्टूबर 2002 की शरदपूर्णिमा तपस्थली प्रयाग तीर्थ पर 'स्वर्णिम शरद पूर्णिमा' बनकर आई जब आपने अपने त्यागमयी जीवन के 50 वर्ष पूर्ण किये।

पुनः सौभाग्य उदित हुआ सदियों से उपेक्षित भगवान महावीर की जन्मभूमि-कुण्डलपुर (नालंदा) का, जहाँ वर्ष 2003 में पूज्य माताजी (ससंघ) के स्वर्णिम (51वाँ) चातुर्मास के अंतर्गत उनका 70वाँ जन्मजयंती दिवस 8 से 10 अक्टूबर तक "कुण्डलपुर महोत्सव" के मध्य मनाया गया। पर्यटन विभाग-बिहार सरकार एवं कुण्डलपुर दिगम्बर जैन समिति के संयुक्त तत्त्वावधान में आयोजित "कुण्डलपुर महोत्सव" की इस ऐतिहासिक श्रृंखला का शुभारंभ पूज्य माताजी के विराट व्यक्तित्व का ही प्रतिबिम्ब है। पुनः 27 से 29 अक्टूबर 2004 तक द्वितीय कुण्डलपुर महोत्सव मनाया जा रहा है, जिसके अंतर्गत प्रस्तुत अभिनंदन ग्रंथ का विमोचन सम्पन्न होकर यह सारी सामग्री आपके हाथों तक पहुँची है। 28 अक्टूबर 2004 को पूज्य माताजी का 71वाँ जन्मजयंती दिवस भी धूमधाम से मनाया जा रहा है।

15. भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव की प्रेरणा–

20वें तीर्थंकर भगवान मुनिसुव्रत की जन्मभूमि एवं भगवान महावीर की प्रथम देशनाभूमि राजगृही तीर्थ पर 3 दिसम्बर 2003 से 8 दिसम्बर 2003 तक आयोजित श्री मुनिसुव्रतजिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा के अवसर पर दिनाँक 5 दिसम्बर, मगसिर शु. 12 को पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा "भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव" मनाने हेतु सार्वजनिक प्रेरणा प्रदान की गई। पुनः 19 दिसम्बर 2003, पौष कृ. 11 को भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक दिवस पर जन्मभूमि बनारस, कुण्डलपुर एवं अनेक स्थानों पर पूज्य माताजी की प्रेरणानुसार महोत्सव का संकल्पदीप प्रज्वलित हुआ। ज्ञातव्य है कि इस महोत्सव का उद्घाटन 6 जनवरी 2005 को राष्ट्रीय स्तर पर होकर इसे पूरे 1 वर्ष तक देश-विदेश में भारी प्रभावनापूर्वक मनाया जाएगा।

ऐसी चतुर्मुखी प्रतिभा की धनी पूज्य माताजी के चरणों में भावभीनी विनयांजलि है तथा भगवान जिनेन्द्र से यही प्रार्थना है कि उनके इस पवित्र त्यागमयी जीवन का हमें अमृत महोत्सव भी मनाने का लाभ प्राप्त हो तथा आपके द्वारा इसी प्रकार से नया-नया साहित्य जनता को प्राप्त होता रहे, यही मंगलकामना है।

* * *

> "किसी भी कार्य को करने में मध्यम मार्ग का अनुसरण करो, न अधिक सोचो न बिना सोचे करो।",
>
> –गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी

राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने प्राप्त किया आशीर्वाद माताजी का

भारत वर्ष के प्रथम नागरिक-राष्ट्रपति डा.ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने 30 मई 2003 को भगवान महावीर निर्वाणभूमि-पावापुरी (नालंदा-बिहार) में जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी से विशेष मंगल आंशीर्वाद प्राप्त किया। यह अवसर था-महामहिम राष्ट्रपति जी की त्रिदिवसीय बिहार यात्रा का। 30 मई को मध्यान्ह 1 बजे पावापुरी के प्रसिद्ध 'जलमंदिर' अर्थात् भगवान महावीर की निर्वाणस्थली का दर्शन कर गाँव मंदिर के प्रवचन हाल में आयोजित धर्मसभा में पधारे महामहिम जी ने सर्वप्रथम अत्यन्त विनम्र भाव से पूज्य माताजी के चरणों में नारियल चढ़ाकर मंगल आशीर्वाद प्राप्त किया।

पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने इस अवसर अपने उद्‌बोधन में राष्ट्रपति जी की शाकाहार रूप अहिंसात्मक प्रवृत्ति की हार्दिक प्रशंसा करते हुए कहा कि यह महान गौरव एवं आत्मतुष्टि का विषय है कि अहिंसा के अवतार भगवान महावीर के सिद्धांतों को आत्मसात करते हुए भारतवर्ष के प्रथम नागरिक अर्थात् राष्ट्रपति के रूप में आप पूर्णतया शाकाहारी जीवन का परिपालन करने वाले हैं, जीवदया की इस भावना हेतु आपके लिए मेरा बहुत-बहुत मंगल आशीर्वाद है तथा यही मंगल कामना है कि भगवान महावीर के सर्वोदयी शासन की छत्रछाया सदैव आप पर बनी रहे एवं मातृभूमि की निशछल भाव से सेवा करते हुए आपका यश दिग्दिगन्त व्यापी बने।

महामहिम राष्ट्रपति जी ने पूज्य माताजी के आशीर्वचन से अत्यन्त प्रभावित होकर पूज्य माताजी को विशेषरूप से इंगित करते हुए अपने अंग्रेजी उद्‌बोधन में कहा कि आज जब मैंने जलमंदिर के दर्शन किये तो यह सोचकर कि इसी रज पर कभी स्वयं भगवान महावीर चले होंगे मैं अत्यन्त रोमांचित हो गया जिस प्रकार जैसे-जैसे सरोवर में पानी बढ़ता जाता है वैसे-वैसे उसमें खिले कमल और ऊपर उठते जाते हैं उसी प्रकार हमें भी अपने विचारों को ऊर्ध्वगामी बनाना है, हम शांति को अपनी सांस के साथ अन्दर ले जाएं और समस्त हिंसा, अन्याय एवं बुराइयों के विचारों को बाहर आने वाली सांस के साथ निकाल दें। आप जैसे संत अपनी साधना से समस्त जनता को खुशी प्रदान करें यही मेरी मंगल भावना है। अहिंसा परमाणुबम से भी शक्तिशाली अस्त्र है। उसके द्वारा संसार का कल्याण हो, यही मेरा कहना है।

श्री गणेश वर्णी दि. जैन (शोध) संस्थान
4847

गणिनी ज्ञानमती माताजी : एक

जन्मस्थान : टिकैतनगर (बाराबंकी) उ.

जन्मतिथि : आसोज सुदी १५ (
पूर्णिमा) वि. सं. १९९१ (सन् १९

गृहस्थ का नाम : कु. मैना

माता-पिता : श्रीमती मोहिनी देवी
श्री छोटेलाल जैन

आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत एवं गृहत्याग : ई.
१९५२ में बाराबंकी में शरदपूर्णिमा के
आचार्यरत्न श्री देशभूषण जी महाराज से।

क्षुल्लिका दीक्षा : चैत्र कृ. १, ई.
१९५३ को महावीरजी क्षेत्र (राज०) में

आर्यिका दीक्षा : वैशाख कृ. २, ई.
१९५६ को माधोराजपुरा (राज०)
चारित्रचक्रवर्ती १०८ आचार्यश्री शांति
जी की परम्परा के प्रथम पट्टाधीश आचार्य श्री
वीरसागर जी के करकमलों से।

कृतित्व : ● अष्टसहस्री, समयसार,
नियमसार, मूलाचार, कातंत्र-व्याकरण,
षट्खण्डागम आदि ग्रंथों के अनुवाद/टीका
एवं २५० विशिष्ट ग्रंथों की लेखिका।

● हस्तिनापुर में जंबूद्वीप, तीनमूर्ति मंदिर,
कमल मंदिर, ध्यान मंदिर, ॐ मंदिर आ
के निर्माण की प्रेरिका।

● समवसरण श्रीविहार रथ का सम्पूर्ण भा
भ्रमण (१९९८-२००२)।

● १९८१, १९८२, १९८५, १९८
१९९२, १९९३, १९९५, १९९८
जैनधर्म संबंधी राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्र
सेमिनारों की प्रेरिका।

● १९९५ में अवध वि.वि. (फैजाबाद)
"डी.लिट्." की मानद उपाधि से विभूषित

● ४ फरवरी २००० को भगवान ऋषभ
अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महा महोत्सव
सम्प्रेरिका।

● "तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली" प्रयाग
के निर्माण एवं नूतन तीर्थ पर ४ से ८
२००१ तक भव्य पंचकल्याणक प्रतिष्ठा
महामस्तकाभिषेक की प्रेरणास्रोत।

● ई. सन् २००१ में भगवान
२६००वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव
वसर पर २६०० मंत्रों से सम
शांति महावीर विधान" का लेख
महावीर जन्मभूमि कु
) तीर्थ विकास की प्रेर
न भावनाओं की
तक इस व
ल काम